बी0ए0 कर्मकाण्ड

प्रथम वर्ष

(प्रथम पत्र)

खण्ड – 1

कर्मकाण्ड : आरम्भिक परिचय

इकाई – 1 कर्मकाण्ड का उद्गम स्रोत

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 कर्मकाण्ड प्रथम पत्र के प्रथम इकाई '**कर्मकाण्ड के उद्गम स्रोत**' नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। कर्मकाण्ड का उद्गम स्थल मूल रूप से वेद है। वेद कर्मकाण्ड का ही नहीं वरन् सर्वविद्या का मूल है। कर्मकाण्ड का सम्बन्ध केवल पूजन, पाठ, यज्ञ, विभिन्न प्रकार के अनुष्ठान से ही सम्बन्धित नहीं है, बल्कि इसका सम्बन्ध मानव के जीवन से भी सीधे जुड़ा है। धार्मिक क्रियाओं से जुड़े कर्म को '**कर्मकाण्ड**' कहते है। यह कर्मकाण्ड की स्थूल परिभाषा है। वस्तुत: मनुष्य अपने दैनन्दिनी जीवन में जो भी कर्म करता है, उसका सम्बन्ध कर्मकाण्ड से है। इस इकाई में आप कर्मकाण्ड से सम्बन्धित विविध विषयों का अध्ययन करेंगे तथा विशेष रूप से उसके उद्‍गम स्रोत को समझ सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझ सकेंगे कि –

1. कर्मकाण्ड क्या है।
2. कर्मकाण्ड का उद्गम स्रोत कहॉं है।
3. कर्मकाण्ड का महत्व क्या है।
4. कर्मकाण्ड के विविध आयाम
5. कर्मकाण्ड के प्रकार

1.3 कर्मकाण्ड के उद्गम स्रोत

भारतीय मान्यता के अनुसार वेद सृष्टिक्रम की प्रथम वाणी है। फलत: भारतीय संस्कृति का मूल ग्रन्थ वेद सिद्ध होता है। पाश्चात्य विचारकों ने ऐतिहासिक दृष्टि अपनाते हुए वेद को विश्व का आदि ग्रन्थ सिद्ध किया। अत: यदि विश्वसंस्कृति का उद्गम स्रोत वेद को माना जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। इस आधार पर कर्मकाण्ड का भी उद्‍गम स्रोत मूल रूप से वेद ही है। वेदों में कर्मकाण्ड के समस्‍त तथ्य उपस्थित है। यदि आप उसका अवलोकन करेंगे तो आपको मूल रूप से कर्मकाण्ड का आरम्भ वहीं से प्राप्त होगा।

कर्मकाण्ड का मूलत: सम्बन्ध मानव के सभी प्रकार के कर्मों से है, जिनमें धार्मिक क्रियाएँ भी सम्मिलित हैं। स्थूल रूप से धार्मिक क्रियाओं को ही **'कर्मकाण्ड'** कहते हैं, जिससे पौरोहित्य का तादात्म्य सम्बन्ध है। कर्मकाण्ड के भी **दो** प्रकार हैं-

1. इष्ट
2. पूर्त

सम्पूर्ण वैदिक धर्म तीन काण्डों में विभक्त है-

1. ज्ञान काण्ड,
2. उपासना काण्ड
3. कर्म काण्ड

यज्ञ-यागादि, अदृष्ट और अपूर्व के ऊपर आधारित कर्मों को इष्ट कहते हैं। लोक-हितकारी दृष्ट फल वाले कर्मों को पूर्त कहते हैं । इस प्रकार कर्मकाण्ड के अंतर्गत लोक-परलोक-हितकारी सभी कर्मों का समावेश है।

कर्मकाण्ड वेदों के सभी भाष्यकार इस बात से सहमत हैं कि चारों वेदों में प्रधानत: तीन विषयों; कर्मकाण्ड, ज्ञान- काण्ड एवं उपासनाकाण्ड का प्रतिपादन है।

कर्मकाण्ड अर्थात् यज्ञकर्म वह है जिससे यजमान को इस लोक में अभीष्ट फल की प्राप्ति हो और मरने पर यथेष्ट सुख मिले। यजुर्वेद के प्रथम से उंतालीसवें अध्याय तक यज्ञों का ही वर्णन है। अंतिम अध्याय(40 वाँ) इस वेद का उपसंहार है, जो 'ईशावास्योपनिषद्' कहलाता है।

वेद का अधिकांश कर्मकाण्ड और उपासना से परिपूर्ण है, शेष अल्पभाग ही ज्ञानकाण्ड है।

कर्मकाण्ड कनिष्ठ अधिकारी के लिए है। उपासना और कर्म मध्यम के लिए । कर्म, उपासना और ज्ञान तीनों उत्तम के लिए हैं। पूर्वमीमांसाशास्त्र कर्मकाण्ड का प्रतिपादन है ।

इसका नाम 'पूर्वमीमांसा' इस लिए पड़ा कि कर्मकाण्ड मनुष्य का प्रथम धर्म है, ज्ञानकाण्ड का अधिकार उसके उपरांत आता है ।

पूर्व आचरणीय कर्मकाण्ड से सम्बन्धित होने के कारण इसे पूर्वमीमांसा कहते हैं । ज्ञानकाण्ड-विषयक मीमांसा का दूसरा पक्ष 'उत्तरमीमांसा' अथवा वेदान्त कहलाता है ।

वेद शब्द और उसका लक्षणात्मक स्वरूप

शाब्दिक विधा से विश्लेषण करने पर वेद शब्द की निष्पत्ति 'विद-ज्ञाने' धातु से 'घञ्' प्रत्यय करने पर होती है। विचारकों ने कहा है कि-जिसके द्वारा धर्मादि पुरुषार्थ-चतुष्टय-सिद्धि के उपाय बतलाये जायँ, वह वेद है।

- आचार्य सायण ने वेद के ज्ञानात्मक ऐश्वर्य को ध्यान में रखकर लक्षित किया कि- अभिलषित पदार्थ की प्राप्ति और अनिष्ट-परिहार के अलौकिक उपायको जो ग्रन्थ बोधित करता है, वह वेद है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि आचार्य सायणने वेद के लक्षण में 'अलौकिकमुपायम्' यह विशेषण देकर वेदों की यज्ञमूलकता प्रकाशित की है।
- आचार्य लौगाक्षि भास्कर ने दार्शनिक दृष्टि रखते हुए- अपौरूषेय वाक्य को वेद कहा है ।
- आचार्य उदयन ने भी कहा है कि- जिसका दूसरा मूल कहीं उपलब्ध नहीं है और महाजनों अर्थात् आस्तिक लोगों ने वेद के रूप में मान्यता दी हो, उन आनुपूर्वी विशिष्ट वाक्यों को वेद कहते है ।
- आपस्तम्बादि सूत्रकारों ने वेद का स्वरूपावबोधक लक्षण करते हुए कहा है कि- वेद मन्त्र और ब्राह्मणात्मक हैं।

- आचार्यचरण स्वामी श्रीकरपात्री जी महाराज ने दार्शनिक एवं याज्ञिक दोनों दृष्टियों का समन्वय करते हुए वेद का अद्भुत लक्षण इस प्रकार उपस्थापित किया है-' शब्दातिरिक्तं शब्दोपजीविप्रमाणातिरिक्तं च यत्प्रमाणं तज्जन्यप्रमितिविषयानतिरिक्तार्थको यो यस्तदन्यत्वे सति आमुष्मिकसुखजनकोच्चारणकत्वे सति जन्यज्ञानाजन्यो यो प्रमाणशब्दस्तत्त्वं वेदत्वम्
- उपर्युक्त लक्षणों की विवेचना करने पर यह तथ्य सामने आता है कि- ऐहकामुष्मिक फलप्राप्ति के अलौकिक उपाय का निदर्शन करने वाला अपौरूषेय विशिष्टानुपूर्वीक मन्त्र-ब्राह्मणात्मक शब्दराशि वेद है।

श्रेष्ठ परम्पराएँ

मानव कल्याण की महान् परम्पराओं में जितने भी आयोजन एवं अनुष्ठान है उनमें सबसे बड़ी परम्पराओं में जितने भी आयोजन एवं अनुष्ठान है उनमें सबसे बड़ी परम्परा संस्कारों एवं पर्वों की है। संस्कारों धर्मानुष्ठानों द्वारा व्यक्ति एवं परिवार को और पर्व- त्यौहारों के माध्यम से समाज को प्रशिक्षित किया जाता है। इन पुण्य- परम्पराओं पर जितनी ही बारीकी से हम ध्यान देते हैं उतना ही अधिक उनका महत्त्व एवं उपयोग विदित होता है। पर्व- त्यौहारों की चर्चा अन्यत्र करेंगे, यहाँ तो हम षोडश संस्कारों की उपयोगिता एवम् आवश्यकता पर थोड़ा प्रकाश डालेंगे। यो स्वाध्याय- सत्संग, प्रशिक्षण, चिन्तन, मनन आदि का प्रभाव मनुष्य की मनोभूमि पर पड़ता ही है। ओर उनसे व्यक्ति के भावना को विकसित करने में सहायता मिलती ही है और इनकी उपयोगिता को स्वीकार करते हुए सर्वत्र इनका प्रचलन रखा भी जाता है पर साथ ही एक बात यह भी ध्यान में रखनी चाहिए कि अन्तः चेतना को उच्च प्रयोजन के लिए उल्लसित एवं सूक्ष्म बनाने के कुछ वैज्ञानिक उपकरण भी हैं और उनका महत्त्व स्वाध्याय, सत्संग आदि चलित उपकरणों की अपेक्षा किसी भी प्रकार कम नहीं है। इन व्यक्तित्व निर्माण के वैज्ञानिक माध्यमों को ही संस्कार कहा जा सकता है। संस्कार वे उपचार हैं जिनके माध्यम से मनुष्य को सुसंस्कृत बनाना, सबसे अधिक सम्भव एवं सरल है कहने की आवश्यकता नहीं कि सुसंस्कारित व्यक्ति के निजी पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन में कितनी श्रेयस्कर एवं मंगलमय सिद्धि हो सकती है॥

बहुदेव वाद

सदा भवानी दाहिनी, सन्मुख रहे गणेश॥ पांच देव रक्षा करें, ब्रह्मा विष्णु महेश॥

(१)**ब्रह्मा**- भगवान के नाभि कमल से चतुर्मुख ब्रह्मा के साथ सृष्टि हुई शरीर के अन्यान्य अंगों में से नाभि की के साथ सृष्टि कार्य का संबंध अधिक है, इसलिए परमात्मा की नाभि सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी का उत्पन्न होना विज्ञान सिद्ध है॥ कमल अव्यक्त से व्यक्त अर्भिमुखी प्रकृति का रूप है और उसी से ब्रह्मा की उत्पत्ति होती है॥ ब्रह्मा जी प्रकृति के अन्तर्गत राजसिक भाव पर अधिष्ठान करते हैं, इसलिए ब्रह्माजी का रंग लाल है॥ क्योंकि रजोगुण का रंग लाल है। "अजामेकां लोहितशुक्ल कृष्णाम्" (श्वेताश्वनर उपनिषद्)

त्रिगुणमयी प्रकृति लोहित शुक्ल और कृष्णवर्ण है॥ रजोगुण लोहित, सतोगुण शुक्ल और तमोगुण

कृष्णवर्ण है ।। समष्टि- अंतःकरण ब्रह्माजी का शरीर और उनके चार मुख माने गये हैं क्योंकि- मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार- ये अंतःकरण के चार अंग हैं। क्रियाकलाप में ज्ञान की अप्रधानता रहने पर भी ज्ञान की सहायता बिना क्रिया ठीक- ठीक नहीं चल सकती है। इसलिए नीर- क्षीर विवेकी हंस को ब्रह्मा जी का वाहन माना गया है । ब्रह्माजी की मूर्ति की ओर देखने से, उसमें निहित सूक्ष्म व स्थूल भावों पर विचार कर देखने से पता लग जायेगा कि प्रकृति के राजसिक भाव की लीला के अनुसार ही ब्रह्माजी की मूर्ति- कल्पना की गई हैं।

(२) विष्णु -विष्णु शास्त्रों में शेषशायी भगवान विष्णु का ध्यान इस प्रकार किया गया है कि- ध्यायन्ति दुग्धादि भुजंग भोगे । शयानमाधं कमलासहायम् ॥ प्रफुल्लनेत्रोत्पलमंजनाभ, चर्तुमुखेनाश्रितनाभिपद्म । आम्नायगं त्रिचरणं घननीलमुद्यछ्रोवत्स कौन्तुभगदाम्बुजशंखचक्रम्॥ हृत्पुण्डरीकनिलयंजगदेकमूलमालोकयन्तिकृतिनः पुरुषं पुराणम् ॥

अर्थात्- भगवान क्षीर सागर में शेषनाग पन सोये हुए हैं, लक्ष्मी रूपिणी प्रकृति उनकी पादसेवा कर रही है, उनके नाभिकमल से चतुर्मुख ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई है, उनका रंग घननील है, उनके हाथ हैं जिनमें शंख, चक्र, गदा औरपद्म सुशोभित हैं- वे जगत् के आदि कारण तथा भक्त- जन हृत्सरोज बिहारी हैं। इनके ध्यान तथा इनकी भावमयी मूर्ति में तन्मयता प्राप्त करने से भक्त का भव-भ्रम दूर होता है। क्षीर का अनंत समुद्र सृष्टि उत्पत्तिकारी अनन्त संस्कार समुद्र है जिसको कारणवीर करके भी शास्त्र में वर्णन किया है। कारणवीर जन्म न होकर संसारोत्पत्ति के कारण अनन्त संस्कार है। संस्कारों को क्षीर इसलिये कहा गया है कि क्षीर की तरह इनमें उत्पत्ति और स्थिति विधान की शक्ति विद्यमान है। ये सब संस्कार प्रलय के गर्भ में विलीन जीवों के समष्टि संस्कार हैं ।।अनन्त नाश अथवा शेषनाग अनंत आकाश को रूप है जिसके ऊपर भगवान् विष्णु शयन करते हैं । शेष भगवान् की सहस्रेण महाकाश की सर्वव्यापकता प्रतिपादन करती है, क्योंकि शास्त्र में "सहस्र " शब्द अनन्तता- वाचक है ।। आकाश ही सबसे सूक्ष्म भूत है, उसकी व्यापकता से ब्रह्म की व्यापकता अनुभव होती है और उससे परे ही परम- पुरुष का भाव है इस कारण महाकाशरूपी अनन्तशैया पर भगवान सोये हुए हैं। लक्ष्मी अर्थात् प्रकृति उनकी पादसेवा कर रही है । इस भाव में प्रकृति के साथ भगवान का सम्बद्ध बताया गया है । प्रकृति रूप माया परमेश्वर की दासी बनकर उनके अधीन होकर उनकी प्रेरणा के अनुसार सृष्टि स्थिति, प्रलयंकारी है । इसी दासी भाव को दिखाने के अर्थ में शेषशायी भगवान की पादसेविका रूप से माया की मूर्ति बनाई गई है । भगवान के शरीर का रंग घननील है । आकाश रंग नील है । निराकार ब्रह्म का शरीरनिर्देश करते समय शास्त्र में उनको आकाश शरीर कहा है, क्योंकि सर्वव्यापक अतिसूक्ष्म आकाश के साथ ही उनके रूप की कुछ तुलना हो सकती है। अतः आकाश शरीर ब्रह्म का रंग नील होना विज्ञान सिद्ध है। भगवान के गलदेश में कौस्तुभ मणि विभूषित माला है उन्होंने गीता में कहा है :-

मनः परतरं नान्यत् किंचिदरित्र धनंजय ।।मुचि सर्वमिद प्रोक्तं सूत्रे मणिगणा इव।।

भगवान की सत्ता को छोड़कर कोई भी जीव पृथक नहीं रह सकता, समस्त जीव सूत्र में मणियों की तरह परमात्मा में ही ग्रथित है। सारे जीव मणि है, परमात्मा सारे जीवों में विराजमान सूत्र है। गले में माला की तरह जीव भगवान में ही स्थित हैं। इसी भावन को बताने के लिए उनके गले में माला है। उक्त माला की मणियों के बीच में उज्जवलतम कौस्तुमणि नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव कूटस्थ चैतन्य है ।।ज्ञान रूप तथा मुक्त स्वरूप होने से ही कुटस्थरूपी कौस्तुभ की इतनी ज्योति है। माला की अन्यान्य मणियाँ जीवात्मा और कौस्तुभ कूटस्थ चैतन्य है। यही कौस्तुभ और मणि से युक्त माला का भाव है। भगवान के चार हाथ धर्म अर्थ, काम और मोक्ष रूपी चतुर्वर्ग के प्रदान करने वाले है। शंक, चक्र,गदा और पद्म भी इसी चतुर्वर्ग के परिचायक है।

(३) **शिव**- योग शास्त्र में देवाधिदेव महादेव जी का रूप जो वर्णन किया गया है, वह इस प्रकार है-

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिमं चरूचन्द्राऽवतंसम् ।।रत्नाकल्पोज्जवलांगं परशुमृगवराऽभीतिस्त्रं प्रसन्नम्।

पद्मासीनं समान्तात् स्तुतममरगणैवर्याघ्र कृतिंवसानम् ।।विश्वद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रम्।।

भगवान् शिव के इस ध्यान में वे चाँदी के पर्वत के समान श्वेतवर्ण तथा चन्द्रकला से भूतिषत है। वे उज्ज्वलांग, प्रसन्नचित्त तथा चतुर्हस्तं में परशु, मृग, वर और अभय के धारण करने वाले हैं।

(४) **दुर्गा**- शक्ति की माता भवानी के विभिन्न रूपों में देवी का रूप तमोगुण को सिंहरूपी रजोगुण ने परास्त किया है। ऐसे सिंह के ऊपर आरोहण की हुई सिंहवासनी माता दुर्गा हैं जो कि शुद्ध गुणमयी ब्रह्मरूपिणी सर्वव्यापिनी और दशदिगरूपी दस हस्तों में शस्त्र धारण पूर्वक पूर्ण शक्तिशालिनी है।

(५) **गणेश**- शास्त्रों में गणपति को ब्रह्माण्ड के सात्विक सुबुद्धि राज्य पर अधिष्ठात्री देवता कहा गया है ।। गणपति परमात्मा के बुद्धि रूप है, सूर्य- चक्षुरूप है, शिव आत्मारूप और आद्या- प्रकृति जगदम्बा शक्ति रूप है ।। गणेश भगवान का शरीर स्थूल है, मुख गजेन्द्र का है और उदर विशाल है, आकृति सर्व है, जिनके गण्डस्थल से मदधरा प्रवाहित हो रही है और भ्रमरगण मंत्रलोभ से चंचल होकर गण्डस्थल में एकत्रित हो रहे हैं, जिन्होंने अपने दन्तों के आघात से शत्रुओं को विदीर्ण करके उनके रुधिर से सिन्दूर शोभा को धारण किया है और उनका स्वरूप समस्त कर्मों में सिद्धि प्रदान करने वाला है।

अभ्यास प्रश्न

1. कर्मकाण्ड के कितने प्रकार है।

क. 2 ख. 3 ग. 4 घ. 5

2. सम्पूर्ण वैदिक धर्म कितने भागों में विभक्त है।

क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

3. वेद शब्द में कौन सा प्रत्यय है।

क. गर ख. घञ् प्रत्यय ग. ल्युट घ. कोई नहीं

4. देवताओं की संख्या है।

क. 32 ख. 33 ग. 34 घ. 35

5. पितरों की संख्या कितनी है।

क. 7 ख. 8 ग. 9 घ. 10

1.3.1 कर्मकाण्ड के विविध आयाम

व्रत और उपवास

भारतीय संस्कृति में व्रत, त्यौहार, उत्सव, मेंले आदि अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। हिन्दुओं के ही सबसे अधिक त्यौहार मनाये जाते हैं, कारण हिन्दू ऋषि- मुनियों ने त्यौहारों के रूप में जीवन को सरस और सुन्दर बनाने की योजनाएँ रखी हैं। प्रत्येक त्यौहार, व्रत, उत्सव मेले आदि का एक गुप्त महत्व है। प्रत्येक के साथ भारतीय संस्कृति जुड़ी हुई है। वे विशेष विचार अथवा उद्देश्य को सामने रखकर निश्चित किये गये हैं।

प्रथम विचार तो ऋतुओं के परिवर्तन का है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति का साहचर्य विशेष महत्व रखता है। प्रत्येक ऋतु के परिवर्तन अपने साथ विशेष निर्देश लाता है, खेती में कुछ स्थान रखता है। कृषि प्रधान होने के कारण प्रत्येक ऋतु- परिवर्तन हँसी- खुशी मनोरंजन के साथ अपना- अपना उपयोग रखता है। इन्हीं अवसरों पर त्यौहारों का समावेश किया गया है, जो उचित है। ये त्यौहार दो प्रकार के होते हैं और उद्देश्य की दृष्टि से इन्हीं दो भागों में विभक्त किया जा सकता है।

प्रथम श्रेणी में वे व्रत, उत्सव, त्यौहार और मेले है, जो सांस्कृतिक है और जिनका उद्देश्य भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों और विचारों की रक्षा करना है। इस वर्ग में हिन्दुओ के सभी बड़े- बड़े त्यौहार आ जाते हैं, जैसे- होलिका उत्सव, दीपावली, बसन्त, श्रावणी, संक्रान्ति आदि। संस्कृति की रक्षा इनकी आत्मा है।

दूसरी श्रेणी में वे त्यौहार आते हैं, जिन्हें किसी महापुरुष की पुण्य स्मृति में बनाया गया है। जिस महापुरुष की स्मृति के ये सूचक हैं, उसके गुणों, लीलाओं, पावन चरित्र, महानताओं को स्मरण रखने के लिए इनका विधान है। इस श्रेणी में रामनवमी, कृष्णाष्टमी, भीष्म- पंचमी, हनुमान- जयन्ती, नाग पंचमी आदि त्यौहार रखे जा सकते हैं।

दोनों वर्गों में मुख्य बात यह है कि लोग सांसारिकता में न डूब गये या उनका जीवन नीरस, चिन्ताग्रस्त भार स्वरूप न हो जाये उन्हें ईश्वर की दिव्य शक्तियों और अतुल सामर्थ्य के विषय में चिन्तन, मनन, स्वाध्याय के लिए पर्याप्त अवकाश मिले । त्यौहारों के कारण सांसारिक आधि-व्याधि से पिसे हुए लोगों में नये प्रकार की उमंग और जागृति उत्पन्न हो जाती है। बहुत दिन पूर्व से ही त्यौहार मनाने में उत्साह ओर औत्सुक्य में आनंद लेने लगते हैं।

होली का- उत्सव गेहूँ और चने की नई फसल का स्वागत, गर्मी के आगमन का सूचक, हँसी- खुशी और मनोरंजन का त्यौहार है । ऊँच- नीच, अमीर- गरीब, जाति- वर्ण का भेद- भाव भूलकर सब हिन्दू प्रसन्न मन से एक दूसरे के गले मिलते और गुलाल, चन्दन, रोली, रंग, अबीर लगाते हैं। पारस्परिक मन- मुटाव और वैमनस्य की पुण्य गंगा बहाई जाती है। यह वैदिक कालीन और अति प्राचीन त्यौहार है। ऋतुराज वसंत का उत्सव है। वसंत, पशु- पक्षी, कीट- पतग, मानव सभी के लिए मादक मोहक ऋतु है ॥ इसमें मनुष्य का स्वास्थ्य अच्छा रहता है । होलिका दहन प्राचीन यज्ञ-व्यवस्था का ही बिगड़ा हुआ रूप है, जब सब नागरिक भेद- भाव छोड़कर छोटे- छोटे यज्ञों की योजना करते थे, मिल- जुल कर प्रेम पूर्वक बैठते थे, गायन- वादन करते और शिष्ट मनोरंजन से आनंद मनाते थे । आजकल इस उत्सव में जो अपवित्रता आ गई है, उसे दूर रहना चाहिए । अश्लीलता और अशिष्टता को दूर करना आवश्यक है ।
दीपावली लक्ष्मी - पूजन का त्यौहार है। गणेश चतुर्थी, संकट नाशक त्यौहार है। गणेश में राजनीति, वैदिक पौराणिक महत्त्व भरा हुआ है। तत्कालीन राजनीति का परिचायक है। बसन्त पंचमी प्रकृति की शोभा का उत्सव है। ऋतुराज वसंत के आगमन का स्वागत इसमें किया जाता है। प्रकृति का जो सौन्दर्य इस ऋतु में देखा जाता है, अन्य ऋतुओं में नहीं मिलता है। इस दिन सरस्वती पूजन भी किया जाता है। प्रकृति की मादकता के कारण यह उत्सव प्रसन्नता का त्यौहार है। इस प्रकार हमारे अन्य त्यौहारों का भी सांस्कृतिक महत्त्व है। सामूहिक रूप से सब को मिलाकर आनंद मनाने, एकता के सूत्र में बाँधने का गुप्त रहस्य हमारे त्यौहार और उत्सवों में छिपा हुआ है।

त्रिकाल संध्या

भारतीय संस्कृति में मंत्र, स्तुति, संध्या वंदन, प्रार्थना आदि का महत्त्व है। अधिकांश देवी- देवताओं के लिए हमारे यहाँ निश्चित स्तुतियाँ हैं, भजन हैं, प्रार्थनाएँ हैं, आरतियाँ हैं। प्रार्थना मंत्र स्तुति आदि द्वारा देवताओं से भी बल, कीर्ति आदि विभूतियाँ प्राप्त होती हैं। ये सब कार्य हमारी अंतः शुद्धि के मनोवैज्ञानिक साधन हैं।

त्रिकाल सन्ध्या से तात्पर्य तीनों कालों में की जाने वाली सन्ध्या कर्म से है । प्रात:, मध्याह्न एवं सायंकाल इन तीनों काल में की जाने वाली सन्धयाकर्मोपासना को त्रिकाल सन्ध्या के नाम से जानते है। प्राचीन समय में इस प्रकार के सन्ध्या वन्दना कर्म करने वाले ऋषियों की संख्या बहुतायत थी।

वर्तमान में ये लुप्तप्राय होते जा रहे है।
जैसे भिन्न- भिन्न मनुष्यों की भिन्न- भिन्न रुचियाँ होती हैं, वैसे ही हमारे पृथक–पृथक देवताओं की मन्त्र, आरतियाँ, पूजा प्रार्थना की विधियाँ भी पृथक–पृथक ही हैं। ये देवी- देवता हमारे भावों के ही मूर्त रूप हैं। जैसे हनुमान हमारी शारीरिक शक्ति के मूर्त स्वरूप हैं, शिव कल्याण के मूर्त रूप हैं, लक्ष्मी आर्थिक बल की मूर्त रूप हैं आदि। अपने उद्देश्य के अनुसार जिस देवी- देवता की स्तुति या आरती करते हैं, उसी प्रकार के भावों या विचारों का प्रादुर्भाव निरन्तर हमारे मन में होने लगता है। हम जिन शब्दों अथवा विचारों, नाम अथवा गुणों का पुनः- पुनः उच्चारण, ध्यान या निरन्तर चिंतन करते हैं, वे ही हमारी अन्तश्चेतना उच्चारण ही अपनी चेतना में इन्हें धारण करने का साधन है। मंत्र, प्रार्थना या वन्दन द्वारा उस दिव्य चेतना का आवाहन करके उसको मन, बुद्धि और शरीर में धारणा करते हैं ॥ अतः ये वे उपाय हैं जिनसे सद्गुणों का विकास होता है और चित्त शुद्धि हो जाती है। प्रत्येक देवता की जो स्तुति, मंत्र या प्रार्थना है, वह स्तरीय होकर आस- पास के वातावरण मे कम्पन करती है। उस भाव की आकृतियाँ समूचे वातावरण में फैल जाती हैं। हमारा मन और आत्मा उससे पूर्णतः सिक्त भी हो जाता है। हमारा मन उन कम्पनों से उस उच्च भाव- स्तर में पहुँचता है, जो उस देवता का भाव- स्तर है, जिसका हम मंत्र जपते हैं, या जिसकी अर्चना करते हैं, प्रार्थना द्वारा मन उस देवता के सम्पर्क में आता है। उन मंत्रों से जप बाहर- भीतर एक सी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार मंत्र, जप, प्रार्थना, प्रस्तुतियाँ कम्पनात्मक शक्ति हैं।

दानशीलता

भारतीय संस्कृति परमार्थ और परोपकार को प्रचुर महत्त्व देती है। जब अपनी सात्विक आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाय, तो लोक- कल्याण के लिए दूसरों की उन्नति के लिए दान देना चाहिए। प्राचीनकाल में ऐसे निःस्वार्थ लोक- हित ऋषि, मुनि, ब्राह्मण, पुरोहित, योगी, संन्यासी होते थे, जो समस्त आयु लोक -हित के लिए दे डालते थे। कुछ विद्यादान, पठन- पाठन में ही आयु व्यतीत करते थे। उपदेश द्वारा जनता की शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग, सहयोग, सुख, सुविधा, विवेक, धर्मपरायणता आदि सद्गुणों को बढ़ाने का प्रयत्न किया करते थे। माननीय स्वभाव में जो सत् तत्व है, उसी की व्रद्धि में वे अपने अधिकांश दिन व्यतीत करते थे। ये ज्ञानी उदार महात्मा अपने आप में जीवित- कल्याण की संस्थाएँ थे, यज्ञ रूप थे। जब ये जनता की इतनी सेवा करते थे, जो जनता भी अपना कर्तव्य समझकर इनके भोजन, निवास, वस्त्र, सन्तान का पालन- पोषण का प्रबंध करती थी। जैसे लोक- हितकारी संस्थाएँ आज भी सार्वजनिक चन्दे से चलाई जाती है, उसी प्रकार ये ऋषि, मुनि, ब्राह्मण भी दान, पुण्य, भिक्षा आदि द्वारा निर्वाह करते थे।
प्राचीन भारतीय ऋषि- मुनियों का इतना उच्च, पवित्र और प्रवृत्ति इतनी सात्विक होती थी कि उनके संबंध में किसी प्रकार के संदेह की कल्पना तक नहीं की जा सकती थी, क्योंकि उन्हें पैसा देकर जनता उसके सदुपयोग के विषय में निश्चित रहती थी। हिसाब जाँचने की आवश्यकता तक न समझती थी। इस प्रकार हमारे पुरोहित, विद्यादान देने वाले ब्राह्मण, मुनि, ऋषि दान- दक्षिणा द्वारा

जनता की सर्वतोमुखी उन्नति का प्रबंध किया करते थे। दान द्वारा उनके जीवन की आवश्यकताएँ पूरी करने का विधान उचित था। जो परमार्थ और लोक- हित जनता की सेवा सहायता में इतना तन्मय हो जाय कि अपने व्यक्तिगत लाभ की बात सोच ही न सके, उसके भरण- पोषण की चिन्ता जनता को करनी ही चाहिए। इस प्रकार दान देने की परिपाटी चली। कालान्तर में उस व्यक्ति को भी दान दिया जाने लगा। जो अपंग, अंधा, लंगड़ा लूला, अपाहिज या हर प्रकार से लाचार हो, जीविका उपार्जन धारण करने के लिए अन्य कोई साधन ही शेष नहीं रहता। इस प्रकार दो रूप में दूसरों को देने की प्रणाली प्रचलित रही है- १. ऋषि- मुनियों, ब्राह्मणों, पुरोहितों, आचार्यों, संन्यासियों को दी जाने वाली आर्थिक सहायता को नाम रखा गया दान। २. अपंग, लँगड़े, लूले, कुछ भी कार्य न कर सकने वाले व्यक्तियों को दी जाने वाली सहायता को भिक्षा कहा गया। दान और भिक्षा दोनों का ही तात्पर्य दूसरे की सहायता करना है। पुण्य, परोपकार सत्कार्य, लोक- कल्याण सुख- शान्ति की वृद्धि, सात्विकता का उन्नयन तथा समष्टि की, जनता की सेवा के लिए ही इन दिनों का उपयोग होना चाहिए।

दूसरों को देने का क्या तात्पर्य है। भारतीय दान परम्परा और कुछ उधार नहीं देने परम्परा की एक वैज्ञानिक पद्धति है। जो कुछ हम दूसरों को देते हैं, वह हमारी रक्षित पूँजी की तरह जमा हो जाता है। अच्छा दान जरूरत मंदों को देना कुछ विशेष महत्त्व नहीं रखता। कुपात्रों को धन देना व्यर्थ है जिसका पेट भरा हुआ हो, उसे और भोजन कराया जाय, तो वह बीमार पड़ेगा और अपने साथ दाता को भी अधोगति के लिए बहुत ही उत्तम धर्म- कर्म है। जो, अपनी रोटी दूसरों को बाँट कर खाता है, उसको किसी बात की कमी नहीं रहेगी। मृत्यु बड़ी बुरी लगती है, पर मौत से बुरी बात यह है कि कोई व्यक्ति दूसरे का दुःखी देखे, भोजन के अभाव में रोता चिल्लाता या मरता हुआ देखे, और उसकी किसी प्रकार भी सहायता करने में अपने आप को असमर्थ पावे। हिन्दू शास्त्र एक स्वर से कहते है कि मनुष्य- जीवन में परोपकार ही सार है हमें जितना भी संभव हो सदैव परोपकार में रहना चाहिए। किन्तु यह दान अभिमान, दम्भ, कीर्ति के लिए नहीं, आत्म कल्याण के लिए ही होना चाहिए। मेरे कारण दूसरों का भला हुआ है, यह सोचना उचित नहीं है॥ दान देने से स्वयं हमारी ही भलाई होती है। हमें संयम का पाठ मिलता है। आप यदि न देंगे, तो कोई भिखारी भूखा नहीं मर जायेगा। किसी प्रकार उसके भोजन का प्रबंध हो ही जायेगा, लेकिन आपके हाथ से दूसरों के उपकार को करने का एक अवसर जाता रहेगा। हमारी उपकार भावना कुण्ठित हो जायेगी। दान से जो मानसिक उन्नति होती, आत्मा को जो शक्ति प्राप्त होती, वह दान लेने वाले को नहीं, वरन् देने वाले को प्राप्त होती है। दूसरों का उपकार करना मानों एक प्रकार से अपना ही कल्याण करना है। किसी को थोड़ा सा पैसा देकर भला हम उसका कितना भला कर सकते हैं? हमारी उदारता का विकास हो जाता है। आनंद- स्रोत खुल जाता है।

1.4 धर्मसूत्र एवं स्मृति –

जैसा कि नाम से ही विदित है कि धर्मसूत्रों में व्यक्ति के धर्मसम्बन्धी क्रियाकलापों पर विचार किया गया है, किन्तु धर्मसूत्रों में प्रतिपादित धर्म किसी विशेष पूजापद्धति पर आश्रित न होकर समस्त - आचरण व व्यवहार पर विचार करते हुए सम्पूर्ण मानवजीवन का ही नियन्त्रक है। 'धर्म' शब्द का प्रयोग वैदिक संहिताओं तथा उनके परवर्ती साहित्य में प्रचुर मात्रा में होता जा रहा है। यहाँ पर यह अवधेय है कि परवर्ती साहित्य में धर्म शब्द का वह अर्थ दृष्टिगोचर नहीं होता, जो कि वैदिक संहिताओं में उपलब्ध है। संहिताओं में धर्म शब्द विस्तृत अर्थ में प्रयुक्त है। अथर्ववेद में पृथिवी के ग्यारह धारक तत्त्वों की गणना 'पृथिवीं स्धारयन्ति' कहकर की गयी है। इसी प्रकार ऋग्वेद* में 'तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्' कहकर यही भाव प्रकट किया गया है। इस प्रकार यह धर्म किसी देशविशेष तथा कालविशेष से सम्बन्धित न होकर ऐसे तत्वों को परिगणित करता है जो समस्त पृथिवी अथवा उसके निवासियों को धारण करते हैं। वे नियम शाश्वत हैं तथा सभी के लिए अपरिहार्य हैं। मैक्समूलर ने भी धर्म के इस स्वरूप की ओर इन शब्दों में इंगित किया हैप्राचीन भारतवासियों - के लिए धर्म सबसे पहले अनेक विषयों के बीच एक रुचि का विषय नहीं था अपितु वह सबका आत्मसमर्पण कराने वाली विधि थी। इसके अन्तर्गत न केवल पूजा और प्रार्थना आती थी अपितु वह सब भी आता था जिसे हम दर्शन, नैतिकता, क़ानून और शासन कहते हैं। उनका सम्पूर्ण जीवन उनके लिए धर्म था तथा दूसरी चीजें मानों इस जीवन की भौतिक आवश्यकताओं के लिए निमित्त मात्र थीं। संहिताओं के परवर्ती साहित्य में धर्म केवल वर्णाश्रम के आचारविचार तथा- क्रियाकलापों तक ही सीमित रह गया। उपनिषितकाल में धर्म का यही स्वरूप- उपलब्ध होता है। छान्दोग्य उपनिषद में * धर्म के तीन स्कन्ध गिनाए गये हैं। इनमें यज्ञ, अध्ययन तथा दान प्रथम, तप द्वितीय तथा आचार्यकुल में वास तृतीय स्कन्ध है। स्पष्ट ही इनके अन्तर्गत वर्गों में रूढ़ होकर परवर्ती काल में पूजापद्धति को भी धर्म ने अपने में समाविष्ट कर लिया। इतना होने पर भी सभी ने धर्म का मूल वेद को माना जाता है। मनु ने तो इस विषय में 'धर्म जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुति:' तथा 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्' आदि घोषणा करके वेदों को ही धर्म का मूल कहा है। गौतम धर्मसूत्र में तो प्रारम्भ में ही 'वेदोऽखिलोधर्ममूलम'। 'तद्विदां च स्मृतिशीले'* सूत्रों द्वारा यही बात कही गयी है। ये दोनों सूत्र मनुस्मृति के 'वेदोंऽखिलो धर्ममूलम स्मृतिशीले च तद्विदाम्' श्लोकांश के ही रूपान्तर मात्र हैं। इसी प्रकार वासिष्ठ धर्मसूत्र में भी *'श्रुतिस्मृतिविहितो धर्म:' कहकर धर्म के विषय में श्रुति तथा स्मृति को प्रमाण माना है। बौधायन धर्मसूत्र में श्रुति तथा स्मृति के अतिरिक्त शिष्टाचरण को भी धर्म का लक्षण कहकर मनुस्मृति में प्रतिपादित श्रुति, स्मृति तथा शिष्टाचरण को ही सूत्र रूप में निबद्ध किया है। इस

प्रकार धर्म के लक्षण में श्रुति के साथ स्मृति तथा शिष्टाचरण को भी सम्मिलित कर लिया गया। दर्शनशास्त्र में धर्म का लक्ष्य लोककहकर अत्यन्त व्यापक कर दिया गया तथा *सिद्धि परलोक की- एक प्रकार से समस्त मानवजीवन को ही इसके द्वारा नियन्त्रित कर दिया गया।- वैशेषिक दर्शन के उक्त लक्षण का यही अर्थ है कि समस्त जीवन का, जीवन के प्रत्येक श्वास एवं क्षण का उपयोग ही इस रीति से किया जाए कि जिससे अभ्युदय तथा निश्रेयस की सिद्धि हो सके। इसमें ही अपना तथा : दूसरों का कल्याण निहित है। धर्म मानव की शक्तियों एवं लक्ष्य को संकुचित नहीं करता अपितु वह तो मनुष्य में अपरिमित शक्ति देखता है जिसके आधार पर मनुष्य अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। अभ्युदय तथा निश्रेयस की सिद्धि नामक लक्ष्य इतना: महान है कि इससे बाहर कुछ भी नहीं है। इसे प्राप्त करने की निसीम: सम्भावनाएँ मनुष्य में निहित हैं। इस प्रकार जीवन के प्रत्येक पक्ष पर धर्म विचार करता है तथा अपनी व्यवस्था देता है।

धर्मसूत्रों में वर्णाश्रम-धर्म, व्यक्तिगत आचरण, राजा एवं प्रजा के कर्त्तव्य आदि का विधान है। ये गृह्यसूत्रों की शृंखला के रूप में ही उपलब्ध होते हैं। श्रौतसूत्रों के समान ही, माना जाता है कि प्रत्येक शाखा के धर्मसूत्र भी पृथक्-पृथक् थे। वर्तमान समय में सभी शाखाओं के धर्मसूत्र उपलब्ध नहीं होते। इस अनुपलब्धि का एक कारण यह है कि सम्पूर्ण प्राचीन वाङ्मय आज हमारे समक्ष विद्यमान नहीं है। उसका एक बड़ा भाग कालकवलित हो गया। इसका दूसरा कारण यह माना जाता है कि सभी शाखाओं के पृथक्-पृथक् धर्मसूत्रों का संभवत: प्रणयन ही नहीं किया गया, क्योंकि इन शाखाओं के द्वारा किसी अन्य शाखा के धर्मसूत्रों को ही अपना लिया गया था। पूर्वमीमांसा में कुमारिल भट्ट ने भी ऐसा ही संकेत दिया है।

आर्यों के रीति-रिवाज वेदादि प्राचीन शास्त्रों पर आधृत थे किन्तु सूत्रकाल तक आते-आते इन रीति-रिवाजों, सामाजिक संस्थानों तथा राजनीतिक परिस्थितियों में पर्याप्त परिवर्तन एवं प्रगति हो गयी थी अत: इन सबको नियमबद्ध करने की आवश्यकता अनुभव की गयी। सामाजिक विकास के साथ ही उठी समस्याएँ भी प्रतिदिन जटिल होती जा रही थीं। इनके समाधान का कार्यभार अनेक वैदिक शाखाओं ने संभाल लिया, जिसके परिणामस्वरूप गहन विचार-विमर्श पूर्वक सूत्रग्रन्थों का सम्पादन किया गया। इन सूत्रग्रन्थों ने इस दीर्घकालीन बौद्धिक सम्पदा को सूत्रों के माध्यम से सुरक्षित रखा, इसका प्रमाण इन सूत्रग्रन्थों में उद्धृत अनेक प्राचीन आचार्यों के मत-मतान्तरों के रूप में मिलता है। यह तो विकास का एक क्रम था जो तत्कालिक परिस्थिति के कारण निरन्तर हो रहा था। यह विकासक्रम यहीं पर नहीं रुका अपितु सूत्रग्रन्थों में भी समयानुकूल परिवर्तन एवं परिवर्धन किया गया जिसके फलस्वरूप ही परवर्ती स्मृतियों का जन्म हुआ। नयी-नयी समस्याएँ फिर भी उभरती रहीं। उनके समाधानार्थ स्मृतियों पर भी भाष्य एवं टीकाएँ लिखी गयीं जिनके माध्यम से प्राचीन वचनों की नवीन व्याख्याएँ की गयीं। इस प्रकार अपने से पूर्ववर्ती आधार को त्यागे बिना ही नूतन सिद्धान्तों तथा नियमों के समयानुकूल प्रतिपादन का मार्ग प्रशस्त कर लिया गया।

धर्मसूत्रों का महत्व उनके विषयप्रतिपादन के कारण है। सामाजिक व्यवस्था का- आधार वर्णाश्रम-व्यवस्था के आधार पर-वर्णाश्रम पद्धति है। धर्मसूत्रों में ही विविध विषयों का प्रतिपादन किया गया है। इनमें वर्णों के कर्तव्यों तथा अधिकारों पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। धर्मसूत्रकार आपत्काल में भी मन से ही आचारपालन पर बल देते हैं- । अयोग्य तथा दूषित व्यक्ति से परिग्रह का सर्वथा निषेध किया गया है। वर्णों एवं आश्रमों के कर्तव्यनिर्धारण की- दृष्टि से भी धर्मसूत्र पर्याप्त महत्व रखते हैं। धर्मसूत्रों के काल तक आश्रमों का महत्व पर्याप्त बढ़ गया था अतधर्मसूत्रों में एताद्विषयक : पर्याप्त निर्देश दिये गये हैं। सभी आश्रमों का आधार गृहस्थाश्रम है तथा उसका आधार है विवाह। धर्मसूत्रों में विवाह पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। यहाँ पर यह विशेष है कि अष्टविध विवाहों में सभी धर्मसूत्रकारों ने न तो एक क्रम को अपनाया तथा न ही उनकी श्रेष्ठता के तारतम्य को सभी ने स्वीकार किया। प्रतोलोम विवाह की सर्वत्र निन्दा की गयी है। विवाहोपरान्त पतिपत्नी के धार्मिक कृत्य एक - सम्पत्ति पर दोनों-साथ करने का विधान है। धन का समान रूप से अधिकार माना गया है। गृहस्थ के लिए पञ्च महायज्ञ तथा सभी संस्कारों की अनिवार्यता यहाँ पर प्रतिपादित की गयी है। धर्मसूत्रकार इस बात से भी भलीभाँति परिचित थे कि मर्यादाउल्लंघन से समाज में वर्णसंकरता- उत्पन्न होती है। धर्मसूत्रकारों ने वर्णसंकर जातियों को भी मान्यता प्रदान करके उनकी सामाजिक स्थिति का निर्धारण कर दिया तथा वर्णव्यवस्था का पालन कराकर वर्णसंकरता को रोकने का दायित्व राजा को सौंप दिया गया। गौतम धर्मसूत्र में जात्युत्कर्ष तथा जात्यपकर्ष का सिद्धान्त भी प्रतिपादित किया गया है। इस प्रकार वर्णाश्रम के विविध कर्तव्यों का प्रतिपादन करके इसके साथ पातक, महापातक, प्रायश्चित्त, भक्ष्याभक्ष्य, श्राद्ध, विवाह और उनके निर्णय, साक्षी, न्यायकर्ता, अपराध, दण्ड, ऋण, ब्याज, जन्म-मृत्युविषयक अशौच, स्त्रीधर्म आदि ऐसे सभी विषयों पर धर्मसूत्रों में- विचार किया गया है, जिनका जीवन में उपयोग है।

स्मृति

हिन्दू धर्म के उन धर्मग्रन्थों का समूह है जिनकी मान्यता श्रुति से नीची श्रेणी की हैं और जो मानवों द्वारा उत्पन्न थे। इनमें वेद नहीं आते। *स्मृति* का शाब्दिक अर्थ है - "याद किया हुआ"। यद्यपि स्मृति को वेदों से नीचे का दर्ज़ा हासिल है लेकिन वे (रामायण, महाभारत, गीता, पुराण) अधिकांश हिन्दुओं द्वारा पढ़ी जाती हैं, क्योंकि वेदों को समझना बहुत कठिन है और स्मृतियों में आसान कहानियाँ और नैतिक उपदेश हैं।

मनु ने श्रुति तथा स्मृति महत्ता को समान माना है। गौतम ऋषि ने भी यही कहा है कि ‘वेदो धर्ममूल तद्विदां च स्मृतिशीले। हरदत्त ने गौतम की व्खाख्या करते हुए कहा कि स्मृति से अभिप्राय है मनुस्मृति से। परन्तु उनकी यह व्याख्या उचित नहीं प्रतीत होती क्योंकि स्मृति और शील इन शब्दों का प्रयोग स्रोत के रूप में किया है, किसी विशिष्ट स्मृति ग्रन्थ या शील के लिए नहीं। स्मृति से अभिप्राय है वेदविदों की स्मरण शक्ति में पड़ी उन रूढ़ि और परम्पराओं से जिनका उल्लेख वैदिक साहित्य में नहीं किया गया है तथा शील से अभिप्राय है उन विद्वानों के व्यवहार तथा आचार में

उभरते प्रमाणों से। फिर भी आपस्तम्ब ने अपने धर्म-सूत्र के प्रारम्भ में ही कहा है 'धर्मज्ञसमयः प्रमाणं वेदाश्च'।

स्मृतियों की रचना वेदों की रचना के बाद लगभग ५०० ईसा पूर्व हुआ। छठी शताब्दी ई.पू. के पहले सामाजिक धर्म वेद एवं वैदिक-कालीन व्यवहार तथा परम्पराओं पर आधारित था। आपस्तम्ब धर्म-सूत्र के प्रारम्भ में ही कहा गया है कि इसके नियम समयाचारिक धर्म के आधार पर आधारित हैं। समयाचारिक धर्म से अभिप्राय है सामाजिक परम्परा से। सब सामाजिक परम्परा का महत्त्व इसलिए था कि धर्मशास्त्रों की रचना लगभग १००० ई.पू. के बाद हुई। पीछे शिष्टों की स्मृति में पड़े हुए परम्परागत व्यवहारों का संकलन स्मृति ग्रन्थों में ऋषियों द्वारा किया गया। इसकी मान्यता समाज में इसीलिए स्वीकार की गई होगी कि जो बातें अब तक लिखित नहीं थीं केवल परम्परा में ही उसका स्वरूप जीवित था, अब लिखित रूप में सामने आई। अतएव शिष्टों की स्मृतियों से संकलित इन परम्पराओं के पुस्तकीकृत स्वरूप का नाम स्मृति रखा गया। पीछे चलकर स्मृति का क्षेत्र व्यापक हुआ। इसकी सीमा में विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों—गीता, महाभारत, विष्णुसहस्रनाम की भी गणना की जाने लगी। शंकराचार्य ने इन सभी ग्रन्थों को स्मृति ही माना है।

स्मृति की भाषा सरल थी, नियम समयानुसार थे तथा नवीन परिस्थितियों का इनमें ध्यान रखा गया था। अतः ये अधिक जनग्राह्य तथा समाज के अनुकूल बने रहे। फिर भी श्रुति की महत्ता इनकी अपेक्षा अत्यधिक स्वीकार की गई। परन्तु पीछे इनके बीच संधि स्थापित करने के लिए वृहस्पति ने कहा कि श्रुति और स्मृति मनुष्य के दो नेत्र हैं। यदि एक को ही महत्ता दी जाय तो आदमी काना हो जाएगा। अत्रि ने तो यहाँ तक कहा कि यदि कोई वेद में पूर्ण पारंगत हो स्मृति को घृणा की दृष्टि से देखता हो तो इक्कीस बार पशु योनि में उसका जन्म होगा। वृहस्पति और अत्रि के कथन से इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वेद के समान स्मृति की भी महत्ता अब स्वीकार की गई। पीछे चलकर सामाजिक चलन में श्रुति के ऊपर स्मृति की महत्ता को स्वीकार कर लिया गया जैसे दत्तक पुत्र की परम्परा का वेदों में जहाँ विरोध हैं वहीं स्मृतियों में इसकी स्वीकृति दी गई है। इसी प्रकार पञ्चमहायज्ञ श्रुतियों के रचना काल की अपेक्षा स्मृतियों के रचना काल में व्यापक हो गया। वेदों के अनुसार झंझावात में, अतिथियों के आने पर, पूर्णिमा के दिन छात्रों को स्वाध्याय करना चाहिए क्योंकि इन दिनों में सस्वर पाठ करने की मनाही थी। परन्तु स्मृतियों ने इन दिनों स्वाध्याय को भी बन्द कर दिया। शूद्रों के सम्बन्ध में श्रुति का यह स्पष्ट निर्णय है कि वे मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकते हैं परन्तु उपनिषदों ने शूद्रों के ऊपर से यह बन्धन हटा दिया एवं उनके मोक्ष प्राप्ति की मान्यता स्वीकार कर ली गई। ये सभी तथ्य सिद्ध करते हैं कि श्रुति की निर्धारित परम्पराओं पर स्मृतियों की विरोधी परम्पराओं को पीछे सामाजिक मान्यता प्राप्त हो गई। स्मृतियों की इस महत्ता का कारण बताते हुए मारीचि ने कहा है कि स्मृतियों के जो वचन निरर्थक या श्रुति विरोधी नहीं हैं वे श्रुति के ही प्रारूप हैं। वेद वचन रहस्मय तथा बिखरे हैं जिन्हें सुविधा में स्मृतियों में स्पष्ट किया गया है। स्मृति वाक्य परम्पराओं पर आधारित हैं अतः इनके लिए वैदिक प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। इनकी वेदगत प्रामाणिकता

स्वतः स्वीकार्य है। वैदिक भाषा जनमानस को अधिक दुरूह प्रतीत होने लगी थी, जबकि स्मृतियाँ लौकिक संस्कृत में लिखी गई थीं जिसे समाज सरलता से समझ सकता था तथा वे सामाजिक व्यवस्था के अनुरूप सिद्धांतप्रतिपादित करती थीं। स्मृति लेखकों को भी वैदिक महर्षियों की तरह समाज ने गरिमा प्रदान की थी। वैदिक और स्मृति काल के बीच व्यवहारों तथा परिस्थितियों के बदलने से एवं विभिन्न आर्थिक कारणों और नवीन विचारों के समागम से स्मृति को श्रुति की अपेक्षा प्राथमिकता मिली। इसका कारण यह भी बताया जा सकता है कि समाजशास्त्रीय मान्यता के पक्ष में था। इन सब कारणों से श्रुति की मान्यता को स्मृतियों की मान्यता के सम्मुख ५०० ईसा पूर्व से महत्त्वहीन समझा जाने लगा।

देव पूजा का विधान

भारतीय संस्कृति देव- पूजा में विश्वास करती है। 'देव' शब्द का स्थूल अर्थ है - देने वाला, ज्ञानी, विद्वान आदि श्रेष्ठ व्यक्ति। देवता हमसे दूर नहीं है, वरन् पास ही हैं। हिन्दू धर्मग्रन्थों में जिन तैंतीस करोड़ देवताओं का वर्णन किया गया है, वे वास्तव में देव -- शक्तियाँ हैं। ये ही गुप्त रूप से संसार में नाना प्रकार के परिवर्तन, उपद्रव, उत्कर्ष उत्पन्न करती रहती है। हमारे यहाँ कहा गया है कि देवता ३३ प्रकार के हैं, पितर आठ प्रकार के हैं, असुर ६६ प्रकार के, गन्धर्व २७ प्रकार के, पवन ४६ प्रकार के बताए गए हैं। इन भिन्न -- भिन्न शक्तियों को देखने से विदित होता है कि भारतवासियों को सूक्ष्म -- विज्ञान की कितनी अच्छी जानकारी थी और वे उनसे लाभ उठाकर प्रकृति के स्वामी बने हुए थे। कहा जाता है कि रावण के यहाँ देवता कैद रहते थे, उसने देवों को जीत लिया था। हिंदुओं के जो इतने अधिक देवता हैं, उनसे यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने मानवता के चरम- विकास में असंख्य दैवी गुणों के विकास पर गम्भीरता से विचार किया था। प्रत्येक देवता एक गुण का ही मूर्त रूप है। देव- पूजा एक प्रकार से सद्गुणों, उत्तम सामर्थ्यों और उन्नति के गुप्त तत्वों की पूजा है। जीवन में धारण करने योग्य उत्तमोत्तम सद्गुणों को देवता का रूप देकर समाज का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट किया गया। गुणों को मूर्त स्वरूप प्रदान कर भिन्न- भिन्न देवताओं का निर्माण हुआ है। इस सरल प्रतीक पद्धति से जनता को अपने जीवन को ऊँचाई की ओर ले जाने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ।

शिखा का महत्त्व

भारतीय संस्कृति में शिखा हिन्दुत्व की प्रतीक है कारण इसे धारण करने में अनेक शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक लाभ हैं। शिखा- स्थान मस्तिष्क की नाभी है, इस केंद्र से उस सूक्ष्म तंतुओं का संचालन होता है, जिसका प्रसार समस्त मस्तिष्क में हो रहा है और जिनके बल पर अनेक मानसिक शक्तियों का पोषण और विकास होता है। इस केंद्र स्थान से विवेक दृढ़ता, दूरदर्शिता, प्रेम शक्ति और संयम शक्तियों का विकास होता है। ऐसे मर्म स्थान पर केश रक्षने से सुरक्षा हो जाती है। बालों में बाहरी प्रभाव को रोकने की शक्ति है। शिखा स्थान पर बाल रहने से अनावश्यक सर्दी- गर्मी का प्रभाव नही पड़ता। उसकी सुरक्षा सदा बनी रहती है।

शिखा से मानसिक शक्तियों का पोषण होता है। जब बाल नहीं काटे जाते, तो नियत सीमा पर पहुँच कर उनका बढ़ता बन्द हो जाता है। जब बढ़ता बन्द हो आया तो केशों की जड़ों को बाल बढने के लिए रक्त लेकर खर्च करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। बचा हुआ रक्त उन पाँच शक्तियों का पोषण करने में खर्च होता है, जिससे उनका पोषण और विकास अच्छी तरह होता है। इससे मनुष्य विवेकशील, दृढ़ स्वभाव, दूरदर्शी, प्रेमी और संयमी बनता है। वासना को वश में रखने का एक उपाय शिखा रखना है । बाल कटाने से जड़ों में एक प्रकार की हलचल मचती है। यह खुजली मस्तिष्क से सम्बद्ध वासना तन्तुओं में उतर जाती है । फलस्वरूप वासना भड़कती है। इस अनिष्ट से परिचित होने के कारण ऋषि- मुनि केश रखते हैं और उत्तेजना से बचते है ।

बालों में एक प्रकार का तेज होता है। स्त्रियाँ लम्बे बाल रखती हैं, तो उनकी तेजस्विता बढ़ जाती है। पूर्व काल के महापुरुष बाल रखा करते थे, और वे तेजस्वी होते थे। शिखा स्थान पर बाल रखने से विशेष रूप से तेजस्विता बढ़ती है। शिखा स्पर्श से शक्ति का संचार होता है। यह शक्ति का प्रतिनिधित्व करती है। प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि चाणक्य ने शिखा को हाथ में लेकर अर्थात् दुर्गा को साक्षी बना कर नन्द वंश के नाश की प्रतिज्ञा की थी और वह अंत: पूरी हुई थी। शक्ति रूपी शिखा को श्रद्धापूर्वक धारण करने से मनुष्य शक्तिसम्पन्न बनता है। हिन्दू धर्म, हिन्दू राष्ट्र, हिन्दू संस्कृति, की ध्वजा इस शिखा को धारण करना एक प्रकार से हिन्दुत्व का गौरव है। शिखा के निचले प्रदेश में आत्मा का निवास योगियों ने माना है। इस प्रकार इस स्थान पर शिखा रूपी मंदिर बनाना ईश्वर प्राप्ति में सहायक होता है। मनुष्य के शरीर पर जो बाल हैं, ये भी छिद्र युक्त हैं। आकाश में से प्राण वायु खींचते हैं, जिससे मस्तिष्क चैतन्य, पुष्ट और निरोग रहता है। सिर के बालों का महत्त्व अधिक है, क्योंकि वे मस्तिष्क का पोषण करने के अतिरिक्त आकाश से प्राण वायु खींचते हैं। अनुष्ठान काल में बाल कटाना वर्जित है। किसी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिए बाल कटाना वर्जित है। इसका कारण यह है कि बाल रखने से मनोबल की वृद्धि होती है और दृढ़ता आती है। संकल्प पूर्ण करने का मार्ग सुगम हो जाता है। मनोबल की वृद्धि के लिए शिखा आवश्यक है। प्राचीन काल में जिसे तिरस्कृत, लज्जित या अपमानित करना होता था, उसका सिर मुँडा दिया जाता था। सिर मुँडा देने से मन गिर जाता है और जोश ठण्डा पड़ जाता है। नाड़ी तन्तु शिथिल पड़ जाता है। यदि अकारण मुंडन कराया जाय, तो उत्साह और स्फूर्ति में कमी आ जाती है। सिक्ख धर्म में सिखा का विशेष महत्त्व है। गुरुनानक तथा अन्य सिक्ख गुरुओं ने अपने अध्यात्म बल से शिखा के असाधारण लाभों को समझकर अपने सम्प्रदाय वालों को पाँच शिखाएँ अर्थात् पाँच स्थानों पर बाल रखने का आदेश दिया। शिखा को शिर पर स्थान देना धार्मिकता या आस्तिकता को स्वीकार करना है। ईश्वरीय संदेशों को शिखा के स्तम्भ द्वार ग्रहण किया सकता है। शिखाधारी मनुष्य दैवीय शुभ संदेशों को प्राप्त करता है और ईश्वरीय सन्निकटता सुगमतापूर्वक सुनता है। शिखा हिन्दुत्व की पहचान है, जो सदा अन्त समय तक मनुष्य के साथ चलता है। इस प्रकार विवेकशील हिन्दू को सिर पर शिखा धारण करनी

चाहिए।

मूर्तिपूजा

भारतीय संस्कृति में प्रतीकवाद का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सबके लिए सरल सीधी पूजा- पद्धति को आविष्कार करने का श्रेय भारत को ही प्राप्त है। पूजा- पद्धति की उपयोगिता और सरलता की दृष्टि से हिन्दू धर्म की तुलना अन्य सम्प्रदायों से नहीं हो सकती। हिन्दू धर्म में ऐसे वैज्ञानिक मूलभूत सिद्धांत दिखाई पड़ते हैं, जिनसे हिन्दुओं का कुशाग्र बुद्धि विवेक और मनोविज्ञान की अपूर्व जानकारी का पता चलता है। मूर्ति- पूजा ऐसी ही प्रतीक पद्धति है। मूर्ति- पूजा क्या है? पत्थर, मिट्टी, धातु या चित्र इत्यादि की प्रतिमा को मध्यस्थ बनाकर हम सर्वव्यापी अनन्त शक्तियों और गुणों से सम्पन्न परमात्मा को अपने सम्मुख उपस्थित देखते हैं। निराकार ब्रह्म का मानस चित्र निर्माण करना कष्टसाध्य है। बड़े योगी, विचारक, तत्त्ववेत्ता सम्भव है यह कठिन कार्य कर दिखायें, किन्तु साधारण जन के जिए तो वह नितांत असम्भव सा है। भावुक भक्तों, विशेषतः नारी उपासकों के लिए किसी प्रकार की मूर्ति का आधार रहने से उपासना में बड़ी सहायता मिलती है। मानस चिन्तन और एकाग्रता की सुविधा को ध्यान में रखते हुए प्रतीक रूप में मूर्ति- पूजा की योजना बनी है। साधक अपनी श्रद्धा के अनुसार भगवान की कोई भी मूर्ति चुन लेता है और साधना अन्तःचेतना ऐसा अनुभव करती है मानो साक्षात् भगवान से हमारा मिलन हो रहा है। मनीषियों का यह कथन सत्य हे कि इस प्रकार की मूर्ति- पूजा में भावना प्रधान और प्रतिमा गौण है, तो भी प्रतिमा को ही यह श्रेय देना पड़ेगा कि वह भगवान की भावनाओं का उत्प्रेरक और संचार विशेष रूप से हमारे अन्तःकरण में करती है। यों कोई चाहे, तो चाहे जब जहाँ भगवान को स्मरण कर सकता है, पर मन्दिर में जाकर प्रभु- प्रतिमा के सम्मुख अनायास ही जो आनंद प्राप्त होता है, वह बिना मन्दिर में जाये, चाहे, जब कठिनता से ही प्राप्त होगा। गंगा- तट पर बैठकर ईश्वरीय शक्तियों का जो चमत्कार मन में उत्पन्न होता है, वह अन्यत्र मुश्किल से ही हो सकता है। मूर्ति- पूजा के साथ- साथ धर्म मार्ग में सिद्धांतानुसार प्रगति करने के लिए हमारे यहाँ त्याग और संयम पर बड़ा जोर दिया गया है। सोलह संस्कार, नाना प्रकार के धार्मिक कर्मकाण्ड, व्रत, जप, तप, पूजा, अनुष्ठान, तीर्थ यात्राएँ, दान, पुण्य, स्वाध्याय, सत्संग ऐसे ही दिव्य प्रयोजन हैं, जिनसे मनुष्य में संयम ऐसे ही दिव्य प्रयोजन हैं, जिनसे मनुष्य में संयम और व्यवस्था आती है। मन दृढ़ बनकर दिव्यत्व की ओर बढ़ता है। आध्यात्मिक नियंत्रण में रहने का अभ्यस्त बनता है।

मूर्ति- "जड़ (मूल)ही सबका आधार हुआ करती है। जड़ सेवा के बिना किसी का भी कार्य नहीं चलता। दूसरे की आत्मा की प्रसन्नतापूर्वक उसके आधारभूत जड़ शरीर एवं उसके अंगों की सेवा करनी पड़ती है। परमात्मा की उपासना के लिए भी उसके आश्रय स्वरूप जड़ प्रकृति की पूजा करनी पड़ती है। हम वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, प्रकाश आदि की उपासना में प्रचुर लाभ उठाते हैं, तब मूर्ति- पूजा से क्यों घबराना चाहिए? उसके द्वारा तो आप अणु- अणु में व्यापक चेतन (सच्चिदानंद) की पूजा कर रहे होते हैं। आप जिस बुद्धि को या मन को आधारभूत करके परमात्मा का अध्ययन कर

रहे होते हैं क्यों वे जड़ नहीं हैं? परमात्मा भी जड़ प्रकृति के बिना कुछ नहीं कर सकता, सृष्टि भी नहीं रच सकता। तब सिद्ध हुआ कि जड़ और चेतन का परस्पर संबंध है। तब परमात्मा भी किसी मूर्ति के बिना उपास्य कैसे हो सकता है?

हमारे यहाँ मूर्तियाँ मन्दिरों में स्थापित हैं, जिनमें भावुक जिज्ञासु पूजन, वन्दन अर्चन के लिए जाते हैं और ईश्वर की मूर्तियों पर चित्त एकाग्र करते हैं। घर में परिवार की नाना चिन्ताओं से भरे रहने के कारण पूजा, अर्चन, ध्यान इत्यादि इतनी तरह नहीं हो पाता, जितना मन्दिर के प्रशान्त स्वच्छ वातावरण में हो सकता है। अच्छे वातावरण का प्रभाव हमारी उत्तम वृत्तियों को शक्तिवान बनाने वाला है। मन्दिर के सात्विक वातावरण में कुप्रवृत्तियाँ स्वयं फीकी पड़ जाती हैं। इसलिए हिन्दू संस्कृति में मन्दिर की स्थापना को बड़ा महत्त्व दिया गया है।

कुछ व्यक्ति कहते हैं कि मन्दिरों में अनाचार होते हैं। उनकी संख्या दिन- प्रतिदिन बढ़ती जाती रही है। उन पर बहुत व्यय हो रहा है। अतः उन्हें समाप्त कर देना चाहिए। सम्भव है इनमें से कुछ आक्षेप सत्य हों, किन्तु मन्दिरों को समाप्त कर देने या सरकार द्वारा जब्त कर लेने मात्र से क्या अनाचार दूर हो जायेंगे? यदि किसी अंग में कोई विकार आ जाय, तो क्या उसे जड़मूल से नष्ट कर देना उचित है? कदापि नहीं। उसमें उचित परिष्कार और सुधार करना चाहिए। इसी बात की आवश्यकता आज हमारे मन्दिरों में है। मन्दिर स्वेच्छा नैतिक शिक्षण के केन्द्र रहें। उनमें पढ़े- लिखे निस्पृह पुजारी रखे जायें, जो मूर्ति- पूजा कराने के साथ- साथ जनता को धर्म- ग्रन्थों, आचार शास्त्रों, नीति, ज्ञान का शिक्षण भी दें और जिनका चरित्र जनता के लिए आदर्श रूप हो।

1.5 सारांश -

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप कर्मकाण्ड का मूल स्रोत क्या है। कर्मकाण्ड के विविध रूप, उनके प्रकार, मूर्तिपूजा, सन्ध्या वन्दन, दानशीलता, देवपूजन का विधान, शिखा का महत्व आदि का ज्ञान आप इस इकाई में करेंगे। कर्मकाण्ड के अन्तर्गत उपर्युक्त विषय सामान्य है, जिसका ज्ञान परमावश्यक है। इस दृष्टिकोण से आपको इस इकाई के माध्यम से इन विषयों का ज्ञान कराया जा रहा है।

1.6 शब्दावली

कर्मकाण्ड - धार्मिक क्रियाओं से जुड़े कर्म को कर्मकाण्ड कहते है।

वेद – सर्वविद्या का मूल

पूजन – धार्मिक क्रिया

दानशीलता – दान में निपुणता

मूर्तिपूजा- मूर्तियों की पूजा

सन्ध्या - गायत्री उपासना सम्बन्धित कार्य।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1. क
2. क
3. ख
4. ख
5. ख

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम	प्रकाशन
नित्यकर्म पूजाप्रकाश	गीताप्रेस गोरखपुर
भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व	
कर्मकाण्ड प्रदीप	

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- कर्मकाण्ड को परिभाषित करते हुये विस्तार से उसका वर्णन कीजिये ?

2- मूर्तिपूजा एवं देवपूजन विधान से आप क्या समझते है ? विस्तृत व्याख्या कीजिये।

3. धर्मसूत्र एवं स्मृति का विस्तार से उल्लेख कीजिये।

इकाई – 2 प्रात:कालीन (नित्यकर्म विधि)

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3. प्रातःकालीन नित्यकर्म परिचय

अभ्यास प्रश्न

2.3.1 कृत्य नित्यकर्म

2.3.2 भगवत स्मरण

2.4 सारांश

2.5 शब्दावली

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रथम खण्ड के द्वितीय इकाई '**प्रात:कालीन नित्यकर्म विधि**' नामक शीर्षक से सम्बन्धित है । मानव अपने दैनन्दिनी जीवन में क्या – क्या कर्म करें, जिससे कि उसका सर्वतोमुखी विकास हो इसके लिये आचार्यों ने नित्यकर्म क्रिया की विधि बतलाई है । यदि व्यक्ति उसका क्रमश: पालन करें तो निश्चय ही उसका सर्वतोभावेन कल्याण होगा ।

प्रतिदिन किया जानेवाला कर्म '**नित्यकर्म**' कहलाता है। इसके अनुसार एक प्रात:काल से दूसरे प्रातःकाल तक शास्त्रोक्त रीति से, दिन-रात के अष्टयामों के आठ यामार्ध कृत्यों यथा- ब्राह्म मुहूर्त में निद्रात्याग, देव, द्विज और ऋषि स्मरण, शौचादि से निवृत्ति, वेदाभ्यास, यज्ञ, भोजन, अध्ययन, लोककार्य आदि करना चाहिए।
इस इकाई में आप प्रात:कालीन नित्यकर्म विधि का विधिवत् अध्ययन करेंगे तथा तत्सम्बन्धि अनेक विषयों से परिचित हो सकेंगे ।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान सकेंगे कि –

1. प्रात:कालीन नित्य कर्म को जान सकेगें ।
2. नित्यकर्म क्रिया की विधि को समझ सकेगें ।
3. नित्यकर्म से जुड़ी अनेक बातों को जान पायेंगे ।
4. नित्यकर्म के महत्व को समझ सकेगें ।
5. नित्यकर्म को परिभाषित करते हुये उसकी मीमांसा कर सकेगें ।

2.3 प्रात:कालीन नित्यकर्म का परिचय

मीमांसकों ने द्विविध कर्म कहें हैं - अर्थकर्म और गुणकर्म । इनमें अर्थ कर्म के तीन भेद हैं - नित्यकर्म, नैमित्तिक कर्म और काम्यकर्म । गृहस्थों के लिए इन तीनों को करने का निर्देश है। इनमें प्रथम कर्म नित्यकर्म है जिसके अंतर्गत पंचयज्ञादि आते हैं। अग्निहोत्र आदि ब्राह्मणों के नित्यकर्म हैं। इन्हें करने से मनुष्य के प्रति दिन के पापों का क्षय होता है। जो इस कर्तव्य को नहीं निवाहता वह शास्त्र के अनुसार पाप का भागी होकर पतित और निंद्य हो जाता है।
जन्मना जायते शूद्रः, संस्काराद् द्विज उच्यते। - महर्षि मनु
महर्षि मनु महाराज का कथन है कि मनुष्य शूद्र के रूप में उत्पन्न होता है तथा संस्कार से ही द्विज बनता है । संस्कार हमारे चित्त पर पड़ी वे शुभ व दिव्य हैं, जो हमें अशुभ की ओर जाने से रोकती है

तथा और अधिक शुभ व दिव्य की ओर जाने के लिए प्रेरित करती है। ऋषियों ने हमारे अन्तःकरण को हर क्षण शुभ संस्कारों से आप्लवित किये रखने के लिए कुछ नित्यकर्मों का विधान किया है, जिनमें प्रातः जागरण से लेकर रात्रि शयन पर्यन्त हमारी सारी दिनचर्या आ जाती है। यदि हम इन नित्यकर्मों को अपने दैनिक जीवनचर्या का अंग बना लेते हैं तो हमारा जीवन साधारण मनुष्य की चेतना से ऊपर उठकर देवताओं की दिव्य चेतनाओं की ओर अग्रसर होने लगता है। यह ही हमारे ''दिव्य योग मन्दिर (ट्रस्ट)'' का लक्ष्य है कि मनुष्य अपने व्यक्तित्व के प्रत्येक भाग को दिव्य बनाए, चाहे वह उसका शरीर हो या उसकी वाणी हो या उसका मन हो। इसी लक्ष्य को दृष्टिगत रखते हुए प्रस्तुत ''वैदिक नित्यकर्म विधि'' में ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ आदि नित्यकर्मों के मन्त्रों को सरलार्थ सहित प्रस्तुत किया गया है ताकि हम मन्त्र के अन्तर्गत दिये जाने वाले सन्देश, आदेश या शिक्षा को जान सकें और उसे अपने जीवन का अंग बनाकर जीवन को सार्थक कर सकें।

नित्यकर्म में किये जाने वाले छ: कर्म शास्त्रोक्त है – स्नान, सन्ध्या, जप, होम, देवपूजन, अतिथि सत्कार। मनुष्य को मानसिक एवं शारीरिक शुद्धि हेतु इन कर्मों को अवश्य करना चाहिये।

2.3.1 कृत्य नित्यकर्म

मनुष्य के दैनन्दिनी जीवन में कृत्य नित्यकर्मो का निम्नलिखित उल्लेख आपके अध्ययनार्थ प्रस्तुत है -

नित्यकर्म में मुख्य छः कर्म बताये गये है -

सन्ध्या स्नानं जपश्चैव देवतानां च पूजनम।

वैश्वदेवं तथाऽऽतिथ्यं षट् कर्माणि दिने दिने।।

मनुष्य को शारीरिक शुद्धि के लिए स्नान, संध्या, जप, देवपूजन, बलिवैश्वदेव और अतिथि सत्कार - ये छः कर्म प्रतिदिन करने चाहिए। हमारी दिनचर्या नियमित है। प्रातः काल जागरण से लेकर शयन तक की समस्त क्रियाओं के लिए शास्त्रकारों ने अपने दीर्घकालीन अनुभव से ऐसे नियमों का निर्माण किया है जिनका अनुसरण करके मनुष्य अपने जीवन को सफल कर सकता है। नियमित क्रियाओं के ठीक रहने पर ही स्वास्थ एवं मन स्वस्थ रहता है।

उषाकालीन दैनिक कर्त्तव्य

''स्त्री पुरुष सदा-10 बजे शयन और रात्रि के अन्तिम प्रहर अर्थात् 4 बजे उठकर सर्वप्रथम हृदय में परमेश्वर का चिन्तन करके, धर्म और अर्थ का विचार किया करें। धर्म और अर्थ के लिए अनुष्ठान वा उद्योग करने में यदि कभी भी पीड़ा हो तो भी धर्मयुक्त पुरुषार्थ को कभी न छोड़े। सदा शरीर और आत्मा की रक्षा के लिये युक्त आहारविहार-, औषधसेवन, सुपथ्य आदि से निरन्तर उद्योग करके

व्यावहारिक और पारमार्थिक कर्त्तव्य कर्म की सिद्धि के लिए ईश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना भी किया करें ताकि उस परमेश्वर की कृपादृष्टि और सहाय से महाकठिन कार्य भी सुगमता से सिद्ध हो सकें। इसके लिए निम्नांकित वैदिक मंत्र हैं-

प्रात: कालीन जागरण मन्त्र -

ॐ प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातस्सोममुत रुद्रं हुवेम ।।

अर्थ -हे स्त्री पुरुषों प्रभात (:प्रात) जैसे हम विद्वान उपदेशक लोग ! वेला में (अग्निम्) परमैश्वर्य के (इन्द्रम्) (:प्रात) स्वप्रकाशस्वरूप दाता और परमैश्वर्ययुक्त (:प्रात) प्राण (मित्रावरुणा), उदान के समान प्रिय और सर्वशक्तिमान् सूर्य (अश्विना) (:प्रात), चन्द्र को जिसने उत्पन्न किया है, उस परमात्मा की स्तुति करते हैं (हवामहे); और (प्रातः) (भगम्भजनीय सेवनीय (, ऐश्वर्ययुक्त पुष्टिकर्त्ता (पूषणम्) (ब्रह्यणस्पतिम्अपने (उपासक, वेद और ब्रह्माण्ड के पालन करने वाले वाले, (प्रातःअन्तर्यामी (सोमम्) (, प्रेरक रुद्) और (उत)रंपापियों क (े नाशक और सर्वरोगनाशक जगदीश्वर की स्तुति (हुवेम), करते हैं, वैसे प्रात समय में :ईश्वर का स्मरण करना चाहिए ।।

ॐ प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ।।

अर्थ पाँच घड़ी रात्रि (:प्रात) -शेष रहे ऐश्वर्य के (भगम्) जयशील् (जितम्) दाता (उग्रम्) (:अदिते) तेजस्वी अन्तरिक्ष के (पुत्रम्) पुत्ररूप सूर्य की उत्पत्ति करने वाले और जो (:य) (विधर्त्ता) कि सूर्यादि लोकों का विशेष करके धारण करने वाले हैसब ओर से (:आध्र) (यं चित्त्) धारणकर्त्तासभी को जानने (:मन्यमान)वालेदुष्टों क (तुरश्चित्) े भी दण्ड-दाता; और भी (चित्) भजनीयस्वरूप को (भगम्) जिस (यम्) सबका प्रकाशक है (राजा) (भक्षीतिइस प्रकार सेवन करता हूँ और इसी प्रकार भग (वान् परमेश्वर सबको (आह (उपदेश करता है कि मैं सूर्यादि जगत् को बनाने और धारण करने वाला हूँ; अत: मेरी उपासना किया करो और मेरी आज्ञा से चला करो, इसी कारण (वयम्हम लो (गों को उनकी स्तुति कर (हुवेम) नी चाहिये ।

ॐ भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्न।:
भग प्रणो जनय गोभिरश्वैर्भग प्रनृभिर्नृवन्तस्याम :ु ।।

अर्थसबके उत्पादक (:प्रणेत) भजनीयस्वरूप (भग) हे -, सत्याचार में प्रेरक (भग ऐश्वर्यप्रद (सत्याचरण करने (भग) सत्य धन को देने हारे (:सत्यराध) हारो को ऐश्वर्य देने वाले आप

परमेश्वर (धियम्) इस (इमाम्) हमको (:न) ! प्रज्ञा को दीजिये और उसके दान से (ददत्) रक्षा कीजिये। हे (उदवा) हमारी (भगघोड़े आदि (अश्वै) गाय आदि और (:गोभि) आप (उत्तम पशुओं के योग से राज्यश्री को (भग) प्रगट कीजिये। हे (प्रजनय) हमारे लिये (:न) हे भजनीय स्वरूप परमात्मा नृभ) आपकी कृपा से हम लोग !िउत्तम मनुष्यों से (: (नृवन्त (:से भी उत्तम मनुष्य हो (प्रस्याम)।

ॐ उतेदानीं भगवन्तस्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्। :

उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम् ।।

अर्थ- हे भगवान् और अपने पुरुषार्थ से हम लोग (उत्) आप की कृपा ! (इदानीम्इस (और (उत) उत्तमता की प्राप्ति में-प्रकर्षता (प्र पित्वे) समय (अह्नाम् इन दिनों के (ऐश्वर्ययुक्त और (:भगवन्त) मध्य में (मध्ये) शक्तिमान् और हे (उत) होवें (स्याम्) परम पूजित असंख्य धन देने (मघवन्) हारे उदय में (उदिता) सूर्यलोक के (सूर्यस्त) ! पूर्ण विद् (देवानाम्)वान धार्मिक आप्त लोगों की और (उत) अच्छी उत्तम प्रज्ञा (सुमतौ) सुमति में (वयम्हम (लोग सदा प्रवृत्त रहें। (स्याम)

ॐ भग एवं भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तस्याम। :

तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुर एता भवेह ।।

अर्थआपकी (त्वा) उस (तम्) जिससे ! सकलैश्वर्यसम्पन्न जगदीश्वर (भग) हे - (सर्वसब (: सो आप (:स) निश्चय करके प्रशंसा करते हैं (इज्जोहवीति) सज्जन, हे ! ऐश्वर्यप्रद (भग) पुर) हमारे गृहाश्रम में (:न) इस संसार और (इह) एताअग्रगामी और आगे सत्कर्मों में ((भग एव) हूजिये और (भव) बढ़ाने हारे सम्पूर्ण ऐश्वर्य युक्त और समस्त ऐश्वर्य के दाता होने के आप ही हमारे (भगवान् :देवा) उसी हेतु से (तेन) हूजिये। (अस्तु) पूजनीय देव (हम (वयम् विद्वान लोग सकलैश्वर्य सम्पन्न होके सब संसार के उपकार में (:भगवन्त) तन, मन, धन से प्रवृत्त हो (स्याम) ।

इस प्रकार परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिए। तत्पश्चात् शौच, दन्तधावन, मालिश व्यायाम आदि स्नान करके स्नान करें। पश्चात् एक कोश या डेढ़ कोश एकान्त जंगल में जाके योगाभ्यास की रीति से परमेश्वर की उपासना कर, सूर्योदय पर्यन्त अथवा घड़ी आध घड़ी दिन चढ़े तक घर पर आकर सन्ध्योपासनादि नित्यकर्म यथाविधि उचित समय में किया करना चाहिए ।

2.3.2 भगवत स्मरण

श्री गणेश स्तुति:

गजाननं भूत गणाधिसेवितं कतिपय जम्बूफल चारू भक्षणम्।
उमा सुतं शोक विनाश कारकं नवामि विघ्नेश्वर पाद पंकजम्।।

शिव स्तुतिः

कर्पूरगौरं करुणावतांर, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्। सव्दावसंतं ह्मदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि।।

गायत्री मन्त्र

ऊँ भूर्भव:तत्सवितुर्वरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो न :स्व : प्रचोदयात्। भावार्थ: उस प्राण स्वरूप, दुख नाशक:,सुख स्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, प्रकाश स्वरूप परमात्मा को हम अन्तरात्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे। सूर्य नमस्कार सूर्य देव के तेरह नामों का स्मरण कर जल चढ़ाये। पात्र में जल ले उसमें लाल कुमकुम, लाल फूल डालें। श्री ऊँ मित्राय नम:, ऊँ हिरण्यगर्माय नम:, ऊँ रवये नम:, ऊँ भरीचाय नम:, ऊँ सूर्याय नम:, ऊँ आदित्याय नम:, ऊँ भानवे नम:, ऊँ सावित्रे नम:, ऊँ खगाय नम:, ऊँ अकार्य नम:, ऊँ पूपणे नम:, ऊँ भापकराय नम: सावित्रे सूर्यनारायणाम नम: श्री

विष्णु स्तुतिः

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशहम्। विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्ण शुभांगम्।।

लक्ष्मीकातं कमलनयनं योगिभिध्र्यानगम्यं। वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्।।

जिसकी आकृति अतिशय शांत है, जो शेषनाग की शैया पर शयन किये हैं। जिसकी नाभि में कमल है, पूरे विश्व का ईश्वर है, सम्पूर्ण जगत का आधार हैं आकाश सा घनत्व है नील मेघ सा रंग, सम्पूर्ण अंग सुन्दर है जो योगियों द्धारा ध्यान कर प्राप्त किया जाता है, सम्पूर्ण लोको का स्वामी है। जन्म मरण, रुप, भय का नाश करने वाला है ऐसे लक्ष्मीपति , कमलनेत्र विष्णु भगवान को मेरा प्रणाम। राम स्तुति: नीलाम्बुज श्यामलकोमलांगम् सीतासमारोपितवामभागम्।- पाणौ महासायक-चारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम्।।

श्री कृष्ण स्तुतिः

श्री कृष्ण गोविन्द हरे मुरारे, हे नाथ नारायण वासुदेव। हरे मुरारे मधु कैटभारे, निराश्रयं माँ जगदीश रक्ष।।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव।।

श्री दुर्गा स्तुति:

जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी। दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोस्तुते।।

सरस्वती स्तुतिः

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता या वीणावरदण्डमण्डितकरा या- श्वेतपद्मासना। या

ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवै, सदा वन्दिता। सा मां पातु सरस्वती भगवती नि:शेष जाड्यापहा ।।

हनुमान स्तुति:

मनोजवं मारुतवेगं-तुल्य-, जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्। वातात्मजं वानरयूथमुख्यं, श्री रामदूतं शरणं प्रपद्ये।।

गुरु बन्दना

गुरुब्रह्मा गुरर्विष्णुसाक्षात् परं ब्राह :। गुरु:गुरुर्देवो महेश्वर : तस्मै श्रीगुरुवे नम।।:

कस्तुरी तिलकम ललाट पटले वक्षस्थले कौस्तुभम्। नासाग्रे वरमौक्तिकम् करतले वेणुकरे ककंणम्।। सर्वांगे हरि चन्दनम सुललितम कंठे व मुक्तावली । गोपितो। श्री परिवेशित: विजयते गोपाल चूड़ामणि।। अच्युतं केशवम गोपिका बल्ल्भम। कृष्ण दामोदरम जानकी नायकम्।। या देवि सर्व भूतेषु बुद्धि रूपेण संस्थिता। नमस्तये नमस्तये नमो नम।।:

अभ्यास प्रश्न

1. नित्यकर्म में कृतार्थ मुख्य रूप से शास्त्रो में कितने कर्मों का विवेचन किया गया है।

क. 2 ख. 3 ग. 6 घ. 5

2. संस्कारों की संख्या कितनी है।

क. 13 ख. 14 ग. 15 घ. 16

3. सूर्योदय से चार घटी पूर्व को कहते है।

क. मध्याह्न ख. दिवा मुहूर्त्त ग. ब्राह्म मुहूर्त्त घ. कोई नहीं

4. आचारो परमो .... ।

क. धर्म: ख. कर्म: ग. यश: घ. मोक्ष:

5. या कुन्देन्दुतुषार हार धवला या शुभ्रवस्त्रा वृत्ता किसकी स्तुति है।

क. दुर्गा की ख. लक्ष्मी की ग. सरस्वती की घ. हनुमान की

हमारे सोलह संस्कार गर्भाधान, पुंसवनम, सीमन्तोनन्यम, जातक संस्कार, नामकरण संस्कार, निष्क्रमण संस्कार, चूडाकर्म संस्कार, अन्नप्राशन संस्कार, कर्णवेध संस्कार, उपनयन संस्कार, वेदारम्भ संस्कार, समावर्तन संस्कार, विवाह संस्कार, वान प्रस्थाश्रम संस्कार, संन्यासाश्रम संस्कार, अन्त्येष्ठि कर्म संस्कार।।

आचारो परमो धर्म: **-**

उपर्युक्त पंक्ति के अनुसार आचार ही मनुष्य का परम धर्म है। आचार - विचार के पवित्र होने पर ही मनुष्य चरित्रवान बनता है, मनुष्य के चरित्रवान होने से राष्ट्र का भी सर्वांगीण विकास होता है।

प्रातःकालीन कर्मों में सर्वप्रथम ब्रह्ममुहूर्त में जगना चाहिये, ब्रह्ममुहूर्त में नहीं जगने से क्या हानि होती है आचार्यों ने इस प्रकार प्रतिपादित किया है –

ब्रह्म मुहूर्ते या निद्रा सा पुण्यक्षयकारिणी ।
तां करोति द्विजो मोहात् पादकृच्छ्रेण शुद्धयति ।।

ब्रह्ममुहूर्त में जो मुनष्य सोता है, उस समय की निद्रा उसके पुण्यों को समाप्त करती है। उस समय जो शयन करता है उसे इस पाप से बचने के लिए पादकृच्छ्र नामक (व्रत) प्रायश्चित्त करना होता है । हमारी दैनिक चर्या का आरम्भ प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में जागरण से होता है। शास्त्रों में ब्रह्ममुहूर्त की व्याख्या इस प्रकार से है -

रात्रेः पश्चिमयामस्य मुहूर्तो यस्तृतीयकः।
स ब्राह्म इति विज्ञेयो विहितः स प्रबोधने।।

अर्थात् - रात्रि के अन्तिम प्रहर का जो तीसरा भाग है उसको ब्रह्म मुहूर्त कहते है। निद्रा त्याग के लिए यही समय शास्त्र विहित है।

ब्राह्ममुहूर्त सूर्योदय से चार घड़ी (डेढ़ घंटे) पूर्व को कहते है। मनुष्य प्रातःकालीन जागरण के पश्चात् ऑखों के खुलते ही दोनों हाथों की हथेलियों को देखें और निम्न मन्त्र को बोले -

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती ।
करभूले स्थिलो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम् ।।

भाषा - हाथ के अग्रभाग में लक्ष्मी हाथ के मध्य में सरस्वती का निवास है, हाथ के मूल भाग में ब्रह्माजी का निवास है, अतः प्रातः काल कर (हाथ) का दर्शन करना चाहिए।

उपयुक्त श्लोक बोलते हुए अपने हाथो को देखना चाहिए । यह शास्त्रीय विधान बड़ा ही अर्थपूर्ण है। इससे मनुष्य के हृदय में आत्म-निर्भरता और स्वावलम्ब की भावना उदय होती है । वह जीवन के प्रत्येक कार्य में दूसरों की तरफ न देखकर अन्य लोगों के भरोसे न रहकर-अपने हाथों की तरफ देखने का अभ्यासी बन जाता है।

भूमि की वन्दना - शय्या से उठकर पृथ्वी पर पैर रखने से पूर्व पृथ्वी की प्रार्थना करें -

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डिते ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ।।

समुद्ररूपी वस्त्रो को धारण करने वाली पर्वत रूपी स्तनो से मण्डित भगवान विष्णु की पत्नी पृथ्वी देवी आप-मेरे पाद स्पर्श को क्षमा करें।

प्रातः स्मरण - धर्म शास्त्रों ने निद्रा त्याग के उपरान्त मनुष्य मात्र का प्रथम कर्तव्य उस कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड-नायक, सच्चिदानन्द-स्वरूप प्यारे प्रभु का स्मरण बताया है - जिस की असीम कृपा से

अत्यन्त दुर्लभ मानव देह प्राप्त हुई है, जो समस्त सृष्टि के कण-कण में ओत-प्रोत है, और सत्य, शिव, व सुन्दर है। जिसकी कृपा से मनुष्य सब प्रकार के भयों से मुक्त होकर 'अहं ब्रह्मास्मि'' के उच्च लक्ष्य पर पहुंच कर तन्मय हो जाता है। दैनिक जीवन के प्रारम्भ में उस के स्मरण से हमारे हृदय में आत्मविश्वास और दृढता की भावना ही उत्पन्न नहीं होगी अपितु सम्पूर्ण दिन मंगलमय वातावरण में व्यतीत होगा। मानसिक शुद्धि के लिए मन्त्र बोलें -

ॐ अपवित्र पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्यभ्यन्तरः शुचि ।।

प्रातः स्मरणीय श्लोकः-

निम्नलिखित श्लोकों का प्रातः काल पाठ करने से अत्यधिक कल्याण होता है। जैसे- दिन अच्छा बीतता है, धर्म की वृद्धि होती है भगवत् प्रीत्यर्थ इसका पाठ करना चाहिए।

प्रातः कालीन गायत्री ध्यान -

बालां विद्यां तु गायत्रीं लोहितां चतुराननाम्
रक्ताम्बरद्वयोपेतामक्षसूत्र करां तथा।
कमण्डलुधरां देवीं हंसवाहनसंस्थिताम् ।।
ब्रह्माणीं ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोकनिवासिनीम्।
मन्त्रेणावाहयेद्धेषीमायन्तीं सूर्यमण्डलात् ।।

तत्पश्चात् गायत्री मन्त्र का जप करें -

ॐ भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्षरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।।

गायत्री जप करते समय गायत्री मन्त्र के अर्थ को ध्यान में रखते हुये जप करें।

अर्थ - भू - सत् भुवः- चित् - स्वः आनन्द स्वरूप- सृष्टिकर्ता प्रकाशमान परमात्मा के उस प्रसिद्ध वरणीय तेज का (हम) ध्यान करते है, जो परमात्मा हमारी बुद्धि को सत् मार्ग की ओर प्रेरित करे।

तर्पण से पूर्व गायत्री कवच का पाठ करें

गायत्री कवच तीनों संध्यायों में पढ़ें।

गायत्री जप कर माला या रूद्राक्ष की माला से करें

गायत्री जप के अनन्तर गायत्री तर्पण करे तर्पण केवल प्रातः कालीन संध्या में अनिवार्य है।

विनियोग - ॐ गायत्रया विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः गायत्री तर्पणे-विनियोगः।।

ॐ भूः ऋग्वेदपुरूषं तर्पयामि ॐ भुवः यजुर्वेदपुरूषतर्पयामि ॐ स्वः सामवेदपुरूषं तर्पयामि।

ॐ क्षहः अधर्वेदपुरूषं तर्पयामि ॐ जनः इतिहासपुराण पुरूषं तर्पयामि ॐ तपः सर्वागमपुरूषंत।

ॐ सत्यं सत्यलोक पुरूषं तर्पयामि ॐ भूः भूर्लोक पुरूषं तर्पयामि ॐ भुवः भुवर्लोक पुरूषं तर्पयामि।

ऊँ स्वः स्वर्लोक तर्पमानि ऊँ भूः एकपदां गायत्रीं तर्पयामि ऊँ भुवः द्विपदां गायत्रीं तर्पयामि।

ऊँ स्वःत्रिपदां गायत्रीं तर्पयामि ऊँ भुर्भुवः स्वः चतुष्पदां गायत्रीं तर्पयामि ऊँ उषतीं तर्पयामि।

ऊँ गायत्रीं तर्पयामि ऊँ सावित्रीं तर्पयामि ऊँ सरस्वतीं ऊँ वेदमातरं तर्पयामि ऊँ पृथिवीं तर्पयामि।

ऊँ अजां तर्पयामि ऊँ कौशिकीं तर्पयामि ऊँ सांकृत्तिं तर्पयामि ऊँ सार्वजितीं तर्पयामि ऊँ तत्सद् ब्रह्मार्पणमेस्तु।

तत्पश्चात् अपने आसन में खड़े होकर परिक्रमा करें।

परिक्रमा मन्त्र-

''यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतापनि च।

तानि सर्वाणि नशयन्तु प्रदक्षिणा पदे पदे ।।''

किया हुआ जप भगवान को अर्पण करें - नीचे लिखे वाक्य बोलें

अनेन गायत्री जपकर्मणा सर्वान्तर्यामी भगवान् नारायणः प्रीपतां न मम।।

गायत्री देवी का विसर्जन - निम्नलिखित विनियोग के साथ आगे बताये गये मन्त्र से गायत्री देवी का विसर्जन करें -

विनियोग - ''उत्तमे शिखरे'' इत्यस्य वामदेव ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः गायत्री देवता गायत्री विसर्जने विनियोगः।। विनियोग के बाद हाथ जोड़े और मन्त्र बोलें

ऊँ उत्तमे शिखरे देवी भूम्यां पर्वतमूर्धनि।

ब्राह्मणेभ्योऽभ्यनुज्ञाता गच्छदेवि यथा सुखम्।।

इसके बाद नीचे लिखा वाक्य पढ़कर इस संध्योपासना कर्म को भगवान् को अर्पण करें - अनेन प्रातः संध्योपासनाख्येन कर्मणा श्री परमेश्वरः प्रीयतां न मम।

ऊँ तत्सत् ब्रह्मार्पणभस्तु।। अन्त में पूर्ववत् आचमन करें और भगवान का स्मरण करें।

गायत्री कवच

हाथ में जल लेकर विनियोग पढ़े

विनियोग - ऊँ अस्य श्री गायत्रीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः भूः बीजम् - भुवः शक्तिःस्वः कीलकम् गायत्री प्रीत्यर्थे पाठे विनियोग।

इस प्रकार ब्राह्मणों को गायत्री की उपासना कर जपादि कार्य करना चाहिये।

2.4 सारांश -

इस़ इकाई का अध्ययन करने के बाद आप कर्मकाण्ड के आरम्भिक **प्रात:कालीन नित्यकर्म विधि** का ज्ञान प्राप्त करेंगे। मनुष्य अपने जीवन में किन कर्मों को करके परमगति को प्राप्त कर सकता है। हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने दैनिक जीवन में कृत्य जिन कर्मों का शास्त्रों में उल्लेख किया है। उसे मानव यदि अपने जीवन में अपना ले तो उसका सर्वतोमुखी विकास हो

सकेगा । अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप प्रात:कालीन नित्यकर्मविधि का विधिवत अध्ययन करेंगे ।

2.5 शब्दावली

नित्यकर्म – दैनन्दिनी जीवन में किया जाने वाला कर्म

षटकर्म – छ: प्रकार के नित्य किये जाने वाला कर्म

सन्ध्या वन्दन - ब्राह्मणों के लिये गायत्री उपासना हेतु किये जाने वाला वन्दनादि कर्म ।

पुण्यक्षय- पुण्य का नाश

आत्मविश्वास – स्वयं पर विश्वास

कराग्रे – हाथ के अग्र भाग में

कवच – रक्षार्थ धारण करने वाला

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1. ग
2. घ
3. ग
4. क
5. ग

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम **प्रकाशन**

नित्यकर्म पूजाप्रकाश गीताप्रेस गोरखपुर

भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व – चौखम्भा प्रकाशन

कर्मकाण्ड प्रदीप – चौखम्भा प्रकाशन

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1- प्रात:कालीन नित्यकर्म विधि का विस्तार से वर्णन कीजिये ?

2- षट्कर्म से आप क्या समझते ? विस्तृत व्याख्या कीजिये ।

इकाई – 3 पंचमहायज्ञ

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3. पंचमहायज्ञ परिचय

पंचमहायज्ञ का महत्व

3.4 सारांश

3.5 बोध प्रश्न

3.6 शब्दावली

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 कर्मकाण्ड के प्रथम पत्र के तृतीय इकाई **'पञ्चमहायज्ञ'** नामक शीर्षक से सम्बन्धित है । इस इकाई में गृहस्थ जीवन में मनुष्य के लिये आचार्यों द्वारा कथित पञ्चमहायज्ञ का वर्णन किया गया है।

चार आश्रमो में गृहस्थ आश्रम श्रेष्ठ बताया गया है। अन्य सभी आश्रम इसी आश्रम पर निर्भर रहते हैं। जीवन को मर्यादित तरीके से जीने के लिये गृहस्थ के लिये पंचमहायज्ञों की महती आवश्यकता है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने कर्मकाण्ड के उद्गम स्रोत एवं प्रात:कालीन कृत्य नित्यकर्म को समझ लिया है । यहॉ इस इकाई में आप पंच महायज्ञ का अध्ययन करेगें । आशा है पाठकगण इसे पढ़कर पंचमहायज्ञ का बोध कर सकेगें ।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पंचमहायज्ञों के बारे में जान पायेगें-

1. पंचमहायज्ञों यथा ब्रतायज्ञ देवयज्ञ पितृयज्ञ इत्यादि का अध्ययन आप सम्यक रूप से कर पायेगें।
2. पंचमहायज्ञों के महत्व का निरूपण कर सकेंगे ।
3. पंचमहायज्ञों को परिभाषित कर सकेंगे ।
4. पंचमहायज्ञों से सम्बन्धित विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।

3.3 पंचमहायज्ञ परिचय

पंच महायज्ञ भारतीय सनातन परम्परा में मानवों के लिये आवश्यक अंग के रूप में बताये गए हैं । धर्मशास्त्रों ने भी हर गृहस्थ को प्रतिदिन पंच महायज्ञ करने के लिए कहा है। नियमित रूप से इन पंच यज्ञों को करने से सुख-समृद्धि व जीवन में प्रसन्नता बनी रहती है। इन महायज्ञों के करने से ही मनुष्य का जीवन, परिवार, समाज शुद्ध, सदाचारी और सुखी रहता है।

पंच यज्ञ की महत्ता

पर्याप्त धन-धान्य होने पर भी अधिकांश परिवार दु:खी और असाध्य रोगों से ग्रस्त रहते हैं, क्योंकि उन परिवारों में पंच महायज्ञ नहीं होते। मानव जीवन का उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति है। इन चारों की प्राप्ति तभी संभव है, जब वैदिक विधान से पंच महायज्ञों को नित्य किया जाये। पंच महायज्ञ का उल्लेख **'मनुस्मृति'** में मिलने पर भी उसका मूल यजुर्वेद के **शतपथ ब्राह्मण** हैं।

इसीलिये ये वेदोक्त है। जो वैदिक धर्म में विश्वास रखते हैं, उन्हें हर दिन ये 5 यज्ञ करते रहने के लिए मनुस्मृति में निम्न मंत्र दिया गया है-

'अध्यापनं ब्रह्म यज्ञः पित्र यज्ञस्तु तर्पणं। होमोदैवो बलिर्भौतो त्रयज्ञो अतिथि पूजनम्॥

प्रकार

मानव जीवन के लिए जो पंच महायज्ञ महत्त्वपूर्ण माने गये हैं, वे निम्नलिखित हैं-

1. **ब्रह्मयज्ञ**
2. **देवयज्ञ**
3. **पितृयज्ञ**
4. **भूतयज्ञ**
5. **अतिथियज्ञ**

पंचमहायज्ञ का वर्णन प्रायः सभी ऋषि-मुनियों ने अपने-अपने धर्मग्रन्थों में किया है, जिनमें से कुछ ऋषियों के वचनों को यहॉ उद्धृत किया जाता है -

'भूतयज्ञों मनुष्ययज्ञः पितृयज्ञों देवयज्ञों ब्रह्मयज्ञो इति।'

वेदों को पढ़ना और पढ़ाना **ब्रह्म यज्ञ** कहा जाता है। तर्पण, पिण्डदान और श्राद्ध को **पितृ यज्ञ**। देवताओं के पूजन, होम हवन आदि को **देव यज्ञ** कहते हैं। अपने अन्न से दूसरे प्राणियों के कल्याण हेतु भाग देना **भूतयज्ञ** तथा घर आए अतिथि का प्रेम सहित आदर सत्कार करना **अतिथियज्ञ** कहा जाता है। ब्राह्म यज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और अतिथि यज्ञ यही **पंच महायज्ञ** है।

भगवान् मनु की आज्ञा है कि -

पञ्चैतान् यो महायज्ञान्न हापयति शक्तितः।

सगृहेऽपि नसन्नित्यं सूनादोषैर्न लिप्यते॥

'जो गृहस्थ शक्ति के अनुकूल इन पंचमहायज्ञों का एक दिन भी परित्याग नहीं करते, वे गृहस्थ-आश्रम में रहते हुए भी प्रतिदिन के पञ्चसूनाजनित पाप के भागी नहीं होते।

महर्षि हारीत ने कहा है -

यत्फलं सोम यागेन प्राप्नोति धनवान् द्विजः।

सम्यक् पन्चमहायज्ञे दरिद्रस्तदवाप्नुयात्।

धनवान द्विज सोमयाग करके जो फल प्राप्त करता है उसी फल को दरिद्र पंचमहायज्ञ के द्वारा प्राप्त कर सकता है।

पंचमहायज्ञो के अनुष्ठान से समस्त प्राणियों की तृप्ति होती है।

पंचमहायज्ञ करने से अन्नादि की शुद्धि और पापों का क्षय होता है

पंचमहायज्ञ किये बिना भोजन करने से पाप लगता है।

भगवान श्री **कृष्ण ने गीता** (3/13) में कहा है -

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।

भुन्जते ते त्वघं पापा पचन्त्यात्मकारणात्।।

यज्ञ से शेष बचे हुए अन्न को खानेवाले श्रेष्ठ पुरूष सभी पापों कसे मुक्त हो जाते है, किन्तु जो पापी केवल अपने लिये ही भोजन बनाते है, वे पाप का ही भक्षण करते है।

महाभारत में भी कहा है -

अहन्हनि ये त्वेतानकृत्वा भुन्जते स्वयम्।

केवलं मलमश्नन्ति ते नरा न च संशयः।।

जो प्रतिदिन इन पंचमहायज्ञों को किये बिना भोजन करते है, वे केवल मल खाते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं।

अतः पंचमहायज्ञ कर के ही गृहस्थों को भोजन करना चाहिए। पंचमहायज्ञ के महत्व एवं इसके यर्थाथ स्वरूप को जानकर द्विजमात्र का कर्त्तव्य है कि वे अवश्य पन्चमहायज्ञ किया करें ऐसा करने से धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष की प्राप्ति होगी।

पञ्च महायज्ञों के पृथक-पृथक रूप

ब्रह्मयज्ञ

अध्ययन - अध्यापन को ब्रह्मयज्ञ कहते है, श्रीमद्भगवत् गीता में कहा है -

स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाड्मयं तप उच्यते।।

वेद- शास्त्रों के पठन एवं परमेश्वर के नाम का जो जपाभ्यास है वही वाणी सम्बन्धी तप कहा जाता है। स्वाध्याय से ज्ञान की वृद्धि होती है। अतः सभी अवस्थाओं में ज्ञान की वृद्धि होती है।

ब्रह्मयज्ञ करने से ज्ञान की वृद्धि होती है। ब्रह्मयज्ञ करने वाला मनुष्य ज्ञानप्रद-महर्षिगणो का अनृणी और कृतज्ञ हो जाता है।

1. संध्यावन्दन के बाद को प्रतिदिन वेद-पुराणादि का पठन-पाठन करना चाहिए। यद्यपि आज के व्यस्ततम समय में मनुष्य के पास समयाभाव होता है तो पाठकों को सुविधा के लिए प्रत्येक ग्रन्थ का आदि मन्त्र दिया जा रहा है।

ऋग्वेद - हरिः ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ।।

यजुर्वेद - ॐ इषे त्वोर्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्व मध्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा वस्तेन ईशत माघस सो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्षजमानस्य पशून् पाहि।

सामवेद - ॐ अग्न आयाहि वीतये गृणनो हव्यदातयेनिहोता सत्सु बर्हिषि।।

अथर्ववेद - ऊँ शं नो देवीरभीष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंषोरभिस्रवन्तुनः

निरूक्तम् - समाम्नायः समाम्नातः

छन्दः - मयरसतजभनतगसंमितम्।

निघण्टु - गौः ग्मा

ज्यौतिषम् – पञ्चसंवत्सरमयम्।

शिक्षा - अथ शिक्षां प्रवक्ष्यामि ।

व्याकरणम् – वृद्धिरादैच् ।

कल्पसूत्रम् - अथातोऽधिकारः फलयुक्तानि कर्माणि

गृह्मसूत्रम् - अथातो गृह्मस्थलीपाकानां कर्म

न्यायदर्शनम् - प्रमाणप्रमेयसंशय प्रयोजन दृष्टान्त सिद्धान्तावयव - तर्क निर्णवाद

जल्पवितणहेत्वाभासच्छलजाति निग्रहस्थानानां तत्वज्ञानानिः श्रेयसाधिगमः।

वैशैषिकदर्शनम् - अथातो धर्मं व्याख्यास्यामः। यतोऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धिः स धर्म।

योगदर्शनम् - अथयोगानुशासनम्। योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।

सांख्यदर्शनम् - अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरूषार्थः

भारद्वाजकर्ममीमांसा - अथातो धर्मजिज्ञासा। धारको धर्मः

जैमिनीकर्ममीमांसा - अथातो धर्मजिज्ञासा, चोदना लक्षणोऽर्प्पो धर्मः।

ब्रह्ममीमांसा - अथातो ब्रह्मजिज्ञासा। जन्माद्यस्य यतः। शास्त्रयोनित्वात् तत्तु समन्वयात्।

स्मृति - मनुमेकाग्रमासीनमभिगम्य महर्षयः

प्रतिपूज्य यथान्यायमिदं वचनमब्रुवन्

रामायणम् - तपः स्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम्।

नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिमुनिपुड.गम्।।

भारतम् - नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।

देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयभुदीरयेत्।।

पुराणम् - जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादि तरतश्चार्थेश्वभिज्ञः स्वाराट्

तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः।

तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसगेऽमृषा

धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि।।

3.4 बोध प्रश्न

1. पंच महायज्ञ के कितने प्रकार है।

क. 2 ख. 3 ग. 4 घ. 5

2. ब्रह्म यज्ञ का अर्थ क्या है।

क. आत्मज्ञान की प्रेरणा ख. ब्रह्म का ज्ञान ग. परमात्मा का ज्ञान घ. कोई नहीं

3. भूत यज्ञ की भावना है - प्राणि मात्र तक आत्मीयता का विस्तार।

क. प्राणि मात्र तक आत्मीयता का विस्तार। ख. भूतों का यज्ञ ग. शान्ति के लिये यज्ञ घ. प्रेत बाधाओं से शान्ति के लिये यज्ञ

4. पुरूषार्थ के कितने प्रकार है ।

क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

5. तर्पण में वर्जित है -

क. तॉबे का पात्र ख. मिट्टी तथा लोहे का पात्र ग. कॉसे का पात्र घ. पीतल का पात्र

तन्त्रम् –

आचारमूला जातिः स्यादाचारः शास्त्रमूलकः।
वेदवाक्यं शास्त्रमूलं वेदः साधकमूलकः।।
साधकश्च क्रियामूलः क्रियापि फलमूलिका।
फलमूलं सुखं देवि सुखमानन्दमूलकम्।।

यदि समयाभाव हो तो 108 बार गायत्री का जप करें।

देवयज्ञ

अपने इष्टदेव की उपासना के लिए परब्रह्म परमात्मा के निमित्त अग्नि में किये हवन को देव यज्ञ कहते है।

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोसि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तिेय तत्कुरूष्व मदर्पणम् ।।गीता 9 ।।2।।

भगवान् के इस वचन से सिद्ध होता है कि परब्रह्म परमात्मा ही समस्त यज्ञों के आश्रयभूत है। नित्य और नैमित्रिक - भेदसे देवता दो भागों में विभक्त है, उनमें रूद्रगण, वसुगण और इन्द्रादि नित्य देवता कहे जाते हैं, और ग्रामदेवता, बनदेवता, तथा गृहदेवता आदि नैनित्रिक देवता कहे जाते है। दोनों तरह के ही देवता इस यज्ञ से तृप्त होते हैं। जिन देवताओं की कृपा से संसार के समस्त कार्यकलाप की भलीभाँति उत्पत्ति और रक्षा होती है, उन देवताओं से उऋृण होने के लिए देवयज्ञ करना परमावश्यक है।

देवयज्ञ से नित्य और नैमित्तिक देवता तृप्त होते है।

भूतयज्ञ

कृमि, कीट पतड.ग पशु और पक्षी आदि की सेवा को ''भूतयज्ञ'' करते है। ईश्वरचित सृष्टि के किसी भी अड.ग की उपेक्षा कभी नहीं की जा सकती, क्योंकि सृष्टि के सिर्फ एक ही अंग की साहयता से समस्त अंगों की सहायता समझी जाती है, अतः 'भूतयज्ञ' भी परम धर्म है।

प्रत्येक प्राणी अपने सुख के लिए अनेक जीवों को प्रतिदिन क्लेश देता है, क्योंकि ऐसा हुए बिना क्षणमात्र भी शरीर यात्रा नहीं चल सकती।

प्रत्येक मनुष्य के निःश्वास-प्रश्वास, भोजन-प्राशन, विहार-सन्चार आदि में अगणित जीवों की हिंसा होती है। निरामिष भोजन करने वाले लोगों के भोजन के समय भी अगणित जीवों का प्राण-वियोग होता है। अतः जीवों से उऋण होने के लिए भूतयज्ञ करना आवश्यक है। भूतयज्ञ से कृमि, कीट, पशु-पक्षी आदि की तृप्ति होती है।

पितृ यज्ञ

अर्यमादि नित्य पितरों की तथा परलोकगामी नैमित्तिक पितरों की पिण्डप्रदानादि से किये जानेवाले सेवारूप यज्ञ को ''पितृयज्ञ'' कहते सन्मार्गप्रवर्त्तक माता-पिता की कृपा से असन्मार्ग से निवृत्त होकर मनुष्य ज्ञान की प्राप्ति करता है, फिर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आदि सकल पदार्थों को प्राप्त कर मुक्त हो जाता है। ऐसे दयालु पितरों की तृप्ति के लिए, उनके सम्मान के लिए, अपनी कृतज्ञता के प्रदर्शन तथा उनसे उऋण के लिए पितृयज्ञ करना नितान्त आवश्यक है।

पितृयज्ञ से समस्त लोकों की तृप्ति और पितरों की तुष्टि की अभिवृद्धि होती है।

मनुष्ययज्ञ

क्षुधा से अत्यन्त पीड़ित मनुष्य के घर आ जाने पर उसकी भोजनादि से की जानेवाली सेवारूप यज्ञ को ''मनुष्ययज्ञ'' कहते है। अतिधि के घर आ जाने पर वह चाहे किसी जाति या किसी भी सम्प्रदाय का हो, उसे पूज्य समझ कर उसकी समुचित पूजा कर उसे अन्नादि देना चाहिए।

प्रथमावस्था में मनुष्य अपने शरीरमात्र के सुख से अपने को सुखी समझता है, फिर पुत्र, कलत्र, मित्रादि, को सुखी देखकर सुखी होता है। तदनन्तर स्वेदशवासियों को सुखी देखकर सुखी होता है। इसके बाद पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने पर वह समस्त लोकसमूह को सुखी देखकर सुखी होता है। परन्तु वर्तमान समय में एक मनुष्य समस्त प्राणियों की सेवा नहीं कर सकता, इसलिए यथाशक्ति अन्नदान प्राणियों की सेवा नहीं कर सकता, इसलिए यथाशक्ति अन्नदान द्वारा मनुष्यमात्र की सेवा करना ही ''मनुष्ययज्ञ'' कहा जाता है।

मनुष्य यज्ञ से धन, आयु, यश और स्वर्गादि की प्राप्ति होती है।।

नित्यतर्पण विधान

तर्पण के योग पात्र - हैमं रौप्यमयं पात्रं ताम्रं कांस्यसमुद्भवम्।

पितहणां तर्पणे पात्रं मृण्मयं तु परित्यजेत्।।

सोना, चाँदी, ताँबा, काँसा, का पात्र पितरों के तर्पण में प्रशस्त माना गया है। मिट्टी तथा लोहे का पात्र तर्पण में वर्जित है।

दाहिनी अनामिका के मध्य में कुशा की पवित्री पहने।

फिर हाथ में त्रिकुश यव, अक्षत और जल लेकर संकल्प करें ।

विष्णु: 3 नमः पर्मात्मने श्री पुराणपुरूषोत्तमाय-

अद्येह श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं देवर्विमनुषपितृमां।

स्वपितृणां अक्षयतृप्ति प्राप्त्यंर्थं तर्पणं करिष्ये।।

आवाहन - इसके बाद ताँबे के पात्र में जल और चावल डालकर त्रिकुशको पूर्वाग्र रखकर उस पात्र को दायें हाथ में लेकर बायें हाथ से ढककर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर देव-ऋषियों का आवाहन करें । वैदिक धर्म में गृहस्थ को पंच महायज्ञ करने के लिए बताया गया है, परंतु आज अधिकांश गृहस्थ यज्ञ नहीं करते; अतः उनके जीवन में आध्यात्मिक कष्ट की भरमार रहती है । देव, ऋषि, पितर, समाज और अतिथि के प्रति हमारे कर्तव्य को पंच महायज्ञ बताया गया है । बलिवैश्व की ५ आहुतियाँ को तत्त्वदर्शियों ने पंच महायज्ञ की संज्ञा दी है । इस कथन का स्पष्टीकरण देते हुए युगऋषि ने वाङ्मय-२६२.६/ एवं ६३. में लिखते हैंबलिवैश्व - की पाँच आहुतियों को 'पंच महायज्ञ' क्यों कहा गया है? बोलचाल - की भाषा में किसी शब्द के साथ महा शब्द लगा देने से उसका अर्थ बड़ाबहुत - बड़ा हो जाता है। यज्ञ शब्द से भी सामूहिक अग्निहोत्र का बोध होता है, फिर महा शब्द लगा देने का अर्थ यह होता है कि कोई विशालकाय आयोजन होना चहिए। प्रायः १०० कुण्डी, २५ कुण्डी यज्ञ आयोजनों को महायज्ञ की उपाधि से विभूषित किया जाता है। फिर आहार में से छोटेछोटे - पांच ग्रास निकालकर आहुतियाँ दे देने मात्र की दो मिनट में सम्पन्न हो जाने वाली क्रिया को महायज्ञ नाम क्यों दिया गया? इतना ही नहीं, हर आहुति को महायज्ञ की संज्ञा दी गई ऐसा क्यों? यदि बलिवैश्व महायज्ञ नाम दिया जाता है, तो कम से कम उससे इतना बोध तो होता है कि पाँच आहुतियाँ वाला कोई बड़ा आयोजन है। पंच महायज्ञ नाम देने से तो यह अर्थ निकलता है कि अलगअलग - पाँच महायज्ञ का कोई सम्मिलित आयोजन हो रहा होगा। इसका तात्पर्य किसी अत्यधिक विशालकाय धर्मानुष्ठान जैसी व्यवस्था होने जैसा ही कुछ निकलता है। इतने छोटे कृत्य का नाम इतना बड़ा क्यों रखा गया?

यह वस्तुतः एक आश्चर्य का विषय है। नामकरण की यह विसंगत भूल ऋषियों ने कैसे कर डाली, यह बात अनबूझ पहेली जैसी लगती है। वस्तुस्थिति का पर्यवेक्षण करने से तथ्य सामने आ जाते हैं और प्रकट होता है कि यहाँ न कोई भूल हुई है और न कोई विसंगति है। अन्तर इतना ही है कि कृत्य के स्थान पर तथ्य को प्रमुखता दी गई है। दृश्य के स्थान पर रहस्य कोप्रेरणा - कोध्यान - में रखा गया है। साधारणतया दृश्य को, कृत्य को प्रमुखता देते हुए नामकरण किया जाता है, किन्तु बलि- वैश्व की पाँच आहुतियों के पीछे जो प्रतिपादन जुड़े हुए हैं, उन पाँचों को एक स्वतंत्र यज्ञ नहींमहायज्ञ - माना गया है। स्पष्टीकरण की दृष्टि से हर आहुति को एकएक - स्वतंत्र नाम भी दे दिया गया है। पाँच आहुतियों को जिन पाँच यज्ञों का नाम दिया गया है, उनमें शास्त्रीय मतभेद पाया जाता है। इन मतभेदों के मध्य अधिकांश की सहमति को ध्यान में रखा जाय, तो इनके नाम १. ब्रह्म यज्ञ २. देव यज्ञ ३. ऋषियज्ञ ४. नर यज्ञ ५. भूत यज्ञ ही प्रमुख रूप से रह जाते हैं। मोटी मान्यता यह है कि जिस देवता के नाम पर आहुति दी जाती है, वह उसे मिलती है, फलतः वह प्रसन्न होकर यज्ञकर्त्ता को सुखशांति - के लिए अभीष्ट वरदान प्रदान करते हैं। यहाँ देवता शब्द का तात्पर्य समझने में भूल होती रहती है। देवता किसी अदृश्य व्यक्ति जैसी सत्ता को माना जाता है, पर वस्तुतः बात वैसी है नहीं। देवों का तात्पर्य किन्हीं भाव शक्तियों से है, जो चेतना तरंगों की तरह इस संसार में एवं प्राणियों के अन्तराल में संव्याप्त रहती हैं। साधारणतया वे प्रसुप्त पड़ी रहती हैं और मनुष्य सत्शक्तियों से, सद्भावनाओं से और सम्प्रवृत्तियों से रहित दिखाई पड़ता है, इस प्रसुप्ति को जागृति में परिणत करने वाले प्रयासों को देवाराधन कहा जाता है। अनेकानेक धर्मानुष्ठान, योगसाधन -, तपविधान -, मंत्राराधन इन देव प्रवृत्तियों को प्रखर- सक्रिय बनाने के लिए ही किये जाते हैं। जो प्रतीक के माध्यम से प्रेरणाप्रयोजन - तक पहुँच जाते हैं, उन्हीं की देवपूजा सार्थक होती है। पंच महायज्ञों में जिन ब्रह्म, देव, ऋषि आदि का उल्लेख है, उनके निमित्त आहुति देने का अर्थ इन्हें अदृश्य व्यक्ति मानकर भोजन कराना नहीं, वरन् यह है कि इन शब्दों के पीछे जिन देव वृत्तियों का - सत्प्रवृत्तियों कासंकेत - है, उनके अभिवर्धन के लिए अंशदान करने की तत्परता अपनाई जाय।

१. **ब्रह्म यज्ञ का अर्थब्रह्म -** ज्ञान आत्मज्ञान की प्रेरणा। ईश्वर और जीव के बीच चलने वाली पारस्परिक आदानप्रदान - प्रक्रिया है।

२. **देव यज्ञ का उद्देश्य पशु** से मनुष्य तक पहुँचाने वाले प्रगति क्रम को आगे बढ़ाना । देवत्व के अनुरूप गुणकर्म - का विकास विस्तार। पवित्रता और उदारता का अधिकाधिक संवर्धन।

३. **ऋषि यज्ञ का तात्पर्य है** पिछड़ो - को उठाने में संलग्न करुणार्द्र जीवननीति। सदाशयता - संवर्धन की तपश्चर्या। पूर्व पुरुषों- ऋषियों के आदर्शों को आत्मसात् करना।

४. **नर यज्ञ की प्रेरणा है** मानवीय गरिमा के अनुरूप वातावरण एवं समाजव्यवस्था - का निर्माण। मानवी गरिमा का संरक्षण नीति और व्यवस्था का परिपालन, नर में नारायण का उत्पादन। विश्व मानव का श्रेयसाधन। -

५. **भूत यज्ञ की भावना है** प्राणी मात्र तक आत्मीयता का विस्तार- अन्याय जीवधारियों के प्रति सद्भावना पूर्ण व्यवहार। वृक्ष- वनस्पतियों तक के विकास का प्रयास।

इन पाँचों प्रवृत्तियों में व्यक्ति और समाज की सर्वतोमुखी प्रगति, पवित्रता और सुव्यवस्था के सिद्धान्त जुड़े हुए हैं। जीवनचर्या और समाज व्यवस्था में इन सिद्धान्तों का जिस अनुपात में समावेश होता जाएगा, उसी क्रम से सुखद परिस्थितियों का निर्माण निर्धारित होता चला जाएगा। बीज छोटा होता है, किन्तु उसका फलितार्थ विशाल वृक्ष बनकर सामने आता है। चिनगारी छोटी होती है, अनुकूल अवसर मिलने पर वही दावानल का रूप धारण कर लेती है। गणित के सूत्र छोटे से होते हैं, पर उनसे जटिलतायें सरल होती चली जाती हैं। अणुजीवाणु - तनिक से होते हैं, पर जब भी उन्हें अपना पराक्रम दिखाने का अवसर मिलता है, चमत्कारी प्रतिक्रिया उत्पन्न करते हैं। बलिवैश्व की पाँच आहुतियाँ का दृश्य स्वरूप तो अल्प है, पर उनमें जिन पाँच प्रेरणा सूत्रों का समावेश है, उन्हें व्यक्ति और समाज की सर्वतोमुखी प्रगति के आधारभूत सिद्धांत कहा जा सकता है। इनका निरंतर ध्यान रहे, इनके अनुरूप जीवन की नीति एवं समाज की व्यवस्था बनाने का प्रयत्न होता रहे, उसकी स्मृति हर रोज ताजी होती रहे, इसके लिए पाँच आहुतियाँ देकर पाँच आदर्शों की प्रतीक- पूजा को महत्त्वपूर्ण माना गया है। यज्ञकर्त्ता बलिवैश्व कर्म करते हुए इन पाँचों के अनुग्रहवरदान - की अपेक्षा करता है। यह आशा तब निस्संदेह पूरी हो सकती है, जब आहुतियों के पीछे जो उद्देश्य सन्निहित है, उन्हें व्यवहार में उतारा जाय। इन्हीं उत्कृष्टताओं का व्यापक प्रचलनअवलम्बन - इस पंच महायज्ञ प्रक्रिया का मूलभूत प्रयोजन है। बलिवैश्व को इन्हीं देवप्रेरणाओं - का प्रतीकप्रतिनिधि - माना जा सकता है। कहना न होगा कि यह आदर्श जिस अनुपात से अपनाये जायेंगे, उसी के अनुरूप व्यक्ति में देवत्व की मनःस्थिति और संसार में स्वर्गीय परिस्थिति का मंगलमय वातावरण दृष्टिगोचर होगा। युग परिवर्तन यही है। बलि- वैश्व की प्रेरणाएँ प्रकारान्तर से नवयुग की सुखद सम्भावनाओं का बीजारोपण करती हैं।

3.5 सारांश -

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप कर्मकाण्ड में उद्धृत पंचमहायज्ञ से अवगत हो जायेंगे। सनातन परम्परा के आचार्यों ने गृहस्थ जीवन सुखमय एवं उत्तरोत्तर विकासशील हो इसके

लिये पंचमहायज्ञ का विधान बताया है । जिस गृहस्थ के द्वारा उसके दैनन्दिनी जीवन में पंचमहायज्ञ कर्म किया जाता है, उसका सर्वदा ही कल्याण होता है । ऐसा पूर्वाचार्यों ने प्रतिपादित किया है । हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने दैनिक जीवन में कृत्य जिन कर्मों का शास्त्रों में उल्लेख किया है । उसे मानव यदि अपने जीवन में अपना ले तो उसका सर्वतोमुखी विकास हो सकेगा । अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप प्रात:कालीन नित्यकर्मविधि का विधिवत अध्ययन करेंगे ।

3.6 शब्दावली

पंचमहायज्ञ – पंचमहायज्ञ से तात्पर्य पॉच प्रकार के यज्ञों से है । यथा – ब्रह्म यज्ञ, देव यज्ञ, भूत यज्ञ, आदि ।

सर्वतोमुखी – सम्पूर्ण

यज्ञकर्ता – यज्ञ करने वाला

दृष्टिगोचर – चक्षुसन्निकर्ष ज्ञान

दैनन्दिनी – प्रतिदिन

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर –

1. घ
2. क
3. क
4. ख
5. ख

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम	प्रकाशन
नित्यकर्म पूजाप्रकाश	गीताप्रेस गोरखपुर

भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व – चौखम्भा प्रकाशन

कर्मकाण्ड प्रदीप – चौखम्भा प्रकाशन

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- पंच महायज्ञ से आप क्या समझते है । विस्तार से वर्णन कीजिये ?

2- गृहस्थों के पंच महायज्ञ कौन – कौन है । व्यावहारिक रूप में उनका क्या महत्व है, स्पष्ट कीजिये

इकाई – 4 वेदों का संक्षिप्त परिचय

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 कर्मकाण्ड के प्रथम पत्र के प्रथम खण्ड का चतुर्थ अध्याय **'वेदों का संक्षिप्त परिचय'** से सम्बन्धित है । इस इकाई में आप वेद सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करेगें । "विद्" का अर्थ है: जानना, ज्ञान शब्द संस्कृत भाषा के "विद्" धातु से बना है। 'वेद' हिन्दू धर्म के प्राचीन पवित्र ग्रंथों का नाम है, इससे वैदिक संस्कृति प्रचलित हुई। ऐसी मान्यता है कि इनके मन्त्रों को परमेश्वर ने प्राचीन ऋषियों को अप्रत्यक्ष रूप से सुनाया था। इसलिए वेदों को श्रुति भी कहा जाता है। वेद प्राचीन भारत के वैदिककाल की वाचिक परम्परा की अनुपम कृति है जो पीढी दर पीढी पिछले चार-पाँच हज़ार वर्षों से चली आ रही है। वेद ही हिन्दू धर्म के सर्वोच्च और सर्वोपरि धर्मग्रन्थ हैं। वेद के मन्त्र भाग को संहिता कहते हैं।
इस इकाई में वेद सम्बन्धित विषयों का सम्यक् अध्ययन करेगें।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेंगे कि –

1. वेद क्या है तथा उनके कितने प्रकार है।
2. वेद के क्या महत्व है और इसे अपौरूषेय क्यों कहा जाता है।
3. उपवेद किसे कहते है।
4. वेद के कितने विभाग है तथा वेद ईश्वरीय देन है या मानव निर्मित।
5. उपनिषद् किसे कहते है।

4.3 वेदवाड्मय- परिचय एवं अपौरुषेयवाद

'सनातन धर्म' एवं 'भारतीय संस्कृति' का मूल आधार स्तम्भ विश्व का अतिप्राचीन और सर्वप्रथम वाड्मय **'वेद'** माना गया है। मानव जाति के लौकिक (सांसारिक) तथा पारमार्थिक अभ्युदय-हेतु प्राकट्य होने से वेद को अनादि एवं नित्य कहा गया है। अति प्राचीनकालीन महा तपा, पुण्यपुञ्ज ऋषियों के पवित्रतम अन्त:करण में वेद के दर्शन हुए थे, अत: उसका नाम 'वेद' प्राप्त हुआ। ब्रह्म का स्वरूप 'सत-चित-आनन्द' होने से ब्रह्म को वेद का पर्यायवाची शब्द कहा गया है। इसीलिये वेद लौकिक एवं अलौकिक ज्ञान का साधन है। 'तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये0'- तात्पर्य यह कि कल्प के प्रारम्भ में आदि कवि ब्रह्मा के हृदय में वेद का प्राकट्य हुआ।

- सुप्रसिद्ध वेदभाष्यकार महान पण्डित सायणाचार्य अपने वेदभाष्य में लिखते हैं कि 'इष्टप्राप्त्यनिष्टपरिहारयोरलौकिकमुपायं यो ग्रन्थो वेदयति स वेद:'
- निरूक्त कहता है कि 'विदन्ति जानन्ति विद्यन्ते भवन्ति'
- 'आर्यविद्यासुधाकर-' नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि— वेदो नाम वेद्यन्ते ज्ञाप्यन्ते धर्मार्थकाममोक्षा अनेनेति व्युत्पत्त्या चतुर्वर्गज्ञानसाधनभूतो ग्रन्थविशेष॥:

- 'कामन्दकीय नीति' भी कहती है -'आत्मानमन्विच्छ।' 'यस्तं वेद स वेदवित्॥' कहने का तात्पर्य यह है कि आत्मज्ञान का ही पर्याय वेद है।
- रुति भगवती बतलाती है कि 'अनन्ता वै वेदा॥:' वेद का अर्थ है ज्ञान। ज्ञान अनन्त है, अत : भी अनन्त हैं। तथापि मुण्डकोपनिषद की मान्यता है वेद कि वेद चार हैं -'ऋग्वेदो यजुर्वेद : ॥:सामवेदो ऽथर्ववेद' इन वेदों के चार उपवेद इस प्रकार हैं—

आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वश्चेति ते त्रय:। स्थापत्यवेदमपरमुपवेदश्चतुर्विध:॥ उपवेदों के कर्ताओं में

1. **आयुर्वेद** के कर्ता धन्वन्तरि,
2. **धनुर्वेद** के कर्ता विश्वामित्र,
3. **गान्धर्ववेद** के कर्ता नारद मुनि और
4. **स्थापत्यवेद** के कर्ता विश्वकर्मा हैं।

मनुस्मृति में वेद ही श्रुति

मनुस्मृति कहती है- 'श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेय:' 'आदिसृष्टिमारभ्याद्यपर्यन्तं ब्रह्मादिभि: सर्वा: सत्यविद्या: श्रूयन्ते सा श्रुति:॥' वेदकालीन महातपा सत्पुरुषों ने समाधि में जो महाज्ञान प्राप्त किया और जिसे जगत के आध्यात्मिक अभ्युदय के लिये प्रकट भी किया, उस महाज्ञान को 'श्रुति' कहते हैं।

श्रुति के दो विभाग हैं-

1. वैदिक और
2. तान्त्रिक -'श्रुतिश्च द्विविधा वैदिकी तान्त्रिकी च।'

तन्त्र मुख्य रूप से तीन प्रकार के माने गये है -

1. महानिर्वाणतन्त्र-,
2. नारदपाञ्चरात्रतन्त्र और-
3. कुलार्णवतन्त्र।-

वेद के दो विभाग हैं-

1. मन्त्र विभाग और
2. ब्राह्मण विभाग -'वेदो हि मन्त्रब्राह्मणभेदेन द्विविधा:'

वेद के मन्त्र विभाग को संहिता भी कहते हैं। संहितापरक विवेचन को 'आरण्यक' एवं संहितापरक भाष्य को 'ब्राह्मणग्रन्थ' कहते हैं। वेदों के ब्राह्मणविभाग में' आरण्यक' और 'उपनिषद'- का भी समावेश है। ब्राह्मणविभाग में 'आरण्यक' और 'उपनिषद'- का भी समावेश है। ब्राह्मणग्रन्थों की संख्या 13 है, जैसे ऋग्वेद के 2, यजुर्वेद के 2, सामवेद के 8 और अथर्ववेद के एक।

मुख्य ब्राह्मणग्रन्थ पाँच है -

1. ऐतरेय ब्राह्मण,
2. तैत्तिरीय ब्राह्मण,
3. तलवकार ब्राह्मण,

4. शतपथ ब्राह्मण और
5. ताण्डय ब्राह्मण।

उपनिषदों की संख्या 108 हैं, परन्तु मुख्य 12 माने गये हैं, जैसे-

1. ईश,
2. केन,
3. कठ,
4. प्रश्न,
5. मुण्डक,
6. माण्डूक्य,
7. तैत्तिरीय,
8. ऐतरेय,
9. छान्दोग्य,
10. बृहदारण्यक,
11. कौषीतकि और
12. श्वेताश्वतर।

वेद ईश्वरीय है या मानवनिर्मित -

वेद पौरुषेय ।(ईश्वरप्रणीत) है या अपौरुषेय (मानवनिर्मित) वेद का स्वरूप क्या है? इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न का स्पष्ट उत्तर ऋग्वेद में इस प्रकार है-'वेद' परमेश्वर के मुख से निकला हुआ 'परावाक' है, वह 'अनादि' एवं 'नित्य' कहा गया है। वह अपौरुषेय ही है। इस विषय में मनुस्मृति कहती है कि अति प्राचीन काल के ऋषियों ने उत्कट तपस्या द्वारा अपने तप पूत हृदय में:'परावाक' वेदवाङ्मय का साक्षात्कार किया था, अत: वे मन्त्र द्रष्टा ऋषि कहलाये -'ऋषयो मन्त्रद्रष्टार।:'

बृहदारण्यकोपनिषद में उल्लेख है -'अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेद: सामवेदोऽथर्वाग्डिरस।' अर्थात उन महान परमेश्वर के द्वारा -सृष्टि) प्राकट्य होने के साथ ही(–ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद निश्वास: की तरह सहज ही बाहर प्रकट हुए। तात्पर्य यह है कि परमात्मा का निश्वास ही वेद है:। इसके विषय में वेद के महापण्डित सायणाचार्य अपने वेद भाष्य में लिखते हैं-

यस्य नि:श्वसितं वेदा यो वेदेभ्योऽखिलं जगत्।निर्ममे तमहं वन्दे विद्यातीर्थं महेश्वरम्।। सारांश यह कि वेद परमेश्वर का नि:श्वास है, अत: परमेश्वर द्वारा ही निर्मित है। वेद से ही समस्त जगत का निर्माण हुआ है। इसीलिये वेद को अपौरुषेय कहा गया है। सायणाचार्य के इन विचारों का समर्थन पाश्चात्य वेद विद्वान प्रो0 विल्सन, प्रो0 मैक्समूलर आदि ने अपने पुस्तकों में किया है।

प्रो0 विल्सन लिखते हैं कि 'सायणाचार्य का वेद विषयक ज्ञान अति विशाल और अति गहन है, जिसकी समकक्षता का दावा कोई भी यूरोपीय विद्वान नहीं कर सकता।'

प्रो0 मैक्समूलर लिखते हैं कि 'यदि मुझे सायणाचार्यरहित बृहद वेदभाष्य पढ़ने को नहीं मिलता तो मैं वेदार्थों के दुर्भेद्य क्रिला में प्रवेश ही नहीं पा सका होता।' इसी प्रकार पाश्चात्त्य वेद विद्वान वेबर, बेनफी, राथ, ग्राम्सन, लुडविग, ग्रिफिथ, कीथ तथा विंटरनित्ज आदि ने सायणाचार्य के वेद विचारों का ही प्रतिपादन किया है।

निरूक्तकार 'यास्काचार्य' भाषाशास्त्र के आद्यपण्डित माने गये हैं। उन्होंने अपने महाग्रन्थ वेदभाष्य में स्पष्ट लिखा है कि 'वेद अनादि, नित्य एवं अपौरुषेय ही है।(ईश्वरप्रणीत)' उनका कहना है कि 'वेद का अर्थ समझे बिना केवल वेदपाठ करना पशु की तरह पीठ पर बोझा ढोना ही है; क्योंकि अर्थज्ञानरहित शब्द नहीं दे सकता। जिसे (ज्ञान) प्रकाश (मन्त्र) वेदज्ञान हुआ है-मन्त्रों का अर्थ-, उसी का लौकिक एवं पारलौकिक कल्याण होता है।' ऐसे वेदार्थ ज्ञान का मार्ग दर्शक निरूक्त है।

जर्मनी के वेद विद्वान प्रो0 मैक्समूलर कहते हैं कि 'विश्व का प्राचीनतम वाङ्मय वेद ही है, जो दैविक एवं आध्यात्मिक विचारों को काव्यमय भाषा में अद्भुत रीति से प्रकट करने वाला कल्याणप्रदायक है। वेद परावाक है।' निऐसा -का निर्माण किया है (वेदवाणी) संदेह परमेश्वर ने ही परावाक: महाभारत में स्पष्ट कहा गया है-'अनादिनिधना विद्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा॥' अर्थात जिसमें से सर्वजगत उत्पन्न हुआ, ऐसी अनादि वेदरूप दिव्य वाणी का निर्माण जगन्निर्माता ने सर्वप्रथम किया।विद्या- ऋषि वेद मन्त्रों के कर्ता नहीं अपितु द्रष्टा ही थे -'ऋषयो मन्त्रद्रष्टार।:' निरूक्तकार ने भी कहा हैवेद मन्त्रों के - साक्षात्कार होने पर साक्षात्कारी को ऋषि कहा जाता है -'ऋषिर्दर्शनात्।' इससे स्पष्ट होता है कि वेद का कर्तृत्व अन्य किसी के पास नहीं होने से वेद ईश्वरप्रणीत ही है, अपौरुषेय ही है।

भारतीय दर्शन शास्त्र के मतानुसार शब्द को नित्य कहा गया है। वेद ने शब्द को नित्य माना है, अत: वेद अपौरुषेय है यह निश्चित होता है। निरूक्तकार कहते हैं कि 'नियतानुपूर्व्या नियतवाचो युक्तय।:' अर्थात शब्द नित्य है, उसका अनुक्रम नित्य है और उसकी उच्चारणपद्धति भी नित्य है-, इसीलिये वेद के अर्थ नित्य हैं। ऐसी वेदवाणी का निर्माण स्वयं परमेश्वर ने ही किया है।

शब्द की चार अवस्थाएँ मानी गयी हैं-

1. परा,
2. पश्यन्ती,
3. मध्यमा और
4. वैखरी।

ऋग्वेद-में इनके विषय में इस प्रकार कहा गया है -

चत्वारि वाक् परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिण:। गुहा त्रीणि निहिता नेग्डयन्ति तुरीयं वाचो मनुष्य वदन्ति॥ अर्थात वाणी के चार रूप होने से उन्हें ब्रह्मज्ञानी ही जानते हैं। वाणी के तीन रूप गुप्त हैं, चौथा रूप शब्दमय वेद के रूप में लोगों में प्रचारित होता है।

सूक्ष्मातिसूक्ष्मज्ञान को परावाक कहते हैं। उसे ही वेद कहा गया- है। इस वेदवाणी का साक्षात्कार महा तपस्वी ऋषियों को होने से इसे 'पश्यन्तीवाक' कहते हैं। ज्ञानस्वरूप वेद का आविष्कार शब्दमय है।

इस वाणी का स्थूल स्वरूप ही 'मध्यमावाक' है। वेदवाणी के ये तीनों स्वरूप अत्यन्त रहस्यमय हैं। चौथी 'वैखरीवाक' ही सामान्य लोगों की बोलचाल की है। शतपथ ब्राह्मण तथा माण्डूक्योपनिषद में कहा गया है कि वेद मन्त्र के प्रत्येक पद में, शब्द के प्रत्येक अक्षर में एक प्रकार का अद्भुत सामर्थ्य भरा हुआ है। इस प्रकार की वेद वाणी स्वयं परमेश्वर द्वारा ही निर्मित है, यह निशंक है।:
शिव पुराण में आया है कि ॐ के 'अ' कार, 'उ' कार, 'म' कार और सूक्ष्मनाद; इनमें से

1. ऋग्वेद,
2. यजुर्वेद,
3. सामवेद तथा
4. अथर्ववेद नि से ही निर्मित हुआ। -(ॐ) सृत हुए। समस्त वाङ्मय ओंकार:'ओंकारं बिंदुसंयुक्तम्' तो ईश्वररूप ही है।

श्रीमद् भगवद्गीता में भी ऐसा ही उल्लेख हैमयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव॥-
श्रीमद्भागवत में तो स्पष्ट कहा गया है ।:ह्यधर्मस्तद्विपर्यय वेदप्रणिहितो धर्मो -वेदो नारायणसाक्षात् : स्वयम्भूरिति शुश्रुम॥ अर्थात वेद भगवान ने जिन कार्यों को करने की आज्ञा दी है वह धर्म है और उससे विपरीत करना अधर्म है। वेद नारायण रूप में स्वयं प्रकट हुआ है, ऐसा श्रुति में कहा गया है।
श्रीमद्भागवत में ऐसा भी वर्णित है। श्रद्धा दया तितिक्षा च :शम :सत्यं दम :विप्रा गावश्च वेदाश्च तप - ॥:क्रतवश्च हरेस्तनू अर्थात वेदज्ञ ब्राह्मण (सदाचारी भी), दुधारू गाय, **वेद**, तप, सत्य, दम, शम, श्रद्धा, दया, सहनशीलता और यज्ञ- ये श्रीहरि के स्वरूप है ।
मनुस्मृति वेद को धर्म का मूल बताते हुए कहती है वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्। - आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च ॥अर्थात समग्र वेद एवं वेदज्ञ मनु, पराशर, याज्ञवल्क्य आदि - की स्मृति, शील, आचार, साधु ये सभी धर्मो के मूल हैं।-के आत्मा का संतोष -(धार्मिक) याज्ञवल्क्यस्मृति में भी कहा गया है :। स्म्यक्संकल्पज:स्वस्य च प्रियमात्मन :सदाचार :स्मृति :श्रुति - कामो धर्ममूलमिदं स्मृतम्॥अर्थात श्रुति, स्मृति, सत्पुरुषों का आचार, अपने आत्मा की प्रीति और उत्तम संकल्प से हुआ ये पाँच धर्म के मूल हैं। इसीलिये -काम (धर्माविरूद्ध) भारतीय संस्कृति में वेद सर्वश्रेष्ठ स्थान पर है। वेद का प्रामाण्य त्रिकालाबाधित है।

वेद के प्रकार -

ऋग्वेद :वेदों में सर्वप्रथम ऋग्वेद का निर्माण हुआ । यह पद्यात्मक है । यजुर्वेद गद्यमय है और सामवेद गीतात्मक है। ऋग्वेद में मण्डल 10 हैं,1028 सूक्त हैं और 11 हज़ार मन्त्र हैं । इसमें 5 शाखायें हैं - शाकल्प, वास्कल, अश्वलायन, शांखायन, मंडूकायन । ऋग्वेद के दशम मण्डल में औषधि सूक्त हैं। इसके प्रणेता अर्थशास्त्र ऋषि है। इसमें औषधियों की संख्या 125 के लगभग निर्दिष्ट की गई है जो कि 107 स्थानों पर पायी जाती है। औषधि में सोम का विशेष वर्णन है। ऋग्वेद में च्यवनऋषि को पुनः युवा करने का कथानक भी उद्धृत है और औषधियों से रोगों का नाश करना भी

समाविष्ट है। इसमें जल चिकित्सा, वायु चिकित्सा, सौर चिकित्सा, मानस चिकित्सा एवं हवन द्वारा चिकित्सा का समावेश है

सामवेद : चार वेदों में सामवेद का नाम तीसरे क्रम में आता है। पर ऋग्वेद के एक मन्त्र में ऋग्वेद से भी पहले सामवेद का नाम आने से कुछ विद्वान वेदों को एक के बाद एक रचना न मानकर प्रत्येक का स्वतंत्र रचना मानते हैं। सामवेद में गेय छंदों की अधिकता है जिनका गान यज्ञों के समय होता था। 1824 मन्त्रों कें इस वेद में 75 मन्त्रों को छोड़कर शेष सब मन्त्र ऋग्वेद से ही संकलित हैं। इस वेद को संगीत शास्त्र का मूल माना जाता है। इसमें सविता, अग्नि और इन्द्र देवताओं का प्राधान्य है। इसमें यज्ञ में गाने के लिये संगीतमय मन्त्र हैं, यह वेद मुख्यतः गन्धर्व लोगो के लिये होता है। इसमें मुख्य 3 शाखायें हैं, 75 ऋचायें हैं और विशेषकर संगीतशास्त्र का समावेश किया गया है।

यजुर्वेद : इसमें यज्ञ की असल प्रक्रिया के लिये गद्य मन्त्र हैं, यह वेद मुख्यतः क्षत्रियो के लिये होता है। यजुर्वेद के दो भाग हैं –

1. कृष्ण : वैशम्पायन ऋषि का सम्बन्ध कृष्ण से है। कृष्ण की चार शाखायें है।
2. शुक्ल : याज्ञवल्क्य ऋषि का सम्बन्ध शुक्ल से है। शुक्ल की दो शाखायें हैं। इसमें 40 अध्याय हैं। यजुर्वेद के एक मन्त्र में 'ब्रीहिधान्यों' का वर्णन प्राप्त होता है। इसके अलावा, दिव्य वैद्य एवं कृषि विज्ञान का भी विषय समाहित है।

अथर्ववेद : इसमें जादू, चमत्कार, आरोग्य, यज्ञ के लिये मन्त्र हैं, यह वेद मुख्यतः व्यापारियों के लिये होता है। इसमें 20 काण्ड हैं। अथर्ववेद में आठ खण्ड आते हैं जिनमें भेषज वेद एवं धातु वेद ये दो नाम स्पष्ट प्राप्त हैं। वेद मानव सभ्यता के लगभग सबसे पुराने लिखित दस्तावेज हैं! वेद ही हिन्दू धर्म के सर्वोच्च और सर्वोपरि धर्मग्रन्थ हैं! सामान्य भाषा में वेद का अर्थ है "ज्ञानज्ञान :वस्तुत ! " रूपी-मन के अज्ञान-वह प्रकाश है जो मनुष्य अन्धकार को नष्ट कर देता है वेदों को इतिहास का ! ऐसा स्रोत कहा गया है जो पोराणिक ज्ञानवेद शब्द संस्कृत के विद ! विज्ञानं का अथाह भंडार है-शब्द से निर्मित है अर्थात इस एक मात्र शब्द में ही सभी प्रकार का ज्ञान समाहित है प्राचीन भारतीय ! ऋषि जिन्हें मंत्रद्रिष्ट कहा गया है, उन्हें मंत्रो के गूढ़ रहस्यों को ज्ञान कर, समझ कर, मनन कर उनकी अनुभूति कर उस ज्ञान को जिन ग्रंथो में संकलित कर संसार के समक्ष प्रस्तुत किया वो प्राचीन ग्रन्थ "वेदकहलाये "। एक ऐसी भी मान्यता है कि इनके मन्त्रों को परमेश्वर ने प्राचीन ऋषियों को अप्रत्यक्ष रूप से सुनाया थाइसलिए वेदों को श्रुति भी ! कहा जाता है। इस जगत, जीवन एवं परमपिता परमेश्वर इन सभी का वास्तविक ज्ञान "वेद"में ही प्राप्त होता है।

बोध प्रश्न

1. वेद शब्द किस धातु से बना है ।

क. दा ख. विद् ग. भू घ. दृश

2. सम्पूर्ण वैदिक धर्म कितने भागों में विभक्त है।

क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

3. वेद शब्द में कौन सा प्रत्यय है।

क. गर ख. घञ् प्रत्यय ग. ल्युट घ. कोई नहीं

4. वेदों की संख्या कितनी है ।

क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

5. आर्य समाज की स्थापना किसने की थी।

क. राजा राम मोहन राय ख. महर्षि दयानन्द ग. विवेकानन्द घ. रामकृष्ण परमहंस

वेद क्या हैं ?

वेद भारतीय संस्कृति के वे ग्रन्थ हैं, जिनमें ज्योतिष, गणित, विज्ञान, धर्म, औषधि, प्रकृति, खगोलशास्त्र आदि लगभग सभी विषयों से सम्बंधित ज्ञान का भंडार भरा पड़ा है। वेद हमारी भारतीय संस्कृति की रीढ़ हैं। इनमे अनिष्ट से सम्बन्धित उपाय तथा जो इच्छा हो उसके अनुसार उसे प्राप्त करने के उपाय संग्रहीत है। लेकिन जिस प्रकार किसी भी कार्य में मेहनत लगती है, उसी प्रकार इन रत्न रूपी वेदों का श्रमपूर्वक अध्यन करके ही इनमे संकलित ज्ञान को मनुष्य प्राप्त कर सकता है।

वेद मंत्रो का संकलन और वेदों की संख्या

ऐसी मान्यता है की वेद प्रारंभ में एक ही था और उसे पढने के लिए सुविधानुसार चार भागो में विभग्त कर दिया गया ! ऐसा श्रीमदभागवत में उल्लेखित एक श्लोक द्वारा ही स्पष्ट होता है ! इन वेदों में हजारों मन्त्र और रचनाएँ हैं जो एक ही समय में संभवत: नहीं रची गयी होंगी और न ही एक ऋषि द्वारा ! इनकी रचना समय-समय पर ऋषियों द्वारा होती रही और वे एकत्रित होते गए।

शतपथ ब्राह्मण के श्लोक के अनुसार अग्नि, वायु और सूर्य ने तपस्या की और ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद को प्राप्त किया।

प्रथम तीन वेदों को अग्नि, वायु और सूर्य से जोड़ा गया है। इन तीनो नामों के ऋषियों से इनका सम्बन्ध बताया गया है, क्योंकि इसका कारण यह है की अग्नि उस अंधकार को समाप्त करती है जो अज्ञान का अँधेरा है। इस कारण यह ज्ञान का प्रतीक मन गया है। वायु प्राय: चलायमान है। उसका कम चलना (बहना) है। इसका तात्पर्य है की कर्म अथवा कार्य करते रहना। इसलिए यह कर्म से सम्बंधित है। सूर्य सबसे तेजयुक्त है जिसे सभी प्रणाम करते हैं ! नतमस्तक होकर उसे पूजते हैं। इसलिए कहा गया है की वह पूजनीय अर्थात उपासना के योग्य है ! एक ग्रन्थ के अनुसार ब्रम्हाजी के चार मुखो से चारो वेदों की उत्पत्ति हुई।

१. ऋग्वेद

ऋग्वेद सबसे पहला वेद है। इसमें धरती की भौगोलिक स्थिति, देवताओं के आवाहन के मन्त्र है। इस वेद में 1028 ऋचायें (मंत्र) और 10 मंडल (अध्याय) है। ऋग्वेद की ऋचाओं में देवताओं की प्रार्थना, स्तुतियाँ और देवलोक में उनकी स्थिति का वर्णन है।

२. यजुर्वेद

यजुर्वेद में यज्ञ की विधियाँ और यज्ञों में प्रयोग किए जाने वाले मंत्र हैं। यज्ञ के अलावा तत्वज्ञान का वर्णन है। इस वेद की दो शाखाएँ हैं शुक्ल और कृष्ण। 40 अध्यायों में 1975 मंत्र हैं।

३. सामवेद

साम अर्थात रूपांतरण और संगीत। सौम्यता और उपासना। इस वेद में ऋग्वेद की ऋचाओं (मंत्रों) का संगीतमय रूप है। इसमें मूलत: संगीत की उपासना है। इसमें 1875 मंत्र है।

४. अथर्ववेद

इस वेद में रहस्यमय विद्याओं के मंत्र हैं, जैसे जादू, चमत्कार, आयुर्वेद आदि। यह वेद सबसे बड़ा है, इसमें 20 अध्यायों में 5687 मंत्र है।

वेद प्राचीन भारत में रचित साहित्य हैं जो हिन्दुओं के प्राचीनतम और आधारभूत धर्मग्रन्थ भी हैं। भारतीय संस्कृति में सनातन धर्म के मूल और सब से प्राचीन ग्रन्थ हैं जिन्हें ईश्वर की वाणी समझा जाता है। वेदों को अपौरुषेय (जिसे कोई व्यक्ति न कर सकता हो, यानि ईश्वर कृत) माना जाता है तथा ब्रह्मा को इनका रचयिता माना जाता है। इन्हें श्रुति भी कहते हैं जिसका अर्थ है 'सुना हुआ'। अन्य हिन्दू ग्रंथों को स्मृति कहते हैं यानि मनुष्यों की बुद्धि या स्मृति पर आधारित। ये विश्व के उन प्राचीनतम धार्मिक ग्रंथों में हैं जिनके मन्त्र आज भी इस्तेमाल किये जाते हैं। 'वेद' शब्द संस्कृत भाषा के "विद्" धातु से बना है, इस तरह वेद का शाब्दिक अर्थ विदित यानि ज्ञान के ग्रंथ हैं। आज चतुर्वेदों के रूप में ज्ञात इन ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है –

ऋग्वेद -इसमें देवताओं का आह्वान करने के लिये मन्त्र हैं।

सामवेद -इसमें यज्ञ में गाने के लिये संगीतमय मन्त्र हैं।

यजुर्वेद - इसमें यज्ञ की असल प्रक्रिया के लिये गद्य मन्त्र हैं।

अथर्ववेद -इसमें जादू, चमत्कार, आरोग्य, यज्ञ के लिये मन्त्र हैं।

वेद के असल मन्त्र भाग को संहिता कहते हैं। वैदिक साहित्य के अन्तर्गत उपर लिखे सभी वेदों के कई उपनिषद, आरण्यक तथा उपवेद आदि भी आते जिनका विवरण नीचे दिया गया है। इनकी भाषा संस्कृत है जिसे अपनी अलग पहचान के अनुसार **वैदिक संस्कृत** कहा जाता है - इन संस्कृत शब्दों के प्रयोग और अर्थ कालान्तर में बदल गए या लुप्त हो गए माने जाते हैं। ऐतिहासिक रूप से प्राचीन भारत और हिन्द-आर्य जाति के बारे में इनको एक अच्छा संदर्भ माना जाता है। संस्कृत भाषा के प्राचीन रूप को लेकर भी इनका साहित्यिक महत्व बना हुआ है।

वेदों को समझना प्राचीन काल में भारतीय और बाद में विश्व भर में एक विवाद का विषय रहा है। प्राचीन काल में, भारत में ही, इसी विवेचना के अंतर के कारण कई मत बन गए थे। मध्ययुग में भी इसके भाष्य (अनुवाद और व्याख्या) को लेकर कई शास्त्रार्थ हुए। कई लोग इसमें वर्णित चरित्रों देव को पूज्य और मूर्ति रूपक आराध्य समझते हैं जबकि दयानन्द सरस्वती सहित अन्य कईयों का मत है कि इनमें वर्णित चरित्र (जैसे अग्नि, इंद्र आदि) एकमात्र ईश्वर के ही रूप और नाम हैं। इनके अनुसार

देव शब्द का अर्थ है ईश्वर की शक्ति (और नाम) ना कि मूर्ति-पूजनीय आराध्य रूप । मध्यकाल में रचित व्याख्याओं में सायण का रचा भाष्य बहुत मान्य है । प्राचीन काल के जैमिनी, व्यास इत्यादि ऋषियों को वेदों का अच्छा ज्ञाता माना जाता है । यूरोप के विद्वानों का वेदों के बारे में मत हिन्द-आर्य जाति के इतिहास की जिज्ञासा से प्रेरित रही है । ईरान और भारत में *आर्य* शब्द के अर्थ में थोड़ी भिन्नता पाई जाती है । जहाँ ये ईरान में ईरानी जाति का द्योतक है वहीं भारत में ये कुशल, शिक्षित और संपूर्ण पुरुष को जताता है । अठारहवीं सदी उपरांत यूरोपियनों के वेदों और उपनिषदों में रूचि आने के बाद भी इनके अर्थों पर विद्वानों में असहमति बनी रही है । प्राचीन काल से भारत में वेदों के अध्ययन और व्याख्या की परम्परा रही है । हिन्दू धर्म अनुसार आर्षयुग में ब्रह्माऋषि से लेकर जैमिनि तक के ऋषि-मुनियोंने शब्दप्रमाण के रूप में इन्हीं को माने हैं और इनके आधार पर अपने ग्रन्थों का निर्माण भी किये हैं । व्यास, पाणिनी आदि को प्राचीन काल के वेदवेत्ता कहते हैं । वेदों के विदित होने यानि सात ऋषियों के ध्यान में आने के बाद इनकी व्याख्या करने की परम्परा रही है । इसी के फलस्वरूप ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, इतिहास आदि महाग्रन्थ वेदों का व्याख्यान स्वरूप रचे गए । प्राचीन काल और मध्ययुग में शास्त्रार्थ इसी व्याख्या और अर्थांतर के कारण हुए हैं । मुख्य विषय - देव, अग्नि, रूद्र, विष्णु, मरुत, सरस्वती इत्यादि जैसे शब्दों को लेकर हुए । वेदवेत्ता महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के विचार में ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान वेदों के विषय हैं। जीव, ईश्वर, प्रकृति इन तीन अनादि नित्य सत्ताओं का निज स्वरूप का ज्ञान केवल वेद से ही उपलब्ध होता है ।

ऋषिदेव:कोटी कणाद "तद्वचनादाम्नायस्य प्राणाण्यम्" और "बुद्धिपूर्वा वाक्यकृतिर्वेदे" कहकर वेद को दर्शन और विज्ञान का भी स्रोत माना है। हिन्दू धर्म अनुसार सबसे प्राचीन नियमविधाता महर्षि मनु ने कहा वेदोऽखिलो धर्ममूलम् - खिलरहित वेद अर्थात् मूल संहिता रूप वेद धर्मशास्त्र का आधार है ।

न केवल धार्मिक किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से भी वेदों का असाधारण महत्त्व है। वैदिक युग के आर्यों की संस्कृति और सभ्यता जानने का एक साधन है । मानव-जाति और विशेषतः आर्यों ने अपने शैशव में धर्म और समाज का किस प्रकार विकास किया इसका ज्ञान वेदों से मिलता है। विश्व के वाङ्मय में इनसे प्राचीनतम कोई पुस्तक नहीं है ।आर्य-भाषाओं का मूलस्वरूप निर्धारित करने में वैदिक भाषा अत्यधिक सहायक सिद्ध हुई है। यूरोप के कई विद्वानों ने संस्कृत और आर्यभाषाओं और जाति के बारे में जानने के लिए वेदों का अध्ययान किया है । मैक्समूलर जैसे विद्वानों ने इनके अध्ययन के बाद संस्कृत भाषा और यूरोपीय शब्दों और व्याकरण का विश्लेषण किया था । इनके अनुसार लैटिन, ग्रीक, जर्मन आदि सहित कई यूरोपीय, फ़ारसी और संस्कृत का मूल एक रहा होगा । इस सिद्धांत के प्रमाण लिए कई शब्दों का उल्लेख किया जाता है।

इसी प्रकार पिता, माता, भाई, पानी इत्यादि जैसे शब्दों के लिए भी समान शब्द मिलते हैं । लेकिन कई शब्दों के बिल्कुल मेल नहीं खाने जैसे कारणों से इस सिद्धांत को संपूर्ण मान्यता नहीं मिली है । सिंधु घाटी सभ्यता के विनाश का एक कारण आर्य जाति का आक्रमण माना जाता है । लगभग इसी

समय 1900 ईसापूर्व में यूनान और ईरान में एक नई मानव जाति के आगमन के चिह्न मिलते हैं। लेकिन पक्के प्रमाणों की कमी की वजह से ये नहीं सिद्ध हो पाया है कि ये वास्तव में एक ही मूल से निकली मानव जाति के समूह थे या नहीं।

वैदिक वाङ्मय और विभाजन

वर्तमान काल में वेद चार माने जाते हैं। परन्तु इन चारों को मिलाकर एक ही 'वेद ग्रंथ' समझा जाता था।

एक एव पुरा वेदसर्ववाङ्मय :प्रणव : - महाभारत

बाद में वेद को पढ़ना बहुत कठिन प्रतीत होने लगा, इसलिए उसी एक वेद के तीन या चार विभाग किए गए। तब उनको 'वेदत्रयी' अथवा 'चतुर्वेद' कहने लगे।

द्वापरयुग की समाप्ति के पूर्व वेदों के उक्त चार विभाग अलग-अलग नहीं थे। उस समय तो ऋक्, यजुः और साम - इन तीन शब्द-शैलियों की संग्रहात्मक एक विशिष्ट अध्ययनीय शब्द-राशि ही वेद कहलाती थी। वेद के पठन-पाठन के क्रम में गुरुमुख से श्रवण एवं याद करने का वेद के संरक्षण एवं सफलता की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्व है। इसी कारण वेद को ''श्रुति'' भी कहते हैं। वेद परिश्रमपूर्वक अभ्यास द्वारा संरक्षणीय है, इस कारण इसका नाम ''आम्नाय'' भी है।

द्वापरयुग की समाप्ति के समय श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यास जी ने यज्ञानुष्ठान के उपयोग को दृष्टिगत उस एक वेद के चार विभाग कर दिये और इन चारों विभागों की शिक्षा चार शिष्यों को दी। ये ही चार विभाग ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के नाम से प्रसिद्ध है। पैल, वैशम्पायन, जैमिनि और सुमन्तु नामक -चार शिष्यों को क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद की शिक्षा दी। इन चार शिष्यों ने शाकल आदि अपने भिन्न-भिन्न शिष्यों को पढ़ाया। इन शिष्यों के द्वारा अपने-अपने अधीत वेदों के प्रचार व संरक्षण के कारण वे शाखाएँ उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध हैं। **वेदों को तीन भागों में बांटा जा सकता है - ज्ञानकाण्ड, उपासनाकाण्ड और कर्मकाण्ड।**

वेदत्रयी

विश्व में शब्द-प्रयोग की तीन शैलियाँ होती है; जो पद्य (कविता), गद्य और गानरुप से प्रसिद्ध हैं। पद्य में अक्षर-संख्या तथा पाद एवं विराम का निश्चित नियम होता है। अतः निश्चित अक्षर-संख्या तथा पाद एवं विराम वाले वेद-मन्त्रों की संज्ञा 'ऋक्' है। जिन मन्त्रों में छन्द के नियमानुसार अक्षर-संख्या तथा पाद एवं विराम ऋषिदृष्ट नहीं है, वे गद्यात्मक मन्त्र 'यजुः' कहलाते हैं और जितने मन्त्र गानात्मक हैं, वे मन्त्र ''साम'' कहलाते हैं। इन तीन प्रकार की शब्द-प्रकाशन-शैलियों के आधार पर ही शास्त्र एवं लोक में वेद के लिये 'त्रयी' शब्द का भी व्यवहार किया जाता है। वेदों के मंत्रों के 'पद्य, गद्य और गान' ऐसे तीन विभाग होते हैं। हर एक भाषा के ग्रंथों में पद्य, गद्य और गान ऐसे तीन भाग होते ही हैं। वैसे ही ये वैदिक वाङ्मय के तीन भाग है-

१- वेद का पद्य भाग (**ऋग्वेद, अथर्ववेद)**

२- वेद का गद्य भाग (**यजुर्वेद)**

३- वेद का गायन भाग (**सामवेद)**

इनको 'वेदत्रयी' कहते हैं, अर्थात् ये वेद के तीन विभाग हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद यह 'त्रयी विद्या' है। इसका भाव यह है कि ऋग्वेद पद्यसंग्रह है, यजुर्वेद गद्यसंग्रह है और सामवेद गानसंग्रह है। इस ऋक्संग्रह में अथर्ववेद सम्मिलित है, ऐसा समझना चाहिए। इसका कारण यह है कि अथर्ववेद भी पद्यसंग्रह ही है ।

यजुर्वेद गद्यसंग्रह है, अत: इस यजुर्वेद में जो ऋग्वेद के छंदोबद्ध मंत्र हैं, उनको भी यजुर्वेद पढ़ने के समय गद्य जैसा ही पढ़ा जाता है।

चतुर्वेद

वेद चार हैं- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद। प्रत्येक वेद की अनेक शाखाएं बतायी गयी हैं। यथा ऋग्वेद की 21, यजुर्वेद की 101, सामवेद की 1001, अर्थववेद की 91 इस प्रकार 1131 शाखाएं हैं परन्तु 12 शाखाएं ही मूल ग्रन्थों में उपलब्ध हैं। वेद की प्रत्येक शाखा की वैदिक शब्द राशि चार भागों में उपलब्ध है। 1. संहिता 2. ब्राह्मण 3. आरण्यक 4. उपनिषद्। इनमें संहिता को ही वेद माना जाता है। शेष वेदों के व्याख्या ग्रन्थ हैं (नीचे विवरण दिया गया है) ।

ऋग्वेद

ऋग्वेद को चारों वेदों में सबसे प्राचीन माना जाता है। इसको दो प्रकार से बाँटा गया है। प्रथम प्रकार में इसे 10 मण्डलों में विभाजित किया गया है। मण्डलों को सूक्तों में, सूक्त में कुछ ऋचाएं होती हैं। कुल ऋचाएं 1052 हैं। दूसरे प्रकार से ऋग्वेद में 64 अध्याय हैं। आठ-आठ अध्यायों को मिलाकर एक अष्टक बनाया गया है। ऐसे कुल आठ अष्टक हैं। फिर प्रत्येक अध्याय को वर्गों में विभाजित किया गया है। वर्गों की संख्या भिन्न-भिन्न अध्यायों में भिन्न भिन्न ही है। कुल वर्ग संख्या 2024 है। प्रत्येक वर्ग में कुछ मंत्र होते हैं। सृष्टि के अनेक रहस्यों का इनमें उद्घाटन किया गया है। पहले इसकी 21 शाखाएं थी, परन्तु वर्तमान में इसकी शाकल शाखा का ही प्रचार है।

यजुर्वेद

इसमें गद्य और पद्य दोनों ही हैं। इसमें यज्ञ कर्म की प्रधानता है। प्राचीन काल में इसकी 101 शाखाएं थीं परन्तु वर्तमान में केवल पांच शाखाएं हैं - काठक, कपिष्ठल, मैत्रायणी, तैत्तिरीय, वाजसनेयी। इस वेद के दो भेद हैं - कृष्ण यजुर्वेद और शुक्ल यजुर्वेद। कृष्ण यजुर्वेद का संकलन महर्षि वेद व्यास ने किया है। इसका दूसरा नाम तैत्तिरीय संहिता भी है। इसमें मंत्र और ब्राह्मण भाग मिश्रित हैं। शुक्ल यजुर्वेद - इसे सूर्य ने याज्ञवल्क्य को उपदेश के रूप में दिया था। इसमें 15 शाखाएं थीं परन्तु वर्तमान में माध्यन्दिन को जिसे वाजसनेयी भी कहते हैं प्राप्त हैं। इसमें 40 अध्याय, 303 अनुवाक एवं 1975 मंत्र हैं। अन्तिम चालीसवां अध्याय ईशावास्योपनिषद है।

सामवेद

यह गेय ग्रन्थ है। इसमें गान विद्या का भण्डार है, यह भारतीय संगीत का मूल है। ऋचाओं के गायन

को ही साम कहते हैं। इसकी 1001 शाखाएं थीं। परन्तु आजकल तीन ही प्रचलित हैं - कोथुमीय, जैमिनीय और राणायनीय। इसको पूर्वार्चिक और उत्तरार्चिक में बांटा गया है। पूर्वार्चिक में चार काण्ड हैं - आग्नेय काण्ड, ऐन्द्र काण्ड, पवमान काण्ड और आरण्य काण्ड। चारों काण्डों में कुल 640 मंत्र हैं। फिर महानाम्न्यार्चिक के 10 मंत्र हैं। इस प्रकार पूर्वार्चिक में कुल 650 मंत्र हैं। छः प्रपाठक हैं। उत्तरार्चिक को 21 अध्यायों में बांटा गया। नौ प्रपाठक हैं। इसमें कुल 1225 मंत्र हैं। इस प्रकार सामवेद में कुल 1875 मंत्र हैं। इसमें अधिकतर मंत्र ऋग्वेद से लिए गए हैं। इसे उपासना का प्रवर्तक भी कहा जा सकता है।

अथर्ववेद

इसमें गणित, विज्ञान, आयुर्वेद, समाज शास्त्र, कृषि विज्ञान, आदि अनेक विषय वर्णित हैं। कुछ लोग इसमें मंत्र-तंत्र भी खोजते हैं। यह वेद जहां ब्रह्म ज्ञान का उपदेश करता है, वहीं मोक्ष का उपाय भी बताता है। इसे ब्रह्म वेद भी कहते हैं। इसमें मुख्य रूप में अथर्वण और आंगिरस ऋषियों के मंत्र होने के कारण अथर्व आंगिरस भी कहते हैं। यह 20 काण्डों में विभक्त है। प्रत्येक काण्ड में कई-कई सूत्र हैं और सूत्रों में मंत्र हैं। इस वेद में कुल 5977 मंत्र हैं। इसकी आजकल दो शाखाएं शौणिक एवं पिप्पलाद ही उपलब्ध हैं। अथर्ववेद का विद्वान् चारों वेदों का ज्ञाता होता है। यज्ञ में ऋग्वेद का होता देवों का आह्वान करता है, सामवेद का उद्गाता सामगान करता है, यजुर्वेद का अध्वर्यु देव:कोटीकर्म का वितान करता है तथा अथर्ववेद का ब्रह्म पूरे यज्ञ कर्म पर नियंत्रण रखता है।

चार उपवेद

1. स्थापत्यवेद इसमे स्थापत्यकला के विष्य मे जिसे वास्तु शास्त्र या वास्तुकला भी कहा जाता है। इसके अन्तर्गेत आता है।
2. धनुर्वेद
3. गन्धर्वेद
4. आयुर्वेद

वैदिक साहित्य के चार भाग

उपर वर्णित प्रत्येक वेद के चार भाग होते हैं। पहले भाग (संहिता) के अलावा हरेक में टीका अथवा भाष्य के तीन स्तर होते हैं। वे है -

- संहिता (मन्त्र भाग
- ब्राह्मणग्रन्थ- (गद्य में कर्मकाण्ड की विवेचना
- आरण्यक (कर्मकाण्ड के पीछे के उद्देश्य की विवेचना
- उपनिषद (परमेश्वर, परमात्मा-ब्रह्म और आत्मा के स्वभाव और सम्बन्ध का बहुत ही दार्शनिक और ज्ञानपूर्वक वर्णन

वेद की संहिताओं में मंत्राक्षरों में खड़ी तथा आड़ी रेखायें लगाकर उनके उच्च, मध्यम, या मन्द

संगीतमय स्वर उच्चारण करने के संकेत किये गये हैं। इनको **उदात्त**, **अनुदात्त** ओर **स्वारित** के नाम से अभिगित किया गया हैं। ये स्वर बहुत प्राचीन समय से प्रचलित हैं और महामुनि पतंजलि ने अपने महाभाष्य में इनके मुख्य मुख्य नियमों का समावेश किया है।

स्वरों को अधिक या न्यून रूप से बोले जाने के कारण इनके भी दो-दो भेद हो जाते हैं। जैसे उदात्त-उदात्ततर, अनुदात्त-अनुदात्ततर, स्वरित-स्वरितोदात्त। इनके अलावे एक और स्वर माना गया है - एक श्रुति - इसमें तीनों स्वरों का मिलन हो जाता है। इस प्रकार कुल स्वरों की संख्या ७ हो जाती है। इन सात स्वरों में भी आपस में मिलने से स्वरों में भेद हो जाता है जिसके लिए स्वर चिह्नों में कुछ परिवर्तन हो जाता है। यद्यपि इन स्वरों के अंकण और टंकण में कई विधियाँ प्रयोग की जाती हैं और प्रकाशक-भाष्यकारों में कोई एक विधा सामान्य नहीं है, अधिकांश स्थानों पर अनुदात्त के लिए अक्षर के नीचे एक आड़ी लकीर तथा स्वरित के लिए अक्षर के ऊपर एक खड़ी रेखा बनाने का नियम है। उदात्त का अपना कोई चिह्न नहीं है। इससे अंकण में समस्या आने से कई लेखक-प्रकाशक स्वर चिह्नों का प्रयोग ही नहीं करते।

वेदों का विभाजन

आधुनिक विचारधारा के अनुसार चारों वेदों की शब्द-राशि के विस्तार में तीन दृष्टियाँ पायी जाती है-

- याज्ञिक,
- प्रायोगिक और
- साहित्यिक दृष्टि

याज्ञिक दृष्टि

इसके अनुसार वेदोक्त यज्ञों का अनुष्ठान ही वेद के शब्दों का मुख्य उपयोग माना गया है। सृष्टि के आरम्भ से ही यज्ञ करने में साधारणतया मन्त्रोच्चारण की शैली, मन्त्राक्षर एवं कर्म-विधि में विविधता रही है। इस विविधता के कारण ही वेदों की शाखाओं का विस्तार हुआ है। यथा-ऋग्वेद की २१ शाखा, यजुर्वेद की १०१ शाखा, सामवेद की १००० शाखा और अथर्ववेद की ९ शाखा- इस प्रकार कुल १,१३१ शाखाएँ हैं। इस संख्या का उल्लेख महर्षि पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य में भी किया है। उपर्युक्त १,१३१ शाखाओं में से वर्तमान में केवल १२ शाखाएँ ही मूल ग्रन्थों में उपलब्ध हैः-

1. ऋग्वेद की २१ शाखाओं में से केवल २ शाखाओं के ही ग्रन्थ प्राप्त हैं-
    1. शाकलशाखा और-
    2. शांखायन शाखा।
2. यजुर्वेद में कृष्णयजुर्वेद की ८६ शाखाओं में से केवल ४ शाखाओं के ग्रन्थ ही प्राप्त है-
    1. तैत्तिरीयशाखा-,
    2. मैत्रायणीय शाखा,

3. कठशाखा और-
    4. कपिष्ठलशाखा-
3. शुक्लयजुर्वेद की १५ शाखाओं में से केवल २ शाखाओं के ग्रन्थ ही प्राप्त है-
    1. माध्यन्दिनीयशाखा और-
    2. काण्वशाखा।-
4. सामवेद की १,००० शाखाओं में से केवल २ शाखाओं के ही ग्रन्थ प्राप्त है-
    1. कौथुमशाखा और-
    2. जैमिनीयशाखा।-
5. अथर्ववेद की ९ शाखाओं में से केवल २ शाखाओं के ही ग्रन्थ प्राप्त है-
    1. शौनकशाखा और-
    2. पैप्पलादशाखा।-

उपर्युक्त १२ शाखाओं में से केवल ६ शाखाओं की अध्ययनशैली प्राप्त- हैशाकल-, तैत्तरीय, माध्यन्दिनी, काण्व, कौथुम तथा शौनक शाखा। यह कहना भी अनुपयुक्त नहीं होगा कि अन्य शाखाओं के कुछ और भी ग्रन्थ उपलब्ध हैं, किन्तु उनसे शाखा का पूरा परिचय नहीं मिल सकता एवं बहुतसी शाखाओं के तो- नाम भी उपलब्ध नहीं है।

प्रायोगिक दृष्टि

इसके अनुसार प्रत्येक शाखा के दो भाग बताये गये है।

1. मन्त्र भाग रुप से-यज्ञ में साक्षात् -प्रयोग आती है।
2. ब्राह्मण भाग(आज्ञाबोधक शब्द) जिसमें विधि -, कथा, आख्यायिका एवं स्तुति द्वारा यज्ञ कराने की प्रवृत्ति उत्पन्न कराना, यज्ञानुष्ठान करने की पद्धति बताना, उसकी उपपत्ति और विवेचन के साथ उसके रहस्य का निरुपण करना है।

साहित्यिक दृष्टि

इसके अनुसार प्रत्येक शाखा की वैदिक शब्द-राशि का वर्गीकरण-

1. संहिता,
2. ब्राह्मण,
3. आरण्यक और
4. उपनिषद् इन चार भागों में है।

वेद के अंग, उपांग एवं उपवेद

वेदों के सर्वांगीण अनुशीलन के लिये शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष- इन ६ अंगों के ग्रन्थ हैं। प्रतिपदसूत्र, अनुपद, छन्दोभाषा (प्रातिशाख्य), धर्मशास्त्र, न्याय तथा वैशेषिक- ये ६ उपांग ग्रन्थ भी उपलब्ध है। आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद तथा स्थापत्यवेद- ये क्रमशः चारों वेदों के उपवेद कात्यायन ने बतलाये हैं।

वेद-भाष्यकार

प्राचीन काल में व्यास, जैमिनी, पातंञ्जलि आदि मुनियों को वेदों का अच्छा ज्ञान था। व्यास ऋषि ने गीता में कई बार वेदों का ज़िक्र किया है। कई बार कृष्ण, अर्जुन से ये कहते हैं कि वेदों की अलंकारमयी भाषा के बदले उनके वचन आसान लगेंगे।

राजा राममोहन राय का ब्रह्म समाज और दयानन्द सरस्वती का आर्य समाज लगभग एक ही समय में (1860) वेदों के सबसे बड़े प्रचारक बने। इनके अतिरिक्त शंकर पाण्डुरंग ने सायण भाष्य के अलावे अथर्ववेद का चार जिल्दों में प्रकाशन किया। लोकमान्य तिलक ने **ओरायन और द आर्कटिक होम इन वेदाज़** नामक दो ग्रंथ वैदिक साहित्य की समीक्षा के रूप में लिखे। बालकृष्ण दीक्षित ने सन् १८७७ में कलकत्ते से सामवेद पर अपने ज्ञान का प्रकाशन कराया। श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ने सतारा में चारों वेदों की संहिता का श्रमपूर्वक प्रकाशन कराया। तिलक विद्यापीठ, पुणे से पाँच जिल्दों में प्रकाशित ऋग्वेद के सायण भाष्य के प्रकाशन को प्रामाणिक माना जाता है। वैदिक संहिताओं के अनुवाद में रमेशचंद्र दत्त बंगाल से, रामगोविन्द त्रिवेदी एवम् जयदेव विद्यालंकार के हिन्दी में एवम् श्रीधर पाठक का मराठी में कार्य भी लोगों को वेदों के बारे में जानकारी प्रदान करता रहा है। इसके बाद गायत्री तपोभूमि के श्रीराम शर्मा आचार्य ने भी वेदों के भाष्य प्रकाशित किये हैं।

विदेशी प्रयास

सत्रहवीं सदी में मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब के भाई दारा शिकोह ने कुछ उपनिषदों का फ़ारसी में अनुवाद किया जो पहले फ्रांसिसी और बाद में अन्य भाषाओं में अनूदित हुईं। यूरोप में इसके बाद वैदिक और संस्कृत साहित्य की ओर ध्यान गया। मैक्स मूलर जैसे यूरोपीय विद्वान ने भी संस्कृत और वैदिक साहित्य पर बहुत अध्ययन किया है। लेकिन यूरोप के विद्वानों का ध्यान हिन्द आर्य भाषा परिवार के सिद्धांत को बनाने और उसको सिद्ध करने में ही लगी हुई है। शब्दों की समानता को लेकर बने इस सिद्धांत में ऐतिहासिक तथ्य और काल निर्धारण को तोड़-मरोड़ करना ही पड़ता है। इस कारण से वेदों की रचना का समय १८००-१००० इस्वी ईसा पूर्व माना जाता है जो संस्कृत साहित्य और हिन्दू सिद्धांतों पर खरा नहीं उतरता। लेकिन आर्य जातियों के प्रयाण के सिद्धांत के तहत और भाषागत दृष्टि से यही काल इन ग्रंथों की रचना का मान लिया जाता है।

अन्य मतों की दृष्टि

जैसा कि उपर लिखा है, वेदों के कई शब्दों का समझना उतना सरल नहीं रहा है। इसकी वजह से इनमें वर्णित श्लोंकों को अलग-अलग अर्थों में व्यक्ति किया गया है। सबसे अधिक विवाद-वार्ता ईश्वर के स्वरूप, यानि एकमात्र या अनेक देवों के सदृश्य को लेकर हुआ है। यूरोप के संस्कृत विद्वानों की व्याख्या भी हिन्द-आर्य जाति के सिद्धांत से प्रेरित रही है। प्राचीन काल में ही इनकी सत्ता को चुनौती देकर कई ऐसे मत प्रकट हुए जो आज भी धार्मिक मत कहलाते हैं लेकिन कई रूपों में भिन्न हैं। इनका मुख्य अन्तर नीचे स्पष्ट किया गया है।

जैन - इनको मूर्ति पूजा के प्रवर्तक माना जाता है। ये अहिंसा के मार्ग पर ज़ोर देते हैं पर वेदों

को श्रेष्ठ नहीं मानते ।

- बौद्ध - इस मत में महात्मा बुद्ध के प्रवर्तित ध्यान और तृष्णा को दुःखों का कारण बताया है । वेदों में लिखे ध्यान के महत्व को ये तो मानते हैं पर ईश्वर की सत्ता से नास्तिक हैं।
- शैव - वेदों में वर्णित रूद्र के रूप शिव को सर्वोपरि समझने वाले । सनातन (यानि वैदिक) धर्म के मानने वाले *शिव* को एकमात्र ईश्वर का कल्याणकारी रूप मानते हैं, लेकिन शैव लोग शंकर देव के रूप जिसमें नंदी बैल), जटा, बाघंबर इत्यादि हैंको विश्व का कर्ता मानते (हैं ।
- वैष्णव - विष्णु और उनके अवतारों को ईश्वर मानने वाले । वैदिक मत विष्णु को एक ईश्वर का ही वो नाम बताते हैं जिसके अनुसार सर्वत्र फैला हुआ ईश्वर विष्णु कहलाता है ।
- सिख - मुख्यतः उपनिषदों एवम मुस्लिम ग्रंथों पर श्रद्धा रखने वाले । इनका विश्वास एकमात्र ईश्वर में तो है, लेकिन वेदों को ईश्वर की वाणी नहीं समझते हैं ।

यज्ञ

यज्ञ के वर्तमान रूप के महत्व को लेकर कई विद्वानों, मतों और भाष्कारों में विरोधाभाष है । यज्ञ में आग के प्रयोग को प्राचीन पारसी पूजन विधि के इतना समान होना और हवन की अत्यधिक महत्ता के प्रति विद्वानों में रूचि रही है ।

देवता

देव शब्द का लेकर ही कई विद्वानों में असहमति रही है । कई मतों में (जैसे - शैव, वैष्णव और शाक्त) इसे महामनुष्य के रूप में विशिष्ट शक्ति प्राप्त साकार चरित्र मसझते हैं और उनका मूर्ति रूप में पूजन करते हैं तो अन्य कई इन्हें ईश्वर (ब्रह्म, सत्य) के ही नाम बताते हैं । उदाहरणार्थ अग्नि शब्द का अर्थ आग न समझकर सबसे आगे अर्थात् प्रथम यानि परमेश्वर समझते हैं । देवता शव्द का अर्थ दिव्य, यानि परमेश्वर (निराकार, ब्रह्म) की शक्ति से पूर्ण माना जाता है - जैसे पृथ्वी आदि । इसी मत में महादेव, देवों के अधिपति होने के कारण ईश्वर को कहते हैं । इसी तरह सर्वत्र व्यापक ईश्वर विष्णु, और सत्य होने के कारण ब्रह्मा कहलाता है । इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु और महादेव किसी चरित्र के नाम नहीं बल्कि ईश्वर के ही नाम हैं । इसी प्राकर गणेश (गणपति), प्रजापति, देवी, बुद्ध, लक्ष्मी इत्यादि परमेश्वर के ही नाम हैं । ऐसे लोग मूर्तिपूजा के विरूद्ध हैं और ईश्वर को एकमात्र सत्य, सर्वोपरि समझते हैं ।

अश्वमेध

अस्वमेध से हिंसा और बलि का विचार आता है । यह कई हिन्दुओं को भी आश्चर्यजनक लगता है क्योंकि कई स्थानों पर शुद्धतावादी हिंसा (और मांस भक्षण) से परहेज करते रहे हैं । कईयों का मानना है कि मेध शब्द में अध्वरं का भी प्रयोग हुआ है जिसका अर्थ है अहिंसा । अतः मेध का भी अर्थ कुछ और रहा होगा । इसी प्रकार अश्व शब्द का अर्थ घोड़ा न रहकर शक्ति रहा होगा । श्रीराम शर्मा आचार्य कृत भाष्यों के अनुसार अश्व शब्द का अर्थ शक्ति, गौ शब्द का अर्थ पोषण है । इससे

अश्वमेध का अर्थ घोड़े का बलि से इतर होती प्रतीत होती है।

4.4 सारांश -

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप **सर्वविद्या का मूल वेद** को समझ लेंगे। वेदों में समस्त ज्ञानराशि का भण्डार है। वेद एवं उपवेद सर्वविधकल्याणार्थ मानवों के लिये जगत में प्रतिपाद्य है। इसके मूल परम्परा एवं महत्व को आप इस इकाई के माध्यम से समझ पायेंगे। वेदों में प्रतिपाद्य अनेक विषयों का वर्णन इस इकाई में किया गया है। जिसका अध्ययन कर आप ततसम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करनें में समर्थ हो सकेंगे।

4.5 शब्दावली

वेद – विद् धातु से ज्ञानार्थे वेद शब्द की उत्पत्ति हुई है।

उपवेद – वेदस्य समीपं उपवेदम्। प्रत्येक वेदों के उपवेद है।

सर्वविद्यामूल – सर्वविद्यामूल वेद को कहा गया है, जिससे समस्त ज्ञान एवं विज्ञान का उद्भव होता है।

शुद्धतावादी – जो शुद्धता को मानता हो।

सर्वविधकल्याण – सभी लोगों के लिये कल्याण

उदाहरणार्थ – उदाहरण के लिये।

उपवेद – वेद के समीप

अनुदात्त – स्वर का भेद

अश्व – घोड़ा

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर –

1. ख
2. क
3. ख
4. ख
5. ख

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम	**प्रकाशन**
नित्यकर्म पूजाप्रकाश	गीताप्रेस गोरखपुर
भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व	
कर्मकाण्ड प्रदीप	

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1- वेद शब्द से क्या तात्पर्य है। विस्तार से वर्णन कीजिये ?

2- वेद के प्रकारों का विस्तार से वर्णन कीजिये।

इकाई – 5 पुराणों का परिचय

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3. पुराण परिचय

पुराणों के प्रकार एवं महत्व

5.4 अभ्यास प्रश्न

5.4 सारांश

5.5 शब्दावली

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रथम खण्ड के पचंम इकाई ''पुराणों का परिचय'' नामक शीर्षक से उद्धृत है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने वेदों का अध्ययन कर लिया है। सनातन परम्परा में पुराणों की संख्या 18 है। वस्तुत: पुराण धर्मसम्बन्धित आख्यान ग्रन्थ है, जिसमें कि विभिन्न कालखण्डों में भगवान की अनेक कथाओं का वर्णन किया गया है। पुरा नवं पुराणम्। पुरा का अर्थ होता है – अतीत तथा अण का अर्थ होता है कहना। अतीत का वर्णन जिसमें कहा गया हो उसे पुराण कहते है। कर्मकाण्ड जगत में जब आप वेदों का अध्ययन करते है, तो पाते हैं कि उसमें जगत् के समस्त ज्ञान राशि समाहित है। वेद से इतर कोई शेष ज्ञान नहीं है। वर्तमान कालखण्ड में यह दृष्टिगोचर नहीं हो पाता है, क्योंकि इसका कारण है कि मूल रूप से वेद का ज्ञान अब किंचित लोगों के पास रह गया है। पुराण वेद एवं उपनिषद के पश्चात् धर्म का बोध कराने वाला एक वृहत् ज्ञान राशि का भण्डार है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप पुराण एवं पुराण से जुड़े अनेक विषयों का अध्ययन करेंगे। आशा है कि पाठक इस इकाई का अध्ययन करके पुराणों को सम्यक् तरीके से समझ पायेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेंगे कि –

1.पुराण किसे कहते है।

2.पुराण के कितने प्रकार है।

3. वेद एवं उपनिषद के पश्चात् पुराण एक विशाल ज्ञान राशि का भण्डार है।

4. पुराण का महत्व क्या है।

5. पुराण धर्म का आख्यान ग्रन्थ है।

5.3 पुराण परिचय

पुराण सनातन परम्परा के धर्मसम्बन्धित आख्यानग्रन्थ है जिसमें स्वायम्भु मनु से लेकर वर्तमान प्रचलित मन्वतन्तर तक का वर्णन, सृष्टियोत्पत्ति, लय, प्राचीन ऋषियों, मुनियों और राजाओं के वृत्तान्त आदि निहित है। वेदों के पश्चात् जगत् में धर्म संस्थापनार्थ महर्षि वेदव्यास जी के द्वारा अष्टादश पुराणों की रचना की गई है। भागवतमहापुराण में उद्धृत है –

अष्टादश पुराणेषु व्यासेषु वचनद्वयम्।

जो स्मृति विभाग में आते हैं। भारतीय जीवन-धारा में जिन ग्रन्थों का महत्वपूर्ण स्थान है उनमें पुराण भक्ति-ग्रंथों के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण माने जाते हैं। अठारह पुराणों में अलग-अलग देवी-देवताओं को केन्द्र मानकर पाप और पुण्य, धर्म और अधर्म, कर्म, और अकर्म की गाथाएँ कही गई हैं। कुछ

पुराणों में सृष्टि के आरम्भ से अन्त तक का विवरण किया गया है। इनमें हिन्दू देवी-देवताओं का और पौराणिक मिथकों का बहुत अच्छा वर्णन है।

कर्मकाण्ड (वेद) से ज्ञान (उपनिषद्) की ओर आते हुए भारतीय मानस में पुराणों के माध्यम से भक्ति की अविरल धारा प्रवाहित हुई है। विकास की इसी प्रक्रिया में बहुदेववाद और निर्गुण ब्रह्म की स्वरूपात्मक व्याख्या से धीरे-धीरे मानस अवतारवाद या सगुण भक्ति की ओर प्रेरित हुआ।

पुराणों में वैदिक काल से चले आते हुए सृष्टि आदि संबंधी विचारों, प्राचीन राजाओं और ऋषियों के परंपरागत वृत्तांतों तथा कहानियों आदि के संग्रह के साथ साथ कल्पित कथाओं की विचित्रता और रोचक वर्णनों द्वारा सांप्रदायिक या साधारण उपदेश भी मिलते हैं। पुराण उस प्रकार प्रमाण ग्रंथ नहीं हैं जिस प्रकार श्रुति, स्मृति आदि हैं।

पुराणों में विष्णु, वायु, मत्स्य और भागवत में ऐतिहासिक वृत्त— राजाओं की वंशावली आदि के रूप में बहुत कुछ मिलते हैं। ये वंशावलियाँ यद्यपि बहुत संक्षिप्त हैं और इनमें परस्पर कहीं कहीं विरोध भी हैं पर हैं बड़े काम की। पुराणों की ओर ऐतिहासिकों ने इधर विशेष रूप से ध्यान दिया है और वे इन वंशावलियों की छानबीन में लगे हैं।

शाब्दिक अर्थ एवं महिमा

पुराण वर्तमान, भुतकाल और भविष्यकाल का देखा हुआ युग है जिसे बहुत ही सुन्दर ढ़ग से लिखा गया है जिसे धर्मं में आस्था रखने वाले लोग धर्मं ग्रन्थ मानते है और जो लोग बुद्धिजीवी होते है वह इसे विज्ञान के रूप में देखते है जिसको उदाहरण द्वारा आप समझ सकते है पुराण में १४ मन्वन्तर के बारे में बताया गया है साथ ही पृथवी के आयु बताया गया है, कौन से युग में कितने ग्रह का आकाश मंडल था वह बताया गया है उस समय कौन-२ से देवता हुए वह बताया गया है , पृथवी के कौन से शत्रु हुए उसका विनाश कैसे हुआ यहाँ समस्त विषय उल्लेखित है लेकिन वह इतने सुंन्दर ढ़ग से लिखे गये है की सभी चीजे धर्मं और पुरानी कथा मालुम जान पड़ती है जिसे आज तक नासा जैसे वैज्ञानिक तक नहीं समझ पाये। शायद इसीलिये कहा गया कि - **जहॉं विज्ञान का अन्त होता है वहॉं अध्यात्म का आरम्भ होता है।** सनातन परम्परा के समस्त विषय विज्ञान पर आधारित है यही पुराण है - पुराण में बताया गया है पृथवी ६ बार नष्ट हो चुकी है यह उसकी सातवीं उत्पत्ति है और आने वाले ७ युग की व्याख्या भी उसमें उद्धृत है, पुराण सभी प्रमाणों के साथ आपको बताता है की मैं जो भी इसमे लिखा हूँ वह सभी सत्य और प्रमाणिक है आप जो इस समय पृथ्वी पर निवास कर रहे है वह पुराण के अनुसार वैवस्त मन्वन्तर (युग) है।

विषयवस्तु

प्राचीनकाल से पुराण देवताओं, ऋषियों, मनुष्यों - सभी का मार्गदर्शन करते रहे हैं।पुराण मनुष्य को धर्म एवं नीति के अनुसार जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देते हैं। पुराण मनुष्य के कर्मो का विश्लेषण कर उन्हें दुष्कर्म करने से रोकते हैं। पुराण वस्तुतः वेदों का विस्तार हैं। वेद बहुत ही जटिल तथा शुष्क भाषा-शैली में लिखे गए हैं। वेदव्यास जी ने पुराणों की रचना और पुनर्रचना की। कहा जाता है,

''पूर्णात पुराण '' जिसका अर्थ है, जो वेदों का पूरक हो, अर्थात् पुराण (जो वेदों की टीका हैं)। वेदों की जटिल भाषा में कही गई बातों को पुराणों में सरल भाषा में समझाया गया हैं। पुराण-साहित्य में अवतारवाद को प्रतिष्ठित किया गया है। निर्गुण निराकार की सत्ता को मानते हुए सगुण साकार की उपासना करना इन ग्रंथों का विषय है। पुराणों में अलग-अलग देवी-देवताओं को केन्द्र में रखकर पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म और कर्म-अकर्म की कहानियाँ हैं। प्रेम, भक्ति, त्याग, सेवा, सहनशीलता ऐसे मानवीय गुण हैं, जिनके अभाव में उन्नत समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। पुराणों में देवी-देवताओं के अनेक स्वरूपों को लेकर एक विस्तृत विवरण मिलता है। पुराणों में सत्य को प्रतिष्ठित में दुष्कर्म का विस्तृत चित्रण पुराणकारों ने किया है। पुराणकारों ने देवताओं की दुष्प्रवृत्तियों का व्यापक विवरण किया है लेकिन मूल उद्देश्य सद्भावना का विकास और सत्य की प्रतिष्ठा ही है।

अट्ठारह पुराण

पुराणों की संख्या अठारह हैं । विष्णु पुराण के अनुसार उनके नाम हैं—विष्णु, पद्म, ब्रह्म, शिव, भागवत, नारद, मार्कंडेय, अग्नि, ब्रह्मवैवर्त, लिंग, वाराह, स्कंद, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड, ब्रह्मांड और भविष्य ।

1. ब्रह्म पुराण
2. पद्म पुराण
3. विष्णु पुराण
4. शिव पुराण -- (वायु पुराण)
5. भागवत पुराण -- (देवीभागवत पुराण)
6. नारद पुराण
7. मार्कण्डेय पुराण
8. अग्नि पुराण
9. भविष्य पुराण
10. ब्रह्म वैवर्त पुराण
11. लिङ्ग पुराण
12. वाराह पुराण
13. स्कन्द पुराण
14. वामन पुराण
15. कूर्म पुराण
16. मत्स्य पुराण
17. गरुड़ पुराण
18. ब्रह्माण्ड पुराण

पुराणों में एक विचित्रता यह है कि प्रत्येक पुराण में अठारहों पुराणों के नाम और उनकी श्लोक संख्या है। नाम और श्लोकसंख्या प्रायः सबकी मिलती है, कहीं - कहीं भेद है। जैसे कूर्म पुराण में अग्नि के स्थान में वायुपुराण; मार्कंडेय पुराण में लिंगपुराण के स्थान में नृसिंहपुराण; देवीभागवत में शिव पुराण के स्थान में नारद पुराण और मत्स्य में वायुपुराण है। भागवत के नाम से आजकल दो पुराण मिलते हैं—एक श्रीमदभागवत, दूसरा देवीभागवत। कौन वास्तव में पुराण है इसपर झगड़ा रहा है। रामाश्रम स्वामी ने 'दुर्जनमुखचपेटिका' में सिद्ध किया है कि श्रीमदभागवत ही पुराण है इसपर काशीनाथ भट्ट ने 'दुर्जनमुखमहाचपेटिका' तथा एक और पंडित ने 'दुर्जनमुखपद्यपादुका' देवीभागवत के पक्ष में लिखी थी।

प्रमुख पुराणों का परिचय

पुराणों में सबसे पुराना विष्णुपुराण ही प्रतीत होता है। उसमें सांप्रदायिक खींचतान और रागद्वेष नहीं है। पुराण के पाँचो लक्षण भी उसपर ठीक ठीक घटते हैं। उसमें सृष्टि की उत्पत्ति और लय, मन्वंतरों, भरतादि खंडों और सूर्यादि लोकों, वेदों की शाखाओं तथा वेदव्यास द्वारा उनके विभाग, सूर्य वंश, चंद्र वंश आदि का वर्णन है। कलि के राजाओं में मगध के मौर्य राजाओं तथा गुप्तवंश के राजाओं तक का उल्लेख है। श्रीकृष्ण की लीलाओं का भी वर्णन है पर बिलकुल उस रूप में नहीं जिस रूप में भागवत में है।

कुछ लोगों का कहना है कि वायुपुराण ही शिवपुराण है क्योंकि आजकल जो शिवपुराण नामक पुराण या उपपुराण है उसकी श्लोक संख्या २४,००० नहीं है, केवल ७,००० ही है। वायुपुराण के चार पाद है जिनमें सृष्टि की उत्पत्ति, कल्पों ओर मन्वंतरों, वैदिक ऋषियों की गाथाओं, दक्ष प्रजापति की कन्याओं से भिन्न भिन्न जीवोत्पति, सूर्यवंशी और चंद्रवंशी राजाओं की वंशावली तथा कलि के राजाओं का प्रायः विष्णुपुराण के अनुसार वर्णन है।

मत्स्यपुराण में मन्वंतरों और राजवंशावलियों के अतिरिक्त वर्णश्रम धर्म का बड़े विस्तार के साथ वर्णन है और मत्सायवतार की पूरी कथा है। इसमें मय आदिक असुरों के संहार, मातृलोक, पितृलोक, मूर्ति और मंदिर बनाने की विधि का वर्णन विशेष ढंग का है। श्रीमदभागवत का प्रचार सबसे अधिक है क्योंकि उसमें भक्ति के माहात्म्य और श्रीकृष्ण की लीलाओं का विस्तृत वर्णन है। नौ स्कंधों के भीतर तो जीवब्रह्म की एकता, भक्ति का महत्व, सृष्टिलीला, कपिलदेव का जन्म और अपनी माता के प्रति वैष्णव भावानुसार सांख्यशास्त्र का उपदेश, मन्वंतर और ऋषिवंशावली, अवतार जिसमें ऋषभदेव का भी प्रसंग है, ध्रुव, वेणु, पृथु, प्रह्लाद इत्यादि की कथा, समुद्रमथन आदि अनेक विषय हैं। पर सबसे बड़ा दशम स्कंध है जिसमें कृष्ण की लीला का विस्तार से वर्णन है। इसी स्कंध के आधार पर शृंगार और भक्तिरस से पूर्ण कृष्णचरित् संबंधी संस्कृत और भाषा के अनेक ग्रंथ बने हैं। एकादश स्कंध में यादवों के नाश और बारहवें में कलियुग के राचाओं के राजत्व का वर्णन है। भागवत की लेखनशैली और पुराणों से भिन्न है। इसकी भाषा पांडित्यपूर्ण और साहित्य संबंधी चमत्कारों से भरी हुई है, इससे इसकी रचना कुछ पीछे की मानी जाती है।

अग्निपुराण एक विलक्षण पुराण है जिसमें राजवंशावलियों तथा संक्षिप्त कथाओं के अतिरिक्त धर्मशास्त्र, राजनीति, राज- धर्म, प्रजाधर्म, आयुर्वेद, व्याकरण, रस, अलंकार, शस्त्र- विद्या आदि अनेक विषय हैं। इसमें तंत्रदीक्षा का भी विस्तृत प्रकरण है। कलि के राजाओं की वंशावली विक्रम तक आई है, अवतार प्रसंग भी है। इसी प्रकार और पुराणों में भी कथाएँ हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. पुरा नवं में पुरा का अर्थ है -

क. अर्वाचीन ख. प्राचीन ग. नवीन घ. कोई नहीं

2. पुराणों की कुल संख्या है ।

क. 13 ख. 16 ग. 17 घ. 18

3. सबसे बड़ा पुराण है।

क. मार्कण्डेय पुराण ख. ब्रह्मवैवर्त पुराण ग. लिंग पुराण घ. स्कन्द पुराण

4. उपपुराण का अर्थ है ।

क. महापुराण ख. पुराण के समीप ग. स्कन्द पुराण घ. कोई नहीं

5. आख्यान का अर्थ होता है ।

क. कथा ख. कहानी ग. कविता घ. विवरण

विष्णुपुराण के अतिरिक्त और पुराण जो आजकल मिलते हैं उनके विषय में संदेह होता है कि वे असल पुराणों के न मिलने पर पीछे से न बनाए गए हों। कई एक पुराण तो मत मतांतरों और संप्रदायों के राग द्वेष से भरे हैं। कोई किसी देवता की प्रधानता स्थापित करता है, कोई किसी देवता की प्रधानता स्थापित करता है, कोई किसी की। ब्रह्मवैवर्त पुराण का जो परिचय मत्स्यपुराण में दिया गया है उसके अनुसार उसमें रथंतर कल्प और वराह अवतार की कथा होनी चाहिए पर जो ब्रह्मवैवर्त आजकल मिलता है उसमें यह कथा नहीं है। कृष्ण के वृंदावन के रास से जिन भक्तों की तृप्ति नहीं हुई थी उनके लिये गोलोक में सदा होनेवाले रास का उसमें वर्णन है। आजकल का यह ब्रह्मवैवर्त मुसलमानों के आने के कई सौ वर्ष पीछे का है क्योंकि इसमें 'जुलाहा' जाति की उत्पत्ति का भी उल्लेख है—'म्लेच्छात् कुविंदकन्यायां' जोला जातिर्बभूव ह' (१०, १२१)। ब्रह्मपुराण में तीर्थों और उनके माहात्म्य का वर्णन बहुत अदिक हैं, अनंत वासुदेव और पुरुषोत्तम (जगन्नाथ) माहात्म्य तथा और बहुत से ऐसे तीर्थों के माहात्म्य लिखे गए हैं जो प्राचीन नहीं कहे जा सकते। 'पुरुषोत्तमप्रासाद' से अवश्य जगन्नाथ जी के विशाल मंदिर की ओर ही इशारा है जिसे गांगेय वंश के रिजा चोड़गंगा (सन् १०७७ ई०) ने बनवाया था। मत्स्यपुराण में दिए हुए लक्षण आजकल के पद्मपुराण में भी पूरे नहीं मिलते हैं। वैष्णव सांप्रदायिकों के द्वेष की इसमें बहुत सी बातें हैं। जैसे, पाषडिलक्षण,

मायावादनिंदा, तामसशास्त्र, पुराणवर्णनइत्यादि। वैशेषिक, न्याय, सांख्य और चार्वाक तामस शास्त्र कहे गए हैं और यह भी बताया गया है कि दैत्यों के विनाश के लिये बुद्ध रूपी विष्णु ने असत् बौद्ध शास्त्र कहा। इसी प्रकार मत्स्य, कूर्म, लिंग, शिव, स्कंद और अग्नि तामस पुराण कहे गए हैं। सारंश यह कि अधिकांश पुराणों का वर्तमान रूप हजार वर्ष के भीतर का है। सबके सब पुराण सांप्रदायिक है, इसमें भी कोई संदेह नहीं है। कई पुराण (जैसे, विष्णु) बहुत कुछ अपने प्राचीन रूप में मिलते हैं पर उनमें भी सांप्रदायिकों ने बहुत सी बातें बढ़ा दी हैं।

पुराणों का काल एवं रचयिता

यद्यपि आजकल जो पुराण मिलते हैं उनमें से अधिकतर पीछे से बने हुए या प्रक्षिप्त विषयों से भरे हुए हैं तथापि पुराण बहुत प्राचीन काल से प्रचलित थे। बृहदारण्यक और शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि गीली लकड़ी से जैसे धुआँ अलग अलग निकलता है बैसे ही महान् भूत के निःश्वास से ऋग्वेद, यजुर्वेद सामवेद, अथर्वांगिरस, इतिहास, पुराणविद्या, उपनिषद, श्लोक, सूत्र, व्याख्यान और अनुव्याख्यान हुए। छांदोग्य उपनिषद् में भी लिखा है कि इतिहास पुराण वेदों में पाँचवाँ वेद है। अत्यंत प्राचीन काल में वेदों के साथ पुराण भी प्रचलित थे जो यज्ञ आदि के अवसरों पर कहे जाते थे। कई बातें जो पुराण केलक्षणों में हैं, वेदों में भी हैं। जैसे, पहले असत् था और कुछ नहीं था यह सर्ग या सृष्टितत्व है; देवासुर संग्राम, उर्वशी पुरूरवा संवाद इतिहास है। महाभारत के आदि पर्व में (१। २३३) भी अनेक राजाओं के नाम और कुछ विषय गिनाकर कहा गया है कि इनके वृत्तांत विद्वान सत्कवियों द्वारा पुराण में कहे गए हैं। इससे कहा जा सकता है कि महाभारत के रचनाकाल में भी पुराण थे। मनुस्मृति में भी लिखा है कि पितृकार्यों में वेद, धर्मशास्त्र, इतिहास, पुराण आदि सुनाने चाहिए।

अब प्रश्न यह होता है कि पुराण हैं किसके बनाए। शिवपुराण के अंतर्गत रेवा माहात्म्य में लिखा है कि अठारहों पुराणों के वक्ता सत्यवती सुत व्यास हैं। यही बात जन साधारण में प्रचलित है। पर मत्स्य पुराण में स्पष्ट लिखा है कि पहले पुराण एक ही था, उसी से १८ पुराण हुये। ब्रह्माण्ड पुराण में लिखा है कि वेदव्यास ने एक पुराण संहिता का संकलन किया था। इसके आगे की बात का पता विष्णु पुराण से लगता है। उसमें लिखा है कि व्यास का एक लोमहर्षण नाम का शिष्य था जो सुत जाति का था। व्यास जी ने अपनी पुराण संहिता उसी के हाथ में दी। लोमहर्षण के छह शिष्य थे— सुमति, अग्निवर्चा, मित्रयु, शांशपायन, अकृतव्रण और सावर्णी। इनमें से अकृत- व्रण, सावर्णी और शांशपायन ने लोमहर्षण से पढ़ी हुई पुराणसंहिता के आधार पर और एक एक संहिता बनाई। वेदव्यास ने जिस प्रकार मंत्रों का संग्रहकर उन का संहिताओं में विभाग किया उसी प्रकार पुराण के नाम से चले आते हुए वृत्तों का संग्रह कर पुराणसंहिता का संकलन किया। उसी एक संहिता को लेकर सुत के चेलों के तीन और संहीतायें बनाई। इन्हीं संहिताओं के आधार पर अठारह पुराण बने होंगे। मत्स्य, विष्णु, ब्रह्मांड आदि सब पुराणों में ब्रह्मपुराण पहला कहा गया है। पर जो ब्रह्मपुराण आजकल प्रचलित है वह कैसा है यह पहले कहा जा चुका है। जो कुछ हो, यह तो ऊपर लिखे

प्रमाण से सिद्ध है कि अठारह पुराण वेदव्यास के बनाए नहीं हैं। जो पुराण आजकल मिलते हैं उनमें विष्णुपुराण और ब्रह्मांडपुराण की रचना औरों से प्राचीन जान पड़ती है। विष्णुपुराण में 'भविष्य राजवंश' के अंतर्गत गुप्तवंश के राजाओं तक का उल्लेख है इससे वह प्रकरण ईसा की छठी शताब्दी के पहले का नहीं हो सकता। जावा के आगे जो बाली टापू है वहाँ के हिंदुओं के पास ब्रह्मांडपुराण मिला है। इन हिंदुओं के पूर्वज ईसा की पाँचवी शताब्दी में भारतवर्ष में पूर्व के द्वीपों में जाकर बसे थे। बालीवाले ब्रह्माण्डपुराण में 'भविष्य राजवंश प्रकरण' नहीं है उसमें जनमेजय के प्रपौत्र अधिसीमकृष्ण तक का नाम पाया जाता है। यह बात ध्यान देने की है। इससे प्रकट होता है कि पुराणों में जो भविष्य राजवंश है वह पीछे से जोड़ा हुआ है। यहाँ पर ब्रह्मांडपुराण की जो प्राचीन प्रतियाँ मिलती हैं देखना चाहिए कि उनमें भूत और वर्तमानकालिक क्रिया का प्रयोग कहाँ तक है। 'भविष्यराजवंश वर्णन' के पूर्व उनमें ये श्लोक मिलते हैं— तस्य पुत्रः शतानीको बलबान् सत्यविक्रमः। ततः सुर्त शतानीकं विप्रास्तमभ्यषेचयन्। पुत्रोश्वमेधदत्तो ? भूत् शतानीकस्य वीर्यवान्। पुत्रो ? श्वमेधदत्ताद्वै जातः परपुरजयः। अधिसीमकृष्णो धर्मात्मा साम्पतोयं महायशाः। यस्मिन् प्रशासति महीं युष्माभिरिदमाहृतम्।। दुरापं दीर्घसत्रं वै त्रीणि दर्षाणि पुष्करम् वर्षद्वयं कुरुक्षेत्रे दृषद्वत्यां द्विजोत्तमाः।। अर्थात्— उनके पुत्र बलवान् और सत्यविक्रम शतानीक हुए। पीछे शतानीक के पुत्र को ब्राह्मणों ने अभिषिक्त किया। शतानीक के अश्वमेधदत्त नाम का एक वीर्यवान् पुत्र उत्पन्न हुआ। अश्वमेधदत्त के पुत्र परपुरंजय धर्मात्मा अधिसीम कृष्ण हैं। ये ही महायशा आजकल पृथ्वी का शासन करते हैं। इन्हीं के समय में आप लोगों ने पुष्कर में तीन वर्ष का और दृषद्वती के किनारे कुरुक्षेत्र में दो वर्ष तक का यज्ञ किया है। उक्त अंश से प्रकट है कि आदि ब्रह्मांडपुराण अधिसीमकृष्ण के समय में बना। इसी प्रकार विष्णुपुराण, मत्स्यपुराण आदि की परीक्षा करने से पता चलता है कि आदि विष्णुपुराण परीक्षित के समय में और आदि मत्स्यपुराण जनमेजय के प्रपौत्र अधिसीमकृष्ण के समय में संकलित हुआ।

पुराण संहिताओं से अठारह पुराण बहुत प्राचीन काल में ही बन गए थे इसका पता लगता है। आपस्तंबधर्मसूत्र(२।२४।५) में भविष्यपुराण का प्रमाण इस प्रकार उदधृत है— आभूत संप्लवात्ते स्वर्गजितः। पुनः सर्गे बीजीर्था भवतीति भविष्यत्पुराणे। यह अवश्य है कि आजकल पुराण अपने आदिम रूप में नहीं मिलते हैं। बहुत से पुराण तो असल पुराणों के न मिलने पर फिर से नए रचे गए हैं, कुछ में बहुत सी बातें जोड़ दी गई हैं। प्रायः सब पुराण शैव, वैष्णव और सौर संप्रदायों में से किसी न किसी के पोषक हैं, इसमें भी कोई संदेह नहीं। विष्णु, रुद्र, सूर्य आदि की उपासना वैदिक काल से ही चली आती थी, फिर धीरे धीरे कुछ लोग किसी एक देवता को प्रधानता देने लगे, कुछ लोग दूसरे को। इस प्रकार महाभारत के पीछे ही संप्रदायों का सूत्रपात हो चला। पुराणसंहिताएँ उसी समय में बनीं। फिर आगे चलकर आदिपुराण बने जिनका बहुत कुछ अंश आजकल पाए जानेवाले कुछ पुराणों के भीतर है। पुराणों का उद्देश्य पुराने वृत्तों का संग्रह करना, कुछ प्राचीन और कुछ कल्पित कथाओं द्वारा उपदेश देना, देवमहिमा तथा तीर्थमहिमा के वर्णन द्वारा जनसाधारण में

धर्मबुद्धि स्थिर रखना था। इसी से व्यास ने सूत (भाट या कथक्केड़) जाति के एक पुरुष को अपनी संकलित आदिपुराण संहिता प्रचार करने के लिये दी।

पुराणों की रचना वैदिक काल के काफ़ी बाद की है,ये स्मृति विभाग में रखे जाते हैं। पुराणों में सृष्टि के आरम्भ से अन्त तक का विशद विवरण दिया गया है। पुराणों को मनुष्य के भूत, भविष्य, वर्तमान का दर्पण भी कहा जा सकता है। इस दर्पण में मनुष्य अपने प्रत्येक युग का चेहरा देख सकता है। इस दर्पण में अपने अतीत को देखकर वह अपना वर्तमान संवार सकता है और भविष्य को उज्ज्वल बना सकता है। अतीत में जो हुआ, वर्तमान में जो हो रहा है और भविष्य में जो होगा, यही कहते हैं पुराण। इनमें हिन्दू देवीदेवताओं का और- पौराणिक मिथकों का बहुत अच्छा वर्णन है। इनकी भाषा सरल और कथा कहानी की तरह है। पुराणों को वेदों और उपनिषदों जैसी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं है।

पुराण महिमा

पुराण शब्द 'पुरा' एवं 'अण' शब्दों की संधि से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ -'पुराना' अथवा 'प्राचीन' होता है 'पुरा' शब्द का अर्थ है अनागत एवं - अतीत।

'अण' शब्द का अर्थ होता है - कहना या बतलाना अर्थात् जो पुरातन अथवा अतीत के तथ्यों, सिद्धांतों, शिक्षाओं, नीतियों, नियमों और घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करे। माना जाता है कि सृष्टि के रचनाकर्ता ब्रह्माजी ने सर्वप्रथम जिस प्राचीनतम धर्मग्रंथ की रचना की, उसे पुराण के नाम से जाना जाता है। हिन्दू सनातन धर्म में, पुराण सृष्टि के प्रारम्भ से माने गये हैं, इसलिए इन्हें सृष्टि का प्राचीनतम ग्रंथ मान लिया जाता है किन्तु ये बहुत बाद की रचना है। सूर्य के प्रकाश की भाँति पुराण को ज्ञान का स्रोत माना जाता है। जैसे सूर्य अपनी किरणों से अंधकार हटाकर उजाला कर देता है, उसी प्रकार पुराण अपनी ज्ञानरूपी किरणों से मानव के मन का अंधकार दूर करके सत्य के प्रकाश का ज्ञान देते हैं। सनातनकाल से ही जगत पुराणों की शिक्षाओं और नीतियों पर ही आधारित है।प्राचीनकाल से पुराण देवताओं, ऋषियों, मनुष्यों - सभी का मार्गदर्शन करते रहे हैं। पुराण मनुष्य को धर्म एवं नीति के अनुसार जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देते हैं। पुराण मनुष्य के कर्मों का विश्लेषण कर उन्हें दुष्कर्म करने से रोकते हैं। पुराण वस्तुतः वेदों का विस्तार हैं। वेद बहुत ही जटिल तथा शुष्क भाषा - शैली में लिखे गए हैं। वेदव्यास जी ने पुराणों की रचना और पुनर्रचना की। कहा जाता है, "पूर्णात पुराण।" जिसका अर्थ है, जो वेदों का पूरक हो, अर्थात् पुराण। वेदों की जटिल भाषा में कही गई बातों को पुराणों में सरल भाषा में समझाया गया हैं। पुराण-साहित्य में अवतारवाद को प्रतिष्ठित किया गया है। निर्गुण निराकार की सत्ता को मानते हुए सगुण साकार की उपासना करना इन ग्रंथों का विषय है। पुराणों में अलग-अलग देवी-देवताओं को केन्द्र में रखकर पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म और कर्म-अकर्म की कहानियाँ हैं। प्रेम, भक्ति, त्याग, सेवा, सहनशीलता ऐसे मानवीय गुण हैं, जिनके अभाव में उन्नत समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। पुराणों में देवी-देवताओं के अनेक स्वरूपों को लेकर एक विस्तृत विवरण मिलता है। पुराणकारों ने देवताओं की दुष्प्रवृत्तियों का व्यापक विवरण किया है लेकिन मूल उद्देश्य सद्भावना का विकास और सत्य की प्रतिष्ठा ही है।

पुराणों की संख्या

18 पुराणों को इस प्रकार भी समझ सकते हैं -

विष्णु पुराण	ब्रह्म पुराण	शिव पुराण
भागवत पुराण	ब्रह्माण्ड पुराण	लिङ्ग पुराण
नारद पुराण	ब्रह्म वैवर्त पुराण	स्कन्द पुराण
गरुड़ पुराण	मार्कण्डेय पुराण	अग्नि पुराण
पद्म पुराण	भविष्य पुराण	मत्स्य पुराण
वराह पुराण	वामन पुराण	कूर्म पुराण

यह सूची विष्णु पुराण पर आधारित है। मत्स्य पुराण की सूची में शिव पुराण के स्थान पर वायु पुराण है।

पुराणों में श्लोक संख्या

संसार की रचना करते समय ब्रह्मा ने एक ही पुराण की रचना की थी। जिसमें एक अरब श्लोक थे। यह पुराण बहुत ही विशाल और कठिन था। पुराणों का ज्ञान और उपदेश देवताओं के अलावा साधारण जनों को भी सरल ढंग से मिले ये सोचकर महर्षि वेद व्यास ने पुराण को अठारह भागों में बाँट दिया था। इन पुराणों में श्लोकों की संख्या चार लाख है। महर्षि वेदव्यास द्वारा रचे गये अठारह पुराणों और उनके श्लोकों की संख्या इस प्रकार है।

सुखसागर के अनुसार

पुराण	श्लोकों की संख्या
ब्रह्मपुराण	दस हज़ार
पद्मपुराण	पचपनहजार
विष्णुपुराण	तेइस हज़ार
शिवपुराण	चौबीसहज़ार
श्रीमद्भावतपुराण	अठारहहज़ार
नारदपुराण	पच्चीसहज़ार
मार्कण्डेयपुराण	नौ हज़ार
अग्निपुराण	पन्द्रह हज़ार
भविष्यपुराण	पाँच सौ

ब्रह्मवैवर्तपुराण	अठारहहज़ार
लिंगपुराण	ग्यारह हज़ार
वाराहपुराण	चौबीसहज़ार
स्कन्धपुराण	181 हजार
कूर्मपुराण	सत्रह हज़ार
मत्सयपुराण	चौदह हज़ार
गरुड़पुराण	उन्नीस हज़ार
ब्रह्माण्डपुराण	बारह हज़ार
मनपुराण	दस हज़ार

पुराणों की संख्या अठारह क्यों ?

- अणिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, महिमा, सिद्धि, ईशित्व या वशित्व, सर्वकामावसायिता, सर्वज्ञत्व, दूरश्रवण, सृष्टि, पराकायप्रवेश, वाकसिद्धि, कल्पवृक्षत्व, संहारकरणसामर्थ्य, भावना, अमरता, सर्वन्याय ये - अट्ठारह सिद्धियाँ मानी जाती हैं।
- सांख्य दर्शन में पुरुष, प्रकृति, मन, पाँच महाभूत) पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश (, पाँच ज्ञानेद्री) कान, त्वचा, चक्षु, नासिका और जिह्वा) और पाँच कर्मेंद्री वाक), पाणि, पाद, पायु और उपस्थ हैं। ये अठारह तत्त्व वर्णित (
- छः वेदांग, चार वेद, मीमांसा, न्यायशास्त्र, पुराण, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, आयुर्वेद, धनुर्वेद और गंधर्व वेद ये अठारह प्रकार की विद्याएँ मानी जाती हैं।
- एक संवत्सर, पाँच ऋतुएँ और बारह महीने ये सब मिलकर काल के अठारह भेदों को - बताते हैं।
- श्रीमद् भगवतगीता के अध्यायों की संख्या भी अठारह है।
- श्रीमद्भगवतगीता में कुल श्लोकों की संख्या अठारह सौ है।
- श्रीराधा, कात्यायनी, काली, तारा, कूष्मांडा, लक्ष्मी, सरस्वती, गायत्री, छिन्नमस्ता, षोडशी, त्रिपुरभैरवी, धूमावती, बगलामुखी, मातंगी, पार्वती, सिद्धिदात्री, भगवती, जगदम्बा के ये अठारह स्वरूप माने जाते हैं।
- श्रीविष्णु, शिव, ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवताओं के अंश से प्रकट हुई भगवती दुर्गा अठारह भुजाओं से सुशोभित हैं

उप पुराण

महर्षि वेदव्यास ने अठारह पुराणों के अतिरिक्त कुछ उप-पुराणों की भी रचना की है। उप-पुराणों को पुराणों का ही साररूप कहा जा सकता है। उप-पुराण इस प्रकार हैं:

1. सनत्कुमार पुराण
2. कपिल पुराण
3. साम्ब पुराण
4. आदित्य पुराण
5. नृसिंह पुराण
6. उशनः पुराण
7. नंदी पुराण
8. माहेश्वर पुराण
9. दुर्वासा पुराण
10. वरुण पुराण
11. सौर पुराण
12. भागवत पुराण
13. मनु पुराण
14. कालिकापुराण
15. पराशर पुराण
16. वसिष्ठ पुराण

5.4 सारांश -

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप पुराणों के आधारभूत तथ्यों को जान लेंगे। पुराण हमारे अतीत का धरोहर है, जो हमारी विरासत को आख्यान रूप में प्रकट करता है। इसमें सृष्टि की उत्पत्ति – विनाश, भगवान के विभिन्न रूप का अवतार वर्णन, धर्मसंस्थापनार्थ अनेकों आख्यान, राजाओं – महाराजाओं का वर्णन आदि प्राप्त होता है। आशा है आप इकाई के अध्ययन के पश्चात् पुराण एवं उससे जुड़े कई विषयों का ज्ञान प्राप्त करनें में सक्षम होंगे।

5.5 शब्दावली

पुराण – पुरा नवं पुराणम्

उपपुराण – पुराण के समीप

संस्थापना – स्थापना के साथ

उत्पत्ति - प्राकट्य,

लय – विनाश

धर्मसंस्थापनार्थ – धर्म की स्थापना के लिये

पुरातन – पुराना

जनसाधारण – आम लोग

दैवीकृपा – देवताओं की कृपा

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1. ख
2. घ
3. घ
4. ख
5. क

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम	प्रकाशन
नित्यकर्म पूजाप्रकाश	गीताप्रेस गोरखपुर
भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व –	चौखम्भा प्रकाशन
कर्मकाण्ड प्रदीप –	चौखम्भा प्रकाशन

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1- पुराण किसे कहते है ? विस्तार से उसका वर्णन कीजिये।

2- पुराणों के कितने प्रकार है। विस्तृत वर्णन कीजिये।

खण्ड – 2
पंचांग परिचय एवं मुहूर्त्त ज्ञान

इकाई – 1 तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण विचार

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का परिचय

1.3.1 तिथियों का परिचय

1.3.2 नक्षत्रों का परिचय

1.3.3 वारों का परिचय

1.3.4 योगों का परिचय

1.3.5 करण परिचय

1.4 तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का वैशिष्ट्य

1.4.1 प्रतिपदा इत्यादि तिथियों का निर्णय

1.4.2 नक्षत्रों का वैशिष्ट्य

1.5 सारांश

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.9 सहायक पाठ्यसामग्री

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। प्रत्येक दिन तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण प्रायः पृथक- पृथक होता है। बिना इसके विचार किये वह दिन शुभ है या अशुभ है इसका विचार आप नही कर सकते हैं। अतः ये तिथि, वार, नक्षत्रादि क्या होते हैं इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण विचार के अभाव में किसी व्रत, किसी मुहूर्त्त, किसी उत्सव एवं किसी पर्व का ज्ञान किसी भी व्यक्ति को नही हो सकता है। क्योकि कोई भी व्रत करते हैं तो उसका आधार तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण ही होता है, साधारण रूप से एकादशी का विचार करना हो तो आपको यह कौन सी तिथि है? महीने में कितनी बार आती है ? इत्यादि-इत्यादि बिना जाने आप एकादशी का विचार नही कर सकते हैं। इसी प्रकार वार का व्रत, जैसे मंगलवार का व्रत करना हो तो यह जानना आवश्यक होगा कि मंगलवार कब आता है ? इसमें किसका पूजन करना चाहिय? आदि-आदि।

इस इकाई के अध्ययन से आप तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण इत्यादि के विचार करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण आदि विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

1.2 उद्देश्य-

अब तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण विचार की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं।

1. कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।
2. व्रत, पर्व, उत्सवों के निर्णयार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
3. कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

4. प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

5. लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

6. समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

1.3 तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का परिचय -

इसमें तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करणों का परिचय आपको कराया जायेगा क्योकि बिना इसके परिचय के तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का आधारभूत ज्ञान नही हो सकेगा। आधारभूत ज्ञान हो जाने पर किसी भी विषय के महत्त्व एवं उपयोगिता को आसानी से समझा जा सकता है

1.3.1 तिथियों का परिचय

तिथि क्या है ? इस पर विचार करते हुये आचार्यों ने कहा है **एक-चन्द्रकलावृद्धिक्षयान्यतरावच्छिन्नः कालः तिथिः।** अर्थात् चन्द्रमा के एक-एक कला वृद्धि के अवच्छिन्न काल को तिथि कहा जाता है। तिथियों को दो प्रकारों में बांटा गया है जिन्हें शुक्ला तिथि एवं कृष्णा तिथि के रूप में जाना जाता है। चन्द्रमा के एक-एक कला की वृद्धि के अवच्छिन्न काल को शुक्ल तिथि एवं चन्द्रमा के क्षयावच्छिन्न काल को कृष्णा तिथि कहते हैं।

चन्द्रमा के एक कला वृद्धि या एक कला क्षय के काल को प्रतिपदा तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दो कला वृद्धि या दो कला क्षय के काल को द्वितीया तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के तीन कला वृद्धि या क्षय के काल को तृतीया तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के चार कला वृद्धि या क्षय के काल को चतुर्थी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के पांच कला वृद्धि या क्षय के काल को पंचमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के छः कला वृद्धि या क्षय के काल को षष्ठी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के सात कला वृद्धि या क्षय के काल को सप्तमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के आठ कला वृद्धि या क्षय के काल को अष्टमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के नव कला वृद्धि या क्षय के काल को नवमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दश कला वृद्धि या क्षय के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के ग्यारह कला वृद्धि या क्षय के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के बारह कला वृद्धि या क्षय के काल को द्वादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के तेरह कला वृद्धि या क्षय के काल को त्रयोदशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के चौदह कला वृद्धि या क्षय के काल को चतुर्दशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के पन्द्रह कला वृद्धि या क्षय के काल को पूर्णिमा या अमावास्या तिथि कहते हैं। इसी प्रकार समस्त तिथियों का विचार किया जाता है।

सभी तिथियां दो प्रकार की होती है जिन्हे पूर्णा एवं खण्डा के नाम से जाना जाता है। पूर्णा तिथि की व्याख्या करते हुये नारदीय पुराण में कहा गया है कि आदित्योदयबेलायामारभ्य

षष्टिनाडिका सम्पूर्णा इति विज्ञेया। अर्थात् सूर्योदय से आरम्भ कर साठ नाडी तक जो तिथि भोग करती है उसे पूर्णा तिथि कहते हैं। अतो अन्या खण्डा यानी इसके अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार की तिथियों को खण्डा कहा जाता है। तिथियों के लक्षण का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि खर्वो दर्पस्तथा हिंसा त्रिविधं तिथि लक्षणम् अर्थात् खर्व, दर्प एवं हिंसा तिथियों के तीन लक्षण बतलाये गये हैं। इनकी व्याख्या करते हुये कहा गया- खर्वो साम्यं अर्थात् तिथियों में जो साम्यता पाई जाती है उसे खर्व के अन्तर्गत रखा गया है। साम्यता का अर्थ सामान्यता से है जैसे प्रतिपदा, द्वितीया , तृतीया इत्यादि। दर्पो वृद्धिः यानी तिथियों में वृद्धि जो होती है उसे दर्प में रखा गया है जैसे प्रतिपदा, द्वितीया, द्वितीया, तृतीया इत्यादि। हिंसा क्षयः अर्थात् तिथियों का क्षय हो जाना जैसे प्रतिपदा , तृतीया इत्यादि। यहॉ द्वितीया की हानि हो गयी है। इससे ऊपर वाले में द्वितीया तिथि की वृद्धि हो गयी है। इस प्रकार से खर्व, दर्प एवं हिंसा इन तीन प्रकार की तिथियों को बराबर अनुभूत करते हैं।

इस प्रकरण में आपने प्रतिपदा से पूर्णिमा तक की तिथियों का ज्ञान क्या है? इसको आपने जाना। आशा है आपको तिथियों का सामान्य ज्ञान हो गया होगा।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- तिथियों को कितने प्रकारों में बांटा गया है?

क- 2, ख- 3, ग-4, घ- 5।

प्रश्न 2- चन्द्रमा के एक-एक कला वृद्धि को कहा जाता है-

क-शुक्ल, ख- कृष्ण, ग- पीत , घ- हरित।

प्रश्न 3- चन्द्रमा के एक - एक कला ह्रास को कहा गया है-

क-शुक्ल, ख- कृष्ण, ग- पीत , घ- हरित।

प्रश्न 4- प्रतिपदा में कितने कला की वृद्धि या क्षय होता है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- आठ।

प्रश्न 5- द्वितीया में कितने कला की वृद्धि या क्षय होता है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- आठ।

प्रश्न 6- तृतीया में कितने कला की वृद्धि या क्षय होता है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- आठ।

प्रश्न 7- चतुर्थी में कितने कला की वृद्धि या क्षय होता है?

क- चार, ख- तीन, ग- दो, घ- एक।

प्रश्न 8- पंचमी में कितने कला की वृद्धि या क्षय होता है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- पॉंच।

प्रश्न 9- खर्व तिथि का लक्षण क्या है ?

क-साम्यता, ख- वृद्धि, ग- क्षय , घ- अनिश्चित।

प्रश्न 10- दर्प तिथि का लक्षण क्या है ?

क-साम्यता, ख- वृद्धि, ग- क्षय , घ- अनिश्चित।

प्रश्न 11- हिंसा तिथि का लक्षण क्या है ?

क-साम्यता, ख- वृद्धि, ग- क्षय , घ- अनिश्चित।

1.3.2 नक्षत्रों का परिचय-

ज्योतिषीय ज्ञान का मुख्य आधार नक्षत्र हैं।जिस भी काल खण्ड में व्यक्ति का जन्म होता है उस समय कोई न कोई नक्षत्र अवश्य होती है। इन नक्षत्रों के आधार पर ही राशि नाम का निर्धारण किया जाता है।प्रत्येक नक्षत्र के चार पाद बतलाये गये है। जिस पाद में जातक का जन्म होता है उस पाद में निश्चित वर्ण को आधार मानकर राशि नाम का निर्धारण किया जाता है। अभिजित सहित कुल नक्षत्रों की संख्या अठ्ठाईस मानी जाती है। अभिजित को छोड़कर कुल नक्षत्रों की संख्या सत्ताईस बतलायी गयी है। अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा एवं रेवती के नाम से जाना जाता है।

अब नक्षत्रों के बारे में अब आप जान गये होगे। इन नक्षत्रों के आधार पर वर्णो का निर्धारण कर किस प्रकार नक्षत्र नाम का निर्धारण किया जाता है इसके बारे में जानना अति आवश्यक है। इसलिये अग्रिम जानकारी दी जा रही है इसे ध्यान पूर्वक समझना चाहिये।

अश्विनी नक्षत्र के चारो पादों को **चू, चे, चो, ला** के रूप में जाना जाता है**। भरणी नक्षत्र** के चारो पादों को **ली, लू, ले, लो** के रूप में जाना जाता है। **कृत्तिका नक्षत्र** के चारो पादों को **अ, ई, उ, ए** के रूप में जाना जाता है। **रोहिणी नक्षत्र** के चारो पादों को **ओ, वा, वी, वू** के रूप में जाना जाता है। **मृगशिरा नक्षत्र** के चारो पादों को वे, वो, का, की के रूप में जाना जाता है। आर्द्रा नक्षत्र के चारो पादों को कू, घ, ङ., छ के रूप में जाना जाता है। पुनर्वसु के चारो पादों को के, को, हा, ही के रूप में

जाना जाता है। पुष्य नक्षत्र के चारो पादों को हू, हे, हो, डा के रूप में जाना जाता है। आश्लेषा नक्षत्र के चारो पादों को डी, डू, डे, डो के रूप में जाना जाता है। मघा
नक्षत्र के चारो पादों को मा, मी, मू, मे के रूप में जाना जाता है। पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र के चारो पादों को मो, टा, टी, टू के रूप में जाना जाता है। उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र के चारो पादों को टे, टो, पा, पी के रूप में जाना जाता है। हस्त नक्षत्र के चारो पादों को पू, ष, ण, ठ के रूप में जाना जाता है। चित्रा नक्षत्र के चारो पादों को पे, पो, रा, री के रूप में जाना जाता है। स्वाती नक्षत्र के चारो पादों को रू, रे, रो, ता के रूप में जाना जाता है। विशाखा नक्षत्र के चारो पादों को ती, तू, ते, तो के रूप में जाना जाता है। अनुराधा नक्षत्र के चारो पादों को ना, नी, नू, ने के रूप में जाना जाता है। ज्येष्ठा नक्षत्र के चारो पादों को नो, या, यी, यू के रूप में जाना जाता है। मूल नक्षत्र के चारो पादों को ये, यो, भा, भी के रूप में जाना जाता है। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र के चारो पादों को भू, ध, फ, ढ के रूप में जाना जाता है। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के चारो पादों को भे, भो, जा, जी के रूप में जाना जाता है। श्रवण नक्षत्र के चारो पादों को खी, खू, खे, खो के रूप में जाना जाता है। धनिष्ठा नक्षत्र के चारो पादों को गा, गी, गू, गे के रूप में जाना जाता है। शतभिषा नक्षत्र के चारो पादों को गो, सा, सी, सू के रूप में जाना जाता है। पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र के चारो पादों को से, सो, दा, दी के रूप में जाना जाता है। उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र के चारो पादों को दू, थ, झ, यं के रूप में जाना जाता है। रेवती नक्षत्र के चारो पादों को दे, दो, चा, ची के रूप में जाना जाता है।

इन पादों का निर्धारण भयात् एवं भभोग के आधार पर होता है। भ का अर्थ नक्षत्र होता है। यात् का गत हुआ होता है यानी जितनी घटी नक्षत्र गत हो गयी उसे भयात् के रूप में एवं जितनी घटी नक्षत्र सम्पूर्ण भोग करेगी उसे भभोग के रूप में जाना जाता है। इसके निर्धारण हेतु बतलाया गया है कि-

गतर्क्ष नाडी खरशेषु शुद्धा, सूर्योदयादिष्ट भवेद् युक्ता।
भयात् संज्ञा भवतीह तस्य, निजर्क्ष्य नाड़ी सहितो भभोगः।।

इसका अर्थ यह हुआ कि गत नक्षत्र को साठ में से घटाकर सूर्योदयादिष्ट को जोड़ देने से भयात् संज्ञा हो जाती है। और वर्तमान नक्षत्र में उस घटाये हुये मान को जोड़ने से भभोग संज्ञा हो जाती है। जिसके आधार पर पाद भेद का निर्धारण हो जाता है। इस प्रकार से इसमें आपने नक्षत्रों के नाम एवं पाद भेद की दृष्टि से उनके वर्णाक्षरों को जाना। इसके ज्ञान से नक्षत्र ज्ञान आपका प्रौढ़ होगा तथा आसानी से आप राशि का निर्माण भी करने में समर्थ हो सकेगें।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु

विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- अभिजित् नक्षत्र को छोड़कर कुल नक्षत्रों की संख्या कितनी है?

क- 27, ख- 28, ग- 29, घ- 30 ।

प्रश्न 2- इन नक्षत्रों में से किसको चे वर्ण वाली नक्षत्र के रूप में जाना जाता है?

क-रेवती को, ख- अश्विनी को, ग- आश्लेषा को , घ- हस्त को।

प्रश्न 3- लू वर्ण वाली नक्षत्र किसे कहा गया है?

क- भरणी को, ख- कृत्तिका को, ग-रोहिणी को, घ- मूल को।

प्रश्न 4- अ वर्ण किस नक्षत्र में आता है?

क- अश्विनी, ख- भरणी, ग- कृत्तिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 5- ओ वर्ण किस नक्षत्र में आता है?

क- अश्विनी, ख- भरणी, ग- कृत्तिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 6- ला वर्ण किस नक्षत्र में आता है?

क- अश्विनी, ख- भरणी, ग- कृत्तिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 7- ली वर्ण किस नक्षत्र में आता है?

क- अश्विनी, ख- भरणी, ग- कृत्तिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 8- ए वर्ण किस नक्षत्र में आता है?

क- अश्विनी, ख- भरणी, ग- कृत्तिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 9- मा वर्ण किस नक्षत्र में आता है?

क- अश्विनी, ख- भरणी, ग- कृत्तिका, घ- मघा।

प्रश्न 10- खी वर्ण किस नक्षत्र में आता है?

क- अश्विनी, ख- भरणी, ग-श्रवण, घ- रोहिणी।

1.3.3 वारों का परिचय-

आप सभी जानते है कि एक वर्ष में बारह महीनें होते हैं। एक महीने मे तीस या इकतिस दिन होते हैं फरवरी मास को छोड़कर। सात दिनों का एक सप्ताह होता है। दिनों को ही वारों के रूप में जाना जाता है जिन्हे क्रमशः सूर्यवार, सोमवार, भौमवार, बुधवार, बृहस्पतिवार, शुक्रवार एवं शनिवार के रूप में जाना जाता है। ज्योतिष में इन सात वारों के नामों को ग्रहों से जोड़कर मुख्य ग्रह के रूप में सूर्यवार को रवि, सोमवार को चन्द्र, भौमवार को मंगल, बुधवार को बुध, बृहस्पतिवार को गुरु, शुक्रवार को

शुक्र एवं शनिवार को शनि के रूप में जाना जाता है। सूर्य का वर्ण लाल, चन्द्रमा यानी सोम का वर्ण सफेद, भौम का वर्ण लाल, बुध का वर्ण हरा, गुरु का वर्ण पीला, शुक्र का वर्ण सफेद एवं शनि का वर्ण काला बतलाया गया है। जिस व्यक्ति का जो ग्रह अशुभ फल दाता होता है उस व्यक्ति के लिये उससे संबंधित ग्रहों वाले दिवसों में संबंधित वर्णों से पूजन या उनके दान का विधान किया गया है।

वारों के वैकल्पिक नाम इस प्रकार प्राप्त होते हैं-

रविवार- भानु, सूर्य, बुध्न, भास्कर, दिवाकर, सविता, प्रभाकर, तपन, दिवेश, दिनेश, अर्क, दिवामणि, चण्डांशु, द्युमणि इत्यादि।

सोमवार- चन्द्र, विधु, इन्दु, निशाकर, शीतांशु, हिमरश्मि, जडांशु, मृगांक, शशांक, हरिपाल इत्यादि।

भौमवार- कुज, भूमितनय, आर, भीमवक्त्र एवं अंगारक इत्यादि।

बुधवार- सौम्य, वित्, ज्ञ, मृगांकजन्मा, कुमारबोधन, तारापुत्र इत्यादि।

गुरूवार- बृहस्पति, इज्य, जीव, सुरेन्द्र, सुरपूज्य, चित्रशिखण्डितनय, वाक्पति इत्यादि।

शुक्रवार- उशना, आस्फुजित्, कवि, भृगु, भार्गव, दैत्यगुरु इत्यादि।

शनिवार- मन्द, शनैश्चर, रवितनय, रौद्र, अर्कि, सौरि, पंगु, शनि इत्यादि।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- सविता किसका नाम है?

क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 2- तपन किसका नाम है?

क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 3 - निशाकर किसका नाम है?

क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 4- मृगांक किसका नाम है?

क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 5- तारापुत्र किसका नाम है?

क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 6- वित् किसका नाम है?

क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 7 जीव किसका नाम है?

क- सूर्य का, ख- गुरू का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 8- वाक्पति किसका नाम है?

क- गुरू का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 9- उशना किसका नाम है?

क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- शुक्र का, घ- बुध का।

प्रश्न 10- मन्द किसका नाम है?

क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- शनि का।

1.3.4 योगों का परिचय

कुल सत्ताईस योग होते हैं, जिन्हे क्रमशः विष्कुम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतिपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐन्द्र एवं वैधृति। इन योगों का प्रयोग संकल्पादि के अवसर पर किया जाता है तथा शुभाशुभ विचार में भी इनका महत्व है। जन्म कुण्डली में योग का फल जानने हेतु इन्ही योगों का प्रयोग देखने को मिलता है।

इसके अलावा आनन्दादि योगों का प्रयोग भी देखने को मिलता है, जिसका प्रयोग यथा नाम तथा गुणः के आधार पर लिखा रहता है। इन योगों की संख्या अठ्ठाईस बतलायी गयी है। इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है-

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो धाता सौम्यो ध्वांक्षकेतु क्रमेण।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ।
उत्पातमृत्यु किलकाणसिद्धी शुभो अमृताख्यो मुसलो गदश्च।
मातंगरक्षश्चरसुस्थिराख्याः प्रवर्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना।।

अर्थात् इन योगों के नाम इस प्रकार है- 1 आनन्द, 2 कालदण्ड, 3 धूम्र, 4 धाता, 5 सौम्य, 6 ध्वांक्ष, 7 केतु, 8 श्रीवत्स, 9 वज्र, 10 मुद्गर, 11 छत्र, 12 मित्र, 13 मानस, 14 पद्म, 15 लुम्ब, 16 उत्पात, 17 मृत्यु, 18 काण, 19 सिद्धि, 20 शुभ, 21 अमृत, 22 मुशल, 23 गद, 24 मातंग, 25 रक्ष, 26 चर, 27 सुस्थिर और 28 प्रवर्धमान हैं। ये सभी योग अपने नाम के अनुसार फल देने वाले होते है।

इन योगों के निर्धारण का नियम बतलाते हुये कहा गया है कि-

दास्रादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद्भौमे कराद्बुधे।

मैत्राद् गुरौ भृगौ वैश्वाद् गण्या मन्दे च वारुणात्।।

अर्थात् रविवार को अश्विनी से, सोमवार को मृगशिरा से, मंगलवार को आश्लेषा से, बुधवार को हस्त से, गुरूवार को अनुराधा से, शुक्रवार को उत्तराषाढ़ा से और शनिवार को शतभिषा से योगों को जाना चाहिये। अभिजित सहित वर्तमान नक्षत्र तक गिनकर जितनी संख्या हो उस दिन आनन्द से गिनने पर उतनी संख्या वाला योग होता है। उदाहरण स्वरूप यदि रविवार को धनिष्ठा नक्षत्र है तो कौन योग होगा ? ऐसे प्रश्न के उत्तर के लिये रविवार को अश्विनी से धनिष्ठा तक अभिजित् सहित गिनने पर 24 संख्या हुयी। अतः आनन्दादि से 24वां मातंग योग आया। इसी प्रकार सभी वारों में समझना चाहिये।

किसी भी कार्य के आरम्भ में इन योगों का विचार करना चाहिये। शुभ योगों के होने पर उसमें आरम्भ शुभदायक तथा अशुभ योगों में कार्य का आरम्भ अशुभदायक होता है। अशुभ योगों में कार्यारम्भ आवश्यक हो तो उसके परिहार का विचार कर आवश्यक दुष्ट घड़ी का त्याग कर कार्यारम्भ किया जा सकता है जिसका विचार इस प्रकार है-

ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे चेषुनाड्ये वर्ज्या वेदाः पद्मलुम्बे गदे अश्वाः।

धूम्रे काणे मौसले भूर्द्वयं द्वे रक्षोमृत्यूत्पातकालाश्च सर्वे।।

अर्थात् 6 ध्वांक्ष, 9 वज्र और 10 मुद्गर योगों में आदि की पांच घटी, 14 पद्म और 15 लुम्ब योगों मे आदि की चार घटी, 23 गद योग में आदि की सात घटी, 3 धूम्र योग में आदि की 1 धटी, 18 काण योग में दो घटी , 22 मुशल में दो घटी, 25 राक्षस, 17 मृत्यु और 16 उत्पात एवं 2 काल योगों की समस्त घटिकायें शुभ कर्म में त्याज्य हैं।

इसके अलावा यह भी ज्ञतव्य है कि सूर्य जिस नक्षत्र पर हो, उस नक्षत्र से वर्तमान चन्द्र नक्षत्र चौथा, नवां, छठा, दसवां, तेरहवां, और बीसवॉं हो तो रवियोग होता है। यह उस काल के समस्त दोषों को नष्ट करने वाला बतलाया गया है। यथा-

सूर्यभाद्वेदगोतर्कदिग्विश्वनखसम्मिते ।

चन्द्रर्क्षे रवियोगाः स्युर्दोषसंघविनाशकाः।।

इस प्रकार आप योगों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। अब इस पर कुछ अभ्यास प्रश्न दिये जा रहे है जिसको आप आसानी पूर्वक हल कर सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन

आपको करना है-

प्रश्न 1-कुल विष्कंभादि योगों की संख्या कितनी बतलायी गयी हैं ?

क- 26, ख- 27, ग- 28, घ- 29।

प्रश्न 2-कुल आनन्दादि योगों की संख्या कितनी बतलायी गयी हैं ?

क- 26, ख- 27, ग- 28, घ- 29।

प्रश्न 3-रविवार को आनन्दादि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया हैं ?

क- अश्विनी, ख-मृगशिरा , ग- आश्लेषा , घ- हस्त।

प्रश्न 4- सोमवार को आनन्दादि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया हैं ?

क- अश्विनी, ख-मृगशिरा , ग- आश्लेषा , घ- हस्त।

प्रश्न 5- मंगलवार को आनन्दादि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया हैं ?

क- अश्विनी, ख-मृगशिरा , ग- आश्लेषा , घ- हस्त।

प्रश्न 6- बुधवार को आनन्दादि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया हैं ?

क- अश्विनी, ख-मृगशिरा , ग- आश्लेषा , घ- हस्त।

प्रश्न 7-गुरुवार को आनन्दादि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया हैं ?

क- अनुराधा, ख-उत्तराषाढ़ा , ग- आश्लेषा , घ- हस्त।

प्रश्न 8-शुक्रवार को आनन्दादि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया हैं ?

क- उत्तराषाढ़ा, ख-मृगशिरा , ग- आश्लेषा , घ- हस्त।

प्रश्न 9-ध्वांक्ष योग में कार्यारम्भ में आदि की कितनी घड़ी त्याज्य हैं ?

क- 5, ख-10 , ग-15 , घ-20।

प्रश्न 10-मुद्गर योग में कार्यारम्भ में आदि की कितनी घड़ी त्याज्य हैं ?

क- 5, ख-10 , ग-15 , घ-20।

प्रश्न 11- पद्म योग में कार्यारम्भ में आदि की कितनी घड़ी त्याज्य हैं ?

क- 5, ख-10 , ग-4 , घ-20।

1.3.5 करण परिचय-

एक तिथि में दो करण होते हैं। करण चर एवं स्थिर दो प्रकार के होते हैं। चर करण सात होते हैं जिन्हें बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि के नाम से जाना जाता है। इनका प्रारम्भ शुक्ल प्रतिपदा के उत्तरार्द्ध से होता है। और एक मास में इनकी आठ आवृत्तियां होती हैं। शकुनी, चतुष्पद, नाग तथा किंस्तुघ्न ये चार स्थिर करण है। इनका प्रारम्भ कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध से होता

है। अर्थात् चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध में शकुनी, अमावास्या के पूर्वार्ध में चतुष्पद, उत्तरार्ध में नाग तथा शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्ध में किंस्तुघ्न करण सदा नियत रहते हैं। इनकी स्थिर संज्ञा है।
इसमें जहां - जहां विष्टि शब्द आया है, उससे उस तिथि के निर्दिष्ट भाग को भद्रा कहते हैं। जैसे शुक्ल पक्ष में चार, ग्यारह और कृष्णपक्ष में तीन, दश तिथियों के उत्तरार्ध में भद्रा रहती है। और शुक्लपक्ष में आठ, पन्द्रह कृष्णपक्ष में सात, चौदह तिथियों के पूर्वार्ध में भद्रा रहती है।
भद्रा के ज्ञान हेतु तिथियों का मान जानना आवश्यक है। जैसे दिया गया कि कृष्णपक्ष के उत्तरार्ध में भद्रा रहती है तो उत्तरार्ध का प्रारम्भ कब होगा? इसका सम्पूर्ण काल कितना रहेगा? इन सारी चींजों को जानना आवश्यक है, अन्यथा इसके अभाव में भद्रा का निर्धारण नही हो सकेगा। जैसे द्वितीया तिथि का घटी मान 14.4 दिया गया है। इस मान को 60.00 में से घटाने पर 45.56 शेष बचेगा। इस मान को तृतीया के घटी मान 12.31 में जोड़ने से तृतीया का भोग काल 58.27 हो जाता है। इस भोग काल का आधा 29.13.30 आयेगा। इस मान को द्वितीया के मान घटी 14.4 में जोड़ने पर तृतीया का उत्तरार्ध 43.17 के बाद प्रारम्भ होगा। उसी समय से भद्रा प्रारम्भ होकर तृतीया की समाप्ति पर्यन्त रहेगी। इसी प्रकार अन्य सभी भद्राओं को समझना चाहिये। अब आप करण का सामान्य परिचय जान गये होगें। आवश्यकतानुसार विष्टि करण का साधन भी आराम से कर सकते है। बस किंचित् अभ्यास की जरूरत है। अब इस आधार पर कुछ अभ्यास प्रश्न दिये जा रहे हैं जो इस प्रकार है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-एक तिथि में कितने करण होते हैं ?

क-एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 2- करण कितने प्रकार के होते हैं ?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 3- कितने चर करण होते हैं ?

क-एक, ख- दो, ग- पांच, घ- सात।

प्रश्न 4- कितने स्थिर करण होते हैं ?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 5-बालव कौन सा करण हैं ?

क-चर, ख- स्थिर, ग- द्विस्वभाव, घ- मिश्रित।

प्रश्न 6-कौलव कौन सा करण हैं ?

क-चर, ख- स्थिर, ग- द्विस्वभाव, घ- मिश्रित।

प्रश्न 7-बणिज कौन सा करण हैं ?

क-चर, ख- स्थिर, ग- द्विस्वभाव, घ- मिश्रित।

प्रश्न 8-शकुनी कौन सा करण हैं ?

क-चर, ख- स्थिर, ग- द्विस्वभाव, घ- मिश्रित।

प्रश्न 9-चतुष्पद कौन सा करण हैं ?

क-चर, ख- स्थिर, ग- द्विस्वभाव, घ- मिश्रित।

प्रश्न 10-नाग कौन सा करण हैं ?

क-चर, ख- स्थिर, ग- द्विस्वभाव, घ- मिश्रित।

प्रश्न 11-किंस्तुघ्न कौन सा करण हैं ?

क-चर, ख- स्थिर, ग- द्विस्वभाव, घ- मिश्रित।

1.4 तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का वैशिष्ट्य-

इसमें तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के विशेषताओं पर आपका ध्यान आकृष्ट कराया जायेगा। इन तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करणों के संबंध बतलायी जाने वाली अधोलिखित बातें संबंधित विषय के ज्ञान को प्रौढ़ करेगा।

1.4.1 प्रतिपदा इत्यादि तिथियों का निर्णय-

प्रतिपद् पंचमी चैव उपोष्या पूर्वसंयुता इस जाबालि के वचन के रूप में उद्धृत मदन रत्न की पंक्ति के अनुसार प्रतिपदा एवं पंचमी पूर्व तिथि से संयुक्त हो तो उपवास योग्य होती है। लेकिन कहीं- कहीं पर शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि को अपरान्ह व्यापिनी स्वीकार करने के लिये कहा गया है तथा पर संयुता यानी बाद वाली तिथि यानी द्वितीया से विद्ध प्रतिपदा को उपवास में स्वीकार का विधान किया गया है। अपरान्ह व्यापिनी तिथि के अभाव में सायान्ह व्यापिनी तिथि को भी ग्रहण किया जा सकता है। परन्तु उपवास प्रातः काल से ही होगा, दिन के मध्य भाग से नही इसका विचार करना चाहिये।

द्वितीया तिथि का निर्णय करते हुये बतलाया गया है कि-

एकादशी षष्ठी द्वितीया च चतुर्दशी।
त्रयोदशी अमावास्या उपोष्या स्युः पराश्रिताः।।

अर्थात् एकादशी, षष्ठी, द्वितीया, चतुर्दशी, त्रयोदशी एवं अमावास्या पर तिथि से आश्रित हो तो उपवास योग्य होती है।

तृतीया तिथि का निर्णय करते हुये बतलाया गया है कि रम्भा व्रत में तृतीया तिथि पूर्वविद्धा ग्रहण की जाती है। अन्य सभी व्रतो में तृतीया तिथि पर विद्धा स्वीकार की जाती है। इसका वर्णन करते हुये ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में कहा गया है कि-

रम्भाख्यां वर्जयित्वा तु तृतीयां द्विजसत्तम।

अन्येषु सर्वकार्येषु गणयुक्ता प्रशस्यते।।

गण युक्ता का अर्थ चतुर्थी से युक्तता का है। स्कन्द पुराण में तो कहा गया है कि-

कलाकाष्ठापि वा यत्र द्वितीया संप्रदृश्यते।

सा तृतीया न कर्तव्या कर्त्तव्या गण संयुता।।

अर्थात् तृतीया किंचित् मात्र भी द्वितीया से संपृक्त हो तो उस तृतीया को उपवास नही होगा। चतुर्थी से संयुक्त तृतीया ही करना चाहिये।

चतुर्थी तिथि का निर्णय करते हुये बतलाया गया है कि

चतुर्थी गणनाथस्य मातृविद्धा प्रशस्यते।

मध्यान्हव्यापिनी सा तु परतश्चेत्परे हनि।

गणेश भगवान के लिये की जाने वाली चतुर्थी को मातृ विद्धा यानी तृतीया तिथि से बेध होने पर स्वीकार करना चाहिये। क्योकि इस व्रत का कर्मकाल चतुर्थी में चन्द्रमा को देखकर अर्घ का दान करना है। गणपति कल्प नामक ग्रन्थ में लिखा गया है कि विनायक व्रत में मध्यान्ह कालीन चतुर्थी का विचार करना चाहिये। इससे अतिरिक्त अन्यत्र पंचमी विद्धा स्वीकार की गयी है।

एकादशी तथा षष्ठी अमावास्या चतुर्थिका।

उपोष्याः परसंयुक्ताः पराः पूर्वेण संयुताः।।

इस श्लोक को कहते हुये वृद्ध वसिष्ठ ने कहा है कि एकादशी, षष्ठी, अमावास्या, एवं चतुर्थी पर नक्षत्र से संयुक्त हो तो उपोष्य होती है।

पंचमी का निर्णय करते हुये कहा है कि -

श्रावणे पंचमी शुक्ला संप्रोक्ता नागपंचमी।

तां परित्यज्य पंचम्यश्चतुर्थी सहिता हिताः।

मदन रत्न में उदाहृत वचनों के अनुसार नागपंचमी को छोड़कर अन्य सारी पंचमियां चतुर्थी सहित शुभ मानी गयी है। आचार्य जाबालि ने कहा है कि पंचमी उपवास में पूर्व विद्धा एवं अन्य कार्यों में पर विद्धा स्वीकार करनी चाहिये। यह भी वचन मिलता है कि पंचमी को कृष्ण पक्ष में पूर्वविद्धा तथा शुक्लपक्ष में परविद्धा स्वीकार करना चाहिये।

षष्ठी निर्णय करते हुये सा च षण्मुन्योरिति वाक्य के अनुसार मुनि का मतलब सप्तमी बतलाया गया है। अर्थात् षष्ठी पर विद्धा स्वीकार की जानी चाहिये लेकिन स्कन्द व्रत में पूर्वविद्धा स्वीकार किया गया है। इसका मतलब स्कन्द व्रत को छोड़कर अन्य षष्ठी के व्रत पर विद्धा स्वीकार किये जाते हैं। शिवरहस्य नामक ग्रन्थ का वचन है कि-

नागविद्धा च या षष्ठी शिवविद्धा च सप्तमी।

दशम्येकादशी विद्धा नोपोष्याः स्युः कदाचनः।।

अर्थात् नागविद्धा यानी पंचमी विद्धा षष्ठी, शिवविद्धा यानी अष्टमी विद्धा सप्तमी, दशमी विद्धा एकादशी में उपवास नही करना चाहिये।

सप्तमी का निर्णय करते हुये ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में कहा गया है कि

सप्तमी नाष्टमी युक्ता न सप्तम्या युताष्टमी

अर्थात् सप्तमी युता अष्टमी एवं अष्टमी युता सप्तमी नही करना चाहिये। स्कन्द पुराण में कहा गया है कि-

षष्ठ्येकादशी अमावास्या पूर्वविद्धा तथाष्टमी।

सप्तमी पर विद्धा च नोपोष्यं तिथिपंचकम्।

अर्थात् षष्ठी, एकादशी, अमावास्या, अष्टमी पूर्वविद्धा एवं सप्तमी पर विद्धा नही स्वीकार करना चाहिये।

अष्टमी तिथि का निर्णय करते हुये बतलाया गया है कि सा च शुक्लोतरा कृष्णा पूर्वा। यानी शुक्लपक्ष की अष्टमी को उत्तरा यानी परविद्धा और कृष्णपक्ष की अष्टमी को पूर्वविद्धा स्वीकार करना चाहिये। शिवशक्ति महोत्सव में दोनों ही पक्षों की अष्टमी जब नवमी से सुयुक्त हो तो करना चाहिये।

नवमी तिथि का निर्णय करते हुये कहा गया है कि सा अष्टमी विद्धैव ग्राह्या। अर्थात् अष्टमी विद्धा नवमी करना चाहिये।

अष्टम्या नवमी विद्धा कर्तव्या फलकांक्षिभिः।

न कुर्यान्नवमी ताता दशम्या तु कदाचन।।

अर्थात् अष्टमी से नवमी बेध हो तो नवमी करना चाहिये। दशमी बेध वाली नवमी नही करना चाहिये। ब्रह्मवैवर्त्त में इसे दिशा विद्धा कहकर समझाया गया है।

दशमी निर्णय करते हुये कहा गया है कि सा चोपवासादिषु नवमी युक्तैव ग्राह्या अर्थात् उपवासादि में नवमी युता दशमी ही स्वीकार करना चाहिये। आचार्य पैठिनसि ने कहा है कि-

पंचमी सप्तमी चैव दशमी च त्रयोदशी।

प्रतिपन्नवमी चैव कर्तव्या संम्मुखी तिथि।।

सम्मुखी तिथि अर्थात् पूर्वयुतातिथि स्वीकार करनी चाहिये। दशमी तु प्रकर्तव्या सदुर्गा द्विजसत्तम ऐसा कहते हुए आचार्य आपस्तम्ब ने बतलाया कि दशमी तिथि दुर्गा यानी नवमी से संयुक्त हो तो ग्राह्य होती है।

एकादशी तिथि का निर्णय करते हुये बतलाया गया है कि एकादशी द्वादशी उभयोरप्याधिक्ये सर्वैरेव परोपोष्या अर्थात् एकादशी एवं द्वादशी परतिथि से संयुक्त हो तो उपवास योग्य होती है। स्मृतिकार माधव जी का वचन है कि

एकादशी द्वादशी चेत्युभयं वर्धते यदि।
तदा पूर्वदिनं त्याज्यं स्मार्त्तैर्ग्राह्यं परं दिनम्।।

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि एकादशी एवं द्वादशी परदिन से संयुक्त हो तो स्मार्तों के लिये स्वीकार्य है।

त्रयोदशी का निर्णय करते हुये आचार्य माधव ने बतलाय है कि त्रयोदशी शुक्लपक्षे पूर्वविद्धा कृष्णपक्षे परविद्धा ग्राह्या। शुक्ला त्रयोदशी पूर्वा परा कृष्णा त्रयोदशी। अर्थात् शुक्लपक्ष की त्रयोदशी को पूर्वविद्धा एवं कृष्णपक्ष की त्रयोदशी को परविद्धा स्वीकार करना चाहिये।

चतुर्दशी के निर्णय में निगमवचन इस प्रकार मिलता है-

शुक्लेपक्षे अष्टमी चैव शुक्ले पक्षे चतुर्दशी। परविद्धा प्रकर्तव्या पूर्वविद्धा न कुत्रचित्।

कृष्णे पक्षे अष्टमी चैव कृष्णपक्षे चतुर्दशी। पूर्वविद्धा प्रकर्तव्या परविद्धा न कुत्रचित्।।

शुक्लपक्ष की अष्टमी एवं चतुर्दशी परविद्धा करनी चाहिये पूर्व विद्धा नही। कृष्ण पक्ष की अष्टमी एवं कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी पूर्वविद्धा करनी चाहिये पर विद्धा नही।

पूर्णिमा एवं अमावास्या के निर्णय में कहा गया है कि सावित्री व्रत को छोड़कर अन्यत्र सर्वत्र परविद्धा स्वीकार करना चाहिये।अब आप तिथियों के निर्णय आसानी से कर पायेगें जिसके कारण आप किसी व्रत या उपवास में भ्रमित नही होगें। जिससे समस्त आध्यत्मिक फल व्यक्ति को प्राप्त हो सकेगा। अब इस पर कुछ प्रश्न इस प्रकार है।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-गण युक्ता में गण का अर्थ क्या है ?

क-तृतीया, ख-चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- षष्ठी।

प्रश्न 2- मातृ विद्धा का अर्थ कौन सी तिथि हैं ?

क-तृतीया, ख-चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- षष्ठी।

प्रश्न 3- नाग विद्धा क्या हैं ?

क-तृतीया, ख-चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- षष्ठी।

प्रश्न 4- शिवविद्धा का अर्थ हैं ?

क-अष्टमी, ख-चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- षष्ठी।

प्रश्न 5-दुर्गा तिथि क्या हैं ?

क-तृतीया, ख-चतुर्थी, ग- नवमी, घ- षष्ठी।

प्रश्न 6- दिशा विद्धा क्या है ?

क-तृतीया, ख-चतुर्थी, ग- पंचमी, घ-दशमी।

प्रश्न 7-मुनि का मतलब कौन तिथि हैं ?

क-तृतीया, ख-चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- सप्तमी।

प्रश्न 8-पूर्व विद्धा का अर्थ है ?

क-पूर्व तिथि ख- परतिथि, ग- द्विस्वभाव तिथि, घ- मिश्रित।

प्रश्न 9-पर विद्धा अर्थ है ?

क-पूर्व तिथि, ख-पर तिथि , ग- द्विस्वभाव तिथि, घ- मिश्रित।

प्रश्न 10-सम्मुखी तिथि क्या है ?

क-पूर्वतथि ख- परतिथि , ग- द्विस्वभाव तिथि, घ- मिश्रित।

1.4.2 नक्षत्रों का वैशिष्ट्य

प्रत्येक नक्षत्रों के विविध नाम अधोलिखित प्रकार से दिये गये है-

अश्विनी- नासत्य, दस्र, आश्वयुक्, तुरग, वाजि, अश्व, हय।

भरणी- अन्तक, यम, कृतान्त।

कृत्तिका- अग्नि, वन्हि, अनल, कृशानु, दहन, पावक, हुतभुक्, हुताश।

रोहिणी- धाता, ब्रह्मा, कः, विधाता, द्रुहिण, विधि, विरंचि, प्रजापति।

मृगशिरा- शशभृत्, शशी, मृगांक, शशांक, विधु, हिमांशु, सुधांशु।

आर्द्रा- रुद्र, शिव, ईश, त्रिनेत्र।

पुनर्वसु- अदिति, आदित्य।

पुष्य-ईज्य, गुरु, तिष्य, देवपुरोहित।

आश्लेषा- सर्प, उरग, भुजग, भुजंग, अहि, भोगी।

मघा- पितृ, पितर।

पूर्वा फाल्गुनी- भग, योनि, भाग्य।

उत्तरा फाल्गुनी- अर्यमा।

हस्त- रवि, कर, सूर्य, ब्रध्न, अर्क, तरणि, तपन।

चित्रा- त्वष्टृ, त्वाष्टृ, तक्ष।

स्वाती- वायु, वात, अनिल, समीर, पवन, मारुत।

विशाखा- शक्राग्नि, इन्द्राग्नि, विषाग्नि, द्विष, राधा।

अनुराधा- मित्र।

ज्येष्ठा- इन्द्र, शक्र, वासव, आखण्डल, पुरन्दर।

मूल- निर्ऋति, रक्ष, अस्रप।

पूर्वाषाढ़ा- जल, नीर, उदक, अम्बु, तोय।

उत्तराषाढ़ा- विश्वे, विश्वेदेव।

श्रवण- गोविन्द, विष्णु, श्रुति, कर्ण, श्रवः।

धनिष्ठा- वसु, श्रविष्ठा।

शतभिषा-वरुण, अपांपति, नीरेश, जलेश।

पूर्वाभाद्रपदा- अजपाद, अजचरण, अजांघ्रि।

उत्तराभाद्रपदा- अहिर्बुध्न्य।

रेवती- पूषा, अन्त्य, पौष्ण।

इस प्रकार आपने नक्षत्रों के विविध नामों को देखा। इसके ज्ञान से किसी भी श्लोक में वर्णित किसी भी उपनाम को उसके मूल नाम से समझ सकेगें। इस पर कुछ प्रश्न दिये जा रहे हैं जो इस प्रकार है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-वसु किसका नाम है ?

क-श्रवण, ख-धनिष्ठा, ग-शतभिषा, घ- पूर्वाभाद्रपदा।

प्रश्न 2-वरुण किसका नाम है ?

क-श्रवण, ख-धनिष्ठा, ग-शतभिषा, घ- पूर्वाभाद्रपदा।

प्रश्न 3-अजचरण किसका नाम है ?

क-श्रवण, ख-धनिष्ठा, ग-शतभिषा, घ- पूर्वाभाद्रपदा।

प्रश्न 4-गोविन्द किसका नाम है ?

क-श्रवण, ख-धनिष्ठा, ग-शतभिषा, घ- पूर्वाभाद्रपदा।

प्रश्न 5-विश्वेदेव किसका नाम है ?

क-उत्तराषाढ़ा, ख-धनिष्ठा, ग-शतभिषा, घ- पूर्वाभाद्रपदा।

प्रश्न 6-जल किसका नाम है ?

क-श्रवण, ख-पूर्वाषाढ़ा, ग-शतभिषा, घ- पूर्वाभाद्रपदा।

प्रश्न 7-रक्ष किसका नाम है ?

क-श्रवण, ख-धनिष्ठा, ग-मूल, घ- पूर्वाभाद्रपदा।

प्रश्न 8 -वासव किसका नाम है ?

क-श्रवण, ख-धनिष्ठा, ग-शतभिषा, घ- ज्येष्ठा।

प्रश्न 9-मित्र किसका नाम है ?

क-अनुराधा, ख-धनिष्ठा, ग-शतभिषा, घ- पूर्वाभाद्रपदा।

प्रश्न 10-राधा किसका नाम है ?

क-श्रवण, ख-विशाखा, ग-शतभिषा, घ- पूर्वाभाद्रपदा।

1.5 सारांश

इस ईकाई में आपने तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के बारे में जाना है। वस्तुतः किसी भी प्रकार ज्योतिषीय ज्ञान या व्रत, पर्व एवं उत्सवों के निर्णय हेतु इन बातों का ज्ञान अनिवार्य ही नही अपितु अपरिहार्य माना जाता है। तिथियों का संबंध हमारे जीवन के प्रत्येक क्षण से है। तिथियों की संख्या पन्द्रह है जिनका नाम प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा या अमावास्या है। ये दोनो तिथियां शुक्ल पक्ष एवं कृष्ण पक्ष की है। शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक की तिथियों का नाम आता है। कृष्ण पक्ष में भी यही नाम होते है परन्तु पूर्णिमा नही होता इसके स्थान पर अमावास्या नाम की तिथि को स्वीकार किया गया है। अमावास्या के लिये पंचांग में 30 संख्या दी गयी होती है। पूर्णिमा के स्थान पर 15 लिखा गया होता है। तिथियों की क्षय एवं वृद्धि होती रहती है।

सूर्योदय के बाद किसी तिथि का प्रारंभ हो तथा दूसरे सूर्योदय के पहले अन्त हो जाय तो उसे क्षय तिथि के नाम से जाना जाता है। ठीक इसके विपरीत एक ही तिथि यदि दो सूर्योदय में पाई जाती है उसे तिथि वृद्धि कहते हैं। क्योकि एक ही तिथि दो दिवसों में हो जाती है। शुक्ल पक्ष में तिथियों की वृद्धि यानी उसमें चन्द्रमा की कलाओं की क्रमशः वृद्धि होती जाती है। यानी प्रतिपदा में एक कला, द्वितीया में दो कला, तृतीया में तीन कला, चतुर्थी में चार कला, पंचमी में पांच कला, षष्ठी में छ कला, सप्तमी में सात कला, अष्टमी में आठ कला, नवमी में नौ कला इत्यादि की वृद्धि होता जाती है। कृष्णपक्ष में इसी प्रकार चन्द्रमा की कलाओं में ह्रास पाया जाता है। जैसे प्रतिपदा में एक कला , द्वितीया में दो कला, तृतीया में तीन कला, चतुर्थी में चार कला, पंचमी में पांच कला, षष्ठी में छ कला, सप्तमी में सात कला, अष्टमी में आठ कला, नवमी में नौ कला इत्यादि की कमी होती जाती है।

प्रतिदिन कोई न कोई नक्षत्र अवश्य होती है। इन नक्षत्रों के आधार पर ही राशि नाम का निर्धारण किया जाता है। प्रत्येक नक्षत्र के चार पाद बतलाये गये हैं। जिस पाद में जातक का जन्म होता है उस पाद में निश्चित वर्ण को आधार मानकर राशि नाम का निर्धारण किया जाता है। अभिजित सहित कुल नक्षत्रों की संख्या अठ्ठाईस मानी जाती है। अभिजित को छोड़कर कुल नक्षत्रों की संख्या सत्ताईस बतलायी गयी है। अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा एवं रेवती के नाम से जाना जाता है।

दिनों को ही वारों के रूप में जाना जाता है जिन्हे क्रमशः सूर्यवार, सोमवार, भौमवार, बुधवार, बृहस्पतिवार, शुक्रवार एवं शनिवार के रूप में जाना जाता है। ज्योतिष में इन सातों वारों के नामों को ग्रहों से जोड़कर मुख्य ग्रह के रूप में सूर्यवार को रवि, सोमवार को चन्द्र, भौमवार को मंगल, बुधवार को बुध, बृहस्पतिवार को गुरु, शुक्रवार को शुक्र एवं शनिवार को शनि के रूप में जाना जाता है। सूर्य का वर्ण लाल, चन्द्रमा यानी सोम का वर्ण सफेद, भौम का वर्ण लाल, बुध का वर्ण हरा, गुरु का वर्ण पीला, शुक्र का वर्ण सफेद एवं शनि का वर्ण काला बतलाया गया है।

कुल सत्ताईस योग होते हैं जिन्हे क्रमशः विष्कुम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतिपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐन्द्र एवं वैधृति। इन योगों का प्रयोग संकल्पादि के अवसर पर किया

जाता है तथा शुभाशुभ विचार में भी इनका महत्त्व है। जन्म कुण्डली में योग का फल जानने हेतु इन्ही योगों का प्रयोग देखने को मिलता है।

एक तिथि में दो करण होते है। करण चर एवं स्थिर दो प्रकार के होते है। चर करण सात होते हैं जिन्हें बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि के नाम से जाना जाता है। इनका प्रारम्भ शुक्ल प्रतिपदा के उत्तरार्द्ध से होता है। और एक मास में इनकी आठ आवृत्तियां होती है। शकुनी, चतुष्पद, नाग तथा किंस्तुघ्न ये चार स्थिर करण है। इनका प्रारम्भ कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध से होता है। अर्थात् चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध में शकुनी, अमावास्या के पूर्वार्ध में चतुष्पद, उत्तरार्ध में नाग तथा शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्ध में किंस्तुघ्न करण सदा नियत रहते हैं। इनकी स्थिर संज्ञा है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

विष्टि- भद्रा, शिव - कल्याण, पूर्वविद्धा- पूर्व तिथि से वेध होना, परविद्धा- बाद वाली तिथि से बेध होना, आवृत्ति- अभ्यास, चर- चलायमान, सर्व- सभी, पूर्वार्ध- पहले का आधा भाग, पूर्वान्ह- दिन के पूर्व का भाग, अपरान्ह- दोपहर के बाद का समय, सायान्ह- सायंकाल का समय, उत्तरार्ध- बाद वाला आधा भाग, शंख- देवपूजन में ध्वनि हेतु रखा जाने वाला मुह से बजाया जाने वाला एक प्रकार का वाद्य यन्त्र। उपोष्य- उपवास योग्य, गतर्क्ष- गत नक्षत्र, ख- शून्य, रस- छ, सूर्योदय- सूर्य का उदय काल, सूर्यास्त- सूर्य का अस्त होने का समय, अर्णव- समुद्र, सम्भव- उत्पन्न, गण- समूह, तुरग- अश्व, हस्त- हाथ, नाग- सर्प, यम- यमराज, आर्द्र- गीला, शुक्लपक्ष- प्रकाश पक्ष, कृष्णपक्ष- अंधकारपक्ष, रक्त- लाल, पीत- पीला, कृष्ण- काला, हरा-हरित, श्वेत- सफेद, भार्गव- शुक्र, अम्बु- जल, अम्बुज- कमल, सम- समान, अन्त्य नक्षत्र- रेवती, अन्तक- अन्त करने वाला, कृतान्त- कृत्य को करने वाले का अन्त, अनल- अग्नि, हुतभुक्- हवि का भोग लगाने वाला, हुताश- हुत का अशन करने वाला, धाता-धारण करने वाला, प्रजापति- प्रजा के स्वामी, देवपुरोहित- देवताओं के पुरोहित, उरग- सर्प, अदिति- पुनर्वसु, अहिर्बुध्न्य- सूर्य का नाम, अपांपाति- जल के स्वामी, नीरेश- नीर यानी जल के स्वामी, जलेश- जल के स्वामी, रक्ष- राक्षस, अर्क- सूर्य, सुधांशु- चन्द्रमा, विधु- चन्द्रमा, शक्राग्नि- इन्द्र एवं अग्नि, समीर- वायु, शशभृत्- चन्द्रमा, अजचरण- सूर्य का एक नाम, गोविन्द- विष्णु भगवान, वरुण- शतभिषा का स्वामी, कुज- मंगल, गज- हाथी, भ- नक्षत्र, लघु- थोड़ा, अम्बर- वस्त्र, ईज्य- पुष्य, अहि- सर्प, उर्ध्व- उपर, अधो- नीचे, सौम्य- बुध, जीव- गुरु, दैत्यगुरु- शुक्र, मन्द- शनि, उदक- जल, पुष्पसार- इत्र, कूर्म- कछुआ, सहस्र- हजार, पश्य- देखकर, वरद- वर देने वाले, भव- होवो, पथ- रास्ता, निर्वाण- मोक्ष, जापक- जप करने वाला, ।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

6.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-क, 3-ख, 4-क, 5-ख, 6-ग, 7-क, 8-घ, 9-क, 10-ख, 11-ग।

6.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-क, 4-ग, 5-घ, 6-क, 7-ख, 8-ग, 9-घ, 10-ग।

6.3.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-क, 3-ख, 4-ख, 5-ख, 6-घ, 7-ख, 8-क, 9-ग, 10-घ।

6.3.4 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ख, 2-ग, 3-क, 4-ख, 5-ग, 6-घ, 7-क, 8-क, 9-क , 10-क, 11-ग।

6.3.5 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ख, 2-ख, 3-घ, 4-घ, 5-क, 6-क, 7-क, 8-ख, 9-ख, 10-ख, 11-ख।

6.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ख, 2-क, 3-ग, 4-क, 5-ग, 6-घ, 7-घ 8-क, 9-ख, 10-क।

6.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ख, 2-ग, 3-घ, 4-क, 5-क, 6-ख, 7-ग 8-घ, 9-क, 10-ख।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मुहूर्त्त चिन्तामणिः।

2-भारतीय कुण्डली विज्ञान भग-1

3-शीघ्रबोध।

4-शान्ति- विधानम्।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-उत्सर्ग मयूख।

7-विद्यापीठ पंचांग।

8- फलदीपिका

9- अवकहड़ा चक्र।

10- सर्व देव प्रतिष्ठा प्रकाशः।

11- संस्कार-भास्करः । वीणा टीका सहिता।

12- मनोभिलषितव्रतानुवर्णनम्- भारतीय व्रत एवं अनुष्ठान।

13- संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

1.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- स्मृति कौस्तुभः।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।

3- जातकालंकार।

4- याज्ञवल्क्य स्मृतिः।

5- संस्कार- विधानम्।

1.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1-तिथियों का परिचय दीजिये।

2- वारों का परिचय बतलाइये।

3- नक्षत्रों का परिचय दीजिये।

4- योगों का परिचय दीजिये।

5- करणों का परिचय दीजिये।

6- प्रतिपदा से पंचमी तक के तिथियों का निर्णय लिखिये।

7- पंचमी से दशमी तक के तिथियों का निर्णय लिखिये।

8- दशमी से पूर्णिमा तक के तिथियों के निर्णय को लिखिये।

9- नक्षत्रों के पर्यायवाची शब्दों को लिखिये।

10- वारों के पर्यायवाची शब्दों को लिखिये।

इकाई - 2 पंचांग का शुभाशुभ फल विचार

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में पंचांग के शुभ एवं अशुभ फल संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। पंचांग में पांच अंग मुख्यतया होते हैं जिन्हें हम तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के रूप में जानते हैं। बिना इसके विचार किये वह दिन शुभ है या अशुभ है, इसका विचार आप नही कर सकते है। अतः इन तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करणादि से कैसे शुभ एवं अशुभ का विचार किया जाता है, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण यानी पंचांग के विचार के अभाव में किसी व्रत, किसी मुहूर्त्त, किसी उत्सव एवं किसी पर्व का ज्ञान किसी भी व्यक्ति को नही हो सकता है। क्योकि कोई भी व्रत करते है तो उसका आधार तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण ही होते हैं। किसी दिन किसी नवीन कार्य का आरम्भ करते हैं तो उस दिन पंचांग का विचार कर लेते हैं क्योकि शुभ मुहूर्त्त में आरम्भ किया गया कार्य शुभ फल प्रदान करने वाला होता है तथा अशुभ मुहूर्त्त में प्रारम्भ किया गया कार्य अशुभ फल देने वाला होता है। साधारण रूप से सभी लोग शुभ फल की अभिलाषा रखते हैं जिसके कारण पंचांग का शुभाशुभ ज्ञान सभी लोगों के लिये अनिवार्य है। इसी प्रकार वार का व्रत जैसे मंगलवार का व्रत करना हो तो यह जानना आवश्यक होगा किस मंगलवार से हम व्रत आरम्भ करें जिससे वह व्रत निर्विघ्नता पूर्वक सम्पादित किया जा सके। आदि-आदि। इस इकाई के अध्ययन से आप पंचांग यानी तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण इत्यादि के शुभ एवं अशुभ विचार करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

2.2 उद्देश्य

अब पंचांग के शुभ एवं अशुभ विचार की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते है।

1. पंचांग ज्ञान को लोकोपकारक बनाना।

2. व्रत, पर्व, उत्सवों के निर्णयार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।

3. ज्येतिष में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

4. प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

5. लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

6. समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

2.3 पंचांग के शुभाशुभ स्वरूप-

पंचांग में विद्वानों ने पांच अंगों का विचार किया है। पंचांग शब्द ज्योतिष एवं कर्मकाण्ड दोनों में आता है। कर्मकाण्ड का पंचांग अलग है जिसमें गणपति पूजन, कलशस्थापन, मातृका पूजन, नान्दी श्राद्ध एवं आचार्य वरण आता है। यहां हम ज्योतिष के पंचांग पूजन की बात कर रहे है। ज्योतिष के पंचांग में तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण इन पांच अंगों को बतलाया गया है। इन पांचों अंगों के आधार पर ही शुभ एवं अशुभ के बारे में विचार करते हैं। यहां हम उनके पृथक्- पृथक् स्वरूपों की चर्चा करेगें जिससे संबंधित विषय का ज्ञान प्रगाढ़ हो सकेगा।

2.3.1 तिथियों के शुभाशुभ स्वरूप

तिथि क्या है ? इस पर विचार करते हुये आचार्यों ने कहा है एक- चन्द्रकलावृद्धिक्षयान्यतरावच्छिन्नः कालः तिथिः। अर्थात् चन्द्रमा के एक-एक कला वृद्धि के अवच्छिन्न काल को तिथि कहा जाता है। इसके बारे में वृहद् ज्ञान आप इससे पूर्व के प्रकरण में प्राप्त कर चुके हैं। तिथियों की संख्या पन्द्रह है जिनका नाम प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा या अमावास्या है। ये दोनो तिथियां शुक्ल पक्ष एवं कृष्ण पक्ष की है। इनके शुभ एवं अशुभ के बारे में यह वचन मिलता है-

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णेति तिथ्यो अशुभमध्यशस्ता।

सिते असिते शस्तसमाधमाः स्युः सितज्ञभौमार्किगुरौ च सिद्धा।। मुहूर्त्तचिन्तामणिः

शुभाशुभप्रकरण- 4

इस श्लोक के अनुसार तिथियों को पांच भागों में बांटा गया है जिन्हें नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता एवं पूर्णा के नाम से जाना जाता है। नन्दा में प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी तिथियां, भद्रा में द्वितीया, सप्तमी एवं द्वादशी तिथियां, जया में तृतीया, अष्टमी एवं त्रयोदशी तिथियां, रिक्ता में चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी

तिथियां तथा पूर्णा में पंचमी, दशमी एवं अमावास्या या पूर्णिमा तिथियां आती है। प्रत्येक पक्ष में ये नन्दादि तिथियां तीन बार आती है। उसी को व्यक्त करते हुये कहा गया है कि शुक्ल पक्ष में प्रथम नन्दा इत्यादि तिथियां अशुभ, द्वितीय नन्दा इत्यादि तिथियां मध्य एवं तृतीय नन्दा इत्यादि तिथियां शुभ होती है। उसी प्रकार कृष्ण पक्ष में प्रथम नन्दा इत्यादि तिथियां शुभ, द्वितीय नन्दा इत्यादि तिथियां मध्य एवं तृतीय नन्दा आदि तिथियां अशुभ होती है।

शुक्रवार को नन्दा तिथि यानी प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी, बुधवार को भद्रा यानी द्वितीया, सप्तमी एवं द्वादशी तिथि, भौमवार को जया यानी तृतीया, अष्टमी एवं त्रयोदशी तिथि, शनिवार को रिक्ता यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथि तथा गुरुवार को पंचमी, दशमी, अमावास्या या पूर्णिमा तिथि सिद्ध योग प्रदान करती है अर्थात् इसमें कार्य का आरम्भ कार्य को सिद्धि दिलाने वाला होता है।

चन्द्रमा के पूर्ण या क्षीण होने से तिथियों में बलत्व या निर्बलत्व होता है। शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा से पंचमी तक चन्द्रमा के क्षीण होने के कारण प्रथमावृति की नन्दा इत्यादि तिथियां अशुभ है। षष्ठी से दशमी तक चन्द्रमा के मध्य यानी न पूर्ण न क्षीण होने से द्वितीयावृति की नन्दा इत्यादि तिथियां मध्य मानी जाती है। ठीक इसी प्रकार तृतीयावृति की नन्दादि तिथियां चन्द्रमा के पूर्ण होने के कारण शुभ कही गयी है।

इसके अध्ययन से तिथियों की संज्ञा एवं शुभ एवं अशुभत्व का विचार आप सम्यक् तरीके से जान गये होगें। इस ज्ञान को पुष्ट करने के लिये नीचे प्रश्न दिया जा रहा है जो इस प्रकार है-

अभ्यास प्रश्न - 1

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-नन्दा किसका नाम है ?

क-प्रतिपदा, ख-सप्तमी, ग-त्रयोदशी, घ- चतुर्दशी।

प्रश्न 2- भद्रा किसका नाम है ?

क-प्रतिपदा, ख-सप्तमी, ग-त्रयोदशी, घ- चतुर्दशी।

प्रश्न 3- जया किसका नाम है ?

क-प्रतिपदा, ख-सप्तमी, ग-त्रयोदशी, घ- चतुर्दशी।

प्रश्न 4-रिक्ता किसका नाम है ?

क-प्रतिपदा, ख-सप्तमी, ग-त्रयोदशी, घ- चतुर्दशी।

प्रश्न 5-पूर्णा किसका नाम है ?

क-प्रतिपदा, ख-पंचमी, ग-त्रयोदशी, घ- चतुर्दशी।

प्रश्न 6- शुक्रवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है ?

क-नन्दा, ख-भद्रा, ग- जया, घ- रिक्ता।

प्रश्न 7- बुधवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है ?

क-नन्दा, ख-भद्रा, ग- जया, घ- रिक्ता।

प्रश्न 8- भौमवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है ?

क-नन्दा, ख-भद्रा, ग- जया, घ- रिक्ता।

प्रश्न 9- शनिवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है ?

क-नन्दा, ख-भद्रा, ग- जया, घ- रिक्ता।

प्रश्न 10- गुरूवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है ?

क-नन्दा, ख-भद्रा, ग- पूर्णा, घ- रिक्ता।

2.3.2 तिथियों एवं वारों के संयोग से शुभ एवं अशुभ विचार-

अब हम रवि इत्यादि वारों, तिथियों एवं नक्षत्रों के संयोग से शुभ एवं अशुभ कालों का विचार इस प्रकार करेगें। अधोलिखित श्लोक को ध्यान पूर्वक पढ़ना चाहिये।

नन्दा भद्रा नन्दिकाख्या जया च रिक्ता भद्रा चैव पूर्णा मृतार्कात्।

याम्यं त्वाष्ट्रं वैश्वदेवं धनिष्ठार्यम्णं ज्येष्ठान्त्यं रवेर्दग्धभं स्यात्।। मुहूर्त्तचिन्तामणिः

शुभाशुभप्रकरणम्- 5

अर्थात् सूर्य आदि वारों में क्रम से नन्दा, भद्रा, नन्दा, जया, रिक्ता, भद्रा और पूर्णा तिथियां पड़ जाये तो अधम योग होता है। इसका मतलब रविवार को नन्दा यानी प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी तिथियां हो, सोमवार को भद्रा यानी द्वितीया, सप्तमी एवं द्वादशी तिथियां हो, भौमवार को नन्दा यानी प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी तिथियां हो, बुधवार को जया यानी तृतीया, अष्टमी एवं त्रयोदशी तिथियां हों, गुरुवार को रिक्ता यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथियां हों, शुक्रवार को भद्रा यानी द्वितीया, सप्तमी एवं द्वादशी तिथियां हो और शनिवार को पूर्णा यानी पंचमी, दशमी एवं अमावास्या या पूर्णिमा तिथियां आती हो तो मृत योग बन जाता है।

इसी प्रकार सूर्यादि वारों में क्रमशः भरणी आदि नक्षत्र हो अर्थात् रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मंगलवार को उत्तराषाढ़ा, बुधवार को धनिष्ठा, बृहस्पतिवार को उत्तराफाल्गुनि, शुक्रवार को ज्येष्ठा और शनिवार को रेवती आ जाय तो दग्ध योग होता है। ये दोनों मृत्यु योग एवं दग्ध योग यात्रा में अत्यन्त निन्दित है। अन्य शुभ कार्य भी इनमें न किये जाय तो उत्तम होता है।

तिथियों और वारों से संबंधित शुभाशुभत्व पर विचार करते हुये ग्रन्थकार ने एक विचार और दिया है जिसका वर्णन मै यहां अत्यन्त उचित समझता हूँ जो इस प्रकार है।

षष्ठ्यादितिथयो मन्दाद्विलोमं प्रतिपद् बुधे ।
सप्तम्यर्के धमाः षष्ठ्याद्यामाश्च रदधावने।।

इस श्लोक की व्याख्या करते हुये बतलाया गया है कि षष्ठी आदि क्रम से तिथियों और शनि आदि उलटे वारों के योग से क्रकच नामक अधम योग होता है। जैसे शनिवार को षष्ठी, शुक्रवार को सप्तमी, गुरुवार को अष्टमी, बुधवार को नवमी, भौमवार को दशमी, सोमवार को एकादशी और रविवार को द्वादशी हो जाय तो क्रकच नाम का कुयोग होता है। यह कुयोग दिन एवं तिथि के संयोग से तेरह बनने के कारण हो रहा है। जैसे शनिवार का मतलब सात एवं षष्ठी तिथि का मतलब छ, दोनों को जोड़ने से तेरह हो रहा है जिसके कारण क्रकच नामक योग बन रहा है। एक और उदाहरण समझ लेने से यह बात पूरी तरह दिमाग में बैठ जायेगी जैसे भौमवार और दशमी, इसमें भौमवार की संख्या तीन है, दशमी की दश संख्या को इसमें जोड़ने से तेरह हो रहा है जिसके कारण यह योग लग रहा है।

इसके साथ ही ज्यौतिष शास्त्र में यह बतलाया गया है कि बुधवार को प्रतिपदा तथा रविवार को सप्तमी हो तो संवर्तक नाम का कुयोग होता है। इसे शुभ नही माना गया है।

इसके अलावा दग्धादि योगों की चर्चा करते हुये बतलाया गया है कि-

सूर्येशपंचाग्निरसाष्टनन्दा वेदांगसप्ताश्विगजांकशैलाः।
सूर्यांगसप्तोरगगोदिगीशा दग्धा विषाख्याश्च हुताशनश्च।
सूर्यादिवारे तिथयोभवन्ति मघाविशाखाशिवमूलवन्हिः।
ब्राह्मं करोर्काद्यमघण्टकाश्च शुभे विवजर्या गमने त्ववश्यम्।।

अर्थात् रविवार को द्वादशी, सोमवार को एकादशी, मंगलवार को पंचमी, बुधवार को तृतीया, बृहस्पतिवार को षष्ठी, शुक्रवार को अष्टमी एवं शनिवार को नवमी पड़ जाय तो दग्ध योग होता है।

रविवार को चतुर्थी, सोमवार को षष्ठी, मंगलवार को सप्तमी, बुधवार को द्वितीया, बृहस्पतिवार को अष्टमी, शुक्रवार को नवमी एवं शनिवार को सप्तमी पड़ जाय तो विष नामक योग होता है।

रविवार को द्वादशी, सोमवार को षष्ठी, मंगलवार को सप्तमी, बुधवार को अष्टमी, बृहस्पतिवार को नवमी, शुक्रवार को दशमी एवं शनिवार को एकादशी पड़ जाय तो हुताशन योग होता है।

रविवार को मघा, सोमवार को विशाखा, मंगलवार को आर्द्रा, बुधवार को मूल, बृहस्पतिवार को कृत्तिका, शुक्रवार को रोहिणी एवं शनिवार को हस्त नक्षत्र आ जाय तो यमघण्ट नामक योग होता है। उक्त चारों योग समस्त शुभ कार्यों में वर्जित बतलाये गये है। विशेष कर यात्रा में तो अवश्य ही त्याज्य है।

इसमें आपने तिथियों, वारों एवं नक्षत्रों के संयोग से अशुभ योगों के बारे में जाना। इसको छोड़कर

अन्यत्र शुभ होता है। अतः इस पर कुछ प्रश्न दिये जा रहे हैं जिसका हल आपके ज्ञान को अभिवर्द्धित करेगा।

अभ्यास प्रश्न – 2

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- शनिवार को क्रकच योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-सप्तमी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 2- शुक्रवार को क्रकच योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-सप्तमी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 3- गुरुवार को क्रकच योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-सप्तमी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 4- बुधवार को क्रकच योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-सप्तमी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 5- भौमवार को क्रकच योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-दशमी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 6- सोमवार को क्रकच योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-सप्तमी, ग-अष्टमी, घ- एकादशी।

प्रश्न 7- रविवार को क्रकच योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-सप्तमी, ग-अष्टमी, घ- द्वादशी।

प्रश्न 8- शनिवार को कौन तिथि हो तो दग्ध योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-सप्तमी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 9- शनिवार को कौन तिथि हो तो विष योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-सप्तमी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 10- शनिवार को कौन तिथि हो तो हुताशन योग बनता है ?

क-षष्ठी, ख-सप्तमी, ग-अष्टमी, घ- एकादशी।

2.3.3 तिथियों एवं नक्षत्रों के संयोग से शुभ एवं अशुभ का विचार

तिथियों एवं नक्षत्रों के मिलन शुभ एवं अशुभ का विचार हम इस प्रकार करते है-

तथा निन्द्यं शुभे सार्पं द्वादश्यां वैश्वमादिमे।

अनुराधा तृतीयायां पंचम्यां पित्र्यभं तथा।

त्र्युत्तराश्च तृतीयायामेकादश्यां च रोहिणी।

स्वाती चित्रे त्र्योदश्यां सप्तम्यां हस्तराक्षसे।

नवम्यां कृतिकाष्टाम्यां पूभा षष्ठ्यां च रोहिणी।।

इसका अर्थ करते हुये बतलाया गया है कि द्वादशी तिथि में आश्लेषा, प्रतिपदा तिथि में उत्तराषाढ़ा, द्वितीया तिथि में अनुराधा, पंचमी मे मघा, तृतीया में तीनों उत्तरा यानी उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, एकादशी में रोहिणी, त्रयोदशी में स्वाती और चित्रा, सप्तमी में हस्त एवं मूल, नवमी में कृत्तिका, अष्टमी में पूर्वाभाद्रपदा और षष्ठी में रोहिणी पड़े तो निन्द्य योग होता है। इनमें शुभ कार्य करना वर्जित माना गया है।

नक्षत्रों का मासों से संबंध करके भी शुभ एवं अशुभ का विचार किया गया है-

कदास्रभे त्वाष्ट्रवायू विश्वेज्यौ भगवासवौ।

वैश्वस्रुति पाशिपौष्णे अजपादग्निपित्र्यभे।।

चित्राद्वीशौ शिवाश्व्यर्काः श्रुतिमूले यमेन्द्रभे।

चैत्रादिमासे शून्याख्यास्तारा वित्तविनाशदाः।।

इसका अर्थ करते हुये बतलाया गया है कि चैत्रमास में रोहिणी एवं अश्विनी नक्षत्र, वैशाख मास में चित्रा एवं स्वाती नक्षत्र, ज्येष्ठ मास में उत्तराषाढ़ा एवं पुष्य नक्षत्र, आषाढ़ में पूर्वाफाल्गुनि एवं धनिष्ठा नक्षत्र, श्रावण में उत्तराषाढ़ा एवं श्रवण नक्षत्र, भाद्रपद में शतभिषा एवं रेवती नक्षत्र, आश्विन में पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र, कार्तिक में कृत्तिका एवं मघा नक्षत्र, मार्गशीर्ष में चित्रा एवं विशाखा नक्षत्र, पौष में आर्द्रा एवं अश्विनी नक्षत्र, माघ मे श्रवण एवं मूल नक्षत्र, फाल्गुन में भरणी एवं ज्येष्ठा नक्षत्र मास शून्य नक्षत्र कहे गये हैं। इनमें शुभ कार्य करने से कर्ता के धन का नाश होता है।

इसी प्रकार राशियों के शून्यता का भी वर्णन मिलता है। यथा-

घटो झषो गौर्मिथुनं मेषकन्यालितौलिनः।

धनुः कर्को मृगः सिंहश्चैत्रादौ शून्यराशयः।।

अर्थात् चैत्र मास में कुम्भ, वैशाख में मीन, ज्येष्ठ में वृष, आषाढ़ में मिथुन, श्रावण में मेष, भाद्रपद में कन्या, आश्विन में वृश्चिक्, कार्तिक में तुला, मार्गशीर्ष में धनु, पौष में कर्क, माघ में मकर और फाल्गुन में सिंह ये राशियां शून्य मानी गयी है। इनमें शुभ कार्य करने से कर्ता के वंश और धन दोनों का विनाश होता है।

इसी प्रकार पंचांग में तिथियों एवं लग्नों के संयोग से भी शुभ एवं अशुभ का विचार इस प्रकार किया गया है-

पक्षादितस्त्वोजतिथौ घटैणौ मृगेन्द्रनक्रौ मिथुनांगने च।

चापेन्दुभे कर्कहरी हयान्त्यौ गोन्त्यौ च नेष्टे तिथिशून्यलग्ने।।

शुक्ल एवं कृष्ण दोनों पक्षों में प्रतिपदा से लेकर विषम तिथियों में क्रम से प्रतिपदा में तुला एवं मकर, तृतीया में सिंह और मकर, पंचमी में मिथुन और कन्या, सप्तमी में धनु एवं कर्क, नवमी में कर्क और सिंह, एकादशी में धनु और मीन, त्रयोदशी में वृष और मीन शून्य लग्न है। इनमें कोई शुभकार्य करना उचित नही है।

इसमें आपने तिथियों, वारों, मासों, लग्नों एवं नक्षत्रों के संयोग से अशुभ योगों के बारे में जाना। इसको छोड़कर अन्यत्र शुभ होता है। अतः इस पर कुछ प्रश्न दिये जा रहे हैं जिसका हल आपके ज्ञान को अभिवर्द्धित करेगा।

अभ्यास प्रश्न- 3

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- द्वादशी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-आश्लेषा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनों उत्तरा।

प्रश्न 2- द्वितीया तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-आश्लेषा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनों उत्तरा।

प्रश्न 3- पंचमी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-आश्लेषा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनों उत्तरा।

प्रश्न 4- तृतीया तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-आश्लेषा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनों उत्तरा।

प्रश्न 5- एकादशी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-रोहिणी, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनों उत्तरा।

प्रश्न 6- त्रयोदशी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-आश्लेषा, ख- स्वाती, ग-मघा, घ- तीनों उत्तरा।

प्रश्न 7- सप्तमी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-आश्लेषा, ख- अनुराधा, ग-हस्त, घ- तीनों उत्तरा।

प्रश्न 8- नवमी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-आश्लेषा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- कृत्तिका।

प्रश्न 9- अष्टमी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-पूर्वाभाद्रपदा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनों उत्तरा।

प्रश्न 10- षष्ठी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है ?

क-आश्लेषा, ख- रोहिणी, ग-मघा, घ- तीनों उत्तरा।

2.3.4 तिथि, वार एवं नक्षत्रादि योगों द्वारा शुभ एवं अशुभ का विचार

इसमें तिथि, वारों एवं नक्षत्रों तीनों का संयोग पाया जाता है। इन तीनों के संयोगो के आधार पर अशुभ एवं शुभ फलों का विचार करते है-

वर्जयेत् सर्वकार्येषु हस्तार्कं पंचमी तिथौ।
भौमाश्विनीं च सप्तम्यां षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं तथा।
बुधानुराधामष्टम्यां दशम्यां भृगुरेवतीम्।
नवम्यां गुरुपुष्यं चैकादशम्यां शनिरोहिणीम्।।

इसके अर्थ का प्रतिपादन करते हुये कहा गया है कि पंचमी तिथि में रविवार और हस्त नक्षत्र हो, सप्तमी तिथि में भौमवार और अश्विनी नक्षत्र हो, षष्ठी में सोमवार एवं मृगशिरा नक्षत्र हो, अष्टमी में बुधवार और अनुराधा नक्षत्र हो, दशमी में शुक्रवार एवं रेवती नक्षत्र हो, नवमी में गुरुवार एवं पुष्य नक्षत्र हो और एकादशी में शनिवार एवं रोहिणी नक्षत्र हो तो इन्हें समस्त शुभ कार्यो में त्याग कर देना चाहिये।

यद्पि यहॉ नक्षत्र एवं वार के योग से शुभ योग होते है, तथापि तिथियों के योग से निषिद्ध योग हो जाता है। इसी को मधुसर्पिष योग भी कहते है। महर्षि वसिष्ठ ने दूसरे प्रकार का मधु सर्पिष् योग कहा है जिसको हालाहल योग भी कहा गया है।

नक्षत्रों एवं वारों के योग से कुछ विशिष्ट कार्यों को करने के लिये विवर्जित किया गया है जो इस प्रकार है-

गृहप्रवेशे यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम्।
भौमाश्विनीं शनौ ब्राह्मं गुरौ पुष्यं विवर्जयेत्।

यहॉ पर जिन योगों की चर्चा की गयी हैं वे योग सिद्ध योग बनाते है लेकिन कुछ विशेष कार्य हेतु इन योगों को वर्जित किया गया है। गृह प्रवेश में भौमवार एवं अश्विनी नक्षत्र का संयोग त्याग देना चाहिये। यात्रा में शनिवार एवं रोहिणी नक्षत्र के संयोग को त्याग देना चाहिये। विवाह में गुरुवार एवं पुष्य नक्षत्र के संयोग को त्याग देना चाहिये।

विशेष- भौमाश्विनी, शनिरोहिणी और गुरुपुष्य ये तीनो सिद्धि है। तथापि गृहप्रवेश में भौमवार निषिद्ध है, अश्विनी नक्षत्र भी विहित नही है। अतः सिद्ध योग होते हुये भी गृहप्रवेश में त्याज्य है। वसिष्ठ एवं राजमार्तण्ड के अनुसार यात्रा में शनिवार निन्द्य माना गया है। अतः रोहिणी के योग से सिद्ध योग होते हुये भी यात्रा में त्याज्य है। गुरुपुष्य योग कामुकता का वर्धक होने से विवाह में निषिद्ध माना गया है। सभी प्रकार के कार्यों में अधोलिखित योगों को त्याज्य माना है-

जन्मर्क्षमासतिथयोव्यतिपातभद्रा वैधृत्यमापितृदिनानितिथिक्षयर्द्धी।
न्यूनाधिमासकुलिकप्रहरार्द्धपातविष्कम्भवज्रघटिकात्रयमेववर्ज्यम्।
परिधार्द्धं पंच शूले षट् च गण्डातिगण्डयोः
व्याघाते नवनाड्यश्च वर्ज्याः सर्वेषु कर्मसु।।

अर्थात् जन्म नक्षत्र, जन्म मास, जन्म तिथि, व्यतिपात, भद्रा, वैधृति, अमावास्या, पितृ घात दिन, तिथि का क्षय दिन, तिथि वृद्धि वाला दिन, न्यून मास, अधिक मास, कुलिक योग, अर्द्धयाम, पात, विष्कम्भ योग और वज्र योग की तीन घटी, परिघ योग का आधा, शूलयोग की पॉच घटी, गण्ड एवं अतिगण्ड योग की छः छः घटी एवं व्याघात योग की नव घटी सभी प्रकार के शुभ कार्यों हेतु वर्जित की गयी है।

विशेष- जन्म नक्षत्र एवं जन्म मास उपनयन में शुभ होता है।

दूसरे दूसरे गर्भ से उत्पन्न बालक बालिकाओं का विवाह उत्तम है।

नारद संहिता के अनुसार पट्टबन्धन, मुण्डन, अन्नप्राशन, व्रतबन्ध इन कार्यों में जन्मर्क्ष शुभ माना गया है। बहुत से कार्यो में जन्म की तारा शुभ कही गयी है।

इस प्रकार आपने तिथियों, वारों, मासों, लग्नों एवं नक्षत्रों के संयोग से शुभ एवं अशुभ योगों के बारे में जाना। इसको छोड़कर अन्यत्र शुभ होता है। अतः इस पर कुछ प्रश्न दिये जा रहे हैं जिसका हल आपके ज्ञान को अभिवर्द्धित करेगा।

अभ्यास प्रश्न - 4

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- पंचमी तिथि में क्या त्याज्य है ?

क- हस्तार्क, ख- भौमाश्विनी, ग- इन्द्रेन्दवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 2- सप्तमी तिथि में क्या त्याज्य है ?०

क- हस्तार्क, ख- भौमाश्विनी, ग- इन्द्रेन्दवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 3- षष्ठी तिथि में क्या त्याज्य है ?

क- हस्तार्क, ख- भौमाश्विनी, ग- इन्द्रेन्दवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 4- अष्टमी तिथि में क्या त्याज्य है ?

क- हस्तार्क, ख- भौमाश्विनी, ग- इन्द्रेन्दवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 5- दशमी तिथि में क्या त्याज्य है ?

क- भृगुरेवती, ख- भौमाश्विनी, ग- इन्द्रेन्दवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 6- नवमी तिथि में क्या त्याज्य है ?

क- हस्तार्क, ख- भौमाश्विनी, ग- गुरुपुष्य, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 7- एकादशी तिथि में क्या त्याज्य है ?

क- हस्तार्क, ख- भौमाश्विनी, ग- शनिरोहिणी, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 8- गृहप्रवेश में क्या त्याज्य है ?

क- हस्तार्क, ख- भौमाश्विनी, ग- इन्द्रेन्दवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 9- यात्रा में क्या त्याज्य है ?

क- शनि रोहिणी, ख- भौमाश्विनी, ग- इन्द्रेन्दवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 10 - विवाह में क्या त्याज्य है ?

क- हस्तार्क, ख- भौमाश्विनी, ग- गुरुपुष्य, घ- बुधानुराधा ।

2.4. शुभाशुभ योगों का विशेष विचार-

इस प्रकरण में पंचांग के अनुसार शुभ अशुभ फलों के विशेष विचार किये जायेगें। इसका ज्ञान शुभ अशुभ फलों के जानने हेतु अतयावश्यक बतलाया गया है।

2.4.1 वार एवं नक्षत्र के संयोग से सर्वार्थ सिद्धि योग का विचार-

सर्वाथसिद्धि योग एक ऐसा योग है जिसमें कार्य करने से सभी प्रकार के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। आइये विचार करें कि सर्वार्थ सिद्धि योग कैसे बनता है। इस सन्दर्भ में अधोलिखित श्लोक मिलता है-

सूर्येर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं चन्द्रे श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रम्।

भौमेश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं ज्ञे ब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम्।

जीवेन्त्यमैत्राश्व्यदितिज्यधिष्ण्यं शुक्रेन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोभम्।

शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि सर्वार्थसिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः।

इसका अर्थ करते हुये बतलाया गया है कि रविवार को अर्क यानी हस्त नक्षत्र, मूल नक्षत्र, उत्तर यानी उत्तराफाल्गुनि, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, पुष्य और अश्विनी ये सात नक्षत्र हो तो सर्वार्थ सिद्धि योग होता है।

सोमवार को श्रुति यानी श्रवण, ब्राह्म यानी रोहिणी, शशी यानी मृगशिरा, इज्य यानी पुष्य, और मैत्र यानी अनुराधा ये पॉच नक्षत्र हो तो सर्वार्थ सिद्धि योग होता है।

मंगलवार को अश्व यानी अश्विनी, अहिर्बुध्न्य यानी उत्तराभाद्रपदा, कृशानु यानी कृत्तिका तथा सार्पं यानी आश्लेषा ये चार नक्षत्र मिल जाय तो सर्वार्थ सिद्धि योग होता है।

बुधवार को ब्राह्म यानी रोहिणी, मैत्र यानी अनुराधा, अर्क यानी हस्त, कृशानु अर्थात् कृत्तिका, और चान्द्रं यानी मृगशिरा ये पॉच नक्षत्र हो तो सर्वार्थ सिद्धि योग बनता है।

बृहस्पतिवार को अन्त्य यानी रेवती, मैत्र यानी अनुराधा, अश्व यानी अश्विनी, अदिति यानी पुनर्वसु, इज्य यानी पुष्य, धिष्ण्य यानी नक्षत्र हो तो सर्वार्थ सिद्धि योग होता है।

शुक्रवार को अन्त्य यानी रेवती, मैत्र यानी अनुराधा, अश्व अर्थात् अश्विनी, अदिति यानी पुनर्वसु, और श्रव यानी श्रवण नक्षत्र हो तो सर्वार्थ सिद्धि योग बनता है।

शनिवार को श्रुति यानी श्रवण, ब्राह्म यानी रोहिणी, समीर यानी स्वाती, भानि अर्थात् नक्षत्राणि अर्थात् ये नक्षत्र पाये जाते हों तो उस दिन सर्वार्थ सिद्धि योग बन रहा है ऐसा कहा जा सकता है।

इसी प्रकार उत्पात, मृत्यु, काण एवं सिद्ध योग का विचार इस प्रकार किया गया है-

द्वीशात्तोयाद्वासवात्पौष्णभाच्च ब्राह्मात्पुष्यादर्यमर्क्षाद्युगर्क्षैः।

स्यादुत्पातो मृत्यु काणौ च सिद्धिर्वारेर्काद्ये तत्फलं नामतुल्यम्।

इसका अर्थ करते हुये बतलाया गया है कि अर्काद्ये यानी सूर्यवार को विशाखा नक्षत्र से चार - चार नक्षत्र क्रमशः उत्पात, मृत्यु , काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये है। यानी रविवार को विशाखा नक्षत्र हो तो उत्पात योग, अनुराधा नक्षत्र हो तो मृत्यु योग, ज्येष्ठा नक्षत्र हो तो काण योग एवं मूल नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते हैं।

सोमवार को तृतीया यानी पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र से चार-चार नक्षत्र क्रमशः उत्पात, मृत्यु , काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये है। यानी सोमवार को पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र हो तो उत्पात योग, उत्तराषाढ़ा नक्षत्र हो तो मृत्यु योग, अभिजित् नक्षत्र हो तो काण योग एवं श्रवण नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते है।

मंगलवार को धनिष्ठा नक्षत्र से चार-चार नक्षत्र क्रमशः उत्पात, मृत्यु , काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये हैं। यानी मंगलवार को धनिष्ठा नक्षत्र हो तो उत्पात योग, शतभिषा नक्षत्र हो तो मृत्यु

योग, पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र हो तो काण योग एवं उत्तराभाद्रपद नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते है।

बुधवार को रेवती नक्षत्र से चार-चार नक्षत्र क्रमशः उत्पात, मृत्यु , काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये हैं। यानी बुधवार को रेवती नक्षत्र हो तो उत्पात योग, अश्विनी नक्षत्र हो तो मृत्यु योग, भरणी नक्षत्र हो तो काण योग एवं कृत्तिका नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते है।

वृहस्पतिवार को रोहिणी नक्षत्र से चार- चार नक्षत्र क्रमशः उत्पात, मृत्यु , काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये है। यानी गुरुवार को रोहिणी नक्षत्र हो तो उत्पात योग, मृगशिरा नक्षत्र हो तो मृत्यु योग, आर्द्रा नक्षत्र हो तो काण योग एवं पुनर्वसु नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते है।

शुक्रवार को पुष्य नक्षत्र से चार-चार नक्षत्र क्रमशः उत्पात, मृत्यु , काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये है। यानी शुक्रवार को पुष्य नक्षत्र हो तो उत्पात योग, आश्लेषा नक्षत्र हो तो मृत्यु योग, मघा नक्षत्र हो तो काण योग एवं पूर्वा फाल्गुनि नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते हैं।

शनिवार को उत्तरा फाल्गुनि नक्षत्र से चार- चार नक्षत्र क्रमशः उत्पात, मृत्यु , काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये है। यानी शनिवार को उत्तरा फाल्गुनि नक्षत्र हो तो उत्पात योग, हस्त नक्षत्र हो तो मृत्यु योग, चित्रा नक्षत्र हो तो काण योग एवं स्वाती नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते है।

इस प्रकार आपने तिथियों, वारों, एवं नक्षत्रों के संयोग से सर्वार्थ सिद्धि योग, उत्पात योग, मृत्यु योग, काण योग एवं सिद्ध योगों के बारे में जाना। अतः इस पर कुछ प्रश्न दिये जा रहे हैं जिसका हल आपके ज्ञान को अभिवर्द्धित करेगा।

अभ्यास प्रश्न- 5

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- सर्वार्थसिद्धि योग हेतु रविवार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृत्तिका, घ- मृगशिरा।

प्रश्न 2- सर्वार्थसिद्धि योग हेतु सोमवार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृत्तिका, घ- मृगशिरा।

प्रश्न 3- सर्वार्थसिद्धि योग हेतु मंगलवार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृत्तिका, घ- मृगशिरा।

प्रश्न 4- सर्वार्थसिद्धि योग हेतु बुधवार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृत्तिका, घ- मृगशिरा।

प्रश्न 5- सर्वार्थसिद्धि योग हेतु गुरुवार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- रेवती, ख- रोहिणी, ग- कृत्तिका, घ- मृगशिरा।

प्रश्न 6- सर्वार्थसिद्धि योग हेतु शुक्रवार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- हस्त, ख- अनुराधा, ग- कृत्तिका, घ- मृगशिरा।

प्रश्न 7- सर्वार्थसिद्धि योग हेतु शनिवार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- स्वाती, घ- मृगशिरा।

प्रश्न 8- उत्पात योग हेतु रविवार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृत्तिका, घ- विशाखा।

प्रश्न 9- काण योग हेतु सोमववार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृत्तिका, घ-अभिजित्।

प्रश्न 10- सिद्धि योग हेतु बुधवार को कौन सी नक्षत्र ग्राह्य है ?

क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृत्तिका, घ- मृगशिरा।

2.4.2 शुभाशुभ योग विचार का परिहार-

अभी तक आपने विभिन्न प्रकार के शुभ एवं अशुभ विचार के नियमों को जाना। लेकिन इन नियमों के परिहार के ज्ञान के अभाव में शुभाशुभ का ज्ञान सम्यक् प्रकार से नही हो पाता है इसलिये यहॉ सन्दर्भित विषय पर परिहार का लेखन किया जा रहा है। आशा ही नही अपितु विश्वास है कि यह ज्ञान आपके लिये गुणकारी सिद्ध होगा।

दुष्ट योगों का परिहार

तिथयो मासशून्यश्च शून्यलग्नानि यान्यपि।
मध्यदेशे विवर्ज्यानि न दूष्याणीतरेषु च।
पंग्वंधकाणलग्नानि मासशून्याश्च राशयः।
गौडमालवयोः त्याज्या अन्यदेशे न गर्हिता।।

इसका अर्थ यह हुआ कि मास में शून्य तिथियां तथा शून्य लग्न मध्यदेश में ही त्याज्य है, अन्य देशों में दूषित नही है। शून्य लग्न का विचार 2.3.3 में पक्षादितस्त्वोजतिथौ घटैणौ में किया गया है।

इसका विचार मध्य देश में ही करना चाहिये। इस सन्दर्भ में आचार्य मनु ने कहा है कि- हिमवद् विन्ध्ययोर्मध्ये यत्प्राग्विशननादपि। प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः।। अर्थात् हिमवान् और विन्ध्याचल के बीच सरस्वती नदी से पूर्व प्रयाग से पश्चिम, इनके भूभाग को मनु ने मध्य देश कहा है। आधुनिक मध्यप्रदेश इससे भिन्न है। इसके साथ ही पंगु, अन्ध एवं काण लग्न और मास में शून्य राशियां गौड़ एवं मालव देश में ही वर्जित है।

कुयोगास्तिथिवारोत्थास्तिथिभोत्था भवारजाः ।
हूण-बंग-खशेष्वेव वजर्यास्त्रितयजास्तथा ।।

इसका अर्थ बतलाते हुये कहा गया है कि तिथि और वार से उत्पन्न कुयोग जो नन्दा भद्रा नन्दिकाख्या...इस श्लोक में वर्णित जैसे मृत्यु योग है। षष्ठ्यादि में वर्णित क्रकच योग, सूर्येश पंचाग्नि में वर्णित दग्ध, विष और हुताशन योग, तिथि और नक्षत्र से उत्पन्न कुयोग जो तथा निन्द्यं शुभे सार्पं में दिया गया है, नक्षत्र एवं वार से उत्पन्न कुयोग जो याम्यं त्वाष्ट्रं आदि दग्ध योग के बारे में दिया गया है वह, यमघण्ट योग, आननदादि योगों में कालदण्ड, मृत्यु उत्पातादि और तिथि, वार एवं नक्षत्र तीनों से उत्पन्न कुयोग इत्यादि को हूण, बंग एवं खशदेशों में वर्जित किया गया है अन्य देशों में नही।

हूण जाति के लोग पूर्व काल में चीन की पूर्वी सीमा पर लूट पाट करते थे। वहां से प्रबल अवरोध होने पर तुर्कीस्तान पर अधिकार कर लिया और वक्षु नद के किनारे आ बसे। फिर कालिदास के समय में हूण लोग वक्षु नद के तट तक ही सीमित थे। रघुवंश में कालिदास ने हूणों का वर्णन वक्षु नद के तट पर ही किया है। बाद में फारस के सम्राट से हार कर भारत में घुसे और सीमान्त प्रदेश कपिसा गोधार पर अधिकार कर लिया। फिर मध्य देश की ओर चढ़ाई करने लगे और गुप्त सम्राटों से युद्ध करते हुये हूणों के प्रतापी राजा तोरमाण ने गुप्त साम्राज्य के पश्चिम भाग पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया। इस प्रकार गांधार, काश्मीर, पंजाब, राजपुताना, मालवा, काठियावाड़ इनके शासन में आये। इनको हूण देश कहा जाता है।

मृत्युक्रकचदग्धादीनिन्दौ शस्ते शुभांजगुः।
केचिद्यामोत्तरंचान्ये यात्रायामेव निन्दितान्।।

चन्द्रमा के शुद्ध रहने पर मृत्यु, क्रकच एवं दग्ध आदि योग शुभ हो जाते है । और किसी अन्य आचार्य के मत में एक प्रहर के बाद ये योग शुभदायक होते है और किसी आचार्य के मत में सभी कुयोग यात्रा में ही निन्दित है, अन्य शुभ कार्यों में निन्द्य नही है।

अयोगे सुयोगोपि चेत् स्यात्तदानीमयोगं निहत्यैष सिद्धिं तनोति।
परे लग्नशुद्ध्या कुयोगादिनाशः दिनार्द्धोत्तरं विष्टिपूर्वं च शस्तम्।।

क्रकच आदि कुयोगों के रहते हुये उसी समय कोई अन्य सुयोग आ जावे तो वह सुयोग, कुयोग के अशुभ फलों को नष्ट करके अपने सुयोग का ही शुभ फल देता है। अन्य आचार्य गण कहते है कि

जिस कार्य के लिये जैसी लग्नशुद्धि कही गयी है वैसी लग्न शुद्धि रहने पर कुयोग के दुष्ट फल नष्ट हो जाते है। कुछ आचार्यों के मत से दिन के आधे भाग की भद्रा आदि कुयोगों का फल नष्ट हो जाता है। भद्रा के संबंध में कहा गया है कि शुक्लपक्ष में अष्टमी और पूर्णिमा के पूर्वार्ध में चौथ और एकादशी के उत्तरार्ध में भद्रा रहती है। कृष्णपक्ष में तृतीया और दशमी के अन्त्यार्ध में और सप्तमी तथा चतुर्दशी के पूर्वार्ध में भद्रा रहती है।

भद्रा का वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि जब चन्द्रमा कुम्भ, मीन, कर्क एवं सिंह राशि का हो, उसी समय भद्रा भी आ जाय तो भद्रा का निवास मृत्यु लोक में रहता है। मेष, वृष, मिथुन एवं वृश्चिक के चन्द्रमा में भद्रा का निवास स्वर्ग में रहता है। कन्या, मकर, तुला एवं धनु राशि के चन्द्रमा में भद्रा का निवास पाताल लोक में रहता है। भद्रा का निवास जिस लोक में रहता है उस लोक में उसका अशुभ फल होता है।

वारे प्रोक्तं कालहोरासु तस्य धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेस्य।
कुर्याद्दिक्शूलादि चिन्त्यं क्षणेषु नैवोल्लंघ्यः परिघश्चापि दण्डः।।

जिस वार में जो कार्य करना शास्त्र में कहा गया है, वह वार वर्त्तमान समय में न हो और कार्य करना अत्यावश्यक हो तो वर्तमान निषिद्ध वार में भी विहित वार के काल होरा में उस कार्य को कर लेना चाहिये। जैसे किसी व्यक्ति ने शुक्रवार को ही श्मश्रुकर्म कराने का निश्चय किया है। आज भौमवार है और किसी कार्य के निमित्त आज ही श्मश्रु कर्म करा अत्यावश्यक है तो मंगल वार को शुक्र की होरा में श्मश्रु कर्म कर लेने में कोई दोष नही है।

इस प्रकार आपने शुभ अशुभ विचार के सन्दर्भ में विविध विषयों का अध्ययन किया । साथ ही विषम कालीन परिस्थितियों में परिहार पूर्वक किस प्रकार कार्य साधन हो सकेगा इसका यथा शास्त्रीय प्रमाण आपने देखा। आशा है आप शुभ एवं अशुभ काल का सही तरीके से विवेचन कर पायेगें। अब मैं इस पर आधारित कुछ प्रश्न आपके हल करने के लिये प्रदान कर रहा हूँ जो अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 6

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- जब चन्द्रमा मीन को हो तो भद्रा का निवास कहां पाया जाता है ?

क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।

प्रश्न 2- जब चन्द्रमा वृष को हो तो भद्रा का निवास कहां पाया जाता है ?

क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।

प्रश्न 3- जब चन्द्रमा मकर का हो तो भद्रा का निवास कहां पाया जाता है ?

क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।

प्रश्न 4- जब चन्द्रमा कुम्भ का हो तो भद्रा का निवास कहां पाया जाता है ?

क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।

प्रश्न 5- जब चन्द्रमा मेष को हो तो भद्रा का निवास कहां पाया जाता है ?

क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।

प्रश्न 6- जब चन्द्रमा कन्या का हो तो भद्रा का निवास कहां पाया जाता है ?

क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।

प्रश्न 7- भद्रा का फल उसके निवास से कहां पाया जाता है ?

क- नीचे के लोक में, ख- उपर के लोक में, ग- उसी लोक में, घ- अनिश्चत लोक में।

प्रश्न 8- जब निषिद्ध वार में कार्य अति आवश्यक हो तो उचित काल होरा में वह कार्य-

क- किया जा सकता है, ख- नही किया जा सकता ,

ग- कभी किया जा सकता है, घ- जैसी इच्छा।

प्रश्न 9- जब चन्द्रमा शुद्ध हो तो मृत्यु योग होता है ?

क- शुभ, ख- अशुभ, ग- अनावश्यक, घ- आवश्यक।

प्रश्न 10- जब चन्द्रमा शुद्ध हो तो क्रकच योग होता है ?

क- शुभ, ख- अशुभ, ग- अनावश्यक, घ- आवश्यक ।

2.5 सारांश-

इस ईकाई में आपने शुभ एवं अशुभ योगों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। शुभाशुभ ज्ञान के बिना प्रायः लोग कार्य का आरम्भ नही करते क्योकि प्रत्येक कार्य का आरम्भ करने वाला यह भली भांति सोचता है कि कार्य निर्विघ्नता पूर्वक सम्पन्न होना चाहिये। सम्पन्नता के साथ - साथ निश्चित उद्देश्य को भी प्राप्त करने में वह कार्य सफलता प्रदान करे। इस ईकाई में शुभ या अशुभ का विचार करने के लिये सबसे पहले तिथियों को केन्द्र विन्दु मानकर विचार किया गया। इसके अनुसार सम्पूर्ण तिथियों के पांच भागों में बांटा गया है जिन्हें नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता एवं पूर्णा के नाम से जाना जाता है। नन्दा में प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी तिथियां, भद्रा में द्वितीया, सप्तमी एवं द्वादशी तिथियां, जया में तृतीया, अष्टमी एवं त्रयोदशी तिथियां, रिक्ता में चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथियां तथा पूर्णा में पंचमी, दशमी एवं अमावास्या या पूर्णिमा तिथियां आती है। प्रत्येक पक्ष में ये नन्दादि तिथियां तीन

बार आती है। उसी को व्यक्त करते हुये कहा गया है कि शुक्ल पक्ष में प्रथम नन्दा इत्यादि तिथियां अशुभ, द्वितीय नन्दा इत्यादि तिथियां मध्य एवं तृतीय नन्दा इत्यादि तिथियां शुभ होती है। उसी प्रकार कृष्ण पक्ष में प्रथम नन्दा इत्यादि तिथियां शुभ, द्वितीय नन्दा इत्यादि तिथियां मध्य एवं तृतीय नन्दा आदि तिथियां अशुभ होती है।

शुक्रवार को नन्दा तिथि यानी प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी, बुधवार को भद्रा यानी द्वितीया, सप्तमी एवं द्वादशी तिथि, भौमवार को जया यानी तृतीया, अष्टमी एवं त्रयोदशी तिथि, शनिवार को रिक्ता यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथि तथा गुरुवार को पंचमी, दशमी, अमावास्या या पूर्णिमा तिथि सिद्ध योग प्रदान करती है अर्थात् इसमें कार्य का आरम्भ कार्य को सिद्धि दिलाने वाला होता है।

उसके बाद तिथियों और वारों के संयोग से शुभ एवं अशुभ का विचार करते हुये कहा गया है कि रविवार को नन्दा यानी प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी तिथियां हो, सोमवार को भद्रा यानी द्वितीया, सप्तमी एवं द्वादशी तिथियां हो, भौमवार को नन्दा यानी प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी तिथियां हो, बुधवार को जया यानी तृतीया, अष्टमी एवं त्रयोदशी तिथियां हों, गुरुवार को रिक्ता यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथियां हों, शुक्रवार को भद्रा यानीं द्वितीया, सप्तमी एवं द्वादशी तिथियां हो और शनिवार को पूर्णा यानी पंचमी, दशमी एवं अमावास्या या पूर्णिमा तिथियां आती हो तो मृत योग बन जाता है।

फिर तिथि, वार, नक्षत्रादि का विचार करते हुये कहा गया है कि पंचमी तिथि में रविवार और हस्त नक्षत्र हो, सप्तमी तिथि में भौमवार और अश्विनी नक्षत्र हो, षष्ठी में सोमवार एवं मृगशिरा नक्षत्र हो, अष्टमी में बुधवार और अनुराधा नक्षत्र हो, दशमी में शुक्रवार एवं रेवती नक्षत्र हो, नवमी में गुरुवार एवं पुष्य नक्षत्र हो और एकादशी में शनिवार एवं रोहिणी नक्षत्र हो तो इन्हें समस्त शुभ कार्यो में त्याग कर देना चाहिये। इसी प्रकार परिहार सहित विविध योगों का वर्णन करते हुये भद्रा का विचार एवं परिहार भी प्रस्तुत किया गया जो तत्संबंधी ज्ञान के लिये आवश्यक ही नही अपितु अपरिहार्य है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

विष्टि- भद्रा, सित पक्ष - शुक्ल पक्ष, असित पक्ष- कृष्ण पक्ष, शस्त-शुभ, सम- समान, मध्य- मध्यम , सर्व- सभी, पूर्वार्ध- पहले का आधा भाग, उत्तरार्ध- बाद वाला आधा भाग, सितवार- शुक्रवार, ज्ञवार- बुधवार, अर्किवार- शनिवार, याम्य- भरणी, त्वाष्ट्र- चित्रा, वैश्वदेव-उत्तराषाढ़ा, अर्यमा- उत्तराफाल्गुनि, अन्त्यर्क्ष- रेवती, गतर्क्ष- गत नक्षत्र, ख- शून्य, रद- दांत, भूत तिथि- चतुर्दशी, विधु- चन्द्रमा, क्षय- क्षीण, विधुक्षय तिथि- अमावास्या, पल- मांस, क्षुर- क्षुरा, रति- प्रेम, विश्वतिथि- त्रयोदशी तिथि, दश तिथि- दशमी तिथि, द्वि तिथि- द्वितीया तिथि , धात्री फल- ऑवला, अमा-

अमावास्या, अद्रि- सात, गो तिथि- नवमी तिथि, सूर्या तिथि- द्वादशी तिथि, ईश तिथि- एकादशी तिथि, अग्नि तिथि- तृतीया तिथि, रस तिथि- षष्ठी तिथि, नन्दा तिथि- नवमी तिथि, वेद तिथि- चतुर्थी तिथि, अंग तिथि- षष्ठी तिथि, अश्वि तिथि- द्वितीया तिथि, गज तिथि- अष्टमी तिथि, अंक तिथि- नवमी तिथि, शैलतिथि-सप्तमी तिथि, उरग तिथि- अष्टमी तिथि, दिशि तिथि- नवमी तिथि, शिव तिथि- आर्द्रा तिथि, वन्हि तिथि- कृत्तिका, ब्राह्म- रोहिणी, कर नक्षत्र- हस्त नक्षत्र, अर्क- सूर्य, चन्द्र तिथि- प्रतिपदा तिथि, दृश तिथि- द्वितीया तिथि, नभसि मास- श्रावण मास, अनल तिथि- तृतीया तिथि, नेत्र तिथि- द्वितीया तिथि, माधव मास- वैशाख मास, शर तिथि- पंचमी तिथि, इष मास- आश्विन मास, शिवा तिथि- एकादशी तिथि, मार्ग मास- मार्गशीर्ष मास, नाग तिथि- अष्टमी तिथि, मधु मास- चैत्र मास, उर्ज्जा मास- कार्तिक मास, शुक्र मास- ज्येष्ठ मास, तपस्य- फाल्गुन मास, तपस मास- माघ मास, अब्धि तिथि- चतुर्थी तिथि, सार्प नक्षत्र- आश्लेषा नक्षत्र, पितृभं- मघा नक्षत्र, राक्षस नक्षत्र- मूल नक्षत्र, कदा नक्षत्र- रोहिणी, स्रभ नक्षत्र- अश्विनी, वायू नक्षत्र- स्वाती नक्षत्र, इज्य नक्षत्र- पुष्य नक्षत्र, भग नक्षत्र- पूर्वा फाल्गुनि, वासव नक्षत्र- धनिष्ठा, श्रुति नक्षत्र- श्रवण नक्षत्र, पाशी नक्षत्र- शतभिषा, पौष्ण नक्षत्र- रेवती नक्षत्र, अजपाद् नक्षत्र- पूर्वा भाद्रपदा नक्षत्र, द्वीश नक्षत्र- विशाखा नक्षत्र, यम नक्षत्र- भरणी नक्षत्र, इन्द्रभ-ज्येष्ठा, घट लग्न- कुम्भ लग्न, झष लग्न- मीन लग्न, अलि लग्न- वृश्चिक लग्न, मृगेन्द्र लग्न- सिंह लग्न, नक्र लग्न- मकर लग्न, अंगना लग्न- कन्या लग्न।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-ख, 6-क, 7-ख, 8-ग, 9-घ, 10-ग।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 2

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-ख, 6-घ, 7-घ, 8-घ, 9-ख, 10-घ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 3

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 4

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ग, 7-ग, 8-ख, 9-क, 10-ग।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 5

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-घ, 10-ग।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 6

1-ग, 2-क, 3-ख, 4-ग, 5-क, 6-ख, 7-ग 8-क, 9-क, 10-क।

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मुहूर्त्त चिन्तामणिः।

2-विद्यापीठ पंचांग।

3- फलदीपिका

4- अवकहड़ा चक्र।

5- संस्कार-भास्करः । वीणा टीका सहिता।

6- मनोभिलषितव्रतानुवर्णनम्- भारतीय व्रत एवं अनुष्ठान।

7- संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

2.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- स्मृति कौस्तुभः।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।

3- जातकालंकार।

4- याज्ञवल्क्य स्मृतिः।

5- संस्कार- विधानम्।

2.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1-नन्दा आदि तिथियों की संज्ञा बतलाइये।

2- वारों से मृत योग का विचार बतलाइये।

3- दग्ध योग का परिचय दीजिये।

4- क्रकच योग का परिचय दीजिये।

5- करणों का परिचय दीजिये।

6- विष योग का विचार लिखिये।

7- हुताशन योग लिखिये।

8- यमघण्ट योग को लिखिये।

9- सर्वार्थ सिद्धि योग को लिखिये।

इकाई – 3 जातकर्म, नामकरण एवं अन्नप्राशन मुहूर्त्त

इकाई संरचना

3.1 प्रस्तावना

इस इकाई में जातकर्म संस्कार, नामकरण संस्कार एवं अन्नप्राशन संस्कार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। जन्मोत्तर संस्कारों में प्रथम संस्कार जातकर्म संस्कार। यह संस्कार जातक के उत्पन्न होने के बाद संपन्न किया जाता है। उसके बाद के संस्कारों में से नामकरण, अन्नप्राशनादि संस्कार कराये जाते है। इन संस्कारों का ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

प्राचीन काल में ऋषियों एवं महर्षियों द्वारा एक ऐसा अनूठा प्रयोग किया गया जिसमें मानव को मानव बनाने की प्रक्रिया का चिन्तन एवं मनन किया गया। मानवता से व्यक्ति जब-जब जितना दूर होता है समाज में अत्याचार, अनाचार, पापाचार आदि कृत्य बढ़ते हैं जिससे समाज एवं राष्ट्र का ह्रास होने लगता है। इसलिये आवश्यक है कि समाज में सांस्कारिक लोगों की अभिवृद्धि हो। यह आवश्यक नही कि पढ़ा लिखा सुशिक्षित व्यक्ति गलत नही करेगा लेकिन यह जरूर आवश्यक है कि एक सुसंस्कारित व्यक्ति असदाचरण नही करेगा। आज लोगों का चारित्रिक पतन हो रहा है। इसके कारण नैतिकता निर्बल होती जा रही है। व्यक्ति के चारित्रिक बल को जीवन्त कर नैतिकता को विकसित करने का काम संस्कार करते हैं। इन संस्कारों की नीव जो गर्भाधान से रखी जाती है का पल्लवन जातकर्मादि संस्कारों से प्रारम्भ हो जाता है इसलिये इनका ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

इस इकाई के अध्ययन से आप जातकर्म संस्कार, नामकरण संस्कार एवं अन्नप्राशन संस्कार का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

3.2 उद्देश्य

आप जातकर्म, नामकरण एवं अन्नप्राशन संस्कार के सम्पादन की आवश्यकता को समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते है।

1. सांस्कारिक ज्ञान को लोकोपकारक बनाना।
2. जातकर्म संस्कार का शास्त्रीय विधि से प्रतिपादन।

3. नामकरण संस्कार का शास्त्रीय विधि से सम्पादन।
4. अन्नप्राशन संस्कार वर्णन सहित संस्कार सम्पादन में भ्रान्तियों को दूर करना।
5. प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
6. लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
7. समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

3.3 जातकर्म, नामकरण एवं अन्नप्राशन संस्कारों का परिचय एवं महत्त्व

महर्षि आश्वलायन के अनुसार विवाह, गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, चूड़ाकरण, अन्नप्राशन, उपनयन, समावर्तन एवं अन्त्येष्टि ये ग्यारह संस्कार होते हैं। वैखानस ने ऋतुसंगमन, गर्भाधान, सीमन्त, विष्णबलि, जातकर्म, उत्थान, नामकरण, अन्नप्राश्न, प्रवासगमन, पिण्डवर्धन, चौलक, उपनयन, पारायण, व्रतबन्धविसर्ग, उपाकर्म, उत्सर्जन, समावर्तन, पाणिग्रहण इन अठ्ठारह संस्कारों को बतलाया है। पारस्कर ने विवाह, गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन, केशान्त , समावर्तन एवं अन्त्येष्टि इन तेरह संस्कारों की बात स्वीकार की है। बौधायन गृह्यसूत्र में विवाह, गर्भाधान, सीमन्तोन्नयन, पुंसवन, जातकर्म, नामकरण, उपनिष्क्रमण, अन्नप्राश्न, चूड़ाकरण, कर्णवेध, उपनयन, समावर्तन, पितृमेध इन तेरह संस्कारों का वर्णन किया है। इस प्रकार हम देखते है कि समस्त आचार्यों के अनुसार जातकर्म संस्कार, नामकरण संस्कार एवं अन्नप्राशन संस्कारों का वर्णन अवश्य किया गया है। यहां हम इन तीनों संस्कारों के पृथक्-पृथक् स्वरूपों की चर्चा करेगें जिससे संबंधित विषय का ज्ञान प्रगाढ़ हो सकेगा।

3.3.1 जातकर्म संस्कार का परिचय एवं महत्त्व-

जातकर्म संस्कार का प्रयोजन व्यक्त करते हुये महर्षि भृगु ने कहा है-

जातकर्मक्रियां कुर्यात् पुत्रायुः श्रीविवृद्धये।
ग्रहदोष विनाशाय सूतिका अशुभविच्छिदे।
कुमार ग्रहनाशाय पुंसां सत्वविवृद्धये।।

इसका अर्थ स्पष्ट करते हुये कहा गया है कि पुत्र की आयु एवं श्री की वृद्धि के लिये जातकर्म संस्कार की क्रिया करनी चाहिये। ग्रहों से संबंधी दोषों के विनाश के लिये , सूतिका के अशुभ के विनाश हेतु

तथा कुमार के ग्रह नाश एवं पुंसत्व की वृद्धि के लिये जातकर्म संस्कार करने चाहिये। सूतिका का मतलब सद्यः प्रसूता है।

इसमें बच्चे को घी एवं शहद चटाने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। इसका विधान गृह्यसूत्रों में मिलता है। कारण बतलाते हुये संस्कार एवं शान्ति का रहस्य नामक ग्रन्थ में लिखा गया है कि जब बच्चा मॉ के पेट में रहता है उसकी आखों में एक प्रकार का मल पदार्थ जमा रहता है जिसे चिकित्सकीय भाषा में मैकोनियम कहा गया है। डॉक्टर लोग इसे निकलवाने के लिये अरण्डी के तेल का प्रयोग करते हैं लेकिन वह स्वाद में तीखा होने के कारण बच्चे द्वारा सुगमता से ग्रहण नही किया जाता। वहीं पर घी एवं मधु स्वाद में भी ग्राह्य होता है। चरक संहिता के अनुसार घी एवं मधु में प्रभूत गुण बतलाये गये हैं। घी एवं मधु के प्रयोग से मैकोनियम भी बाहर आता है। घी एवं मधु का प्राशन स्वर्ण शलाका से कराने का विधान मिलता है आचार्य सुश्रुत इसके साथ स्वर्ण भस्म भी मिलाने की बात करते हैं। लिखते हैं- जातकर्मणि कृते मधुसर्पिः अनन्तचूर्णम् अंगुल्या अनामिकया लेहयेत्। अर्थात् अनामिका अंगुलि से मधु, घृत एवं सुवर्ण बालक को चटाना चाहिये। सुवर्ण खाने वाले के अंग में विष ऐसे ही प्रभाव नही करता है जैसे पानी में रहते हुये भी कमल के पत्र पर पानी का प्रभाव नही होता है।

बच्चे की रक्षा हेतु उसका प्रथम आहार उसकी मां के दूध में होता है इसलिये स्तन पान कराना अति आवश्यक बतलाया गया है। चिकित्सकीय भाषा में मां के प्रथम दुग्ध को कोलोस्ट्रम कहा जाता है। यह बच्चे के पोषण में तो बहुत फायदा नही करता है लेकिन इसे पीकर तथा घी शहद चाटकर उसकी ऑते साफ हो जाती है। इसमें आयुष्यवर्द्धन कर्म भी किया जाता है। आयुष्यवर्द्धन कर्म का मतलब है आयु को बढ़ाने वाला कर्म। इसमें जातक का पिता शिशु के नाभि या दक्षिण कर्ण के यहां इसका उच्चारण करे कि अग्नि बनस्पतियां सब तुम्हे आयुष्यमान बनावें। इस अवसर पर जातक के जन्म के छठें दिन षष्ठी महोत्सव करने का विधान है। इसमें काष्ठ पीठ पर स्कन्द एवं प्रद्युम्न को स्थापित कर पूजन करने का विधान है। दश दिन तक सूतक लगने के कारण पूजन का तो निषेध मिलता है परन्तु इस अवसर पर गाय का घी, सरसों, निम्ब पत्र इत्यादि से सूतिका के समीप धूप देने का विधान भी मिलता है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार इस अवसर पर सूतिका के घर में अग्नि, जल, यष्टि, दीपक, शस्त्र, दण्ड और सरसों के बीज रखे जाते है। आपस्तम्ब गृह्यसूत्र में आता है कि इस अवसर पर माता के घर में तुर्यन्ति का पौधा रखना चाहिये। शांखायन गृह्य सूत्र में आता है कि धान के कणों एवं सरसों के बीजों से आहुति देना चाहिये। ये सभी कार्य सूतिकाग्नि में सम्पन्न किये जाने चाहिये। दशवें दिन माता एवं शिशु की शुद्धि के साथ ही इस अग्नि को शान्त कर देना चाहिये तथा आगे के समस्त कार्य गृह्याग्नि में सम्पन्न होन चाहिये। सूतिकाग्नि का मतलब सूतक की अग्नि से है।

इस प्रकार आप जातकर्म संस्कार के बारे में अच्छी तरह से जान गये होगें। इस ज्ञान को और पुष्ट

करने के लिये नीचे कुछ प्रश्न दिये जा रहे है जो इस प्रकार है-

अभ्यास प्रश्न- 1

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- जातक के जन्म के दश दिन के अन्दर माता के पास रखी जाने वाली अग्नि का नाम है-

क- सूतिकाग्नि, ख- गृह्याग्नि, ग- वेदाग्नि, घ- शाखाग्नि।

प्रश्न 2- आपस्तम्ब गृह्य सूत्र में माता के पास कौन सा पौधा रखने का विधान पाया जाता है?

क- कदम्ब, ख- तुर्यन्ति, ग- शमी, घ- कमल।

प्रश्न 3- आयुष्यवर्द्धन कर्म का मतलब है-

क- आयु को बहा ले जाने वाला, ख- आयु को हटाने वाला,

ग- आयु को बढ़ाने वाला, घ- आयु को घटाने वाला।

प्रश्न 4- शिशु जन्म का सूतक कितने दिनों तक रहता है ?

क- सात दिनों तक, ख- आठ दिनों तक, ग- नौ दिनों तक, घ- दश दिनों तक।

प्रश्न 5- जातकर्म संस्कार से क्या बढ़ता है ?

क- श्री, ख- चक्षु, ग- पिता, घ- माता।

प्रश्न 6- गर्भ में शिशु के ऑखों में क्या जम जाता है?

क- मैगनीशियम, ख- मैकोनियम, ग-मैगनीज, घ- कैल्शियम।

प्रश्न 7- सूतिका का मतलब है-

क- गर्भिणी, ख- नवविवाहिता, ग- सद्यः प्रसूता, घ- बहुपुत्रवती।

प्रश्न 8- मधु एवं घृत किस अंगुलि से चटाने का विधान है?

क- अगूंठे से, ख- तर्जनी से, ग- मध्यमा से, घ- अनामिका से।

प्रश्न 9- मॉ के पहले दूध में क्या पाया जाता है?

क- सोडियम, ख- पोटैशियम, ग- मैंगनीशियम घ- कोलोस्ट्रम।

प्रश्न 10- आचार्य सुश्रुत ने घी एवं मधु के साथ क्या खाने को कहा है?

क- सुवर्ण भस्म, ख- लौह भस्म, ग- लवण भस्म, घ- चूर्णभस्म।

3.3.2 नामकरण संस्कार का परिचय एवं महत्त्व-

नामकरण संस्कार एक ऐसा संस्कार है जिसमें दिया गया नाम न केवल उस व्यक्ति के जीवन पर्यन्त

अपितु अनेक पीढ़ियों तक व्याप्त रहता है। इस उक्ति में उसका महत्त्व इस प्रकार दर्शाया गया है-

नामाखिलस्य व्यवहारहेतुः शुभावहं कर्मसु भाग्यहेतुः।

नाम्नैव कीर्तिं लभते मनुष्यः ततः प्रशस्तं खलु नाम कर्म।

यह उक्ति यह बतलाती है कि नाम अखिल व्यवहार का हेतु है। वह शुभावह कर्मों में भाग्य का हेतु है। नाम से ही मनुष्य कीर्ति प्राप्त करता है। अतः नामकरण अत्यन्त प्रशस्त कर्म है। नामकरण की परम्परा अत्यन्त प्राचीन परम्परा है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार दो नाम ग्रहण करने की परम्परा थी जिसमें एक नाम प्रचलित तथा दूसरा नाम मातृक तथा पैतृक होता था। पारस्करगृह्यसूत्र में नाम का स्पष्ट संकेत मिलता है लेकिन इसमें नामाक्षरों को लेकर प्रतिबन्ध लगाया गया है। आचार्य वसिष्ठ नामाक्षर संख्या को दो अथवा चार में सीमित कर देते हैं। आश्वलायन गृह्यसूत्र में नामकरण के सन्दर्भ में अक्षरों की संख्या का निर्धारण गुणों के आधार पर बतलाया गया है। जैसे प्रतिष्ठा एवं कीर्ति के लिये इच्छुक व्यक्ति के लिये दो अक्षरों का नाम, ब्रह्म वर्चस् की कामना के लिये चार अक्षरों वाले नाम या बालकों के लिये सम अक्षरों वाले नाम रखने चाहिये। मनु के अनुसार ब्राह्मण का नाम मंगल सूचक, क्षत्रिय के लिये बल सूचक, वैश्य के लिये धन सूचक तथा अन्य के लिये जुगुप्सित सूचक नाम रखने का विधान है। नाम को चार प्रकारों में बॉटा गया है-

इनको 1-कुलदेवताभक्त नाम, 2-मास नाम, 3- नक्षत्र नाम, 4-व्यवहार नाम के रूप में जाना जाता है। कुल देवता के अनुसार नाम रखना कुल देवता भक्त नाम कहलाता है। वीरमित्रोदय में कुल देवता का अर्थ कुल के पूज्य देवता या उनसे संबंधित देवता के रूप में किया है। दूसरा नाम मास देवता का है। इसमें प्रत्येक महीने के देवता बतलाये गये है। उन्ही के नाम पर जातक का नाम निर्धारित किया जाता है। गार्ग्य के अनुसार मार्गशीर्ष मास से क्रमशः इन नामों को जानना चाहिये। जैसे मार्गशीर्ष में मास नाम कृष्ण दिया गया है। पौष में मास नाम अनन्त दिया गया है। माघ में मास नाम अच्युत दिया गया है। फाल्गुन में मास नाम चक्री दिया गया है। चैत्र में मास नाम वैकुण्ठ दिया गया है। वैशाख में मास नाम जनार्दन दिया गया है। ज्येष्ठ में मास नाम उपेन्द्र दिया गया है। आषाढ़ में मास नाम यज्ञपुरुष दिया गया है। श्रावण में मास नाम वासुदेव दिया गया है। भाद्रपद में मास नाम हरि दिया गया है। आश्विन में मास नाम योगीश दिया गया है। कार्तिक में मास नाम पुण्डरीकाक्ष दिया गया है।

तीसरा नाम नक्षत्र देवता का है। अश्विनी नक्षत्र के देवता नाम आश्विन है। भरणी नक्षत्र के देवता नाम यम है। कृत्तिका नक्षत्र के देवता नाम अग्नि है। रोहिणी नक्षत्र के देवता नाम प्रजापति है। मृगशिरा नक्षत्र के देवता नाम सोम है। आर्द्रा नक्षत्र के देवता नाम रुद्र है। पुनर्वसु नक्षत्र के देवता नाम अदिति है। पुष्य नक्षत्र के देवता नाम वृहस्पति है। आश्लेषा नक्षत्र के देवता नाम सर्प है। मघा नक्षत्र के देवता नाम पितृ है। पूर्वा फाल्गुनि नक्षत्र के देवता नाम भग है। उत्तराफाल्गुनि नक्षत्र के देवता नाम अर्यमा है।

हस्त नक्षत्र के देवता नाम सवितृ है। चित्रा नक्षत्र के देवता नाम त्वष्टा है। स्वाती नक्षत्र के देवता नाम वायु है। विशाखा नक्षत्र के देवता नाम इन्द्राग्नि है। अनुराधा नक्षत्र के देवता नाम मित्र है। ज्येष्ठा नक्षत्र के देवता नाम इन्द्र है। मूल नक्षत्र के देवता नाम निर्ऋति है। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र के देवता नाम आप है। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के देवता नाम विश्वेदेव है। श्रवण नक्षत्र के देवता नाम विष्णु है। धनिष्ठा नक्षत्र के देवता नाम वसु है। शतभिषा नक्षत्र के देवता नाम वरुण है। पूर्वा भाद्रपदा नक्षत्र के देवता नाम अजैकपाद है। उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र के देवता नाम अहिर्बुध्न्य है। रेवती नक्षत्र के देवता नाम पूषन् है।

चौथा नाम व्यवहार नाम होता है। जो लोक परम्परा में रख दिया जाता है। पुकारने की सुविधा की दृष्टि से लोग इस नाम का व्यवहार प्रारम्भ कर देते है। विशेष कर दुलार पूर्वक भी यह नाम रख दिया जाता है।

अतः आप नामकरण संस्कार के बारे में जान गये होगें और इसके महत्त्व के बारे में भी अनुभव हो गया होगा। आपके ज्ञान को और प्रगाढ़ करने के लिये नीचे कुछ प्रश्न दिये जा रहे है जो इस प्रकार है।

अभ्यास प्रश्न- 2

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-अश्विनी नक्षत्र के देवता का नाम है-

क- आश्विन, ख-यम, ग- अग्नि, घ- प्रजापति।

प्रश्न 2-भरणी नक्षत्र के देवता का नाम है-

क- आश्विन, ख-यम, ग- अग्नि, घ- प्रजापति।

प्रश्न 3-कृत्तिका नक्षत्र के देवता का नाम है-

क- आश्विन, ख-यम, ग- अग्नि, घ- प्रजापति।

प्रश्न 4-रोहिणी नक्षत्र के देवता का नाम है-

क- आश्विन, ख-यम, ग-अग्नि, घ- प्रजापति।

प्रश्न 5-मृगशिरा नक्षत्र के देवता का नाम है-

क- सोम, ख-रुद्र, ग-अदिति, घ- प्रजापति।

प्रश्न 6-आर्द्रा नक्षत्र के देवता का नाम है-

क- सोम, ख-रुद्र, ग-अदिति, घ- प्रजापति।

प्रश्न 7-पुनर्वसु नक्षत्र के देवता का नाम है-

क- सोम, ख-रुद्र, ग-अदिति, घ- प्रजापति।

प्रश्न 8-पुष्य नक्षत्र के देवता का नाम है-

क- सोम, ख-रुद्र, ग-अदिति, घ- बृहस्पति।

प्रश्न 9- ब्रह्मवर्चस् की कामना के लिये कितने अक्षरों वाला नाम रखना चाहिये ?

क- दो , ख- चार, ग- छ, घ- सात।

प्रश्न 10- शतपथ ब्राह्मण के अनुसार कितने नाम ग्रहण करने की परम्परा है?

क- आठ, ख- छ, ग-चार, घ- दो।

3.3.3 अन्नप्राशन संस्कार का परिचय एवं महत्त्व-

पारस्कर गृह्यसूत्र में कहा गया है कि षष्ठे मासि अन्नप्राशनम्। यानी अन्नप्राशन संस्कार शिशु के जन्म के छठवें महीने कराना चाहिये। अन्नप्राशन का सामान्य अर्थ है अन्न का प्राशन यानी ग्रहण। प्रथम बार जब शिशु अन्न भक्षण करता है तो उसी को अन्न प्राशन का नाम दिया गया है। वास्तविकता यह है कि जब शिशु का जन्म होता है तो उसके पास दांत नही होते हैं। उसका शरीर छोटा होने के कारण उसकी आतें भी कमजोर होती है। उसे पुष्ट होने के लिये इस प्रकार के आहार की आवश्यकता होती है जिसका पाचन आसानी से हो सके। इसकी व्यवस्था प्रकृति ने मां के स्तन से दुग्ध पान के द्वारा की है। शिशु के लिये माता का दुग्ध अत्यन्त आवश्यक होता है।

दुग्ध पान तब तक अनिवार्य है जब तक शिशु का दन्त जनन नही हुआ है। दन्त जनन होने पर अन्य स्रोतों से भी शिशु आहार ग्रहण करने लग जाता है। चिकित्सा शास्त्र के अनुसार भी पांच से छ महीने के बाद शिशु के शरीर को ठोस आहार की आवश्यकता होती है। उसके शरीर की आवश्यकता की पूर्ति अब मां के दूध से केवल नही हो पाती है। इसलिये छठें महीने में अन्नप्राशन संस्कार कराने की आवश्यकता बतलायी गयी है।

मुहूर्त्त चिन्तामणि के संस्कार प्रकरण के तेरहवें श्लोक के अनुसार लिखा गया है कि-

मासे चेत्प्रथमे भवेत्सदशनो बालो विनश्येत् स्वयम्।
हन्यात्स क्रमतोनुजातभगिनीमात्रग्रजान् द्वयादिके।
षष्ठादौ लभते हि भोगमतुलं तातात्सुखं पुष्टतां,
लक्ष्मीं सौख्यमथो जनौ सदशनो वोर्ध्वं स्वपित्रादिहा।।

अर्थात् जन्म के प्रथम मास में जन्म हो तो बालक का स्वयं विनाश होता है। दूसरे मास में दांत निकलने से उसके छोटे भाई का नाश होता है। जन्म से तीसरे महीने में दन्त जनन हो तो बहन के लिये अशुभकारी होता है। जन्म से चौथे महीने में यदि दन्त जनन होता है तो माता का नाश होता है। जन्म से पांचवें महीने में यदि दन्त जनन होता है तो बड़े भाई का नाश होता है। छठवें महीने में दन्त जनन होने से बालक अत्यन्त सुखी रहता है। सातवें महीने दन्त जनन होने से पिता से सुख प्राप्त करता है। आंठवे मास में दन्त जनन से पुष्टता की प्राप्ति होती है। नवें मास में दन्त जनन से व्यक्ति धनवान होता है। दांत सहित शिशु का जन्म हो या ऊपर की पंक्ति में दन्त जनन हो तो माता, पिता, भाई एवं स्वयं

अपना नाश करता है। अशुभ फलद दांत निकलने पर शान्ति करानी चाहिये।

पारस्कर गृह्यसूत्र में आया है कि प्राशनान्ते सर्वान् रसान् रसान्तसर्वमन्नमेकत उद्धृत्य अथैनं प्राशयेत्। अर्थात् संस्रव प्राशन के बाद मधुर आदि सभी रसों का भक्ष्य भोज्यादि सभी अन्नों को एक पात्र में उठाकर चटाना चाहिये। यहां मार्कण्डेय ऋषि का वचन है कि-

देवता पुरतस्तस्य धात्र्युत्संगतस्य च।

अलंकृतस्य दातव्यमन्नं पात्रे सकांचनम्।

मध्वाज्यदधिसंयुक्तं प्राशयेत्पायसं तु वा।

अर्थात् देवता के समक्ष अलंकृत बालक को माता की गोंद में रखकर स्वर्ण पात्र में मधु, आज्य, दधि मिश्रित कर खीर सहित चटाना चाहिये।

इस प्रकार अन्नप्राशन संस्कार क्या है तथा उसका महत्त्व क्या है इसको आपने जाना। अब हम आपके ज्ञान को और प्रौढ़ करने के लिये कुछ प्रश्न प्रस्तुत करेंगे जिसके हल करने आपकी बुद्धि में विषय परिपक्व होगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 3

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- जन्म के प्रथम मास में दन्त जनन का फल क्या होता है?

क- स्वयं शिशु का विनाश ख- अनुज का विनाश, ग- भगिनी का विनाश, घ- माता का विनाश।

प्रश्न 2- जन्म के द्वितीय मास में दन्त जनन का फल क्या होता है?

क- स्वयं शिशु का विनाश ख- अनुज का विनाश, ग- भगिनी का विनाश, घ- माता का विनाश।

प्रश्न 3- जन्म के तृतीय मास में दन्त जनन का फल क्या होता है?

क- स्वयं शिशु का विनाश ख- अनुज का विनाश, ग- भगिनी का विनाश, घ- माता का विनाश।

प्रश्न 4- जन्म के चतुर्थ मास में दन्त जनन का फल क्या होता है?

क- स्वयं शिशु का विनाश ख- अनुज का विनाश, ग- भगिनी का विनाश, घ- माता का विनाश।

प्रश्न 5- जन्म के पंचम मास में दन्त जनन का फल क्या होता है?

क- अग्रज का विनाश ख- सुख की प्राप्ति , ग- पिता से सुख, घ- पुष्टता।

प्रश्न 6- जन्म के षष्ठ मास में दन्त जनन का फल क्या होता है?

क- अग्रज का विनाश ख- सुख की प्राप्ति , ग- पिता से सुख, घ- पुष्टता।

प्रश्न 7- जन्म के सप्तम मास में दन्त जनन का फल क्या होता है?

क- अग्रज का विनाश ख- सुख की प्राप्ति , ग- पिता से सुख, घ- पुष्टता।

प्रश्न 8- जन्म के अष्टम मास में दन्त जनन का फल क्या होता है?

क- अग्रज का विनाश ख- सुख की प्राप्ति , ग- पिता से सुख, घ- पुष्टता।

प्रश्न 9 - प्राशनान्ते सर्वान् रसान् का क्या मतलब है ?

क- संस्रव प्राशन के बाद, ख- संस्रव प्राशन से पहले , ग- अन्नप्राशन के बाद, घ- अन्नप्राशन से पहले।

प्रश्न 10- पारस्कर जी ने अन्नप्राशन किस महीने में बताया है?

क- दूसरे महीने में, ख- तीसरे महीने में, ग- चौथे महीने में, घ- छठवें महीने में।

3.4 जातकर्म, नामकरण एवं अन्नप्राशन का मुहूर्त्त-

इससे पूर्व के प्रकरण में आपने जातकर्म संस्कार, नामकरण संस्कार एवं अन्नप्राशन संस्कार का परिचय एवं महत्त्व जाना। इस प्रकरण में जातकर्म संस्कार कब कराया जाना चाहिये यानी उसका मुहूर्त्त, नामकरण संस्कार का मुहूर्त्त एवं अन्नप्राशन संस्कार का मुहूर्त्त आप जानेगें। इसके ज्ञान से तत्संबंधी मुहूर्त्त के ज्ञान में आप सक्षम हो जावेगें।

3.4.1 जातकर्म संस्कार का मुहूर्त्त विचार-

मुहूर्त्तचिन्तामणि नामक ग्रन्थ में जातकर्म संस्कार के मुहूर्त्त का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि-

तज्जातकर्मादि शिशोर्विधेयं पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेन्हि।

एकादशे द्वादशके अपि घस्रे मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात्।

शिशु का जातकर्मादि संस्कार पर्व तिथियों एवं रिक्ता तिथियों को छोड़कर किया जाता है। चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा एवं रवि की संक्रान्ति को पर्व तिथियां कहा गया है। रवि की संक्रान्ति का तात्पर्य है सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना। उस दिन जो तिथि हो उस तिथि को पर्व तिथि की संज्ञा दी गयी है। चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी को रिक्ता तिथि कहा जाता है। इन तिथियों को छोड़कर अन्य तिथियों में यानी प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी एवं त्रयोदशी तिथियों में जातकर्म संस्कार कराया जाना चाहिये। आगे शुभेन्हि कहते हुये समझाया है कि शुभ दिवसों में। शुभ दिवसों के सन्दर्भ में जब हम विचार करते है तो पाते हैं कि सोमवार, बुधवार, गुरुवार एवं शुक्रवार को शुभ दिन कहा गया है। जन्म दिन से ग्यारहवे या बारहवें घस्र यानी दिन, मृदुसंज्ञक यानी मृगशिरा, रेवती, चित्रा एवं अनुराधा, ध्रुव संज्ञक यानी तीनों उत्तरा एवं रोहिणी, क्षिप्र संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी एवं पुष्य एवं चर संज्ञक यानी स्वाती, पुनर्वसु श्रवण , धनिष्ठा तथा शतभिषा इन सोलह नक्षत्रों में शिशु का जातकर्म संस्कार शुभ होता है।

आचार्य वसिष्ठ जी इस विषय में कहते है कि-

यस्मिन् मुहूर्त्ते जनितः कुमारः तस्मिन् विधेयं खलु जातकर्म।
सन्तर्प्य देवान् सपितृन्द्विजांश्च सुवर्णगोभूतिलकांस्यवस्त्रैः।।

अर्थात् जिस मुहूर्त्त में कुमार का जन्म हुआ है उसी मुहूर्त्त में जातकर्म करना चाहिये। उसमें देवताओं का तर्पण करें, पितरो एवं द्विजों का तर्पण सुवर्ण, गौ, भूमि , तिल एवं कांस्य वस्त्र से करे।

आचार्य विष्णु जी भी कहते है-

जातकर्म ततः कुर्यात् पुत्रे जाते यथोदितम्। यथोदितम् शब्द का अर्थ स्वगृहसूत्र में उक्त विधान के अनुसार करना चाहिये किया गया है। उसमें लिखा गया है कि पुत्र का जन्म सुनकर पिता को सचैल स्नान करके विधान करना चाहिये। ज्यौतिष सागर में वसिष्ठ जी लिखते हैं-

श्रुत्वा जातं पिता पुत्रं सचैलं स्नानमाचरेत्।
उत्तराभिमुखो भूत्वा नद्यां वा देवखातके।।

अर्थात् पिता पुत्र का जन्म सुनकर उत्तराभिमुख होकर नदी अथवा देव खात में सचैल यानी वस्त्र सहित स्नान का आचरण करें। यह कार्य नालच्छेदन से पूर्व ही करना चाहिये। मनु महाराज कहते हैं- प्रांक्नाभिवर्द्धनात्पुंसो जातकर्म विधीयते। अर्थात् नाभि वर्द्धन से पूर्व जातकर्म करना चाहिये। नाभि वर्द्धन का अर्थ मुहूर्त्तचिन्तामणि के मणिप्रदीपटीकाकार ने वर्द्धनं छेदनम् कहते हुये नाभि छेदन से किया है। आचार्य जैमिनी इस सन्दर्भ में अपना विचार प्रसतुत करते हुये कहते है कि-

यावन्नोच्छिद्यते नालं तावन्नाप्नोति सूतकम्। छिन्ने नाले ततः पश्चात् सूतकं तु विधीयते।।

अर्थात् जबतक शिशु का नाल छेदन नही हो जाता तब तक सूतक नही लगता है। नालच्छेदन हो जाने पर सूतक लग जाता है। इसलिये नाल छेदन के अनन्तर जन्म से दश दिन तक सूतक के समाप्ति के अनन्तर ही पूजन होना चाहिये।

अतिक्रान्त काल में भी जातकर्म संस्कार करने का विधान किया गया है। पिता देशान्तर में गया हो या राजगृहादि में निबद्ध हो तो उसके आने के बाद जातकर्म संस्कार किया जायेगा। आचार्य बैजवाप इस सन्दर्भ में लिखते हैं-

जन्मतो अनन्तरं कार्यं जातकर्म यथाविधि। दैवादतीतः कालश्चेदतीते सूतकं भवेत्।।

अर्थात् जन्म के अनन्तर जातकर्म यथाविधि से करना चाहिये। जातकर्म संस्कार के बारे में आचार्य नारद ने कहा है कि जातकर्म पितृपूजन पूर्वक होना चाहिये।

आचार्यों का मानना है कि जातकर्म संस्कार शिशु के मेधा को विकसित करने के लिये किया जाता है। इसमें विषम मात्रा में मधु एवं धी को पिता चार बार चटाता है। सुश्रुत के अनुसार घी सौन्दर्य का जनक, मेधावर्धक एवं मधुरता देने वाला, शिरोवेदना, मृगी, ज्वर, अपच एवं तिल्ली का निवारक

होता है। पाचन शक्ति, स्मृति, बुद्धि, प्रज्ञा, तेज, मधुर ध्वनि, वीर्य एवं आयु को बढ़ाने वाला है। मधु जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला, रंग रूप सुधारने वाला, बलकारक, हल्का कोमल, शरीर को मोटा न होने देने वाला, जोड़ों को जोड़ने वाला, घावों को भरने वाला एवं पित्तादि दोषों को शान्त करने वाला होता है। सुवर्ण का प्रयोग विष का विनाशक होता है।

इस प्रकार जातकर्म संस्कार के मुहूर्त्त प्रतिपादन विषय को आपने जाना। अब हम आपके ज्ञान को और प्रौढ़ करने के लिये कुछ प्रश्न प्रस्तुत करेंगे जिसके हल करने आपकी बुद्धि में विषय परिपक्व होगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 4

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- इनमें रिक्ता तिथि क्या है?

क- प्रतिपदा, ख- द्वितीया, ग- तृतीया, घ- चतुर्थी।

प्रश्न 2- इनमें पर्व तिथि क्या है?

क- प्रतिपदा, ख- द्वितीया, ग- अष्टमी, घ- चतुर्थी।

प्रश्न 3- इनमें कौन शुभ दिन नही है?

क- सोमवार, ख- कुजवार, ग- गुरुवार, घ-शुक्रवार।

प्रश्न 4- इनमें धुरव संज्ञक नक्षत्र क्या है?

क- अश्विनी, ख- भरणी, ग- कृत्तिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 5- इनमें छिप्र संज्ञक नक्षत्र क्या है?

क- अश्विनी, ख- भरणी, ग- कृत्तिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 6- इनमें मृदु संज्ञक नक्षत्र क्या है?

क- अश्विनी, ख- रेवती, ग- कृत्तिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 7- इनमें सचैल स्नान क्या है?

क- वस्त्र रहित, ख- वस्त्र सहित, ग- यथेच्छ, घ- समुद्र स्नान।

प्रश्न 8- इनमें नाभिवर्द्धन क्या है?

क- नालच्छेदन, ख-नाभि का वढ़ना, ग-नाभि का मोटा होना, घ- नाभि का छोटा होना।

प्रश्न 9- इनमें जन्म सूतक कितने दिन का होता है?

क- आठ दिन, ख- नौ दिन, ग- दश दिन, घ- ग्यारह दिन।

प्रश्न 10- जातकर्म में पिता मधु एवं घी शिशु को कितने बार चटाता है?

क- तीन बार, ख- चार बार, ग- पांच बार, घ- छ बार।

3.4.2 नामकरण संस्कार का मुहूर्त्त विचार-

नामकरण संस्कार के मुहूर्त्त का प्रतिपादन करते हुये अनेक ऋषियों ने अपने - अपने तरीके से विचार किया है। मदन रत्न में नारदीय वचन है कि-

सूतकान्ते नामकर्म विधेयं स्वकुलोचितम्।। अर्थात् सूतक के अन्त हो जाने के बाद अपनी कुल परम्परा के अनुसार नामकरण संस्कार करना चाहिये। इस सन्दर्भ में हरिहराचार्य जी कहते है कि जितने दिन का सूतक हो उतना दिन बीत जाने पर ही नामकरण संस्कार होगा। इसका मतलब जननाशौच के बाद कोई मरणाशौच आ जाय तो उस अशौच के बीत जाने पर ही नामकरण किया जायेगा। सूत्रकारों का वचन है कि जन्म से ग्यारहवें दिन नामकरण करना चाहिये। गोभिलगृह्यसूत्र कहता है कि-

दशरात्रे व्युष्टे नामकरणमिति

अर्थात् दश रात्रि बीत जाने पर ही नामकरण करना चाहिये। मदन रत्न में वर्णन मिलता है कि-

द्वादशे दशमे वापि जन्मतो पि त्रयोदशी।
षोडशे विंशतौ चैव द्वाविंशवर्णतः क्रमात्।।

अर्थात् नामकरण जन्म से दशवें , बारहवें, तेरहवें, सोलहवें, बीसवें या बाइसवें दिन किया जा सकता है। कारिका में कहा गया है कि-

एकादशे द्वादशे वा मासे पूर्वो अथवा परे।
अष्टादशे अहनि तथा पदन्त्यन्ये मनीषिणः।
शतरात्रे व्यतीते वा पूर्णे संवत्सरे अथवा।।

अर्थात् ग्यारहवें, बारहवें दिन या महीना पूर्ण होने पर सौवें दिन अथवा एक वर्ष पर नामकरण कराया जा सकता है। ज्योर्तिनिबन्ध में आचार्य गर्ग जी का मत है कि-

अमा संक्रान्ति विष्ट्यादौ प्राप्तकाले पि नाचरेत्।

अर्थात् अमावास्या, संक्रान्ति, भद्रा के होने पर काल प्राप्त होने पर भी नामकरण नही करना चाहिये। सार संग्रह में वर्ण के अनुसार नामकरण करने का विचार दिया गया है।

एकादशे अन्हि विप्राणां क्षत्रियाणां त्रयोदशे।
वैश्यानां षोडशे नाम मासान्ते शूद्रजन्मनाम्।।

अर्थात् ग्यारहवें दिन विप्रों का, तेरहवें दिन क्षत्रियों का, सोलहवें दिन वैश्यों का, एवं एक मास में तदेतरों का नामकरण करना चाहिये। नामकरण के सन्दर्भ में महर्षि कश्यप का विचार निम्नलिखित है-

उक्तकाले प्रकर्त्तव्या द्विजानामखिला क्रिया।
अतीतेषु च कालेषु कर्त्तव्याश्चोत्तरायणे।
सुरेज्ये अप्यसुरेज्ये वा नास्तगे न च वार्द्धके।
शुभलग्ने शुभांशे च शुभे अन्हि शुभवासरे।
चन्द्रताराबलोपेतो नैधनोदये वर्जिते।
पूर्वान्हे क्षिप्रनक्षत्रचरस्थिरमृदूडुषु।
नाममंगलघोषैश्च रहस्य दक्षिणश्रुतौ।

अर्थात् कालातीत हो जाने पर उत्तरायण में, गुरु, शुक्र के बाल, वृद्ध व अस्त न रहते हुये, शुभ लग्न एवं शुभ नवांश में, शुभ दिनों में, चन्द्र व तारा बलवान हो तब पूर्वान्ह में छिप्र, चार, स्थिर एवं मृदु संज्ञक नक्षत्रों में नामकरण बालक के दक्षिण कान में करना चाहिये।

नामकरण संस्कार कब करना चाहिये इस सन्दर्भ में आचार्यों का कथन है कि-

पूर्वान्हे श्रेष्ठ इत्युक्तौ मध्यान्हौ मध्यमः स्मृतः।
अपरान्हं च रात्रिं च वर्जयेन्नामकर्मणि।।

पूर्वान्ह में नामकरण श्रेष्ठ होता है, मध्यान्ह में मध्यम होता है, अपरान्ह एवं रात्रि में नामकरण वर्जित किया है। दिन का विचार करते हुये बतलाया गया है कि रवि, भौम को छोड़कर धन, कर्म, सुत, भ्रातृ एवं नवमस्थ चन्द्रमा हो तो शुभ होता है।

नामकरण संस्कार में जन्म के दश दिन बाद शिशु को सूतिका गृह से बाहर लाये। फिर तीन ब्राह्मणों को भोजन कराने के बाद शिशु का नामकरण संस्कार करे। पारस्काराचार्य जी के अनुसार बच्चे का नाम दो या चार अक्षरों का होना चाहिये। उसका पहला अक्षर घोष हो , मध्य में अन्तस्थ वर्ण और अन्त में दीर्घ या कृदन्त या तद्धितान्त होना चाहिये। कन्या के नामकरण में विषम वर्ण तीन, पांच या सात अक्षर होना चाहिये।

नामकर्म संस्कार के मुहूर्त्त का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि-

तज्जातकर्मादि शिशोर्विधेयं पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेन्हि।
एकादशे द्वादशके अपि घस्रे मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात्।

शिशु का नामकरण संस्कार पर्व तिथियों एवं रिक्ता तिथियों को छोड़कर किया जाता है। चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा एवं रवि की संक्रान्ति को पर्व तिथियां कहा गया है। रवि की संक्रान्ति का तात्पर्य है सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना। उस दिन जो तिथि हो उस तिथि को पर्व

तिथि की संज्ञा दी गयी है। चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी को रिक्ता तिथि कहा जाता है। इन तिथियों को छोड़कर अन्य तिथियों में यानी प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी एवं त्रयोदशी तिथियों में नामकरण संस्कार कराया जाना चाहिये। आगे शुभेन्हि कहते हुये समझाया है कि शुभ दिवसों में। शुभ दिवसों के सन्दर्भ में जब हम विचार करते है तो पाते हैं कि सोमवार, बुधवार, गुरुवार एवं शुक्रवार को शुभ दिन कहा गया है। जन्म दिन से ग्यारहवे या बारहवें घस्र यानी दिन, मृदुसंज्ञक यानी मृगशिरा, रेवती, चित्रा एवं अनुराधा, ध्रुव संज्ञक यानी तीनो उत्तरा एवं रोहिणी, क्षिप्र संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी एवं पुष्य एवं चर संज्ञक यानी स्वाती, पुनर्वसु , श्रवण, धनिष्ठा तथा शतभिषा इन सोलह नक्षत्रों में शिशु का नामकर्म संस्कार शुभ होता है।

इस प्रकार नामकरण संस्कार के मुहूर्त्त प्रतिपादन विषय को आपने जाना। अब हम आपके ज्ञान को और प्रौढ़ करने के लिये कुछ प्रश्न प्रस्तुत करेंगे जिसके हल करने आपकी बुद्धि में विषय परिपक्व होगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 5

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- इनमें नामकरण किस कर्ण में करना चाहिये?

क- दक्षिण कर्ण, ख- वाम कर्ण, ग- यथेच्छ, घ- निश्चित नियम नही।

प्रश्न 2- इनमें नामकरण कब श्रेष्ठ है?

क- पूर्वान्ह, ख- मध्यान्ह, ग- अपरान्ह, घ- सायान्ह।

प्रश्न 3- इनमें नामकरण में पहला वर्ण क्या होना चाहिये है?

क- कृदन्त, ख- अन्तस्थ, ग- घोष, घ- तद्धितान्त।

प्रश्न 4- इनमें नामकरण में मध्य वर्ण क्या होना चाहिये है?

क- कृदन्त, ख- अन्तस्थ, ग- घोष, घ- तद्धितान्त।

प्रश्न 5- इनमें नामकरण में अन्त्य वर्ण क्या होना चाहिये है?

क- कृदन्त, ख- अन्तस्थ, ग- घोष, घ- कुछ भी।

प्रश्न 6- इनमें कन्या के नामकरण में कितने वर्ण होने चाहिये ?

क- तीन, ख- चार, ग- छः, घ-आठ।

प्रश्न 7- इनमें पुरुष के नामकरण में कितने वर्ण होने चाहिये ?

क- तीन, ख- चार, ग- पांच, घ-सात।

प्रश्न 8- इनमें नामकरण में चन्द्रमा कहां होना चाहिये ?

क- दूसरे स्थान में, ख- छठे स्थान में, ग- बारहवें सथान में , घ-आठवें स्थान में।

प्रश्न 9- क्या कन्या का नामकरण अमावास्या को कराना चाहिये ?

क- हां, ख- नही, ग- पता नही, घ- सम्भव है।

प्रश्न 10- इनमें संक्रान्ति का मतलब सूर्य का कहां जाना है ?

क- दूसरे लग्न में जाना, ख- दूसरे योग में जाना, ग- दूसरे नक्षत्र में जाना, घ- दूसरे राशि में जाना।

3.4.3 अन्नप्राशन मुहूर्त्त का विचार-

अन्नप्राशन संस्कार के मुहूर्त्त का विचार करते हुये मूहुर्त्तचिन्तामणि में कहा गया है कि-

रिक्तानन्दाष्टदर्शं हरिदिवसमथो सौरिभौमार्कवारान्,
ल्लग्नं जन्माष्टमगृहलवगं मीनमेषालिकं च।
हत्वा षष्ठात्समे मास्यथ हि मृगदृशां पंचमादोजमासे।
नक्षत्रैः स्यात्स्थिराख्यैः समृदुलघुचरैर्बालकान्नाशनं सत्।

अर्थात् रिक्ता तिथि यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी, नन्दा तिथि यानी प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी, अष्टमी, दर्श यानी अमावास्या, हरि दिवस यानी द्वादशी, तिथियों को छोड़कर, सौरि यानी शनिवार, भौमवार एवं सूर्यवारों को छोड़कर, जन्मराशि एवं जन्मलग्न से आठवीं राशि के लग्न एवं नवमांश तथा मीन, मेष एवं वृश्चिक लग्न को छोड़कर, छठवें महीने से सम मासों में एवं कन्याओं को विषम मासों में, स्थिर संज्ञक, मृदुसंज्ञक, लघु संज्ञक एवं चर संज्ञक इन सोलह नक्षत्रों में अन्नप्राशन उत्तम है। स्थिर संज्ञक नक्षत्र में तीनों उत्तरा एवं रोहिणी लिया गया है। मृदुसंज्ञक नक्षत्रों में मृगशिरा, रेवती, चित्रा एवं अनुराधा को स्वीकार किया गया है। लघु संज्ञक में हस्त, अश्विनी एवं पुष्य को स्वीकार किया गया है। चर संज्ञक में स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा इन सोलह नक्षत्रों में अन्नप्राशन उत्तम माना गया है।

विशेष विचार करते हुये बतलाया गया है कि-

गर्भाधानान्नप्राशेषु न गुरुसितयोर्बाल्यवार्धेन मौढ्यम्।
जह्यात् कालस्य रोधाद्धरिगुरुमयनं याम्यमूनाधिमासौ।।

अर्थात् गर्भाधान से अन्नप्राशन का समय निश्चित होने के कारण गुरु- शुक्र का अस्त, बाल्य और वृद्धत्व, सिंह के बृहस्पति, याम्यायन, न्यूनमास , अधिकमास का त्याग नही करना चाहिये।

मुहूर्त्त के ग्रन्थों के अनुसार क्षीण चन्द्रमा, पूर्ण चन्द्रमा, गुरु, बुध, भौम, सूर्य, शनि, शुक्र ये यदि अन्नप्राशनकालिक लग्न से 9, 5, 12, 1, 4, 7, 10, 8 स्थानों में से किसी स्थान में हो तो शिशु क्रम

से भिक्षा का अन्न खानेवाला, यज्ञ करने वाला, दीर्घजीवी, ज्ञानी, पित्तरोगी, कुष्ठी, अन्न के क्लेश युक्त, वातरोगी एवं भोगों को भोगनेवाला होता है। अर्थात् उक्त स्थानों में से किसी स्थान में क्षीण चन्द्रमा हो तो भिक्षा मांगकर खाने वाला होता है। पूर्ण चन्द्रमा हो तो यज्ञ करने वाला होता है। इसी प्रकार से अन्य ग्रहों के लिये भी समझना चाहिये। लग्नशुद्धि का विचार करते हुये कहा गया है कि-

केन्द्रत्रिकोणसहजेषु शुभैः खशुद्धे लग्ने त्रिलाभरिपुगैश्च वदन्ति पापैः।
लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं प्रशस्तं मैत्राम्बुपानिलजनुर्भमसच्च केचित्।।

अन्नप्राशन लग्न से केन्द्र त्रिकोण तृतीय स्थानों में शुभग्रह हो, तीन , छ, ग्यारह स्थानों में पाप ग्रह हो, ख यानी दशम स्थान शुद्ध हो, चन्द्रमा लग्न में, अष्टम में, षष्ठ में न हो तो अन्नप्राशन करना चाहिये। कुछ आचार्य गण कहते है कि मैत्र यानी अनुराधा, अम्बुप यानी शतभिषा तथा अनिल यानी स्वाती नक्षत्र अशुभ है।

आचार्य कश्यप के अनुसार अन्नप्राशन संस्कार में इस प्रकार लग्नों का विचार किया है-

गो अश्वकुम्भतुलाकन्यासिंहकर्कनृयुग्मगाः।
शुभदा राशयः चैते न मेष झष वृश्चिकाः।।

अर्थात् वृष, धनु, कुम्भ, तुला, कन्या, सिंह, कर्क एवं मिथुन लग्न अन्नप्राशन हेतु शुभ माना गया है। मेष, मीन एवं वृश्चिक का निषेध किया गया है।

वसिष्ठ जी ने कहा है-

युग्मेषु मासेषु च षष्ठमासात् संवत्सरे वा नियतं शिशूनाम्।
अयुग्ममासेषु च कन्यकानां नवान्नसम्प्राशनमिष्टमेतत्।।

बालकों कां छठवे मास से युग्म मासों में तथा कन्याओं का पांचवे से विषम मासों में अन्नप्राशन करना चाहिये। शुक्लपक्षे च पूर्वान्हे कहते हुये नारद जी ने इसे शुक्ल पक्ष में एवं पूर्वान्ह के समय करने का विधान बतलाया है। जन्म नक्षत्र के सन्दर्भ में नारद जी का वचन इस प्रकार है-

पट्टबन्धनचौलान्नप्राशने चोपनायने। शुभदं जन्मनक्षत्रमशुभं त्वन्यकर्मणि।।

अर्थात् पट्टबन्धन में, चौल यानी मुण्डन में, अन्नप्राशन में एवं उपनयन में जन्म नक्षत्र शुभ मानी जाती है। अन्य कर्मो में अशुभ मानी गयी है।

अन्नप्राशन में विद्धनक्षत्र को वर्जित किया गया है। दीपिका में कहा गया है कि-

कर्णवेधे विवाहे च व्रते पुंसवने तथा। प्राशने चाद्यचूडायां विद्धमृक्षं परित्यजेत्।।

आचार्य वसिष्ठ जी कहते है-

कुष्ठी लग्नगते सूर्ये क्षीणचन्द्रे च भिक्षुकः।
सत्रदः पूर्णचन्द्रे स्यात् कुजे पित्तरुजार्दितः।

बुधे ज्ञानी गुरौ भोगी दीर्घायुर्भाग्यवान्सिते।
वातरोगी शनौ राहौ केतौ चान्नविवर्जितः।।

अर्थात् जिस समय अन्नप्राशन किया जा रहा हो उस समय लग्न में सूर्य हो तो कुष्ठी, क्षीण चन्द्रमा हो तो भिक्षुक, पूर्ण चन्द्रमा हो तो शुभ, मंगल हो तो पित्त रोगी, बुध हो तो ज्ञानी, गुरु हो तो भोगी, शुक्र हो तो दीर्धायु एवं भाग्यवान् तथा शनि, राहु या केतु हो तो वात रोगी होता है।

इस प्रकार अन्नप्राशन संस्कार के मुहूर्त्त प्रतिपादन विषय को आपने जाना। अब हम आपके ज्ञान को और प्रौढ़ करने के लिये कुछ प्रश्न प्रस्तुत करेंगे जिसके हल करने आपकी बुद्धि में विषय परिपक्व होगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 6

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- अन्नप्राशन में लग्न में सूर्य हो तो फल क्या होता है?

क- कुष्ठी, ख- भिक्षुक, ग- शुभ, घ- पित्त रोगी।

प्रश्न 2- अन्नप्राशन में क्षीण चन्द्रमा हो तो फल क्या होता है?

क- कुष्ठी, ख- भिक्षुक, ग- शुभ, घ- पित्त रोगी।

प्रश्न 3- अन्नप्राशन में लग्न में पूर्ण चन्द्रमा हो तो फल क्या होता है?

क- कुष्ठी, ख- भिक्षुक, ग- शुभ, घ- पित्त रोगी।

प्रश्न 4- अन्नप्राशन में लग्न में मंगल हो तो फल क्या होता है?

क- कुष्ठी, ख- भिक्षुक, ग- शुभ, घ- पित्त रोगी।

प्रश्न 5- अन्नप्राशन में लग्न में बुध हो तो फल क्या होता है?

क- ज्ञानी, ख- भिक्षुक, ग- शुभ, घ- पित्त रोगी।

प्रश्न 6- अन्नप्राशन में लग्न में गुरु हो तो फल क्या होता है?

क- कुष्ठी, ख- भोगी, ग- शुभ, घ- पित्त रोगी।

प्रश्न 7- मैत्र नक्षत्र क्या है?

क- अनुराधा, ख- शतभिषा, ग- स्वाती, घ- विशाखा।

प्रश्न 8- अम्बुप नक्षत्र क्या है?

क- अनुराधा, ख- शतभिषा, ग- स्वाती, घ- विशाखा।

प्रश्न 9- अनिल नक्षत्र क्या है?

क- अनुराधा, ख- शतभिषा, ग- स्वाती, घ- विशाखा।

प्रश्न 10- द्वीश नक्षत्र क्या है?

क- अनुराधा, ख- शतभिषा, ग- स्वाती, घ- विशाखा।

3.5 सारांश-

इस ईकाई में आपने जातकर्म, नामकरण एवं अन्नप्राशन के मुहूर्त्तों के बारे में ज्ञान प्राप्त किया। इस ज्ञान के बिना लोग इन संस्कारों का सम्पादन नही कर सकते। क्योंकि प्रत्येक कार्य का आरम्भ करने वाला व्यक्ति यह भली भंति सोचता है कि कार्य निर्विघ्नता पूर्वक सम्पन्न होना चाहिये। सम्पन्नता के साथ - साथ निश्चित उद्देश्य को भी प्राप्त करने में वह कार्य सफलता प्रदान करे। और वह तभी सम्भव हो सकता जब उचित मुहूर्त्त से संस्कार करायें जाय।

शिशु का जातकर्मादि संस्कार पर्व तिथियों एवं रिक्ता तिथियों को छोड़कर किया जाता है। चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा एवं रवि की संक्रान्ति को पर्व तिथियां कहा गया है। रवि की संक्रान्ति का तात्पर्य है सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना। उस दिन जो तिथि हो उस तिथि को पर्व तिथि की संज्ञा दी गयी है। चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी को रिक्ता तिथि कहा जाता है। इन तिथियों को छोड़कर अन्य तिथियों में यानी प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी एवं त्रयोदशी तिथियों में जातकर्म संस्कार कराया जाना चाहिये। आगे शुभेन्हि कहते हुये समझाया है कि शुभ दिवसों में। शुभ दिवसों के सन्दर्भ में जब हम विचार करते है तो पाते हैं कि सोमवार, बुधवार, गुरुवार एवं शुक्रवार को शुभ दिन कहा गया है। जन्म दिन से ग्यारहवें या बारहवें घस्र यानी दिन, मृदुसंज्ञक यानी मृगशिरा, रेवती, चित्रा एवं अनुराधा, ध्रुव संज्ञक यानी तीनों उत्तरा एवं रोहिणी, क्षिप्र संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी एवं पुष्य एवं चर संज्ञक यानी स्वाती, पुनर्वसु श्रवण ,धनिष्ठा तथा शतभिषा इन सोलह नक्षत्रों में शिशु का जातकर्म संस्कार शुभ होता है।

नामकरण संस्कार के मुहूर्त्त का प्रतिपादन करते हुये अनेक ऋषियों ने अपने - अपने तरीके से विचार किया है। मदन रत्न में नारदीय वचन है कि-

सूतकान्ते नामकर्म विधेयं स्वकुलोचितम्।। अर्थात् सूतक के अन्त हो जाने के बाद अपनी कुल परम्परा के अनुसार नामकरण संस्कार करना चाहिये। इस सन्दर्भ में हरिहराचार्य जी कहते है कि जितने दिन का सूतक हो उतना दिन बीत जाने पर ही नामकरण संस्कार होगा। इसका मतलब जननाशौच के बाद कोई मरणाशौच आ जाय तो उस अशौच के बीत जाने पर ही नामकरण किया जायेगा। सूत्रकारों का वचन है कि ज्नम से ग्यारहवें दिन नामकरण करना चाहिये। गोभिलगृह्यसूत्र कहता है कि-

दशरात्रे व्युष्टे नामकरणमिति

अन्नप्राशन संस्कार के मुहूर्त्त का विचार करते हुये मूहुर्त्तचिन्तामणि में कहा गया है कि-

रिक्तानन्दाष्टदर्शं हरिदिवसमथो सौरिभौमार्कवारान्,

ल्लग्नं जन्माष्टमगृहलवगं मीनमेषालिकं च।

हत्वा षष्ठात्समे मास्यथ हि मृगदृशां पंचमादोजमासे।

नक्षत्रैः स्यात्स्थिराख्यैः समृदुलघुचरैर्बालकान्नाशनं सत्।

अर्थात् रिक्ता तिथि यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी, नन्दा तिथि यानी प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी, अष्टमी, दर्श यानी अमावास्या, हरि दिवस यानी द्वादशी, तिथियों को छोड़कर, सौरि यानी शनिवार, भौमवार एवं सूर्यवारों को छोड़कर, जन्मराशि एवं जन्मलग्न से आठवी राशि के लग्न एवं नवमांश तथा मीन, मेष एवं वृश्चिक लग्न को छोड़कर, छठवें महीने से सम मासों में एवं कन्याओं को विषम मासों में, स्थिर संज्ञक, मृदुसंज्ञक, लघु संज्ञक एवं चर संज्ञक इन सोलह नक्षत्रों में अन्नप्राशन उत्तम है। स्थिर संज्ञक नक्षत्र में तीनो उत्तरा एवं रोहिणी लिया गया है। मृदुसंज्ञक नक्षत्रों में मृगशिरा, रेवती, चित्रा एवं अनुराधा को स्वीकार किया गया है। लघु संज्ञक में हस्त, अश्विनी एवं पुष्य को स्वीकार किया गया है। चर संज्ञक में स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा इन सोलह नक्षत्रों में अन्नप्राशन उत्तम माना गया है।

3.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

ख- दशम, हरिदिवस- द्वादशी, सौरि-शनिवार ज्ञवार- बुधवार, अर्किवार- शनिवार, अलि- वृश्चिक, विश्वतिथि- त्रयोदशी तिथि, दश तिथि- दशमी तिथि, द्वि तिथि- द्वितीया तिथि , धात्री फल- ऑवला, अमा- अमावास्या, नाग तिथि- अष्टमी तिथि, मधु मास- चैत्र मास, उर्ज्जा मास- कार्तिक मास, शुक्र मास- ज्येष्ठ मास, तपस्य- फाल्गुन मास, तपस मास- माघ मास, अब्धि तिथि- चतुर्थी तिथि, सार्प नक्षत्र- आश्लेषा नक्षत्र, पितृभं- मघा नक्षत्र, राक्षस नक्षत्र- मूल नक्षत्र, कदा नक्षत्र- रोहिणी, स्रभ नक्षत्र- अश्विनी, वायू नक्षत्र- स्वाती नक्षत्र, इज्य नक्षत्र- पुष्य नक्षत्र, भग नक्षत्र- पूर्वा फाल्गुनि, वासव नक्षत्र- धनिष्ठा, श्रुति नक्षत्र- श्रवण नक्षत्र, पाशी नक्षत्र- शतभिषा, पौष्ण नक्षत्र- रेवती नक्षत्र, अजपाद् नक्षत्र- पूर्वा भाद्रपदा नक्षत्र, द्वीश नक्षत्र- विशाखा नक्षत्र, यम नक्षत्र- भरणी नक्षत्र, इन्द्रभ-ज्येष्ठा, घट लग्न- कुम्भ लग्न, झष लग्न- मीन लग्न, अलि लग्न- वृश्चिक लग्न, मृगेन्द्र लग्न- सिंह लग्न, नक्र लग्न- मकर लग्न, अंगना लग्न- कन्या लग्न , कवि- शुक्र, इज्य- गुरु, इन्दुवार- चन्द्रवार, लाभ स्थान- ग्यारहवां स्थान, रिपु स्थान- शत्रु स्थान, मैत्र नक्षत्र- अनुराधा, अम्बुप नक्षत्र- शतभिषा, अनिल नक्षत्र- स्वाती, अनल नक्षत्र- कृत्तिका, उडु- नक्षत्र, घस्र- दिन, ईश- स्वामी, वन्हि- अग्नि, कौ- ब्रह्मा,

गुह- स्कन्द, अन्तक- यमराज, युग्म- सम, संवत्सर- वर्ष, नियत- निश्चित, झष- मीन, उत्संग- गोद, धात्रि- आंवला, सौख्य- सुख, दिगीश- दिशाओं के अधिपति, गगन- आकाश, गव्य- गौ के द्वारा निकला पदार्थ, धन भाव- दूसरा स्थान, मातृ स्थान- चतुर्थ भाव, व्युष्ट- व्यतीत होने पर, उत्तरायण- मकर संक्रान्ति से मिथुन संक्रान्ति तक, सर्प- आश्लेषा।

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-घ, 10-क।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 2

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-घ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 3

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-घ ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 4

1-घ, 2-ग, 3-ख, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ख, 8-क, 9-ग, 10-ख।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 5

1-क, 2-क, 3-ग, 4-ख, 5-क, 6-क, 7-ख, 8-क, 9-ख, 10-घ ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 6

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-क, 8-ख, 9-ग, 10-घ ।

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मुहूर्त्त चिन्तामणिः।

2-भारतीय कुण्डली विज्ञान भग-1

3-शीघ्रबोध।

4-शान्ति- विधानम्।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-उत्सर्ग मयूख।

7-विद्यापीठ पंचांग।

3.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- स्मृति कौस्तुभः।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।

3- जातकालंकार।

4- याज्ञवल्क्य स्मृतिः।

5- संस्कार- विधानम्।

3.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1-जातकर्म संस्कार का परिचय बतलाइये।

2- नामकरण संस्कार का परिचय बतलाइये।

3- अन्नप्राशन संस्कार का परिचय दीजिये।

4- जातकर्म संस्कार का मुहूर्त्त दीजिये।

5- नामकरण संस्कार का मुहूर्त्त दीजिये।

6- अन्नप्राशन संस्कार का मुहूर्त्त लिखिये।

7- जातकर्म संस्कार का महत्त्व लिखिये।

8- नामकरण संस्कार का महत्त्व लिखिये।

9- अन्नप्राशन संस्कार का महत्त्व लिखिये।

10- अन्न प्राशन संस्कार हेतु लग्नों का विचार का वर्णन कीजिये।

इकाई- 4 कर्णबेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त्त

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई में कर्णबेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त्त संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। जन्मोत्तर संस्कारों में कर्णबेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त्त इत्यादि संस्कार महत्त्वपूर्ण संस्कार है। ये संस्कार जातक के उत्पन्न होने के बाद संपन्न किया जाता है। इन संस्कारों का ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

प्राचीन काल में ऋषियों एवं महर्षियों द्वारा यह ऐसा अनूठा प्रयोग किया गया जिसमें मानव को मानव बनाने की प्रक्रिया का चिन्तन एवं मनन किया गया। मानवता से व्यक्ति जब-जब जितना दूर होता है समाज में अत्याचार, अनाचार, पापाचार आदि कृत्य बढ़ते है जिससे समाज एवं राष्ट्र का ह्रास होने लगता है। इसलिये आवश्यक है कि समाज में सांस्कारिक लोगों की अभिवृद्धि हो। यह आवश्यक नही कि पढ़ा लिखा सुशिक्षित व्यक्ति गलत नही करेगा लेकिन यह जरूर आवश्यक है कि एक सुसंस्कारित व्यक्ति असदाचरण नही करेगा। आज लोगों का चारित्रिक पतन हो रहा है। इसके कारण नैतिकता निर्बल होती जा रही है। व्यक्ति के चारित्रिक बल को जीवन्त कर नैतिकता को विकसित करने का काम संस्कार करते है। इन संस्कारों की नीव जो गर्भाधान से रखी जाती है का पल्लवन कर्णवेधादि संस्कारों से हो जाता है इसलिये इनका ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

इस इकाई के अध्ययन से आप कर्णबेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त्त का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

4.2 उद्देश्य-

आप कर्णबेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त्त के सम्पादन की आवश्यकता को समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते है।

- सांस्कारिक ज्ञान को लोकोपकारक बनाना।
- कर्णबेध संस्कार का शास्त्रीय विधि से प्रतिपादन।

- चूड़ाकरण संस्कार का शास्त्रीय विधि से सम्पादन।

-उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त्त के वर्णन सहित संस्कार सम्पादन में भ्रान्तियों को दूर करना।

-प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

-लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

-समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

4.3 कर्णबेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त्त का परिचय एवं महत्त्व-

महर्षि पारस्कर ने विवाह, गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन, केशान्त , समावर्तन एवं अन्त्येष्टि इन तेरह संस्कारों की बात स्वीकार की है। बौधायन गृह्यसूत्र में विवाह, गर्भाधान, सीमन्तोन्नयन, पुंसवन, जातकर्म, नामकरण, उपनिष्क्रमण, अन्नप्राश्न, चूड़ाकरण, कर्णवेध, उपनयन, समावर्तन, पितृमेध इन तेरह संस्कारों का वर्णन किया है। इसी प्रकार अन्य आचार्यों ने अपने-अपने मतों के अनुसार संस्कारों एवं उसकी प्रविधियों का वर्णन किया है। प्रत्येक आचार्य का विचार एवं उसके प्रदत्त ज्ञान हम सभी के लिये अनुकरणीय है।यहां हम कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त्त इनके परिचय एवं महत्व के पृथक्-पृथक् स्वरूपों की चर्चा करेगें जिससे संबंधित विषय का ज्ञान प्रगाढ़ हो सकेगा।

4.3.1 कर्णवेध संस्कार का परिचय एवं महत्त्व-

कर्णबेध शब्द के शब्दिक अर्थ को समझने का जब हम प्रयास करते हैं तो उसे दो भागों में बांटते है। पहला कर्ण एवं दूसरा बेध। कर्ण का अर्थ होता है कान, बेध शब्द का अर्थ है बेधन करना। कान के बेधन कर्म को सम्पन्न करने वाले संस्कार को कर्णबेध संस्कार का नाम दिया गया है। अब यहॉं प्रश्न खड़ा होता है कि कान का छेदन या बेधन क्यों करना चाहिये? क्या उससे कुछ लाभ होता है? इस प्रश्न के उत्तर में आचार्य सुश्रुत का एक बचन मिलता है जिसका वर्णन यहॉ उचित प्रतीत होता है। आचार्य सुश्रुत कहते हैं रक्षाभूषणनिमित्तं बालस्य कर्णौ बिध्येते अर्थात् रक्षा एवं आभूषण के निमित्त शिशु का कर्णवेध करना चाहिये। कर्ण वेध के कारणों में प्रथम कारण रक्षा एवं द्वितीय कारण आभूषण बतलाया गया है। रक्षा के आशय के सन्दर्भ को और स्पष्ट करते हुये आचार्य जी लिखते हैं

शंखोपरि च कर्णान्ते त्यक्त्वा यत्नेन सेवनीयम्।
व्यत्यासात् वा शिरो विध्येत् आन्त्रवृद्धिनिवृत्तये।।

अर्थात् कर्णान्त में पायी जाने वाली शिराओं को वेधन कराने से आन्त्र वृद्धि पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। अगर ऑतों की वृद्धि हो रही हो तो उसके नियन्त्रण हेतु भी शिरा भेदन का कार्य उत्तम होगा। दूसरा कारण बताते हुये स्पष्ट किया गया है कि आभूषण धारण करने के निमित्त भी कर्ण वेध

उत्तम माना गया है। कारण देते हुये कहा गया है कि उससे सौभाग्य की वृद्धि होती है। सौभाग्य से तात्पर्य पति सुख एवं पुत्र सुख से है।

कर्णवेध के विधान का वर्णन करते हुये रत्नमाला नामक ग्रन्थ में लिखा गया है कि-

शिशोरजातदन्तस्य मातुरुत्संगसर्पिणः।
सुताया वेधयेत् कर्णौ सूच्या द्विगुणसूत्रया।।

अर्थात् अजात दन्त शिशु का जो माता के गोद में रहता है विशेष कर कन्या का सूई से दो सूत्र के बराबर का छिद्र करना चाहिये। यहां पर सुता यानी कन्या के लिये वचन मिलता है परन्तु गृह्य सूत्रों में इसका भेद नही किया गया है। ऐसा लगता है वहां सभी के लिये अनिवार्य किया गया है। कर्णरन्ध्र के विषय में आचार्य देवल का कथन है कि कर्ण रन्ध्र इतना होना चाहिये कि सूर्य की छाया उसके छिद्र में प्रवेश न करे।

कर्णरन्ध्रे रवेश्छाया न विशेदग्रजन्मनः।
तं दृष्ट्वा विलयं यान्ति पुण्यौघाश्चपुरातनाः।।

आचार्य शालंकायन ने भी कर्णवेध के सन्दर्भ में एक नवीन जानकारी देते हुये कहा है कि-

अविद्धकर्णैर्यद्भुक्तं लम्बकर्णैस्तथैव च।
दग्धकर्णैश्चयद्भुक्तं तद्वै रक्षांसि गच्छति।।

अर्थात् अविद्ध कर्ण युक्त होकर जो भोजन करता है या लम्बकर्णयुक्त जो भोजन करता है या दग्धकर्णयुक्त जो भोजन करता है उसका वह भोजन राक्षसों को चला जाता है। यानी वह प्रतिकूलता उत्पन्न करने वाला होता है। भोजन के उपयुक्त तत्वों का शरीर के लिये उपयोग नही हो पाता है।

कर्णछेदन के महत्व को स्वीकार करते हुये चिकित्सक गण कहते है कि कणछेदन से हार्निया नामक रोग नही होता है। इसमें यह शास्त्रीय निर्देश है कि यह संस्कार योग्य एवं निपुण व्यक्ति से कराना चाहिये। छेदन हेतु सुवर्ण की सूई का प्रयोग उचित बतलाया गया है। इसका कारण यह है कि जातकर्म संसकार के सम्पादन में लिखा गया है कि सुवर्ण विष का विनाशक होता है। तो उससे छेदन करने से किसी प्रकार का विष सम्बन्धी दोष जिसे इन्फैक्सन के रूप में जाना जाता है नही होता है।

यह तो कणवेध का दृष्ट फल है। अदृष्ट फल की चर्चा करते हुये आचार्य चक्रपाणि लिखते हैं कर्णब्यधे कृते बालो न ग्रहैरभिभूयते अर्थात् जिस शिशु का कर्णवेध हो जाता है वह ग्रहों से अभिभूत नही होता है यानी प्रभावित नही होता है। और आध्यत्मिक दृष्टि से यह एक प्रकार का संस्कार है इसके सम्पादन से पुण्य जनकता तो होती ही है। लोक में तो शिष्ट जन, जिस स्त्री का कर्णवेध न हुआ हो और जिस पुरुष का उपनयन न हुआ हो उसके हाथ का स्पर्श किया हुआ जल भी नही पीते है।

अतः उपरोक्त अध्ययन से आपको कर्णवेध का परिचय एवं उसका महत्व क्या है ? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रोढ़ हो जायेगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 1

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- कर्ण वेध में कर्ण क्या होता है?

क- कान, ख- करण यानी से , ग- करण यानी करना, घ- कर्ण महादानी।

प्रश्न 2- कर्ण वेध हेतु पहला कारण आचार्य सुश्रुत ने क्या दिया है?

क- आभूषण, ख- रक्षा, ग- पिपासा, घ- इच्छा।

प्रश्न 3- कर्ण वेध हेतु दूसरा कारण आचार्य सुश्रुत ने क्या दिया है?

क- आभूषण, ख- रक्षा, ग- पिपासा, घ- इच्छा।

प्रश्न 4- कर्ण वेध से आचार्य सुश्रुत क्या नियंत्रित करते है ?

क- हस्तवृद्धि, ख- पादवृद्धि, ग- कर्णवृद्धि, घ- आन्त्रवृद्धि।

प्रश्न 5- कर्ण वेध से कौन सा रोग दूर होता है?

क- हार्निया, ख- पीलिया, ग- फोबिया, घ- एनीमिया।

प्रश्न 6- अजात दन्त क्या है?

क- दॉत होना, ख- दॉत न उगना, ग- दॉत धीरे - धीरे उगना, घ- दॉत उगना एवं गिरना।

प्रश्न 7- कर्ण वेध हेतु किसकी सूई का प्रयोग किया जाना चाहिये ?

क- लोहे की, ख- सीसे की, ग- सोने की, घ- रांगां की।

प्रश्न 8- सुवर्ण के सूई का गुण क्या है?

क- धातु नाश, ख- कफ नाश, ग- पित्त नाश, घ- विष नाश।

प्रश्न 9- कर्ण वेध में कितने कान छिदते है?

क- दोनों, ख- एक, ग- दायां, घ- बायां।

प्रश्न 10- कर्ण वेध में छिद्र कितना करना चाहिये ?

क- एक सूत्र बराबर , ख- दो सूत्र बराबर, ग- तीन सूत्र बराबर, घ- चार सूत्र बराबर।

4.3.2 चूड़ाकरण संस्कार का परिचय एवं महत्त्व-

चूड़ाकरण संस्कार को मुण्डन संस्कार के नाम से भी जाना जाता है ? आयुषे वपामि सुव्रतोकाय स्वस्तये आश्वलायन गृह्यसूत्र के इस वचन के अनुसार बालक के दीर्घायु, सौन्दर्य तथा कल्याण प्राप्ति की कामना के लिये इस संस्कार को कराना चाहिये। सुश्रुत ने कहा है केशों एवं नखों के अपमार्जन एवं छेदन से हर्ष, सौभाग्य एवं उत्साह की वृद्धि एवं पापों का उपशमन होता है।

पापोपशमनं केशनखरोमापमार्जनम्।

हर्षलाघवसौभाग्यकरमुत्साहबर्द्धनम्।। चिकित्सा स्थान 24.72

आचार्य चरक लिखते है कि केश, श्मश्रु, तथा नखों के काटने तथा प्रसाधन से पौष्अिकता, बल, आयुष्य, सुचिता और सौन्दर्य की प्राप्ति होती है।

पौष्टिकं वृष्यमायुष्यं शुचिरूपं विराजनम्।

केशश्मश्रुनखादीनां कर्तनं सम्प्रसाधनम्।।

चूड़ाकरण संस्कार के सन्दर्भ में नियमों का प्रतिपादन करते हुये कहा गया है कि यदि शिशु की माता को पॅाच वर्ष से अधिक का गर्भ हो तो शिशु का मुण्डन शुभ नही होता है। यदि शिशु पांच वर्ष से अधिक का हो तो माता के गर्भिणी होन पर भी मुण्डन करा देना चाहिये। मुण्डन में तारा अशुभ होने पर यदि चन्द्रमा अपने मूल त्रिकोण में हो अथवा उच्च में हो अथवा शुभ ग्रह या अपने मित्र के षड्वर्ग में हो तो मुण्डन शुभ होता है। यदि चन्द्रमा शुभ हो और शुभ ग्रह की राशि का हो तो अशुभ तारा भी क्षौर यात्रा आदि कार्यो में शुभ होती है।

ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोश्चौलादि नाचरेत्।

ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कैश्चिन्मार्गेपि नेष्यते।।

रजस्वला स्त्री और सूतिका स्त्री के पुत्र का मुण्डन या उपनयन नही करना चाहिये। ज्येष्ठ लड़के का ज्येष्ठ मास में मुण्डन नही कराना चाहिये। कोई कोई आचार्य गण मार्गशीर्ष मास में ज्येष्ठ लड़के का मुण्डन आदि करने का निषेध करते है। शनि, भौम, रवि वारों को और जिस दिन क्षौर बनवायें हो उस दिन से नवॅा दिन, सन्ध्या समय, रिक्ता तिथि, पर्व तिथि, इन सबको त्याग कर मुण्डन में कहे नक्षत्रादिकों में दन्त क्रिया, क्षौर और नख क्रिया करना शुभ होता है।

मार्गशीर्षे तथा ज्येष्ठे क्षौरं परिणयं व्रतम्।

आद्य पुत्रदुहित्रोश्च यत्नतः परिवर्जयेत्।।

क्षौर कर्म का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि बिना आसन के, रण तथा ग्राम में जाने के दिन, स्नान करने के बाद, शरीर में उबटन लगा लेने के बाद और भोजन कर लेने के बाद अपना कल्याण चाहने वाले को क्षौर कर्म नही कराना चाहिये। यज्ञ में, विवाह में, मृतक कर्म में, कारागार से छूटने पर, ब्राह्मण और राजा की आज्ञा से क्षौर कर्म निन्दित वार आदि में भी करा लेना शुभ होता है।

जिसकी स्त्री गर्भिणी हो उसको मुर्दा नही ठोना चाहिये, तीर्थ यात्रा नही करना चाहिये, समुद्र में स्नान नही करना चाहिये और क्षौर कर्म नही कराना चाहिये।

क्रतुपाणिपीडमृतिबन्धमोक्षणे क्षुरकर्म च द्विजनृपाज्ञया आचरेत्।
शववाहतीर्थगमसिन्धुमज्जनक्षुरमाचरेन्न खलु गर्भिणीपतिः।।

आवश्यकता पड़ने पर ब्राह्मण रविवार को, क्षत्रिय भोमवार को और वैश्य तथा शूद्र शनिवार को क्षौर कर्म करा सकते है।

पापग्रहाणां वारेषु विप्राणां तु शुभो रविः।
क्षत्रियाणां क्षमासूनुर्विट्शूद्राणां शनिः शुभः।।

अतः उपरोक्त अध्ययन से आपको चूड़ाकरण संस्कार का परिचय एवं उसका महत्व क्या है ? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रोढ़ हो जायेगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 2

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- केश कर्तन से क्या नही मिलता है?

क- दुख, ख- हर्ष , ग- सौभाग्य, घ- उत्साह।

प्रश्न 2- बालक की माता को पांच मास का गर्भ हो तो मुण्डन कराया जा सकता है?

क- हां, ख- नही, ग- माता से पूछें, घ- इच्छानुसार।

प्रश्न 3- बालक पांच वर्ष से अधिक की आयु का हो और माता को गर्भ हो तो मुण्डन कराया जा सकता है?

क- हां, ख- नही, ग- माता से पूछें, घ- इच्छानुसार।

प्रश्न 4 - मुण्डन में तारा अशुभ होने पर तथा चनद्रमा के मूल त्रिकोण में होने पर मुण्डन कराया जा सकता है?

क- हां, ख- नही, ग- माता से पूछें, घ- इच्छानुसार।

प्रश्न 5- ज्येष्ठ बालक का ज्येष्ठ मास में मुण्डन कराया जा सकता है?

क- हां, ख- नही, ग- भ्राता से पूछें, घ- इच्छानुसार।

प्रश्न 6- पर्व तिथि में मुण्डन कराया जा सकता है?

क- हां, ख- नही, ग- माता से पूछें, घ- इच्छानुसार।

प्रश्न 7 - बिना आसन के मुण्डन कराया जा सकता है?

क- हां, ख- नही, ग- माता से पूछें, घ- इच्छानुसार।

प्रश्न 8- यज्ञ में ब्राह्मण से पूछकर मुण्डन कराया जा सकता है?

क- हां, ख- नही, ग- माता से पूछें, घ- इच्छानुसार।

प्रश्न 9- आवश्यकता पड़ने पर ब्राह्मण रविवार को क्षौर कर्म करा सकते है?

क- हां, ख- नही, ग- माता से पूछें, घ- इच्छानुसार।

प्रश्न 10- आवश्यकता पड़ने पर क्षत्रिय रविवार को क्षौर कर्म करा सकते है?

क- हां, ख- नही, ग- माता से पूछें, घ- इच्छानुसार।

4.3.3 उपनयन संस्कार का परिचय एवं महत्त्व-

उपनयन शब्द का अर्थ है गुरू के समीप ब्रह्मचारी को जो वटु है उसको ले जाना। ब्राह्मण वटु का उपनयन जन्म से या गर्भ से आठवें वर्ष में करना चाहिये। क्षत्रिय कुमार का उपनयन जन्म से या गर्भ से ग्यारहवें वर्ष में होना चाहिये। जन्म से या गर्भ से बारहवें वर्ष में वैश्य कुमार का उपनयन संस्कार करना चाहिये। इसका कारण देते हुये बतलाया गया है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों की सावित्री क्रमशः आठ, ग्यारह एवं बारह अक्षरों की होती है। यानी ब्राह्मण की सावित्री आठ अक्षर की, क्षत्रिय की सावित्री ग्यारह अक्षरों की एवं वैश्यों की सावित्री बारह अक्षरों की होती है। कतिपय विद्वानों के अनुसार यह वय भेद प्रतिभा की प्रौढ़ता को देखते हुये किया गया है। कुछ आचार्यों के अनुसार ब्राह्मणों को वेद ज्ञान की शिक्षा दी जाती थी तथा अन्य वर्णों को अन्य प्रकार की शिक्षा का विधान था इसलिये भी वय भेद हुआ। पारस्कर के अनुसार सभी की अपनी कुल परम्परा के अनुसार उपनयन संस्कार का विधान है।

ब्राह्मण बालक के उपनयन संस्कार की अवधि सोलह वर्ष तक की बतलायी गयी है। क्षत्रिय कुमार के उपनयन की अवधि 22 वर्ष तक की बतलायी गयी है। वैश्य कुमार के उपनयन की अवधि चौबीस वर्ष की बतलायी गयी है। अर्थात् इन समयों के व्यतीत हो जाने उपनयन संस्कार किया जाता है तो फलदायी नही होता है। लेकिन इस विषय में काफी मत मतान्तर देखने को मिलता है। सत्रहवीं शताब्दी के निबंधकार मित्र मिश्र ब्राह्मण का चौबीस, क्षत्रिय का तैंतीस और वैश्य का छत्तीस वर्ष की अवस्था तक अनुमति देते है। वहीं बौधायन विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये विभिन्न वर्षों में उपनयन कराने का संकेत देते है। जैसे-

ब्रह्मवर्चस की प्राप्ति के लिये सांतवें वर्ष में उपनयन संस्कार कराना चाहिये। दीर्घायुष्य की प्राप्ति के लिये आंठवें वर्ष में उपनयन संस्कार कराना चाहिये। ऐश्वर्य के लिये नवें वर्ष में उपनयन संस्कार

कराना चाहिये। भोजन के लिये दसवें, पशुओं के लिये बारहवें, शिल्प कौशल के लिये तेरहवें, तेजस्विता के लिये चौदहवें, बन्धु बान्धवों के लिये पन्द्रहवें एवं सभी गुणों की प्राप्ति के लिये तेरहवें वर्ष में उपनयन कराना चाहिये। इसी सन्दर्भ में मनु जी कहते है-

ब्रह्मवर्चस कामस्य कार्यं विप्रस्य पंचमे।
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैद्यस्यप्यर्थितोष्टमे।। मनुस्मृति 2.37

अर्थात् ब्रह्मवर्चस् कामना के लिये पांचवे वर्ष में, बल के इच्छुक क्षत्रिय को छठवें वर्ष में एवं ऐश्वर्य के इच्छुक वैश्य का उपनयन संस्कार आंठवें वर्ष में किये जाने चाहिये।

मनु जी का वचन एक जगह और इस प्रकार प्राप्त होता है-

आषोडशाद् ब्राह्मणस्य सावित्री नातिवर्तते।
आद्वाविंशे क्षत्रबन्धो आचतुर्विंशतेर्विशः।।

उपरोक्त अवधि के व्यतीत हो जाने पर ये व्यक्ति पतित सावित्रिक् हो जाते है। इस पतिति सावित्री वाले व्यक्तियों का किसी भी आचार्य को उपनयन नही कराना चाहिये। इन्हे वेदादि पढ़ाने, यज्ञादि कराने एवं इनसे किसी तरह का सामान्य व्यवहार करने का समाज में निषेध पाया जाता है। गर्भाधान से उपनयन तक के सभी संस्कारों के लिये समय निश्चित है। किसी कारण वश उसका उल्लंघन होने पर श्रौत सूत्र की विधि से प्रयश्चित्त की विधि सम्पादित करना चाहिये।

तीन पीढ़ी तक यदि सावित्री का पतन हो, नियत काल में उपदेश न हो तो ऐसे व्यक्ति की सन्तान का न तो कोई संस्कार होगा न ही वेदादि का अध्यापन ही होगा। यदि कोई प्रायश्चित्त करना चाहे तो वह व्रात्य स्तोम यज्ञ करके शुद्ध हो सकता है। उसके सभी संस्कार फिर से होगें।

व्रात्य स्तोम के सन्दर्भ में मिलता है कि व्रात्य चार प्रकार के होते है- निन्दित, कनिष्ठ, ज्येठ, हीनाचार। निन्दित - पापाचारी, जातिवहिष्कृत्, नृशंस तथा व्रात्य। कनिष्ठ- संस्कार हीन, जातिबहिष्कृत् युवक। ज्येष्ठ - पुस्त्वहीन शुद्ध व्रात्य, हीनाचार- नृत्योपजीवी इत्यादि। व्रात्या स्तोम में निम्नलिखित वस्तुओं का दान होता है- तिरछी बधी हुयी पगडी, चाबुक, ज्या हीन धनुष, काला वस्त्र, अमार्गगामी रथ, चांदी का कण्ठाभरण, कम्बल, रस्सी व काले जूते। ये सभी वस्तुये मागध ब्राह्मण को अथवा व्रात्य कर्म तत्पर ब्राह्मण को दे और तैंतीस गोदान करें। तब वह व्यक्ति संस्कार्य होता है।

वीरमित्रोदय में उद्धृत करते हुये बतलाया गया है कि वह कृत्य जिसके द्वारा व्यक्ति, गुरु, वेद, यम, नियम का व्रत और देवता के सामिप्य के लिये दीक्षित किया जाय उपनयन के अन्तर्गत आता है। उपनयन एक ऐसा संस्कार है जो द्विजत्व पद की प्राप्ति कराता है। आपस्तम्ब और भरद्वाज उपनयन

का उद्देश्य विद्या की प्राप्ति बताते है। याज्ञवल्क्य के अनुसार उपनयन का सर्वोच्च प्रयोजन वेदों का अध्ययन करना है। साधारण दृष्टि से यदि देखा जाय तो उपनयन संस्कार से संस्कारित बालक का जीवन एक प्रकार के विशिष्ट नियमों से आबद्ध हो जाता है।

ब्रह्मचर्य जीवन को पूर्ण करने पर उसकी स्नातक संज्ञा होती है। स्नातक तीन प्रकार के शास्त्रों में बतलाये गये है जिन्हें विद्या स्नातक, व्रत स्नातक और विद्याव्रतस्नातक जाना जाता है। जो कुमार वेद का अध्ययन तो करता है परन्तु व्रत का पूरी तरह निर्वाह नही करता उसे विद्या स्नातक कहा गया है। जो स्नातक व्रत पालन करने पर भी वेद का अन्त नही कर पाता उसे व्रत स्नातक कहते है। वेद एवं व्रत दोनों को पूरा करने वाले स्नातक को विद्याव्रतस्नातक कहा गया है। आचार्य के बुलाने पर यदि कुमार सोया हो तो बैठकर, बैठा हो तो खड़ा होकर, खड़ा हो तो दौड़कर बोले उस ब्रह्मचारी को धरती पर अत्यन्त आनन्द की प्राप्ति होती है। ऐसे स्नातक अपने ब्रह्मचर्य व्रत को पूरा करके संसार में एक नया कीर्तिमान स्थापित करते है।

अतः उपरोक्त अध्ययन से आपको उपकरण संस्कार का परिचय एवं उसका महत्व क्या है ? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रोढ़ हो जायेगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 3

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- ब्राह्मण वटु का उपनयन संस्कार कराना चाहिये-

क- आंठवें वर्ष में , ख- ग्यारहवें वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 2- क्षत्रिय कुमार का उपनयन संस्कार कराना चाहिये-

क- आंठवें वर्ष में , ख- ग्यारहवें वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 3- वैश्य कुमार का उपनयन संस्कार कराना चाहिये-

क- आंठवें वर्ष में , ख- ग्यारहवें वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 4- ब्रह्मवर्चस् कामना हेतु उपनयन संस्कार कराना चाहिये-

क- पाचवें वर्ष में , ख- ग्यारहवें वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- सांतवें वर्ष में।

प्रश्न 5- दीर्घायुष्य हेतु उपनयन संस्कार कराना चाहिये-

क- आंठवें वर्ष में , ख- ग्यारहवें वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 6- ऐश्वर्य हेतु उपनयन संस्कार कराना चाहिये-

क- आंठवें वर्ष में , ख- नवें वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 7- पशुओं के लिये उपनयन संस्कार कराना चाहिये-

क- आंठवें वर्ष में , ख- ग्यारहवें वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 8- तेजस्विता हेतु उपनयन संसकार कराना चाहिये-

क- आंठवें वर्ष में , ख- ग्यारहवें वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 9- स्नातक कितने प्रकार के होते हैं?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 10- व्रात्य कितने प्रकार के होते हैं?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

4.4 कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा का मुहूर्त्त-

इससे पूर्व के प्रकरण में आपने कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन संस्कार का परिचय एवं महत्त्व जाना। इस प्रकरण में कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा के मुहूर्त्त के बारे में आप जानेगें। इसके ज्ञान से तत्संबंधी मुहूर्त्त के ज्ञान में आप सक्षम हो जावेगें।

4.4.1 कर्णवेध संस्कार का मुहूर्त्त विचार-

मुहूर्तचिन्तामणि नामक ग्रन्थ में कर्णवेध संस्कार के मुहूर्त्त का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि-

हित्वैतांश्चैत्रपौषावमहरिशयनं जन्ममासं च रिक्ता।
युग्माब्दं जन्मतारामृतुमुनिवसुभिः सम्मिते मास्यथो वा।
जन्माहात्सूर्यभूपैः परिमितदिवसे ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे।
अथौजाब्दे विष्णु युग्मादितिलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः।।

अर्थात् कर्णवेध संस्कार हेतु चैत्र एवं पौष मास को छोड़ देना चाहिये। चैत्र मास का निषेध मीनार्क के कारण किया गया है। मीनार्क का मतलब मीन राशि के सूर्य से है। उसी प्रकार पौष मास का निषेध धन्वर्क यानी धनु राशि के सूर्य से है जिसे खर मास की संज्ञा दी गयी है। अवम तिथि यानी क्षय तिथि को छोड़ देना चाहिये।

व्यवहारोच्चय में कहा गया है कि-

न जन्ममासे न च चैत्रपौषे न जन्मतारासु हरौ प्रसुप्ते।

तिथावरिक्ते न च विष्टिदुष्टे कर्णस्य वेधो न समानवर्षे।।

इसमें हरिशयन काल को भी त्यागने के लिये कहा गया है। हरिशयनी एकादशी से देवोत्थनी एकादशी तक के काल को हरिशयन का काल कहा गया है। अर्थात् आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्त्तिक शुक्ल दशमी तक के काल को हरिशन काल कहा जाता है। जन्म मास यानी जन्म का महीना और रिक्ता तिथि यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथि को त्याग देना चाहिये। इस सन्दर्भ में प्रयोग पारिजात में लिखा गया है कि-

यो जन्ममासे क्षुरकर्म यात्रां कर्णस्य वेधं कुरुते हि मोहात्।
मूढः स रोगी धनपुत्रनाशं प्राप्नोति गूढं निधनं तदाशु।।

अर्थात् जो जन्म मास में क्षौर कर्म, यात्रा एवं कर्णवेध संस्कार करते हैं वे रोगी होते हैं तथा उनके धन एवं पुत्र का नाश होता है। युग्माब्द यानी सम वर्ष को छोड़कर विषम वर्षों में कर्णवेध संस्कार करा सकते है। जन्म तारा यानी जन्म नक्षत्र से पहली, दसवीं और उन्नीसवीं नक्षत्र को छोड़कर जन्म से छठवें, सातवें एवं आठवें महीने में अथवा जन्म दिन से बारहवें या सोलहवें दिन, बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा सोम वारों में, विषम वर्षों में, श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृदुसंज्ञक यानी मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा एवं लघु संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी, पुष्य इन दश नक्षत्रों में बालकों का कर्णवेध उत्तम होता है।

कर्ण वेध मुहूर्त्त में लग्न शुद्धि का विचार अवश्य करना चाहिये। इसका विचार करते हुये कहा गया है कि-

संशुद्धे मृतिभवने त्रिकोणकेन्द्रत्र्यायस्थैः शुभखचरैः कविज्यलग्ने।
पापाख्यैररिसहजायगेहसंस्थैर्लग्नस्थे त्रिदशगुरौ शुभावहः स्यात्।।

इसका अर्थ करते हुये बतलाया गया है कि कर्णवेध लग्न से अष्टम स्थान शुद्ध होना चाहिये। यानी अष्टम स्थान में कोई भी ग्रह न हो। शुभ ग्रह त्रिकोण में, केन्द्र में, आय भाव में, तीसरे स्थान में स्थित हों, शुक्र एवं गुरु लग्न में हों, पापग्रह यानी क्षीण चन्द्र, सूर्य, मंगल, शनि, राहु एवं केतु तृतीय, षष्ठ एवं एकादश स्थान में हो तो कर्णवेध करना चाहिये। बालकों का पहले दायां फिर बायां तथा बालिकाओं का पहले बायां फिर दायां कान का छेदन करना चाहिये।

अतः उपरोक्त अध्ययन से आपको कर्णवेध संस्कार के मुहूर्त्त क्या है ? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 4

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- चैत्र मास को क्यों छोड़ना चाहिये-

क- मीनार्क के कारण , ख- मेषार्क के कारण , ग- वृषार्क के कारण, घ- मिथुनार्क के कारण।

प्रश्न 2- पौष मास को क्यों छोड़ना चाहिये-

क- मीनार्क के कारण , ख- धन्वर्क के कारण , ग- वृषार्क के कारण, घ- मिथुनार्क के कारण।

प्रश्न 3- अवम तिथि क्या है-

क- वृद्धि तिथि , ख- तिथि , ग- क्षय तिथि, घ- गत तिथि।

प्रश्न 4- रिक्ता तिथि क्या है-

क- प्रतिपदा तिथि , ख- द्वितीया तिथि , ग- तृतीया तिथि, घ- चतुर्थी तिथि।

प्रश्न 5- युग्माब्द क्या है?

क- सम वर्ष, ख- विषम वर्ष, ग- अधिक वर्ष, घ- क्षय वर्ष।

प्रश्न 6- अष्टम स्थान शुद्ध कब होता है?

क- पूर्ण रिक्त रहता है, ख- अर्धरिक्त रहता है, ग- पापग्रह युक्त होता है, घ- शुभग्रह युक्त होता है?

प्रश्न 7- सप्तम स्थान क्या है?

क- त्रिकोण, ख- केन्द्र, ग- अरि स्थान, घ- आय स्थान।

प्रश्न 8- जन्म तारा यानी जन्म नक्षत्र से कौन नक्षत्र त्याज्य है?

क-दसवीं, ख- ग्यारहवीं, ग- बारहवीं, घ- तेरहवीं।

प्रश्न 9- हरिशयनी एकादशी कब होती है?

क- वैशाख में, ख- ज्येष्ठ में, ग- आषाढ़ में, घ- श्रावण में।

प्रश्न 10- देवोत्थनी एकादशी कब होती है?

क-भाद्रपद में, ख- आश्विन में, ग-कार्त्तिक में, घ- मार्गशीर्ष में।

4.4.2 चूड़ाकरण संस्कार का मुहूर्त्त-

इससे पूर्व के प्रकरण में आपने कर्णवेध संस्कार के बारे में जाना। अब हम चूड़ाकरण संस्कार के विषय में चर्चा करने जा रहे है। चूड़ाकरण संस्कार के बारे में बतलाते हुये कहा गया है कि-

चूडावर्षात्तृतीयात् प्रभवति विषमे अष्टार्करिक्त्याद्यषष्ठी।

पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम्।

वारे लग्नांशयोश्चास्वभनिधनतनौ नैधने शुद्धियुक्ते।
शाक्रोपेतैविमैत्रैमृदुलघुचरभैरायषट्त्रिस्थपापैः।।

अर्थात् चूड़ाकरण संस्कार जन्म समय से अथवा गर्भाधान से तीसरे आदि विषम वर्ष में करना चाहिये। अष्ट अर्थात् अष्टमी, अर्क अर्थात् द्वादशी, रिक्ता यानी चतुर्थी, नवमी व चतुर्दशी, आद्य यानी प्रतिपदा, षष्ठी तिथियों और पर्वों को छोड़कर अन्य द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी एवं त्रयोदशी तिथियों में चैत्रमास को छोड़कर, उदगयन समय यानी उत्तरायन यानी माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ एवं आषाढ़ मासों में, ज्ञ यानी बुध, इन्दु यानी सोम, शुक्र एवं इज्य यानी गुरु वारों में, और इन्ही की राशियों यानी वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, धनु व मीन में और इन्ही के नवांश यानी नवें अंश में, जिस बालक का मुण्डन संस्कार करना हो उसकी जन्म राशि ओर जन्म लग्न से आठवीं राशि के लग्न को छोड़कर अन्य लग्नों में, लग्न से आंठवें स्थान में कोई शुभ या पापग्रह न हो, ज्येष्ठा से युक्त अनुराधा सहित मृदुसंज्ञक यानी मृगशिरा, रेवती, चित्रा नक्षत्रों में, चर संज्ञक यानी स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा एवं शतभिषा, लघु संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी, पुष्य इन बारह नक्षत्रों में, लग्न से तीन, छ, ग्यारह स्थानों में पापग्रह यानी सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु के रहने पर चूड़ाकर्म यानी मुण्डन संस्कार शुभ होता है। पराशर मुनि के अनुसार अष्टम में शुक्र की स्थिति अशुभ नही होती है।

चूड़ाकरण लग्न या केन्द्र में ग्रहों की स्थिति के अनुसार फलों का वर्णन किया गया है जो अधोलिखित है-

क्षीणचन्द्रकुजसौरिभास्करैर्मत्युशस्त्रमृतिपंगुता ज्वराः।
स्यु क्रमेण बुधजीवभार्गवैः केन्द्रगैश्चशुभमिष्टतारया।।

अर्थात् चूड़ाकरणकालिक लग्न से केन्द्र में क्षीड़ चन्द्रमा हो तो बालक की मृत्यु, मंगल हो तो शस्त्र से मृत्यु, शनि हो तो पंगुता, सूर्य हो तो ज्वर होता है और बुध , गुरु, शुक्र केन्द्र में हो तथा तारा दो, चार, छ, सात, नव हो तो चूड़ाकर्म शुभ होता है।

चौल कर्म में तारा बल को आवश्यक बतलाया गया है। मुहूर्त्तचिन्तामणि नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि -

तारादौष्ट्ये अब्जे त्रिकोणोच्चगे वा क्षौरं सत्स्यात्सौम्यमित्रस्ववर्गे।
सौम्ये भेब्जे शोभने दुष्टतारा शस्ता ज्ञेया क्षौरयात्रादिकृत्ये।।

अर्थात् तारा के दुष्ट यानी एक, तीन, पांच, सात होने पर भी यदि चन्द्रमा मुण्डन लग्न से त्रिकोण में हो, अपनी उच्च राशि हो, या शुभग्रह के धर में हो, या अपने मित्र के वर्ग में हो या अपने ही वर्ग में

हो तो क्षौर कर्म शुभ होता है। यदि चन्द्रमा गोचर में शुभ स्थान पर हो और शुभ ग्रह की राशि में भी हो तो क्षौर कर्म यात्रा आदि में दुष्ट तारा को दोष नष्ट हो जाता है।

अतः उपरोक्त अध्ययन से आपको चूड़ाकरण संस्कार के मुहूर्त्त क्या है ? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 5 उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं।

अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- विचैत्रो शब्द का क्या होगा ?

क- चैत्र मास को छोड़कर, ख- चित्त को छोड़कर,

ग- चैत्र मास को लेकर, घ- चित्रा नक्षत्र को छोड़कर।

प्रश्न 2- उदगयनसमय क्या है?

क- उत्तरायण, ख- दक्षिणायन, ग- याम्य गोल, घ- लिखित सभी।

प्रश्न 3- ज्ञ शब्द का अर्थ क्या है?

क- सोम, ख- मंगल, ग- बुध, घ- गुरु।

प्रश्न 4- इन्दु शब्द का अर्थ क्या है?

क- सोम, ख- मंगल, ग- बुध, घ- गुरु।

प्रश्न 5- इज्य शब्द का अर्थ क्या है?

क- सोम, ख- मंगल, ग- बुध, घ- गुरु।

प्रश्न 6-चूड़ाकरणकालिक लग्न से केन्द्र में क्षीड़ चन्द्रमा हो तो फल होता है?

क-मृत्यु, ख- शस्त्र से मृत्यु, ग-पंगुता, घ- ज्वर।

प्रश्न 7-चूड़ाकरणकालिक लग्न से केन्द्र में मंगल हो तो फल होता है?

क-मृत्यु, ख- शस्त्र से मृत्यु, ग-पंगुता, घ- ज्वर।

प्रश्न 8-चूड़ाकरणकालिक लग्न से केन्द्र में शनि हो तो फल होता है?

क-मृत्यु, ख- शस्त्र से मृत्यु, ग-पंगुता, घ- ज्वर।

प्रश्न 9-चूड़ाकरणकालिक लग्न से केन्द्र में सूर्य हो तो फल होता है?

क-मृत्यु, ख- शस्त्र से मृत्यु, ग-पंगुता, घ- ज्वर।

प्रश्न 10-चूड़ाकरण में बुध, गुरु, शुक्र केन्द्र में हो तथा तारा दो, चार, छ, सात, नव हो तो चूड़ाकर्म

क- शुभ होता है। ख- अशुभ होता है। ग- माता को कष्ट होता है। घ- पिता को कष्ट होता है।

इस प्रकार आपने चूड़ाकरण संस्कार के मुहूर्त्त के बारे में जाना। अब हम उपनयन एवं दीक्षा के मुहूर्त्तों के बारे में चिन्तन करेगें।

4.4.3 उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त्त

उपनयन संस्कार के परिचय में आपको उपनयन के बारे में बताया जा चुका है। अब हम इस प्रकरण में उपनयन कब कराना चाहिये, दीक्षा के लिये क्या मुहूर्त्त एवं फल होगा इस पर विचार करेगें। इसके अध्ययन से उपनयन का काल निर्धारित करने का ज्ञान आपको हो जायेगा।

उपनयन संस्कार को व्रतबन्ध शब्द से भी प्रायः सम्बोधित किया जाता है। इसमें नक्षत्र इत्यादिकों का चिन्तन करते हुये कहा गया है-

क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वा रौद्रेर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने व्रतं सत्।

द्वित्रीषुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ च कृष्णादिमत्रिलवके पि न चापरान्हे।।

अर्थात् क्षिप्र संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी, पुष्य, ध्रुव संज्ञक यानी रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, आश्लेषा, चर संज्ञक यानी स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल, मृदु संज्ञक यानी मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों पूर्वा एवं आर्द्रा इन बाईस नक्षत्रों में, रवि, बुध, गुरु, शुक्र तथा सोम इन पांच वारों में, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, एकादशी, द्वादशी व दशमी तिथियों में एवं कृष्णपक्ष के प्रथम त्रिभाग यानी प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी तिथियों में उपनयन संस्कार उत्तम होता है। उपनयन दिन के अपरान्ह में नही करना चाहिये। मध्यान्ह में मध्यम श्रेणी का होता है।

इस सन्दर्भ में आचार्य वसिष्ठ, कश्यप एवं नारद के मत में हस्त से तीन, श्रवण से तीन, रोहिणी से दो, पुनर्वसु से दो, रेवती से दो, तीनों उत्तरा और अनुराधा ये सोलह नक्षत्र ही उपनयन में लिये गये हैं। ब्राह्मण को पुनर्वसु नक्षत्र में उपनयन निषिद्ध माना गया है। अतः उपनयन में यही नक्षत्र उत्तम है। आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, तथा मूल ये छ नक्षत्र, ब्राह्मण के लिये पुनर्वसु सहित सात नक्षत्र वसिष्ठ आदि के मत से निषिद्ध होते हुये भी आचार्य के मत में विहित है। अतः इनको मध्यम श्रेणी का समझना चाहिये। चैत्र का महीना और मीन राशि के सूर्य में उपनयन अतिप्रशस्त होता है। ज्येतिर्निबन्ध नामक ग्रन्थ में लिखा गया है कि-

जन्मभाद् दुष्टगे सिंहे नीचे वा शत्रुभे गुरौ।

मौंजीबन्धः शुभः प्रोक्तं चैत्रे मीनगते रवौ।।

अन्यत्र लिखा गया है कि-

गोचराष्टकवर्गाभ्यां यदि शुद्धिर्न जायते।
तदोपनयनं कार्यं चैत्रे मीनगते गुरौ।।

तथा-

जीवभार्गवयोरस्ते सिंहस्थे देवतागुरौ।
मेखलाबन्धनं कार्यं चैत्रे मीनगते रवौ।।

व्रतबन्ध में लग्न भंग योग की चर्चा करते हुये बतलाया गया है कि-

कवीज्यचन्द्रलग्नपा रिपौ मृतौ व्रते अधमाः।
व्यये अब्जभार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः।।

बालक का उपनयन ऐसे लग्न में निश्चित करना चाहिये जिसके छठे और आठवें स्थान में शुक्र, बृहस्पति एवं चन्द्रमा स्थित होकर लग्न के स्वामी न हो। बारहवें स्थान में चन्द्रमा और शुक्र न हो तथा लग्न से आठवें एवं पांचवें स्थान में पापग्रह यानी सूर्य, भौम, शनि, राहु एवं केतु न हो। इस प्रकार की ग्रह स्थिति बालक की उन्नति में बाधक होती है।

सामान्य प्रकार से लग्न शुद्धि की चर्चा करते हुये बतलाया गया है कि उपनयन में लग्न से छठें, आठवें या बारहवें स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों में शुभग्रह पड़े हो तो शुभफलदायक होते हैं एवं तीन, छ तथा ग्यारहवें स्थान में पापग्रह उत्तम होते है। तथा पूर्ण चन्द्रमा वृषराशि का या कर्क राशि का होकर उपनयन लगन में हो तो उत्तम होता है।

अधिपतियों के संबंध में यह श्लोक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है-

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ राजन्यानामोषधीशो विशां च।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्याच्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्या।।

अर्थात् ब्राह्मणों के स्वामी शुक्र और वृहस्पति है। क्षत्रियों के स्वामी मंगल और सूर्य है। वैश्यों के स्वामी चन्द्रमा है, शूद्रों के स्वामी बुध और अन्त्यजों के स्वामी शनि है। ऋग्वेद के स्वामी बृहस्पति, यजुर्वेद के स्वामी शुक्र, सामवेद के स्वामी मंगल, अथर्ववेद के स्वामी बुध होते है।

विशेष बतलाते हुये कहा गया है कि प्रथम गर्भ से उत्पन्न बालकों का उपनयन जन्म नक्षत्र, जन्म मास, जन्म लगन में हो तो वह बालक बड़ा विद्वान होता है। क्षत्रिय एवं वैश्य के प्रथम गर्भ को छोड़करे दूसरे गर्भ से उत्पन्न बालकों का उपनयन होने से वे भी अधिक विद्वान् होते हैं। बृहस्पति अपनी उच्च राशि, अपनी राशि, अपने मित्र की राशि, मकर , कुम्भ राशि में भी अपने नवांश और वर्गोत्तम में वृहस्पति हो तो जन्म राशि से चार, आठ, बारहवीं राशि पर होते हुये भी उत्तम होता है। अपनी नीच राशि और शुभ राशि में हो तो गोचर से शुभ होने पर भी अशुभ फलदायक ही होते हैं।

कालातिपत्ति में लड़के के उपनयन में और लड़की के विवाह में यदि उक्त प्रकार से गुरु शुभ न होता हो तो अष्टक वर्ग से बृहस्पति की शुद्धि देखनी चाहिये। राजमार्तण्ड में लिखा गया है कि-

अष्टवर्गेण ये शुद्धास्ते शुद्धाः सर्वकर्मसु।
सूक्ष्माष्टवर्गसंशुद्धिः स्थूला शुद्धिस्तु गोचरे।।

इससे यह भी सिद्ध होता है कि गोचर से शुद्ध गुरु होने पर भी यदि अष्टक वर्ग से उत्तम गुरु नही है तो उपनयन एवं विवाह अशुभ ही होते है।

व्रतबन्ध में प्रायः इन तत्वों का निषेध देखने को मिलता है-

कृष्णे प्रदोषे अनध्याये शनौ निश्यपरान्हके।
प्राक् सन्ध्यागर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलग्रहो।।

अर्थात् कृष्णपक्ष में यानी षष्ठी से अमावास्या तक, प्रदोष के दिन यानी द्वादशी तिथि को अर्धरात्रि के पहले यदि त्रयोदशी लग जाय, षष्ठी को डेढ़ प्रहर रात के पहले सप्तमी आ जाय और तृतीया को एक प्रहर के पहले चतुर्थी प्रारम्भ हो जाय तो ये तीनों प्रदोष कहे जाते है। प्रदोष के दिन उपनयन करना मना है। प्रदोष समय में वेदों और वेदांगों का अध्ययन-अध्यापन भी नही करना चाहिये। अनध्याय भी उपनयन में वर्जित है। अनध्याय का मतलब आषाढ़, ज्येष्ठ, पौष और माघ के शुक्लपक्ष में क्रम से दशमी, द्वितीया, एकादशी, द्वादशी अर्थात् आषाढ़ शुक्ल दशमी, ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया, पौष शुक्ल एकादशी और माघ शुक्ल द्वादशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावास्या, प्रतिपदा, अष्टमी और संक्रान्ति के दिन ये सब व्रतबन्ध में अनध्याय है। इनमें उपनयन संस्कार नही करना चाहिये। व्रतबन्ध में शनिवार दिन भी वर्जित है। अपरान्ह काल यानी दिनमान के तृतीयांश में, रात्रि में, जिस दिन प्रातः काल मेध गर्जन हो उस दिन और गलग्रह तिथियों यानी त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावास्या, पतिपदा, चतुर्थी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी तिथियों में उपनयन करना शुभ नही होता है।

उपनयन किस नवांश में किया जा रहा है इसका भी विचार इस प्रकार किया गया है-

क्रूरो जडो भवेत् पापः पटुः षट्कर्मकृद् बटुः।
यज्ञार्थभुक् तथा मूर्खो रव्याद्यंशे तनौ क्रमात्।।

अर्थात् उपनयन लग्न में यदि सूर्य का नवांश हो तो उपनीत बालक क्रूर स्वभाव का होता है। चन्द्रमा का नवमांश हो तो जड़ होता है। मंगल का नवांश हो तो पापकर्म करने वाला होता है। बुध का नवांश हो तो पटु होता है। बृहस्पति का नवांश हो तो षट्कर्मा होता है। शुक्र का नवांश हो तो यज्ञकर्ता और धनवान होता है। शनि का नवमांश हो तो बालक मूर्ख होता है।

उपनयन के समय किसी भी राशि में यदि चन्द्रमा शुभ राशि के तृतीय, षष्ठ, द्वितीय, सप्त, नवम या द्वादश नवांश में हो तो वह उपनीत बालक विद्या में रुचि रखने वाला होगा। पापग्रह की राशि प्रथम,

अष्टम, पंचम, दशम एवं एकादश के नवांश में हो तो अतिदरिद्र होता है। अपने नवांश में हो तो दुखी होता है। किन्तु श्रवण नक्षत्र और पुनर्वसु नक्षत्र में चन्द्रमा हो और कर्क का नवांश हो तो धनवान् होता है। अर्थात् श्रवण नक्षत्र और पुनर्वसु के चतुर्थ चरण में चन्द्रमा रहे तो धनी होता है।

इसी प्रकार यह भी विचार किया गया है कि उपनयन काल में किस ग्रह के रहने से क्या फल प्राप्त होता है। जैसे-

राजसेवी वैश्यवृत्तिः शस्त्रवृत्तिश्च पाठकः।
प्राज्ञो अर्थवान् म्लेचछसेवी केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः।।

अर्थात् उपनयन के समय में सूर्य केन्द्र में हो तो उपनीत बालक राजा का नौकर होता है। चन्द्रमा केन्द्र में हो तो वैश्यवृत्ति करने वाला होता है। मंगल केन्द्र में हो तो शस्त्रवृत्ति वाला होता है। बुध केन्द्र में हो तो अध्यापक होता है। गुरु केन्द्र में हो तो विद्वान् होता है। शुक्र केन्द्र में हो तो धनवान होता है। और शनि केन्द्र में हो तो नगरपालिका इत्यादि सेवा में होता है। इस प्रकार उपनयन में आचार्य ब्रह्मचारी को उपदेश देता है जैसे- वर्णारम विहित कर्म करो। दिन में कभी मत सोओ। अपनी बोली पर नियंत्रण रखो। अग्नि में हवनार्थ समिदाधान करो। भोजन के पूर्व एवं पश्चात् जल का आचमन करो। इस प्रकार उपदेश हो जाने पर मन्त्र दीक्षा का कार्यक्रम होता है।

दीक्षा- उपदेश देने के बाद होम की अग्नि के उत्तर में आचार्य के पैरों को पकड़कर बैठे हुये आचार्य को देखते हुये और उनसे देखे जाते हुये कुमार को सावित्री मन्त्र सिखाये। कुछ आचार्यों के विचार से दाहिनी ओर खड़े या बैठे हुये कुमार को आचार्य सावित्री मन्त्र सिखलाये। आचार्य सावित्री मन्त्र पहले एक एक पाद स्वयं कहकर फिर शिष्य से कहलवाये। फिर आधी आधी ऋचा, तीसरी बार सम्पूर्ण मन्त्र आचार्य के साथ शिष्य दोहरा दे। ब्राह्मण कुमार को उपनयन के बाद तत्क्षण आचार्य गायत्री छन्द में निबद्ध सिखलावे। क्योकि वेद का वचन है आग्नेयो वै ब्र्राह्मणः अर्थात् ब्राह्मण में अग्निदेव का अंश रहता है। क्षत्रिय कुमार को त्रिष्टुप् छन्द में निबद्ध सावित्री मन्त्र सिखलावे। वैश्य कुमार को जगती छन्द में निबद्ध सावित्री मन्त्र सिखलाये। सभी को गायत्री छन्द में सावित्री मन्त्र सिखलाया जा सकता है। सावित्री ग्रहण के पश्चात् ब्रह्मचारी को प्रतिदिन समिदाधान करना चाहिये।

उपनयन संसकार एवं दीक्षा के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 6

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- उपनयन लग्न में यदि सूर्य का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है-

क- क्रूर , ख- जड़, ग- पापकर्मकर्ता, घ- पटु।

प्रश्न 2- उपनयन लग्न में यदि चन्द्र का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है-

क- क्रूर , ख- जड़, ग- पापकर्मकर्ता, घ- पटु।

प्रश्न 3- उपनयन लग्न में यदि मंगल का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है-

क- क्रूर , ख- जड़, ग- पापकर्मकर्ता, घ- पटु।

प्रश्न 4- उपनयन लग्न में यदि बुध का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है-

क- क्रूर , ख- जड़, ग- पापकर्मकर्ता, घ- पटु।

प्रश्न 5- उपनयन लग्न में यदि गुरु का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है-

क- षट्कर्मा , ख- यज्ञकर्ता, ग- मूर्ख , घ- पटु।

प्रश्न 6- उपनयन लग्न में यदि शुक्र का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है-

क- षट्कर्मा , ख- यज्ञकर्ता, ग- मूर्ख , घ- पटु।

प्रश्न 7- उपनयन लग्न में यदि शनि का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है-

क- षट्कर्मा , ख- यज्ञकर्ता, ग- मूर्ख , घ- पटु।

प्रश्न 8-उपनयन के समय में सूर्य केन्द्र में हो तो उपनीत बालक होता है-

क- राज सेवी, ख- वैश्य वृत्ति, ग- शस्त्रवृत्ति, घ- अध्यापक।

प्रश्न 9-उपनयन के समय में चन्द्र केन्द्र में हो तो उपनीत बालक होता है-

क- राज सेवी, ख- वैश्य वृत्ति, ग- शस्त्रवृत्ति, घ- अध्यापक।

प्रश्न 10-उपनयन के समय में मंगल केन्द्र में हो तो उपनीत बालक होता है-

क- राज सेवी, ख- वैश्य वृत्ति, ग- शस्त्रवृत्ति, घ- अध्यापक।

प्रश्न 11-उपनयन के समय में बुध केन्द्र में हो तो उपनीत बालक होता है-

क- राज सेवी, ख- वैश्य वृत्ति, ग- शस्त्रवृत्ति, घ- अध्यापक।

4.5 सारांश-

इस ईकाई में आपने कर्णवेध, चूड़ाकरण एवं उपनयन तथा दीक्षा के मुहूर्त्तों के बारे में ज्ञान प्राप्त किया। इस ज्ञान के बिना लोग इन संस्कारों का सम्पादन नही कर सकते । क्योंकि प्रत्येक कार्य का आरम्भ करने वाला व्यक्ति यह भली भंति सोचता है कि कार्य निकर्वघ्नता पूर्वक सम्पन्न होना चाहिये। सम्पन्नता के साथ - साथ निश्चित उद्देश्य को भी प्राप्त करने में वह कार्य सफलता प्रदान करे । और वह तभी सम्भव हो सकता जब उचित मुहूर्त्त से संस्कार करायें जाये ।

कर्णबेध संस्कार में कहा गया है कि युग्माब्द यानी सम वर्ष को छोड़कर विषम वर्षों में कर्णवेध संस्कार करा सकते है। जन्म तारा यानी जन्म नक्षत्र से पहली, दसवीं और उन्नीसवीं नक्षत्र को छोड़कर जन्म से छठवें, सातवें एवं आठवें महीने में अथवा जन्म दिन से बारहवें या सोलहवें दिन, बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा सोम वारों में, विषम वर्षों में, श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृदुसंज्ञक यानी मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा एवं लघु संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी, पुष्य इन दश नक्षत्रों में बालकों का कर्णवेध उत्तम होता है।

चूड़ाकरण संस्कार जन्म समय से अथवा गर्भाधान से तीसरे आदि विषम वर्ष में करना चाहिये। अष्ट अर्थात् अष्टमी, अर्क अर्थात् द्वादशी, रिक्ता यानी चतुर्थी, नवमी व चतुर्दशी, आद्य यानी प्रतिपदा, षष्ठी तिथियों और पर्वों को छोड़कर अन्य द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी एवं त्रयोदशी तिथियों में चैत्रमास को छोड़कर, उदगयन समय यानी उत्तरायन यानी माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ एवं आषाढ़ मासों में, ज्ञ यानी बुध, इन्दु यानी सोम, शुक्र एवं इज्य यानी गुरु वारों में, और इन्ही की राशियों यानी वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, धनु व मीन में और इन्ही के नवांश यानी नवें अंश में, जिस बालक का मुण्डन संस्कार करना हो उसकी जन्म राशि ओर जन्म लग्न से आठवीं राशि के लग्न को छोड़कर अन्य लग्नों में, लग्न से आंठवें स्थान में कोई शुभ या पापग्रह न हो, ज्येष्ठा से युक्त अनुराधा रहित मृदुसंज्ञक यानी मृगशिरा, रेवती, चित्रा नक्षत्रों में, चर संज्ञक यानी स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा एवं शतभिषा, लघु संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी, पुष्य इन बारह नक्षत्रों में, लग्न से तीन, छ, ग्यारह स्थानों में पापग्रह यानी सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु के रहने पर चूड़ाकर्म यानी मुण्डन संस्कार शुभ होता है।

उपनयन संसकार में क्षिप्र संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी, पुष्य, ध्रुव संज्ञक यानी रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, आश्लेषा, चर संज्ञक यानी स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल, मृदु संज्ञक यानी मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों पूर्वा एवं आर्द्रा इन बाईस नक्षत्रों में, रवि, बुध, गुरु, शुक्र तथा सोम इन पांच वारों में, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, एकादशी, द्वादशी व दशमी तिथियों में एवं कृष्णपक्ष के प्रथम त्रिभाग यानी प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी तिथियों में उपनयन संस्कार उत्तम होता है। उपनयन दिन के अपरान्ह में नही करना चाहिये। मध्यान्ह में मध्यम श्रेणी का होता है।

4.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

राजसेवी - राजा की सेवा करने वाला, वैश्यवृत्ति- व्यापार से आजीविका चलाने वाला, शस्त्रवृत्ति- शस्त्र कार्य से आजीविका चलाने वाला, पाठक- पढ़ाने वाला, प्राज्ञ- ज्ञानवान, अर्थवान्- धनवान,

म्लेचछसेवी- म्लेच्छों की सेवा करने वाला, खेचर- ग्रह, क्रूर- कठोर या उग्र, जड़- मूर्ख, पटु- कुशल, षट्कर्मकृद्- छः कर्म करने वाला, बटु- उपवीती बालक, विप्राधीश- विप्रों के स्वामी, भार्गव-शुक्र, इज्य- गुरू, कुज- मंगल, अर्क- सूर्य, राजन्य- क्षत्रिय, ओषधीश- औषधियों के स्वामी, विशां - वैश्य, ज्ञ- बुध, छाखेशाः- शाखाओं के स्वामी, जीव- गुरु, आर- मंगल, सौम्य- बुध, जन्मभाद्- जन्म नक्षत्र से, दुष्टगे- दुष्ट स्थान, शत्रुभे - शत्रु राशि, मौंजीबन्ध- उपनयन, प्रोक्त- कहा गया है, चैत्रे - चैत्र मास में मीनगते- मीन राशि में,जीव- गुरु, सिंहस्थ- सिंह राशि में स्थित, देवतागुरौ- देवताओं के गुरु वृहस्पति, मेखलाबन्धन- मेखला को बांधना, कवि- शुक्र, लग्नपा- लग्न के स्वामी, रिपु- शत्रु, मृत्यु- अष्टम, व्रते - उपनयन, अधमा- निकृष्ट, व्यये - बारहवें स्थान में, अब्ज- चन्द्रमा, तनु- लग्न, सुते- पंचम स्थान, खलाः- पापग्रह, क्षिप्र- क्षिप्र संज्ञक नक्षत्र, ध्रुव- ध्रुव संज्ञक नक्षत्र, अहि- आश्लेषा, चर- चर संज्ञक नक्षत्र,मूल- नक्षत्र का नाम,मृदु- मृदु संज्ञक नक्षत्र, त्रिपूर्वा - पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपदा, अर्क- सूर्य, विद्- बुध, गुरु- वृहस्पति, सित- शुक्रवार, इन्दुदिने- सोमवार, व्रतं-उपनयन, सत्- शुभ, द्वि तिथि- द्वितीया तिथि, त्री तिथि- तृतीया, इषु- पंचमी तिथि, रवि तिथि- द्वादशी तिथि, त्रिलवक- त्रिनवांश, चूडा- चूड़ाकरण, प्रभवति- होता है, अष्ट- अष्टमी, रिक्ता- चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, आद्य- प्रतिपदा, उन- कम, आहे- दिन, विचैत्र-चैत्र मास को छोड़कर, उदगयनसमये- उत्तरायन, ज्ञ- बुध, इन्दु-चन्द्र, वार- दिन, अंश- नवमांश, निधन- अष्टम, शाक्र- ज्येष्ठा, उपेत- समेत, विमैत्र- अनुराधा, मृदु- मृदु संज्ञक नक्षत्र, लघु- लघु संज्ञक नक्षत्र, चर- चर संज्ञक नक्षत्र, भ-नक्षत्र, आय- एकादश स्थान, षट्- छठा स्थान, त्रिस्थ- तीसरा स्थान, क्रतु- यज्ञ, पाणिपीड- विवाह, मृति- मृत्यु, बन्ध- बन्धन, क्षुरकर्म - क्षौर कर्म, शववाह- शव का वहन करना या ढोना, तीर्थगम- तीर्थ में जाना, सिन्धुमज्जन- सिन्धुस्नान, गर्भिणीपति- गर्भवती स्त्री का स्वामी।।

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1

1-क, 2-ख, 3-क, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 2

1-क, 2-ख, 3-क, 4-क, 5-ख, 6-ख, 7-ख, 8-क, 9-क, 10-ख।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 3

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ग, 10-घ ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 4

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-क, 7-ख, 8-क, 9-ग, 10-ग।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 5

1-क, 2-क, 3-ग, 4-क, 5-घ, 6-क, 7-ख, 8-ग, 9-घ, 10-क ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 6

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-क, 9-ख, 10-ग, 11-घ ।

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मुहूर्त्त चिन्तामणिः।

2-भारतीय कुण्डली विज्ञान भग-1

3-शीघ्रबोध।

4-शान्ति- विधानम्।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-उत्सर्ग मयूख।

7-विद्यापीठ पंचांग।

8- संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

4.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- स्मृति कौस्तुभः।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।

3- याज्ञवल्क्य स्मृतिः।

4.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1-कर्णवेध संस्कार का परिचय बतलाइये।

2- चूडाकरण संस्कार का परिचय बतलाइये।

3- उपनयन संस्कार का परिचय दीजिये।

4- कर्णवेध संस्कार का मुहूर्त्त दीजिये।

5- चूड़ाकरण संस्कार का मुहूर्त्त दीजिये।

6- उपनयन संस्कार का मुहूर्त्त लिखिये।

7- कर्णवेध संस्कार का महत्त्व लिखिये।

8- चूड़ाकरण संस्कार का महत्त्व लिखिये।

9- उपनयन संस्कार का महत्त्व लिखिये।

10- उपनयन संस्कार हेतु लग्नों का विचार का वर्णन कीजिये।

खण्ड - 3
विविध मुहूर्त्त

इकाई – 1   वास्तु शान्ति, सूतिका स्नान, एवं अक्षराम्भ मुहूर्त्त

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड के प्रथम इकाई '**वास्तु शान्ति, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त्त**' नामक शीर्षक इकाई से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने चूड़ाकरण एवं व्रतबन्ध संस्कार का अध्ययन कर लिया है। यहाँ पर इस इकाई में आप 'वास्तु शान्ति, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त्त' का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

भारतीय सनातन परम्परा में हमारे प्राचीन आचार्यो ने मनुष्य जीवन को उत्तरोत्तर विकास के पथ पर अग्रसर करने हेतु निश्चित अवधि में उनके जन्म से लेकर समय – समय पर विभिन्न संस्कार करने के लिये कहा है। यदि आचार्योक्त उन संस्कारों को मनुष्य अपने जीवन में यदि करें तो निश्चय ही सर्वदा उसका कल्याण होगा। '**वास्तु शान्ति, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त्त**' उन मुहूर्त्तों में से है।

इस इकाई में आप '**वास्तु शान्ति, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त्त**' से सम्बन्धित विषयों का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेंगे कि –

1. वास्तु शान्ति किसे कहते है तथा उसको करने का शुभ मुहूर्त्त कब होता है।
2. सूतिका स्नान से क्या तात्पर्य है और वह कब शुभ होता है।
3. अक्षराम्भ मुहूर्त्त क्या है। तथा उसे करने का क्या महत्व है।
4. '**वास्तु शान्ति, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त्त**' का वर्तमान स्वरूप क्या है।
5. उपर्युक्त संस्कार को करने की विधि क्या है।

1.3 वास्तु शान्ति, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त्त

वास्तु शान्ति मुहूर्त्त -

गृहप्रवेश के पूर्व दिन पंचांग शुद्धि उपलब्ध होने पर अथवा तत्पूर्व ही शुभ दिन में वास्तु पूजा – बलिक्रियादि का आचरण करना चाहिये।

तिथि – 1 कृष्णपक्ष, 2,3,5,7,10,11,12,13 शुक्लपक्ष।

वार – सोमवार, बुधवार, गुरू, शुक्रवार।

नक्षत्र – अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तरात्रय, हस्त,चित्रा, स्वाती, अनुराधा, मूल, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा एवं रेवती।

लग्न – कोई भी राशि लग्न जब 1,2,4,5,7,9, 10,11 वें भावों में शुभग्रह और 3,6,11 वें पापग्रह हों तथा 8,12 वें सूर्य, मंगल, शनि राहु, केतु न हो।

सूतिका (प्रसुता) स्नान मुहूर्त्त – सूतिका स्नान जन्मदिन से एक सप्ताह के पश्चात ही अभिहित है।

तिथि - 1 (कृ.) 2,3,5,7,10,11,13 (शु.) 15।

वार – सूर्य, मंगल एवं गुरू।

नक्षत्र – अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, उत्तरात्रय, हस्त, स्वाती, अनुराधा एवं रेवती।

लग्न - 2,3,4,6,7,9,12 लग्न राशि। लग्न सौम्य ग्रह से युत व दृष्ट हो तथा पंचम में ग्रह – राहित्य हो।

अक्षरारम्भ व विद्यारम्भ मुहूर्त्त – बालक पॉच वर्ष की अवस्था में सम्प्राप्त हो जाने पर अधोवर्णित विशुद्ध दिन को विघ्नविनायक, शारदा, लक्ष्मीनारायण, गुरू एवं कुलदेवता की पूजा के साथ उसे लिखने पढ़ने का श्रीगणेश करवाना चाहिये। अर्थात् अक्षराम्भ संस्कार करवाना चाहिये।

मास – कुम्भ संक्रान्ति वर्जित तथा उत्तरायण मास।

तिथि – शुक्लपक्ष की 2,3,5,7,10,11,12।

वार – सोमवार, बुधवार, गुरूवार एवं शुक्रवार।

नक्षत्र – अश्विनी, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, अभिजित्, श्रवण एवं रेवती।

लग्न – 2,3,6,9,12 लग्नराशि। अष्टम भाव ग्रहरहित होना चाहिये।

वर्णमाला गणितादि में बालक परिपक्व हो जाने पर भविष्यत आजीविका प्रदात्री कोई विशेष या सर्वसामान्य विद्या का शुभारम्भ करना चाहिये। अप्रधान रूप से विद्यारम्भ मुहूर्त्त –

मास – फाल्गुन के अतिरिक्त उत्तरायणमास।

तिथि – 2,3,5,7,10,11,13 आदि शुक्लपक्ष की तिथियॉ।

वार – रविवार, गुरूवार एवं शुक्रवार।

नक्षत्र – अश्विनी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा एवं शतभिषा।

लग्न - 2,5,8 राशि लग्न जब केन्द्र त्रिकोण में शुभ ग्रह तथा 3,6,11 वें क्रूर ग्रह हों।

आचार्य रामदैवज्ञ ने मुहूर्त्तचिन्तामणि में प्रतिपादित किया है -

प्रसूता – स्नान का मुहूर्त्त –

पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु सूती –
स्नानं समित्रभरवीज्यकुजेषु शस्तम्।
नार्द्रात्रयश्रुतिमघान्तकमिश्रमूल
त्वाष्ट्रे ज्ञसौरिवसुषड्विरिक्ततिथ्याम्॥

रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा , हस्त, स्वाती, अश्विनी, अनुराधा ये नक्षत्र तथा रवि, गुरू और भौमवार प्रसूता के स्नान में शुभ है। आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी, विशाखा, कृत्तिका, मूल और चित्रा ये नक्षत्र बुध, शनिवार तथा 8/6/12/4/9/14 इन तिथियों में प्रसुति का स्नान शुभ नहीं है।

प्रसूतिका स्त्री के जलपूजन का मुहूर्त्त –

कवीज्यास्तचैत्राधिमासे न पौषे जलं पूजयेत्सूतिकामासपूर्तौ।
बुधेन्द्वीज्यवारे विरिक्ते तिथौ हि श्रुतीज्यादितीन्द्वर्कनैर्ऋत्यमैत्रै:॥

शुक्र और वृहस्पति के अस्त, चैत्रमास, अधिकमास, पौष इनमें जल – पूजा का त्याग करना चाहियें। बुध, सोम, वृहस्पतिवार, 4।9।14 तिथि तथा श्रवण, पुष्य, पुनर्वसु, मृगशिरा, हस्त, मूल, अनुराधा नक्षत्रों में जल पूजा शुभ है।

अक्षराम्भ मुहूर्त्त –

गणेश विष्णु वाग्रमा: प्रपूज्य पंचमाब्दके।
तिथौ शिवार्कदिग्द्विषट्शरत्रिके रवावुदक्॥
लघुश्रवोऽनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे।
चरोनसत्तनौ शिशोर्लिपिग्रह: सतां दिने॥

गणेश, विष्णु, सरस्वती और लक्ष्मी का पूजन करके पंचम वर्ष में 11।12।10।2।6।5।3 तिथि में, उत्तरायण सूर्य हो और हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रों में चर 1,4,7,10 लग्न रहित अन्य लग्नों तथा शुभग्रह के वारों में बालक को अक्षराम्भ करना शुभ है।

विद्यारम्भ मुहूर्त्त –

मृगात्कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये
गुरूद्वयेऽर्कजीवविित्सितेऽह्नि षट्शरत्रिके।
शिवार्कदिग्द्विके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परै:
शुभैरधीतिरूत्तमा त्रिकोणकेन्द्रगै: स्मृता॥

मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शततारा, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा, पुष्य, आश्लेषा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, अनुराधा और रेवती इन नक्षत्रों में – रवि, बुध, गुरू, शुक्रवारों में 6,5,3,11,12,10,2 तिथियों में तथा शुभग्रह 9,5,1,4,7,10 वे स्थान में हो तब बालक को विद्यारम्भ करना शुभ है।

वास्तुपुरूष स्वरूपम् –

पुरा कृतयुगे ह्यासीन्महद्भुतं समुत्थिम्।
व्याप्यमानं शरीरेण सकलं भुवनं तत्त:।।
तद्दृष्टवा विस्मयं देवा गता: सेन्द्रा भयावृता:।
ततस्तै: क्रोधसन्तप्तैर्गृहीत्वा तमथासुरम्।।
विनिक्षिप्तमधोवक्त्रं स्थितास्तत्रैव ते सुरा:।
तमेव वास्तुपुरूषं ब्रह्मा कल्पितवान् स्वयम्।।

सत्ययुग के आरम्भ में एक महान प्राणी उत्पन्न हुआ, जो अपने विशाल शरीर से समस्त भुवनों में व्याप्त था, इसको देखकर देवराज इन्द्र सहित सभी देवता भय एवं आश्चर्य चकित थे, तदनन्तर उन्होंने क्रुद्ध होकर उस असुर को पकड़कर उसका शिर नीचे करके भूमि में गाड़ दिया और स्वयं वहॉं खड़े रहे। इसी का नाम ब्रह्मा ने वास्तुपुरूष रखा।

मनुष्य जब अपना गृह निर्माण करता है, तो उसे गृहनिर्माण प्रक्रिया में वास्तुशान्ति का ध्यान रखना चाहिये अर्थात् जब वास्तुशान्ति करवाकर वह गृह में प्रवेश करता है, तो निश्चय ही गृह में बाहरी आवरण से उसकी रक्षा होती है।

अभ्यास प्रश्न –

1.वास्तु शान्ति किन वारों में अशुभ होता है

क. सोम ख. बुध ग. गुरू घ. शनि

2. सूतिका से तात्पर्य है।

क. सूत ख. प्रसुता स्त्री ग. सही घ. कोई नहीं

3. अक्षराम्भ किन वारों में प्रशस्त होता है।

क. शनि ख. मंगल ग. रवि घ. शुक्र

4. अर्क किसका पर्याय है।

क. मंगल ख. सूर्य ग. गुरू घ. कोई नहीं

5. त्रिकोण होता है।

क. 4,7 ख. 2,5 ग. 5,9 घ. 1,2

1.4 सारांश

इस इकाई में पाठकों के ज्ञानार्थ वास्तु शान्ति मुहूर्त, सूतिका स्नान एवं अक्षरारम्भ मुहूर्त की चर्चा की गयी है। वास्तु शान्ति का सम्बन्ध गृहनिर्माण से है तथा सूतिका स्नान का जिस स्त्री का प्रसव हुआ हो उससे है तथा अक्षराम्भ का सम्बन्ध शिशु को प्रथम बार अक्षर बोध कराने वाला संस्कार से है। इन तीनों की आवश्यकता मनुष्य को अपने जीवन में पड़ती है। वस्तुत: आचार्यों द्वारा संस्कारों का निर्माण ही मानवों के सर्वतोमुखी विकासार्थ किया गया है।

1.5 शब्दावली

वास्तु = गृह के रक्षा करने वाले देवता।

सूतिका = जिस स्त्री का पुत्र उत्पन्न हुआ हो, और उससे लगने वाला अशौच।

अक्षराम्भ संस्कार = शिशु को प्रथम बार अक्षर का ज्ञान कराने हेतु किया जाने वाला संस्कार।

षोडश संस्कार = मानव जीवन में जीवन से मृत्यु पर्यन्त किये गये विभिन्न (16 प्रकार के) संस्कार

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. घ
2. ख
3. घ
4. ख
5. ग

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. संस्कारदीपक - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द पर्वतीय
2. पारस्करगृह्यसूत्र - आचार्य पारस्कर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दूसंस्कारविधिः - डा. राजबली पाण्डेय

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वास्तु शान्ति मुहूर्त संस्कार का परिचय प्रस्तुत करें।
2. सूतिका एवं अक्षराम्भ से आप क्या समझते है। विस्तार से वर्णन कीजिये।

इकाई – 2 वरवरण एवं विवाह मुहूर्त्त

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड के द्वितीय इकाई '**वरवरण एवं विवाह मुहूर्त्त**' नामक शीर्षक इकाई से सम्बन्धित है । इससे पूर्व की इकाई में आपने वास्तु शान्ति, सूतिका एवं अक्षाराम्भ मुहूर्त का अध्ययन कर लिया है । यहॉं पर इस इकाई में आप '**वरवरण एवं विवाह मुहूर्त्त**' का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

भारतीय सनातन परम्परा में हमारे प्राचीन आचार्यो ने मनुष्य जीवन को उत्तरोत्तर विकास के पथ पर अग्रसर करने हेतु निश्चित अवधि में उनके जन्म से लेकर समय – समय पर विभिन्न संस्कार करने के लिये कहा है । यदि आचार्योक्त उन संस्कारों को मनुष्य अपने जीवन में यदि करें तो निश्चय ही सर्वदा उसका कल्याण होगा। '**वरवरण एवं विवाह मुहूर्त्त**' उन मुहूर्त्तों में से है।

इस इकाई में आप '**वरवरण एवं विवाह मुहूर्त्त**' से सम्बन्धित विषयों का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेंगे कि –

1. वरवरण किसे कहते है तथा उसको करने का शुभ मुहूर्त्त कब होता है।
2. विवाह से क्या तात्पर्य है ।
3. वरवरण एवं विवाह का महत्व क्या है।
4. '**वरवरण एवं विवाह मुहूर्त्त**' का वर्तमान स्वरूप क्या है।
5. उपर्युक्त संस्कार को करने की विधि क्या है।

2.3 वरवरण एवं विवाह मुहूर्त्त' परिचय

विवाह मुहूर्त्त -

भारतीय आश्रमिक समाज वयवस्था के अन्तर्गत गृहस्थाश्रम ही सर्वोत्कृष्ट माना गया है। इसका कारण हैं कि स्वरूप सृष्टि का प्रादुर्भाव ही स्त्रीधारा और पुरूषधारा के पुनीत संगम से हुआ है । यह निर्विवाद सत्य हैं कि परमपिता परमात्मा ने स्वयं को ही, विश्व सृजन के उद्देश्य से नर और नारी स्वरूप दो लम्बरूप खण्डों में मूर्तिमान किया । वामांग को स्त्रीरूप एवं दक्षिणांग को पुरूष रूप में प्रचलित किया । शनै: शनै: इन धाराद्वय ने एक विशाल जन- समूह को खड़ा किया । इस प्रकार, आविर्भूत असंख्य नर नारियों ने संस्कृति के क्रमिक विकास के साथ अपने समकक्ष प्रतिद्वन्दी के प्रवरण की आवश्यकता का अनुभव किया । अन्ततोगत्वा, विवाह प्रथा का जन्म हुआ जो आने

वाली पीढियों के लिये अत्युपयोगी सिद्ध हुआ। विवाह ही गृहस्थाश्रम की आधारशिला है, और उसी माध्यम से मानव, देवर्षिपित्र्यादि ऋण त्रय से उऋण होकर पुरूषार्थ को प्राप्त करता है।

विवाह मास – मिथुनकुम्भमृगालि वृषाजगे मिथुनगेऽपि रवौ त्रिलवे शुचे।

अलीमृगाजगते करपीडनं भवति कार्तिक पौष मधुष्वपि ॥

सूर्य जब मिथुन, कुम्भ, वृश्चिक, वृष, मेष राशि में हो तथा आषाढ़ मास के प्रथम तृतीयांश तक विवाह करना शुभ होता है। माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ व मार्गशीर्ष ये माह विवाह के लिए शुभ होता है।

विवाह नक्षत्र – रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, मघा, मूला, अनुराधा, हस्त, स्वाती आदि नक्षत्रों में विवाह कार्य शुभ कहा गया है।

पक्ष व तिथि शुद्धि – शुक्ल पक्ष के प्रति आचार्यों का सभी शुभ कार्यों के सन्दर्भ में विशेष झुकाव है। कृष्ण पक्ष की भी अष्टमी तक मतान्तर से दशमी तक लिया जा सकता है। तिथियों के विषय में महत्व नहीं दिया जाता है तथापि जहॉ तक सम्भव हो रिक्ता तिथि को छोड़ना चाहिये। लेकिन प्रचलन ऐसा है कि चतुर्दशी, अमावस्या व शुक्ल प्रतिपदा को ही प्राय: छोड़ा जाता है।

वर वरण मुहूर्त्त – तीनों उत्तरा, तीनों पूर्वा, कृत्तिका, रोहिणी में शुभ वार व शुभ तिथि में उत्तम शकुनादि देखकर, चन्द्रबल वर व वरण कर्ता दोनों को शुभ होने पर वर का वरण करना चाहिये। इसे टीका, रोकना या ठाका आदि भी कहा जाता है। कन्या का पिता तिलक करके उक्त मुहूर्त्त में लड़के को वचन या वाग्दान देता है।

कन्या वरण मुहूर्त्त – तीनों पूर्वा, श्रवण, अनुराधा, उ.षा., कृत्तिका, धनिष्ठा, स्वाती नक्षत्रों में या विवाह के नक्षत्रों में पूर्ववत् शुभ तिथि, शुभ वार, व लग्न में पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख होकर कन्या को उत्तम वस्त्र, खजूर, फल, मिष्ठान्न व आभूषणादि से वर की माता व बहनें वरण करें। वर के द्वारा कन्या को अंगूठी पहनाते समय भी उक्त मुहूर्त्त व विधि का अनुसरण करना चाहिये।

गृहस्थाश्रम को चारों आश्रमों का मूलाधार बताया गया है। लेकिन कहा गया है कि भली प्रकार से अपनी विद्या को समाप्त कर अर्थात् युवावस्था में ही विवाह कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना चाहिये।

विवाह का समय –

विवाहो जन्मत: स्त्रीणां युग्मेऽब्दे पुत्रपौत्रद:।

अयुग्मे श्रीप्रद: पुंसां विपरीते तु मृत्युद: ॥

जन्म से सम संख्यक वर्षों में कन्या का और विषम वर्षों में पुरूष का विवाह करना शुभप्रद है, इससे विपरीत होने पर अशुभ होता है।

विवाह के आठ भेद - ब्राह्म, प्राजापत्य,दैव, आर्ष, गान्धर्व, आसुर, राक्षस व पैशाच ये आठ प्रकार के विवाह होते है। इनमें पहले चार प्रकार को श्रेष्ठ माना गया है। गान्धर्व विवाह प्रेम विवाह हैं , जो मध्यम श्रेणी का माना गया है तथा शेष तीन प्रकार अधम या निकृष्ट है।

विवाह के मास – माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ व मार्गशीर्ष ये सभी मास विवाह के लिये शुभ माने गये है।

पक्ष व तिथि शुद्धि – शुक्ल पक्ष के प्रति आचार्यों का सभी शुभ कार्यों के सन्दर्भ में विशेष झुकाव होता है। कृष्ण पक्ष की भी अष्टमी तक मतान्तर से दशमी तक लिया जा सकता है। तिथयों के विषय में विशेष महत्व नहीं दिया जाता है। तथापि जहॉं तक सम्भव हो रिक्ता तिथि को छोड़ना चाहिये। लेकिन प्रचलन ऐसा है कि चतुर्दशी, अमावस्या व शुक्ल प्रतिपदा को ही प्राय: छोड़ा जाता है।

अभ्यास प्रश्न –

1.निम्नलिखित में विवाह का नक्षत्र नहीं है

क. रेवती ख. तीनों उत्तरा ग. रोहिणी घ. **अश्विनी**

2. वर वरण हेतु उपयुक्त नक्षत्र है ।

क. भरणी ख. मृगशिरा ग. **तीनों उत्तरा** घ. श्रवण

3. जन्म से सम संख्यक वर्षों में विवाह करना किनके लिये शुभ होता है ।

क. कन्या का ख. वर का ग. कन्या एवं वर दोनों का घ. कोई नहीं

4. कुज दोष से तात्पर्य है।

क. मंगल दोष ख. सूर्य दोष ग. गुरू दोष घ. कोई नहीं

5. तारा का गुण कितना होता है।

क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

विवाह लग्न प्रशंसा –

भार्या त्रिवर्गकरणं शुभशीलयुक्ता
शीलं शुभं भवति लग्नवशेन तस्या: ।
तस्माद्विवाहसमय: परिचिन्त्यते हि
तन्निघ्नतामुपगता: सुतशीलधर्मा: ।।

सुशील स्वभाव की स्त्री त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) को देने वाली होती है, परं च उसका शील और सच्चरित्र लग्न के वश से शुभ होता है, क्योंकि पुत्र, शील, और धर्म विवाहलग्न के अधीन है, अत:

विवाह समय का विचार किया जाता है।

वर के गुण –

कुलं च शीलं च सनाथतां च विद्यां च वित्तं च वपुर्वयश्च।

वरे गुणान्सप्त परीक्ष्य देया कन्या बुधै: शेषमचिन्तनीयम् ।।

कन्या दान से पूर्व वर का कुल, स्वभाव, सनाथता, विद्वत्ता, धन, शरीर तथा आयु इन सात गुणों की परीक्षा कर लेनी चाहिये।

कन्या के गुण –

अनन्यपूर्विका कन्यामसपिण्डां यवीयसीम्।

अरोगिणीं भ्रातृमतीमसमानार्षगोत्रजाम्।।

जिस कन्या का अन्य किसी ने दान अथवा उपभोग न किया हो, सापिण्डय न हो, वर से उम्र तथा शरीर में कम हो, निरोगिणी, सोदर बन्धुयुक्त एवं भिन्न गोत्र की कन्या देखकर विवाह निश्चित करना चाहिये।

विवाह के लिये मेलापक विचार –

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम्।

गणमैत्रं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिका:।।

वर्ण, वश्य, तारा, योनि, ग्रहमैत्री, गणमैत्री, भकूट एवं नाडी ये आठ प्रकार के कूट क्रमश: उत्तरोत्तर एक – एक अंक की वृद्धि के साथ होते है। अर्थात् वर्ण में 1 गुण, वश्य में 2 गुण, तारा में 3 गुण आदि।

अनिष्ट मंगल का विचार -

लग्ने व्यये च पाताले जामित्रे चाऽष्टमे कुजे।

पत्नी हन्ति स्वभर्तारं भर्तुर्भार्या न जीवति।।

एवं विधे कुजे संस्थे विवाहो न कदाचन।

कार्यो वा गुणबाहुल्ये कुजे वा तादृशे द्वयो:।।

1,4,7,8,12 स्थानों में यदि मंगल कन्या की जन्मकुण्डली में हो तो पति का और यदि वर की जन्मकुण्डली में हो तो स्त्री घातक होता है। इसीलिये इस प्रकार के योग वाली कन्या को मंगली और लड़के को मंगला कहते है। यदि वर या कन्या किसी एक की कुण्डली में यह योग हो तो हानिकारक है और यदि दोनों की कुण्डली में समान योग हो अथवा अधिक गुण मिलते हों तभी विवाह करना चाहिये।

मंगल का परिहार –

शनिभौमोऽथवा कश्चित् पापो वा तादृशो भवेत्।

तेष्वेव भवनेष्वेव कुजदोष विनाशकृत्॥

वर और कन्या किसी एक की कुण्डली में उपर्युक्त अनिष्टकर्त्ता मंगल हो और दूसरे को उन्हीं स्थानों में शनि अथवा कोई भी पापग्रह हो तो उक्त अनिष्ट का नाश होता है। इस प्रकार चन्द्र कुण्डली से भी विचार करना चाहिये। यदि वर – कन्या दोनों की कुण्डली में परस्पर दोषों का परिहार हो तभी विवाह सम्बन्ध श्रेष्ठ कहा गया है।

विशेष - लग्न में मेष का, द्वादश में धनु का, चतुर्थ में वृश्चिक का, सप्तम में मकर का तथा अष्टम स्थान में कर्क राशि का मंगल हो तो अनिष्टकारक नहीं होता है।

विवाह में ज्येष्ठमास का निषेध तथा परिहार –

ज्येष्ठद्वन्द्वं मध्यमं संप्रदिष्ट त्रिज्येष्ठं स्यान्नैव युक्तं कदापि।

केचित्सूर्यं वह्निगं प्रोज्झ्यमाहुर्नैवाऽन्योन्यं ज्येष्ठयो: स्याद्विवाह:॥

दो ज्येष्ठ मध्यम अर्थात् दोनों (वर – कन्या) में से एक प्रथम गर्भोत्पन्न और ज्येष्ठ मास भी हो तो है। तीन ज्येष्ठ (ज्येष्ठ वर, ज्येष्ठ कन्या तथा ज्येष्ठ मास) विवाह में कदापि शुभ नहीं है। कुछ आचार्य का यह भी मानना है कि यदि कृत्तिका में सूर्य हो तो विवाह का त्याग करना चाहिये तथा आदि गर्भ अर्थात् प्रथम सन्तान का परस्पर विवाह सम्बन्ध अशुभ है।

2.4 सारांश

इस इकाई में पाठकों के ज्ञानार्थ वर वरण एवं विवाह मुहूर्त्त की चर्चा की गयी है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने वास्तु शान्ति मुहूर्त्त, सूतिका स्नान एवं अक्षरारम्भ मुहूर्त्त का अध्ययन कर लिया है। अब इस इकाई में आप वरवरण एवं विवाह को जानेंगे। वर वरण से तात्पर्य वर को कन्या के पिता के द्वारा विवाहार्थ वरण करने से है। इस संस्कार में वर को स्वशक्ति के अनुसार कन्या का पिता वर को वस्त्र, अलंकार, फल, मिष्ठान द्रव्यादि से सुशोभित कर विवाह के लिये वरण करता है। वर वरण के पश्चात् वैसे ही कन्या का वरण होता है पश्चात फिर उनका विवाह संस्कार किया जाता है।

2.5 शब्दावली

वरण = छेका, तिलक, टीका ।

विवाह = कन्या एवं वर को जीवन भर के लिये रिश्ते में बॉधने वाला बन्धन ।

त्रिज्येष्ठ = क्रम में ज्येष्ठ सन्तान, ज्येष्ठ मास, ज्येष्ठा नक्षत्र ।

गर्भोत्पन्न = गर्भ से उत्पन्न ।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. घ
2. ग
3. क
4. क
5. क

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. संस्कारदीपक - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द पर्वतीय
2. पारस्करगृह्यसूत्र - आचार्य पारस्कर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दूसंस्कारविधिः - डा. राजबली पाण्डेय

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वरण से क्या तात्पर्य है। वर वरण को स्पष्ट कीजिये।
2. विवाह से आप क्या समझते है। विस्तार से वर्णन कीजिये।

इकाई – 3 गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश मुहूर्त्त

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश मुहूर्त्त

अभ्यास प्रश्न

3.4 सारांश

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड की तृतीय इकाई **‘गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश मुहूर्त्त’** नामक शीर्षक इकाई से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने वरवरण एवं विवाह का अध्ययन कर लिया है। यहाँ पर इस इकाई में आप **‘गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश मुहूर्त्त’** का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

इस संसार में मानव को अपना जीवनयापन करने के लिये उनकी कुछ मूलभुत आवश्यकतायें होती है – जिनमें प्रमुख है – भोजन, वस्त्र एवं आवास। प्रस्तुत इकाई का सम्बन्ध आवास से है। मानव जहॉ अपने परिवार के साथ निवास करता है उसे गृह कहते है एवं उसके निर्माण की क्रिया को गृहनिर्माण एवं निर्माण के पश्चात् उसमें प्रथम बार प्रवेश करने की क्रिया गृहप्रवेश कहलाता है।

गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश करना कब शुभ होता है और कब अशुभ इसका ज्ञान आप प्रस्तुत इकाई में करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेंगे कि –

1. गृहारम्भ क्या है ।
2. गृहप्रवेश से क्या तात्पर्य है ।
3. गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश का महत्व क्या है।
4. ‘गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश’ का वर्तमान स्वरूप क्या है।
5. उपर्युक्त संस्कार को करने की विधि क्या है।

3.3 गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश मुहूर्त्त परिचय

गृहारम्भ मुहूर्त्त –

मानवीय जीवन काल को ऋषि मुनियों ने चार आश्रमों में विभाजित किया है – ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्यास इनमें गृहस्थाश्रम को सर्वोत्कृष्ट माना गया है। गृहस्थाश्रम की सुखसम्पन्नता के लिये स्वीय – निकेतन का होना परमाश्वयक हैं। क्योंकि स्वातिरिक्त अधिकार प्राप्त गृह में करिष्यमाण कर्म अपना यथेष्ट फल नहीं देते।

जैसा कि भविष्यपुराण में लिखा है –

गृहस्थस्य क्रिया: सर्वा न सिद्धयन्ति गृहं विना।

परगेहे कृता: सर्वा: श्रौत: स्मार्त्तक्रिया: शुभा: ।।

निष्फला: स्युर्य तस्तासां भूमीश: फलमश्नुते।

अत: स्वाधिकार प्राप्त निवास स्थान का निर्माणारम्भ मुहूर्त्त का यहाँ उल्लेख किया गया है।

गोचर शुद्धि – गृहारम्भ मुहूर्त्त निर्णय में सर्वप्रथम गृहस्वामी की जन्मराशि से गोचरस्थ सूर्य, चन्द्र, गुरू और शुक्र का प्रबल होना अनिवार्य है।

मास –

चैत्र – मेषार्क, वैशाख – सर्वदा, ज्येष्ठ वृषार्क, आषाढ़ – कर्कमास, श्रावण सर्वदा, भाद्रपद सिंहार्क, आश्विन तुला का सूर्य, कार्तिक वृश्चिक राशिस्थ सूर्य, मार्गशीर्ष सर्वदा, पौष सौर मकर परन्तु सम्पूर्ण मास पर्यन्त धन्वर्क न हो तो पौष अशुभ है।

गृहारम्भ के योग -

1. रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु , श्लेषा, तीनों उत्तरा, पूषा, श्रवण आदि नक्षत्र हो तथा गुरूवार दिन हो तो गृह आरम्भ कराने से गृह में धन – सम्पत्ति तथा संतति का पूर्णसुख प्राप्त होता है।
2. अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, उ. फा., हस्त, चित्रा, नक्षत्र यदि बुधवार को हो तो उस दिन बनाया हुआ गृह में सुख – पुत्रार्थ सिद्धिदायक होता है।
3. अश्विनी, आर्द्रा, चित्रा, विशाखा, धनिष्ठा, शतभिषा, आदि नक्षत्र शुक्रवार युत हो तो उस दिन गृहारम्भ धन – धान्यदायक होता है।
4. भरणी, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, पू.भा., उ . भा. , तथा शनिवार के संगम में शुरू किया हुआ गृहारम्भ भूत – प्रेतों से अधिकृत रहता है।

   गुरू – शुक्रास्त, कृष्ण पक्ष, निषिद्ध मास, रिक्तादि वर्ज्यतिथियाँ, तारा अशुद्धि, भूशयन, अग्निबाण, अग्नि पंचक, भद्रा, पूर्वाभाद्रपद, नक्षत्र तथा वृश्चिक कुम्भ लग्नादि गृहारम्भ में गर्हित है। विवाहोक्त इक्कीस दोषों की भी विद्यमानता गृहारम्भ में वर्ज्य है।

शिलान्यास मुहूर्त्त - गृहारम्भ की शुभ वेला में खनित नींव को प्रस्तुत शिलान्यास मुहूर्त्त के दिन विधिवत् पत्थरों से पूरित कर देना चाहिये। तदर्थ ग्राह्य तिथ्यादि शुद्धि इस प्रकार है –

तिथि – 1 कृ., 2,3,5,7,10,11,12,13 शु.

वार – सोमवार, बुधवार, गुरूवार, शुक्रवार एवं शनिवार

नक्षत्र – अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, तीनों उत्तरा, हस्त, श्रवण एवं रेवती।

विशेष – सम्यक् समय में ब्रह्मा, वास्तुपुरूष, पंचलोकपाल, कूर्म, गणेश तथा स्थान – देवताओं का शिष्टाचार पूर्वक पूजन एवं स्वस्ति पुण्याहवाचनादि के साथ तथा स्वर्ण एवं गंगादि पुण्य स्थानों की रेणु सहित मुख्य शिला का उचित कोण में स्थापना करें। तदनन्तर, प्रदक्षिण क्रम से अन्य पत्थरों को

जमाना चाहिये।

जलाशय खनन दिशा एवं मुहूर्त्त –

ग्राम अथवा शहर से पूर्व और पश्चिम में खुदा हुआ जलाशय स्वादु और उच्च कोटि का जल प्रदान करता है – ऐसा कवि कालिदास का मत है। परन्तु गॉव के आग्नेय, नैऋत्य और वायव्य कोण में जलाशय निर्माण सर्वथा अशुभ है। तथा च –

आग्नेये यदि कोणे ग्रामस्य पुरस्य वा भवति कूपः।
नित्यं स करोति भयं दाहं वा मानसं प्रायः।
नैऋतकोणे बालक्षयं वनिताक्षयश्च वायव्ये॥

विभिन्न दिशाओं में स्थित जलाशय का फल –

दिशा	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
फल	ऐश्वर्य	पुत्र हानि	स्त्री भंग	निधन	संपत्ति	शत्रु भय	सौख्य	पुष्टि

जलाशय खनन मुहूर्त्त -

सामान्य रूप से कुॅआ, तालाब, बावड़ी, आदि समस्त जलस्थानों का शुभारंभ निम्न मुहूर्त्त में शास्त्र सम्मत है।

मास – वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ (मिथुनार्क), माघ, फाल्गुन

तिथि – शुक्ल 2,3,5,7,10,11,12,13।

वार – सोमवार, बुधवार, गुरूवार, शुक्रवार

नक्षत्र – अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, मूल, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती।

लग्न – 2,4,7,9,10,11,12 आदि राशि लग्न

तथा शुभ ग्रहों के नवांश। लग्न में बुध, गुरू दसवें शुक्र, पापग्रह निर्बल तथा शुभ ग्रह सबल हों।

विशेष – गुरू, शुक्रास्त, गुर्वादित्य, दक्षिणायन, गुरू – शुक्र का शैशव एवं वार्द्धक्य, त्रयोदशात्मक पक्ष, भूशयन, क्षयाधिमास तिथि, भद्रा, कुयोगादि त्याज्य।

वास्तु शान्ति मुहूर्त्त -

गृहप्रवेश के पूर्व दिन पंचांग शुद्धि उपलब्ध होने पर अथवा तत्पूर्व ही शुभ दिन में वास्तु पूजा – बलिक्रियादि का आचरण करना चाहिये।

तिथि – 1 कृष्णपक्ष, 2,3,5,7,10,11,12,13 शुक्लपक्ष।

वार – सोमवार, बुधवार, गुरू, शुक्रवार।

नक्षत्र – अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तरात्रय, हस्त,चित्रा, स्वाती, अनुराधा, मूल, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा एवं रेवती।

लग्न – कोई भी राशि लग्न जब 1,2,4,5,7,9, 10,11 वें भावों में शुभग्रह और 3,6,11 वें पापग्रह हों तथा 8,12 वें सूर्य, मंगल, शनि राहु, केतु न हो।

नूतन गृहप्रवेश मुहूर्त्त –

मास – ज्येष्ठ, वैशाख, माघ, फाल्गुन - (उत्तम) , कार्तिक, मार्गशीर्ष – (मध्यम), परन्तु कुम्भ संक्रान्ति में माघ फाल्गुन भी हो तो भी गृहप्रवेश न करें। कदाचित् अत्यावश्यक होने पर मकर, मीन, मेष, वृष और मिथुन संक्रान्तियों में त्याज्य चान्द्र मास (चैत्र, पौष) भी गृहप्रवेशार्थ ग्राह्य है।

तिथि – 1 कृ., 2,3,5,7,10,11,13 शु.।

दिग्द्वार के अनुरूप गृहप्रवेशोपयोगी तिथियॉं -

द्वार दिशा	पूर्व	पश्चिम	उत्तर	दक्षिण
शुभ तिथियॉं	5,10,15	2,7,12	3,8,13	1,6,11

जीर्णादि गृह प्रवेश मुहूर्त्त -

पुरातन, दूसरे के द्वारा निर्मित, अग्नि बहु वृष्टि, बाढ़ादि देवी अथवा राजप्रकोप से विनष्ट, जीर्णोद्धृत, नवीनीकृत एवं उत्थापित गृह में प्रवेश करने के लिये प्रस्तुत मुहूर्त्त विचारणीय है।

मास – श्रावण, कार्तिक, मार्गशीर्ष तथा नूतन गृहप्रवेशोक्त मास।

वार – सोमवार, बुधवार गुरूवार, शुक्रवार एवं शनिवार

तिथि – 1 कृ. 2,3,5,6,7,8,10,11,12,13 शु.

नक्षत्र – रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, उत्तरात्रय, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा एवं रेवती

विशेष – प्रस्तुत कर्म में दक्षिणायन सूर्य, गुरू, शुक्र का अस्त बाल्य वार्द्धक्य , सिंह मकरस्य गुरू एवं लुप्त संवत्सरादि दोषों का चिन्तन न करके उपरोक्त विशुद्ध काल तथा नूतन गृहप्रवेशोदित लग्न बल का ही विचार करें। तथापि भद्रा, व्यतीपात, वैधृति, मासान्त, त्रयोदश दिनात्मक पक्ष, क्षयद्धि तिथि एवं नाम राशि से निर्बल चन्द्र तो परिवर्ज्य ही हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. आश्रमों की संख्या कितनी है।

क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

2. आश्रमों में श्रेष्ठ माना गया है ।

क. ब्रह्मचर्य ख. वानप्रस्थ ग. गृहस्थाश्रम घ. वानप्रस्थ

3. निम्नलिखित में वास्तु शान्ति के लिये शुभ वार है ।

क. मंगल ख. शनि ग. रविवार घ. शुक्र

4. जीर्ण से तात्पर्य है ।

क. पुराना ख. नवीन ग. अर्वाचीन घ. कोई नहीं

5. गृहप्रवेश कितने प्रकार का होता है ।

क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

नवदुर्ग प्रवेश मुहूर्त्त –

मास – वैशाख, ज्येष्ठ, माघ एवं फाल्गुन।

तिथि – शुक्ल 2,3,5,7,10,11,13

वार – सोमवार, बुधवार, गुरूवार, शनिवार एवं शुक्रवार

नक्षत्र – रो. पु. तीनो उत्तरा, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, रेवती।

लग्न – 2,5,8,11 आदि लग्न।

विशेष – गुरू – शुक्रास्त, भद्रा, निर्बल चन्द्र तथा अनिष्ट वर्ग परिवर्जनीय।

गृहप्रवेश विचार – गृहप्रवेश तीन प्रकार का होता है। अपूर्व, सपूर्व व द्वन्द प्रवेश, ये तीन भेद है। नूतन गृह में प्रवेश करना अपूर्व प्रवेश होता है। यात्रादि के पश्चात् गृह में प्रवेश करना सपूर्व कहलाता है। जीर्णोद्धार किये गये मकान में प्रवेश का नाम द्वन्द प्रवेश है। इनमें मुख्यत: अपूर्व प्रवेश का विचार यहॉं विशेष रूप से करते है।

माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ मास में प्रवेश उत्तम व कार्तिक, मार्गशीर्ष में मध्यम होता है।

माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठमासेषु शोभन:।

प्रवेशो मध्यमो ज्ञेय: सौम्यकार्तिकमासयो:॥

कृष्ण पक्ष में दशमी तिथि तक एवं शुक्ल पक्ष में चन्द्रोदयानन्तर ही प्रवेश करना चाहिये। जीर्णोद्धार वाले गृहप्रवेश में दक्षिणायन मास शुभ है। सामान्यत: गुरू शुक्रास्त का विचार जीर्णोद्धार किये या पुराने या किराये के मकान को छोड़कर सर्वत्र करना चाहिये।

तीनों उत्तरा, अनुराधा, रोहिणी, मृगशिरा, चित्रा, रेवती, धनिष्ठा, शतभिषा, पुष्य, अश्विनी, हस्त में प्रवेश शुभ है। तिथि व वार शुभ होने पर स्थिर लग्न में शुद्धि देखकर चन्द्रमा व तारा की अनुकूलता रहने पर गृहप्रवेश शुभ होता है।

प्रवेश के समय शुक्र पीछे व सूर्य वाम रहे तो शुभ होता है। शुक्र के विषय में यात्रा विचार के प्रसंग में बतायेंगे। वाम रवि का ज्ञान आप इस प्रकार कर सकते है –

प्रवेश लग्न से 5,6,7,8,9 भावों में सूर्य रहने से दक्षिणाभिमुख मकान में प्रवेश करते समय वाम सूर्य होता है । इसी प्रकार 8,9,10,11,12 भावों में प्रवेश समय सूर्य हो तो पूर्वाभिमुख मकान में 2,3,4,5,6 भावों में सूर्य हो तो पश्चिमाभिमुख मकान में एवं 11,12,1,2,3 स्थानों में सूर्य रहने से उत्तराभिमुख मकान में प्रवेश करने पर वाम सूर्य रहता है जैसा कि कहा है -

अष्टमात् पंचमात् वित्ताल्लाभात् पंचस्थिते रवौ ।

पूर्वद्वारादिके गेहे सूर्यो वामः प्रकीर्तितः ॥

देव प्रतिष्ठा मुहूर्त्त - उत्तरायण सूर्य में, शुक्र गुरू व चन्द्रमा के उदित रहने पर जलाशय, बाग – बागीचा या देवता क प्रतिष्ठा करनी चाहिये । प्रतिपदा रहित शुक्ल पक्ष सर्वत्र ग्राह्य है, लेकिन कृष्ण पक्ष में भी पंचमी तक प्रतिष्ठा हो सकती है । लेकिन अपने मास, तिथि आदि में दक्षिणायन में भी प्रतिष्ठा का विधान है । जैसे आश्विन मास नवरात्र में दुर्गा की, चतुर्थी में गणेश की, भाद्रपद में श्री कृष्ण की, चतुर्दशी तिथि में सर्वदा शिवजी की स्थापना सुखद है । इसी प्रकार उग्र प्रकृति देवता यथा भैरव, मातृका, वराह, नृसिंह, वामन, महिषासुरमर्दिनी आदि की प्रतिष्ठा दक्षिणायन में भी होती है ।

मातृभैरववाराहनारसिंहत्रिविक्रमाः ।

महिषासुरहन्त्री च स्थाप्या वै दक्षिणायने ॥ (वैखानस संहिता)

यद्यपि मलमास सर्वत्र प्रतिष्ठा में वर्जित है, लेकिन कुछ विद्वान पौष में भी सभी देवताओं की प्रतिष्ठा शुभ मानते है -

श्रावणे स्थापयेल्लिंगमाश्विने जगदम्बिकाम् ।

मार्गशीर्षे हरिश्चैव सर्वान्पौषेऽपि केचन ॥ (मुहूर्त्तगणपति)

आचार्य वृहस्पति पौष मास में सभी देवों की प्रतिष्ठा को राज्यप्रद मानते है –

सर्वेषां पौषमाघौ द्वौ विबुधस्थाने शुभौ । (वृहस्पति)

तिथियों के विषय में ध्यान रखना चाहिये कि रिक्ता व अमावस्या तथा शुक्ल प्रतिपदा को छोड़कर सभी तिथियों एवं देवताओं की अपनी तिथियॉ विशेष शुभ हैं ।

यद्दिनं यस्य देवस्य तद्दिने तस्य संस्थितिः । (वशिष्ठ संहिता)

मंगलवार को छोड़कर शेष वारों में यजमान को चन्द्र व सूर्य बल शुद्ध होने पर प्रतिष्ठा, स्थिर या द्विस्वभाव लग्न में स्थिर नवमांश में लग्न शुद्धि करके विहित प्रकार से विधानपूर्वक स्थापित करें । प्रतिष्ठा में अशुद्धि कष्टों को जन्म देती है – श्रियं लक्षाहीना तु न प्रतिष्ठा समो रिपु: । इस प्रकार मध्यान्ह तक हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, नक्षत्रों में बलवान् लग्न में, अष्टम राशि, लग्न को छोड़कर प्रतिष्ठा का मुहूर्त्त कहना चाहिये ।

3.4 सारांश

इस इकाई में पाठकों के ज्ञानार्थ गृहारम्भ एवं गृहमुहूर्त्त प्रवेश मुहूर्त्त की चर्चा की गयी है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने वर वरण एवं विवाह का सम्यक् अध्ययन कर लिया है। यहॉं इस इकाई में अब आप गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश को समझेंगे। मानव के मुलभूत आवश्यकताओं में आवास एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है और आवासार्थ वह गृहनिर्माण करता है जहॉं वह अपने परिवार के साथ निवास करता है। गृहनिर्माण आरम्भ करने की क्रिया गृहारम्भ तथा गृहनिर्माण कर उसमें प्रवेश करने की विधि गृहप्रवेश कहलाती है।

इस इकाई में आप गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश से सम्बन्धित अनेक विषयों का अध्ययन करेंगे।

3.5 शब्दावली

वास्तु = गृह सम्बन्धी देवता।

गृहारम्भ = गृहनिर्माण हेतु कार्य आरम्भ करने वाली क्रिया।

गृहप्रवेश = नूतन गृहनिर्माण के पश्चात् उसमें प्रवेश करनें की क्रिया ।

पूर्वाभिमुख = पूर्व दिशा की ओर मुख।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.ख

2.ग

3. घ

4. क

5. क

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. संस्कारदीपक - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द पर्वतीय
2. पारस्करगृह्यसूत्र - आचार्य पारस्कर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दूसंस्कारविधिः - डा. राजबली पाण्डेय

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गृहारम्भ से आप क्या समझते है। स्पष्ट कीजिये।
2. गृहप्रवेश का विस्तार से वर्णन कीजिये।

इकाई – 4 यात्रा, दिक्शूल विचार

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड की चतुर्थ इकाई '**यात्रा एवं दिक्शूल**' नामक शीर्षक इकाई से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश का अध्ययन कर लिया है। यहॉ पर इस इकाई में आप '**यात्रा एवं दिक्शूल**' का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

मानव अपने कार्य सिद्ध करने के लिये विभिन्न स्थलों पर यात्रा करता है। उसे यात्रा कब करनी चाहिये तथा वह कब यात्रा करें कि उसका लक्षित कार्य पूर्ण हो जाये। इसके लिये उसे यात्रा एवं दिक्शूल का ज्ञान होना परमावश्यक है। यात्रा एवं दिक्शूल से सम्बन्धित विषयों का ज्ञान आप विस्तारपूर्वक प्रस्तुत इकाई में करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेंगे कि –

1. यात्रा से आप क्या समझते है ।
2. विभिन्न स्थलों पर यात्रा का शुभाशुभ समय क्या है ।
3. यात्रा का महत्व क्या है।
4. यात्रा में दिक्शूल विचार क्यों आवश्यक है।
5. यात्रा प्रशस्त हो इसका मार्ग क्या है।

4.3 यात्रा एवं दिक्शूल परिचय

यात्रा मुहूर्त्त विचार - षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, अमावस्या, पूर्णिमा, शुक्ल प्रतिपदा तथा रिक्ता तिथियों को छोड़कर शेष तिथियॉं यात्रा में ग्राह्य है। अमृतसिद्धि या सर्वार्थसिद्धि योगों में तिथ्यादि विचार के बिना भी यात्रा की जा सकती है

तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, शतभिषा, मूल, ज्येष्ठा, रोहिणी ये नक्षत्र यात्रा में मध्यम हैं। कृत्तिका, स्वाती, आर्द्रा, विशाखा, चित्रा, आश्लेषा, मघा, भरणी ये नक्षत्र यात्रा में अशुभ हैं। अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, रेवती ये नक्षत्र यात्रा में श्रेष्ठ है।

जन्म लग्न व राशि से अष्टम राशि लग्न में तथा राशीश के शत्रु ग्रह के लग्न में होने पर कदापि यात्रा न करें। कुम्भ लग्न व कुम्भ नवमांश सर्वथा यात्रा में त्याज्य है। मृत्युयोग, दग्धा तिथि, संक्रान्ति आदि अशुभ समय में यात्रा त्याज्य है।

आवश्यक होने पर कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा तथा दिग्द्वार लग्नों में यात्रा करना श्रेष्ठ होता है। जब अपनी जन्मराशि शुभयुक्त हो अथवा सूर्य की राशि से द्वितीय राशि वेशि लग्न हो तो यात्रा जयप्रद है

जब केन्द्र त्रिकोण में शुभ व 3,6,10,11 में पापग्रह हों तब यात्रा करें। चन्द्रमा 1,6,8,12 में अशुभ होता है। इसी प्रकार दशम शनि, सप्तम शुक्र तथा लग्नेश 6,7,8,12 में अशुभ होता है।

चन्द्रमा विचार – यात्रा में चन्द्र बल शुद्धि अनिवार्य है। 1,4,8,12 राशियों में चन्द्रमा का गोचर यात्रा में अशुभ है। यथा – ऋते: चन्द्रबलं पुंसां यात्रा शस्ताऽप्यनर्थदा (यात्रा शिरोमणि)

यात्रा में चन्द्रमा का वास भी प्रयत्नपूर्वक देखना चाहिये। जिस दिशा की राशि में चन्द्रमा हो उसी दिशा में चन्द्रमा का वास होता है। जैसे 1,5,9 राशियों का चन्द्रमा पूर्व में 2,6,10 राशिगत चन्द्रमा दक्षिण में 3,7,11 राशि का चन्द्रमा पश्चिम में व 4,8,12 राशि का चन्द्रमा उत्तर में रहता है। चन्द्रमा को सदैव यात्रा में सामने या दाहिनें होना चाहिये। वाम व पृष्ठगत चन्द्रमा हानिप्रद है। यथा –

सम्मुखे सोर्थलाभाय दक्षिणे सुखसम्पद: ।
पश्चिमे प्राणसन्देहो वामे चन्द्रे धनक्षय: ॥

सम्मुख चन्द्रमा प्राय: सभी दोषों को शान्त करने में सक्षम होता है। माण्डव्य ने तो यहॉं तक कहा है कि –

करणभगणदोषं वारसंक्रान्तिदोषं कुलिकतिथिजदोषं यामयामार्धदोषम् ।
शनिकुजरविदोषं राहुकेत्वादि दोषं हरति सकलदोषं चन्द्रमासम्मुखस्थ: ॥

घात चन्द्रमा – मेषादि द्वादश राशियों के लिये क्रमश: 1,5,9,2,6,10,3,7,4,8,11,12 भावों में चन्द्रमा घात चन्द्रमा कहलाता है। यात्रा, शास्त्रार्थ, मुकदमा दायर करना एवं वाद – विवाद आदि में घात चन्द्र का त्याग करना चाहिये।

योगिनी विचार – योगिनी का भी यात्रा में विचार मुख्य है। तिथि विशेष के आधार पर दिशाओं में योगिनियों का वास माना जाता है। योगिनी सदैव पीछे या बायें होनी चाहिये। योगिनी वास को सारिणी के माध्यम से समझा जा सकता है –

योगिनी वास चक्रम्

दिशा	पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
तिथि	1,9	3,11	5,13	4,12	6,14	7,15	2,10	8,30

इन तिथियों में योगिनी का वास कही गई दिशाओं में होता है। युद्धादि की यात्रा में बायें योगिनी भी त्याज्य है। पीछे रहना सदैव शुभ है।

राहु विचार – राहु व योगिनी सदैव पीठ पीछे रहने पर यात्रा विशेष सफल होती है। सम्मुख राहु में विशेषतया गृहारम्भ व गृहप्रवेश नहीं करना चाहिये। राहु वास का चक्र यहॉं दिया जा रहा है –

राहु वास चक्र

सूर्य संक्रान्ति मास	वृश्चिक, धनु एवं मकर	मेष, कुम्भ व मीन	वृष, मिथुन एवं कर्क	सिंह, कन्या एवं तुला
राहु वास की दिशा	पूर्व दिशा	दक्षिण दिशा	पश्चिम दिशा	उत्तर दिशा

सर्वार्थ सिद्धि योग – विशेष वार व नक्षत्रों के योग से सर्वार्थ सिद्धि योग बनते हैं। इनमें वार गणना प्राचीन प्रचलनानुसार सूर्योदय से सूर्योदय तक मानते है। इन वार व नक्षत्रों के योग में सर्वार्थसिद्धि योग बनते है।

1. रविवार – मूल, तीनों उत्तरा, अश्विनी, हस्त, पुष्य
2. सोमवार - श्रवण, अनुराधा, रोहिणी, पुष्य व मृगशिरा
3. मंगलवार – उत्तरा भाद्रपद, कृत्तिका, अश्विनी व श्लेषा
4. बुधवार – हस्त, अनुराधा, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा
5. शुक्रवार – पुनर्वसु, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, श्रवण
6. शनिवार – रोहिणी, श्रवण, स्वाती।

इन योगों में प्राय: सभी शुभ कार्य सफल होते है ।

अमृतसिद्धि योग - सर्वार्थसिद्धि योगों में से कुछ को बहुत शक्तिशाली देखकर उनका नाम अमृतसिद्धि योग रखा गया है। रविवार व हस्त नक्षत्र, सोमवार में मृगशिरा, मंगल में अश्विनी, बुधवार में अनुराधा, गुरूवार में पुष्य, शुक्रवार में रेवती, शनिवार में रोहिणी रहने पर अमृतसिद्धि योग बनते है।

भद्रा विचार – विष्टि करण का ही दूसरा नाम भद्रा है। भद्रा नाम की राक्षसी थी, जिसके काल में किये गये कार्य का नाश हो जाता है।

शुक्ल पक्ष में 8,15 तिथियों के पूर्वार्ध में तथा 4,11 के उत्तरार्ध में भद्रा रहती है। कृष्ण पक्ष में 3,10 के उत्तरार्ध में व 7,14 के पूर्वार्ध में भद्रा होती है।

अभ्यास प्रश्न -

1. रिक्ता संज्ञक तिथि है।

क. 3,8,13 ख. 1,11,6 ग. 9,4,14 घ. 5,10,15

2. सर्वार्थ सिद्ध योग बनते है ।

क. वारों एवं राशियों के संयोग से ख. वारों एवं नक्षत्रों के संयोग से ग. नक्षत्रों एवं करण के संयोग से घ.कोई नहीं

3. रविवार का दिक्शूल दोष निम्नलिखित में किससे दूर होता है ।

क. दूध से ख. दही से ग. घृत से घ. तिल से

4. शनि - सोम को किस दिशा में दिक्शूल होता है ।

क. दक्षिण ख. पश्चिम ग. पूर्व घ. उत्तर

5. विष्टि करण को हम किस नाम नाम से जानते है ।

क. जया ख. भद्रा ग. रिक्ता घ. कोई नहीं

भद्रा वास विचार – भद्रा का फल उसके भूमि लोक वास में ही होता है। जब भद्रा स्वर्ग या पाताल में हो तो शुभ मानी जाती है। अन्यथा वह सभी शुभ कार्यों में त्याज्य है।

जब मेष,वृष, मिथुन व वृश्चिक का चन्द्रमा हो तो भद्रा स्वर्ग लोक में रहती है। शुक्ल पक्ष में विष्टि की सर्पिणी संज्ञा व कृष्ण पक्ष में वृश्चिकी संज्ञा है । सॉप का अग्रभाग जहरीला होने से शुक्लपक्ष में प्रारम्भ की 5 घड़ियॉं तथा कृष्ण पक्ष में अन्तिम पॉंच घडियॉं भद्रा का मुख होता है। क्योंकि बिच्छू के पिछले भाग में डंक होता है। पीयूष धारा में मुख या पुच्छ के निर्णय के विषय में अनेक मत बताये है । हमारे विचार से तो सामान्यत: भद्रा अशुभ ही होती है । तथा लोकवासानुसार यदि भूमि पर उसका वास आये तो सदैव त्याज्य है। अत: खण्ड के अनुसार मुॅंह या पूॅंछ का भेद समन्वयपरक विद्वानों ने नही माना है।

भूर्लोकस्था सदा त्याज्या स्वर्गपातालगा शुभा। (मुहूर्त्त गणपति)

सामान्यत: भद्रा की पूॅंछ का काल सदैव जयप्रद होता है, ऐसा कहा गया है। लेकिन इस विषय में विभिन्नता है। चतुर्दशी में पूर्व को, अष्टमी में अग्नि कोण की ओर, सप्तमी में दक्षिण की ओर, पूर्णिमा में नैऋत्य की ओर, चतुर्थी में पश्चिम की तरफ, दशमी में वायव्य की ओर, एकादशी में उत्तर व तृतीया में ईशान कोण की ओर भद्रा के मुख की दिशा में नहीं जाना चाहिये। पूॅंछ की दिशा में जाने से सदा सफलता मिलती है। भीषण कार्यों में भद्रा शुभ होती है, अर्थात् वध, बन्धनादि कार्यो में मारणादि तान्त्रिक क्रियाओं में यह सफलता देती है।

यात्रा में सौर समय –

यात्राजसिंहतुरगोपगते वरिष्ठा
मध्या शनैश्चर बुधोशनसां गृहेषु।
भानौ कुलीरझषवृश्चिकगेऽतिदीर्घा
शस्तस्तु देवलमतेऽध्वनि पृष्ठगोऽर्क: ।।

मेष, सिंह, धनु के सूर्य में यात्रा श्रेष्ठ होता है। मकर, कुम्भ , मिथुन , कन्या,वृष, तुला के सूर्य में मध्यम है। तथा कर्क, मीन, वृश्चिक के सूर्य हों तो दीर्घयात्रा होती है। यात्रा के समय सूर्य का पृष्ठ भाग में रहना उत्तम है।

विशेष – यात्रा के समय तात्कालिक लग्न, 12 या 2 में सूर्य हो तो पश्चिम दिशा की 4,3,5 में हो तो दक्षिण दिशा की, 7,6,8 में हो तो पूर्व दिशा की 10,9 अथवा 11 वें स्थान में सूर्य हो तो उत्तर दिशा की यात्रा श्रेष्ठ है।

सर्वकाल और सर्वदिग्गमन नक्षत्र –

पुष्ये मैत्रे करेऽश्विन्यां सर्वाशागमनं शुभम्।

सर्वकाले हिता यात्रा हस्ते पुष्ये मृगे श्रुतौ ।।

पुष्य, अनुराधा, हस्त और अश्विनी में सभी दिशा में, तथा हस्त, पुष्य, मृगशिरा, श्रवण इनमें सभी समय यात्रा शुभ मानी है।

दिक्शूल विचार –

शनौ चन्द्रे त्यजेत्पूर्वां दक्षिणां च दिशं गुरौ।

सूर्ये शुक्रे पश्चिमां च बुधे भौमे तथोत्तरम्।।

आग्नेय्यां च गुरौ चन्द्रे नैर्ऋत्यांरविशुक्रयोः।

ऐशान्यां चन्द्रजे वायौ मंगले गमनं त्यजेत्।।

न व्रजेच्छक्रभे प्राच्यां याम्ये चाजपदे त्वथ।

उदीच्यामयमर्क्षे च प्रतीच्यां धातृभे तथा।।

शनि – सोम को पूर्व दिशा में, वृहस्पति को दक्षिण में, रवि – शुक्र को पश्चिम में, बुध मंगल को उत्तर दिशा में दिशा शूल होता है। तथा वृहस्पति सोम को अग्निकोण में, रवि – शुक्र को नैर्ऋत्य कोण में, बुध – शनि को ईशान कोण और मंगल को वायव्यकोण में दिक्शूल होता है। एवं ज्येष्ठा नक्षत्र में पूर्व, पूर्वाभाद्रपद में दक्षिण, रोहिणी में पश्चिम और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्तर दिशा में शूल है, अत: इनमें यात्रा करना शुभ नहीं है।

विशेष – 1।9 तिथि में पूर्व, 5।13 में दक्षिण, 6।14 में पश्चिम और 2।10 तिथि में उत्तर दिशा में शूल है। इन तिथियों में पूर्व आदि दिशाओं की यात्रा वर्जित है।

दिशाओं में तिथि – वार नक्षत्र शूल बोधक चक्र –

दिशा	**पूर्व**	**दक्षिण**	**पश्चिम**	**उत्तर**
तिथि	1।9	5।13	6।14	2।10
वार	शनि, सोम	गुरू	रवि, शुक्र	बुध, मंगल

नक्षत्र	ज्येष्ठा	पू0भा0	रोहिणी	उत्तराफाल्गुनी

दिक्शूल दोष का परिहार –

सूर्यवारे घृतं पीत्वा गच्छेत्सोमे पयस्तथा।

गुडमंगारके वारे बुधवारे तिलानपि ।।

गुरूवारे दधि ज्ञेयं शुक्रवारे यवानपि।

माषान्भुक्त्वा शनौ गच्छेच्छूलदोषोपशान्तये ।।

ताम्बूल चन्दनं मृच्च पुष्पं दधि घृतं तिला: ।

वारशूलहराण्यर्काद् दानाद्धारणतोऽशनात् ।।

रविवार को घृत, सोम को दूध, मंगल को गुड़, बुध को तिल, वृहस्पति को दही, शुक्र को जौ और शनिवार को उड़द खाकर यात्रा करे तो शूल दोष शान्त हो जाता है। तथा रविवारादि वारों में क्रम से पान, चन्दन, मिट्टी, पुष्प, दही, घृत, तिल इनके दान देने से वा प्राशन करने से अथवा धारण करने पर भी शूल दोष नहीं लगता है।

4.4 सारांश

इस इकाई में पाठकों के ज्ञानार्थ यात्रा एवं दिक्शूल विचार की चर्चा की गयी है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपनें

गृहारम्भ एवं गृहप्रवेश का अध्ययन कर लिया है। अब यहॉ आप यात्रा व दिक्शूल सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करेंगे। मानव अपने जीवन में कई बार यात्रा करता है। उसे कब किस दिशा में यात्रा करनी चाहिये, तथा कब यात्रा करने से लाभ होगा, हानि होगा आदि इत्यादि का विचार इस इकाई में हम करेंगे। दिक्शूल से तात्पर्य है – किसी दिशा विशेष में निश्चित तिथि में यात्रा करना।

4.5 शब्दावली

यात्रा = भ्रमण करना ।

दिक्शूल = दिशा विशेष में निश्चित तिथि में यात्रा सम्बन्धि शुभाशुभ विचार ।

परिहार = निवारण ।

सर्वकाल = सभी कालों में

सर्वदिग्गमन – सभी दिशाओं में गमन

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग

2.ख

3. ग

4.ग

5. ख

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. संस्कारदीपक - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द पर्वतीय
2. पारस्करगृह्यसूत्र - आचार्य पारस्कर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दूसंस्कारविधिः - डा. राजबली पाण्डेय

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. यात्रा से आप क्या समझते है। स्पष्ट कीजिये।
2. यात्रा एवं दिक्शूल का विस्तार से वर्णन कीजिये।

इकाई – 5 चन्द्रवास, शिववास एवं अग्निवास

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड के पंचम इकाई ''चन्द्रवास, शिववास एवं अग्निवास'' नामक शीर्षक से सम्बन्धित है । मनुष्य अपने जीवन में महत्वपूर्ण कार्य करने हेतु शुभ समय की आंकाक्षा रखता है । तद्दृष्ट्या कर्मकाण्ड सम्बन्धित चन्द्रवास , शिववास अग्निवास का विधान बताया गया है ।

चन्द्रमा का किसी राशि में स्थित होना चन्द्रवास का बोध कराता है। भगवान शिव सम्बन्धित पूजन अर्चन के लिये कर्मकाण्ड में शिववास का ज्ञान कहा गया है तथा यज्ञादि कर्मों के साफल्यता हेतु अग्निवास का ज्ञान कहा गया है ।

इस इकाई में आप चन्द्रवास, शिववास एवं अग्निवास का अध्ययन करेगें।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान सकेगें कि –

- चन्द्रवास क्या है
- शिववास कहॉ - कहॉ होता है।
- कर्मकाण्डोक्त अग्निवास क्या है ।
- पूजन आदि कर्म में चन्द्रवास, शिववास एवं अग्निवास का क्या महत्व है।

5.3 चन्द्र वास, शिव वास एवं अग्नि वास

भारतीय सनातन परम्परा में ऋषियों की यह विशेषता रही है कि वह निरन्तर चिन्तन पथ पर अग्रसर होते हुये लोकोपकार की दृष्टि से नवीन - नवीन ज्ञान एवं विज्ञान से आम जनमानस को लाभान्वित करते रहे है। यह अत्यन्त गौरवपूर्ण विषय है कि ऋषियों ने भूसापेक्ष आकाशस्थ चन्द्रमा का वास स्थान ज्योतिष शास्त्र के माध्यम से ज्ञात किया , उसी क्रम में भगवान शिव और अग्नि का वास स्थान सूत्रात्मक रूप में ज्ञात किया। यह अपने आप में अलौकिक है।

चन्द्रमा वास ज्ञान -

मेषे च सिंहे धनुरिन्द्रभागे।
वृषे च कन्या मकरे च याम्ये ।।
युग्मे तुलायां च घटी प्रतीच्यां।
कर्काऽलि मीने दिशिचोत्तरस्यां ।।

अर्थ – मेष , सिंह और धनु राशि का चन्द्रमा पूर्व दिशा में, वृष, कन्या और मकर राशि का चन्द्रमा दक्षिण दिशा में , मिथुन, तुला और कुम्भ राशि का चन्द्रमा पश्चिम दिशा में तथा कर्क, वृश्चिक और

मीन राशि का चन्द्रमा उत्तर दिशा में रहता है।

चन्द्रमा का वास फल -

सम्मुखे त्वर्थलाभः स्याद्दक्षिणे सुखसम्पदः।

पृष्ठतो मरणं चैव वामे चन्द्रे धनक्षयः।।

यात्रा करते समय (गृह से प्रस्थान करते समय) सन्मुख चन्द्रमा हो तो अर्थ लाभ, दाहिने हो तो सुख सम्पदा, पीछे हो तो शोक सन्ताप, बाँये हो तो धन का नाश होता है। चन्द्र विचार, योगिनी विचार और दिक्शूल विचार प्रत्येक महत्वपूर्ण यात्रा में अनिवार्य माना जाता है।

विशेष - ज्योतिष शास्त्र के अनुसार चन्द्रमा सर्वाधिक तीव्र गति वाला ग्रह माना जाता है। वह ग्रहों में सूर्य के समान ही राजा माना जाता है। एक राशि का भोग करने में चन्द्रमा को सवा दो दिन से ढ़ाई दिन का समय लगता है। जन्मकाल में चन्द्रमा जिस राशि पर होता है, वही जातक का भी राशि माना जाता है। चन्द्रमा मन का प्रतीक है। चन्द्रवास जानकर यात्रादि कार्य में इनका प्रयोग करते है। मुख्य रूप से यह यात्रा में ही उपयोगी होता है।

शिव वास –

तिथिं द्विगुणीकृत्य बाणैः संयोजयेत्ततः।

सप्तभिश्च हरेद्शेषे शिववासं समुद्दिशेत्।।

एकेन वासः कैलाशे द्वितीय गौरीसन्निधौ।

तृतीये वृषभारूढः सभायां च चतुष्टये।।

पंचमे भोजने चैव क्रीडायां च रसात्मके।

श्मशाने सप्तशेषे चशिववासः उदीरितः।।

कैलाशे लभते सौख्यं गौर्यां च सुख सम्पदः।

वृषभेऽभीष्ट सिद्धिः स्यात् सभायां सन्ताप कारिणी।।

भोजने च भवेत् पीडा क्रीडायां कष्टमेव।

चाश्मशाने मरणं ज्ञेयं फलमेवं विचारयेत्।।

अर्थ – जिस तिथि में शिववास ज्ञात करना हो, उस तिथि का द्विगुणित कर उसमें 5 जोड़े तथा प्राप्त योग फल में सात संख्या से भाग दे। प्राप्त शेषानुसार शिववास समझना चाहिये। यदि 1 शेष हो तो शिव का वास स्थान कैलाश में, 2 शेष हो तो गौरी के सान्निध्य में, 3 शेष हो तो वृष (बैल) पर आरूढ़, 4 शेष हो तो सभा में, 5 शेष हो तो भोजन में, 6 शेष हो तो क्रीडा में तथा 7 शेष हो तो श्मशान में शिव का वास स्थान समझना चाहिये।

शिववास फल –

कैलाश में – सुख की प्राप्ति

गौरी के सान्निध्य में – सुख प्राप्ति
वृषारूढ़ होने पर – अभीष्ट सिद्धि
सभा में होने पर – सन्ताप कारिणी
भोजन में होने पर – पीडा
क्रीड़ा में होने पर – कष्ट
श्मशान में होने पर - मरण

उपर्युक्तानुसार शिव का वास तथा वास स्थान पर होने वाले फल समझना चाहिये। विशेषकर भगवान शिव से सम्बन्धित पूजन – अर्चन में शिव वास का महत्व है। रूद्राभिषेक, रूद्रयाग, महामृत्युंजय आदि कर्मकाण्ड सम्बन्धित कार्यों में शिव वास का ज्ञान आवश्यक है, तभी तत् सम्बन्धित पूजन का शुभ फल प्राप्त होता है।

अग्नि वास -

सैका तिथिर्वारयुता कृताप्ता शेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः।
सौख्याय होमो शशियुग्मशेषे प्राणार्थनाशौ दिवि भूतले च ॥

अर्थ - जिस तिथि में अग्निवास ज्ञात करना हो, उस तिथि में एक जोड़कर उसमें रव्यादि से दिन गणना कर जोड़े और प्राप्त योगफल में चार से भाग देने पर तीन और शून्य शेष बचे तो अग्नि का वास पृथ्वी पर जानना चाहिए, उसमें हवन करें तो सौख्य होता है। एक और दो शेष बचे तो अग्नि का वास आकाश या पाताल में जानना चाहिये , उसमें यदि हवन करे तो प्राण और अर्थ (धन) का नाश होता है। तिथि की गणना प्राय: तिथिकार्य में शुक्ल पक्ष से होती है। जैसा कि लिखा है –
शुक्लादिगणना कार्या तिथीनां गणिते सदा ॥

उदाहरण –

जैसे कार्तिक शुक्ल पंचमी , वृहस्पतिवार का हवन करना अभीष्ट है। तिथि 5, वार 5, दोनों को योग करने पर 10 प्राप्त हुआ और योग में सूत्रानुसार 1 जोड़ा तो 11 हुआ। इसमें चार का भाग देने से लब्धि 3, इस कारण अग्नि का वास पृथ्वी पर हुआ, इसमें हवन करने से सौख्य और लाभ होगा। यह विचार हवनात्मक काम्य हवन के लिए है। जप, यज्ञादि हवन में इसका विचार नहीं होता है।

विशेष – कर्मकाण्ड प्रायोगिक होने के कारण उसमें दिये गये विधान भी प्रायोगिक होते है। चन्द्रवास, शिववास एवं अग्नि के वास स्थान का ज्ञान कर्मकाण्ड की अलौकिकता को प्रदर्शित करता है। सम्प्रति कर्मकाण्ड व्यवसायपरक हो चुका है, इसीलिये इसके मूल तत्वों को आम जनता और न ही इसके अध्येता समझ पा रहे है। आज बौद्धिक वर्गों में इसका उपहास होता रहता है। इसका एकमात्र करना अध्येताओं का मूल से कटना है। आज भी नियमबद्ध होकर कर्मकाण्ड किया जाये तो फल शत प्रतिशत प्राप्त होगा, इसमें संशय नहीं है ऐसा मेरा मत है।

अभ्यास प्रश्न –

1. वृष राशि का चन्द्रमा किस दिशा में होता है।
   क. पूर्व ख. दक्षिण ग. पश्चिम घ. उत्तर
2. यात्रा करते समय चन्द्रमा सम्मुख हो तो –
   क. धन लाभ होता है ख. धन का क्षय होता है ग. अचल धन की प्राप्ति होती है घ. कोई नहीं
3. शिव के वृषारूढ़ होने पर क्या फल मिलता है –
   क. लाभ ख. अभीष्ट सिद्धि ग. हानि घ. धन प्राप्ति
4. कैलाशे लभते सौख्यं गौर्यां च **....................।**
   क. सुख सम्पद: ख. रसात्मक: ग. सन्तापकारिणी घ. धनप्राप्ति
5. सर्वाधिक तीव्र गति वाला ग्रह है।
   क. सूर्य ख. चन्द्रमा ग. शुक्र घ. मंगल

5.4 सारांश

इस इकाई का अध्ययन कर आपने जाना कि मेष , सिंह और धनु राशि का चन्द्रमा पूर्व दिशा में, वृष, कन्या और मकर राशि का चन्द्रमा दक्षिण दिशा में , मिथुन, तुला और कुम्भ राशि का चन्द्रमा पश्चिम दिशा में तथा कर्क, वृश्चिक और मीन राशि का चन्द्रमा उत्तर दिशा में रहता है तथा जिस तिथि में शिववास ज्ञात करना हो, उस तिथि का द्विगुणित कर उसमें 5 जोड़े तथा प्राप्त योग फल में सात संख्या से भाग दे। प्राप्त शेषानुसार शिववास समझना चाहिये। जिस तिथि में अग्निवास ज्ञात करना हो, उस तिथि में एक जोड़कर उसमें रव्यादि से दिन गणना कर जोड़े और प्राप्त योगफल में चार से भाग देने पर तीन और शून्य शेष बचे तो अग्नि का वास पृथ्वी पर जानना चाहिए, उसमें हवन करें तो सौख्य होता है। एक और दो शेष बचे तो अग्नि का वास आकाश या पाताल में जानना चाहिये , उसमें यदि हवन करे तो प्राण और अर्थ (धन) का नाश होता है।

5.5 शब्दावली

लोकोपकार = जन कल्याण ।

नवीन = नया ।

जनमानस = मानवों के लिये ।

सन्मुख = सामने

सर्वदिग्गमन – सभी दिशाओं में गमन

वृषारूढ – वृष पर बैठे होना

अभीष्ट - चाह

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. ख
4. क
5. ख

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. वृहदवकहड़ाचक्रम् - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द पर्वतीय
2. मुहूर्त्तचिन्तामणि - आचार्य पारस्कर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दूसंस्कारविधिः - डा. राजबली पाण्डेय

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. चन्द्र वास क्या है ? स्पष्ट कीजिये।
2. अग्निवास एवं शिववास का विस्तार से वर्णन कीजिये।

बी0 ए0 कर्मकाण्ड

प्रथम वर्ष

द्वितीय पत्र

खण्ड – 1

नित्यकर्म एवं देव पूजन परिचय

इकाई – 1 नित्यकर्म

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावनाः-

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 102 की द्वितीय प्रश्न पत्र के प्रथम खण्ड की पहली इकाई '**नित्यकर्म**' नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। मानव अपने नित्य जीवन में प्रात: काल जगकर क्या - क्या कार्य करें जिससे उसका प्रतिदिन उत्तरोत्तर विकास हो इसके लिये नित्यकर्म, प्रात:कालीन भगवत स्मरणादि से पाठकों को परिचित कराया जा रहा है।

नित्य का अर्थ होता है – प्रतिदिन, दिनानुदिन। अर्थात् प्रतिदिन किये जाने वाले कर्मों से सम्बन्धित तथ्य को नित्यकर्म कहते है। शास्त्रीय दृष्ट्या नित्यकर्म के अन्तर्गत क्या - क्या आता है ? इसका विवेचन आप हम प्रस्तुत इकाई में करने जा रहे है।

प्रत्येक मनुष्य के जीवन में कुछ समय ऐसे होते है जब उसकी बुद्धि निर्मल और सात्विक रहती हैं तथा उस समय में किये गये क्रियाकलाप शुभ कामनाओं से समन्वित एवं पुण्यवर्धन करने वाले होते है। इन विचारों को ध्यान में रखते हुये इस इकाई में मनुष्य के दैनन्दिनी जीवन में कृत्य सुकर्मों का शास्त्रीय विधान को बतलाया जा रहा है।

1.2 उद्देश्य -

1. इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप नित्यकर्म की विधाओं को जान पायेगें।
2. सन्ध्या के बारे में जान पायेगें।
3. गायत्री कवच एवं गायत्री के माहात्म्य को समझ पायेगें।
4. दैनन्दिनी जीवन में शास्त्रोक्त कृत्य कार्यों को भली – भॉंति समझ पायेंगे।

1.3 नित्य कर्म प्रातःकालीन भगवत स्मरण

शास्त्रविधि से गृहस्थ के लिए नित्यकर्म का निरूपण किया जाता है, **'जायमानो वै ब्रह्मणोस्त्रिभिर्ऋणवा जायते'** के अनुसार मनुष्य देवऋण, मनुष्य ऋण, पितृऋण से युक्त होकर जन्म लेता है। इन ऋणों से मुक्ति मिले इसलिये नित्यकर्म का विधान किया जाता है। नित्यकर्म में मुख्य छः कर्म बताये गये है -

संध्या स्नानं जपश्चैव देवतानां च पूजनम।
वैश्वदेवं तथाऽऽतिथ्यं षट् कर्माणि दिने दिने।।

मनुष्य को शारीरिक शुद्धि के लिए स्नान, संध्या, जप, देवपूजन, बलिवैश्वदेव और अतिथि सत्कार – ये छः कर्म प्रतिदिन करने चाहिए। हमारी दिनचर्या नियमित है। प्रातः काल जागरण से लेकर शयन

तक की समस्त क्रियाओं के लिए शास्त्रकारों ने अपने दीर्घकालीन अनुभव से ऐसे नियमों का निर्माण किया है जिनका अनुसरण करके मनुष्य अपने जीवन को सफल कर सकता है। नियमित क्रियाओं के ठीक रहने पर ही स्वास्थ एवं मन स्वस्थ रहता है।

आचारो परमो धर्मः -

उपर्युक्त पंक्ति के अनुसार आचार ही मनुष्य का परम धर्म है। आचार - विचार के पवित्र होने पर ही मनुष्य चरित्रवान बनता है, मनुष्य के चरित्रवान होने से राष्ट्र का भी सर्वांगीण विकास होता है।

प्रातःकालीन कर्मों में सर्वप्रथम ब्रह्ममुहूर्त में जगना चाहिये, ब्रह्ममुहूर्त में नहीं जगने से क्या हानि होती है आचार्यों ने इस प्रकार प्रतिपादित किया है –

ब्राह्मे मुहूर्ते या निद्रा सा पुण्यक्षयकारिणी।
तां करोति द्विजो मोहात् पादकृच्छ्रेण शुद्धयति ।।

ब्रह्ममुहूर्त में जो मुनष्य सोता है, उस समय की निद्रा उसके पुण्यों को समाप्त करती है। उस समय जो शयन करता है उसे इस पाप से बचने के लिए पादकृच्छ्र नामक (व्रत) प्रायश्चित्त करना होता है। हमारी दैनिक चर्या का आरम्भ प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में जागरण से होता है। शास्त्रों में ब्रह्ममुहूर्त की व्याख्या इस प्रकार से है -

रात्रेः पश्चिमयामस्य मुहूर्तो यस्तृतीयकः।
स ब्राह्म इति विज्ञेयो विहितः स प्रबोधने ।।

अर्थात् - रात्रि के अन्तिम प्रहर का जो तीसरा भाग है उसको ब्रह्म मुहूर्त कहते है। निद्रा त्याग के लिए यही समय शास्त्र विहित है।

ब्राह्ममुहूर्त सूर्योदय से चार घड़ी (डेढ़ घंटे) पूर्व को कहते है। मनुष्य प्रातःकालीन जागरण के पश्चात् ऑखों के खुलते ही दोनों हाथों की हथेलियों को देखें और निम्न मन्त्र को बोले -

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती।
करभूले स्थिलो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम् ।।

भाषा - हाथ के अग्रभाग में लक्ष्मी हाथ के मध्य में सरस्वती का निवास है, हाथ के मूल भाग में ब्रह्माजी का निवास है, अतः प्रातः काल कर (हाथ) का दर्शन करना चाहिए।

उपयुक्त श्लोक बोलते हुए अपने हाथो को देखना चाहिए। यह शास्त्रीय विधान बड़ा ही अर्थपूर्ण है। इससे मनुष्य के हृदय में आत्म-निर्भरता और स्वावलम्ब की भावना उदय होती है। वह जीवन के प्रत्येक कार्य में दूसरों की तरफ न देखकर अन्य लोगों के भरोसे न रहकर-अपने हाथों की तरफ देखने का अभ्यासी बन जाता है।

भूमि की वन्दना - शय्या से उठकर पृथ्वी पर पैर रखने से पूर्व पृथ्वी की प्रार्थना करें -

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डिते।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ।।

समुद्ररूपी वस्त्रो को धारण करने वाली पर्वत रूपी स्तनो से मण्डित भगवान विष्णु की पत्नी पृथ्वी देवी आप-मेरे पाद स्पर्श को क्षमा करें।

प्रातः स्मरण -

धर्म शास्त्रों ने निद्रा त्याग के उपरान्त मनुष्य मात्र का प्रथम कर्तव्य उस कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड-नायक, सच्चिदानन्द-स्वरूप प्यारे प्रभु का स्मरण बताया है - जिस की असीम कृपा से अत्यन्त दुर्लभ मानव देह प्राप्त हुई है, जो समस्त सृष्टि के कण-कण में ओत-प्रोत है, और सत्य, शिव, व सुन्दर है। जिसकी कृपा से मनुष्य सब प्रकार के भयों से मुक्त होकर 'अहं ब्रह्मास्मि'' के उच्च लक्ष्य पर पहुंच कर तन्मय हो जाता है। दैनिक जीवन के प्रारम्भ में उस के स्मरण से हमारे हृदय में आत्मविश्वास और दृढता की भावना ही उत्पन्न नहीं होगी अपितु सम्पूर्ण दिन मंगलमय वातावरण में व्यतीत होगा। मानसिक शुद्धि के लिए मन्त्र बोलें -

ॐ अपवित्र पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्यभ्यन्तरः शुचि ।।

प्रातः स्मरणीय श्लोकः-

निम्नलिखित श्लोकों का प्रातः काल पाठ करने से अत्यधिक कल्याण होता है। जैसे- दिन अच्छा बीतता है, धर्म की वृद्धि होती है भगवत् प्रीत्यर्थ इसका पाठ करना चाहिए।

गणेशस्मरणः-

प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं
सिन्दूरपूरपरिशोभित गण्डयुग्मम्।
उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्ड
माखण्डलादिसुरनायकवृन्दवन्द्यम् ।।

अर्थ- अनाथों के बन्धु सिन्दूर से शोभायमान दोनो गण्डस्थलवाले प्रबल विघ्न का नाश करने में समर्थ एवं इन्द्रादि देवों से नमस्कृत श्रीगणेश का मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

विष्णुस्मरणः-

प्रातः स्मरामि भवभीतिमहार्तिनाशं
नारायणं गरूडवाहनमब्जनाभम्।

ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं
चक्रायुधं तरूणवारिजपत्रनेत्रम् ।।

अर्थ- संसारके भय रूपी महान् दुःख को नष्ट करने वाले ग्राह से गजराज को मुक्त करने वाले चक्रधारी एवं नवीन कमल दलके समान नेत्रवाले पद्मनाभ गरूडवाहन भगवान् श्रीनारायण का मैं ध्यान करता हूँ।

शिवस्मरण:-

प्रातः स्मरामि भगभीतिहरं सुरेश
गङ्गाधरं वृषभवाहनमम्बिकेशम् ।
खट्वाङ्गशूलवरदाभयहस्तमीशं
संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ।।

अर्थ- संसार के भय को नष्ट करनेवाले देवेश, गंगाधर, वृषभवाहन, पार्वतीपति, हाथ में खट्वांग एवं त्रिशूल लिये और संसाररूपी रोग का नाश करने वाले अद्वितीय औषध स्वरूप अभय एवं वरद मुद्रयुक्त हस्तवाले भगवान् शिवका मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

देवीस्मरण:-

प्रातः स्मरामि शरदिन्दु करोज्ज्वलाभां
सद्त्नवन्मकरकुण्डलहारभूषाम् ।
दिव्यायुधोर्जितसुनीलसहस्रहस्तां
रक्तोत्पलाभचरणां भवतीं पेरशाम्।।

अर्थ- शरत्कालीन चन्द्रमाके समान उज्ज्वल आभावाली उत्तम रत्नों से जटित मकरकुण्डलों तथा हारों से सुशोभित दिव्यायुधों से दीप्त सुन्दर नीले हजारों हाथोंवाली लाल कमल की आभायुक्त चरणोंवाली भगवती दुर्गा देवी का मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

सूर्यस्मरण -

प्रातः स्मरामि खलु तत्सवितुर्वण्यं
रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूष।
सामानि यस्य किरणाः प्रभावादिहेतुं
ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यरूपम्।।

अर्थ- सूर्यका वह प्रशस्त रूप जिसका मण्डल ऋग्वेद, कलेवर यजुर्वेद तथा किरण सामवेद हैं। जो सृष्टि आदि के कारण है ब्रह्मा और शिव के स्वरूप हैं तथा जिनका रूप अचिन्त्य और अलक्ष्य है

प्रातः काल मैं उनका स्मरण करता हूँ।

नवग्रहों का स्मरण -

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी
भानुः शशी भूमिसुतोबुधश्च।
गुरूश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

अर्थ- ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु ये सभी नवग्रह मेरे प्रातः काल को मंगलमय करें।

ऋषिस्मरण -

भृगुर्वसिष्ठः क्रतुरडि.गराश्च
मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः।
रैभ्यो मरीचिश्च्यवनश्च दक्षः
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

अर्थ- भृगु, वसिष्ठ, क्रतु, अंगिरा, मनु, पुलस्त्य, पुलह, गौतम, रैभ्य, मरीचि, च्यवन और दक्ष ये समस्त मुनिगण मेरे प्रातः काल को मंगलमय करें।

प्रकृतिस्मरण -

पृथ्वी सगन्धा सरसास्तथापः
स्पर्शी च वायुर्ज्वलितं च तेजः।
नभः सशब्दं महता सहैव
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

अर्थ- गन्धयुक्त पृथ्वी, रसयुक्त जल, स्पर्शयुक्त वायु, प्रज्वलित तेज, शब्दसहित आकाश एवं महत्तत्व ये सभी मेरे प्रातःकाल को मंगलमय करें।

अभ्यास प्रश्न- 1

1. मनुष्य कितने ऋणों से युक्त होता है?
2. शय्या से उठने के पश्चात् सर्व प्रथम क्या किया जाता है?
3. प्रातः कालीन भगवत स्मरण से क्या लाभ होता है?
4. ब्रह्ममुहूर्त का क्या समय है?

1.3.1 शौच दन्तधावन

तत्पश्चात शौच से निवृत्त होकर दन्तधावन करे, मुखशुद्धि के बिना पूजा-पाठ मन्त्र जप ये सब निष्फल हो जाते है वेद पढ़ने के लिए निम्नलिखित दातुनों का उपयोग करना चाहिए 1. चिड़चिड़ा (अपामार्ग) 2.गूलर, 3. आम, 4.नीम, 5. बेल, 6 खैर, 7. तिमुर, 8. करंज

स्नान - प्रातः काल स्नान करने के पश्चात् मनुष्य शुद्ध होकर जप, पूजा, पाठ आदि समस्त कर्मो के करने योग्य बनता है नौ छिद्रोवाले अत्यन्त मलिन शरीर से दिन-रात मल निकलता रहता है, अतः प्रातः कालीन स्नान करने से शरीर शुद्धि होती है।

वेद स्मृति में कहे गये समस्त कार्य स्नानमूलक है -

स्नानमूलाः क्रियाः सर्वाः श्रतिस्मृयुक्ता नृणाम् ।

तस्मात् स्नानं निषेवेत श्रीपुष्टचारोग्यवर्धनम् ।।

सारी क्रियायें स्नान से सम्बन्धित है, अतः स्नान आवश्यक है, अतएव लक्ष्मी, पुष्टि आरोग्य की वृद्धि चाहने वाले मनुष्य को स्नान सदैव करना चाहिए।

स्नान के प्रकार - स्नान के सात भेद है -

मान्त्रं भौमं तथाग्नेयं वायव्यं दिव्यमेव च ।

वारूणं मानसं चैव सप्त स्नानान्यनुक्रमात् ।।

1. मन्त्र स्नान 2. भौम (भूमि) 3. अग्नि 4. वायु (वायव्य) 5. दिव्यस्नान 6. वारूण
7. मानसिक स्नान

हाथ में जल लें और बोलें ।

स्नान - संकल्प- ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः नमः परमात्मने अद्य .... अमुक गोत्रोत्पन्नः शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त फलप्राप्तिपूर्वकं श्री भगवत्प्रीत्यर्थं च प्रातः/ मध्याह्न/सायं स्नानं करिष्ये।।

संकल्प के पश्चात् - तीर्थो का आवाहन करें

ऊँ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती ।

नर्मदा सिंधु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरू ।।

अभ्यास प्रश्न- 2

1. दातुन करने की आवश्यकता क्यों है?
2. स्नान के कितने प्रकार होते है?

1.4 त्रिकाल संध्याका विधान

उपासक जिस क्रिया में परब्रह्म का चिन्तन करते है, वह उपासना कर्म सन्ध्या कहलाता है ।

सम् उपसर्ग पूर्वक ''ध्यै चिन्तायाम्'' धातु से अधिकरण में अङ् प्रत्यय करके स्त्री अर्थ में टाप् करके संध्या शब्द को निष्पन्न करते है।

नियमपूर्वक जो लोग प्रतिदिन संध्या करते है, वे पापरहित होकर सनातन ब्रह्मलोक को प्राप्त होते है।

संध्यामुपासते येतु सततं संशितव्रताः।
विधूतपापास्ते यान्ति ब्रह्मलोकं सनातम्।।

जो भी मनुष्य जो अपने कर्म से रहित हो, उनको पवित्र करने के लिए ब्रह्माजी ने संध्या की उत्पत्ति की है।

रात्री या दिन में जो भी अज्ञानवश दुष्कर्म हो जाये, वे त्रिकाल-संध्या करने से नष्ट हो जाते है।

संध्या के प्रकार - संध्या प्रायः तीन समय की जाती है प्रातः मध्याह्न, सायं प्रातः संध्या सूर्योदय से पूर्व की जाती है,

उत्तमा तारकोपेता मध्यमा लुप्ततारका।
अधमा सूर्यसहिता प्रातः संध्या त्रिधास्मृता ।।

सूर्योदय से पूर्व जब आकाश मण्डल में तारे दिखाई दें उस समय की संध्या को उत्तम सन्ध्या कहते है । जब तारे लुप्त हो जाये सूर्योदय न हुवा हो वह सन्ध्या मध्यम सन्ध्या होती है। सूर्योदय के पश्चात् जो सन्ध्या होती है उसे अधम सन्ध्या कहते है। सायं सन्ध्या प्रायः सूर्यास्त से पूर्व उत्तम होती है।

उत्तमा सूर्यसहिता मध्यमा लुप्तसूर्यका ।
अधमा तारोकोपेता सायं संध्यात्रिधास्मृता ।।

सूर्य के रहते सायं कालीन सन्ध्या उत्तम है, सूर्य अस्त हो जाये तो मध्यम सन्ध्या, और तारे दिखाई दे तो वह सन्ध्या अधम मानी जाती है।

प्रातः संध्यां सनक्षत्रां मध्याह्ने मध्यभास्कराम् ।
ससूर्या पश्चिमां संध्यां तिस्त्रः संध्या उपासते ।।

प्रातः संध्या तारो के रहते और जब सूर्य आकाश के मध्य में हो तो मध्याह्न संध्या, सूर्य पश्चिम में हों सायं सन्ध्या होती है इस प्रकार तीन संध्यायें होती है।

स्वकाले सेविता संध्या नित्यं कामदुधा भवेत् ।

गोधूलि समय पर की गयी संध्या इच्छानुसार फल देती है और असमय पर की गयी संध्या वन्ध्यास्त्री के समान होती है।

सन्ध्या के लिए आवश्यक सामाग्री -

1. लोटा जल के लिए

2. पात्र चन्दन पुष्पादि के लिए

3. पञ्चपात्र

4. आचमनी

5. अर्घा

6. थाली जल गिराने के लिए

7. आसन, 1. गोमुखी, 1. माला

स्नान के पश्चात् शुद्ध वस्त्र धारण करें और आसन बिछाकर उत्तर या पूर्व को मुख करके बैठें और निम्न मन्त्र पढ़ते हुये शिखा बॉधे -

ऊँ चिद्रूपिणि महामाये दिव्यतेजः सन्विते।

तिष्ठ देवि शिखबद्धे तेजोवृद्धि कुरूष्व में।।

तिलक लगायें तीन बार आचमन करे आचमन निम्न मन्त्रों से करें -

ऊँ केशवाय नमः , ऊँ नारायणाय नमः , ऊँ माधवाय नमः इन मन्त्रों से जल पीयें तथा ऊँ हृषीकेशाय नमः इस मन्त्र को बोलकर हाथ धो लें।

पहले बायें हाथ में जल ले दायें हाथ से ढकें गायत्री मन्त्र से अभिमन्त्रित करके अपने ऊपर निम्न मन्त्र बोलते हुये छिड़के -

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोऽपि वा।

यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्ष स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

पुनः जल लेकर आसन में छोड़े मन्त्र बोले -

ऊँ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।

त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरू चासनम् ।।

सन्ध्या संकल्प - हाथ में जल कुशा ले और संकल्प पढ़े।

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः नमः परमात्मने अद्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पेवैवस्वतमन्वन्तरेअष्टा विंशतितमे कलियुगे कलि प्रथम चरणे भूर्लोके भारतवर्षे अमुक स्थाने अमुक संवत्सरे अमुक ऋतौ अमुक मासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक वासरे अमुक गोत्रे अमुक शर्मा (वर्मा गुप्ता) अहं मम उपात्तदुरितक्षयपूर्वकश्री परमेश्वर प्रीत्यर्थं प्रातः (सायं,मध्याह्न) संध्योपासनं करिष्ये ।।

संकल्प के बाद प्राणायाम करें -

प्राणायाम के तीन भेद है 1. पूरक 2. कुम्भक, और 3. रेचक

पूरक - अंगूठे से नाक के दाहिने छिद्र को दबाकर बायें छिद्र से श्वास को धीरे-धीरे खीचने को ''पूरक प्राणायाम कहते है।

कुम्भक - श्वास को रोककर नाक के दोनो छिद्रों को बन्द करना कुम्भक कहलाता है।

रेचक - नाक के बाये छिद्र को दबाकर दाहिने छिद्र से धीरे-धीरे छोड़े इसको रेचक प्राणायाम कहते है।

हाथ में जल लें और विनियोग पड़े

विनियोग - ॐ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्देवी गायत्रीच्छन्दः परमात्मा देवता तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता प्राणायामे विनियोगः।।

तत्पश्चात श्वास लेते समय और रोकते समय और छोड़ते समय निम्न मन्त्र को पढ़े

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् ।।

प्राणायाम के पश्चात् मार्जन करे पुनः हाथ में जल लेकर विनियोग पढे।

विनियोग- आपो हिष्ठेत्यादि त्रयृचस्य सिन्धुद्वीप ऋषिगायत्रीच्छन्दः आपो देवता मार्जने विनियोगः

पुनः बाये हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ की तीन अंगुलियो से 1 से 7 तक मन्त्रों को बोलकर सिर पर जल छिड़के। 8 वें मन्त्र से पृथ्वी पर तथा 9 वे मन्त्र से पुनः सिर पर जल छिड़के।

ॐ आपोहिष्ठामयोभुवः

ॐ तान ऊर्जेदधातन

ॐ महेरणाय चक्षसे

ॐ यो वः शिवतमो रसः

ॐ तस्य भाजयते नः

ॐ उशतीरिवमातरः

ॐ तस्मा अरंगमाम

ॐ यस्य क्षयायजिन्वथ

ॐ आपो जनयथाचन:

अघमर्षण - नीचे लिखे विनियोग को पढ़कर दाहिने हाथ में जल लेकर उसे नाक से लगाकर मन्त्र पढ़े और ध्यान करें कि समस्त पाप नाक से निकलकर जल में आ गये है। फिर उस जल को देखे बिना बायीं ओर फेंक दे।

विनियोग:- अघमर्षणसूक्तस्याघमर्षण ऋषिः अनुष्टुप् छनदः भाववृतो देवता अघमर्षणे विनियोगः।।

मन्त्र - ऊँ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्रयजायत। ततः समुद्रो अर्णवः समुद्रादर्णवादधी संवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदद्यद्विश्वस्य मिषतोवशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् दिवं पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।।

सूर्यार्घ्य विधि - सूर्य हमारे प्रत्यक्ष देवता है गायत्री के अधिष्ठातृ देव है संध्या काल में इन्हे अर्ध्य अवश्य देना चाहिए प्रातः काल की संध्या में खड़े होकर तीन बार सूर्य नारायण को अर्धा दें मध्याह्न में खड़े होकर 1 बार, सांय संध्या में बैठ कर तीन बार अर्धा देना चाहिए, हाथ में जल लेकर विनियोग करें।

विनियोग - ऊँ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता सूर्याध्यदाने विनियोगः।।

विनियोग के बाद निम्न मन्त्र से अर्घा दे।

ऊँ भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्।।

उपस्थान

विनियोग - तच्चक्षुरित्यस्य दध्यड्डथर्वण ऋषिः अक्षरातीतपुर उष्णिक्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।।

ऊँ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येमशरदः शतं जीवेम शरदः शत छः श्रृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूय श्च शरदः शतात्।।

न्यास जप - विनियोग - ऊँ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः परमात्मा देवता ऊँ भूर्भुवः स्वरिति महाव्याह्वतीनां परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः गायत्रयुष्णि - गनुष्टुभश्छन्दांसि अग्निवायुसूर्या देवताः ऊँ तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता जपे विनियोगः।।

न्यास ऊँ हृदयाय नमः। ऊँ भूः शिरसे स्वाहा, ऊँ भुवः शिखायै वषट् , ऊँ स्वः कवचाय हुम् ऊँ भूर्भुवःस्वःनेत्राभ्यां वौषट्

ऊँ भुर्भुवःस्वः अस्त्राय फट ।।

प्रातः कालीन गायत्री ध्यान -

बालां विद्यां तु गायत्रीं लोहितां चतुराननाम्।
रक्ताम्बरद्वयोपेतामक्षसूत्र करां तथा ।।
कमण्डलुधरां देवीं हंसवाहनसंस्थिताम् ।
ब्रह्माणीं ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोकनिवासिनीम् ।।
मन्त्रेणावाहयेद्धेषीमायन्तीं सूर्यमण्डलात् ।।

तत्पश्चात् गायत्री मन्त्र का जप करें -

ऊँ भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।।

गायत्री जप करते समय गायत्री मन्त्र के अर्थ को ध्यान में रखते हुये जप करें ।।

अर्थ – भू: – सत् , भुवः - चित् , स्वः - आनन्द स्वरूप, सवितु: देवस्य – सृष्टिकर्ता प्रकाशमान परमात्मा के, तत् वरेण्यं भर्ग: - उस प्रसिद्ध वरणीय तेज का (हम) ध्यान करते हैं, य: - जो परमात्मा, न: - हमारी, धिय: - बुद्धि को (सत् मार्ग की ओर) , प्रचोदयात् - प्रेरित करे ।।

अर्थात् सत् चित् आनन्द स्वरूप (सच्चिदानन्द स्वरूप) सृष्टिकर्ता प्रकाशमान परमात्मा (सूर्य) के उस प्रसिद्ध वरणीय तेज का हम ध्यान करते हैं जो परमात्मा हमारी बुद्धि को सत्मार्ग की ओर प्रेरित करता है ।

2. तर्पण से पूर्व गायत्री कवच का पाठ करें

गायत्री कवच तीनों संध्यायों में पढ़ें ।

गायत्री जप कर माला या रूद्राक्ष की माला से करें ।

गायत्री जप के अनन्तर गायत्री तर्पण करे तर्पण केवल प्रातः कालीन संध्या में अनिवार्य है ।

विनियोग - ऊँ गायत्रया विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः गायत्री तर्पणे-विनियोगः ।।

ऊँ भूः ऋग्वेदपुरूषं तर्पयामि ऊँ भुवः यजुर्वेदपुरूषं तर्पयामि ऊँ स्वः सामवेदपुरूषं तर्पयामि ।

ऊँ महः अथर्ववेदपुरूषं तर्पयामि ऊँ जनः इतिहासपुराण पुरूषं तर्पयामि ऊँ तपः सर्वागमपुरूषं तर्पयामि । ऊँ सत्यं सत्यलोकपुरूषं तर्पयामि ऊँ भूः भूर्लोक पुरूषं तर्पयामि । ऊँ भुवः भुवर्लोक पुरूषं तर्पयामि । ऊँ स्वः स्वर्लोकपुरूषं तर्पयामि । ऊँ भूः एकपदां गायत्रीं तर्पयामि । ऊँ भुवः द्विपदां गायत्रीं तर्पयामि ऊँ स्वः त्रिपदां गायत्रीं तर्पयामि । ऊँ भुर्भुवः स्वः चतुष्पदां गायत्रीं तर्पयामि । ऊँ उषसीं तर्पयामि । ऊँ गायत्रीं तर्पयामि । ऊँ सावित्रीं तर्पयामि । ऊँ सरस्वतीं तर्पयामि । ऊँ वेदमातरं तर्पयामि । ऊँ पृथिवीं तर्पयामि । ऊँ अजां तर्पयामि । ऊँ कौशिकीं तर्पयामि ऊँ सांकृतिं तर्पयामि । ऊँ सार्वजितीं तर्पयामि । ऊँ तत्सद् ब्रह्मार्पणमस्तु ।

तत्पश्चात् अपने आसन में खड़े होकर परिक्रमा करें । परिक्रमा मन्त्र-

‘‘यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।

तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणा पदे पदे ।।’’

किया हुआ जप भगवान को अर्पण करें - नीचे लिखे वाक्य बोलें

अनेन गायत्री जपकर्मणा सर्वान्तर्यामी भगवान् नारायणः प्रीयतां न मम ।।

गायत्री देवी का विसर्जन - निम्नलिखित विनियोग के साथ आगे बताये गये मन्त्र से गायत्री देवी

का विसर्जन करें -

विनियोग - ''उत्तमे शिखरे'' इत्यस्य वामदेव ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः गायत्री देवता गायत्री विसर्जने विनियोगः।। विनियोग के बाद हाथ जोड़े और मन्त्र बोलें -

ऊँ उत्तमे शिखरे देवी भूम्यां पर्वतमूर्धनि ।
ब्राह्मणेभ्योऽभ्यनुज्ञाता गच्छदेवि यथा सुखम् ।।

इसके बाद नीचे लिखा वाक्य पढ़कर इस संध्योपासना कर्म को भगवान् को अर्पण करें - अनेन प्रातः संध्योपासनाख्येन कर्मणा श्री परमेश्वरः प्रीयतां न मम।

ऊँ तत्सत् ब्रह्मार्पणमस्तु ।। अन्त में पूर्ववत् आचमन करें और भगवान का स्मरण करें।

गायत्री कवच

हाथ में जल लेकर विनियोग पढ़े

विनियोग - ऊँ अस्य श्री गायत्रीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः भूः बीजम् - भुवः शक्तिः स्वः कीलकम् गायत्री प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः ।

ध्यानम् –

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रोक्षणै-
र्युक्तिामिन्दुनिबद्धरत्मुकुढां तत्वार्थवर्णात्मिकाम्।
गायत्रीं वरदाभयाड.कुशकशाः शुभ्रं कपालं गुणं -
शडंख चक्रमथारोवन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे।।
ऊँ गायत्री पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे।
ब्रह्मसन्ध्या तु मे पश्चाटुत्तरायां सरस्वती।।1।।
पार्वती मे दिशं रक्षेत्पावकीं जलशायिनी।
यातुधानी दिशं रक्षेद् यातुधानभयड.करी।।2।।
पावमानीं दिशं रक्षेत्पवभाविलासिनी।
दिशं रौद्रीं च मे पातु रूद्राणी रूद्ररूपिणी ।।3।।
ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्तद्वैष्णवी तथा।
एवं दश दिशो रक्षेत्सवाड.गं भुवनेश्वरी।।4।।
तत्पदं पातु मे पादौ जडे.ध ये सवितुः पदम्।
देवस्य मे तद्धृष्यं धीमहीति च गल्लयोः
धियः पदं च मे नेत्रे यः पदं मे ललाटकम् ।।6।।
नः पातु मे पदं मूर्ध्नि शिखायां मे प्रचोदयात् ।
तत्पदं पातु मूर्धानं सकारः पातु भालकम् ।।7।।

चक्षुषी तु विकारार्णस्तुकारस्तु कपोलयोः ।
नासापुटं वकारार्णो रेकारस्तु मुखे तथा ।।8।।
णिकार ऊर्ध्वभोष्ठं तु यकारस्वधरोष्ठकम् ।
आस्यमध्ये भकारार्णो गोकार बुके तथा ।।9।।
देकारः कण्डदेशे तु वकारः स्कन्धदेशकम्
स्यकारो दक्षिर्ण हस्तं धोकरो वामहस्तकम् ।।10।।
मकारो हृदयं रक्षेद्धिकारो उदरो तथा।
धिकारो नाभिदेशे तु योकारस्तु कटिं तथा ।।11।।
गुहचं रक्षतु योकार ऊरू द्वौ नः पदाक्षरम्।
प्रकारो जानुनी रक्षेच्चोकारो जड.घदेशकम् ।।12।।
दकारं गुल्फदेशे तु यकारः पदयुग्मकम्।।
तकारव्यन्जनं चैव सर्बाडगं मे सदावतु ।।13।।
इदं तु कवचं दिव्यं बाधाशत विनाशनम्।
चतुः ण्टि कलाविद्यादायकं मोक्षकारकम् ।।14।।
मुच्यते सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधिगच्दति ।।15।।

इति श्रीमद्देवीभागवते एक0 तृतीय- अध्याय: ।।

मध्याह्न संध्या

मध्याह्न सन्ध्या प्रातः सन्ध्या के अनुसार ही होगी, प्राणायाम सूर्याघदान सब पूर्ववत् होगा

विनियोग - ऊॅ आप: पुनन्त्विति ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्द: आपो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोग:

मध्याह्नकालीन गायत्री का ध्यान निम्नलिखित के अनुसार करें -

ऊँ मध्याह्ने विष्णुरूपां च तार्क्ष्यस्थां पीतवाससाम् ।
युवतीं च यजुर्वेदां सूर्यमण्डलसंस्थिताम् ।।

तत् पश्चात् गायत्री जप इत्यादि पूर्ववत् करें, कवच का पाठ करें,

मध्याह्न में तर्पण नहीं करें।

1. अन्य सभी कर्म प्रातःकाल की भाँति होगें।

सायं संध्या

सायं कालीन संध्या सूर्य के रहते उत्तराभिमुख होकर करें भगवान् सूर्य को पश्चिम मुख होकर अर्धा दें।

विनियोग –

ऊॅ अग्निश्च मेति रूद्र ऋषि: प्रकृतिश्छन्दोऽग्निर्देवता अपामुपस्पर्शने विनियोग: ।

सायंकाल शिव रूपा गायत्री का ध्यान करें -

ऊँ सायह्ने शिवरूपा च वृद्धां वृषभवाहिनीम्।

सूर्यमण्डलमध्यस्थां सामवेदसमायुताम्।।

जप करें कवच का पाठ करें विसर्जन आदि पूर्ववत्।।

अशौच - आदि में संध्योपाना की विधि महर्षि पुलस्त्यने जननाशौच एवं मरणाशौच में संध्योपासन की अबाधित आवश्यकता बतलायी है। प्रक्रिया भिन्न हो जाती है।

''सूतके मानसीं संध्यां कुर्याद् वै सुप्रयत्नतः''

सूतकादि में मानसी संध्या करनी चाहिये यह मत स्मृतिसमुच्चय का है । इस में सूर्य का जल से अर्धा और उपस्थान नहीं होता है यहॉं दस बार गायत्री का मानसिक जप आवश्यक है, इतने से ही संध्योत्पासन का फल प्राप्त हो जाता है। आपत्ति के समय या रागावस्था में, रास्ते में और अशक्त होने पर भी मानसीं संध्या अवश्य करनी चाहिए । अर्थात किसी भी स्थिति में संध्या का त्याग नहीं करना चाहिए ।

अभ्यास प्रश्न – 3

1.संध्या कितने प्रकार के होते है ?

2.अघमर्षण करने से क्या होता है?

3.संध्या के पात्रों के नाम लिखिये?

1.4.1 गायत्री महात्म्य

गायत्री मन्त्र चारों वेद में आता है श्रीमद्देवीभागवत् एवं अन्यपुराणों में भी गायत्री का माहात्म्य मिलता है श्रीमद्देवी भागवत् के माहात्म्य में कहा गया है,

न गायत्रयाः परो धर्मो न गायत्रयाः परं तपः।

न गायत्रयाः समो देवो न गायत्रयाः परो मनुः।। दे0मा0अ0पूशो0 94

गातारं त्रायते यस्माद गायत्री तने सोच्यते ।। 95

भाषा - गायत्री से बड़कर कोई धर्म नहीं गायत्री से बड़कर कोई तप नहीं गायत्री के समान कोई देवता नहीं गायत्री से परे कोई ऋषि नहीं ।

गाने वाले की या जपने वाले की जो रक्षा करें उसे गायत्री कहते है ।

1.5 सारांश -

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आपने जाना कि शास्त्रविधि से गृहस्थ के लिए नित्यकर्म का निरूपण किया जाता है, **'जायमानो वै ब्रह्मणोस्त्रिभिर्ऋणवा जायते'** के अनुसार मनुष्य देवऋण, मनुष्य ऋण, पितृऋण से युक्त होकर जन्म लेता है। इन ऋणों से मुक्ति मिले इसलिये नित्यकर्म का विधान किया जाता है। नित्यकर्म में मुख्य छः कर्म बताये गये है - मनुष्य को शारीरिक शुद्धि के लिए स्नान, संध्या, जप, देवपूजन, बलिवैश्वदेव और अतिथि सत्कार - ये छः कर्म प्रतिदिन करने चाहिए। हमारी दिनचर्या नियमित है। प्रातः काल जागरण से लेकर शयन तक की समस्त क्रियाओं के लिए शास्त्रकारों ने अपने दीर्घकालीन अनुभव से ऐसे नियमों का निर्माण किया है जिनका अनुसरण करके मनुष्य अपने जीवन को सफल कर सकता है। नियमित क्रियाओं के ठीक रहने पर ही स्वास्थ एवं मन स्वस्थ रहता है। नित्यकर्म में मनुष्य क्या - क्या कर्म करें जिससे कि उसका सर्वतोमुखी विकास हो, शास्त्रीय दृष्ट्या इस इकाई में आपके अवलोकनार्थ व ज्ञानार्थ प्रस्तुत है।

1.6 पारभाषिक शब्दावली

बलिवैश्वदेव - चावल अनाज तथा घी आदि में से कुछ अंश का सब जीवों कों उपहार या दान करना।

दीर्घकालीन - लम्बें समय तक।

आचार - आचरण ।

ब्राह्ममूहर्त - सूर्योदय से पूर्व का समय (सुबह 4:00 से सूर्योदय से पूर्व तक का समय) ।

शौच – पवित्रता।

दन्तधावन - दातून करना।

मार्जन - स्वच्छ करना।

अघमर्षण - पापों का नाश करना।

उपस्थान - अभिवादन, नमस्कार।

अशौच – अशुद्ध ।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न – 1

1. प्रत्येक मनुष्य देवऋण, मनुष्यऋण , पितृ ऋण से युक्त होता है।
2. शय्या से उठने के पश्चात् सर्व प्रथम दोनों हाथों की हथेलियों को देखें और निम्न मन्त्र को बोलना चाहिये -

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये तु सरस्वती।

करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम् ॥

3. प्रातः कालीन भगवत् स्मरण से दिन अच्छा व्यतीत होता है तथा धर्म की वृद्धि होती है

4. ब्राह्ममुहूर्त सूर्योदय से चार घड़ी (डेढ़ घंटे) पूर्व को कहते है।

अभ्यास प्रश्न – 2

1. मुख की शुद्धि तथा मन्त्र की शुद्धि के लिये दातून करने की आवश्यकता है।

2. स्नान के सात प्रकार होते है।

अभ्यास प्रश्न – 3

1.संध्या प्रातःकाल मध्याह्न काल और सायंकाल तीन प्रकार की होती है।

2.अघमर्षण करने से पापों का नाश होता है।

3. संध्या के पात्रों के नाम है-

1. लोटा - जल के लिए
2. पात्र चन्दन पुष्पादि के लिए
3. पन्चपात्र
4. आचमनी
5. अर्घा
6. थाली जल गिराने के लिए
7. आसन
8. गोमुखी
9. माला

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ नाम	प्रकाशन
नित्यकर्म पूजाप्रकाश	गीताप्रेस गोरखपुर
श्रीमद्देवी भागवत	गीताप्रेस गोरखपुर

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- प्रातः कालीन भगवत् स्मरण के चार श्लोकों का अर्थ सहित वर्णन कीजिये ?

2- स्नान की आवश्यकता के विषय में लिखिये ?

3. संध्या से आप क्या समझते है। स्पष्ट कीजिये।

4. त्रिकाल संध्या का विधान लिखिये।

इकाई – 2 पूजन क्रम विधि

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के प्रथम खण्ड के द्वितीय इकाई से सम्बन्धित है। इसके पूर्व की इकाईयों में आप नित्यकर्म को समझ चुके है। इस इकाई में आप देवपूजन के अन्तर्गत पूजन क्रम का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

कर्मकाण्डोक्त पूजन में उत्तरोत्तर क्या – क्या क्रम होता है। किसके पश्चात् क्या करना चाहिये आदि का ज्ञान तथा पूजन सम्बन्धित विभिन्न तत्वों का ज्ञान इस इकाई में वर्णित किया जा रहा है।

पूजन के मुख्य रूप से तीन प्रकार है – पंचोपचार, दशोपचार एवं षोडशोपचार। पूजन क्रम क्या – क्या है तथा उसकी विधि क्या है, इस इकाई में आपके अवलोकनार्थ प्रस्तुत है।

2.2 उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझ सकते है कि –

- पूजन क्या है।
- देवपूजन में आरम्भिक पूजन क्या है।
- आरम्भिक पूजन के अन्तर्गत क्या - क्या करते है।
- देवताओं का पूजन क्रम क्या है।
- तिलक, दीपप्रज्वलन, दीप महत्व आदि का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

2.3 पूजन क्रम

पूजन के लिये सर्वप्रथम शुभ मुहूर्त्त का चयन करते है। उसके पश्चात् पूजन के लिये सम्बन्धित सामग्रीयों को एकत्र कर पवित्र स्थान पर आसन आदि बिछाकर वहॉ बैठते है तथा पूजन सामग्रीयों को सुव्यवस्थित करते है।

आसन पर बैठकर मंत्रो के द्वारा पूजन सामग्रियों को पवित्र करते है। तत्पश्चात् पूजन क्रम को समझ लिजिये –

जिस देवता की पूजन करनी हो, उसका मंत्र द्वारा आवाहन करते है, फिर पश्चात् का क्रम इस प्रकार है -

आवाहन

आसन

पाद्य

अर्घ्य

आचमन

स्नान

पंचामृत स्नान

शुद्धोदकस्नान शुद्ध जल से स्नान।

वस्त्र, उपवस्त्र

चंदन

यज्ञोपवीत (जनेऊ)

पुष्प

दुर्वा गणेश जी के पूजन में ।

तुलसी विष्णु जी के पूजन में तुलसी।

शमी शमीपत्र।

अक्षत शिव में श्वेत अक्षत, देवी में रक्त (लाल) अक्षत, अन्य में पीत (पीला) अक्षत।

सुगंधिद्रव्य इत्र।

धूप

दीप

नैवेद्य प्रसाद।

ऋतुफल।

ताम्बूल पान।

दक्षिणा।

आरती।

पुष्पाञ्जलि।

मंत्रपुष्पांजलि।

प्रार्थना।

इस प्रकार क्रमानुसार पूजन करते हैं।

आवाहन का मन्त्र -

आगच्छन्तु सुरश्रेष्ठा भवन्त्वत्र स्थिरा: समे।
यावत् पूजां करिष्यामि तावत् तिष्ठन्तु संनिधौ।।

मन्त्र पढ़ते हुये जिनकी पूजा कर रहे हो, उनका ध्यानपूर्वक आवाहन करना चाहिये। जिस देवता की पूजा कर रहे हो, उसका नाम लेकर पुष्प अर्पित करना चाहिये। यथा गणेश जी की पूजा कर रहे हो तो – गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि कहते हुए आवहनार्थे पुष्पं समर्पयामि कहना चाहिए । इसी प्रकार जो कर्म कर रहे हो, उसका नाम लेते हुए उच्चारण करना चाहिए।

आसन का मन्त्र –

अनेकरत्नसंयुक्तं नानामणिगणान्वितम्।
कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं परिगृह्यताम्॥

पाद्य का मन्त्र –

गंगादिसर्वतीर्थेभ्य आनीतं तोयमुत्तमम्।
पाद्यार्थं सम्प्रदास्यामि गृह्णनतु परमेश्वरा: ॥

अर्घ्य का मन्त्र –

गन्धपुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया।
गृह्णन्त्वर्घ्यं महादेवा: प्रसन्नाश्च भवन्तु मे॥

आचमन –

कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम्।
तोयमाचमनीयार्थं गृह्णन्तु परमेश्वरा:॥

स्नान –

मन्दाकिन्या: समानीतै:कर्पूरागुरूवासितै: ।
स्नानं कुर्वन्तु देवेशा जलैरेभि: सुगन्धिभि:॥

पंचामृत स्नान –

पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करान्वितम्।
पञ्चामृतं मयाऽऽनीतंस्नानार्थं प्रतिगृह्यातम्॥

शुद्धोद्धक स्नान –

मलयाचलसम्भूतचन्दनेन विमिश्रतम्।
इदं गन्धोदकं स्नानं कुकुमाक्तं नु गृह्यताम्॥

वस्त्र – उपवस्त्र का मन्त्र –

शीतवातोष्णसंत्राणे लोकलज्जानिवारणे।
देहालंकरणे वस्त्रे भवदभ्यो वाससी शुभे॥

यज्ञोपवीत –

नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।
उपवीतं मया दत्तं गृह्णन्तु परमेश्वरा:॥

चन्दन –

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढयं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।।

पुष्प, पुष्पमाला –

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि भक्तित: ।
मयाऽऽहतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

धूप –

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढयो गन्ध उत्तम: ।
आघ्रेय: सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यातम् ।।

दीप –

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निा योजितं मया ।
दीपं गृह्णन्तु देवेशास्त्रैलोक्यतिमिरापहम् ।।

नैवेद्य -

शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च ।
आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ।।

ऋतुफल –

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ।।

ताम्बूल –

पूगीफलं महद् दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् ।
एलालवंगसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृहय्ताम् ।।

दक्षिणा –

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो : ।
अनन्तपुण्यफलदमत: शान्तिं प्रयच्छ मे ।।

आरती –

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम् ।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मां वरदो भव ।।

पुष्पांजलि –

श्रद्धया सिक्तया भक्तया हार्दप्रेम्णा समर्पित: ।
मन्त्रपुष्पांजलिश्चायं कृपया प्रतिगृह्यताम् ।।

प्रार्थना –

नमोऽस्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरूबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरूषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नम: ।।

उपर्युक्त सभी मन्त्र लौकिक हैं। इसी प्रकार वैदिक मन्त्रों से भी पूजन किया जाता है।

2.3.1 तिलक, दीप पूजन

तिलक के सम्बन्ध में कई लोगों के मन में यह विचार आता है कि तिलक क्यों लगाया जाता है। किस प्रकार लगाना चाहिये आदि ... इत्यादि। भारतीय सनातन परम्परा में ऋषियों ने तिलक को अत्यन्त महत्वपूर्ण बताया है। तिलक लगाने से आत्मशान्ति, श्रीवृद्धि, पवित्रीकरण, पापनाशक, आपदा हरण, तथा सर्वथा लक्ष्मी का साथ होता है। चित्त सदैव स्थिर रहता है।

तिलक धारण का लौकिक मन्त्र –

चन्दनस्य महत्पुण्यं पवित्रं पापनाशनम्।
आपदं हरते नित्यं लक्ष्मी वसति सर्वदा ॥

वैदिक मन्त्र -

सुचक्षाऽहमक्षीभ्याम् भूयास गूॅ सुवर्चामुखेन सुश्रुतकर्णाभ्याम् भूयासम्॥

तिलक धारण महत्व -

स्नानं दानं तपो होमो देवता पितृकर्म्म च।
तत्सर्वं निष्फलं याति ललाटे तिलकं विना॥

यजमान तिलक -

चन्दनस्य महत्पुण्यं पवित्रं पापनाशनम्।
आपदं हरते नित्यं लक्ष्मी वसति सर्वदा॥

स्नान, होम, देव, पितृकर्म, दान, एवं तपस्यादि कर्म बिना तिलक के निष्फल हो जाते है। इसलिये उपासक को चाहिए पूजनादि से पहले तिलक धारण अवश्य करें।

यजमान पत्नी-बालक-बालिका-विधवा को तिलक के मन्त्र निम्नलिखित हैं -

यजमान तिलकः भद्रमस्तु शिवंचास्तु महालक्ष्मीः प्रसीदतु

रक्षन्तु त्वां सदा देवाः सम्पदः सन्तु सर्वदा सपत्नादुर्ग्रहापस दुष्टसत्वाद्युपद्रवाः तमाल पत्रमालोक्य निष्प्रभाव भवन्तु ते॥

आयुष्मान भव कहकर आर्शीवाद दें।

यजमान पत्नी तिलक:

ऊँ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनो व्यात्तम्। इष्णन्निषाण मुम्मऽइषाण।

आयुष्मती सौभाग्यवती भव।

बालक तिलक - यावद् गंगा कुरूक्षेत्रे यावत्तिष्ठति मेदिनी।
यावद् राम कथा लोके तावत जीवतु बालकः॥

बालिका- तिलक ऊँ अम्बे अम्बिकेऽऽम्बालिके नमानयति कश्चन।
ससत्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥

विधवा तिलक - ऊँ तद्विष्णोः परमं पदœ सदा पश्चन्ति सूरयः दिंवीव चक्षुराततम् ।।

दीप प्रज्वलन एवं दर्शन के कई मन्त्र है -

मन्त्र- चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ।

श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्रिरजायत ।।

शिव पूजन में दीप का मन्त्र –

ऊँ परि ते धन्वनो हेतिरस्मान वृणक्तु विश्वत: ।

अथो य इषुधिस्तवारे अस्मन्नि धेहि तम् ।।

दीपक पूजन का मन्त्र –

त्वं ज्योतिस्त्वं रविश्चन्द्रो विद्युदग्निश्च तारका: ।

सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्दीपावल्यै नमो नम: ।।

दीप ज्योतिषे नमः ।

आचमन किसी कर्म के प्रारम्भ में आचमन की महती आवश्यक होती है। आन्तरिक पवित्रता के लिये भी आचमन आवश्यक है। यजमान पूर्व दिशा की ओर मुख करके आसन में बैंठें निम्नलिखित तीन मन्त्रों से तीन बार जल को पीयें (आचमन करें)

ऊँ केशवाय नमः। ऊँ नारायणाय नमः। ऊँ माधवाय नमः

तत्पश्चात् हाथ को प्रक्षालन के मन्त्र-

गोविन्दाय नमो नमः हस्त प्रक्षालनम् ।

बायें हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ की तीन अँगुलियों से अपने ऊपर मन्त्र पढते हुए जल के छीटें दें।

मन्त्र

ऊँ पवित्रेस्थो वैष्ण्व्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ।

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्धां गतोडपिवा।

यः स्मरेत् पुण्डीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुद्धिः।।

जल छिडकते हुए तीन बार बोलें - ऊँ पुण्डरी काक्षः पुनातु

शिखाबन्धनम्:- शिक्षा बन्धन करें या शिखा में हाथ लगायें मन्त्र

ऊँ चिद्रूपिणि महामाये दिव्यतेजः सन्विते।

तिष्ठ देवि शिखाबद्धे तेजोवृद्धि कुरूष्व में।।

अभ्यास प्रश्न -1

1. आचमन क्यों किया जाता है ?
2. पवित्र होने के लिये जल को किस हाथ में लिया जाता है ?

2.3.2 शंख, घंटा पूजन, स्वस्तिवाचन तथा देवताओं के पृथक-पृथक पुष्पांजलि

शंख पूजन – शंख में दो दर्भ या दूब, तुलसी और फूल डालकर 'ओम' उच्चारण कर उसे सुवासित जल से भरें। इस जल को गायत्री मन्त्र से अभिमन्त्रित कर दे। फिर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर शंख में तीर्थों का आवाहन करें –

पृथिव्यां यानि तीर्थानि स्थावराणि चराणि च।
तानि तीर्थानि शंखेऽस्मिन् विशन्तु ब्रह्मशासनात्॥

पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर शंख को प्रणाम करें –

त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृत: करे।
निर्मित: सर्वदैवश्च पाञ्जन्य नमोऽस्तुते॥

शंख मन्त्र –

ॐ शंख चन्द्रार्कदैवत्यं वरूणं चाधिदैवतम्।
पृष्ठे प्रजापति विधादग्रे गंगा सरस्वती॥
त्रैलोक्ये यानि ती र्थानि वासुदेवस्य चाज्ञया।
शंखे तिष्ठन्ति वै नित्यं तस्माच्छंखं प्रपूजयते्॥
शंख में गन्धाक्षत पुष्प चड़ाये और बोले-भू भुर्वःस्वः-
शंखस्ध देवतायै नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि-समपयामि॥

घन्टा पूजन मन्त्र –

ॐ आगमार्थं तु देवानां गमनार्थं च रक्षसाम्।
कुरू घण्टे वरं नादं देवतास्थानसंन्निधौ॥

भूर्भुव: स्वः घण्टस्थ देवताय नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि सर्मपयामि तत्पश्चात् शंख घन्टा बजायें।

पुष्पाक्षत भगवान में चड़ये पुनः पुष्पहाथ में ले निम्न मन्त्रों से भगवान में चढायें।

हाथ में पुष्प-अक्षत लें स्वस्तिवाचन का पाठ करें। सभी शूभ कार्यो के प्रारम्भ में स्वस्ति वाचन का पाठ करना अनिवार्य होता है।

स्वस्तिवाचन – हरिः ॐ स्वस्तिनऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वतिनः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यो अरिष्ठनेमिःस्वस्ति नो वृहस्पतिद्धधातु॥1॥ पृषदश्वा मरूतः पृश्निमातः शुभँव्यावानो विदथेषु जग्मयः।

अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवाऽअवसागमन्निह ।।2।।
भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम् देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राःस्थिरैरङगस्तुष्टुवा सस्तनूभिर्व्यशैमहि देवहितं जदायुः ।3। शतोमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम् पुत्रासो यत्र पितरो भवन्तिमानो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ।।4।। अदितिद्यौरदितिरन्तक्षमदिति माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पञ्चजना अदितिजामदितिर्जनित्वम् ।।5।। द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृधिनी शान्तिरायः शान्ति रोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शन्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व शान्तिः शान्तिदेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ।।7।। यतो यत: समीहसे ततो नो अभयंकुरू । शं नः कुरू प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः।।8।। गणानां त्वा गणपति हवामहे प्प्रियाणां त्वा प्प्रियपति हवामहे निधीनां त्वा निधिपति हवामहे व्वसो मम । आहमजानि गर्भधमा त्त्वमजासि गर्भधम् ।।9।। अम्बे ऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् । सुशान्तिर्भवतु ।। श्रीमन्महागणधिपतये नमः। लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। उमामहेश्वराभ्यां नमः। वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः । शचीपुरन्दराभ्यां नमः । मातापितृचरणकमलेभ्यो नमः । इष्टदेवताभ्यो नमः कुलदेवताभ्यो नमः । ग्रामदेवताभ्यो नमः। वास्तुदेवताभ्यो नमः। स्थानदेवताभ्यो नमः। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। सिद्धिबुद्धि सहिताय श्री मन्महागणाधिपतये नमः ।।

पुनः पुष्प लेकर पुनः पुष्प लेकर गणेश जी का स्मरण करें ।

ऊँ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ।।
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षोभालचन्द्रो गजाननः ।
दृादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ।।
विधारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ।
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ।।
अभीप्सितार्थसिद्धयर्थं पूजितो यः सुराऽसुरैः ।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ।
सर्वमंगलमंग्ल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्रयम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ।।
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममंगलम् ।

येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः ।।

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव ।

विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽघ्रियुगं स्मरामि ।।

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः।

येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः।

यत्र यागेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।

तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।

तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।।

स्मृतेः सकलकल्याणं भाजनं यत्र जायते ।

पुरूषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ।

सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः ।

देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मोशानजनार्दनाः ।।

यत्र योगेश्वर: कृष्ण यत्र पार्थो धनुर्धर: ।

तत्र श्रीर्विजयोभूतिध्रुर्वानीतिमर्तिमम् ।।

चन्दन से भूमि में त्रिकोण बनायें उसके अक्षर उलय त्रिकोण बनायें यह षट्कोण बन जायेगा इसके बाहर गोल घेरा बनायें और इन वाक्यों की संस्कृत में उच्चारण करें-भूमौ चन्दनेन त्रिकोणं षट्कोण वर्तुलं वा विलिख्य उसके ऊपर चन्दन से ही शंख चक्र की आकृति की कल्पना मात्र करें या बनाये । इस में पुष्प रखें (संस्कृत तदुपरि आसनं) पुष्प के उपर अर्धा रखें (तदुपरि अर्धपात्रं) अर्ध में कुशा की पवित्री रखें और मन्त्र बोले-

ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यो सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यीच्छद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः।।

तत्पश्चात् अर्धा में जल चड़ाये और मन्त्र बोलें-

ॐ शन्नो देवीरभीष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभिस्त्ररन्तु नः।।

तीर्थों का आवाह्नन का मन्त्र -

गंगा च यमुना चैव गोदावरि सरस्वती ।

नर्मदा सिन्धु कावेरि जलेस्मिन्सन्निधि कुरू ।।

अर्धा में यव (जौ) गन्धाक्षत पुष्प छोड़े और कहें-

यव, जल, गन्धाष्तत पुष्पादिं तूष्णी निक्षिप्त अर्धपांत्र सुसम्पन्नं अस्तु सुसम्पन्नम्-

तेन जलेन आत्मानं सर्वान सूर्याध्य दान सामाग्रीं च सम्प्रोक्ष्य।

एक पात्र (थाली) में

सर्वप्रथम सूर्य भगवान् को अर्धा दें, पुष्प से ध्यान करें-

ध्यानम् - ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्र्ती नारायणः सरसिजासनसंनिविष्टः।

केयूरवान् मकरकुण्डलवान् किरीटी हारी हिरण्मयवपुर्धृतशंखचक्रः ।।

भूर्भुवः स्वः श्री भास्कर देवाय नमः ध्यानं समर्पयामि

पुष्प चड़ा दें। अक्षत घुमा कर पात्र में चढ़ायें।

भू0 श्री भा0 नमः अक्षतैः आवाहनं समर्पयामि

एक पुष्प चड़ायें भू0 भा0 आसनोपरि पुष्पं समर्पयामि

एक चम्मच जल चड़ायें भू0 भा0 पाद्यार्थे जलं समर्पयामि

जो अर्धां आपने स्थापित किया उसी से सूर्य को अर्घा दें।

मन्त्र- एहि सहस्रांशो तेजोरशि जगत्पते।

अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घं दिवाकर ।।

नमोऽतु सूर्याय नमोडस्तु भावने।

भू0 भा0 अर्धां समर्पयामि पुनः पात्र में गन्धाक्षत चड़ाये और बोलों भू0 भा0 गन्धाक्षत पुष्पाणि समर्पयामि मन्त्र-

ऊँ आ कृष्णेन रजसा व्वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यन्च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।।

सूर्य पूजन के अनन्तर भूतोपसादन करें।

बाये हाथ में अक्षत और पीली सरसों लेकर चारों दिशाओं की और छोड़े-

मन्त्र-

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम्।

सर्वेषामीवसेधेन ब्रह्मकर्म (पूजाकर्म) समारथे।।

पाखण्डकारिणो भूता भूमौ ये चान्तरिक्षगाः।

दिवि लोके स्थिता ये ज ते नश्यन्तु विशाज्ञया।

निग्च्छितां च भूतानां वर्त्म दधात्स्ववामतः।।

पुनः पूर्वोक्त रीति से अर्धा स्थापन करें, अर्धा स्थापन के पश्चात् कहें ''अर्धपांत्र सुसम्पन्नम्-अस्तु सुसम्पन्नम् गतेन जलेन आत्मानं सर्वान् पेजन सामाग्रीं च सम्प्रोक्ष्य पुष्प लेकर हाथ जोड़े भैरव जी का स्मरण करें-

मन्त्र - अति तीक्ष्ण महा काया कल्पान्त दहनोपम।

भैरवाय नमस्तुभ्यं अनुज्ञां दातु महर्सि ।।

अभ्यास प्रश्न-2

1. स्वस्तिवाचन से पूर्व क्या किया जाता है ?
2. सर्वमंगलमंगल्ये ....।

   .... नमोऽस्तुते।।

इस श्लोक को पूरा कीजिये?

3. भूतोत्साधन किस वस्तु से किया जाता है?

2.3.3 संकल्प का महत्व

संकल्प - पूजनादि में संकल्प की महती आवश्यकता है,

संकल्पेन बिना कर्म यत्किन्चित्कुरूतेनरः ।

फलं चाप्यल्पकं तस्य धर्मस्याद्धिक्षयोभवते ।।

मनुष्य संकल्प के बिना जो कुछ भी कर्म करता है उसका फल बहुत थोड़ा होता है। उसके आधे पुण्य का फल क्षय हो जाता है। (भविष्यपुराण)

संकल्पं विधितत्कुर्यात् स्नानन्दान-व्रतादि के स्नान, दान, व्रत आदि में विविधवत् संकल्प करना चाहिए।

संकल्प भूलः कामो वै यज्ञाः संकल्पसम्भवः।

व्रतानि यमधर्माश्च सर्वे संकल्पजाउस्भताः।।

किसी काम को करने की इच्छा का मूल संकल्प है।

यज्ञादि संकल्प से ही होते है। व्रतादि सभी धर्मों का आधार संकल्प ही कहा गया है।

संकल्प करने से मास, पक्ष, तिथी, वार देश काल का भी सभ्यक ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

हाथ में पुष्प अक्षत कुशाकी पवित्री जल लें और संकल्प पढ़े –

ऊँ विष्णुर्विष्णुविष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरूषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽपि द्वितीय परार्द्धे श्रीश्वेतवाराह कल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टविंशतितमें कलियुगे कलिप्रथम चरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरत खण्डे आर्यावर्तैकदेशे, अमुकक्षेत्ते (जिस स्थान में आप बैठे है) बौद्धावतारे विक्रमशकें अमुकनाम संवत्सरे श्रीसूर्ये अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे एवं ग्रह गुणगण विशेषण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुक शर्माऽहं ;वर्माऽहं गुप्तोऽहंद्ध मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सर्वपापक्षयपूर्वक दीर्घायुः विपुल धन धान्य पुत्र पौत्राद्यनवच्छिन्न सन्ततिवृद्धि स्थिरलक्ष्मी

कीर्तिलाभ शत्रुपराजय सदभीष्टसिद्धझर्थं अमुक पूजन कर्मणः पूर्वांगत्वेन निर्विघ्नता सिद्धयर्थं गणपति पूजनं करिष्ये ।।

अभ्यास प्रश्न- 3

1. संकल्प के बिना कर्म ....जाता है?
2. पवित्री किस वस्तु की होती है?

2.4 सारांश-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि पूजा के क्रम में क्या - क्या होता है। आवाहन से लेकर प्रार्थना तक उनका क्रम किस प्रकार है। आचमन से संकल्प तक की क्रिया बोध आपको हो चुका है। आरम्भिक पूजन क्रम में आवाहन , आसन, पाद्य , अर्घ्य , आचमन, स्नान, पंचामृत स्नान, शुद्धोदकस्नान शुद्ध जल से स्नान, वस्त्र, उपवस्र , चंदन, यज्ञोपवीत (जनेऊ(, पुष्प, दुर्वा गणेश जी के पूजन में , तुलसी विष्णु जी के पूजन में तुलसी, शमी शमीपत्र, अक्षत शिव में श्वेत अक्षत, देवी में रक्त अक्षत (लाल), अन्य में पीत अक्षत (पीला), सुगंधिद्रव्य इत्र, धूप, दीप, नैवेद्य प्रसाद , ऋतुफल , ताम्बूल पान , दक्षिणा, आरती ,पुष्पाञ्जलि, मंत्रपुष्पांजलि , प्रार्थना आदि है। प्रत्येक पूजन में ये कर्म होते ही होते है। अन्य पूजन में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन होता है। प्रधान पूजन में एक को प्रधान मानकर उनका पूजन किया जाता है।

2.5 शब्दावली

प्रसीदतु - प्रसन्न हो।

हस्त प्रक्षालनम्- हाथ धोना।

पुण्डरी काक्ष - कमल जैसे नेत्रों वाले।

मंगलायतन - मंग जैसी आकृति वाले।

हृदिस्थे- हृदय में स्थित।

शशिवर्णम्- चन्द्र जैसे वर्ण वाले।

शुक्लांबर धरम्- श्वेत वस्त्र धारण करने वाले।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न – 1

1. आचमन आन्तरिक पवित्रता के लिये किया जाता है।
2. पवित्र होने के लिये जल को बॉये हाथ में लिया जाता है।

अभ्यास प्रश्न – 2

1. स्वस्तिवाचन से पूर्व शंख घण्टा का पूजन किया जाता है।
2. सर्वमंगलमंगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
   शरण्ये त्रयम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते।।
3. भूतोत्साधन पिली सरसों से किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न – 3

1. संकल्प के बिना कर्म आधा हो जाता है।
2. पवित्री कुशा की होती है?

2.7 संन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कर्मकाण्ड प्रदीप संपादक आचार्य जनार्दन पाण्डेय
2. रूद्रष्टाध्यायी।

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूजन क्या है ? मन्त्रसहित उसका क्रम लिखिये।
2. आरम्भिक पूजन से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।
3. स्वस्तिवाचन के मन्त्र लिखिये ।
4. कर्मकाण्ड में पूजन का महत्व पर अपने शब्दों में निबन्ध लिखिये ।

इकाई – 3 गणपति – गौरी एवं षोडशमातृका पूजन

इकाई संरचना

3.1-प्रस्तावना-

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 102 के प्रथम खण्ड की तीसरी इकाई से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने नित्यकर्म एवं आरम्भिक पूजन का अध्ययन कर लिया है। इस इकाई में अब आप गणपति – गौरी एवं षोडशमातृका पूजन का अध्ययन करेंगे।

जैसा कि आप सब जानते हैं कि देवताओं में अग्रगण्य होने के कारण सर्वप्रथम गणेश जी का पूजन किया जाता है। गणेश जी के साथ गौरी का पूजन भी किया जाता है। उसी क्रम में मातृका पूजन होता है, जिसमें षोडशमातृका पूजन होता है।

इस इकाई में आप पूजा के महत्वपूर्ण अंग गणपति – गौरी एवं षोडशमातृकाओं के पूजन की विधि का अध्ययन करेगें।

3.2 उद्देश्य-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ गणपति पूजन विधि को समझ लेंगे।
- ❖ गणपति के साथ गौरी पूजन को भी समझा सकेंगे।
- ❖ षोडशमातृका पूजन कैसे होता है, जान लेंगे।
- ❖ पूजन में गणपति – गौरी पूजन का महत्व समझा सकेंगे।
- ❖ मातृका पूजन में षोडशमातृका पूजन का निरूपण कर सकेंगे।

3.3 गणपति – गौरी पूजन

भारतीय सनातन परम्परा में यह निर्विवाद है कि सभी पूजन कर्मो में सर्वप्रथम गणेश जी की पूजा होती है, साथ में गौरी माता की पूजा भी होती है। पूजन की प्रक्रिया में क्या क्या होता है इसका अध्ययन आप पूर्व के इकाई में कर चुके हैं। प्राचीन काल में पूजन कर्म केवल वैदिक मन्त्रों से किये जाते थे, क्योंकि वह वेदप्रधान युग था। कालांतर में स्थितियॉ बदली, तो अब संस्कृतज्ञों एवं वेदज्ञों की संख्या भी घटती चली गई है। ऐसी परिस्थिति में आचार्यों ने लौकिक मन्त्र का निर्माण किया। इस प्रकार अब लौकिक और वेद मन्त्र से पूजन की जाती है। यहॉ दोनों का समावेश किया जा रहा है। आइए गणपति और गौरी पूजन का अध्ययन करते है –

सर्वप्रथम हाथ में अक्षत लेकर गणपति – गौरी का ध्यान निम्नलिखित मन्त्र से करना चाहिए –

गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारूभक्षणम् ।
उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपंकजम् ।।
नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।।

श्रीगणेशाम्बिकाभ्यां नमः , ध्यानं समर्पयामि ।

इसके पश्चात् हाथ में अक्षत पुष्प लेकर आवाहन करना चाहिए । आवाहन के निम्न मन्त्रों का उच्चारण करें –

ॐ गणानां त्वा गणपति गॅू हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति गॅू हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति गॅू हवामहे व्वसो मम् ।। आहमजानि गर्ब्भधमा त्त्वमजासि गर्ब्धधम् ।।

एह्येहि हेरम्ब महेशपुत्र समस्तविघ्नौघविनाशदक्ष ।
मांगल्यपूजाप्रथमप्रधान गृहाण पूजां भगवन् नमस्ते ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि च ।

हाथ के अक्षत गणेश जी पर चढ़ा दे । पुनः अक्षत लेकर गणेश जी की दाहिनी ओर गौरी जी का **आवाहन करें –**

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन ।
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ।।
हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शंकरप्रियाम् ।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गौर्ये नमः, गौरीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि च ।

आवाहन के पश्चात् गणपति और गौरी को स्पर्श करते हुए निम्नलिखित मन्त्र से उनकी प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिए -

प्रतिष्ठा -

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञ गॅू समिमं दधातु । विश्वे देवास इह मादयन्तामो ३ प्रतिष्ठ ।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च ।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ।।
गणेशाम्बिके सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेताम् ।।

प्रतिष्ठापूर्वकम् आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि गणेशाम्बिकाभ्यां नमः ।

आसन के लिए अक्षत समर्पित करे ।

पश्चात् निम्न मन्त्र से पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नान, पुनराचमनीय करें –

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।।

एतानि पाद्यार्घ्याचनमनीयस्नानीयपुनराचमनीययानि समर्पयामि गणेशाम्बिकाभ्यां नमः । इतना

कहकर जल चढ़ा दे।

दुग्ध स्नान –

ॐ पय: पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धा: । पयस्वती: प्रदिश: सन्तु मह्यम् ॥

कामधेनुसमुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम् ।

पावनं यज्ञहेतुश्च पय: स्नानार्थमर्पितम् ।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: पय: स्नानं समर्पयामि । दूध से स्नान कराये ।

दधिस्नान -

ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिन: । सुरभि नो मुखा करत्प्राण आयू गॅं षि तारिषत् ॥

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम् ।

दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: दधिस्नानं समर्पयामि । दधि से स्नान कराये ।

घृत स्नान –

ॐ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिघृते श्रितो घृतम्वस्य धाम । अनुष्वधमा वह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम् ॥

नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसंतोषकारकम् ।

घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: घृतस्नानं समर्पयामि । घृत से स्नान कराये ।

मधुस्नान –

ॐ मधुवाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धव: । माध्वीर्न: सन्त्वोषधी: ॥ मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिव गॅं रज: । मधु द्यौरस्तु न: पिता ॥

पुष्परेणुसमुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु ।

तेज: पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: मधुस्नानं समर्पयामि । मधु से स्नान कराये ।

शर्करास्नान –

ॐ अपा गॅं रसमुद्वयस गॅं सूर्ये सन्त गॅं समाहितम् । अपा गॅं रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥

इक्षुरससमुद्भूतां शर्करां पुष्टिदां शुभाम् ।

मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: शर्करास्नानं समर्पयामि । शर्करा से स्नान कराये ।

पञ्चामृत स्नान –

ॐ पञ्च नद्य: सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतस: । सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ।

ॐ पञ्चामृतं मयानीतं पयो दधि घृतं मधु ।

शर्करया समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि। पञ्चामृत से स्नान कराये।

गन्धोदक स्नान –

ऊँ अ गूॅं शुना ते अ गूॅं शु: पृच्यतां परूषा परू: । गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युत:।

मलयाचलसम्भूतचन्दनेन विनि:सृतम् ।

इदं गन्धोधकस्नानं कुंकुमाक्तं च गृह्यताम् ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: गन्धोदकस्नानं समर्पयामि। गन्धोदक से स्नान कराये।

शुद्धोद्धक स्नान –

ऊँ शुद्धवाल: सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विना: । श्येत: श्येताक्षोऽरूणस्ते रूद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपा: पार्जन्या: ।।

गंगा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती ।

नर्मदा सिन्धु कावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: शुद्धोद्धकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोद्धक स्नान कराये।

आचनम - शुद्धोद्धकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। आचमन के लिए जल दे।

वस्त्र –

ऊँ युवा सुवासा: परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमान: । तं धीरास: कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो ३ मनसा देवयन्त:।

शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।

देहालंकरणं वस्त्रमत: शान्तिं प्रयच्छ मे ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: वस्त्रं समर्पयामि। वस्त्र समर्पित करे ।

आचमन – वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

उपवस्त्र –

ऊँ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमाऽसदत्स्व:। वासो अग्ने विश्वरूप गूॅं सं व्ययस्व विभावसो

यस्याभावेन शास्त्रोक्तं कर्म किंचिन्न सिध्यति।

उपवस्त्रं प्रयच्छामि सर्वकर्मोपकारकम् ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: उपवस्त्रं समर्पयामि। उपवस्त्रभावे रक्तसूत्र समर्पित करे ।

आचमन - उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि ।

यज्ञोपवीत -

ऊँ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् ।

आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेज: ।।

यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।

नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम् ।।

उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: यज्ञोपवीतं समर्पयामि। यज्ञोपवीत समर्पित करे ।

आचमन - यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि ।

चन्दन –

त्वां गन्धर्वा अखनॅस्त्वामिन्द्रस्त्वां वृहस्पति:। त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत।।

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढयं सुमनोहरम्।

विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: चन्दनानुलेपनं समर्पयामि। चन्दन समर्पित करे ।

अक्षत –

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ता: सुशोभिता:।

मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: अक्षतान् समर्पयामि। अक्षत अर्पित करे ।

पुष्पमाला –

ॐ ओषधी: प्रति मोदध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी:। अश्वा इव सजित्वरीर्वीरूध: पारयिष्णव:॥

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।

मयाहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: पुष्पमालां समर्पयामि। पुष्पमाला समर्पित करे ।

दूर्वा –

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परूष: परूषस्परि ।एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च॥

दूर्वांकुरान् सुहरितानमृतान् मंगलप्रदान् ।

आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक ॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: दूर्वांकुरान् समर्पयामि। दुर्वा समर्पित करे ।

सिन्दूर –

ॐ सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमिय: पतयन्ति यह्वा:।

घृतस्य धारा अरूषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभि: पिन्वमान:॥

सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम्

शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: सिन्दूरं समर्पयामि। सिन्दूर समर्पित करे ।

अबीर – गुलाल -

ॐ अहिरिव भोगै: पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमान:। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्

पुमान् पुमा गॅूं सं परि पातु विश्वत:।

अबीरं च गुलालं च हरिद्रादिसमन्वितम्।

नाना परिमलं द्रव्यं गृहाण परमेश्वर ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि। अबीर आदि समर्पित करे ।

सुगन्धित द्रव्य –

ऊँ अहिरिव भोगै: पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमान:। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमा गॅू सं परि पातु विश्वत:।

दिव्यगन्धसमायुक्तं महापरिमलाद्भूतम्।

गन्धद्रव्यमिदं भक्त्या दत्तं वै परिगृह्यताम्॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि। द्रव्य समर्पित करे ।

धूप –

ऊँ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयं धूर्वाम:। देवानामसि वह्नितम गॅू सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्॥

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढयो गन्ध उत्तम:।

आघ्रेय: सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: धूपमाघ्रापयामि। धूप दिखाये।

दीप –

ऊँ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्नि: स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योति : सूर्य: स्वाहा । अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्च: स्वहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्च: स्वाहा। ज्योति: सूर्य: सूर्यो ज्योति: स्वाहा।

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निा योजितं मया।

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम्॥

भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने।

त्राहि मां निरयाद् घोराद् दीपज्योतिर्नमोऽस्तुते॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: दीपं दर्शयामि। दीप दिखाये ।

हस्त प्रक्षालन - ऊँ हृीषीकेशाय नम: कहकर हाथ धो ले।

नैवेद्य –

ऊँ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गॅू शीर्ष्णो द्यौ: समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिश: श्रोत्रात्तथा लोकॉ अकल्पयन् ।

ऊँ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।

ऊँ प्राणाय स्वाहा । ऊँ अपानाय स्वाहा । ऊँ समानाय स्वाहा। ऊँ उदानाय स्वाहा। ऊँ व्यानाय स्वाहा । ऊँ अमृतापिधानमसि स्वाहा।

शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।

आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: नैवेद्यं निवेदयामि। नैवेद्य निवेदित करे ।

नैवद्यान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

ऋतुफल –

ऊँ या: फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणी: । वृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्त्व गूॅं हस: ॥

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।

तेन मे सफलवाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , ऋतुफलानि समर्पयामि।

फलान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि

उत्तरापोशन - उत्तरापोऽशनार्थे जलं समर्पयामि। गणेशाम्बिकाभ्यां नम: ।

करोद्वर्तन -

ऊँ अ गूॅं शुना ते अ गूॅं शु: पृच्यतां परूषा परू: । गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युत: ।

चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम् ।

करोद्ववर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , करोद्वर्तनकं चन्दनं समर्पयामि।

ताम्बूल –

ऊँ यत्पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म: शरद्धवि: ॥

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।

एलादिचूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।

दक्षिणा –

ऊँ हिरण्यगर्भ: समवर्तताग्रे भूतस्य जात: पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो।

अनन्तपुण्यफलदमत: शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , कृताया: पूजाया: सांगुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि ।

आरती –

ऊँ इद गूॅं हवि: प्रजननं मे अस्तु दशवीर गूॅं सर्वगण गूॅं स्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि ॥ अग्नि: प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतो अस्मासु धत्त ॥

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्।

आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , आरार्तिकं समर्पयामि।

पुष्पांजलि –

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । ते ह नाकं महिमान: सचन्त यत्र पूर्वे साध्या: सन्ति देवा: ।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , पुष्पांजलिं समर्पयामि ।

प्रदक्षिणा -

ॐ ये तीर्थाथ्नि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङि्गण: । तेषा गॅू सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ।।

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदे पदे ।।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

विशेषार्घ्य -

ताम्रपात्र में जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प , दूर्वा और दक्षिणा रखकर अर्घ्यपात्र को हाथ में लेकर निम्नलिखित मन्त्र पढ़े -

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक ।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात् ।।
द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो ।
वरदस्त्वं वरं देहि वांछितं वांछितार्थद ।
अनेन सफलार्घ्येण वरदोऽस्तु सदा मम ।।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , विशेषार्घ्य समर्पयामि ।

अन्त में हाथ जोड़कर प्रार्थना करे –

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमोस्ते ।।
भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय ।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमोस्ते ।।
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय करिरूपाय ते नम:
विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे ।
भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक
त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति ।।
भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति

विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति।
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव
त्वां वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या ॥
विश्वस्य बीजं परमासि माया
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत् ।
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतु: ॥

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशाम्बिकाभ्यां नम: , प्रार्थनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि।

गणेशपूजने कर्म यन्न्यूनमधिकं कृतम्।
तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम।
अनया पूजया गणेशाम्बिके प्रीयताम् न मम ॥

ऐसा कहकर समस्त पूजन कर्म को गणपति – गौरी को समर्पित कर दे तथा पुन: नमस्कार करना चाहिए।

बोध प्रश्न-

1. समस्त पूजन में प्रथम पूजन होता है ?
   क. विष्णु ख. शिव ग. गणेश घ. ब्रह्मा
2. गजानन का अर्थ है -
   क. घोड़े के समान मुख ख. हाथी के समान मुख ग. ग्राह के समान मुख घ. कोई नहीं
3. गौरी जी का स्थान गणेश जी के होता है -
   क. दायॉ ख. बायॉ ग. सामने घ. पीछे
4. गणेशाम्बिका का अर्थ है -
   क. गणेश ख. गणेश – गौरी ग. गणेश – दुर्गा घ. शिव – गणेश
5. हिरण्यगर्भगर्भस्थं .... विभावसो।
   अनन्तपुण्यफलदमत: शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
   क. हेमबीज ख. ताम्बूलं ग. कर्पूरं घ. कोई नहीं

3.3.1 षोडश मातृका पूजनम्

मातृका पूजन पंचांग पूजन का अंग है गणेश पूजन के अनन्तर मातृकाओं का पूजन होता है।
सर्वप्रथम प्रधान संकल्प करें ------

ॐ विष्णःविष्णुःविष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरूषस्य विष्णो राज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे विष्णुपदे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे युगे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशे विक्रमशके बौद्धावतारे

अमुकनामसंवत्सरे श्रीसूये अमुकायने अमुकऋतौ महामांगल्यप्रदमासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे एवं ग्रहगुण - विशेषण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः अमुकशर्मा सपत्निकोऽहं मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सर्वपापक्षयपूर्वक- दीर्घायुर्विपुल - धन-धान्य- पुत्र-पौत्राद्यनवच्छिन्न- सन्ततिवृद्धि-स्थिरलक्ष्मी-कीर्तिलाभ शत्रु पराजय सदभीष्टसिद्ध्यर्थं .... गणेशपूजनं करिष्ये।

षोडश मातृका चक्र

स्थापना -

षोडशमातृकाओं की स्थापना के लिये पूजक दाहिनी ओर पॉच खड़ी पाइयों और पॉच पड़ी पाइयों का चौकोर मण्डल बनायें। इस प्रकार सोलह कोष्ठक बन जायेंगे। पश्चिम से पूर्व की ओर मातृकाओं का आवाहन और स्थापन करें। कोष्ठकों में रक्त चावल, गेहूँ या जौ रख दे। पहले कोष्ठक में गौरी का आवाहन होता है, अत: गौरी के आवाहन के पूर्व गणेश का भी आवाहन पुष्पाक्षतों द्वारा कोष्ठक में करे । इसी प्रकार अन्य कोष्ठकों में भी निम्नांकित मन्त्र पढ़ते हुए आवाहन करे -

आवाहन एवं स्थापन मन्त्र –

ऊँ गणपतये नम:, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ गौर्ये नम:, गौरीमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ पद्मायै नम:, पद्मावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ शच्यै नम:, शचीमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ मेधायै नम: मेधामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ सावित्र्यै नम:, सावित्रीमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ विजयायै नम:, विजयामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ जयायै नम: , जयामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ देवसेनायै नम:, देवसेनामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ स्वधायै नम:, स्वधामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ स्वाहायै नम:, स्वाहामावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ मातृभ्यों नम:, मातृ: आवाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ लोकमातृभ्यो नम: लोकमातृ: आवाहयामि स्थापयामि।

ऊँ धृत्यै नम:, धृतिमावाहयामि, स्थापयामि।

ऊँ पुष्टयै नम: पुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि

ऊँ तुष्टयै नम: तुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि

ऊँ आत्मन: कुलदेवतायै नम:, आत्मन: कुलदेवतामावाहयामि, स्थापयामि।

षोडशमातृका - चक्र

आत्मन: कुलदेवता १६	लोकमातर: १२	देवसेना ८	मेधा ४
तुष्टि: १५	मातर: ११	जया ७	शची ३
पुष्टि १४	स्वाहा १०	विजया ६	पद्मा २
धृति १३	स्वधा ९	सावित्री ५	गौरी गणेश १

इस प्रकार षोडशमातृकाओं का आवाहन, स्थापना कर **ऊँ मनोर्जूति जुषतामा... 0 ,** मंत्र से अक्षत छोड़ते हुए मातृका मण्डल की प्रतिष्ठा करनी चाहिये। तत्पश्चात् निम्नलिखित नाम मन्त्र से गन्धादि उपचारों द्वारा पूजन करनी चाहिये –

ऊँ गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातृकाभ्यो नम: ।

विशेष : - मातृकाओं को यज्ञोपवीत नही चढ़ाना चाहिये।

नैवेद्य के साथ - साथ घृत और गुड़ का भी नैवेद्य लगाना चाहिये।

विशेष अर्घ्य दे।

फल का अर्पण - नारियल आदि फल अंजलि में लेकर प्रार्थना करे –

ऊँ आयुरारोग्यमैश्वर्यं ददध्वं मातरो मम।
निर्विघ्नं सर्वकार्येषु कुरूध्वं सगणाधिपा: ।।

इस तरह प्रार्थना करने के पश्चात् नारियल आदि फल चढ़ाकर हाथ जोड़कर बोले –

गेहे वृद्धिशतानि भवन्तु, उत्तरे कर्मण्यविघ्नमस्तु ।

इसके बाद –

अनया पूजया गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातर: प्रीयन्ताम् न मम।

इस वाक्य का उच्चारण कर मण्डल पर अक्षत छोड़कर प्रणाम करना चाहिये -

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।

देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ।।

धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता।

गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्याश्च षोडश।।

3.4 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि भारतीय सनातन परम्परा में यह निर्विवाद है कि सभी पूजन कर्मो में सर्वप्रथम गणेश जी की पूजा होती है, साथ में गौरी माता की पूजा भी होती है। पूजन की प्रक्रिया में क्या क्या होता है इसका अध्ययन आप पूर्व के इकाई में कर चुके हैं। प्राचीन काल में पूजन कर्म केवल वैदिक मन्त्रों से किये जाते थे, क्योंकि वह वेदप्रधान युग था। कालांतर में स्थितियॉ बदली, तो अब संस्कृतज्ञों एवं वेदज्ञों की संख्या भी घटती चली गई है। ऐसी परिस्थिति में आचार्यों ने लौकिक मन्त्र का निर्माण किया। इस प्रकार अब लौकिक और वेद मन्त्र से पूजन की जाती है। गणपति – गौरी पूजन के साथ – साथ मातृका पूजन में षोडशमातृका पूजन (जिसमें 16 कोष्ठक बने होते है) का भी ज्ञान प्राप्त किया है।

3.5 शब्दावली-

वेदप्रधान – जहॉ वेद की प्रधानता हो ।

लौकिक - सांसारिक।

वैदिक – वेद से सम्बन्धित ।

विघ्नेश्वर - विघ्न को हरने वाले ईश्वर ।

आवाहयामि – आवाहन करता हूॅ

पूजयामि – पूजन करता हूॅ

च – और

घृत – घी

मधु – शहद

शर्करा – चीनी

पंचामृत – दूध, दही, घी, शहद, गंगाजल का मिश्रण

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. क
4. ख
5. क

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- कर्मकाण्ड प्रदीप

2- संस्कार दीपक

3. नित्यकर्मपूजाप्रकाश

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गणपति - गौरी पूजन का विस्तार से वर्णन कीजिये।
2. षोडशमातृका से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये।

इकाई – 4 पंचदेव पूजन विधि

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावनाः-

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 102 की द्वितीय प्रश्न पत्र के प्रथम खण्ड की चौथी इकाई **'पंचदेवपूजन विधि'** नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने गणेश – गौरी एवं षोडशमातृका पूजन का अध्ययन कर लिया है। इस इकाई में आप पंचदेवपूजन का अध्ययन करने जा रहे है।

पंचदेव के अन्तर्गत गणेश, विष्णु, शिव, दुर्गा एवं सूर्य भगवान आते है। इनका पूजन किस प्रकार होता है, पूजन विधि क्या है आदि का विवरण प्रस्तुत इकाई में किया जा रहा है।

कर्मकाण्ड में कथित पंचदेव पूजन का ज्ञान होने से आरम्भिक रूप में पूजन का ज्ञान हो जाता है। प्रधान रूप से इन्हीं पॉच देवताओं का पूजन किया जाता है। अत: आपके अध्ययनार्थ व ज्ञानार्थ पंचदेव पूजन विधि दी जा रही है।

4.2 उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1. पंचदेव पूजन क्या है, जान लेंगे ।
2. पंचदेव पूजन की विधि क्या है, समझा सकेंगे।
3. कर्मकाण्ड में पंचदेव पूजन का क्या महत्व है, इसका निरूपण कर सकेंगे।
4. पंचदेव पूजन की शास्त्रीय रीति को बता सकेंगे।
5. पंचदेव पूजन से होने वाले लाभ बता सकेंगे।

4.3 पंचदेव पूजन विधि

जैसा कि आपको विदित हो चुका है कि सभी पूजन में प्रथम गणेश जी का पूजन होता है। अत: पंचदेव पूजन में भी सर्वप्रथम गणेश जी का ही पूजन करते है। पंच का अर्थ पॉच होता है, इसलिये पंचदेव पूजन में पॉच देवताओं का पूजन होता है। पॉच देवता है – विष्णु, गणेश, शिव, दुर्गा एवं सूर्य पूजन में गणेश जी का स्मरण करते हैं तत्पश्चात् पूजन का निष्काम या सकाम संकल्प किया जाता है। उसी क्रम में घण्टादि पूजन, शंखपूजन एवं कलश पूजन करते है। पश्चात् सभी पंचदेवों का ध्यान करते है। पूजन क्रम एक ही है, अत: उसी क्रम से मन्त्रसहित उनका उपलब्ध सामग्री से पूजन – अर्चन किया जाता है। चूँकि गणेश पूजन, संकल्पादि से आप पूर्व में परिचित हो चुके है। अत: यहॉ अब कलश पूजन, एवं पंचदेव पूजन को बताया जा रहा है।

उदकुम्भ (कलश) की पूजा - सुवासित जल से भरे हुए उदकुम्भ (कलश) की उदकुम्भाय नम: इस मन्त्र से चन्दन, फूल आदि से पूजा कर इसमें तीर्थों का आवाहन करते हैं –

ऊँ कलशस्य मुखे विष्णु: कण्ठे रूद्र: समाश्रित: ।
मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणा: स्मृता: ॥
कुक्षौ तु सागरा: सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा ।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेद: सामवेदो ह्यथर्वण: ॥
अंगैश्च सहिता: सर्वे कलशं तु समाश्रिता: ।
अत्र गायत्री सावित्री शान्ति: पुष्टिकरी तथा ।।
सर्वे समुद्रा: सरितस्तीर्थानि जलदा नदा: ।
आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारका: ॥
गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वती ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् संनिधिं कुरू ॥

इसके पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र से उदकुम्भ की प्रार्थना करे -

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ।
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवा: सर्वे त्वयि स्थिता: ॥
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणा: प्रतिष्ठिता: ।
शिव: स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापति: ॥
आदित्या वसवो रूद्रा विश्वेदेवा: सपैतृका: ।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यत: कामफलप्रदा: ॥
त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव ।
सांनिध्यं कुरू मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥

अब पंचदेवों की पूजन के लिये सर्वप्रथम सभी का ध्यान करें -

विष्णु का ध्यान –

उद्यत्कोटिदिवाकराभमनिशं शखं गदां पंकजम् ।
चक्र विभ्रतमिन्दिरावसुमतीसंशोभिपार्श्वद्वयम् ॥
कोटीरांगदहारकुण्डलधरं पीताम्बरं कौस्तुभै -
दीप्तं विश्वधरं स्ववक्षसि लसच्छ्रीवत्सचिह्नं भजे

अर्थ - उदीयमान करोड़ों सूर्य के समान प्रभातुल्य, अपने चारों हाथों में शंख, गदा, पद्म तथा चक्र धारण किये हुए एवं दोनों भागों में भगवती लक्ष्मी और पृथ्वी देवी से सुशोभित, किरीट, मुकुट, केयूर हार और कुण्डलों से समलंकृत, कौस्तुभमणि तथा पीताम्बर से देदीप्यमान विग्रहयुक्त एवं वक्ष:स्थलपर श्रीवत्सचिह्न धारण किये हुए भगवान विष्णु का मैं निरन्तर स्मरण ध्यान करता हूॅ ।

ध्यानार्थे अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ऊँ विष्णवे नम: ।

शिव का ध्यान -

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारूचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलांगं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रम् ।।

चॉदी के पर्वत के समान जिनकी श्वेत कान्ति है, जो सुन्दर चन्द्रमा को आभूषण रूप से धारण करते हैं, रत्नमय अलंकारों से जिनका शरीर उज्जवल है, जिनके हाथों में परशु, मृग, वर और अभय मुद्रा है, जो प्रसन्न हैं, पद्म के आसन पर विराजमान हैं, देवतागण जिनके चारों ओर खड़े होकर स्तुति करते हैं, जो बाघ की खाल पहनते हैं, जो विश्व के आदि जगत् के उत्पत्ति के बीज और समस्त भयों को हरनेवाले हैं, जिनके पॉच मुख और तीन नेत्र हैं, उन महेश्वर का प्रतिदिन ध्यान करें।

ध्यानार्थे अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ऊँ शिवाय नम: ।

गणेश का ध्यान –

सर्वं स्थूलतनुं गजेन्द्रवदनं लम्बोदरं सुन्दरं
प्रस्यन्दन्मदगन्धलुब्धमधुपव्यालोलगण्डस्थलम् ।
दन्ताघातविदारितारिरूधिरै: सिन्दूरशोभाकरं
वन्दे शैलसुतासुतं गणपतिं सिद्धिप्रदं कामदम् ।।

जो नाटे और मोटे शरीरवाले हैं, जिनका गजराज के समान मुख और लम्बा उदर है, जो सुन्दर हैं तथा बहते हुए मद की सुगन्ध के लोभी भौरों के चाटने से जिनका गण्डस्थल चपल हो रहा है, दॉतों की चोट से विदीर्ण हुए शत्रुओं के खून से जो सिन्दूर की सी शोभा धारण करते हैं, कामनाओं के दाता और सिद्धि देनेवाले उन पार्वती के पुत्र गणेश जी की मैं वन्दना करता हूॅं।

ध्यानार्थे अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ऊँ गणेशाय नम: ।

सूर्य का ध्यान –

रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैकसिन्धुं
भानुं समस्तजगतामधिपं भजामि।
पद्मद्वयाभयवरान् दधतं कराब्जै -
र्माणिक्यमौलिमरूणांगरूचिं त्रिनेत्रम् ॥

लाल कमल के आसन पर समासीन, सम्पूर्ण गुणों के रत्नाकर, अपने दोनों हाथों में कमल और अभयमुद्रा धारण किये हुए , पद्मराग तथा मुक्ताफल के समान सुशोभित शरीरवाले, अखिल जगत् के स्वामी, तीन नेत्रों से युक्त भगवान सूर्य का मैं ध्यान करता हूँ।

ध्यानार्थे अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ॐ सूर्याय नम: ।

दुर्गा का ध्यान -

सिंहस्था शशिशेखरा मरकतप्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजै:
शंखं चक्रधनु:शरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभि: शोभिता।
आमुक्ताङ्गदहारकंकणरणत्कांचीरणन्नूपुरा
दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु नो रत्नोल्लसत्कुण्डला ॥

जो सिंह की पीठ पर विराजमान हैं, जिनके मस्तक पर चन्द्रमा का मुकुट है, जो मरकतमणि के समान कान्तिवाली अपनी चार भुजाओं में शंख, चक्र, धनुष और बाण करती हैं, तीन नेत्रों से सुशोभित होती हैं, जिनके भिन्न - भिन्न अंग बॉधे हुए बाजूबंद, हार, कंकण, खनखनाती हुई करधनी और रूनझुन करते हुए नूपुरों से विभूषित हैं तथा जिनके कानों में रत्नजटित कुण्डल झिलमिलाते रहते हैं, वे भगवती दुर्गा हमारी दुर्गति दूर करनेवाली हों ।

अब हाथ में फूल लेकर आवाहन के लिये पुष्पांजलि दे।

पुष्पांजलि - ॐ विष्णुशिवगणेशसूर्यदुर्गाभ्यो नम:, पुष्पांजलिं समर्पयामि ।

यदि पंचदेव की मूर्तियॉ न हों तो अक्षत से इनका आवाहन करे। मन्त्र नीचे दिया जा रहा है। निम्न कोष्ठक के अनुसार देवताओं को स्थापित करे -

विष्णु पंचायतन -

शिव		गणेश
	विष्णु	
देवी		सूर्य

आवाहन का मन्त्र -

आगच्छन्तु सुरश्रेष्ठा भवन्त्वत्र स्थिरा: समे।
यावत् पूजां करिष्यामि तावत् तिष्ठन्तु संनिधौ ॥

ॐ विष्णुशिवगणेशसूर्यदुर्गाभ्यो नम:, आवाहनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

आसन का मन्त्र –

अनेकरत्नसंयुक्तं नानामणिगणान्वितम्।
कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं परिगृह्यताम्॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, आसनार्थे तुलसीदलं समर्पयामि।

पाद्य का मन्त्र –

गंगादिसर्वतीर्थेभ्य आनीतं तोयमुत्तमम्।
पाद्यार्थं सम्प्रदास्यामि गृह्णनतु परमेश्वरा: ॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, पादयो: पाद्यं समर्पयामि।

अर्घ्य का मन्त्र –

गन्धपुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया।
गृह्णन्त्वर्घ्यं महादेवा: प्रसन्नाश्च भवन्तु मे॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि।

आचमन –

कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम्।
तोयमाचमनीयार्थं गृह्णन्तु परमेश्वरा: ॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, आचमनीयं जलं समर्पयामि।

स्नान –

मन्दाकिन्या: समानीतै:कर्पूरागुरूवासितै: ।
स्नानं कुर्वन्तु देवेशा जलैरेभि: सुगन्धिभि: ॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, स्नानीयं जलं समर्पयामि।

पंचामृत स्नान –

पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करान्वितम्।
पञ्चामृतं मयाऽऽनीतंस्नानार्थं प्रतिगृह्यातम्॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, पंचामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोद्धक स्नान –

मलयाचलसम्भूतचन्दनेन विमिश्रतम्।
इदं गन्धोदकं स्नानं कुकुमाक्तं नु गृह्यताम्॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, शुद्धोद्धकस्नानं समर्पयामि।

वस्त्र – उपवस्त्र का मन्त्र –

शीतवातोष्णसंत्राणे लोकलज्जानिवारणे।
देहालंकरणे वस्त्रे भवदभ्यो वाससी शुभे ।।

ऊँ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, वस्त्रमुपवस्त्रं च समर्पयामि।

यज्ञोपवीत –

नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।
उपवीतं मया दत्तं गृह्णन्तु परमेश्वरा: ।।

ऊँ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

चन्दन –

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढयं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।।

ऊँ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, चन्दनानुलेपनं समर्पयामि।

पुष्प, पुष्पमाला –

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि भक्तित: ।
मयाऽऽहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

ऊँ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, पुष्पाणि समर्पयामि।

तुलसी दल और मंजरी -

तुलसीं हेमरूपां च रत्नरूपां च मंजरीम्।
भवमोक्षप्रदां रम्यामर्पयामि हरिप्रियाम् ।।

ऊँ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, तुलसीदलं मंजरीं च समर्पयामि।

धूप –

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढयो गन्ध उत्तम: ।
आघ्रेय: सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यातम् ।।

ऊँ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, धूपमाघ्रापयामि।

दीप –

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निा योजितं मया ।
दीपं गृह्णन्तु देवेशास्त्रैलोक्यतिमिरापहम् ।।

ऊँ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, दीपं दर्शयामि।

नैवेद्य -

शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।
आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ।।

ऊँ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नम:, नैवेद्यं समर्पयामि ।

ऋतुफल –

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नमः, ऋतुफलं समर्पयामि।

ताम्बूल –

पूगीफलं महद् दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् ।
एलालवंगसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृहय्ताम्॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नमः, ताम्बूलं समर्पयामि।

दक्षिणा –

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो :।
अनन्तपुण्यफलदमत: शान्तिं प्रयच्छ मे॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नमः, द्रव्य दक्षिणां च समर्पयामि।

आरती –

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मां वरदो भव॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नमः, आरार्तिकं समर्पयामि।

पुष्पांजलि –

श्रद्धया सिक्तया भक्तया हार्दप्रेम्णा समर्पित:।
मन्त्रपुष्पांजलिश्चायं कृपया प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नमः, मन्त्रपुष्पांजलि समर्पयामि।

प्रार्थना –

नमोऽस्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरूबाहवे।
सहस्रनाम्ने पुरूषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नम:॥

ॐ विष्णुपंचायतनदेवताभ्यो नमः, प्रार्थनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि ।

अन्य पंचायतनों के नाम मन्त्र

गणेश पंचायतन – ॐ गणेशविष्णुशिवदुर्गासूर्येभ्यो नम: ।

शिव पंचायतन – ॐ शिवविष्णुसूर्यदुर्गागणेशेभ्यो नम: ।

देवी पंचायतन – ॐ दुर्गाविष्णुशिवसूर्यगणेशेभ्यो नम: ।

सूर्य पंचायतन - ॐ सूर्यशिवगणेशदुर्गाविष्णुभयो नम: ।

चरणामृत पान –

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।

विष्णुपादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥

क्षमा याचना -

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं जनार्दन।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे ॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात् कारूण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वर ॥

इन मन्त्रों का श्रद्धापूर्वक उच्चारण कर अपनी विवशता एवं त्रुटियोंके लिये क्षमा याचना करे ।

बोध प्रश्न –

१. पंचदेव पूजन में कौन – कौन से देवता होते है –

क. विष्णु, शिव, गणेश, दुर्गा एवं सूर्य ख. लक्ष्मी, काली, सरस्वती, दुर्गा, भैरवी

ग. ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सुरेश, सूर्य घ. विष्णु, लक्ष्मी, शिव, पार्वती, दुर्गा

२. कलश के मुख में किस देवता का वास होता है –

क. ब्रह्मा ख. विष्णु ग. रूद्र घ. इन्द्र

३. द्वीपों की संख्या होती है –

क. ५ ख. ६ ग. ७ घ. ८

४. लम्बोदर किसे कहते है –

क. शिव ख. विष्णु ग. गणेश घ. ब्रह्मा

५. विष्णु पंचायतन में विष्णु का स्थान है –

क. दायें ख. बायें ग. मध्य में घ. कोई नहीं

4.4 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि भारतीय सनातन परम्परा में यह निर्विवाद है कि सभी पूजन कर्मो में सर्वप्रथम गणेश जी की पूजा होती है, साथ में गौरी माता की पूजा भी होती है। पूजन की प्रक्रिया में क्या क्या होता है इसका अध्ययन आप पूर्व के इकाई में कर चुके हैं। प्राचीन काल में पूजन कर्म केवल वैदिक मन्त्रों से किये जाते थे, क्योंकि वह वेदप्रधान युग था। कालांतर में

स्थितियॉ बदली, तो अब संस्कृतज्ञों एवं वेदज्ञों की संख्या भी घटती चली गई है। ऐसी परिस्थिति में आचार्यों ने लौकिक मन्त्र का निर्माण किया। इस प्रकार अब लौकिक और वेद मन्त्र से पूजन की जाती है। गणपति – गौरी पूजन के साथ – साथ मातृका पूजन में षोडशमातृका पूजन (जिसमें 16 कोष्ठक बने होते है) का भी ज्ञान प्राप्त किया है।

4.5 शब्दावली-

उद्कुम्भ – कलश

सर्वे - सभी में

सप्तद्वीप – सात द्वीप

दिवाकर - सूर्य

पीताम्बर – पीला हो वस्र जिसका, विष्णु

विश्वधर – विश्व को धारण करने वाले

महेश – शिव

लम्बोदर – लम्बा हो उदर जिसका, गणेश

सिद्धिप्रद – सिद्धि को प्रदान करने वाले

अम्बुज – कमल

भानु – सूर्य

करिष्यामि - करूगॉ

आवाहनार्थे – आवाहन के लिये

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. क
2. ख
3. ग
4. ग
5. ग

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- कर्मकाण्ड प्रदीप

2- संस्कार दीपक

3. नित्यकर्मपूजाप्रकाश

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पंचदेव पूजन विधि का विस्तारपूर्वक उल्लेख कीजिये।
2. विष्णुपंचायतन को समझाते हुए वर्णन कीजिये ।

इकाई – 5 श्रीमहालक्ष्मी पूजन

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावनाः-

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 102 की द्वितीय प्रश्न पत्र के प्रथम खण्ड की पॉचवी इकाई '**श्रीमहालक्ष्मीपूजन**' नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने पंचदेव पूजन विधि को जान लिया है। यहॉ अब श्रीमहालक्ष्मीपूजन का अध्ययन करने जा रहा है।
माता लक्ष्मी भगवान विष्णु की पत्नी है। देवासुर संग्राम के पश्चात् समुद्रमन्थन के समय सागर से इनकी उत्पत्ति हुई थी। श्रीमहालक्ष्मी पूजन का विधान कर्मकाण्ड में बतलाया गया है।
महालक्ष्मी के प्रसन्नार्थ कर्मकाण्ड में उनके पूजन पद्धति को कहा गया है। भौतिक जीवन में द्रव्य की आवश्यकता तो सभी को होती है। अत: महालक्ष्मी के प्रसन्नार्थ उनका पूजन विधि आपके अवलोकनार्थ प्रस्तुत है।

5.2 उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1. महालक्ष्मी कौन है। जान जायेंगे।
2. महालक्ष्मी पूजन कैसे किया जाता है, इसे बता सकेंगे।
3. महालक्ष्मी के महत्व को समझा सकेंगे।
4. महालक्ष्मी के पूजन क्रम को बता सकेंगे।
5. पूजन विधि के मन्त्र को जान जायेंगे।

5.3 श्रीमहालक्ष्मी पूजन विधि

भगवती महालक्ष्मी चल एवं अचल, दृश्य एवं अदृश्य सभी सम्पत्तियों, सिद्धियों एवं निधियों की अधिष्ठात्री साक्षात् नारायणी हैं। कर्मकाण्ड में धन की आदि शक्ति के रूप में पराम्बा भगवती लक्ष्मी को जाना गया है। धन की प्राप्ति के लिये लक्ष्मी जी की वन्दना या पूजन किया जाता है। यह प्रकल्प शक्ति प्राप्ति हेतु एवं विविध मनोकामनाओं की प्रपूर्ति हेतु किया जाता है। अतः श्री लक्ष्मी जी क्या हैं ? तथा कैसे उनकी पूजा की जाती है ? इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।
श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति विचार के अभाव में दीपावली आदि के अवसर पर या अन्य लक्ष्मी जी के व्रतादि या पूजनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसमें लक्ष्मी माता की ही उपासना की जाती है। सभी सुख, सुविधा, शक्ति, भुक्ति, मुक्ति की दाता एवं ज्ञान पुंज रूपा आह्लादिनी महालक्ष्मी जी की पूजा अवश्य करनी चाहिये। मां लक्ष्मी भाव

से की गयी समस्त प्रकार के पूजन या स्तोत्र पाठ से परम प्रसन्न होती हैं। इसलिये मां लक्ष्मी की पूजा अवश्य करनी चाहिये। इसके लिये यथा उपलब्ध उपचारों से मां की श्रद्धा भक्ति एवं शुचिता से दीपावली या अन्य पर्व इत्यादि के समय महालक्ष्मी पूजन करना चाहिये। ताकि हमारा जीवन सुखमय, आनन्दमय, सात्विक विचारों से परिपूर्ण एवं वर्ष पर्यन्त पुत्र पौत्र सुख, हर्ष उल्लास, ग्रहों की शान्ति, कायिक, वाचिक एवं मानसिक पीड़ा की निवृत्ति के लिये, भूत, प्रेत, डाकिनी, शाकिनी, बेतालादि की शान्ति के लिये, अखण्ड लक्ष्मी की प्राप्ति और कोष को आगे बढ़ाने के लिये, निरोगी काया के लिये, व्यापार को बढ़ाने के लिये, लोक कल्याण के लिये, अपने आश्रितों का पोषण करने के लिये महालक्ष्मी पूजन करना चाहिये।

महालक्ष्मी पूजन का विशेष समय –

कार्तिक कृष्ण पक्ष के अमावस्या को भगवती श्रीमहालक्ष्मी एवं भगवान् गणेश की नूतन प्रतिमाओं का प्रतिष्ठापूर्वक विशेष पूजन किया जाता है।

पूजन की तैयारी –

पूजन के लिये किसी चौकी अथवा कपड़े के पवित्र आसन पर गणेश जी के दाहिने भाग में माता महालक्ष्मी को स्थापित करना चाहिये। पूजन के दिन गृह को स्वच्छ कर पूजन स्थान को भी पवित्र कर लेना चाहिये और स्वयं भी पवित्र होकर श्रद्धा भक्तिपूर्वक सायंकाल में इनका पूजन करना चाहिये। मूर्तिमयी श्रीमहालक्ष्मी जी के पास ही किसी पवित्र पात्र में केसरयुक्त चन्दन से अष्टदल कमल बनाकर उस पर द्रव्य लक्ष्मी को भी स्थापित करके एक साथ ही दोनों की पूजा करनी चाहिये। पूजन सामग्री को यथास्थान रख ले।

सर्वप्रथम पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुखा हो आचमन, पवित्रीधारण, मार्जन प्राणायाम कर अपने उपर तथा पूजा सामग्री पर निम्न मन्त्र पढ़कर जल छिड़के -

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥

आसन - शुद्धि और स्वस्ति पाठ कर हाथ में जल – अक्षतादि लेकर पूजन संकल्प करें।

तत्पश्चात् प्रतिष्ठा कर ध्यान करें –

या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी
गम्भीरावर्तनाभिस्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया ।
या लक्ष्मीर्दिव्यरूपैर्मणिगणखचितैः स्नापिता हेमकुम्भैः
सा नित्यं पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमांगल्ययुक्ता ॥
ऊँ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।

चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह ॥

ऊँ महालक्ष्म्यै नम: । ध्यानार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। ध्यान के लिए पुष्प अर्पित करे ।

आवाहन –

सर्वलोकस्य जननीं सर्वसौख्यप्रदायिनीम्।
सर्वदेवमयीमीशां देवीमावाहयाम्यहम्॥
ऊँ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरूषानहम् ॥

ऊँ महालक्ष्म्यै नम: । महालक्ष्मीमावाहयामि, आवाहनार्थे, पुष्पाणि समर्पयामि।

आसन -

तत्पकाञ्चनवर्णाभं मुक्तामणिविराजितम्।
अमलं कमलं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्॥
ऊँ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम्।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्॥

ऊँ महालक्ष्म्यै नम: । आसनं समर्पयामि।

पाद्य –

गंगादितीर्थसम्भूतं गन्धपुष्पादिभिर्युतम्।
पाद्यं ददाम्यहं देवि गृहाणाशु नमोऽस्तुते॥
ऊँ कां सोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोप ह्वये श्रियम् ॥

ऊँ महालक्ष्म्यै नम: । पादयो: पाद्यं समर्पयामि।

अर्घ्य -

अष्ट गन्धसमायुक्तं स्वर्णपात्रप्रपूरिताम् ।
अर्घ्यं गृहाण मद्दतं महालक्ष्मी नमोऽस्तु ते।
ऊँ चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मनीमीं शरणं प्रपद्येऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे॥

ऊँ महालक्ष्म्यै नम: । हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि।

आचमन –

सर्वलोकस्य या शक्तिर्ब्रह्मविष्णवादिभि: स्तुता।

ददाम्याचमनं तस्यै महालक्ष्म्यै मनोहरम् ॥

ऊँ आदित्यवर्णे तपसोऽधि जातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्व: ।

तस्य फलानि तपसा नुदन्तु या अन्तरा याश्च बाह्या अलक्ष्मी: ॥

ऊँ महालक्ष्म्यै नम: । आचमीनीयं जलं समर्पयामि ।

इसके पश्चात् पूर्व के पूजनानुसार स्नान, आचमन, वस्त्र, उपवस्त्रादि चढ़ायें ।

आभूषण –

रत्नकंकणवैदूर्यमुक्ताहारादिकानि च ।

सुप्रसन्नेन मनसादत्तानि स्वीकुरूष्व भो: ॥

ऊँ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।

अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ॥

ऊँ महालक्ष्म्यै नम: । नानाविधानि कुण्डलकटकादीनि आभूषणानि समर्पयामि ।

पुन: गन्ध, सिन्दूर, कुंकुम, अक्षत, पुष्प एवं पुष्पमाला दुर्वादि पूर्व के पूजन मन्त्रानुसार चढ़ायें ।

महालक्ष्मी अंग पूजा -

रोली, कुंकुममिश्रित अक्षत- पुष्पों से निम्नांकित एक – एक नाम मन्त्र पढ़ते हुए अंग पूजा करें-

ऊँ चपलायै नम:, पादौ पूजयामि ।

ऊँ चंचलायै नम:, जानुनी पूजयामि ।

ऊँ कमलायै नम:, कटिं पूजयामि ।

ऊँ कात्यायन्यै नम:, नाभिं पूजयामि ।

ऊँ जगन्मात्रे नम:, जठरं पूजयामि ।

ऊँ विश्ववल्लभायै नम: वक्ष: स्थलं पूजयामि ।

ऊँ कमलवासिन्यै नम:, हस्तौ पूजयामि ।

ऊँ पद्माननायै नम:, मुखं पूजयामि ।

ऊँ कमलपत्राक्ष्यै नम:, नेत्रत्रयं पूजयामि ।

ऊँ श्रियै नम:, शिर: पूजयामि ।

ऊँ महालक्ष्म्यै नम:, सर्वांगं पूजयामि ।

अष्टसिद्धि पूजन -

इस प्रकार अंगपूजा के अनन्तर पूर्वादि क्रम से आठों दिशाओं में आठों सिद्धियों की पूजा कुंकुमाक्त अक्षतों से देवी महालक्ष्मी के पास निम्नांकित मन्त्रों से करे –

ऊँ अणिम्ने नम: (पूर्व में) , ऊँ महिम्ने नम: (अग्निकोण में) , ऊँ गरिम्णे नम: (दक्षिणे) , ऊँ लघिम्ने नम: (नैर्ऋत्य में) , ऊँ प्राप्त्यै नम: (पश्चिमे) , ऊँ प्राकाम्यै नम: (वायव्ये), ऊँ ईशितायै नम: (उत्तर में) , ऊँ वशितायै नम: (ऐशान्याम्) ।

अष्टलक्ष्मी पूजन –

तदनन्तर पूर्वादि क्रम से आठों दिशाओं में महालक्ष्मी के पास कुंकुमाक्त अक्षत तथा पुष्पों से एक – एक नाम मन्त्र पढ़ते हुए आठ लक्ष्मीयों का पूजन करे –

ऊँ आद्यलक्ष्म्यै नम:, ऊँ विद्यालक्ष्म्यै नम: , ऊँ सौभाग्यलक्ष्म्यै नम: , ऊँ अमृतलक्ष्म्यै नम:, ऊँ कामलक्ष्म्यै नम: , ऊँ सत्यलक्ष्म्यै नम: , ऊँ भोगलक्ष्म्यै नम: , ऊँ योगलक्ष्म्यै नम: ।

पुन: धूप, दीप, नैवेद्य, आचमन, ऋतुफल, ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन, प्रदक्षिणा पूर्वानुसार करें।

महालक्ष्मी की प्रसन्नता हेतु महालक्ष्म्यष्टक स्तोत्र का पाठ –

इन्द्र उवाच-

नमस्तेस्तु महामाये श्रीपीठे सुरपूजिते।
शंखचक्रगदाहस्ते महालक्ष्मी नमोस्तुते।
नमस्ते गरुडारूढे कोलासुरभयंकरी।
सर्वपापहरे देवि महालक्ष्मी नमोस्तुते।
सर्वज्ञे सर्ववरदे सर्वदुष्टभयंकरी।
सर्वदुखहरे देवि महालक्ष्मी नमोस्तुते।
सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी।
मन्त्रपूते सदादेवि महालक्ष्मीनमोस्तुते।
आद्यन्तरहिते देवि आद्यशक्तिमहेश्वरी।
योगजे योगसम्भूते महालक्ष्मी नमोस्तुते।
स्थूलसूक्ष्ममहारौद्रे महाशक्ति महोदरे।
महापापहरे देवि महालक्ष्मी नमोस्तुते।
पद्मासनस्थिते देवि परब्रह्मस्वरूपिणी।
परमेशि जगन्मातर्महालक्ष्मी नमोस्तुते।
श्वेताम्बरधरे देवि नानालंकारभूषिते।
जगत्स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मी नमोस्तुते।
महालक्ष्म्यष्टकं स्तोत्रं यः पठेत् भक्तिमान्नरः।

सर्वसिद्धिमवाप्नोति राज्यं प्राप्नोति सर्वदा।
एककाले पठेन्नित्यं महापापविनाशनम्।
द्विकालं यः पठेन्नित्यं धनधान्यसमन्वितः।
त्रिकालं यः पठेन्नित्यं महाशत्रु विनाशनम्।
महालक्ष्मीर्भवेन्नित्यं प्रसन्ना वरदा शुभा।।
इतीन्द्रकृतं महालक्ष्म्यष्टकम्।

इस महालक्ष्म्यष्टक का निर्माण इन्द्र जी के द्वारा किया गया है। इसका महत्व बतलाते हुये कहा गया है कि जो भी भक्तिमान होकर मनुष्य इस महालक्ष्म्यष्टक का पाठ करता है वह सभी प्रकार की सिद्धियों को प्राप्त करता है। राज्य की भी प्राप्ति इस स्तोत्र के पाठ से होती है। एक समय में पाठ करने से महापाप का विनाश होता है, दो काल यानी दो समय पढ़ने से धन एवं धान्य से व्यक्ति समन्वित होता है। तीन काल यानी तीनों समयों में पढ़ने से व्यक्ति महा शत्रुओं का विनाश होता है तथा महालक्ष्मी प्रसन्न होकर वर देने वाली होती है।

प्रार्थना -

सुरासुरेन्द्रादिकिरीटमौक्तिके -
र्युक्तं सदा यत्तव पादपंकजम् ।
परावरं पातु वरं सुमंगलं ।
नमामि भक्त्याखिलकामसिद्धये।।
भवानि त्वं महालक्ष्मी: सर्वकामप्रदायिनी।
सुपूजिता प्रसन्ना स्यान्महालक्ष्मी नमोऽस्तुते।।
नमस्ते सर्वदेवानां वरदासि हरिप्रिये ।
या गतिस्त्वत्प्रपन्नानां सा मे भूयात् त्वदर्चनात् ।।

ॐ महालक्ष्म्यै: नम:, प्रार्थनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि।

समर्पण -

पूजन के अन्त में कृतेनानेन पूजनेन भगवती महालक्ष्मीदेवी प्रीयताम् न मम्।।

यह वाक्य उच्चारण कर समस्त पूजन कर्म भगवती महालक्ष्मी को समर्पित करे तथा जल गिराकर प्रणाम करे।

बोध प्रश्न -

१. सिद्धियों की संख्या है –

क. ८ ख. ९ ग. १० घ. ११

२. महालक्ष्मी का विशेष पूजन कब होता है –

क. कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा ख. कार्तिक कृष्ण अमावस्या ग. मार्गशीर्ष

घ. कार्तिक सप्तमी

३. सर्वलोकस्य जननीं का क्या अर्थ है –

क. सर्वजन ख. सभी लोगों की माता ग.सभी लोक घ. कोई नहीं

४. चन्द्रां प्रभासां .... लोके देवजुष्टामुदाराम् ।।

क. यशसा ज्वलन्तीं सर्व ख. अलक्ष्मीर्मे नश्यतां ग. तपसोऽधि जातो

घ.तपसा नुदन्तु

५. निधियॉ है –

क. ८ ख. ९ ग. १० घ. ११

5.4 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि भगवती महालक्ष्मी चल एवं अचल, दृश्य एवं अदृश्य सभी सम्पत्तियों, सिद्धियों एवं निधियों की अधिष्ठात्री साक्षात् नारायणी हैं। कर्मकाण्ड में धन की आदि शक्ति के रूप में पराम्बा भगवती लक्ष्मी को जाना गया है। धन की प्राप्ति के लिये लक्ष्मी जी की वन्दना या पूजन किया जाता है। यह प्रकल्प शक्ति प्राप्ति हेतु एवं विविध मनोकामनाओं की प्रपूर्ति हेतु किया जाता है । अतः श्री लक्ष्मी जी क्या हैं ? तथा कैसे उनकी पूजा की जाती है ? इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा ।

श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति विचार के अभाव में दीपावली आदि के अवसर पर या अन्य लक्ष्मी जी के व्रतादि या पूजनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसमें लक्ष्मी माता की ही उपासना की जाती है। सभी सुख, सुविधा, शक्ति, भुक्ति, मुक्ति की दाता एवं ज्ञान पुंज रूपा आह्लादिनी महालक्ष्मी जी की पूजा अवश्य करनी चाहिये। मां लक्ष्मी भाव से की गयी समस्त प्रकार के पूजन या स्तोत्र पाठ से परम प्रसन्न होती हैं। इसलिये मां लक्ष्मी की पूजा अवश्य करनी चाहिये। इसके लिये यथा उपलब्ध उपचारों से मां की श्रद्धा भक्ति एवं शुचिता से दीपावली या अन्य पर्व इत्यादि के समय महालक्ष्मी पूजन करना चाहिये। ताकि हमारा जीवन सुखमय, आनन्दमय, सात्विक विचारों से परिपूर्ण एवं वर्ष पर्यन्त पुत्र पौत्र सुख, हर्ष उल्लास, ग्रहों की शान्ति, कायिक, वाचिक एवं मानसिक पीड़ा की निवृत्ति के लिये, भूत, प्रेत, डाकिनी, शाकिनी, बेतालादि की शान्ति के लिये, अखण्ड लक्ष्मी की प्राप्ति और कोष को आगे बढ़ाने के लिये, निरोगी

काया के लिये, व्यापार को बढ़ाने के लिये, लोक कल्याण के लिये, अपने आश्रितों का पोषण करने के लिये महालक्ष्मी पूजन करना चाहिये।

5.5 शब्दावली-

चल – जिसमें गति हो।

अचल - स्थिर।

दृश्य – जो दिखलाई देता हो ।

अदृश्य - जो दिखाई न देता हो ।

पद्मासन - कमल का आसन।

पूर्वाभिमुख – पूर्व दिशा की ओर मुख

केसरयुक्त – केसर मिला हुआ

जननी – माता

नानाविध – अनेक प्रकार के

पादौ – दोनों पैर

कटि – कमर

हस्तौ - दोनों हाथ

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ख
3. ख
4. क
5. ख

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- कर्मकाण्ड प्रदीप

2- संस्कार दीपक

3. नित्यकर्मपूजाप्रकाश

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. महालक्ष्मी पूजन विधि का विस्तारपूर्वक उल्लेख कीजिये।

2. महालक्ष्मी के अंगपूजन एवं अष्टसिद्धि पूजन का वर्णन कीजिये ।

3. महालक्ष्म्यष्टक स्तोत्र का लेखन कीजिये।

खण्ड – 2

कथा एवं जप प्रकरण

इकाई – 1 सत्यनारायण व्रत कथा

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 कर्मकाण्ड के द्वितीय खण्ड की प्रथम इकाई **'श्रीसत्यनारायण व्रत कथा'** से सम्बन्धित है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि कर्मकाण्ड की उत्पति किस प्रकार से हुई है? कर्मकाण्ड की उत्पति अनादि काल से हुई है तथा इन्हीं कर्मकाण्डों के माध्यम से आज सनातन धर्म की रक्षा हो रही है।

कर्मकाण्ड को जानते हुए आप सत्यनारायण व्रत कथा के विषय में परिचित होंगे कि सत्यनारायण व्रत कथा के पूजन का प्रयोजन क्या है एवं उसका महत्त्व क्या है इन सबका वर्णन इस इकाई में किया गया है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने नित्यकर्म एवं आरम्भिक पूजन का अध्ययन कर लिया है। यहॉ आप सत्यनारायण व्रत कथा से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. सत्यनारायण व्रत कथा के विषय में आप परिचित होंगे -
2. सत्यनारायण व्रत कथा में कितने अध्याय है, इसके विषय में आप परिचित होंगे।
3. सत्यनारायण व्रत कथा के प्रथम से लेकर अन्तिम अध्याय तक के अध्यायों की कथा को समझ सकेगें।
4. सत्यनारायण व्रत कथा के प्रत्येक अध्यायों के अर्थ को समझ सकेगें।
5. सत्यनारायण व्रत कथा के महत्व को समझ सकेगें।

1.3 सत्यनारायण पूजन विधि

एक लकड़ी की चौकी के ऊपर गणेश, षोडशमातृका, सप्तमातृका स्थापित करे। दूसरी चौकी पर नवग्रह, पञ्चलोकपाल आदि स्थापति करे। ईशान कोण में घी का दीपक रखे और अपने दायें हाथ में पूजा सामग्री रख लेवे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख बैठे। कुंकुमका तिलक (रोली) करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन आरम्भ करे।

पवित्रीकरण –

सर्वप्रथम अधोलिखित मन्त्र को पढ़ते हुये पूजन सामग्रियों को पवित्र करें –

ऊँ अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्ष स बाह्याभ्यन्तरः शुचि ।।

ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु, ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु , ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ।

आचमन-:(तीन बार आचमन करे)

ॐ केशवाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय नमः।

प्राणायाम-:

गोविन्दाय नमः बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे–धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करें।

पवित्रीधारणम् -

ॐ पवित्रेस्त्थो व्वैष्णव्यौसवितुर्व्वः प्रसव उत्पन्नुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः ।

तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम् ।।

सपत्नीक यजमान के ललाट में स्वस्तितिलक लगाते हुए मन्त्र को बोले-

व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः।स्वस्तिन इन्द्रो

स्वस्ति नस्ताक्ष्र्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

उँ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि नौव्व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

ग्रन्थिबन्धन-:(लोकाचार से यजमान का सपत्नीक ग्रन्थिबन्धन करे) -

ॐ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः।

नाकङ्गृभ्ण्णानाः सुकृतस्यलोके तृतीयपृष्ठेऽअधिरोचने दिवः।।

आसनपूजन -:(आसन की पूजा करे)

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।।

ॐ कूर्मासनाय नमः।

ॐ अनन्तासनाय नमः।

(सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

भूतापसारण - (बायें हाथ में सरसों लेकर उसे दाहिने हाथ से ढककर निम्न मन्त्र पढ़े)

रक्षोहणं व्वलगहनं व्वैष्णवीमिदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे निष्ट्यो ममात्यो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे समानोमसमानो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सबर्न्धुम सबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सजातो मसजातो निचखानोत्कृत्याङ्क्रिरामि।

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।

रस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।ये भूता विघ्नकर्ता
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे।।

निम्न मन्त्रों को पढते हुए सरसों का सभी दिशाओं में विकिरण करे-:

प्राच्यैदिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा दक्षिणायै दिशेस्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहोद्र्ध्वायै दिशेस्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः। दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।
पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः। उत्तरे श्रीधरो रक्षेद् ऐशान्ये तु गदाधरः।।
ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः। एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

कर्मपात्र पूजन -:(ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को अक्षतपुञ्ज पर स्थापित करते हुए पूजन करे)

ऊँ तत्वामि ब्ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः।

अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश समानऽ आयुः प्प्रमोषीः।। ऊँ वरुणाय नमः।

पूर्वे ऋग्वेदाय नमः।दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः।

पश्चिमे सामवेदाय नमः। उत्तरे अथर्ववेदाय नमः।

मध्ये साङ्गवरुणाय नमः। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

अंकुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्सर्वाणि तीर्थानि आवाहयेत् (दायें हाथ की मध्यमा अङ्गुली से जलपात्र में सभी तीर्थों का आवाहन करे) :–

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति।

नर्मदा सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिनसन्निधे कुरू।।

कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।।
अश्च सहिताः सर्वे कलशाम्बु समाश्रिताः।
गायत्री चात्र सावित्री शान्तिः पुष्टिकरा तथा।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।

उदकेन पूजासामग्रीं स्वात्मानं च सम्प्रोक्षयेत् (पात्र के जल से पूजन सामग्री एवं स्वयं का प्रोक्षण करे) :–

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे।।
योवः शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हनः। उशतीरिवमातरः।।

तस्म्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ आपोजनयथाचनः।।

दीपपूजनम् (देवताओं के दाहिने तरफ घी एवं विशेष कर्मों में बायें हाथ की तरफ तेल का दीपक जलाकर पूजन करना चाहिए) :–

अग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्रा देवतादित्त्या देवता मरुतो देवता विश्श्वे देवा देवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता।

ऊँ दीपनाथाय नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि (गन्ध अक्षत पुष्प दीपक के सामने छोडे।)

प्रार्थनाः–(हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर अधोलिखित श्लोक को पढते हुए दीपक के सामने छोड़े

ऊँ भो दीप देवस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत।
यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव।।

सर्वप्रथम सत्यनारायण व्रत कथा की अधिकार प्राप्ति के लिये प्रायश्चित्तरूप में गोदान का संकल्प करना चाहिये

प्रायश्चित संकल्प हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर प्रायश्चित संकल्प करे–

हरिः ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ऊँ तत्सद। ै तस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया

प्रवर्त्तमानस्य अ। श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्तौ (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं सत्यनारायण व्रत कथा अधिकार प्राप्त्यर्थं कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकचतुर्विधपापशमनार्थं शरीरशुद्ध्यर्थं गोनिष्क्रयद्रव्यं ''''''''''गोत्राय''''''''''शर्मणे आचार्याय भवते सम्प्रददे (ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य ब्राह्मण के हाथ में दे दे।

मंगल पाठ –हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करें) : –

ऊँ आनो भद्राः क्रतवो यन्तु व्विश्वतो दब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः। देवानो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवोरक्षितारो दिवेदिवे।।१।। देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवाना रातिरभिनोनिवर्त्तताम्। देवाना सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयं देवानऽआयुः प्र्रतिरन्तुजीवसे।।२।। तान्पूर्वया निविदाहूमहे व्वयं भगम्मित्रमदितिं दक्षमस्रिधम्। अर्यमणं व्वरुण सोममश्विना सरस्वती नः सुभगामयस्करत्।।३।। तन्नोव्वातो मयो भुव्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता । ीः।

तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्।।४।। तामीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पति–न्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषा नो यथा व्वेदसामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।५।। स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषाव्विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्यों ऽ अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु।।६।। पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो व्विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्वामनवः सूरचक्षसो व्विश्वेनोदेवाऽअवसा गमन्निह।।७।। भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा œ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः।।८।। शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा त्रा नश्चक्रा जरसंतनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मानो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः।।६।। अदिति। ौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवा ऽ अदितिः पञ्चजना ऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम्।।१०।। । ौः शान्तिरन्तरिक्ष œ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। व्वनस्पतयः शान्ति व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व œ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि।।११।। यतो यतः समीहसे ततो नो ऽ अभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योभयन्नः पशुभ्यः।।१२।। सुशान्तिर्भवतु।। **(अक्षत–पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)**

गणपत्यादि देवानां स्मरणम्– (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करे)

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजगर्णकः। लम्बोदरश्च विकटोविघ्ननाशो विनायकः। धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि। वि। ारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे संकटे चौव विघ्नस्तस्य न जायते। शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये। अभीप्सितार्थ सिध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः। सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः। सर्वमङ्ग्ल माङ्ग्ल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते। सर्वदा सर्व कार्येषु नास्ति तेषाममङ्ग्गलम्। येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः। तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव। वि। ाबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि। लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः। येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः। यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम। सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रि भुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः। विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानी मणिकर्णिकाम्। विनायकं गुरुभानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान्। सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थ सिद्धये।ऊँ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। ऊँ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ऊँ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ऊँ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ऊँ शचीपुरन्दराभ्यां नमः। ऊँ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। ऊँ सर्वपितृदेवताभ्यो नमः। ऊँ इष्टदेवताभ्यो नमः। ऊँ कुलदेवताभ्यो नमः। ऊँ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ऊँ स्थानदेवताभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ऊँ

गुरवे नमः। ऊँ परमगुरवे नमः। ऊँ परात्परगुरवे नमः। ऊँ परमेष्ठिगुरवे नमः।(अक्षत–पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)
संकल्प–हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर संकल्प करे–

हरिः ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ऊँ तत्सद। ैतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अ। श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्तौ (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं (ब्राह्मण के लिए शर्मा, क्षत्रिय के लिए वैश्य, वैश्य के लिए गुप्ता, शूद्र के लिए दासान्त) सपुत्रस्त्रीबान्धवो अहं मम जन्मलग्नाच्चन्द्रलग्नाद् वर्ष मास दिन गोचराष्टक वर्गदशान्तर्दशादिषु चतुर्थाष्टं द्वादशस्थान् स्थित क्रूरग्रहास्तेषां अनिष्टफल शान्ति पूर्वकं द्वितीयसप्तम् एकादशस्थानस्थित सकल शुभफल प्राप्त्यर्थं श्री सत्यनारायण व्रत कथा अहं करिष्ये (वा ब्राह्मण द्वारा कारयिष्ये) । ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।
पुनः हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर बोले –
तदंगत्वेन कार्यस्य सिद्धयर्थं आदौ गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये। ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।

पूजा में जो वस्तु वि। मान न हो उसके लिये 'मनसा परिकल्प्य समर्पयामि' कहे। जैसे, आभूषणके लिये 'आभूषणं मनसा परिकल्प्य समर्पयामि'।)
सर्वप्रथम गणपति का पूजन आप कर ले।
भगवान् विष्णु का पूजन

१. विष्णु :– (बाये हाथ में अक्षत लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर छोड़े)

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम्।

भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम्।।

ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

प्रतिष्ठापनम्ः– (हाथ में अक्षत लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर छोड़े)

ऊँ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पर्तिज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ज्ञ गूं समिमन्दधातु।
विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामोम्प्रतिष्ठ।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः। सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेत्

आसनम् –(हाथ में पुष्प लेकर अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुए भगवान् विष्णु के उपर छोड़े)

ऊँ पुरुष ऽ एवेद œ सर्व्वंद्भूतँच्च भाव्व्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पा। म् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर छोड़े)

ऊँ एतावानस्य महिमातोज्ज्याँश्चपूरुषः।

पादोस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः पादप्रक्षालनार्थं पा। ˙ समर्पयामि।

अर्घ्यम् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर छोड़े)

ऊँ धामन्तेव्विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्तः समुद्रेह्न। न्त रायुषि।

अपामनीकेसमिथेय ऽ आभृतस्तमश्याम मधुमन्तन्त ऽ ऊर्मिम्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीयम् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर छोड़े)

सर्वतीर्थ समायुक्तं सुगन्धिनिर्मलं जलम्।

आचम्यार्थं मया दत्तं गृहाण गणनायक।।

ऊँ इमम्मेव्वरुणत्त्शुधीहवमद्दया च मृडय। त्वामवस्युराचके।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः मुखे आचमनीयं समर्पयामि।

जलस्नानम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर जल छोड़े)

ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्न्यसि

वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः स्नानार्थे जलं समर्पयामि।।

पञ्चामृत स्नानम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर पंचामृत से स्नान करावे)

पयो दधिघृतं चैव मधुं च शर्करायुतम्।

सरस्वती तु पञ्चधासो देशेभवत्सरित्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः मिलितपञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदक स्नानम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर शुद्ध जल से स्नान करावे)

ऊँ शुद्धवालः सर्व शुद्धवालो मणिवालस्त ऽ आश्विनः श्येतः

श्येताक्षो रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्णायामा अवलिप्ता रौद्रानभोःरूपाः पार्ज्जन्न्याः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

वस्त्रोपवस्त्रम्–(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर रक्त सूत्र चढ़ावे)

ऊँ सुजातोज्ज्योतिषा सहशर्म्म व्वरुथमासदत्स्वः।

व्वासो ऽ अग्ने विश्वःप गूं सँव्ययस्वव्विभावसो।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर यज्ञोपवीत चढ़ावे)

ऊँ ब्रह्मज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोव्वेनऽआवः।
सबुद्धन्याऽउपमा अस्यविष्ठाः सतश्च्चयोनिमसतश्चव्विवः।
ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

चन्दनम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर चन्दन चढ़ावे)

ऊँ अ गूं शुना ते अ गूं शुः पृच्यतां परुषा परुः।
गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युतः।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः चन्दनकुंकुमञ्च समर्पयामि।

अक्षताः ——(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर अक्षत चढ़ावे)

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽ अधूषत।

अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठ्ठयामती योजान्विन्द्रते हरी।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः अलङ्करणार्थम् अक्षतान् समपर्यामि।

पुष्पाणि (पुष्पमाला) ——(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर पुष्पमाला अथवा पुष्प चढ़ावे)

ॐ ओषधिः प्रतिमोदद्ध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः।

अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्ण्वः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः पुष्पाणि समर्पयामि।

दुर्वाङ्कुरम् ——(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर दूर्वा चढ़ावे)

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।

एवा नो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः दूर्वाङ्कुराणि समर्पयामि।

बिल्वपत्रम् ——(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर बिल्वपत्र चढ़ावे)

ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्मिणे च वरुथिने च नमः

श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुब्भ्याय चाहनन्याय च।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः बिल्वपत्राणि समर्पयामि।

सुगन्धितद्रव्यम् ——(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर इत्र चढ़ावे)

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि।

सिन्दूरम् ——(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर सिन्दूर चढ़ावे)

ऊँ सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्रमियः पतयन्ति ह्यवाः।

घृतस्य धारा ऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः सिन्दूरं समर्पयामि।

नानापरिमलद्रव्याणि ——(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर अवीर चढ़ावे)

ऊँ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुञ्ज्याया हेतिं परिबाधमानः।

हस्तघ्नो व्विश्वाव्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा œ सम्परिपातुव्विश्वतः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः परिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपम् —(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु को धूप दिखावे)

धूरसि धूर्व्वधूर्व्वन्तं धूर्व्व तोस्म्मान् धूर्वतितन्धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः।

देवानामसि व्वह्नितम œ सस्न्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतम्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः धूपम् आघ्रापयामि।

दीपम् —(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु को दीप दिखावे)

ऊँ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिज्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।

अग्निर्व्वर्चोज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्यो वर्च्चोज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा।

ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः दीपकं दर्शयामि।

हस्तौ प्रक्षाल्य। (इसके बाद हाथ धोये)

नैवे। म् —(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु को भोग लगावे)

ऊँ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष œ शीर्ष्णो । ौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ २ अकल्पयन्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः नैवे। ं निवेदयामि। मध्ये जलं निवेदयामि। (इसके बाद पॉच बार जल चढावे)

ऋतुफलम् —(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु के उपर फल चढ़ावे)

ऊँ याः फलनीर्या ऽ अफला ऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हसः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः फलं निवेदयामि। पुनः आचमनीयं निवेदयामि।(इसके बाद पुनः जल चढावे)

ताम्बूल–मन्त्र बोलते हुए लवंग,इलायची, सोपारी सहित पान का पत्ता भगवान् विष्णु के उपर चढावे।

ॐयत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मःशरद्धविः।।

ॐ भूभुर्वः स्वः विष्णवे नमः मुखवासार्थं एलालवंगपूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि।

(इलायची,लौंग–सुपारी सहित ताम्बूल को चढ़ाये)

दक्षिणा–(अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुए भगवान् विष्णु के उपर दक्षिणा चढ़ावे)

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातःपतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं । ामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

ॐ भूभुर्वः स्वः विष्णवे नमः,कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।(द्रव्य दक्षिणा समर्पित करें।)

आरती–(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु को कर्पूर की आरती करे)

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम् ।

आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य में वरदो भव।।

प्रदक्षिणा–(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्णु की प्रदक्षिणा करे)

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।

तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणा पदे पदे।।

ॐ भूभुर्वः स्वः विष्णवे नमः , प्रदक्षिणा समर्पयामि।(प्रदक्षिणा करे।)

प्रार्थना– मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।
भक्तार्ति नाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय।
पि। ाधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते।।

ॐ भूभुर्वः स्वः विष्णवे नमः, प्रार्थना पूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि।(साष्टांग नमस्कार करे।)

समर्पण–(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए हाथ में पुष्प लेकर भगवान् विष्णु को समस्त पूजन कर्म समर्पित करे)

विष्णुपूजने कर्म यन्न्यूनमधिकं कृतम्।

तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रशन्नोस्तु सदा मम।।

ॐ भूभुर्वः स्वः विष्णवे नमः, अनया पूजया विष्णवे प्रीयेताम् न मम । पुष्प को भगवान् विष्णु के उपर चढ़ावे)
इसके बाद भगवान् सत्यनारायण व्रत कथा को प्रारम्भ करे ।

1.4 श्री सत्यनारायण व्रत कथा

प्रथमोऽध्यायः

व्यास उवाच–एकदा नैमिषारण्ये ऋषयः शौनकादयः। प्रपच्छुर्मुनयः सर्वे सूतं पौराणिकं खलु।।1।। ऋषय उवाच– व्रतेन तपनसा किं वा प्राप्यते वांछित फलम्। तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामः कथयस्व महामुने।।2।। सूत उवाच–नारदेनैव संपृष्टो भगवान्कमलापतिः। सुरर्षये यथैवाह तच्छृणुध्वं समाहिताः।।3।।

व्यासजी ने कहा – एक समय शौनकादि सभी मुनिगण नैमिषारण में एकत्र हुए और उन्होंने कलियुग में लोगों के हित के लिए वेदों व पुराणों के ज्ञाता श्री सूत जी से पूछा–''हे सूत जी! हे वेद–वेदांग के ज्ञाता! इस कलियुग में वह कौन–सा व्रत–तप है जिसके करने से मनवांछित फल मिलता है? हे महामुने! कृपा करके हमें कलियुग में पापों से छुटकारे और धन–धान्य देने वाला कोई उपाय बताएं। हम सब ऋषि–मुनि आपके श्री मुख से वह उपाय सुनना चाहते हैं।''

श्री सूत जी बोले–''हे मुनिश्रेष्ठ ! तुम धन्य हो जिसने प्राणियों के हित के लिए ऐसा उत्तम प्रश्न किया है। एक बार ऐसा ही प्रश्न नारद जी ने भगवान कमलापति से किया था, वही मैं आपको सुनाता हूं–

एकदा नारदो योगी परानुग्रहकांक्षया। पर्यटन्विविधांल्लोकान्मर्त्य– लोकमुपागतः।। 4।। ततो दृष्टाव् जनान्सर्वान्नानाक्लेशसमन्वितान्। नानायोनि समुत्पान्नान् क्लिश्यमानान्स्वकर्मभिः।।5।। केनोपायेन चैतेषां दुःखनाशो भवेद्ध्रुवम्। इति संचिन्त्य मनसा विष्णुलोकं गतस्तदा।।6।। तत्र नारायणं देवं शुक्लवर्णचतुर्भुजम्। शंख चक्र गदा पद्म् वनमाला विभूषितम्।। 7।।

एक बार नारदजी भ्रमण करते–करते पृथ्वी लोक में जा पहुंचे। उनका यह भ्रमण तीनों लोकों के प्राणियों के परोपकार की भावना को लेकर था। पृथ्वी लोक में जाकर उन्होंने देखा कि वहां लोग तरह–तरह के कष्ट भोग रहे हैं। वे बार–बार मृत्यु को प्राप्त होते हैं और हर बार विभिन्न योनियों में जन्म लेकर अपने कर्मो (पापों) का फल भोगते हैं। उन सभी दुःखी प्राणियों को देखकर नारद सोचने लगे कि इनका कष्ट किस प्रकार दूर हो, किस प्रकार इन्हें इन दुःखों से मुक्ति मिले? यही सब सोचते–सोचते वह विष्णु लोक में आ गए। वहां चार भुजा भगवान विष्णु शेष शय्या पर विराजे हुए थे। वे शंख, चक्र, गदा व कमल अपने हाथों में धारण किए हुए थे। गले में वनमाला पड़ी थी।

दृष्ट्वा तं देवदेवेशं स्तोतुं समुपचक्रमे। नारद उवाच–नमोवङ्मनसातीत–रूपायानंतशक्तये।।8।। आदिमध्यांतहीनाय निर्गुणाय गुणात्मने। सर्वेषामादिभूताय भक्तानामार्तिनाशिने।।9।। श्रुत्वा स्तोत्रं ततो विष्णुर्नारदं प्रत्यभाषत्।। श्रीभगवानुवाच–किमर्थमागतोऽसि त्वं किं ते मनसि वर्तते। कथायस्व महाभाग तत्सर्वं कथयामिते।।10।। नारद उवाच–मर्त्यलोके जनाः सर्वे नानाक्लेशसमन्विताः। नानायोनिसमुत्पन्नाः पच्यन्ते पापकर्मभिः ।।11।।

नारद जी ने मुग्ध भाव से उन्हें देखा, फिर बोले–'हे श्री हरि! मन और वाणी से परे है। अनन्त शक्तिधारी! मैं आपको प्रणाम करता हूं। हे प्रभु! आपका न आदि है, न मध्य है और न अंत है। आप इससे सर्वथा मुक्त हैं। हे सर्वआत्मा के आदिकरण! मैं आपको नमस्कार करता हूं।'

नारद जी की स्तुति सुनकर भगवान विष्णु ने मुस्कराकर पूछा–'हे नारद! तुम्हारे मन में अवश्य ही कोई ऐसी बात है जिसके कारण तुम यहां आए हो। तुम्हारे मन में क्या है, मुझे सब कुछ बताओ।'

भगवान के ऐसे वचन सुनकर नारद जी ने कहा–'प्रभु! मृत्यु लोक के सभी प्राणी अपने पाप कर्मों के कारण बार–बार विभिन्न योनियों में जन्म लेकर कष्ट भोग रहे हैं।

तत्कथं शमयेन्नाथ लघूपायेन तद्वद्। श्रोतुमिच्छामि तत्सर्वं कृपास्ति यदि ते मयि।।12।। श्रीभगवानुवाच–साधु पृष्टं त्वया वत्स लोकानुग्रहकांक्षया।। यत्कृत्वा मुच्यते मोहात्तच्छृणुष्व वदामि ते।।13।। व्रतमस्ति महत्पुण्यं स्वर्गे मर्त्ये च दुर्लभम्।। तव स्नेहान्मया वत्स प्रकाशः क्रियतेऽधुना।।14।।

हे भगवान! यदि आप मुझ पर कृपा रखते हैं तो इन प्राणियों के दुःख दूर करने का कोई सुगम एवं छोटा उपाय बताएं।'

भगवान श्री वष्णु बोले– 'हे नारद! तुम हमेशा सबका हित चाहते हो, तुम साधु हो। प्राणियों के कल्याण के लिए यह तुमने बड़ा ही उत्तम प्रश्न किया है। मैं तुम्हें बताता हूं कि किस व्रत को करने से व्यक्ति मोह से छूट जाता है। हे नारद! जो व्रत मैं तुम्हें बताने जा रहा हूं, वह स्वर्ग और मृत्यु लोक दोनों में दुर्लभ है, किन्तु तुम्हारे स्नेह के कारण मैं तुम्हें इस व्रत का पूरा विधि–विधान बताता हूं।

सत्यनारायणस्यैवं व्रतं सम्यग्विधानतः। कृत्वा स। : सुखं भुक्त्वा परत्र मोक्षमाप्नुयात्।।14।।

तच्छ्रुत्वा भगवद्वाक्यं नारदो मुनिरब्रवीत्। नारद उवाच–किं फलं किं विधानं च कृतं केनैव तद्व्रतम्।।16।। तत्सर्वंविस्तराद् ब्रूहि सदा कार्यं हि तद्व्रतम्। श्रीभगवानुवाच– दुःखशोकादिशमनंधनधान्यप्रवर्धनम्।।17।। सौभाग्यसन्ततिकरं सर्वत्रविजयप्रदम्। यदिस्मन्कस्मिन्दिने मर्त्यो भक्ति श्रद्धासमन्वितः।।18।।

हे नारद! भगवान सत्यनारायण का विधिपूर्वक व्रत करने से तत्काल ही सुख प्राप्त होता है और अंत में प्राणी मोक्ष का अधिकारी हो जाता है।

श्री विष्णु के मुख से ऐसे प्रीतियुक्त वचन सुनकर नारद जी ने पूछा–'प्रभु! इस व्रत के करने से क्या फल प्राप्त होता है, इसकी विधि और समय क्या है तथा इसे पहले किस–किसने किया है। कृपा कर यह सभी विस्तारपूर्वक बताएं।'

विष्णु भगवान ने कहा–'हे नारद! यह व्रत दुःख और शोक को दूर करने वाला है। इससे धन–धान्य में वृद्धि होती है तथा सौभाग्य व संतान की प्राप्ति होती है। प्राणी को चारों दिशाओं में विजयश्री दिलाने वाले इस व्रत को व्यक्ति किसी भी दिन पूर्ण श्रद्धा व भक्ति से कर सकता है।

सत्यनारायणं देवं यजेच्चैव निशामुखे। ब्राह्मणैर्बान्धवाश्चैव सहितो धर्मतत्परः।।11। नैवे।

भक्तितो द। त्सपादं भक्ष्यमुत्तमम्। रंभाफलं घृतं क्षीरं गोधूमस्य च चूर्णकम्।।20।।

अभावेशालिचूर्णं वा शर्करा वा गुडस्तथा। सपादं सर्वभक्ष्याणि चैकीकृत्य निवेदयेत्।।21।।

विप्राय दक्षिणा द। त्कथां श्रुत्वाजनैः सह। ततश्चबन्धुभिः सार्धं विप्रांश्च प्रतिभोजयेत्।।22।।

सायंकाल धर्म में पूरी आस्था रखते हुए, बंधु–बान्धवों सहित किसी ब्राह्मण के सहयोग से भगवान श्री सत्यनारायण जी का पूजन करना चाहिए। सवाया प्रसाद बनाना चाहिए। प्रसाद में केले का फल, घी, दूध व गेहूँ का आटा लेना चाहिए। यदि गेहूँ का आटा उपलब्ध न हो तो चावल का आटा लें और उसमें शक्कर के स्थान पर गुड़ मिला लें। यह सब मिलाकर सवाया बना नैवे। भगवान को अर्पण करें। इसके बाद कथा सुनकर प्रसाद

ग्रहण करना चाहिए तथा ब्राह्मणों को दक्षिणा देनी चाहिए। बंधु–बांधवों सहित ब्राह्मणों को भोजन कराकर स्वयं भी भोजन करना चाहिए।

प्रसादं भक्षयेद्भक्त्या नृत्यगीतादिकं चरेत्। ततश्च स्वगृहं गच्छेत्सत्यनारायणं स्मरन्।।23।।
एवंकृते मनुष्याणां वाञ्छासिद्धिर्भवेद् ध्रुवम्। विशेषतः कलियुगे लघूपायऽस्ति भूतले।।24।।

प्रसादादि ग्रहण करने के बाद भजन–कीर्तनादि करना चाहिए। फिर भगवान सत्यनारायण का स्मरण करते हुए सभी बन्धु–बांधव अपने घरों को प्रस्थान करें। इस प्रकार जो भी भगवान श्री सत्यनारायण का स्मरण करते हुए सभी बन्धु–बांधव अपने घरों को प्रस्थान करें। इस प्रकार जो भी भगवान श्री सत्यनारायण जी का व्रत–पूजन करता है, उसकी सभी मनोकामनाएं अवश्य ही पूर्ण होती हैं। इस कलियुग में दुःख एवं दरिद्रता से छुटकारा पाने का इससे छोटा कोई उपाय नहीं है।''

इति श्रीस्कन्द पुराणे रेवाखण्डे सत्यनारायणव्रत कथायां प्रथमोऽध्यायः समाप्तः।

श्री स्कन्द पुराण के रेवाखण्ड की सत्यनारायणव्रत कथा का प्रथम अध्याय पूर्ण हुआ।

बोलो सत्यनारायण भगवान की जय

श्रीमन् नारायण, नारायण, लक्ष्मी नारायण, नारायण, नारायण

द्वितीयोऽध्यायः

सूत उवाच– अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि कृतं येन पुरा द्विज। कश्चित् काशीपुरे रम्ये ह्यासीद्विप्रोऽतिनिर्धनः।।1।। क्षुत्तृड्भ्यां व्याकुलो भूत्वा नित्यं बभ्राम भूतले।। दुःखितं ब्राह्मणं दृष्टाव् भगवान्ब्राह्मणप्रियः।।2।। वृद्धब्राह्मणरूपस्तं पप्रच्छ द्विजमादरात्। किमर्थं भ्रमसे विप्र महीं नित्यं सुदुःखितः तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि कथ्यतां द्विजसत्तम।।3।।

सूत जी बोले–''हे मुनिश्वर ! पहले इस व्रत को किस–किसने किया, अब मैं तुम्हें इस विषय में बताता हूँ। सुनिए– बहुत ही रमणीय स्थल काशीपुरी में एक बड़ा ही निर्धन ब्राह्मण रहता था। वह भूख–प्यास से दुःखी यहां–वहां भटक, भिक्षा मांगकर अपना पेट भरता था। इस ब्राह्मण को दुःखी देखकर ब्राह्मणों से प्यार करने वाले भगवान विष्णु बड़े व्यथित हुए। फिर एक दिन वे बूढ़े ब्राह्मण का वेश धारण कर पृथ्वी पर आकर उस ब्राह्मण से बोले–'हे विप्र! तुम इतने दुःखी होकर इस पृथ्वी पर क्यों भटक रहे हो। कृपा कर मुझको अपनी विपदा बताओ।

ब्राह्मण उवाच– ब्राह्मणोऽति दरिद्रोऽहं भिक्षार्थं वै भ्रमे महीम्।।4।। उपायं यदि जानासि कृपया कथय प्रभो। वृद्ध ब्राह्मण उवाच–सत्यनारायणो वृद्धस्तत्रैवान्तरधीयत्।।7।। तद्व्रतं संकरिष्यामि यदुक्तंब्राह्मणेन वै। इति संचिंत्य विप्रोऽसौ निद्रां न लब्धवान्।।8।।

ब्राह्मण बोला–हे' बन्धु! मैं अत्यन्त ही निर्धन और दुःखी हूँ। क्या आप इस निर्धनता से मुक्त होने का कोई उपाय जानते हैं। यदि जानते हैं तो कृपा कर मुझको बताएं। मैं वह उपाय अवश्य ही करूंगा ताकि मुझे इस कष्टपूर्ण जीवन से मुक्ति मिले।'

बूढ़े ब्राह्मण ने कहा–'सत्यनारायण स्वरूप भगवान विष्णु सबको मन चाहा फल देने वाले हैं। अतः हे विप्र! तुम उन्हीं को उत्तम व्रत व पूजन करो। भगवान सत्यनारायण का व्रत व पूजन करने से मनुष्य के सब दुःख दूर हो जाते हैं।'

'हे भगवन्!' गरीब ब्राह्मण ने कहा–' कृपया मुझे इस व्रत का विधि–विधान बताएं। आपके अनुसार मैं उत्तम फल प्रदान करने वाले इस व्रत को अवश्य ही करूंगा।'

बूढ़े ब्राह्मण वेशधारी भगवान विष्णु ने उसे सत्यदेव भगवान के व्रत–पूजन का विधान बताया और अन्तर्धान हो गए। निर्धन ब्राह्मण ने मन ही मन में संकल्प लिया कि वह बूढ़े ब्राह्मण द्वारा गया व्रत अवश्य करेगा। इन्हीं विचारों के कारण उसे रात भर नींद नहीं आई।

ततः प्रातः समुत्थाय सत्यनारायणव्रतम्। करिष्य इति संकल्प्य भिक्षार्थमगमद् द्विजः।।9।। तस्मिन्नेव दिने विप्रः प्रचुरं द्रव्यमाप्तवान्। तेनैव बन्धुभिः सार्धं सत्यस्य व्रतमाचरत्।।10।। सर्वदुःखविनिर्मुक्तः सर्वसंपत्समन्वितः। बभूव स द्विजश्रेष्ठो व्रतस्यास्य प्रभावतः।।11।। ततः प्रभूतिकालं च मासि मासि व्रतं कृतम्। एवं नारायणेवेकतिम व्रतं कृत्वा द्विजोत्तमः।।12।। सर्वपापविनिर्मुक्तो दुर्लभं मोक्षमाप्तवान्।। व्रतमस्य यदा विप्राः पृथिव्यां संकरिष्यति।।13।।

दूसरे दिन वह इस संकल्प के साथ भिक्षाटन के लिए निकला कि आज जो कुछ भी भिक्षा में मिलेगा, उससे मैं सत्यनारायण जी का व्रत–पूजन करूंगा। उस दिन से भिक्षा में काफी द्रव्य प्राप्त हुआ। उसी से ब्राह्मण ने अपने बन्धु–बांधवों सहित श्री सत्यनारायण भगवान का व्रत किया। व्रत के प्रभाव और भगवान सत्यदेव की कृपा से वह सम्पत्तिवान हो गया। तब से उस ब्राह्मण ने प्रति माह व्रत रखना आरंभ कर दिया और अन्त में सब पापों से मुक्त हो मोक्ष को प्राप्त हुआ।

तदैव सर्वदुःखं तु मनुजस्य विनश्यति।। एवं नारायणेनोक्तं नारदाय महात्मने।।14।। मया तत्कथितं विप्राः किमन्यत्कथयामि वः। ऋषयः उवाच–तस्माद्विप्राच्छ्रुतं केन पृथिव्यां चरितं मुने। तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामः श्रद्धाऽस्माकं प्रजायते।।15।। सूत उवाच–श्रृणुध्वं मुनयः सर्वे व्रतं येन कृतं भुवि। एकदा स द्विजवरो यथाविभवविस्तरैः।।16।। बन्धुभिः स्वजनैः सार्धं व्रतं कर्तुं समु। तः। एतस्मिन्नंतरे काले काष्ठक्रेता समागमत्।।17।।

हे विप्रो! इस प्रकार पृथ्वी पर जो कोई भी श्रद्धापूर्वक इस व्रत को करेगा, उसके सभी दुःख दूर होंगे–श्रीमन नारायण जी ने यही वचन नारद जी से कहे थे। अब आप लोग बताइए कि और क्या जानने की इच्छा है?''

तब ऋषिगणों ने पूछा–''हे सूत जी! अब यह बताएं कि आगे चलकर ब्राह्मण के बाद किस–किसने इस व्रत को किया। यह जानने की हमारी प्रबल इच्छा है।''

सूत जी बोले–''उस ब्राह्मण से सुनकर आगे यह व्रत किन–किन लोगों ने किया, यह भी ध्यानपूर्वक सुनो। वह ब्राह्मण धन–धान्य से भरपूर होकर एक बार व्रत कर रहा था कि एक लकड़हारा वहां आया।

बहिः काष्ठं च संस्थाप्य विप्रस्य गृहमाययौ। तृष्णाया पीडितात्मा च दृष्ट्व विप्रं कृतव्रतम्।।18।। प्रणिमत्य द्विजं प्राह किमिदं क्रियते त्वया। कृते किं फलमाप्नोति विस्तराद्वद मे प्रभो।।11।। विप्र उवाच–सत्यनारायणस्येदं व्रतं सर्वेप्सितप्रदम्। तस्य प्रसादान्मे सर्वं धनधान्यदिकं महत्।।20।। तस्मादेतद्व्रतं ज्ञात्वा काष्ठक्रेताऽतिहर्षितः। पपौ जलं प्रसादं च भुक्त्वा स नगरं ययौ।।21।।

लड़की का बोझ बाहर रखकर, वह प्यास बुझाने के उद्देश्य से ब्राह्मण के घर में गया। वहां उसने ब्राह्मण को देखा, जो अपने बंधु–बांधवों सहित भगवान श्री सत्यनारायण का व्रत और पूजन कर रहा था। वह सब देख लकड़हारे को बड़ी उत्सुकता हुई। उसने ब्राह्मण को प्रणाम करके पूछा–'हे प्रभू! हे ब्राह्मण देव! आप यह किसका पूजन कर रहे हैं और इस पूजन का क्या फल मिलता है, कृपा कर विस्तारपूर्वक मुझे बताएं।'

ब्राह्मण बोला–'हे भाई लकड़हारे! यह हम भगवान सत्यनारायण का व्रत और पूजन कर रहे हैं। सत्यदेव भगवान का यह व्रत सभी मनोरथों को सिद्ध करने वाला और शुभ फलदायी है। उन्हीं की कृपा से मेरे घर में यह सब धन–धान्य और सुख–वैभव है।'

यह जानकर लकड़हाड़ा बहुत प्रसन्न हुआ। वह प्रसाद ग्रहण करके तथा जलपीकर बाहर आया और अपना गट्ठर उठाकर लकड़ी बेचने के लिए शहर को चल दिया।

सत्यनारायणं देवं मनसाऽसौऽचिन्तयतं। काष्ठंविक्रयतो ग्रामे प्राप्यते चा। यद्धनम्।।22।।
तेनैव सत्यदेवस्य करिष्ये व्रतमुत्तमम्। इति संचिन्त्य मनसा काष्ठं धृत्वा तु मस्तके।।23।।
जगाम नगरे रम्ये धनिनां यत्र संस्थितिः। तद्दिने काष्ठमूल्यं च द्विगुणं प्राप्तवानसौ।।24।।
ततः प्रसन्नहृदयः सुपक्वं कदलीफलम्। शर्कराघृतदुग्धं च गौधूमस्य च चूर्णकम्।।25।।

रास्ते में चलते–चलते उसने सोचा कि आज यह लकड़ियां बेचकर जो भी धन प्राप्त होगा, उससे मैं भी भगवान सत्यनारायण का व्रत और पूजन करूंगा। यह संकल्प कर वह उस बस्ती की ओर चल दिया जहां नगर के अमीर लोग रहते थे। भगवान सत्यनारायण की ऐसी कृपा हुई कि उस दिन उसे लकड़ियों के दूने दाम प्राप्त हुए। लकड़हारे ने प्रसन्न होकर पके केले, शक्कर, घी, दूध और गेहूँ का आटा सवाया बनवाकर खरीद लिया और अपने घर की ओर चल पड़ा।

कृत्वैकत्र सपादं च गृहीत्वा स्वगृहं यतौ। ततो बन्धून् समाहूय चकार विधिना व्रतम्।।26।।
तद्व्रतस्य प्रभावेण धनपुत्रान्वितोऽभवत्।। इह लोके सुखं भुक्त्वा चांते सत्यपुरं ययौ।।27।।

लकड़हारे ने अपने भाई–बांधवों सहित विधिपूर्वक भगवान का पूजन–व्रत किया। व्रत के प्रभाव से वह पुत्रवान और धनवान बन गया। फिर इस लोक में चिरकाल तक सुख भोगकर अन्त में भगवान सत्यनारायण की कृपा से उनके लोक मे ंचला गया।''

इति श्रीस्कन्द पुराणे रेवाखण्डे सत्यनारायण व्रत कथायां द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः।

श्रीस्कन्द पुराण के रेवाखण्ड की सत्यनारायण व्रत कथा का द्वितीय अध्याय पूर्ण हुआ।

बोलो सत्यनारायण भगवान की जय

श्रीमन् नारायण, नारायण, नारायण, लक्ष्मी नारायण, नारायण, नारायण।

तृतीयोऽध्यायः

सूत उवाच–पुनरग्रे प्रवक्ष्यामि श्रृणुध्वं मुनिसत्तमाः। पुरा उल्कामुखो नाम नृप्श्चासीन्महामतिः।।1।। जितेन्द्रियः सत्वादी ययौ देवालयं प्रति। दिने दिने धनं दत्त्वा द्विजान्संतोषयन्मुधीः।।2।। भार्यातस्य प्रमुग्धा च सरोजवदना सती। भद्रशीला नदी तीरे सत्यस्य व्रतमाचरत्।।3।। एतस्मिन्नंतरे तत्र साधुरेकः समागतः। वाणिज्यार्थं बहुधनैरनेकैः परिपूरितः।।4।।

सूत जी बोले–''हे मुनियो! अब मैं इससे आगे की कथा सुनाता हूँ, ध्यानपूर्वक सुनो–पूर्वकाल में उल्कामुख नाम का एक बुद्धिमान राजा था। वह बड़ा ही जितेन्द्रिय एवं सत्यवादी था। वह नित्यप्रति मंदिरों आदि में जाकर ब्राह्मणों को दान–दक्षिणा देकर प्रसन्न रखता था। उसकी रानी बड़ी पतिव्रता और सुमुखी थी। एक बाद वे राजा–रानी भद्रशीला नदी के तट पर भगवान सत्यनारायण का व्रत कर रहे थे। उसी समय साधु नामक एक वैश्य धन–धान्य से भरी अपनी नौका लेकर वहां पहुंचा।

नावं संस्थाप्य तत्तीरे जगाम नृपतिं प्रति। दृष्टाव् स व्रतिनं भूपं प्रपच्छ विनयान्वितः।।5।। साधुरूवाच–किमिदं कुरूषे राजन्भक्तियुक्तेन चेतसा। प्रकाशं कुरू तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि सांप्रतम्।।6।। राजोवाच–पूजनं क्रियते साधो विष्णोरतुलतेजसः। व्रतं च स्वजनैः सार्धं पुत्रा। । वाप्तिकाम्यया।।7।। भूपस्य वचनं श्रुत्वा साधुः प्रोवाच सादरम्। सर्वं कथय मे राजन्करिष्येऽहं तवोदितम्।।8।।

साधु वैश्य ने नाव को किनारे पर लगाकर व्रत–पूजन में व्यस्त राजा–रानी को देखा। फिर उनके निकट जाकर विनयपूर्वक राजा से बोला–'हे राजन! आप इतने भक्तिभाव से यह किस देवता का पूजन कर रहे हैं, कृपा कर यह सब वृतांत मुझे भी बताएं।'
राजा उसकी विनय सुनकर बोला–'हे वैश्य! हम अपने बन्धु–बांधवों सहित विष्णु भगवान जैसे तेजस्वी भगवान श्री सत्यनारायण जी व्रत और पूजन कर रहे हैं। यह सब हम पुत्रादि की प्राप्ति के लिए कर रहे हैं।''

राजा की बात सुनकर साधु बोला–'महाराज! आप कृपा करके मुझे इस व्रत के सम्बंध में सारा विधान बताएं ताकि मैं भी यह व्रत करूं।

ममापि सन्ततिर्नास्ति ह्येतस्माज्जायते ध्रुवम्। ततो निवृत्य वाणिज्यात्सानंदो गृहमागतः।।9।। भार्यायै कथितं सर्वं व्रतं संततिदाकम्। तदा व्रतं करिष्यामि यदा में संततिर्भवेत्।।10।। इति लीलावतीं प्राह पत्नीं साधुः स सत्तमः। एकस्मिन्दिवसे तस्यभार्या लीलावती सती।।11।। भर्तृयुक्तानन्दचित्ताऽभवद्धर्म परायणा। गर्भिणी साभवत्तस्य भार्या सत्यप्रसादतः।।12।। दशमे मासि वै तस्याः कन्या रत्नमजायत। दिने दिने सा ववृधे शुक्लपक्षे यथा शशी।।13।।

मेरे भी कोई सन्तान नहीं है। क्या इस व्रत के प्रभाव से मेरे सन्तान हो जाएगी?' 'अवश्य होगी वैश्व, भगवान सत्यदेव किसी को कभी निराश नहीं करते।' यह कहकर राजा ने उसे व्रत से सम्बंधित पूरा विधि–विधान बता दिया।

सब कुछ जान लेने के बाद वैश्य खुशी–खुशी अपने घर चल दिया। घर पहुंचकर उसने अपनी पत्नी लीलावती को सब कुछ बताया, फिर बोला–'यदि हमारे घर सन्तान हुई तो हम भी सत्यनारायण भगवान का व्रत करेंगे।'
उसकी पत्नी यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुई। इस प्रकार दिन गुजरने लगे और कुछ समय बाद लीलावती गर्भवती हो गई। दसवें माह में उसने एक कन्या को जन्म दिया। यह कन्या चन्द्र की कला की भांति दिनो–दिन बढ़ने लगी।

नांमाकलावती चेति तन्नामकरणं कृतम्। ततो लीलावती प्राह स्वामिनं मधुरं वचः।।14।। न करोषि किमर्थं वै पुरा संकल्पितव्रतम्। साधुरूवाच–विवाह समये त्वस्या करिष्यामि व्रतं प्रिये।।15।। इति भार्यां समाश्वास्य जगाम नगरं प्रति। ततः कलावती कन्या ववृधे पितृवेश्मनि।।16।। दृष्टाव कन्यांततः साधुर्नगरे सखिभिः सह। मन्त्रयित्वा द्रुतं दूतं प्रेषयामास धर्मवित्।।17।। विवाहार्थं च कन्यायाः वरं श्रेष्ठं विचारय। तेनाज्ञप्तश्च दूतोऽसौ कांचनं नगरं ययौ।।18।।

इस कन्या का नाम कलावती रखा गया। एक दिन लीलावती ने अपने पति से कहा–'स्वामी ! आपने कहा था कि जब हमारे सन्तान उत्पन्न हो जाएगी, तब आप भगवान सत्यनारायण का व्रत व पूजन करेंगे। अब आप अपने संकल्प के अनुसार यह कार्य क्यों नहीं करते?'
साधु बोला–'प्रिये! हम कन्या के विवाह के समय यह व्रत कर लेंगे।'

इसके बाद वैश्य पुनः अपने काम से दूसरे नगर को चला गया। इधर कन्या भगवान सत्यनारायण की कृपा से तेजी से बढ़ रही थी। एक दिन वैश्य ने अपनी पुत्री को सहेलियों के साथ विचरण करते देखा तो उसे सुधि आई कि कन्या सयानी हो गई है और अब इसका विवाह कर देना चाहिए। अतः पत्नी से विचार–विमर्श करके उसने शीघ्र ही कन्या के योग्य वर तलाशने के लिए अपने दूतों को भेज दिया। वैश्य की आज्ञा पाकर दूत सर्वप्रथम सुसम्पन्न कांचन नगर को चल दिए।

तस्मादेकं वणिक्पुत्रं समादायागतो हि सः। दृष्ट्वा तु सुंदरं बालं वणिक्पुत्रं गुणान्वितम्।।19।। ज्ञातिभिर्बन्धुभिः सार्धं परितुष्टेन चेतसा। दत्तावान्साधु पुत्राय कन्यां विधिविधानतः।।20।। ततोऽभाग्यवशात्तेन विस्मृत व्रतमुत्तमम्। विवाहसमये तस्यास्तेनरूष्टोऽभवत्प्रभुः।।21।। ततः कालेनकियता निज कर्मविशारदः। वाणिज्यायगतः शीघ्रं जामातृसहितो वणिक्।।22।। रत्नसारपुरे रम्ये गत्वा सिन्धुसमीपतः वाणिज्यमकरोत्साधुर्जामात्रा श्रीमता सह।।23।।

कुछ दिनों बाद वे वहां से एक बड़े ही गुणवान और सुन्दर वैश्य पुत्र को अपने साथ ले आए। साधु वैश्य ने अपने बंधु–बांधवों सहित उसे देखा और वार्तालाप करके संतुष्ट हो गया। फिर कुछ दिन बाद उसने विधिपूर्वक अपनी कन्या का विवाह उसके साथ कर दिया। लेकिन दुर्भाग्यवश उस समय भी वह भगवान श्री सत्यनारायण जी का व्रत और पूजन करना भूल गया। परिणामस्वरूप श्री सत्यनारायण भगवान रूष्ट हो गए। इस प्रकार कुछ समय बीत गया। अब वैश्य से सोचा कि व्यापार के लिए चलना चाहिए। अपने कार्य

के प्रति वह सदा ही सचेत रहता था। अतः अपने जमाता को लेकर वह व्यापार के लिए चल दिया। इस बार वह समुद्र के समीप रत्नसार नामक सुंदर और सम्पन्न नगर गया। वहां जाकर वह अपने जमाता के साथ व्यापार में व्यस्त हो गया।

तौ गतौ नगरे रम्ये चन्द्रकेतोर्नृपस्य च। एतस्मिन्नेव काले तु सत्यनारायणः प्रभुः।।24।। भ्रष्टप्रतिज्ञमालोक्य शापं प्रदत्तवान्। दारूणं कठिनं चास्य महद्दुःखं भविष्यति।।25।। एकस्मिन्दिवसे राज्ञो धनमादाय तस्करः। तत्रैव चागश्चौरो वणिजौ यत्र संस्थितौ।।26।। तत्पश्चाद्धावकान्दूतान्दृष्ट्वा भीतेन चेतसा। धनंसंस्थाप्य तत्रैव स तु शीघ्रमलक्षितः ।।27।। ततोदूतः समायाता यत्रास्ते सज्जनो वणिक्। दृष्ट्वा नृपधनं तत्र बद्ध्बाऽऽनीतौ वणिक्सुतौ।।28।।

इस सुन्दर और सम्पन्न नगर में राजा चन्द्रकेतु का राज्य था। उस समय अपनी प्रतिज्ञा से भ्रष्ट हुए वैश्य को भगवान सत्यनारायण ने शाप दे दिया कि हे वैश्य! तू घोर कष्ट को प्राप्त होगा।

एक दिन राजा की सत्पत्ति चुराकर एक चोर वहां गया, जहां वैश्य साधु और उसका जमाता ठहरे हुए थे। उसके पीछे राजा के सिपाही लगे थे। अतः डर के मारे उसने राजा का चुराया हुआ धन वहीं छोड़ दिया और अलोप हो गया। उसके पीछे–पीछे आए सिपाहियों ने राजा का धन वहां पड़ा देखा तो चोरी के अपराध में उन दोनों वैश्यों को बंदी बना लिया।

हर्षेण धावमानाश्च प्रोचुर्नृपसमीपतः। तस्करौ द्वौ समानीतौ विलोक्याज्ञापय प्रभो।।29।। राज्ञाऽऽज्ञप्तास्ततः शीघ्रं दृढं बद्धवा तु तावुभौ। स्थापितौ द्वौ महादुर्गे करारेऽविचारतः।।30।। मायया सत्यदेवस्य न श्रुतं कैस्तयोर्वचः। अतस्तयोर्धनं राज्ञा गृहीतं चंद्रकेतुना।।31।। तच्छापाच्च तयोर्गेहे भार्या चैवातिदुःखिता।। चौरेणापहृतं सर्वं गृहे यच्च स्थितं धनम्।।32।। आधिव्याधिसमायुक्ता क्षुत्पिपासातिदुःखिता। अन्नचिंतापरा भूत्वा बभ्राम च गृहे गृहे। कलावती तु कन्याऽपि बभ्राम प्रतिवासरम्।।33।।

हर्षित होकर सिपाहियों ने जाकर राजा को बताया–'महाराज! राजमहल में चोरी करने वाले दो चोरों को हम पकड़ लाए हैं, आप देखकर आज्ञा दें।
राजा ने बिना कुछ देखे–भाले और विचार किए आज्ञा दी कि उन दोनों को बंदीगृह में डाल दिया जाए। भगवान श्री सत्यनारायण जी की माया से किसी ने भी उनकी बात नहीं सुनी। राजा चन्द्रकेतु की आज्ञा से उनका सारा धन भी छीन लिया गया। उधर भगवान के शाप के कारण वैश्य की पत्नी भी दुःखी हो गई। उसके घर की सारी सम्पत्ति चोर ले गए। वह शरीर से रूग्ण होकर चिन्तित अवस्था में अन्न के लिए घर–घर भटकने लगी। पहनने–ओढ़ने की क्या कहें, घर में खाने को अन्न का दाना तक नहीं रहा। ऐसी ही हाल उसकी पुत्री कलावती का भी था।

एकस्मिन्दिवसे याता क्षुधार्ता द्विजमन्दिरम्। गत्वाऽपश्यद् व्रतं तत्र सत्यनारायणस्य च।।34।। उपविश्व कथां श्रुत्वा वरं प्रार्थितवत्यपि। प्रसादभक्षणं कृत्वा ययौ रात्रौ गृहं प्रति।।35।। माता कलावतीं कन्यां कथयामास प्रेमतः। पुत्रि रात्रौ स्थिता कुत्र किं ते मनसि वर्तते।।36।। कन्या कलावती प्राह मातरं प्रति सत्यवरम्।। द्विजालयं व्रतं मातर्दृष्टं वांछित सिद्धिदम्।।37।।

एक दिन भूखी–प्यासी कलावती एक ब्राह्मण के यहां गई, जहां उसने भगवान सत्यनारायण जी का व्रत व पूजन होते देखा। उसने वहां बैठकर बड़ी श्रद्धा से कथा सुनी और प्रसाद लेकर रात को अपने घर लौटी। घर आने पर उसकी मां ने पूछा–'बेटी! इतनी रात गए तक तू कहां थी तथा तेरे मन में क्या है?'

कलावती ने मां को बताया–' मैंने एक ब्राह्मण के घर पर सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाले भगवान सत्यनारयण का व्रत होते देखा है। मैं भी वहीं थी और श्रद्धापूर्वक कथा श्रवण कर रही थी।'

तच्छ्रुत्वा कन्यकावाक्यं व्रतं कर्तुं समु। ता। सा मुदा तु वणिग्भार्या सत्यनारायणस्य च।।38।।
व्रतं चक्रे सैव साध्वी बन्धुभिःस्वजनै सह। भर्तृजामातरौ क्षिप्रमागच्छेतां स्वाश्रमम्।।39।।
अपराधं च मे भर्तुर्जामातुः क्षंतुमर्हसि। व्रतेनानेन तुष्टोऽसौ सत्यनारायणः प्रभुः।।40।।
दर्शयामास स्वप्नं ही चन्द्रकेतुं नृपोत्तमम्।। बन्दिनौ मोचय प्रातर्वणिजौ नृपसत्तम।।41। देयं धनं च तत्सर्वं गृहीतं यत्त्वयाऽधुना। नो चेत्त्वां नाशयिष्यामि सराज्य धनपुत्रकम्।।42।।

कन्या की बात सुनकर वैश्य की पत्नी को तत्काल स्मरण हो आया कि उसके पति ने व्रत करने का संकल्प लिया था, किन्तु आज तक व्रत नहीं किया। उसने सोचा कि सम्भव है, इसीलिए हम पर यह कष्ट आ गए हों। यह सोचकर उसने तत्काल निर्णय लिया कि अपनी पुत्री के साथ वह भी इस व्रत को करेगी। दूसरे ही दिन लीलावती ने अपने बंधु–बांधवों के साथ व्रत किया और भगवान सत्यदेव से प्रार्थना की कि उसके पति व जमाता शीघ्र लौट आएं और प्रभू सत्यनारायण उनके अपराध को क्षमा करें। लीलावती द्वारा किए गए व्रत और उसकी प्रार्थना को सुनकर भगवान सत्यदेव प्रसन्न हो गए। उसी रात उन्होंने स्वप्न में राजा चन्द्रकेतु को दर्शन देकर आज्ञा दी कि हे राजा! सवेरा होते ही उन दोनों वैश्यों को मुक्त कर दे तथा उनका छीना हुआ धन भी लौटा दे। यदि ऐसा नहीं करेगा तो मैं धन और पुत्रों सहित तेरे राज्य का नाश कर दूंगा।
एवमाभाष्यराजानं ध्यानगम्योऽभवत्प्रभुः। ततः प्रभातसमये राजा च स्वजनैः सह।।43।।
उपविश्य सभामध्ये प्राह स्वप्नं जनं प्रति। बद्धौ महाजनौ शीघ्रं मोचय द्वौ वणिक्सुतौ।।44।।
इति राज्ञो वचः श्रुत्वा मोचयित्वा महाजनौ। समानीय नृपस्याग्रे प्राहुस्ते विनयान्विताः।।45।।
आनीतौ द्वौ वणिक्पुत्रौ मुक्तो निगडबंधनात्। ततो महाजनौ नत्वा चंद्रकेतुं नृपोत्तम्।।46।।
स्मरंतौ पूर्ववृत्तांत नोचतुर्भयविहव्लौ। राजावणिक्सुतौ वीक्ष्य वचः प्रोवाच सादरम्।।47।।

इतना कहकर भगवान अंतर्धान हो गए। सुबह राजा की आंख खुली तो उसने सभी सभासदों को अपने स्वप्न के विषय में बताया। फिर आदेश दिया कि चोरी के अपराध में बंदी उन वैश्यों को तत्काल छोड़ दिया जाए और हमारे समक्ष लाया जाए। सिपाही आदर सहित उन दोनों को राजा के समक्ष ले आए। दोनों ने नम्रता से राजा को नमस्कार किया।

वे डर रहे थे कि राजा न जाने अब क्या आज्ञा दे दें, लेकिन उन्हें देखकर बड़े ही आदर भाव से राजा ने कहा–

देवात्प्राप्तं महद्दुःखमिदानीं नास्ति वै भयम्। तदा निगडसंत्याग क्षौर कर्मा। कारयत्।।48।।

वस्त्रालंकारकंदत्त्वा पारितोष्य नृपच्श्र तौ। पुरस्कृत्य वणिक्पुत्रौ वचमातोषयद्भृशम्।।49।। पुरानीतं तुयद्द्रव्यं द्विगुणीकृत्य दत्तवान्। प्रोवाज तौ ततो राजा गच्छ साधो निजाश्रमम्।।50।। राजानं प्रणिपत्याह गंतव्यं त्वप्रसादतः। इत्युक्त्वा तौ महावैश्यौ जग्मतुः स्वगृहं प्रति।।51।।

'भगवान ने आपको कष्ट दिया है, किन्तु अब डरने की कोई बात नहीं है।' यह कहकर राजा ने बेड़ियां कटवाकर उनकी हजामत वगैरह बनवाई और गहनों–वस्त्रों से उन्हें अलंकृत कर उनकी प्रशंसा की। उनका जो धन छीना था, उससे दुगना देकर उन्हें विदा किया।

दोनों ने राजा को प्रणाम किया तथा धन लेकर खुशी–खुशी अपने घर को चल लिए।''

इति श्रीस्कन्द पुराणे रेवाखण्डे सत्यनारायण व्रत कथायां तृतीयोऽध्यायः समाप्तः।
श्रीस्कन्द पुराण के रेवाखण्ड की सत्यनारयण व्रत कथा का तृतीय अध्याय पूर्ण हुआ।
बोलो सत्यनारायण भगवान की जय।
श्रीमान् नारायण, नारायण, नारायण, लक्ष्मी नारायण, नारायण, नारायण।

चतुर्थोऽध्यायः

सूत उवाच–यात्रां तु कृतवान् साधुर्मग्ङलायनपूर्विकाम्। ब्राह्मणेभ्यो धनं दत्त्वा तदा तु नगरं ययौ।।1।। कियद्दूरं गते साधौ सत्यनारायणः प्रभुः। जिज्ञासां कृतवान् साधो किमस्ति तव नौस्थितम्।।2।। ततो महाजनौ मत्तौ हेलया च प्रहस्य वै। कथं पृच्छसि भो दण्डिन् मुद्रां नेतुं किमच्छसि।।3।। लता पत्रादिकं चैव वर्तते तरणौ मम। निष्ठुरं च वचः श्रुत्वा सत्यं भवतु ते वचः।।4।।

सूत जी बोले–''इस प्रकार साधु नामक वैश्य मंगल स्मरण करके और ब्राह्मणों को दक्षिणा आदि देकर अपने घर चल दिया। अभी वह कुछ ही दूर चला था कि भगवान सत्यनारायण ने साधु वैश्य की मनोवृत्ति जानने के उद्देश्य से दंडी का वेश धारण कर उससे पूछा–'हे वैश्य! तेरी नाव में क्या है?'

धन के मद में चूर वैश्य ने कहा–'हे दंडी स्वामी! क्या तुम्हें मुद्रा चाहिए। मेरी नाव में तो बेल पत्र भरे हैं।'
वैश्य के ऐसे निष्ठुर वचन सुनकर दंडी वेशधारी भगवान सत्यनारायण ने कहा–'हे वैश्य! तुम्हारा कहना सत्य हो।'

एवमुक्त्वा गतः शीघ्रं दंडी तस्य समीपतः। कियद् दूरं ततो गत्वा स्थितः सिन्धुसमीपतः।।5।। गते दंडिनि साधुच्श्र कृतनित्यक्रियस्तदा। उत्थितां तरणिं दृष्ट्वा विस्मयं परमं ययौ।।6।। दृष्ट्वा लतादिकं चैव मूर्च्छितोन्यप तद्भुवि। लब्धसंज्ञोवणिक्पुत्रस्ततच्श्रितान्वितोऽभवत्।।7।। तदा तु दुहितः कांतो वचनंचेदमब्रवीत्। किमर्थं क्रियते शोकः शापो दत्तच्श्र दंडिना।।8।। शक्यते तेन सर्वं हि कर्तुं चात्र न संशयः। अतस्तच्छरणंयामो वाञ्छितार्थो भविष्यति।।9।।

इतना कह दंडी वैश्य के पास से हटकर कुछ दूर समुद्र के किनारे जाकर बैठक गए। दंडी के जाने के बाद साधु ने महसूस किया कि नाव काफी हल्की हो गई है और कुछ फूली हुई लग रही हैं। वह बहुत चकित हुआ और कपड़ा हटाकर देखा। धन के स्थान पर बेल–पत्र देखकर उसे मूर्च्छा आ गई। उसके जमाता ने उसे सम्भाला और जल आदि छिड़ककर होश में लाया। होश में आने पर वह अपने धन के लिए विलाप करने लगा। तब उसके दामाद ने कहा–'इस प्रकार शोक क्यों करते हैं? यह उस दंडी स्वामी का शाप है। वह दंडी सर्व–समर्थ हैं, इसमें संशय नहीं। उनकी शरण में चलिए, वहां जाने पर ही मनवांछित फल मिलेगा।'

जामातुर्वचनं श्रुत्वा तत्सकाशं गतस्तदा। दृष्ट्वा च दंडिनं भक्त्या नत्वा प्रोवाज सादरम्।।10।। क्षमस्व चापराधं मे यदुक्तं तव सिन्नधौ। एवं पुनः पुनर्नत्वा महाशोकाकुलोऽभवत्।।11।। प्रोवाच वचनं दण्डी विलपन्तं विलोक्य च। मा रोदीः शृणु मद्वाक्यं मम पूजाबहिर्मुखः।।12।। ममाज्ञया च दुर्बुद्धे लब्धं दुःखं मुहुर्मुहुः। तच्छ्रुत्वाभगवद्वाक्यं स्तुति कर्तुं समु। तः।।13।। साधु उवाच–त्वश्रवायामोहिताः सर्वे ब्रह्मा। ास्त्रिदिवौकसः। न जानंति गुणन् रूपं तवाश्चर्यमिदं प्रभो।।14।।

दामाद का कहना मानकर वैश्य दंडी स्वामी की शरण में गया और प्रणाम कर आदरपूर्वक बोला–'हे प्रभु! मैंने जो कुछ भी आपसे कहा था, उसके लिए मुझे क्षमा कर दें।' ऐसा कहते समय वह महाशोक से व्याकुल हो उठा।

वैश्य को रोते देखकर दंडी स्वामी ने कहा–'रोओ मत! सुनो साधु! तुम मेरी पूजा से विमुख हुए हो। हे कुबुद्धि! इसलिए मेरी आज्ञा से ही तू बार–बार दुःख भोग रहा है।' अब वैश्य को सारी बात समझ में आ गई। वह विनती करते हुए बोला–'हे प्रभु! आपकी माया को तो ब्रह्मादि भी नहीं समझ सके, फिर मैं भला आपकी लीला को कैसे समझ सकता हूँ? ब्रह्मादि भी आपके अद्भुत रूप व गुणों को नहीं जानते।

मूढ़ोऽहंत्वां कथं जाने मोहितस्तव मायया। प्रसीद पूजयिष्यामि यथा विभवविस्तरैः।।15।। पुरा वित्तं च तत्सर्वं त्राहि माम् शरणागतम्। श्रुत्वा भक्तियुतं वाक्यं परितुष्टो जनार्दनः।।16।। वरं च वांछितं दत्त्वा तत्रैवान्तर्दधे हरिः। ततो नावं समारूह्य दृष्ट्वा वित्तप्रपूरिताम्।।17।। कृपया सत्यदेवस्य सफलं वांछितं मम। इत्युक्त्वा स्वजनैः सार्धं पूजां कृत्वा यथाविधिः।।18। हर्षेण चाभवत्पूर्णः सत्यदेवप्रसादतः। नावं संयोज्ययंतेन स्वदेशगमनं कृतम्।।19।।

हे प्रभु! मुझ पर प्रसन्न हों। मैं माया से भ्रमित मूढ़ बुद्धि आपको कैसे पहचान सकता हूं। मैं अपनी समार्थ्य अनुसार आपकी पूजा करूंगा, कृप्या प्रसन्न हों। हे प्रभु! मेरा धन जैसा पहले था, वैसा ही कर दें। मैं आपकी शरण में हूं, मेरी रक्षा करें।'

वैश्य के ऐसे भक्तियुक्त वचनों को सुनकर भगवान सत्यनारायण प्रसन्न हुए और वैश्य को मनचाहा वर देकर अंतर्धान हो गए। तब वैश्य अपनी नाव पर आया तो उसने उसे धन से भरी पाया। वह बोला–' भगवान सत्यदेव की कृपा से मेरी मनोकामना पूर्ण हुई हैं।' फिर उसने अपने जमाता और साथियों सहित भगवान सत्यनारायण की पूजा की। भगवान सत्यदेव की कृपा पाकर साधु बहुत प्रसन्न हुआ। फिर नाव द्वारा अपने देश को चल दिया।
साधुर्जामातरं प्राह पश्य रत्नपुरीं मम। दूतं च प्रेषयामास निजवित्तस्य रक्षकम्।।20।। ततोऽसौ नगरं गत्वा साधुभार्यां विलोक्य च। प्रोवाच वांछितं वाक्यं नत्वा बद्धांजलिस्तदाः।।21।। निकटे नरस्यैव जामात्रा सहितो वणिक्। आगतो बन्धुवर्गेच्श्र वित्तैच्श्र बहुभिर्यतुः।।22।। श्रुत्वा दूतखाद्वाक्यं महाहर्षवती सती। सत्यपूजां ततः कृत्वा प्रोवाच तनुजां प्रति।।23।। व्रजामि शीघ्रमागच्छ साधुसंदर्शनाय च। इति मातृवचः श्रुत्वा व्रतं कृत्वा समाप्य च।।24।।

अपने नगर के तट पर पहुंचकर उसने एक दूत को अपने घर भेजा। दूत ने साधु वैश्य के घर जाकर बताया कि आपके पति व जमाता सकुशल लौट आए हैं। यह जानकर वैश्य की पत्नी लीलावती अति प्रसन्न हुई। उस समय वह अपनी पुत्री के साथ भगवान सत्यनारायण की कथा व पूजन कर रही थी। कथा समाप्त कर उसने प्रसाद ग्रहण किया और अपनी पुत्री से बोली–'बेटी! मैं जाकर तेरे पिता को देखती हूं, तू प्रसादि ग्रहण करके आ जाना।' कहकर वह चली गई।
कन्या ने काम समाप्त किया और बिना प्रसाद व चरणामृत ग्रहण किए वह भी अपने पति से मिलने चल दी।
प्रसादं च परित्यज्य सापि पतिं प्रति। तेन रूष्टः सत्यदेवो भर्तारं तरणिं तथा।।25।। संह्रत्य च धनैः। सार्धं जले तस्यावमज्जयत्। ततः कलावती कन्या न विलोक्य निजं पतिम्।।26।। शोकेन महता तत्र रूदती चापतद् भुवि। दृष्ट्वा तथा निधां नावं कन्या च बहुदुःखिताम्।।27।। भीतेन मनसा साधुः किमाच्श्रर्यमिदं भवेत्। चिंत्यमानाच्श्रते सर्वेबभूवुस्तरणिवाहकाः।।28।। ततो लीलावती कन्यां दृष्ट्वा सा विव्हलाभवत्। विललापातिदुःखेन भर्तारं चेदमब्रवीत।।29।।

प्रसाद ग्रहण न करके वह पति के पास पहुंची। इस प्रकार प्रसाद का अपमान करते देख भगवान सत्यदेव रूष्ट हो गए। उन्होंने उसके पति तथा धन से भरी नाव को जल में डूबो दिया। यह देखकर कन्या को बड़ा दुःख हुआ और वह चक्कर खाकर भूमि पर गिर पड़ी। नाव को डूबते तथा कन्या मूर्च्छित देखकर साधु को बड़ा आश्चर्य हुआ। मल्लाह भी अचरच करने लगे। लीलावती बेटी की ऐसी हालत देखकर बड़ी व्याकुल हुई और अपने पति से बोली–
इदानीं नौकयासार्धं कथंसोऽभूदलक्षितः। न जाने कस्य देवस्य हेलया चैव सा ह्रता।।30।। सत्यदेवस्य माहात्म्यं ज्ञातु वा केन शक्यते। इत्युक्त्वा विललापैव ततच्श्र स्वजनैः सह।।31।।

ततो लीलावती कन्यां क्रौडे कृत्वा रूरोदह। ततः कलावती कन्या नष्टे स्वामिनिदुःखिता।।32।। गृहीत्वापादुके तस्यानुगतुंचमनोदधे। कन्यायाच्श्ररितं दृष्ट्वा सभार्यः सज्जनोवणिक्।।33।। अतिशोकेनसंतप्ताच्श्रिन्तयामास धर्मवित्। हृतं वा सत्यदेवेन भ्रांतोऽहं सत्यमायया।।34।।

हे स्वामी! नाव सहित जमाता कहां और कैसे गायब हो गए। मुझे तो लगता है कि यह अवश्य ही किसी देवता का कोप है। आखिर भगवान सत्यनारायण की लीला को कौन समझ सका है।' यह सुनकर वह पुत्री के साथ विलाप करने लगी। उसकी पुत्री ने कहा कि वह भी अपने पति के वियोग में यहीं जलसमाधि ले लेगी।

यह देखकर वैश्य दुःखी हुआ। उसे समझते देर नहीं लगी कि यह सब भगवान सत्यदेव के कुपित हो जाने के कारण ही हुआ है। पुत्री या पत्नी से अवश्य ही कोई भूल हुई है। आखिर उनकी माया को कौन समझ सकता है। मैं स्वयं उनकी माया से मोहित हूं।
सत्यपूजां करिष्यामि यथाविभवविस्तरैः। इतिवान् सर्वान् समाहूय कथयित्वा मनोरथम्।।35।। नत्वा च दंडवद् भूमौसत्यदेवं पुनःपुनः। ततस्तुष्टः सत्यदेवो दीनानां परिपालकः।।36।। जगाद वचनंचैनं कृपया भक्तवत्सलः। त्यक्त्वा प्रसादं ते कन्यापतिं द्रष्टुं समागता।।37।। अतोऽदृष्टोऽभवत्तस्याः कन्यकायाः पतिर्ध्रुवम्। गृहं गत्वा प्रसादं च भुक्त्वा साऽऽयति चेत्पुनः।।38।। लब्धभर्त्रीसुता साधो भविष्यति न संशयः। कन्यका तादृशं वाक्यं श्रुत्वा गगनमण्डलात्।।39।।

उसने उन्हें अपने पास बुलाकर अपनी शंका व्यक्त की ओर बोला—''मैं विधि—विधान से भगवान सत्यनारायण का पूजन करूंगा, वे मेरी पुत्री को क्षमा करें।'

वह बार—बार भगवान से क्षमा—याचना करने लगा तो भगवान सत्यदेव उस पर प्रसन्न हो गए। तभी भविष्यवाणी हुई—'हे साधु! तेरी पुत्री मेरा प्रसाद छोड़कर अपने पति को देखने आई थी। इसी कारण इसका पति नौका सहित अदृश्य हो गया है। यदि यह घर जाकर प्रसाद ग्रहण करके लिए आए तो इसका पति इसे अवश्य ही मिल जाएगा, इसमें कोई संशय नहीं है।' वैश्य की पुत्री ने भी यह भविष्यवाणी सुनी।
क्षिप्रं तदा गृहं गत्वा प्रसादं च बुभोज सा। सा पच्श्रात् पुनरागम्य ददर्श सुजनं पतिम्।।40।। ततः कलावती कन्या जगाद पितरं प्रति। इदानीं च गृहं याहि विलम्बं कुरूषेकथम्।।41।। तच्छ्रुत्वा कन्यकावाक्यं संतुष्टोऽतः। पूजनं सत्यदेवस्य कृत्वा विधिविधानतः।।42।। धनैर्बन्धुगणैः सार्द्धं जगाम निजमन्दिरम्। पौर्णमास्यां च संक्रान्तौ कृतवान्सत्यपूजनम्।।43।। इहलोके सुखं भुक्त्वा चान्ते सत्यपुरं ययौ। अवैष्णवानामप्राप्यं गुणत्रयविवर्जितम्।।44।।

वह तत्काल घर गई और प्रसाद गहण किया। जब कन्या लौटकर आई तो उसका पति सही—सलामत वहां उपस्थि था। यह देखकर वह बहुत प्रसन्न हुई और पिता से बोली—'हे पिताजी! अब घर को चलिए, अब क्या देर है।'

हे बेटी! हमें भगवान सत्यदेव का पूजन करना है।' कहकर साधु ने सबके साथ मिलकर भगवान सत्यनारायण की कथा व पूजन किया। फिर अपने बंधु—बांधवों व जमाता सहित घर आ गया। उस दिन के बाद से वह प्रत्येक पूर्णिमा व संक्रांति को भगवान

सत्यनारायण का पूजन करते हुए उनके सुख भोगता हुआ अंत में भगवान सत्यनारायण के बैकुंठ लोक चला गया जो देवताओं के लिए भी दुर्लभ है तथा जहां सत्, रज, तम तीनों गुण अप्रभावी रहते हैं।''

इति श्रीस्कन्द पुराणे रेवाखण्डे सत्यनारायण व्रत कथायां चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः।

श्रीस्कन्द पुराण के रेवाखण्ड की सत्यनारायण व्रत कथा का चतुर्थ अध्याय पूर्ण हुआ।

बोलो सत्यनारायण भगवान की जय।

श्रीमन् नारायण, नारायण, नारायण, लक्ष्मी नारायण, नारायण, नारायण।

पंचमोऽध्यायः

सूत उवाच–अथान्यच्श्र प्रवक्ष्यामि श्रृणुध्वं मुनिसत्तमाः।। आसीत् तुग्ङध्वजो राजा प्रजापालनतत्परः।।1।। प्रसादं सत्यदेवस्य त्यक्ता दुःखमवाप सः।। एकदा स वनं गत्वा हत्वा बहुविधान्पशून्।।2।। आगत्य वटमूलं च दृष्ट्वा सत्यस्य पूजनम्।। गोपाः कुर्वंति संतुष्टा भक्तियुक्ताः सबांधवाः।।3।। राजा दृष्ट्वा तु दर्पेण न गत्वा न ननाम सः।। ततो गोपगणाः सर्वे प्रसादं नृपसन्निधौ।।4।।

सूत जी ने कहा–''हे मुनिगणो सुनो! अब मैं तुम्हें इससे आगे की कथा सुनाता हूँ। तुंगध्वज नामक एक राजा था जो अपनी प्रजा का संतान की भांति पालन करता था। किन्तु भगवान सत्यनारायण का प्रसाद न लेने से उसे भी बहुत दुःख उठाने पड़े थे। एक दिन राजा शिकार खेलने के लिए वन में गया, जहां उसने बहुत से जीवों का शिकार किया। वहीं एक वटवृक्ष के नीचे उसने कुछ ग्वालों को भगवान सत्यनारायण का पूजन करते देखा। किन्तु गर्व के कारण न तो वह पूजन स्थल तक गया और न ही भगवान को प्रणाम किया। फिर भी गोप–ग्वाले प्रसाद लेकर राजा के पास गए।

संस्थाप्य पुनरागत्यं भुक्त्वा सर्वे यथेप्सितम्।। ततः प्रसादं संत्यज्य राजा दुःखमवाप सः।।5।। तस्य पुत्रशतं नष्टं धनधान्यादिकं च यत्। सत्यदेवेन पतत्सर्वं नाशित मम निश्चितम्।।6।। अतस्तत्रैव गच्छामि यत्र देवस्य पूजनम्। मनसा तु विनिश्चित्य ययौ गोपालसन्निदौ।।7।। ततोऽसौ सत्यदेवस्य पूजां गोपगणैःसह। भक्ति श्रद्धान्वितो भूत्वा चकारविधिना नृपः।।8।। सत्यदेव प्रसादेन धनपुत्रान्वितोऽभवत्। इहलोके सुखं भुक्त्वा चांते सत्यपुरं ययौ।।9।।

प्रसाद राजा के समीप रखकर वे पूजन स्थल को लौट गए। राजा ने प्रसाद की ओर देखा भी नहीं, जिसके कारण उसे बड़ा ही दुःख भोगना पड़ा। उसके सौ पुत्र, धन–धान्य व राज्य सभी कुछ नष्ट हो गए। अतः राजा वहीं पहुंचा जहां भगवान सत्यदेव का पूजन हो रहा था। वहां जाकर राजा ने ग्वाल–बालों के संग भगवान सत्यनारायण का पूजन किया और क्षमा–याचना की। इससे भगवान सत्यनारायण प्रसन्न हो गए। उनकी कृपा से उसे पुत्रादि सब कुछ पुनः प्राप्त हो गया। फिर इस जीवन में सुख भोगकर अंत में वह सत्यनारायण भगवान के लोक को चला गया।

यह इदं कुरूते सत्यव्रतं परमदुर्लभम्। श्रृणोति च कथां पुण्यां भक्तियुक्तः फलप्रदाम्।।10।। धनधान्यादिकं तस्य भवेत्सत्यप्रसादतः। दरिद्रोलभते वित्तं बद्धी मुच्येत बंधनात्।।11।। भीतो भयात्प्रमुच्येत सत्यमेव न संशयः। ईप्सितं च फलं भुक्त्वा चांते सत्यपुरं व्रजेत्।।12।। इति वैकथितं विप्राः सत्यनारायणं व्रतम्। यत्कृत्वा सर्वदुःखेभ्यो मुक्तो भवति मानवः।।13।। विशेषतः कलियुगे सत्यपूजा फलप्रदा। केचित्कालं वदिष्यंति सत्यमीशं तमेवच।।14।।

इस परम दुर्लभ सत्यनारायण व्रत को जो भी धारण करता है और इसकी फलदायी कथा को भक्तिपूर्वक सुनता है, उसे श्री सत्यनारायण की कृपा से भरपूर धन–धान्य आदि प्राप्त होते हैं। दरिद्र धन पाते हैं, बंदी बंधनों से मुक्त हो जाते हैं, भयग्रस्त का भय मिट जाता है, यह निःसंदेह सत्य है। इस कथा व व्रत के प्रभाव से व्यक्ति जीवन भर सुख भोगकर अंत में सत्यलोक को पाता है। हे विप्रो! यह मैंने सत्यनारायण व्रत की कथा कही। इसके प्रभाव से व्यक्ति सब बंधनों से मुक्त हो जाता है। यह व्रत–पूजन कलियुग में विशेष फलदायी है।

सत्यनारायणं केचित्सत्यदेवं तथापरे। नानारूपधरो भूत्वा सर्वेषामीप्सित प्रदः।।15।। भविष्यति कलौ सत्यव्रतरूपी सनातनः। श्रीविष्णुना धृतं रूपं सर्वेषामीप्सितप्रदम्।।16।। य इदं पठते नित्यं श्रृणोति मुनिसत्तमाः। तस्य नश्यन्ति पापानि सत्यदेवप्रसादतः।।17।। व्रतं यस्तु कृतं पूर्वं सत्यनारायणस्य च। तेषां त्वपरजन्मानि कथयामि मुनीश्रव्राः।।18।। सतानंदो महाप्राज्ञः सुदामा ब्राह्मणो ह्यभूत। तस्मिन् जन्मनि श्रीकृष्णं ध्यात्वा मोक्षमवापह।।19।।

भगवान सत्यनारायण अलग–अलग समय में अलग–अलग रूप धरकर अपने भक्तों को सुख पहुंचाते हैं। कोई उन्हें काल कहता है, कोई ईश्वर। कोई सत्यदेव तो कोई सत्यनारायण। अनेक रूप धरकर भी वे मनचाहा फल देने वाले हैं। कलियुग में सत्यव्रतरूपी सनातन सत्यनारायण ही होंगे। सभी को मनचाहा फल देने के लिए भगवान विष्णु ने सत्यनारायण का रूप धर लिया है। हे मुनिगण! जो इस कथा का नित्य पाठ करेंगे अथवा सुनेंगे, श्री सत्यनारायण की कृपा से उनके समस्त पाप नष्ट हो जाएंगे।''

सूत जी बोले–''हे मुनीश्वरो! जिन्होंने सत्यनारायण का व्रत पहले किया था, उनके अलगे जन्म की कथा सुनाता हूँ। सुनो, महान बुद्धिमान शतानंद ब्राह्मण सुदामा हुआ और श्रीकृष्ण की आराधना कर मोक्ष को प्राप्त हुआ।

काष्ठभारवहो भिल्लो गुहराजो बभूव ह। तस्मिञ्जन्मनिसंसेव्य रामं मोक्षं जगाम वै।।20।। उल्कामुखो महाराजो नृप दृशरथोऽभवत्। श्रीरगङ्नाथं संपूज्य श्रीवैकुंठं तदाऽगमत्।।21।। धार्मिकः सत्यसन्धश्च्र साधुर्मोरध्वजोऽभवत्। देहार्धंक्रकचैश्छित्त्वा दत्वा मोक्षमवाप है।।22।। तुग्ङध्वजो महाराजः स्वायंभुरभवत्किल। सर्वान्भागवतान् कृत्वा श्री वैकुंठं तदाऽगमत्।।23।।

लकड़ी बेचने वाला लकड़हारा भील गुहराज बना और श्रीरामजी की सेवा कर मोक्ष का अधिकारी हुआ। राजा उल्कामुख महाराज दशरथ हुए और श्री रंगनाथ की पूजा कर बैकुंठवासी हुए। साधु नामक वैश्य सत्यव्रतधारी मोरध्वज राजा बना। वह आधा शरीर आरे

से चीरकर दान देने के कारण मोक्ष को प्राप्त हुआ। राजा तुंगध्वज स्वयंभुव मनु हुए। वे सभी को वैष्णवपथ पर लगा, भागवत बना बैकुंठ को गए।

इति श्रीस्कन्द पुराणे रेवाखण्डे सत्यनारायण व्रत कथायां पंचमोऽध्यायः समाप्तः।

श्रीस्कन्द पुराण के रेवाखण्ड की सत्यनारायण व्रत कथा का पंचम अध्याय पूर्ण हुआ।

बोलो सत्यनारायण भगवान की जय।

श्रीमन् नारायण, नारायण, नारायण, लक्ष्मी नारायण, नारायण, नारायण।

इसके बाद भगवान् सत्यनारायण आरती करे प्रसाद वितरण करे

अभ्यास प्रश्न –

1. सत्यनारायण व्रत कथा में कितने अध्याय है?
2. भगवान सत्यनारायण का विधिपूर्वक व्रत करने से तत्काल ही किसकी प्राप्ती होती है ?
3. भगवान सत्यनारायण का विधिपूर्वक व्रत करने से अंत में प्राणी किसका अधिकारी हो जाता है?
4. चौथे अध्याय में कितने श्लोक है?
5. पॉचवे अध्याय में कितने श्लोक है?

भगवान् सत्यनारायण की आरती –

नमोऽस्त्वन्ताय सहस्रमूर्तये, सहस्रपादाक्षिशिरोरु बाहवे।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः।।
जय लक्ष्मीरमणा, श्रीलक्ष्मीरमणा।
सत्यनारायण स्वामी जन–पातक–हरणा।। जय०।। टेक।।
रत्नजटित सिंहासन अद्भुत छबि राजै।
नारद करत निराजन घण्टा ध्वनि बाजै।। जय०।।
प्रकट भये कलि कारण, द्विजको दरस दियो।
बूढ़े ब्राह्मण बनकर कञ्चन महल किया।। जय०।।
दुर्बल भील कठारो, जिनकी विपत्ति हरी।। जय०।।
वैश्य मनोरथ पायो, श्रद्धा तज दीन्हीं।
सो फल भोग्यो प्रभुजी फिर अस्तुति कीन्हीं।। जय०।।
भाव–भक्ति के कारण छिन छिन रूप धर्यो।
श्रद्धा धारण कीनी, तिनको काज सर्यो।। जय०।।
ग्वाल–बाल सँग राजा, वन में भक्ति करी।
मनवाञ्छित फल दीन्हों दीनदयालु हरी।। जय०।।
चढ़त प्रसाद सवायो कदलीफल, मेवा।
धूप–दीप–तुलसी से राजी सत्यदेवा।। जय०।।
सत्यनारायणजी की आरती जो कोई नर गावै।
तन–मन–धन सम्पति मन–वाञ्छित फल पावै।। जय०।।

ॐ भूभुर्वः स्वः विष्णवे नमः, आरार्तिकं समर्पयामि।(पुष्पांजलि अर्पित करे।) आरती के बाद जल गिरा दे।

पुष्पाञ्जलि – (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर भगवान् विष्णु की प्रार्थना करे) :–

ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

ॐ भूभुर्वः स्वः विष्णवे नमः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, पुष्पांजलिं समर्पयामि।(पुष्पांजलि अर्पित करे।)

1.4 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि समस्त वेदादि शास्त्रों में नित्य और नैमित्तिक कर्मों को मानव के लिये परम धर्म और परम कर्तव्य कहा है। संसार में सभी मनुष्यों पर तीन प्रकार के ऋण होते हैं–देव–ऋण, पितृ–ऋण और मनुष्य(ऋषी)ऋण। नित्य कर्म करने से मनुष्य तीनों ऋणों से मुक्त हो जाता है इस लिये मनुष्य अपने ऋणों से मुक्त होने के लिये कर्मकाण्ड का अध्ययन करता है तथा अपने जीवन में इसको पालन करता है। क्योंकि अपने ऋणों से मुक्त कर्मकाण्ड के माध्यम से ही होसकता है और उसके पास दूसरा कोई रास्ता नही है। इस लिये कर्मकाण्ड का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् भगवान सत्यनारायण का विधिपूर्वक व्रत करने से तत्काल ही सुख प्राप्त होता है और अंत में प्राणी मोक्ष का अधिकारी हो जाता है।'श्री विष्णु के मुख से ऐसे प्रीतियुक्त वचन सुनकर नारद जी ने पूछा–'प्रभु! इस व्रत के करने से क्या फल प्राप्त होता है, इसकी विधि और समय क्या है तथा इसे पहले किस–किसने किया है। कृपा कर यह सभी विस्तारपूर्वक बताएं।' विष्णु भगवान ने कहा–'हे नारद! यह व्रत दुःख और शोक को दूर करने वाला है। इससे धन–धान्य में वृद्धि होती है तथा सौभाग्य व संतान की प्राप्ति होती है। प्राणी को चारों दिशाओं में विजयश्री दिलाने वाले इस व्रत को व्यक्ति किसी भी दिन पूर्ण श्रद्धा व भक्ति से कर सकता है।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

शब्द	अर्थ
गुहराजः	गुहराजा
बभूव	हुए
तस्मिन्	उसमें
रामं मोक्षं	राम मोक्ष को
जगाम	गये
उल्कामुखो	उल्कामुख नाम का राजा
नृप	राजा

अभवत्	हुए
श्रीरग्ङनाथं	श्रीरंगनाथ को
संपूज्य श्रीवैकुंठं	पूजा करके
तदाऽगमत्	तब गये
धार्मिकः	धार्मिक

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सत्यनारायण व्रत कथा में पॉच अध्याय है।
2. भगवान सत्यनारायण का विधिपूर्वक व्रत करने से तत्काल ही सुख की प्राप्ती होती है।
3. भगवान सत्यनारायण का विधिपूर्वक व्रत करने से अंत में प्राणी मोक्ष का अधिकारी हो जाता है।
4. चौथे अध्याय में चौवालीस श्लोक है।
5. पॉचवे अध्याय में तेईस श्लोक है।

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सत्यनारायणव्रत कथा – लेखक – शिवदत्त मिश्र
   प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
2. सर्वदेव पूजापद्धति – लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र
   प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी
3. धर्मशास्त्र का इतिहास, लेखक – डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
   प्रकाशक :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।
4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश, लेखक :– पं. बिहारी लाल मिश्र,
   प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर।
5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा, संकलन ग्रन्थ
   प्रकाशक :– मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।
6 कर्मठगुरुः , लेखक – मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
   प्रकाशक – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती, सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
   प्रकाशक – राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी, सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
   प्रकाशक – अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।
9 विवाह संस्कार, सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
   प्रकाशक – हंसा प्रकाशन, जयपुर

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1.पुस्तक का नाम–सत्यनारायण व्रत कथा, लेखक – शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.सत्यनारायण व्रत की पूजन विधि को लिखिए ।

2. सत्यनारायण व्रत कथा लिखिए ।

इकाई - 2 महामृत्युञ्जय जप

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

कर्मकाण्ड से सम्बन्धित खण्ड दो की यह दूसरी इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि महामृत्युञ्जय क्या है? महामृत्युञ्जय भगवान शिव का अमोघ अस्त्र है, जिसका प्रयोग जन मानस के लिये अपात परिस्थितियों में कहा गया है।

भगवान शिव के प्रसन्नार्थ इस महामृत्युञ्जय मन्त्र का निर्माण ऋषियों के द्वारा किया गया है।

इससे पूर्व की इकाई में आपने सत्यनारायण व्रत कथा को समझ लिया है, इस इकाई में आप महामृत्युञ्जय मन्त्र को समझेगें।

2.2 उदेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप वेदशास्त्र से वर्णित महामृत्युंजय मन्त्र के विषय में अध्ययन करेंगे तथा समझेगें कि -

1. महामृत्युञ्जय क्या है।
2. महामृत्युञ्जय मन्त्र का प्रयोग कब किया जाता है।
3. महामृत्युञ्जय मन्त्र का उच्चारण कैसे किया जाता है।
4. पूजन की विधि क्या है।
5. महामृत्युञ्जय मन्त्र का महत्व क्या है।

2.3 महामृत्युञ्जय मन्त्र

आगे के पृष्टों में विभिन्न प्रकार की पूजा प्रणाली का प्रस्तुती करण किया गया है जो कि महामृत्युंजय मन्त्र से संजीवनी के लाभ प्रदान करने में पूर्णतः सक्षम है। इसी पूजन प्रणाली के बाद प्रयोग समर्पण से पहले साधक गण स्तोत्र कवचादि का पाठ करके समुचित लाभ उठाते हैं परन्तु कभी–कभी यह उपासना काम्य उपासना के रूप में भी की जाती है

काम्य उपासना में महामृत्युंजय मन्त्रों का जपादि किया जाता है। इसमें कौन कौन से मन्त्र जपे जाते हैं यह तथ्य सर्वसाधारण के लिये जान लेना अत्यधिक आवश्यक है अतः ध्यान दे कि–

महामृत्युञ्जय एकाक्षरी मन्त्र (ह्रौं)।

महामृत्युञ्जय का त्र्यक्षरीमृत्युञ्जय मन्त्र (**ॐ जूं सः**)।

महामृत्युञ्जय का चतुरक्षरी मन्त्र (**ॐ वं जूं सः**)।

महामृत्युञ्जय का नवाक्षरी मन्त्र (**ॐ वं जूं सः पालय पालय**)।

महामृत्युञ्जय का दशाक्षरी मन्त्र (**ॐ वं जूं सः मां पालय पालय**)।

इस मन्त्र का स्वयं के लिये जप इसी भाँति होगा। यदि किसी अन्य व्यक्ति के लिये यह

जप किया जा रहा हो तो (मां) के स्थान पर उस व्यक्ति का नाम लें।

महामृत्युञ्जय का पंचदशाक्षरी मन्त्र (**ॐ वं जूं सः मां 'या अमुकं' पालय पालय सः जूं ॐ**)।

महामृत्युञ्जय का द्वात्रिंशाक्षरी मन्त्र वेदोक्त मन्त्र है जो कि निम्नलिखित है–

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवदर्धनम्। उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्त्योर्मुक्षीय मामृतात्॥

उपरोक्त द्वात्रिंशाक्षरी मन्त्र का विचार –

इस मन्त्र में आये प्रत्येक शब्द का अर्थ स्पष्ट करना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि शब्द ही मन्त्र है और मन्त्र ही शक्ति है। इस मन्त्र में से सबसे पहले 'त्र' शब्द
आता है यह शब्द ध्रुव शब्द का बोधक है।

इसके बाद **'यम'** शब्द आता है जो कि अध्वर वसु का बोधक है।

इसी प्रकार 'ब' शब्द सोम वसु का

'कम' वरुण का।

'य' वायु का ।

'ज' अग्नि का।

'म' शक्ति का ।

'हे' प्रभास का।

'सु' वीरभद्र का।

'ग' शम्भु का।

'न्धि' गिरीश का।

'पु' अजैक का।

'ष्टि' अहिर्बुध्न्य का।

'व' पिनाक का।

'र्ध' भवानी पति का ।

'नम' कपाली का ।

'उ' दिकपति का।

'र्वा' स्थानु का।

'रु' मर्ग का

'क' धाता का ।

'मि' अर्यमा का।

'व' मित्र अदित्य का।

'ब' वरुण अदित्य का

'न्ध' अंशु का।

'नात' भग अदित्य का।

'मृ' विवस्वान का।

'त्यो' इन्द्र अदित्य का ।
'मु' पुष अत्यि का।
'क्षी'पर्यन्य अदित्य का।
'य' त्वष्टा का।
'मा' विष्णु अदित्य का।
'मृ' प्रजापति का।
'तात' वषट् का बोधक है।
इस मन्त्र के स्पष्टीकरण में अनेक गूढ़तायें हैं क्योंकि यही वो वेदोक्त

महामृत्युञ्जय मन्त्र है जो कि संजीवनी वि। ा है ।

यहॉ पर मै इसी द्वात्रिंशाक्षरी वेदोक्त मन्त्र के शब्द की शक्ति का स्पष्टी करण करता हूँ।
'त्र' त्र्यम्बक शब्द त्रि शक्ति तथा त्रिनेत्र का प्रतीक है। यह शब्द तीनों देव अर्थात् ब्रह्मा , विष्णु और महेशर की भी शक्ति का प्रतीक है।
'य' यम तथा यज्ञ का प्रतीक है
'म' मंगल का ।ोतक है।
(यहा पर 'य' तथा 'म' को संलग्न करके यम कहे जाने पर मृत्यु के देवता का प्रतीक हो जाता है)
'ब' बालार्क तेज का बोधक है।
'कं' काली का कल्याणमयी बीज है। काली का एकाक्षरी बीज 'क्रीं' है और उन्हें ककार सर्वांगी माना जाता है।
'य' उपरोक्त वर्णन के अनुसार यम तथा यज्ञ का ।ोतक है।
'जा' जालंधरेश का बोधक है।
'हे' हाकिनी का बोधक है।
'सु' सुप्रभात सुगन्धि तथा सुर का बोधक है।
'गं' गणपति बीज हाने के साथ–साथ ऋद्धि–सिद्धि का दाता है।
'ध' धूमावती का बीज है जो कि अलक्ष्मी का अथात् कंगाली को हटाता है देह को पुष्ट करता है।
'म' महेश का बोधक है।
'पु' पुण्डरीकाक्ष का बोधक है।
'ष्टि' देह में स्थित षट्कोणों का बोधक है जो कि देह में प्राणें का संचार करते है।
'व' वाकिनी का ।ोतक है।
'र्ध' धर्म का ।ोतक है।
'नं' नंदी का बोधक है।
'उ'उमा रूप में पार्वती का बोधक है।
'र्वा' शिव के वॉये शक्ति का बोधक है।
'रु' रूप तथा ऑसु का बोधक है।
'क' कल्याणी का ।ोतक है।

'व' वरुण का बोधक है।
'बं' बंदी देवी का ।ोतक है।
'ध' धंदा देवी का ।ोतक है। इसके कारण देह के विकास समाप्त होते हैं तथा मांस सड़ता नही है।
'मृ' मृत्युंजय का ।ोतक है।
'त्यो' नित्येश का ।ोतक है।
'मु' मुक्ति का ।ोतक है।
'क्षी' क्षेमकरी का बोधक है।
'य' पूर्व वर्णित बोधन।
'मा' आने के लिये मॉग तथा मन्त्रेश का ।ोतक है।
'मृ' पूर्व वर्णित।
'तात' चरणों में स्पर्श का ।ोतक है।

यह पूर्ण विवरण 'देवं भूत्वा देवं यजेत' के अनुसार पुर्णतः सत्य प्रमाणित हुआ है। इस मन्त्र में 32 शब्दों प्रयोग हुआ है।और इसी मन्त्र में **ऊँ लगा देने से 33 हो जाते है। इसे त्रयस्त्रिशाक्षरी मन्त्र कहते है। श्री वसिष्ठ जी ने इन 33 शब्दों के 33 देवता अर्थात् शक्तियॉ निश्चित की है जो निम्न लिखित है।**
इस मन्त्र में 8 वसु, 11रुद्र, 12 आदित्य, 1 प्रजापति तथा 1 वषट् को मना है।
महामृत्युंजय का तान्त्रिक बीजोक्त मन्त्र निम्नलिखित है–

ऊँ भूः भुवः ऊँ स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवद्र्धनम्।

उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्त्योर्मुक्षीय मामृतात्॥ ऊँ स्वः ऊँ भुवः ऊँ भूः ऊँ।।

महामृत्युंजय का संजीवनी मन्त्र अर्थात् संजीवनी वि।ा निम्न लिखित हैं।
ऊँ ह्रौं ऊँ जूं सः भूर्भुवः स्वः ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।

उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्त्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ ऊँ स्वः ऊँ भुवः भूः ऊँ सः जूं ह्रौं ऊँ॥

महामृत्युंजय का एक और प्रभावशाली मन्त्र निम्न है।
ऊँ ह्रौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।

उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्त्योर्मुक्षीय मामृतात्॥ ऊँ स्वः भुवः भूः ऊँ सः जूं ह्रौं ऊँ॥

:: अथवा ::
ऊँ ह्रौं ऊँ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।

उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्त्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ भूर्भुवः स्वरों जूं सः ह्रौं ऊँ॥

इस मन्त्र को महामृत्युञ्जयमन्त्र कहते हैं। अब आप अपनी सुविधा के अनुसार जो भी मन्त्र चाहे चुन ले। और नित्य पाठ में या आवश्यकता के अनुसार प्रयोग में लाएँ।

सदा स्मरण रखें कि –जो भी मन्त्र जपना हो उस जप को शुद्ध तथा शुद्धता से करें। एक निश्चत संख्या में जप करें। पूर्व दिवस में जपे गये मन्त्रों से आगामी दिनों में कम मन्त्र न जपें यदि चाहे तो अधिक मन्त्र जप सकते हैं परन्तु स्मरण यही रखना है कि भूतकाल से वर्तमान काल के मन्त्र कम न हो।

मन्त्र का उच्चारण होंठों से बाहर नही आना चाहिये यदि अभ्यास न होने के कारण यह विधि प्रयुक्त न हो सके तो धीमे स्वर में जप करें।

जप काल में धूप–दीप जलता रहे।
रुद्राक्ष की माला से ही जप करे।
माला को गोमुखी में ही रखें। जब तक जप की संख्या पूर्ण न हो, माला को गोमुखी से न निकालें।
जप काल में शिवजी की प्रतिमा , शिवलिंग या यन्त्र समक्ष रखना चाहिये
महामृत्युञ्जयमन्त्र के सभी जप कुश या कम्बल के आसन पर बैठकर करें।
जिस स्थान पर जपादि का शुभारम्भ हो वही पर आगामी दिनों में भी जप करना चाहिये ।
जप काल में मन को मन्त्र से मिलाएँ।
मिथ्या सम्भाषण न करें।
स्त्री सेवन न करे।
आलस्य जम्भाई यथाशक्ति त्याग दें।
महामृत्युञ्जयमन्त्र के सभी प्रयोग पूर्व दिशा के तरफ मुख करके ही करें।
जपकाल में दुग्ध मिले जल से शिव जी का अभिषेक करते रहे या शिवलिंग को चढ़ाते रहे।

जप संख्या का नियम

किसी प्रकार से महामारी , जैसे–हैजा, प्लेग, शीतला या अन्य प्रकार के महा उपद्रवों के शान्ति के लिये महामृत्युंजय का **एक करोड़** जप करना चाहिये। जब सामान्य रोग हो, पुत्र प्राप्ति के लिये , स्त्री प्राप्ति के लिये , पति प्राप्ति के लिये , सवालाख जप करना चाहिये। अपमृत्यु का भय हो , भय की आशंका हो तो दश हजार का जप करना चाहिये। यात्रा में यदि भय उपस्थि हो तो एक हजार जप करना चाहिये।

जप के लिये विशेष

यः शास्त्रविधि मृत्सृज्य वर्तते काम कारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं नपरांगितम्।।

इस महावाक्यानुसार शास्त्र की विधि के अनुसार पूजन अर्चन करना चाहिये। मनमानी ढंग से करना या कराना हानि प्रद होता है। प्रयोग कराने के समय शुभ मुहुर्त चन्द्र तारा आदि बलों को दिखाकर तब अनुष्ठान –पुरश्चरण प्रयोग कराना चाहिये। प्रयोग कराते समय शिवमन्दिर देवालयसिद्धस्थान, नदीतट , बिल्व, अश्वस्थवृक्ष के स्थान पर सफाई कराकर अनुष्ठान कराना चाहिये। देवालय, सिद्धस्थान शिवमन्दिर में तो पार्थिवेश्वर की कोई आवश्यकता नही है– किन्तु और सभी स्थानों पाथिवेश्वर शिवलिंग निर्माण करके ही महामृत्युंय आदि का जप विधान सहित करना चाहिये।

प्रयोग पुरश्चरणात्मक हो तो प्रतिदिन की संख्या समान होनी चाहिए, किसी दिन जप अधिक किसी दिन कम नहीं होना चाहिए–इसी प्रकार ब्राह्मण भी प्रतिदिन उतनी ही संख्या में रहें जितनों में प्रथमदिन पुरश्चरण प्रारम्भ किया हो, इसमें उलट– फेर–कमी–बेशी करने से विक्षिप्तता का भय रहता है। जपसंख्या पूर्ण होने पर अर्थात् पुरश्चरण समाप्ति पर जितना जप हुआ हो उसका दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण,तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश या कार्यानुसार न्यूनाधिक रूप में ब्राह्मण भोजन कराना चाहिये

शिवपूजन विधि

शिवालय देवालय वा पार्थिवेश्वर शिलिंग के समीप बैठकर पूजन सामग्री का सम्प्रोक्षण करके आचमन प्रणायाम करे–सर्वप्रथम गौरी गणेश का पूजन करके शिवलिंग का पूजन करे।

एक लकड़ी की चौकी के ऊपर गणेश, षोडशमातृका, सप्तमातृका स्थापित करे। दूसरी चौकी पर नवग्रह, पञ्चलोकपाल आदि स्थापति करे। तीसरी चौकी के उपर सर्वतोभद्र बनाकर बीच में शंकर जी को स्थापित करे। ईशान कोण में घी का दीपक रखे और अपने दायें हाथ में पूजा सामग्री रख लेवे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख बैठे। कुंकुम (रोली) का तिलक करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन आरम्भ करे।

पवित्रीकरण–(अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए कलश के जल से अपने उपर तथा पूजनादि की सामग्रियों पर जल छिडके) :–

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।
ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु , ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु , ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ,

आचमन (तीन बार आचमन करे) :–
ऊँ केशवाय नमः। ऊँ नारायणाय नमः। ऊँ माधवाय नमः।

प्राणायाम :–

गोविन्दाय नमः बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे–धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करे।

पवित्रीधारणम् –

ॐ पवित्रेस्त्थो व्वैष्णव्यौसवितुर्व्वः प्रसव उत्पन्नुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्स्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम्।।

सपत्नीक यजमान के ललाट में स्वस्तितिलक लगाते हुए मन्त्र को बोले–

ऊँ स्वस्तिन इन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।
ऊँ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पाश्र्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि नौव्व्यात्तम्।
इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

ग्रन्थिबन्धन– (लोकाचार से यजमान का सपत्नीक ग्रन्थिबन्धन करे) :–

ऊँ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः।
नाकङ्गृब्भ्णानाः सुकृतस्यलोके तृतीयपृष्ठेऽअधिरोचने दिवः।।

आसनपूजन (आसन की पूजा करे) :–

ऊँ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।
ऊँ कूर्मासनाय नमः।
ऊँ अनन्तासनाय नमः।
ऊँ विमलासनाय नमः। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

भूतापसारण (बायें हाथ में सरसों लेकर उसे दाहिने हाथ से ढककर निम्न मन्त्र पढ़े) –
रक्षोहणं व्वलगहनं व्वैष्णवीमिदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे निष्ट्यो ममात्यो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे समानोमसमानो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सबर्न्धुम सबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सजातो मसजातो निचखानोत्कृत्याङ्क्रामि।

ऊँ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे।।

निम्न मन्त्रों को पढते हुए सरसों का सभी दिशाओं में विकिरण करे :–
प्राच्यैदिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा दक्षिणायै दिशेस्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहोर्द्ध्वायै दिशेस्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः। दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।
पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः। उत्तरे श्रीधरो रक्षेद् ऐशान्ये तु गदाधरः।।
ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः। एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

कर्मपात्र पूजन् (ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को अक्षतपुञ्ज पर स्थापित करते हुए पूजन करे) :–

ऊँ तत्वाामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः।
अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश समानऽ आयुः प्रमोषीः।। ऊँ वरुणाय नमः।
पूर्वे ऋग्वेदाय नमः। दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः।
पश्चिमे सामवेदाय नमः। उत्तरे अथर्ववेदाय नमः।
मध्ये साङ्गवरुणाय नमः। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

अंकुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्सर्वाणि तीर्थानि आवाहयेत् (दायें हाथ की मध्यमा अङ्गुली से जलपात्र में सभी तीर्थों का आवाहन करे) :–

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु।।
कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।।
अश्च सहिताः सर्वे कलशाम्बु समाश्रिताः।
गायत्री चात्र सावित्री शान्तिः पुष्टिकरा तथा।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।

उदकेन पूजासामग्रीं स्वात्मानं च सम्प्रोक्षयेत् (पात्र के जल से पूजन सामग्री एवं स्वयं का प्रोक्षण करे) :–

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे।।
योवः शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हनः। उशतीरिवमातरः।।
तस्म्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ आपोजनयथाचनः।।

दीपपूजनम् (देवताओं के दाहिने तरफ घी एवं विशेष कर्मों में बायें हाथ की तरफ तेल का दीपक जलाकर पूजन करना चाहिए) :–

अग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्रा देवतादित्त्या देवता मरुतो देवता विश्श्वे देवा देवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता।

ऊँ दीपनाथाय नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि (गन्ध अक्षत पुष्प दीपक के सामने छोडे।)

प्रार्थनाः–(हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर अधोलिखित श्लोक को पढते हुए दीपक के सामने छोड़े

ऊँ भो दीप देवस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत।
यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव।।

सर्वप्रथम शिवपूजन की अधिकार प्राप्ति के लिये प्रायश्चित्तरूप में गोदान का संकल्प करना चाहिये

प्रायश्चित संकल्प हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर प्रायश्चित संकल्प करे–

हरिः ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ऊँ तत्सद| ैतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अ| श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्तौ (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं क्रियमाण महामृत्युञ्ज्य जपकर्मणि अधिकार प्राप्त्यर्थं कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकचतुर्विधपापशमनार्थं शरीरशुद्धयर्थं गोनिष्क्रयद्रव्यं '''''''''गोत्राय''''''''शर्मणे आचार्याय भवते सम्प्रददे (ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य ब्राह्मण के हाथ में देदे।

मंगल पाठ –हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करें) :–

ऊँ आनो भद्राः क्रतवो यन्तु व्विश्वतो दब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः। देवानो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवोरक्षितारो दिवेदिवे।।१।। देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवाना रातिरभिनोनिवर्त्तताम्। देवाना सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयं देवानऽआयुः प्प्रतिरन्तुजीवसे।।२।। तान्पूर्वया निविदाहूमहे व्वयं भगम्मित्रमदितिं दक्षमस्रिधम्। अर्यमणं व्वरुण सोममश्विना सरस्वती नः सुभगामयस्करत्।।३।। तन्नोव्वातो मयो भुव्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता | ैः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्।।४।। तामीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पति–न्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषा नो यथा व्वेदसामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।५।। स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषाव्विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्यो ऽ अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु।।६।। पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो व्विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्वामनवः सूरचक्षसो व्विश्वेनोदेवाऽअवसा गमन्निह।।७।। भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा œ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः।।८।। शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा त्रा नश्चक्रा जरसंतनूनाम्। पुत्रासो यत्र

पितरो भवन्ति मानो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः।।६।। अदिति ौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवा ऽ अदितिः पञ्चजना ऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम्।।१०।। ौः शान्तिरन्तरिक्ष œ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। व्वनस्पतयः शान्ति व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व œ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि।।११।। यतो यतः समीहसे ततो नो ऽ अभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योभयन्नः पशुभ्यः।।१२।। सुशान्तिर्भवतु।। **(अक्षत–पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)**

गणपत्यादि देवानां स्मरणम्– (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करे)

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजगर्णकः। लम्बोदरश्च विकटोविघ्ननाशो विनायकः। धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि। वि ारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे संकटे चौव विघ्नस्तस्य न जायते। शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये। अभीप्सितार्थ सिध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः। सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः। सर्वमङ्ग्ल माङ्ग्ल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते। सर्वदा सर्व कार्येषु नास्ति तेषाममङ्ग्गलम्। येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः। तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव। वि ाबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि। लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः। येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः। यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम। सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रि भुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः। विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानी मणिकर्णिकाम्। विनायकं गुरुभानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान्। सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थ सिद्धये।ऊँ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। ऊँ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ऊँ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ऊँ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ऊँ शचीपुरन्दराभ्यां नमः। ऊँ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। ऊँ सर्वपितृदेवताभ्यो नमः। ऊँ इष्टदेवताभ्यो नमः। ऊँ कुलदेवताभ्यो नमः। ऊँ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ऊँ स्थानदेवताभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ऊँ गुरवे नमः। ऊँ परमगुरवे नमः। ऊँ परात्परगुरवे नमः। ऊँ परमेष्ठिगुरवे नमः।(अक्षत–पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे) ।

संकल्प–हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर संकल्प करे–

हरिः ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ऊँ तत्सद ैतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अ श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्तौ (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं (ब्राह्मण के लिए

शर्मा, क्षत्रिय के लिए वैश्य, वैश्य के लिए गुप्ता, शूद्र के लिए दासान्त) सपुत्रस्त्रीबान्धवो अहं मम जन्मलग्नाच्चन्द्रलग्नाद् वर्ष मास दिन गोचराष्टक वर्गदशान्तर्दशादिषु चतुर्थाष्टं द्वादशस्थान् स्थित क्रूरग्रहास्तेषां अनिष्टफल शान्ति पूर्वकं द्वितीयसप्तम् एकादशस्थानस्थित सकल शुभफल प्राप्त्यर्थं श्री महामृत्युञ्जय रुद्रदेवता प्रीत्यर्थं यथा (शत सहस्र अयुत लक्ष कोटयादि) संख्याक श्री मन्महामृत्युञ्जय मन्त्र जपम् अहं करिष्ये (वा ब्राह्मण द्वारा कारयिष्ये) ।ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।
पुनः हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर बोले –

तदंगत्वेन कार्यस्य सिद्ध्यर्थं आदौ गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये। ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।

पूजा में जो वस्तु वि। मान न हो उसके लिये 'मनसा परिकल्प्य समर्पयामि' कहे। जैसे, आभूषणके लिये 'आभूषणं मनसा परिकल्प्य समर्पयामि' ।)

सर्वप्रथम गणपति का पूजन आप कर ले।

शिवपूजन

शिव जी का आवाहन ध्यान – (हाथ में अक्षत पुष्प लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर छोड़े)

ऊँ ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसम्
रत्नाकल्पोज्ज्वलांगं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानम्

विश्वा। ं विश्ववन्। ं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्।।

ऊँ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः
शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय शिवतराय च।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः शिवाय नमः सांगाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय शिवम् आवाहयामिध्यायामि स्थापयामि पूजयामि। (क्षत पुष्प को शंकर जी के उपर छोड़ दे)

प्रतिष्ठापनम्:– (हाथ में अक्षत लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर छोड़े

ऊँ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्ज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ज्ञ œ समिमन्दधातु।
विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामोम्प्रतिष्ठ।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः। सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेताम्

आसनम् –(हाथ में पुष्प लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर छोड़े

ऊँ पुरुष ऽ एवेद œ सर्व्वंद्भूतँच्च भाव्व्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पा। म् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर छोडे

ऊँ एतावानस्य महिमातोज्ज्यॉँश्चपूरुषः।
पादोस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः पादप्रक्षालनार्थं पा। ं समर्पयामि।

अर्घ्यम् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर छोडे

ऊँ धामन्तेव्विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्तः समुद्रेह्र। न्त रायुषि।

अपामनीकेसमिथेय ऽ आभृतस्तमश्याम मधुमन्तन्त ऽ ऊर्म्मिम्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीयम् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर छोडे

सर्वतीर्थ समायुक्तं सुगन्धिनिर्मलं जलम्।

आचम्यार्थं मया दत्तं गृहाण गणनायक।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः मुखे आचमनीयं समर्पयामि।

जलस्नानम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर जल छोडे

ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्यसि

वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः स्नानार्थे जलं समर्पयामि।।

पञ्चामृत स्नानम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर पंचामृत से स्नान करावे

पयो दधिघृतं चैव मधुं च शर्करायुतम्।

सरस्वती तु पञ्चधासो देशेभवत्सरित्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः मिलितपञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदक स्नानम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर शुद्ध जल से स्नान करावे)

ऊँ शुद्धवालः सर्व शुद्धवालो मणिवालस्त ऽ आश्विनः श्येतः

श्येताक्षो रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्णायामा अवलिप्ता रौद्रानभोःरूपाः पार्ज्जन्न्याः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

वस्त्रोपवस्त्रम्–(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर रक्त सूत्र चढावे)

ऊँ सुजातोज्ज्योतिषा सहशर्म्म व्वरुथमासदत्स्वः।

व्वासो ऽ अग्रे विश्वःप œ सँव्ययस्वव्विभावसो।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर यज्ञोपवीत चढावे)

ऊँ ब्रह्मज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोव्वेनऽआवः।

सबुद्धन्याऽउपमा अस्यव्विष्ठाः सतश्च्चयोनिमसतश्चव्विवः।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

चन्दनम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर चन्दन चढावे)

ऊँ अ œ शुना ते अ œ शुः पृच्यतां परुषा परुः।

गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युतः।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः चन्दनकुंकुमञ्च समर्पयामि।

अक्षताः –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर अक्षत चढावे)

ऊँ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽअधूषत।

अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठ्ठयामती योजान्विन्द्रते हरी।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः अलङ्करणार्थम् अक्षतान् समपर्यामि।

पुष्प (पुष्पमाला) –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर पुष्पमाला अथवा पुष्प चढावे)

ऊँ ओषधिः प्रतिमोदद्ध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः।
अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्ण्वः।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः पुष्पाणि समर्पयामि।

दुर्वाङ्कुरम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर दूर्वा चढावे)

ऊँ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।
एवा नो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः दूर्वाङ्कुराणि समर्पयामि।

बिल्वपत्रम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर बिल्वपत्र चढावे)

ऊँ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्मिणे च वथिने च नमः
श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुब्भ्याय चाहनन्याय च।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः बिल्वपत्राणि समर्पयामि।

सुगन्धितद्रव्यम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर इत्र चढावे)

ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात्।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि।

सिन्दूरम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर सिन्दूर चढावे)

ऊँ सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्रमियः पतयन्ति ह्यवाः।
घृतस्य धारा ऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः सिन्दूरं समर्पयामि।

नानापरिमलद्रव्याणि ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर अवीर चढावे)

ऊँ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुञ्ज्याया हेतिं परिबाधमानः।
हस्तग्घ्नो व्विश्वाव्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा œ सम्परिपातुव्विश्वतः।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः परिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर धूप दिखावे)

धूरसि धूर्व्वधूर्व्वन्तं धूर्व्व तोस्म्मान् धूर्वतितन्धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः।
देवानामसि व्वह्नितम œ सस्न्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः धूपम् आघ्रापयामि।

दीपम् –––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी को दीप दिखावे)

ऊँ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिज्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।
अग्निर्व्वर्चोज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्यो वर्च्चोज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा।
ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः दीपकं दर्शयामि।

हस्तौ प्रक्षाल्य। (इसके बाद हाथ धोये)

नैवे। म् –––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी को भोग लगावे)

ऊँ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष œ शीर्ष्णो । ैः समवर्त्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ २ अकल्पयन्।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः नैवे। ं निवेदयामि। मध्ये जलं निवेदयामि। (इसके बाद पॉच बार जल चढावे)

ऋतुफलम् –––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर फल चढावे)

ऊँ याः फलनीर्या ऽ अफला ऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हसः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः फलं निवेदयामि। पुनः आचमनीयं निवेदयामि।(इसके बाद पुनः जल चढावे)

ताम्बूल–मन्त्र बोलते हुए लवंग,इलायची, सोपारी सहित पान का पत्ता शिव जी के उपर चढावे ।

ॐयत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मःशरद्धविः।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः मुखवासार्थं एलालवंगपूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि। (इलायची,लौंग–सुपारी सहित ताम्बूल को चढाये)

दक्षिणा–(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी के उपर दक्षिणा चढावे)

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातःपतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं **।** ामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः,कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।(द्रव्य दक्षिणा समर्पित करें।)

पुष्पांजलि–मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर शिव जी को पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

मन्त्र परिचय :–

मननात् मन्त्रः अर्थात् जिसका मनन किया जाये वह मन्त्र है। यदि किसी भी सामान्य वाक्य का बारम्बार उच्चारण किया जाये तो वह श्रवणकर्ता के मन–मस्तिष्क में अवश्य पहुँच जाता है, इसी प्रकार वैदिक मन्त्रों के बारम्बार जप से देवताओं तक साधक की वाणी अवश्य पहुँचती है। वैदिक मन्त्रों में छन्द व लय का विशेष महत्त्व होता है, अतः गुरु के निर्देशन में मन्त्रों का अभ्यास करना चाहिए। प्रत्येक उच्चारित शब्द/ध्वनि अमर है, ब्रह्माण्ड़ में अनेकों शब्द विचरण करते रहते है इसीलिए शास्त्रों ने शब्द को ही ब्रह्म का स्वरूप माना है। शरीर में घार्षणिक वि। ुत् प्रवाह होता रहता है तथा मस्तिष्क में धारावाही वि। ुत् प्रवाहित होती रहती है। मन्त्रोच्चार से इन दोनों वि। ुत् का संयोग होता है, यही मन्त्र की शक्ति है। मन्त्रों से हमारा आत्मबल स्वतः वृद्धि को प्राप्त होता है।

अभ्यास प्रश्न –

प्रश्न – १ : मन्त्र का निर्माण सामान्यतः किस धातु अथवा पत्र पर किया जाता है?
प्रश्न – २ : सामान्यतः मन्त्र के निर्माण में किस स्याही का उपयोग किया जाता है
प्रश्न – ३ ऊँ 'ऐं ह्रीं अक्ष–मालिकायै नमः इस मन्त्र से किसकी पूजा की जाती है?
प्रश्न – ४ : साधना के मुख्य भेद बताईये ?
प्रश्न – ५ : करन्यास से आप क्या समझते है ?

अथ श्रीगणेशषडक्षर मन्त्र–जपविधिः

किसी भी देवता के मन्त्रजाप से पूर्व गणेशमन्त्र के 108 (न्यूनतम) जप परम आवश्यक है। इसके पश्चात् ही कार्यसिद्धि होती है। जप के पूर्व एवं पश्चात् दोनों ही समय जप करना परम आवश्यक है।

हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए जल को गीरावें

ऊँ अस्य श्री गणेशमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः विघ्नेशो देवता वं बीजं, यं शक्तिः हुँ कीलकम् सर्वार्थसिद्धये जपे विनियोगः॥

ऋष्यादिन्यासः –

ऊँ भार्गव ऋषये नमः शिरसि (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।
ऊँ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे (दाहिने हाथ से मुख को स्पर्श करे)।
ऊँ विघ्नेशदेवतायै नमः हृदि (दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)।
ऊँ वं बीजाय नमः गुह्ये (दाहिने हाथ से गुदा को स्पर्श करे)।
ऊँ यं शक्त्ये नमः पादयोः दाहिने हाथ से दोनो पैर को स्पर्श करे)।
ऊँ हुँ कीलकाय नमः सर्वाङ्गे (दाहिने हाथ से पुरे शरीर को स्पर्श करे)।

करन्यासः –

ऊँ वं अंगुष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अंगूठों का स्पर्श करे) ।
ऊँ क्रं तर्जनीभ्याँ नमः (दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ तुँ मध्यमाभ्याँ नमः(अंगूठों से मध्यमा अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ डाँ अनामिकाभ्याँ नमः (अंगूठों से अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ यं कनिष्ठिकाभ्याँ नमः (अंगूठों से कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ हुँ करतलकरपृष्ठाभ्याँ नमः(हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का परस्पर स्पर्श करे) ।

षडङ्गन्यासः

ऊँ वं नमः हृदयाय नमः (दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)
ऊँ क्रं नमः शिरसे स्वाहा (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।
ऊँ तुं नमः शिखायै वषट् (दाहिने हाथ से शिखा को स्पर्श करे)।
ऊँ डां नमः कवचाय हुँ (दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कन्धे का और बायें हाथ की अंगुलियों से दाहिने कन्धे का साथ ही स्पर्श करे)।
ऊँ यं नमः नेत्रत्रयाय वौषट् (दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों और ललाट के मध्य भाग को स्पर्श करे)।
ऊँ हुँ नमः अस्त्रायफट् यह वाक्य पढकर दाहिने हाथ को सिर के उपर से बायी ओर से पीछे की ओर लेजाकर दाहिनी ओर से आगे की ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये)।

वर्णन्यासः –

ऊँ वं नमः भ्रुवोर्मध्ये (दाहिने हाथ से भ्रुव के मध्य को स्पर्श करे)।
ऊँ क्रं नमः कण्ठे (दाहिने हाथ से कण्ठ को स्पर्श करे)।
ऊँ तुं नमः हृदये दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)।
ऊँ डां नमः नाभौ(दाहिने हाथ से नाभी को स्पर्श करे)।
ऊँ यं नमः लिङ्गे (दाहिने हाथ से लिंग को स्पर्श करे)।
ऊँ हुँ नमः पादयोः(दाहिने हाथ से दोनों पैरों को स्पर्श करे)।

ऊँ वक्रतुण्डाय हुँ सर्वाङ्गे(दाहिने हाथ से सभी अंगों को स्पर्श करे)।
हाथों में पुष्प लेकर अधोलिखत श्लोक को पढते हुए गणेश जी का प्रार्थना करे

ऊँ उ। द्दिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मैः,

पाशाङ्कुशाभयवरान्दधतं गजास्यम्।
रक्ताम्बरं सकलदुःखहरं गणेशं,

ध्यायेत् प्रसन्नमखिलाः भरणाभिरामम्॥

जप हेतु माला का पूजन–मन्त्र :–
ऊँ 'ऐं ह्रीं अक्ष–मालिकायै नमः इस मन्त्र से माला की पूजा करे।
इसके बाद हाथों में माला लेकर अधोलिखत श्लोक को पढते हुए माला की प्रार्थना करे।
ऊँ मां माले महा–माये सर्व–शक्ति स्वःपिणि!
चतुवर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव।।
ऊँ अविघ्नं कुरु माले! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
जप–काले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये।।
ऊँ अक्ष–मालाधिपतये सुसिद्धिं देहि देहि सर्व–मन्त्रार्थ–साधिनि!
साधय साधय सर्वसिद्धिं परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहा।।१
इसके बाद ऊँ वक्रतुण्डाय हुँ। इस मन्त्र का 108 बार जप करे
इसके बाद महामृत्युञ्जय जप प्रारम्भ करे–
अथ त्र्यक्षरीमृत्युञ्जय–जपविधिः
हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए जल को गिरावें
ऊँ अस्य श्री त्र्यक्षरात्मकमृत्युञ्जय मन्त्रस्य कहोल ऋषिः, देवी गायत्री छन्दः श्री मृत्युञ्जयो देवता, जूं बीजं, सः शक्तिः श्रीः कीलकम् सर्वेष्ट्सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।
अङ्ग्न्यासः – कहोलऋषये नमः शिरसि। देवी गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। मृत्युञ्जयदेवतायै नमः हृदि। जूं बीजाय नमः गुह्ये। सः शक्त्ये नमः पादयोः।
करन्यासः – सां अगुष्ठाभ्यां नमः। सीं तर्जनीभ्यां नमः। सूं मध्यमाभ्यां नमः। सैं अनामिकाभ्यां नमः। सौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। सः करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः।
हृदयादिन्यासः – सां हृदयाय नमः। सीं शिरसे स्वाहा। सूं शिखायै वषट्। सैं कवचाय हुँ। सौं नैत्रत्रयाय वौषट्। सः अस्त्राय फट्।
ध्यानम् –

ऊँ चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तः स्थितं,
मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमाँशुप्रभम्।
कोटीरेन्दुगलत्सुधास्नुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलं,

कान्त्याविश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावयेत्॥

ऊँ जूं सः इति मूलमंत्रं जपेत्।

अथ महामृत्युञ्जय जपविधिः –

विनियोग करे–
हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए जल को गिरावें
ऊँ अस्य श्री महामृत्युञ्जयमन्त्रस्य वामदेवकहोलवसिष्ठऋषिः अनुष्टुप्छन्दः श्रीत्र्यम्बकरुद्रो देवता, श्रीं बीजं, ह्रीं शक्तिः मम वा यजमानस्य शरीरे सर्वारिष्ट् निवृत्तिपूर्वक सकलमनोरथ सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः –

ऊँ वामदेवकहोलवसिष्ठऋषिभ्यो नमः शिरसि (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।

ऊँ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे (दाहिने हाथ से मुख को स्पर्श करे)।

ऊँ श्रीत्र्यम्बकरुद्रदेवतायै नमः हृदये(दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)।

ऊँ श्रीं बीजाय नमः गुह्ये (दाहिने हाथ से गुदा को स्पर्श करे)।

ह्रीं शक्त्ये नमः पादयोः दाहिने हाथ से दोनो पैर को स्पर्श करे)।

करन्यासः –

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं ऊँ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।

(दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अंगूठों का स्पर्श करे) ।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः यजामहे ऊँ नमो भगवते रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय जीवय तर्जनीभ्यां स्वाहा।(दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श करे) ।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः सुगन्धिम्पुष्टिवदर्धनम् ऊँ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा मध्यमाभ्यां नमः।(अंगूठों से मध्यमा अंगुलियों का स्पर्श करे) ।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः उर्व्वारुकमिव बन्धनात् ऊँ नमो भगवते रुद्राय त्रिपुरान्तकाय ह्रां ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः। (अंगूठों से अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः मृत्योर्म्मुक्षीय ऊँ नमो भगवते रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजुः साममन्त्राय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। (अंगूठों से कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः मामृतात् ऊँ नमो भगवते रुद्राय अग्नित्रयाय ज्वल ज्वल मां रक्ष रक्ष अघोरास्त्राय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।(हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का परस्पर स्पर्श करे) ।

हृदयादिन्यासः –

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं ऊँ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा हृदयाय नमः।

(दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः यजामहे ऊँ नमो भगवते रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय जीवय शिरसे स्वाहा।

(दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँभूर्भुवः स्वः सुगन्धिम्पुष्टिवदर्धनम् ऊँ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा शिखायै वषट् । (दाहिने हाथ से शिखा को स्पर्श करे)।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः उर्व्वारुकमिव बन्धनात् ऊँ नमो भगवते रुद्राय त्रिपुरान्तकाय ह्रां ह्रीं कवचाय हुँ। (दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कन्धे का और बायें हाथ की अंगुलियों से दाहिने कन्धे का साथ ही स्पर्श करे)।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः मृत्योर्म्मुक्षीय ऊँ नमो भगवते रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजुः साममन्त्राय नेत्रत्रयाय वौषट्।(दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों और ललाट के मध्य भाग को स्पर्श करे)।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः मामृतात् ऊँ नमो भगवते रुद्राय अग्नित्रयाय ज्वल ज्वल मां रक्ष रक्ष अघोरास्त्राय अस्त्राय फट्। (यह वाक्य पढकर दाहिने हाथ को सिर के उपर से बायी ओर से पीछे की ओर लेजाकर दाहिनी ओर से आगे की ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये)।

वर्णादिन्यासः –

ऊँ त्र्यं नमः दक्षिणचरणाग्रे।
बं नमः, कं नमः, यं नमः, जां नमः दक्षिणचरणसन्धिचतुष्केषु।
ऊँ मं नमः वामचरणाग्रे।
हें नमः, सुं नमः, गं नमः धिं नमः वामचरणसन्धिचतुष्केषु।
पुं नमः गुह्ये। ष्टिं नमः आधारे।
वं नमः जठरे। र्द्धं नमः हृदये।
नं नमः कण्ठे। ऊँ उं नमः दक्षिणकराग्रे।
वां नमः, रुं नमः, कं नमः, मिं नमः, दक्षिणकरसन्धिचतुष्केषु।
ऊँ वं नमः वामकराग्रे।
बं नमः, धं नमः, नां नमः मृं नमः वामकरसन्धिचतुष्केषु।
त्यों नमः वदने। मुं नमः ओष्ठयोः।
क्षीं नमः घ्राणयोः। यं नमः दृशोः।
मां नमः श्रवणयोः। मृं नमः भ्रुवोः।
तां नमः शिरसि।

पदन्यासः –

ऊँ त्र्यम्बकं नमः शिरसि।
यजामहे भ्रुवोः।
सुगन्धिं दृशोः।
पुष्टिवर्द्धनम् मुखे।
उर्व्वारुकम् गण्डयोः।
इव हृदये।
बन्धनात् उदरे।
मृत्योः गुह्ये।
मुक्षीय उर्व्वोः।
मां जानवोः।
अमृतात् पादयोः।

ध्यानम् –

> **हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो,**
> **द्वाभ्यां वो दधतं मृगाऽक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परं।**
> **अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाशकान्तं शिवम्,**
> **स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटाभान्तं त्रिनेत्रं भजे।।**

जप–मन्त्रः –

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥ ऊँ स्वः भुवः भूः ऊँ सः जूं हौं ऊँ॥

:: अथवा ::

ऊँ हौं ऊँ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ भूर्भुवः स्वरों जूं सः हौं ऊँ॥

जप करना प्रारम्भ करें।

इस मन्त्र का यथा संख्य जप करे पुनः न्यास करे और जप भगवान्महामृत्युंजय रुद्र देवता के दक्षिण हस्त में समर्पण करें।

प्रार्थना–गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान् महेश्वरः।

क्षमाप्रार्थना– मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर शिव जी की क्षमा प्रार्थना करना।

करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवण नयनजं वा मानसं वाऽपराधम्। विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व। जयजय करुणाब्धे श्रीमहादेव! शम्भो!

अनेन श्री महामृत्युंजय जपाख्येन कर्मणा भगवान् श्री महामृत्युंजय साम्बसदाशिवाय प्रियतां न मम (हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढ़ते हुए जल को गिरावें)

अनेन जप सांगता सिद्धयर्थं यथा कामनाद्रव्येण महामृत्युंजय मन्त्रेण जपदशांश हवनं तद्दशांश तर्पणं, तद्दशांश मार्जनं, तद्दशांश ब्राह्मण भोजनं च करिष्ये।

शिवजी की आरती (अधोलिखित मन्त्र पढते हुए शिव जी की आरती करे)

कर्पूर गौरं करुणावतारं संसार सारं भुजगेन्द्रहारम।

सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि॥

ऊँ जय शिव ओंकारा हो शिव पार्वती प्यारा

ब्रह्मा विष्णु सदा शिव अर्द्धांगी धारा ॥ १॥ ऊँ हर हर हर महादेव॥

एकानन चतुरानन पञ्चानन राजै।

हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजै॥ २॥ ऊँ हर॥0

दोयभुज चार चतुर्भुज दशभुज ते सोहै।

तीनो रुप निरखता त्रिभुवनजन मोहै॥ ३॥ ऊँ हर॥0

अक्षमाला वनमाला रुण्डमाला धारी।

चन्दन मृगमद चन्दा भाले शुभकारी ॥४॥ ऊँ हर॥0

श्वेताम्बर पीताम्बर बाघम्बर अंगे।

सनकादिक प्रभुतादिक भूतादिक संगे॥ ५॥ ऊँ हर॥0

कर मध्ये कमण्डलु चक्र त्रिशूल धरता।

जगकर्ता जगहर्ता जगपालनकर्ता ॥ ६॥ ऊँ हर॥0

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका।

प्रणवाक्षर ऊँ मध्ये ये तीनों एका ॥ ७॥ ऊँ हर॥0

काशी मे विश्वनाथ विराजत नन्दी ब्रह्मचारी।

नित उठ भोग लगावत महिमा अतिभारी॥ ८॥ ऊँ हर॥0

त्रिगुण स्वामी की आरती जो कोई नर गावे।

भणत शिवानन्द स्वामी मनवाञ्छित फ ल पावै॥ ६॥ ऊँ हर॥0

ऊँ जै शिव ओंकङ्कारा, हो मन भज शिव ऊँकारा, हो मन रट शिव ओंकङ्कारा, हो शिव गलरुण्डन माला, हो शिव ओढ़त मृगछाला, हो शिव पीते भंग प्याला, हो शिव रहते

मतवाला, हो शिव पार्वतीप्यारा, हो शिव ऊपर जलधारा, जटा में गंगा विराजत, मस्तक पे चन्द्र विराजत रहते मतवाला॥ ऊँ हर.॥

ॐ भूभुर्वः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः, आरार्तिकं समर्पयामि। आरती के बाद जल गिरा दे।

पुष्पांजलि–मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर शिव जी को पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

ऊँ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्म्महे। स मे कामान् काम कामाय मह्य कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः॥

ऊँ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात।
सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावा भूमी जनयन् देव एकः॥

ऊँ एक दन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात ॥

ऊँ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥

ऊँ गणाम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि। तन्नो गौरी प्रचोदयात्॥

ऊँ कात्यायिन्यै विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि। तन्नो देवि प्रचोदयात

ऊँ दशरथाय विद्महे सीतावल्लभा च धीमहि। तन्नो राम् प्रचोदयात॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव वि। ा द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

ॐ भूभुर्वः स्वः श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः, पुष्पांजलिं समर्पयामि।(पुष्पांजलि अर्पित करे।)

प्रदक्षिणा –

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे॥

प्रणाम –

यो न पिता जनिता यो व्विधाता धामानि व्वेदभुवनानि व्विश्श्वा।
यो देवानान्नामधाऽएकऽएव त सम्प्रश्न्नम्भुवना यन्त्यन्न्या॥

क्षमा प्रार्थना –

आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम।
पूजां चौव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात् कारुण्य भावेन रक्ष मां परमेश्वर॥
मत्समो नास्ति पापिष्ठस्त्वत्समो नास्ति पापहा।

इति मत्वा दयासिन्धो यथेच्छसि तथा कुरू॥
मन्त्रेणाक्षर हीनेन पुष्पेण विकलेन च।

पूजितोऽसि महादेव तत्सर्वं क्षम्यतां मम॥
अयं दानकालस्त्वहं दानपात्रं भवानेव दाता त्वदन्यं न याचे।

भवद्भक्तिमन्तः स्थिरां देहि मह्यं कृपाशीलशम्भो कृतार्थोऽस्मि यस्मात्॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञ क्रियादिषु।

न्यूनं सम्पूर्णतां यातु स। ो वन्दे तमच्युतम्॥
अनेन पूजनेन साम्बसदाशिवाय प्रीयताम्।

विसर्जनम् –

यान्तु देवगणारू सर्वे पूजामादाय मामकिम्।

इष्ट काम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

तिलकाशीर्वाद –

श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते।

धनं धान्यं पशुं बहु पुत्र लाभं शतसम्वत्सरं दीर्घमायुः॥
मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः।

शत्रूणां बुद्धिनाशोस्तु मित्राणामुदयस्तव॥
स्वस्त्यस्तु ते कुशलमस्तु चिरायुरस्तु,
गोवाजिहस्ति धनधान्य समृद्धिरस्तु।
शत्रुक्षयोऽस्तु निजपक्षमहोदयोऽस्तु,
वंशे सदैव भवतां हरिभक्तिरस्तु ।

साधना :–

स्वच्छ, एकान्त और जीवन्त वातावरण में उत्पन्न वनस्पतियाँ अधिक उपयोगी और
प्रभावशाली होती है, जबकि मार्ग/नदी के किनारे में नित्य प्रति कुचली और चरी जाने वाली अथवा अशुभ स्थानों में उत्पन्न वनस्पति में एक प्रकार का अदृश्य प्रदूषण व्याप्त रहता है। साधना के लिए जो भी वनस्पति ली जाये उसकी संरचना, उत्पत्ति स्थल, आयु और वातावरण का विचार कर लेना चाहिए।

१. साधना के लिए कोई भी वनस्पति, जड़ी–बूटी, फल–फूल, पत्ती अथवा टहनी, सड़ी–गली, घुन या कीड़ों से खायी हुई, ऋतु–विरुद्ध, आग में उत्पन्न, आग से दग्ध, किसी प्राकृतिक प्रकोप के कारण छिन्न, रुग्ण अथवा सत्त्वहीन होने पर त्याज्य होती है। उसका उपयोग लाभकर नहीं होता है और साधना का श्रम व्यर्थ चला जाता है।

२. जीव–जन्तुओं के आवास (गुफा–बिल आदि) पर उत्पन्न, आवागमन के मार्ग में स्थित वृक्षों के नीचे उगने वाली घास या वनस्पति साधना हेतु वर्जित होती है।

३. मन्दिर अथवा श्मशान–भूमि में स्थित वृक्षों का कोई अंश नहीं लेना चाहिए। अपवाद की स्थिति अलग है, वह भी तब जबकि उसके सम्बन्ध में स्पष्ट स्वतन्त्रता और निर्देश शास्त्रों में वर्णित हो।

४. साधना हेतु अन्य के द्वारा उपयोग की गई सामग्री (माला, आसन आदि) को काम में नहीं लेना चाहिए।

५. शङ्ख, पूजन–पात्र, प्रतिमा, चित्र, यन्त्र आदि खण्ड़ित नहीं होने चाहिए। ऐसी वस्तुयें गङ्गा या अन्य किसी नदी (तीर्थ में स्थित जल) में आदरपूर्वक विसर्जित कर देनी चाहिए।
६. माला (वह किसी प्रकार के मनकों से निर्मित हो) की मणियाँ आकार में समान, पुष्ट, सम्पूर्ण और विधिवत् शुद्ध की हुई होनी चाहिए। कटे–फटे, टूटे–दरके आकार में विषम, विकृत, नकली और आभार रहित दाने त्याज्य है। साधना में शुद्ध सामग्री का ही उपयोग करना चाहिए।
७. विशेष साधना में ही श्मशान, रक्त, हड्डी, माँस, मदिरा आदि का प्रयोग भी शास्त्रों ने किया है, परन्तु सामान्यतः यह सभी वस्तुएँ अपवित्र और त्याज्य है।
८. यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र आदि सभी कर्म गुरु के निर्देशन में ही करने चाहिए अन्यथा साधक राह से भटक सकता है और सभी कर्म निष्फल हो जायेंगे।
६. साधक को शीलवान्, गुणज्ञ, निच्छल, श्रद्धालु, धैर्यवान्, स्वस्थ, कार्य सक्षम, बुद्धिमान, सच्चरित्र, इन्द्रिय–संयमी और कुल प्रतिष्ठा का पोषक होना चाहिए।
१०. अपराधिक प्रवृत्ति, क्रूर, कुतर्की, मिथ्याभाषी, अहंकार से ग्रस्त, लोभी, लम्पट, विषयी, चोर, दुर्व्यसनी, परस्त्रीगामी, मूर्ख, जड़बुद्धि, क्रोधी, द्वेषालु, ईर्ष्या अथवा अति मोह से ग्रस्त, शास्त्र निन्दक, आस्थाहीन, दुराचारी, वंचक, पाखण्ड़ी, रोगी तथा विकलाङ्ग व्यक्ति सामान्यतः साधक बनने के योग्य नहीं होता है।
११. साधना में प्रयुक्त सामग्री :– बिल्ली की जेर, बाँदा, श्वेतार्क, रुद्राक्ष, शङ्ख, हाथाजोड़ी, गोरोचन, गुञ्जा, सियारसिंगी, एकाक्षी नारियल, कुश, हरिद्रा, नागकेसर, कमल, लवङ्ग, दक्षिणावर्ती–वामावर्ती शङ्ख, सिन्दूर, राई, सरसों, गुग्गुल, धूप, कर्पूर, सिन्दूर, श्रीफल, नागदमन, उदुम्बर, पीपल, बरगद, विजया, सहदेवी, अपामार्ग, मुण्ड़ी, बहेड़ा, लक्ष्मणा आदि।
व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए अथवा ईर्ष्या–द्वेष की तृप्ति के लिए अभिचार–कर्म निन्दनीय है, आगे चलकर इन सभी कर्मों का दुष्परिणाम साधक को भुगतना ही पड़ता है। मूलतः ऐसे अभिचार–तन्त्रों की सर्जना आत्मरक्षा के लिए अथवा लोक कल्याण के लिए की गयी थी। सामूहिक कल्याण के लिए ऐसे कर्मों का शास्त्रों ने सर्जन किया था।

2.4 सारांश

शास्त्र की विधि के अनुसार महामृत्युंजय मन्त्र का पूजन अर्चन करना चाहिये। मनमानी ढंग से करना या कराना हानि प्रद होता है। प्रयोग कराने के समय शुभ मुहुर्त चन्द्र तारा आदि बलों को दिखाकर तब अनुष्ठान –पुरश्चरण प्रयोग कराना चाहिये। प्रयोग कराते समय शिवमन्दिर देवालयसिद्धस्थान, नदीतट , बिल्व, अश्वस्थवृक्ष के स्थान पर सफाई कराकर अनुष्ठान कराना चाहिये। देवालय, सिद्धस्थान शिवमन्दिर में तो पार्थिवेश्वर की कोई आवश्यकता नही है– किन्तु और सभी स्थानों पाथिवेश्वर शिवलिंग निर्माण करके ही महामृत्युंय आदि का जप विधान सहित करना चाहिये। प्रयोग पुरश्चरणात्मक हो तो प्रतिदिन की संख्या समान होनी चाहिए, किसी दिन जप अधिक किसी दिन कम नहीं होना चाहिए–इसी प्रकार ब्राह्मण भी प्रतिदिन उतनी ही संख्या में रहें जितनों में प्रथमदिन पुरश्चरण प्रारम्भ किया हो, इसमें उलट– फेर–कमी–बेशी करने से विक्षिप्तता का भय रहता है। जपसंख्या पूर्ण होने पर अर्थात् पुरश्चरण समाप्ति पर जितना जप हुआ हो उसका दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण,तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश या कार्यानुसार न्यूनाधिक रूप में ब्राह्मण भोजन कराना चाहिये ।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

१. जपनीय = जप के योग्य
२. वैदिक = वेद से उद्धृत
३. पुराणोक्त = पुराणों के अनुसार
४. उदर विकार = पेट का रोग
५. अशुभ = बुरा प्रभाव
७. उत्तरन्यास = जप के बाद किये जाने वालो न्यास
६. सङ्कल्प = दृढ़ प्रतिज्ञा
१०. विनियोग = मन्त्र, ऋषि, छन्द, देव काज्ञान
११. ऋष्यादिन्यास = ऋषि, छन्द, देव काशरीर के अङ्गों में ध्यान/आधान
१२. करन्यास = हाथ की अङ्गुलियों में अभीष्टमन्त्र देवता का ध्यान/आधान
१३. अङ्गन्यास = शरीर के अङ्गों में अभीष्टमन्त्र देवता का ध्यान/आधान
१४. त्र्यक्षरीमन्त्र = तीन अक्षरों का मन्त्र
१५. मृत्युञ्जय = मृत्यु पर विजय पाने वाले

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर १ः यन्त्र का निर्माण सामान्यतः भोजपत्र, स्वर्ण, रजत, ताम्र आदि धातुओं पर किया जाता है।

उत्तर २ः सामान्यतः यन्त्र के निर्माण में अष्टगन्ध, चन्दन, कस्तूरी, पञ्चगन्ध, भस्म, यक्षकर्दम, गोरोचन व हल्दी आदि का उपयोग किया जाता है।

उत्तर ३ः ऊँ 'ऐं ह्रीं अक्ष–मालिकायै नमः इस मन्त्र से माला की पूजा की जाती है।

उत्तर : ४. सात्विक, २. तामसिक, व ३. राजसिक – ये तीनों साधना के मुख्य भेद है।

उत्तर ५ः हाथ की अङ्गुलियों में अभीष्टमन्त्र देवता का ध्यान/आधान करना ही करन्यास है।

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पुस्तक का नाम–यज्ञदीपिका लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र

2. पुस्तक का नाम–सर्वदेव पूजापद्धति

प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन ,वाराणसी

3 धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक – डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशक :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,

लेखक :– पं. बिहारी लाल मिश्र,
प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर।
5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा
संकलन ग्रन्थ
प्रकाशक :– मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।
6 कर्मठगुरुः
लेखक – मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
प्रकाशक – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती
सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक – राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी
सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक – अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

2.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1. पुस्तक का नाम–यज्ञदीपिका लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. महामृत्यंजय मन्त्र से आप क्या समझते है। विस्तार पूर्वक लिखिए।

2. महामृत्युंजय समन्त्र पूजन विधि का उल्लेख कीजिये।

इकाई - 3 श्री नवार्ण मन्त्र पुरश्चरण

इकाई की रुप रेखा

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई द्वितीय खण्ड की तीसरी इकाई **नवार्णमन्त्र पुरश्चरण** से सम्बन्धित है । इस इकाई के अन्तर्गत कर्मकाण्ड सम्बन्धित नवार्णमन्त्र पुरश्चरण का उल्लेख किया जा रहा है ।
नवार्ण मन्त्र पुरश्चरण का सम्बन्ध दुर्गा जी से है । दुर्गापूजन में इसका प्रयोग किया जाता है।
इससे पूर्व की इकाईयों में आपने सत्यनारायण एवं महामृत्युंजय का अध्ययन कर लिया है । आइये अब इस अध्याय में नवार्णमन्त्र पुरश्चरण से अवगत होते है ।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् –

- नवार्ण मन्त्र पुरश्चरण के विषय में आप परिचित होंगे–
- नवार्ण मन्त्र पुरश्चरण के महत्त्व के विषय में आप परिचित होंगे
- जप संख्या के विषय में आप परिचित होंगे
- दुर्गापूजन विधि के विषय में आप परिचित होंगे

3.3 नवार्ण मन्त्र पुरश्चरण

आगे के पृष्टों में विभिन्न प्रकार की पूजा प्रणाली का प्रस्तुती करण किया गया है जो कि नवार्ण मन्त्र से संजीवनी के लाभ प्रदान करने में पूर्णतः सक्षम है। इसी पूजन प्रणाली के बाद प्रयोग समर्पण से पहले साधक गण स्तोत्र कवचादि का पाठ करके समुचित लाभ उठाते हैं परन्तु यह उपासना काम्य उपासना के रूप में भी की जाती है

काम्य उपासना में नवार्ण मन्त्रों का जपादि किया जाता है। यह तथ्य सर्वसाधारण के लिये जान लेना अत्यधिक आवश्यक है अतः ध्यान दे कि-

सदा स्मरण रखें कि जो भी मन्त्र जपना हो उस जप को शुद्ध तथा शुद्धता से करें।-

एक निश्चत संख्या में जप करें। पूर्व दिवस में जपे गये मन्त्रों से आगामी दिनों में कम मन्त्र न जपें यदि चाहे तो अधिक मन्त्र जप सकते हैं परन्तु स्मरण यही रखना है कि भूतकाल से वर्तमान काल के मन्त्र कम न हो।

मन्त्र का उच्चारण होंठों से बाहर नही आना चाहिये यदि अभ्यास नहीं होने के कारण यह विधि प्रयुक्त न हो सके तो धीमे स्वर में जप करें।

जप काल में धूपदीप जलता रहे।-

रुद्राक्ष की या लाल चन्दन की माला से ही जप करे।

माला को गोमुखी में ही रखें। जब तक जप की संख्या पूर्ण न हो, माला को गोमुखी से न निकालें।
जप काल में दुर्गा जी की प्रतिमा , दुर्गा यन्त्र समक्ष रखना चाहिये
नवार्ण मन्त्र का जप कुश या कम्बल के आसन पर बैठकर करें।
जिस स्थान पर जपादि का शुभारम्भ हो वही पर आगामी दिनों में भी जप करना चाहिये ।
जप काल में मन को मन्त्र से मिलाएँ ।
मिथ्या सम्भाषण न करें।
स्त्री सेवन न करे।
आलस्य जम्भाई यथाशक्ति त्याग दें।
नवार्ण मन्त्र के सभी प्रयोग पूर्व दिशा के तरफ मुख करके ही करें।

जप संख्या का नियम

किसी प्रकार से महामारी , जैसे - हैजा, प्लेग, शीतला या अन्य प्रकार के महा उपद्रवों के शान्ति के लिये नवार्ण मन्त्र का एक करोड़ जप करना चाहिये। जब सामान्य रोग हो, पुत्र प्राप्ति के लिये , स्त्री प्राप्ति के लिये , पति प्राप्ति के लिये , सवालाख जप करना चाहिये। अपमृत्यु का भय हो , भय की आशंका हो तो दश हजार का जप करना चाहिये। यात्रा में यदि भय उपस्थि हो तो एक हजार जप करना चाहिये।

जप के लिये विशेष

यः शास्त्रविधि मृत्सृज्य वर्तते काम कारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परांगितम्।।

इस महावाक्यानुसार शास्त्र की विधि के अनुसार पूजन अर्चन करना चाहिये। मनमानी ढंग से करना या कराना हानिप्रद होता है। प्रयोग कराने के समय शुभ मुहुर्त चन्द्र तारा आदि बलों को दिखाकर तब अनुष्ठान पुरश्चरण प्रयोग कराना चाहिये। प्रयोग कराते समय दुर्गामन्दिर देवालयसिद्धस्थान-, नदी तट , बिल्व, अश्वस्थवृक्ष (पीपल) के स्थान पर सफाई कराकर अनुष्ठान कराना चाहिये।

प्रयोग पुरश्चरणात्मक हो तो प्रतिदिन की संख्या समान होनी चाहिए, किसी दिन जप अधिक किसी दिन कम नहीं होना चाहिएइसी प्रकार ब्राह्मण भी प्रतिदिन उतनी ही संख्या में रहें जितनों में - प्रथमदिन पुरश्चरण प्रारम्भ किया हो, इसमें उलटसे विक्षिप्तता का भय रहता है। बेशी करने-कमी-फेर - जपसंख्या पूर्ण होने पर अर्थात् पुरश्चरण समाप्ति पर जितना जप हुआ हो उसका दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण,तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश या कार्यानुसार न्यूनाधिक रूप में ब्राह्मण भोजन कराना चाहिये ।

दुर्गापूजन विधि

दुर्गालय देवालय वा दुर्गामन्दिर में बैठकर पूजन सामग्री का सम्प्रोक्षण करके आचमन प्रणायाम करे तथा सर्वप्रथम गणेश भगवान का पूजन करें -

एक लकड़ी की चौकी के ऊपर गणेश, षोडशमातृका, सप्तमातृका स्थापित करे। दूसरी चौकी पर नवग्रह, पञ्चलोकपाल आदि स्थापति करे। तीसरी चौकी के उपर सर्वतोभद्र बनाकर बीच में दुर्गा जी को स्थापित करे। ईशान कोण में घी का दीपक रखे और अपने दायें हाथ में पूजा सामग्री रख लेवे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख बैठे। कुंकुम (रोली) का तिलक करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन आरम्भ करे।

पवित्रीकरण–(अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए कलश के जल से अपने उपर तथा पूजनादि की सामग्रियों पर जल छिडके) :–

ऊ अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु, ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु , ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ,

आचमन -:(तीन बार आचमन करे)

ऊँ केशवाय नमः। ऊँ नारायणाय नमः। ऊँ माधवाय नमः।

प्राणायाम-:

गोविन्दाय नमः बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे–धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करे।

पवित्रीधारणम् -

ॐ पवित्रेस्त्थो व्वैष्णव्यौसवितुर्व्वः प्रसव उत्पन्नुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्स्य रश्मिभिः।

तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम्।।

सपत्नीक यजमान के ललाट में स्वस्तितिलक लगाते हुए मन्त्र को बोले-

ऊँ स्वस्तिन इन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः।

स्वस्ति नस्ताक्ष्र्योऽरिष्टनेमि स्वस्ति नो वृहस्पतिर्दधातु ।।

ऊँ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रेपाश्र्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि नौव्व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

ग्रन्थिबन्धन-:(लोकाचार से यजमान का सपत्नीक ग्रन्थिबन्धन करे) -

ॐ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः।

नाकङ्गृभ्णानाः सुकृतस्यलोके तृतीयपृष्ठेऽअधिरोचने दिवः।।

आसनपूजन -:(आसन की पूजा करे)

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

पवित्रं कुरु चासनम्। !त्वं च धारय मां देवि

ॐ कूर्मासनाय नमः।

ॐ अनन्तासनाय नमः।

विमलासनाय नमः। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

भूतापसारण (बायें हाथ में सरसों लेकर उसे दाहिने हाथ से ढककर निम्न मन्त्र पढ़े) –

रक्षोहणं व्वलगहनं व्वैष्णवीमिदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे निष्ट्यो ममात्यो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे समानोमसमानो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सबर्न्धुम सबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सजातो मसजातो निचखानोत्कृत्याङि्क्रामि।

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे।।

निम्न मन्त्रों को पढते हुए सरसों का सभी दिशाओं में विकिरण करे :–

प्राच्यैदिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा दक्षिणायै दिशेस्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहोद्र्ध्वायै दिशेस्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः। दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।
पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः। उत्तरे श्रीधरो रक्षेद् ऐशान्ये तु गदाधरः।।
ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः। एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

कर्मपात्र पूजन् (ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को अक्षतपुञ्ज पर स्थापित करते हुए पूजन करे) :–

ॐ तत्वाामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः।
अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश समानऽ आयुः प्रमोषीः।। ॐ वरुणाय नमः।
पूर्वे ऋग्वेदाय नमः। दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः।
पश्चिमे सामवेदाय नमः। उत्तरे अथर्ववेदाय नमः।
मध्ये साङ्गवरुणाय नमः। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

अंकुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्सर्वाणि तीर्थानि आवाहयेत् (दायें हाथ की मध्यमा अङ्गुली से जलपात्र में सभी तीर्थों का आवाहन करे) :–

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु।।
कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।।

अश्च सहिताः सर्वे कलशाम्बु समाश्रिताः।
गायत्री चात्र सावित्री शान्तिः पुष्टिकरा तथा।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।

अभ्यास प्रश्न -

प्रश्न – १ : किस उपासना में नवार्ण मन्त्रों का जपादि किया जाता
प्रश्न – २ नवार्ण मन्त्र का जप किस माला से करना चाहिये?
प्रश्न – ३ : नवार्ण मन्त्र से क्या तात्पर्य है
प्रश्न – ४ नवार्ण जप काल में किसकी प्रतिमा समक्ष रखना चाहिये?
प्रश्न – ५ : नवार्ण मन्त्र का जप किस आसन पर बैठकर करना चाहिये?

उदकेन पूजासामग्रीं स्वात्मानं च सम्प्रोक्षयेत् (पात्र के जल से पूजन सामग्री एवं स्वयं का प्रोक्षण करे) :–

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे।।
योवः शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हनः। उशतीरिवमातरः।।
तस्म्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ आपोजनयथाचनः।।

दीपपूजनम् (देवताओं के दाहिने तरफ घी एवं विशेष कर्मों में बायें हाथ की तरफ तेल का दीपक जलाकर पूजन करना चाहिए) :–

अग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्रा देवतादित्त्या देवता मरुतो देवता विश्श्वे देवा देवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता।

ऊँ दीपनाथाय नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि (गन्ध अक्षत पुष्प दीपक के सामने छोडे।)

प्रार्थनाः–(हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर अधोलिखित श्लोक को पढते हुए दीपक के सामने छोड़े

ऊँ भो दीप देवस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत।
यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव।।

सर्वप्रथम दुर्गापूजन की अधिकार प्राप्ति के लिये प्रायश्चित्तरूप में गोदान का संकल्प करना चाहिये

प्रायश्चित संकल्प हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर प्रायश्चित संकल्प करे–

हरिः ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ऊँ तत्सद। ँतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया

प्रवर्त्तमानस्य अ। श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्तौ (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं

क्रियमाण नवार्ण मन्त्र जपकर्मणि अधिकार प्राप्त्यर्थं कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकचतुर्विधपापशमनार्थं शरीरशुद्ध्यर्थं गोनिष्क्रयद्रव्यं ''''''''गोत्राय''''''''शर्मणे आचार्याय भवते सम्प्रददे (ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य ब्राह्मण के हाथ में देदे।

मंगल पाठ –हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करे) :–

ॐ आनो भद्राः क्रतवो यन्तु व्विश्वतो दब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः। देवानो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवोरक्षितारो दिवेदिवे।।१।। देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवाना रातिरभिनोनिवर्त्तताम्। देवाना सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयं देवानऽआयुः प्रतिरन्तुजीवसे।।२।। तान्पूर्वया निविदाहूमहे व्वयं भगम्मित्रमदितिं दक्षमस्रिधम्। अर्यमणं व्वरुण सोममश्विना सरस्वती नः सुभगामयस्करत्।।३।। तन्नोव्वातो मयो भुव्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता । ौः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्।।४।। तामीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पति–न्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषा नो यथा व्वेदसामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।५।। स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषाव्विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्यो ऽ अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु।।६।। पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो व्विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्वामनवः सूरचक्षसो व्विश्वेनोदेवाऽअवसा गमन्निह।।७।। भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा œ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः।।८।। शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा त्रा नश्चक्रा जरसंतनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मानो मद्धया रीरिषतायुर्गन्तोः।।९।। अदिति। ौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवा ऽ अदितिः पञ्चजना ऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम्।।१०।। । ौः शान्तिरन्तरिक्ष œ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। व्वनस्पतयः शान्ति व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व œ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि।।११।। यतो यतः समीहसे ततो नो ऽ अभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योभयन्नः पशुभ्यः।।१२।। सुशान्तिर्भवतु।। **(अक्षत–पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)**

गणपत्यादि देवानां स्मरणम्– (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करे)

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजगर्णकः। लम्बोदरश्च विकटोविघ्ननाशो विनायकः।

धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि। वि। ारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे संकटे चौव विघ्नस्तस्य न जायते। शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये। अभीप्सितार्थ सिध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः। सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः। सर्वमङ्ग्ल माङ्ग्ल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते। सर्वदा सर्व कार्येषु नास्ति तेषाममङ्ग्गलम्। येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः। तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव। वि। ाबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि। लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः। येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः। यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम। सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रि भुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः। विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गङ्गां

भवानी मणिकर्णिकाम्। विनायकं गुरुभानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान्। सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थ सिद्धये।ऊँ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। ऊँ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ऊँ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ऊँ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ऊँ शचीपुरन्दराभ्यां नमः। ऊँ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। ऊँ सर्वपितृदेवताभ्यो नमः। ऊँ इष्टदेवताभ्यो नमः। ऊँ कुलदेवताभ्यो नमः। ऊँ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ऊँ स्थानदेवताभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ऊँ गुरवे नमः। ऊँ परमगुरवे नमः। ऊँ परात्परगुरवे नमः। ऊँ परमेष्ठिगुरवे नमः।(अक्षत–पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)

संकल्प–हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर संकल्प करे–

हरिः ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ऊँ तत्सद। ॅतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया

प्रवर्त्तमानस्य अ। श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्तौ (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं (ब्राह्मण के लिए शर्मा, क्षत्रिय के लिए वैश्य, वैश्य के लिए गुप्ता, शूद्र के लिए दासान्त) सपुत्रस्त्रीबान्धवो अहं मम जन्मलग्नाच्चन्द्रलग्नाद् वर्ष मास दिन गोचराष्टक वर्गदशान्तर्दशादिषु चतुर्थाष्टं द्वादशस्थान् स्थित क्रूरग्रहास्तेषां अनिष्टफल शान्ति पूर्वकं द्वितीयसप्तम् एकादशस्थानस्थित सकल शुभफल प्राप्त्यर्थं श्री दुर्गा नवार्ण मन्त्र दुर्गा देवी रुद्रदेवता यथा (शत सहस्र अयुत लक्ष कोटयादि) संख्याक नवार्ण मन्त्र जपम् अहं करिष्ये **(वा ब्राह्मण द्वारा कारयिष्ये)** । ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।

पुनः हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर बोले –

तदंगत्वेन कार्यस्य सिद्ध्यर्थं आदौ गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये। ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।

पूजा में जो वस्तु वि। मान न हो उसके लिये 'मनसा परिकल्प्य समर्पयामि' कहे। जैसे, आभूषणके लिये 'आभूषणं मनसा परिकल्प्य समर्पयामि'।)

सर्वप्रथम गणपति का पूजन आप कर ले।

दुर्गापूजन –

दुर्गा जी का आवाहन ध्यान – (हाथ में अक्षत पुष्प लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर छोड़े)

खड्गं चक्रगदेषुचापरिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शंखं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांगभूषावृताम्।

नीलाश्म। ुतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां

यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजोहन्तुं मधुं कैटभम्॥१॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री दुर्गा देव्यै नमः दुर्गाम् आवाहयामिध्यायामि स्थापयामि पूजयामि। (क्षत पुष्प को दुर्गा जी के उपर छोड़ दे)

प्रतिष्ठापनम्:– (हाथ में अक्षत लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर छोड़े

ऊँ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्ज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं यज्ञ œ समिमन्दधातु।
विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामोम्प्रतिष्ठ।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री दुर्गा देव्यै नमः। सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेताम्

आसनम् –(हाथ में पुष्प लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर छोड़े

ऊँ पुरुष ऽ एवेद œ सर्व्वंद्भूतँच्च भाव्व्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पा। म् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर छोडे

ऊँ एतावानस्य महिमातोज्ज्यॉंश्चपूरुषः।
पादोस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः पादप्रक्षालनार्थं पा। ं समर्पयामि।

अर्घ्यम् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर छोडे

ऊँ धामन्तेव्विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्तः समुद्रेहृ। न्त रायुषि।
अपामनीकेसमिथेय ऽ आभृतस्तमश्याम मधुमन्तन्त ऽ ऊर्मिम्।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीयम् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर छोडे

सर्वतीर्थ समायुक्तं सुगन्धिनिर्मलं जलम्।
आचम्यार्थं मया दत्तं गृहाण गणनायक।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः मुखे आचमनीयं समर्पयामि।

जलस्नानम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर जल छोडे

ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्न्यसि वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः स्नानार्थे जलं समर्पयामि।।

पञ्चामृत स्नानम् –(अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुए दुर्गा जी के उपर पंचामृत से स्नान करावे

पयो दधिघृतं चैव मधुं च शर्करायुतम्।
सरस्वती तु पञ्चधासो देशेभवत्सरित्।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः मिलितपञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदक स्नानम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर शुद्ध जल से स्नान करावे)

ऊँ शुद्धवालः सर्व शुद्धवालो मणिवालस्त ऽ आश्विनः श्येतः
श्येताक्षो रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्णायामा अवलिप्ता रौद्रानभोःरूपाः पार्ज्जन्न्याः।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

वस्त्रोपवस्त्रम्–(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर रक्त सूत्र चढावे)

ऊँ सुजातोज्ज्योतिषा सहशर्म्म व्वरुथमासदत्स्वः।

व्यासो ऽ अग्रे विश्वःप œ सँव्ययस्वव्विभावसो।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर यज्ञोपवीत चढावे)

ऊँ ब्रह्मज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोव्वेनऽआवः।
सबुद्ध्न्याऽउपमा अस्यव्विष्ठाः सतश्च्चयोनिमसतश्चव्विवः।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

चन्दनम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुए दुर्गा जी के उपर चन्दन चढ़ावे)

ऊँ अ œ शुना ते अ œ शुः पृच्यतां परुषा परुः।
गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युतः।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः चन्दनकुंकुमञ्च समर्पयामि।

अक्षताः –(अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुए दुर्गा जी के उपर अक्षत चढ़ावे)

ऊँ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽअधूषत।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठ्ठयामती योजान्विन्द्रते हरी।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः अलङ्करणार्थम् अक्षतान् समपर्यामि।

पुष्प (पुष्पमाला) –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर पुष्पमाला अथवा पुष्प चढावे)

ऊँ ओषधिः प्रतिमोदद्धवं पुष्पवतीः प्रसूवरीः।
अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्ण्वः।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः पुष्पाणि समर्पयामि।

दूर्वा –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर दूर्वा चढावे)

ऊँ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।
एवा नो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः दूर्वाङ्कुराणि समर्पयामि।

बिल्वपत्रम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर बिल्वपत्र चढावे)

ऊँ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्मिणे च वरुथिने च नमः
श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुब्भ्याय चाहनन्याय च।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः बिल्वपत्राणि समर्पयामि।

सुगन्धितद्रव्यम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर इत्र चढावे)

ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात्।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि।

सिन्दूरम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर सिन्दूर चढावे)

ऊँ सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्रमियः पतयन्ति ह्यवाः।
घृतस्य धारा ऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः सिन्दूरं समर्पयामि।

नानापरिमलद्रव्याणि ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर अवीर चढावे)

ऊँ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुञ्ज्याया हेतिं परिबाधमानः।
हस्तग्घ्नो व्विश्वाव्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा œ सम्परिपातुव्विश्वतः।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः परिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर धूप दिखावे)

धूरसि धूर्व्वधूर्व्वन्तं धूर्व्व तोस्म्मान् धूर्वतितन्धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः।

देवानामसि व्वह्नितम œ सस्न्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः धूपम् आघ्रापयामि।

दीपम् ---(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी को दीप दिखावे)

ऊँ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिज्र्योतिः सूर्यः स्वाहा।

अग्निर्व्वर्चोज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्यो वर्च्चोज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा।

ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः दीपकं दर्शयामि।

हस्तौ प्रक्षाल्य। (इसके बाद हाथ धोये)

नैवे। म् ---(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी को भोग लगावे)

ऊँ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष œ शीर्ष्णो । ौः समवर्त्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ २ अकल्पयन्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः नैवे। ं निवेदयामि। मध्ये जलं निवेदयामि। (इसके बाद पॉच बार जल चढावे)

ऋतुफलम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर फल चढावे)

ऊँ याः फलनीर्या ऽ अफला ऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हसः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री दुर्गा देव्यै** नमः फलं निवेदयामि। पुनः आचमनीयं निवेदयामि।(इसके बाद पुनः जल चढावे)

ताम्बूल–मन्त्र बोलते हुए लवंग,इलायची, सोपारी सहित पान का पत्ता दुर्गा जी के उपर चढावे

ॐयत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मःशरद्धविः।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री दुर्गा देव्यै नमः मुखवासार्थं एलालवंगपूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि।

(इलायची,लौंग–सुपारी सहित ताम्बूल को चढाये)

दक्षिणा–(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी के उपर दक्षिणा चढावे)

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातःपतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं । ामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री दुर्गा देव्यै नमः,कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।(द्रव्य दक्षिणा समर्पित करें।)

पुष्पांजलि–मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर दुर्गा जी को पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

अथ श्रीगणेशषडक्षर मन्त्र–जपविधिः

किसी भी देवता के मन्त्रजाप से पूर्व गणेशमन्त्र के 108 (न्यूनतम) जप परम आवश्यक है। इसके पश्चात् ही कार्यसिद्धि होती है। जप के पूर्व एवं पश्चात् दोनों ही समय जप करना परम आवश्यक है।

हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए जल को गीरावें

ऊँ अस्य श्री गणेशमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः विघ्नेशो देवता वं बीजं, यं शक्तिः हुँ कीलकम् सर्वार्थसिद्धये जपे विनियोगः॥

ऋष्यादिन्यासः –

ऊँ भार्गव ऋषये नमः शिरसि (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।

ऊँ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे (दाहिने हाथ से मुख को स्पर्श करे)।

ऊँ विघ्नेशदेवतायै नमः हृदि (दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)।

ऊँ वं बीजाय नमः गुह्ये (दाहिने हाथ से गुदा को स्पर्श करे)।

ऊँ यं शक्तये नमः पादयोः दाहिने हाथ से दोनो पैर को स्पर्श करे)।

ऊँ हुँ कीलकाय नमः सर्वाङ्गे (दाहिने हाथ से पुरे शरीर को स्पर्श करे)।

करन्यासः –

ऊँ वं अंगुष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अंगूठों का स्पर्श करे) ।

ऊँ क्रं तर्जनीभ्याँ नमः (दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श करे) ।

ऊँ तुँ मध्यमाभ्याँ नमः(अंगूठों से मध्यमा अंगुलियों का स्पर्श करे) ।

ऊँ डाँ अनामिकाभ्याँ नमः (अंगूठों से अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।

ऊँ यं कनिष्ठिकाभ्याँ नमः (अंगूठों से कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।

ऊँ हुँ करतलकरपृष्ठाभ्याँ नमः(हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का परस्पर स्पर्श करे) ।

षडङ्गन्यासः

ऊँ वं नमः हृदयाय नमः (दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)

ऊँ क्रं नमः शिरसे स्वाहा (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।

ऊँ तुं नमः शिखायै वषट् (दाहिने हाथ से शिखा को स्पर्श करे)।

ऊँ डां नमः कवचाय हुँ (दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कन्धे का और बायें हाथ की अंगुलियों से दाहिने कन्धे का साथ ही स्पर्श करे)।

ऊँ यं नमः नेत्रत्रयाय वौषट् (दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों और ललाट के मध्य भाग को स्पर्श करे)।

ऊँ हुँ नमः अस्त्रायफट् यह वाक्य पढकर दाहिने हाथ को सिर के उपर से बायी ओर से पीछे की ओर लेजाकर दाहिनी ओर से आगे की ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये)।

वर्णन्यासः –

ऊँ वं नमः भ्रुवोर्मध्ये (दाहिने हाथ से भ्रुव के मध्य को स्पर्श करे)।

ऊँ क्रं नमः कण्ठे (दाहिने हाथ से कण्ठ को स्पर्श करे)।

ऊँ तुं नमः हृदये दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)।

ऊँ डां नमः नाभौ(दाहिने हाथ से नाभी को स्पर्श करे)।

ऊँ यं नमः लिङ्गे (दाहिने हाथ से लिंग को स्पर्श करे)।

ऊँ हुँ नमः पादयोः(दाहिने हाथ से दोनों पैरों को स्पर्श करे)।

ऊँ वक्रतुण्डाय हुँ सर्वाङ्गे(दाहिने हाथ से सभी अंगों को स्पर्श करे)।

हाथों में पुष्प लेकर अधोलिखत श्लोक को पढते हुए गणेश जी का प्रार्थना करे

ऊँ उ| द्दिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मैः,
पाशाङ्कुशाभयवरान्दधतं गजास्यम्।
रक्ताम्बरं सकलदुःखहरं गणेशं,

ध्यायेत् प्रसन्नमखिलाः भरणाभिरामम्॥

जप हेतु माला का पूजन–मन्त्र :–
ऊँ 'ऐं ह्रीं अक्ष–मालिकायै नमः इस मन्त्र से माला की पूजा करे।
इसके बाद हाथों में माला लेकर अधोलिखत श्लोक को पढते हुए माला की प्रार्थना करे।
ऊँ मां माले महा–माये सर्व–शक्ति स्वःपिणि!
चतुवर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव।।
ऊँ अविघ्नं कुरु माले! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
जप–काले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये।।
ऊँ अक्ष–मालाधिपतये सुसिद्धि देहि देहि सर्व–मन्त्रार्थ–साधिनि!
साधय साधय सर्वसिद्धिं परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहा।।१
इसके बाद ऊँ वक्रतुण्डाय हुँ। इस मन्त्र का 108 बार जप करे
नवार्ण–मन्त्र जप विधि
विनियोग–हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए जल को गीरावें
अस्य श्री नवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्राऋषयः गायत्र्यु–ष्णिग्नुष्टुभश्छन्दांसि श्री महाकालीमहालक्ष्मी महासरस्वत्योदेवताः नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि अग्निवायुसूर्यास्तत्त्वानि ममाभीष्टकामनासिद्ध्यर्थं श्रीमहाकालीमहा–लक्ष्मीमहारसस्वती देवता प्रीत्यर्थे न्यासे विनियोगः। (जल को गीरावें)
ऋष्यादि न्यास–
ऊँ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।
ऊँ गायर्त्युष्णिगनुष्टुप् छन्दोभ्यो नमः मुखे। (दाहिने हाथ से मुख को स्पर्श करे)।
ऊँ श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वती देवताभ्यो नमः हृदि (दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)।
ऊँ ऐं बीजाय नमः गुह्ये (दाहिने हाथ से गुदा को स्पर्श करे)।
ऊँ ह्रीं शक्त्ये नमः पादयोः (दाहिने हाथ से दोनो पैर को स्पर्श करे)।
क्लीं कीलकाय नमः नाभौ (दाहिने हाथ से नाभी को स्पर्श करे)।
ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चै – इस मूल मन्त्र से हाथों की शुद्धि करके करन्यास करें ।
करन्यास –
ऊँ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः।(दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अंगूठों का स्पर्श करे) ।
ऊँ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः।(दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः।(अंगूठों से मध्यमा अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः।(अंगूठों से अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः।(अंगूठों से कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकर–पृष्ठाभ्यां नमः। (हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का परस्पर स्पर्श करे) ।
हृदयादिन्यास
ऊँ ऐं हृदयाय नमः।(दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)

ऊँ ह्रीं शिरसे स्वाहा।(दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)

ऊँ क्लीं शिखायै वषट्। दाहिने हाथ से शिखा को स्पर्श करे)।

ऊँ चामुण्डायै कवचाय हुम। (दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कन्धे का और बायें हाथ की अंगुलियों से दाहिने कन्धे का साथ ही स्पर्श करे)।

ऊँ विच्चे नेत्त्रीयाय–वौषट्। (दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों और ललाट के मध्य भाग को स्पर्श करे)।

ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्यायैविच्चे अस्त्रायफट्। यह वाक्य पढकर दाहिने हाथ को सिर के उपर से बायी ओर से पीछे की ओर लेजाकर दाहिनी ओर से आगे की ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये

अक्षरन्यासः –

ऊँ ऐं नमः शिखायाम्। (दाहिने हाथ से शिखा को स्पर्श करे)

ऊँ ह्रीं नमः, दक्षिण नेत्रे।(दाहिने हाथ से दाहिने नेत्र को स्पर्श करे)

ऊँ क्लीं नमः, वामनेत्रे।(दाहिने हाथ से बायें नेत्र को स्पर्श करे)

ऊँ चां नमः, दक्षिणकर्णे।(दाहिने हाथ से दाहिने कान को स्पर्श करे)

ऊँ मुं नमः वामकर्णे।(दाहिने हाथ से बायें कान को स्पर्श करे)

ऊँ डां नमः, दक्षिणनासापुटे।(दाहिने हाथ से दाहिने नासा पुट को स्पर्श करे)

ऊँ यैं नमः, वामनासापुटे।(दाहिने हाथ से बायें नासापुट को स्पर्श करे)

ऊँ विं नमः, मुखे।(दाहिने हाथ से मुख को स्पर्श करे)

ऊँ च्चें नम., गूह्ये। (दाहिने हाथ से गुदा को स्पर्श करे)

मूलेन अष्टवारं व्यापकं कुर्यात्। इस प्रकार न्यास करके मूलमन्त्र से आठ बार व्यापक (दोनों हाथों के द्वारा सिर से लेकर पैर तक के सभी अंगों का स्पर्श करे)

दिङ्न्यासः – अधोलिखित को पढ़ते में चुटकी बजायें।

ऊँ ऐं प्राच्यै नमः। पश्चिम दिशा में चुटकी बजायें

ऊँ ऐं आग्नेय्यै नम.। अग्नि कोण में चुटकी बजायें

ऊँ ह्रीं दक्षीणायै नमः। दक्षिण दिशा में चुटकी बजायें

ऊँ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः । नैर्ऋत्य कोण में चुटकी बजायें

ऊँ क्लीं प्रतीच्यै नमः। पूर्व दिशा में चुटकी बजायें

ऊँ क्लीं वायव्यै नमः। वायव्य कोण में चुटकी बजायें

ऊँ चामुंडायै उदीच्यै नमः। उत्तर दिशा में चुटकी बजायें

ऊँ विच्चे ऐशान्यै नमः। ईशान कोण में चुटकी बजायें

ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः। अकाश में चुटकी बजायें

ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः। नीचे में चुटकी बजायें

ध्यानम्

खड्गं चक्रगदेषुचापरिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शंखं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांगभूषावृताम्।

नील‌ाश्म। ुतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां

यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजोहन्तुं मधुं कैटभम्॥१॥

अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां

दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्।
शूलं पाशुसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां

सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्॥२॥

घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा

पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्॥३॥

ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे – इस नवार्ण मन्त्र का संकल्प के अनुसार जप प्रारम्भ करे –

इस मन्त्र का यथा संख्य जप करे पुनः न्यास करे और जप दुर्गा जी के दक्षिण हस्त में समर्पण करें।

प्रार्थना–गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देवी त्वत्प्रसादान् महेश्वरी।

अनेन श्री नवार्ण मन्त्र जपाख्येन कर्मणा भवानी श्री दुर्गादेव्यै प्रियतां न मम (हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढ़ते हुए जल को गिरावें)

अनेन जप सांगता सिद्ध्यर्थं यथा कामनाद्रव्येण नवार्ण मन्त्रेण जपदशांश हवनं तद्दशांश तर्पणं, तद्दशांश मार्जनं, तद्दशांश ब्राह्मण भोजनं च करिष्ये।

त्रआरती श्रीदुर्गा जी की(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए दुर्गा जी की आरती करे)

जगजननी जय! जय!! (मा! जगजननी जय! जय!!)
भयहारिण, भवतारिणी, भवभामिनी जय! जय!! जग०
तू ही सत–चित–सुखमय शुद्ध ब्रह्मरूपा।
सत्य सनातन सुन्दर पर–शिव–सुर–भूपा ।।१।। ।। जग०।।
आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी।
अमल अनन्त अगोचर अज आनँदराशी ।।२।। ।। जग०।।
अविकारी, अघहारी, अकल, कलाधारी।
कर्ता विधि, भर्त्ता हरि, हर सँहारकारी।।३।। ।। जग०।।
तू विधिवधू, रमा, तू उमा, महामाया।
मूल प्रकृति वि। ा तू, तू जननी, जाया।।४ ।। जग०।।
राम, कृष्ण तू, सीता, ब्रजरानी राधा।
तू वाञ्छाकल्पद्रुम, हारिणि सब बाधा।।५।। ।। जग०।।
दश वि। ा, नव दुर्गा, नानाशस्त्रकरा।
अष्टमातृका, योगिनी, नव नव रूप धरा।।६।। ।। जग०।।
तू परधामनिवासिनी, महाविलासिनी तू।
तू ही श्मशानविहारिणी, ताण्डवलासिनी तू।।७।। ।। जग०।।
सुर–मुनि–मोहिनी सौम्या तू शोभाऽऽधारा।
विवसन विकट–सरूपा, प्रलयमयी धारा।।८।। ।। जग०।।
तू ही स्नेह–सुधामयि, तू अति गरलमना।
रत्नविभूषित तू ही, तू ही अस्थि–तना।।९ ।। जग०।।
मूलाधारनिवासिनि, इह–पर–सिद्धिप्रदे।

कालातीता काली, कमला तू वरदे।।१०९।। ।। जग०।।
शक्ति शक्तिधर तू ही नित्य अभेदमयी।
भेदप्रदर्शिनि वाणी विमले! वेदत्रयी।।११।। ।। जग०।।
हम अति दीन दुखी मा! विपत–जाल घेरे।
हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे।।१२।। ।। जग०।।
निज स्वभाववश जननी! दयादृष्टि कीजै।
करुणा कर करुणामयि! चरण–शरण दीजै।।१३।। ।। जग०।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री दुर्गा देव्यै नमः, आरार्तिकं समर्पयामि। आरती के बाद जल गिरा दे।

पुष्पांजलि–मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर दुर्गा जी को पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।
ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्ममहे।
स मे कामान् काम कामाय मह्य कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु।

कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः॥
ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात।

सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावा भूमी जनयन् देव एकः॥

ॐ एक दन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात ॥

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥

ॐ गणाम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि। तन्नो गौरी प्रचोदयात्॥
ॐ कात्यायिन्यै विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि। तन्नो देवि प्रचोदयात

ॐ दशरथाय विद्महे सीतावल्लभा च धीमहि। तन्नो राम् प्रचोदयात॥

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।

दारि।्र्य दुःख भयहारिणि का त्वदन्या

सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।

त्वमेव वि। ा द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री दुर्गा देव्यै नमः, पुष्पांजलिं समर्पयामि।(पुष्पांजलि अर्पित करे।)

प्रदक्षिणा –

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च।

तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे॥

प्रणाम –

यो न पिता जनिता यो व्विधाता धामानि व्वेदभुवनानि व्विश्श्वा।

यो देवानान्नामधाऽएकऽएव त सम्प्रश्नन्मभुवना यन्त्यन्न्या॥

क्षमा प्रार्थना –

आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम।

पूजां चौव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर॥

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।

तस्मात् कारुण्य भावेन रक्ष मां परमेश्वर॥

मत्समो नास्ति पापिष्ठस्त्वत्समो नास्ति पापहा।

इति मत्वा दयासिन्धो यथेच्छसि तथा कुरू॥

मन्त्रेणाक्षर हीनेन पुष्पेण विकलेन च।

पूजितोऽसि महादेवी तत्सर्वं क्षम्यतां मम॥

अयं दानकालस्त्वहं दानपात्रं भवानेव दाता त्वदन्यं न याचे।

भवद्भक्तिमन्तः स्थिरां देहि मह्यं कृपाशीलशम्भो कृतार्थोऽस्मि यस्मात्॥

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञ क्रियादिषु।

न्यूनं सम्पूर्णतां यातु स। ो वन्दे तमच्युतम्॥

अनेन पूजनेन श्री दुर्गादेव्यै प्रीयताम् न मम।

विसर्जनम् –

यान्तु देवगणारू सर्वे पूजामादाय मामकिम्।

इष्ट काम समृद्धयर्थं पुनरागमनाय च॥

तिलकाशीर्वाद –

श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते।

धनं धान्यं पशुं बहु पुत्र लाभं शतसम्वत्सरं दीर्घमायुः॥

मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः।

शत्रूणां बुद्धिनाशोस्तु मित्राणामुदयस्तव॥

स्वस्त्यस्तु ते कुशलमस्तु चिरायुरस्तु,
गोवाजिहस्ति धनधान्य समृद्धिरस्तु।
शत्रुक्षयोऽस्तु निजपक्षमहोदयोऽस्तु,
वंशे सदैव भवतां हरिभक्तिरस्तु

3.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आपने जाना कि किसी प्रकार से महामारी , जैसे–हैजा, प्लेग, शीतला या अन्य प्रकार के महा उपद्रवों के शान्ति के लिये नवार्ण मन्त्र का **एक करोड़** जप करना चाहिये। जब सामान्य रोग हो, पुत्र प्राप्ति के लिये , स्त्री प्राप्ति के लिये , पति प्राप्ति के लिये , सवालाख जप करना चाहिये। अपमृत्यु का भय हो , भय की आशंका हो तो दश हजार का जप करना चाहिये। यात्रा में यदि भय उपस्थि हो तो

एक हजार जप करना चाहिये। जहाँ मन्त्र केवल ध्वनि–परक था और यन्त्र में उसके साथ चित्रात्मकता आ गयी थी। वहाँ तन्त्र में पदार्थ प्रयोग को वरीयता दी गयी। वैसे, इसमें भी मन्त्र प्रधान आधार है और चित्रात्मकता को भी स्वीकार किया गया, किन्तु उनमें विशिष्ट वस्तुओं के प्रयोग की अनिवार्यता हो गयी। आगे चलकर तन्त्र का इतना अधिक प्रचार हुआ कि वह मन्त्र और यन्त्र से कई गुना अधिक लोकव्यापी हो गया। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी कुछ तन्त्र के माध्यम से प्राप्त किये जाने लगा, किन्तु जहाँ मन्त्रों का प्रयोग सात्त्विकता प्रधान था, वहाँ यन्त्र – राजसिकता प्रधान हुए और तन्त्र को तामसी माना गया।

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
अस्य	इसका
नवार्णमन्त्रस्य	नवार्ण मन्त्र का
महाकालीमहालक्ष्मी	महाकाली महालक्ष्मी
महासरस्वत्योदेवताः	महासरस्वती देवता
रक्तदन्तिका	लाल दात वाली
अग्निवायुसूर्यास्तत्त्वानि	अग्नि वायु सूर्य तत्वों को
ममाभीष्ट्कामनासिद्ध्यर्थं	मेरे अभिष्ट कामना सिद्धि के लिये

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर : १ काम्य उपासना में नवार्ण मन्त्रों का जपादि किया जाता है।

उत्तर : २ नवार्ण मन्त्र का जप :रुद्राक्ष की या लाल चन्दन की माला से करना चाहिये

उत्तर : 3 नव अक्षरों के मन्त्र को नवार्ण मन्त्र कहते है। यथा – ४।

उत्तर : ४. नवार्ण जप काल में दुर्गा जी की प्रतिमा समक्ष रखना चाहिये।

उत्तर : ५ नवार्ण मन्त्र का जप कुश या कम्बल के आसन पर बैठकर करना चाहिये।

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पुस्तक का नाम–दुर्गाचन पद्धति लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र
   प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
2. पुस्तक का नाम–सर्वदेव पूजापद्धति लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र
   प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी
3. धर्मशास्त्र का इतिहास लेखक – डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
   प्रकाशक :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।
4. नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
   लेखक :– पं. बिहारी लाल मिश्र,
   प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर।

5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा
संकलन ग्रन्थ
प्रकाशक :– मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।
6 कर्मठगुरुः
लेखक – मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
प्रकाशक – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती
सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक – राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी
सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक – अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।
9 विवाह संस्कार
सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक – हंसा प्रकाशन, जयपुर

3.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1 पुस्तक का नाम– दुर्गाचन पद्धति
लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.नवार्ण मन्त्र पुरश्चरण का विस्तारपूर्वक उल्लेख किजिये ।

इकाई - 4 सन्तान गोपाल मन्त्र

इकाई की रुप रेखा

4.1 प्रस्तावना

बी0ए0 कर्मकाण्ड से सम्बन्धित खण्ड 2 की यह चौथी इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि कर्मकाण्ड की उत्पति किस प्रकार से हुई है? कर्मकाण्ड की उत्पति अनादि काल से हुई है। तथा इन्हीं कर्मकाण्डों के माध्यम से आज सनातन धर्म की रक्षा हो रही है ।

कर्मकाण्ड को जानते हुए आप सन्तान गोपाल मन्त्र के विषय में परिचित होंगे कि सन्तानगोपाल मन्त्र का प्रयोजन क्या है एवं उसका महत्त्व क्या है इन सबका वर्णन इस इकाई में किया गया है।

प्रत्येक पूजन के प्रारम्भ में आत्मशुद्धि, गुरु स्मरण, पवित्री धारण, पृथ्वी पूजन, संकल्प, भैरव प्रणाम, दीप पूजन, शंख–घण्टा पूजन के पश्चात् ही देव पूजन करना चाहिए। सन्तान की उपासना में सन्तान गोपाल मन्त्र का जपादि किया जाता है। इसमें भगवान् गणेश के पूजन के बाद भगवन् कृष्ण का पूजन मुख्य रूप से किया जाता है

4.2 उदेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप वेदशास्त्र से वर्णित कर्मकाण्ड का अध्ययन करेंगे।

- सन्तान गोपाल मन्त्र के विषय में आप परिचित होंगे–
- सन्तान गोपाल मन्त्र के महत्त्व के विषय में आप परिचित होंगे
- सन्तान गोपाल मन्त्र जप संख्या के विषय में आप परिचित होंगे
- सन्तान गोपाल मन्त्र में भगवान् कृष्ण की पूजा की जाती है, इसके विषय में आप परिचित होंगे

4.3 सन्तान गोपाल मन्त्र

सन्तान की उपासना में सन्तान गोपाल मन्त्र का जपादि किया जाता है। यह तथ्य सर्वसाधारण के लिये जान लेना अत्यधिक आवश्यक है अतः ध्यान दे कि– सदा स्मरण रखें कि –जो भी मन्त्र जपना हो उस जप को शुद्ध तथा शुद्धता से करें।

एक निश्चत संख्या में जप करें। पूर्व दिवस में जपे गये मन्त्रों से आगामी दिनों में कम मन्त्र न जपें यदि चाहे तो अधिक मन्त्र जप सकते हैं परन्तु स्मरण यही रखना है कि भूतकाल से वर्तमान काल के मन्त्र कम न हो।

मन्त्र का उच्चारण होंठों से बाहर नही आना चाहिये यदि अभ्यास न होने के कारण यह विधि प्रयुक्त न हो सके तो धीमे स्वर में जप करें।

जप काल में धूप–दीप जलता रहे।

रुद्राक्ष की या लाल चन्दन की माला से ही जप करे।

माला को गोमुखी में ही रखें। जब तक जप की संख्या पूर्ण न हो, माला को गोमुखी से न निकालें।

जप काल में भगवान् विष्णु की प्रतिमा , विष्णु यन्त्र समक्ष रखना चाहिये ।

सन्तान गोपाल मन्त्र का जप कुश या कम्बल के आसन पर बैठकर करें।
जिस स्थान पर जपादि का शुभारम्भ हो वही पर आगामी दिनों में भी जप करना चाहिये ।
जप काल में मन को मन्त्र से मिलाएँ।
मिथ्या सम्भाषण न करें।
स्त्री सेवन न करे।
आलस्य जम्भाई यथाशक्ति त्याग दें।
सन्तान गोपाल मन्त्र के सभी प्रयोग पूर्व दिशा के तरफ मुख करके ही करें।
जप संख्या का नियम
सन्तान गोपाल का मन्त्र पुत्र प्राप्ति के लिये , सवालाख जप करना चाहिये।

जप के लिये विशेष

यः शास्त्रविधि मृत्सृज्य वर्तते काम कारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं नपरांगितम्।।

इस महावाक्यानुसार शास्त्र की विधि के अनुसार पूजन अर्चन करना चाहिये। मनमानी ढंग से करना या कराना हानि प्रद होता है। प्रयोग कराने के समय शुभ मुहुर्त चन्द्र तारा आदि बलों को दिखाकर तब अनुष्ठान –पुरश्चरण प्रयोग कराना चाहिये। प्रयोग कराते समय विष्णुमन्दिर देवालयसिद्धस्थान, नदीतट , बिल्व, अश्वस्थवृक्ष के स्थान पर सफाई कराकर अनुष्ठान कराना चाहिये।

प्रयोग पुरश्चरणात्मक हो तो प्रतिदिन की संख्या समान होनी चाहिए, किसी दिन जप अधिक किसी दिन कम नहीं होना चाहिए–इसी प्रकार ब्राह्मण भी प्रतिदिन उतनी ही संख्या में रहें जितनों में प्रथमदिन पुरश्चरण प्रारम्भ किया हो, इसमें उलट– फेर–कमी–बेशी करने से विक्षिप्तता का भय रहता है। जपसंख्या पूर्ण होने पर अर्थात् पुरश्चरण समाप्ति पर जितना जप हुआ हो उसका दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण,तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश या कार्यानुसार न्यूनाधिक रूप में ब्राह्मण भोजन कराना चाहिये

कृष्णपूजन विधि

देवालय या विष्णु मन्दिर में बैठकर पूजन सामग्री का सम्प्रोक्षण करके आचमन प्रणायाम करे–सर्वप्रथम गौरी गणेश का पूजन करे।

एक लकड़ी की चौकी के ऊपर गणेश, षोडशमातृका, सप्तमातृका स्थापित करे। दूसरी चौकी पर नवग्रह, पञ्चलोकपाल आदि स्थापति करे। तीसरी चौकी के उपर सर्वतोभद्र बनाकर बीच में भगवान् कृष्ण को स्थापित करे। ईशान कोण में घी का दीपक रखे और अपने दायें हाथ में पूजा सामग्री रख लेवे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख बैठे। कुंकुम (रोली) का तिलक करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन आरम्भ करे।

पवित्रीकरण–(अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए कलश के जल से अपने उपर तथा पूजनादि की सामग्रियों पर जल छिडके) :–

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।
ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु , ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु , ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु

आचमन (तीन बार आचमन करे) :–

ऊँ केशवाय नमः। ऊँ नारायणाय नमः। ऊँ माधवाय नमः।

प्राणायाम :–

गोविन्दाय नमः बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे–धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करे।

पवित्रीधारणम् –

ॐ पवित्रेस्त्थो व्वैष्णव्यौसवितुर्व्वः प्रसव उत्पन्नुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्य्य रश्मिभिः ।

तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम्।।

सपत्नीक यजमान के ललाट में स्वस्तितिलक लगाते हुए मन्त्र को बोले–

ऊँ स्वस्तिन इन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः।

स्वस्ति नस्ताक्ष्र्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

ऊँ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पाश्र्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि नौव्व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

ग्रन्थिबन्धन– (लोकाचार से यजमान का सपत्नीक ग्रन्थिबन्धन करे) :–

ऊँ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्ब्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः।

नाकङ्गृब्भ्णानाः सुकृतस्यलोके तृतीयपृष्ठेऽअधिरोचने दिवः।।

आसनपूजन (आसन की पूजा करे) :–

ऊँ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।

ऊँ कूर्मासनाय नमः।

ऊँ अनन्तासनाय नमः।

ऊँ विमलासनाय नमः। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

भूतापसारण (बायें हाथ में सरसों लेकर उसे दाहिने हाथ से ढककर निम्न मन्त्र पढ़े) –

रक्षोहणं व्वलगहनं व्वैष्णवीमिदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे निष्ट्यो ममात्यो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे समानोमसमानो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सबर्न्धुम सबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सजातो मसजातो निचखानोत्कृत्याङ्क्रिरामि।

ऊँ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।

ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।

सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे।।

निम्न मन्त्रों को पढ़ते हुए सरसों का सभी दिशाओं में विकिरण करे :–

प्राच्यैदिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा दक्षिणायै दिशेस्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहोद्र्ध्वायै दिशेस्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः। दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।
पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः। उत्तरे श्रीधरो रक्षेद् ऐशान्ये तु गदाधरः।।
ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः। एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

कर्मपात्र पूजन् (ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को अक्षतपुञ्ज पर स्थापित करते हुए पूजन करे) :–

ॐ तत्वाामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः।
अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश समानऽ आयुः प्रमोषीः।। ॐ वरुणाय नमः।
पूर्वे ऋग्वेदाय नमः। दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः।
पश्चिमे सामवेदाय नमः। उत्तरे अथर्ववेदाय नमः।
मध्ये साङ्गवरुणाय नमः। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

अंकुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्सर्वाणि तीर्थानि आवाहयेत् (दायें हाथ की मध्यमा अङ्गुली से जलपात्र में सभी तीर्थों का आवाहन करे) :–

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु।।
कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।।
अश्च सहिताः सर्वे कलशाम्बु समाश्रिताः।
गायत्री चात्र सावित्री शान्तिः पुष्टिकरा तथा।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।

उदकेन पूजासामग्रीं स्वात्मानं च सम्प्रोक्षयेत् (पात्र के जल से पूजन सामग्री एवं स्वयं का प्रोक्षण करे) :–

ॐ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे।।
योवः शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हनः। उशतीरिवमातरः।।
तस्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ आपोजनयथाचनः।।

दीपपूजनम् (देवताओं के दाहिने तरफ घी एवं विशेष कर्मों में बायें हाथ की तरफ तेल का दीपक जलाकर पूजन करना चाहिए) :–

अग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्रा देवतादित्त्या देवता मरुतो देवता विश्श्वे देवा देवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता।

ॐ दीपनाथाय नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि (गन्ध अक्षत पुष्प दीपक के सामने छोडे।)

प्रार्थनाः–(हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर अधोलिखित श्लोक को पढते हुए दीपक के सामने छोड़े –

ऊँ भो दीप देवस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत।
यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव।।

सर्वप्रथम कृष्णपूजन की अधिकार प्राप्ति के लिये प्रायश्चित्तरूप में गोदान का संकल्प करना चाहिये

प्रायश्चित संकल्प हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर प्रायश्चित संकल्प करे–

हरिः ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ऊँ तत्सद। ैतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अ। श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्तौ (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं क्रियमाण सन्तानगोपालमन्त्र जपकर्मणि अधिकार प्राप्त्यर्थं कायिक वाचिकमानसिक सांसर्गिकचतुर्विधपापशमनार्थं शरीरशुद्ध्यर्थं गोनिष्क्रयद्रव्यं ''''''''गोत्राय''''''''शर्मणे आचार्याय भवते सम्प्रददे (ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य ब्राह्मण के हाथ में देदे।

मंगल पाठ –हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करे) :–

ऊँ आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो दब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः। देवानो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवोरक्षितारो दिवेदिवे।।१।। देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवाना रातिरभिनोनिवर्त्तताम्। देवाना सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयं देवानऽआयुः प्रतिरन्तुजीवसे।।२।। तान्पूर्वया निविदाहूमहे व्वयं भगम्मित्रमदितिं दक्षमस्रिधम्। अर्यमणं व्वरुण सोममश्विना सरस्वती नः सुभगामयस्करत्।।३।। तन्नोव्वातो मयो भुव्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता । ैः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्।।४।। तामीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पति–न्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषा नो यथा व्वेदसामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।५।। स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषाव्विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो ऽ अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु।।६।। पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो व्विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्वामनवः सूरचक्षसो व्विश्वेनोदेवाऽअवसा गमन्निह।।७।। भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा œ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः।।८।। शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा त्रा नश्चक्रा जरसंतनूनाम्। पुत्रासो यत्र

पितरो भवन्ति मानो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः।।८।। अदिति| ौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवा ऽ अदितिः पञ्चजना ऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम्।।१०।। | ौः शान्तिरन्तरिक्ष œ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। व्वनस्पतयः शान्ति व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व œ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि।।११।। यतो यतः समीहसे ततो नो ऽ अभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योभयन्नः पशुभ्यः।।१२।। सुशान्तिर्भवतु।। **(अक्षत–पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)**

गणपत्यादि देवानां स्मरणम्– (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करे)

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजगर्णकः। लम्बोदरश्च विकटोविघ्ननाशो विनायकः। धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि। वि| ारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे संकटे चौव विघ्नस्तस्य न जायते। शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये। अभीप्सितार्थ सिध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः। सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः। सर्वमङ्ग्ल माङ्ग्ल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते। सर्वदा सर्व कार्येषु नास्ति तेषाममङ्ग्गलम्। येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः। तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव। वि| ाबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि। लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः। येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः। यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम। सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रि भुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः। विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानी मणिकर्णिकाम्। विनायकं गुरुभानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान्। सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थ सिद्धये।ॐ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नमः। ॐ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। ॐ सर्वपितृदेवताभ्यो नमः। ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः। ॐ कुलदेवताभ्यो नमः। ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ॐ स्थानदेवताभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ॐ गुरवे नमः। ॐ परमगुरवे नमः। ॐ परात्परगुरवे नमः। ॐ परमेष्ठिगुरवे नमः।(अक्षत–पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)

संकल्प–हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर संकल्प करे–

हरिः ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ॐ तत्सद| ैतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अ| श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां

प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्तौ (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं (ब्राह्मण के लिए शर्मा, क्षत्रिय के लिए वैश्य, वैश्य के लिए गुप्ता, शूद्र के लिए दासान्त) सपुत्रस्त्रीबान्धवो अहं मम जन्मलग्नाच्चन्द्रलग्नाद् वर्ष मास दिन गोचराष्टक वर्गदशान्तर्दशादिषु चतुर्थाष्टं द्वादशस्थान् स्थित क्रूरग्रहास्तेषां अनिष्टफल शान्ति पूर्वकं द्वितीयसप्तम् एकादशस्थानस्थित सकल शुभफल प्राप्त्यर्थं मम सकलदुरित क्षयपूर्वकं चिरजीविसत्पुत्र प्रप्त्यर्थं श्री सन्तान गोपाल मन्त्रस्य सपाद लक्ष जपं करिष्ये (वा ब्राह्मण द्वारा कारयिष्ये) । ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।

पुनः हाथ में जल अक्षत–पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर बोले –

तदंगत्वेन कार्यस्य सिद्ध्यर्थं आदौ गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये। ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।

पूजा में जो वस्तु वि। मान न हो उसके लिये 'मनसा परिकल्प्य समर्पयामि' कहे। जैसे, आभूषणके लिये 'आभूषणं मनसा परिकल्प्य समर्पयामि'।)

सर्वप्रथम गणपति का पूजन आप कर ले।

भगवान् कृष्ण का पूजन

भगवान् कृष्ण का आवाहन ध्यान – (हाथ में अक्षत पुष्प लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण जी के उपर छोड़े)

१. कृष्ण :–

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम।
भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम।।
ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः कृष्णाय नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः कृष्णम् आवाहयामिध्यायामि स्थापयामि पूजयामि। (क्षत पुष्प को भगवान् विष्णु के उपर छोड़ दे)

प्रतिष्ठापनम्:– (हाथ में अक्षत लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर छोड़े

ऊँ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्ज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं यज्ञ œ समिमन्दधातु।
विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामोम्प्रतिष्ठ।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः। सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेताम्

आसनम् –(हाथ में पुष्प लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर छोड़े

ऊँ पुरुष ऽ एवेद œ सर्व्वंद्भूतँच्च भाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।
ऊँ भूर्भुवः स्वः कृष्णाय नमः नमः आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पा। म् ––(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर छोडे

ऊँ एतावानस्य महिमातोज्ज्यॉंश्चपूरुषः।
पादोस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री** कृष्णाय नमः नमः पादप्रक्षालनार्थं पा। ं समर्पयामि।

अर्घ्यम् ——(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर छोडे

ऊँ धामन्तेव्विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्तः समुद्वेह। न्त रायुषि।
अपामनीकेसमिथेय ऽ आभृतस्तमश्याम मधुमन्तन्त ऽ ऊर्मिम्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री** कृष्णाय नमः हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीयम् ——(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर छोडे

सर्वतीर्थ समायुक्तं सुगन्धिनिर्मलं जलम्।
आचम्यार्थं मया दत्तं गृहाण गणनायक।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री कृ**ष्णाय नमः मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामि।

जलस्नानम् —(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर जल छोडे

ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्न्यसि
वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री** कृष्णाय नमः स्नानार्थे जलं समर्पयामि।।

पञ्चामृत स्नानम् —(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर पंचामृत से स्नान करावे

पयो दधिघृतं चैव मधुं च शर्करायुतम्।
सरस्वती तु पञ्चधासो देशेभवत्सरित्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री** कृष्णाय नमः मिलितपञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदक स्नानम् —(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् विष्ण के उपर शुद्ध जल से स्नान करावे)

ऊँ शुद्धवालः सर्व शुद्धवालो मणिवालस्त ऽ आश्विनः श्येतः
श्येताक्षो रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्णायामा अवलिप्ता रौद्रानभोःरूपाः पार्ज्जन्न्याः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

वस्त्रोपवस्त्रम्—(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर रक्त सूत्र चढावे)

ऊँ सुजातोज्ज्योतिषा सहशर्म्म व्वरुथमासदत्स्वः।
व्वासो ऽ अग्रे विश्श्वःप œ सँव्ययस्वव्विभावसो।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः कृष्णाय नमः वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् —(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर यज्ञोपवीत चढावे)

ॐ ब्रह्मज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोव्वेनऽआवः।
सबुद्धन्याऽउपमा अस्यविष्ठाः सतश्च्चयोनिमसतश्चव्विवः।
ॐ भूर्भुवः स्वः **श्री** कृष्णाय नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

चन्दनम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर चन्दन चढावे)

ॐ अ œ शुना ते अ œ शुः पृच्यतां परुषा परुः।
गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युतः।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः चन्दनकुंकुमञ्च समर्पयामि।

अक्षताः –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर अक्षत चढावे)

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽअधूषत।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठ्ठयामती योजान्विन्द्रते हरी।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः अलङ्करणार्थम् अक्षतान् समपर्यामि।

पुष्प (पुष्पमाला) –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर पुष्पमाला अथवा पुष्प चढावे)

ॐ ओषधिः प्रतिमोदद्ध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः।
अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्ण्वः।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः पुष्पाणि समर्पयामि।

दूर्वा –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर दूर्वा चढावे)

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।
एवा नो दूर्व्वे प्प्रतनु सहस्रेण शतेन च।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः दूर्वाङ्कुराणि समर्पयामि।

बिल्वपत्रम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर बिल्वपत्र चढ़ावे)

ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्मिणे च वथिने च नमः
श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुब्भ्याय चाहनन्याय च।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः बिल्वपत्राणि समर्पयामि।

सुगन्धितद्रव्यम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर इत्र चढावे)

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात्।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि।

सिन्दूरम् –(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर सिन्दूर चढावे)

ॐ सिन्धोरिव प्राध्वनेशूघनासो व्वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः।
घृतस्य धारा ऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।।
ॐ भूर्भुवः स्वः **श्री कृष्णाय** नमः सिन्दूरं समर्पयामि।

नानापरिमलद्रव्याणि ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर अवीर चढावे)

ॐ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुञ्ज्याया हेतिं परिबाधमानः।
हस्तग्घ्नो व्विश्वाव्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा œ सम्परिपातुव्विश्वतः।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः परिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपम् ––(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर धूप दिखावे)

धूरसि धूर्व्वधूर्व्वन्तं धूर्व्व तोस्म्मान् धूर्वतितन्धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः।

देवानामसि व्वह्नितम œ सस्न्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः धूपम् आघ्रापयामि।

दीपम् ---(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण को दीप दिखावे)

ऊँ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिज्र्योतिः सूर्यः स्वाहा।
अग्निर्व्वर्चोज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्यो वर्च्चोज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा।
ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।
ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री कृष्णाय नमः दीपकं दर्शयामि।

हस्तौ प्रक्षाल्य। (इसके बाद हाथ धोये)

नैवे। म् ---(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण को भोग लगावे)

ऊँ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष œ शीर्ष्णो । ौः समवर्त्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ २ अकल्पयन्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री** कृष्णाय नमः नैवे। ं निवेदयामि। मध्ये जलं निवेदयामि। (इसके बाद पॉच बार जल चढावे)

ऋतुफलम् -(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर फल चढावे)

ऊँ याः फलनीर्या ऽ अफला ऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः।
बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हसः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः **श्री** कृष्णाय नमः फलं निवेदयामि। पुनः आचमनीयं जलं निवेदयामि।(इसके बाद पुनः जल चढावे)

ताम्बूल-मन्त्र बोलते हुए लवंग,इलायची, सोपारी सहित पान का पत्ता भगवान् कृष्ण के उपर चढ़ावे

ॐयत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मःशरद्धविः।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री कृष्णाय नमः मुखवासार्थं एलालवंगपूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि।

(इलायची,लौंग-सुपारी सहित ताम्बूल को चढाये)

दक्षिणा-(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण के उपर दक्षिणा चढावे)

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातःपतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं । ामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री कृष्णाय नमः कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।(द्रव्य दक्षिणा समर्पित करें।)

पुष्पांजलि-मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर भगवान् कृष्ण को पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

अथ श्रीगणेशषडक्षर मन्त्र-जपविधिः

किसी भी देवता के मन्त्रजाप से पूर्व गणेशमन्त्र के 108 (न्यूनतम) जप परम आवश्यक है। इसके पश्चात् ही कार्यसिद्धि होती है। जप के पूर्व एवं पश्चात् दोनों ही समय जप करना परम आवश्यक है।

विनियोग–हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए जल को गीरावें

ऊँ अस्य श्री गणेशमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः विघ्नेशो देवता वं बीजं, यं शक्तिः हुँ कीलकम् सर्वार्थसिद्धये जपे विनियोगः॥

ऋष्यादिन्यासः –

ऊँ भार्गव ऋषये नमः शिरसि (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।
ऊँ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे (दाहिने हाथ से मुख को स्पर्श करे)।
ऊँ विघ्नेशदेवतायै नमः हृदि (दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)।
ऊँ वं बीजाय नमः गुह्ये (दाहिने हाथ से गुदा को स्पर्श करे)।
ऊँ यं शक्त्ये नमः पादयोः दाहिने हाथ से दोनो पैर को स्पर्श करे)।
ऊँ हुँ कीलकाय नमः सर्वाङ्गे (दाहिने हाथ से पुरे शरीर को स्पर्श करे)।

करन्यासः –

ऊँ वं अंगुष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अंगूठों का स्पर्श करे) ।
ऊँ क्रं तर्जनीभ्याँ नमः (दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ तुँ मध्यमाभ्याँ नमः(अंगूठों से मध्यमा अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ डाँ अनामिकाभ्याँ नमः (अंगूठों से अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ यं कनिष्ठिकाभ्याँ नमः (अंगूठों से कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ हुँ करतलकरपृष्ठाभ्याँ नमः(हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का परस्पर स्पर्श करे) ।

षडङ्गन्यासः

ऊँ वं नमः हृदयाय नमः (दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)
ऊँ क्रं नमः शिरसे स्वाहा (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।
ऊँ तुं नमः शिखायै वषट् (दाहिने हाथ से शिखा को स्पर्श करे)।
ऊँ डां नमः कवचाय हुँ (दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कन्धे का और बायें हाथ की अंगुलियों से दाहिने कन्धे का साथ ही स्पर्श करे)।
ऊँ यं नमः नेत्रत्रयाय वौषट् (दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों और ललाट के मध्य भाग को स्पर्श करे)।
ऊँ हुँ नमः अस्त्रायफट् यह वाक्य पढकर दाहिने हाथ को सिर के उपर से बायी ओर से पीछे की ओर लेजाकर दाहिनी ओर से आगे की ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये)।

वर्णन्यासः –

ऊँ वं नमः भ्रुवोर्मध्ये (दाहिने हाथ से भ्रुव के मध्य को स्पर्श करे)।
ऊँ क्रं नमः कण्ठे (दाहिने हाथ से कण्ठ को स्पर्श करे)।
ऊँ तुं नमः हृदये दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)।
ऊँ डां नमः नाभौ(दाहिने हाथ से नाभी को स्पर्श करे)।
ऊँ यं नमः लिङ्गे (दाहिने हाथ से लिंग को स्पर्श करे)।
ऊँ हुँ नमः पादयोः(दाहिने हाथ से दोनों पैरों को स्पर्श करे)।
ऊँ वक्रतुण्डाय हुँ सर्वाङ्गे(दाहिने हाथ से सभी अंगों को स्पर्श करे)।

हाथों में पुष्प लेकर अधोलिखत श्लोक को पढते हुए गणेश जी का प्रार्थना करे

ऊँ उ। द्दिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मैः,
पाशाङ्कुशाभयवरान्दधतं गजास्यम्।
रक्ताम्बरं सकलदुःखहरं गणेशं,
ध्यायेत् प्रसन्नमखिलाः भरणाभिरामम्॥

जप हेतु माला का पूजन–मन्त्र :–
ऊँ 'ऐं ह्रीं अक्ष–मालिकायै नमः इस मन्त्र से माला की पूजा करे।
इसके बाद हाथों में माला लेकर अधोलिखत श्लोक को पढते हुए माला की प्रार्थना करे।
ऊँ मां माले महा–माये सर्व–शक्ति स्वःपिणि!
चतुवर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव।।
ऊँ अविघ्नं कुरु माले! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
जप–काले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये।।
ऊँ अक्ष–मालाधिपतये सुसिद्धि देहि देहि सर्व–मन्त्रार्थ–साधिनि!
साधय साधय सर्वसिद्धिं परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहा।।१
इसके बाद ऊँ वक्रतुण्डाय हुँ। इस मन्त्र का 108 बार जप करे

सन्तान गोपाल मन्त्र जपविधि
विनियोग–हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए जल को गीरावें
अस्य श्री सन्तानगोपालमहामन्त्रस्य नारद ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः श्रीगोपालो देवता , मम सन्तानगोपाल प्रसाद सिद्ध्यर्थे जपे विनियोः (जल को गिरावें)
करन्यास –
ऊँ देवकी सूत गोविन्द अंगुष्ठाभ्यां नमः।(दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अंगूठों का स्पर्श करे) ।
ऊँ वासुदेव जगत्पते तर्जनीभ्यां नमः।(दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ देहि मे तनयं कृष्ण मध्यमाभ्यां नमः।(अंगूठों से मध्यमा अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ त्वामहं शरणं गतः अनामिकाभ्यां नमः।(अंगूठों से अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करे) ।
ऊँ देवकी सूत गोविन्द वासुदेव जगत्पते कनिष्ठिकाभ्यां नमः।(अंगूठों से कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श करे)
ऊँ देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। (हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का परस्पर स्पर्श करे) ।
हृदयादिन्यास
ऊँ देवकी सूत गोविन्द हृदयाय नमः।(दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)
ऊँ वासुदेव जगत्पते शिरसे स्वाहा।(दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)
ऊँ देहि मे तनयं कृष्ण शिखायै वषट्। दाहिने हाथ से शिखा को स्पर्श करे)।
ऊँ त्वामहं शरणं गतः कवचाय हुम्। (दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कन्धे का और बायें हाथ की अंगुलियों से दाहिने कन्धे का साथ ही स्पर्श करे)।
ऊँ : देवकी सूत गोविन्द वासुदेव जगत्पते नेत्रत्रयाय वौषट्। (दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों और ललाट के मध्य भाग को स्पर्श करे)।

ॐ देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः अस्त्रायफट्। यह वाक्य पढकर दाहिने हाथ को सिर के उपर से बायी ओर से पीछे की ओर लेजाकर दाहिनी ओर से आगे की ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये

ध्यानम् – हाथ में पुष्प लेकर अधोलिखत श्लोक को पढते हुए भगवान् कृष्ण का प्रार्थना करे

ॐ वैकुण्ठतेजसा दीप्तमर्जुनेन समन्वितम्।
समर्पयन्तं विप्राय नष्टानानीय बालकान्।। (हाथ में लिये हुए पुष्प को भगवान् कृष्ण के उपर छोड़ दे)

ॐ देवकी सुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः।। –इस सन्तान गोपाल मन्त्र का संकल्प के अनुसार जप प्रारम्भ करे।

इस मन्त्र का यथा संख्य जप करे पुनः न्यास करे और जप श्रीकृष्ण देवता के दक्षिण हस्त में समर्पण करें।

प्रार्थना–गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान् महेश्वरः।

क्षमाप्रार्थना– मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर जी की क्षमा प्रार्थना करना।

करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवण नयनजं वा मानसं वाऽपराधम्। विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व। जयजय करुणाब्धे श्रीकृष्ण!

अनेन श्री सन्तान गोपाल जपाख्येन कर्मणा भगवान् श्रीकृष्णाय प्रियतां न मम (हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढ़ते हुए जल को गिरावें)

अनेन जप सांगता सिद्धयर्थं यथा कामनाद्रव्येण सन्तान गोपाल मन्त्रेण जपदशांश हवनं तद्दशांश तर्पणं, तद्दशांश मार्जनं, तद्दशांश ब्राह्मण भोजनं च करिष्ये।

विशेष –प्रतिदिन जप के बाद सन्तान गोपाल स्तोत्र का एक पाठ अवश्य कर लेना चाहिये

भगवान् कृष्ण की आरती (अधोलिखित मन्त्र पढते हुए भगवान् कृष्ण की आरती करे)

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम्
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभांगम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्,
आरती कुञ्जबिहारी की। श्रीगिरधर कृष्णमुरारि की।। टेक।।
गले मे वैजयन्तीमाला, बजावे मुरलि मधुर बाला।
श्रवन में कुण्डल झलकाला, नन्द के आनँद नँदलाला।। श्रीगिरधर ०।।
गगन सम अंग कान्ति काली, राधिका चमक रही आली, लतन में ठाढ़े बनमाली,
भ्रमर–सी अलक, कस्तूरी–तिलक, चन्द्र–सी झलक,
ललित छब स्यामा प्यारी की। श्रीगिरधर कृष्णमुरारि की।।
कनकमय मोर मुकुट बिलसै, देवता दरसन को तरसै,
गगन सों सुमन रासि बरसै,
बजे मुरचंग, मधुर मिरदंग, ग्वालिनी सँग,
अतुल रति गोपकुमारी की। श्रीगिरधर कुष्णमुरारी की।।
जहाँ ते प्रगट भई गंगा, सकल–मल–हारिणी श्रीगंगा,
स्मरन ते होत मोह–भंगा,
बसी सिव सीस, जटा के बीच, हरै अघ कीच,

चरन छबि श्रीबनवारी की। श्रीगिरधर कृष्णमुरारी की।।
चमकती उज्ज्वल तट रेनू, बज रही बृन्दावन बेनू,
दिसि गोपि ग्वाल धेनू,
हँसत मृदु मन्द, चाँदनी चन्द, कटत भव–फन्द,
टेर सुनु दीन दुखारि की। श्रीगिरधर कृष्णमुरारि की।।
आरती कुञ्जबिहारी की। श्रीगिरधर कृष्णमुरारिकी।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री कृष्णाय नमः आरार्तिक्यं समर्पयामि। आरती के बाद जल गिरा दे।

पुष्पांजलि–मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर भगवान् कृष्ण को पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।
ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्ममहे।
स मे कामान् काम कामाय मह्य कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु।

कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः॥
ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात।

सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावा भूमी जनयन् देव एकः॥

ॐ एक दन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात ॥

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥

ॐ गणाम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि। तन्नो गौरी प्रचोदयात्॥
ॐ कात्यायिन्यै विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि। तन्नो देवि प्रचोदयात

ॐ दशरथाय विद्महे सीतावल्लभा च धीमहि। तन्नो राम् प्रचोदयात॥
त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव वि। ा द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री कृष्णाय नमः, पुष्पांजलिं समर्पयामि।(पुष्पांजलि अर्पित करे।)

प्रदक्षिणा –

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे॥

प्रणाम –

यो न पिता जनिता यो व्विधाता धामानि व्वेदभुवनानि व्विश्श्वा।
यो देवानान्नामधाऽएकऽएव त सम्प्रश्न्नम्भुवना यन्त्यन्न्या॥

क्षमा प्रार्थना –

आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर॥

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।

तस्मात् कारुण्य भावेन रक्ष मां परमेश्वर॥

मत्समो नास्ति पापिष्ठस्त्वत्समो नास्ति पापहा।

इति मत्वा दयासिन्धो यथेच्छसि तथा कुरू॥

मन्त्रेणाक्षर हीनेन पुष्पेण विकलेन च।

पूजितोऽसि महादेव तत्सर्वं क्षम्यतां मम॥

अयं दानकालस्त्वहं दानपात्रं भवानेव दाता त्वदन्यं न याचे।

भवद्भक्तिमन्तः स्थिरां देहि मह्यं कृपाशीलशम्भो कृतार्थोऽस्मि यस्मात्॥

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञ क्रियादिषु।

न्यूनं सम्पूर्णतां यातु स। ो वन्दे तमच्युतम्॥

अनेन पूजनेन श्रीकृष्णाय नमः प्रीयताम्।

विसर्जनम् –

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकिम्।

इष्ट काम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

तिलकाशीर्वाद –

श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते।

धनं धान्यं पशुं बहु पुत्र लाभं शतसम्वत्सरं दीर्घमायुः॥

मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः।

शत्रूणां बुद्धिनाशोस्तु मित्राणामुदयस्तव॥

स्वस्त्यस्तु ते कुशलमस्तु चिरायुरस्तु,
गोवाजिहस्ति धनधान्य समृद्धिरस्तु।
शत्रुक्षयोऽस्तु निजपक्षमहोदयोऽस्तु,

वंशे सदैव भवतां हरिभक्तिरस्तु॥

4.4 सारांश :–

पुत्र प्राप्ति मानव जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक है। पुत्र से ही मानव जाति का कल्याण सम्भव है सन्तान गोपाल मन्त्र का प्रयोग केवल सन्तान के लिये किया जाता है। संसार में गृहस्थ पुरुष समस्त सुख के विना रह सकता है किन्तु पुत्र सुख के विना नही रह सकता है। पिता के मरने के बाद पुत्र के द्वारा ही उसकी मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस लिये पुत्र का होना अत्यन्त आवश्यक है। पुत्र प्राप्ति के लिये अनेक उपाय बताये गये है।किन्तु सभी उपायों में सबसे उत्तम उपाय सन्तान गोपाल मन्त्र को बताया गया है।जिसको करने से स। : पुत्र की प्राप्ति होती है।

पुत्र प्राप्ति के लिये मन्त्र प्रधान आधार है और चित्रात्मकता को भी स्वीकार किया गया, किन्तु उनमें विशिष्ट वस्तुओं के प्रयोग की अनिवार्यता हो गयी। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी कुछ मन्त्र के माध्यम से प्राप्त किये जाने लगा, किन्तु जहाँ मन्त्रों का प्रयोग सात्त्विकता प्रधान था, वहाँ यन्त्र – राजसिकता प्रधान हुए और तन्त्र को तामसी साधना का चरम :प माना गया। यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र के सन्दर्भ में नवग्रहों का विशद विवेचन इस अध्ययन में प्राप्त होता है। प्रायः जन्कुण्ड़ली में उत्पन्न दोषों का निवारण सूर्यादि नवग्रहों के प्रयोगों से ही होता है। इस अध्याय के पश्चात् जातक अपने जीवन में यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र का समुचित उपयोग शास्त्रीय विधि से कर पायेगा

4.5 शब्दावली –

शब्द	अर्थ
वैकुण्ठतेजसा	वैकुण्ठ के तेज से
समर्पयन्तंसमर्पण	करता हुआ
विप्राय	ब्राह्मण के लिये
बालकान्	बालकों को
जगत्पते	जगत के पिता
देहि	दो
मे हम	लोगों को
तनयं	पुत्र को
शरणं गतः	शरण में गये

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न उत्तर

1–प्रश्न–ऊँ भार्गव ऋषये नमः इस मन्त्र से किसको स्पर्श किया जाता है?
उत्तर– ऊँ भार्गव ऋषये नमः इस मन्त्र से शिर को स्पर्श किया जाता है।
2–प्रश्न–ऊँ अनुष्टुप्छन्दसे नमः इस मन्त्र से किसको स्पर्श किया जाता है?
उत्तर– ऊँ अनुष्टुप्छन्दसे नमः इस मन्त्र से मुख को स्पर्श किया जाता है।
3–प्रश्न–ऊँ विघ्नेशदेवतायै नमः इस मन्त्र से किसको स्पर्श किया जाता है?
उत्तर– ऊँ विघ्नेशदेवतायै नमः इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।
4–प्रश्न–ऊँ वं बीजाय नमः इस मन्त्र से किसको स्पर्श किया जाता है?
उत्तर– ऊँ वं बीजाय नमः इस मन्त्र से गुदा को स्पर्श किया जाता है।
5–प्रश्न–ऊँ यं शक्त्ये नमः इस मन्त्र से किसको स्पर्श किया जाता है?
उत्तर– ऊँ यं शक्त्ये नमः इस मन्त्र से दोनों पैरों को स्पर्श किया जाता है।

4.7–सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1–पुस्तक का नाम–दुर्गाचन पद्धति
लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2–पुस्तक का नाम–सर्वदेव पूजापद्धति
लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

3 धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक – डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशक :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
लेखक :– पं. बिहारी लाल मिश्र,
प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर।

5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा
संकलन ग्रन्थ
प्रकाशक :– मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

6 कर्मठगुरुः
लेखक – मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
प्रकाशक – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती
सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक – राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी
सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक – अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

9 विवाह संस्कार
सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक – हंसा प्रकाशन, जयपुर

4.8–उपयोगी पुस्तकें

1. पुस्तक का नाम– दुर्गाचन पद्धति
   लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र

   प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–भगवान् कृष्ण के ध्यान का वर्णन कीजिये

इकाई – 5 श्रीमद्भगवतद्गीता का 15 वॉ अध्याय

इकाई की रुप रेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 श्रीमद्भगवद्गीता का 15 वॉ अध्याय

अभ्यास प्रश्न

5.4 सारांश

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

श्रीमद्भगवद्गीता से सम्बन्धित खण्ड दो यह पॉचवी इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि श्रीमद्भगवद्गीता की उत्पति किस प्रकार से हुई है? श्रीमद्भगवद्गीता की उत्पति भगवान् कृष्ण के द्वारा हुई है। तथा श्रीमद्भगवद्गीता के माध्यम से आज सनातन धर्म की रक्षा हो रही है ।

श्रीमद्भगवद्गीता को जानते हुए आप धर्म अधर्म के विषय में परिचित होंगे कि धर्म का प्रयोजन क्या है एवं उसका महत्त्व क्या है इन सबका वर्णन इस इकाई में किया गया है।

श्रीमद्भगवद्गीता का माहात्म्य वाणीद्वारा वर्णन करने के लिये किसी की भी सामर्थ्य नही है क्योंकि यह परम रहस्यमय ग्रन्थ है। इसमें सम्पूर्ण वेदों का सार संग्रह किया गया है। इसकी संस्कृत इतनी सुन्दर और सरल है कि थोड़ा अभ्यास करने से मनुष्य उसको सहज ही समझ सकता है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप श्रीमद्भगवद्गीता के पन्द्रहवे अध्याय का अध्ययन करेंगे।

- श्रीमद्भगवद्गीता के विषय में आप परिचित होंगे–
- श्रीमद्भगवद्गीता के पन्द्रहवें अध्याय के पहले श्लोक के विषय में आप परिचित होंगे
- श्रीमद्भगवद्गीता के पन्द्रहवें अध्याय के तीसरे श्लोक के विषय में आप परिचित होंगे
- श्रीमद्भगवद्गीता के पन्द्रहवें अध्याय के चौथे श्लोक के विषय में आप परिचित होंगे
- श्रीमद्भगवद्गीता पन्द्रहवें अध्याय के पाचवें श्लोक के विषय में आप परिचित होंगे

5.3 श्रीमद्भगवद्गीता

श्रीमद् भगवद्गीता का पन्द्रहवॉ अध्याय

श्रीभगवानुवाच
ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।।

श्रीभगवान् बोले–आदिपुरूष परमेश्वररूप मूलवाले और ब्रह्मारूप मुख्य शाखावाले, जिस संसाररूप पीपलके वृक्षको अविनाशी कहते हैं, तथा वेद जिसके पत्ते कहे गये हैं–उस संसाररूप वृक्षको जो पुरूष मूलसहित तत्त्व से जानता है, वह वेदके तात्पर्यको जानने वाला हैं।।1।।

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके।।

उस संसारवृक्षकी तीनों गुणों रूप जलके द्वारा बढ़ी हुई एवं विषय–भोगरूप कोंपलोंवाली देव, मनुष्य और तिर्यक् आदि योनिरूप शाखाएँ नीचे और ऊपर सर्वत्र फैली हुई हैं तथा मनुष्यलोकमें कर्मोंके अनुसार बाँधनेवाली अहंता–ममता और वासनारूप जड़ें भी नीचे और ऊपर सभी लोकोंमें व्याप्त हो रही हैं।।2।।

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा ।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल–
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा।।

इस संसार वृक्ष का स्वरूप जैसा कहा है वैसा यहाँ विचारकाल में नहीं पाया जाता, क्योंकि न तो इसका आदि है और न अन्त है तथा न इसकी अच्छी प्रकार से स्थिति ही है। इसलिये इस अहंता, ममता और वासनारूप अति दृढ़ मूलोंवाले संसार रूप पीपल के वृक्षको दृढ़ वैराग्यरूप शस्त्रद्वारा काटकर।।3।।

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं
यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चा। ˙ पुरुषं प्रप। `
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी।।

उसके पश्चात् उस परम–पदरूप परमेश्वर को भली भाँति खोजना चाहिये, जिसमें गये हुए पुरूष फिर लौटकर संसार में नहीं आते और जिस परमेश्वर से इस पुरातन संसार–वृक्ष की प्रवृत्ति विस्तार को प्राप्त हुई है, उसी आदिपुरूष नारायण के मैं शरण–हूँ – इस प्रकार दृढ़ निश्चय करके उस परमेश्वर का मनन और निदिध्यासन करना चाहिये।।4।।

निर्मानमोहा जितसग्ङदोषा–'
अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसञ्ज्ञै–

गच्छन्त्यमूढ़ाः पदमव्ययं तत्।।

जिनका मान और मोह नष्ट हो गया है, जिन्होंने आसक्ति रूप दोष को जीत लिया है, जिनकी परमात्मा के स्वरूप में नित्य स्थिति है और जिनकी कामनाएँ पूर्णरूप से नष्ट हो गयी हैं– वे सुख–दुःख नामक द्वन्द्वों से विमुक्त ज्ञानीजन उस अविनाशी परमपदको प्राप्त होते हैं।।5।।

न तभ्दासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम।।

जिस परमपदको प्राप्त होकर मनुष्य लौटकर संसार में नहीं आते, उस स्वयं प्रकाश परम पदको न सूर्य प्रकाशित कर सकता है, न चन्द्रमा और न अग्नि ही, वही मेरा परमधाम है।।6।।

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति।।

इस देहमें यह जीवात्मा मेरा ही सनातन अंश है और वही इन प्रकृति में स्थित मन और पांचों इन्द्रियों को आकर्षण करता है।।7।।

शरीरं यादवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात्।।

वायु गन्ध के स्थान से गन्ध को जैसे ग्रहण करके ले जाता है, वैसे ही देहादिका स्वामी जीवात्मा भी जिस शरीर का त्याग करता है, उससे इन मनसहित इन्द्रियों को ग्रहण करके फिर जिस शरीर को प्राप्त होता है–उसमें जाता है।।8।।

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते।।

यह जीवात्मा श्रोत्र, चक्षु और त्वचाको तथा रसना, घ्राण और मनको आश्रय करके–अर्थात् इन सबके सहारे से ही विषयों का सेवन करता है।।9।।

उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम्।
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः।।

शरीर को छोड़कर जाते हुए को अथवा शरीर में स्थित हुए को अथवा विषयों को भोगते हुए को इस प्रकार तीनों गुणों से युक्त हुए को भी अज्ञानीजन नहीं जानते, केवल ज्ञानरूप नेत्रों वाले विवेकशील ज्ञानी ही तत्त्व से जानते हैं।।10।।

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम्।
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्चन्त्यचेतसः।।

यन्त करने वाले योगीजन भी अपने हृदय में स्थित इस आत्मा को तत्त्व से जानते हैं, किन्तु जिन्होंने अपने अन्तःकरण को शुद्ध नहीं किया है, ऐसे अज्ञानीजन तो यन्त करते रहने पर भी इस आत्मा को नहीं जानते ।।11।।

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम्।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम्।।

सूर्य में स्थित जो तेज सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करता है तथा जो तेज चन्द्रमा में है और जो अग्नि में है– उसको तू मेरा ही तेज जान।।12।।

गामाविश्च च भूतानि धारयाम्यहमोजसा।
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः।।

और मैं ही पृथ्वी में प्रवेश करके अपनी शक्ति से सब भूतों को धारण करता हूँ और रसस्वरूप अर्थात् अमृतमय चन्द्रमा होकर सम्पूर्ण ओषधियों को अर्थात् वनस्पतियों को पुष्ट करता हूँ।।13।।

अहं वैश्वानरों भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्।।

मैं ही सब प्राणियों के शरीर में स्थित रहनेवाला प्राण और अपान से संयुक्त वैश्र्वानर अग्निरूप होकर चार प्रकार के अन्न को पचाता हूँ।।14

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो–
मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वे। ो–
वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम्।।

मैं ही सब प्राणियों के हृदय में अन्तर्यामीरूप से स्थित हूँ तथा मुझसे ही स्मृति, ज्ञान और अपोहन होता है और सब वेदों द्वारा मैं ही जानने के योग्य हूँ तथा वेदान्तका कर्त्ता और वेदों को जानने वाला भी मैं ही हूँ।।15।।

द्वाविमौ पुरूषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते।।

इस संसार में नाशवा्न और अविनाशी भी ये दो प्रकार के पुरूष हैं। इनमें सम्पूर्ण भूतप्राणियों के शरीर तो नाशवान् और जीवात्मा अविनाशी कहा जाता हैं।।16।।

उत्तमः पुरूषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः।।

इन दोनों से उत्तम पुरूष तो अन्य ही है, जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण–पोषण करता है। एवं अविनाशी परमेश्वर और परमात्मा–इस प्रकार कहा गया है।।17।।

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः।।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरूषोत्तमः।।

क्योंकि मैं नाशवान् जडवर्ग– क्षेत्र से तो सर्वथा अतीत् हूँ और अविनाशी जीवात्मा से भी उत्तम हूँ, इसलिये लोक में और वेदमें भी पुरूषोत्तम नाम से प्रसिद्ध हूँ।।18।।

यो मामेवमसम्मूढो जानाति पुरूषोत्तमम्।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत्।।

भारत! जो ज्ञानी पुरूष मुझको इस प्रकार तत्त्व से पुरूषोत्तम जानता है, वह सर्वज्ञ पुरुष सब प्रकार से निरन्तर मुझ वासुदेव परमेश्वर को ही भजता है।।19।।

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत।।

हे निष्पाप अर्जुन! इस प्रकार यह अति रहस्युक्त गोपनीय शास्त्र मेरे द्वारा कहा गया, इसको तत्त्व से जानकर मनुष्य ज्ञानवान् और कृतार्थ हो जाता है।।20।।

ऊँ तत्सतिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मवि। ायां
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरूषोत्तमयोगो
नाम पंचदशोऽध्यायः।।1

5.4 सारांश :–

श्रीमद्भगवद्गीता से सम्बन्धित खण्ड दो यह पॉचवी इकाई है इस इकाई में श्रीमद्भगवद्गीता के पन्द्रहवें अध्याय का वर्णन किया गया है श्रीमद्भगवद्गीता के पन्द्रहवें अध्याय में जीव परमात्मा के अंश का वर्णन किया गया है जीव परमात्मा का अंश है परन्तु इस देह में यह जीवात्मा मेरा ही सनातन अंश है और वही इन प्रकृति में स्थित मन और पांचों इन्द्रियों को आकर्षण करता है

भगवान् कृष्ण कहते है कि यह जीवात्मा श्रोत्र, चक्षु और त्वचाको तथा रसना, घ्राण और मनको आश्रय करके–अर्थात् इन सबके सहारे से ही विषयों का सेवन करता है।

शरीर को छोड़कर जाते हुए को अथवा शरीर में स्थित हुए को अथवा विषयों को भोगते हुए को इस प्रकार तीनों गुणों से युक्त हुए को भी अज्ञानीजन नहीं जानते, केवल ज्ञानरूप नेत्रों वाले विवेकशील ज्ञानी ही तत्त्व जानते हैं।अन्य अज्ञानी जन इस तत्त्व को नही जान सकते है।

5.5 शब्दावली –

शब्द	**अर्थ**
ऊर्ध्वमूलम्	उपर की ओर मूल वाले
अधः शाखम्	नीचे की ओर शाखावाले
अश्वत्थम्	संसार रूप अश्वत्थ
प्राहुरव्ययम्।	प्रवाह रूप से कहते है
छन्दांसि	वेद
यस्य	जिसके
पर्णानि	पत्ते हैं
यः	जो
वेदवित्	पम्पूर्ण वेदों को जानने वाला

5.6 अभ्यासार्थ प्रश्न उत्तर

1–प्रश्न–पन्द्रहवें अध्याय के पहले श्लोक किसका वर्णन किया गया है?
उत्तर– पन्द्रहवें अध्याय के पहले श्लोक में आदि पुरुष भगवान् कृष्ण का वर्णन

किया गया है।

2–प्रश्न– पन्द्रहवें अध्याय के पॉचवे श्लोक में किसका वर्णन किया गया है?

उत्तर– पन्द्रहवें अध्याय के पॉचवें श्लोक में सुख दुःख का वर्णन किया गया है।

3–प्रश्न– पन्द्रहवें अध्याय के सातवें श्लोक में किसका वर्णन किया गया है?

उत्तर– पन्द्रहवें अध्याय के सातवें श्लोक में आत्मा और परमात्मा का वर्णन किया गया है।

4–प्रश्न– पन्द्रहवें अध्याय के नौवें श्लोक में किसका वर्णन किया गया है?

उत्तर–पन्द्रहवें अध्याय के नौवें श्लोक में गुण एवं तत्त्वों का वर्णन किया गया है।

5–प्रश्न– पन्द्रहवें अध्याय के पन्द्रहवें श्लोक में किसका वर्णन किया गया है?

उत्तर– पन्द्रहवें अध्याय के पन्द्रहवें श्लोक में वेद का वर्णन किया गया है।

5.7–सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1–पुस्तक का नाम–दुर्गाचन पद्धति
लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2–पुस्तक का नाम–सर्वदेव पूजापद्धति
लेखक का नाम– शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम– चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

3 धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक – डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशक :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 श्रीमद्भगवद्गीता
लेखक :– स्वामी रामसुखदास
प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर

5.8–उपयोगी पुस्तकें

1–पुस्तक का नाम– श्रीमद्भगवद्गीता
लेखक :– स्वामी रामसुखदास
प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1– इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत।। इस श्लोक का वर्णन कीजिये

2. श्रीमद्भगवद्गीता के पन्द्रहवें अध्याय का सम्पूर्ण अर्थ लिखिये ।

खण्ड - 3
विविध देवताओं की आरती एवं स्तुति

इकाई – 1 गणेश जी आरती

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में श्री गणेश जी की आरती एवं स्तुति विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कर्मकाण्ड के श्राद्धादि विषयक पक्ष को छोड़कर अन्यत्र सर्वत्र सर्वप्रथम श्रीगणेश जी की वन्दना या पूजा से ही कार्य का आरम्भ किया जाता है।यह प्रकल्प कार्य के निर्विघ्न समाप्त्यर्थ सम्पन्न किये जाते हैं। अतः श्री गणेश जी क्या हैं? तथा कैसे उनकी आरती पूजा की जाती है? इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

श्री गणेश जी की आरती एवं स्तुति विचार के अभाव में किसी व्रत, किसी मुहूर्त्त, किसी उत्सव एवं किसी पर्व का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि कोई भी व्रत करते हैं तो उसके निर्विघ्न पूर्णता के लिये हमें सबसे पहले श्री गणेश जी की वन्दना करनी होती है। न केवल कर्मकाण्ड अपितु अन्यत्र क्षेत्रों में भी यह परम्परा देखने को मिलती है। एक बार समस्त देवमण्डल में यह विचार चल रहा था कि हम सभी देवताओं में सबसे पहले किसकी पूजा होनी चाहिये? किसी देवता ने विचार दिया कि जो देवता गण सबसे पहले इस ब्रह्माण्ड की परिक्रमा करके यहां उपस्थित हो जायेगा उसे ही सर्व प्रथम पूज्य माना जायेगा। सभी देवता परिक्रमा करने के लिये प्रस्थान किये। गणेश जी की सवारी का नाम मूषक है। गणेश जी ने सोचा की मूषक पर बैठकर ब्रह्माण्ड की परिक्रमा हम नही कर सकते। तो विचार किया कि एक पुत्र के लिये उसके माता पिता ही ब्रह्माण्ड है। अतः उन्होनें अपने माता पिता की परिक्रमा करके अपने को उपस्थित कर दिया और उनका सर्व प्रथम पूजन हेतु चयन हो गया।

इस इकाई के अध्ययन से आप श्री गणेश जी की आरती एवं स्तुति इत्यादि के विचार करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे श्री गणेश जी की आरती एवं स्तुति आदि विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

1.2 उद्देश्य-

अब श्री गणेश जी की आरती एवं स्तुति विचार की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं -

- कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

- श्री गणेश जी की आरती एवं स्तुति सम्पादनार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
- कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।
- प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
- लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
- समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

1.3 श्रीगणेश जी का स्वरूप विचार एवं तात्विक विवेचन-

इसमें श्रीगणेश जी का स्वरूप विचार एवं तात्विक विवेचन आपको कराया जायेगा क्योकि बिना इसके परिचय के श्री गणेश जी का आधारभूत ज्ञान नही हो सकेगा। आधारभूत ज्ञान हो जाने पर श्रद्धा एवं समर्पण की भावना का उद्भव होता है। भावो हि विद्ते देवः के अनुसार भावना होने पर देवत्व को प्राप्त किया जा सकता है। इसलिये श्री गणेश जी का स्वरूप विचार एवं तात्विक विवेचन इस प्रकार है-

1.3.1 श्री गणेश जी का स्वरूप विचार-

श्री गणेश जी की वह वन्दना जो प्रायः अधिकांशतः लोगों को स्मृत होगी उसी का स्मरण करते हुये हम स्वरूप विचार करेंगे जो इस प्रकार है-

गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपंकजम्॥

यह श्लोक अत्यन्त सुप्रसिद्ध श्लोक है। इसमें कहा गया है कि- गजाननं यानी गज का आनन अर्थात् गज यानी हाथी तथा आनन यानी मुख अर्थात् भगवान गणेश हाथी के मुख वाले हैं। गजानन में दीर्घ सन्धि हुई है। ये हाथी के मुख वाले गणेश जी भूत गणों से सेवित है। कपित्थ अर्थात् कैंथ, जम्बू अर्थात् जामुन के फल को चारु यानी रुचि पूर्वक या सुन्दरता पूर्वक भक्षण करने वाले है। उमासुतं यानी मां पार्वती के पुत्र हैं तथा शोक विनाश करने के कारक है यानी दुख को विनाश करने के मूल में श्री गणेश जी है। ऐसे विघ्नों के स्वामी श्री विघ्नेश्वर के चरण कमलों में मैं नमन करता हूॅ। यहॉं विघ्नेश्वर में विघ्न एवं ईश्वर नामक दो जुड़ गया है। इन दोनों के जुड़ जाने के कारण गुण सन्धि हो रही है।

इस श्लोक में भगवान श्री गणेश को उमा सुत यानी उमा का पुत्र बतलाया है। कुछ कथानकों के अनुसार एक बार भगवती पार्वती अपने सदन में अकेली थी। उन्हें अत्यावश्यक कृत्य हेतु एकान्त की आवश्यकता थी। उन्होनें अपने तप के प्रभाव से एक बालक का सृजन किया जिसका नाम गणेश रखा। भगवान श्री गणेश ने कहा माताजी क्या आदेश है? माता ने कहा किसी को अन्दर न आने देना। ऐसा आदेश मिलने पर बालक गणेश वहीं प्रहरी की तरह खड़ा होकर द्वार का रक्षण करने लगे। कुछ

समय के पश्चात् भगवान शंकर का शुभागमन हुआ। बालक तो किसी को जानता नही था सो उसने आवाज लगाई , ये साधु बाबा वहीं रुक जाओ, अन्दर जाना मना है। भगवान श्री शंकर ने कहा हमारे घर में जाने से हमें रोकने वाला यह कौन हो सकता है? भगवान शंकर ने समझाया कि ये हमारा ही घर है मुझे जाने दो लेकिन बालक गणेश ने मना कर दिया, क्योकि वह तो किसी को पहचानता ही नही था । परिणाम स्वरूप युद्ध हुआ और उस युद्ध में भगवान शंकर ने श्री गणेश जी की गर्दन काट दी और अन्दर चले गये। भगवती ने पूछा आप अन्दर कैसे आ गये? आपको कोई रोका नही। भगवान ने कहा एक बालक रोक रहा था, परन्तु मैने उसका शिर धड़ से अलग कर दिया है। यह सुनते ही भगवती धड़ाम से नीचे गिर गयीं। भगवान ने उनको सम्भाला और पूछा, तो उन्होने कहा वह तो हमारा बेटा गणेश है। मैं उसके बिना जीवित नही रह सकती । अन्त में भगवान शंकर ने हाथी का शिर मंगवाकर उसके धड़ से जोड़कर श्री गणेश जी को जीवित कर दिया। इस प्रकार भगवान गणेश भगवान शंकर एवं माता पार्वती दोनों के पुत्र हो गये ।

भगवान गणेश जी के स्वरूप के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- गज का अर्थ होता है-

क- हाथी , ख- मुख़, ग- कैंथ, घ- जामुन।

प्रश्न 2- आनन का अर्थ होता है-

क- हाथी , ख- मुख़, ग- कैंथ, घ- जामुन।

प्रश्न 3- कपित्थ का अर्थ होता है-

क- हाथी , ख- मुख़, ग- कैंथ, घ- जामुन।

प्रश्न 4- जम्बू का अर्थ होता है-

क- हाथी , ख- मुख़, ग- कैंथ, घ- जामुन।

प्रश्न 5- गजानन में सन्धि है-

क- दीर्घ , ख- गुण़, ग- वृद्धि, घ- यण।

प्रश्न 6- विघ्नेश्वर में सन्धि है-

क- दीर्घ , ख- गुण़, ग- वृद्धि, घ- यण।

प्रश्न 7- गणेश में सन्धि है-

क- दीर्घ , ख- गुण़, ग- वृद्धि, घ- यण।

प्रश्न 8- मात पार्वती ने तप के प्रभाव से क्या सृजन किया?

क- हाथी, ख- भूत, ग- बालक, घ- बालिका।

प्रश्न 9- गणेश जी का किसके साथ युद्ध हुआ?

क- ब्रह्मा जी, ख- विष्णु जी, ग- शंकर जी, घ- इन्द्र जी।

प्रश्न 10- गणेश जी के धड़ पर किसका शिर लगाया गया?

क- मनुष्य का, ख- स्त्री का, ग- हाथी का, ध- घोड़ा का।

1.3.2 श्री गणेश जी के स्वरूप का तात्विक विवेचन-

भगवान गणेश के स्वरूप का दर्शन हमने इससे पूर्व के प्रकरण में किया है। हम सभी अवगत है कि श्री गणेश जी का मस्तक हाथी का है। हाथी का मस्तक यह बतलाता है कि जिस व्यक्ति को कोई बड़ा कार्य करना हो तो उसे अपना मस्तक बड़ा रखना चाहिये।यानी वृहद् विचार रखना चाहिये। प्रत्येक छोटी-छोटी बांतों को शिर में रखकर सबसे तू तू मै मै करना स्वयं के विकास का बाधक है। जीवन में यह आवश्यक नही की प्रत्येक प्रश्नों के उत्तर दिये ही जाय। यदि आवश्यक नही हो तो उस पर ध्यान नही देना चाहिये। हाथी जाता रहता है लोग उसे कुछ कहते हैं, कुत्ते उसे भोकते रहते हैं लेकिन बिना इसकी परवाह किये वह लगातार अपने पथ पर आगे बढ़ता जाता है।

हाथी के आंख की अत्यन्त विशेषता बतलायी गयी है। कहा गया है कि हाथी में कनीनिका विपरीत तरीके से लगने के कारण सामने की छोटी वस्तु को भी बड़ा देखता है। जिस प्रकार समतल दर्पण को छोड़कर अन्य दर्पण के प्रयोग से प्रतिबिम्ब बड़ा या छोटा दिखता है उसी प्रकार हाथी को किसी वस्तु का प्रतिबिम्ब बड़ा ही दिखता है। यह उन लोगों के लिये सबसे बड़ा सन्देश है जो धनादि के अभिमान वश लघुकाय प्राणियों को कीटप्राय समझकर पैर के तले रगड़ देते हैं। इससे यह शिक्षा मिलती है कि अपने से बड़ा समझकर सबका सम्मान करना चाहिये। नाक प्रतिष्ठा का द्योतक होता है। जिसकी नाक बड़ी हो यानी प्रतिष्ठा बड़ी हो उसको अपना सम्मान बचाने के बारे में सोचना चाहिये। प्रतिष्ठा संरक्षण व्यक्ति का कर्त्तव्य होना चाहिये। हाथी का कान यह संकेत करता है कि किसी भी व्यक्ति को कोई बात केवल सुनकर ही प्रतिक्रिया में नही लग जाना चाहिये, अपितु उसको हाथी के कान की तरह इधर-उधर चलाकर वास्तविकता की खोज करनी चाहिये। जब तक वास्तविक बातों का पता न चल जाय तब तक प्रतिकार उचित नही है। हाथी की जिह्वा दन्तमूल से कण्ठ की ओर जाती है जिसके कारण कोई भी बात कहने के प्रयास करने पर उसका अच्छी तरह मनन करना चाहिये। मनन करने बाद यदि उचित हो तो बोलना चाहिये।

हाथी के दांत दो प्रकार के पाये जाते है जिसे कह सकते है कि खाने के अलग एवं दिखाने के अलग। इसका तात्पर्य है कि प्रत्येक व्यक्ति द्वारा कही गयी बातें चिन्तनीय है ऐसी बात नही है। बहुत से लोग हास परिहास में कुछ इधर-उधर की बातें कर देते हैं। गणेश जी को चित्र में एक दॉत वाला दिखाया गया है। इसलिये उन्हें एकदन्त भी कहा गया है। गणेशजी के चित्र में केवल दायी ओर का दांत ही दर्शनीय माना गया है।

शेष शरीर गणेश जी का नराकृति के रूप में विद्यमान रहता है। इससे यह निर्देश मिलता है कि अपने किसी कार्य में विघ्न न चाहने वाले पुरुषों के लिये आवश्यक है कि वे स्पष्टवादी हों। मानव हृदय रखने वाले हों, मनुष्योचित कर्मकलाप में सतत निरत रहें। मनुष्य की ही कर्म योनि होती है शेष सभी की भोग योनि होती है। चार भुजायें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्रतीक है। व्यक्ति को अपने जीवन में इन पुरुषार्थों की ओर ध्यान देना चाहिये।

गणेश जी के उदर को लम्बोदर कहा जाता है। इससे यह शिक्षा मिलती है कि व्यक्ति को अपना उदर लम्बा रखना चाहिये। किसी बात को सुनकर उसको पेट में रखने का प्रयास करना चाहिये। उससे वास्तविकता का ज्ञान होता है। व्यक्ति भ्रम में नही पड़ता है।

गणेश जी का वाहन मूषक है। मूषक को समृद्धि का प्रतीक माना गया है। चूहे वहीं रहते है जहां अन्न इत्यादि उन्हें खाने को प्राप्त हो रहा हो। व्यक्ति को अपने समृद्धि का पूरा ध्यान रखना चाहिये। सत्य की समृद्धि विकास का कारण बनती है।

भगवान गणेश जी के स्वरूप के तात्विक विवेचन के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- गणेश जी का मस्तक किसका द्योतक है-

क- वृहद् विचार का , ख- सूक्ष्म विचार का, ग- लघु विचार का, घ- वक्र विचार का।

प्रश्न 2- गणेश जी की आंखे किसका द्योतक है-

क- वृहद् विचार का , ख- अपने से बड़ा देखने का, ग- लघु देखने का, घ- वक्र देखने का।

प्रश्न 3- गणेश जी की नाक किसका द्योतक है-

क- वृहद् विचार का , ख- सूक्ष्म विचार का, ग- प्रतिष्ठा का, घ- वक्र विचार का।

प्रश्न 4- गणेश जी का कान किसका द्योतक है-

क- वृहद् विचार का , ख- सूक्ष्म विचार का, ग- लघु विचार का, घ- वास्तविकता का।

प्रश्न 5- गणेश जी की जिह्वा किसका द्योतक है-

क- मनन करने का , ख- सूक्ष्म विचार का, ग- लघु विचार का, घ- वक्र विचार का।

प्रश्न 6- गणेश जी का दांत किसका द्योतक है-

क- वृहद् विचार का , ख- कथनी करनी में समुचित भेद का, ग- लघु विचार का, घ- वक्र विचार का।

प्रश्न 7- एकदन्त किसे कहा जाता है?

क- गणेश जी को , ख- गजग्राह को, ग- इन्द्र को, घ- ऐरावत को।

प्रश्न 8- लम्बोदर किसे कहा जाता है?

क- गणेश जी को , ख- गजग्राह को, ग- इन्द्र को, घ- ऐरावत को।

प्रश्न 9- मूषक वाहन किसका है?

क- गणेश जी का , ख- गजग्राह का, ग- इन्द्र का, घ- ऐरावत का।

प्रश्न 10- मूषक किसका प्रतीक है?

क- दरिद्रता का , ख- गजग्राह का, ग- इन्द्र का, घ- समृद्धि का।

1.4 गणेश जी हेतु सूक्त पाठ, स्तोत्र पाठ एवं आरती-

इस प्रकरण में गणेश जी की प्रसन्नता के लिये स्तोत्रों का पाठ विधान व आरती विधान जाना जायेगा। इसके ज्ञान से श्री गणेश जी के प्रसन्नता के लिये सूक्त पाठ स्तोत्र पाठ एवं आरती का आपको ज्ञान हो जायेगा। प्रकरण अधोलिखित है-

1.4.1. गणेश जी की प्रसन्न्ता हेतु श्रीगणपत्यथर्वशीर्ष का सूक्त पाठ-

गणपत्यथर्वशीर्षम् का पाठ सूक्त पाठों में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अतः गणपत्यथर्वशीषम् का पाठ इस प्रकार नीचे दिया जा रहा है-

ओं नमस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्वमसि। त्वमेव केवलं कर्त्तासि । त्वमेव केवलं धर्त्तासि। त्वमेव केवलं हर्त्तासि।त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम् । ऋतं वच्मि। सत्यं वच्मि। अव त्वं माम्। अव वक्तारम्। अव श्रोतारम्। अव दातारम्। अव धातारम्। अवानूचानमव शिष्यम्। अव पश्चात्तात्। अव पुरस्तात्। अवोत्तरात्तात्। अव दक्षिणात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। अवाधरात्तात्। सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्। त्वं वांग्मयस्त्वं चिन्मयः। त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयं। त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोसि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोसि। सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते। सर्व जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति। सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति। सर्व जगदिदं त्वयि प्रत्येति। त्वं भूमिरापो नलो निलो नभः। त्वं चत्वारि वाक्पदानि। त्वं गुणत्रयातीतः। त्वमवस्थात्रयातीतः। त्वं देहत्रयातीतः। त्वं कालत्रयातीतः। त्वं मूलाधारस्थितोसि नित्यम्। त्वं शक्तित्रयात्मकः। त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम्। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वंरुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्। गणादीन्पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम्। अनुस्वारः परतरः। अर्धेन्दुलसितं। तारेण रुद्धम्। एतत्तवमनुस्वरूपम्। गकारः पूर्वरूपम्। अकारो मध्यमरूपम्। अनुस्वारश्चान्त्यरूपम्। विन्दुरुत्तररूपम्। नादः सन्धानम्। स गुं हिता सन्धिः।सैषा गणेशविद्या। गणक ऋषिः। निचृद्गायत्री छन्दः। गणपतिर्देवता। ओं गं गणपतये नमः। एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमंकुशधारणम्। रदं च वरदं हस्तैर्विभ्राणमूषकध्वजम्। रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्। रक्तगन्धानुलिप्तांगं रक्तपुष्पैः सुपूजितम्। भक्तानुकम्पिनं देवं जगतकारणमच्युतम्।

आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम्। एवं ध्यायति योनित्यं स योगी योगिनां वरः। नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्ते अस्तु नमस्ते अस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्री वरदमूर्त्तये नमः।

एतदथर्वशीर्षं यो धीते स ब्रह्मभूयाय कल्पते। स सर्व विघ्नैर्न बाध्यते। स सर्वतः सुखमेधते। स पंचमहापापात्प्रमुच्यते। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाश्यति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाश्यति । सायं प्रातः प्रयुंजानो अपापो भवति। सर्वत्राधीयानो अपविघ्नो भवति। धर्मंमर्थंकामंमोक्षं च विन्दति। इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम्। यो यदि मोहाद्दास्यति स पापीयान् भवति। सहावर्तनाद्यं यं काममधीते तं तमनेन साधयेत्। अनेन गणपतिमभिषिंचति। स वाग्मी भवति। चतुर्थ्यामनश्नन् जपति स विद्यावान् भवति। इत्यथर्वणवाक्यम्। ब्रह्माद्यावरणं विद्यान्न विभेति कदाचनेति। यो दूर्वांकुरैर्यजति स वैश्रवणोपमो भवति। यो लाजैर्यजति स यशोवान् भवति। स मेधावान् भवति। यो मोदकसहस्रेण यजति स वांच्छितफलमवाप्नोति। यः साज्यसमिद्भिर्यजति स सर्वं लभते। स सर्वं लभते। अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग्ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति। सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति। महाविघ्नात्प्रमुच्यते। स सर्वविद्भवति। स सर्वविद्भवति। यं एवं वेद।।

।। इत्यथर्वणवाक्यम् ।।

गणेश जी को नमस्कार है । हे गणेश आप प्रत्यक्ष तत्व है। आप केवल कर्त्ता है। आप केवल धर्त्ता है। आप केवल कष्टों के हर्त्ता है। आप ही ब्रह्म है। आप साक्षात् नित्य आत्मा है। यह ऋत वचन है। यह सत्य वचन है। मेरी रक्षा करिये। मेंरे वाणि की रक्षा करें। मेरे श्रवण की रक्षा करे। मेरे दातृत्व की रक्षा करे। धातृत्व की रक्षा करें। मेरे अनूचान शिष्यों की रक्षा करें। पश्चिम की ओर से हमारी रक्षा करें। पूर्व से हमारी रक्षा करे। उत्तर की ओर से हमारी रक्षा करे। दक्षिण की ओर से हमारी रक्षा करे। ऊपर से हमारी रक्षा करे। नीचे से हमारी रक्षा करे। सभी ओर से मेरी रक्षा करे, सामने से भी हमारी रक्षा करे। आप वांग्मय है। आप चिन्मय है। आप आनन्दमय है। आप ब्रह्ममय है। आप सच्चिदानन्द है। आप अद्वितीय हैं। आप प्रत्यक्ष ब्रह्मा है। आप ज्ञानमय एवं विज्ञानमय हैं। यह सम्पूर्ण जगत् आप से उत्पन्न होता है। यह सम्पूर्ण जगत् आपमें स्थित है। यह सम्पूर्ण जगत् आप में ही लय हो जाता है। यह सम्पूर्ण जगत् आपकी ओर ही जाता है। आप भूमि है। आप आप यानी जल हैं। आप अनल यानी अग्नि है। आप अनिल यानी वायु है। आप नभ यानी आकाश है। आप चार मूल वाक्य है। आप गुणत्रयातीत है। आप अवस्थात्रयातीत है। आप देहत्रयातीत है। आप कालत्रयातीत है। आप नित्य मूलाधार में स्थित रहते है। आप तीनों शक्तियां है। योगि गण आपका नित्य ध्यान करते हैं। आप ब्रह्मा है। आप विष्णु है। आप रुद्र है। आप इन्द्र है। आप अग्नि है। आप वायु है। आप सूर्य है। आप चन्द्रमा है। आप ब्रह्म है । आप भूर्भुवः स्वरोम् है। गणादि का उच्चारण सर्वप्रथम करते हैं। वर्णादि का उच्चारण उसके बाद करते हैं। उसके बाद अनुस्वार है। अर्ध चन्द्र से विलसित हैं। तार यानी ओं कार से रुद्ध हैं ऐसा

आपका स्वरूप है। गकार पूर्णरूप में है। अकार मध्यम रूप में है। अनुस्वार अन्त्य रूप में है। विन्दु उत्तर रूप में है। नाद सन्धान करता है। सबका सामूहिक स्वरूप सन्धि है। यहीं श्री गणेेश की विद्या है। गणक इसके ऋषि है। निचृद् गायत्री छन्द है। गणपति इसके देवता है। ओं गं गणपतये नमः। इसका मन्त्र है। एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्। यह श्री गणेश गायत्री है।

एक दांत वाले, चार हाथ वाले, पाश एवं अंकुश धारण करने वाले आप है। हाथों में रद और वरद लिये हुये मूषक पर विराजमान हैं। रक्त वर्ण, लम्बा उदर यानी पेट शूर्प जैसा कर्णक यानी कान है। आप रक्त वस्त्र धारण किये हुये हैं। रक्त गन्ध से आपके अंग अनुलिप्त हैं तथा रक्त पुष्पों से आप सुपूजित हैं। भक्तों के ऊपर अनुकम्पा करने वाले आप देवता हैं तथा जगत के कारण हैं अच्युत गणेश जी। सृष्टि हेतु आप आविर्भूत होते हैं , प्रकृति एवं पुरुष से परे है। इस प्रकार जो नित्य आपका ध्यान करता है वह योगियों में श्रेष्ठ है। हे व्रतों के स्वामी, हे गणों के स्वामी, हे प्रमथ के स्वामी आपको नमस्कार हो। लम्बोदर के लिये, एकदन्त के लिये, विघ्ननाशिन् के लिये, शिव सुता के लिये, श्री वरदमूर्त्ति के लिये नमस्कार है।

इस अथर्वशीर्ष का जो ध्यान करता है वह ब्रह्मभूय के लिये कल्पना करता है। उसको सर्व विघ्न बाधित नही करते हैं। वह सभी ओर से सुख प्राप्त करता है। वह पंचमहापापों से छूट जाता है। सायं ध्यान से दिवस कृत पाप नष्ट होता है। प्रातः ध्यान से रात्रि कृत पाप नष्ट होता है । सायं प्रातः प्रयोग करने वाला पाप रहित होता है। सर्वत्र ध्यान करने वाला अविघ्नवान होता है। धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष को प्राप्त करता है। इस अथर्वशीर्ष को अशिष्य को नही देना चाहिये। जो मोह से देता है वह पापी होता है। सहस्त्र आवर्तन से जो जो सोचता है उसे साध सकता है। इससे गणपति जी का जो अभिसिंचन करता है वह वाग्मी होता है। चतुर्थी को बिना भोजन किये जो इसको जपता है वह विद्यावान् होता है। यह अथर्वण वाक्य है। ब्रह्मादि आवरण को जानकर किसी से भय वह नही खाता है। जो दूर्वांकुरों से यजन करता है वह वैश्रवणोपम होता है । जो लाजों से यजन करता है वह यशोवान् होता है। वह मेधावान् होता है । जो मोदकसहस्र से यजन करता है वह वांच्छित फल को प्राप्त करता है। जो आज्य यानी धी सहित समिधाओं से यजन करता है वह सब कुछ प्राप्त करता है। सब कुछ प्राप्त करता है। आठ ब्राह्मणों से जो अर्चन कराता है वह सूर्यवर्चस्वी होता है। सूर्यग्रहण में महानदी में, प्रतिमा के सन्निधि में जो जपता है उसका मन्त्र सिद्ध होता है। महाविघ्नों से वह छूट जाता है। वह सर्वविद् हो जाता है। वह सर्वविद् हो जाता है। इस प्रकार जानना चाहिये।

इस प्रकार भगवान गणेश जी के प्रिय सूक्त श्रीगणपत्यथर्वशीर्षम् के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें गणपति अथर्वशीर्ष के शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- ओं नमस्ते ....।

क-गणपतये, ख- तत्वमसि, ग- वच्मि, घ- चिन्मयः।

प्रश्न 2- त्वमेव प्रत्यक्षं...............।

क-गणपतये, ख- तत्वमसि, ग- वच्मि, घ- चिन्मयः।

प्रश्न 3- ऋतं.........।

क-गणपतये, ख- तत्वमसि, ग- वच्मि, घ- चिन्मयः।

प्रश्न 4- त्वं वांग्मयस्त्वं ....।

क-गणपतये, ख- तत्वमसि, ग- वच्मि, घ- चिन्मयः।

प्रश्न 5- त्वं प्रत्यक्षं ....।

क-ब्रह्मासि, ख- त्वयि प्रत्येति, ग- लयमेष्यति, घ- ध्यायन्ति नित्यम्।

प्रश्न 6- सर्व जगदिदं ....।

क-ब्रह्मासि, ख- त्वयि प्रत्येति, ग- लयमेष्यति, घ- ध्यायन्ति नित्यम्।

प्रश्न 7- सर्वं जगदिदं त्वयि..........।

क-ब्रह्मासि, ख- त्वयि प्रत्येति, ग- लयमेष्यति, घ- ध्यायन्ति नित्यम्।

प्रश्न 8- त्वां योगिनो...............।

क-ब्रह्मासि, ख- त्वयि प्रत्येति, ग- लयमेष्यति, घ- ध्यायन्ति नित्यम्।

प्रश्न 9- अनुस्वारः ....।

क-ब्रह्मासि, ख- परतरः, ग- लषितम्, घ- ध्यायन्ति नित्यम्।

प्रश्न 10- अर्धेन्दु.........................।

क-ब्रह्मासि, ख- त्वयि प्रत्येति, ग- लषितम्, घ- ध्यायन्ति नित्यम्।

1.4.2 संकटनाशनगणेशस्तोत्रम्-

संकटों को नष्ट करने हेतु श्री गणेश जी का यह स्तोत्र है। इस स्तोत्र का वर्णन नारद पुराण में किया गया है। इस स्तोत्र के विविध फल बताये गये हैं जो निम्नलिखित है-

प्रणम्य शिरसां देवं गौरीपुत्रं विनायकम्।
भक्तावासंस्मरेन्नित्यं आयुष्कामार्थ सिद्धये ।।
प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्।
तृतीयं कृष्णपिंगाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम्।।
लम्बोदरं पंचमं च षष्ठं विकटमेव च।
सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्टमम्।।

नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम् ।
एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम् ।।
द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः ।
न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं परम् ।।
विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम् ।
पुत्रार्थी लभते पुत्रान् मोक्षार्थी लभते गतिम् ।।
जपेत् गणपतिं स्तोत्रं षडिभर्मासैः फलं लभेत् ।
संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः ।।
अष्टानां ब्राह्मणानां च लिखित्वा यः समर्पयेत् ।
तस्य विद्या भवेत् सर्वा गणेशस्य प्रसादतः ।।
।। श्रीनारदपुराणे संकष्टनाशनं नाम गणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

श्री संकट नाशन गणेश स्तोत्र का हिन्दी अनुवाद-

गौरी पुत्र श्री विनायक जी को शिर से प्रणाम करता हूँ। आपकी स्तुति का भक्तगण आयु की कामना की सिद्धि के लिये हमेशा स्मरण करते रहते है। श्री गणेश जी का पहला नाम वक्र तुण्ड है। श्री गणेश जी का दूसरा नाम एकदण्त है। श्री गणेश जी का तीसरा नाम कृष्णपिंगाक्ष है। श्री गणेश जी का चौथा नाम गजवक्त्र है। श्री गणेश जी का पॉचवॉ नाम लम्बोदर है। श्री गणेश जी का छठां नाम विकट है। श्री गणेश जी का सांतवां नाम विघ्नराज है। श्री गणेश जी का आंठवां नाम धूम्रवर्ण है। श्री गणेश जी का नौवां नाम भालचन्द्र है। श्री गणेश जी का दसवां नाम विनायक है। श्री गणेश जी का ग्यारहवां नाम गणपति है। श्री गणेश जी का बारहवां नाम गजानन है।

भगवान गणेश जी के इन बारह नामों को तीनों सन्ध्याओं में जो व्यक्ति पढ़ता है उसको किसी भी प्रकार के विध्नों का भय नही होता है। उसको सभी प्रकार की श्रेष्ठ सिद्धियां प्राप्त होती है। इस स्तोत्र को विद्यार्थी पढ़ते हैं तो विद्या की प्राप्ति होती है। धन को प्राप्त करने वाला कोई व्यक्ति इस स्तोत्र को पढ़ता है तो उसे धन की प्राप्ति होती है। पुत्र को प्राप्त करने वाला कोई व्यक्ति इस स्तोत्र को पढ़ता है तो उसे पुत्र की प्राप्ति होती है। मोक्ष को प्राप्त करने वाला कोई व्यक्ति इस स्तोत्र को पढ़ता है तो उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है। भगवान गणपति के इस स्तोत्र को पढ़ने से छः मास में फल प्राप्त होता है। एक वर्ष तक पाठ करने से सिद्धि की प्राप्ति होती है। इसमें कोई संशय नही है। आठ ब्राह्मणों को लिखकर जो गणपति स्तोत्र को समर्पित करता है उसको श्री गणेश जी के प्रसाद से सारी विद्यायें प्राप्त होती है।

इस प्रकार भगवान गणेश जी के प्रिय स्तोत्र श्रीसंकष्टनाशनगणेश स्तोत्र के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी । अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा । इसमें

श्रीसंकष्टनाशनगणेश स्तोत्रम् के शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- प्रणम्य शिरसा ....।

क- देवं, ख- विनायकम्, ग- वक्रतुण्डं च, घ- विकटमेव च।

प्रश्न 2- गौरीपुत्रं ....।

क- देवं, ख- विनायकम्, ग- वक्रतुण्डं च, घ- विकटमेव च।

प्रश्न 3- प्रथमं ....।

क- देवं, ख- विनायकम्, ग- वक्रतुण्डं च, घ- विकटमेव च।

प्रश्न 4- षष्ठं ....।

क- देवं, ख- विनायकम्, ग- वक्रतुण्डं च, घ- विकटमेव च।

प्रश्न 5- सप्तमं ....।

क- विघ्नराजं, ख- भालचन्द्रं, ग- विनायकम्, घ- गजाननम्।

प्रश्न 6- नवमं ....।

क- विघ्नराजं, ख- भालचन्द्रं, ग- विनायकम्, घ- गजाननम्।

प्रश्न 7- दशमं तु ....।

क- विघ्नराजं, ख- भालचन्द्रं, ग- विनायकम्, घ- गजाननम्।

प्रश्न 8- द्वादशं तु ....।

क- विघ्नराजं, ख- भालचन्द्रं, ग- विनायकम्, घ- गजाननम्।

प्रश्न 9- विद्यार्थी लभते ....।

क- विघ्नराजं, ख- विद्या, ग- विनायकम्, घ- गजाननम्।

प्रश्न 10- धनार्थी लभते ....।

क- विघ्नराजं, ख- धनमं, ग- विनायकम्, घ- गजाननम्।

1.4.3 श्री गणेश जी की आरती

आरती के बिना पूजन नही हो सकता। प्रत्येक देवता के पूजन में आरती का विशेष महत्व है। श्री गणेश जी की आरती अधोलिखित प्रकार से दी जा रही है।

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।
माता जाकी पार्वती पिता महादेवा ।।

लडुवन के भोग लगे सन्त करे सेवा।
जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।।

एकदन्त दयावन्त चारभुजाधारी।
मस्तक पर सिन्दूर सोहे मूसे की सवारी।

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।
माता जाकी पार्वती पिता महादेवा ॥

अन्धन को आंख देत कोढ़िन के काया।
बांझन को पुत्र देत निर्धन को माया ॥

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।
माता जाकी पार्वती पिता महादेवा ॥

पान चढ़े फूल चढ़े और चढ़े मेवा।
सूरश्याम शरण में आयें सुफल कीजै सेवा ॥

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।
माता जाकी पार्वती पिता महादेवा ॥

इस प्रकार भगवान गणेश जी की प्रिय आरती के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें आरती के शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- माता जाकी...........।
क- पार्वती, ख- महादेवा, ग- भोग लगे, घ- सेवा।

प्रश्न 2- पिता...........।
क- पार्वती, ख- महादेवा, ग- भोग लगे, घ- सेवा।

प्रश्न 3- लड्डुवन के ....।
क- पार्वती, ख- महादेवा, ग- भोग लगे, घ- सेवा।

प्रश्न 4- सन्त करे ....।
क- पार्वती, ख- महादेवा, ग- भोग लगे, घ- सेवा।

प्रश्न 5- एकदन्त...........।
क- दयावन्त, ख- सिन्दूर सोहे, ग- सवारी, घ- आंख देत।

प्रश्न 6- मस्तक पर...........।
क- दयावन्त, ख- सिन्दूर सोहे, ग- सवारी, घ- आंख देत।

प्रश्न 7- मूसे की..........।

क- दयावन्त, ख- सिन्दूर सोहे, ग- सवारी, घ- आंख देत।

प्रश्न 8- अन्धन को ....।

क- दयावन्त, ख- सिन्दूर सोहे, ग- सवारी, घ- आंख देत।

प्रश्न 9- बांझन को ....।

क- पुत्र देत, ख- सिन्दूर सोहे, ग- सवारी, घ- आंख देत।

प्रश्न 10- निर्धन को ....।

क- दयावन्त, ख- सिन्दूर सोहे, ग-माया, घ- आंख देत।

1.5 सारांश-

इस इकाई में श्री गणेश जी की आरती एवं स्तुति विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया । कर्मकाण्ड के पक्ष में श्राद्धादि विषय को छोड़कर अन्यत्र सर्वत्र सर्वप्रथम गणेश जी की वन्दना या पूजा से ही कार्य का आरम्भ किया जाता है।यह प्रकल्प कार्य के निर्विघ्न समाप्त्यर्थ सम्पन्न किये जाते है। अतः श्री गणेश जी क्या हैं तथा कैसे उनकी आरती पूजा की जाती है इसका ज्ञान किसी पूजक को आवश्यक है। श्री गणेश जी की आरती एवं स्तुति विचार के अभाव में किसी व्रत, किसी मुहूर्त्त, किसी उत्सव एवं किसी पर्व का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि कोई भी व्रत करते हैं तो उसके निर्विघ्न पूर्णता के लिये हमें सबसे पहले श्री गणेश जी की वन्दना करनी होती है।

भगवान गणेश की आराधना सम्यक् प्रकार से तभी सम्भव है जब आप उनके स्वरूप के बारे में जाने, उनके तात्विक विवेचन के बारे में जाने। स्वरूप का विचार करते हुये कहा गया है कि भगवान गणेश का मुख मण्डल हाथी का एवं शरीर आकृति मानव की है। हाथी का मस्तक वृहद् विचार का द्योत है। हाथी के आंख की अत्यन्त विशेषता बतलायी गयी है । कहा गया है कि हाथी में कनीनिका विपरीत तरीके से लगने के कारण सामने की छोटी वस्तु को भी बड़ा देखता है। जिस प्रकार समतल दर्पण को छोड़कर अन्य दर्पण के प्रयोग से प्रतिबिम्ब बड़ा या छोटा दिखता है उसी प्रकार हाथी को किसी वस्तु का प्रतिबिम्ब बड़ा ही दिखता है। यह उन लोगों के लिये सबसे बड़ा सन्देश है जो धनादि के अभिमान वश लघुकाय प्रणियों को कीटप्राय समझकर पैर के तले रगड़ देते है। इससे यह शिक्षा मिलती है कि अपने से बड़ा समझकर सबका सम्मान करना चाहिये। नाक प्रतिष्ठा का द्योतक होता है। जिसकी नाक बड़ी हो यानी प्रतिष्ठा बड़ी हो उसको अपना सम्मान बचाने के बारे में सोचना चाहिये। प्रतिष्ठा संरक्षण व्यक्ति का कर्त्तव्य होना चाहिये। हाथी का कान यह संकेत करता है कि किसी भी व्यक्ति की कोई बात केवल सुनकर ही प्रतिक्रिया में नही लग जाना चाहिये अपितु उसको

हाथी के कान की तरह इधर- उधर चलाकर वास्तविकता की खोज करना चाहिये। जब तक वास्तविक बातों का पता न चल जाय तब तक प्रतिकार उचित नही है। हाथी की जिह्वा दन्तमूल से कण्ठ की ओर जाती है जिसके कारण कोई भी बात कहने के प्रयास करने पर उसका अच्छी तरह मनन करना चाहिये। मनन करने बाद यदि उचित हो तो बोलना चाहिये।

भगवान गणेश को प्रसन्न करने के लिये विभिन्न प्रकार के स्तोत्रों एवं सूक्तों का वर्णन किया गया है। इन सूक्तों में सबसे महत्वपूर्ण सूक्त है श्रीगणपति अथर्वशीर्षम्। यह सूक्त इस प्रकरण के अन्तर्गत दिया गया है। इसके फल का वर्णन करते हुये कहा गया है कि इससे यानी गणपत्यथर्वशीर्षम् से गणपति जी का जो अभिषिंचन करता है वह वाग्मी होता है। चतुर्थी को बिना भोजन किये जो इसको जपता है वह विद्यावान् होता है। यह अथर्वण वाक्य है। ब्रह्मादि आवरण को जानकर किसी से भय वह नही खाता है। जो दूर्वांकुरों से यजन करता है वह वैश्रवणोपम होता है। जो लाजों से यजन करता है वह यशोवान् होता है। वह मेधावान् होता है । जो मोदकसहस्र से यजन करता है वह वांच्छित फल को प्राप्त करता है। जो आज्य यानी घी सहित समिधाओं से यजन करता है वह सब कुछ प्राप्त करता है। आठ ब्राह्मणों से जो अर्चन कराता है वह सूर्यवर्चस्वी होता है। सूर्यग्रहण में महानदी में, प्रतिमा के सन्निधि में जो जपता है उसका मन्त्र सिद्ध होता है। महाविघ्नों से वह छूट जाता है। वह सर्वविद् हो जाता है। वह सर्वविद् हो जाता है।

स्तुति में श्री संकष्टनाशन गणेश स्तोत्र का पाठ दिया गया है। इसका तीनों सन्ध्याओं में जो व्यक्ति पाठ करता है उसको किसी भी प्रकार के विध्नों का भय नही होता है। उसको सभी प्रकार की श्रेष्ठ सिद्धियां प्राप्त होती है। इस स्तोत्र को विद्यार्थी पढ़ते हैं तो विद्या की प्राप्ति होती है। धन को प्राप्त करने वाला कोई व्यक्ति इस स्तोत्र को पढ़ता है तो उसे धन की प्राप्ति होती है। पुत्र को प्राप्त करने वाला कोई व्यक्ति इस स्तोत्र को पढ़ता है तो उसे पुत्र की प्राप्ति होती है। मोक्ष को प्राप्त करने वाला कोई व्यक्ति इस स्तोत्र को पढ़ता है तो उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है। भगवान गणपति के इस स्तोत्र को पढ़ने से छः मास में फल प्राप्त होता है। एक वर्ष तक पाठ करने से सिद्धि की प्राप्ति होती है। इसमें कोई संशय नही है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

एकदन्त- एक दांत वाले, दयावन्त- दया से समन्वित, चारभुजाधारी- चार भुजाओं को धारण करने वाले, मस्तक- माथा या ललाट, मूसे- चूहा, सवारी- वाहन, अन्धन- नेत्र ज्योति विहीन, कोढ़िन- कुष्ठ रोग से ग्रस्त रोगी, काया- शरीर, बांझन- सन्तानोत्पादन में असमर्थ स्त्री, निर्धन- धनहीन, माया- मुद्रा इत्यादि, पान- ताम्बूल, चढ़े- चढ़ना, मेवा- पंचमेवा, सुफल- सुस्वादु फल, प्रणम्य- प्रणाम करके, शिरसा- शिर से, गौरीपुत्रं - पार्वती जी के पुत्र, विनायक- विघ्नों के नायक, संस्मरेत्- सम्यक् प्रकार से स्मरण करना, नित्यं- प्रतिदिन, आयुष्कामार्थ - आयु की कामना के लिये, सिद्धये- सिद्धि के लिये,

गजवक्त्रं - हाथी का मुख , लम्बोदरं - लम्बा उदर हो जिसका, विघ्नराजं - विघ्नों के राजा, धूम्रवर्णं- धूम्र का वर्ण वाला, भालचन्द्रं - मस्तक पर चन्द्रमा हो जिसके, गणपतिं- गणों के स्वामी, गजाननम्- गज यानी हाथी के आनन यानी मुख वाला, द्वादशैतानि- ये बारह, नामानि- नाम, त्रिसन्ध्यं- तीनों सन्ध्याओं यानी प्रातः सन्ध्या में रात्रि एवं दिन की सन्धि, मध्यान्ह सन्ध्या में पूर्वान्ह एवं अपरान्ह की सन्धि, सायान्ह- दिन एवं रात्रि की सन्धि, यः- जो, विघ्नभयं - विघ्नों का भय, तस्य- उसको, सर्वसिद्धिकरं- सभी प्रकार की सिद्धियां करने वाला, परम्- उत्तम, विद्यार्थी - विद्या चाहने वाला, लभते- प्राप्त करता है, विद्यां- विद्या को, धनार्थी- धन चाहने वाला, धनम्- धन को, पुत्रार्थी- पुत्र चाहने वाला, पुत्रान्- पुत्रों को, मोक्षार्थी- मोक्ष चाहने वाला, गतिम्- गति को, षडिभर्मासैः - छ मासों से, संवत्सरेण - एक वर्ष, प्रसादतः- कृपा से, संकष्टनाशनं- कष्ट को नष्ट करने वाला, सम्पूर्णम्- पूरा हुआ, अव- रक्षा, माम्- मेरी, वक्तारम्- वकतृत्व शक्ति की, श्रोतारम्- श्रोतृत्व शक्ति की, दातारम्- दातृत्व शक्ति की, धातारम्- धातृत्व शक्ति की, अनूचान- ऋचाओं की, पश्चात्- पश्चिम से, पुरस्तात्- पूर्व से, उत्तरात्तात्- उत्तर से, दक्षिणात्तात्- दक्षिण से, उर्ध्वात्तात्- ऊपर से, अधरात्तात्- नीचे से, सर्वतो- चारो ओर से, मां- मेरी, पाहि- रक्षा करो, समन्तात्- सामने से, चिन्मयः- प्रकाशमय, आनन्दमय- आनन्द से विभूषित, ब्रह्ममयं- ब्रह्म से विभूषित, सच्चिदानन्द- सत्, चित्, आनन्द, अद्वितीयोसि- अद्वितीय हैं, ब्रह्मासि- ब्रह्मा हैं, ज्ञानमयो- ज्ञान से विभूषित, विज्ञानमयोसि- विज्ञान से विभूषित, जायते- उत्पन्न होता है, त्वत्तस्तिष्ठति- आप में तिष्ठित है, त्वयि लयमेष्यति- तुम्हारे में लय होता है, त्वयि प्रत्येति - आपकी ओर जाता है, भूमि- पृथ्वी, आप- जल, अनल- अग्नि, अनिल- वायु, नभः- आकाश, गुणत्रयातीतः-तीनों गुणों से परे, त्वमवस्थात्रयातीतः- तीनों अवस्थाओं से परे, देहत्रयातीतः- तीनो शरीरों से परे, कालत्रयातीतः- तीनों कालों से परे, मूलाधारस्थितोसि- मूलाधार में स्थित, नित्यम्- हमेशा, शक्तित्रयात्मकः- तीनों शक्तियों वाला, योगिनो- योगिगण, ध्यायन्ति- ध्यान करते हैं, त्वं ब्रह्मा- आप ब्रह्मा है, त्वं विष्णुस्- आप विष्णु है, त्वंरुद्रस्- आप रुद्र है, त्वमिन्द्रस्- आप इन्द्र हैं, त्वमग्निस्- आप अग्नि है, त्वं वायुस्- आप वायु है, त्वं सूर्यस्- आप सूर्य है, त्वं चन्द्रमास्- आप चन्द्रमा है, चतुर्हस्तं- चार भुजाओं वाले, पाश- फन्दा, अंकुश- अंकुश, धारणम्-धारण करने वाले, वरदं- वर देने वाले, रक्तं - लाल, शूर्पकर्णकं- शूप जैसा कान वाला, रक्तवाससम्- लाल वस्त्र धारण करने वाला, रक्तगन्धानुलिप्तांगं- लाल रंग के गन्धों से अनुलिप्त अंग वाला, रक्तपुष्पैः- लाल पुष्पों से, सुपूजितम्- पूजा किया जाने वाला, वरः- श्रेष्ठ, विघ्ननाशिने- विघ्न नाश के लिये, शिवसुताय- शिव जी के पुत्र के लिये, वरदमूर्त्तये- वरद की मूर्ति वाले देवता के लिये, नमः- नमस्कार हो, बाध्यते- बाधित करता है, स- वह, सर्वतः- चारो ओर से, सुखमेधते- सुख की वृद्धि होती है,

पंचमहापापात्- पंच महापापों से, प्रमुच्यते- छूट जाता है, सायमधीयानो- सायं को ध्यान करने वाला, दिवसकृतं- दिन के किये गये पाप, नाश्यति- नाश करता है, प्रातरधीयानो- प्रातः ध्यान करने वाला के, रात्रिकृतं- रात्रि में किये गये , पापं - पाप, अनश्नन् - बिना भोजन किये, लाजा- खीलें, मेधावान् - बुद्धि वाला, भवति- होता है, यो- जो, मोदकसहस्रेण- एक हजार लड्डु, यजति- यजन करता है, वांच्छितफलमवाप्नोति- इच्छानुसार फल प्राप्त करता है, साज्य- घी सहित, समिद्धिर्यजति- समिधाओं से यजन करता है, सर्वं - सब कुछ, लभते- प्राप्त करता है।

1.7अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

1.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ख, 8-ग, 9-ग, 10-ग।

1.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-क, 8-क, 9-क, 10-घ।

1.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

1.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ख ।

1.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-घ ।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-आरती संग्रह।

2-क्यों-भाग-1

3-क्यों- भाग-2।

4-शब्दकल्पद्रुमः।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-उत्सर्ग मयूख।

7-पूजन- विधान।

8- संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

1.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- दैनिक आरती स्तुति एवं स्तोत्र।

2- स्तोत्ररत्नावलिः।

3- श्रीगणपत्यथर्वशीर्षम् ।

1.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- श्री गणेश जी का परिचय बतलाइये ।

2- श्री गणेश जी का स्वरूप बतलाइये ।

3- श्री गणेश जी के स्वरूप का तात्विक विवेचन कीजिये ।

4- गणपत्यथर्वशीर्षम् नामक सूक्त लिखिये ।

5- गणपत्यथर्वशीर्षम् का हिन्दी अनुवाद दीजिये ।

6- संकष्टनाशन गणेश स्तोत्र लिखिये ।

7- संकटनाशन श्री गणेश स्तोत्र का महत्त्व लिखिये ।

8- गणपत्यथर्वशीर्ष का महत्त्व लिखिये ।

9- संकटनाशन श्री गणेश स्तोत्र का हिन्दी अनुवाद लिखिये ।

10- श्री गणेश भगवान की आरती का वर्णन कीजिये ।

इकाई 2 - श्री दुर्गा जी की आरती एवं स्तुति

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 श्री दुर्गा जी का स्वरूप विचार एवं माहात्म्य

2.3.1 श्री दुर्गा जी का स्वरूप विचार

2.3.2 दुर्गा जी का माहात्म्य

2.4 श्री दुर्गा जी की स्तुति एवं आरती

2.4.1 श्री दुर्गा जी की स्तुति हेतु भगवती स्तोत्रम्

2.4.2 श्री दुर्गा जी की आरती

2.4.3 श्री दुर्गा जी की द्वितीय आरती

2.4.4 श्री दुर्गा जी की अन्य आरती

2.5 सारांश

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.9 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में श्री दुर्गा जी की आरती एवं स्तुति विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कर्मकाण्ड के पक्ष आदि शक्ति के रूप में पराम्बा भगवती जगत जननि जगदम्बिका को जाना गया है। श्राद्धादि विषय को छोड़कर अन्यत्र सर्वत्र दुर्गा जी की वन्दना या पूजन किया जाता है। यह प्रकल्प शक्ति प्राप्ति हेतु एवं विधि मनोकामनाओं की प्रपूर्ति हेतु किया जाता है। अतः श्री दुर्गा जी क्या हैं ? तथा कैसे उनकी आरती पूजा की जाती है ? इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

श्री दुर्गा जी की आरती एवं स्तुति विचार के अभाव में किसी नवरात्रादि के अवसर पर व्रतादि या पूजनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसमें दुर्गा माता की ही उपासना की जाती है। जब असुरों का अत्याचार इतना बढ़ गया था जिसमें सामान्य जन का जीना दुभर हो गया था तब समस्त देवमण्डल में यह विचार किया जाने लगा कि किस प्रकार से इन दैत्यों से मुक्त हुआ जा सकता है। उस समय ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश को छोड़कर अन्य कोई शक्ति ऐसी नही थी जिससे दैत्य पराजित हो सके। ये तीनों महाशक्तियों का दैत्यों के साथ युद्ध में आना उचित नही था इसलिये विकल्प पर विचार किया जाने लगा। समस्त देवगणों ने ध्यान से अपनी - अपनी शक्तियों का थोड़ा अंश निकालकर एक जगह एकत्रित करने का प्रयास किया। वह प्रयास सफल हुआ तथा उस एकत्रित शक्तियों से महादेवी का प्राकट्य हुआ जिसे दुर्गा देवि के रूप में जाना जाता है। दुर्गा जी की सवारी का नाम सिंह है। इस प्रकार माता दुर्गा की उपासना उपासक गण विविध रीति से करके अपने मनोकामनाओं को पूरा करते हैं।

इस इकाई के अध्ययन से आप श्री दुर्गा जी की आरती एवं स्तुति इत्यादि के विचार करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे श्री दुर्गा जी की आरती एवं स्तुति आदि विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सर्वर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

2.2 उद्देश्य-

अब श्री दुर्गा जी की आरती एवं स्तुति विचार की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं -

- ❖ कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

- ❖ श्री दुर्गा जी की आरती एवं स्तुति सम्पादनार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
- ❖ कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।
- ❖ प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
- ❖ लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
- ❖ समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

2.3. श्री दुर्गा जी का स्वरूप विचार एवं माहात्म्य -

इसमें श्री दुर्गा जी का स्वरूप विचार एवं माहात्म्य का ज्ञान आपको कराया जायेगा क्योंकि बिना इसके परिचय के श्री दुर्गा जी का आधारभूत ज्ञान नही हो सकेगा। आधारभूत ज्ञान हो जाने पर श्रद्धा एवं समर्पण की भावना का उद्भव होता है। भावो हि विद्ते देवः के अनुसार भावना होने पर देवत्व को प्राप्त किया जा सकता है। इसलिये श्री दुर्गा जी का स्वरूप विचार एवं महत्त्व इस प्रकार है-

2.3.1 श्री दुर्गा जी का स्वरूप विचार-

माता दुर्गा का ध्यान हम विविध रूपों में करते हैं। देवि पुराण में अनेकों श्लोकों में मातेश्वरी के विविध स्वरूपों को दर्शाया गया है। भगवती दुर्गा की उपासना में एक ग्रन्थ अत्यन्त प्रचलित है जिसे दुर्गा सप्तशती के रूप में जाना जाता है। इसमें दुर्गा जी की उपासना के लिये तेरह अध्यायों में सात सौ श्लोकों को दिया गया है। इसी में से प्रथम अध्याय का यह श्लोक ध्यान हेतु प्रदत्त है जिसका वर्णन इस प्रकार है-

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघांछूलं भुशुण्डीं शिरः।
शंखंसंन्दधतिं करैस्त्रिनयनयनां सर्वांगभूषावृताम्।।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां।
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम्।।

इसकी व्याख्या करते हुये बतलाया गया है कि माता दुर्गा के दश हाथ हैं। उन दशों हाथों में माता अस्त्र धारण की हुयी है जिनके नाम खड्ग यानी तलवार, चक्र, गदा, बाण, धनुष, परिघ, शूल, भुशुण्डि, मस्तक और शंख हैं। माता दुर्गा के तीन नेत्र है। माता दुर्गा के समस्त अंग आभूषणों से सुशोभित है। इनके शरीर की कान्ति नील मणि के समान है। दुर्गा जी दस मुख और दस पैरों से युक्त है। माता दुर्गा के स्वरूपों पर विचार करते हुये सप्तशती के तीसरे अध्याय में कहा गया है कि-

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरो मालिकां।
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वरम्।।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं।
देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकूटां वन्दे अरविन्दस्थिताम्।।

अर्थात् जगदम्बा के श्री अंगों की कान्ति उदयकाल के सहस्रों सूर्यों के समान है। माताजी लाल रंग

की रेशमी साड़ी पहनी हुयी है। दुर्गा जी के गले में मुण्डमाला शोभा पा रही है। अपने कर कमलों में जपमालिका, विद्या और अभय तथा वर नामक मुद्रायें धारण की हुई है। तीन नेत्रों से सुशोभित मुखारविन्दों की अत्यन्त उत्कृष्ट शोभा हो रही है। माताजी के मस्तक पर चन्द्रमा के साथ ही रत्नमय मुकुट बधा हुआ है। माताजी कमल के आसन पर विराजमान है। ऐसी देवि दुर्गा को मै प्रणाम करता हॅू।

सिद्धि की इच्छा रखने वाले पुरुष जिनकी सेवा करते हैं, उनका जया नाम दुर्गा के रूप में ही जाना जाता है। माता दुर्गा का एक स्वरूप पद्मावती देवि का है जो सर्वेश्वर भैरव के अंक में निवास करती हैं। यह देवी नागराज के आसन पर विराजमान है। नागों के फणों में पायी जाने वाली मणियों की माला से माता दुर्गा का शरीर सुशोभित हो रहा है।

इस प्रकार विविध शब्दों से माता दुर्गा के स्वरूपों का वर्णन किया गया है परन्तु एक कवि ने तो कह दिया मातेश्वरी मैं आपकी वन्दना हेतु ऐसा कोई शब्द नही है जिसे नही पाता हूॅं। उन्होने कहा हे जगदम्बिके संसार में कौन ऐसा वांग्मय है जिसमें तुम्हारी स्तुति नही है। क्योकि तुम्हारा शरीर तो शब्दमय है। संकल्पविकल्पात्मक रूप से उदित होने वाली एवं संसार में दृश्यरूप से सामने आने वाली सम्पूर्ण आकृतियों में आपके स्वरूप का दर्शन होने लगा है। हे समस्त अमंगलध्वंसकारिणी कल्याण स्वरूपे शिवे इस बात को सोचकर अब बिना किसी प्रयत्न के ही सम्पूर्ण चराचर जगत् में मेरी यह स्थिति हो गयी है कि मेरे समय का क्षूद्रतम अंश भी तुम्हारी स्तुति, जप, पूजा अथवा ध्यान से रहित नही है। अर्थात् मेरे सम्पूर्ण जागतिक आचार व्यवहार तुम्हारे ही भिन्न- भिन्न रूपों के प्रति यथोचित रूप से व्यवहृत होने के कारण तुम्हारी पूजा के रूप में परिणत हो गये है। संबंधित श्लोक इस प्रकार है-

तव च का किलन स्तुतिरम्बिके।
सकलशब्दमयी किल ते तनुः ।
निखिलमूर्तिषु मे भवदन्वयो।
मनसि जासु बहिः प्रसरासु च ।
इति विचिन्त्य शिवे शमिता शिवे ।
जगति जातमयत्नवशादिदम् ।
स्तुतिजपार्चनचिन्तनवर्जिता ।
न खलु काचन काल कलास्ति मे ।

इस प्रकार भगवती दुर्गा जी के स्वरूप के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं । अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है । प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है -

प्रश्न 1- माता दुर्गा जी को ....नेत्र है।

क- तीन, ख- चार, ग- पांच, घ-छः।

प्रश्न 2- माता दुर्गा जी का आसन ....का है।

क- विल्व पत्र का, ख- कमल का, ग- कुशे का, घ- कम्बल का।

प्रश्न 3- माता दुर्गा जी का ....वाहन है।

क- मूसे का, ख- मयूर का, ग- सिंह का, घ- बत्तक का।

प्रश्न 4- माता दुर्गा जी के शरीर की कान्ति ....मणि जैसी है।

क- कृष्ण मणि, ख- रक्तमणि, ग- पीतमणि, घ- नीलमणि।

प्रश्न 5- माता दुर्गा जी के ....हाथ हैं।

क- दस, ख- बारह, ग- पांच, घ-छः।

प्रश्न 6- माता दुर्गा जी के सप्तशती में ....अध्याय हैं।

क- तीन, ख- तेरह, ग- पांच, घ-छः।

प्रश्न 7- माता दुर्गा जी के सप्तशती में ....श्लोक हैं।

क- तीन सौ, ख- चार सौ, ग- सात सौ, घ- एक सौ।

प्रश्न 8- माता दुर्गा जी के ....पैर हैं।

क- तीन, ख- चार, ग- पांच, घ-दस।

प्रश्न 9- माता दुर्गा जी के ....मुख हैं।

क- तीन, ख- चार, ग- दस, घ-छः।

प्रश्न 10 - माता दुर्गा जी के गले में ....मुण्डमाला है।

क- तीन, ख- चार, ग- पांच, घ-एक।

2.3.2 दुर्गा जी का माहात्म्य-

कलौ चण्डी विनायकौ के अनुसार कलियुग में चण्डी एवं विनायक दो ही साक्षात् देवता बतलाये गये हैं। कलियुग के समस्त प्राणी अपनी मनोकामना को पूर्ण करने के लिये देवी दुर्गा की उपासना करते हैं। शक्ति अर्जन की प्रमुख स्रोत मातेश्वरी दुर्गा हैं। दुर्गा जी के माहात्म्य का वर्णन करते हुये शंकराचार्य जी आनन्द लहरी में इस प्रकार लिखते है-

भवानि स्तोतुं त्वां प्रभवति चतुर्भिर्न वदनैः ।

प्र्रजानामीशानस्त्रिपुरमथनः पंचभिरपि ।।

न षड्भिः सेनानीर्दशशतमुखैरप्यहिपति-

स्तदान्येषां केषां कथय कथमस्मिन्नवसरः ।।

अर्थात् हे भवानी प्रजापति ब्रह्मा जी अपने चारो मुखों से भी तुम्हारी स्तुति करने में समर्थ नही है। त्रिपुर विनाशक भगवान शंकर पांचों मुखों से तुम्हारा स्तवन नही कर सकते, कार्तिकेय जी तो छः मुख रहते हुये भी आपकी स्तुति करने में असमर्थ है। इन गणना में आनेवालों की बात तो छोड़ो , नागराज शेष हजारों मुखों से भी तुम्हारा गुणगान नही कर पाते है। जब इनकी यह दशा है तो किसी को और किस प्रकार स्तुति का अवसर प्राप्त हो सकता है।

घृतक्षीरद्राक्षामधुमधुरिमा कैरपि पदै,

र्विशिष्यानाख्येयो भवति रसना मात्रविषयः ।।

तथा ते सौन्दर्यं परमशिवदृंमात्रविषयः,

कथंकारं ब्रूमः सकलनिगमागोचरगुणगणैः ।।

अर्थात् घी, दूध, दाख और मधु की मधुरता को किसी भी शब्द से विशेष रूप से नही बताया जा सकता। उसे तो केवल रसना यानी जिह्वा ही जानती है। उसी प्रकार तुम्हारा सौन्दर्य केवल महादेव जी के नेत्रों का विषय है उसे हम कैसे बता सकते है।

मुखे ते ताम्बूलं नयनयुगले कज्जलकला,

ललाटे काश्मीरं विलसति गले मौक्तिकलता ।

स्फुरत्कांची शाटी पृथुकटितटे हाटकमयी,

भजामि त्वां गौरीं नगपतिकिशोरीमविरतम् ।।

अर्थात् हे महादेवी दुर्गा तुम्हारे मुख में पान है। नयनों में कज्जल की पतली रेखा है। ललाट में केशर की बिंदी है। गले में मोती का हार सुशोभित हो रहा है। कटि तट में सुनहली साड़ी है, जिसपर रत्नमयी मेखला चमक रही है। ऐसी वेषभूषा से सजी हुयी गिरिराज हिमालय की गौरवर्णीया कन्या आपको मैं सदा भजता हूँ।

विराजन्मन्दारदु्रमकुसुमहारस्तनतटी,

नदद्वीणानादश्रवणविलसत्कुण्डलगुणा ।
नतांगी मातंगीरुचिरगतिभंगी भगवती,
सती शम्भो रम्भोरुहचटुलचक्षुविजयते ।।

अर्थात् जहां पारिजात पुष्प की माला सुशोभित हो रही है, उन उरोंजों के समीप बजती हुयी बीड़ा का मधुर नाद श्रवण करते हुये जिनके कानों में कुण्डल शोभा पा रहे है। जिनका अंग झुका हुआ है, हथिनी की भाति मन्द मनोहर चाल है। जिनके नेत्र कमल के समान सुन्दर और चंचल है, वे शम्भू की सती भार्या भगवती उमा सर्वत्र विजयिनी हो रही है।

इस प्रकार के अनेकों श्लोकों से शंकराचार्य जी ने भगवती दुर्गा की वन्दना की है। महादैत्यपति शुम्भ के मारे जाने पर इन्द्र देवता अग्नि को आगे करके उन कात्यायनी देवि की स्तुति करने लगे। उस समय अभीष्ट की प्राप्ति होने से उनके मुख कमल दमक उठे थे और उनके प्रकाश से दिशायंे भी जगमगा उठी थी। देवताओं ने कहा-

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद,
प्रसीदमातर्जगतोखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं,
त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य।।
आधारभूता जगतस्त्वमेका,
महीस्वरूपेण यतः स्थितासि।
अपां स्वरूपस्थितया त्वयैतद्-
आप्यायते कृत्स्नमलंघ्यवीर्ये।।
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या,
विश्वस्य बींज परमासि माया।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्,
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति हेतुः।

अर्थात् हे देवि आप शरणागत की पीड़ा दूर करने वाली हैं। सम्पूर्ण जगत् की आप माता है। विश्व की ईश्वरी है। आप चराचर जगत् की अधिष्ठात्री देवि है। आप इस जगत् की आधारभूता है क्योकि पृथ्वी रूप में आपकी स्थिति है। आपका पराक्रम अलंधनीय है। आप बल सम्पन्न वैष्णवी शक्ति है। इस विश्व की कारणभूता परा माया है। आप ने इस समस्त जगत् को मोहित कर रखा है। आप ही प्रसन्न होने पर इस पृथ्वी पर मोक्ष की प्राप्ति कराती है।

विद्याः समस्ता तव देवि भेदाः,
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत् ,

का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ।।

इस संसार की समस्त विद्यायें आपकी भिन्न- भिन्न स्वरूप है। जगत की सारी स्त्रियां आपकी ही मूर्तियां है। एकमात्र तुमने ही इस विश्व को व्याप्त कर रखा है। तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है? आप तो स्तवन योग्य पदार्थों से परे है अर्थात् आप परा वाणी हैं।

इस प्रकार भगवती दुर्गा जी के माहात्म्य के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों को दिये गये विकल्पों से उत्तरित करना है । प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं । अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- चार मुख से कौन माता दुर्गा जी की स्तुति नही कर पाते है?

क- ब्रह्मा जी, ख- शंकर जी, ग- कार्तिकेय जी, घ- नागराज शेष जी।

प्रश्न 2- पांच मुख से कौन माता दुर्गा जी की स्तुति नही कर पाते है?

क- ब्रह्मा जी, ख- शंकर जी, ग- कार्तिकेय जी, घ- नागराज शेष जी।

प्रश्न 3- छः मुख से कौन माता दुर्गा जी की स्तुति नही कर पाते है?

क- ब्रह्मा जी, ख- शंकर जी, ग- कार्तिकेय जी, घ- नागराज शेष जी।

प्रश्न 4- हजार मुख से कौन माता दुर्गा जी की स्तुति नही कर पाते है?

क- ब्रह्मा जी, ख- शंकर जी, ग- कार्तिकेय जी, घ- नागराज शेष जी।

प्रश्न 5- द्राक्षा शब्द का अर्थ है-

क- दाख, ख- जिह्वा, ग- पान, घ- माला।

प्रश्न 6- रसना शब्द का अर्थ है-

क- दाख, ख- जिह्वा, ग- पान, घ- माला।

प्रश्न 7- ताम्बूल शब्द का अर्थ है-

क- दाख, ख- जिह्वा, ग- पान, घ- माला।

प्रश्न 8- हार शब्द का अर्थ है-

क- दाख, ख- जिह्वा, ग- पान, घ- माला।

प्रश्न 9- प्रसीद शब्द का अर्थ है-

क- प्रसन्न होना, ख- जिह्वा, ग- पान, घ- माला।

प्रश्न 10- युगल शब्द का अर्थ है-

क- दाख, ख- जिह्वा, ग- दो, घ- माला।

2.4.श्री दुर्गा जी की स्तुति एवं आरती -

इसमें श्री दुर्गा जी की स्तुति एवं आरती का ज्ञान आपको कराया जायेगा क्योकि बिना इसके परिचय के श्री दुर्गा जी का आधारभूत ज्ञान नही हो सकेगा। आधारभूत ज्ञान हो जाने पर श्रद्धा एवं समर्पण की भावना का उद्भव होता है। भावो हि विद्ते देवः के अनुसार भावना होने पर देवत्व को प्राप्त किया जा सकता है। इसलिये श्री दुर्गा जी की स्तुति एवं आरती इस प्रकार है-

2.4.1 श्री दुर्गा जी की स्तुति हेतु भगवती स्तोत्रम्-

माता दुर्गा का स्तवन हम विविध स्तोत्रों से करते हैं। भगवान व्यासकृत श्री भगवतिस्तोत्रम् इस प्रकार दिया गया है-

जय भगवति देवि नमो वरदे, जय पापविनाशिनि बहुफलदे।
जय शुम्भ निशुम्भ कपालधरे, प्रणमामि तु देवि नरार्ति हरे।।
जय चन्द्रदिवाकरनेत्रधरे, जय पावकभूषितवक्त्रवरे।
जय भैरवदेहनिलीनपरे, जय अन्धकदैत्यविशोषकरे।।
जय महिषविमर्दिनी शूलकरे, जय लोकसमस्तकपापहरे।
जय देविपितामह विष्णुनते, जय भास्करशक्रशिरोवनते।
जय षण्मुख सायुधईशनुते, जयसागरगामिनि शम्भुनुते।
जय दुखदरिद्रविनाशकरे, जयपुत्रकलत्रविवृद्धिकरे।
जय देवि समस्तशरीरधरे, जय नाकविदर्शिनि दुखहरे।
जय व्याधि विनाशिनि मोक्ष करे, जय वांछितदायिनि सिद्धिवरे।
एतद् व्यासकृतं स्तोत्रं यः पठेन्नियतः शुचिः।
गृहे वा शुद्धभावेन प्रीता भगवती सदा।।
इति श्री व्यासकृत् भगवती स्तोत्रं सम्पूर्णम्।।

इस श्री व्यासकृत् भगवती स्तोत्र में पराम्बा भगवती मां दुर्गा को प्रणाम किया गया है। मां दुर्गा कैसी है? कवि कहते हैं पापों का विनाश करने वाली तथा बहुत से फलों को देने वाली है। शुम्भ एवं निशुम्भ के कपाल को धारण करने वाली है। ऐसे मनुष्यों के संकट को हरने वाली देवी को नमस्कार है। चन्द्र और दिवाकर यानी सूर्य को अपने नेत्रों में धारण करने वाली, पावक या अग्नि के समान देदिप्यमान मुख से सुशोभित होने वाली, भैरव जी के शरीर में लीन रहने वाली तथा अन्धक दैत्य का शोषण करने वाली हे देवि तुम्हारी जय हो।

हे महिषासुर का विमर्दन यानी मर्दन करने वाली, त्रिशूल को हाथों में धारण करने वाली, समस्त

लोकों के पापों को हरण करने वाली, पितामह ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, और इन्द्र से नमस्कृत् होने वाली, हे देवी तुम्हारी जय हो। सशस्त्र शंकर और कार्तिकेय जी के द्वारा वन्दित होने वाली, शिव के द्वारा प्रशंसित होने वाली, सागर में मिलने वाली गंगा के स्वरूप में विराजमान हे देवि आपकी जय हो।
दुख एवं दरिद्रता का नाश करने वाली, पुत्र एवं कलत्र यानी स्त्री सुख की वृद्धि करने वाली देवी आपकी जय हो।
समस्त शरीर को धारण करने वाली, नाक यानी स्वर्ग का दर्शन कराने वाली, व्याधि यानी रोगों का विनाश कर मुक्ति प्रदान करने वाली, वांछित फलों को प्रदान करने वाली, श्रेष्ठ सिद्धियों को प्रदान करने वाली आपकी जय हो।

यह श्री व्यास कृत् स्तोत्र जो शुद्ध होकर नित्य पठता है, उसके ऊपर भगवती प्रसन्न होती है।

इस प्रकार भगवती दुर्गा जी के भगवती स्तोत्र के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों को दिये गये विकल्पों से उत्तरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- दिवाकर शब्द का अर्थ है-

क-सूर्य , ख- अग्नि, ग- पान, घ- माला।

प्रश्न 2- पावक शब्द का अर्थ है-

क-सूर्य , ख- अग्नि, ग- पान, घ- माला।

प्रश्न 3- नाक शब्द का अर्थ है-

क-सूर्य , ख- अग्नि, ग- स्वर्ग, घ- माला।

प्रश्न 4- व्याधि शब्द का अर्थ है-

क-सूर्य , ख- अग्नि, ग- पान, घ- रोग।

प्रश्न 5- कलत्र शब्द का अर्थ है-

क-स्त्री , ख- अग्नि, ग- पान, घ- माला।

प्रश्न 6- विमर्दन शब्द का अर्थ है-

क-सूर्य , ख- मर्दन, ग- पान, घ- माला।

प्रश्न 7- पितामह शब्द का अर्थ है-

क-सूर्य , ख- मर्दन, ग- ब्रह्मा, घ- माला।

प्रश्न 8- शक्र शब्द का अर्थ है-

क-सूर्य , ख- मर्दन, ग- पान, घ- इन्द्र ।

प्रश्न 9- षण्मुख शब्द का अर्थ है-

क-सूर्य , ख-कार्तिकेय, ग- पान, घ- माला ।

प्रश्न 10- ईश शब्द का अर्थ है-

क-सूर्य , ख- शंकर भगवान, ग- पान, घ- माला ।

2.4.2 श्री दुर्गा जी की आरती

इस प्रकरण में आप माता दुर्गा के आरती के विषय में जानेगें। बिना आरती के पूजन पूरा नही होता है। इसलिये आरती का ज्ञान अनिवार्य है। आरती इस प्रकार दी जा रही है-

ओं जग जननी जय जय, मां जग जननी जय जय ।

भयहारिणी भवतारिणि भवभामिनि जय जय ।। मां जग जननी जय जय ।।

तू ही सत् चित् सुखमय, शुद्ध ब्रह्मरूपा । मैया शुद्ध ब्रह्म रूपा ।

सत्य सनातन सुन्दर, पर शिव सुर भूपा ।। मां जगजननी जय जय ।

आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी । मैया अविचल अविनाशी ।

अमल अनन्त अगोचर अज आनन्द राशी । मां जग जननी जय जय ।

अविकारी अघहारी, अकल कलाधारी । मैया अकल कला धारी ।

कर्त्ता विधि भर्त्ता हरि हर संहार कारी । मां जग जननी जय जय ।

तू विधि वधू रमा तू उमा महामाया । मैया उमा महामाया ।

मूल प्रकृति विद्या तू तू जननी जाया । मां जगजननी जय जय ।

रामकृष्ण तू सीता व्रजरानी राधा । मैया व्रज रानी राधा ।

तू वांछाकल्पद्रुम , हारिणि सब बाधा । मां जगजननी जय जय ।

दश विद्या नव दुर्गा नाना शास्त्रकरा । मैया नाना शास्त्रकरा ।

अष्टमातृका योगिनि नव नव रूप धरा । मां जग जननी जय जय ।

तू परधामनिवासिनि महाविलासिनि तू । मैया महा विलासिनि तू ।

तू ही श्मशान विहारिणि , ताण्डवलासिनि तू । मां जग जननी जय जय ।

सुर मुनि मोहिनि सौम्या तू शोभा धारा । मैया तू शोभा धारा ।

विवसन विकट सरूपा प्रलयमयी धारा। मां जगजननी जय जय।

तू ही स्नेह सुधामयि, तू अति गरलमना। मैया तू अति गरलमना।

रत्नविभूषित तू ही, तू ही अस्थितना। मां जग जननी जय जय।

मूलाधार निवासिनि, इह पर सिद्धि प्रदे। मैया इह पर सिद्धि प्रदे।

कालातीता काली कमला तू वर दे। मां जग जननी जय जय।

शक्ति शक्तिधर तू ही नित्य अभोद मयी। मैया नित्य अभेदमयी।

भेद प्रदर्शिनि वाणी विमले वेदत्रयी। मां जग जननी जय जय।

हम अति दीन दुखी मां विपत् जाल घेरे। मैया विपत् जाल घेरे।

है कपूत अति कपटी पर बालक तेरे। मां जग जननी जय जय।

निज स्वभाव वश जननी दया दृष्टि कीजै। मैया दया दृष्टि कीजै।

करुणा कर करुणामयि चरण शरण दीजै।। मां जग जननी जय जय।

ओं जग जननी जय जय, मां जग जननी जय जय।

भयहारिणी भवतारिणि भवभामिनि जय जय।। मां जग जननी जय जय।।

इस प्रकार भगवती दुर्गा जी की आरती के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों को दिये गये विकल्पों से पूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- भयहारिणी .... भवभामिनि जय जय।। मां जग जननी जय जय।।

क- भवतारिणि, ख- सुखमय, ग- सुन्दर, घ- अविचल।

प्रश्न 2- तू ही सत् चित् ...., शुद्ध ब्रह्मरूपा। मैया शुद्ध ब्रह्म रूपा।

क- भवतारिणि, ख- सुखमय, ग- सुन्दर, घ- अविचल।

प्रश्न 3- सत्य सनातन ...., पर शिव सुर भूपा।। मां जगजननी जय जय।

क- भवतारिणि, ख- सुखमय, ग- सुन्दर, घ- अविचल।

प्रश्न 4- आदि अनादि अनामय .... अविनाशी। मैया अविचल अविनाशी।

क- भवतारिणि, ख- सुखमय, ग- सुन्दर, घ- अविचल।

प्रश्न 5- अमल अनन्त .... अज आनन्द राशी। मां जग जननी जय जय।

क-अगोचर, ख- अकल, ग- हरि हर, घ- उमा।

प्रश्न 6- अविकारी अघहारी, ... कलाधारी। मैया अकल कला धारी।

क-अगोचर, ख- अकल, ग- हरि हर, घ- उमा।

प्रश्न 7-कर्त्ता विधि भर्त्ता .... संहार कारी। मां जग जननी जय जय।

क-अगोचर, ख- अकल, ग- हरि हर, घ- उमा।

प्रश्न 8-तू विधि वधू रमा तू .... महामाया। मैया उमा महामाया।

मूल प्रकृति विद्या तू तू जननी जाया। मां जगजननी जय जय।

क-अगोचर, ख- अकल, ग- हरि हर, घ- उमा।

प्रश्न 9-रामकृष्ण तू सीता .... राधा। मैया व्रज रानी राधा।

क-अगोचर, ख- ब्रजरानी, ग- हरि हर, घ- उमा।

प्रश्न 10- तू वांछाकल्पद्रुम , ... सब बाधा। मां जगजननी जय जय।

क-अगोचर, ख- अकल, ग- हारिणि, घ- उमा।

2.4.3 मॉं दुर्गा जी की द्वितीय आरती-

माता दुर्गा जी के एक आरती को आपने जाना। अब हम आपको दूसरी आरती से भी परिचय कराना चाहते है। क्योंकि समय-समय पर भक्तों द्वारा इस आरती का भी प्रयोग किया जाता रहा है। दोनों आरतियों का ज्ञान कर्मकाण्ड के लिये अत्यन्त आवश्यक है। अतः यह आरती इस प्रकार है-

ओं जय अम्बे गौरी मैया जै श्यामा गौरी।

तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिव री। ओं जय अम्बे गौरी।

मांग सिन्दूर विराजत, टीको मृग मदको। मैया टीको मृगमदको।

उज्ज्वल से दोउ नयना, चन्द्रवदन नीको। मां जै अम्बे गौरी।

कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजे। मैया रक्ताम्बर राजे।

रक्त पुष्प गले माला, कण्ठन पर साजे। मां जै अम्बे गौरी।

केहरि वाहन राजत , खड्ग खप्पर धारी। मैया खड्ग खप्पर धारी।

सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुख हारी। ओं जै अम्बे गौरी।

कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती। मैया नासाग्रे मोती।

कोटिक चन्द्र दिवाकर , राजत सम ज्येति। ओं जै अम्बे गौरी।

शुम्भ निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती। मैया महिषासुरघाती।

धूम्र विलोचन नयना, निशि दिन मदमाती। ओं जै अम्बे गौरी।

चण्ड मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे। मैया शोणित बीज हरे।

मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भय हीन करे। ओं जै अम्बे गौरी ।

ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी। मैया तुम कमला रानी ।

आगम निगम बखानी, तुम शिव पटरानी । ओं जै अम्बे गौरी ।

चौसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरो । मैया नृत्य करत भैरो ।

बाजत तालमृदंगा , और बाजत डमरू । ओं जै अम्बे गौरी ।

तू ही जग की माता, तुम ही हो भरता । मैया तुम ही हों भरता ।

भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पत्ति करता । ओ जै अम्बे गौरी ।

भुजा चार अति शोभित, वर मुद्रा धारी । मैया वर मुद्रा धारी ।

मन वांछित फल पावत, सेवत नर नारी । ओ जै अम्बे गौरी ।

कंचन थाल विराजत, अगर कपुर बाती। मैया अगर कपुर बाती ।

श्री मालकेतु में रजत, विन्ध्याचल में विराजत, कोटि रतन ज्योती। ओं जै अम्बे गौरी ।

श्री अम्बे जी कि आरति, जो कोइ नर गावे। मैया जो कोइ नर गावे ।

कहत शिवानन्द स्वामी , सुख सम्पति पावे। ओं जै अम्बे गौरी ।।

इस प्रकार भगवती दुर्गा जी की आरती के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों को दिये गये विकल्पों से पूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- मांग सिन्दूर विराजत, ... मृग मदको। मैया टीको मृगमदको।

क- टीको, ख- चन्द्रवदन, ग-कलेवर, घ-कण्ठन।

प्रश्न 2-उज्ज्वल से दोउ नयना, ... नीको। मां जै अम्बे गौरी।

क- टीको, ख- चन्द्रवदन, ग-कलेवर, घ-कण्ठन।

प्रश्न 3- कनक समान ...., रक्ताम्बर राजे। मैया रक्ताम्बर राजे।

क- टीको, ख- चन्द्रवदन, ग-कलेवर, घ-कण्ठन।

प्रश्न 4- रक्त पुष्प गले माला, ... पर साजे । मां जै अम्बे गौरी।

क- टीको, ख- चन्द्रवदन, ग-कलेवर, घ-कण्ठन।

प्रश्न 5- केहरि वाहन राजत , ... खप्पर धारी। मैया खड्ग खप्पर धारी।

क- खड्ग , ख- तिनके, ग-नासाग्रे, घ- राजत।

प्रश्न 6- सुर नर मुनि जन सेवत, ... दुख हारी। ओं जै अम्बे गौरी।

क- खड्ग , ख- तिनके, ग-नासाग्रे, घ- राजत।

प्रश्न 7-कानन कुण्डल शोभित, ... मोती। मैया नासाग्रे मोती।

क- खड्ग , ख- तिनके, ग-नासाग्रे, घ- राजत।

प्रश्न 8-कोटिक चन्द्र दिवाकर , ... सम ज्येति। ओं जै अम्बे गौरी।

क- खड्ग , ख- तिनके, ग-नासाग्रे, घ- राजत।

प्रश्न 9-शुम्भ निशुम्भ विदारे, ... घाती। मैया महिषासुरघाती।

क- खड्ग , ख- महिषासुर, ग-नासाग्रे, घ- राजत।

प्रश्न 10-धूम्र विलोचन ....,निशि दिन मदमाती । ओं जै अम्बे गौरी।

क- खड्ग , ख- तिनके, ग-नयना, घ- राजत।

2.4.4 मॉ दुर्गा जी की द्वितीय आरती-

इस प्रकार माता दुर्गा जी के दो आरतियों को आपने जाना। अब हम आपको तीसरी आरती से भी परिचय कराना चाहते हैं। क्योंकि समय-समय पर भक्तों द्वारा इस आरती का भी प्रयोग किया जाता रहा है। तीनों आरतियों का ज्ञान कर्मकाण्ड के लिये अत्यन्त आवश्यक है। अतः यह आरती इस प्रकार है-

ओ अम्बे तू है जगदम्बे काली , जै दुर्गे खप्पर वाली ।

तेरे ही गुण गायें भारती, ओ मैया हम सब उतारे तेरी आरती ।

तेरे भक्तजनों पे माता भीर पड़ी है भारी ।

दानव दल पर टूट पडों मां करके सिंह सवारी ।

सौ सौ सिंहो सी बलशाली , अष्ट भुजाओं वाली,

दुखियों के दुख को निवारती, ओ मैया हम सब उतारे तेरी आरती ।

मां बेटे का है इस जग में बड़ा हि निर्मल नाता ।

पूत कपूत सुने हैं पर ना माता सुनी कुमाता ।

सब पर करुणा दरसाने, अमृत बरसाने वाली ।

नैया भंवर से उबारती। ओ मैया हम सब उतारे तेरी आरती ।

नहीं मांगते धन औ दौलत ना चांदी ना सोना।

हम तो मांगे मा तेरे चरणों में छोटा कोना।

सबकी बिगड़ी बनाने वाली, लज्जा बचाने वाली,

सतियों के सत को सवांरती। ओ मैया हम सब उतारे तेरी आरती।

अम्बे तू है जगदम्बे काली, जै दुर्गे खप्पर वाली,

तेरे हि गुण गावों भारती। हो मैया हम सब उतारे तेरी आरती।

इस प्रकार भगवती दुर्गा जी की इस आरती के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों को दिये गये विकल्पों से पूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- तेरे ही गुण गायें ...., ओ मैया हम सब उतारे तेरी आरती।

क- भारती, ख- भीर, ग-टूट, घ-बलशाली।

प्रश्न 2- तेरे भक्तजनों पे माता .... पड़ी है भारी।

क- भारती, ख- भीर, ग-टूट, घ-बलशाली।

प्रश्न 3-दानव दल पर .... पडों मां करके सिंह सवारी।

क- भारती, ख- भीर, ग-टूट, घ-बलशाली।

प्रश्न 4-सौ सौ सिंहो सी .... , अष्ट भुजाओं वाली,

क- भारती, ख- भीर, ग-टूट, घ-बलशाली।

प्रश्न 5-दुखियों के दुख को ...., ओ मैया हम सब उतारे तेरी आरती।

क- निवारती, ख- जग में, ग- कुमाता, घ- बरसाने।

प्रश्न 6-मां बेटे का है इस .... में बड़ा हि निर्मल नाता।

क- निवारती, ख- जग में, ग- कुमाता, घ- बरसाने।

प्रश्न 7-पूत कपूत सुने हैं पर ना माता सुनी ....।

क- निवारती, ख- जग में, ग- कुमाता, घ- बरसाने।

प्रश्न 8- सब पर करुणा दरसाने, अमृत .... वाली।

क- निवारती, ख- जग में, ग- कुमाता, घ- बरसाने।

प्रश्न 9-नैया भंवर से ....। ओ मैया हम सब उतारे तेरी आरती।

क- उबारती, ख- जग में, ग- कुमाता, घ- बरसाने।

प्रश्न 10- नहीं मांगते धन औ .... ना चांदी ना सोना।

क- निवारती, ख- दौलत, ग- कुमाता, घ- बरसाने ।

2.5 सारांश-

इस इकाई में श्री दुर्गा जी की आरती एवं स्तुति विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया । श्री दुर्गा जी की आरती एवं स्तुति विचार के अभाव में किसी नवरात्रादि के अवसर पर व्रतादि या पूजनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसमें दुर्गा माता की ही उपासना की जाती है। जब असुरां◌े का अत्याचार इतना बढ़ गया था जिसमें सामान्य जन का जीना दुभर हो गया था तब समस्त देवमण्डल में यह विचार किया जाने लगा कि किस प्रकार से इन दैत्यों से मुक्त हुआ जा सकता है। उस समय ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश को छोड़कर अन्य कोई शक्ति ऐसी नही थी जिससे दैत्य पराजित हो सके। ये तीनों महाशक्तियों का दैत्यों के साथ युद्ध में आना उचित नही था इसलिये विकल्प पर विचार किया जाने लगा। समस्त देवगणों ने ध्यान से अपनी अपनी शक्तियों का थोड़ा थोड़ा अंश निकालकर एक जगह एकत्रित करने का प्रयास किया। वह प्रयास सफल हुआ तथा उस एकत्रित शक्तियों से महादेवी का प्राकट्य हुआ जिसे दुर्गा देवि के रूप में जाना जाता है। दुर्गा जी की सवारी का नाम सिंह है।

देवि पुराण में अनेकों श्लोकों में मातेश्वरी के विविध स्वरूपों को दर्शाया गया है। भगवती दुर्गा की उपासना में एक ग्रन्थ अत्यन्त प्रचलित है जिसे दुर्गा सप्तशती के रूप में जाना जाता है। इसमें दुर्गा जी के उपासना के लिये तेरह अध्यायों में सात सौ श्लोकों को दिया गया है। इसी में से प्रथम अध्याय में यह बतलाया गया है कि माता दुर्गा के दश हाथ हैं। उन दशों हाथों में माता अस्त्र धारण की हुयी है जिनके नाम खड्ग यानी तलवार, चक्र, गदा, बाण, धनुष, परिघ, शूल, भुशुण्डि, मस्तक और शंख हैं। माता दुर्गा के तीन नेत्र है। माता दुर्गा के समस्त अंग आभूषणों से सुशोभित है। इनके शरीर की कान्ति नील मणि के समान है। दुर्गा जी दस मुख और दस पैरों से युक्त है।

श्री व्यासकृत् भगवती स्तोत्र में पराम्बा भगवती मां दुर्गा को प्रणाम किया गया है। मां दुर्गा कैसी है? कवि कहते हैं पापों का विनाश करने वाली तथा बहुत से फलों को देने वाली है। शुम्भ एवं निशुम्भ के कपाल को धारण करने वाली है। ऐसे मनुष्यों के संकट को हरने वाली देवी को नमस्कार है। चन्द्र और दिवाकर यानी सूर्य को अपने नेत्रों में धारण करने वाली, पावक या अग्नि के समान देदिप्यमान मुख से सुशोभित होने वाली, भैरव जी के शरीर में लीन रहने वाली तथा अन्धक दैत्य का शोषण करने वाली हे देवि तुम्हारी जय हो ।

2.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

खड्गं - तलवार, चक्र- चक्र, गद- गदा, इषु- बाण, चाप- धनुष, परिघ- एक प्रकार का अस्त्र, छूलं - त्रिशूल, शंखं- मुख से बजाने वाला वाद्य, संन्दधतिं- सम्यक् प्रकार से धारण करना, कर-हाथ, त्रिनयनां - तीन आखों वाली, सर्वांग- सभी अंग, भूषा- आभूषण, आवृताम्- आच्छादित, द्युति- प्रकाश, आस्य- मुख, पाददशकां- दस पैरों वाली, उद्यद्- उगते हुये, भानु- सूर्य, सहस्र- हजार, कान्ति- तेज, अरुण-लाल, क्षौमां-रेशमी वस्त्र, शिरो मालिकां- मुण्डमाला, पयोधरा- स्तन, अभीतिं - अभय, वरम्- श्रेष्ठ, हस्त- हाथ, अब्ज- कमल, दधतीं- धारण, त्रिनेत्र- तीनों नेत्र, विलसत्- सुशोभित, वक्त्र -मुख, अरविन्द- कमल, हिमांशु- चन्द्रमा, रत्नमुकुटां-रत्नों के मुकुट, वन्दे- वन्दना, अरविन्दस्थिताम्- कमल पर स्थित देवि, कान्ति-तेज, उदयकाल- उगने का समय, उत्कृष्ट- उच्च, सर्वेश्वर- सभी के ईश्वर, कल्पात्मक- कला के रूप में, दृश्यरूप- देखने का स्वरूप, सम्पूर्ण- सारा, अमंगलध्वंसकारिणी- अमंगल को विनाश करने वाली, क्षूद्रतम अंश- छोटा से छोटा अंश, जागतिक- जगत के, आचार- आचरण, यथोचित- जैसा उचित, परिणत- बदल जाना, तव- तुम्हारा, च- और, का- क्या, सकल- सम्पूर्ण, शब्दमयी- शब्दमय, तनुः- शरीर, मूर्तिषु - मूर्तियों में, मनसि- मन में, बहिः- बाहर, प्रसरासु- विस्तार, इति - ऐसा, विचिन्त्य- चिन्तन, शिवे - पार्वती, शमिता- शान्ति करने वाली, शिवे- कल्याण करने वाली, जगति- जगत में, स्तुति- प्रार्थना, जप - जप, अर्चन- पूजा, चिन्तनवर्जिता- चिन्तन मुक्त, न- नही, काल- समय, अस्ति- है, प्रौढ़- पुष्ट, सप्तशती- सात सौ, मुण्डमाला- मुण्डों की माला, साक्षात् - प्रत्यक्ष, अर्जन - प्राप्त, भवानि- दुर्गा, स्तोतुं - स्तुति करने के लिये, प्रभवति - तैयार होते हैं, वदनैः- मुखों से, प्र्रजानां - प्रजाओं, ईशान- शंकर भगवान, स्त्रिपुरमथनः- त्रिपुरासुर को मारने वाले, पंचभिः- पांचों मुखों से, अपि- भी, षड्भिः- छ से, सेनानी- कार्तिकेय जी, दशशतमुखैः- हजार मुखों से, अहिपति- नागराज, तदा- तो, अन्येषां- अन्य, केषां- किसी का, कथय- कहिये, कथम्- कैसे, अस्मिन्- यह, अवसरः- अवसर, स्तवन- स्तुति, गुणों का गायन, घृत- धी, क्षीर- दुग्ध, द्राक्षा- दाख, मधु- शहद, नाख्येयो - जिसकी व्याख्या न की जा सके, रसना- जिह्वा, ताम्बूलं - पान, नयनयुगले - दोनों आंखें, कज्जल- काजल, विलसति - सुशोभित होता है, गले - गर्दन में, मौक्तिकलता- मोती की लता, शाटी- साड़ी, कटि- कमर, तटे - किनारा, नगपति - पर्वतराज, विराजन्- विराजमान, मन्दार- मदार, दुरम- लता, कुसुम- पुष्प, हार- माला, स्तनतटी- स्तन के तट तक, द्वीणानाद- वीणा का स्वर, श्रवण- कान, नतांगी- नत अंग वाली, रुचिर- सुन्दर, विजयते- जय हो, भार्या - पत्नी, अभीष्ट- इच्छा के अनुसार, प्रसीद- प्रसन्न होवें, विश्वेश्वरि- विश्व की ईश्वरी, पाहि - रक्षा करें, आधारभूता- आधार, मही- पृथ्वी, अपां- जल, अनन्तवीर्या- अनन्त बलशाली, विश्वस्य बींज- बीज शक्ति, परमासि- श्रेष्ठतमा, शरणागत- शरण में आये हुये।

2.7अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

2.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ग, 10-घ।

2.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ग।

2.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ख।

2.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

2.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

2.4.4 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-आरती संग्रह।
2-क्यों-भाग-1
3-क्यों- भाग-2।
4-शब्दकल्पद्रुमः।
5-आह्निक सूत्रावलिः।
6-प्रतिष्ठा मयूख।
7-पूजन- विधान।
8-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

2.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- दैनिक आरती स्तुति एवं स्तोत्र।
2- स्तोत्ररत्नावलिः।
3- श्रीदुर्गासप्तशती।

2.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- श्री दुर्गा जी का परिचय बतलाइये।

2- श्री दुर्गा जी का स्वरूप बतलाइये।

3- श्री दुर्गा जी का माहात्म्य लिखिये।

4- भगवती स्तोत्रम् नामक सूक्त लिखिये।

5- भगवती स्तोत्रम् का हिन्दी अनुवाद दीजिये।

6- दुर्गा जी की प्रथम आरती लिखिये।

7- दुर्गा जी की द्वितीय आरती लिखिये।

8- दुर्गा जी की तृतीय आरती लिखिये।

9- गंगालहरी के कुछ श्लोकों को लिखिये।

10- गंगालहरी के कुछ श्लोकों का हिन्दी अनुवाद लिखिये।

इकाई 3 - श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

इस इकाई में श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कर्मकाण्ड में धन की आदि शक्ति के रूप में पराम्बा भगवती लक्ष्मी को जाना गया है। धन की प्राप्ति के लिये लक्ष्मी जी की वन्दना या पूजन किया जाता है। यह प्रकल्प शक्ति प्राप्ति हेतु एवं विविध मनोकामनाओं की प्रपूर्ति हेतु किया जाता है। अतः श्री लक्ष्मी जी क्या हैं ? तथा कैसे उनकी आरती पूजा की जाती है ? इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति विचार के अभाव में दीपावली आदि के अवसर पर या अन्य लक्ष्मी जी के व्रतादि या पूजनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसमें लक्ष्मी माता की ही उपासना की जाती है। सभी सुख, सुविधा, शक्ति, भुक्ति, मुक्ति की दाता एवं ज्ञान पुंज रूपा आह्लादिनी महालक्ष्मी जी की पूजा अवश्य करनी चाहिये। मां लक्ष्मी भाव से की गयी समस्त प्रकार के पूजन या स्तोत्र पाठ से परम प्रसन्न होती हैं। इसलिये मां लक्ष्मी की पूजा अवश्य करनी चाहिये। इसके लिये यथा उपलब्ध उपचारों से मां की श्रद्धा भक्ति एवं शुचिता से दीपावली या अन्य पर्व इत्यादि के समय महालक्ष्मी पूजन करना चाहिये। ताकि हमारा जीवन सुखमय, आनन्दमय, सात्विक विचारों से परिपूर्ण एवं वर्ष पर्यन्त पुत्र पौत्र सुख, हर्ष उल्लास, ग्रहों की शान्ति, कायिक, वाचिक एवं मानसिक पीड़ा की निवृत्ति के लिये, भूत, प्रेत, डाकिनी, शाकिनी, बेतालादि की शान्ति के लिये, अखण्ड लक्ष्मी की प्राप्ति और कोष को आगे बढ़ाने के लिये, निरोगी काया के लिये, व्यापार को बढ़ाने के लिये, लोक कल्याण के लिये, अपने आश्रितों का पोषण करने के लिये महालक्ष्मी पूजन करना चाहिये।

इस इकाई के अध्ययन से आप श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति इत्यादि के विचार करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति आदि विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

3.2 उद्देश्य-

अब श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति विचार की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं -

- ❖ कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।
- ❖ श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति सम्पादनार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
- ❖ लक्ष्मी पूजन के कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।
- ❖ प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
- ❖ लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
- ❖ समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

3.3.श्री लक्ष्मी जी का स्वरूप विचार एवं श्रीसूक्त पाठ -

इसमें श्री लक्ष्मी जी का स्वरूप विचार एवं श्रीसूक्त पाठ का ज्ञान आपको कराया जायेगा क्योकि बिना इसके परिचय के श्री लक्ष्मी जी का आधारभूत ज्ञान नही हो सकेगा। आधारभूत ज्ञान हो जाने पर श्रद्धा एवं समर्पण की भावना का उद्भव होता है। भावो हि विद्ते देवः के अनुसार भावना होने पर देवत्व को प्राप्त किया जा सकता है। इसलिये श्री लक्ष्मी जी का स्वरूप विचार एवं श्रीसूक्त पाठ इस प्रकार है-

3.3.1 श्री लक्ष्मी जी का स्वरूप विचार-

माता लक्ष्मी का ध्यान हम विविध रूपों में करते हैं। पुराणों के अनेकों श्लोकों में मातेश्वरी के विविध स्वरूपों को दर्शाया गया है। भगवती लक्ष्मी के स्वरूप का वर्णन इस प्रकार है-

या सा पद्मासनसस्था, विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी।
गम्भीरावर्तनाभिस्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया ।।
या लक्ष्मीर्दिव्यरूपैर्मणिगणखचितैः स्नापिता हेमकुम्भैः।
सा नित्यं पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमांगल्ययुक्ता ।।

इस श्लोक में महालक्ष्मी जी के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि वह देवि जो पद्म यानी कमल के आसन पर स्थित है। दस महादेवि का कटि तट यानी कमर का तट विपुल अर्थात् विशद् है। माताजी की आखें कमल के पत्र के समान है। महालक्ष्मी जी की गम्भीर आवर्तन वाली नाभि है। शुभ्र उत्तरीय वस्त्रों से सुशोभित हो रही है। हे लक्ष्मी माता आपका रूप दिव्य है। यानी माता लक्ष्मी के रूप से तेज प्रकट हो रहा है। मणि गणों से माता लक्ष्मी का रूप विभूषित हो रहा है। हेम कुम्भ यानी सोने के घड़े से आपको स्नान कराया जाता है। इस मातेश्वरी के हाथ में कमल सर्वदा सुशोभित हो रहा है। ऐसी माता लक्ष्मी जो सभी प्रकार के मंगल कार्यों से युक्त होती है वह लक्ष्मी मेरे घर में वास करें।
लक्ष्मी की व्याख्या करते हुये शब्दकल्पद्रुम में कहा गया है कि लक्ष्यति पश्यति उद्योगिनमिति लक्ष्मी अर्थात् जो उद्योगियों को देखे उसे लक्ष्मी कहते है। लक्ष्मी की प्राप्ति के लिये उद्योग का करना अत्यन्त आवश्यक है क्योकि कहा गया है उद्योगिनं पुरुष सिंहमुपैतिलक्ष्मीः यानी उद्योग करने वाले

पुरुष सिंहों के पास ही लक्ष्मी जाती है। वैसे तो लक्ष्मी के विविध नाम दिये गये हैं उनमें से कुछ नाम इस प्रकार दिया गया है- विष्णुपत्नी, पद्मालया, पद्मा, कमला, श्रीः, हरिप्रिया, इन्दिरा, लोकमाता, मां, क्षीराब्धितनया, रमा, जलधिजा, भार्गवी, हरिवल्लभा, दुग्धाब्धितनया, क्षीरसागरसुता इत्यादि। अथर्व वेद के 7.115.4 में दो प्रकार की लक्ष्मीयों का वर्णन मिलता है। वहां कहा गया है कि- रमन्तां पुण्या लक्ष्मीर्या पापीस्ता अनीनशम् यानी पुण्या लक्ष्मी हमारे घर में निवास करे तथा जो अनर्थमूला लक्ष्मी है वह विनष्ट हो जावे। इसकी चर्चा श्री सूक्तम् में भी करते हुये बतलाया गया है कि क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे गृहात् यानी क्षुधा यानी भूखे रहना, पिपासा यानी प्यासे रहना, मलां यानी मलयुक्ता लक्ष्मी तथा ज्येष्ठा अलक्ष्मी नष्ट हों, अभूति, असमृद्धि ये सभी मेरे घर से निकल जायं। लक्ष्मी जी की उत्पत्ति समुद्र मन्थन से हुयी है ऐसा मिलता है। समुद्र मन्थन से चौदह रत्न निकले थे, जिनमें से एक लक्ष्मी जी को बतलाया गया है। इनका विवाह श्रीमन्नारायण भगवान से हुआ है इसलिये लक्ष्मी जी सदैव नारायण भगवान के साथ रहती है इसलिये प्रायः सुना जाता है कि लक्ष्मी नारायण भगवान की जै।

श्रीदुर्गा सप्तशती में तीन चरित्र दिये गये हैं जिन्हें प्रथम चरित्र, मध्यम चरित्र एवं उत्तम चरित्र के रूप में जाना जाता है। इनमें प्रथम चरित्र में महाकाली का ध्यान एवं चरित्र दिया है, मध्यम चरित्र में मां लक्ष्मी का चरित्र दिया है और उत्तम चरित्र में सरस्वती का चरित्र दिया गया है। मध्यम चरित्र में महालक्ष्मी का ध्यान इस प्रकार दिया गया है-

अक्षस्रक्परशुं गदेषु कुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां ।
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं धण्टां सुराभाजनम् ।।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्ननां ।
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ।।

इसकी व्याख्या करते हुये कहा गया है कि मैं कमल के आसन पर बैठी हुयी प्रसन्न मुख वाली महिषासुरमर्दिनी भगवती महालक्ष्मी का भजन करता हूॅ जो अपने हाथों में अक्ष यानी अक्षमाला, स्रक् यानी माला, परशु यानी फरसा, गद यानी गदा, इषु यानी बाण, कुलिश यानी वज्र, पद्म यानी कमल, धनुष, कुण्डिका, दण्ड, शक्ति, असि यानी खड्ग, चर्म यानी ढाल, जलज यानी शंख, घण्टा, सुराभाजन यानी मधु पात्र, शूल, पाश और सुदर्शन चक्र धारण करती हैं।

इस प्रकार भगवती लक्ष्मी जी के स्वरूप के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु

विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- अक्ष शब्द का अर्थ है-

क- अक्षमाला, ख- माला, ग- फरसा, घ-बाण।

प्रश्न 2- स्रक् शब्द का अर्थ है-

क- अक्षमाला, ख- माला, ग- फरसा, घ-बाण।

प्रश्न 3- परशु शब्द का अर्थ क्या है?

क- अक्षमाला, ख- माला, ग- फरसा, घ-बाण।

प्रश्न 4- इषु शब्द का अर्थ है-

क- अक्षमाला, ख- माला, ग- फरसा, घ-बाण।

प्रश्न 5- कुलिश शब्द का अर्थ क्या है ?

क- वज्र, ख- कमल, ग- खड्ग, घ-ढाल।

प्रश्न 6- असि शब्द का अर्थ क्या है ?

क- वज्र, ख- कमल, ग- खड्ग, घ-ढाल।

प्रश्न 7- पद्म शब्द का अर्थ क्या है ?

क- वज्र, ख- कमल, ग- खड्ग, घ-ढाल।

प्रश्न 8- चर्म शब्द का अर्थ क्या है?

क- वज्र, ख- कमल, ग- खड्ग, घ-ढाल।

प्रश्न 9- जलज शब्द का अर्थ क्या है?

क- वज्र, ख- शंख, ग- खड्ग, घ-ढाल।

प्रश्न 10- सुराभाजन शब्द का अर्थ क्या है ?

क- वज्र, ख- कमल, ग- मधुपात्र, घ-ढाल।

इस प्रकार आपने महालक्ष्मी जी के स्वरूप के बारे में आपने जाना। अब हम श्री सूक्त का वर्णन करने जा रहे हैं जो इस प्रकार है-

3.3.2 लक्ष्मी जी की प्रसन्नता हेतु श्री सूक्त पाठ -

लक्ष्मी जी की प्रसन्नता हेतु श्री सूक्त का पाठ अत्यन्त प्रभावशाली माना गया है। कहा गया है शुद्धता पूर्वक श्री सूक्त का पाठ करने वाले या कराने वाले लोगों के यहां लक्ष्मी का कभी अभाव नही होता है। आज के समय में तो लक्ष्मी के सन्दर्भ में यस्यास्ति वित्तं स नर कुलीनः यह श्लोक उपयुक्त

प्रतीत होता है। इसलिये लक्ष्मी प्राप्ति हेतु श्री सूक्त का पाठ भी एक उपाय है। इसके पाठ से सद् लक्ष्मी का आगमन होता है-

हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह।
तां म आवह जातवेदो लक्ष्मी मनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्।
अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनाद प्रबोधिनीम्।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्।
कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्ता तर्पयन्तीम्।
पद्मे स्थिता पद्मवर्णा तामिहोपह्वयेश्रियम्।
चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।
तां पद्मिनीमीं शरणं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे।
आदित्य वर्णे तपसो अधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोथविल्वः।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायाश्च वाह्या अलक्ष्मीः ।।
उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह।
प्रदुर्भूतोस्मि राष्ट्रे स्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे।
क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाश्याम्यहम्।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात्।
गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्।
मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि।
पशूनां रूपमन्यस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः।
कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भव कर्दम।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्।
आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे।
नि च देविं मातरं श्रियं वासय मे कुले।
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलां पद्ममालिनीम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह।
आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्।

सूर्यां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।

यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्यो अश्वान्विन्देयं पुरुषानहम् ।।

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।

सूक्तं पंचदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत् ।

इस प्रकार भगवती लक्ष्मी जी की प्रसन्नता के लिये उनके परम प्रिय सूक्त श्री सूक्त के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- हिरण्यवर्णां .... सुवर्णरजतस्रजाम्।

चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह।

क- हरिणीं, ख-जातवेदो, ग- हस्तिनाद, घ- हिरण्यप्राकारा।

प्रश्न 2- तां म आवह .... लक्ष्मी मनपगामिनीम्।

यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्।

क- हरिणीं, ख-जातवेदो, ग- हस्तिनाद, घ- हिरण्यप्राकारा।

प्रश्न 3- अश्वपूर्वां रथमध्यां .... प्रमोदिनीम्।

श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्।।

क- हरिणीं, ख-जातवेदो, ग- हस्तिनाद, घ- हिरण्यप्राकारा।

प्रश्न 4- कांसोस्मितां ....मार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्ता तर्पयन्तीम्।

पद्मे स्थिता पद्मवर्णा तामिहोपह्वयेश्रियम्।

क- हरिणीं, ख-जातवेदो, ग- हसितनाद, घ- हिरण्यप्राकारा।

प्रश्न 5- चन्द्रां प्रभासां .... ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।

तां पद्मिनीमीं शरणं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे।

क- यशसा, ख-वनस्पतिस्तव, ग- देवसखः घ- अभूतिमसमृद्धिं।

प्रश्न 6- आदित्य वर्णे तपसो अधिजातो .... वृक्षोथविल्वः।

तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायाश्च वाह्या अलक्ष्मीः।।

क- यशसा, ख-वनस्पतिस्तव, ग- देवसखः घ- अभूतिमसमृद्धिं।

प्रश्न 7- उपैतु मां .... कीर्तिश्च मणिना सह।

प्रदुर्भूतोस्मि राष्ट्रे स्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे।

क- यशसा, ख-वनस्पतिस्तव, ग- देवसखः घ- अभूतिमसमृद्धिं।

प्रश्न 8- क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाश्याम्यहम्।

.... च सर्वां निर्णुद मे गृहात्।

क- यशसा, ख-वनस्पतिस्तव, ग- देवसखः घ- अभूतिमसमृद्धिं।

प्रश्न 9- गन्धद्वारां .... नित्यपुष्टां करीषिणीम्।

ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्।

क- दुराधर्षां, ख-वनस्पतिस्तव, ग- देवसखः घ- अभूतिमसमृद्धिं।

प्रश्न 10- मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि।

.... रूपमन्यस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः।

क- यशसा, ख-वनस्पतिस्तव, ग-पशूनां घ- अभूतिमसमृद्धिं।

3.4 श्री लक्ष्मी जी की स्तुति एवं आरती-

इससे पूर्व में आपने श्रीसूक्तम् के बारे में जान लिया है। अब हम इस प्रकरण में माता लक्ष्मी की स्तुति एवं आरती के बारे में वर्णन करने जा रहे है जो इस प्रकार है-

3.4.1- श्री लक्ष्मी जी की प्रसन्नता हेतु लक्ष्मी सूक्त का पाठ -

पद्मानने पद्मविपद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि।
विश्वप्रिये विष्णु मनोनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्वः।।
पद्मानने पद्मऊरू पद्माक्षि पद्मसम्भवे।
तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम्।
अश्वदायी गोदायि धनदायी महाधने।
धनं मे जुषतां देवि सर्वकांमाश्च देहि मे।
पुत्रपौत्रधनं धान्यं हस्तश्वादिगवेरथम्।
प्रजानां भवसि माता आयुष्मन्तं करोतु मे।
धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसुः।
धनमिन्द्रो वृहस्पतिर्वरुणो धनमश्विना।।
वैनतेय सोमं पिब सोम पिबतु वृत्रहा।
सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः।
न क्रोधो न च मात्सर्यं ना लोभो नाशुभा मतिः।
भवन्तिकृत्पुण्यानां भक्त्या श्रीसूक्तजापिनाम्।
सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुक गन्धमाल्यशोभे।
भगवति हरि वल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतकरी प्रसीद मह्यम्।।
विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम्।
लक्ष्मीं प्रियसखीं देवीं नमामच्युतवल्लभाम्।
महालक्ष्मीं च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्।।
आनन्दः कर्दमः श्रीदश्चिक्लीत इति विश्रुताः।
ऋषयः श्रियः पुत्राश्च श्रीर्देवीदेवता मताः।।
ऋणरोगादिदारिद्र्यपापक्षुदपमृत्यवः।
भयशोकमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा।
श्रीवर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधाच्छोभमानं महीयते।
धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः।।

इस प्रकार भगवती लक्ष्मी जी की प्रसन्नता के लिये उनके परम प्रिय सूक्त लक्ष्मी सूक्त के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- पद्मानने पद्मविपद्मपत्रे .... पद्मदलायताक्षि।

विश्वप्रिये विष्णु मनोनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्वः।।

क- पद्मप्रिये, ख- पद्माक्षि, ग- धनदायी, घ- धान्यं।

प्रश्न 2- पद्मानने पद्मऊरू .... पद्मसम्भवे।

तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम्।

क- पद्मप्रिये, ख- पद्माक्षि, ग- धनदायी, घ- धान्यं।

प्रश्न 3- अश्वदायी गोदायि .... महाधने।

धनं मे जुषतां देवि सर्वकांमाश्च देहि मे।

क- पद्मप्रिये, ख- पद्माक्षि, ग- धनदायी, घ- धान्यं।

प्रश्न 4- पुत्रपौत्रधनं .... हस्तश्वादिगवेरथम्।

प्रजानां भवसि माता आयुष्मन्तं करोतु मे।

क- पद्मप्रिये, ख- पद्माक्षि, ग- धनदायी, घ- धान्यं।

प्रश्न 5- धनमग्निर्धनं .... सूर्यो धनं वसुः।

धनमिन्द्रो वृहस्पतिर्वरुणो धनमश्विना।।

क- वायुर्धनं, ख- वृत्रहा, ग- नाशुभामतिः, घ- सरोजहस्ते।

प्रश्न 6- वैनतेय सोमं पिब सोम पिबतु ....।

सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः।

क- वायुर्धनं, ख- वृत्रहा, ग- नाशुभामतिः, घ- सरोजहस्ते।

प्रश्न 7- न क्रोधो न च मात्सर्यं ना लोभो ....।

भवन्तिकृत्पुण्यानां भक्त्या श्रीसूक्तजापिनाम्।

क- वायुर्धनं, ख- वृत्रहा, ग- नाशुभामतिः, घ- सरोजहस्ते।

प्रश्न 8- सरसिजनिलये .... धवलतरांशुक गन्धमाल्यशोभे।
भगवति हरि वल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतकरी प्रसीद मह्यम्।।

क- वायुर्धनं, ख- वृत्रहा, ग- नाशुभामतिः, घ- सरोजहस्ते।

प्रश्न 9- विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं .... माधवप्रियाम्।
लक्ष्मीं प्रियसखीं देवीं नमामच्युतवल्लभाम्।

क- वायुर्धनं, ख- वृत्रहा, ग- नाशुभामतिः, घ- माधवीं।

प्रश्न 10- महालक्ष्मीं च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि।
तन्नो .... प्रचोदयात्।।

क- वायुर्धनं, ख- लक्ष्मीः, ग- नाशुभामतिः, घ- सरोजहस्ते।

इस प्रकार आपने अभी लक्ष्मी सूक्त को जाना। इसके पाठ से लक्ष्मी जी प्रसन्न होती है।

3.4.2 श्री लक्ष्मी जी की प्रसन्नता हेतु महालक्ष्म्यष्टक स्तोत्र का पाठ –

इस प्रकरण में आप महालक्ष्म्यष्टक स्तोत्र का पाठ एवं उसका महत्व जानेगें। इसके ज्ञान से आपको महालक्ष्म्यष्टक स्तोत्र के पाठ का ज्ञान आपको जायेगा।

इन्द्र उवाच-

नमस्तेस्तु महामाये श्रीपीठे सुरपूजिते ।
शंखचक्रगदाहस्ते महालक्ष्मी नमोस्तुते ।
नमस्ते गरुडारूढे कोलासुरभयंकरी ।
सर्वपापहरे देवि महालक्ष्मी नमोस्तुते ।
सर्वज्ञे सर्ववरदे सर्वदुष्टभयंकरी ।
सर्वदुखहरे देवि महालक्ष्मी नमोस्तुते ।
सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ।
मन्त्रपूते सदादेवि महालक्ष्मीनमोस्तुते ।
आद्यन्तरहिते देवि आद्यशक्तिमहेश्वरी ।
योगजे योगसम्भूते महालक्ष्मी नमोस्तुते ।
स्थूलसूक्ष्ममहारौद्रे महाशक्ति महोदरे ।
महापापहरे देवि महालक्ष्मी नमोस्तुते ।
पद्मासनस्थिते देवि परब्रह्मस्वरूपिणी ।

परमेशि जगन्मातर्महालक्ष्मी नमोस्तुते ।
श्वेताम्बरधरे देवि नानालंकारभूषिते ।
जगत्स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मी नमोस्तुते ।
महालक्ष्म्यष्टकं स्तोत्रं यः पठेत् भक्तिमान्नरः ।
सर्वसिद्धिमवाप्नोति राज्यं प्राप्नोति सर्वदा ।
एककाले पठेन्नित्यं महापाविनाशनम् ।
द्विकालं यः पठेन्नित्यं धनधान्यसमन्वितः ।
त्रिकालं यः पठेन्नित्यं महाशत्रु विनाशनम् ।
महालक्ष्मीर्भवेन्नित्यं प्रसन्ना वरदा शुभा ।।
इतीन्द्रकृतं महालक्ष्म्यष्टकम्।

इस महालक्ष्म्यष्टक का निर्माण इन्द्र जी के द्वारा किया गया है। इसका महत्व बतलाते हुये कहा गया है कि जो भी भक्तिमान होकर मनुष्य इस महालक्ष्म्यष्टक का पाठ करता है वह सभी प्रकार की सिद्धियों को प्राप्त करता है। राज्य की भी प्राप्ति इस स्तोत्र के पाठ से होती है। एक समय में पाठ करने से महापाप का विनाश होता है, दो काल यानी दो समय पढ़ने से धन एवं धान्य से व्यक्ति समन्वित होता है। तीन काल यानी तीनों समयों में पढ़ने से व्यक्ति महा शत्रुओं का विनाश होता है तथा महालक्ष्मी प्रसन्न होकर वर देने वाली होती है।

इस प्रकार भगवती लक्ष्मी जी की प्रसन्नता के लिये उनके परम प्रिय स्तोत्र महालक्ष्म्यष्टक स्तोत्र के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित
प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- नमस्तेस्तु महामाये श्रीपीठे ....।
शंखचक्रगदाहस्ते महालक्ष्मी नमोस्तुते।

क- सुरपूजिते, ख- कोलासुरभयंकरी, ग- सर्ववरदे, घ- सिद्धिबुद्धिप्रदे।

प्रश्न 2- नमस्ते गरुडारूढे ....।

सर्वपापहरे देवि महालक्ष्मी नमोस्तुते।

क- सुरपूजिते, ख- कोलासुरभयंकरी, ग- सर्ववरदे, घ- सिद्धिबुद्धिप्रदे।

प्रश्न 3- सर्वज्ञे .... सर्वदुष्टभयंकरी।

सर्वदुखहरे देवि महालक्ष्मी नमोस्तुते।

क- सुरपूजिते, ख- कोलासुरभयंकरी, ग- सर्ववरदे, घ- सिद्धिबुद्धिप्रदे।

प्रश्न 4- .... देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी।

मन्त्रपूते सदादेवि महालक्ष्मीनमोस्तुते।

क- सुरपूजिते, ख- कोलासुरभयंकरी, ग- सर्ववरदे, घ- सिद्धिबुद्धिप्रदे।

प्रश्न 5- आद्यन्तरहिते देवि आद्यशक्तिमहेश्वरी।

योगजे .... महालक्ष्मी नमोस्तुते।

क- योगसम्भूते, ख- महोदरे, ग- परमेशि, घ- श्वेताम्बरधरे।

प्रश्न 6- स्थूलसूक्ष्ममहारौद्रे महाशक्ति ....।

महापापहरे देवि महालक्ष्मी नमोस्तुते।

क- योगसम्भूते, ख- महोदरे, ग- परमेशि, घ- श्वेताम्बरधरे।

प्रश्न 7- पद्मासनस्थिते देवि परब्रह्मस्वरूपिणी।

.... जगन्मातर्महालक्ष्मी नमोस्तुते।

क- योगसम्भूते, ख- महोदरे, ग- परमेशि, घ- श्वेताम्बरधरे।

प्रश्न 8- .... देवि नानालंकारभूषिते।

जगत्स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मी नमोस्तुते।

क- योगसम्भूते, ख- महोदरे, ग- परमेशि, घ- श्वेताम्बरधरे।

प्रश्न 9- महालक्ष्म्यष्टकं स्तोत्रं यः पठेत् भक्तिमान्नरः।

सर्वसिद्धिमवाप्नोति .... प्राप्नोति सर्वदा।

क- योगसम्भूते, ख- राज्यं, ग- परमेशि, घ- श्वेताम्बरधरे।

प्रश्न 10- एककाले पठेन्नित्यं महापाविनाशनम्।

द्विकालं यः पठेन्नित्यं ....।

क- योगसम्भूते, ख- महोदरे, ग- धनधान्यसमन्वितः, घ- श्वेताम्बरधरे।

3.4.3 महालक्ष्मी जी की आरती-

आरती के बिना कोई भी पूजन कार्य पूर्णतया सम्पन्न नही माना जाता है। इसलिये महालक्ष्मी जी आरती इस प्रकार दी जा रही है। इसके सम्यक् प्रकार से गायन से लक्ष्मी जी की आरती उत्तम रीति से की जा सकती है।

ओं जय लक्ष्मी माता मैया जै लक्ष्मी माता
तुमको निसिदिन सेवत, हर विष्णु धाता। ओ जय लक्ष्मी माता।
उमा, रमा, ब्रह्माणि, तुम ही जगमाता।
सूर्य चन्द्रमा ध्यावत, नारद ऋषि गाता। ओं जय लक्ष्मी माता।
दुर्गा रूप निरंजनि, सुख सम्पत्ति दाता।
जो कोई तुमको ध्यावत, नारद ऋषि गाता। ओं जय लक्ष्मी माता।
तुम पाताल निवासिनि, तुम ही शुभ दाता।
कर्म प्रभाव प्रकाशिनि, भवनिधि की त्राता। ओं जय लक्ष्मी माता।
जिस घर में तुम रहती, तहँ सब सद्गुण आता।
सब सम्भव हो जाता, मन नहि घबराता। ओं जय लक्ष्मी माता।
तुम बिन यज्ञ न होते, व्रत भी न हो पाता।
खान पान का वैभव, सब तुमसे आता। ओं जय लक्ष्मी माता।
शुभ गुण मंदिर सुन्दर, क्षीरोदधि जाता।
रत्न चतुर्दश तुम बिन, कोइ नही पाता। ओं जय लक्ष्मी माता।
महालक्ष्मी जी की आरती, जो कोई जन गाता।
उर आनन्द समाता, पाप उतर जाता। ओं जय लक्ष्मी माता।

इस प्रकार भगवती लक्ष्मी जी की प्रसन्नता के लिये उनकी आरती के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- ओं जय लक्ष्मी माता मैया जै लक्ष्मी माता

तुमको .... सेवत, हर विष्णु धाता। ओ जय लक्ष्मी माता।

क- निसिदिन, ख- चन्द्रमा, ग- निरंजनि, ध- पाताल।

प्रश्न 2- उमा, रमा, ब्रह्माणि, तुम ही जगमाता।

सूर्य .... ध्यावत, नारद ऋषि गाता। ओं जय लक्ष्मी माता।

क- निसिदिन, ख- चन्द्रमा, ग- निरंजनि, ध- पाताल।

प्रश्न 3- दुर्गा रूप ...., सुख सम्पत्ति दाता।

जो कोई तुमको ध्यावत, नारद ऋषि गाता। ओं जय लक्ष्मी माता।

क- निसिदिन, ख- चन्द्रमा, ग- निरंजनि, ध- पाताल।

प्रश्न 4- तुम .... निवासिनि, तुम ही शुभ दाता।

कर्म प्रभाव प्रकाशिनि, भवनिधि की त्राता। ओं जय लक्ष्मी माता।

क- निसिदिन, ख- चन्द्रमा, ग- निरंजनि, ध- पाताल।

प्रश्न 5- जिस घर में तुम रहती, तहँ सब .... आता।

सब सम्भव हो जाता, मन नहि घबराता। ओं जय लक्ष्मी माता।

क- सद्गुण, ख- वैभव, ग- क्षीरोदधि, ध- रत्न चतुर्दश।

प्रश्न 6- तुम बिन ....होते, वरत न हो पाता।

क- निसिदिन, ख- यज्ञ न , ग- निरंजनि, ध- पाताल।

प्रश्न 7- खान पान का ...., सब तुमसे आता । ओं जय लक्ष्मी माता।

क- सद्गुण, ख- वैभव, ग- क्षीरोदधि, ध- रत्न चतुर्दश।

प्रश्न 8- शुभ गुण मंदिर सुन्दर, ... जाता।

क- सद्गुण, ख- वैभव, ग- क्षीरोदधि, ध- रत्न चतुर्दश।

प्रश्न 9-.............. तुम बिन, कोइ नही पाता। ओं जय लक्ष्मी माता।

क- सद्गुण, ख- वैभव, ग- क्षीरोदधि, ध- रत्न चतुर्दश।

प्रश्न 10- महालक्ष्मी जी की आरती, जो कोई जन गाता।

उर .... समाता, पाप उतर जाता। ओं जय लक्ष्मी माता।

क- आनन्द, ख- वैभव, ग- क्षीरोदधि, ध- रत्न चतुर्दश।

3.5 सारांश-

इस इकाई में श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया। श्री लक्ष्मी जी की आरती एवं स्तुति विचार के अभाव में दीपावली आदि के अवसर पर, लक्ष्मी यज्ञादि अनुष्ठानों के अवसर पर पूजनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसमें लक्ष्मी माता की ही उपासना की जाती है। सभी सुख, सुविधा, शक्ति, भुक्ति, मुक्ति की दाता एवं ज्ञान पुंज रूपा आह्लादिनी महालक्ष्मी जी की पूजा अवश्य करनी चाहिये। मां लक्ष्मी जी भाव से की गयी समस्त प्रकार के पूजन या स्तोत्र पाठ से परम प्रसन्न होती हैं। इसलिये मां लक्ष्मी की पूजा अवश्य करनी चाहिये। इसके लिये यथा उपलब्ध उपचारों से मां की श्रद्धा भक्ति एवं शुचिता से दीपावली या अन्य पर्व इत्यादि के समय महालक्ष्मी पूजन करना चाहिये। ताकि हमारा जीवन सुखमय, आनन्दमय, सात्विक विचारों से परिपूर्ण एवं वर्ष पर्यन्त पुत्र पौत्र सुख, हर्ष उल्लास, ग्रहों की शान्ति, कायिक, वाचिक एवं मानसिक पीड़ा की निवृत्ति के लिये, भूत, प्रेत, डाकिनी, शाकिनी, बेतालादि की शान्ति के लिये, अखण्ड लक्ष्मी की प्राप्ति और कोष को आगे बढ़ाने के लिये, निरोगी काया के लिये, व्यापार को बढ़ाने के लिये, लोक कल्याण के लिये, अपने आश्रितों का पोषण करने के लिये महालक्ष्मी पूजन करना चाहिये।

महालक्ष्मी जी के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि वह देवि जो पद्म यानी कमल के आसन पर स्थित है। दस महादेवि का कटि तट यानी कमर का तट विपुल अर्थात् विशद है। माताजी की आखें कमल के पत्र के समान है। महालक्ष्मी जी की गम्भीर आवर्तन वाली नाभि है। शुभ्र उत्तरीय वस्त्रों से सुशोभित हो रही है। हे लक्ष्मी माता आपका रूप दिव्य है। यानी माता लक्ष्मी के रूप से तेज प्रकट हो रहा है। मणि गणों से माता लक्ष्मी का रूप विभूषित हो रहा है। हेम कुम्भ यानी सोने के घड़े से आपको स्नान कराया जाता है। इस मातेश्वरी के हाथ में कमल सर्वदा सुशोभित हो रहा है। ऐसी माता लक्ष्मी जो सभी प्रकार के मंगल कार्यों से युक्त होती है वह लक्ष्मी मेरे घर मे वास करें।

अथर्व वेद के 7.115.4 में दो प्रकार की लक्ष्मीयों का वर्णन मिलता है। वहां कहा गया है कि- रमन्तां पुण्या लक्ष्मीर्या पापीस्ता अनीनशम् यानी पुण्या लक्ष्मी हमारे घर में निवास करे तथा जो अनर्थमूला लक्ष्मी है वह विनष्ट हो जावे। इसकी चर्चा श्री सूक्तम् में भी करते हुये बतलाया गया है कि

क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे गृहात् यानी क्षुधा यानी भूखे रहना, पिपासा यानी प्यासे रहना, मलां यानी मलयुक्ता लक्ष्मी तथा ज्येष्ठा अलक्ष्मी नष्ट हों, अभूति, असमृद्धि ये सभी मेरे घर से निकल जायं। लक्ष्मी जी की उत्पत्ति समुद्र मन्थन से हुयी है ऐसा मिलता है। समुद्र मन्थन से चौदह रत्न निकले थें जिनमें से एक लक्ष्मी जी को बतलाया गया है। इनका विवाह श्रीमन्नारायण भगवान से हुआ है इसलिये लक्ष्मी जी सदैव नारायण भगवान के साथ रहती है इसलिये प्रायः सुना जाता है कि लक्ष्मी नारायण भगवान की जै।

3.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

हिरण्यवर्णां - सोने के रंग वाली, हरिणीं- दुख हरण करने वाली, सुवर्णरजतस्रजाम्- सोने एवं चांदी की माला वाली, हिरण्यमयीं- स्वर्ण से समन्वित, लक्ष्मीं- लक्ष्मी जी, जातवेद- अग्नि, म- मेरे लिये, आवह- आमन्त्रित करिये, मनपगामिनीम्- चंचला, यस्यां - जिसका, हिरण्य- स्वर्ण, विन्देयं - जाना जाता है, गामश्वं - गाय धोड़ा, अश्व- धोड़ा, हस्ति- हाथी, नाद - ध्वनि, श्रियं देवीं- लक्ष्मी देवी, उपह्वये - समीप में आवे, स्मितां- स्मित हास करने वाली, हिरण्यप्राकारा- हिरण्य के आकार की, आर्द्रां- द्रवित हृदय वाली, ज्वलन्तीं- जाज्वल्यमान होती हुयी, तृप्ता- तृप्त रहने वाली, तर्पयन्तीम्- तर्पित की जाने वाली, पद्म- कमल, स्थिता- स्थित रहने वाली, पद्मवर्णा - कमल के रंग की, इह- यहां, उप- समीप, ह्वये- आवाहन करता हूँ , श्रियम्- लक्ष्मी के लिये, चन्द्रां प्रभासां- चनद्र के समान आभा वाली, यशसा- यश से, ज्वलन्तीं - प्रकाशमान, शरणं प्रपद्ये- शरण में अपने को समर्पित करता हूँ, अलक्ष्मीर्मे - मेरी अलक्ष्मी, नश्यतां - नष्ट करने के लिये, त्वां- आपका, वृणे- वरण करता हूँ, आदित्य वर्णे- सूर्य के समान वर्ण वाली, तपसो - ताप से, अधिजातो - उत्पन्न, वनस्पति- पौधा, तव - आपका, वृक्षोथविल्वः- विल्ववृक्ष, उसका- उसका, तपसा- गर्मी से, नुदन्तु- उत्पन्न होता है,
उपैतु - समीप, मां- मुझे, देवसख- देवताओं के सखा, कीर्ति- कीर्तियॉ, मणिना- मणियों, सह- साथ, प्रदुर्भूतोस्मि -उत्पन्न होती हो, राष्ट्रे स्मिन् - इस राष्ट्र में , कीर्ति- कीर्ति, ऋद्धि - धन, ददातु- दें, मे- मुझे, क्षुत्पिपासा - क्षुधा, प्यास, मलां - मल युक्ता, ज्येष्ठामलक्ष्मीं: अलक्ष्मी, नाश्याम्यहम्- उसका मैं नाश करता हूँ , अभूति- नही होना, असमृद्धिं - समृद्धि का अभाव, सर्वां - सभी, निर्णुद- निकल जांय, मे- मेरे, गृहात्- घर से, गन्धद्वारां - गन्ध द्वार यूक्त, दुराधर्षां - कठिन, नित्यपुष्टां- प्रतिदिन पुष्ट, करीषिणीम्- करने की इच्छा रखने वाली, ईश्वरीं सर्वभूतानां- सभी प्रणियों की ईश्वरी, तामिहोपह्वये श्रियम्- उस लक्ष्मी का यहां आवाहन करता हूँ। कर्दमेन - कींचड़ से उत्पन्न, श्रियं - लक्ष्मी का, वासय- वास हो, मे - मेरे, कुले -कुल में, मातरं - माता, पद्ममालिनीम्- कमल की माला धारण की हुयी, आपः- जल, सृजन्तु- निर्माण करें, स्निग्धानि- पंचदशर्चं - पन्द्रह ऋचाओं वाला सततं - हमेशा, जपेत्- जप करना चाहिये।

3.7अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

3.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ग, 7-ख, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

3.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ग।

3.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-घ, 10-ख।

3.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग ।

3.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ख, 8-ग, 9-घ, 10-क।

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-आरती संग्रह।

2-क्यों-भाग-1

3-क्यों- भाग-2।

4-शब्दकल्पद्रुमः।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-प्रतिष्ठा मयूख।

7-पूजन- विधान।

8-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

3.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- दैनिक आरती स्तुति एवं स्तोत्र।

2- स्तोत्ररत्नावलिः।

3- श्री लक्ष्मी उपासना।

3.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- श्री लक्ष्मी जी का परिचय बतलाइये।

2- श्री लक्ष्मी जी का स्वरूप बतलाइये।

3- श्री सूक्त का परिचय लिखिये।

4- लक्ष्मी सूक्त नामक सूक्त लिखिये।

5- महालक्ष्म्यष्टक स्तोत्र लिखिये।

6- श्रीसूक्तम् लिखिये।

7- महालक्ष्म्यष्टक स्तोत्र पाठ का फल लिखिये।

8- लक्ष्मी जी की आरती लिखिये।

9- दुर्गा सप्तशती के अनुसार महालक्ष्मी का ध्यान लिखिये।

10- लक्ष्मी सूक्त पाठ का फल लिखिये।

इकाई 4 - श्री सत्यनारायण जी की आरती एवं स्तुति

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई में श्री सत्यनारायण जी की आरती एवं स्तुति विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कर्मकाण्ड में धन की आदि शक्ति के रूप में पराम्बा भगवती लक्ष्मी को जाना गया है। लक्ष्मी जी सदैव भगवान श्री नारायण के पास रहती है इसलिये सत्य नारायण भगवान की उपासना से चारो पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है।

सत्यं परं धीमहि कहते हुये श्री व्यास जी ने श्रीमद्भागवत महापुराण के प्रथम स्कन्ध के प्रथम अध्याय में सत्य नारायण भगवान की वन्दना की है। वहॉ प्रश्न उठता है कि मंगलाचरण में तो किसी देवता का नाम व्यास जी ने लिया ही नही। परन्तु ध्यान से देखने पर मिलता है कि सत्य की वन्दना व्यास जी के द्वारा की गयी है। वर्तमान में पूजा अर्चन में सबसे प्रसिद्ध है श्री सत्यनारायण व्रत कथा। क्योंकि एक बार नारद जी कलिकाल के जीवों के दुख को देखकर दुख मुक्ति का उपाय स्वयं श्री नारायण भगवान से ही पूछा था। भगवान बतलाया था कि श्री सत्यनारायण भगवान की कथा कलिकाल के दुखों से मुक्ति प्रदान करने वाली है। इसकी विशेषता यह है न्यून व्यय साध्य है। पत्रं पुष्पं फलं तोयं यानी जो उपलब्ध हो उसी से श्री सत्यनाराण की उपासना अत्यन्त आनन्द प्रदान करने वाली है।

इस इकाई के अध्ययन से आप श्री सत्यनारायण जी की आरती एवं स्तुति इत्यादि के विचार करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे श्री सत्यनारायण जी की आरती एवं स्तुति आदि विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

4.2 उद्देश्य-

अब श्री सत्यनारायण जी की आरती एवं स्तुति विचार की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं -

- ❖ कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।
- ❖ श्री सत्यनारायण जी की आरती एवं स्तुति सम्पादनार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
- ❖ सत्यनारायण पूजन के कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।
- ❖ प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
- ❖ लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

❖ समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

4.3. श्री सत्यनारायण जी का स्वरूप विचार एवं पुरुषसूक्त पाठ -

इसमें श्री सत्यनारायण जी का स्वरूप विचार एवं पुरुषसूक्त पाठ का ज्ञान आपको कराया जायेगा क्योकि बिना इसके परिचय के श्री सत्यनारायण जी का आधारभूत ज्ञान नही हो सकेगा। आधारभूत ज्ञान हो जाने पर श्रद्धा एवं समर्पण की भावना का उद्भव होता है। भावो हि विद्‌ते देवः के अनुसार भावना होने पर देवत्व को प्राप्त किया जा सकता है। इसलिये श्री सत्यनारायण जी का स्वरूप विचार एवं पुरुषसूक्त पाठ इस प्रकार है-

4.3.1 श्री सत्यनारायण जी का स्वरूप विचार-

व्यास जी महाराज ने कहा कि एक समय नैमिषारण्य नाम स्थान में शौनकादि ऋषियों ने परम पौराणिक श्री सूत जी से प्रश्न किया। ऋषियों ने कहा कि किस व्रत या तपस्या से वांच्छित फल की प्राप्ति हो सकती है? उन सारी चीजों की सुनने की इच्छा है। कृपाकर आप कहें। श्री सूत जी ने कहा कि नारद जी ने भी भगवान कमलापति नारायण भगवान से इस प्रकार का प्रश्न किया था। हे ऋषिगणों उस समय भगवान ने जो कहा था उसी को यदि आपलोग भी सुन लेगें तो आपके भी प्रश्नों का उत्तर उसी से मिल जायेगा।

एक बार नारद ऋषि लोगों के ऊपर कृपा की आकांक्षा से विविध लोकों में भ्रमण करते हुये मृत्यु लोक में आये। वहां उन्होने सभी जनों को विभिन्न प्रकार के कष्टों से समन्वित पाया। विभिन्न प्रकार के योनियों में उत्पन्न होकर पापकर्मों के फलों को भोगते हुये भी देखा। उन्होनें सोचा कि कौन सा ऐसा उपाय किया जाय जिससे इन लोगों के दुख दूर हो जाय। बार - बार चिन्तन करने पर भी कोई उपाय न पाकर भगवान श्री विष्णु के लोक में गये। वहॉ पर भगवान के स्वरूप का इस प्रकार दर्शन किया। भगवान श्री नारायण शुक्ल वर्ण के वस्त्रों को धारण किये हुये हैं। इनको चार भुजायें हैं, जिनमें शंख, चक्र, गदा, और पद्म धारण किये हुये है। कण्ठ में भगवान वनमाला धारण किये हुये है। वनमाला की व्याख्या में लिखा गया है कि- तुलसी, कुन्द, मन्दार पारिजातश्चचम्पकैः, पंचभिर्ग्रथिता माला वनमाला विभूषिता। तुलसी, कुन्द, मन्दार, पारिजात एवं चम्पक के पुष्प से निर्मित माला को वनमाला कहा जाता है। ऐसा दिव्य स्वरूप देखकर नारद भगवान श्री नारायण की स्तुति करने लगे। नारद जी ने कहा-

नमो वांग्मनसातीत रूपायानन्तशक्तये। आदि मध्यान्तहीनाय निर्गुणाय गुणात्मने ।।

अर्थात् वाणी एवं मनस से परे स्वरूप वाले, अनन्त स्वरूप एवं शक्ति वाले, आदि, मध्य एवं अन्त से हीन, निर्गुण रूप सकल गुणों के धाम आपको प्रणाम है। भगवान के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि-

सशंखचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणं।
सहारवक्षस्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम्।

अर्थात् भगवान श्री नारायण शंख एवं चक्र धारण किये रहते हैं। किरीट यानी मुकुट और कण्डल तो कान में धारण किया जाता है उसको धारण किये रहते हैं। पीताम्बर वाला वस्त्र धारण किये हुये हैं। कमल के समान भगवान की आंखें हैं। हार यानी माला सहित वक्षस्थल सुशोभित हो रहा है। कौस्तुभ मणि सहित भगवान लक्ष्मी जी के साथ विराजमान है ऐसे चार भुजा धारी भगवान श्री विष्णु को शिर से प्रणाम करता हूँ। श्री लक्ष्मीनृसिंह स्तोत्र में भगवान श्री नारायण के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि-

हे अति शोभायमान क्षीरसमुद्र में निवास करने वाले, हाथ में चक्र धारण करने वाले, नागनाथ के फणों की मणियों से देदीप्यमान मनोहर मूर्ति वाले, हे योगीश संसार सागर के लिये नौका स्वरूप आप अपने चरण कमल का सहारा दीजिये। आपके अमल चरण कमल ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र, आदि के किरीटों की कोटियों के समूह से अति देदीप्यमान हो रहे है। हे लक्ष्मी के कुच कमल के राजहंस श्री लक्ष्मी नृसिंह मुझे अपने कर कमल का सहारा दीजिये।

ध्येयः सदा सवितृ मण्डल मध्यवर्ति
नारायणः सरसिजासन सन्निविष्टः।
केयूरवान् मकर कुण्डलवान् किरीटी,
हारी हिरण्मय वपुर्धृत शंखचक्रः॥

इस श्लोक में भगवान के सूर्य समान स्वरूप की वन्दना की गयी है। भगवान नारायण कमल के आसन पर सन्निविष्ट है। केयूर एवं कुण्डल धारण किये हुये मुकुट वाले तथा स्वर्ण के समान देदीप्यमान शरीर वाले शंख एवं चक्र को धारण करने वाले, सदैव हार धारण करने वाले आपका मैं सदा ध्यान करता हूँ।

इस प्रकार अनेक स्तोत्रों में भगवान नारायण के स्वरूप का वर्णन किया गया है। वेद तो कहता है नारायण रूपी जो पुरुष है वह सहस्रों यानी हजारों शिरों वाला है, सहस्रों आंखों वाला, सहस्रों पैरों वाला, भूमि पर सम्पूर्ण रूप से व्याप्त है, परन्तु दस अंगुल मे बैठा हुआ है। वह सब कुछ जानता है यानी भूतं जो हो चुका और जो होने वाला है। अमृत का भी स्वामी है और अन्नों में भी वास करता है।

इस प्रकार भगवान श्री सत्यनारायण जी के स्वरूप के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित

शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- नमो वांग्............तीत रूपायानन्तशक्तये।

क- वांग्, ख- मनसा, ग- रूपा, घ- आदि।

प्रश्न 2- .... मध्यान्तहीनाय निर्गुणाय गुणात्मने।।

क- वांग्, ख- मनसा, ग- रूपा, घ- आदि।

प्रश्न 3- सशंखचक्रं .... सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणं।

क- सशंखचक्रं, ख- सकिरीटकुण्डलं, ग- सपीतवस्त्रं, घ- सरसीरुहेक्षणं।

प्रश्न 4- सहारवक्षस्थलकौस्तुभश्रियं नमामि .... शिरसा चतुर्भुजम्।

क-सहारवक्षस्थलकौस्तुभश्रियं, ख- नमामि, ग- विष्णुं, घ- शिरसा ।

प्रश्न 5- ध्येयः सदा सवितृ .... मध्यवर्ति।

क- मण्डल, ख- सरसिजासन्, ग- मकर, घ- हिरण्मय।

प्रश्न 6- नारायणः .... सन्निविष्टः।

क- मण्डल, ख- सरसिजासन्, ग- मकर, घ- हिरण्मय।

प्रश्न 7- केयूरवान् ....कुण्डलवान् किरीटी।

क- मण्डल, ख- सरसिजासन्, ग- मकर, घ- हिरण्मय।

प्रश्न 8- हारी .... वपुर्धृत शंखचक्रः।।

क- मण्डल, ख- सरसिजासन्, ग- मकर, घ- हिरण्मय।

प्रश्न 9- भगवान का नेत्र किस पुष्प के समान है?

क- कमल, ख- गेंदा, ग- चमेली, ध-चम्पा।

प्रश्न 10- किरीट शब्द का अर्थ क्या है?

क- कीट, ख- कुण्डल, ग- मुकुट, ध- कूट।

4.3.2 श्री सत्यनारायण भगवान की प्रसन्नता हेतु पुरुष सूक्त पाठ-

ओं सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमि गुं सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम्।।
पुरुष एवेद गुं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।
एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः।
पादोस्य व्विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।।
त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादो स्येहा भवत्पुनः।
ततो विष्वंग् व्यक्रामत्साशनानशने अभि।
ततो व्विराडजायतव्विराजो अधिपूरुषः।
सजातो अत्यरिच्यतपश्चाद् भूमिमथोपुरः।
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशूस्तांश्चक्रे व्वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये।
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दा गुं सि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।
तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः।
तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः।
तेन देवा अयजन्त साद्ध्या ऋषयश्च ये।
यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्या सीत्किं बाहू किमूरु पादा उच्येते।
ब्राह्मणोस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।

उूरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां गुं शूद्रो अजायत।

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।

श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्चमुखादग्निरजायत।

नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गुं शीष्णोद्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकान् अकल्पयन्।

यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

व्वसन्तो अस्यासीदाज्ज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः।

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्तसमिधः कृताः।

देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम्।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः ।।

इस प्रकार भगवान श्री सत्यनारायण जी की प्रसन्नता के लिये पुरुष सूक्त के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- ओं सहस्रशीर्षा पुरुषः .... सहस्रपात्।

स भूमि गुं सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम्।।

क- सहस्राक्षः, ख- यद्भूतं, ग- महिमातो, घ- उदैत्पुरुषः।

प्रश्न 2- पुरुष एवेद गुं सर्वं .... यच्च भाव्यम्।

उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।

क- सहस्राक्षः, ख- यद्भूतं, ग- महिमातो, घ- उदैत्पुरुषः।

प्रश्न 3- एतावानस्य .... ज्यायांश्च पूरुषः।

पादोस्य व्विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।।

क- सहस्राक्षः, ख- यद्भूतं, ग- महिमातो, घ- उदैत्पुरुषः।

प्रश्न 4- त्रिपादूर्ध्व .... पादो स्येहा भवत्पुनः।

ततो विष्वंग् व्यक्रामत्साशनानशने अभि।।

क- सहस्राक्षः, ख- यद्भूतं, ग- महिमातो, घ- उदैत्पुरुषः।

प्रश्न 5- ततो व्विराडजायतव्विराजो ....।

सजातो अत्यरिच्यतपश्चाद् भूमिमथोपुरः।।

क- अधिपूरुषः, ख- सम्भृतं, ग- सामानि, घ- अजायन्त।

प्रश्न 6- तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः .... पृषदाज्यम्।

पशूस्तांश्चक्रे व्वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये।

क- अधिपूरुषः, ख- सम्भृतं, ग- सामानि, घ- अजायन्त।

प्रश्न 7- तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः ....जज्ञिरे।

छन्दा गुं सि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।

क- अधिपूरुषः, ख- सम्भृतं, ग- सामानि, घ- अजायन्त।

प्रश्न 8- तस्मादश्वा .... ये के चोभयादतः।

गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः।

क- अधिपूरुषः, ख- सम्भृतं, ग- सामानि, घ- अजायन्त।

प्रश्न 9- तं यज्ञं .... प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः।

तेन देवा अयजन्त साद्ध्या ऋषयश्च ये।

क- अधिपूरुषः, ख- बर्हिषि ग- सामानि, घ- अजायन्त।

प्रश्न 10- यत्पुरुषं व्यदधुः .... व्यकल्पयन्।

मुखं किमस्या सीत्किं बाहू किमूरु पादा उच्येते।

क- अधिपूरुषः, ख- कतिधा, ग- सामानि, घ- अजायन्त।

इस प्रकार आपने श्री सत्यनारायण भगवान के स्वरूप एवं पुरुषसूक्त के बारे में जाना। अब हम श्री सत्यनारायण भगवान के स्तोत्र पाठ एवं आरती के विषय में अगले प्रकरण में चर्चा करने जा रहे हैं जो इस प्रकार है-

4.4.- श्री सत्यनारायण स्तोत्र एवं आरती

इस प्रकरण में श्री सत्यनारायण स्तोत्रों के बारे में एवं आरती के बारे में चर्चा करेगें। सर्व प्रथम श्री सत्यनारायणाष्टक इस प्रकार दिया जा रहा है-

4.4.1 श्रीसत्यनारायणाष्टकस्तोत्रम्-

आदिदेवं जगत्कारणं श्रीधरं, लोकनाथं विभुं व्यापकं शंकरम्।

सर्वभक्तेष्टदं मुक्तिदं माधवं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।
सर्वदा लोककल्याणपारायणं , देवगोविप्ररक्षार्थसद्विग्रहम्।
दीनहीनात्मभक्ताश्रयं सुन्दरम् , सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।
दक्षिणे यस्य गंगा शुभा शोभते, राजते सा रमा यस्य वामे सदा।
यः प्रसन्नाननो भाति भव्यश्च तं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।
संकटे संगरे यं जनः सर्वदा, स्वात्मभीनाशनाय स्मरेत् पीडितः।
पूर्णकृत्यो भवेत् यत्प्रसादच्च तम्, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।
वांछितं दुर्लभं यो ददाति प्रभुः, साधवे स्वात्मभक्ताय भक्तिप्रियः।
सर्वभूताश्रयं तं हि विश्वम्भरं , सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।
ब्राह्मणः साधुवैश्यश्च तुंगध्वजो, ये भवन् विश्रुता यस्य भक्त्यामराः।
लीलया यस्य विश्वं ततं तं विभुं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।
येनचा ब्रह्मबालतृणं धार्यते , सृज्यते पाल्यते सर्वमेतज्जगत्।
भक्तभावप्रियं श्रीदयासागरं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।
सर्वकामप्रदं सर्वदा सत्प्रियं, वन्दितं देववृन्दैर्मुनीन्द्रार्चितम्।
पुत्रपौत्रादिसर्वेष्टदं शास्वतं , सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।
अष्टकं सत्यदेवस्य भक्त्या नरः, भावयुक्तो मुदा यस्त्रिसन्ध्यं पठेत्।
तस्य नश्यन्ति पापानि तेनाग्निना, इन्धनानीव शुष्काणि सर्वाणि वै।।

।। इति श्री सत्यनारायणाष्टकम्।।

इस प्रकार भगवान श्री सत्यनारायण जी की प्रसन्नता के लिये सत्यनारायणाष्टक के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- आदिदेवं जगत्कारणं ...., लोकनाथं विभुं व्यापकं शंकरम्।

सर्वभक्तेष्टदं मुक्तिदं माधवं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।

क- श्रीधरं, ख- सुन्दरम्, ग- शुभा, ध- संगरे।

प्रश्न 2- सर्वदा लोककल्याणपारायणं , देवगोविप्ररक्षार्थसद्विग्रहम्।

दीनहीनात्मभक्ताश्रयं .... , सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।

क- श्रीधरं, ख- सुन्दरम्, ग- शुभा, ध- संगरे।

प्रश्न 3- दक्षिणे यस्य गंगा .... शोभते, राजते सा रमा यस्य वामे सदा।

यः प्रसन्नाननो भाति भव्यश्च तं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।

क- श्रीधरं, ख- सुन्दरम्, ग- शुभा, ध- संगरे।

प्रश्न 4- संकटे ....यं जनः सर्वदा, स्वात्मभीनाशनाय स्मरेत् पीडितः।

पूर्णकृत्यो भवेत् यत्प्रसादच्च तम्, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।

क- श्रीधरं, ख- सुन्दरम्, ग- शुभा, ध- संगरे।

प्रश्न 5- वांछितं दुर्लभं यो ददाति प्रभुः, साधवे .... भक्तिप्रियः।

सर्वभूताश्रयं तं हि विश्वम्भरं , सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।

क- स्वात्मभक्ताय, ख- तुंगध्वजो, ग-पाल्यते, घ- सर्वकामप्रदं।

प्रश्न 6- ब्राह्मणः साधुवैश्यश्च ...., ये भवन् विश्रुता यस्य भक्त्यामराः।

लीलया यस्य विश्वं ततं तं विभुं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।

क- स्वात्मभक्ताय, ख- तुंगध्वजो, ग-पाल्यते, घ- सर्वकामप्रदं।

प्रश्न 7- येनचा ब्रह्मबालतृणं धार्यते , सृज्यते .... सर्वमेतज्जगत्।

भक्तभावप्रियं श्रीदयासागरं, सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।

क- स्वात्मभक्ताय, ख- तुंगध्वजो, ग-पाल्यते, घ- सर्वकामप्रदं।

प्रश्न 8- .. .. सर्वदा सत्प्रियं, वन्दितं देववृन्दैर्मुनीन्द्रार्चितम्।

पुत्रपौत्रादिसर्वेष्टदं शास्वतं , सत्यनारायणं विष्णुमीशं भजे।।

क- स्वात्मभक्ताय, ख- तुंगध्वजो, ग-पाल्यते, घ- सर्वकामप्रदं।

प्रश्न 9- अष्टकं सत्यदेवस्य भक्त्या नरः, ... मुदा यस्त्रिसन्ध्यं पठेत्।

क- स्वात्मभक्ताय, ख- भावयुक्तो, ग-पाल्यते, घ- सर्वकामप्रदं।

प्रश्न 10- तस्य नश्यन्ति पापानि ...., इन्धनानीव शुष्काणि सर्वाणि वै।।

क- स्वात्मभक्ताय, ख- तुंगध्वजो, ग-तेनाग्निना, घ- सर्वकामप्रदं।

इस प्रकार आपने श्री सत्यनारायणाष्टक को जाना। अब श्रीनारायणाष्टक स्तोत्र को लिखा जा रहा है।

4.4.1 श्रीनारायणाष्टकम्-

वात्सल्यादभयप्रदानसमयादार्तार्तिनिर्वापणा-

दौदार्यादघशोषणादगणित श्रेयः पदप्रापणात्।

सेव्यः श्रीपतिरेक एव जगतामेते भवन्साक्षिणः।

प्रह्लादश्च विभीषणश्च करिराट् पांचाल्यहल्या ध्रुवः।

प्रह्लादास्ति यदीश्वरो वद हरिः सर्वत्र मे दर्शय।

स्तम्भे चैवमिति ब्रुवन्तमसुरं तत्राविरासीद्धरिः।

वक्षस्तस्य विदारयन्निजनखैर्वात्सल्यमापादय-

न्नार्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे गतिः।।

श्रीरामात्रविभीषणो अयमनघो रक्षोभयादागतः।

सुग्रीवानय पालयैनमधुना पौलस्त्यमेवागतम्।

इत्युक्त्वाभयमस्य सर्वविदितं यो राघवो दत्तवान्।

आर्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे गतिः।।

नक्रग्रस्तपदं समुद्धतकरं ब्रह्मादयो भो सुराः।

पाल्यन्तामिति दीनवाक्यकरिणं देवेष्वशक्तेषु यः।

मा भैषीरिति यस्य नक्रहनने चक्रायुधः श्रीधरः।

आर्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे गतिः।।

भो कृष्णाच्युत भो कृपालय हरे भो पाण्डवानां सखे।

क्वासि क्वासि सुयोधनादपहृतां भो रक्ष मामातुराम्।

इत्युक्तोक्षयवस्त्रसंभृततनुं यो अपालयद्द्रोपदीम्।

आर्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे गतिः।।

यत्पादाब्जनखोदकं त्रिजगतां पापौघविध्वंसनं।

यन्नामामृतपूरकं च पिबतां संसारसंतारकम्।

पाषाणोपि यदंघ्रिपद्मरजसा शापान्मुनेर्मोचित।

आर्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे गतिः।।

पित्राभ्रातरमुत्तमासनगतं चौत्तानपादि ध्रुवो।

दृष्ट्वा तत्सममारुरुक्षुरधृतो मात्रावमानं गतः।

यं गत्वा शरणं यदाप तपसा हेमाद्रि सिंहासनम्।

आर्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे गतिः।।

आर्ता विष्ण्णाः शिथिलाश्चभीता

घोरेषु च व्याधिषु वर्त्तमानाः।

संकीर्त्य नारायणशब्दमात्रं,

विमुक्तदुःखाः सुखिनो भवन्ति।।

।। इति श्रीनारायणाष्टकम् ।।

इस प्रकार भगवान श्री सत्यनारायण जी की प्रसन्नता के लिये श्रीनारायणाष्टक के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- वात्सल्यादभयप्रदानसमयादार्तार्तिनिर्वापणा-

दौदार्यादघशोषणादगणित ....पदप्रापणात्।

क- श्रेयः, ख- सेव्यः, ग- वद हरिः, घ- वक्षस्तस्य

प्रश्न 2- .... श्रीपतिरेक एव जगतामेते भवन्साक्षिणः।

प्रह्लादश्च विभीषणश्च करिराट् पांचाल्यहल्या ध्रुवः।

क- श्रेयः, ख- सेव्यः, ग- वद हरिः, घ- वक्षस्तस्य

प्रश्न 3- प्रह्लादास्ति यदीश्वरो .... सर्वत्र मे दर्शय।

स्तम्भे चैवमिति बुरवन्तमसुरं तत्राविरासीद्धरिः।

क- श्रेयः, ख- सेव्यः, ग- वद हरिः, घ- वक्षस्तस्य।

प्रश्न 4- .... विदारयन्निजनखैर्वात्सल्यमापादय-

न्नार्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे गतिः।।

क- श्रेयः, ख- सेव्यः, ग- वद हरिः, घ- वक्षस्तस्य।

प्रश्न 5- श्रीरामात्रविभीषणो अयमनघो रक्षोभयादागतः।

.... पालयैनमधुना पौलस्त्यमेवागतम्।

क- सुग्रीवानय, ख- राघवो, ग- गतिः, घ- ब्रह्मादयो।

प्रश्न 6- इत्युक्त्वाभयमस्य सर्वविदितं यो .... दत्तवान्।

क- सुग्रीवानय, ख- राघवो, ग- गतिः, घ- ब्रह्मादयो।

प्रश्न 7- आर्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे ....।।

क- सुग्रीवानय, ख- राघवो, ग- गतिः, घ- ब्रह्मादयो।

प्रश्न 8- नक्रग्रस्तपदं समुद्धतकरं .... भो सुराः।

क- सुग्रीवानय, ख- राघवो, ग- गतिः, घ- ब्रह्मादयो।

प्रश्न 9-पाल्यन्तामिति .... देवेष्वशक्तेषु यः।

क- सुग्रीवानय, ख-दीनवाक्यकरिणं, ग- गतिः, घ- ब्रह्मादयो।

प्रश्न 10-यं गत्वा शरणं यदाप तपसा हेमाद्रि सिंहासनम्।

आर्तत्राणपरायणः स भगवान्नारायणो मे ....।।

क- सुग्रीवानय, ख-दीनवाक्यकरिणं, ग- गतिः, घ- ब्रह्मादयो।

4.4.2- श्री सत्यनारायण जी की आरती-

आरती में सर्व प्रथम चरणों की चार बार, नाभि की दो बार, मुख की एक बार एवं समस्त अंगों की सात बार आरती उतारना चाहिये। तत्पश्चात् शंख का जल छिड़कना चाहिये।

ओं जय लक्ष्मी रमणा, स्वामी जय लक्ष्मी रमणा।
सत्यनारायण स्वामी, जनपातक हरणा।। ओं जय लक्ष्मी रमणा।
रत्नजड़ित सिंहासन, अद्भुत छवि राजे।
नारद करत निराजन, धंटाधुनि बाजे।। ओ जय लक्ष्मी रमणा।
प्रकट भये कलिकारण, द्विज को दरश दियो।

बूढ़ो ब्राह्मण बनके, कंचन महल कियो। ओ जय लक्ष्मी रमणा

दुर्बल भील कठारो, श्रद्धा तज दीन्ही ।

सो फल भोग्यो प्रभु जी, पुनि स्तुति कीन्ही। ओं जय लक्ष्मी रमणा ।

भाव भक्ति के कारण, छिन-छिन रूप धर्यो ।

श्रद्धा धारण कीनी, जिनको काज सर्यो। ओं जय लक्ष्मी रमणा ।

ग्वाल बाल संग राजा, वन में भक्ति करी ।

मनवांछित फल दीनों, दीन दयाल हरी। ओं जय लक्ष्मी रमणा ।

चढ़त प्रसाद सवायो कदली फल मेवा ।

धूप दीप तुलसी से, राजी सत्यदेवा।। ओं जय लक्ष्मी रमणा ।

श्री सत्यनारायण जी की आरती, जो कोइ नर गावे ।

भणत शिवानन्द स्वामी, सुख सम्पति पावे। ओं जय लक्ष्मी रमणा ।।

इस प्रकार भगवान श्री सत्यनारायण जी की प्रसन्नता के लिये श्रीसत्यनारायणजी की आरती के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- ओं जय लक्ष्मी रमणा, स्वामी जय लक्ष्मी रमणा।

सत्यनारायण स्वामी, ... हरणा।। ओं जय लक्ष्मी रमणा।

क- जनपातक, ख- निराजन, ग- कलिकारण, घ-भोग्यो।

प्रश्न 2- रत्नजड़ित सिंहासन, अद्भुत छवि राजे।

नारद करत ...., धंटाधुनि बाजे।। ओ जय लक्ष्मी रमणा।

क- जनपातक, ख- निराजन, ग- कलिकारण, घ-भोग्यो।

प्रश्न 3- प्रकट भये ...., द्विज को दरश दियो।

बूढ़ो ब्राह्मण बनके, कंचन महल कियो। ओ जय लक्ष्मी रमणा

क- जनपातक, ख- निराजन, ग- कलिकारण, घ-भोग्यो।

प्रश्न 4- दुर्बल भील कठारो, श्रद्धा तज दीन्ही।

सो फल .... प्रभु जी, पुनि स्तुति कीन्ही। ओं जय लक्ष्मी रमणा।

क- जनपातक, ख- निराजन, ग- कलिकारण, घ-भोग्यो।

प्रश्न 5- भाव भक्ति के कारण, ... रूप धर्यो।

क- धारण, ख- छिन छिन, ग- भक्ति, घ-मनवांछित।

प्रश्न 6 -श्रद्धा .... कीनी, जिनको काज सर्यो। ओं जय लक्ष्मी रमणा।

क- धारण, ख- छिन छिन, ग- भक्ति, घ-मनवांछित।

प्रश्न 7- ग्वाल बाल संग राजा, वन में ....करी।

क- धारण, ख- छिन छिन, ग- भक्ति, घ-मनवांछित।

प्रश्न 8-................ फल दीनों, दीन दयाल हरी। ओं जय लक्ष्मी रमणा।

क- धारण, ख- छिन छिन, ग- भक्ति, घ-मनवांछित।

प्रश्न 9- चढ़त प्रसाद .... कदली फल मेवा।

क- सवायो, ख- छिन छिन, ग- भक्ति, घ-मनवांछित।

प्रश्न 10- धूप दीप तुलसी से, राजी ....।। ओं जय लक्ष्मी रमणा।

क- धारण, ख- छिन छिन, ग- सत्यदेवा, घ-मनवांछित।

4.5 सारांश-

इस इकाई में श्री सत्यनारायण जी की आरती एवं स्तुति विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया । श्री सत्यनारायण जी की आरती एवं स्तुति विचार के अभाव में पूर्णिमा आदि के

अवसर पर श्री सत्य नारायण व्रत कथा का आयोजन, विष्णु यज्ञादि अनुष्ठानों के अवसर पर पूजनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसमें सत्यनारायण रूप श्री विष्णु जी की ही उपासना की जाती है।

सत्य नारायण भगवान की उपासना से चारो पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है। सत्यं परं धीमहि कहते हुये श्री व्यास जी ने श्रीमद्भागवत महापुराण के प्रथम स्कन्ध के प्रथम अध्याय में सत्य नारायण भगवान की वन्दना की है। वहॉ प्रश्न उठता है कि मंगलाचरण में तो किसी देवता का नाम व्यास जी ने लिया ही नही। परन्तु ध्यान से देखने पर मिलता है कि सत्य की वन्दना व्यास जी के द्वारा की गयी है। वर्तमान में पूजा अर्चन में सबसे प्रसिद्ध है श्री सत्यनारायण व्रत कथा। क्योंकि एक बार नारद जी कलिकाल के जीवों के दुख को देखकर दुख मुक्ति का उपाय स्वयं श्री नारायण भगवान से ही पूछा था। भगवान बतलाया था कि श्री सत्यनारायण भगवान की कथा कलिकाल के दुखों से मुक्ति प्रदान करने वाली है। इसकी विशेषता यह है न्यून व्यय साध्य है। पत्रं पुष्पं फलं तोयं यानी जो उपलब्ध हो उसी से श्री सत्यनाराण की उपासना अत्यन्त आनन्द प्रदान करने वाली है।

भगवान श्री सत्यनारायण के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि भगवान श्री नारायण शुक्ल वर्ण के वस्त्रों को धारण किये हुये हैं। इनको चार भुजायें हैं, जिनमें शंख, चक्र, गदा, और पद्म धारण किये हुये है। कण्ठ में भगवान वनमाला धारण किये हुये है। वनमाला की व्याख्या में लिखा गया है कि- तुलसी, कुन्द, मन्दार पारिजातश्चचम्पकैः, पंचभिर्ग्रथिता माला वनमाला विभूषिता। तुलसी, कुन्द, मन्दार, पारिजात एवं चम्पक के पुष्प से निर्मित माला को वनमाला कहा जाता है। ऐसा दिव्य स्वरूप देखकर नारद भगवान श्री नारायण की स्तुति करने लगे। नारद जी ने कहा- वाणी एवं मनस से परे स्वरूप वाले, अनन्त स्वरूप एवं शक्ति वाले, आदि, मध्य एवं अन्त से हीन, निर्गुण रूप सकल गुणों के धाम आपको प्रणाम है। भगवान के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि- भगवान श्री नारायण शंख एवं चक्र धारण किये रहते है। किरीट यानी मुकुट और कुण्डल जो कान में धारण किया जाता है उसको धारण किये रहते है। पीताम्बर वाला वस्त्र धारण किये हुये है। कमल के समान भगवान की आंखें हैं। हार यानी माला सहित वक्षस्थल सुशोभित हो रहा है। कौस्तुभ मणि सहित भगवान लक्ष्मी जी के साथ विराजमान है ऐसे चार भुजा धारी भगवान श्री विष्णु को शिर से प्रणाम करता हूॅ।

4.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

सशंखचक्रं - शंख और चक्र सहित, सकिरीटकुण्डलं- मुकुट एवं कुण्डल सहित, सपीतवस्त्रं - पीला वस्त्र सहित, सरसीरुह- कमल, इक्षणं- आंखें, सहार- हार सहित, वक्षस्थल- हृदय स्थल, कौस्तुभ- कौस्तुभ नामक मणि, श्रियं - लक्ष्मी, नमामि - नमस्कार करता हूॅ, विष्णुं- श्री विष्णु भगवान को, शिरसा- शिर से, चतुर्भुजम्- चार भुजा वाले, नमो - नमस्कार, वांग्मनसातीत- वाणी एवं मन से परे, रूपाय- रूप के लिये, अनन्तशक्तये- अनन्त शक्ति के लिये, आदि- प्रारम्भ, मध्य- बीच, अन्तहीनाय-

अन्त न हो , निर्गुणाय- निगुण के लिये, गुणात्मने- गुण स्वरूप के लिये, आदिदेवं - सबसे प्रारम्भ के देव, जगत्कारणं - जगत् यानी संसार के कारण, श्रीधरं- श्री को धारण करने वाले, लोकनाथं- लोकों के स्वामी, व्यापकं - विस्तृत, शंकरम्- शान्ति करने वाले, सर्वभक्तेष्टदं - सभी प्रकार के भक्तों को इष्ट प्रदान करने वाले, मुक्तिदं - मुक्ति देने वाले, माधवं- मेरे स्वामी, लोककल्याणपारायणं- लो कल्याण में रत वाले, , देवगोविप्रक्षार्थसद्विग्रहम्- देवता, गौ, विप्र की रक्षा हेतु सद् विग्रह स्वरूप, दीनहीनात्मभक्ताश्रयं- दीन एव हीन भक्तों के आश्रय देने वाले, सुन्दरम्- सुन्दर स्वरूप वाले, राजते - विराजित है, सा- वह, रमा- लक्ष्मी, यस्य- जिसके, वामे- वाम भाग में, सदा- हमेशा, प्रसन्नाननो - प्रसन्न मुख वाला, भव्य- दिव्य, स्वात्मभीनाशनाय- अपने भय को विनष्ट करने के लिये, स्मरेत् - स्मरण करते है, पीडितः- पीड़ित लोग,पूर्णकृत्यो - कार्य पूर्ण हो जाता है, यत्- जिसके, प्रसादात्- प्रसाद से, वांछितं- इच्छानुसार, दुर्लभं - अप्राप्य, यो - जो, ददाति- देता है, साधवे - साधु जनों के लिये, स्वात्मभक्ताय- अपने भक्तों के लिये, भक्तिप्रियः- भक्ति प्रिय है जिसको, सर्वभूताश्रयं - सभी प्राणियों का आश्रय, विश्वम्भरं- विश्व का भरण पोषण करने वाला, लीलया- खेल से, यस्य -जिसका, विश्वं - विश्व को, विभुं- जानने वाला, येन- जिसके द्वारा, ब्रह्मबाल - ब्रह्म से बालक पर्यन्त, तृणं- तिनका के समान, धार्यते- धारण करता है, सृज्यते - सृजन करता है, पाल्यते- पालन करता है, भक्तभावप्रियं- भक्त का भाव प्रिय हो जिसको, श्रीदयासागरं- दया के श्रेष्ठ सागर, सर्वकामप्रदं - सभी कामनाओं को देने वाले, सर्वदा सत्प्रियं- हमेशा सत्य ही प्रिय हो जिसको, वन्दितं - वन्दना किये जाने वाले, देववृन्दैर्मुनीन्द्रार्चितम्- देव वृन्द एवं मुनीन्द्रों से पूजित, पुत्रपौत्रादिसर्वेष्टदं - पुत्र पौत्र सहित सभी प्रकार के अभीष्ट को प्रदान करने वाले, शास्वतं - सनातन, मुदा- प्रसन्न, यस्त्रिसन्ध्यं - तीनों सन्ध्याओं में, पठेत्- पढ़ना चाहिये, तस्य- उसके, नश्यन्ति- नष्ट होते हैं, पापानि- पाप, तेन- उसी प्रकार, अग्निना- अग्नि से, इन्धनानीव शुष्काणि सर्वाणि - सभी सूखा इन्धन जल जाता है।

4.7अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

4.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ख, 2-घ, 3-ख, 4-ग, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ग।

4.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ख।

4.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

4.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

4.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-ख, 6-क, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ग।

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-आरती संग्रह।
2-वृह्द स्तोत्र रत्नावलिः।
3-सत्यनारायण व्रत कथा।
4-शब्दकल्पद्रुमः।
5-आह्निक सूत्रावलिः।
6-नित्य कर्म पूजा प्रकाश।
7-पूजन- विधान।
8-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

4.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- दैनिक आरती स्तुति एवं स्तोत्र।
2- स्तोत्ररत्नावलिः।
3- श्री शुक्लयजुर्वेदरुद्राष्टाध्यायी।

4.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- श्री सत्यनारायण व्रत का परिचय बतलाइये।
2- श्री सत्यनारायण जी का स्वरूप बतलाइये।
3- पुरुष सूक्त का परिचय लिखिये।
4- नारायणाष्टक स्तोत्र लिखिये।
5- सत्यनारायणाष्टक स्तोत्र लिखिये।
6- पुरुषसूक्तम् लिखिये।
7- सत्यनारायणाष्टक स्तोत्र पाठ का फल लिखिये।
8- श्री सत्यनारायण जी की आरती लिखिये।
9- श्री नारायण भगवान का ध्यान लिखिये।
10- श्रीनारायणाष्टकस्तोत्र पाठ का फल लिखिये।

खण्ड - 4

कर्मकाण्ड प्रक्रियाओं की वैज्ञानिकता

इकाई – 1 पूजन में मांगलिक द्रव्यों की वैज्ञानिकता

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 102 के चतुर्थ खण्ड की प्रथ इकाई 'पूजन में मांगलिक द्रव्यों की वैज्ञानिकता' शीर्षक से सम्बन्धित है। यद्यपि देखा जाए तो सम्पूर्ण कर्मकाण्ड ही वैज्ञानिक रूप में है, तथा उसमें उपयोग की जाने वाली सामग्रीयों का भी विज्ञान की दृष्टि से अपना महत्व है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने विविध प्रकार के पूजन से सम्बन्धित इकाईयों का अध्ययन कर लिया है। यहॉ इस इकाई में पूजन में मांगलिक द्रव्य की सार्थकता का अध्ययन करेंगे।

मांगलिक शब्द का अर्थ ही होता है मंगल करने वाला या कल्याण करने वाला। इसी प्रकार पूजन में प्रयोग किये जाने वाले मांगलिक द्रव्य मंगलकारी के साथ अपनी वैज्ञानिकता को सिद्ध करते हैं। इस इकाई में हम तत्सम्बन्धित तथ्यों का अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ पूजन विधि को समझा सकेंगे।
- ❖ पूजन में प्रयोगार्थ मांगलिक द्रव्य को बता सकेंगे।
- ❖ मांगलिक द्रव्य की वैज्ञानिकता को बता सकेंगे।
- ❖ पूजन से जुड़ी विधियों को समझा सकेंगे।
- ❖ मांगलिक द्रव्य की महत्ता को निरूपित कर सकेंगे।

1.3 पूजन परिचय

पूजा अथवा पूजन किसी भगवान को प्रसन्न करने हेतु हमारे द्वारा उनका अभिवादन होता है। पूजा दैनिक जीवन का शांतिपूर्ण तथा महत्वपूर्ण कार्य है। पूजन कर्म में आस्था प्रधान होता है। यहाँ भगवान को पुष्प आदि समर्पित किये जाते हैं जिनके लिये कई पुराणों से लिये गए श्लोकों का उपयोग किया जाता है। वैदिक श्लोकों का उपयोग किसी बड़े कार्य जैसे यज्ञ आदि की पूजा में ब्राह्मण द्वारा होता है। पूजन में प्रधान रूप से वेद के मन्त्रों का उपयोग किया जाता है, बाद में ऋषियों द्वारा लौकिक मन्त्रों का भी निर्माण किया गया। इस प्रकार वैदिक और लौकिक मन्त्रों से देवताओं का पूजन किया जाता है। सभी पूजन में सर्वप्रथम गणेश की पूजा की जाती है। आइये सर्वप्रथम पूजन के प्रकार को भी समझते है।

पूजन के मुख्य रूप से छ: प्रकार है—

पंचोपचार (5 प्रकार)

दशोपचार (10 प्रकार)

षोडशोपचार (16 प्रकार)

द्वात्रिंशोपचार (32 प्रकार)

चतु:षष्टि प्रकार (64 प्रकार)

एकोद्वात्रिंशोपचार (132 प्रकार)

पूजन योनिज पिण्डों का होता है। अत: दैनिक जीवन में जो मनुष्य अपने साथ उपयोग करता है, ठीक वैसे ही देवताओं को भी पूजन प्रक्रिया में अर्पित करता है, उसमें कहीं – कहीं भेद होता है। यथा मनुष्य आसन पर बैठता है, तो देवता को भी पूजन में आसन दिया जाता है। आसन का अर्थ बैठने वाले स्थान पर तत्सम्बन्धित तत्व से है। उसी क्रम में मनुष्य स्नान करता है, तो देवताओं को भी स्नानार्थ जल अर्पित करता है। स्नान का वैज्ञानिक कारण आप सभी जानते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक कर्मों में समतुल्यता दिखलाई पड़ती है। यहॉ पूजन क्रम को समझिये -

स्नान - सर्वप्रथम स्वयं स्वच्छ जल से स्नान करें तथा एक काँस के पात्र में जल लावें ध्यान रहे बिना स्नान किये व्यक्तियों से स्पर्श न हो तथा पानी लाते समय चप्पल आदि न पहनें। और उसे भगवान के समक्ष रख दें।

पूजा की थाल - आचमनी पंचपात्र आदि एक थाली काँस अथवा ताँबे की हो उसमें रखें तथा साथ में पुष्प, अक्षत, बिल्वपत्र, धूप, दीप, नैवेद्य, चंदन आदि पूजा में उपयोगी वस्तुएँ रखें।

पवित्रीकरण - आसन में बैठ कर पवित्रीकरण करें, अपने तथा पूजन के थाल पर जल सिंचन करें तथा पवित्रीकरण श्लोक बोलें।

ध्यान - भगवान का ध्यान करें।

दैनिक पूजा उपक्रम - क्रम निम्नांकित हैं—

ध्यान

आवाहन

आसन

पाद्य

अर्घ्य

आचमनी

स्नान जल, दुग्ध, घृत, शर्करा, मधु, दधि, उष्ण जल या शीत जल (ऋतु अनुसार)

पंचामृत स्नान दुग्ध, दधि, घृत (घी), मधु, शर्करा एवं गंगाजल को एक साथ मिलाकर उससे स्नान करावें।

शुद्धोदकस्नान शुद्ध जल से स्नान।

वस्त्र

चंदन

यज्ञोपवीत (जनेऊ)

पुष्प

दुर्वा गणेश जी में दूबी अर्पित करें।

तुलसी विष्णु में तुलसी।

शमी शमीपत्र।

अक्षत शिव में श्वेत अक्षत, देवी में रक्त (लाल) अक्षत, अन्य में पीत (पीला) अक्षत।

सुगंधिद्रव्य इत्र।

धूप

दीप

नैवेद्य प्रसाद।

ताम्बूल पान।

पुष्पाञ्जलि।

मंत्र पुष्पांजलि।

प्रार्थना।

1.4 पूजन में प्रयुक्त मांगलिक द्रव्यों की वैज्ञानिकता –

वस्तुत: पूजन में प्रयुक्त समस्त द्रव्य मांगलिक ही है अर्थात् मंगल को देने वाले है। उनकी वैज्ञानिकता स्वयंसिद्ध है। मांगलिक द्रव्यों के अन्तर्गत स्वस्तिक, तिलक, अभिषेक, अक्षत, हरिद्रा, गंगाजल, पंचामृत (दूध, दही, घी, शहद, गंगाजल) यज्ञोपवीत, चंदन, सुगंधित द्रव्य, दीप, नैवेद्य, धूप, ताम्बूल आदि।

भारतीय संस्कृति में वैदिक काल से ही स्वस्तिक को विशेष महत्त्व प्रदान किया गया है। यद्यपि बहुत से लोग इसे हिन्दू धर्म का एक प्रतीक चिह्न ही मानते हैं किन्तु वे लोग ये नहीं जानते कि इसके पीछे कितना गहरा अर्थ छिपा हुआ है। सामान्यतय: स्वस्तिक शब्द को "सु" एवं "अस्ति" का मिश्रण योग माना जाता है। यहाँ "सु" का अर्थ है- शुभ और "अस्ति" का- होना। संस्कृत व्याकरण अनुसार

"सु" एवं "अस्ति" को जब संयुक्त किया जाता है तो जो नया शब्द बनता है- वो है "स्वस्ति" अर्थात "शुभ हो", "कल्याण हो" । स्वस्तिक शब्द का विच्छेद करने पर **सु+अस+क** होता है । 'सु' का अर्थ अच्छा, 'अस' का अर्थ सत्ता 'या' अस्तित्व और 'क' का अर्थ है कर्ता या करने वाला । इस प्रकार स्वस्तिक शब्द का अर्थ हुआ **अच्छा या मंगल करने वाला** । इसलिए देवता का तेज़ शुभ करनेवाला - स्वस्तिक करने वाला है और उसकी गति सिद्ध चिह्न 'स्वस्तिक' कहा गया है।

स्वस्तिक अर्थात कुशल एवं कल्याण । कल्याण शब्द का उपयोग अनेक प्रश्नों का एक उत्तर के रूप में किया जाता है । शायद इसलिए भी यह निशान मानव जीवन में इतना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। संस्कृत में सु-अस धातु से स्वस्तिक शब्द बनता है । सु अर्थात् सुन्दर, श्रेयस्कर, अस् अर्थात् उपस्थिति, अस्तित्व । जिसमें सौन्दर्य एवं श्रेयस का समावेश हो, वह स्वस्तिक है।

स्वस्तिक का सामान्य अर्थ शुभ, मंगल एवं कल्याण करने वाला है । स्वस्तिक शब्द मूलभूत सु+अस धातु से बना हुआ है। सु का अर्थ है अच्छा, कल्याणकारी, मंगलमय और अस का अर्थ है अस्तित्व, सत्ता अर्थात कल्याण की सत्ता और उसका प्रतीक है स्वस्तिक। यह पूर्णतः कल्याणकारी भावना को दर्शाता है । देवताओं के चहुं ओर घूमने वाले आभामंडल का चिह्न ही स्वस्तिक होने के कारण वे देवताओं की शक्ति का प्रतीक होने के कारण इसे शास्त्रों में शुभ एवं कल्याणकारी माना गया है । अमरकोश में स्वस्तिक का अर्थ आशीर्वाद, मंगल या पुण्यकार्य करना लिखा है, अर्थात सभी दिशाओं में सबका कल्याण हो । इस प्रकार स्वस्तिक में किसी व्यक्ति या जाति विशेष का नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व के कल्याण या **वसुधैव कुटुम्बकम्** की भावना निहित है । प्राचीनकाल में हमारे यहाँ कोई भी श्रेष्ठ कार्य करने से पूर्व मंगलाचरण लिखने की परंपरा थी, लेकिन आम आदमी के लिए मंगलाचरण लिखना सम्भव नहीं था, इसलिए ऋषियों ने स्वस्तिक चिह्न की परिकल्पना की, ताकि सभी के कार्य सानन्द सम्पन्न हों।

स्वस्तिक के प्रयोग से धनवृद्धि, गृहशान्ति, रोग निवारण, वास्तुदोष निवारण, भौतिक कामनाओं की पूर्ति, तनाव, अनिद्रा, चिन्ता रोग, क्लेश, निर्धनता एवं शत्रुता से मुक्ति भी दिलाता है । ऊं एवं स्वस्तिक का सामूहिक प्रयोग नकारात्मक ऊर्जा को शीघ्रता से दूर करता है। हल्दी से अंकित स्वास्तिक शत्रु शमन करता है । स्वस्तिक 27 नक्षत्रों का सन्तुलित करके सकारात्मक ऊर्जा प्रदान करता है।

स्वस्तिक की ऊर्जा

स्वस्तिक का आकृति सदैव कुमकुम (कुंकुम), सिन्दूर व अष्टगंध से ही अंकित करना चाहिए । यदि आधुनिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो अब तो विज्ञान भी स्वस्तिक, इत्यादि माँगलिक चिह्नों की

महता स्वीकार करने लगा है। मृत मानव शरीर का बोविस शून्य माना गया है और मानव में औसत ऊर्जा क्षेत्र 6,500 बोविस पाया गया है। वैज्ञानिक हार्टमेण्ट अनसर्ट ने आवेएंटिना नामक यन्त्र द्वारा विधिवत पूर्ण लाल कुंकुम से अंकित स्वस्तिक की सकारात्मक ऊर्जा को 100000 बोविस यूनिट में नापा है। यदि इसे उल्टा बना दिया जाए तो यह प्रतिकूल ऊर्जा को इसी अनुपात में बढ़ाता है। इसी स्वस्तिक को थोड़ा टेड़ा बना देने पर इसकी ऊर्जा मात्र 1,000 बोविस रह जाती है। ऊं (70000 बोविचिह्न से भी अधिक सकारात्मक ऊर्जा स्वस्तिक में है (।

हरिद्रा – पूजन में हरिद्रा अर्थात् हल्दी अत्यन्त शुभकारी माना गया है। इसका वैज्ञानिक उपयोग भी सर्वविदित है। सभी शुभ कार्यो में हल्दी का उपयोग किया जाता है। दूध के साथ हल्दी का मिश्रण कर सेवन करने से बड़ा – से बड़ा घाव भर जाता है। प्राचीन समय में या वर्तमान समय में भी विभिन्न प्रकार के रोगों में चिकित्सक ये परामर्श देते हैं - कि दुग्ध के साथ हल्दी का मिश्रण करके सेवन कीजिये। अत: स्पष्ट है कि व्यावहारिक रूप में भी हरिद्रा उपयोगी है।

पूजन में भी हरिद्रा शुभकारी, गुणकारी एवं लाभकारी है।

अभिषेक - राजतिलक का स्नान जो राज्यारोहण को वैध करता था। पुराने काल में जब किसी को राजा बनाया जाता था तो उस के सिर पर अभिमन्त्रित जल और औषधियों की वर्षा की जाती थी। इस क्रिया को ही 'अभिषेक' कहते है। अभि उपसर्ग और सिञ्च् धातु कि सन्धि से अभिषेक शब्द बना है। कालांतर में राज्याभिषेक राजतिलक का पर्याय बन गया।

प्राचीन साहित्य में अभिषेक -

अथर्ववेद में 'अभिषेक' शब्द कई स्थलों पर आया है और इसका संस्कारगत विवरण भी वहाँ उपलब्ध है। कृष्ण यजुर्वेद तथा श्रौत सूत्रों में हम प्राय: सर्वत्र "अभिषेचनीय" संज्ञा का प्रयोग पाते हैं जो वस्तुत: राजसूय का ही अंग था, यद्यपि ऐतरेय ब्राह्मण को यह मत संभवत: स्वीकार नहीं। उसके अनुसार अभिषेक ही प्रधान विषय है।

ऐतरेय ब्राह्मण ने अभिषेक के दो प्रकार बतलाए हैं: -

(1) पुनरभिषेक ।

(2) ऐंद्र महाभिषेक।

दूध – पूजन कार्यो में प्रयोग में आने वाले द्रव्यों में दूध का नाम भी आता है। दूध सर्वौषधी है। कहा जाता है कि दूध में समस्त विटामीन का मिश्रण होता है। पूजन में दूध से स्नान कराया जाता है। शुद्ध दूध का सेवन करने वाला दीर्घायु एवं तेजस्वी होता है। यहीं कारण है कि ऋषि – महर्षि अपने चिरकाल की साधना में केवल दूध का उपयोग करते थे। गाय का दूध जिस समय में निकाला गया

हो, उसी क्षण का दूध सर्वाधिक लाभकारी होता है। दही, मट्ठा, पनीर, घी आदि दूध के विकृत रूप हैं।

घी – पूजन कार्य में घी का मुख्य रूप से दो स्थलों पर उपयोग होता है एक तो स्नान कराने में, दूसरा दीपक जलाने में। वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो घी का सेवन करने से स्मरण शक्ति तेज होता है तथा व्यक्ति तेजस्वी, दीर्घायु एवं वीर्यवान होता है ।

गंगाजल -

गंगाजल पूजन कार्य का प्रमुख द्रव्य है। पूजन में इसका महत्व अत्यन्त उपयोगी है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी गंगाजल का महत्व सर्वविदित है। गंगाजल की सबसे बड़ी विशेषता है कि वह कभी अशुद्ध नहीं होता, उसमें कभी भी जीवाणु प्रकट नहीं होते। चिरकाल तक उसका जल यथावत स्थिति में रहता है। पौराणिक मान्यता के अनुसार गंगा पतितपावन हैं। कहा जाता है कि मरते समय यदि गंगाजल मिल जाये तो मोक्ष की प्राप्ति हो जाता है। कई आधुनिक वैज्ञानिकों द्वारा भी गंगाजल को प्रमाणित किया जा चुका है। गंगा अत्यन्त पवित्र होने के साथ ही भारतीय सनातन परम्परा का एक अमूल्य धरोहर है। कई ऋषि, महर्षि इसके तट पर बैठकर साधना करते रहते हैं। यह भी कहा जाता है कि इसके समीप कोई धार्मिक कृत्य करने से सहस्र गुणा फल मिलता हैं।

चन्दन –

चन्दन भी पूजन कर्म का एक मांगलिक द्रव्य है। चन्दन देवता के साथ – साथ स्वयं को भी लगाया जाता है। सभी देवता इसको धारण करते हैं । कहा गया है –

> चन्दनस्य महत्पुण्यं पवित्रं पापनाशनम्।
> आपदं हरते नित्यं लक्ष्मी वसति सर्वदा ॥

यह तो चन्दन का पौराणिक गुण है। इसका वैज्ञानिक गुण यह है कि यह सुवासित होता है। इसके अन्दर से सदैव सुगन्धित महक प्रखरित होते रहता है। यह शीतल होता है। इसलिए जब इसको मस्तक पर लगाते हैं, तो मन सदैव प्रसन्न एवं शान्त रहता है। इसकी शीतलता के कारण ही भुजंग सदैव इससे लिपटा होता है। यह एक दिव्य औषधी है।

पुष्प -

पुष्प भी गुणकारी एवं लाभकारी है। पूजन में पुष्प एक अभिन्न अंग है। पुष्प की आवश्यकता पूजन में सर्वाधिक है। पुष्प के कई प्रकार हैं । सभी पुष्पों का अलग – अलग महत्व है। कई पुष्प जीवनदायिनी होती है । वैज्ञानिक निरन्तर अनुसन्धान करते रहते हैं कि कौन सा पुष्प ज्यादा लाभकारी एवं गुणकारी है। आयुर्वेद में तो कई जड़ी –बुटियों को बनाने में पुष्पों का उपयोग किया

जाता है। दिव्य पुष्पों में – ब्रह्मकमल, गेंदा, जूही, कमल, गुलाब, चम्पा , चमेली, मदार, कुमुदिनी आदि हैं।

तुलसीपत्र -

तुलसी को हरिप्रिया भी कहते हैं । पूजन में विशेष रूप से यह भगवान नारायण को चढ़ाया जाता है यह एक अद्वितीय औषधी है। तुलसीपत्र को आयुर्वेद में औषधी निर्माण में सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। सामान्य रूप में भी इसका सेवन गुणकारी व लाभकारी है। पौराणिक मतों के अनुसार मृत्यु के समीप व्यक्ति को तुलसी और गंगाजल देने का विधान है। यह एक इसका विशिष्ट गुण है। वैज्ञानिक प्रामाणिकता पर भी यह विशुद्ध है।

मधु –

पूजन कार्य में मधु या शहद का उपयोग किया जाता है। साथ ही इसका उपयोग औषधियों के निर्माण में तथा सेवन में किया जाता है। मधु के सेवन से तीव्र बुद्धि होती है तथा स्मरण शक्ति तेज होती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी यह उत्तम है क्योंकि इसमें कई विटामीन पाये जाते हैं, जो स्वास्थ्यवर्धक होते हैं।

ताम्बुल –

ताम्बुल का उपयोग पूजन में मुखवासार्थ के रूप में दिया जाता है। ऐसी मान्यता है कि यह शुभकारी होता है। इसके भक्षण से कार्य सिद्ध हो जाते है। वैज्ञानिक रूप में भी इसका उपयोग कई चिजों के निर्माण में किया जाता है। इसके सेवन से गर्मी पैदा हो जाती है यह एक इसका विशेष गुण है।

यज्ञोपवीत -

यज्ञोपवीत धारण करना भारतीय सनातन का एक महत्वपूर्ण संस्कार है। पूजन में भी इसका उपयोग देवताओं को धारणार्थे किया जाता है। स्वयं भी मनुष्य जब इसको धारण करता है तो उसकी बल, तेज, आयु एवं बुद्धि का विकास होता है। यज्ञोपवीत में ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव का वास होता है। इससे उनका आशीर्वाद प्राप्त होते रहता है।

इस प्रकार से यदि देखा जाए तो पूजन में समस्त मांगलिक द्रव्यों की वैज्ञानिकता स्वयंसिद्ध है। फिर भी मैंने यहॉ संक्षिप्त रूप में इस इकाई में आपके ध्यानाकर्षण हेतु उपर्युक्त तथ्यों का उदाहरण प्रस्तुत किया। आशा है आप सभी इन तत्वों से परिचित हो होकर इसके महत्व को समझ लेंगे।

बोध प्रश्न –

1. पूजन के मुख्य कितने प्रकार है –

   क. 5 ख. 6 ग. 7 घ. 8

2. पूजन क्रम में आवाहन के पश्चात् होता है –

क. पाद्य ख. अर्घ्य ग. आसन घ. आचमन

3. ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार अभिषेक के कितने प्रकार हैं -

क. 2 ख. 3 ग.4 घ. 5

4. चन्दन धारण करने से क्या होता है –

क. पाप का नाश ख. लक्ष्मी वास ग. आपदा हरण घ. उपर्युक्त सभी

5. निम्नलिखित में हरिप्रिया किसे कहते है –

क. मधु ख. तुलसी ग. हरिद्रा घ. कोई नहीं

6. यज्ञोपवीत में किस देवता का वास होता है –

क. ब्रह्मा , विष्णु एवं महेश ख. सूर्य ग. इन्द्र घ. अग्नि

1.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि पूजा अथवा पूजन किसी भगवान को प्रसन्न करने हेतु हमारे द्वारा उनका अभिवादन होता है। पूजा दैनिक जीवन का शांतिपूर्ण तथा महत्वपूर्ण कार्य है। पूजन कर्म में आस्था प्रधान होता है। यहाँ भगवान को पुष्प आदि समर्पित किये जाते हैं जिनके लिये कई पुराणों से लिये गए श्लोकों का उपयोग किया जाता है। वैदिक श्लोकों का उपयोग किसी बड़े कार्य जैसे यज्ञ आदि की पूजा में ब्राह्मण द्वारा होता है। पूजन में प्रधान रूप से वेद के मन्त्रों का उपयोग किया जाता है, बाद में ऋषियों द्वारा लौकिक मन्त्रों का भी निर्माण किया गया। इस प्रकार वैदिक और लौकिक मन्त्रों से देवताओं का पूजन किया जाता है। वस्तुत: पूजन में प्रयुक्त समस्त द्रव्य मांगलिक ही है अर्थात् मंगल को देने वाले है। उनकी वैज्ञानिकता स्वयंसिद्ध है। मांगलिक द्रव्यों के अन्तर्गत स्वस्तिक, तिलक, अभिषेक, अक्षत, हरिद्रा, गंगाजल, पंचामृत (दूध, दही, घी, शहद, गंगाजल) यज्ञोपवीत, चंदन, सुगंधित द्रव्य, दीप, नैवेद्य, धूप, ताम्बूल आदि।

1.6 शब्दावली-

वैदिक – वेद से सम्बन्धित ।

शांतिपूर्ण - शान्ति से भरा हुआ ।

लौकिक – सांसारिक ।

पंचोपचार - पूजन विधि ।

हरिद्रा – हल्दी

मांगलिक – मंगल को देने वाली

स्वस्तिक – सुन्दर एवं श्रेयस

धारणार्थे – धारण के लिए

अभिन्न – बिल्कुल अलग

सहस्र – दस हजार

सर्वविदित – सभी के द्वारा जो जाना गया हो

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ग
3. क
4. घ
5. ख
6. क

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1. कर्मकाण्ड प्रदीप

2.कर्मकलाप

3.नित्यकर्मपूजाप्रकाश

4. पूजन पद्धति

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूजन परिचय का अपने शब्दों में लेखन कीजिये।
2. पूजन में प्रयुक्त मांगलिक द्रव्यों की वैज्ञानिकता सिद्ध कीजिये।
3. पूजन में प्रयुक्त मांगलिक द्रव्य कौन – कौन से है। वर्णन कीजिये।

इकाई – 2 संस्कारों की वैज्ञानिक अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 102 के चतुर्थ खण्ड की द्वितीय इकाई 'संस्कारो की वैज्ञानिक अवधारणा' शीर्षक से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने पूजन में मांगलिकद्रव्य की वैज्ञानिकता का अध्ययन कर लिया है। यहॉ अब संस्कारों की वैज्ञानिकता को समझेंगे। भारतीय सनातन परम्परा में संस्कारों का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है।

संस्कार मानव की उत्तरोत्तर वृद्धि में एक सहायक तत्व है। मानव सभ्य एवं संस्कृत संस्कार को धारण कर ही हो सकता है। अन्यथा नहीं। संस्कारों के प्रकार में भी ऋषियों के पृथक् –पृथक् मत है। सर्वाधिक प्रचलित षोडश संस्कार है।

संस्कार का भी वैज्ञानिक महत्व है। इसकी वैज्ञानिक अवधारणा का वर्णन प्रस्तुत इकाई में आपके अवलोकनार्थ एवं पाठार्थ प्रस्तुत है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- संस्कार किसे कहते है, समझ लेंगे ।
- षोडश संस्कार को समझा सकेंगे।
- संस्कार की वैज्ञानिक अवधारणा का चिन्तन कर सकेंगे।
- संस्कार की महत्ता को समझा सकेंगे।
- संस्कार के गुणों का वैज्ञानिक विश्लेषण कर सकेंगे।

2.3 संस्कार परिचय

भारतीय सनातन अथवा हिन्दू धर्म की संस्कृति संस्कारों पर ही आधारित है। हमारे ऋषि-मुनियों ने मानव जीवन को पवित्र एवं मर्यादित बनाने के लिये संस्कारों का अविष्कार किया। धार्मिक ही नहीं वैज्ञानिक दृष्टि से भी इन संस्कारों का हमारे जीवन में विशेष महत्व है। भारतीय संस्कृति की महानता में इन संस्कारों का महती योगदान है। प्राचीन काल में हमारा प्रत्येक कार्य संस्कार से आरम्भ होता था। उस समय संस्कारों की संख्या भी लगभग चालीस थी। जैसे-जैसे समय बदलता गया तथा व्यस्तता बढती गई तो कुछ संस्कार स्वत: विलुप्त हो गये। इस प्रकार

समयानुसार संशोधित होकर संस्कारों की संख्या निर्धारित होती गई। गौतम स्मृति में चालीस प्रकार के संस्कारों का उल्लेख है। महर्षि अंगिरा ने इनका अंतर्भाव पच्चीस संस्कारों में किया। व्यास स्मृति में सोलह संस्कारों का वर्णन हुआ है। हमारे धर्मशास्त्रों में भी मुख्य रूप से सोलह संस्कारों की व्याख्या की गई है। इनमें पहला गर्भाधान संस्कार और मृत्यु के उपरांत अन्त्येष्टि अंतिम संस्कार है। गर्भाधान के बाद पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण ये सभी संस्कार नवजात का दैवी जगत् से संबंध स्थापना के लिये किये जाते हैं। नामकरण के बाद चूडाकर्म और यज्ञोपवीत संस्कार होता है। इसके बाद विवाह संस्कार होता है। यह गृहस्थ जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार है। हिन्दू धर्म में स्त्री और पुरुष दोनों के लिये यह सबसे बडा संस्कार है, जो जन्म-जन्मान्तर का होता है। विभिन्न धर्मग्रंथों में संस्कारों के क्रम में थोडा-बहुत अन्तर है, लेकिन प्रचलित संस्कारों के क्रम में गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, विद्यारंभ, कर्णवेध, यज्ञोपवीत, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्तन, विवाह तथा अन्त्येष्टि ही मान्य है।
गर्भाधान से विद्यारंभ तक के संस्कारों को गर्भ संस्कार भी कहते हैं। इनमें पहले तीन (गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन) को अन्तर्गर्भ संस्कार तथा इसके बाद के छह संस्कारों को बहिर्गर्भ संस्कार कहते हैं। गर्भ संस्कार को दोष मार्जन अथवा शोधक संस्कार भी कहा जाता है। दोष मार्जन संस्कार का तात्पर्य यह है कि शिशु के पूर्व जन्मों से आये धर्म एवं कर्म से सम्बन्धित दोषों तथा गर्भ में आई विकृतियों के मार्जन के लिये संस्कार किये जाते हैं। बाद वाले छह संस्कारों को गुणाधान संस्कार कहा जाता है। दोष मार्जन के बाद मनुष्य के सुप्त गुणों की अभिवृद्धि के लिये ये संस्कार किये जाते हैं। हमारे मनीषियों ने हमें सुसंस्कृत तथा सामाजिक बनाने के लिये अपने अथक प्रयासों और शोधों के बल पर ये संस्कार स्थापित किये हैं। इन्हीं संस्कारों के कारण भारतीय संस्कृति अद्वितीय है। हालांकि हाल के कुछ वर्षो में आपाधापी की जिंदगी और अतिव्यस्तता के कारण सनातन धर्मावलम्बी अब इन मूल्यों को भुलाने लगे हैं और इसके परिणाम भी चारित्रिक गिरावट, संवेदनहीनता, असामाजिकता और गुरुजनों की अवज्ञा या अनुशासनहीनता के रूप में हमारे सामने आने लगे हैं। समय के अनुसार बदलाव जरूरी है लेकिन हमारे मनीषियों द्वारा स्थापित मूलभूत सिद्धांतों को नकारना कभी श्रेयस्कर नहीं होगा।

संस्कृति व संस्कार में सामाजिक उपादानों का अन्योन्याश्रित संबंध है। संस्कृति शब्द सम् उपसर्गपूर्वक कृ धातु से क्त प्रत्यय करने से निष्पन्न है, जिसका अर्थ पूरा किया हुआ, मांझकर चमकाया हुआ, सुधारा हुआ, सिद्ध, सुनिर्मित, अलंकृत आदि होता है। इसी संस्कृति शब्द (विशेषण) की संज्ञा है संस्कृति। संस्कृति शब्द सम् उपसर्गपूर्वक कृ धातु से भूषणभूत अर्थ में सुट् का आगम करके क्तिन प्रत्यय करने से निर्मित होता है, जिसका अर्थ भूषणभूत सम्यक् कृति है। संस्कृति

शब्द अत्यंत व्यापक अर्थ में प्रयोग किया जाता है।

संस्कृति मानवीय कृति होने के कारण मानव की ही भांति प्रगतिशील भी है। संस्कृति ही मानव का समग्र परिष्कार करती है। संस्कार शब्द संस्कृत भाषा की कृ धातु से निष्पन्न है। सम् उपसर्गपूर्वक घञ् प्रत्यय के योग से 'संस्कार' शब्द निर्मित हुआ है, जिसका सामान्य अर्थ है- पूर्ण करना संशोधन करना, सुधारना, संवारना या शुद्ध करना।

2.4 संस्कारों की वैज्ञानिक अवधारणा -

किसी व्यक्ति या वस्तु में अन्य गुणों एवं योग्यताओं का आधान करना संस्कार है। संस्कार-सम्पन्नता मानव-हृदय को दया, करुणा, अहिंसा, मानवता, आदर्श, आस्था, दान, सत्य, प्रेम, उदारता, त्याग, बंधुत्व आदि गुणों से सम्पृक्त करती है। संस्कारपूर्ण जीवन व्यतीत करने वाला मनुष्य ही सही अर्थो में मानव बनता है। मानव-हृदय संस्कारों से ही विशाल और उदार बनता है। संस्कार व्यक्ति या वस्तु को पात्रता प्रदान करता है। इसी दृष्टि से संस्कार और संस्कृति का गहरा संबंध है। संस्कारों की पूर्णता आध्यात्मिक जीवन के साथ ही वैज्ञानिक अवधारणा के रूप में विकसित भारतीय जीवन-पद्धति सर्वस्वीकृत एक महत्वपूर्ण अनुष्ठानिक प्रक्रिया है। संस्कार व्यक्ति को संवारते हैं, तो संस्कृति समाज को संवारती है। उत्तम संस्कारों से ही श्रेष्ठ संस्कृति का स्वरूप निर्मित होता है। लकड़ी, पत्थर, धातुएं, कपास आदि अनेक भौतिक वस्तुओं का विविध संस्कारों द्वारा शोधन करने के बाद ही मनुष्य उन्हें अनेक प्रकार से उपयोगी बनाता है, जबकि संस्कृति मानव का समग्र संस्कार कर उसे सुसंस्कृत करती है। निष्कर्षत: मानव शास्त्रोक्त उत्तम संस्कारों के माध्यम से भारतीय संस्कृति के उदात्त स्वरूप को अक्षुण्ण बनाए रखने की सामर्थ्य अर्जित कर सकता है।

प्रत्येक मनुष्य का अपना-अपना व्यक्तित्व है। वही मनुष्य की पहचान है। कोटि-कोटि मनुष्यों की भीड़ में भी वह अपने निराले व्यक्तित्व के कारण पहचान लिया जाता है। यही उसकी विशेषता है। यही उसका व्यक्तित्व है। प्रकृति का यह नियम है कि एक मनुष्य की आकृति दूसरे से भिन्न है। आकृति का यह जन्मजात भेद आकृति तक ही सीमित नहीं है; उसके स्वभाव, संस्कार और उसकी प्रवृत्तियों में भी वही असमानता रहती है। इस असमानता में ही सृष्टि का सौन्दर्य है। प्रकृति हर पल अपने को नये रूप में सजाती है। हम इस प्रतिपल होनेवाले परिवर्तन को उसी तरह नहीं देख सकते जिस तरह हम एक गुलाब के फूल में और दूसरे में कोई अन्तर नहीं कर सकते। परिचित वस्तुओं में ही हम इस भेद की पहचान आसानी से कर सकते हैं। परिचित वस्तुओं में ही हम इस भेद की पहचान आसानी से कर सकते हैं। यह हमारी दृष्टि का दोष है कि हमारी आंखें सूक्ष्म भेद को और प्रकृति के सूक्ष्म परिवर्तनों को नहीं परख पातीं। मनुष्य-चरित्र को परखना भी बड़ा कठिन कार्य है, किन्तु असम्भव नहीं है। कठिन वह केवल इसलिए नहीं है कि उसमें विविध तत्त्वों का मिश्रण है बल्कि इसलिए भी है कि नित्य नई परिस्थितियों के आघात-प्रतिघात से वह बदलता रहता है। वह चेतन वस्तु है। परिवर्तन उसका स्वभाव है। प्रयोगशाला की परीक्षण नली में रखकर उसका विश्लेषण नहीं किया जा सकता। उसके विश्लेषण का प्रयत्न सदियों से हो रहा है। हजारों वर्ष पहले

हमारे विचारकों ने उसका विश्लेषण किया था। आज के मनोवैज्ञानिक भी इसी में लगे हुए हैं। फिर भी यह नहीं कह सकते कि मनुष्य-चरित्र का कोई भी संतोषजनक विश्लेषण हो सका है। हर बालक अनगढ़ पत्थर की तरह है जिसमें सुन्दर मूर्ति छिपी है, जिसे शिल्पी की आँख देख पाती है। वह उसे तराश कर सुन्दर मूर्ति में बदल सकता है। क्योंकि मूर्ति पहले से ही पत्थर में मौजूद होती है शिल्पी तो बस उस फालतू पत्थर को जिसमें मूर्ति ढकी होती है, एक तरफ कर देता है और सुन्दर मूर्ति प्रकट हो जाती है। माता-पिता शिक्षक और समाज बालक को इसी प्रकार सँवार कर उत्तम व्यक्तित्व प्रदान हैं। व्यक्तित्व-विकास में वंशानुक्रम (Heredity) तथा परिवेश (Environment) दो प्रधान तत्त्व हैं। वंशानुक्रम व्यक्ति को जन्मजात शक्तियाँ प्रदान करता है। परिवेश उसे इन शक्तियों को सिद्धि के लिए सुविधाएँ प्रदान करता है। बालक के व्यक्तित्व पर सामाजिक परिवेश प्रबल प्रभाव डालता है। ज्यों-ज्यों बालक विकसित होता जाता है, वह उस समाज या समुदाय की शैली को आत्मसात् कर लेता है, जिसमें वह बड़ा होता है, व्यक्तित्व पर गहरी छाप छोड़ते हैं।

'चरित्र' शब्द मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रकट करता है। 'अपने को पहचानो' शब्द का वही अर्थ है जो 'अपने चरित्र को पहचानो' का है। उपनिषदों ने जब कहा था : 'आत्मा वारे श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः; नान्यतोऽस्ति विजानतः,' तब इसी दुर्बोध मनुष्य-चरित्र को पहचानने की प्रेरणा की थी। यूनान के महान दार्शनिक सुकरात ने भी पुकार-पुकार कर यही कहा था: अपने को पहचानो। विज्ञान ने मनुष्य-शरीर को पहचानने में बहुत सफलता पाई है। किन्तु उसकी आंतरिक प्रयोगशाला अभी तक एक गूढ़ रहस्य बनी हुई है। इस दीवार के अन्दर की मशीनरी किस तरह काम करती है, इस प्रश्न का उत्तर अभी तक अस्पष्ट कुहरे में छिपा हुआ है। जो कुछ हम जानते हैं, वह केवल हमारी बुद्धि का अनुमान है। प्रामाणिक रूप से हम यह नहीं कह सकते कि यही सच है; इतना ही कहते हैं कि इससे अधिक स्पष्ट उत्तर हमें अपने प्रश्न का नहीं मिल सका है। अपने को पहचानने की इच्छा होते ही हम यह जानने की कोशिश करते हैं कि हम किन बातों में अन्य मनुष्यों से भिन्न है। भेद जानने की यह खोज हमें पहले यह जानने को विवश करती है कि किन बातों में हम दूसरों के समान हैं। समानताओं का ज्ञान हुए बिना भिन्नता का या अपने विशेष चरित्र का ज्ञान नहीं हो सकता।

संस्कार शब्द का अर्थ है - शुद्धिकरण ; अर्थात् मन, वाणी और शरीर का सुधार। हमारी सारी प्रवृतियों का संप्रेरक हमारे मन में पलने वाला संस्कार होता है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में व्यक्ति निर्माण पर जोर दिया गया है। हिन्दू संस्कारों का इसमें महत्वपूर्ण भूमिका है।

गर्भाधान से लेकर विवाह संस्कार पर्यन्त प्रत्येक संस्कार एक संस्कृत मानव को जन्म देती हैं। इसका क्रमश: वैज्ञानिक विश्लेषण करने पर प्रतिभाषित होता है। गर्भाधान संस्कार की बात ले तो सम्प्रति सेरोगेसी तकनीक के माध्यम से भी दूसरे के कोख द्वारा बच्चें का जनन हो रहा है, जो सर्वथा अनुचित है। इससे विकृतियॉ आती है। प्राचीन संस्कार की परम्परा में एक ओर कार्य सिद्ध भी होता

था दूसरी ओर मर्यादा को भी सुरक्षित रखा जाता था। अब तो संस्कार का कोई महत्व ही नहीं रह गया है और अपने ही लोग इसे दिनानुदिन प्रपंच का विषय बताकर अस्वीकार करते रहते है। लेकिन ध्यातव्य है कि जब - जब मनुष्य ने अपने मूल को छोड़कर अन्य का साथ पकड़ा है तो परिणाम विनाशकारी हुआ है। अत: संस्कार पूर्णत: वैज्ञानिक है । इसमें कोई संशय नहीं।

संस्कारों की वैज्ञानिकता को समझने के लिए सबसे अच्छा उदाहरण है कि दो नवजात शिशु का चयन कर लिजिये, उसमें प्रथम को भारतीय सनातन परम्परा में कथित संस्कारों को धारण कराइये तथा द्वितीय को अन्य तरीके से रखिये। कालान्तर में जब वह युवा होते हैं, उनके गुणों को परखिए उनके आचार – विचार , रहन – सहन, खान – पान, काम करने का तरीका, शिष्टाचार, अनुशासन आदि का क्रमश: परीक्षण करने पर तुलान्तमक रूप में पायेंगे और आपको स्वयं बोध हो जाएगा कि संस्कारों की वैज्ञानिक अवधारणा कैसी है। यह लिखकर बताने वाली बात नहीं हैं, प्रयोग सिद्ध है। अत: जिन्हें भी सन्देह हो कि संस्कार निरर्थक हैं, वह उपर्युक्त क्रिया को करके अपना भ्रम दूर कर सकते हैं।

आपने पूर्व की इकाईयों में संस्कारों का अध्ययन कर लिया है, अत: यहॅा केवल वैज्ञानिकता परक बात ही की जा रही है।

वेदों में संस्कार –

ऋग्वेद में संस्कारों का उल्लेख नहीं है, किन्तु इस ग्रंथ के कुछ सूक्तों में विवाह, गर्भाधान और अंत्येष्टि से संबंधित कुछ धार्मिक कृत्यों का वर्णन मिलता है। यजुर्वेद में केवल श्रौत यज्ञों का उल्लेख है, इसलिए इस ग्रंथ के संस्कारों की विशेष जानकारी नहीं मिलती। अथर्ववेद में विवाह, अंत्येष्टि और गर्भाधान संस्कारों का पहले से अधिक विस्तृत वर्णन मिलता है। गोपथ और शतपथ ब्राह्मणों में उपनयन गोदान संस्कारों के धार्मिक कृत्यों का उल्लेख मिलता है। तैत्तिरीय उपनिषद् में शिक्षा समाप्ति पर आचार्य की दीक्षांत शिक्षा मिलती है।

इस प्रकार गृह्यसूत्रों से पूर्व हमें संस्कारों के पूरे नियम नहीं मिलते। ऐसा प्रतीत होता है कि गृहसूत्रों से पूर्व पारंपरिक प्रथाओं के आधार पर ही संस्कार होते थे। सबसे पहले गृहसूत्रों में ही संस्कारों की पूरी पद्धति का वर्णन मिलता है। गृह्यसूत्रों में संस्कारों के वर्णन में सबसे पहले विवाह संस्कार का उल्लेख है। इसके बाद गर्भाधान, पुंसवन, सीमंतोन्नयन, जातकर्म -, नामकरण, निष्क्रमण, अन्न -प्राशन, चूड़ाकर्म -, उपनयन और समावर्तन संस्कारों का वर्णन किया गया है। अधिकतर गृह्यसूत्रों में अंत्येष्टि संस्कार का वर्णन नहीं मिलता, क्योंकि ऐसा करना अशुभ समझा जाता था। स्मृतियों के आचार प्रकरणों में संस्कारों का उल्लेख है और तत्संबंधी नियम दिए गए हैं। इनमें उपनयन और

विवाह संस्कारों का वर्णन विस्तार के साथ दिया गया है, क्योंकि उपनयन संस्कार के द्वारा व्यक्ति ब्रह्मचर्य आश्रम में और विवाह संस्कार के द्वारा गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता था।

संस्कार का अभिप्राय उन धार्मिक कृत्यों से था जो किसी व्यक्ति को अपने समुदाय का पूर्ण रुप से योग्य सदस्य बनाने के उद्देश्य से उसके शरीर, मन और मस्तिष्क को पवित्र करने के लिए किए जाते थे, किंतु हिंदू संस्कारों का उद्देश्य व्यक्ति में अभीष्ट गुणों को जन्म देना भी था। वैदिक साहित्य में "संस्कार' शब्द का प्रयोग नहीं मिलता। संस्कारों का विवेचन मुख्य रुप से गृह्यसूत्रों में ही मिलता है, किंतु इनमें भी संस्कार शब्द का प्रयोग यज्ञ सामग्री के पवित्रीकरण के अर्थ में किया गया है। वैखानस स्मृति सूत्र)200 से 500 ई. में सबसे पहले शरीर संबंधी संस्कारों और यज्ञों में स्पष्ट (अंतर मिलता है।

मनु और याज्ञवल्क्य के अनुसार संस्कारों से द्विजों के गर्भ और बीज के दोषादि की शुद्धि होती है। कुमारिल (ई. आठवीं सदी) ने तंत्रवार्तिक ग्रंथ में इसके कुछ भिन्न विचार प्रकट किए हैं। उनके अनुसार मनुष्य दो प्रकार से योग्य बनता है - पूर्व- कर्म के दोषों को दूर करने से और नए गुणों के उत्पादन से। संस्कार ये दोनों ही काम करते हैं। इस प्रकार प्राचीन भारत में संस्कारों का मनुष्य के जीवन में विशेष महत्व था। संस्कारों के द्वारा मनुष्य अपनी सहज प्रवृतियों का पूर्ण विकास करके अपना और समाज दोनों का कल्याण करता था। ये संस्कार इस जीवन में ही मनुष्य को पवित्र नहीं करते थे, उसके पारलौकिक जीवन को भी पवित्र बनाते थे। प्रत्येक संस्कार से पूर्व होम किया जाता था, किंतु व्यक्ति जिस गृह्यसूत्र का अनुकरण करता हो, उसी के अनुसार आहुतियों की संख्या, हव्यपदार्थों और मंत्रों के प्रयोग में अलग- अलग परिवारों में भिन्नता होती थी।

मनु ने गर्भाधान, पुंसवन, सीमंतोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन, केशांत, समावर्तन, विवाह और श्मशान, इन तेरह संस्कारों का उल्लेख किया है। **याज्ञवल्क्य** ने भी इन्हीं संस्कारों का वर्णन किया है। केवल केशांत का वर्णन उसमें नहीं मिलता है, क्योंकि इस काल तक वैदिक ग्रंथों के अध्ययन का प्रचलन बंद हो गया था। बाद में रची गई पद्धतियों में संस्कारों की संख्या सोलह दी है, किंतु गौतम धर्मसूत्र और गृह्यसूत्रों में अंत्येष्टि संस्कार का उल्लेख नहीं है, क्योंकि अंत्येष्टि संस्कार का वर्णन करना अशुभ माना जाता था। **स्वामी दयानंद सरस्वती** ने अपनी संस्कार विधि तथा **पंडित भीमसेन शर्मा** ने अपनी षोडश संस्कार विधि में **सोलह संस्कारों** का ही वर्णन किया है। इन दोनों लेखकों ने अंत्येष्टि को सोलह संस्कारों में सम्मिलित किया है।

गर्भावस्था में गर्भाधान, पुंसवन और सीमंतोन्नयन तीन संस्कार होते हैं। इन तीनों का उद्देश्य माता-

पिता की जीवन- चर्या इस प्रकार की बनाना है कि बालक अच्छे संस्कारों को लेकर जन्म ले। जात-कर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, मुंडन, कर्ण बेध, ये छः संस्कार पाँच वर्ष की आयु में समाप्त हो जाते हैं। बाल्यकाल में ही मनुष्य की आदतें बनती हैं, अतः ये संस्कार बहुत जल्दी- जल्दी रखे गये हैं। उपनयन और वेदारंभ संस्कार ब्रह्मचर्याश्रम के प्रारंभ में प्रायः साथ- साथ होते थे। समावर्तन और विवाह संस्कार गृहस्थाश्रम के पूर्व होते हैं। उन्हें भी साथ- साथ समझना चाहिए। वानप्रस्थ और संन्यास संस्कार इन दोनों आश्रमों की भूमिका मात्र हैं । अंत्येष्टि, संस्कार का मृतक की आत्मा से संबंध नहीं होता । उसका उद्देश्य तो मृत पुरुष के शरीर को सुगंधित पदार्थों सहित जलाकर वायु मण्डल में फैलाना है, जिससे दुर्गंध आदि न फैले । इन संस्कारों का उद्देश्य इस प्रकार है : -
१. बीजदोष न्यून करने हेतु संस्कार किए जाते हैं । २. गर्भदोष न्यून करने हेतु संस्कार किए जाते हैं ।

बोध प्रश्न -

1. महर्ष गौतम के मत में संस्कारों की संख्या कितनी है –
   क. 16   ख. 25   ग. 40   घ. 10
2. जन्म – जन्मान्तर तक का होने वाला संस्कार है –
   क. पुंसवन   ख. नामकरण   ग. निष्क्रमण   घ. विवाह
3. धर्मशास्त्रानुसार संस्कार है –
   क. 15   ख. 20   ग. 25   घ. 16
4. संस्कार शब्द में कौन सा प्रत्यय है –
   क. वान्   ख. मान्   ग. घञ्   घ. ल्यूट्
5. संस्कार व्यक्ति को .... प्रदान करता है –
   क. धन   ख. सुख   ग. पात्रता   घ. कोई नहीं
6. संस्कार का शाब्दिक अर्थ है –
   क. शुद्धिकरण   ख. समता   ग. व्यक्तित्व   घ. परिवेश

2.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि भारतीय सनातन अथवा हिन्दू धर्म की संस्कृति संस्कारों पर ही आधारित है । हमारे ऋषि-मुनियों ने मानव जीवन को पवित्र एवं मर्यादित बनाने के लिये संस्कारों का अविष्कार किया । धार्मिक ही नहीं वैज्ञानिक दृष्टि से भी इन संस्कारों का

हमारे जीवन में विशेष महत्व है। भारतीय संस्कृति की महानता में इन संस्कारों का महती योगदान है। प्राचीन काल में हमारा प्रत्येक कार्य संस्कार से आरम्भ होता था। उस समय संस्कारों की संख्या भी लगभग चालीस थी। जैसे-जैसे समय बदलता गया तथा व्यस्तता बढती गई तो कुछ संस्कार स्वत: विलुप्त हो गये। इस प्रकार समयानुसार संशोधित होकर संस्कारों की संख्या निर्धारित होती गई। गौतम स्मृति में चालीस प्रकार के संस्कारों का उल्लेख है। महर्षि अंगिरा ने इनका अंतर्भाव पच्चीस संस्कारों में किया। व्यास स्मृति में सोलह संस्कारों का वर्णन हुआ है। हमारे धर्मशास्त्रों में भी मुख्य रूप से सोलह संस्कारों की व्याख्या की गई है। इनमें पहला गर्भाधान संस्कार और मृत्यु के उपरांत अन्त्येष्टि अंतिम संस्कार है। गर्भाधान के बाद पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण ये सभी संस्कार नवजात का दैवी जगत् से संबंध स्थापना के लिये किये जाते हैं। नामकरण के बाद चूडाकर्म और यज्ञोपवीत संस्कार होता है। इसके बाद विवाह संस्कार होता है। यह गृहस्थ जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार है। हिन्दू धर्म में स्त्री और पुरुष दोनों के लिये यह सबसे बडा संस्कार है, जो जन्म-जन्मान्तर का होता है। विभिन्न धर्मग्रंथों में संस्कारों के क्रम में थोडा-बहुत अन्तर है, लेकिन प्रचलित संस्कारों के क्रम में गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, विद्यारंभ, कर्णवेध, यज्ञोपवीत, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्तन, विवाह तथा अन्त्येष्टि ही मान्य है।

2.6 शब्दावली-

षोडश – सोलह ।

अंतर्भाव - आंतरिक भाव ।

स्मृति – ग्रन्थ, यथा – मनुस्मृति।

मनीषी - ऋषि।

अद्वितीय – जिसके समान दूसरा कोई न हो।

अनुशासनहीनता – जो अनुशासन का पालन न करता हो।

अन्योनाश्रित – परस्पर।

सिद्धान्त – जो अन्त में जाकर सिद्ध हो जाये।

आगम – शास्त्र।

सर्वस्वीकृत – सभी के द्वारा स्वीकृत।

अक्षुण्ण – निरन्तरता।

उपनयन - यज्ञोपवीत ।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. घ
3. घ
4. ग
5. ग
6. क

2.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1- कर्मकाण्ड प्रदीप

2- कर्मकलाप

3. संस्कार विमर्श

4. षोडश संस्कार

5. मनुस्मृति

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. संस्कार से आप क्या समझते हैं। स्पष्ट कीजिये।
2. संस्कार की वैज्ञानिक अवधारणा को स्पष्ट कीजिये।
3. षोडश संस्कारों का उल्लेख कीजिये ।
4. संस्कारों का अपने शब्दों में महत्व समझाइये।

इकाई – 3 व्रत एवं पर्वों की वैज्ञानिकता

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 102 के चतुर्थ खण्ड की तीसरी इकाई 'व्रत एवं पर्वों की वैज्ञानिकता' शीर्षक से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने पूजन में मांगलिक द्रव्यों की वैज्ञानिकता, एवं संस्कारों की वैज्ञानिक अवधारणा का अध्ययन कर लिया है। इस इकाई में अब आप व्रत एवं पर्वों की वैज्ञानिकता का अध्ययन करने जा रहे है।

भारतीय हिन्दू सनातन परम्परा में व्रत एवं पर्वों का विधान प्राचीनकाल से चलता आ रहा है। व्रत एवं पर्व एक क्रिया है जिसे धारण कर मनुष्य शक्तियॉ अर्जित करता है। जिस प्रकार कोई कार्य करने पर हमें उसका फल मिलता है। वैसे ही व्रत एवं पर्व को धारण करने पर फल के रूप में हमें उससे शक्ति एवं उर्जा प्राप्त होती है। धार्मिक आस्था के अनुसार हम ईश्वर की कृपा से मनोवांछित फल की भी प्राप्ति करते है।

व्रत धारण किया जाता है, पर्व मनाया जाता है। पर्व वर्ष में अलग –अलग नाम से होते है। व्रत का रूप अलग है। आइये व्रत एवं पर्व का अध्ययन करते है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ व्रत एवं पर्व को समझा सकेंगे।
- ❖ व्रत एवं पर्व में क्या भेद है निरूपित कर सकेंगे।
- ❖ व्रत एवं पर्व के प्रकार को समझा सकेंगे।
- ❖ इसका वैज्ञानिक चिन्तन कर सकेंगे ।
- ❖ व्रत एवं पर्व की महत्ता को समझा सकेंगे।

3.3 व्रत एवं पर्व परिचय

भारत विविधताओं का देश हैं। धर्मनिरपेक्षता होने के कारण अनेक धर्म के लोग यहॉ पाये जाते हैं। यहॉ पर्वों के साथ व्रत और अनुष्ठान जोड़े गये हैं। अन्य संस्कृतियों में भी पर्वों, व्रतों और अनुष्ठानों का प्रचलन किसी न किसी रूप में मिलता है, किन्तु जितनी वैज्ञानिकता हिन्दुओं के व्रत उपवासों में है उतनी अन्य कहीं नहीं। प्रत्येक त्यौहार में मौसम के अनुसार व्रत, अनुष्ठान किये जाते हैं। हिन्दू शास्त्रों में धारण किए हुए व्रत में क्या खायें, क्या पहनें किसका पूजन करें, इन सभी बातों

का विस्तृत उल्लेख मिलता है। लोक संस्कृति में इनका समावेश होने से जन साधारण को भी इस बात का ज्ञान है कि व्रतस्वास्थ्य के लिये- कितने लाभदायक हैं। प्रत्येक व्रतउपवास के पीछे - पौराणिक कथायें हैं जो सुखी जीवन के लिये हितकर संदेश देती हैं।

व्रत का अनुष्ठान होता है, तथा वह सात्विक रूप में धारण किया जाता है। इसमें जो वह धारण करता है , पूरी दृढ़ता के साथ उसका पालन करता है। पर्व को उत्सव के रूप में मनाया जाता है। भारत में पर्वों की एक लम्बी परम्परा रही है। एक वर्ष में कई महत्वपूर्ण पर्व मनाये जाते हैं –

प्रमुख व्रत एवं पर्व -

मकरसंक्रान्ति

वसन्तपंचमी

माघी पूर्णिमा

शिवरात्रि

होली

वैशाखी

रामनवमी

वटसावित्री

गुरूपूर्णिमा

रक्षाबन्धन

गणेश चतुर्थी

श्रीकृष्णजन्माष्टमी

हरितालिका तीज व्रत

अनन्तचतुर्दशी व्रत

जीवत्पुत्रिका व्रत

नवरात्र (दशहरा) व्रत

करवा चौथ व्रत

प्रबोधिनी एकादशी व्रत

दीपावली

सूर्यषष्ठी व्रत

उपर्युक्त व्रत एवं पर्वों की अपनी अपनी महत्ता है। लोग वर्ष में इसे धूमधाम से मनाते हैं। प्रत्येक व्रत

एवं पर्व में अलग – अलग धारणाओं को मानते हुए लोग परम्परावशात् इसे उत्सव के रूप में मनाते हैं । व्रत को अपनी इष्ट सिद्धि के लिए धारण करते हैं।

प्रत्येक कथा में एक सांसारिक एवं पारमार्थिक बोध होता है। कथाओं में नीतियॉ होती है। वह लोक स्वरों में लोक बिम्बों के साथ गूथी हुई होती हैं। इतना ही नहीं भारतीय समाज का सर्वाधिक भरोसा सम्बन्धों में हैं। सम्बन्ध बनाना और निभाना भारतीय संस्कृति की आदर्श स्थिति है। यहां कोई स्त्री सिर्फ स्त्री नहीं है। वे मां है, बहन है, पत्नी है इसी तरह पुरुष भी भाई हैं, सखा है, बेटा है आदि। इन सब सम्बन्धों को एक सूत्र में पिरोने पर बनता है परिवार। परिवार से समाज बनाते हैं और समाज से राष्ट्र इसी तरह इकाई बड़ी होती रहती है। जीवन को पूर्ण बनाने; सात्विक बनाने के लिए व्रत और चेतनामयी बनाए रखने के लिए त्यौहार मनाये जाते हैं। व्रतों के प्रभाव से मनुष्य की आत्मा शुद्ध होती है। संकल्प शक्ति बढ़ती है। बुद्धि, सद्विचार तथा ज्ञान विकसित होता है। परम्परा के प्रति भक्ति और श्रद्धा बढ़ती है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मनुष्य कुशलतापूर्वक, सफलतापूर्वक तथा उत्साहपूर्वक कार्य करता है। उसके सुखमय दीर्घ जीवन के आरोग्य साधनों का स्वयं ही संचय हो जाता है।

प्रमुख व्रत एवं त्योहार की वैज्ञानिकता –

यदि देखा जाए तो प्रत्येक व्रत एवं पर्वों की वैज्ञानिकता सिद्ध होती है। उनमें से यहॉ कुछ प्रमुख का उदाहरण प्रस्तुत है -

मकर संक्रान्ति –

मकर संक्रान्ति का पर्व प्रति वर्ष 14 जनवरी को मनाया जाता है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार इसी दिन सूर्य का मकर राशि में प्रवेश हुआ था। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी इस पर्व की महत्ता है। इस दिन से दिन में परिवर्तन होने लगता है अर्थात् दिन तिल – तिल बढ़ने लगता है, तथा रात्रि छोटी होने लगती है। इस दिन तिल सेवन का महत्व होता है।

होली महोत्सव

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार हिन्दी मासों की गणना चैत्र मास से आरम्भ होती है। चैत्र से लेकर फाल्गुन मास पर्यन्त 12 मास होते है। अंग्रेजी में वही जनवरी से दिसम्बर तक होता है। यद्यपि माघ शुक्ल पंचमी से चैत्र शुक्ल पंचमी तक वसन्तोत्सव होता है। चैत्रकृष्ण प्रतिपदा को होली पर्व मनाया जाता है तथा फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा को होलिका दहन होता है। भारतीय सनातन परम्परा में होली पर्व नूतन वर्ष आने का सूचक होता है। पौराणिक कथाओं के अनुसार इस दिन अधर्म के प्रतीक के रूप में होलिका दहन किया जाता है तथा धर्म रूप में भगवान नारायण का नृसिंह रूप द्वारा

भक्त प्रहलाद की रक्षा की गई थी इसलिए धर्म की स्थापना को मानकर उत्सव के रूप में रंग – अबीर के माध्यम से होली का पर्व मनाते है। विशेष रूप में यह राग – रंग, हॅसी – खुशी, नूतन वर्षारम्भ का उत्सव आदि के रूप में मनाया जाता है।

गौरी व्रत

व्रत विज्ञान के अनुसार यह व्रत चैत्र कृष्ण प्रतिपदा से चैत्र प्रतिपदा चैत्र शुक्ल तृतीया तक किया जाता है। गौरी व्रत करने से विवाहिता स्त्री को पति का अनुराग –प्रेम प्राप्त होता है। व्रत करने से शारीरिक बल मिलता है। शारीरिक विकृतियॅा दूर हो जाती है। उदर जनित समस्याओं का निदान हो जाता है। यह एक वैज्ञानिक लाभ भी मिलता है।

देवशयन –

हिन्दू धर्म में अधिकतर लोगों को इस विषय में तनिक भी जानकारी नहीं हैं कि हमारे जो पर्व, त्योहार, व्रतउपवास इत्यादि हैं-, उनका वास्तविक प्रयोजन क्या है? एक साधारण मनुष्य की तो बात ही छोड दीजिए, जो लोग धर्म के नाम पर कमा खा रहे हैं, वो भी इसके बारे में पूरी तरह से अनभिज्ञ हैं। अब यदि कोई इन सब का गहन विश्लेषण करे तो पता चलेगा कि इस धर्म के (सनातन धर्म) प्रत्येक नियम, परम्परा में कितनी वैज्ञानिकता छिपी हुई है। लेकिन आज की पाश्चात्य रंग में रंगी युवा पीढी इन सब को रूढिवादिता, आडम्बर, पुरातनपंथिता जैसे नामों से संबोधित करने लगी है।

देवशयन – जैसा कि नाम ही बोध होता है देवताओं के शयन का समय। सूर्य जब कर्क राशि में प्रवेश करता हो दक्षिणायन आरम्भ होता है, और तभी से देवताओं की रात्रि आरम्भ हो जाती है। कर्कादि छः राशियों में सूर्य की स्थिति जब तक रहती है, तब तक दक्षिणायन होता है। पुनः मकर संक्रान्ति को सूर्य के मकर राशि में प्रवेश से उत्तरायण आरम्भ होता है और देवताओं का दिन आरम्भ हो जाता है।

भारत व्रत पर्व व त्योहारों का देश है। यूं तो काल गणना का प्रत्येक पल कोई न कोई महत्व रखता है किन्तु कुछ तिथियों का भारतीय काल गणना (कलैंडर) में विशेष महत्व है। भारतीय नव वर्ष (विक्रमी संवत्) का पहला दिन (यानि वर्ष-प्रतिपदा) अपने आप में अनूठा है। इसे नव संवत्सर भी कहते हैं। इस दिन पृथ्वी सूर्य का एक चक्कर पूरा करती है तथा दिन-रात बराबर होते हैं। इसके बाद से ही रात्रि की अपेक्षा दिन बड़ा होने लगता है। काली अंधेरी रात के अंधकार को चीर चन्द्रमा की चांदनी अपनी छटा बिखेरना शुरू कर देती है। वसंत ऋतु का राज होने के कारण प्रकृति का सौंदर्य अपने चरम पर होता है। फाल्गुन के रंग और फूलों की सुगंध से तन-मन प्रफुल्लित और उत्साहित रहता है।

विक्रम सम्वत्सर की वैज्ञानिकता –

भारत के पराक्रमी सम्राट विक्रमादित्य द्वारा प्रारंभ किये जाने के कारण इसे विक्रमी संवत् के नाम से जाना जाता है। विक्रमी संवत् के बाद ही वर्ष को 12 माह का और सप्ताह को 7 दिन का माना गया। इसके महीनों का हिसाब सूर्य व चंद्रमा की गति के आधार पर रखा गया। विक्रमी संवत का प्रारंभ अंग्रेजी कलैण्डर ईसवीं सन् से 57 वर्ष पूर्व ही हो गया था।

चन्द्रमा के पृथ्वी के चारों ओर एक चक्कर लगाने को एक माह माना जाता है, जबकि यह 29 दिन का होता है। हर मास को दो भागों में बांटा जाता है- कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष। कृष्ण पक्ष, में चाँद घटता है और शुक्ल पक्ष में चाँद बढ़ता है। दोनों पक्ष प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी आदि ऐसे ही चलते हैं। कृष्ण पक्ष के अन्तिम दिन (यानी अमावस्या को) चन्द्रमा बिल्कुल भी दिखाई नहीं देता है जबकि शुक्ल पक्ष के अन्तिम दिन (यानी पूर्णिमा को) चाँद अपने पूरे यौवन पर होता है। अर्द्ध-रात्रि के स्थान पर सूर्योदय से दिवस परिवर्तन की व्यवस्था तथा सोमवार के स्थान पर रविवार को सप्ताह का प्रथम दिवस घोषित करने के साथ चैत्र कृष्ण प्रतिपदा के स्थान पर चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से वर्ष का आरम्भ करने का एक वैज्ञानिक आधार है। वैसे भी इंग्लैण्ड के ग्रीनविच नामक स्थान से दिन परिवर्तन की व्यवस्था में अर्द्ध-रात्रि के 12 बजे को आधार इसलिए बनाया गया है क्योंकि उस समय भारत में भगवान भास्कर की अगवानी करने के लिए प्रात: 5-30 बज रहे होते हैं। वारों के नामकरण की विज्ञान सम्मत प्रक्रिया को देखें तो पता चलता है कि आकाश में ग्रहों की स्थिति सूर्य से प्रारम्भ होकर क्रमश: बुध, शुक्र, चन्द्र, मंगल, गुरु और शनि की है। पृथ्वी के उपग्रह चन्द्रमा सहित इन्हीं अन्य छह ग्रहों पर सप्ताह के सात दिनों का नामकरण किया गया। तिथि घटे या बढ़े किंतु सूर्य ग्रहण सदा अमावस्या को होगा और चन्द्र ग्रहण सदा पूर्णिमा को होगा, इसमें अंतर नहीं आ सकता। तीसरे वर्ष एक मास बढ़ जाने पर भी ऋतुओं का प्रभाव उन्हीं महीनों में दिखाई देता है, जिनमें सामान्य वर्ष में दिखाई पड़ता है। जैसे, वसंत के फूल चैत्र-वैशाख में ही खिलते हैं और पतझड़ माघ-फाल्गुन में ही होती है। इस प्रकार इस कालगणना में नक्षत्रों, ऋतुओं, मासों व दिवसों आदि का निर्धारण पूरी तरह प्रकृति पर आधारित वैज्ञानिक रूप से किया गया है।

ऐतिहासिक संदर्भ -

वर्ष प्रतिपदा पृथ्वी का प्राकट्य दिवस, ब्रह्मा जी के द्वारा निर्मित सृष्टि का प्रथम दिवस, सतयुग का प्रारम्भ दिवस, त्रेता में भगवान श्री राम के राज्याभिषेक का दिवस (जिस दिन राम राज्य की स्थापना हुई), द्वापर में धर्मराज युधिष्ठिर का राज्याभिषेक दिवस होने के अलावा कलयुग के प्रथम सम्राट परीक्षित के सिंहासनारूढ़ होने का दिन भी है। इसके अतिरिक्त देव पुरुष संत झूलेलाल, महर्षि गौतम व समाज संगठन के सूत्र पुरुष तथा सामाजिक चेतना के प्रेरक डॉ. केशव बलिराम हेड़गेवार का जन्म दिवस भी यही है। इसी दिन समाज सुधार के युग प्रणेता स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की

स्थापना की थी। वर्ष भर के लिए शक्ति संचय करने हेतु नौ दिनों की शक्ति साधना (चैत्र नवरात्रि) का प्रथम दिवस भी यही है। इतना ही नहीं, दुनिया के महान गणितज्ञ भास्कराचार्य जी ने इसी दिन से सूर्योदय से सूर्यास्त तक दिन, महीना और वर्ष की गणना करते हुए पंचांग की रचना की। भगवान राम ने बाली के अत्याचारी शासन से दक्षिण की प्रजा को मुक्ति इसी दिन दिलाई। महाराज विक्रमादित्य ने आज से 2071 वर्ष पूर्व राष्ट्र को सुसंगठित कर शकों की शक्ति का उन्मूलन कर यवन, हूण, तुषार, तथा कंबोज देशों पर अपनी विजय ध्वजा फहराई थी। उसी विजय की स्मृति में यह प्रतिपदा संवत्सर के रूप में मनाई जाती है। अन्य काल गणनाएँ ग्रेगेरियन (अंग्रेजी) कलेण्डर की काल गणना मात्र दो हजार वर्षों के अति अल्प समय को दर्शाती है। जबकि यूनान की काल गणना 3582 वर्ष, रोम की 2759 वर्ष यहूदी 5770 वर्ष, मिस्त्र की 28673 वर्ष, पारसी 198877 वर्ष तथा चीन की 96002307 वर्ष पुरानी है। इन सबसे अलग यदि भारतीय काल गणना की बात करें तो हमारे ज्योतिष के अनुसार पृथ्वी की आयु एक अरब 97 करोड़ 39 लाख 49 हजार 112 वर्ष है। जिसके व्यापक प्रमाण हमारे पास उपलब्ध हैं। हमारे प्राचीन ग्रंथों में एक-एक पल की गणना की गयी है। जिस प्रकार ईस्वी सम्वत् का सम्बन्ध ईसा जगत से है उसी प्रकार हिजरी सम्वत् का सम्बन्ध मुस्लिम जगत और हजरत मुहम्मद साहब से है। किन्तु विक्रमी सम्वत् का सम्बन्ध किसी भी धर्म से न हो कर सारे विश्व की प्रकृति, खगोल सिद्धांत व ब्रह्माण्ड के ग्रहों व नक्षत्रों से है। इसलिए भारतीय काल गणना पंथ निरपेक्ष होने के साथ सृष्टि की रचना व राष्ट्र की गौरवशाली परम्पराओं को दर्शाती है।

ग्रन्थों व संतों का मत स्वामी विवेकानन्द ने कहा था - ‘‘यदि हमें गौरव से जीने का भाव जगाना है, अपने अन्तर्मन में राष्ट्र भक्ति के बीज को पल्लवित करना है तो राष्ट्रीय तिथियों का आश्रय लेना होगा। गुलाम बनाए रखने वाले परकीयों की दिनांकों पर आश्रित रहनेवाला अपना आत्म गौरव खो बैठता है”। महात्मा गांधी ने 1944 की हरिजन पत्रिका में लिखा था ‘‘स्वराज्य का अर्थ है- स्व-संस्कृति, स्वधर्म एवं स्व-परम्पराओं का हृदय से निर्वहन करना। पराया धन और परायी परम्परा को अपनाने वाला व्यक्ति न ईमानदार होता है न आस्थावान” । नव संवत् यानि संवत्सरों का वर्णन यजुर्वेद के 27वें व 30वें अध्याय के मंत्र क्रमांक क्रमशः 45 व 15 में भी विस्तार से दिया गया है।

स्वाधीनता के पश्चात देश की स्वाधीनता के बाद पंडित जवाहरलाल नेहरू के कार्यकाल में पंचाग सुधार समिति का गठन किया गया जिसके अध्यक्ष प्रो मेघनाथ साहा थे। वे स्वयं तो परमाणु वैज्ञानिक थे ही साथ ही उनकी इस समिति में एक भी सदस्य ऐसा नहीं था, जो भारत की ज्योतिष विद्या या हमारे धर्म शास्त्रों का ज्ञान रखता हो। यही नहीं, प्रो. साहा स्वयं भी भारतीय काल गणना के सूर्य सिद्धांत के सर्वथा विरोधी थे तथा ज्योतिष को मूर्खतापूर्ण मानते थे। परिणामत: इस समिति ने जो पंचाग बनाया उसे ग्रेगेरियन कलेंडर के अनुरूप ही बारह मासों में बांट दिया गया। अंतर केवल उनके नामकरण में रखा। अर्थात जनवरी, फरवरी आदि के स्थान पर चैत्र, वैशाख आदि रख दिए। लेकिन,

महीनों व दिवसों की गणना ग्रेगेरियन कलेंडर के आधार पर ही की गई। पर्व एक नाम अनेक चेती चाँद का त्यौहार, गुडी पडवा त्यौहार (महाराष्ट्र), उगादी त्यौहार (दक्षिण भारत) भी इसी दिन पडते हैं। वर्ष प्रतिपदा के आसपास ही पडने वाले अंग्रेजी वर्ष के अप्रैल माह से ही दुनियाभर में पुराने कामकाज को समेटकर नए कामकाज की रूपरेखा तय की जाती है। समस्त भारतीय व्यापारिक व गैर व्यापारिक प्रतिष्ठानों को अपना-अपना अधिकृत लेखा जोखा इसी आधार पर रखना होता है जिसे वही-खाता वर्ष कहा जाता है। भारत के आय कर कानून के अनुसार प्रत्येक कर दाता को अपना कर निर्धारण भी इसी के आधार पर करवाना होता है जिसे कर निर्धारण वर्ष कहा जाता है। भारत सरकार तथा समस्त राज्य सरकारों का बजट वर्ष भी इसी के साथ प्रारंभ होता है। सरकारी पंचवर्षीय योजनाओं का आधार भी यही वित्तीय वर्ष होता है।

कैसे करें नव वर्ष का स्वागत ? हमारे यहां रात्रि के अंधकार में नववर्ष का स्वागत नहीं होता बल्कि, भारतीय नव वर्ष तो सूरज की पहली किरण का स्वागत करके मनाया जाता है। सभी को नववर्ष की बधाई प्रेषित करें। नववर्ष के ब्रह्ममुहूर्त में उठकर स्नान आदि से निवृत्त होकर पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से घर में सुगंधित वातावरण बनाएँ। शंख व मंगल ध्वनि के साथ प्रभात फेरियाँ निकाल कर ईश्वर उपासना हेतु बृहद यज्ञ करें तथा गौओं, संतों व बडों की सेवा करें। घरों, कार्यालयों व व्यापारिक प्रतिष्ठानों को भगवा ध्वजों व तोरण से सजाएं। संत, ब्राह्मण, कन्या व गाय इत्यादि को भोजन कराएं। रोली-चन्दन का तिलक लगाते हुए मिठाइयाँ बाँटें। इनके अलावा नववर्ष प्रतिपदा पर कुछ ऐसे कार्य भी किए जा सकते हैं जिनसे समाज में सुख, शान्ति, पारस्परिक प्रेम तथा एकता के भाव उत्पन्न हों। जैसे, गरीबों और रोगग्रस्त व्यक्तियों की सहायता, वातावरण को प्रदूषण से मुक्त रखने हेतु वृक्षारोपण, समाज में प्यार और विश्वास बढ़ाने के प्रयास, शिक्षा का प्रसार तथा सामाजिक कुरीतियाँ दूर करने जैसे कार्यों के लिए संकल्प लें। सामुदायिक सफाई अभियान, खेल कूद प्रतियोगिताएँ, रक्त दान शिविर इत्यादि का आयोजन भी किया जा सकता है। आधुनिक साधनों (यथा एस एम एस, ई-मेल, फेस बुक, व्हॉट्स ऐप, और्कुट के साथ-साथ बैनर, होर्डिंग व कर-पत्रकों) के माध्यम से भी नव वर्ष की बधाइयाँ प्रेषित करते हुए उसका महत्व जन-जन तक पहुँचाएँ।
इन श्रेष्ठताओं को राष्ट्र की ऋचाओं में समेटने एवं जीवन में उत्साह व आनन्द भरने के लिये यह नव संवत्सर की प्रतिपदा प्रति वर्ष समाज जीवन में आत्म गौरव भरने के लिए आता है। आवश्यकता इस बात की है कि हम सब भारतवासी इसे पूरी निष्ठा के साथ आत्मसात कर धूम-धाम से मनाएं और विश्व भर में इसका प्रकाश फैलाएं। आओ! सन् को छोड़ संवत अपनाएँ, निज गौरव का मान जगाएं

दीपावली –

जैसा कि भारतीय त्योहारों और परम्पराओं का आशय धर्म और स्वास्थ्य से जुड़ा हुआ है। जो वैज्ञानिक तथ्यों को अपने अंदर दृढता से समाहित किये हुए है। किसी भी त्यौहार व परम्परा का एक गहन मतलब है जिसमे सफाई, स्वास्थ्य, ऋतु के अनुसार रहन- -सहन और खान पान पर खूब

ध्यान दिया गया है। जिसमे कृषि को ध्यान में रखकर ऋतुओं के अनुसार त्योहारों का प्रचलन है जो हमारें उच्च आदर्श व हमारें उच्च जीवन को दर्शाता है। ऋषि-मुनियों ने अपने- अपने ज्ञान को विज्ञान की कसौटी पर उस समय ही कस दिया था जब विज्ञान का उदय भी नहीं हुआ था और तभी से वैज्ञानिकता के महत्त्व को जीवन में उतारने पर विधिवत बल दिया गया है। सुबह की संध्या से लेकर रात्रि के शयन तक के जीवन शैली को देखें तो यह प्रतीत होता है कि हमारें ऋषियों और पूर्वजों ने हर काम को विज्ञान के आधार पर विकसित किया था। जिसे आधुनिकता में हम दर किनार करते हुए चलने की होड़ लगा बैठे हैं। तथा आज हम तमाम उद्वेगों और समस्याओं से घिरें हुए हैं इसके पीछें शायद हमारा अपनी परम्पराओं और रहनसहन पर विश्वास न करना ही प्रतीत - होता है। जैसा कि भारतीय प्रथा में कार्तिक मास का बहुत ही महत्व बताया गया है जिसमें पुरे मास तुलसी के पौधें की पूजा व दीपक जलाकर व्रत रखना तथा तुलसी ब्याह का उत्तम उदाहरण वनस्पतियों के जीवन दायिनी मुल्य के समझ को दर्शाता है। कार्तिक मास में शाम का भोजन आंवले के बृक्ष के नीचें पका कर ग्रहण करना या कम से कम एक दिन जरुर करना इस बात का प्रमाण है कि आंवला का महत्त्व स्वस्थ जीवन के लिए कितना जरुरी है। कार्तिक अमावस्या को दीवाली मनाना गहन अंधकार को दूर करना है और कार्तिक पूर्णिमा को नदियों में स्नान, अर्घ व अर्चन तथा दान करना प्राकृतिक साधनों का जीवन में गहन महत्त्व को दर्शाता है जिसको आध्यात्म के साथ जोड़कर स्वास्थ्य, प्रदुषण और नकारात्मकता इत्यादि पहलू के लिए धर्म की राह पर चल कर जीवन जीने की गरिमा को श्रद्धा और विश्वास के साथ दर्शाया गया है।

इसी कार्तिक महीने में धनतेरस, काली चौदस और दीपावली का त्यौहार बडें ही धूम- धाम और श्रद्धा से मनाया जाता है। लगातार तीन दिन तक चलने वाले इस त्यौहार में सबका अपना- अपना एक अलग स्थान है। जिसमे आयु, धन, ऐश्वर्य, सुखसंपत्ति-, आमोदप्रमोद को धर्म के साथ- जोडकर धार्मिक आस्था को प्रकृति के साथ संयोजन बनाए रखने पर बल दिया गया है जिसमे सफाई और स्वास्थ्य के प्रति विशेष ध्यान दिया गया है जो किसी भी प्रकार से वैज्ञानिक आदर्शों को जीवन में उतारने की ही बात है। जैसा कि समुन्द्र मंथन से चौदह अमूल्य रत्नों की प्राप्ति हुयी जिसमे अमृत कलश के साथ धनवंतरी ऋषि का उत्तपन्न होना और स्वास्थ्य के लिए आयुर्वेद का जीवनदायिनी प्रयोग करना एक महान स्तंभ है। जिसमे कलश और अमृत का मतलब धन और स्वास्थ्य से है और विष्णु के अंश धनवंतरी का प्रादुर्भाव जगत को निरोगी बनाना है। इसी उपलक्ष्य में धनतेरस मनाया जाता है जिसमे माता लक्ष्मी की कृपा प्राप्त करने के लिए लंबी आयु और स्वस्थ होने के लिए यह त्यौहार मनाया जाता है और पूजा की जाती है। यह शरद ऋतु का समय होता है जब

वनस्पतियां अपने रूपरंग से नवपल्वित होती हैं और वातावरण में एक नया उमंग होता है- गर्मी और वर्षा ऋतु का समय समाप्त होने को होता है और ठंढी का शीतल आगमन होता है। दों ऋतुओं का उतारचढाव होता है जिससे कफ इत्यादी का व्याप्त- होना बढ़ जाता है और बरसाती कीटाणुओं तथा गंदगी इत्यादि नुकशानकारक अवयवों का वातावरण में जम जाने से स्वास्थ्य के लिए जोखम की अधिकता बढ़ी हुयी होती है जिसकों स्वच्छ करने कके लिए भी इन त्योहारों और परंपरा का उद्देश्य है जो स्वास्थ्य के प्रति हमारी सजगता को दर्शाता है। इसी दिन धनवंतरी जी कलश लेकर प्रकट हुए थे अत: किसी नए पात्र को इस दिन खरीद कर घर पर पूजा की जाती है जिससे धन में कई गुना बृद्धि होती है। आज के दिन चांदी खरीदने की प्रथा है जो चन्द्रमा का प्रतिक है और शीतलता प्रदान करता है जिससे मन में संतोष रूपी धन का वास होता है जैसा कि संतोष में ही हर धन समाहित है जो सबसे बडा धन है। इस दिन लक्ष्मी और गणेश की मूर्ति खरीद कर रख ली जाती है और दीपावली के दिन उसका पूजन किया जाता है। धनतेरस के दिन आँगन में दीप जलाकर किसी नए पत्र या चांदी के सिक्के का पूजन किया जाता है और दीपक का पूजन करके मुख्य दरवाजे पर रखा जाता है जिससे पुत्र रत्न की प्राप्ति होती है। तथा रात्रि को यम के नाम से दक्षिण दिशा में दीपक जलाया जाता है ताकी परिवार सकें कुल में अकाल मृत्यु को रोका जा-। जैसा कि धनवंतरी देवताओं के वैद्य हैं और अमृत पिलाकर उन्हें अमर कर दिये थे। पर मनुष्य योनी में यम के दूतों को किसी की अकाल मृत्यु करने पर बहुत ग्लानी होती थी अत: धनवंतरी ने कहा कि जो आज की रात्रि यम के नाम का दीपक दक्षिण मुखी जलाएगा उसके घर में किसी भी प्रकार से अकाल मृत्यु नहीं होगी और यह प्रथा आज भी प्रचलित है। अत: आज के दिन धनवंतरी भगवान का पूजन करना चाहिए और भगवान धनवंतरी से स्वास्थ्य और अर्थ की कामना करनी चाहिए। आज ही के दिन लक्ष्मी या गणेश से अंकित चांदी का सिक्का या कोई वर्तन खरीदें तथा उसमे दीपावली की रात में भगवान गणेश और माँ लक्ष्मी को भोग लगाएं। काली चौदस के दिन घर की खूब सफाई कर लें और दरिद्र नारायण को रात्रि में झाडूं से सूपा को बजाकर घर से निकाले और ईश्वर को आमंत्रित करें। जो आज भी दीपावली की रात्रि में औरतें देर रात्रि के बाद ईश्वर पैठें दरिद्र निकले की आवाज लगाते हुए सूप बजाकर घर के हर कोनें में घूमघूम कर करती हैं और दरिद्र ननारायण को दूर का- रास्ता दिखाती हैं। इसी दिन माँ काली ने नरकासुर का वध किया था। यानि नरक जैसी अवस्था का विनाश कर यह संदेश दिया था कि गंदगी किसी भी अवस्था में हों नकारात्मक उर्जा पैदा करती है और स्वास्थ्य को प्रभावित कर धन का नाश करती है। दीपावली कार्तिक मास अमावस्या को मनाई जाती है। आज के ही दिन माता लक्ष्मी समुन्द्र मंथन से अवतरित हुयी थी और विष्णु जी का वरण किया था। जिन्हें

धनवंतरी की बहन भी कहा गया है। अंग्रेजी के विद्वान का यह उद्धरण इसकी पुष्टि करता है WEALTH IS GONE NOTHING IS GONE, HEALTH IS GONE SOMTHING IS GONE, BUT IF CHARACTER IS GONE EVERYTHING IS GONE. यहाँ चरित्र का मतलब केवल काम से सम्बंधित नहीं है बल्कि सम्पूर्ण चरित्र से है। जैसा कि श्री रामचन्द्र जी चौदह वर्षीय वनवास पूर्ण करके आज ही अयोध्या में वापस पधारें थे इस उपलक्ष्य में दीवाली मनाई जाती है जिसमे प्रथम पूज्य गणेश, माँ लक्ष्मी और माँ सरस्वती जी की पूजा की जाती है और दीपों की आवली यानि दीपक का कतार प्रज्वलित कर जीवन के गहन अंधकार को दूर किया जाता है। रात्रि में माँ लक्ष्मी हर घर में आती हैं इसलिए उनकी आगवानी करने हेतु घर को सजाकर रखा जाता है और उनके वास करने की कामना की जाती है। स्वादिष्ट व मधुर भोजन बनाया जाता है और सपरिवार ग्रहण किया जाता है सबकी प्रसन्नता के लिए नए आभूषण व वस्त्र लाया जाता है ताकी मन प्रफुल्लित रहें घर प्रफुल्लित रहें और माँ लक्ष्मी का वास चिर काल तक घर- परिवार में बना रहें, एक दूसरे से प्रेम और सम्मान बना रहें। यही दीपावली का त्यौहार है जो सिंधु सभ्यता से मनाया जा रहा है जो अपने आप में पूर्ण वैज्ञानिक व धार्मिक है। हां एक निवेदन है कि आज हम प्रदूषित वातावरण में जीवन जी रहें हैं जिसमे पटाखे का अत्यधिक उपयोग व विषैली मिठाइयों का जमावड़ा हमारे लिए व आने वाली पीढ़ी के लिए अभिशाप है। अत: न तो पटाखे फोडने का अतिक्रमण करें नाही विषाक्त मिष्ठान का प्रयोग करें। प्रदुषण मुक्त स्वास्थ ही जीवन है।

इस प्रकार मानव जीवन में व्रत एवं पर्वों की वैज्ञानिकता सिद्ध होती है।

बोध प्रश्न –

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें –

1.भारत .... का देश है।

2. भारत में पर्वो की एक लम्बी .... रही है।

3. प्रत्येक कथा में एक .... एवं .... पारमार्थिक बोध होता है।

4. मकर संक्रान्ति का पर्व .... को मनाया जाता हैं।

5. मास की संख्या .... है।

6. माघ शुक्ल पंचमी से चैत्र शुक्ल पंचमी तक .... मनाया जाता है।

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि भारत में पर्वों के साथ व्रत और अनुष्ठान जोड़े गये हैं। अन्य संस्कृतियों में भी पर्वों, व्रतों और अनुष्ठानों का प्रचलन किसी न किसी रूप में मिलता है, किन्तु जितनी वैज्ञानिकता हिन्दुओं के व्रत उपवासों में है उतनी अन्य कहीं नहीं। प्रत्येक त्यौहार में मौसम के अनुसार व्रत, अनुष्ठान किये जाते हैं। हिन्दू शास्त्रों में किए किये व्रत में क्या खायें, क्या पहनें किसका पूजन करें, इन सभी बातों का विस्तृत उल्लेख मिलता है। लोक संस्कृति में इनका समावेश होने से जन साधारण को भी इस बात का ज्ञान है कि व्रतस्वास्थ्य के -लिये कितने लाभदायक हैं। प्रत्येक व्रत उपवास के पीछे पौराणि-क कथायें हैं जो सुखी जीवन के लिये हितकर संदेश देती हैं। व्रत का अनुष्ठान होता है, तथा वह सात्विक रूप में धारण किया जाता है। इसमें जो वह धारण करता है , पूरी दृढ़ता के साथ उसका पालन करता है। पर्व को उत्सव के रूप में मनाया जाता है। भारत में पर्वों की एक लम्बी परम्परा रही है। प्रत्येक कथा में एक सांसारिक एवं पारमार्थिक बोध होता है। कथाओं में नीतियॉ होती है। वह लोक स्वरों में लोक बिम्बों के साथ गूथी हुई होती हैं। इतना ही नहीं भारतीय समाज का सर्वाधिक भरोसा सम्बन्धों में हैं। सम्बन्ध बनाना और निभाना भारतीय संस्कृति की आदर्श स्थिति है। यहां कोई स्त्री सिर्फ स्त्री नहीं है। वे मां है, बहन है, पत्नी है इसी तरह पुरुष भी भाई हैं, सखा है, बेटा है आदि। इन सब सम्बन्धों को एक सूत्र में पिरोने पर बनता है परिवार। परिवार से समाज बनाते हैं और समाज से राष्ट्र इसी तरह इकाई बड़ी होती रहती है। जीवन को पूर्ण बनाने; सात्विक बनाने के लिए व्रत और चेतनामयी बनाए रखने के लिए त्यौहार मनाये जाते हैं। व्रतों के प्रभाव से मनुष्य की आत्मा शुद्ध होती है। संकल्प शक्ति बढ़ती है। बुद्धि, सद्विचार तथा ज्ञान विकसित होता है। परम्परा के प्रति भक्ति और श्रद्धा बढ़ती है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मनुष्य कुशलतापूर्वक, सफलतापूर्वक तथा उत्साहपूर्वक कार्य करता है। उसके सुखमय दीर्घ जीवन के आरोग्य साधनों का स्वयं ही संचय हो जाता है।

3.6 शब्दावली-

विविधता – अनेकता ।

धर्मनिरपेक्ष - जहॉ अनेक धर्म के लोग एक साथ रहते हो ।

पारमार्थिक – कल्याणकारिक ।

सर्वाधिक - सबसे अधिक ।

सद्विचार – अच्छे विचार

दीर्घजीवन – लम्बा जीवन

संक्रान्ति – परिवर्तन

वर्षारम्भ – वर्ष का आरम्भ

विकृतियॉ – दोष

देवशयन – देवताओं का शयन

काल गणना – समय गणना

अर्द्धरात्रि – आधी रात

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. विविधताओं
2. परम्परा
3. सांसारिक, पारमार्थिक
4. 14 जनवरी
5. 12
6. वसन्तोत्सव

3.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1- कर्मकलाप

2. संस्कार विमर्श

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारत के प्रमुख व्रत – पर्वों का उल्लेख कीजिये।
2. व्रत एवं पर्वों की वैज्ञानिकता क्या है ।
3. व्रत एवं पर्वों पर अपने शब्दों में निबन्ध लिखिये ।

इकाई – 4 उपनयन एवं विवाह की वैज्ञानिकता

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 102 के चतुर्थ खण्ड की चौथी इकाई 'उपनयन एवं विवाह की वैज्ञानिकता' शीर्षक से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने व्रत एवं पर्व की वैज्ञानिकता को समझ लिया है। आइये इस इकाई में उपनयन एवं विवाह की वैज्ञानिकता को समझते है।
उपनयन का अर्थ – यज्ञोपवीत संस्कार से है एवं विवाह को आप सब जानते ही होंगे। इसका भी अपना वैज्ञानिक महत्व है जिसका अध्ययन आप प्रस्तुत इकाई में करेंगे।
कर्मकाण्ड में उपनयन एवं विवाह एक अभिन्न अंग है। उपनयन मानव जीवन को आरम्भ में शक्ति प्रदान करता है, जिसके बल पर वह तेज धारण कर अपने आप को योग्य बनाता है तथा विवाह में उसे शक्ति के रूप में एक साहचरी की प्राप्ति होती है, जिसे अपनाकर वह सम्पूर्ण जीवन को सुखपूर्वक एवं व्यवस्थित रूप से चला पाने में समर्थ होता है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- उपनयन क्या है। समझा सकेंगे।
- विवाह की वैज्ञानिकता बता सकेंगे।
- उपनयन की वैज्ञानिकता को समझ लेंगे ।
- उपनयन एवं विवाह का महत्व समझा पायेंगे ।
- उपनयन एवं विवाह के गुण दोष की समीक्षा कर सकेंगे।

4.3 उपनयन की वैज्ञानिकता

भारतीय सनातन परम्परा में समस्त धर्म सम्बन्धी कर्म पूर्णत: वैज्ञानिक है, इसमें कोई सन्देह नहीं हैं। जहॉ तक उपनयन और विवाह का प्रश्न है, वह भी पूर्णरूपेण वैज्ञानिक है। उपनयन का अर्थ है –
पास या सन्निकट ले जाना। प्रश्न उठता है कि किसके पास ले जाना ? इसमें कई मत है। शिक्षण हेतु आचार्य के पास ले जाना। नवशिष्य को विद्यार्थीपन की अवस्था तक पहुॅचा देना आदि … आदि।
हिरण्यकेशि के अनुसार जब गुरू शिष्य से कहलवाता है कि – मैं ब्रह्मसूत्रों को प्राप्त हो गया हूॅ, मुझे इसके पास ले चलिये, सविता देवता द्वारा प्रेरित मुझे ब्रह्मचारी होने दिजीये।

मानवगृह्यसूत्र एवं काठक ने 'उपनयन' के स्थान पर 'उपायन' शब्द का प्रयोग किया है। काठक के टीकाकार आदित्यदर्शन ने कहा है कि उपानय, उपनयन, मौञ्चीबन्धन, बटुकरण, व्रतबन्ध समानार्थक हैं।

इस संस्कार के उद्गम एवं विकास के विषय में कुछ चर्चा हो जाना आवश्यक है, क्योंकि यह संस्कार सब संस्कारों में अति महत्त्वपूर्ण माना गया है। उपनयन संस्कार का मूल भारतीय एवं ईरानी है, क्योंकि प्राचीन ज़ोरॉस्ट्रिएन (पारसी) का (लुंगी) शास्त्रों के अनुसार पवित्र मेखला अधोवसन सम्बन्ध आधुनिक पारसियों से भी है। किन्तु इस विषय में हम प्रवेश नहीं करेंगे। हम अपने को भारतीय साहित्य तक ही सीमित रखेंगे। ऋग्वेद में 'ब्रह्मचारी' शब्द आया है। 'उपनयन' शब्द दो प्रकार से समझाया जा सकता है –

1. बच्चे को आचार्य के सन्निकट ले जाना,

2. वह संस्कार या कृत्य जिसके द्वारा बालक आचार्य के पास ले जाया जाता है। पहला अर्थ आरम्भिक है, किन्तु कालान्तर में जब विस्तारपूर्वक यह कृत्य किया जाने लगा तो दूसरा अर्थ भी प्रयुक्त हो गया। आपस्तम्बधर्मसूत्र ने दूसरा अर्थ लिया है। उसके अनुसार उपनयन एक संस्कार है जो उसके लिए किया जाता है, जो विद्या सीखना चाहता है; "यह ऐसा संस्कार है जो विद्या सीखने वाले को गायत्री मन्त्र सिखाकर किया जाता है।स्पष्ट है ", उपनयन प्रमुखतया गायत्री- है (पवित्र गायत्री मन्त्र का उपदेश) उपदेश। इस विषय में जैमिनीय भी द्रष्टव्य है।

आश्वलायनगृह्यसूत्र के मत से ब्राह्मणकुमार का उपनयन जन्म से लेकर आठवें वर्ष में, क्षत्रिय का 11वें वर्ष में एवं वैश्य का 12वें वर्ष में होना चाहिए ; यही नहीं, क्रम से 16वें, 22वें एवं 24वें वर्ष तक भी उपनयन का समय बना रहता है। आपस्तम्ब, शांखायन बौधायन, भारद्वाज एवं गोभिल गृह्यसूत्र तथा याज्ञवल्क्य, आपस्तम्बधर्मसूत्र स्पष्ट कहते हैं कि वर्षों की गणना गर्भाधान से होनी चाहिए। यही बात महाभाष्य में भी है। पारस्करगृह्यसूत्र के मत से उपनयन गर्भाधान या जन्म से आठवें वर्ष में होना चाहिए, किन्तु इस विषय में कुलधर्म का पालन भी करना चाहिए। याज्ञवल्क्य ने भी कुलधर्म की बात चलायी है। शांखायनगृह्यसूत्र ने गर्भाधान से 8वाँ या 10वाँ वर्ष, मानव ने 7वाँ या 9वाँ वर्ष, काठक ने तीनों वर्णों के लिए क्रम से 7वाँ, 9वाँ एवं 11वाँ वर्ष स्वीकृत किया है; किन्तु यह छूट केवल क्रम से आध्यात्मिक, सैनिक एवं धनसंग्रह की महत्ता- के लिए ही दी गयी है। आध्यात्मिकता, लम्बी आय एवं धन की अभिकांक्षा वाले ब्राह्मण पिता के लिए पुत्र का उपनयन गर्भाधान से 5वें, 8वें एवं 9वें वर्ष में भी किया जा सकता है। आपस्तम्बधर्मसूत्र एवं बौधायन गृह्यसूत्र' ने आध्यात्मिक महत्ता, लम्बी आयु, दीप्ति, पर्याप्त भोजन, शारीरिक बल एवं पशु के लिए

क्रम से 7वाँ, 8वाँ, 9वाँ, 10वाँ, 11वाँ एवं 12वाँ वर्ष स्वीकृत किया है। अत: जन्म से 8वाँ, 11वाँ एवं 12वाँ वर्ष क्रम से ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य के लिए प्रमुख समय माना जाता रहा है। 5वें वर्ष से 11वें वर्ष तक ब्राह्मणों के लिए गौण, 9वें वर्ष से 16 वर्ष तक क्षत्रियों के लिए गौण माना जाता रहा है। ब्राह्मणों के लिए 12वें से 16वें तक गौणतर काल तथा 16वें के उपरान्त गौंणतम काल माना गया है। आपस्तम्बगृह्यसूत्र एवं आपस्तम्बधर्मसूत्र, हिरण्यकेशिगृह्यसूत्र एवं वैखानस के मत से तीनों वर्णों के लिए क्रम से शुभ मुहूर्त पड़ते हैं वसन्त, ग्रीष्म एवं शरद् के दिन। भारद्वाज के अनुसार वसन्त ब्राह्मण के लिए, ग्रीष्म या हेमन्त क्षत्रिय के लिए, शरद् वैश्य के लिए, वर्षा बढ़ई के लिए या शिशिर सभी के लिए मान्य है। भारद्वाज ने वहीं यह भी कहा है कि उपनयन मास के शुक्लपक्ष में किसी शुभ नक्षत्र में, भरसक पुरुष नक्षत्र में करना चाहिए। कालान्तर के धर्मशास्त्रकारों ने उपनयन के लिए मासों, तिथियों एवं दिनों के विषय में ज्योतिषसम्बन्धी विधान बड़े विस्तार के साथ दिये हैं-, जिन पर लिखना यहाँ उचित एवं आवश्यक नहीं जान पड़तां किन्तु थोड़ाबहुत लिख- देना आवश्यक है, क्योंकि आजकल ये ही विधान मान्य हैं। वृद्धगार्ग्य ने लिखा है कि माघ से लेकर छ: मास उपनयन के लिए उपयुक्त हैं, किन्तु अन्य लोगों ने माघ से लेकर पाँच मास ही उपयुक्त ठहराये हैं। प्रथम, चौथी, सातवीं, आठवीं, नवीं, तेरहवीं, चौदहवीं, पूर्णमासी एवं अमावस की तिथियाँ बहुधा छोड़ दी जाती हैं। जब शुक्र सूर्य के बहुत पास हो और देखा न जा सके, जब सूर्य राशि के प्रथम अंश में हो, अनध्याय के दिनों में तथा गलग्रह में उपनयन नहीं करना चाहिए। बृहस्पति, शुक्र, मंगल एवं बुध क्रम से ऋग्वेद एवं अन्य वेदों के देवता माने जाते हैं। अत: इन वेदों के अध्ययनकर्ताओं का उनके देवों के वारों में ही उपनयन होना चाहिए। सप्ताह में बुध, बृहस्पति एवं शुक्र सर्वोत्तम दिन हैं, रविवार मध्यम तथा सोमवार बहुत कम योग्य है। किन्तु मंगल एवं शनिवार निषिद्ध माने जाते हैं सामवेद के) के लिए मंगल छात्रों एवं क्षत्रियों मान्य है(। नक्षत्रों में हस्त, चित्रा, स्वाति, पुष्य, घनिष्ठा, अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, श्रवण एवं रवती अच्छे माने जाते हैं विशिष्ट वेद वालों के लिए नक्षत्रसम्बन्धी - अन्य नियमों की चर्चा यहाँ नहीं की जा रही है। एक नियम यह है कि भरणी, कृत्तिका, मघा, विशाखा, ज्येष्ठा, शततारका को छोड़कर सभी अन्य नक्षत्र सबके लिए अच्छे हैं। लड़के की कुण्डली के लिए चन्द्र एवं बृहस्पति ज्योतिषरूप से शक्तिशाली होने चाहिए-। बृहस्पति का सम्बन्ध ज्ञान एवं सुख से है, अत: उपनयन के लिए उसकी परम महत्ता गायी गयी है। यदि बृहस्पति एवं शुक्र न दिखाई पड़ें तो उपनयन नहीं किया जा सकता। अन्य ज्योतिषसम्बन्धी नियमों का उद्घाटन यहाँ - स्थानाभाव के कारण नहीं किया जायगा।

उपनयन कर्म का सबसे बड़ा वैज्ञानिक प्रमाण है कि शास्त्रोक्त विधि के द्वारा यदि बालक का

उपनयन संस्कार हुआ हो तो उसकी बुद्धि, तेज, स्मृति, आयु आदि सभी उत्तरोत्तर उत्तम स्तर के होगी । इससे परे निम्न स्तर के होंगे। इसमें कोई संशय नहीं। मुहूर्तचिन्तामणि के लेखक रामदैवज्ञ ने भी व्रतबन्ध (उपनयन) संस्कार के लिए कहा है –

विप्राणां व्रतबन्धनं निगदितं गर्भाज्जनेवारेऽष्टमे।
वर्षे वाऽप्यथ पंचमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे।।
वैश्यानां पुनरष्टमेऽप्यथ पुनः स्याद्वादश वत्सरे ।
कालेऽथ द्विगुणे गते निगदिते गौणं तदाहुर्बुधाः।।

विवाह संस्कार –

विवाह दो आत्माओं का पवित्र बन्धन है। दो प्राणी अपने अलग- अलग अस्तित्वों को समाप्त कर एक सम्मिलित इकाई का निर्माण करते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों में परमात्मा ने कुछ विशेषताएँ और कुछ अपूणर्ताएँ दे रखी हैं। विवाह सम्मिलन से एक दूसरे की अपूर्णताओं को पूर्ण करते हैं, इससे समग्र व्यक्तित्व का निर्माण होता है। इसलिए विवाह को सामान्यतया मानव जीवन की एक आवश्यकता माना गया है। एक- दूसरे को अपनी योग्यताओं और भावनाओं का लाभ पहुँचाते हुए गाड़ी में लगे हुए दो पहियों की तरह प्रगति- पथ पर अग्रसर होते जाना विवाह का उद्देश्य है। वासना का दाम्पत्य- जीवन में अत्यन्त तुच्छ और गौण स्थान है, प्रधानतः दो आत्माओं के मिलने से उत्पन्न होने वाली उस महती शक्ति का निमार्ण करना है, जो दोनों के लौकिक एवं आध्यात्मिक जीवन के विकास में सहायक सिद्ध हो सके।

गृहस्थाश्रम को सारे आश्रमों का मूलाधार व सर्वश्रेष्ठ बताया गया है। लेकिन कहा गया है कि समय आने पर ही अर्थात् जब बालक विद्या प्राप्ति कर गृहस्थाश्रम में प्रवेशार्थ योग्य हो जाये तभी विवाह करनी चाहिए। इसका वैज्ञानिक कारण भी है कि यदि असामयिक विवाह होता है तो शारीरिक एवं मानसिक दोनों स्थितियों में दम्पत्ती को कष्ट पहॅुचता है। यदि समय से पूर्व कन्या मॉ बन जाती है, तो उसका शारीरिक पक्ष कमजोर पड़ जाता है। पिता यदि स्वस्थ न हो तो भी परेशानी का सामना करना पड़ता है।

धर्मशास्त्रों के अनुसार विवाह के आठ प्रकार हैं – ब्राह्म, दैव, प्राजापत्य, आर्ष, गान्धर्व, आसुर, राक्षस, एवं पिशाच। इनमें प्रथम चार श्रेष्ठ माने जाते हैं तथा बाद के तीन नि:कृष्ट। अत: प्रयास यह होना चाहिये कि प्रथम चार का ही विवाह हो। कालान्तर में अधमाधम विवाह हो रहा है, जिससे वंशानुगत विकृतियॉ उत्पन्न हो रही है। फलस्वरूप अधर्मी, संस्कारहीन, पापी, व्यभिचारी, तथाकथित तत्वों का उद्भव हो रहा है।

विवाह की वैज्ञानिकता स्वत: सिद्ध होती है। विवाह का मुख्य उद्देश्यों में एक है – सन्तानोत्पत्ति। सन्तान की उत्पत्ति में विचार करना आवश्यक हो जाता है कि वर – कन्या की नाड़ी एकसमान तो नहीं। एक समान नाड़ी होने पर सन्तानोत्पत्ति में बाधा आती है। ज्योतिष के अनुसार जो नाड़ी विचार हैं, वही विज्ञान के अनुसार रक्त समूह होता है। कई चिकित्सक परामर्श देते हैं कि रक्तसमूह एक हो तो प्रजननता में विलम्ब होता है।

इस प्रकार विवाह में कई वैज्ञानिक चिन्तन होते हैं। वस्तुत: विवाह का मुख्य प्रयोजन हैं –

भार्यात्रिवर्गकरणं शुभशीलयुक्ता
शीलं शुभं भवति लग्नवशेन तस्या: ।।
तस्माद्विवाहसमये परिचिन्त्यते हि
तन्निघ्नतामुपगता सुतशीलधर्मा ।।

ज्योतिष शास्त्रानुसार विवाह में चिन्तनीय अष्टकूट विचार पूर्णत: वैज्ञानिक है। वर्ण, वश्य, तारा, योनि, ग्रहमैत्री, भकूट, गण, नाडी। इनमें प्रत्येक से वर्ण, शरीर, मन, वाणी, परस्परमेल, प्रजनन क्षमता, व्यवहार, रक्तसमूह आदि का विचार किया जाता हैं।

बोध प्रश्न -

1. उपनयन का अर्थ होता है –
   क. उपनेत्र ख. पास या सन्निकट ले जाना ग. समीप घ. कोई नहीं
2. ब्राह्मणों का उपनयन संस्कार होना चाहिए –
   क. जन्म से पॉचवे वर्ष में ख. जन्म से आठवें वर्ष में ग. जन्म से दसवें वर्ष में
   घ. जन्म से सोलहवें वर्ष में
3. शास्त्रानुसार कथित काल से द्विगुणित काल हो जाने पर यज्ञोपवीत संस्कार होता है -
   क. मध्यम ख. उत्तम ग. गौण घ. निम्न
4. भारद्वाज के अनुसार किस ऋतु में ब्राह्मण के लिए उपनयन उत्तम होता है –
   क. शिशिर ख. ग्रीष्म ग. वसन्त घ.हेमन्त
5. वृहस्पति ग्रह का सम्बन्ध है –
   क. ज्ञान से ख. धन से ग. आत्मा से घ. शरीर से
6. धर्मशास्त्रों के अनुसार विवाह के कितने प्रकार हैं -
   क. 7 ख. 8 ग. 9 घ. 10

4.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि भारतीय सनातन परम्परा में समस्त धर्म सम्बन्धी कर्म पूर्णत: वैज्ञानिक है, इसमें कोई सन्देह नहीं हैं। जहॉ तक उपनयन और विवाह का प्रश्न है, वह भी पूर्णरूपेण वैज्ञानिक है। उपनयन का अर्थ है – पास या सन्निकट ले जाना। प्रश्न उठता है कि किसके पास ले जाना ? इसमें कई मत है। शिक्षण हेतु आचार्य के पास ले जाना। नवशिष्य को विद्यार्थीपन की अवस्था तक पहुॅचा देना आदि ... आदि। हिरण्यकेशि के अनुसार जब गुरू शिष्य से कहलवाता है कि – मैं ब्रह्मसूत्रों को प्राप्त हो गया हॅू, मुझे इसके पास ले चलिये, सविता देवता द्वारा प्रेरित मुझे ब्रह्मचारी होने दिजीये। मानवग्रह्मसूत्र एवं काठक ने 'उपनयन' के स्थान पर 'उपायन' शब्द का प्रयोग किया है। काठक के टीकाकार आदित्यदर्शन ने कहा है कि उपानय, उपनयन, मौञ्चीबन्धन, बटुकरण, व्रतबन्ध समानार्थक हैं। विवाह दो आत्माओं का पवित्र बन्धन है। दो प्राणी अपने अलग- अलग अस्तित्वों को समाप्त कर एक सम्मिलित इकाई का निर्माण करते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों में परमात्मा ने कुछ विशेषताएँ और कुछ अपूणर्ताएँ दे रखी हैं। विवाह सम्मिलन से एक दूसरे की अपूर्णताओं को पूर्ण करते हैं, इससे समग्र व्यक्तित्व का निर्माण होता है। इसलिए विवाह को सामान्यतया मानव जीवन की एक आवश्यकता माना गया है। एक- दूसरे को अपनी योग्यताओं और भावनाओं का लाभ पहुँचाते हुए गाड़ी में लगे हुए दो पहियों की तरह प्रगति- पथ पर अग्रसर होते जाना विवाह का उद्देश्य है। वासना का दाम्पत्य- जीवन में अत्यन्त तुच्छ और गौण स्थान है, प्रधानतः दो आत्माओं के मिलने से उत्पन्न होने वाली उस महती शक्ति का निमार्ण करना है, जो दोनों के लौकिक एवं आध्यात्मिक जीवन के विकास में सहायक सिद्ध हो सके।

4.6 शब्दावली-

उपनयन – यज्ञोपवीत संस्कार ।

पूर्णरूपेण - पूरी तरह से ।

सविता – सूर्य ।

उद्गम - उत्पत्ति ।

व्रतबन्ध – यज्ञोपवीत

वटुकरण – यज्ञोपवीत

असामयिक – बिना समय के

अपूर्ण – अधूरा

उद्भव – जन्म

लौकिक – सांसारिक

अद्वितीय – जिसके समान दूसरा कोई न हो

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ख
3. ग
4. ग
5. क
6. ख

4.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1- मुहूर्तचिन्तामणि

2- कर्मकलाप

3. संस्कार विमर्श

4. मेलापक मीमांसा

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. उपनयन संस्कार का परिचय दीजिये ।
2. उपनयन की वैज्ञानिकता सिद्ध कीजिये।
3. विवाह की वैज्ञानिकता सिद्ध कीजिये।

बी0ए0 द्वितीय वर्ष

कर्मकाण्ड

प्रथम पत्र

शान्ति एवं संस्कार विधान

ब्लॉक – 1

संस्कार विधान (क)

इकाई – 1 संस्कार विमर्श

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 संस्कार विमर्श

1.3.1 संस्कार शब्द की परिभाषा

1.3.2 लोकप्रिय प्रयोजन

1.4 संस्कारों का भौतिक उद्देश्य

1.4.1 नवग्रह मण्डल रचना प्रकार

1.4.2 नवग्रह मण्डल पर ग्रहों की प्रतिमा, आकार एवं विशेष विचार

1.5 सारांशः

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के 201 के प्रथम खण्ड की पहली इकाई 'संस्कार विमर्श' से सम्बन्धित है। इस इकाई से पूर्व की इकाई में आप पूजन के सभी अंगों एवं विधियों से परिचित हो गये हैं। अतः अब आपको कुछ संस्कारों के विषय में भी ज्ञान कराया जायेगा जो मानव जीवन के अति महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं तथा जिनके बिना मानव जीवन की पूर्णता सम्पन्न नहीं होती है।

प्रस्तुत इस इकाई में पूर्व प्रतिज्ञात-विषय के अनुसार संस्कार शब्द की परिभाषा, संस्कारों की उपयोगिता (प्रयोजन) एवं उसके महत्त्वपूर्ण-पक्ष तथा संख्या आदि के विषय में आपको ज्ञान कराया जायेगा। जो वर्तमान समाज के लोगों के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको संस्कारों के स्वरूप एवं महत्त्व तथा विविध प्रयोजनों का भी ज्ञान स्वतः हो जायेगा। आप जिसे समाज के सामने प्रस्तुत कर सनातन धर्म की रक्षा के साथ-साथ सम्पूर्ण मानवता के पथ को प्रशस्त करेंगे।

1.3 संस्कार विमर्श

अभी सर्वप्रथम संस्कारों के मूलस्रोत पर आपसे चर्चा करते हैं क्योंकि मूलस्रोत के विषय में जिज्ञासा स्वाभाविक है। तो देखें! संस्कारों का मूल स्रोत हमारे भारतीय वैदिक गृह्यसूत्र हैं। यहीं से यह धारा प्रवाहित होते हुए क्रमशः धर्मसूत्र, स्मृतिग्रन्थ, पुराणग्रन्थ, महाकाव्यों आदि में भी प्रवाहशील है। इसके बाद पद्धति, प्रयोगों, टीकाग्रन्थों के माध्यम से तथा आचार्य पुरोहितों के सुकण्ठ से प्रसृत वाणी के रूप में उसका आज भी हम कानों से रसास्वादन करते हैं।

1.3.1 संस्कार शब्द की परिभाषा

किसी भी शब्द के प्राथमिक अर्थज्ञान के लिए सामान्यतः व्याकरण-शास्त्र के अनुसार धातु प्रत्यय आदि का विचार करना आवश्यकता है उसी प्रकार यहाँ भी सम् उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से 'घञ्' प्रत्यय करने पर संस्कार शब्द निष्पन्न होता है। परन्तु इतने अर्थ से आप को सन्तुष्ट नहीं होने देंगे। इसके लिए हम और आगे चलते हैं। यहाँ हम कुछ शास्त्रों की और आप को ले चलेंगे जहाँ भिन्न-भिन्न अर्थों में संस्कार शब्द का प्रयोग हुआ है।

पूर्वाचार्यों के द्वारा संस्कार शब्द का प्रयोग विभिन्न शास्त्रों में भिन्न-भिन्न रूपों में देखा जाता है। जैसे उदाहरण के लिए आप देखें! मीमांसाशास्त्र में यज्ञ के अंगभूत पुरोडाश की शुद्धि के लिए ही संस्कार

शब्द का प्रयोग किया गया है।

'प्रोक्षणादिजन्यसंस्कारो यज्ञांगपुरोडाषेष्विति द्रव्यधर्मः'।

अद्वैतवेदान्त के आचार्य जीव पर शारीरिक क्रियाओं के मिथ्या आरोप को संस्कार मानते हैं। जैसा कि - 'स्नानाचमनादिजन्याः संस्कारा देहे उत्पद्यमानानि तदभिधानानि जीवे कल्प्यन्ते'।

न्यायशास्त्र के आचार्य भावों को व्यक्त करने की आत्मव्यंजक शक्ति को संस्कार मानते हैं। जिसका परिगणन वैशेषिक दर्शन में 24 गुणों के अन्तर्गत किया गया है। जैसे - **रूपरसगन्ध स्पर्शसंख्यापरिमाणपृथक्त्वद्रव्यत्वस्नेहषब्दबुद्धिसुखदुःखेच्छाद्वेषप्रयत्नाधर्माधर्मसंस्कारा ष्चतुर्विंशतिर्गुणाः।**

उपरोक्त इन अर्थों से हमारा प्रयोजन यहाँ सिद्ध नहीं होता दीख रहा है अतः अब हम शास्त्रों से हटकर आधुनिक संस्कृत साहित्य में प्रवेश करते हैं, क्योंकि वहाँ भी संस्कार शब्द की चर्चा सुनी जाती है।

संस्कृत साहित्य में 'शुद्धि' के अर्थ में संस्कार शब्द का प्रयोग महाकवि कालिदास ने अपने कुमारसंभव नामक ग्रन्थ में किया है। यथा - '**संस्कारवत्येव गिरामनीषी तया स पूतष्च विभूषितश्च'**। इसी प्रकार आभूषण के अर्थ में भी संस्कार शब्द का प्रयोग देखा जाता है। जैसा कि अभिज्ञानशाकुन्तल नामक ग्रन्थ में कहा गया है-

स्वभाव सुन्दरं वस्तु न संस्कारमपेक्षते। इसके अतिरिक्त प्रभाव या छाप इन अर्थों में भी इसका प्रयोग देखा जाता है। जैसा कि 'यन्नवे भाजने लग्नः संस्कारो नान्यथा भवेत्'।

उपर्युक्त अर्थों के अलावा मनुस्मृति का एक वचन हम प्रस्तुत करते हैं, शायद जो अर्थ हम चाहते हैं उसके निकट पहुँच जाये।

'कार्यः शरीरसंस्कारः पावनः प्रेत्य चेह यः'

अर्थात् शरीर को पावन (पवित्र) बनाने के लिए धार्मिक अनुष्ठान की विधि ही संस्कार है। इस प्रकार इन अर्थों पर गंभीरतापूर्वक विचार करने से यही बात सामने आती है कि जिस संस्कार की चर्चा हम करने जा रहे हैं उसका तात्पर्य यह है कि संस्कार, मानव के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का परिष्कार एवं पूर्णता का प्रतीक है। शास्त्रोक्त विधि से अनुष्ठित संस्कार मानव में मानवता प्रदान करते हुए उसे समाजोपयोगी बनाते हैं। इसी बात का समर्थन वीरमित्रोदय नामक ग्रन्थ भी करता है। जैसा कि - आत्मशरीरान्तरनिष्ठो विहितक्रियाजन्योऽतिशयविशेषः संस्कारः। इस प्रकार मानवता की पूर्णता, शुद्धि एवं उसका समाज के लायक योग्यता संस्कार से ही सम्पन्न होती है। यही निष्कर्ष है। इसी बात को हम और स्पष्ट करने के लिए एक सुन्दर सा उदाहरण देते हैं धैर्यपूर्वक आप श्रवण करें।

संस्कार में दो प्रकार की वस्तुएँ देखने में आती है, एक प्राकृत दूसरी संस्कृत। प्रकृति ने जिस रूप में जिस वस्तु को पैदा किया वह उसी रूप में बनी रहे तो उसे प्राकृत वस्तु कहेंगे। जैसे पर्वत, जंगल के वृक्ष, नदी आदि। किन्तु प्रकृति के द्वारा पैदा की हुई वस्तु का अपने उपयोग में लाने के लिए जब हम कुछ सुधार करते हैं तब उस सुधरी हुई वस्तु को संस्कृत कहा जाता है। वह सुधार ही संस्कार है। अर्थात् अपने लिए तथा समाज के लिए उपयोगी बनाना ही संस्कार है तथा संस्कृत होकर वह व्यक्ति अपने में पूर्ण हो जाता है। उसे अन्य गुणों की अपेक्षा अब नहीं रह जाती है। यह संस्कार (सुधार) तीन प्रकार से होता है - दोषमार्जन, अतिशयाधान, हीनांगपूर्ति। इसें हम उदाहरण के साथ आगे बतायेंगे। जैसे -

लोहा जिस प्रकार खान से निकलता है ठीक उसी प्रकार उसका उपयोग हम आप नहीं कर सकते हैं क्योंकि वह अति-मलिन होता है। यदि उससे तलवार बनानी हो तो उसका संस्कार करना पड़ता है। इसी प्रकार एक दूसरा उदाहरण जैसे - धान जिस प्रकार खेत से निकलता है ठीक उसी प्रकार हम उसका उपभोग (भोजन) नहीं कर सकते हैं उससे भूँसी उसका अलग करना ही पड़ेगा, फिर चावल बनाकर उसके साथ अन्य द्रव्यों के संयोग से हम उसे ग्रहण करते हैं।

इस प्रकार हम पहले कह चुके हैं कि संस्कार में तीन बातें अति महत्त्वपूर्ण की हैं।

क. दोषमार्जन - अर्थात् उसे साफ करना (प्रकृति के द्वारा पैदा किए हुए पदार्थ में यदि कोई दोष हो तो अपने उपयोग में लाने के लिए सुधार करते हैं, जिसका नाम दोषमार्जन है)।

ख. अतिशयाधान - उपयोगी बनाने के लिए कुछ विशेषता उत्पन्न कर देना ही अतिषयाधान है।

ग. हीनांगपूर्ति - फिर उपयुक्तता में कोई त्रुटि हो तो अन्य पदार्थ को मिलाकर उसकी पूर्ति करना ही हीनांगपूर्ति है।

एक और उदाहरण से इसे समझे - कपास के वृक्ष से प्राप्त मलिन कपास को साफ करना दोषमार्जन है, उससे कपड़ा (कुर्ता) बना लेना अतिशयाधान है, और बटन आदि लगाकर पहनने लायक बनाना यह हीनांगपूर्ति है। इसी प्रकार धान से भी भूसी अलग करना दोषमार्जन है। शुद्ध चावल को जल में मिलाकर अग्नि पर पकाना अतिशयाधान है अर्थात् खाने लायक रूप गुण उसमें लाना तथा उसे दाल सब्जी आदि के साथ भोजन करना यहीं हीनांगपूर्ति है।

ये ही बातें संस्कारों पर भी लागू होती है। गर्भाधान, जातकर्म, अन्नप्राश आदि संस्कारों के द्वारा मानव का दोषमार्जन होता है। चूडाकरण, उपयनयन आदि संस्कारों के द्वारा अतिशयाधान (विशेष गुण की स्थापना) होता है तथा विवाह, अग्न्याधान आदि संस्कारों के द्वारा हीनांगपूर्ति होती है।

गार्भैर्होमैर्जातकर्म चौडमौंजी निबन्धनैः।
बैजिकं गार्भिकं चैनो द्विजानामपमृज्यते।।
वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैः निषेकादिद्विजन्मनाम्।
कार्यः शरीरसंस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च।।

इस प्रकार संस्कारों के इन्हीं तीनों गुणों से मानव अपने जीवन को पूर्ण करता है। तथा इस लोक में सुख शान्ति का अनुभव करते हुए शान्ति से परलोक सुख का भी आनन्द लेता है।

आज सभी मानव अपने को पूर्ण बनने की अभिलाषा रखते हैं और रखना भी चाहिए, जो वर्तमान समाज के लिए एवं स्वयं के लिए अत्यन्त उपयोगी एवं महत्त्पूर्ण है ।

मित्रों! संसार में सभी वस्तुओं की यही दशा है । लोहा जिस रूप में खान से निकलता है उसे देखकर कोई आशा भी नहीं कर सकता, कि यह वस्तु हमारे बड़े काम की होगी, किन्तु बड़े बड़े कारखानों द्वारा पहले जिसका दोषमार्जन होता है तथा कुशल-कारीगरों से भिन्न-भिन्न रूप दिलवाकर तेज धार आदि दिलाकर अतिशयाधान अर्थात् विशेषता उसमें उत्पन्न की जाती है, फिर भी उपयोग में लाने के लिए तलवार में मूंठ (लकड़ी का पकड़ने के लिए) आदि लगाकर हीनांगपूर्ति जब कर ली जाती है, तब वह सुसंस्कृत लोहा हमारे लिए सभी प्रकार से उपयोगी सिद्ध होता है । जिस प्रकार आज अनुदिन नये नये आविष्कार बड़े गर्व के साथ भारतीय कौशल सम्पन्न कारीगर करते हैं, ठीक उसी प्रकार प्राचीन भारतीयों को भी यह अभिमान था कि हम संस्कार से मनुष्य को जैसा चाहे वैसा बना सकते हैं । अस्तु ।

विषय को हम यहीं संक्षेप करते हैं अन्यथा विस्तृत हो जायेगा ।

इस प्रकार हमारे जीवन में इन संस्कारों का आध्यात्मिक महत्त्व तो अत्यन्त उत्तम है, परन्तु इस वैज्ञानिक तथा तार्किक युग में उत्पन्न मानव-जाति के लिए भी इसे समझना एवं समझाना अत्यन्त आवश्यक है । जिसका दायित्व इस पाठ्यक्रम के अध्येता को है । अस्तु ।

यहाँ संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि संस्कार, दोषमार्जन, अतिशयाधान, हीनांगपूर्ति रूप तीन गुणों से व्यक्ति को पूर्ण मानव की संज्ञा से विभूषित करता है।

संस्कार की परिभाषा के बाद हम इन संस्कारों का प्रयोजन क्या है? इसे आपको बताने जा रहे हैं । क्योंकि बिना प्रयोजन (उद्देश्य) के संसार में कोई भी व्यक्ति किसी भी काम में प्रवृत्त नहीं होता है । आप देखें । वेद के भी आदेशवाक्यों को मानने के लिए तथा उसमें मनुष्य को प्रवृत्त होने के लिए अर्थवाद वाक्य (प्रशंसावाक्य) ब्राह्मणग्रन्थों में भरे पड़े हैं, तथा जिनका उपयोग या प्रयोजन मात्र विधिवाक्य की स्तुति या प्रशंसा करके मानव को उस कर्म में लगाना है । उसी तरह यहाँ पर हम

कहते हैं कि संस्कार एक शास्त्रीय विधि है जिसे सभी मनुष्यों को अपनी पूर्णता के लिए करनी चाहिए, फिर भी आज वर्तमान समाज में विवाह एवं उपनयन के अलावा कोई भी संस्कार दिखाई नहीं देता है। अब तो कछ लोग कुल परम्परा को मानकर विवाह में ही उपनयन (जनेऊ) संस्कार कर देते हैं। जिसका फल विवाह संस्कार तक वह मनुष्य पतित हो जाता है। इन संस्कारों में भी केवल नाम मात्र की ही शास्त्रीय विधि रह गई है शेष आप सब जान ही रहे हैं, जिस के कारण ही आज वर्तमान भारत की दुर्दषा हमें देखनी पड़ रही है। आज कोई भी मानव संस्कारों से संस्कृत नहीं है। जिसका फल उसका नारकीय-जीवन या पशुओं की तरह जीवन जीने के लिए वह बाध्य है। द्रव्योपार्जन में तो अपना सम्पूर्ण जीवन लगा ही देता है, फिर भी सुख या शान्ति उसे नहीं मिलती। वह चैन के लिए हमेशा बेचैन रहता है। कितना भी दुख कहा जाय कम ही है अस्तु।

अतः अब कुछ नई चर्चा संस्कारों के प्रयोजन से सम्बद्ध करने जा रहे हैं। ध्यान से देखें।

1.3.2 लोकप्रिय प्रयोजन

लोकप्रिय प्रयोजन पर विचार करते समय हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि मानव समाज में प्राचीन काल से ही यह धारणा थी कि कुछ ऐसे भी अमंगल तत्त्व है जिनसे रक्षा करना हमारा परम दायित्व है। लोगों की धारणा थी कि किसी भी महत्त्वपूर्ण अवसर पर व्यक्ति के जीवन में वे अमंगल तत्त्व (भूत-प्रेतादि) हस्तक्षेप कर सकते हैं अतः अमंगलजनक प्रभावों के निराकरण के लिए तथा हितकर प्रभावों की प्राप्ति के लिए प्राचीन लोग प्रयत्न किया करते थे, जिससे मनुष्य बिना किसी बाह्य विघ्न के अपना विकास और अभिवृद्धि कर सके और देवों तथा दिव्य शक्तियों से सामयिक निर्देश एवं सहायता प्राप्त कर सके। संस्कारों के अनेक अंगों के मूल में यही विश्वास रहे हैं। आइए कुछ उदाहरण से इसे हम और स्पष्ट करने का प्रयत्न करते हैं।

हमारे यहाँ संस्कारों में अवांछित प्रभावों का निराकरण के लिए गृह्यसूत्रों में संस्कारों के अन्तर्गत, अनेक साधनों का अवलम्बन करने का निर्देश मिलता है। इनमें प्रथम-स्थान, आराधना का है। आराधना सबसे पहले अशुभ निवारण शक्तियों की जाती है। जैसे तत्कालीन समाज में अशुभ शक्तियों के प्रभाव से मुक्त रहने के लिए उन्हें बलि तथा भोजन दिया जाता था जिससे वे तृप्त होकर बिना किसी प्रकार की क्षति पहुँचाए लौट जाये। गृहस्थ अपनी पत्नी और बच्चों की रक्षा के लिए सदा चिन्तित रहता था। तथा भूतप्रेतादिकों की निवृत्ति अपना परम कर्तव्य समझता था। जैसे स्त्री के गर्भिणी रहने के समय या शैशव काल में बालक के ऊपर होने वाली बाधाओं के समय पिता कहता था कि ''शिशुओं पर आक्रमण करने वाले कूर्कुर सकुर्कूर शिशु को मुक्त कर दो। हे सीसर मैं तुम्हें बलि देकर अपनी स्तुति से प्रसन्न करना चाहता हूँ जिससे इस बालक का अनिष्ट दूर हो जाय।

पारस्करगृह्यसूत्र के टीकाकार आचार्य गदाधर कहते हैं ''ततस्तुष्टः सन् एनं एनं कुमारं मुंचय' आदि मन्त्र पढ़े जाते थे।

इसी तरह जातकर्म संस्कार के समय शिशु का पिता कहता है कि हे! शण्डामर्क उपवीर शौण्डिकेय, उलूखल मलिम्लुच द्रोणास और च्यवन तुम सभी यहाँ से अदृश्य हो जाओ। ऐसा मन्त्र पढ़कर स्वाहा अर्थात् घृत से आहुति देता है।

गृहस्थ देवताओं से भी अशुभ प्रभावों के निवारण के लिए प्रार्थना करता था। चतुर्थी-कर्म के अवसर पर नव विवाहिता पत्नी के घातक तत्त्वों के निवारण के लिए अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र, गन्धर्व आदि देवों का आवाहन एवं पूजन करता था। इस तरह के असंख्य उदाहरण है। हमारा प्रयोजन यहाँ प्रसंगवश संकेत कर देने से है।

जिस प्रकार अवांछित प्रभावों के निराकरण के लिए संस्कार किये जाते थे, ठीक उसी प्रकार अभीष्ट प्रभावों के आकर्षण के लिए भी संस्कारों का विधान बताया गया है शास्त्रों में।

हम सामान्य रूप से देखते हैं कि प्राचीन लोगों का यह विश्वास था कि जीवन का प्रत्येक क्षण किसी न किसी देवता द्वारा अधिष्ठित है। अर्थात् उस काल में अमुक देवता उसकी रक्षा करते हैं। अतः अवसर उपस्थित होने पर उस देवता की स्तुति या आराधना अवश्य की जाती थी। जैसे गर्भाधान के समय विष्णु प्रधान देवता है, विवाह के समय प्रजापति और उपनयन के समय बृहस्पति इत्यादि। तत् तत् कालों के उपस्थित होने पर इनकी पूजा की जाती थी। यही नहीं शुभ वस्तुओं के स्पर्श से भी वे मंगल परिणाम की आशा करते थे। जैसे सीमन्तोन्नयन संस्कार के समय उदुम्बर वृक्ष की शाखा का पत्नी के गले से स्पर्श कराया जाता था क्योंकि यह विश्वास था कि उसके स्पर्श से स्त्री में उर्वरता (सन्तति प्रजनन) की क्षमता आयेगी। जैसे - औदुम्बरेण त्रिवृतमाबध्नाति - अयमूर्जावतो वृक्षः उर्ज्जीव फलिनी भव' इसी प्रकार सन्तति प्रजनन के लिए पत्नी की नाक के दायें छिद्र में दूरव्यापी जड़वाले विशाल वटवृक्ष के कोपल का रस छोड़ा जाता था। अस्तु।

अब हम इसके अतिरिक्त कुछ दूसरे प्रयोजनों पर भी विचार करते हैं -

1.4 संस्कारों का भौतिक उद्देश्य

संस्कारों का भौतिक उद्देश्य धन-धान्य-पशु-सन्तान-दीर्घजीवन-सम्पत्ति-समृद्धि-शक्ति और बुद्धि की प्राप्ति। चूँकि संस्कार गृह्यकृत्य थे, और स्वभावतः उनके अनुष्ठान के समय घरेलू जीवन के लिए आवश्य सभी वस्तुओं की प्रार्थना देवताओं से की जाती थी। हमारे भारतीय जनों का यह विश्वास था कि आराधना एवं प्रार्थना के माध्यम से उनकी इच्छाओं को देवता जान लेते हैं, तथा समय पर प्रदान भी करते हैं। क्योंकि वे (देवता) सर्वज्ञ होते हैं। अतः संस्कारों में प्रायः इससे सम्बद्ध

बहुत सारी प्रार्थनायें आती हैं। जैसे विवाह में सप्तपदी के अवसर पर ''एकमिषे विष्णुस्त्वा नयतु, द्वे उर्ज्जे त्रीणि रायस्योषाय चत्वारि मायोभवाय, पंच पंषुभ्यः षड् ऋतुभ्यः' ।

इस प्रकार भौतिक सुख-समृद्धि की प्राप्ति भी एक प्रकार से संस्कारों का मुख्य प्रयोजन था।

अब हम आपको कुछ आचार्यों के पास ले चलेंगे जिन्होंने भी संस्कारों के प्रयोजन के विषय में कुछ कहा है जिन्हें संक्षेप में उनके भावसौरभ की सुगन्ध आप तक चहुँचाने का प्रयत्न करता हूँ।

सांस्कृतिक प्रयोजन

संस्कारों के लोकप्रिय प्रयोजन को पूर्णतः स्वीकार करते हुए महान् लेखकों एवं धार्मिक विधिनिर्माताओं ने उनमें उच्चतर धर्म और पवित्रता का समावेश करने का प्रयास किया है। जिसमें सर्वप्रथम आचार्य मनु की चर्चा प्रस्तुत की जा रही है। आचार्य मनु कहते हैं कि गार्भहोम (गर्भाधान के अवसर पर किये जाने वाले होम आदि) जातकर्म चूडाकर्म (मुण्डन) और मौंजीबन्धन (उपनयन) संस्कार के अनुष्ठान से द्विजों के गर्भ तथा बीज सम्बन्धी दोष दूर हो जाते हैं।

गार्भैहोमैर्जातकर्म चौडमौंजी निबन्धनैः।
बैजिकं गार्भिकं चैनो द्विजानामपमृज्यते।।

आचार्य याज्ञवल्क्य भी ठीक इसी मत का समर्थन करते हैं।

प्राचीन लोगों का विश्वास था कि बीज और गर्भाधान, अपवित्र अर्थात् अशुद्ध होता है। इनकी पवित्रता जातकर्म आदि संस्कारों से ही सम्भव है। जैसा कि आज भी हमलोग संस्कार के शुभ संकल्प के सुअवसर पर ''बीजगर्भसमुद्भवैनोनिवर्हणोजातकर्मादिजन्य' इसी मूल वाक्य का पदान्तर प्रक्षेप के साथ पाठ करते हैं। इस प्रकार यह भी एक संस्कार का परम प्रयोजन था। आचार्य अंगिरा भी इसे प्रकारान्तर से इस प्रकार कहते हैं-

चित्रकर्म यथानेकैरंगैरुन्मील्यते षनैः।
ब्राह्मण्यमपि तद्वत् स्यात् संस्कारैर्विधिपूर्वकम्।।

अर्थात् चित्र निर्माण करते समय विविध रंगों की आवश्यकता होती है तत् तद् अंगों के निर्माण के लिए, ठीक उसी प्रकार विविध संस्कारों के द्वारा ही मानव की पूर्णता सम्पन्न होती है।

आचार्य शंख लिखते हैं कि संस्कारों से संस्कृत आठ आत्मगुणों से युक्त व्यक्ति ब्रह्मलोक में पहुँचकर ब्रह्मपद को प्राप्त कर लेता है। जिससे वह कभी गिरता नहीं है।

संस्कारैः संस्कृतः पूर्वैरुत्तरैरनुसंस्कृतः।
नित्यमष्टगुणैर्युक्तो ब्राह्मणो ब्राह्मलौकिकः।

ब्राह्मं पदमवाप्नोति यस्मान्नच्यवते पुनः।।

इससे यह सिद्ध होता है कि संस्कारों का प्रयोजन स्वर्ग तथा मोक्ष लाभ भी था। हो भी क्यों न, मोक्ष को तो जीवन का चरम उद्देश्य हमारे ऋषियों ने माना है। मोक्षप्राप्ति में पहले स्वस्वरूप ज्ञान, गुरु के 'तत्त्वमसि' आदि महावाक्यों के उपदेश से होता है, फिर 'अहं ब्रह्मास्मि' का बोध होता है इसके बाद जीव संसार से मुक्त होकर परमपद (मोक्ष) को प्राप्त करता है। क्योंकि मोक्ष में भी कारण, ज्ञान ही है। 'ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः'। यह ज्ञान ब्रह्मनिष्ठ गुरु के उपदेश से ही संभव है। अस्तु।

1.4.1 नैतिक प्रयोजन

हमारे भारतीय संस्कारों का एक नैतिक प्रयोजन भी है जिसकी आज के समाज में अत्यन्त आवश्यकता है।

आचार्य गौतम चालीस-संस्कारों को गिनाने के पश्चात् आत्मा के (मनुष्य) आठ गुणों का उल्लेख करते हैं - क. दया, ख. क्षमा, ग. अनुसूया, घ. शौच ङ. शम, च. उचित व्यवहार, छ. निरीहता, ज. निर्लोभता।

वे आगे कहते हैं के जिस व्यक्ति ने 40 संस्कारों का अनुष्ठान तो किया है, किन्तु आठ आत्मगुणों का जिसमें अभाव है उसके सारे 40 संस्कार निरर्थक हैं।

अर्थात् आचार्य गौतम के अनुसार संस्कारों का नैतिक प्रयोजन ही सर्वश्रेष्ठ है। जिसका अनुभव हम आज के समाज में अनुदिन करते हैं। व्यक्ति पढ़-लिखकर साक्षर तो हो जाता है पर नैतिक दायित्वों के अभाव में शुद्ध रूप से मनुष्य भी उसे नहीं कहा जा सकता है। इसलिए संस्कारों का परम प्रयोजन नैतिक गुणों की प्राप्ति से है जिन्हें विकसित करना वर्तमान समाज में अत्यन्त आवश्यक है। आज भी इन संस्कारों से हम नैतिक सद्गुणों की वृद्धि की अपेक्षा अवश्य ही रखते हैं।

1.4.2 व्यक्तित्व का निर्माण और विकास

आज देश को सबसे बड़ी आवश्कयता चरित्रवान्, व्यक्ति या समाज की है। उसे हम व्यक्तित्व के निर्माण की भी संज्ञा प्रकारान्तर से दे सकते हैं। वास्तव में देखा जाय तो इस देश में जितना ही संस्कारों का ह्रास हुआ, उतना ही चरित्र या व्यक्तित्व का पतन हुआ। वह दिन दूर नहीं जब लाखों व्यक्ति में कोई एक चरित्रवान् होगा। प्राचीन काल में आधुनिक सुविधा के अभाव में लोग भले ही वैभव सम्पन्न कम होते थे, साक्षर कम होते थे, लेकिन चरित्रहीन पथभ्रष्ट कम होते थे उनमें संस्कारों का ही प्रभाव था, जिससे कभी भी वे अपने स्थान से या अपने सिद्धान्त से हट नहीं सकते थे। तथा ये संस्कार उनके चरित्र की रक्षा सदैव करते थे।

आइये हम एक दो उदाहरण से इसे और भी स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं।

आप अनुभव करेंगे, संस्कार जीवन के प्रत्येक भाग को व्याप्त कर लेते हैं। ये संस्कार इस प्रकार व्यवस्थित किये गये है कि जीवन के आरम्भ से ही व्यक्ति उनके प्रभाव में आ जाता है। आदिकाल से ही संस्कार जीवन में मार्गदर्शन का कार्य करते थे। जो आयु बढ़ने के साथ व्यक्ति के जीवन की एक निर्दिष्ट दिशा की ओर ले जाते थे। उसका परिणाम होता था कि एक संस्कृत (संस्कारवान्) मनुष्य के लिए अनुशासित जीवन व्यतीत करना आवष्यक होता था, तथा उसकी शक्तियाँ सुनियोजित एवं सोद्देश्य धारा में प्रवहमान रहती थी जिससे वह चरित्रवान् होता था।

हम शास्त्रों में देखते हैं कि गर्भाधान संस्कार उस समय किया जाता था जब पति पत्नी दोनों शारीरिक दृष्टि से पूर्णतः स्वस्थ होते थे तथा परस्पर एक दूसरे के हृदय की बात जानते और दोनों में सन्तान प्राप्ति की वेगवती इच्छा होती थी। उस समय उनके समस्त विचार गर्भाधान की ओर केन्द्रित होते और होम के साथ वैदिकमन्त्रों के उच्चारण से शुद्ध तथा हितकर वातावरण तैयार कर लिया जाता था। स्त्री जब गर्भिणी होती तो दूषित शारीरिक व मानसिक प्रभावों से उसे बचाया जाता और उसके व्यवहार को इस प्रकार अनुशासित किया जाता था कि जिसका प्रभाव गर्भस्थ शिशु पर पड़े। यहाँ प्रसंगवश कश्यप अदिति के संवाद का एक सूक्ष्म भाग आप से कहने जा रहा हूँ। अन्यथा आप सोचेंगे कि प्राचीनकाल में गर्भिणी के लिए कौन सा अनुशासन था ? यह कथा पद्मपुराण में आयी है-

कश्यप अदिति से कहते हैं - गर्भिणी को अपवित्र स्थान चूने बालू आदि पर नहीं बैठना चाहिए। नदी में स्नान नहीं करना चाहिए। उसे मानसिक अशान्ति से सदैव अपने आपको बचाना चाहिए। उसे सदा निद्रालु या आलस्य नहीं करना चाहिए। अपने केश को खुले नहीं छोड़ने चाहिए। सोते समय उत्तर की ओर सिर नहीं करना चाहिए। अमंगल शब्दों का व्यवहार, अधिक हँसना सायंकाल में भोजन, आदि गर्भिणी को नहीं करना चाहिए। इन नियमों के पालन से ही जन्म लेने वाला बालक भी अपने जीवन में अनुशासित एवं चरित्रवान उत्पन्न होता है।

एक बात और अच्छी है कि, न केवल गर्भिणी के लिए ही ये नियम बनाये गये थें अपितु उसके पति के लिए भी कुछ नियम है जो अनिवार्यतः पालनीय होते थे। जैसे -

वपनं मैथुनं तीर्थं वर्जयेद् गर्भिणीपतिः।
श्राद्धं च सप्तमान्मासदूर्ध्वं चान्यत्र वेदवित्॥

अर्थात् क्षौरकर्म, मैथुन तीर्थ सेवन श्राद्ध आदि गर्भिणी के पति को नहीं करना चाहिए। अस्तु। इस प्रकार के नियम यदि आज भी लोग करें तो अवश्य ही अच्छी सन्तान उत्पन्न होगी। हाँ तो हमलोग संस्कारों की वर्तमान सन्दर्भ में उपयोगिता की चर्चा कर रहे थे, परन्तु कुछ दूर भी चले गये थे। आइए हम अपने विषय पर फिर से आते है।

शिशु के जन्म होने पर आयुष्य तथा प्रज्ञाजनन कृत्यों का अनुष्ठान किया जाता था और नवजात शिशु को पत्थर के समान दृढ एवं परशु की तरह शत्रुनाशक, बुद्धिमान तथा चरित्रवान् होने का आशीर्वाद दिया जाता था।

शैशव में प्रत्येक अवसर पर आशापूर्ण जीवन के प्रतीक आनन्द और उत्सव मनाये जाते थे। चूडाकरण या मुण्डन संस्कार के पश्चात् जब शिशु बालक की अवस्था में पहुँच जाता, तो उसे बिना ग्रन्थो के अर्थात् श्रुतिपरम्परा से अध्ययन तथा विद्यालय के कठोर नियन्त्रण में ही उसके कर्तव्यों तथा उत्तरदायित्वों से उसका परिचय कराया जाता था।

उपनयन तथा अन्य शिक्षा सम्बन्धी संस्कार ऐसी सांस्कृतिक अग्नि का काम करते थे, जिसमें तपाकर बालक के अपनी अभिलाषाओं इच्छाओं को पिघलाकर अभीष्ट साँचे में ढाल दिया जाता था और अनुशासित, किन्तु प्रगतिशील और परिष्कृतजीवन व्यतीत करने के लिए उसे तैयार किया जाता था।

इस प्रकार निःसन्देह संस्कारों में अनेक ऐसी विधियाँ हैं जिनकी उपयोगिता मेरे विश्वास पर ही अवलम्बित नहीं है। किन्तु संस्कारों के मूल में निहित सांस्कृतिक उद्देश्यों के माध्यम से व्यक्ति पर पड़ने वाले प्रभाव को आज भी कोई अस्वीकार नहीं कर सकता, भले ही किसी पूर्ण वैज्ञानिक व व्यवस्थित योजना में उनकी गणना न हो सके।

इन संस्कारों के नियमों को कठोर बनाने की अनिवार्यता का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को संस्कृत एवं चरित्र की दृष्टि से समाज का एक रूप विकास तथा उसे समान आदर्श से अनुप्राणित करना था। इस प्रयास में वे बहुत दूर तक सफल भी रहे। आज भी जिसका परिणाम कहीं यत्र तत्र देखने को मिलता है।

अब हम आपसे संस्कारों के एक और महत्त्व आध्यात्मिक महत्त्व की चर्चा भी अत्यन्त संक्षेप में करेंगे क्योंकि संस्कारों के आध्यात्मिक महत्त्व ही हमें जीवन में विशेष रूप से अनुभव होते हैं एवं धर्म पथ पर आरूढ होकर हमारे आगे की जीवन यात्रा को सुगम बनाते हैं।

आज भी संस्कार एक प्रकार से आध्यात्मिक शिक्षा की क्रमिक सीढ़ियों का कार्य करते हैं। इनके द्वारा संस्कृत व्यक्ति यह अनुभव करता था कि सम्पूर्ण जीवन वस्तुतः संस्कारमय है और सम्पूर्ण दैहिक क्रियाएँ आध्यात्मिक ध्येय से अनुप्राणित है। यही वह मार्ग था जिससे क्रियाशील सांसारिक जीवन का समन्वय आध्यात्मिक तथ्यों के साथ स्थापित किया जाता था। जीवन की इस पद्धति में शरीर और उसके कार्य बाधक नहीं, पूर्णता की प्राप्ति में सहायक हो सकते थे। इन संस्कारों के अनुष्ठानों से सात्विक भावों के उदय होते ही जीव मनुष्यभाव से देवभाव की ओर अग्रसर हो

जाता है, जो जीवन का वास्तविक सुगम पथ है।

इस प्रकार हमारे भारतीयों का यह दृढ विष्वास था कि सविधि संस्कारों के अनुष्ठान से वे जीव दैहिक बन्धन से मुक्त होकर मृत्युसागर को पार कर लेते हैं। शायद इसीलिए ईषोपनिषद् में कहा गया है-

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।

अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।।

अर्थात् जो विद्या तथा अविद्या दोनों को जानता है, वह अविद्या से मृत्यु को पारकर विद्या से अमरत्व को प्राप्त कर लेता है। यहाँ अविद्या का अर्थ संस्कार, यज्ञादि अनुष्ठानों से है। तथा विद्या का तात्पर्य देवता ज्ञानरूपाविद्या।

इसका सार यह है कि (अविद्या) अर्थात् कर्म से चरित्र की शुद्धि और विद्या अर्थात् ज्ञानेन्द्रिय मन तथा बुद्धि की वृत्तियों से सदसद्विवेक, उपासना, श्रवण, मनन आदि के द्वारा अन्तःकरण की शुद्धि को प्राप्त कर जीव अमृतत्व को प्राप्त करता है। चरित्रशुद्धि तथा अन्तःकरण की शुद्धि होने पर ही ज्ञानोपलब्धि होती है जिससे जीव संसार से मुक्त होकर ब्रह्मभाव को प्राप्त करता है।

इस प्रकार यहाँ विविध संस्कारों से व्यक्ति की चारित्रिक शुद्धि तथा अन्तःकरण की शुद्धि होती है। यही इसका आध्यात्मिक महत्त्व है।

यहाँ आप संस्कारों के विषय में बहुत कुछ जान चुके हैं क्यों न आपसे कुछ प्रश्न कर लिया जाय क्योंकि आप भी बताने के लिए उत्सुक नजर आ रहे हैं तो लीजिए आपके लिए कुछ बोधप्रश्न नीचे दिये जा रहे हैं, जिनका उत्तर आपको देना है-

बोधप्रश्न

1. संस्कारों के मूल स्रोत कौन से ग्रन्थ हैं?
2. संस्कार शब्द में कौन सा उपसर्ग है?
3. 'आत्मव्यंजक शक्ति ही संस्कार है' यह मत किस शास्त्र का है?
4. 'कुमारसंभव' ग्रन्थ में संस्कार शब्द का क्या अर्थ है?
5. संस्कार में कौन सी तीन बातें अतिमहत्त्वपूर्ण की हैं?

1.5 संस्कारों की संख्या

संस्कारों के महत्त्व ज्ञान के बाद, इन संस्कारों की संख्या के विषय में भी जानना आवश्यक है। क्योंकि शास्त्रों में संस्कारों की संख्या को लेकर भिन्न-भिन्न मत देखे जाते हैं।

आइये! हम संस्कारों की संख्या के विषय में शास्त्रों का मत जानते हैं।

यह तो हम जानते ही हैं कि मुख्य रूप से संस्कारों का उद्भव गृह्यसूत्रों से हुआ है। अतः इसी क्रम से सर्वप्रथम आश्वलायन गृह्यसूत्र में प्रवेश करते हैं। यह आश्वलायन गृह्यसूत्र ऋग्वेद से सम्बद्ध हैं। इसमें चार अध्याय हैं, जिनमें संस्कारों, कृषिकर्मों एवं पितृमेघ आदि धार्मिक कृत्यों का प्रधान रूप से वर्णन मिलता है। इसके अतिरिक्त अन्य भी गृह्यसूत्र ऋग्वेद से सम्बद्ध है। परन्तु संस्कारों की चर्चा अल्पमात्रा में ही वहाँ देखी जाती है। अतः आश्वलायन गृह्यसूत्र में 11 संस्कारों का वर्णन मिलता है जो निम्नलिखित हैं।

1. विवाह, 2. गर्भाधान, 3. पुंसवन, 4. सीमन्तोन्नयन, 5. जातकर्म, 6. नामकरण, 7. चूडाकरण, 8. अन्नप्राशन, 9. उपनयन, 10. समावर्तन, 11. अन्त्येष्टि।

बौधायन गृह्यसूत्र के अनुसार

यह गृह्यसूत्र कृष्णयजुर्वेद से सम्बद्ध है। इस गृह्यसूत्र में 13 संस्कारों का वर्णन मिलता है। जो निम्नलिखित है-

1. विवाह, 2. गर्भाधान, 3. पुंसवन, 4. सीमन्तोन्नयन, 5. जातकर्म, 6. नामकरण, 7. उपनिष्क्रमण, 8. अन्नप्राशन, 9. चूडाकर्म, 10. कर्णवेध, 11. उपनयन, 12. समावर्तन, 13. पितृमेघ।

यह प्रायः दक्षिण भारत में प्रसिद्ध है। जो कृष्णयजुर्वेदी है उनके लिए ये संस्कार हैं। उसी प्रकार आश्वलायन गृह्यसूत्र में वर्णित संस्कार ऋग्वेदीय शाखा वालों के लिए है, परन्तु हमलोगों के यहाँ उत्तरभारत में शुक्लयजुर्वेद की ही प्रधानता है। जिसके गृह्यसूत्र का नाम पारस्करगृह्यसूत्र हैं। हमलोगों का यही एक गृह्यसूत्र है। इसी गृह्यसूत्र में वर्णित संस्कारों का अनुपालन हमलोग अक्षरशः करते हैं। अतः अन्य गृह्यसूत्रों से हमारा कोई विशेष प्रयोजन यहाँ नहीं है मात्र जानकारी के लिए आपको यहाँ दिखाया गया है। अतः हमें तो पारस्कर गृह्यसूत्र के अनुसार ही संस्कार करना या कराना चाहिए। यह पहले भी होता था, आज भी हो रहा है, जिसके लिए आचार्यों द्वारा पद्धतियाँ बना दी गई है, जिनका अनुपालन कर्मकाण्डियों या पुरोहितों के द्वारा समाज में हो रहा है।

पारस्कर गृह्यसूत्र के रचयिता महर्षि पारस्कर है। यह गृह्यसूत्र, शुक्लयजुर्वेद के दोनों शाखाओं (काण्व एवं माध्यन्दिन) का प्रतिनिधित्व करता है। यह सम्पूर्ण ग्रन्थ तीन काण्डों में विभक्त है। पुनः प्रत्येक काण्ड का अवान्तर विभाजन कण्डिकाओं में है। कण्डिकाओं की कुल संख्या 51 हैं।

इसमें प्रधान रूप से 13 संस्कारों का वर्णन प्राप्त होता है। जो निम्नलिखित हैं।

1. विवाह, 2. गर्भाधान, 3. पुंसवन, 4. सीमन्तोन्नयन, 5. जातकर्म, 6. नामकरण, 7. निष्क्रमण, 8. अन्नप्राशन, 9. चूडाकर्म, 10. उपनयन, 11. केशान्त, 12. समावर्तन, 13. अन्त्येष्टि।

ये जितने संस्कार विभिन्न गृह्यसूत्रों में बताये गये हैं वे सब सूत्रषैली में निबद्ध हैं। इनके विशेष नियम धर्मसूत्रों में भी यत्र- तत्र कहे गये हैं। अब आप पूछेंगे कि धर्म सूत्र क्या है?

कल्पसूत्र या कल्पशास्त्र (जो वेद के हस्त रूप अंग है, हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते)। वेद के हस्तस्थानिक अंग है। इसीलिए कल्पशास्त्र की परिभाषा करते हुए आचार्य कहते हैं - 'कल्पो वेदविहितानां कर्मणामानुपूर्व्येण कल्पनाशास्त्रम्' अर्थात् जिनमें वेदविहित कर्मों का सुव्यवस्थित रूप से वर्णन हैं उसे कल्पशास्त्र कहते हैं।

इसी कल्पशास्त्र का वर्गीकरण प्रमुख रूप से चार श्रेणियों में किया गया है - श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र और शुल्बसूत्र।

हम यहाँ गृह्यसूत्र में संस्कारों पर चर्चा आपसे की जो सूत्ररूप में निबद्ध हैं। इसके बाद कुछ धर्मसूत्रों की भी यात्रा हम करेंगे। पहले गृह्यसूत्र एवं धर्मसूत्र का भेद समझे।

विषयवस्तु एवं प्रकरणगत साम्य देखकर दोनों (गृह्यसूत्र एवं धर्मसूत्र) में घनिष्ठ सम्बन्ध और अभिन्नता जैसी प्रतीति होती है किन्तु वस्तुतः इनमें सूक्ष्म अन्तर है। गृह्यसूत्र प्रायः गृहस्थजीवन की चर्चा से सम्बद्ध है इनमें मानवीय आचारों, अधिकारों, कर्तव्यों, उत्तरदायित्वों की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया है। इसके विपरीत धर्मसूत्रकारों का मुख्य उद्देश्य है आचार, विधि, नियम, क्रिया एवं संस्कारों की विधिवत् चर्चा करना। यद्यपि धर्मसूत्रों में भी विवाह प्रभृति संस्कारों, अनध्याय दिनों, श्राद्ध, मधुपर्क आदि के विषय में नियम पाये जाते हैं, तथापि गृह्यजीवन के क्रियाकलापों की चर्चा बहुत न्यून है।

अब हम धर्मसूत्रगत कुछ संस्कारों की संख्या पर विचार करेंगे।

गौतमधर्मसूत्र में आठ आत्मगुणों के साथ 40 संस्कारों का वर्णन है। (चत्वारिंशत् संस्काराः अष्टौ आत्मगुणाः) जो अधोलिखित है-

गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चौल, उपनयन, चार वेदव्रत, स्नान, सहधर्मचारिणी संयोग, 5 महायज्ञ, सात पाकयज्ञ (अष्टका पार्वण श्राद्ध श्रावणी आग्रहायणी चैत्री आष्वयुजी) सात हविर्यज्ञाः (अग्न्याधेय, अग्निहोत्र, दर्षपूर्णमास, चातुर्मास्य, आग्रहायणेष्टि, निरुढपषुबन्ध, सौत्रामणी) सप्तसोमसंस्था (अग्निष्टोम, अत्यग्निष्टोम, उक्थ, षोडषी, वाजपेय, अतिरात्र, आप्तोर्याम) इत्येते चत्वारिंषत् संस्काराः। यस्यैते चत्वारिंशत् संस्कारा अष्टावात्मगुणाष्च स ब्राह्मणो ब्रह्मणे सायुज्यमाप्नोति।

इन चालीस संस्कारों में आपको सन्देह होगा कि कुछ तो संस्कार है, परन्तु कुछ याग विशेष है तो क्या याग एवं संस्कार एक ही वस्तु है। या याग एवं संस्कार में कोई अन्तर है? इसके समाधान

के लिए स्मृतिग्रन्थों को देखना चाहिए। संस्कार दो प्रकार के हैं - ब्राह्म एवं दैव। इसकी व्याख्या अभी किया जा रहा है।

स्मृति ग्रन्थों में संस्कारों की संख्या

हारीत स्मृति के अनुसार - दो प्रकार के संस्कार कहे गये हैं 1. ब्राह्म 2. दैव। गर्भाधान आदि ब्राह्मसंस्कार हैं तथा (सप्तपाकसंस्था आदि याग) दैवसंस्कार हैं।

आगे चलकर स्मृतियों में यज्ञों का समावेश दैवसंस्कारों के अन्तर्गत माना गया। क्योंकि न केवल ब्राह्म (गर्भाधानादि) संस्कारों को ही यथार्थ संस्कार समझना चाहिए। निःसन्देह यज्ञ भी परोक्षरूप से पवित्र करने वाले संस्कार स्वरूप माने जाते हैं। यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्। किन्तु उनका (यागों) मुख्य प्रयोजन था देवों की आराधना, जबकि संस्कारों का प्रधान ध्येय संस्कार्य व्यक्ति के व्यक्तित्व तथा जीवन को संस्कृत करना। जैसा कि **मनु ने कहा है - 'संस्कारार्थं शरीरस्य'।**

बाद में चलकर स्मृतियों में संस्कार शब्द का प्रयोग केवल उन्हीं धार्मिक कृत्यों के अर्थ में किया गया है, जिनका अनुष्ठान व्यक्ति के व्यक्तित्व की षुद्धि के लिए किया जाता था। आचार्य मनु के अनुसार भी गर्भाधान से लेकर मृत्युपर्यन्त 13 संस्कारों का वर्णन मिलता है। जो निम्नलिखित है - गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, उपनयन, केशान्त, समावर्तन, विवाह।

आचार्य अंगिरा के अनुसार संस्कारों की संख्या 25 होनी चाहिए। यथा-

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो बलिरेव च।
जातकृत्यं नामकर्म निष्क्रमोऽन्नाषनं परम्॥
चौलकर्मोपनयनं तद्व्रतानां चतुष्टयम्।
स्नानोद्वाहौ चाग्रयणमष्टकाष्च यथायथम्॥
श्रावण्यामाष्वयुज्यां च मार्गषीर्ष्यां च पार्वणम्।
उत्सर्गष्चाप्युपाकर्म महायज्ञाष्च नित्यषः॥
संस्कारा नियता ह्येते ब्राह्मणस्य विषेषतः।
पंचविंशति संस्कारैः संस्कृता ये द्विजातयः॥

ते पवित्राश्च योग्याश्च श्राद्धादिषु सुयन्त्रिताः इति।

इस प्रकार महर्षि अंगिरा के अनुसार भी सामान्यतः संस्कारों में कुछ याग विशेषों को समाविष्ट कर संस्कारों की 25 संख्या निर्धारित की गई है। अस्तु।

संस्कारों की संख्या के क्रम में हमें अभी तक 11, 13, 25, 40 आदि संख्या गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र, स्मृतिग्रन्थों के आधार पर हमने निर्धारित की, जिनका हमने सप्रमाण नाम गिनाये । परन्तु वर्तमान समाज में 16 संस्कारों की प्रसिद्धि प्रायः लोगों से सुनी जाती है। उसका मूल क्या है ? इसके उत्तर में हम आपको व्यास स्मृति की ओर ले चलते हैं।

महर्षि व्यास के अनुसार संस्कार मुख्य रूप से सोलह (16) है।

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च।
नामक्रिया निष्क्रमोऽन्नप्राषनं वपनक्रिया॥
कर्णवेधो व्रतादेषो वेदारम्भ क्रियाविधिः।
केशान्तः स्नान उद्वाहो विवाहोऽग्नि परिग्रहः॥
त्रेताग्नि संग्रहश्चैव संस्काराः षोडशस्मृताः।

इस प्रकार संस्कारों की संख्या में भेद होने पर यह कैसे निश्चित होगा कि कितने संस्कार है तथा हमें कितनी करनी चाहिए? इस प्रश्न के उत्तर के लिए महर्षि अंगिरा का यह वचन अत्यन्त प्रामाणिक है।

स्वे स्वे गृहे यथा प्रोक्तास्तथा संस्कृतयोऽखिलाः।
कर्तव्या भूतिकामेन नान्यथा भूतिमृच्छति॥

अर्थात् अपने अपने गोत्र परम्परा शाखा के अनुसार अपने अपने गृह्यसूत्र में जितने संस्कार वर्णित है उन्हीं संस्कारों को करना चाहिए। इसका अभिप्राय यह है कि शुक्लयजुर्वेद के माध्यन्दिन शाखा वाले के द्विजातियों को पारस्करगृह्यसूत्र के अनुसार 13 संस्कार करना चाहिए। अतः मुख्य रूप से हमारे यहाँ 13 संस्कार सरलतया आचार्यों के द्वारा सम्पन्न कराये जाते हैं। यदि हम दूसरी शाखा के अनुसार 40, 11, 25 आदि संस्कारों को करते हैं तो हमारी हानि होगी। इसके लिए आचार्य वसिष्ठ ने स्पष्ट ही लिखा है-

न जातु परशाखोक्तं बुधः कर्म समाचरेत्।
आचरन् परशाखोक्तं शाखारण्डः स उच्यते॥

अर्थात् जो अपनी शाखा के संस्कारों को छोड़कर दूसरे की शाखा में वर्णित संस्कारों को करता या कराता है वह शाखारण्ड दोष युक्त हो जाता है। अर्थात् कुल परम्परा प्राप्त शाखा के विरुद्ध नहीं करना चाहिए। इससे यही बात स्पष्ट हुई कि उत्तर भारत में प्रसिद्ध शुक्लयजुर्वेद की माध्यन्दिनशाखा वालों को 13 संस्कार ही करना चाहिए। जिसका विधान पारस्करगृह्यसूत्र में हुआ है। भिन्न भिन्न (शाखा भेद) वेद शाखा के अनुसार ही आचार्यों द्वारा कहा गया संस्कारों की संख्या में भेद है। अतः अपनी कुल परम्परा प्राप्त वेदशा शाखा के अनुसार संस्कार करना चाहिए। प्रसंग में एक बात और जान

लीजिए कि किनका किनका संस्कार होना चाहिए अर्थात् इन संस्कारों के अधिकारी कौन लोग है। इसके लिए याज्ञवल्क्य का वचन प्रमाणरूप में उपस्थित करता हूँ -

ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रा वर्णास्त्वाद्यास्त्रयो द्विजाः।

निषेकाद्याः ष्मषानान्तास्तेषां वै मन्त्रतः क्रिया।।

अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैष्य को द्विज कहा जाता है। अतः इनका गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक का संस्कार मन्त्रपाठपूर्वक करना चाहिए । एवं शूद्र तथा स्त्रियों का जाकर्मादि संस्कार मन्त्र रहित करना चाहिए । अर्थात् ये स्वयं संस्कृत होते हैं इनके संस्कार की आवश्यकता नहीं है । रही बात मन्त्रपाठ की तो शास्त्र आदेश देता है-'तूष्णीमेताः क्रियाः स्त्रीणां विवाहस्तु समन्त्रकः'। लिखा गया है ।

स्त्रियों का विवाह मन्त्रसहित तथा शेष संस्कार कुल परम्परानुसार मन्त्ररहित होंगे ।

दूसरी बात यह है कि यदि किसी को गन्ना चूसने के लिए दिया जाय तो पहले यह देखा जाता है कि गन्ना सूनने में वह समर्थ है कि नहीं? यदि गन्ना किसी वृद्ध (दन्तविहीन) को दे दिया जाय तो देने वाले की ही हँसी होगी। ऐसा ही विचार कर लोक में भी सामर्थ्यहीन व्यक्ति के लिए गन्ने से ही बनी चीनी के रस से युक्त गुलाब जामुन खिलाते हैं तो वह उसे अच्छा लगता है। उसी प्रकार महर्षियों के द्वारा भी धनादि से सामर्थ्यहीन अत्यन्त कोमल आदि भावों को देखकर ही दयावश स्त्रियों एवं शूद्रों के लिए इतने जटिल कर्कश, अधिक धन व्ययजन्य संस्कारों को करने में छूट दी गई है। अर्थात् ये स्वयं में संस्कृत है। इनके संस्कार की कोई आवश्यकता नहीं है। अस्तु!

अब तक हम संस्कारों की संख्या के विषय में भिन्न-भिन्न ऋषियों के अनुसार जानकारी प्राप्त कर चुके हैं, साथ ही इनमें मतभेद क्यों है? इसका भी समाधान आप जान चुके हैं। संस्कार के अधिकारी कौन-कौन लोग है? एवं मन्त्रों के साथ किनका संस्कार होगा एवं बिना मंत्र के भी कुछ लोगों का संस्कार करने की आज्ञा शास्त्र देता है क्यों? इन सभी विषयों पर ऊहापोह के साथ संक्षिप्त रूप से यहाँ चर्चा की गयी है।

अब आप से कुछ प्रश्न पूछे जायेंगे जिसका उत्तर आपको देना है। ये प्रश्न है-

बोध-प्रश्न

1. आश्वलायन गृह्यसूत्र किस वेद से सम्बद्ध है?
2. आश्वलायन गृह्यसूत्र में कितने संस्कारों का वर्णन मिलता है?
3. बौधायन गृह्यसूत्र किस वेद से सम्बद्ध है?
4. 13 संस्कारों का वर्णन किस गृह्यसूत्र में प्राप्त होता है?

5. शुक्लयजुर्वेद का कौन सा गृह्यसूत्र है?
6. किसके मत में 16 संस्कार वर्णित है?
7. पारस्कर गृह्यसूत्र में कितने संस्कार वर्णित है?

1.6 सारांश

इस संस्कार विमर्श नामक इकाई में संस्कार के मूलस्रोत एवं संस्कार शब्द की व्युत्पत्ति तथा संस्कार शब्द का प्रयोग एवं अर्थ विभिन्न शास्त्रों में किस किस अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, उसका सोदाहरण स्वरूप परिचय आपके सामने प्रस्तुत किया गया है।

इसी क्रम में संस्कार के वैज्ञानिक पक्षों को ध्यान में रखते हुए उसके तीन महत्त्वपूर्ण अर्थ आपको बताये गये, क. दोषमार्जन, ख. अतिशयाधान, ग. हीनांगपूर्ति।

इसके बाद हम आगे संस्कारों की प्रयोजन की तरफ बढ़ते हैं और भिन्न-भिन्न प्रयोजनों को दर्शाते हुए मुख्य प्रयोजन पर भी कुछ चर्चा की गई।

आज के समय में जो अत्यन्त आवश्यक प्रयोजन है वह चरित्र निर्माण एवं नैतिक ज्ञान का जो संस्कार से ही सुलभ है। इसके साथ ही संस्कारों के आध्यात्मिक प्रयोजन पर भी दृष्टि डाली गई। एवं बोध प्रश्न के साथ हुए पहले खण्ड का समापन एवं दूसरे उपखण्ड में संस्कारों की संख्या से सम्बद्ध बातें भिन्न-भिन्न गृह्यसूत्रों, धर्मसूत्रों, स्मृतियों के आधार पर आपके सामने रखी गई। साथ ही संस्कार के अधिकारी आदि की भी चर्चा करते हुए अन्त में बोधप्रश्न के साथ इस उपखण्ड का समापन होता है।

1.7 शब्दावली

1. धातु = क्रिया जैसे भू, पठ्, गम् आदि
2. पुरोडाश = श्रौतयाग में दिया जाने वाला हवि विशेष
3. भाजन = बरतन या पात्र
4. वपनम् = क्षौर कर्म कराना
5. संज्ञा = नाम
6. अर्थवाद = विधिवाक्यों की प्रषंसा करने वाले वाक्य
7. विट् = वैष्य
8. ब्रह्म = ब्राह्मण

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उपखण्ड - 1 के प्रश्नोत्तर

1. संस्कारों के मूलस्रोत प्रधानरूप से गृह्यसूत्र हैं।
2. संस्कार शब्द में सम् उपसर्ग है।
3. न्यायशास्त्र के विद्वानों का (नैयायिकों का)
4. कुमारसंभव में संस्कार शब्द का अर्थ शुद्धि (पवित्रता) है।
5. संस्कार में अधोलिखित तीन बातें अति महत्त्वपूर्ण की है-

   (क) दोषमार्जन

   (ख)अतिशयाधान

   (ग) हीनांगपूर्ति

उपखण्ड - 2 के प्रश्नोत्तर

1. आश्वलायन गृह्यसूत्र ऋग्वेद से सम्बद्ध है।
2. आश्वलायन गृह्यसूत्र में ग्यारह (11) संस्कारों का वर्णन है।
3. बौधायन गृह्यसूत्र कृष्णयजुर्वेद से सम्बद्ध है।
4. 13 संस्कारों का वर्णन बौधायन गृह्यसूत्र में है।
5. शुक्लयजुर्वेद का गृह्यसूत्र पारस्करगृह्यसूत्र है।
6. महर्षि व्यास के मत में 16 संस्कार है।
7. पारस्करगृह्यसूत्र में 13 संस्कार वर्णित है।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थनाम	**लेखक**	**प्रकाशन**
हिन्दूसंस्कार	डॉ. राजबलीपाण्डेय	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
पारस्करगृह्यसूत्र	आचार्य पारस्कर सम्पादक डॉ. सुधाकर मालवीय	चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
वीरमित्रोदय	मित्रमिश्र	चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
मनुस्मृति	आचार्यमनु	श्रीकृष्णदास मुम्बई
याज्ञवल्क्यस्मृति	आचार्ययाज्ञवल्क्य	श्रीकृष्णदास मुम्बई
भगवन्तभास्कर	श्रीनीलकण्ठभट्ट	श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रिसंस्कृतविद्यापीठम् नवदेहली

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. संस्कारों के प्रयोजनों को विस्तार से लिखें।
2. संस्कारों की संख्या के विषय में विविध आचार्यों के मतों का उल्लेख करें।
3. संस्कारों के महत्त्व पर एक निबन्ध लिखें।

इकाई – 2 जातकर्म एवं नामकरण

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई से पूर्व की इकाई में आपको संस्कारों के विषय में बहुत कुछ बता दिया गया है, जिसमें संस्कारों का प्रयोजन, अधिकारी संस्कारों की संख्या आदि विषय सप्रमाण सम्मिलित हैं। संस्कारों की संख्या में मतभेद का सकारण समाधान भी प्रस्तुत किया गया है । इसके साथ ही आज के समय में स्वगृह्यसूत्रानुसार कितने संस्कार अपेक्षित है जिन्हें आवश्यक रूप से करना ही चाहिए यह बात भी आपको विदित हो गयी है।

प्रस्तुत इस खण्ड में जातकर्म एवं नामकरण संस्कार के विषय में आप अध्ययन करेंगे, तथा साथ ही इसकी विधि क्या है? अर्थात् कैसे शास्त्रीय विधि से सम्पन्न होता है, इसे भी आप जानेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जातकर्म संस्कार एवं नामकरण संस्कार के महत्त्व, प्रयोजन एवं विधि को आप अच्छी तरह समझ जायेंगे। ये उपरोक्त संस्कार आज के समाज में कदाचित् ही कहीं होते दिखाई देते हैं, अन्यथा इससे लोग प्रायः विमुख होते जा रहे हैं। इसमें एक कारण यह भी है कि इसके महत्त्व को लोग जानते ही नहीं है, दूसरी बात है कि इसकी सविधि (प्रयोग ज्ञान) के ज्ञान का लोगों में अभाव है। परन्तु आप तो इसके महत्त्व को एवं प्रयोजन को अच्छी तरह जानते हैं। रही बात प्रयोग ज्ञान की तो अब आपको प्रयोग की विधि भी बताने जा रहा हूँ। जिससे समाज में आप भली-भाँति विश्वासपूर्वक शास्त्रीय रीति से कहीं भी विद्वानों के बीच में अच्छी तरह इस संस्कार को सम्पन्न कर सकते हैं या यजमान के यहाँ करा सकते हैं जिससे समाज को एक नई दिशा प्राप्त होगी तथा लोग धार्मिक होकर सुख एवं शान्ति का अनुभव करेंगे।

2.3 जातकर्म संस्कार

वैसे आप जानते हैं कि संस्कारों का प्रधानरूप से प्रादुर्भाव गृह्यसूत्रों से हुआ है, साथ ही इसकी विधि भी सूत्र-रूप में वहीं वर्णित है। परन्तु जातकर्म संस्कार का संक्षिप्त-संकेत सर्वप्रथम अथर्ववेद में एक सूक्त के रूप में भी देखी जाती है जिसमें, सरल तथा सुरक्षित प्रसव के लिए देवताओं से प्रार्थनाएँ की गई हैं तथा उपचार भी वर्णित है। स्पष्टता के लिए एक, दो उदाहरण, मन्त्रों के, हिन्दी अनुवाद के रूप में आपके सामने रखा जा रहा है।

हे पूषन्! प्रसूति के इस अवसर पर यह नारी भली-भाँति शिशु का प्रसव करे। स्त्री के शरीर के सन्धिस्थान (पर्वाणि) प्रसव करने के लिए ढीले हो जाएँ।

जिस प्रकार वायु, मन तथा पक्षी बाहर निकलकर उड़ने लगते हैं उसी प्रकार दस मास पर्यन्त गर्भ में रहने वाला शिशु (दशमास्या) तू जरायु के साथ बाहर आ जाओ।

इन मंत्रों से यही अनुभव हो रहा है कि अति प्राचीनकाल में भी साधारण मानव-हृदय सद्यःप्रसूता माता के दृश्य को देखकर स्वभावतः विचलित हो गया होगा। अपनी पत्नी के साथ सर्वविध सुखोपभोग करने वाले पुरुष के लिए इस कठिन समय में प्राकृत संकटों से स्त्री एवं शिशु की रक्षा के लिए प्रयत्नशील होना स्वाभाविक ही था। इस प्रकार जातकर्म संस्कार का प्राकृतिक आधार प्रसवजन्य शारीरिक आवश्कताओं तथा परिस्थितियों में निहित था।

अब हम जातकर्म संस्कार के पहले की सावधानी या विधिविधान की चर्चा प्रसंगतः करते हैं।

परवर्ती ग्रन्थों से यह ज्ञात होता है कि प्रसव के लिए तैयारियाँ शिशु के जन्म के एक मास पूर्व ही आरम्भ हो जाती थीं। अर्थात् जिस मास में प्रसव आसन्न हो उसके पूर्व ही विशेष प्रबन्ध करना चाहिए। जैसा कि वीरमित्रोदय ग्रन्थ में लिखा है -

आसन्न प्रसवे मासि कुर्याच्चैव विशेषत:।

इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम-कार्य घर में उपयुक्त कमरे का चुनाव था, जिसे सूतिकागृह हमलोग कहते हैं।

सूतिकागृह

भारतीय संस्कृति में सूतिकागृह को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। इस घर में प्रसूतिका (स्त्री) एवं उसके बच्चे को रहना होता है। इसलिए यह अत्यन्त विचारणीय है कि, कुछ दिनों तक कौन सा घर प्रसूति का बनाया जाय, जहाँ किसी प्रकार की असुविधा न हो।

आचार्य वसिष्ठ तो सूतिकाभवन निर्माण में अपनी स्वेच्छा व्यक्त करते हैं। परन्तु अन्य आचार्य 'नैर्ऋत्यां सूतिकागृहम्' कहते हैं। अर्थात् शास्त्रों में पश्चित एवं दक्षिण के बीच में सूतिकागृह बनाने का निर्देश मिलता है।

वास्तुविशारदों के अनुसार तो समतलभवन पर निर्मितभवन का दरवाजा पूर्व या उत्तर दिशा की ओर होना चाहिए। यही पक्ष प्रायः आचरण में भी मिलते हैं।

आचार्य शंख के अनुसार सुमधुर वाद्यों की ध्वनि, शुभ सूचक मंत्रों के उच्चारण के साथ देवताओं, ब्राह्मणों एवं गौओं की पूजा करके एक दो दिन पूर्व प्रसूतिका को प्रसूतिकागृह में प्रवेश कराना चाहिए।

सुभूमौ निर्मितं रम्यं वास्तुविद्या विशारदैः।

प्राग्द्वारमुत्तरद्वारमथवा सुदृढं शुभम्।।

इसके साथ में अन्य स्त्रियों को भी साथ में रहने का निर्देश मिलता है, जो शिशुओं को जन्म दे चुकी हो और कठिनाईयों को सहन करने में सक्षम हो। घर में अग्नि, जल, यष्टि, दीपक, शस्त्र, दण्ड एवं सरसों के दाने (बीज) रखे जाते थे।

2.3.1 जातकर्म संस्कार का प्रयोजन

एक बात और यहाँ ध्यान देना चाहिए कि कुछ संस्कार बालक के जन्म से पहले होते हैं। जैसे-गर्भाधान, पुंसवन तथा सीमन्तोन्नयन। यह जातकर्म संस्कार जन्मोत्तर संस्कारों में प्रथम संस्कार है। अर्थात् यह बालक के जन्म के बाद सबसे पहला संस्कार है। इसे सोष्यन्तीकर्म की संज्ञा ऋषियों ने दी है। ऐसा प्रतीत होता है कि पारस्कर के मत से प्रसवशूल के समय से ही जातकर्म संस्कार का प्रारम्भ हो जाता है। क्योंकि सूत्रकार लिखते हैं - 'सोष्यन्तीमद्भिरभ्युक्षति एजतु दशमास्य इति प्राग्यस्यै त इति'।

यहाँ सोष्यन्ती का अर्थ प्रसव की पीड़ा से विकल स्त्री को कहा गया है। इस स्त्री को जल से 'एजतु दशमास्य' इस मन्त्र को पढ़कर पति अभ्युक्षण (जल से सिंचन) करता है।

शास्त्रों में प्रसव वेदना से मुक्ति हेतु अनेक प्रकार के यथोचित कर्मों का निरूपण भी किया गया है जो आवश्यक है। क्योंकि इसमें असावधानी गंभीर एवं भयानक परिणाम को देने वाली हो सकती है। इसीलिए सूत्रकार आचार्य पारस्कर यहीं से जातकर्म संस्कार का प्रारम्भ करते हैं। इसके आगे का विषय प्रयोग में आपको बताया जायेगा। अस्तु!

अब हम जातकर्म के प्रयोजन के सन्दर्भ एक दो बात आपको बताते हैं। इसके मुख्य उद्देश्य को बताते हुए महर्षि भृगु कहते हैं-

जातकर्म क्रियां कुर्यात् पुत्रायुः श्रीविवृद्धये
ग्रहदोष विनाषाय सूतिकाऽषुभविच्छिदे
कुमार ग्रहनाषाय पुंसां सत्वविवृद्धये।।

(1) (शहद**,** घी एवं स्वर्णभस्म चटाते हुए) जातकर्म संस्कार **(2)** नामकरण संस्कार

यहाँ स्पष्ट है कि जातकर्म संस्कार करने से पुत्र की आयु एवं श्री की वृद्धि होती है, ग्रहदोषों का विनाश होता है। तथा सूतिका स्त्री के लिए यह शुभ फल प्रदान करता है।

वस्तुतः जातकर्म संस्कार जच्चा-बच्चा को सुखी रखने का संस्कार है। महर्षि भृगु का विचार यही है कि पुत्र के आयु की वृद्धि इसी संस्कार से होती है। बात भी सही है क्योंकि प्रत्येक माता-पिता का ध्येय यही होता है कि अपने पुत्र की आयु एवं श्री बढ़े। अस्तु!

2.3.2 जातकर्म में होने वाले मुख्य कर्म -

मेधाजनन

जातकर्म संस्कार का यह प्रथम कृत्य है जिसमें घी एवं षहद बच्चे को खिलाने की परम्परा गृह्यसूत्रों में देखी जाती है। यह अत्यन्त प्राचीन परम्परा है। वस्तुतः कारण यह है कि जब बच्चा माँ के पेट में रहता है तो उसकी आँखों में एक प्रकार का मल जमा रहता है जिसे मैकोनियम कहते हैं। डाक्टर लोग उसको निकालने के लिए एरण्ड का तेल प्रयोग में लाते हैं लेकिन वह स्वाद में तीखा होने के कारण बच्चे द्वारा सुगमता से ग्रहण नहीं किया जाता वहाँ पर घी एवं मधु स्वाद में भी ग्राह्य होता है। चरकसंहिता में लिखा है कि घी एवं षहद के (विषम भाग) सेवन से मैकोनियम बाहर आ

जाता है। तथा बच्चा देखने लगता है। घी एवं षहद का सुवर्ण षलाका से भक्षण कराने का विधान षास्त्रों में आता है। आचार्य सुश्रुत इसके साथ सुवर्णभस्म भी मिलाकर खिलाने की बात करते हैं। जैसे-

'जातकर्मणि कृते मधुसर्पिः अनन्तचूर्णम् अंगुल्या अनामिकया लेहयेत्'

अर्थात् अनामिका अंगुली से मधु, घृत तथा सुवर्णभस्म बालक को मन्त्र पाठपूर्वक चटायें। वैसे ही सुवर्ण में बहुत सारे औषधीय गुण है फिर भी सुवर्णभस्म खाने से षरीर के समस्त विष अपने आप दूर हो जाते हैं। घी में भी निम्नलिखित गुण पाये जाते हैं। मेधावृद्धि, मधुर, षिरोवेदना को दूर करनेवाला, ज्वरनाषक बुद्धि, प्रज्ञा, तेज, वीर्य एवं आयु का वर्धक होता है।

जातकर्म का दूसरा प्रधान कर्म आयुष्यवर्द्धन करना -

इस कर्म में पिता, जातक के आयुष्य (आयु) की वृद्धि के लिए यह कर्म करता है, जिसका विधान पारस्करगृह्यसूत्र में प्रथम काण्ड के 16वीं कण्डिका में है। 'अथाऽस्यायुष्यं करोति' इसकी विधि यह है कि पिता शिशु की नाभि या दाहिने कान के समीप जाकर मन्त्रपाठ करता हुआ आयुष्यवर्धन करता है। अग्नि दीर्घजीवी है, वह वृक्षों में दीर्घजीवी है। मैं इसकी दीर्घायु से तुम्हें दीर्घायु करता हूँ। इसी प्रकार सोम, ब्रह्मा, ऋषि आदि 8 मन्त्रों से शिशु की आयुवृद्धि करता है। यह बात आपको प्रयोग में बताया जायेगा। यह मेधाजनन संस्कार एवं आयुष्यवर्द्धन कर्म नालछेदन के पहले पिता को करना चाहिए। जैसा कि लिखा है - 'जातस्य कुमारस्याच्छिन्नायां नाड्यां मेधाजननायुष्ये करोति'।

यहाँ एक दूसरी बात यह है कि बालक का पिता यदि चाहे कि सम्पूर्ण आयु का उपभोग बालक करे या अत्यन्त दीर्घायु हो मेरा बालक तो 'वात्सप्र' संज्ञक (मंत्र) अनुवाक से (पढ़ते हुए) इस बालक का स्पर्श करना चाहिए। वात्सप्र अनुवाक के मंत्रों को आगे बताया जायेगा। यहाँ मात्र अत्यन्त संक्षेप में एक परिचय दिया जा रहा है।

एक बात और यहाँ ध्यान देना चाहिए कि सामान्यतः सूतक दो प्रकार के होते हैं (क) जननाशौच एवं (ख) मरणाशौच। जननाशौच में भी दस दिन तक अशौच (सूतक) रहता है। फिर शास्त्रों में जन्म के समय गणेशपूजन पुण्याहवाचन आदि का विधान कैसे किया गया है ? उसके समाधान में कहा गया है कि जातकर्म संस्कार में सूतक या अशौच, नालछेदन के बाद ही लगता है अतः नालछेदन से पहले ही गणेशपूजन आदि कर लेना चाहिए।

जैसा कि महर्षि जैमिनि कहते हैं -

यावन्न छिद्यते नालं तावन्नाप्नोति सूतकम्।

छिन्ने नाले ततः पश्चात् सूतकं तु विधीयते ।।

अब इस सामान्य परिचय के बाद आपको प्रयोग विधि बताया जा रहा है। जब तक प्रयोग अच्छी तरह नहीं जान पायेंगे तब तक केवल परिचय से या पारस्करगृह्य सूत्रों में वर्णित सूत्र एवं व्याख्यानों से अनुष्ठान संभव नहीं हो सकता है। अनुष्ठान के लिए शास्त्रीय समन्त्रक प्रयोग की आवश्यकता है। अब आप प्रयोगविधि देखें, जिसे अक्षरश: जानकर जातकर्म करा सकते हैं। कुछ बातें परिचय में जो शेष रह गई है वे भी इस प्रयोग में आ जायेगी। अस्तु

स्तनपान कराना

बच्चे की रक्षा हेतु उसके प्रथम आहार का संचार उसकी माँ से ही होता है। माँ के पहले दूध को कोलोस्ट्राम कहते हैं। यह बच्चे के पोषण के लिए अमृत के समान है। पारस्करगृह्यसूत्र में भी स्तनपान का विधान मन्त्र के साथ दिया गया है, जिसे अवश्य करना चाहिए। सर्वप्रथम स्तन को शुद्ध जल से धोकर माता शिशु को पहले दाहिने स्तन को बाद में बायें स्तन का दूध 'इमं स्तनं' मंत्र पढ़कर पिलायें। शास्त्रों में स्तनपान के लिए कुछ मुहूर्त भी बताये हैं जिनका संकेत आपसे प्रसंगतः कर देता हूँ।

तीनों उत्तरा, रोहिणी, रेवती, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, हस्त, चित्रा, मृगषिरा, धनिष्ठा, श्रवणा, शतभिषा इन नक्षत्रों में तथा शुभवारों में स्तनपान कराना चाहिए। विशेष स्तनपान की विधि आगे प्रयोग विधि में बताया जायेगा।

जातकर्म संस्कार प्रयोग

सर्वप्रथम सुखपूर्वक प्रसव (बच्चा उत्पन्न होने के लिए) सोष्यन्ती कर्म (प्रसववेदना से युक्त स्त्री के लिए) का विधान पारस्करगृह्यसूत्र में किया गया है। जिसमें अधोलिखित दोनों मन्त्रों को पढ़कर (होने वाले शिशु का) पिता अपनी पत्नी को जल से अभ्युक्षण करता है।

ऊँ एजतु दशमास्योगर्ब्भोजरायुणा सह । यथाऽयंव्वायुरेजतियथासमुद्रऽएजति । एवाऽयन्दषमास्योऽअस्त्रज्जरायुणा सह।

ऊँ अवैतु पृष्नि शेवलँषुने जरायत्तवे। नैव मांसेन पीवरि। न कस्मिष्चनायतयव जरायुपद्यताम्। (इति मन्त्रं पठेत्)

पुत्र के उत्पन्न होने के बाद शीघ्र ही पिता सचैल (वस्त्र के साथ) नदी आदि में स्नान करें। जैसा कि आचार्य वसिष्ठ ने कहा है-

श्रुत्वा जातं पिता पुत्रं सचैलं स्नानमाचरेत्।

यह स्नान नैमित्तिक है। अतः रात में भी पुत्र के जन्म लेने पर स्नान, दान करना चाहिए।

लेकिन नालछेदन से पहले जैसा कि व्यास ने कहा है -

'रात्रौ स्नानं न कुर्वीत दानं चैव विशेषतः।

नैमित्तिके तु कुर्वीत स्नानं दानं च रात्रिषु।।

अतः पिता को पुत्र जन्म सुनकर वस्त्रसहित स्नान करके ब्राह्मणों को दान देना चाहिए। क्योंकि-

अच्छिन्ननाड्यां यद्दत्तं पुत्रे जाते द्विजोत्तमाः।

संस्कारेषु च पुत्रस्य त्वदक्षय्यं प्रकीर्तितम्।।

अर्थात् नालछेदन के पहले पुत्रजन्म (जातकर्म) के निमित्त दिया गया दान अक्षय्य (कभी भी नष्ट न होने वाला) होता है। लेने वाले को भी दोष नहीं होता है । श्रीरामचरितमानस में भी भगवान् श्रीराम के जन्म पर जातकर्म की झाँकी गोस्वामी तुलसीदास जी रखते हैं और उसमें अन्न, दान, पूजन आदि की चर्चा है-

नंदीमुख सराध करि जातकरम सब कीन्ह ।

हाटक धेनु वसन मनि नृप विप्रन्ह कह दीन्ह ।।

यहाँ दशरथ जी स्वर्ण से नान्दीश्राद्ध करते हैं तथा विप्रों को दान देते हैं।

दान देने के बाद संकल्प करें-

यहाँ संकल्प में विशेष सम्बद्धवाक्य ही कहा जायेगा, क्योंकि संकल्प आप अच्छी तरह जानते हैं । संकल्प - **पूर्वोच्चारित एवं ग्रहगुणविशेषण विषिष्टायाम् शुभपुण्यतिथौ गोत्रः अमुकोऽहं पुत्रजननिमित्तकं सचैलं स्नानं करिष्ये इति संकल्प्य स्नात्वा षुभे नवेधौतेवाससी परिधाय प्राङ्मुखोपविष्य दीपं प्रज्वलय्य स्वस्तिवाचनं षान्तिपाठं वा कृत्वा इष्टदेवेभ्यः पुष्पांजलिं समर्प्य नालच्छेदनात्पूर्वं गणेशाम्बिकयो पूजनं कुर्यात् । तत्रादौ पूजनसंकल्पः - अद्येहामुकोऽहं जातस्य दीर्घायुरारोग्यावाप्तये करिष्यमाण जातकर्मणि निर्विघ्नता सिद्धये पूर्वाङ्गत्वेन गणेशपूजनं करिष्ये ।**

गणेशपूजन, कलशपूजन, पुण्याहवाचन, षोडशमातृका, सप्तघृतमातृका, नान्दीश्राद्ध आदि करके प्रधान संकल्प करना चाहिये ।

एक बात अवश्य यहाँ ध्यान देना चाहिए कि नान्दीश्राद्ध स्वर्ण से ही करना चाहिए कच्चे अन्न से या पके अन्न से नहीं । जैसा कि कहा गया है-

पुत्रजन्मनि कुर्वीत श्राद्धं हेम्नैव बुद्धिमान ।

न पक्वेन न चामेन कल्याणान्यभिकामयन् ।।

आमान्नस्याप्यभावे तु श्राद्धं कुर्वीत बुद्धिमान् ।

धान्याच्चतुर्गुणेनैव हिरण्येन सुरोचिषा ।।

प्रधानसंकल्प

अद्येहेत्यादि संकीर्त्य अमुकोऽहं अस्य कुमारस्य गर्भाम्बुपानजनितसकलदोष-निबर्हणायुर्मेधाभिवृद्धिद्वारा बीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणद्वारा च श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं जातकर्माख्यं संस्कारं करिष्ये ।

मेधाजननसंस्कार

पूर्वांग के रूप में कलशस्थापन, पुण्याहवाचन, मातृकापूजन सम्पन्न करके आभ्युदयिक श्राद्ध करें । उसके बाद चार ब्राह्मणों का पूजन करके स्वस्तिवाचन करावें । नवग्रहों का आवाहन पूजन करके स्वर्ण या चाँदी के पात्र में मधु, घृत (विषम मात्रा में लेकर) या केवल घृत लेकर अनामिका अंगुलि से एक बार बालक को प्राषन करायें । यह मेधाजनन संस्कार है । मन्त्र - ॐ भूस्त्वयि दधामि, ॐ भुवस्त्वयि दधामि, ॐ स्वस्त्वयि दधामि । ॐ भूर्भुवस्वः सर्वंस्त्वयि दधामि । इस मंत्र का उच्चारण करके प्राषन कराना चाहिए। इति मेधाजननकृत्यम् ।

आयुष्यवर्द्धन

अथास्यायुष्करणम् - जातस्य कुमारस्य नाभिसमीपे दक्षिणकर्णसमीपे वा पिता जपति । अग्निरायुष्मानित्यादीनामष्टानां मंत्राणां प्रजापतिर्ऋषिः गायत्रीच्छन्दः लिंगोक्ता देवताः आयुष्करणे विनियोगः । ऐसा कहकर जल भूमि पर छोड़े ।

इसका अर्थ आपको इसके पहले (परिचय) में बताया गया है। अब आयुष्करण के आठ मंत्रों को बताया जा रहा है। ये मंत्र पिता कहता है।

1. **ॐ अग्निरायुष्मान्तसव्वनसपतीभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽयुषाऽयुष्मन्तं करोमि।**
2. **ॐ सोमऽआयुष्मान्त्सौषधीभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽयुषाऽस्युष्मन्तं करोमि।**
3. **ॐ ब्रह्मायुष्मत्तद्ब्राह्मणैरायुष्मत्तस्तेन त्वाऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि।**
4. **ॐ देवाऽआयुष्मन्तस्तेऽअमृतेनायुष्मन्तस्तेनत्वाऽयुषाऽयुष्मन्तं करोमि।**
5. **ॐ ऋषयऽआयुष्मन्तस्ते व्रतैरायुष्मन्तस्तेनत्वाऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि।**
6. **ॐ पितरऽ आयुष्मन्तस्ते स्वधामिरायुष्मन्तस्तेन त्वाऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि।**
7. **ॐ यज्ञऽआयुष्मान्त्सदक्षिणाभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि।**
8. **ॐ समुद्रऽआयुष्मान्त्सस्रवन्तीभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि।**

(इति त्रिर्वा सकृद् वा जपति) इन मंत्रों को तीन बार या एक बार पढ़कर -

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः कस्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् । इस मन्त्र का

पाठ करें।

यदि पिता बालक की सम्पूर्ण आयु (सौ वर्ष की) प्राप्ति की कामना करता है, तो इन अधोलिखित मंत्रों से शिशु के सभी अंगों का स्पर्ष करे। इन मंत्रों को 'वात्सप्रअनुवाक' से भी जाना जाता है। ये मंत्र है-

ॐ दिवस्परि प्रथमं यज्ञेऽग्निरस्मद्द्वितीयं परिजातवेदाः।
तृतीयमप्सुनृमणांऽअजस्रमिन्धानऽएनंजरते स्वाधीः॥
विद्मातेऽअग्ने त्रेधात्रयाणिव्विद्माते धामव्विभृतापुरुत्रा।
व्विद्माते नामपरमं गुहायद्विद्मातमुत्संयतऽआजगन्थ॥
समुद्रेत्वानृमणाऽअप्स्वन्तर्नृचक्षाऽईधेदिवोऽअग्नऽऊधन।
तृतीयेत्वारजसितस्थितवां समपामुपस्थेमहिषा अवर्द्धन॥
अक्रन्ददग्निस्तनयन्निवद्यौः क्षामारेरिहद्वीरुधः समंजन्।
सद्यो जद्यानो व्विहीमिद्धोऽअख्यदारोदसी भानुना भात्यन्तः॥
श्रीणामुदारो धरणी रयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः।
व्वसुः सूनुः सहसोऽअप्सुराजाव्विभात्यग्रऽउषसामिधानः॥
व्विष्वस्य केतुर्भुवनस्यगर्भऽआरोदसीऽअपृणाजायमानः।
व्वीडुंचिदद्रिमभिनत्परायंजनाष्वदग्निमयजन्तपंच॥
उषिक्पावकोऽरतिः सुमेधामर्त्येष्वग्निरमृतो निधायि।
इयर्तिधूममरुषम्भरिभ्रदुच्छुक्रेण षोचिषाद्यामिनक्षन्॥
दृषानोरुक्मउर्व्याव्यद्यौद्दुर्म्मर्षमायुः श्रियेरुचानः।
अग्निरमृतोऽअभवद्वयोभिर्यदेनन्द्यौरजनयत्सुरेताः॥
यस्तेऽअद्यकृणवद्भद्रषोचेऽपूपन्देवधृतवन्तमग्ने।
प्रतन्नयप्रतरम्व्वस्यो अच्छाभिसुम्नन्देवभक्तं यविष्ठ॥
आतम्भजसौश्रवसेष्वग्नऽउक्थऽउक्थऽआभजषस्यमाने।
प्रियः सूर्य्येप्रियोऽअग्नाभवात्युज्जातेनभिनददुज्जनित्वैः॥
त्वामग्ने यजमानाऽअनुद्यून्विष्वाव्वसुदधिरे वार्य्याणि।
त्वया सहद्रविणमिच्छमाना व्रजंगेमन्तमुषिजोव्विवब्रुः॥

इन एकादश ऋचाओं के पाठ करने के बाद पूर्व, पश्चिम आदि चारों दिशाओं में एवं मध्य में पाँच ब्राह्मणों को आसन देकर बिठावे तथा शिशु को अनुप्राणित करे। अनुप्राणित का मतलब यह है

कि पंच प्राण मनुष्य के शरीर में होते हैं उसी प्राणों को पाँचों ब्राह्मण उद्दीप्त करते हैं। पूर्व की ओर बैठे ब्राह्मण, बालक को लक्ष्य करके 'प्राण' ऐसा उच्च स्वर से बोले । अर्थात् हे कुमार तुम्हारा प्राण तुम्हारे हृदय में स्थित हो । उसी प्रकार दक्षिण में स्थित ब्राह्मण, शिशु को देखकर 'अपान' शब्द का उच्चारण, पश्चिम में स्थित ब्राह्मण 'व्यान' का उच्चारण, उत्तर में स्थित ब्राह्मण 'उदान' का तथा मध्य वाले ब्राह्मण 'समान' शब्द का उच्च स्वर से उच्चारण करे ।

इसका रहस्य यह भी है कि प्राणवायु हृदय में, व्यानवायु सभी शरीर में, अपानवायु गुदा में, उदान वायु कण्ठ में एवं नाभि में समानवायु का निवास रहता है । इसीलिए यहाँ पाँचों ब्राह्मण शिशु को अनुप्राणित अर्थात् पंचप्राणयुक्त करते हैं । जैसा कि पारस्करगृह्यसूत्र में कहा है - पूर्वो ब्रूयात् प्राणेति, व्यानेति दक्षिणः, अपानेत्यपरः, उदानेत्युत्तरः, समानेतिपंचमः, उपरिष्टादवेक्षमाणा ब्रूयात्। यदि ब्राह्मण न हो तो पिता स्वयं ही इन सभी वाक्यों को सभी दिशाओं में जाकर उच्चारित करें ।

इसके बाद बालक का जहाँ जन्म हुआ है वहाँ की भूमि का अनामिका अंगुली से स्पर्श करते हुए अधोलिखित मंत्र को पढ़ें -

ऊँ व्वेद ते भूमि हृदयं दिवि चन्द्रमसि श्रितम् ।

वेदाहं तन्मां तद्विद्यात्पष्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणयाम शरदः शतम् ।

इति भूमिमभिमन्त्र्य कुमारस्य सर्वषरीरं स्पृषति। इसके बाद शिशु को देखते हुए अधोलिखित मंत्र का पाठ करें ।

ऊँ अष्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तुतं भव ।

आत्मा वै पुत्र नामासि स जीव शरदः शतम् ।।

अर्थात् हे कुमार! तुम पाषाण की तरह दृढ और स्थिर हो जाओ, वज्र की तरह विपत्तिनाशक हो जाओ, शुद्ध सुवर्ण के समान तेजयुक्त रोगादिरहित हो जाओ, क्योंकि पुत्ररूप में तुम हमारी आत्मा हो। अतः तुम निश्चय ही सौ वर्ष तक जीओ (शरीर को स्थिर रखो)

इसके बाद बालक का पिता अपनी पत्नी की ओर देखकर इस मंत्र का पाठ करता है-

ऊँ इडासि मैत्रावरुणी व्वीरे व्वीरमजीजनपाः ।

सा त्वं व्वीरवती भव याऽस्मान् वीरवतोऽकरत् ।।

अर्थात् हे वीरपुत्रवती तुम ईडा (मनु की पुत्री) हो मित्र और वरुण के अंश से उत्पन्न तुमने वीर बच्चे को जन्म दिया । जिस प्रकार ईडा ने पुरुरवा को उत्पन्न किया था । उसी प्रकार तुमने हमें वीरपुत्रों वाला बनाया है, वह तुम जीवित पति एवं पुत्रों वाली होओ ।

इसके बाद माता सबसे पहले दाहिने स्तन को धोकर बालक को अधोलिखित मंत्र से

पिलाती है- (अथमातुर्दक्षिणं स्तनं प्रक्षाल्य कुमाराय प्रयच्छति)

ॐ इमंस्तनमूर्ज्जस्वन्तन्धयापांप्रपीनमग्नेसरिरस्य मध्ये।

उत्संजुषस्व मधुमन्तमर्व्वन्त्समुद्रियंसदनमाविषस्व।।

ततो वामहस्तं प्रक्षाल्य प्रयच्छति-

ॐ यस्तेस्तनः षषयो यो मयोभूर्य्योरत्नधाव्वसुविद्यः सुदत्रः।

येन व्विष्वा पुष्यसि वार्य्याणि सरस्वतितमिह धातवेऽकः।।

उपर्युक्त दोनों मंत्रों को पढ़ते हुए बालक को दूध पान कराना चाहिए।

इसके बाद सूतिका घर में बालक के माता के शिरःप्रदेश (सिरहाने) में भूमि पर जल से पूर्णकलश या घड़ा उसकी रक्षा के लिए रखा जाता है। वह दस दिन तक सूतिका घर में रहता है।

ॐ आपो देवेषु जाग्रथ यथा देवेषु जाग्रथ।

एवमस्यां सूतिकायां सुपुत्रिकायां जाग्रथ।।

ततः सूतिकाद्वारदेषे वेदी कृत्वा पंचभूसंस्कारपूर्वकम् अग्निं स्थापयेत्। अत्र प्रणीता प्रणयनादयो न भवन्ति। परिसमूहनादयस्तु भवन्त्येव।

यहाँ सुतिकागृह के द्वार पर स्थण्डिल पर पंचभूसंस्कार करके 'प्रगल्भ' नामक अग्नि की स्थापना करे। (प्रगल्भो जातकर्मणि) प्रगल्भनामाग्नये नमः, पाद्यादिभिः सम्पूज्य होमं कुर्यात्। तण्डुलकणमिश्रान्सर्षपान्गृहीत्वेति।

अर्थात् अक्षत (चावल) मिले सरसों से सायं प्रातः हवन करे। दो दो आहुतियाँ देने का विधान है। मंत्र इस प्रकार है।

ॐ शण्डामर्काऽउपवीरः शौण्डिकेय उलूखलः।

मलिम्लुचो द्रोणासष्च्यवनो नश्यता दितः स्वाहा।।

इदमग्नेय न मम।

ॐ आलिखन्ननिमिषः किम्वदन्तऽउपश्रुतिः। हर्यक्षः कुम्भी शत्रुः पात्रपाणिर्नृमणिः। हन्त्रीमुखः सर्शपारुणश्च्यवनो नश्यतादितः स्वाहा। इदमग्नये न मम।

यह अग्नि दस दिन तक बुझने न पावे। बराबर प्रज्वलित रहे। इसमें दो आहुति सायं एवं दो आहुति प्रातः होने से कुल आहुतिसंख्या 40 हो जायेगी 10 दिन में।

इसके बाद यदि शिशु ग्रहों से या रोग से अत्यन्त पीडित हो तो, पिता अपनी चादर से उसे ढककर शिशु को अपनी गोद में रखकर इन मंत्रों का पाठ करे।

ॐ कूर्क्कुरः सुकूर्क्कुरः कूर्क्कुरो बालबन्धनः।

चेचेच्छुनक सृज नमस्तेऽअस्तु सीसर लपेताह्वरः।।

ऊँ तत्सत्यं यत्ते देवाव्वरमददुः स त्वं कुमारमेव वाऽवृणीथाः।

चेच्चेच्छुनक सृज नमस्तेऽअस्तु सीसरो लपेतापह्वरः।।

तत्सत्यं यत्ते सरमा माता सीसरः पिता श्यामसबलौ भ्रातरौ।

चेच्चेच्छुनकसृजनमस्तेऽअस्तु सीसरो लपेतापह्वरः।।

(जपान्ते पिता बालकमभिमृषति)

न नामयति न रुदति न हृष्यति न ग्लायति।

यत्र व्वयं व्वदामो यत्र चाभिमृषामसि।।

इति मन्त्रेणाभिमृष्य दक्षिणासंकल्पं कुर्यात्।

संकल्पः - अद्येहामुकोऽहं जातस्य पुत्रस्य कृतैतत् जातकर्माख्यसंस्कारकर्मणाः सांगतासिध्यर्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं च इमां दक्षिणां नामानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो विभज्य दातुमहमुत्सृजे। ततो भूयसी संकल्प्य ब्राह्मणेभ्यो दद्यात्। दषब्राह्मणान् वा यथाषक्तिब्राह्मणान् भोजयिष्ये इति संकल्प्य सूतकान्ते ब्राह्मणान् भोजयेत्।

इति जातकर्मप्रयोगविधिः

इसके बाद नालच्छेदन कराना चाहिए।

इसमें बहुत संस्कृत के शब्द आपको ज्ञात है इसलिए छोटे छोटे वाक्यों को संस्कृत में ही रख दिया है। आप स्वयं समझ जायेंगे।

इस प्रकार यहाँ जातकर्म संस्कार का संक्षिप्त परिचय एवं शास्त्रीय प्रयोग विधि आपको ज्ञात हो गया है। अब आप कुछ बताने के लिए उत्सुक दिखाई पड़ रहे हैं तो लीजिए आपके लिए कुछ प्रश्न नीचे दिये जा रहे जिनका उत्तर आपको देना है।

बोधप्रश्न

1. जन्म के पहले होने वाले संस्कार का एक नाम बतायें।
2. जन्मोत्तर संस्कारों में सर्वप्रथम संस्कार कौन सा है?
3. जातकर्म संस्कार का प्रयोजन क्या है?
4. मेधाजनन किस संस्कार से सम्बद्ध है?
5. जातकर्म का दूसरा प्रधान कर्म कौन सा है?
6. सम्पूर्ण आयु प्राप्ति के किस अनुवाक (मंत्र) का पाठ किया जाता है?
7. जननाशौच में कितने दिन तक सूतक रहता है?

8. सोष्यन्ती कर्म का तात्पर्य क्या है?

2.4 नामकरण संस्कार

यहाँ जातकर्म संस्कार के बाद नामकरण संस्कार के विषय में आपको बताया जा रहा है। सबसे पहले एक सामान्य परिचय, इसके बाद प्रयोगविधि।

संक्षिप्तपरिचय

नामाखिलस्य जगत व्यवहारहेतुः शुभावहं कर्मसु भाग्यहेतुः।
नाम्नैव कीर्तिं लभते मनुष्यस्ततः प्रशस्तं खलुनामकर्म ।।

अर्थात् नाम समस्त व्यवहार का कारण है। मंगल प्रदान करने वाला कर्मों में भाग्य का हेतु है। नाम से ही मनुष्य कीर्ति को प्राप्त करता है। इसलिए नामकरण अत्यन्त प्रशस्त (श्रेष्ठ) कर्म है।

हम जानते हैं कि जिस समय मनुष्य ने भाषा का विकास किया उसी समय से वह अपने जीवन में दैनिक व्यवहार की वस्तुओं के नामकरण के लिए प्रयत्नशील रहा है। सामाजिक चेतना के विकास के साथ मनुष्यों का नामकरण किया जाने लगा। क्योंकि व्यक्तियों के विशिष्ट तथा निश्चित नामों के बिना संस्कृत समाज के व्यवहार का संचालन असंभव था। लोगों ने अतिप्राचीन काल में ही व्यक्तिगत नामों के महत्त्व का अनुभव किया तथा नामकरण की प्रथा को धार्मिक संस्कार में परिणत कर दिया गया।

हमारे यहाँ शास्त्रों में दार्शनिकों ने ज्ञान को दो भागों में बाँटा है, (क) निर्विकल्पक ज्ञान एवं (ख) सविकल्पक ज्ञान। बिना नाम या बिना संज्ञा का ज्ञान निर्विकल्पक ज्ञान है, तथा नाम सहित एवं ससंज्ञ ज्ञान सविकल्पक ज्ञान है। अर्थात् निर्विकल्पक ज्ञान का आधार सविकल्पक ज्ञान है। समाधि में भी यही दशा है। सविकल्पक समाधि की अवस्था को प्राप्त कर ही योगी निर्विकल्पक अवस्था को प्राप्त करता है। जिससे आगे जाकर इसे मोक्ष होता है। उसी तरह संसार में रहने के लिए सविकल्पक ज्ञान का होना अत्यन्त अनिवार्य है। ताकि किसी के उस नाम के उच्चारण से तत्स्थानीय सभी लोगों को अधिगम हो सके। संज्ञा देने की इस प्रक्रिया को हम नामकरण कहते हैं। शास्त्रों में भी भगवान् की प्राप्ति में चार कारण माने गये हैं। नाम, रूप, लीला, धाम जिनमें नाम प्रथम है। भगवान् की प्राप्ति भी नाम जप के प्रभाव से ही संभव है। हम पहले परमात्मा के नाम का ही स्मरण करते हैं। तब जाकर रूप लीला धाम आदि का दर्शन होता है। संभवतः आज भी इसीलिए देवी-देवताओं की सहस्र नामावली प्रसिद्ध है। जैसे विष्णुसहस्रनाम, ललितासहस्रनाम आदि।

इसीलिए गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं-

रुप विषेष नाम बिनु जाने। करतलगत न परहि पहिचाने ।।

राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी।।

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।।

नहि कलि कल न भगति बिबेकू। रामनाम अवलम्बन एकू।।

अजामिल, गणिका, गजराज आदि भक्तों ने नाम के प्रभाव से ही भगवान् को प्राप्त किया। यह बात नाम प्रसंगों के कारण आपको बतायी गयी। अब हम विषय पर आते हैं।

इस प्रकार दैनिक जीवन में भी नाम का महत्त्व अधिक है नाम ज्ञात न होने के कारण कोई भी किसी से बात तक नहीं करेगा। इसीलिए लोगों का नामकरण संस्कार किया जाता है।

नामकरण की परम्परा की यदि बात करें तो यह अत्यन्त प्राचीन है जैसा कि मैं पूर्व में बता आया हूँ। शतपथब्राह्मण के अनुसार दो नामग्रहण (रखने) की परम्परा मिलती है। जिसमें एक नाम व्यवहार में (घर में) प्रयुक्त होता था, द्वितीय नाम मातृक या पैतृक होता था। आज भी आप देखेंगे एक घर में पुकारने का नाम, दूसरा राशि के अनुरूप नाम, जिसका प्रयोग विवाह आदि में करते हैं। पारस्करगृह्यसूत्र में नामग्रहण का स्पष्ट संकेत प्राप्त होता है।

2.4.1 नाम ग्रहण संस्कार के काल विचार

नामग्रहण काल पर अनेक ऋषियों ने अनेक मत प्रकट किये हैं, परन्तु यहाँ जो हमें ग्राह्य है वहीं बताने जा रहा हूँ। पारस्करगृह्यसूत्र में आचार्य कहते हैं-

'दशम्यामुत्थाप्य ब्राह्मणान्भोजयित्वा पिता नाम करोति'।

अर्थात् प्रसव दिन से लेकर 10 दिन तक तो सूतक ही रहता है, जिसे आपको इसके पहले बताया जा चुका है। अतः दसरात्रि के बाद एकादश वें दिन बालक का नामकरण संस्कार करना चाहिए। इसी बात को आचार्य गदाधर स्पष्ट शब्दों में लिखते हैं - **'प्रसवाद्दषम्यां रात्र्यामतीतायामेकादषेऽहनि सूतिकागृहात् सूतिकामुत्थाप्य नामकरणांगतया त्रीन् ब्राह्मणान् भोजयित्वा पिता कुमारस्य नाम (संज्ञा) सम्व्यवहारार्थं करोति।'**

मदनरत्ननामक ग्रन्थ में भी 'सूतकान्ते नाम कर्मविधेयं स्वकुलोचितम्' इस वचन से 11वें दिन ही नामकरण करना चाहिए। महर्षि याज्ञवल्क्य भी कहते हैं -

'अहन्येकादशे नाम'

यहाँ एक बात और ध्यान देना है कि अमावस्या, भद्रा, संक्रान्ति आदि उस दिन होने पर नामकरण नहीं करना चाहिए। जैसा कि लिखा है-

'अमा संक्रान्ति विष्ट्यादौ प्राप्तकालेऽपि नाचरेत्'

इसीलिए सारसंग्रह नामक ग्रन्थ में यह भी लिखा है कि -

एकादशेह्निविप्राणां क्षत्रियाणां त्रयोदषे।

वैश्यानां षोडशे नाम मासान्ते शूद्रजन्मनाम् ।।

अर्थात् ग्यारहवें दिन ब्राह्मणों का, तेरहवें दिन क्षत्रियों का, सोलहवें दिन वैश्यों का एवं एक मास में शूद्रों का नामकरण संस्कार करना चाहिए।

हमें शास्त्रों के विकल्प पक्षों को ध्यान नहीं देना है। अन्ततः निष्कर्ष यही है कि स्वकुलगोत्र परम्परा के अनुसार 11 वें दिन ब्राह्मण बालक का नामकरण संस्कार अवश्य कर देना चाहिए। ब्राह्मण का ही नहीं अपितु सभी वर्णों का, क्योंकि -

सूतिका सर्ववर्णानां दशाहेन विशुद्धयति।

ऋतौ च न पृथग्धर्मः सर्ववर्णेष्वयं विधिः ।।

इस वचन से प्रतीत होता है।

नामकरण किस समय करें -

इस पर विचार करते हुए शास्त्रों में कहा गया है कि-

पूर्वाह्ने श्रेष्ठ इत्युक्तो मध्याह्ने मध्यमः स्मृतः।

अपराह्नं च रात्रिं च वर्जयेन्नामकर्मणि ।।

अर्थात् पूर्वाह्न (प्रातःकाल) में नामकरण श्रेष्ठ होता है, मध्याह्न में मध्यम होता है। अपराह्न एवं रात्रि में नामकरण नहीं करना चाहिए।

किस दिन नामकरण करें -

भास्करार्कजभौमानां वर्जयेदर्षकोदयौ।

धनकर्मसुतभ्रातृनवमस्थः शुभः शशी ।।

अर्थात् रवि, शनि, भौमवार एवं अमावस्या को छोड़कर धन, कर्म, सुत, भाई एवं नवमस्थ चन्द्रमा के रहने पर शुभ होता है।

2.4.2 नाम का स्वरूप

कर्मकाण्ड में चार प्रकार के नामों का उल्लेख मिलता है - (क) कुलदेवता के अनुरूप नाम, (ख) मासदेवतानुरूपनाम (ग) नक्षत्रानुरूपनाम, (घ) व्यवहारनाम।

कुलदेवता के अनुरूप नाम का तात्पर्य यह है कि अपने कुल देवता के अनुसार दास आदि नाम रखना। जैसे किसी के कुलदेवता हनुमान जी है, तो हनुमानदास या हनुमत्प्रसाद आदि नाम, बालक का रखना चाहिए।

वीरमित्रोदय नामक ग्रन्थ में भी इस बात का समर्थन मिलता है। कुलदेवता के आधार पर नाम रखने के पीछे माता-पिता की यह धारणा थी कि बालक को उन कुल देवताओं का संरक्षण प्राप्त हो।

दूसरा नाम मासदेवता का है। इसमें प्रत्येक महीनों के देवता बताये गये है। जातक का जन्म जिस मास में होगा उस मास के देवता उस जातक के मासदेवता कहलायेंगे, तथा उन्हीं के नाम पर जातक का नाम निर्धारण करना, मासदेवता के आधार पर नाम निर्धारण करना कहा जाता है। तथा कुछ मास के नाम भी भगवन्नाम के समान है अतः उसी आधार पर नामकरण होता था। महर्षि गर्ग के अनुसार मार्गशीर्ष से क्रमश: बारह मासों के नाम है-

कृष्णोऽनन्तोऽच्युतष्चक्री वैकुण्ठोऽथ जनार्दनः।

उपेन्द्रो यज्ञपुरुषो वासुदेवस्तथा हरिः

योगीशः पुण्डरीकाक्षो मासनामान्यनुक्रमात्॥

अर्थात् कृष्ण, अनन्त, अच्युत, चक्री, वैकुण्ठ, जनार्दन, उपेन्द्र, यज्ञपुरुष, वासुदेव, हरि, योगीष तथा पुण्डरीकाक्ष।

आप देखे! ये कितने अच्छे नाम है, परन्तु आजकल जो लोग अपने बच्चों का नाम रखते हैं उनसे भी आप परिचित ही है।

नक्षत्र नाम -

जिस नक्षत्र में बालक का जन्म होता है, उस नक्षत्र के जो देवता होते हैं, वही नाम उस बालक का रखा जा जाता है। जैसे पुनर्वसु के देवता अदिति है। तो उस बच्चे का नाम आदित्य होगा। श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न बच्चे का विष्णु, अष्विनी नक्षत्र में उत्पन्न बच्चे का नाम अश्विनी कुमार आदि।

सभी देवताओं के नाम लिखना यहाँ ठीक नही है विस्तार होगा उसके लिए आप दूसरे सम्बद्ध ग्रन्थों को भी देख सकते हैं।

ज्योतिष की दृष्टि में प्रत्येक नक्षत्र में चार चरण बताये गये हैं। उसमें जिन चरणों में जन्म हुआ हो उसके आधार पर रखा गया नाम राशिनाम कहलाता है। जिसे आप जानते ही हैं।

व्यवहारिक नाम -

चौथा नाम व्यवहार नाम होता है। इसी नाम का प्रायः लोगों के द्वारा व्यवहार किया जाता है। इसमें यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उच्चारण में नाम सरल तथा सुनने में अच्छा होना चाहिए।

पुरुष प्रकृति से ही कठोर तथा सबाल होते हैं और नारी कोमल तथा सुन्दर होती है। अतः इसीके अनुरूप व्यवहार नाम रखा जाना चाहिए।

नाम में अक्षर विचार -

यहाँ नाम में कौन-कौन से अक्षर होने चाहिए यह भी शास्त्रों में विचार किया गया है। और शास्त्रानुकूल नाम रखने पर अवश्य ही उसका फल मिलता है। सर्वप्रथम पारस्करगृह्यसूत्र के अनुसार -

द्वयक्षरं चतुरक्षरं वा घोषवदाद्यन्तरन्तस्थं दीर्घाभिनिष्ठानं कृतं कुर्यात् न तद्धितम्। अयुजाक्षरमाकारान्तं स्त्रियै तद्धितम्।

बालक का नाम दो या चार अक्षर का होना चाहिए। उसका पहला अक्षर घोषवर्ण वाला होना चाहिए। घोषवर्ण (ह य व र ल य म ङ ण न झ भ घ ढ ध ज ब ग ड द) है। नाम के बीच में कोई एक अन्तस्थ वर्ण (य र ल व) होना चाहिए। अन्त में दीर्घ या विसर्ग होना चाहिए। कृदन्त होना चाहिए तथा तद्धित भिन्न होना चाहिए। बालिकाओं का नाम विषम अक्षर (3,5,7) वर्ण वाले होना चाहिए। अन्त में आकार एवं तद्धितान्त होना चाहिए।

इस प्रकार नामकरण में होने वाले कुछ विशेष बातों का परिचय कराने के बाद अब इस संस्कार की शास्त्रीय प्रयोगविधि बताया जा रहा है।

अथ प्रयोगविधिः

नामकरण के दिन माता पिता बालक के साथ स्नान कर पूजन स्थल पर आकर दीप जलाकर स्वस्तिवाचनपूर्वक संकल्प करें।

संकल्प - देषकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रः अमुकराषिः अमुकशर्माऽहं अमुकराशेः अस्य पुत्रस्य अस्याः कन्यायाः वा करिष्यमाणनामकर्मणि गणेशाम्बिकयोः पूजन कलशस्थापनं, मातृकापूजनं, नान्दीश्राद्धम् आचार्यवरणानि च करिष्ये।

इसके बाद गणेश पूजन से लेकर आचार्यवरण कर्म करने के बाद प्रधान संकल्प करें - पूर्वोच्चारित एवं ग्रहगुणविषेषणविषिष्टायां अमुकतिथौ गोत्रः षर्माऽहं अमुकराषेः अस्य बालकस्य आयुर्वृद्धिव्यवहारसिद्धि बीजगर्भसमुद्भवैनोनिर्बहणद्वाराश्रीपरमेष्वरप्रीतये नामकर्म संस्कारमहं करिष्ये।

तत्र वेदीं कृत्वा पंचसंस्कारपूर्वकमग्निं संस्थाप्य वेद्याः ईशानदिग्भागे कलशविधिना कलशं संस्थाप्य तत्र ब्रह्मवरुणसहितादित्यादिनवग्रहानावाह्य सम्पूज्य च रक्षासूत्रं स्वयमभिमन्त्र्य स्वयं होमकर्तृत्वे ब्रह्मणो वरणं कुर्यात्।

(नामकरणसंस्कार के निमित्त 3 ब्राह्मणों को भोजन एवं दक्षिणा से संतुष्ट कर कुशकण्डिका करें। इसके बाद होम, पान (पीने के लिए) एवं भू प्रोक्षण के लिए पंचगव्य का निर्माण करें।)

पंचगव्यनिर्माण विधि

पंचगव्य में गोमूत्र, गोमय, गौ का दूध, गौ की दधि, गौ घृत एवं कुशोदक रहता है। जिसमें मन्त्रपाठ पूर्वक तत् तत् पदार्थों को एक पात्र में बनाते हैं, जिससे प्रोक्षण आदि करते हैं। जैसा कि कहा गया है-

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुषोदकम् ।
निर्दिष्टं पंचगव्यं च पवित्रं कायषोधनम् ।।

मंत्र से निर्मित यह पंचगव्य षरीर में त्वचा एवं अस्थिगत समस्त पापों को षरीर से हटाकर पवित्र करता है। क्योंकि गोमूत्र में वरुण देवता, गोमय में हव्यवाट (अग्नि) गोदूध में चन्द्रमा, गोदधि में वायु, गोधृत में भानु एवं कुषा के जल में भगवान् हरि निवास करते हैं। जैसा कि कहा गया है-

गोमूत्रे वरुणो देवो हव्यवाहस्तु गोमये ।
क्षीरे चन्द्रष्च भगवान् वायुर्दध्नि समाश्रितः ।।
भानुराज्ये स्थितस्तद्वत् जले हरिरुदाहृतः ।
दर्भे देवाः स्थिताः सर्वे पवित्रं तेन नित्यषः ।।

'ॐ भूर्भुवः स्वतत्सवितुवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्' इति मन्त्रेण गोमुत्रं गृहीत्वा वरुणं ध्यायन् एकस्मिन् पात्रे स्थापयेत् ।

ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईष्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।। इति मंत्रेण गोमयं संगृह्य अग्निं ध्यायन् पात्रे क्षिपेत्।

ॐ आप्यायस्व समेतु ते व्विष्वतः सोमव्वृष्ण्यम् । भवाब्वाजस्य संगथे ।
मन्त्रेणानेन दुग्धं संगृह्य सोमं ध्यायन् पात्रे क्षिपेत् ।

ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषंजिष्णोरष्वस्यव्वाजिनः। सुरभि नो मुखा करत्प्रणऽआयूँषितारिषत।
इति मन्त्रेण दधि संगृह्य वायुं ध्यायन् पात्रे क्षिपेत् ।

ॐ तेजोऽसि षुक्रमस्यमृतमसिधामनामासिप्रियन्देवानामनापृष्टन्देव यजमनसि। इति घृतं संगृह्य रविं ध्यायन् पात्रे क्षिपेत् ।

ॐ देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेऽष्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताब्भ्याम्। इति कुषोदकं संगृह्य हरिं ध्यायन् पात्रे क्षिपेत् ।

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे ।

यो वः शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हनः । उशतीरिवमातरः। तस्माऽअरंगमामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा चनः । इति मंत्रेण आलोड्य

इस प्रकार से निर्मित पंचगव्य के द्वारा पवित्र (समूल साग्र तीनों कुषों के द्वारा) हवन करना चाहिए। तत्रादौ **संकल्पः** - अद्येह पंचगव्यपानांगहोमकर्मणा अहं यक्ष्ये ।

ततः विधिनामानमग्निमावाहयेत। तत्र मन्त्रः - एतन्ते देवसवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमवतेन यज्ञपतिन्तेनमामव।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विधिनामाग्ने इहागच्छेहतिष्ठ सुप्रतिष्ठितो वरदो भव। ऊँ तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदुचन्द्रमाः। तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ताऽआपः स प्रजापतिः। इति मंत्रेण अग्निं ध्यात्वा। पंचोपचारैः सम्पूज्य दक्षिणं जान्वाच्य ब्रह्मणान्वारब्धो जुहुयात्। (मनसा) प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। ऊँ इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय न मम। ऊँ अग्नये स्वाहा। इदमग्नये न मम। ऊँ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। इत्याधारावाज्यभागौ च हुत्वा अन्वारम्भं त्यक्त्वा सप्तभिहरितदर्भतरुणैः पंचगव्य होमं कुर्यात्।

पंचगव्यहोममंत्राः

ऊँ इरावती धेनुमतीहिभूतं सूयवसिनी मनवेदषस्या। व्यस्कम्नारोदसीव्विष्णवेते दाधर्थपृथिवीमभितोमयूखैः स्वाहा।

इदं विष्णवे न मम।

ऊँ इदं विष्णुर्व्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्यपांसुरे स्वाहा।

इदं विष्णवे न मम।

ऊँ मानस्तोकेतनयेमानऽआयुषिमानो गोषु मा नोऽअष्वेषु रीरिषः।

मानोव्वीरात्रुद्द्रभामिनोव्वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे स्वाहा।

इदं रुद्राय न मम। उदकस्पर्षः।

ऊँ शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये। षंय्योरभिस्रवन्तु नः स्वाहा।

इदमद्भ्यो नमः।

ऊँ भूर्भुवः स्वः तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् स्वाहा। इदं सवित्रे न मम।

ऊँ प्रजापतये न त्वदेतान्यन्योव्विष्वारुपाणि परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तुव्वयं स्याम पतयोरयीणां स्वाहा।

इदं प्रजापतये न मम।

इति पंचगव्यहोमं विधाय ब्रह्मणान्वारब्धः आज्येन भूराद्यानवाहुतिर्हुत्वा पंचगव्यमिश्राज्येन स्विष्टकृद्होमं च कृत्वा संस्रवप्राषनादिपूर्णपात्रद्वनान्तं कर्म समापयेत् ।

ततः अद्येह पंचगव्यपानांगहोमकर्मणः सांगतासिध्यर्थं इमां दक्षिणां पुरोहिताय ब्राह्मणाय दास्ये। ॐ तत्सन्न मम । इति संकल्प्य दक्षिणां दद्यात् ।

ततः हुतशेषं पंचगव्यं सूतिकायै दद्यात्। प्रसवगृहं च प्रोक्षेत् । सा च ब्रह्मतीर्थेन त्रिः प्राश्नाति अत्र आचारात् स्रुवं गन्धाक्षतपुष्पाद्रव्यादिभिः सम्पूज्य ब्रह्मा स्रुवेणान्वारम्भं कृत्वा सूतिकां भर्तुः समीपमानयति। सा च बालकमंके गृहीत्वा अग्निं प्रदक्षिणीकृत्य 'भतुर्वामतः उपविशेत् । आवाहित देवेभ्यः पुष्पांजलिं समर्पयेत् ।

2.4.3 नामकरण प्रक्रिया

उपरोक्त कर्म को समाप्त कर नामकरण की विधि अब आपको बताया जायेगा । ऊपर की प्रक्रिया आप अच्छी तरह जानते हैं । इसीलिए इसकी हिन्दी मैंने नहीं दी । अस्तु

दैवज्ञ (ज्योतिषी) के द्वारा बताये गये सुन्दर लग्न में नवीत वस्त्र पर कुंकुम आदि से शिशु का नाम लिखकर प्रतिष्ठा मंत्र पढ़ें । 'एतन्ते' यह प्रतिष्ठा मंत्र है । इसे इसके पहले प्रकरण में लिख दिया गया है । अतः यहाँ पूरा मंत्र नहीं दिया गया है । ॐ भूर्भुवः स्वः बालकनाम सुप्रतिष्ठितो भवतु इति प्रतिष्ठाप्य कहकर लग्नदान का संकल्प करें - अद्येहेत्यादि संकीर्त्य अमुकराशेरस्य बालकस्य नामकर्मलग्नाद्यकुत्रस्थाने स्थितानाम् आदित्यादिनवग्रहाणां शुभानां शुभफलाधिक्यप्राप्तये दुष्टानां दुष्टफलोपषान्त्यर्थं इमां सुवर्णनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दैवज्ञाय तुभ्यमहं सम्प्रददे ।

इस प्रकार संकल्प कर दक्षिणा देकर सुनवांश आने पर नये वस्त्र पर लिखे गये नामवाले कपड़े को शंख से आवेष्टित कर बालक के दक्षिण (दाहिने) कान में उसका नाम पाँच बार बोले । तथा च सुनवांसे समागते लिखित नामकमन्नव्यवस्त्रं सद्रव्यषंखे वेष्टयित्वा तेन बालस्य दक्षिणकर्णे पंचघोषपुरस्सरं अमुक शर्माऽसि दीर्घायुर्भव इति कथयेत्।

यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है ब्राह्मण बालक के लिए अन्त में शर्मा का उच्चारण करने चाहिए जैसे उपेन्द्र शर्मा । क्षत्रिय के लिए अन्त में वर्मा, वैश्य के लिए गुप्ता शूद्र के लिए दास कहना चाहिए ।

जैसा कि कहा गया षर्मान्तं ब्राह्मणस्य, वर्मान्तं क्षत्रियस्य गुप्तान्तं वैष्यस्य, दासान्तं 'शूद्रस्य नाम कुर्यात् ।

ततो नामकरणदक्षिणा संकल्प - अद्येहेत्यादि संकीर्त्य अमुकराशेर्बालकस्यास्य

नामकर्माख्यसंस्कारकर्मणः सांगतासिध्यर्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं इमां सुवर्णदक्षिणाम् आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे। इति संकल्प्य नामकर्मदक्षिणां दद्यात्।

पुनः संकल्पः - अद्येहेत्यादि संकीर्त्य अमुकराशिरस्य बालकस्य बैजिकगार्भिकदुरितोपषान्तये व्यवहारसिद्धये च कृतस्य नामकरणकर्मणः न्यूनातिरिक्तदोष परिहारार्थं इमां भूयसीं दक्षिणां ब्राह्मणेभ्यो दास्ये । तथा कृतस्य नामकर्माख्यसंस्कारकर्मणः साद्गुण्यार्थं दश वा यथासंख्यकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये। इति संकल्प्य अग्निं सम्पूज्य त्र्यायुषादि कृत्वा अग्निं विसर्जयेत्।

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यतेताध्वरेषु यत्।

स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्याद्यथाश्रुतिः ।।

ॐ विष्णवे नमः ॐ विष्णवे नमः ॐ विष्णवे नमः।

इति नामकरणसंस्कारप्रयोगः

बोधप्रश्न

यहाँ अब आपसे कुछ प्रश्न पूछे जायेंगे जिनका उत्तर आपको देना है।

1. पंचगव्य में कौन-कौन से पदार्थ रहते हैं?
2. दूध में कौन देवता निवास करते हैं?
3. सर्पिः किसे कहते हैं?
4. संस्कार में अद्येहेत्यादि का क्या तात्पर्य है?
5. प्रजापति को स्वाहाकार कैसे दिया जाता है?
6. बिना नाम के ज्ञान को क्या कहते हैं?
7. बालक का नामकरण किस दिन होता है?

2.5 सारांश

इस इकाई में आपके सामने जातकर्म एवं नामकरण संस्कार की चर्चा की गयी है। सर्वप्रथम जातकर्म संस्कार का परिचय एवं उसके बाद शास्त्रीय प्रयोग विधि प्रयोग उसमें है। आज इन दोनों संस्कारों का अत्यन्त अभाव होता चला जाता है। दूसरी स्थिति अच्छे ग्रन्थों से खोजकर परिश्रमपूर्वक इसका सामान्य परिचय एवं सम्पन्न कराने की विधि को उसमें रखा गया है। जातकर्म संस्कार को उद्देष्य करके इसका उद्भव, सूतिकागृह का स्थान इस संस्कार का प्रयोजन, सोष्यन्तीकर्म, मेधाजनन, आयुष्यवर्धन, स्तनपान एवं सूतक की अवधि आदि के विषय में मतान्तरों को देते हुए निर्णीत एवं उचित पक्ष पर भी विचार किया गया है। इसी तरह नामकरण संस्कार में इसका संक्षिप्त

परिचय, नामकरणकाल, मुहूर्त, नाम रखने के प्रकार एवं प्रयोगविधि आदि की चर्चा की गई है जिसे आप स्वयं पढ़कर अनुभव करेंगे।

इस प्रकार ये दोनों संस्कार संक्षेप में सम्पन्न हुए। हाँ इसमें कहीं त्रुटि आदि समझ में आवे तो अवश्य ही हमें संकेत करेंगे यह मेरा आपसे निवदेन है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

प्राशयति = खिलाता है

अवर = जरायु (झिल्ली युक्त गर्भ)

अवेतु = नीचे की ओर गिरे

नाभ्याम् = नाभि के समीप

ब्रह्म = वेद

प्रतिदिशं = प्रत्येक दिशा में

शण्डग्रह = मारकग्रह

अपह्वर = टेढ़ा करने वाले

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

प्रथम अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. गर्भाधान
2. जातकर्म
3. पुत्र की आयु एवं श्री की वृद्धि ही जातकर्म संस्कार का मुख्य प्रयोजन है।
4. मेधाजन जातकर्म संस्कार से सम्बद्ध है।
5. बालक के सम्पूर्ण आयु प्राप्ति के लिए वात्सप्रसंज्ञकमंत्र (अनुवाक) का पाठ किया जाता है।
6. जननाशौच में 10 दिन का सूतक रहता है।
7. प्रसव की पीडा से विकल स्त्री को, जिसे सुखपूर्वक प्रसव कराने की प्रक्रिया को सोष्यन्ती कर्म कहते हैं।

द्वितीय अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. पंचगव्य में गो दूध, गो दधि, गो घृत, गो मूत्र, गोमय एवं कुषोदक होते हैं।
2. गो के दूध में चन्द्रमा निवास करते हैं।

3. सर्पिः घी (गोघृत) को कहते हैं।

4. संकल्प में अद्येहेत्यादि का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक संकल्प का पूर्वार्द्ध ऊँ विष्णुः से लेकर गोत्रः तक बोलना है।

5. प्रजापति को बोलकर (वाणी से) स्वाहाकार नहीं किया जाता है, अपितु मन से (मन में ध्यान कर) इसीलिए मनसा कहा गया है।

6. बिना नाम के ज्ञान को निर्विकल्पक ज्ञान कहते हैं।

7. बालक का नामकरण 11वें दिन होता है।

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. संस्कारदीपक - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द पर्वतीय

2. पारस्करगृह्यसूत्र - आचार्य पारस्कर (गदाधर भाष्य)

3. हिन्दूसंस्कारविधिः - डा. राजबली पाण्डेय

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. जातकर्म संस्कार का परिचय प्रस्तुत करें।

2. नामकरण संस्कार के महत्त्व पर प्रकाश डालें।

3. पंचगव्य होम की विधि लिखें।

4. पंचगव्य निर्माण मंत्रों को लिखें।

इकाई 3 – अन्नप्राशन संस्कार

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

झेइससे पूर्व की इकाई में आप जन्मोत्सव की विधि को अच्छी तरह से सम, जिसमें कि एक संक्षेप विधि भी आपको अवगत कराई गई है, जिसे कम समय में ही इसे आप सम्पन्न करा सकते-हैं। तथा अन्नप्राशनसंस्कार का रहस्य समझ सकते हैं। अब आपको इस प्रस्तुत इकाई में अन्नप्राशन - सर्वाधिक प्रचलित है। संस्कार के विषय में कुछ और भी रहस्य बताया जायेगा जो वर्तमान समाज में एवं विज्ञलोग प्रायः इसे अपने घर में सविधि सम्पन्न करते हैं।

यह एक ऐसा संस्कार है, जिसे प्रायः घर के बड़े बुजुर्ग लोग इसे सम्पन्न करते हैं तथा जिन्हें विधि भी मालूम रहती है, परन्तु आजश विधि के अनुसार अन्नप्राशन में कुछ अं-कल शास्त्रीय- अवश्य ही छूट जाते हैं, जिन्हें हम जानते नहीं हैं, जैसे होम आदि। इन अंशों को भी आपके सामने रखा जा रहा है जिससे यह विधि पूर्ण हो जाय तथा इसे समाज के समक्ष प्रस्तुत कर भारतीय संस्कृति के अभ्युदय में आप की भी सहभागिता सिद्ध होगी।

3. 2उद्देश्य

अध्ययन के बाद आपको अन्नप्राशन संस्कार की विधि या अनुष्ठान को इस संस्कार के, जानने में सुगमता होगी, तथा ऋषि – महर्षियों द्वारा निर्मित संस्कारों का जीवन में उपयोग एवं महत्व को समझ पायेंगे।विशेषताया संस्कारों में अन्नप्राशन संस्कार का ज्ञान आप इस इकाई से कर लेंगे।

3.3 अन्नप्राशन संस्कार का परिचय एवं महत्व

महर्षि सुश्रुत के अनुसार''षण्मासं चैनमन्नं प्राशयेल्लघुहितं च'' शिशु को छठे महीने में माँ के दूध से अलग कर देना चाहिए। और उसे सुपाच्य, मुलायम, पेय आदि अन्न पर निर्भर कराना चाहिए। जन्म से सर्वप्रथम मनुष्य को अन्न खिलाने की विधि ही अन्नप्राशन संस्कार है। अन्न का अर्थ तो आप समझते ही हैं। प्राशन में प्र उपसर्ग है अशन का अर्थ भोजन है, जिसे संस्कृत में अश्नाति भी बोलते हैं। आशन या अशन का साधन ही संक्षिप्त रूप से अन्न है। उपनिषदों में अन्न को ब्रह्म माना गया है। ''अन्नं वै ब्रह्म''। इसी अन्न का प्राशन अर्थात् प्रथमबार खिलाने को अन्नप्राशन कहते हैं। इसको भारतीय संस्कृति में-'अन्नप्राशन संस्कार' नाम से विभूषित किया गया है। महर्षिपारस्कर द्वारा विरचित पारस्करगृह्यसूत्र है (कल्पसूत्र का अंग), जो सम्पूर्ण उत्तरभारत की की (शुक्लयजुर्वेद)

शाखा का गृह्यसूत्र है, इसमें भी आचार्यपारस्कर कहते हैं कि ‘षष्ठे मासि अन्नप्राशनम्’ इसका तात्पर्य है छठे महीने में अन्न का प्राशन अन्नप्राशनसंस्कार का सामान्य अर्थ है-, जन्म से पहली बार अन्न बालक को खिलाना। बात यह है कि शिशु का जब जन्म होता है, तब उसे दाँत नहीं होते हैं। दाँतों का प्रादुर्भाव बाद में होता है। तथा वे दाँत कुछ समय के बाद निकल जाते हैं तथा फिर से नये दाँत उत्पन्न होते हैं जो चिरस्थायी होते हैं। यह प्रभु की ही लीला है। इसे दूध का दाँत भी लोग गाँवों में कहते हैं। शिशु के जन्म के पहले ही माँ के स्तनों में दूध आ जाता है जन्म बाद में होता है, यह प्रकृति की लीला है। जन्म के समय शिशु के अंग प्रत्यंग अत्यन्त छोटे छोटे होते हैं उसी के अनुरूप पाचनव्यवस्था भी होती है। अतः उसे जन्म से कुछ काल के बाद शरीर पुष्ट होने के लिए आहार की आवश्यकता होती है। आप देखेंजन्म के समय शिशु को पेय एवं पुष्ट तथा मुलायम पदार्थ की ! आवश्यकता होती है, जिसे प्रकृति या ईश्वर स्वयं माँ के दूध के रूप में उसको प्रकट करते हैं। जन्म के समय से ही बच्चे की आहार की व्यवस्था प्रभु कर देते हैं। उसे आगे की चिन्ता करने की जरुरत नहीं होती है। जब जन्म के समय में ही प्रभु ने आहार की व्यवस्था की तो आगे भी अवश्य करेंगे ऐसा विश्वास करना चाहिए। परन्तु ऐसे प्रभु पर पर आज लोग विश्वास नहीं करते इसीलिए दुःखी रहते हैं। बच्चे के लिए माँ का दूध अमृत के समान होता है। आजभी इसे अच्छी तरह कल के वैज्ञानिक- स्वीकार करते हैं। बालक के शरीर के समस्त आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति माँ के दूध से हो जाती है। उसे किसी दूसरे आहार की आवश्यकता नहीं होती है।

प्रारम्भिक काल में बच्चे को दूध पिलाना माता के लिए अनिवार्य है परन्तु जब शिशु को दाँत आ जाते हैं, एवं शिशु जब चलने का प्रयास करने लगे, तो उसे दूध के अलावा परिश्रम के अनुकूल अन्य तत्त्वों की भी आवश्यकता होती है। दूध में मुख्यरूप से कैल्सियम नामक तत्त्व पाया जाता है। अधिक काल तक दूध पिलाने से माता का शरीर भी कमजोर होने लगता है, तथा कैल्सियम की कमी होने लगती है, जिसका दुष्परिणाम शरीर में होने लगता है। अंग प्रत्यंग स्वयं प्रभावित होने लगते हैं परिणाम स्वरूप माता का शरीर क्षीण होने लगता है। जिसके लिए प्रत्येक माता अपने बच्चे को तभी तक दूध पिलाती है जब तक कि उस बच्चे का अन्नप्राशन संस्कार नहीं हो जाता है। यह संस्कार होते ही बालक अन्न के प्रति धीरेधीरे अनुरक्त होने लगता है। तथा माँ का - दूध उससे छूट जाता है। तथा अन्य आहार लेकर वह सबल एवं पुष्ट होने लगता है।

अन्नप्राशन का शिशु पर प्रभाव

प्रायः शिशु का शरीर पूर्णतया जन्म के समय अविकसित ही रहता है। उसके पास दाँत नहीं होते हैं। इसलिए गरिष्ठभोजन उसके लिए अनुकूल नहीं पड़ता है। किसी तरह ग्रहण भी कर लेता है - तो वह पच नहीं सकता। जिससे उसको लाभ कम, हानि ज्यादा ही होती है। शिशु के शरीर को विकसित करने के लिए माता का दूध अमृत के समान है। यह हम पहले भी आपको बता चुके हैं। परन्तु जैसे जैसे बालक के शरीर का विकास होता है उसको और पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है। इसीलिए की शिशु के दाँत भी उत्पन्न हो जाते हैं जिससे यह लक्षित होता है कि अब उसे न केवल दूध की आवश्यकता है अपितु उसे अब अन्न भी चाहिए । इस प्रकार अन्नप्राशन संस्कार जन्म से छठे महीने में कर देना चाहिए। यही शास्त्र की विधि है। इसमें कारण यह भी है कि बच्चे की पाचन शक्ति तब तक विकसित हो जाती है एवं आहार लेने के लिए दाँत भी निकल आते हैं।

यहाँ प्रसंगतः दाँत निकलने के प्रभाव एवंदुष्प्रभाव की भी चर्चा आपसे थोड़ी हो जाय।

दन्तजनन प्रभाव दुष्प्रभाव एवं शान्ति के उपाय

मुहूर्त्तचिन्तामणि ग्रन्थ के अनुसार यदि प्रथम मास में ही शिशु के दॉत निकल आवे तो शिशु स्वयं नष्ट हो जाता है । द्वितीय मास में अनुज की हानि की आशंका रहती है, तृतीय मास में भगिनी

की हानि, चौथे महीने में माता के लिए कष्टकारी होता है। पॉचवें में अग्रज की हानि होती है। छठवें महीने में अत्यन्त सुख, सातवें महीने में पिता से सुख, आठवें में पुष्टि, नवें महीने में धनवान, दसवें महीने में अत्यन्त सुखी होता है। दॉत सहित जो बालक का जन्म होता है वह अपने माता – पिता के लिए हानिकारक होता है। यथा गोस्वामी तुलसीदास जी का जन्म के साथ ही दॉत निकलने के कारण उनके जन्मोपरान्त ही उनके माता – पिता का निधन हो चुका था। इसके लिए श्री चण्डेश्वर आचार्य के निम्नश्लोकों का अवलोकन करना चाहिए।

प्रथमे दन्तजननात् स्वयमेव विनश्यति।
द्वितीये भ्रातरं हन्ति तृतीये भगिनीं तथा ।।
चतुर्थे मातरं हन्ति पंचमे स्वात्मनोग्रजम्।
षष्ठे च मन्त्रजीवी स्यात् सप्तमे पितृसौख्यद ।।
अष्टमे पुष्टिजनको नवमे लभते धनम्।
लभते दशमे मासि सौख्यमेकादशेऽपि वा ।।
द्वादशे धनसम्पत्तिः दन्तानां जनने फलम्।

पद्मपुराण विष्णुधर्मोत्तर में परशुराम के प्रति पुष्कर ने भी कहा है-

दन्तजन्मनि बालानां लक्षणं तन्निबोध मे।
उपरि प्रथमं यस्य जायन्ते च शिशोर्द्विजा ।।
तैर्वा सह च यस्य स्यात् जन्मभार्गव सत्तम।
मातरं पितरं चाथ खादेतात्मानमेव वा ।।

इस प्रकार यहाँ दन्तजनन का फल विशेष बतलाया है। इसके शान्ति को दन्तजनन शान्ति के नाम से जाना जाता है। अवसर आने पर इस शान्ति को कराना चाहिए।

अन्नप्राशन संस्कार का समय -

अब यहॉ अन्नप्राशन संस्कार की चर्चा करते हैं , क्योंकि अन्नप्राश्न समय का ज्ञान होना भी अत्यावश्यक है।

गृह्यसूत्रों के अनुसार यह संस्कार शिशु के जन्म के पश्चात् छठे मास में किया जाता है। मनु एवं याज्ञवल्क्य स्मृतियों का भी यही मत है। किन्तु आचार्य लौगाक्षि संस्कार की गणितीय गणना के आधार पर निश्चित काल से सहमत नहीं है, तथा ये व्यक्तिगत परीक्षा निर्धारित करते हैं। इनके अनुसार पाचनशक्ति के विकसित हो जाने पर अथवा दाँतों के निकलने पर ही अन्नप्राशन संस्कार करना चाहिए। जैसे -''**षष्ठे अन्नप्राशनं जातदन्तेषु वा**''। अर्थात् दाँत उत्पन्न होने पर ही यह संस्कार

करना चाहिए। कभी कभी दाँत एक वर्ष तक भी नहीं आते हैं अतः यह पक्ष लौगाक्षि का सर्वसम्मत नहीं मालूम पड़ता है। दाँत, शिशु में ठोस अन्नग्रहण करने की क्षमता के विकसित होने के प्रत्यक्ष चिह्न थे। पहले चार मास के पूर्व शिशु को अन्न देना कठोरतापूर्वक निषिद्ध था। दुर्बल शिशु के लिए यह अवधि बढ़ायी जा सकती है। यह भी वचन प्राप्त होता है जो भी हो, इन सभी विकल्पों में गृह्यसूत्र ही स्पष्ट रूप से प्रमाण है। इसी के अनुसार कार्य करना चाहिए।

अन्नप्राशन संस्कार जन्म से छठे सौर मास में अथवा किसी कारणवश स्थगित होने पर आठवें, नवें, दसवें मास में भी करना चाहिए। किन्तु कुछ आचार्यों के मत में बारहवें मास में अथवा एक वर्ष पूर्ण हो जाने पर भी करना चाहिए। जैसा कि -

जन्मतो मासि षष्ठे वा सौरेणोत्तममन्नदम् ।
तदभावेऽष्टमे मासे नवमे दशमेऽपि वा ।।

इस प्रकार इसकी अन्तिम सीमा एक वर्ष थी जिसके आगे यह संस्कार स्थगित नहीं हो सकता था क्योंकि इसका और भी अधिक रुकना माता के स्वास्थ्य एवं शिशु की पाचनशक्ति के विकास के लिए हानिकारक होगा।

भिन्न है-इन सभी बातों पर समीक्षा करते हुए निष्कर्ष यही है कि मतान्तर अवश्य भिन्न, परन्तु लोकाचार एवं शास्त्रीय विधि को देखते हुए आचार्यपारस्कर एवं मनु का मत अवश्य ही ग्राह्य है। अर्थात् बच्चे का अन्नप्राशन छठे मास में ही करना श्रेयस्कर होगा। यह मत प्रत्येक दृष्टि से अच्छा है।

3.4 अन्नप्राशन मुहूर्त विचार

अन्नप्राशन संस्कार के समय ज्ञान के पश्चात् उसके शुभाशुभ मुहूर्त्त का ज्ञान भी आवश्यक है । अत: यहॉ अब सम्बन्धित मुहूर्त्त की चर्चा करते हैं -

सर्वप्रथम आचार्यों ने दुर्बल शिशुओं के लिये छ: मास के भीतर ही अन्नप्राशन करने की सलाह दी हैं। सबल बच्चों का अन्नप्राशन छ: मास के पश्चात् ही करना चाहिए ।

भारतीय मुहूर्त्त ग्रन्थों में चन्द्रमा, पूर्ण चन्द्रमा, गुरु बुध भौम सूर्य शनि शुक्र ये यदि लग्न से स्थानों में से किसी स्थान में हो तो शिशु क्रम से भिक्षाटन करने वाला यज्ञ करने 9,5,12,1,5,7,8 वाला, दीर्घजीवी, ज्ञानी, पित्तरोगी, कुष्ठी, अन्नाभाव से दुःखी वातरोगी एवं भोगों को भोगने वाला होता है। अर्थात् उक्त स्थानों में से किसी स्थान में क्षीण चन्द्रमा हो तो भिक्षा माँगकर खाने वाला,

पूर्णचन्द्र हो तो यज्ञ करने वाला होता है। इसी प्रकार रिक्ता, नन्दा, अष्टमी, अमावश्या, द्वादशी इन तिथियों को शनि, भौम, रवि इन दिवसों में, छठे मास में, सम मासों में बालकों का और पाँचवें से विषम मासों में कन्याओं का मृदु, लघु, चर और स्थिर संज्ञक नक्षत्रों में अन्नप्राशन करना उत्तम होता है।

अन्नप्राशन के विशेष मुहूर्त

संस्कार में इस प्रकार लग्नों का विचार करना -आचार्य कश्यप के अनुसार अन्नप्राशन चाहिए।

गोश्वकुम्भतुलाकन्यासिंहकर्कनृयुग्मकाः।
शुभदा राशयः चैते न मेषझषवृश्चिकाः।।

अर्थात् वृष, धनु, कुंभ, तुला, कन्या, सिंह, कर्क एवं मिथनु लग्न में अन्नप्राशन करना अत्यन्त उत्तम माना जाता है। मेष मीन एवं वृश्चिक लग्नों का निषेध है।

जैसा कि वसिष्ठ जी ने कहा-

युग्मेषु मासेषु च षष्ठमासात् संवत्सरे वा नियतं शिशूनाम्।
अयुग्ममासेषु च कन्यकानां नवान्नसम्प्राशनमिष्टमेतत्।।

अर्थात् बालकों को छठे मास से युग्म मासों में तथा कन्याओं का पाँचवें मास से विषम मास में अन्नप्राशन कराना चाहिए।

एक बात और यहाँ ध्यान देनेयोग्य है कि प्रायः जन्मनक्षत्र अन्य कर्मो में अशुभ मानी गई है परन्तु कुछ ऐसे भी कर्म है जिन्हें जन्मनक्षत्र में करने का आदेश शास्त्र से प्राप्त होता है। जैसे नारद जी का वचन है-

पट्टबन्धनचौलान्नप्राशने चोपनायते।
शुभदं जन्मनक्षत्रमशुभं त्वन्यकर्मणि।।

अर्थात् पट्टबन्धन पट्टाभिषेक या राज्याभिषेक में, मुण्डन में, अन्नप्राशन में एवं उपनयन में जन्म की नक्षत्र उत्तम मानी गई है। तथा अन्य कर्मो में वह अशुभ मानी जाती है। इस प्रकार अन्नप्राशन जन्मनक्षत्र में भी किया जा सकता है।

भोजन के प्रकार

अन्नप्राशन में सर्वप्रथम बच्चे को क्या खिलावे यह सबसे बड़ा प्रश्न है। इस पर अवश्य ही हमें विचार करना चाहिए। प्राचीनकाल में भोजन के प्रकार भी धर्मशास्त्रों द्वारा निर्णीत थे। साधारण नियम यह था कि शिशु को समस्त प्रकार का भोजन और विभिन्न स्वादों का मिश्रण कर खिलाना

चाहिए। जैसा कि पारस्करगृह्यसूत्र में कहा गया है -'प्राशनान्ते सर्वान् सर्वमन्नमेकत उद्धृत्याथैनं प्राशयेत्' अर्थात् संस्रव प्राशन के पश्चात् मधुर आदि सभी रसों और भक्ष्य, भोज्य, लेह्य चोष्य प्रभृति सभी अन्नों को एक पात्र से उठाकर मुलायम करके शिशु को चटाना चाहिए। या जो लोकाचार पक्ष हो पहले उसे करना चाहिए। अर्थात् जिससे शिशु को जिसे खाने में कष्ट न हो। उसे खिलाना चाहिए। कतिपय धर्मशास्त्री दही, मधु और घी के मिश्रण का विधान करते हैं।

विविध गृह्यसूत्रों में कामना भेद से मांस खाने का विधान भी दिया गया है। परन्तु यह क्षत्रिय इत्यादि वर्णो के लिये है, जो इसका सेवन करते हैं, ब्राह्मणों के लिए नहीं है। उदाहरण के लिए एक दो नाम आपके सामने रखता हूँ।

'भारद्वाज्यामांसेन वाक्प्रसादकामस्य' अर्थात् पिता अपने पुत्र को उत्तम वक्ता बनाना चाहता हो तो भारद्वाजी पक्षिणी का माँस शिशु को चटावे। शीघ्रगामी होने की कामना से मछली का रस उसे चटाया जाना चाहिए। इस प्रकार बहुत सारी कामनाओं के लिए भिन्नभिन्न प्रकार के भोजन - है लेकिन ये समर्थ व्यक्तियों अर्थात् खाने में समर्थ लोगों के लिए ही है न कि सभी के लिए। जो इसका सेवन नहीं करतेहैं उनके लिए यह नहीं है। उनके लिए तो देवताओं की आराधना या गायत्री का जप ही सर्वश्रेष्ठ उपाय है जिससे कि सारी कामनायें पूर्ण हो जाती है।

उसी प्रकार तीक्ष्णबुद्धि के लिए घी, भात, दृढ इन्द्रियों के लिए दही, भात और पितायदि शिशु में उक्त सभी गुणों को चाहता है तो सभी पदार्थों से उसे भोजन कराना चाहिए।

मार्कण्डेयपुराण के अनुसार शिशु को मधु और घी के साथ खीर खिलाने का विधान है। यही पक्ष सर्वमान्य भी है। आजकल लोग खीर या हलवा ही खिलाते हैं जो उत्तम है तथा खाने लायक भी शिशु के लिए है।'मध्वाज्यकनकोपेतं प्राशयेत् पायसन्तुतम्'

भोजन किसी भी प्रकार का क्योंकि न हो यह बात सदा ध्यान में रहे कि भोजन लघु तथा शिशु के लिए स्वास्थ्यवर्धक हो। इसीलिए आचार्य सुश्रुत कहते हैं कि अन्नप्राशन में शिशु को लघु एवं हितकर अन्न खिलाना चाहिए।

'षण्मासं चैतमन्नं प्राशयेल्लघु हितं च'

इस संस्कार के कर्मकाण्ड तथा उसका महत्त्व

भोजन के पदार्थ अवसरोचित -वैदिककाल में अन्नप्राशन संस्कार के दिन सर्वप्रथम यज्ञीय मन्त्रों के साथ स्वच्छ-वैदिक किये और पकाये जाते थे। भोजन तैयार हो जाने पर वाग्देवता को इन शब्दों के साथ एक आहुति दी जाती थी। देवताओं ने वाग् देवी को उत्पन्न किया है। यह मधुर ध्वनि

वाली, अति प्रशंसित वाणी हमारे पास आये। द्वितीयआहुति उर्ज्जा प्राप्ति के निमित्त दी जाती है। - आज हम उर्ज्जा को प्राप्त करें। उपर्युक्त यज्ञों की समापन पर निम्नलिखित शब्दों के साथ चार आहुतियाँ और दी जाती है। जो आगे प्रयोग में आपको अवगत कराया जायेगा।

शु की समस्तशि इन्द्रियों की सन्तुष्टि पुष्टि के लिए प्रार्थना की जाती थी, जिससे वह सुखी एवं सन्तुष्ट जीवन व्यतीत कर सके, किन्तु एक बात ध्यान में अवश्य रखी जानी चाहिए कि सन्तुष्टि एवं तृप्ति की खोज में स्वास्थ्य एवं नैतिकता के नियमों का उल्लंघन नही करना चाहिए उससे मनुष्य के यश का क्षय होता है। आहुति के अन्त में पिता बालक को खिलाने के लिए सभी प्रकार के भोजन तथा स्वाद को पृथक् पृथक् रखता है और मौनपूर्वक अथवा हन्त शब्द का उच्चारण करके शिशु को भोजन कराता है।

3.4 अन्नप्राशन प्रयोग

क्रियः शुचिःअथान्नप्राशनदिने कर्ता कृतनित्य, शुक्लवासाः बद्धशिखः कृतचन्दनः स्वासने उपविश्य दीपं प्रज्ज्वलय्य आचम्य प्राणानायम्य स्वस्तिवाचनं पूजा संकल्पं कृत्वा विष्णुर्विष्णुः अमुकगोत्रः अमुकराशिः अमुकशर्माऽहं .... श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य पुत्रस्य करिष्यमाण अन्नप्राशनसंस्कारकर्मणि निर्विघ्नतासिद्धये गणेशाम्बिकयोः अमुकराशेः ममास्य यथालब्धोपचारैः पूजनं अहं करिष्ये। ततः षोडशोपचारैः गणेशाम्बिकयोः पूजनं कुर्यात्।

अन्नप्राशन संस्कार करने के पश्चात् यजमान अपनी नित्यक्रिया पूर्ण करके पवित्र (कर्ता) स्त्र को धारण करहोकर नये व, सुन्दर कम्बल के आसन पर बैठकर शिखा में ग्रन्थि लगाकर, माथे पर तिलक करके, आचमन, प्राणायाम करने के बाद उसे संकल्प करना चाहिए। संकल्प के बाद षोडशोपचार से गणेशाम्बिका का पूजन करें। इसके बाद प्रधान संकल्प करे।

प्रधानसंकल्पः ग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकवासरे पूर्वोच्चारित एवं - अमुकशर्माऽहं मम अमुकराशेः अस्य बालकस्य मातृगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थम् अन्नप्राशनाख्यं कर्म करिष्ये। तत्पूर्वाङ्गत्वेन गणपतिसहितगौर्यादि षोडशमातृकाणां पूजनं नान्दीश्राद्धं पुण्याहवाचनं च करिष्ये।

यहाँ प्रधान संकल्प करने के बाद कलशपूजन, पुण्याहवाचन, षोडशमातृका एवं सप्तमातृकाओं का पूजन करके नान्दीश्राद्ध करना चाहिए। कहीं कहीं लोकाचारवश स्थान भिन्न होने के कारण पूजन के क्रम में आगे पीछे भी देखा जाता है, जैसे नान्दीश्राद्ध करने के बाद कहीं पर पुण्याहवाचन होता है, जो ठीक नहीं है। क्रम जिस प्रकार आपको बताया गया है ठीक उसी प्रकार

यहाँ भी पंचांग पूजन करने के बाद पंचभूसंस्कार करे एवं इसके बाद अग्नि स्थापन करके आचार्य का वरण करें।

यहाँ यह ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि अन्नप्राशन के अग्नि का नाम शुचि है। क्योंकि प्रत्येक संस्कारों की अग्नियाँ भिन्नभिन्न होती है। अतः शुचि नामक अग्नि की स्थापना करें। अग्नि - स्थापना के पहले ही कुश कंडिका कर लेना चाहिए। आज अच्छे अच्छे विद्वानों को भी अच्छी तरह कुशकंडिका नहीं आती। अतः कुशकंडिका यहाँ संक्षेप में आपको बताया जा रहा है। ''अग्नेर्दक्षिणतः त्रिभिः कुशैः ब्रह्मणे आसनं दत्वा तत्राग्नेः पूर्वमार्गेण ब्रह्माणमुपवेश्य अग्नेरुत्तरतः आसनद्वयं कल्पयित्वा प्रणीतापात्रं वामहस्ते कृत्वा उदकेन पूरयित्वा दर्भैराच्छाद्य ब्रह्मणोमुखमवलोक्य पश्चिमासने निधाय आलभ्य पूर्वासने निदध्यात्। ततः पूर्वपश्चिमयोरुत्तराग्रैः दक्षिणोत्तरयोः पूर्वाग्रैः कुशैः परिस्तरणं कृत्वा त्रीणिकुशतरुणानि द्वे पवित्रे प्रोक्षणीपात्रम्, आज्यस्थालीम्, चरुस्थालीम्, सम्मार्जनकुशान् उपयमनकुशान्, समिधः स्रुवम्, आज्यम्, तण्डुलान्, पूर्णपात्रम्, दक्षिणाम् एतानि वस्तूनि प्राक्संस्थानि उदगग्राणि अग्नेरुत्तरतः संस्थापयेत्।

द्वयोरुपरि त्रीणि निधाय ततस्त्रिभिः कुशैः द्वे प्रविच्छिद्य प्रोक्षणीपात्रं प्रणीतातः उत्तरतो निधाय तत्र प्रणीतोदकमासिच्यपवित्राभ्यामुत्पूय पवित्रे प्रोक्षण्यां निधाय, तत्पात्रं वामे कृत्वा तदुदकं दक्षिणेनोच्छाल्य प्रणीतोदकेन प्रोक्ष्य प्रोक्षण्युदकेन आज्यस्थाल्यादीनि दक्षिणान्तानि प्रत्येकं प्रोक्षेत्। ततः आज्यस्थाल्याम् आज्यं प्रक्षिप्य चरुस्थाल्यां प्रणीतोदकमासिच्य त्रिः प्रक्षालितांस्तण्डुलांस्तत्र प्रक्षिप्य युगपदवाग्नौ आरोपयेत् आज्यं, ब्रह्मा, चरुं, स्वयमाचार्यो वा आज्योत्तरतः ज्वलदुल्मुकं उभयोः समन्तात् भ्रामयेत् उदकस्पर्शः। स्रुवमधोमुखं प्रतप्य उदकं स्पृष्ट्वा कुशाग्रैर्मूलतोऽग्रपर्यन्तं कुशमूलैरग्रतो मूलपर्यन्तं सम्माज्र्य अभ्युक्ष्य पुनः प्रतप्य उदकं स्पृष्ट्वा दक्षिणतः कुशेषु निदध्यात्। आज्यमुत्थाप्य चरोः पूर्वेण नीत्वा उत्तरतः संस्थाप्य आज्यमग्नेः पश्चादानीय चरुं चानीय आज्यस्योत्तरतो निधाय पवित्राभ्यामाज्यमुत्पूय प्रोक्षणीं च उत्पूय उपयमनकुशान् वामकरे कृत्वा तिष्ठन् घृताक्ताः समिधः तूष्णीमग्नौ प्रक्षिप्य प्रोक्षण्युदकेन ईशानाद्युत्तरपर्यन्तं पर्युक्ष्य पवित्रे प्रणीतायां निधाय प्रोक्षणीपात्रं संस्रवधारणार्थं प्रणीताग्न्योर्मध्ये द्रव्यदेवताभिध्यानं कुर्यात्।

आपको हिन्दी में संक्षेपपूर्व आपकी सरलता के लिए यहाँविधि भी बतायी जा रही है, क्योंकि संस्कृत के पारिभाषिक शब्दों का यह प्रयोग कुछ कठिन सा प्रतीत होता है, अतः उसे समझकर हिन्दी में आपके सामने संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

ब्रह्मा के आसन पर ब्रह्मा को बिठाये। यजमान कहें जब तक कर्म की समाप्ति न हो तब - आज्ञा से प्रणीता पात्र को जल से मैं रहूँगा। इसके बाद ब्रह्मा की - तक आप ब्रह्मा बने रहें। ब्रह्मा कहें

भर दें, तथा प्रथमरख आसन पर- ब्रह्मा के मुख को देखकर दूसरे आसन पर उस प्रणीता को रखें। इसके बाद अग्निकोण से ईशानकोण पर्यन्त परिस्तरण करें। बर्हि इक्यासी कुशा या मुट्ठी (कुश समूह) तुर्थभाग को अपने बायें हाथ में लेकर अग्रभाग भर कुशा को बर्हि संज्ञा से हम जानते हैं। इसके च वाली कुशाओं से दाहिने हाथ से उत्तर की ओर अग्निकोण से ईशानकोण तक पूर्व की ओर अग्रभाग वाली कुशाओं से अग्निकुण्ड से प्रणीतापात्र तक कुशा बिछावे। पुनः हाथ में जल लेकर उलटा घुमावें। इसके बाद पात्रासादन करे। एक जगह तीन कुशा, दो कुशा, प्रोक्षणीपात्र, आज्यस्थाली, चरुस्थाली, सम्मार्जनकुशा पाँच, उपयमनकुशा सात तीन समिधा स्रुव, घी, चावल पूर्णपात्र वृषमूल्य दक्षिणा आदि रखें।

पवित्र निर्माण के लिए दो कुशाओं के ऊपर तीन कुशा को रखे और दो कुश के मूलभाग से दो बार अनामिका अंगूठे से पकड़कर तीन कुशाओं को तोड़ दे। अर्था प्रदक्षिण घुमाकर सभी कोत् इनमें दो का ग्रहण करके तीन का त्याग करना है। हाथ में उन कुशाओं को लेकर प्रणीता के जल को तीन बार प्रोक्षणी के जल को प्रादेशमात्र उछालें। पुनः प्रोक्षणीपात्र को बायें हाथ में लेकर दाहिने हाथ से प्रोक्षणी जल को ऊँचा उठावे। प्रणीता पात्र के जल से प्रोक्षणी के जल का प्रोक्षण करें प्रोक्षणी के जल को ऊँचा उठावे। प्रणीता पात्र के जल से प्रोक्षणी के जल का प्रोक्षण करे प्रोक्षणी के जल से आज्यस्थाली, चरुस्थाली, सम्मार्जनकुशा-, उपयमनकुशा-, समिधा, स्रुवा, आज्य, तण्डुल, पूर्णपात्र तथा वहाँ रखे हुए सभी पदार्थों का प्रोक्षण करें। पुनः अग्नि और प्रणीता के मध्य में उस प्रोक्षणीपात्र को रखें। इसके बाद घृतपात्र में घी को भरें। अग्नि के पश्चिम पवित्र सहित चरुपात्र में प्रणीता जल से आसेचन पूर्वक चावल छोड़ें। ब्रह्मा के दक्षिणभाग में उस घृतपात्र को रखें। घृतपात्र के उत्तर से चरुपात्र अग्नि पर रखें। जलती हुई लकड़ी लेकर उसे घी के कटोरे के चारों तरफ सीधा घुमावें। पुनः उसी तरह उसे उल्टा घुमायें। इसके बाद जल का स्पर्श करें। इसे ही इतरथावृत्ति कहते हैं। चरु के आधे पक जाने पर स्रुवा के अग्रभाग से स्रुवा के अर्धमुख का सम्मार्जन एव (झाड़ना)ः अन्दर तथा मूल एवं स्रुवा के बाहरी भाग का सम्मार्जन कर प्रणीता के जल से स्रुवा का अभ्युक्षण करें। सम्मार्जन कुशाओं को अग्नि में छोड़ दें। स्रुवा को अग्नि में तपाकर अपने दाहिनी ओर रखे। घृतपात्र को अग्नि से उतारकर चरु के पूर्वदिशा से ले आकर अग्नि के उत्तर तरफ स्थापित कर दें। पुनः चरु को अग्नि पर से उतारकर अग्नि के उत्तर तरफ से ही घृतपात्र की प्रदक्षिणा कर घी के उत्तर भाग की ओर चरु को रखें। पुनः कुशा से घृत को ऊपर की ओर उछाले। घी को अच्छी तरह देखे तथा उसमें पड़े अपद्रव्य आदि को बाहर कर दें। पुनः प्रोक्षणी (तृण) का जल छिड़के। उपयमनसंज्ञक सात कुशाओं को बायें हाथ में लेकर खड़े होकर दाहिने हाथ में घृताक्त तीन समिधाओं को लेकर अग्नि में छोड़ दें। इसके

बाद पवित्र धरण किये हुए हाथ से प्रोक्षणी के जल से ईशानकोण से लेकर ईशान कोण, पर्यन्त अग्नि का प्रदक्षिण क्रम से पर्युक्षण करें। पुनः अप्रदक्षिण क्रम से ईशान कोण पर्यन्त अपने दाहिने हाथ को घुमा दें। इसीको इतरथावृत्ति कहते हैं। इसके बाद उन दोनों कुशाओं को प्रोक्षणीपात्र में रखकर अपने दाहिने घुटने को मोड़कर ब्रह्मा से कुशाओं द्वारा अन्वारब्ध करें अर्थात् कुशा से ब्रह्मा का स्पर्श करते हुए प्रदीप्त अग्नि में घी की आहुति करें।

अग्नि के उत्तरभाग में‘ऊँ प्रजापतये स्वाहा’ कहकर आहुति दें। ‘इदं प्रजापतये न मम’ से आहुति से शेष इसी तरह अग्नि के दक्षिणभाग में हुए स्रुवा के घी को प्रोक्षणी पात्र में छोड़ें। (बचे)‘ऊँ इन्द्राय स्वाहा’ से आहुति दें। तथा ‘इदमिन्द्राय न मम’ कहकर प्रोक्षणी पात्र में छोड़ दें। इसके बाद सूर्यादिग्रह, अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता, गणपत्यादि पंचलोकपाल, वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं इन्द्रादि दशदिक्पाल देवताओं को भी समिधा, तिल, चावल, यवादि के मिश्रित हवनीय द्रव्य से आठ या 28 बार आहुति प्रदान करें। फिर हाथ में जल लेकर‘या या यक्ष्यमयाणदेवताः ताभ्यस्ताभ्यः मया परित्यक्तं न मम यथा दैवतानि सन्तु’ कहे। इसके साथ ही यहाँ कुशकण्डिका प्रयोग पूर्ण हो गया।

(इति कुशकण्डिकाप्रयोगः)

अन्नप्राशन संस्कार की प्रधान आहुतियाँ

इसके बाद दो आहुति अधोलिखित मंत्र से घी की दें।

ऊँ देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति।

सा नो मन्द्रेषमूर्ज्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुपसुष्टुतै तु स्वाहा।।

इदं वाचे न मम।

ऊँ देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति।

सा नो मन्द्रेषमूर्ज्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुपसुष्टुतै तु स्वाहा।।

इदं वाचे न मम।

ऊँ वाजो नो अद्य प्रसुवाति दानं वाजो देवाँऽऋतुभिः कल्पयति।

वाजो हिमा सर्व्ववीरं जजानव्विश्वाऽआशाव्वाजपतिर्जयेयम्।।

(इदं वाचे वाजाय च न मम)

रुमभिधार्य आज्युततः स्रुवेण चप्लुतेन स्थालीपाकेन चतस्रः आहुतयो जुहोति(

ऊँ प्राणेनान्नमशीय स्वाहा। इदं प्राणाय न मम।

ऊँ अपानेन गन्धानशीय स्वाहा। इदमपानाय न मम।

ऊँ चक्षुषा रूपाण्यशीय स्वाहा। इदं चक्षुषे न मम।

ऊँ श्रोत्रेण यशोऽशीय स्वाहा। इदं श्रोत्राय न मम।

चरुशेषेण स्विष्टकृत्। ततः आज्यचरुभ्यां ब्रह्मणान्वारब्धो जुहुयात्।

ऊँ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

ततः आज्येन अन्वारब्ध एव भूराद्यानवाहुतीर्जुहुयात्।

ऊँ भूः स्वाहा। इदमग्नये न मम।

ऊँ भुवः स्वाहा। इदं वायवे न मम।

ऊँ स्वः स्वाहा। इदं सूर्याय न मम।

ऊँ त्वन्नोअग्ने वरुणाय विद्वान् देवस्य हेडोऽअवसासिसीष्ठाः।

यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो व्विश्वाद्वेषासि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा।

कहकर आहुति शेष घृत को प्रोक्षणी पात्र में छोड़ें। (इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम)

ऊँ सत्वन्नोऽअग्नेऽवमो भवोतीनेदिष्ठोऽअस्याऽउषसो व्युष्ठौ।

अवयवक्ष्वनो वरुणं रराणो व्वीहिमृडीकं सुहवोनऽएधि स्वाहा।

(इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम)

ऊँ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्चसत्यमित्वमयाऽअसि।

अयानो यज्ञं वहास्ययानो धेहि भेषजं स्वाहा।

(इदमग्नये न मम)

ऊँ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः

तेभिर्न्नोऽअद्य सवितोतविष्णुर्विश्वे मुंचन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा।

(इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम)

ऊँ उदुत्तमं वरुणपाशमस्मदवाधमं व्विमध्यमं श्रथाय।

अथा व्वयमादित्य व्रतेतवानागसो आदितये स्याम स्वाहा।

(मम इदं वरुणाय न)

ऊँ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। ततः संस्रवप्राशनम्। पवित्रप्रतिपत्तिः, प्रणीता विमोकः। ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम्। तत्र संकल्पः पूर्वोच्चरित एवं ग्रहगुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ - णः सगोत्रः शर्माऽहं अमुकराशेः मम पुत्रस्य अन्नप्राशनांगहोमकर्म ादगुण्यार्थं तत्सम्पूर्णफलं प्राप्त्यर्थं च इदं पूर्णपात्रं सद्रव्यं ब्रह्मणे तुभ्यं अहं सम्प्रददे। ब्रह्मा गृहीत्वा अक्रन्कर्मेति मन्त्राशिषं दद्यात्। पूरा मन्त्र अधोलिखित है।

अक्रन्कर्म कर्मकृतः सहव्वाचा मयो भुवा।

देवेभ्यः कर्मकृत्वास्तम्प्रेतसचाभुवः॥

ततः सुलग्ने समागते लग्नदानसंकल्पः अद्य पूर्वोच्चारित एवं ग्रहगुणगणविशेषेण विशिष्टायां - शुभपुण्यतिथौ गोत्रः शर्माऽहं अमुकराशेः मम पुत्रस्यान्नप्राशनलग्नात् यत्र कुत्रस्थितानाम् प्राप आदित्यादिनवग्रहाणां दुष्टानां दुष्टफलोपशान्त्यर्थं शुभानां शुभफलाधिक्य्तये इदं सुवर्ण तन्निष्क्रयदक्षिणां वा ज्योतिर्विदे ब्राह्मणाय दास्ये। दक्षिणान्दत्वा सर्वान् रसान् सर्वमन्नं मध्वाज्यसहितम् एकस्मिन् सुवर्णादिपात्रे कृत्वा सुवर्णान्तर्हितयाऽनामिकया मातुः स्वस्य वा उत्संगे स्थितं स्वलंकृतं प्राङ्मुखं बालकं देवतापुरतो हन्तेति मन्त्रेण प्राशयेत्। ''हन्तकारं मनुष्येति श्रुतेः। ततस्तूष्णीं पंचवारं प्राशयेत्। समन्त्रकं प्राशनं विधाय पंचकृत्वः तूष्णीं प्राशयेत् इति जयन्तस्मरणात्। कन्यां तु तूष्णीमेव प्राशयेत्। ततो मत्स्याधारजलाशयोद्धृतजलेन त्रिवारं मुखं शोधयेत्। ततो माता बालकं पुस्तकादिवस्तुमध्ये स्वांकादुत्सृजेत्। तदा स बालको वस्त्रशस्त्र, लेखनी, पुस्तकादिषु यत् प्रथमं गृह्णाति तेन तस्य जीविका भवेदिति ज्ञातव्यम्। ततो दक्षिणा संकल्पः अद्य पूर्वोच्चरित - स्य ग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकशर्माऽहं अमुकराशेः मम पुत्र अनन्नप्राशनकर्मणः सांगतासिध्यर्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं च इमां दक्षिणाम् आचार्याय अन्येभ्यो ब्राह्मणेभ्यः अन्येभ्यो नटनर्तकगायकादीनानाथेभ्यश्च विभज्य दास्ये। तथा च यशोपपन्नेनान्नेन दश- दीन्यथासंख्यकान् वा ब्राह्मणाँश्च तर्पयिष्ये। दक्षिणां दत्वा अग्न्यासम्पूज्य विसृज्य रक्षाबन्धनं तिलकाशीर्वादं दिकं च कारयित्वा कर्मेदम् ईश्वरार्पणं कुर्यात्। हस्ते जलमादाय अनेन कर्मांगदेवताः प्रीयन्तां न मम। इस प्रकार यहाँ अन्नप्राशन की विधि पूर्ण हो रही है।

3.5 बोधप्रश्न

क . जन्म से कितने महीने पश्चात् शिशु का अन्नप्राशन होना चाहिए।

ख . स्तन्य शब्द का क्या अर्थ है ?

ग . आचार्य स श्रुत के अनुसार शिशु का आहार कैसा होना चाहिए।

घ. किस शब्द का उच्चारण कर शिशु को भोजन कराया जाता है ?

ङ . तीक्ष्णबुद्धि के लिए शिशु को क्या खिलाया जाता है ?

च. शिशु की वाणी में प्रवाह के लिए गृह्यसूत्र में किस पक्षी का मांस खिलाने का विधान है।

छ. दही चावल किस कामना विशेष के लिए खिलाया जाता है।

ज . उपयमन कुशाओं की संख्यकितनी है ?

3.6 सारांश

कराया इस प्रकरण में यहाँ अन्नप्राशन संस्कार का परिचय एवं प्रयोगविधि का ज्ञान आपको गया। प्राचीन काल में अन्नप्राशन संस्कार का महत्त्व यह था कि शिशु उचित समय पर अपनी से पृथक् कर दिये जाते थे। वे माता पिता के स्वेच्छा (दूध) माता के स्तनचारिता पर नहीं छोड़ दिये गये थे जो प्रायः उनकी पाचन की क्षमता पर बिना ध्यान दिये अतिभोजन द्वारा उनके शरीर विकास में बाधा पहुँचाती है। अन्नप्राशन संस्कार माता को भी यह चेतावनी देता है कि एक निश्चित समय पर शिशु को दूध पिलाना बन्द कर देना चाहिए। अनाड़ी शिशु के प्रति स्नेह के कारण उसे एक वर्ष या उससे भी अधिक समय तक अपना दूध पिलाना बच्चे के एवं माता के स्वास्थ्य के प्रति घोर अन्याय है। माता अपने भी स्वास्थ्य की तथा बच्चे के स्वास्थ्य की भी रक्षा नहीं कर पाती। जिससे शिशु का यथार्थ कल्याण न कर अपनी शक्ति का निरर्थक क्षय करती है। शिशु और माता दोनों के हित के लिए इस संस्कार द्वारा सामयिक चेतावनी दी जाती थी, जो नितान्त उपयोगी थी। इस संस्कार में अन्नप्राशन संस्कार के महत्त्व, काल दन्तजन्म मुहूर्त (मुहूर्त्त), भोजन, कुशकण्डिका एवं उसकी हिन्दी व्याख्या आदि का विधान शास्त्रीय रीति से कराया गया है। इसे मनोयोग पूर्वक देखें।

3.7 शब्दावली

स्थालीपाक - पके हुए चरुरूप द्रव्य

पूर्वाधार संज्ञक आहुति - प्रजापतये स्वाहा , इन्द्राय स्वाहा

आज्य संज्ञक आहुति - अग्नये स्वाहा , सोमाय स्वाहा

मन्द्रा - (हर्षकरी) माधुर्यपूर्ण

प्राशनान्ते - संस्रव प्राशन के अन्त में

प्राशयेत् - खिलाना चाहिए

उर्ज्जम् - रस

अशीय - प्राप्त करें

उपैतु - हमें प्राप्त हो

श्रोत्रेण यशोऽशीय - कानों से यश का आनन्द प्राप्त करूँ

वाक्प्रसारकामस्य - वाणी के प्रसार की कामना वाला

कपिंजल - तीतर या चातक

जवकामः - शीघ्र चलने की इच्छा करने वाला

बोध प्रश्नों के उत्तर

क . शन होना चाहिए।जन्म से छठे महीने में प्रायः शिशु का अन्नप्रा

ख. स्तन्य शब्द का अर्थ मॉ का दूध है ।

ग. आचार्य सुश्रुत के अनुसार शिशु का आहार लघु एवं सुपाच्य होना चाहिए।

घ .'हन्त' शब्द का उच्चारण करके शिशु को अन्नप्राशन कराना चाहिए ।

ङ. ए।तीक्ष्णबुद्धि के लिए शिशु को घी एवं चावल मिलाकर खिलाना चाहि

च. शिशु की वाणी प्रवाह की कामना से भारद्वाजी पक्षी के मांस खा ने का विधान गृह्यसूत्रों में है।

छ. शिशु के दृढ इन्द्रियों की कामना से दही भात खिलाना चाहिए।

ज. उपयमन कुशाओं की संख्या सात है।

3.8 सन्दर्भग्रन्थसूची

ग्रन्थनाम	लेखक	प्रकाशन
हिन्दू संस्कार	डा रामबली पाण्डेय .	चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी
पारस्करगृह्यसूत्र	आचार्य पारस्कर	चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी
वीरमित्रोदय	आचार्य मित्र	चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी
मनुस्मृति	आचार्य मनु	श्रीकृष्णदास मुम्बई
भगवन्त भास्कर	श्रीनीलकण्ठ	श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविद्यापीठ, नई दिल्ली
मुहूर्तचिन्तामणि	श्रीरामदैवज्ञ	
संस्कारदीपक भाग 2-	श्रीनित्यानन्द पर्वतीय	चौखम्बा वाराणसी

3.9 दीर्घोत्तरीय प्रश्न

क. कुशकण्डिका विधि का परिचय दीजिये ।

ख . शन संस्कार के प्रयोग को लिखें।अन्नप्रा

इकाई 4 – चूड़ाकरण संस्कार

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई से पूर्व आपकोअन्नप्राशन संस्कार के विषय में जानकारी दी गई है, प्रस्तुत इकाई में आप चूड़ाकरण संस्कार की जानकारी प्राप्त करेंगे।

चूड़ाकरण को ही मुण्डन संस्कार भी कहते है। इस संस्कार के अन्तर्गत प्रथम बार शिशु के सिर से केशों को मुण्डन कर हटाया जाता है, इसलिए इसका नाम मुण्डन संस्कार हैं।

प्रमुख षोडश संस्कारों में चूडाकरण संस्कार का भी स्थान आता है। सम्प्रति इस संस्कार को किया जाता हैं। आइए इस इकाई में चूड़ाकरण के विविध रूपों से हम रू – बरू होते हैं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप चूड़ाकरण संस्कार के विविध रूपों को समझेंगे, एवं आवश्यकतानुरूप दूसरों को भी समझायेंगे। इसके साथ ही अनुष्ठान की विधि भी आपको बताई जायेगी, जिससे इस संस्कार को आप कहीं भी करने एवं कराने में पूर्णरूप से प्रवीण हो जायेंगे।

4.3 चूडाकरण संस्कार : परिचय एवं प्रयोजन

चूडाकरण संस्कारको प्रायः लोक में मुण्डन संस्कार के रूप में हम जानते हैं। गृह्यसूत्रों तथा धर्मशास्त्रों के ''अनुसार आयुषे वपामि स्वस्तये'' अर्थात् व्यक्ति के दीर्घायु सौन्दर्य एवं सर्वविध कल्याण प्राप्ति के लिये ही चूडाकरण संस्कार करने का विधान बताया गया है। जैसा कि आपस्तम्बगृह्यसूत्र में भी लिखा है-

तेन ते आयुषे वपामि सुश्लोकाय स्वस्तये।

अर्थात् इस संस्कार से दीर्घायु की प्राप्ति होती है, साथ ही न करने से आयु का ह्रास होता है। अतः प्रत्येक दशा में यह संस्कार करना ही चाहिए। आयुर्वेदिक ग्रन्थों से भी चूडाकरण के इस धर्मशास्त्रोक्त प्रयोजन की पुष्टि होती है। आचार्य सुश्रुत के अनुसार केश नख तथा रोम के अपमार्जन या छेदन से हर्ष, लाघव, सौभाग्य, उत्साह की वृद्धि एवं पाप का उपशमन होता है। जैसा कि -

पापोपशमनं केशनखरोमापमार्जनम्।
हर्षलाघवसौभाग्यकरमुत्साहवर्धनम्।।

आचार्य चरक का मतहै कि केश, श्मश्रु, नख आदि काटने से पौष्टिकता, बल, आयुष्य, शुचिता एवं सौन्दर्य की वृद्धि होती है। जैसा कि-

पौष्टिकं वृष्यमायुष्यं शुचिरूपं विराजनम्।
केशश्मश्रुनखादीनां कर्तनं सम्प्रसाधनम्।।

इस प्रकार चूडाकरण संस्कार के मूल में स्वास्थ्य तथा सौन्दर्य कीभावना ही मुख्य थी। किन्तु कतिपय मानवशास्त्रियों के मत में, मूलतः इस संस्कार का प्रयोजन बलि था, अर्थात् केश काटकर किसी देवता को अर्पित कर दिये जाते थे। परन्तु चूडाकरण संस्कार सम्बन्धित यह अनुमान असत्य है। उपरोक्त बलिरूप प्रयोजन गृह्यसूत्रों एवं स्मृतिग्रन्थों में नहीं देखा जाता है। निःसन्देह आजकल यदा कदा चूडाकरण संस्कार किसी देवता के मन्दिर में सम्पन्न किया जाता है, किन्तु यह बात केवल चूडाकरण संस्कार के ही विषय में नहीं है, अपितु उपनयन आदि संस्कार भी कभी कभी देवालयों में या प्रसिद्ध तीर्थों में सम्पन्न होते हैं। फिर भी केवल उन्हीं शिशुओं का संस्कार किसी देवायतन में किया जाता है, जिनका जन्म दीर्घनिराशा अथवा पूर्वसन्तान की मृत्यु के पश्चात् होता है। - अतिरिक्त यह प्रथा अधिक व्यापक भी नहीं है। इसके

संस्कार तथा उसका किसी देवता के लिए अर्पण-इस प्रकार यह चूडाकरण, इन दोनों में कोई सहज सम्बन्ध नहीं है। ना ही इस प्रकार के कोई वचन गृह्यसूत्रों में उपलब्ध होते हैं।

मन्त्र इस संस्कार के अवसर पर गृह्यसूत्रों में व्यवहृत सभी, वैदिकसाहित्य में उपलब्ध होते - हैं। तथा उनसे यह सूचित होता है कि उनका प्रयोजन केशच्छेदन के लिए ही है। मुण्डन के लिए शिर के भिगोने का उल्लेख अथर्ववेद में भी है मुण्डन में व्यवहृत छूरे की स्तुति भी वहाँ की गई है -, जैसे -

शिवोनामासिस्वधितिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मामाहिं सीः।

निवर्तयाम्यायुषेऽन्नाद्यायप्रजननाय रापस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय।।

अर्थात् हे असि क्षुरतुम्हारा नाम शिव है। स्वधिति तेरे पिता है। मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। ! त करना। आयुतुम इस शिशु की हिंसा मत करना। अर्थात् इसकी कोई भी क्षति म, प्रजनन, ऐश्वर्य, धन, पुष्टि, सुसन्तति तथा बलवीर्य की प्राप्ति के लिए इसका चूडाकरण कराया जा रहा (केशच्छेदन) है। केशच्छेदन विषयक अन्य अनेक पौराणिक संकेत भी वेदों में मिलते हैं। इस प्रकार यह पूर्णतः क संस्कार थास्पष्ट है कि वैदिक काल में भी चूडाकरण एक धार्मि, जिसमें शिर का भिगोना छूरे की स्तुति, नापित को निमन्त्रण, वैदिक मन्त्रों के साथ केशच्छेदन तथा दीर्घायुष्य के लिए भी कामना की जाती थी।

चूडाकरण संस्कार का समय

वर्ष की-हमारे वैदिकगृह्यसूत्रों के अनुसार जन्म के बाद प्रथमवर्ष के अन्त में अथवा तृतीय -समाप्ति के पूर्व यह संस्कार सम्पन्न होता था। जैसा कि पारस्करगृह्यसूत्र में इसका उल्लेख है सांवत्सरिकस्य चूडाकरणम्। तृतीये वा अप्रतिहते।

प्राचीनतम स्मृतिकार मनु भी यही विधान करते हैं। वे लिखते हैं कि वेदों के नियमानुसार चूडाकर्म प्रथम या तृतीयवर्ष में सम्पन्न करना चाहिए। धर्मपूर्वक समस्त द्विजातियों का

चूडाकर्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्मतः।
प्रथमेब्दे तृतीये वा कर्तव्यं श्रुतिचोदनात्।।

परवर्ती लेखक इस काल को पंचम तथा सप्तम वर्ष तक बढ़ा देते हैं। कतिपय आचार्यों का यथाकुलं च - किया जा सकता है। जैसा कि मत है कि यह उपनयन संस्कार के साथ भी तृ - केषांचिदुपनीत्या सहेष्यते। आचार्य आश्वलायन के मत मेंतीये वर्षे चौलं यथाकुलधर्मं वा। इसी प्रकार आश्वलायन स्मृति में भी -

तृतीये वत्सरे चौलं कुर्वीतास्योत्तरायणे।
शुक्लपक्षे शुभर्क्षे तु कृत्वाभ्युदयिकं तथा ।।

कुछ आचार्यों के मत में तीन वर्ष, पाँच वर्ष या सात वर्ष के बाद भी यह संस्कार सम्पन्न हो सकता है।

तृतीये पंचमे वाब्दे चौलकर्म प्रशस्यते।
प्राग्वा समे सप्तमे वा सहोपनयनेन वा ।।

संस्कार को सम्पन्न करने के लिए अधिक आयु के विधान की प्रवृत्ति का कारण यह था कि त्रकाल के पश्चात् उसका प्रयोजन वास्तविक की जगह केवल औपचारिक ही रह गया। व्यवहार में सू बहुत पूर्व ही शिशु के केश काट दिये जाते थे, किन्तु इसका सांस्कारिक अनुष्ठान उपनयन तक स्थगित कर दिया जाता था, जबकि यह धर्मशास्त्रों में विहित विधि के अनुसार उपनयन के कुछ क्षण पूर्व सम्पन्न होता था। आजकल साधारणतः इसी प्रथा का अनुसरण किया जाता है। किन्तु धर्मशास्त्र इसकी अपेक्षा कम आयु को प्राथमिकता देते हैं। तथा उसे अधिक पुण्यदायी मानते हैं। महर्षि अत्रि के अनुसार प्रथमवर्ष में चौल संस्कार करने से दीर्घायुष्य तथा ब्रह्मवर्चस् की प्राप्ति होती है। (ब्रह्मतेज) तृतीय वर्ष में करने से समस्त कामनाओं की पूर्ति होती है। पशु की क कामना करने वालो को पॉचवें वर्ष में यह संस्कार करना चाहिए। किन्तु युग्म अथवा सम वर्षों में नहीं करना चाहिए।

तृतीये वर्षे चौले सर्वकामार्थसाधनम्।
संवत्सरे तु चौलेन, आयुष्यं ब्रह्मवर्चसम्।
पंचमे पशुकामस्य युग्मे वर्षे तु गर्हितम्।।

तृतीयवर्ष में सम्पन्न चूडाकरण को सर्वोत्तम कहा गया है। छठे, सातवें में, यह साधारण है। किन्तु दशवें, ग्यारहवें वर्ष में निकृष्टतम रद का पारिजात में ना-माना गया है। जैसा कि प्रयोग (खराब) - वचन है

जन्मतस्तु तृतीयेब्दे श्रेष्ठमिच्छन्ति पण्डिताः।
पंचमे सप्तमे वाऽपि जन्मतो मध्यमं भवेत्।
अधमं गर्भतः स्यात्तु नवमैकादशेपि वा।।

- इस प्रकार भिन्न भिन्न आचार्यों के मत को ध्यान में रखते हुए निर्णय यही होता है कि पूर्ण होने स मत ही सर्वश्रेष्ठ है। अर्थात् जन्म से एक वर्ष या तीन वर्ष के आचार्य पारस्कर एवं मनु का भीतर चूडकरण कर लेनी चाहिए।

चूडाकरण संस्कार का मुहूर्त

संस्कार विधि को सम्पन्न करने या कराने के पहले मुहूर्त का भी ज्ञान होना -चूडाकरण न न हो तो कहीं अन्यत्र दूसरे आचार्य के पास मुहूर्त अत्यावश्यक होता है। यदि आचार्य का मुहूर्तज्ञा पूछने के लिए जाना पड़ सकता है। अतः आपकी इससुविधा के लिए मुहूर्त का बोध भी अत्यन्त संक्षेप में हम यहाँ लिख रहे हैं जिससे आप मुहूर्त बता सकते हैं।

संस्कार-चूडाकरण, गर्भाधान या जन्म से प्रथम वर्ष या तीसरे वर्ष के पूर्ण होने से पहले विषम वर्ष में दिन को छोड़कर शेष ति-तिथियों को तथा पर्व 16/15/9/4/12/8थियों में चैत्रमास को छोड़कर उत्तरायण के महीनों में बुध, चन्द्र, शुक्र और गुरु इत्यादि दिनों में लग्न एवं नवमांश (वारों में)

ग्न को छोड़कर शेष लग्नों में मृदुसंज्ञकमें अपनी जन्मराशि से या लग्न से अष्टमल, चर संज्ञक, लघुसंज्ञक नक्षत्रों में, लग्न से स 3/6/11 में पापग्रह न हो, तो मुण्डन कराना उत्तम होता है। लग्न से केन्द्र में क्षीण चन्द्रमा हो तो मृत्यु, मंगल हो तो शस्त्र से चोट, शनि हो तो पंगु, सूर्य हो तो ज्वर होता है। यदि बुध गुरु और शुक्र केन्द्र में हो तो शुभ होता है।

गर्भवतीमाता के पुत्र का मुण्डन संस्कार

-यदि बालक की माता को पाँच मास से अधिक का गर्भ, हो तो बालक का मुण्डन शुभ नहीं होता है। यदि बालक पाँच वर्ष से अधिक का हो तो माता के गर्भिणी होने पर भी मुण्डन हो-सकता है।

धर्मशास्त्रीय मत

स्त्री के पुत्र का मुण्डन तथा उपनयन न-रजस्वला स्त्री एवं सूतिका करें। ज्येष्ठ लड़के का ज्येष्ठ मास में मुण्डन नहीं करना चाहिए। शनि, भौम, रविवारों को तथा जिस दिन क्षौर कर्म कराये हो उस दिन से नवाँ दिन, सन्ध्या के समय, पर्व तिथि, इन सब में छोड़कर शुभ मुहूर्त में क्षौर संस्कार (मुण्डन) करायें।

शिखा का विधान

चूडाकरण का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंग शिखा रखना है। जैसा कि स्वयं संस्कार के नाम से सूचित होता है। कुछ आचार्यों के मत में कुल की परम्परा के अनुसार शिखा रखने की व्यवस्था शास्त्रों में विहित है। जैसा कि यथामंगलं वा सर्वेषाम्। यह आचार्य पारस्कर का वचन है। वहीं - आपस्तम्बगृह्यसूत्र में 'यथा कुलधर्मं केशवेशान् कारयेत्'।

कुछ शास्त्रों में शिखाओं की संख्या प्रवरों की संख्या पर निर्धारित है। जो तीन या पाँच हो सकती है। जैसे वसिष्ठ के वंशज शिर के मध्यभाग में, केवल एक ही शिखा रखते हैं। अत्रि तथा कश्यप के वंशज, दोनों ओर दो शिखाओं को रखते थे। भृगु के वंशज मुण्डित रहते हैं। अंगिरा के वंशज पाँच शिखाओं को रखते हैं। जैसा कि दक्षिणतः कम्बुजानां वशिष्ठानाम्। उभयतः - अत्रिकश्यपानां, मुंडा भृगवः। पंचचूडा अंगिरसो। वाजसनेयिनामेके मंगलार्थं शिखिनोऽन्ये यथाकुलधर्मम्।

इस प्रकार इन सभी सिद्धान्तों से एक निर्णय अवश्य ग्रहण करना चाहिए कि मुण्डन संस्कार में शिखा अवश्य रखनी चाहिए। (चूडाकरण)

यज्ञोपवीत शिखा अपने विकास के क्रम में हिन्दूओं का एक अनिवार्य चिह्न है। शिखा तथा द्विजों के अनिवार्य चिन्ह हैं। शिखा तथा यज्ञोपवीत न ध (जनेऊ)ारण करने वाला व्यक्ति धार्मिक

संस्कारों का पुण्य प्राप्त नहीं कर पाता है अर्थात् उसे धार्मिक कृत्य करने का अधिकार नहीं है। अज्ञातरूप में भी शिखा काटने वाले व्यक्ति को प्रायश्चित का विधान शास्त्रों में बताया गया है।

शिखां छिन्दन्ति यो मोहात् द्वेषादज्ञानतोऽपि वा।

तप्त कृच्छ्रेण शुध्यन्ति त्रयोवर्णा द्विजातयः ।।

आधुनिक काल में शिखा रखने की प्रथा महान् संकट काल से गुजर रही है। अंग्रेजी शिक्षा त्याग कर चुकी है। कुछ ही ऐसे धार्मिक लोग है जो में दीक्षित युवकों की एक विशाल संख्या इसका आज भी अपने शिखा, सूत्र के प्रति जागरूक है एवं निष्ठापूर्वक शास्त्रीय आज्ञाओं का पालन करते हैं।

दीर्घायुष्य के साथ शिखा का सम्बन्ध

कामना की इस संस्कार के अवसर पर उच्चारित वैदिक प्रार्थनाओं में प्रायः दीर्घायुष्य की ही गई है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि क्या? दीर्घ जीवन और चूडाकरण के मध्य कोई सम्बन्ध है? इस पर आचार्य सुश्रुत इन दोनों के सम्बन्ध को बताने में हमारी सहायता करते हैं। इनके मत में मस्तक के भीतर ऊपर की ओर शिरा तथा सन्धि का सन्निपात है। वही रोमावर्त के अधिपति है। इस अंग को किसी भी प्रकार का आघात लगने पर तत्काल ही मृत्यु हो जाती है। अतः इस महत्त्वपूर्ण अंग की सुरक्षा आवश्यक मानी जाती थी तथा उसी अंग पर शिखा रखने से इस प्रयोजन की पूर्ति होती है। 'मस्तकाभ्यन्तरोपरिष्टात् शिरा सम्बन्ध सन्निपातो रोमावर्तोऽधिपतिस्तत्रापि ताडनेन सद्योमरणम्, गर्भस्थानत्वात्' । चीनी तथा तिब्बती लोग इस समय भी अपने शिर पर केशों के गुच्छे रखते हैं।

संस्कार की संक्षिप्त विधि

यहाँ संक्षेप में एक विधि दी जा रही है, इसके बाद शास्त्रीय प्रयोग दिया जायेगा। यह विधि मात्र सामान्य ज्ञान की दृष्टि से यहाँ प्रस्तुत है।

चूडाकरण संस्कार के लिए एक शुभ दिन एवं मुहूर्त, आचार्य से निश्चित कराने के बाद प्रारम्भ में स्वस्तिवाचन पूर्वक संकल्प करके पंचांग पूजन करना चाहिए। इसके बाद ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। इसके पश्चात् शिशु को लेकर माता उसे स्नान कराती है। उसे एक ऐसे वस्त्र से ढकती है जो अहत हो अर्थात् कभी प्रयोग में न लिया गया हो। इसके साथ ही उसे अपनी गोद में बिठाकर यज्ञीय अग्नि के पश्चिम की ओर बैठ जाती है। उसे पकड़ते हुए पिता घी की आहुतियाँ प्रदान करता है। दो प्रकार के जल गर्म एवं ठण्ढा, जिसमें उष्ण जल को ठंढे जल में छोड़ता है। यहाँ (गर्म) का पाठ होता है। मन्त मन्त्रोंर का भावार्थ यह है कि हे वायुहे अदिति !, उष्ण जल के साथ यहाँ आओ तथा केशों का छेदन करो। वह मक्खन या दही का कुछ भाग पानी के साथ मिलाकर (पिता)

के साथ भिगोता है। सविता की प्रेरणा से यह शिशु के दाहिने कान की ओर के केशों को इन शब्दों दिव्य जल तेरी देह को शुद्धकरें, जिससे तू दीर्घायुष्य तथा तेज को प्राप्त करो। शाही के उस काँटे से जिस पर दो सफेद बिन्दू होते हैं, केशों को विकीर्ण करके उसमें तीन कुशपंक्तियों को रखकर कहता है। हे कुश करोशिशु की रक्षा !, उसे पीड़ा न पहुचाओ। इस वचन के साथ कुशाओं को रखता है। इसके बाद पिता क्षुर की प्रार्थना करता है तुम नाम से शिव हो -, स्वधिति तेरा पिता है, तुम्हे मैं नमस्कार करता हूँ। तू इस शिशु की हिंसा न करो। इस मन्त्र के साथ अपने हाथ में एक लोहे का उस्तरा उठाता है और मैं आयुष्य प्रजनन धन एवं पुष्टि के लिए केशों को काटता (संततिवृद्धि)हूँ। इस मन्त्र के साथ केशों का छेदन करता है। वह क्षुर जिससे विद्वान्सोम तथा वरुण का -सविता ने राजा- क्षौर किया था, हे ब्रह्मन्का मुण्डन करो।दीर्घायुष्य तथा वृद्धावस्था की प्राप्ति के लिए छुरे से इस !

केशों के साथ ही कुश की पत्तियों का भी छेदन कर वह उन्हेंबैल के गोबर के पिण्ड पर छोड़ देता है, जो अग्नि के उत्तर में रखा रहता है। इसी प्रकार केशों की दो अन्य लटें भी मौनपूर्वक काट दी जाती है। इसके पश्चात् प्रार्थना के मन्त्र बोले जाते हैं जिसमें कि तू बलवान हो, स्वर्ग को प्राप्त करो, दीर्घकाल तक सूर्य का दर्शन करो। आयुष्य, सत्ता, दीप्ति, कल्याण के लिए मैं तेरा मुण्डन करता हूँ। इस मन्त्र के साथ बायीं ओर के केशों का छेदन करता है।

उस समय जब नापित सुन्दर आकृति वाले छुरे से शिशु के शिर का मुण्डन करता है, कहता है कि इसके शिर को शुद्ध करो, किन्तु इसके जीवन को नष्ट मत करो, इस मंत्र के साथ पिता बायीं से दाहिनी ओर तक तीन बार बिना आघात पहुँचाये उसका मुण्डन कर, इन शब्दों के साथ क्षुर (छुरा) के अनुसार कहीं कहीं नापित को दे देता है। शिर के ऊपर केशों के अवशिष्ट गुच्छे कुलपरम्परा व्यवस्थित किया जाता है। अन्त में केशों के साथ ही वह गोमय पिण्ड भी गोशाला में मिट्टी खोदकर जमीन के नीचे स्थापित कर दिया जाता है या किसी छोटे तालाब आदि में बहा दिया जाता है। आचार्य एवं नापित को दक्षिणा आदि देकर यह संस्कार पूर्ण किया जाता है।

चूडाकरण प्रयोगविधि में कुछ आवश्यक नियम

चूडाकर्म के दिन बालक का पिता प्रातःकाल उठकर अपना नित्यकर्म समाप्त कर गीतवाद्य सहित पश्चिम द्वार के मण्डप में प्रवेश करें। वहाँ नवग्रहयाग की सिद्धि के लिए आसन पर बैठकर - संकल्प करें। यहाँ यह अवश्य ध्यान देना चाहिए आचमन तथा प्राणायाम करें। इसके बाद प्रधान इसके पहले ही पंचांग पूजन आदि कर लेना चाहिए । दूसरी बात, यह है कि यह कर्म उपनयन के समय में भी होता है। अतः जहाँ जैसी व्यवस्था या कुलधर्म हो वहाँ उस तरह से आचार्य को सम्पन्न कराना चाहिए । एक उदाहरण के लिए किसी स्थान विशेष में कुलाचार के अनुसार दो पोटली

बनाकर एक छूरे में तथा एक शाहिल के काँटे में बाँध दे। फिर बोले ऊँ भूर्भुवः स्वः चूडाकर्मजूटिकाः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु। इस मन्त्र को पढकर ताम्रपात्र या कांस्यपात्र में स्थापित करें। बैल का गोमय नवनीत घृत, दधि ताम्रपात्र, छुरा, तीन वेणी वाला शाही का काँटा, तीन कुशाओं की पवित्री, त्रिगुणित कच्चा सूत, नव कुशा। यह पहले दिन का कृत्य है। यदि आचार्य उचित समझे तो करें अन्यथा एकदिवसीय ही करें।

- अव संकल्प के अवसर पर मुख्यरूप से यही अंश जोड़ा जायेगा''करिष्यमाण चूडाकरण कर्मणि निर्विघ्नता प्राप्तये पूर्वांगत्वेन पंचांग पूजनं करिष्ये''। पंचांग पूजन का तात्पर्य गणेशपूजन से लेकर आचार्यवरण तक का कृत्य। इसके बाद तीन ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा देना चाहिए। उसके बाद आचार्य चूडाकरण वेदी के ऊपर पंचभूसंस्कार पूर्वक अग्निस्थापन करें। इस अवसर पर माता कुमार को मंगल द्रव्यों से स्नान कराकर, वस्त्र पहनाकर स्वयं नवीन वस्त्र धारणकर कुमार को गोद में लेकर मंगलगीत पूर्वक पश्चिमद्वार से मण्डप में प्रवेश करें। अग्नि के पश्चिम में पति के वाम भाग में बैठे। पिता कुशकण्डिका सम्पन्न कर चूडाकरण के लिए आवश्यक सामग्रियों का आसादन करें। एक पात्र में शीतल जल, एक पात्र में उष्णजल, नवनीत पिण्ड, घृत पिण्ड दधि पिण्ड, शाहिल के काँटे, कुशाओं को तीन तीन सूत्रों में आवेष्टित करें। छुर ताम्रमय 27, बैल का गोबर, और नापित सभ्य नामक अग्नि का पूजन कर आधाराज्यभाग का हवन करें। आवश्यक होम के बाद स्विष्टकृत् होम करें। शीतल जल में गर्म जल मिलाकर 'उष्णेन वाय उदकेनेह्यदिते केशान् वप' इस मंत्र को पढ़कर उस जल में नवनीत या दधिपिण्ड डाले। इसके बाद दाहिने भाग के बालों को सर्वप्रथम सिंचित कर -''ऊँ प्रसूता दैत्या आप उन्दन्तु ते तनुम्। दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे' इसका उच्चारण कर शाहिल के काँटों से केशों को अलग कर दें। उन केशों में कुशों को लगावें। 'स्वधिते मैनं हिंसीः' इस मन्त्र से तरुणकुशसहित केशों को पकड़कर दाहिने हाथ से छुरा लेकर ''ऊँ शिवोनामासिस्वधितिस्ते पिता नमस्ते ऽ अस्तु मामाहिंसीः'' इस मंत्र से केशों को काटे एवं एक जगह काटकर रखें। 'निवर्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननायरायस्पोषाय सप्रजास्त्वायसुवीर्याय' इस मन्त्र से केशों का छेदन करे। छेदन कर उत्तर की ओर रखे हुए बैल के गोबर पर रखते हैं। कहीं कहीं लोकाचार बस बुआ आदि में अपने आँचल में रखती है। पिता पहले माता को देता है, फिर माता गोबर पर रख देती है। उसी प्रकार 'त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपश्य' इत्यादि मंत्र को पढ़कर दो बार और छुरे से केशवपन करते हैं। तीन बार छुरे से शिर की प्रदक्षिणा करते हैं। एक बार मंत्र से दो बार मौन होकर 'ऊँ यत्क्षुरेण मज्जयता सुपेशसा .....'। शेष जल से समस्त शिर को गीला कर अच्छी तरह केशों का वपन करते हैं। 'ऊँ अक्षुण्णं परिवप'- ऐसा कहने पर नापित बोलता है परिवपामि। शिखा रहित ही

वपन करना चाहिए। केशों को नदी के तट पर या गौशाला में भूमि के नीचे गाड़ देना चाहिए। बालक को स्नान कराकर पुष्पमाला से अलंकृत करके आचार्य के समीप लाते हैं। अग्नि के पश्चिम तरफ उसे बिठाकर आचार्य होने के लिए वचन देता है।

इस प्रकार चूडाकरण संस्कार सम्पन्न करना चाहिए। यहाँ पर कुछ हिन्दी एवं संस्कृत होने तथा पूरे मन्त्र न होने से कुछ असुविधा आपको हो रही है इसे देखते हुए शुद्ध संस्कृत में प्रयोग विधि आपकी सुविधा के लिए यहाँ प्रस्तुत है। जिसमें हिन्दी नहीं है साथ ही सारे मन्त्र एवं विधि एक ही जगह है जिसे करने कराने में आपको सहायता मिलेगी।

आचम्य प्राणानायम्य मंगलमन्त्रादि पठित्वा हस्ते जलमादाय संकल्पं कुर्यात् आचमन प्राणायाम) - (करके मंगल मन्त्रों का पाठ कर हाथ में जल लेकर संकल्प करें

संकल्पः जल) -, अक्षत, सोपाड़ी, द्रव्य लेकर संकल्प करें(-

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोह्नि द्वितीये परार्द्धे श्रीश्वेतवराहकल्पे वैवश्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशान्तरगते अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रो आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकः) विराजिते भागीरथ्याः उत्तरे पश्चिमे तीरेद्याः तटे विक्रमशके इन्द्रप्रस्थ क्षेत्रे देहलीनगरे यमुनान (बौद्धावतारे अमुकनामसंवत्सरे श्रीसूर्ये अमुकायने अमुकऋतौ महामांगल्यप्रदमासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे अमुकराशिस्थिते श्रीचन्द्रे अम ुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा - राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगण विशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः अमुकशर्माहं मम अमुकशर्मणः सुतस्य चौलसंस्कारस्य नियतकालातिक्रमदोषप्रत्यवायपरिहारार्थं अर्धकृच्छरूपं प्रायश्चित्तं रजतप्रत्याम्नायद्वाराऽहमाचरिष्ये।

च्छरूपप्रायश्चित्तकृतेन ममअनेन अर्धकृ, अमुकशर्मणः सुतस्य चौलकर्मनियतकालातिक्रमदोषनिवृत्तिपूर्वकं चौलसंस्कारकर्मण्यधिकारसिद्धिरस्तु।

मम अस्य शिशोः चौलसंस्कार कर्मण्यधिकारार्थे सूत्रोक्तान् ......अद्येत्यादि त्रिभ्य ोऽधिकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासम्पन्नेनाहं भोजयिष्ये।

मम सुतस्य बीजगर्भसमु ....अद्येत्यादिद्भवैनोनिबर्हणेन बलायुर्वर्च्चाभिवृद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वर प्रीत्यर्थं चौलसंस्काराख्यं कर्म करिष्ये।

तदंगत्वेन पंचांगपूजनं करिष्ये। महागणपतये नमः इति मंत्रेण षोडशोपचारैः पूजनं कुर्यात्।

ण सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि इति पूजनम्। ततः ॐ गणानान्त्वा इति मन्त्रे स्थण्डिले पंचभूसंस्कारपूर्वकं सभ्यनामाग्नेः स्थापनं कुर्यात्। माता कुमारं आदाय वाससी परिधाप्यांके माता कुमार को नवीन) आधाय पश्चादग्नेरुपविशति। वस्त्र पहनाकर अपने गोद में लेकर अग्नि के पश्चिम में बैठे(

ततो दक्षिणतो ब्रह्मासनादि चरुवर्जं पात्रासादनान्तं कुर्यात्। उपकल्पनीयानि द्रव्याणि शीतोदकम्। - उष्णोदकम्। नवनीतपिण्डो घृतपिण्डो दधिपिण्डो वा। त्र्येणी शलली। साग्राणिसप्तविंशतिकुशतरुणानि। ताम्रपरिष्कृतवित्रीकरणादि पवित्रयोः आयसः क्षुरः। आनडुहगोमयपिण्डः। नापितः। वरश्चेति। प- ॐ) प्रणीतासु निधानम्। दक्षिणं जान्वाच्यं ब्रह्मान्वारब्धः आघारावाज्यभागौ स्रुवेण होमं कुर्यात्। तूष्णीं त्यागः। इदं प्रजापतये न मम। ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्र (प्रजापतये स्वाहााय न मम। ॐ अग्नये स्वाहा। इदमग्नये न मम। ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। हस्ते अक्षतान् गृहीत्वा अग्ने नय सुपथा रायेइति मंत्रं पठित्वा। ॐ सभ्य नामाग्नये वैश्वानराय नमः सर्वोपचारार्थे गंधाक्षतपुष्पाणि . समर्पयामि। ॐ भूः स्वाहा। इदमग्नये मम। ॐ भुवः स्वाहा। इदं वायवे न मम।। ॐ स्वः स्वाहा। इदं सूर्याय न मम। ॐ त्वन्नो ऽ अग्ने व्वरुणस्यव्विद्वान् देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठोव्वन्हितमः शोशुचानोविश्वाद्वेषां सि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम। ॐ अयाश्चाग्नेस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमया ऽअसि। अयानो यज्ञं वहास्ययानोधेहि भेषजं स्वाहा। इदमग्नये अयसे न मम। ॐ ये ते शतं वरुणं ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। ते भिर्न्नोऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वेमुंचन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम। ॐ उदुत्तमं व्वरुणपाशमस्मदवाधमं व्विमध्यंश्रथाय। अथाव्वयमादित्यव्रते त्वानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा। इदं वरुणायादित्यायादितये न मम। ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते न मम। संस्रवप्राशनम्। आचमनम्। पवित्राभ्यां मार्जनम्। ॐ सुमित्रिया नऽआप ओषधयः सन्तु। इति मन्त्रेण पवित्रे गृहीत्वा प्रणीताजलेन शिरः सम्मृज्य। अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः। ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम्।

ब्रह्मन् अयं ते वरः। प्रतिगृह्यताम्। पश्चिमे प्रणीता विमोकः। आपः शिवाः। ततो अद्येत्यादि . णगोदानं मुण्डनं च करिष्ये। ततो एकस्मिन् पात्रे अस्य कुमारस्य चूडाकर्मकर्तुमधिकारार्थं दक्षि ॐ उष्णेन वाय (एक पात्र में शीतल एवं उष्ण जल मिलावें) शीतास्वप्सूष्णाऽअप आसिंचति। उदकेनेह्यदिते केशान्वप।

पिण्डं घृतपिण्डं दधिपिण्डं वा प्राश्य-अथात्र नवीतति। ततः उदकमादाय दक्षिणगोदानमुदन्ति तादेव्या ऽआपऽउन्दन्तुतेतनूम्। दीर्घायुत्वायबलायवर्चसे।ॐ सवित्राप्रसू -

त्रीणि (तीनों काटों से केशों का विनयन करें) ततस्त्र्येण्या शलल्या केशान् विनीय ॐ (इस मन्त्र से लोहे का क्षुरा लें) कुशतरुणान्यतर्दधाति शिवोनामेतिल ोहक्षुरमादधातिस्तेपितानामस्तेऽअस्तुमामाहिं सीः। निवर्तयामीति मन्त्रेण केश कुश क्षुरसंलग्नीकरणम् (इस मन्त्र से केश कुश और क्षुरे को एकत्रित करें) ॐ - छेदनमंत्रः - निवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्यायप्प्रजननायरायस्पोषायसुप्प्रजास्त्वायसुवीर्याय। ततः छेदनम् येनावपत्सविताक्षुरेणसोमस्यराज्ञोव्वरुणस्यव्विद्वान्। तेन ब्रह्मणो वपते दमस्यायुष्यंजरदष्टिर्यथासम्। अनेन सकेशानि कुशतरुणानि प्रच्छिद्यानडुहे गोमयपिण्डे प्राश्यत्यग्नेरुत्तरतो ध्रियमाणे। एवं द्विरपरं तूष्णीं तद्यथा उन्दनम्। विनयनम्। त्रिकुशतरुणान्तर्धानम्। क्षुरग्रहणम्। संलग्नीकरणम्। छेदनम्। आनडुहेगोमयपिण्डे प्राशनम्। पुनः उन्दनम्। विनयनम्। त्रिकुशतरुणान्तर्धानम्। क्षुरग्रहणम्। त्रिकुशतरुणान्तर्धानम्। क्षुरग्रहणम्। संलग्नीकरणम्। छेदनम्। आनडुहेहगोमयपिण्डे प्राशनम्। पुनः उन्दनम्। विनयनम्। त्रिकुशतरुणान्तर्धानम्। क्षुरग्रहणम्। संलग्नीकरणम्। छेदनम्। आनडुहेगोमयपिण्डे प्राशनम्। इति दक्षिणगोदानम्। पुनर्जलमादाय अस्य कुमारस्य चुडाकर्मकर्तुमधिकारार्थमुत्तरगोदानं - मुण्डनं च करिष्ये। उन ्दनम् प्रसूतादैव्याऽआपऽउदन -तनूम् दीर्घायुत्वायबलायवर्चसे।

त्रीणि (तीनों काटों से केशों का विनयन करें) ततस्त्रयेण्या शलल्या केशान् विनीय इस मन्त्र से) न्यंतदर्धाति। ओषधेत्रायस्वस्वधिते मैनं हि सीः शिवोनामेतिलोहक्षुरमादधाति।कुशतरुणा ॐ शिवोनामाशिस्वधितिस्तेपिानमस्ते ऽअस्तुमामाहि सीः। इति (लोहे का क्षुरा लें लौहक्षुरमादायनिवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्यायप्प्रजनननायरायस्पोषायसुप्प्रजास्त्वायसुवीर्याय। इति लौहक्षुरं केशानामुपरि निधाय केश छेदनेमन्त्रविशेषः। ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यस्यत्र्यायुषम्। यद्देवेषुत्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम्। एवं तूष्णीं वारद्वयम्। यथा उन्दनम्। त्रिकुशतरुणान्तर्धानम्। क्षुरग्रहणम्। संलग्नीकरणम् छेदनम्। आनडुहेगोमयपिण्डे निधानम्। पुनः इति पश्चिमगोदानम्। पुनर्जलमादाय अस्य कुमारस्य चूडाकर्मकर्तुमधिकारार्थमुत्तरगोदानं मुण्डनं च करिष्ये। उन्दनम् - प्रसूतादैव्याऽआपऽउन्दन्तुतेतनूम् दीर्घायुत्वायबलायवर्चसे।

ततस्त्र्येण्या शलल्या केशान् विनीय त्रीणि (तीनों काटों से केशों का विनयन करें) कुशतरुणान्यंतदर्धाति। ओषधेत्रायस्वस्वधिते मैन हि सीः। शिवोनामशिस्वाधितिस्तेपितानमस्ते ऽअस्तुमामहि सीः। इति लौहक्षुरमादाय निवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्यायप्प्रजनननायरायस्पोषायसुप्प्रजास्त्वायसुवीर्याय। इति ल ौहक्षुरं केशानामुपरि निधाय केश छेदनेमन्त्रविशेषः। ॐ येनभूरिश्चरादिवंज्योक्चपश्चाद्धिसूर्यम्। तेन ते वपामिब्रह्मणाजीवातेजीवनायसुश्लोकायस्वस्तये। इति छेदनम्। गोमयपिण्डेप्राशनम्। एवं तूष्णीं

द्विरपरम्। यथा उन्दनम्। विनयनम्। त्रिकुशतरुणान्तर्धानम्। क्षुरग्र -हणम्। संलग्नीकरणम्। छेदनम्। आनडुहेगोमयपिण्डे प्राशनम्। इति उत्तरगोदानम्। ततस्त्रिः क्षुरेण शिरः प्रदक्षिणं परिहरति। ऊँ यत्क्षुरेणमज्यजासुपेशसावप्तावपति केशांछिन्धिशिरोमास्यायुः प्रमोषीः। इति सकृन्मन्त्रेण द्विस्तूष्णीम्। ततस्तेनैवोदकेन सर्वं शिरं आर्द्रं कृत्वा क्षुरं नापिताय प्रयच्छति। अक्षण्वन्परिवप। वपामीति नापितो ब्रूयात्। नापितः उदंगमुखस्थितस्य कुमारस्य प्राक्संस्थं प्रांगमुखस्थितस्योदक्संस्थं केशवपनं कुर्यात्। कुलव्यवस्थया शिखास्थापनं केशशेषं करोति। ततः सर्वान् केशान् गोमयपिण्डे वस्त्रादिनावेष्ट्य अनुगुप्तं कृत्वा गवां गोष्ठे स्थापयेत् अथवा तडागे जलमध्ये वा क्षिपेत्। ततः कुमारं स्नापयित्वा मस्तके स्वस्तिकं तथा च ललाटे तिलकं कुर्यात् कुल व्यवस्था के अनुसार शिखा स्थापित करना चाहिए।) उसके बाद सभी केशों को गोमय पिण्ड में रखकर वस्त्र से आवेष्टित करके गोशाला तडाग या जल के बीच में रखना चाहिए। उसके बाद कुमार को स्नान करवाकर उसके मस्तक या ललाट में तिलक लगाना चाहिएकृतस्य चौलाख्यस्य (हाथ में जल लेकर) आचार्याय वरं ददाति। हस्ते जलमादाय (कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं स्मुत्युक्तान् दशसंख्याकान् ब्राह्मान् भोजयिष्ये। तेनश्रीकर्मांगदेवताः प्रीयन्ताम्। लम्बोदर नमस्तुभ्यंथा शक्त्या चौलसंस्कारविधेः परिपूर्णताऽस्तु। अस्तु परिपूर्णः। हस्ते । य. जलमादाय, अनेन चौलाख्येन कर्मणा कर्माङ्गदेवता प्रीयताम्, न मम।

बोधप्रश्न

क. पारस्करगृह्यसूत्र के अनुसार केशान्त संस्कार कब होता है ?

ख. चूडाकरण में कितने ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए ?

ग. नित्य आहुतियों की संख्या कितनी है ?

घ. चूडाकरण संस्कार का प्रयोजन क्या है ?

ङ. तीसरे वर्ष में चौलकर्म करने का क्या फल है ?

च. चौल एवं चूडाकरण में क्या अन्तर है ?

4.4 सारांश

प्रस्तुत इस इकाई में चूडाकरण संस्कार या चौलसंस्कार का व्यवस्थित परिचय आपके सामने रखा गया। इस क्रम में सबसे पहले चूडाकरण का प्रयोजन एवं आयुर्वेद आदि के दृष्टि से भी इस संस्कार का फल क्या है? इस पर विचार रखा गया। इसके बाद इस संस्कार का काल, मुहूर्त, निषेध आदि विषयों पर भी धर्मशास्त्रीय मत के अनुसार प्रकाश डाला गया। दीर्घायुष्य के साथ शिखा का सम्बन्ध कैसे है, इस पर भी विचार किया गया। इसके साथ ही इसकी प्रयोग विधि हिन्दी अनुवाद

के साथ एवं स्वतन्त्ररूप से भी प्रयोग कराने की दृष्टि से इसमें प्रस्तुत किया गया है। इसी के साथ यह चूडाकरण संस्कार सम्पन्न होता है।

4.5 शब्दावली

शीतास्वप्सु - जल में ठण्ढे

निधाय - रखकर

गोष्ठे - गोशाला में

परिधाप्य - धारण कर

वपेत् - क्षौर कर्म करें

नवनीत पिण्ड - मक्खन का गोला

भोजयित्वा - भोजन कराकर

उत्संगे - गोद में

स्नापयित्वा - स्नान कराकर

आयसः - क्षुर

उन्दति - गीला करता है

आनडुह - बैल

4.6 बोध प्रश्न के उत्तर

क. 16 वें वर्ष में किशोर का केशान्त संस्कार किया जाता है। यहाँ 16 पारस्करगृह्यसूत्र के अनुसार - यह ध्यातव्य है कि केशान्त एवं चूडाकरण अलग अलग संस्कार है।

ख. चूड़ाकरण में तीन ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता है ।

ग. नित्य आहुतियों की संख्या 16 है ।

घ. चूडाकरण संस्कार का प्रयोजन कुमार का दीर्घायु , सौन्दर्य एवं कल्याण की प्राप्ति है।

ङ. तीसरे वर्ष में बालक का चूडाकरण करने से सभी कार्यों की सिद्धि हो जाती है।

च. चौल एवं चूडाकरण में कोई भेद नहीं है , चूडाकरण को ही चौल कहते हैं।

4.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

पारस्कर गृह्यसूत्र - द्वितीयकाण्ड

संस्कारदीपक - श्री नित्यानन्द पर्वतीय

हिन्दू संस्कार - डॉ . राजबली पाण्डेय

कर्मसमुच्चय - रामजी लाल शास्त्री

4.8 दीर्घोत्तरीय प्रश्न

क. चूड़ाकरण संस्कार विधि लिखिए।

ख. चूड़ाकरण मुहूर्त्त को समझाते हुए उसके महत्व का निरूपण कीजिये।

ब्लॉक – 2
संस्कार विधान (ख)

इकाई – 1 अक्षराम्भ संस्कार

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 अक्षराम्भ संस्कार

बोध प्रश्न

1.4 सारांश

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के 201 के द्वितीय खण्ड की पहली इकाई 'अक्षराम्भ संस्कार' से सम्बन्धित है। इस इकाई से पूर्व की इकाई में आपने विभिन्न संस्कारों के अन्तर्गत अन्नप्राशन एवं चूड़ाकरण संस्कार का ज्ञान कर लिया है। उसी क्रम में प्रस्तुत इकाई में आप अक्षराम्भ संस्कार का ज्ञान करेंगे।

अक्षराम्भ संस्कार से तात्पर्य है - शिशु को विद्यारम्भ करने से पूर्व उसे अक्षराम्भ संस्कार कराया जाता है। अक्षरों का ज्ञान कर ही वह विद्यारम्भ की ओर अग्रसर होता है।

प्रस्तुत इकाई में अक्षराम्भ से सम्बन्धित विषयों का अध्ययन आप करेंगे जो कि वर्तमान समाज के लोगों के लिए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- ❖ अक्षराम्भ को समझा सकेंगे।
- ❖ अक्षराम्भ को परिभाषित कर सकेंगे।
- ❖ अक्षराम्भ मुहूर्त्त की जानकारी प्राप्त कर लेंगे।
- ❖ अक्षराम्भ संस्कार के महत्व निरूपण कर सकेंगे।
- ❖ अक्षराम्भ के आवश्यक तत्वों को समझ लेंगे।

1.3 अक्षराम्भ संस्कार

संस्कारों के क्रम में अन्नप्राशन एवं चूड़ाकरण के पश्चात् विद्यारम्भ करने हेतु प्रथमतया अक्षराम्भ संस्कार करने की परम्परा है। इस संस्कार में बालक को प्रथमतया अक्षर से परिचित कराया जाता हैं, इसीलिए इसका नामकरण आचार्यों ने अक्षराम्भ संस्कार किया।

आचार्य रामदैवज्ञ जी लिखते है कि –

गणेश – विष्णु वाग्रमा: प्रपूज्य पंचमाब्दके।

तिथौ शिवार्कदिग्द्विषटशरत्रिके रवावुदक्॥

लघुश्रवोऽनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे।

चरोनसत्तनौ शिशोर्लिपिग्रह: सतां दिने॥

अर्थात् गणेश, विष्णु, सरस्वती और लक्ष्मी का विधिवत् पूजन कर पॉचवें वर्ष में, एकादशी, द्वादशी,

दशमी, द्वितीया, षष्ठी, पंचमी एवं तृतीया तिथियों में सूर्य के उत्तरायण रहने पर, लघुसंज्ञक (हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्) , श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा तथा अनुराधा नक्षत्रों में चर लग्नों (१,४,७,१०) को छोड़कर , शुभग्रहों के लग्नों में २,३,४,६,७,९,१२ में शुभ ग्रहों के सोमवार, बुधवार गुरूवार और शुक्रवारों में बालकों को अक्षराम्भ कराना चाहिये।

इस प्रकार शास्त्रोक्त मुहूर्त्त में श्रीगणेश, विष्णु, सरस्व्ती तथा लक्ष्मी जी की पूजा करके बालक का अक्षराम्भ कराना चाहिये। इनके मत में अक्षराम्भ के लिये निम्नलिखित वर्ष, मास, तिथि, वार दिन, नक्षत्र एवं लग्न प्रशस्त माने गये हैं।

प्रशस्त वर्ष – जन्म से अथवा गर्भाधान से पॉचवॉ वर्ष अक्षराम्भ के लिए प्रशस्त माना गया है।

प्रशस्त मास - उत्तरायण सूर्य में, अर्थात् चैत्र को छोड़कर माघ आदि छः (माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़) इन पॉच मासों के अन्दर अक्षराम्भ प्रशस्त माना गया है।

चूड़ाकरण संस्कार की भॉति सौरमास के अनुसार ही मास गणना करनी चाहिये , न कि चान्द्र मास के अनुसार। आषाढ़शुकूल एकादशी के बाद कार्तिक शुक्ल एकादशी पर्यन्त हरिशयन होने के कारण चूड़ाकरण की भॉति अक्षराम्म्भ - विद्यारम्भ का भी मुहूर्त्त निकालना चाहिए ।

शुभ पक्ष - अक्षराम्भ शुक्ल पक्ष में शुभ माना जाना है। कृष्ण पक्ष में यदि करना हो तो प्रतिपदा से पंचमी तिथि तक यह श्रेयस्कर माना जाता है।

शुभ तिथियॉ - द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी,एकादशी एवं द्वादशी (2,3,5,6,7,10,11,12) तिथियों को अक्षराम्भ में प्रशस्त माना गया है।

शुभ नक्षत्र - अश्विनी, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, श्रवण एवं रेती इन 10 नक्षत्रों में अक्षराम्भ प्रशस्त माना गया है।

शुभ वार - सोम, बुध, गुरू एवं शुक्र वारों में अक्षराम्भ प्रशस्त माना गया है।

प्रशस्त लग्न एवं नवांश- वृष मिथुन, कन्या, धनु एवं मीन 2,3,6,9,12 इन पॉच लग्नों में या इनके नवमांश में अक्षराम्भ प्रशस्त माना गया है।

त्याज्य समय - हरिशयन, संक्रान्ति, मासान्त, गुरू – शुक्र के अस्त, बाल,वृद्ध, गुरू के अतिचार, सिंह मकराश्यंसस्थ गुरू, गुर्वादित्ययोग इन समयों में अक्षराम्भ नहीं करना चाहिये।

अक्षराम्भ संस्कार को अच्छी तरह से समझने के लिए आप निम्न सारिणी का भी प्रयोग कर सकते हैं –

वर्ष	पॉचवॉ
मास	माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़

पक्ष	शुक्लपक्ष तथा कृष्णपक्ष में प्रतिपदा से पंचमी तिथि पर्यन्त
तिथियॉ	2, 3, 5, 6, 7, 10, 11, 12
वार	सोम, बुध, गुरू एवं शुक्र
नक्षत्र	अश्विनी, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, श्रवण एवं रेवती
लग्न	वृष, मिथुन, कन्या, धनु एवं मीन
अन्य त्याज्य समय	हरिशयन, संक्रान्ति, मासान्त, गुरू – शुकास्त, बाल, वृद्ध के अतिचार, सिंह मकराश्यंशस्थ गुरू, गुर्वादित्य योग

उपर्युक्त सारिणी के आधार पर आप अक्षराम्भ संस्कार कर्म कर सकते हैं। स्मरण करने हेतु भी यह चार्ट आपके लिए सुविधाजनक होगा।

विद्यारम्भ –

अक्षराम्भ के साथ विद्यारम्भ को भी जानना चाहिए। आचार्य रामदैवज्ञ जी संस्कार प्रकरण में विद्यारम्भ मुहूर्त्त को बताते हुए कहा है कि –

मृगात्कराच्छुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये ।
गुरूद्वयेऽर्कजीववित्सितेऽह्नि षट्शरत्रिके ।।
शिवार्कदिगद्विके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परैः।
शुभैरधीतिरूत्तमा त्रिकोणकेन्द्रगैः स्मृता ।।

अर्थात् मृगशिरा, हस्त और श्रवण से तीन – तीन नक्षत्र अर्थात् मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा, पुष्य से दो अर्थात् पुष्य, आश्लेषा, नक्षत्रों में, रवि, गुरू, बुध और शुक्र वासरों में षष्ठी, पंचमी, तृतीया, एकादशी, द्वादशी, दशमी एवं द्वितीया तिथियों में, शुभग्रहों के केन्द्र और त्रिकोण (१,४,५,७,९,१०) भावों में स्थित रहने पर, अन्य मतानुसार ध्रुवसंज्ञक (तीनों उत्तरा और रोहिणी), रेवती और अनुराधा नक्षत्रों में भी विद्याध्ययन का आरम्भ शुभ होता है।

विद्यारम्भ हेतु शास्त्रोक्त शुभ मुहूर्त्त में श्रीगणेश, विष्णु, सरस्वती, तथा लक्ष्मी की पूजा करने के पश्चात् बालक का विद्यारम्भ निम्नलिखित मास, तिथि, वार, दिन एवं नक्षत्र में करना चाहिये।

प्रशस्त मास - सूर्य जब उत्तरायण में हो अर्थात चैत्र को छोड़कर माघ आदि छः (माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़) इन पॉच मासों में विद्यारम्भ प्रशस्त माना गया है।

शुभ पक्ष- शुक्लपक्ष एवं कृष्ण पक्ष के प्रतिपदा से पंचमी तिथि तक केवल।

शुभ तिथियॉ - द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, दशमी, एकादशी एवं द्वादशी (2,3,5,6,10,11,12) तिथियों को विद्यारम्भ में प्रशस्त माना गया है।

शुभ नक्षत्र - अश्विनी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल, पूर्वाषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा एवं पूर्वाभाद्रपद इन 16 नक्षत्रों में विद्यारम्भ प्रशस्त माना गया है।

शुभ वार - रवि, बुध, गुरू एवं शुक्र वारों में विद्यारम्भ प्रशस्त माना गया है।

प्रशस्त लग्न एवं नवमांश - वृष, मिथुन, कन्या, धनु एवं मीन 2,3,6,9,12 इन पॉच लग्नों में या इनके नवमांश में विद्यारम्भ प्रशस्त माना गया है।

मास	माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़
पक्ष	शुक्लपक्ष तथा कृष्णपक्ष में प्रतिपदा से पंचमी तिथि पर्यन्त
तिथियॉ	2, 3, 5, 6, 10, 11, 12
वार	रवि, बुध, गुरू एवं शुक्र
नक्षत्र	अश्विनी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी , हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल, पूर्वाषाढ, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, एवं पूर्वाभाद्रपद
लग्न	वृष, मिथुन, कन्या, धनु एवं मीन
अन्य त्याज्य समय	हरिशयन, संक्रान्ति, मासान्त, गुरू – शुकास्त, बाल, वृद्ध के अतिचार, सिंह मकराश्यंशस्थ गुरू, गुर्वादित्य योग

इस प्रकार आप अक्षराम्भ एवं विद्यारम्भ मुहूर्त्त का ज्ञान कर सकते हैं।

बोधप्रश्न

1. अक्षराम्भ संस्कार किस वर्ष कराया जाता है।
2. अक्षराम्भ संस्कार के समय सूर्य किस अयन में शुभ होता है।
3. अक्षराम्भ संस्कार मुहूर्त्त में मास गणना किसके अनुसार होती है।
4. अक्षराम्भ संस्कार हेतु शुभ लग्न कौन – कौन सा है।
5. अक्षराम्भ संस्कार हेतु शुभ वार कौन है।
6. विद्यारम्भ संस्कार हेतु शुभ मास होते है।

1.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि गणेश, विष्णु, सरस्वती और लक्ष्मी का विधिवत् पूजन कर पॉचवें वर्ष में, एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया, षष्ठी, पंचमी एवं तृतीया तिथियों में सूर्य के उत्तरायण रहने पर, लघुसंज्ञक (हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्) , श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा तथा अनुराधा नक्षत्रों में चर लग्नों (१,४,७,१०) को छोड़कर , शुभग्रहों के लग्नों में २,३,४,६,७,९,१२ में शुभ ग्रहों के सोमवार, बुधवार गुरूवार और शुक्रवारों में बालकों को अक्षराम्भ कराना चाहिये। इस प्रकार शास्त्रोक्त मुहूर्त्त में श्रीगणेश, विष्णु, सरस्वती तथा लक्ष्मी जी की पूजा करके बालक का अक्षराम्भ कराना चाहिये।

1.5 शब्दावली

प्रथमतया – सबसे पहले

अक्षराम्भ – अक्षर का आरम्भ

अब्द – वर्ष

लघुसंज्ञक – हस्त, अश्विनी, पुष्य एवं अभिजित नक्षत्र

कर – हस्त नक्षत्र

मृग – मृगशीर्ष

पूर्वात्रय – तीनों पूर्वा नक्षत्र पूर्वाफाल्गुनि, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद

उत्तरात्रय – तीनों उत्तरा नक्षत्र उत्तराफाल्गुनि, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद

षट् – छ:

त्रिकोण – 5 एवं 9 स्थान

1.6 बोध प्रश्न के उत्तर

1. पॉचवें वर्ष में
2. उत्तर अयन में
3. सौर मास के अनुसार
4. वृष, मिथुन, कन्या, धनु एवं मीन
5. सोम, बुध, गुरू एवं शुक्र
6. माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़

1.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

सनातन संस्कार विधि – आचार्य गंगा प्रसाद शास्त्री

संस्कारदीपक - श्री नित्यानन्द पर्वतीय

मुहूर्त्तचिन्तामणि – रामदैवज्ञ

कर्मसमुच्चय - रामजी लाल शास्त्री

1.8 दीर्घोत्तरीय प्रश्न

क. अक्षराम्भ संस्कार विधि का लेखन कीजिये।

ख. विद्यारम्भ मुहूर्त्त का लेखन करते हुए उसका वर्णन कीजिये।

इकाई – 2 उपनयन, आवश्यकता एवं महत्व

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के 201 के दूसरे खण्ड की दूसरी इकाई 'उपनयन, आवश्यकता एवं महत्व' से सम्बन्धित है। इस इकाई से पूर्व की इकाई में आपने अक्षराम्भ संस्कार का अध्ययन कर लिया हैं। अब यहॉ इस इकाई में आप उपनयन संस्कार का अध्ययन करेंगे।

भारतीय सनातन परम्परा में उपनयन एक महत्वपूर्ण संस्कार हैं। जिसको धारण करके मनुष्य तेजस्वी, ब्रह्मचारी, विद्याध्ययन में प्रवृत्त तथा ब्रह्म तत्व को समझने वाला होता था।

प्रस्तुत इकाई में आपके ज्ञानार्थ व अध्ययनार्थ उपनयन सम्बन्धित विषयों का उल्लेख किया जा रहा है, जिसे पढ़कर आप उसे भली – भॉति समझ सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- ❖ उपनयन को परिभाषित कर सकेंगे।
- ❖ उपनयन की आवश्यकता को समझा सकेंगे।
- ❖ उपनयन में प्रमुख तत्वों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- ❖ उपनयन के महत्व को समझा सकेंगे।

2.3 उपनयन परिचय

उपनयन' का अर्थ है "पास या सन्निकट ले जाना।" किन्तु किसके पास ले जाना? सम्भवत: आरम्भ में इसका तात्पर्य था "आचार्य के पास (शिक्षण के लिए) ले जाना।" हो सकता है; इसका तात्पर्य रहा हो नवशिष्य को विद्यार्थीपन की अवस्था तक पहुँचा देना। कुछ गृह्यसूत्रों से ऐसा आभास मिल जाता है, यथा हिरण्यकेशि के अनुसार; तब गुरु बच्चे से यह कहलवाता है "मैं ब्रह्मसूत्रों को प्राप्त हो गया हूँ। मुझे इसके पास ले चलिए। सविता देवता द्वारा प्रेरित मुझे ब्रह्मचारी होने दीजिए।" मानवगृह्यसूत्र एवं काठक. ने 'उपनयन' के स्थान पर 'उपायन' शब्द का प्रयोग किया है। काठक के टीकाकार आदित्यदर्शन ने कहा है कि उपानय, उपनयन, मौञ्चीबन्धन, बटुकरण, व्रतबन्ध समानार्थक हैं।

उद्गम एवं विकास

इस संस्कार के उद्गम एवं विकास के विषय में कुछ चर्चा हो जाना आवश्यक है, क्योंकि यह संस्कार सब संस्कारों में अति महत्त्वपूर्ण माना गया है। उपनयन संस्कार का मूल भारतीय एवं ईरानी है, क्योंकि प्राचीन ज़ोरॉस्ट्रिएन (पारसी) शास्त्रों के अनुसार पवित्र मेखला अधोवसन (लुंगी) का सम्बन्ध आधुनिक पारसियों से भी है। किन्तु इस विषय में हम प्रवेश नहीं करेंगे। हम अपने को भारतीय

साहित्य तक ही सीमित रखेंगे। ऋग्वेद में 'ब्रह्मचारी' शब्द आया है। 'उपनयन' शब्द दो प्रकार से समझाया जा सकता है।

1. बच्चे को आचार्य के सन्निकट ले जाना,

2. वह संस्कार या कृत्य जिसके द्वारा बालक आचार्य के पास ले जाया जाता है। पहला अर्थ आरम्भिक है, किन्तु कालान्तर में जब विस्तारपूर्वक यह कृत्य किया जाने लगा तो दूसरा अर्थ भी प्रयुक्त हो गया। आपस्तम्बधर्मसूत्र ने दूसरा अर्थ लिया है। उसके अनुसार उपनयन एक संस्कार है जो उसके लिए किया जाता है, जो विद्या सीखना चाहता है; "यह ऐसा संस्कार है जो विद्या सीखने वाले को गायत्री मन्त्र सिखाकर किया जाता है।" स्पष्ट है, उपनयन प्रमुखतया गायत्री-उपदेश (पवित्र गायत्री मन्त्र का उपदेश) है। इस विषय में जैमिनीय भी द्रष्टव्य है।

उपनयन मुहूर्त्त –

विप्राणां व्रतबन्धनं निगदितं गर्भाज्जनेर्वाऽष्टमे।
वर्षे वाप्यथ पंचमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे।।
वैश्यानां पुनरष्टमेऽप्यथ पुनः स्याद् द्वादशे वत्सरे ।
कालेऽथ द्विगुणे गते निगदिते गौणं तदाहुर्बुधाः।।

गर्भाधान काल से अथवा जन्म काल से आठवें वर्ष में या पॉचवें वर्ष में ब्राह्मणों का यज्ञोपवीत संस्कार, छठें तथा ग्यारहवें वर्ष में क्षत्रियों का, तथा आठवें और बारहवें वर्ष में वैश्यों का यज्ञोपवीत संस्कार होता है। उक्त बताये गये काल से द्विगुणित समय व्यतीत हो जाने पर जो यज्ञोपवीत संस्कार होता है उसे विद्वानों ने गौण सामान्य यज्ञोपवीत कहा है।

विमर्श –

विहित काल से दूगने समय तक भी व्रतबन्ध किया जा सकता है, परन्तु मुख्य काल और गौण काल व्यतीत हो जाने पर भी व्रतबन्ध न होने से मनुष्य को गायत्री का अधिकार समाप्त हो जाता है तथा वह संस्कारच्युत होता है। आचार्य मनु ने भी कहा है कि –

आषोडशाद् ब्राह्मणस्य सावित्री नातिवर्तते।
आद्वाविंशाद् ब्रह्मवन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः।।
अत उर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः।
सावित्री पतिता व्रात्या भवन्त्यपि गर्हिताः।।

अपि च –

क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वारौद्रेऽर्कविदुरूसितेन्दुदिने व्रतं सत्।

द्वित्रीषुरूद्रविदिक्प्रमिते तिथौ च कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि न चापराह्णे ।।

क्षिप्रसंज्ञक (हस्त, अश्विनी, पुष्य) , ध्रुवसंज्ञक (तीनों उत्तरा, रोहिणी),आश्लेषा, चरसंज्ञक (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष), मूल, मृदुसंज्ञक मृगशिरा, रेवती, चित्रा, तीनों पूर्वा आर्द्रा नक्षत्रों में रवि, बुध, गुरू, शुक्र और सोमवासरों में २,३,५,१११२,१० तिथियों में शुक्लपक्ष तथा कृष्णपक्ष में प्रथम त्रिमास में प्रतिपदा से पंचमी तक उपनयन शुभ होता है । अपराह्ण दोपहर के पश्चात् उपनयन नहीं करना चाहिये ।

उपनयन संस्कार के लक्षण

ऋग्वेद से पता चलता है कि गृह्यसूत्रों में वर्णित उपनयन संस्कार के कुछ लक्षण उस समय भी विदित थे। वहाँ एक युवक के समान यूप (बलि-स्तम्भ) की प्रशंसा की गयी है;.."यहाँ युवक आ रहा है, वह भली भाँति सज्जित है (युवक मेखला द्वारा तथा यूप रशन द्वारा); वह, जब उत्पन्न हुआ, महत्ता प्राप्त करता है; हे चतुर ऋषियों, आप अपने हृदयों में देवों के प्रति श्रद्धा रखते हैं और स्वस्थ विचार वाले हैं, इसे ऊपर उठाइए।" यहाँ "उन्नयन्ति" में वही धातु है, जो उपनयन में है। बहुत-से गृह्यसूत्रों ने इस मन्त्र को उद्धृत किया है, यथा- आश्वलायन., पारस्कर.। तैत्तिरीय संहिता में तीन ऋणों के वर्णन में 'ब्रह्मचारी' एवं 'ब्रह्मचर्य' शब्द आये हैं- 'ब्राह्मण जब जन्म लेता है तो तीन वर्गों के व्यक्तियों का ऋणी होता है; ब्रह्मचर्य में ऋषियों के प्रति (ऋणी होता है), यज्ञ में देवों के प्रति तथा सन्तति में पितरों के प्रति; जिसको पुत्र होता है, जो यज्ञ करता है और जो ब्रह्मचारी रूप में गुरु के पास रहता है, वह अनृणी हो जाता है।" उपनयन एवं ब्रह्मचर्य के लक्षणों पर प्रकाश वेदों एवं ब्राह्मण साहित्य में उपलब्ध हो जाता है। अथर्ववेद का एक पूरा सूक्त ब्रह्मचारी (वैदिक छात्र) एवं ब्रह्मचर्य के विषय में अतिशयोक्ति की प्रशंसा से पूर्ण है।

यज्ञोपवीत का प्रयोजन –

आचार्य गृह में जाने पर, बालक को अपना शिष्य बनाते समय आचार्य यज्ञोपवीत धारण कराता है। यह जहॉ, आचार्य के शिष्य वर्ग में प्रवेश का एक चिन्ह हैं वहॉ यह अन्य भी कई महत्वपूर्ण कर्तव्यों का प्रतीक है ।

यज्ञोपवीत संस्कार अथवा मौञ्जी – बन्धन को बालक का दूसरा जन्म बताया गया है । यह उसके ब्रह्मचर्यव्रत एवं विद्याध्ययन का प्रतीक है ।

तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है –

जायमानो वै ब्राह्मण: त्रिभि: ऋणै: ऋणव जायते । ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्य:, यज्ञेन देवेभ्य:, प्रजया पितृभ्य: । एष वै अनृणो य: पुत्री यज्वा, ब्रह्मचारिवासी ।

अभिप्राय यह है कि मनुष्य पर तीन ऋणों का भार होता है वह ब्रह्मचर्य का पालन कर ऋषि ऋण को उतारता है, गृहस्थ धर्म के पालन पूर्वक सन्तानोत्पत्ति से पितृ ऋण और यजन द्वारा देवऋण से उर्ऋण होता है।

इन तीन ऋणों की स्मृति यज्ञोपवीत के तीन सूत्रों से होती रहती है ।

अथवा एक ब्रह्मग्रन्थि में जोड़े गये यज्ञोपवीत के तीन तार ज्ञान, कर्म और उपासना-इन त्रिविध कर्तव्यों के साथ – साथ पालन के प्रतीक हैं। एक सूत्र के टूट जाने पर ही यज्ञसूत्र खण्डित माना जाता है। इसी प्रकार ज्ञान – कर्म उपासना में से एक को भी भूल जाना व्रत को खण्डित कर देना है प्राचीन समय में विद्यार्थी इस विद्या – चिन्ह को अपने वस्रों के उपर ही धारण करते थे। महाभारत में एक स्थल पर वर्णन हैं –

ततः शुक्लाम्बरधरः शुक्लयज्ञोपवीतवान् ।

शुक्लकेशः सितश्मश्रु शुक्लमाल्यानुलेपनः ।।

अर्थात् वृद्ध द्रोणाचार्य श्वेत वस्त्रों पर श्वेत यज्ञोपवीत धारण किये हुए थे।

विधि- उपवास तथा व्रत –

शतपथ ब्राह्मण के अनुसार –

पयोव्रतो ब्राह्मणो यवागूव्रतो राजन्य आमिक्षाव्रतो वैश्यः।

शतपथ ब्राह्मण के वचनानुसार जिस दिन बालक का उपनयन संस्कार कराना हो उससे तीन अथवा एक दिन पहले तीन अथवा एक व्रत बालक को करावे। इस समय ब्राह्मण बालक को दुग्ध पर, क्षत्रिय बालक को यवार्गू (जौ का दलिया) पर और वैश्य बालक को श्रीखण्ड पर रखे।

गायत्री जप

आचार्य के समीप उपनयन के नियत शुभदिन से एक दिन पूर्व यजमान पत्नी और उपनेय बालक सहित मंगल स्नान कर, शुद्ध वस्र धारण कर अग्निहोत्रशाला से भिन्न मण्डप में पूर्वाभिमुख शुभासन पर बैठ, दक्षिण में पत्नी और उसके दक्षिण में बालक को बैठा उपनयन कराने के अपने अधिकार की सिद्धि के लिए तथा बालक के अब तक के यथेष्ठाचारण के दोष निवृत्ति के लिए इस प्रकार संकल्प करें –

यजमान - कृच्छ्रत्रयात्मकप्रायश्चितप्रत्याम्नाय गोनिष्क्रयीभूतयथाशक्तिरजतद्रव्य दानपूर्वकं द्वादश सहस्रं द्वादशाधिकसहसंवागायत्रीजपमहं ब्राह्मणद्वारा कारयिष्ये ।

कुमारः - मम कामचारकामवादकामभक्षणादिदोषपरिहारार्थं

कृच्छ्रत्रयात्मकप्रायश्चितप्रत्याम्नायगोनिष्क्रयीभूतयथाशक्तिरजतद्रव्यदानपूर्वकं द्वादशसहस्रं

द्वादशाधिकसहस्रं वा ब्राह्मणद्वारा गायत्री जपं कारयिष्ये ।

संकल्प करके गोदान करावें और १२००० अथवा १०१२ गायत्री का जप करावें।

गणपति पूजनादि

पश्चात् बालक के उपनयन संस्कार का संकल्प कर, संकल्प पूर्वक गणपतिपूजन, स्वस्ति, पुण्याहवाचन, मातृकापूजन एवं आभ्युदयिक श्राद्ध करना चाहिए।

मुंडनादि –

संस्कार के दिन संकल्प पूर्वक कुमार का संस्कारांगभूत मुंडन कराकर क्रम से ३ ब्राह्मणों और कुमार को भोजन कराकर बाहर शाला में पंचभू संस्कार एवं अग्नि की स्थापना कर आचार्य के समीप ले आवे । इस समय बालक शुद्ध वस्त्रादि पहने हो ।

आचार्य द्वारा वस्त्रादि धारण कराना -

संस्कार्य कुमार को आचार्य के दाहिने ओर, अग्नि के पश्चिम में पूर्वाभिमुख बैठाकर विप्रजन आर्शीवाद दें । तब आचार्य बालक से ये वाक्य कहलावें –

बालक – ब्रह्मचर्यमागाम्, ब्रह्माचार्यसानि।

अब आचार्य निम्नलिखित मंत्र पढ़कर ब्रह्मचारी को कटिसूत्र तथा कौपीन आदि वस्त्र देवे और आचमन करावे -

ॐ येनेन्द्राय वृहस्पतिर्वास: पर्यदधादमृतम् । तेन त्वा परिदधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे

ब्रह्मचर्य-जीवन

तैत्तिरीय ब्राह्मण में भारद्वाज के विषय में एक गाथा है, जिसमें कहा गया है कि भरद्वाज अपनी आयु के तीन भागों (75 वर्षों) तक ब्रह्मचारी रहे। उनसे इन्द्र ने कहा था कि उन्होंने इतने वर्षों तक वेदों के बहुत ही कम अंश (3 पर्वतों की ढेरी में से 3 मुट्ठियाँ) सीखे हैं, क्योंकि वेद तो असीम हैं। मनु के पुत्र नाभानेदिष्ठ की गाथा से पता चलता है कि वे अपने गुरु के यहाँ ब्रह्मचारी रूप से रहते थे, तभी उन्हें पिता की सम्पत्ति का कोई भाग नहीं मिला। गृह्यसूत्रों में वर्णित ब्रह्मचर्य-जीवन के विषय में शतपथ-ब्राह्मण में भी बहुत-कुछ प्राप्त होता हैं, जो बहुत ही संक्षेप में यों है- बालक कहता है- 'मैं ब्रह्मचर्य के लिए आया हूँ' और मुझे ब्रह्मचारी हो जाने दीजिए।' गुरु पूछता है- 'तुम्हारा नाम क्या है?' तब गुरु (आचार्य) उसे पास में ले लेता है,(उप नयति)। तब गुरु बच्चे का हाथ पकड़ लेता है और कहता है- 'तुम इन्द्र के ब्रह्मचारी हो, अग्नि तुम्हारे गुरु हैं, मैं तुम्हारा गुरु हूँ" (यहाँ पर गुरु उसका नाम लेकर सम्बोधित करता है)। 'तब वह बालक को भूतों को दे देता हैं, अर्थात् भौतिक तत्त्वों में नियोजित कर देता है। गुरु शिक्षा देता है 'जल पिओ, काम करो (गुरु के घर में), अग्नि में समिधा डालो, (दिन में) न

सोओ।' वह सावित्री मन्त्र दुहराता है। पहले बच्चे के आने के एक वर्ष उपरान्त सावित्री का पाठ होता था, फिर 6 मासों, 24 दिनों, 12 दिनों, 3 दिनों के उपरान्त। किन्तु ब्राह्मण बच्चे के लिए उपनयन के दिन ही पाठ किया जाता था, पहले प्रत्येक पाद अलग-अलग फिर आधा और तब पूरा मन्त्र दुहराया जाता था। ब्रह्मचारी हो जाने पर मधु खाना वर्जित हो जाता था।

शतपथ ब्राह्मण एवं तैत्तिरीयोपनिषद में 'अन्तेवासी' शब्द आया है। शतपथब्राह्मण का कथन है "जो ब्रह्मचर्य ग्रहण् करता है, वह लम्बे समय की यज्ञावधि ग्रहण करता है।" गोपथ ब्राह्मण, बौधायनधर्मसूत्र आदि में भी ब्रह्मचर्य-जीवन की ओर संकेत मिलता है। पारिक्षित जनमेजय हंसों (आहवनीय एवं दक्षिण नामक अग्नियों) से पूछतें हैं- पवित्र क्या है ? तो वे दोनों उत्तर देते हैं- ब्रह्मचर्य (पवित्र) है। गोपथ ब्राह्मण के अनुसार सभी वेदों के पूर्ण पाण्डित्य के लिए 48 वर्ष का छात्र-जीवन आवश्यक है। अत: प्रत्येक वेद के लिए 12 वर्ष की अवधि निश्चित सी थी। ब्रह्मचारी की भिक्षा-वृत्ति, उसके सरल जीवन आदि पर गोपथब्राह्मण प्रभूत प्रकाश डालता है। उपर्युक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि आरम्भिक काल में उपनयन अपेक्षाकृत पर्याप्त सरल था। भावी विद्यार्थी समिधा काष्ठ के साथ (हाथ में लिये हुए) गुरु के पास आता था और उनसे अपनी अभिकांक्षा प्रकट कर ब्रह्मचारी रूप में उनके साथ ही रहने देने की प्रार्थना करता था। गृह्यसूत्रों में वर्णित किया-संस्कार पहले नहीं प्रचलित थे। कठोपनिषद, मुण्डकोपनिषद, छान्दोग्य उपनिषद एवं अन्य उपनिषदों में ब्रह्मचर्य शब्द का प्रयोग हुआ है। छान्दोग्य एवं बृहदारण्यकोपनिषद सम्भवत: सबसे प्राचीन उपनिषद हैं। ये दोनों मूल्यवान वृत्तान्त उपस्थित करती है। उपनिषदों के काल में ही कुछ कृत्य अवश्य प्रचलित थे, जैसा कि छान्दोग्य उपनिषद से ज्ञात होता है। जब प्राचीनशाल औपमन्यव एवं अन्य चार विद्यार्थी अपने हाथों में समिधा लेकर अश्वपति केकय के पास पहुँचे तो वे (अश्वपति) उनसे बिना उनयन की क्रियाएँ किये ही बातें करने लगे। जब सत्यकाम जाबाल ने अपने गोत्र का सच्चा परिचय दे दिया तो गौतम हारिद्रुमत ने कहा-"हे प्यारे बच्चे, जाओ समिधा ले आओ, मैं तुम्हें दीक्षित करूँगा। तुम सत्य से हटे नहीं"।

ब्रह्मचर्य आश्रम

अति प्राचीन काल में सम्भवत: पिता ही अपने पुत्र को पढ़ाता था। किन्तु तैत्तिरीयसंहिता एवं ब्राह्मणों के कालों से पता चलता है कि छात्र साधारणत: गुरु के पास जाते थे और उसके यहाँ रहते थे। उद्दालक आरुणि ने, जो स्वयं ब्रह्मचारी एवं पहुँचे हुए दार्शनिक थे, अपने पुत्र श्वेतकेतु को ब्रह्मचारी रूप से वेदाध्ययन के लिए गुरु के पास जाने को प्रेरित किया। छान्दोग्योपनिषद में ब्रह्मचर्याश्रम का भी वर्णन हुआ है, जहाँ पर विद्यार्थी (ब्रह्मचारी) अपने अन्तिम दिन तक गुरुगेह में रहकर शरीर को सुखाता रहा है, यहाँ पर नैष्ठिक ब्रह्मचारी की ओर संकेत है। इस उपनिषद में गोत्र-नाम, भिक्षा-वृत्ति, अग्नि-रक्षा, पशु-पालन का भी वर्णन है। उपनयन करने की अवस्था पर औपनिषदिक प्रकाश नहीं प्राप्त होता, यद्यपि हमें यह ज्ञात है कि श्वेतकेतु ने जब ब्रह्मचर्य धारण किया तो उनकी अवस्था 12

वर्ष की थी। साधारणत: विद्यार्थी-जीवन 12 वर्ष का था, यद्यपि इन्द्र के ब्रह्मचर्य की अवधि 101 वर्ष की थी। एक स्थान पर छान्दोग्योपनिषद ने जीवनपर्यन्त ब्रह्मचर्य की चर्चा की है।

अब हम सूत्रों एवं स्मृतियों में वर्णित उपनयनसंस्कार का वर्णन करेंगे। इस विषय में एक बात स्मरणीय है कि इस संस्कार से सम्बन्धित सभी बातें सभी स्मृतियों में नहीं पायी जातीं और न उनमें विविध विषयों का एक अनुक्रम में वर्णन ही पाया जाता है। इतना ही नहीं, वैदिक मन्त्रों के प्रयोग के विषय में सभी सूत्र एकमत नहीं हैं। अब हम क्रम से उपनयन संस्कार के विविध रूपों पर प्रकाश डालेंगे।

आश्वंलायनगृह्यसूत्र के मत से ब्राह्मणकुमार का उपनयन गर्भाधान या जन्म से लेकर आठवें वर्ष में, क्षत्रिय का 11 वें वर्ष में एवं वैश्य का 12 वें वर्ष में होना चाहिए; यही नहीं, क्रम से 16 वें, 22 वें एवं 24 वें वर्ष तक भी उपनयन का समय बना रहता है। आपस्तम्ब, शांखायन, बौधायन, भारद्वाज एवं गोभिल गृह्यसूत्र तथा याज्ञवल्क्य, आपस्तम्बधर्मसूत्र स्पष्ट कहते हैं कि वर्षों की गणना गर्भाधान से होनी चाहिए। यही बात महाभाष्य में भी है। पारस्करगृह्यसूत्र के मत से उपनयन गर्भाधान या जन्म से आठवें वर्ष में होना चाहिए, किन्तु इस विषय में कुलधर्म का पालन भी करना चाहिए। याज्ञवल्क्य ने भी कुलधर्म की बात चलायी है। शांखायनगृह्यसूत्र ने गर्भाधान से 8 वाँ या 10 वाँ वर्ष, मानव ने 7 वाँ या 9 वाँ वर्ष, काठक ने तीनों वर्णों के लिए क्रम से 7 वाँ, 9 वाँ एवं 11 वाँ वर्ष स्वीकृत किया है; किन्तु यह छूट केवल क्रम से आध्यात्मिक, सैनिक एवं धन-संग्रह की महत्ता के लिए ही दी गयी है। आध्यात्मिकता, लम्बी आय एवं धन की अभिकांक्षा वाले ब्राह्मण पिता के लिए पुत्र का उपनयन गर्भाधान से 5 वें, 8 वें एवं 9 वें वर्ष में भी किया जा सकता है। आपस्तम्बधर्मसूत्र एवं बौधायन गृह्यसूत्र' ने आध्यात्मिक महत्ता, लम्बी आयु, दीप्ति, पर्याप्त भोजन, शारीरिक बल एवं पशु के लिए क्रम से 7 वाँ, 8 वाँ, 9 वाँ, 10 वाँ, 11 वाँ एवं 12 वाँ वर्ष स्वीकृत किया है। अत: जन्म से 8 वाँ, 11 वाँ एवं 12 वाँ वर्ष क्रम से ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य के लिए प्रमुख समय माना जाता रहा है। 5 वें वर्ष से 11 वें वर्ष तक ब्राह्मणों के लिए गौण, 9 वें वर्ष से 16 वर्ष तक क्षत्रियों के लिए गौण माना जाता रहा है। ब्राह्मणों के लिए 12 वें से 16 वें तक गौणतर काल तथा 16 वें के उपरान्त गौंणतम काल माना गया है। आपस्तम्बगृह्यसूत्र एवं आपस्तम्बधर्मसूत्र, हिरण्यकेशिगृह्यसूत्र एवं वैखानस के मत से तीनों वर्णों के लिए क्रम से शुभ मुहूर्त पड़ते हैं वसन्त, ग्रीष्म एवं शरद् के दिन। भारद्वाज के अनुसार वसन्त ब्राह्मण के लिए, ग्रीष्म या हेमन्त क्षत्रिय के लिए, शरद् वैश्य के लिए, वर्षा बढ़ई के लिए या शिशिर सभी के लिए मान्य है। भारद्वाज ने वहीं यह भी कहा है कि उपनयन मास के शुक्लपक्ष में किसी शुभ नक्षत्र में, भरसक पुरुष नक्षत्र में करना चाहिए। कालान्तर के धर्मशास्त्रकारों ने उपनयन के लिए मासों, तिथियों एवं दिनों के विषय में ज्योतिष-सम्बन्धी विधान बड़े विस्तार के साथ दिये हैं, जिन पर लिखना यहाँ उचित एवं आवश्यक नहीं जान पड़तां किन्तु थोड़ा-बहुत लिख देना आवश्यक है, क्योंकि आजकल ये ही विधान मान्य हैं। वृद्धगार्ग्य ने लिखा है कि माघ से लेकर छ: मास उपनयन के लिए उपयुक्त हैं, किन्तु अन्य लोगों ने माघ से लेकर पाँच मास ही उपयुक्त ठहराये हैं। प्रथम, चौथी,

सातवीं, आठवीं, नवीं, तेरहवीं, चौदहवीं, पूर्णमासी एवं अमावस की तिथियाँ बहुधा छोड़ दी जाती हैं। जब शुक्र सूर्य के बहुत पास हो और देखा न जा सके, जब सूर्य राशि के प्रथम अंश में हो, अनध्याय के दिनों में तथा गलग्रह में उपनयन नहीं करना चाहिए। बृहस्पति, शुक्र, मंगल एवं बुध क्रम से ऋग्वेद एवं अन्य वेदों के देवता माने जाते हैं। अत: इन वेदों के अध्ययनकर्ताओं का उनके देवों के वारों में ही उपनयन होना चाहिए। सप्ताह में बुध, बृहस्पति एवं शुक्र सर्वोत्तम दिन हैं, रविवार मध्यम तथा सोमवार बहुत कम योग्य है। किन्तु मंगल एवं शनिवार निषिद्ध माने जाते हैं (सामवेद के छात्रों एवं क्षत्रियों के लिए मंगल मान्य है)। नक्षत्रों में हस्त, चित्रा, स्वाति, पुष्य, घनिष्ठा, अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, श्रवण एवं रवती अच्छे माने जाते हैं विशिष्ट वेद वालों के लिए नक्षत्र-सम्बन्धी अन्य नियमों की चर्चा यहाँ नहीं की जा रही है। एक नियम यह है कि भरणी, कृत्तिका, मघा, विशाखा, ज्येष्ठा, शततारका को छोड़कर सभी अन्य नक्षत्र सबके लिए अच्छे हैं। लड़के की कुण्डली के लिए चन्द्र एवं बृहस्पति ज्योतिष-रूप से शक्तिशाली होने चाहिए। बृहस्पति का सम्बन्ध ज्ञान एवं सुख से है, अत: उपनयन के लिए उसकी परम महत्ता गायी गयी है। यदि बृहस्पति एवं शुक्र न दिखाई पड़ें तो उपनयन नहीं किया जा सकता। अन्य ज्योतिष-सम्बन्धी नियमों का उद्घाटन यहाँ स्थानाभाव के कारण नहीं किया जायगा।

वस्त्र

- ब्रह्मचारी दो वस्त्र धारण करता था, जिनमें एक अधोभाग के लिए और दूसरा (वासस्) (उत्तरीय) ऊपरी भाग के लिए।
- आपस्तम्बधर्मसूत्र के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य ब्रह्मचारी के लिए वस्त्र क्रम से पटुआ के सूत का, सन् के सूत का एवं मृगचर्म का होता था।
- कुछ धर्मशास्त्रकारों के मत से अधोभाग का वस्त्र रूई के सूत का (ब्राह्मणों के लिए लाल रंग, क्षत्रियों के लिए मजीठ रंग एवं वैश्यों के लिए हल्दी रंग होना चाहिएं वस्त्र के (विषय में बहुत मतभेद हैं।
- आपस्तम्बधर्मसूत्र ने सभी वर्णों के लिए भेड़ का चर्म या कम्बल विकल्प (उत्तरीय के लिए) है रूप से स्वीकार कर लिया।
- अधोभाग या ऊपरी भाग के परिधान के विषय में ब्राह्मणग्रन्थों में भी संकेत मिलता है- । जो वैदिक ज्ञान बढ़ाना चाहे उसके अधोवस्त्र एवं उत्तरीय मृगचर्म के, जो सैनिक शक्ति चाहे उसके लिए रूई का वस्त्र और जो दोनों चाहे वह दोनों प्रकार के वस्त्रों का उपयोग करे।

दण्ड -

दण्ड किस वृक्ष का बनाया जाय, इस विषय में भी बहुत मतभेद रहा है। आश्वलायनगृह्यसूत्र के मत से ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य के लिए क्रम से पलाश, उदुम्बर एवं बिल्व का दण्ड होना चाहिए, या कोई भी वर्ण उनमें से किसी एक का दण्ड बना सकता है। आपस्तम्बगृह्य सूत्र के अनुसार ब्राह्मण क्षत्रिय

एवं वैश्य के लिए क्रम से पलाश न्यग्रोध की शाखा (जिसका निचला भाग दण्ड का ऊपरी भाग माना जाय) एवं बदर या उदुम्बर का दण्ड होना चाहिए। यही बात आपस्तम्बधर्मसूत्र में भी पायी जाती है। इसी प्रकार बहुत से मत हैं जिनका उद्घाटन अनावश्यक है। पूर्वकाल में सहारे के लिए, आचार्य के पशुओं को नियन्त्रण में रखने के लिए, रात्रि में जाने पर सुरक्षा के लिए एंव नदी में प्रवेश करते समय पथप्रदर्शन के लिए दण्ड की आवश्यकता पड़ती थी। बालक के वर्ण के अनुसार दण्ड की लम्बाई में अन्तर था। आश्वलायनगृह्यसूत्र, गौतम, वसिष्ठधर्मसूत्र, पारस्करगृह्यसूत्र, मनु के मतों से ब्राह्मण क्षत्रिय एवं वैश्व का दण्ड क्रम से सिर तक, मस्तक तक एवं नाक तक लम्बा होना चाहिए। शांखायनगृह्यसूत्र ने इस अनुक्रम को उलट दिया है, अर्थात् इसके अनुसार ब्राह्मण का दण्ड सबसे छोटा एवं वैश्य का सबसे बड़ा होना चाहिए। गौतम का कहना है कि दण्ड घुना हुआ नहीं होना चाहिए। उसकी छाल लगी रहनी चाहिए, ऊपरी भाग टेढ़ा होना चाहिए। किन्तु मनु के अनुसार दण्ड सीधा, सुन्दर एवं अग्निस्पर्श से रहित होना चाहिए। शांखायनगृह्यसूत्र के अनुसार ब्रह्मचारी को चाहिए कि वह किसी को अपने एवं दण्ड के बीच से निकलने न दे, यदि दण्ड, मेखला एवं यज्ञोपवीत टूट जायें तो उसे प्रायश्चित्त करना चाहिए (वैसा ही जैसा कि विवाह के समय वरयात्रा का रथ टूटने पर किया जाता है)। ब्रह्मचर्य के अन्त में यज्ञोपवीत, दण्ड, मेखला एवं मृगचर्म को जल में त्याग देना चाहिए। ऐसा करते समय वरुण के मन्त्र का पाठ करना चाहिए या केवल 'ओम्' का उच्चारण करना चाहिए। मनु एवं विष्णुधर्मसूत्र ने भी यही बात कही है।

मेखला

गौतम, आश्वलायनगृह्यसूत्र, बौधायनगृह्यसूत्र, मनु, काठकगृह्यसूत्र, भारद्वाजगृहसूत्र तथा अन्य लोगों के मत से ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य बच्चे के लिए क्रम से मुञ्ज, मूर्वा (जिससे प्रत्यंचा बनती है) एवं पटुआ की मेखला (करधनी) होनी चाहिए। मनु ने पारस्करगृह्यसूत्र एवं आपस्तम्बधर्मसूत्र की भाँति ही नियम कहे हैं किन्तु विकल्प से कहा है कि क्षत्रियों के लिए मूँज तथा लोह से गुंथी हुई हो सकती है तथा वैश्यों के लिए सूत का धागा या जुए की रस्सी या तामल (सन) की छाल का धागा हो सकता है। बौधायनगृह्यसूत्र ने मूँज की मेखला सबके लिए मान्य कही है। मेखला में कितनी गाँठे होनी चाहिए, यह प्रवरों की संख्या पर निर्भर है।

बोधप्रश्न

1. उपनयन का शाब्दिक अर्थ क्या होता है।
2. शास्त्रों के अनुसार ब्राह्मणों का यज्ञोपवीत कब करना चाहिये।
3. चरसंज्ञक नक्षत्र कौन – कौन से है।
4. मनुष्य कितने प्रकार के ऋणों से युक्त होता है।
5. शतपथ ब्राह्मण के अनुसार ब्राह्मणों को उपनयन में कौन सा व्रत करना चाहिये।

2.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि उपनयन' का अर्थ है "पास या सन्निकट ले जाना ।" किन्तु किसके पास ले जाना? सम्भवत: आरम्भ में इसका तात्पर्य था "आचार्य के पास (शिक्षण के लिए) ले जाना।" हो सकता है; इसका तात्पर्य रहा हो नवशिष्य को विद्यार्थीपन की अवस्था तक पहुँचा देना । कुछ गृह्यसूत्रों से ऐसा आभास मिल जाता है, यथा हिरण्यकेशि के अनुसार; तब गुरु बच्चे से यह कहलवाता है "मैं ब्रह्मसूत्रों को प्राप्त हो गया हूँ। मुझे इसके पास ले चलिए । सविता देवता द्वारा प्रेरित मुझे ब्रह्मचारी होने दीजिए ।" मानवग्रह्यसूत्र एवं काठक. ने 'उपनयन' के स्थान पर 'उपायन' शब्द का प्रयोग किया है। काठक के टीकाकार आदित्यदर्शन ने कहा है कि उपानय, उपनयन, मौञ्चीबन्धन, बटुकरण, व्रतबन्ध समानार्थक हैं। गर्भाधान काल से अथवा जन्म काल से आठवें वर्ष में या पॉचवें वर्ष में ब्राह्मणों का यज्ञोपवीत संस्कार, छठें तथा ग्यारहवें वर्ष में क्षत्रियों का, तथा आठवें और बारहवें वर्ष में वैश्यों का यज्ञोपवीत संस्कार होता है। उक्त बताये गये काल से द्विगुणित समय व्यतीत हो जाने पर जो यज्ञोपवीत संस्कार होता है उसे विद्वानों ने गौण सामान्य यज्ञोपवीत कहा है।

2.5 शब्दावली

सविता – सूर्य

उपनयन – यज्ञोपवीत या जनेउ

कालान्तर – समय का अन्तर

विप्राणां – ब्राह्मणों का

व्रतबन्ध – यज्ञोपवीत

क्षितिभुजां – क्षत्रिय

गौण – सामान्य

क्षिप्रसंज्ञक – हस्त, अश्विनी एवं पुष्य

सन्तानोत्पत्ति – सन्तान की उत्पत्ति

शुक्लाम्बर – श्वेत वस्त्र

2.6 बोध प्रश्न के उत्तर

1. पास या सन्निकट ले जाना
2. जन्म से पॉचवें या आठवें वर्ष में

3. स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा एवं शतभिषा
4. तीन प्रकार के ऋण - देव, मनुष्य, ऋषि
5. पयोव्रत

2.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

संस्कार विधान – आचार्य गंगा प्रसाद शास्त्री

मुहूर्त्तचिन्तामणि – राम दैवज्ञ – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

सनातन संस्कार विधि – आचार्य गंगा प्रसाद शास्त्री

कर्मसमुच्चय - रामजी लाल शास्त्री

2.8 दीर्घोत्तरीय प्रश्न

क. उपनयन से आप क्या समझते है । स्पष्ट कीजिये ।

ख. उपनयन महत्व का निरूपण कीजिये ।

इकाई – 3 उपनयन विधान

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के 201 के द्वितीय खण्ड की तीसरी इकाई 'उपनयन विधान' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने संस्कारान्तर्गत अक्षराम्भ एवं उपनयन संस्कार का अध्ययन कर लिया है। उपनयन संस्कार में अब तक उसकी आवश्यकता एवं महत्व को जाना हैं। यहॉ इस इकाई में आप उपनयन के विधानों को पढ़ेगे।

कर्मकाण्ड में उपनयन संस्कार का विधान बतलाया गया है। विधान से तात्पर्य उपनयन संस्कार करने के दौरान क्या – क्या होता है ? उसकी विधि क्या है ? आदि ..... आदि ।

प्रस्तुत इकाई में आपके ज्ञानार्थ उपनयन संस्कार के विधानों का उल्लेख किया जा रहा हैं, जिसे पढ़कर आप तत्सम्बिन्धत ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ उपनयन संस्कार के विधि को बता सकेंगे।
- ❖ विधान के अन्तर्गत कथित तथ्यों को समझा सकेंगे।
- ❖ उपनयन का महत्व निरूपण कर सकेंगे।
- ❖ उपनयन विधान के मन्त्रों का ज्ञान कर लेंगे।
- ❖ उपनयन के लाभ - हानि की समीक्षा कर सकेंगे।

3.3 उपनयन विधान

उपनयन' वैदिक परंपरा का एक महत्वपूर्ण संस्कार है। यह एक प्रकार का शुद्धिकरण है जिसे करने से वैदिक वर्णव्यवस्था में व्यक्ति द्विजत्व को प्राप्त होता था जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते, अर्थात् वह वेदाध्ययन का अधिकारी हो जाता था। उपनयन का शाब्दिक अर्थ होता है - नैकट्य प्रदान करना, क्योंकि इसके द्वारा वेदाध्ययन का इच्छुक व्यक्ति वेदशास्रों में पारंगत - गुरु / आचार्य की शरण में जाकर एक विशेष अनुष्ठान के माध्यम से वेदाध्ययन की दीक्षा प्राप्त करता था, अर्थात् वेदाध्ययन के इच्छुक विद्यार्थी को गुरु अपने संरक्षण में लेकर एक विशिष्ट अनुष्ठान के द्वारा उसके शारीरिक एवं जन्मजन्मांतर दोषों - कुसंस्कारों /का परिमार्जन कर उसमें वेदाध्ययन के लिए आवश्यक गुणों का आधार करता था, उसे एतदर्थ आवश्यक नियमों की (व्रतों) शिक्षा प्रदान करता था, इसलिए इस संस्कार को व्रतबन्ध''' भी कहा जाता था। फलतः अपने विद्यार्जन काल में उसे एक

नियमबद्ध रुप में त्याग, तपस्या और कठिन अध्यवसाय का जीवन बिताना पड़ता था तथा श्रुतिपरंपरा से वैदिक विद्या में निष्णात होने पर समावर्तन संस्कार के उपरांत अपने भावी जीवन के लिए दिशा लेकर ही अपने घर आता था। उत्तरवर्ती कालों में (दीक्षा) निर्देश - यद्यपि वैदिक शिक्षा - पद्धति की परंपरा के विच्छिन्न हो जाने सेयह एक परंपरा का अनुपालन मात्र रह गया है, किंतु पुरातन काल में इसका एक विशेष महत्व था।

यज्ञोपवीत अथवा उपनयन बौद्धिक विकास के लिये सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार है। धार्मिक और आधात्मिक उन्नति का इस संस्कार में पूर्णरूपेण समावेश है। हमारे मनीषियों ने इस संस्कार के माध्यम से वेदमाता गायत्री को आत्मसात करने का प्रावधान दिया है। आधुनिक युग में भी गायत्री मंत्र पर विशेष शोध हो चुका है। गायत्री सर्वाधिक शक्तिशाली मंत्र है। यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं अर्थात् यज्ञोपवीत जिसे जनेऊ भी कहा जाता है अत्यन्त पवित्र है। प्रजापति ने स्वाभाविक रूप से इसका निर्माण किया है। यह आयु को बढ़ानेवाला, बल और तेज प्रदान करनेवाला है। इस संस्कार के बारे में हमारे धर्मशास्त्रों में विशेष उल्लेख है। यज्ञोपवीत धारण का वैज्ञानिक महत्व भी है। प्राचीन काल में जब गुरुकुल की परम्परा थी उस समय प्राय: आठ वर्ष की उम्र में यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हो जाता था। इसके बाद बालक विशेष अध्ययन के लिये गुरुकुल जाता था। यज्ञोपवीत से ही बालक को ब्रह्मचर्य की दीक्षा दी जाती थी जिसका पालन गृहस्थाश्रम में आने से पूर्व तक किया जाता था। इस संस्कार का उद्देश्य संयमित जीवन के साथ आत्मिक विकास में रत रहने के लिये बालक को प्रेरित करना है।

यज्ञोपवीत का प्रयोजन –

आचार्य गृह में जाने पर, बालक को अपना शिष्य बनाते समय आचार्य यज्ञोपवीत धारण कराता है। यह जहॉ, आचार्य के शिष्य वर्ग में प्रवेश का एक चिन्ह हैं वहॉ यह अन्य भी कई महत्वपूर्ण कर्तव्यों का प्रतीक है।

यज्ञोपवीत संस्कार अथवा मौञ्जी – बन्धन को बालक का दूसरा जन्म बताया गया है। यह उसके ब्रह्मचर्यव्रत एवं विद्याध्ययन का प्रतीक है।

तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है –

जायमानो वै ब्राह्मण: त्रिभि: ऋणै: ऋणव जायते। ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्य:, यज्ञेन देवेभ्य:, प्रजया पितृभ्य:। एष वै अनृणो य: पुत्री यज्वा, ब्रह्मचारिवासी।

अभिप्राय यह है कि मनुष्य पर तीन ऋणों का भार होता है वह ब्रह्मचर्य का पालन कर ऋषि ऋण को उतारता है, गृहस्थ धर्म के पालन पूर्वक सन्तानोत्पत्ति से पितृ ऋण और यजन द्वारा देवऋण से

उत्रृण होता है।

इन तीन ऋणों की स्मृति यज्ञोपवीत के तीन सूत्रों से होती रहती है ।

अथवा एक ब्रह्मग्रन्थि में जोड़े गये यज्ञोपवीत के तीन तार ज्ञान, कर्म और उपासना-इन त्रिविध कर्तव्यों के साथ – साथ पालन के प्रतीक हैं। एक सूत्र के टूट जाने पर ही यज्ञसूत्र खण्डित माना जाता है। इसी प्रकार ज्ञान – कर्म उपासना में से एक को भी भूल जाना व्रत को खण्डित कर देना है प्राचीन समय में विद्यार्थी इस विद्या – चिन्ह को अपने वस्त्रों के उपर ही धारण करते थे। महाभारत में एक स्थल पर वर्णन हैं –

ततः शुक्लाम्बरधरः शुक्लयज्ञोपवीतवान् ।

शुक्लकेशः सितश्मश्रु शुक्लमाल्यानुलेपनः ।।

अर्थात् वृद्ध द्रोणाचार्य श्वेत वस्त्रों पर श्वेत यज्ञोपवीत धारण किये हुए थे।

विधि-

उपवास तथा व्रत –

शतपथ ब्राह्मण के अनुसार –

पयोव्रतो ब्राह्मणो यवागूव्रतो राजन्य आमिक्षाव्रतो वैश्यः।

शतपथ ब्राह्मण के वचनानुसार जिस दिन बालक का उपनयन संस्कार कराना हो उससे तीन अथवा एक दिन पहले तीन अथवा एक व्रत बालक को करावे। इस समय ब्राह्मण बालक को दुग्ध पर, क्षत्रिय बालक को यवार्गू (जौ का दलिया) पर और वैश्य बालक को श्रीखण्ड पर रखे।

गायत्री जप

आचार्य के समीप उपनयन के नियत शुभदिन से एक दिन पूर्व यजमान पत्नी और उपनेय बालक सहित मंगल स्नान कर, शुद्ध वस्त्र धारण कर अग्निहोत्रशाला से भिन्न मण्डप में पूर्वाभिमुख शुभासन पर बैठ, दक्षिण में पत्नी और उसके दक्षिण में बालक को बैठा उपनयन कराने के अपने अधिकार की सिद्धि के लिए तथा बालक के अब तक के यथेष्ठाचारण के दोष निवृत्ति के लिए इस प्रकार संकल्प करें –

यजमान - कृच्छ्रत्रयात्मकप्रायश्चितप्रत्याम्नाय गोनिष्क्रयीभूतयथाशक्तिरजतद्रव्य दानपूर्वकं द्वादश सहस्रं द्वादशाधिकसहसंवागायत्रीजपमहं ब्राह्मणद्वारा कारयिष्ये ।

कुमारः - मम कामचारकामवादकामभक्षणादिदोषपरिहारार्थं

कृच्छ्रत्रयात्मकप्रायश्चितप्रत्याम्नायगोनिष्क्रयीभूतयथाशक्तिरजतद्रव्यदानपूर्वकं द्वादशसहस्रं द्वादशाधिकसहस्रं वा ब्राह्मणद्वारा गायत्री जपं कारयिष्ये ।

संकल्प करके गोदान करावें और १२००० अथवा १०१२ गायत्री का जप करावें।

गणपति पूजनादि

पश्चात् बालक के उपनयन संस्कार का संकल्प कर, संकल्प पूर्वक गणपतिपूजन, स्वस्ति, पुण्याहवाचन, मातृकापूजन एवं आभ्युदयिक श्राद्ध करना चाहिए।

मुंडनादि –

संस्कार के दिन संकल्प पूर्वक कुमार का संस्कारांगभूत मुंडन कराकर क्रम से ३ ब्राह्मणों और कुमार को भोजन कराकर बाहर शाला में पंचभू संस्कार एवं अग्नि की स्थापना कर आचार्य के समीप ले आवे । इस समय बालक शुद्ध वस्त्रादि पहने हो ।

आचार्य द्वारा वस्त्रादि धारण कराना -

संस्कार्य कुमार को आचार्य के दाहिने ओर, अग्नि के पश्चिम में पूर्वाभिमुख बैठाकर विप्रजन आर्शीवाद दें । तब आचार्य बालक से ये वाक्य कहलावें –

बालक – ब्रह्मचर्यमागाम्, ब्रह्माचार्यसानि।

अब आचार्य निम्नलिखित मंत्र पढ़कर ब्रह्मचारी को कटिसूत्र तथा कौपीन आदि वस्त्र देवे और आचमन करावे -

ऊँ येनेन्द्राय वृहस्पतिर्वासः पर्यदधादमृतम् । तेन त्वा परिदधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे।

मेखला धारण –

आचार्य निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर अथवा मौन ही ब्रह्मचारी के जितने प्रवर हों उतनी गांठवाली मूंज आदि की मेखला ब्रह्मचारी के कटिभाग में प्रदक्षिणा क्रम से तीन बार लपेट बांधे –

ऊँ इयं दुरूक्रं परिवधामाना वर्णं पवित्रं पुनतीम आगात्। प्राणापानाभ्यां बलमादधाना स्वसादेवी सुभगा मेखलेयम्।

अथवा –

ऊँ युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उश्रेयान् भवति जायमानः । तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः।

ब्राह्मणों को संकल्प कर यज्ञोपवीत और बर्तन दें।

यज्ञोपवीत संस्कार –

निम्न तीन मन्त्रों को पढ़कर आचार्य यज्ञोपवीत का संस्कार करें –

ऊँ आपो हिष्ठा मयोभुवस्ता न उर्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे।

ॐ यो व: शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह न: । उशतीरिव मातर: ।

तस्मा अरंगमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च न: ।।

यज्ञोपवीत में अंगूठा फिराना –

नीचे लिखे तीन मन्त्र पढ़ता हुआ आचार्य यज्ञोपवीत में अंगूठा फिरावे : -

ॐ ब्रह्म यज्ञानां प्रथमम्पुरस्ताद् विसीमत: सुरूचोवेन आव: । स बुघ्न्या उपमा अस्य विष्ठा: सतश्च योनिमसतश्च विव: ।

ॐ इदं विष्णुविचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा गूॅ सुरेश्वा: ।।

ॐ नमस्ते रूद्र मन्यव उतोत इषवे नम: बाहुभ्यामुत ते नम: ।।

तन्तुओं में देवताविन्यास –

अब आचार्य यज्ञोपवीत के नौ तन्तुओं में ओंकारादि नौ देवों का विन्यास करें-

ओंकारं प्रथमे तन्तौ विन्यस्यामि ।

अग्नि द्वितीये तन्तौ विन्यस्यामि ।

नागांस्तृतीये तन्तौ विन्यस्यामि ।

सोमं चतुर्थे तन्तौ विन्यस्यामि ।

इन्द्रं पंचमे तन्तौ विन्यस्यामि ।

प्रजापतिं षष्ठे तन्तौ विन्यस्यामि ।

वायुं सप्तमे तन्तौ विन्यस्यामि ।

सूर्यं अष्टमे तन्तौ विन्यस्यामि ।

विश्वेदेवान् नवमे तन्तौ विन्यस्यामि ।

इसके पश्चात् यज्ञोपवीत को देखता हुआ दस बार गायत्री मन्त्र का पाठ करे और नीचे लिखे मन्त्र का पाठ करता हुआ उसे सूर्य को दिखावे –

ॐ उपयाम गृहीतोऽसि सावित्रोऽसि च नोधाश्च नोधा असि च नो मयि धेहि । जिन्व यज्ञ जिन्व यज्ञ पतिं भगाय देवाय तवा सवित्रे ।।

यज्ञोपवीत धारण –

आचार्य ब्रह्मचारी कुमार के हाथ में यह मन्त्राभिपूत यज्ञा सूत्र दे और ब्रह्मचारी निम्नलिखित मन्त्र पढ़ता हुआ उसे दाहिने बाहु को उठाकर बांये कंधे से पहने ।

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तुतेज: यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ।।

दण्ड धारण –

आचार्य मौन ही बालक को दण्ड धारण कराये-

ब्रह्मचारी निम्न मन्त्र पढ़ता हुआ दण्ड को ग्रहण करे –

ॐ यो मे दण्ड: परापतदवैहायसोऽधिभूम्याम् । तमहं पुनराददे आयुषे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय ॥

सूर्यावलोकन –

आचार्य निम्न मन्त्र से अपनी अंजलि के जल से तीन बार ब्रह्मचारी की अंजलि को भरे –

ॐ आपो हिष्ठा मयोभुवस्ता न उर्जेदधातनमहेरणाय चक्षसे ।

ॐ यो व: शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेह न: । उशतीरिवमातर: ।।

ॐ तस्मा अरंगमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च न ।।

जल से बालक की अंजुलि भर कर आचार्य बालक को सूर्यदर्शन के लिए कहे । बालक तच्चक्षु इत्यादि मन्त्र पढ़ता हुआ सूर्यदर्शन करे । पुन: उसी क्रम में सूर्योपस्थान करना चाहिये ।

अग्नि पर्युक्षण-

कुमार प्रदक्षिणा क्रम से अग्नि का पर्युक्षण कर आचार्य के बायीं ओर बैठ जावे और फूल चन्दन – ताम्बूल और कपड़े आदि लेकर ब्रह्मा का वरण आदि कुशकण्डिकादि होम की सम्पूर्ण विधि को बर्हिहोम तक सम्पूर्ण करे ।

आचार्य की शिक्षा –

पश्चात् आचार्य कुमार को निम्नलिखित उपदेश दे –

आचार्य - ब्रह्मचार्यसि ।

ब्रह्मचारी - भवानि ।

आचार्य- अपोऽशान ।

ब्रह्मचारी - अशानि ।

आचार्य - कर्म कुरू ।

ब्रह्मचारी – करवाणि ।

आचार्य - मा दिवा स्वाप्सी: ।

ब्रह्मचारी – न स्वप्नानि ।

आचार्य - वाचं यच्छ ।

ब्रह्मचारी – यच्छानि ।

आचार्य अध्ययनं सम्पादय ।

ब्रह्मचारी – सम्पादयानि।

आचार्य - समिधमाधेहि।

ब्रह्मचारी - आदधानि।

आचार्य - अपोऽशान।

ब्रह्मचारी - अशानि।

पश्चात् संकल्पादि कर्म विधि से आचार्य पूजन करना चाहिये।

गायत्री पूजन कर गायत्री उपदेश सुनना चाहिये।

पुन:आचार्य उपदेश के रूप में ब्रह्मचारी को गायत्री प्रदान करता है।

गायत्री की आवृत्ति का प्रकार इस प्रकार है –

ऊँ भूर्भुव: स्व: । तत्सवितुर्वरेण्यम्।

ऊँ भूर्भुव: स्व: । भर्गोदेवस्य धीमहि।

ऊँ भूर्भुव: स्व: । धियो यो न: प्रचोदयात्॥ इयमेकावृत्ति:।

ऊँ भूर्भुव: स्व्: । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। ऊँ भूर्भुव: स्व: धियो यो न: प्रचोदयात्। इति द्वितीयाऽऽवृत्ति:।

ऊँ भूर्भुव: स्व: । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो न: प्रचोदयात्।

इस प्रकार गायत्री मन्त्र का पाठ साथ – साथ शिष्य भी करे। अन्त में दोनों मिलकर ओं स्वस्ति उच्चारण करें।

अथ समिदाधानम् -

इस कर्म में ब्रह्मचारी आचार्य के दाहिनी ओर अग्नि से पश्चिम में पूर्वाभिमुख बैठकर घृताक्त अरण्णों के कण्डों की 5 आहुतियॉ निम्नलिखित 5 मन्त्रों से दे : -

ऊँ अग्ने सुश्रव: सुश्रवसं मा कुरू स्वाहा।

ऊँ यथात्वमग्ने सुश्रव: सुश्रवा असि स्वाहा।

ऊँ एवं मा गूॅ सुश्रव: सौश्रवसं कुरू स्वाहा।

ऊँ यथा त्वमग्ने देवानां यज्ञस्य निधिपा असि।

ऊँ एवमहं मनुष्याणां वेदस्रू निधिपो भूयासम्।

इस प्रकार अग्नि प्रज्वलित कर दायें हाथ से किसी छोटे पात्र में जल लेकर दायी – दायीं ओर इस क्रम से अग्नि के चारो ओर जल सेचन करें।

फिर खड़ा रहकर अपनी विलस्त भर ढाक की तीन घी में भिगोई हुईए समिधाओं का एक एक

करके हवन करे। इस समय निम्न मन्त्र को पढे –

ऊँ अग्नये समिधमाहार्षं वृहते जातवेदसे यथा त्वमग्ने समिध समिध्यस एवमहमायुषा मेधया वर्चसा प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन समिन्धे जीवपुत्रो ममाचार्यो मेधाव्यहमसा न्यनिराकरिष्णुर्यशस्वी तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्व्रून्नदो भूयासम्।

ऊँ एषाते अग्ने समित्त्या वर्धस्व चाप्यायस्व वर्धिषीमहि च वयमाप्यासिषीमहि स्वाहा।

पुन: बैठकर पूर्वोक्त अग्ने सुश्रव्: इत्यादि पॉच मन्त्र से अग्नि में सूखे कण्डे डाले और अग्नि के चारों और जलसिंचन करे । फिर मुख तथा सभी अंगो को स्पर्श करे।

इसके पश्चात् ब्रह्मचारी वैश्वानर और सूर्य का अभिवादन कर आचार्य माता – पिता आदि गुरूजनों को यथायोग्य नमस्कार करें।

भिक्षाविधि -

ब्रह्मचारी भिक्षा पात्र हाथ में लेकर ब्राह्मण कुमार हो तो भवति भिक्षां देहि। क्षत्रिय हो तो भिक्षां भवति देहि। वैश्य कुमार हो तो भिक्षां देहि भवति कहता हुआ भिक्षा मांगे । प्रथम उन स्त्रियों से भिक्षा मांगे जो निषेध न करें। पहले माता से ही भिक्षा मांगे। माता न हो तो सगी बहन अथवा मौसी से भिक्षा मांगे । तीन छ: बारह अथवा 12 से अधिक स्त्रियों से भिक्षा मांग कर लावे। जिस – जिस से भिक्षा मांगे मिलने पर ऊँ स्वस्ति आशीर्वचन कहकर भिक्षा ग्रहण करे। पश्चात् इस भिक्षा को आचार्य को समर्पित करे और उसकी आज्ञा से भक्षण करे । भिक्षा में पका हुआ अन्न ही समझना चाहिये।

भोजन कर लेने के पश्चात् सायंकाल सूर्यास्त तक मौन रहे। यदि सामर्थ्य हो तो बैठे लेटे नहीं। तदनन्तर सायंकालीन सन्धया कर अग्ने: सुश्रवा: से अग्निप्रज्वलनं से लेकर गुरूओं के अभिवादन तक की क्रिया करके मौनव्रत को समाप्त कर दे।

उपदेश विधि -

इसके पश्चात् आचार्य उपनयन से लेकर समावर्तन संस्कार पर्यन्त करने योग्य कर्तव्यों का उपदेश करे। ये उपदेश संक्षेप में निम्नलिखित है –

भूमौ शयनम् । अक्षारलवणाशनम् । दण्डधारणमग्निपरिचरणम् । गुरूशुश्रूषा भिक्षाचार्या । मधुमांसमज्जनोपर्यासनस्त्रीगमननृतादत्तादानानि वर्जयेत् । अष्टाचत्वारिंशतं वर्षाणि वेदब्रह्मचर्यं चरेत् । द्वादश द्वादश वा प्रतिवेदम्। यावद् ग्रहणं वा। आचार्येणाहूत उत्थाय प्रतिश्रृणुयात्। शयानं चेदासीन आसीनं चेत्तिष्ठन्तिष्ठन्तं चेदभिक्रामन्नभिक्रामंतं चेदभिधावन् । स एवं वर्तमानोऽमुत्राद्य वसत्यमुत्राद्य वसतीति तस्य स्नातकस्य कीर्तिर्भवति।

अर्थात् ब्रह्मचारी पृथ्वी आदि कठोर शय्या पर सोये । क्षार या लवण न खाये। दण्डधारण हवन गुरूसेवा भिक्षाचरण आदि उसके नित्य के कार्य है। मधुमांसभोजन गहरे जल में स्नान स्त्री सेवन असत्य व्यवहार अदत्त का ग्रहण्सा आदि कार्य कभी न करे । 48 वर्ष अर्थात् प्रत्येक वेद के लिए 12 - 12 वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य करे अथवा जितना रख सके । आचार्य बुलावे तो उठकर उत्तर दे। सो रहे हों तो बैठकर बैठें हो तो समीप ठकर कर ठहरे हों तो पास पहुॅचकर चल पड़े तो हो तो दौडकर पास पहुॅचकर उत्तर दे। जो इस प्रकार ब्रह्मचर्य काल को व्यतीत करता है उसकी धूम मच जाती है। इत्यादि।

अन्त में आये हुए विप्रजन आ ब्रह्मन ब्राह्मणो इत्यादि मन्त्रपूर्वक आर्शीवाद दें और यजमान आचार्य आदि का गन्धादि द्वारा पूजन कर दक्षिणा से उनका सम्मान कर विदा करे। मातृगणादि देवों को विसर्जित करे तथा च यथाशक्ति विप्रों को भोजन करावे।

उपनयन में ग्रहों के अशुभ स्थान विचार –

> **कवीज्य चन्द्र लग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमा: ।**
> **व्ययेऽब्ज भार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खला: ।।**

व्रतबन्ध में लग्न से छठें, आठवें, भाव में शुक्र, गुरू, चनद्रमा और लग्नेश अशुभ होते हैं। चन्द्रमा और शुक्र बारहवें भाव में अशुभ होते हैं तथा अशुभग्रह लग्न, अष्टम एवं पंचम भावों में अशुभ होते हैं।

लग्नशुद्धि विचार –

> **व्रतबन्धेऽष्टषड्रिष्फवर्जिता: शोभना: शुभा: ।**
> **त्रिषडाये खला: पूर्णो गोकर्कस्थो विधुस्तनौ ।।**

व्रतबन्ध काल में लग्न से ६,८,१२ भावों को छोड़कर शेष भावों में शुभ ग्रह, ३,६,११ भावों में पापग्रह तथा लग्नस्थ पूर्ण चन्द्रमा वृष अथवा कर्क राशि में स्थित हो तो शुभ होता है।

व्रतबन्ध में जन्ममास विचार –

> **जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिको व्रती ।**
> **आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनामनादिमे ।।**

ब्राह्मणों के प्रथम गर्भ से उत्पन्न बालक का उपनयन जन्मनक्षत्र, जन्म मास, जन्म लग्न आदि में भी करने से वटु बालक अधिक विद्वान होता है। क्षत्रिय और वैश्यों के प्रथम गर्भ से उत्पन्न ज्येष्ठ पुत्र को छोड़कर द्वितीय आदि पुत्रों का यज्ञोपवीत जन्म लग्न, जन्ममास, एवं जन्म नक्षत्र में करने से वे विद्वान होते है।

निषिद्धकाल –

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके।
प्राक् सन्ध्यागर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलेग्रहे ।।

कृष्णपक्ष के प्रथम तृतीयांश प्रतिपदा से पंचमी तक छोड़कर अर्थात् षष्ठी से अमावस्या पर्यन्त, प्रदोष काल, अनध्याय , शनिवार, रात्रिकाल, अपराह्ण जिस दिन प्रात:काल बादलों का गर्जन हो तथा गलग्रह संज्ञक १,४,७,८,९,१३,१४,१५ तिथियों में व्रतबन्ध शुभ नहीं होता।

आश्वलायनगृह्यसूत्र में उपनयन संस्कार का संक्षिप्त विवरण दिया हुआ है । उपनयन विधि का- विस्तार आपस्तम्बगृह्यसूत्र, हिरण्यकेशिगृह्यसूत्र एवं गोभिलगृह्यसूत्र में पाया जाता है।

बोधप्रश्न

1. व्यक्ति को द्विजत्व प्राप्त कराने वाला संस्कार का क्या नाम है।
2. यज्ञोपवीत कर्म से किसका धारण होता है।
3. यज्ञोपवीत के तीन सूत्रों में क्या निहित होता है।
4. 'कर्म कुरू' का अर्थ है।
5. व्रतबन्ध में चन्द्रमा और शुक्र बारहवें भाव में हो तो क्या होता है।

3.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि उपनयन' वैदिक परंपरा का एक महत्वपूर्ण संस्कार है। यह एक प्रकार का शुद्धिकरण है जिसे करने से वैदिक वर्णव्यवस्था में व्यक्ति द्विजत्व को प्राप्त होता था जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते, अर्थात् वह वेदाध्ययन का अधिकारी हो जाता था। उपनयन का शाब्दिक अर्थ होता है - नैकट्य प्रदान करना, क्योंकि इसके द्वारा वेदाध्ययन का इच्छुक व्यक्ति वेदशास्त्रों में पारंगत - गुरु / आचार्य की शरण में जाकर एक विशेष अनुष्ठान के माध्यम से वेदाध्ययन की दीक्षा प्राप्त करता था, अर्थात् वेदाध्ययन के इच्छुक विद्यार्थी को गुरु अपने संरक्षण में लेकर एक विशिष्ट अनुष्ठान के द्वारा उसके शारीरिक एवं जन्मजन्मांतर दोषों - कुसंस्कारों / का परिमार्जन कर उसमें वेदाध्ययन के लिए आवश्यक गुणों का आधार करता था, उसे एतदर्थ आवश्यक नियमों की (व्रतों) शिक्षा प्रदान करता था, इसलिए इस संस्कार को व्रतबन्ध"' भी कहा जाता था। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार – **पयोव्रतो ब्राह्मणो यवागूव्रतो राजन्य आमिक्षाव्रतो वैश्य: ।** शतपथ ब्राह्मण के वचनानुसार जिस दिन बालक का उपनयन संस्कार कराना हो उससे तीन अथवा एक दिन पहले तीन अथवा एक व्रत बालक को करावे। इस समय ब्राह्मण बालक को

दुग्ध पर, क्षत्रिय बालक को यवार्गू (जौ का दलिया) पर और वैश्य बालक को श्रीखण्ड पर रखे। इस प्रकार आपने उपनयन विधि का अध्ययन कर लिया है।

3.5 शब्दावली

द्विज – ब्राह्मण

संस्काराद् – संस्कार से

वेद – ऋग्वेद, यजु , साम एवं अथर्व वेद

शास्त्र – छ:

वेदाध्ययन – वेद का अध्ययन

कुसंस्कार – बुरे कर्म से युक्त

कवी – शुक्र

इज – वृहस्पति

रिपु – शत्रु

त्रिषडाय – 3,6,11

विधु – चन्द्रमा

3.6 बोध प्रश्न के उत्तर

1. उपनयन संस्कार
2. गायत्री का
3. ज्ञान, कर्म एवं उपासना
4. कर्म करो
5. अशुभ

3.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

पारस्कर गृह्यसूत्र - द्वितीयकाण्ड

संस्कारदीपक - श्री नित्यानन्द पर्वतीय

हिन्दू संस्कार - डॉ . राजबली पाण्डेय

कर्मसमुच्चय - रामजी लाल शास्त्री

3.8 दीर्घोत्तरीय प्रश्न

क. उपनयन विधि का विस्तृत वर्णन कीजिये ।

ख. उपनयन निहित कर्मों का उल्लेख कीजिये ।

इकाई – 4 वेदारम्भ एवं समावर्तन

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 वेदारम्भ एवं समावर्तन

बोध प्रश्न

4.4 सारांश

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 सहायक पाठ्यसामग्री

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के 201 के दूसरी खण्ड की चौथी इकाई 'वेदारम्भ एवं समावर्तन' से सम्बन्धित है। इसके पूर्व की इकाई में आपने उपनयन विधान का अध्ययन कर लिया है। अब यहाँ प्रस्तुत इकाई में वेदारम्भ एवं समावर्तन संस्कार का अध्ययन करेंगे।

संस्कारों में वेदारम्भ एवं समावर्तन का महत्वपूर्ण स्थान हैं। जब बालक का उपनयन संस्कार हो जाता है तब वह वेदाध्ययन करने के प्रवृत्त होता है। वेदाध्ययन हेतु वेदारम्भ संस्कार किया जाता है उसी क्रम में समावर्तन संस्कार का भी विधान हैं।

प्रस्तुत इकाई में पाठकों के लिए वेदारम्भ एवं समावर्तन संस्कार का उल्लेख कियाजा रहा है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ वेदारम्भ संस्कार को समझ लेंगे।
- ❖ वेदारम्भ संस्कार के प्रयोजन को समझा सकेंगे।
- ❖ वेदारम्भ संस्कार का महत्व निरूपण कर सकेंगे।
- ❖ समावर्तन क्या है। समझा सकेंगे।
- ❖ समावर्तन संस्कार कब होता है। बता सकेंगे।

4.3 वेदारम्भ एवं समावर्तन

वेदारम्भ संस्कार ज्ञानार्जन से सम्बन्धित है। वेद का अर्थ होता है ज्ञान और वेदारम्भ के माध्यम से बालक अपने ज्ञान को अपने अन्दर समाविष्ट करना शुरू करे यही अभिप्राय है इस संस्कार का। शास्त्रों में ज्ञान से बढ़कर दूसरा कोई प्रकाश नहीं समझा गया है। स्पष्ट है कि प्राचीन काल में यह संस्कार मनुष्य के जीवन में विशेष महत्व रखता था। यज्ञोपवीत के बाद बालकों को वेदों का अध्ययन एवं विशिष्ट ज्ञान से परिचित होने के लिये योग्य आचार्यो के पास गुरुकुलों में भेजा जाता था। वेदारम्भ से पहले आचार्य अपने शिष्यों को ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने एवं संयमित जीवन जीने की प्रतिज्ञा कराते थे तथा उसकी परीक्षा लेने के बाद ही वेदाध्ययन कराते थे। असंयमित जीवन जीने वाले वेदाध्ययन के अधिकारी नहीं माने जाते थे। हमारे चारों वेद ज्ञान के अक्षुण्ण भंडार हैं।

गुरुकुल से विदाई लेने से पूर्व शिष्य का समावर्तन संस्कार होता था। इस संस्कार से पूर्व ब्रह्मचारी का

केशान्त संस्कार होता था और फिर उसे स्नान कराया जाता था। यह स्नान समावर्तन संस्कार के तहत होता था। इसमें सुगन्धित पदार्थो एवं औषधादि युक्त जल से भरे हुए वेदी के उत्तर भाग में आठ घड़ों के जल से स्नान करने का विधान है। यह स्नान विशेष मन्त्रोच्चारण के साथ होता था। इसके बाद ब्रह्मचारी मेखला व दण्ड को छोड़ देता था जिसे यज्ञोपवीत के समय धारण कराया जाता था। इस संस्कार के बाद उसे विद्या स्नातक की उपाधि आचार्य देते थे। इस उपाधि से वह सगर्व गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का अधिकारी समझा जाता था। सुन्दर वस्त्र व आभूषण धारण करता था तथा आचार्यो एवं गुरुजनों से आशीर्वाद ग्रहण कर अपने घर के लिये विदा होता था।

पारम्पर्यागतो येषां वेद: सपरिवृंहण:।

यच्छाखाकर्म कुर्वीत तच्छाखाध्ययनं तथा॥

किसी भी शुभदिन अपनी शाखा के अध्ययन के साथ वेदाध्ययन का आरम्भ किया जाता है। प्राय: यह संस्कार उपनयन संस्कार के साथ ही किया जाता है। उपर उद्धृत वसिष्ठ श्लोक के अनुसार जिस कुल में जिस – जिस वेदशाख के मन्त्रों से यज्ञोपवीत आदि संस्कार होते रहते हैं उस कुल में पहले उस वेद का अध्ययन आरम्भ करना चाहिये, उस वेद की समाप्ति पर दूसरे वेद का अध्ययन आरम्भ करना चाहिए।

विधि –

आचार्य – आचमन, प्राणायम, गणपति पूजनादि कर देशकाल के कीर्तन सहित ऋग्वेदादि के अध्यापन का संकल्प दे। पुन: पंचभू संस्कार पूर्वक लौकिकाग्नि की स्थापना कर कुमार को बुलाकर अग्नि से पश्चिम दिशा में अपने से बायें बैठाये और आज्य भागाहुति पर्यन्त होमविधि पूर्ण करें।

विशेष आहुति -

इसके पश्चात् यदि ऋग्वेद आरम्भ करना हो तो नीचे लिखी दो आहुतियॉ दे –

ॐ पृथिव्यै स्वाहा इदं पृथिव्यै न मम।

ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम।

यदि यजुर्वेद आरम्भ करना हो तो ये आहुतियॉ दे : -

ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा । इदमन्तरिक्षाय नम मम।

ॐ वायवे स्वाहा। इदं वायवे न मम॥

यदि सामवेद आरम्भ करना हो तो निम्नलिखित आहुतियॉ दे –

ॐ दिवे स्वाहा। इदं दिवे न मम।

ॐ सूर्याय स्वाहा । इदं सूर्याय न मम ॥
यदि अथर्ववेद आरम्भ करना हो तो निम्न आहुतियॉ दे : -
ॐ दिग्भ्य: स्वाहा । इदं दिग्भ्य: न मम ।
ॐ चन्द्रमसे स्वाहा । इदं चन्द्रमसे न मम ॥
दो – दो आहुतियों के पश्चात् नीचे लिखी नौ आहुतियॉ दे : -
ॐ ब्रह्मणे स्वाहा । इदं ब्रह्मणे न मम ।
ॐ छन्दोभ्य: स्वाहा । इदं छन्दोभ्य: न मम ।
ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये न मम ।
ॐ देवेभ्य: स्वाहा । इदं देवेभ्य: न मम ।
ॐ ऋषिभ्य: स्वाहा । इदं ऋषिभ्य: न मम ।
ॐ श्रद्धायै स्वाहा । इदं श्रद्धायै न मम ।
ॐ मेधायै स्वाहा । इदं मेधायै न मम ।
ॐ सदसस्पतये स्वाहा । इदं मेधायै न मम ।
ॐ अनुमतये स्वाहा । इदं अनुमतये न मम ।
यदि चारों वेदों को एक साथ आरम्भ करे तो उपर लिखी प्रत्येक वेद की दो – दो आहुतियों के पश्चात् ॐ ब्रह्मणे स्वाहा आदि आहुतियॉ दे ।
इसके पश्चात् महाव्याहृति आदि स्विष्टकृत पर्यन्त दस आहुति दे और संश्रव प्राशन आदि सम्पूर्ण सामान्य होमविधि को पूराकर वेदारम्भ संस्कार को समाप्त करे । पश्चात् मातृगण आदि देवताओं का विसर्जन कर विप्रों को भोजन कराये ।
आजकल देशकाल की प्रथा के अनुसार काशी अथवा काश्मीर गमन आचार्य कराते हैं । यह रीति सूत्रकारों के अनुसार नहीं है । वेदारम्भ संस्कार का शुद्ध अर्थ ही यह है कि जब कुमार वेदाध्ययन आरम्भ करना चाहे तब वह गुरूचरणों अर्थात् गुरूकुल में जाकर वेद का अध्ययन आरम्भ करे । विवाह के समय उपनयन वेदारम्भ और समावर्तन संस्कार करना भी वास्तविक संस्कार का स्मरण कराना ही है ।
वेदारम्भ संस्कार के पश्चात् वेदाध्ययन की समाप्ति पर समावर्तन संस्कार होता है, परन्तु मनु आदि शास्त्रकारों ने 16 वें वर्ष में केशान्त संस्कार की भी गणना की है । मनुस्मृति के दूसरे अध्याय में लिखा है –

केशान्त: षोडशे वर्षे ब्राह्मणस्य विधीयते ।

राजन्यबन्धोर्द्वाविंशे वैश्यस्य द्वयधिके ततः ॥

पारस्कर गृह्यसूत्र में चूड़ाकरण के साथ ही केशान्त का उल्लेख हैं। वहॉ लिखा है -

साम्वत्सरिकस्य चूड़ाकरणम् । षोडशवर्षस्य केशान्तः । यथा मंगलं वा सर्वेषाम्।

यह प्रतीत होता है कि चूड़करण और केशान्त का प्रयोजन एक समान है, अतएव केशान्त को अनेक आचार्यों ने पृथक् संस्कार नहीं गणना किया है। 16 वर्ष की आयु बीत जाने पर 17 वें वर्ष में जब, दाढी मूॅछ व बगल के बालों को छेदन करवाना आरम्भ करे तब प्रथम छेदन के समय यह विधि की जाती है। पारस्कर गृह्यसूत्र के अनुसार चूड़ाकर्म और केशान्त की विधियॉ भी एक समान हैं ।

समावर्तन संस्कार की विधि –

वेदं समाप्य स्नायात् । ब्रह्मचर्यं वा अष्टाचत्वारिंशतेम् । द्वादशकेऽप्येके ॥

वेदाध्ययन की समाप्ति पर यह संस्कार किया जाता है। एक वेद के अध्ययन की समाप्ति हो, दो की हो, तीन की हो, अथवा 48 वर्ष पर्यन्त चारों वेदों के अध्ययन की समाप्ति हो।

आजकल गुरूकुलों और वेदाध्ययन की प्रथा लुप्त हो जाने के कारण उपनयन वेदारम्भ और समावर्तन संस्कार प्रायः एक साथ ही कर लिये जाते हैं। आचार्य की अनुमति मिलने पर ही यह संस्कार होता है।

प्रथम शिष्य से अनुज्ञा मांगे : -

शिष्य - भो आचार्य स्नास्यामि।

आचार्य – स्नाहि।

इस प्रकार अनुज्ञा देकर आचार्य समावर्तन की तैयारी करे। नियत शुभदिन सन्ध्योपासनादि नित्य कर्मों से निवृत्त हो, पत्नी और शिष्य के साथ शुभासन पर बैठकर आचमन – प्राणायाम एवं देश काल के कीर्तन के साथ संकल्प करें –

अस्य शर्मणः गृहस्थाश्रमान्तप्राप्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं समावर्तनाख्यं कर्माहं करिष्ये । तदंगत्वेन च गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनमातृकापूजननान्दीश्राद्धं च करिष्ये।

इस प्रकार संकल्प पढ़ स्वस्तिवाचनादि विधिपूर्वक करे। पश्चात् होमविधि से कुशकण्डिका आदि कर आज्याभागाहुति पर्यन्त सब विधि करे।

स्वशाखावेदाहुतिः -

जिस शाखा का अध्यापन किया हो उसके अनुसार प्रत्येक वेद के लिये दो – दो तथा सात अन्य के लिए नौ आहुति दे। पश्चात् महाव्याहति, सर्वप्रायश्चित और स्विष्ट कृत आहुतियॉ दे। पश्चात्

संश्रव, प्राशन – ब्रह्मा को दक्षिणा दान और प्रणीता के जल से मार्जन आदि कर बर्हिहोम करें। ब्रह्मचारी भी होम करें। इसके पश्चात उपनयन संस्कार में उक्त विधि से समिदा धान अंग स्पर्श, आचार्यादि का अभिवादन आदि की विधि करें। और आचार्य 'आयुष्मान भव' कहकर आर्शीवाद दे।

अभिषेक विधि -

समावर्तन संस्कार की यह विशेष एवं मुख्य विधि है। आचार्यादि आशीर्वाद प्राप्त कर ब्रह्मचारी मण्डपाग्नि से उत्तर में प्रागग्र कुशाएं बिछावे और उन पर दक्षिण से उत्तर की ओर क्रमश: 8 जल भरें घड़े रखे। घड़ों से पूर्व में प्रागग्र बिछाये कुशों पर ब्रह्मचारी पूर्वाभिमुख खड़ा हो जाय और आम के पत्रों द्वारा पहले कलश के जल से अभिषेक करे।

ऊँ ये अप्स्वन्तरग्नय: प्रविष्टा गोह्युपगोह्यो मयूखो मनोहास्खलो विरूजस्तनू दूषुरिन्द्रियहा तान् विजहामि यो रोचनस्तमिह गृह्णामि।

इस मन्त्र से जल हाथ में लेकर नीचे लिखे मन्त्र से अपने उपर अभिषेक करे : -

ऊँ तेन मामभिषिञ्चामि श्रियै यशसे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय ।

अब दूसरे कलश में से पूर्वोक्त ये अप्स्वन्त: मन्त्र पढ़कर जल ग्रहण करे और निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर अभिषेक करे : -

ऊँ येन श्रियमकृणुतां येनावमृशता गूॅ सुरान्। येनाक्ष्यावभ्यषिञ्चतां यद्वां तदश्विना यश:।

तीसरी बार भी पूर्वोक्त मन्त्र से जल ग्रहण कर नीचे लिखे मन्त्र से अभिषेक करें : -

ऊँ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्तान उर्जे दधात न। महे रणाय चक्षसे।

चौथी बार फिर उसी मन्त्र से चौथे कलश में से जल ग्रहण कर नीचे लिखे मन्त्र से अभिषेक करे: -

ऊँ यो व: शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह न:। उशतीरिव मातर:।

पॉचवी बार पंचम कलशस्थ जल को फिर उसी मन्त्र से लेकर नीचे लिखे मन्त्र से अभिषेक करे –

ऊँ तस्मा अरंगमाम वो यस्य क्षयाव जिन्वथ। आपो जनयथा च न:।

अन्म में मौन ही शेष कलशों के जल से अभिषेक करें।

मेखला विसर्जन –

नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर मेखला को सिर के मार्ग से निकाल कर अलग रख दें –

ऊँ उदुत्तमं वरूण पाशमस्मदबाधमं विमध्यम गूॅ श्रथाय। अथावयमादित्य व्रते तवा नागसो अदितये स्याम ॥

दण्डार्जनादि विसर्जन एवं सूर्योपस्थापन

अब दण्ड, अजिन आदि को मौन ही भूमि पर अलग रख दे और मौन ही दूसरे वस्त्र धारण करें। अन्त में एक अंगोछा कन्धे पर डाल कर, नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर सूर्य की उपासना करे : -

ॐ उद्यनभ्राजभृष्णुरिन्द्रो मरूद्भिरस्थात्। प्रातर्यावभिरस्थाद् दशसनिरसि दशसनिं मा कुर्वाविदन्मा गमय । उद्यन भ्राजभृष्णुरिन्द्रो मरूद्भिरस्थाद् दिवायावभिरस्थाच्छतसनिरसि शतसनिं मा कुर्वाविदन्मा गमय । उद्यन भ्राजभृष्णुरिन्द्रो मरूद्भिरस्थात् सायंयावभिरस्थात् सहस्रसनिरसि सहस्रसनिं मा कुर्वाविदन् मा गमय।

तत्पश्चात् दधि-तिल-प्राशन-जटा छेदनादि कर्म करते हुए पितृ तर्पण करना चाहिये।

स्नातक नियम –

उक्त कर्मो के पश्चात् आचार्य स्नातक को उन नियमों का उपदेशदे जिनका पालन जीवन में उपयोगी है। नियम इस प्रकार है –

अश्लीलगानवादित्रनृत्यत्याग: । न तत्रगमनम् । क्षेमे सति रात्रौ न ग्रामान्तरे गच्छेत्। न वृथा धावेत्। न कूपेऽवेक्षेत। वृथवृक्षारोहणम् फलत्रोटनं च न कुर्यात्। कुपथा न गच्छेत्। नग्नो न स्नायात्। न सन्धि वेलायां शयीत। न विषमे भूमिं लंघयेत्। अश्लीलमपमानजानकं च वाक्यं नोपवदेत्। उदितास्तमयकाले सूर्यं न पश्येत्। जलमध्ये सूर्यच्छायां न पश्येत् । देवेवर्षति न गच्छेत्। उदके नात्मानं पश्येत्। अजातलोम्नीं प्रमत्तां पुरूषाकृतिं षण्डां च स्त्रियं न गच्छेत्।

इसके पश्चात् आचार्य को यथायोग्य दक्षिणा भेंट करे।

पूर्णाहुति –

अब आचार्य खड़े होकर फल – पुष्पों सहित घृत भरे, स्नातक के दाहिने हाथ से स्पर्श कराये श्रुवा से, निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर पूर्णाहुति दें -

ॐ मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृतआजातमग्निम् । कवि गॅू सम्राजमतिथिं जनानामासन्न: पात्र जनयन्ता: देवा: स्वाहा।

फिर श्रुवा से भस्म निकाल नीचे लिखे मन्त्रों को पढ़ते हुए आचार्य एवं शिष्य दायें हाथ की अनामिका अंगुली से ललाट आदि स्थानों पर भस्म का लेप करें : -

ॐ त्र्यायुषं जमदग्ने:	मस्तक पर
ॐ कस्यपस्य त्र्यायुषम्	कण्ठ पर
ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्	दक्षिण बॉह पर
ॐ तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्	हृदय पर

अन्त में स्नातक, आचार्यादि मान्य जनों का पूजन कर उनसे आशीर्वाद ग्रहण करे और गणपति

आदि देवताओं का विसर्जन कर, यथा शक्ति ब्राह्मण भोजन कराये ।

बोधप्रश्न

1.वेदारम्भ संस्कार का सम्बन्ध किससे है।

2. किस संस्कार को करने से व्यक्ति को आचार्यों द्वारा स्नातक की उपाधि दी जाती थी।

3. मनु के अनुसार केशान्त संस्कार होता है।

4. चारों वेदों के लिए अध्ययन का समय माना गया है।

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि वेदारम्भ संस्कार ज्ञानार्जन से सम्बन्धित है। वेद का अर्थ होता है ज्ञान और वेदारम्भ के माध्यम से बालक अपने ज्ञान को अपने अन्दर समाविष्ट करना शुरू करे यही अभिप्राय है इस संस्कार का। शास्त्रों में ज्ञान से बढ़कर दूसरा कोई प्रकाश नहीं समझा गया है। स्पष्ट है कि प्राचीन काल में यह संस्कार मनुष्य के जीवन में विशेष महत्व रखता था। यज्ञोपवीत के बाद बालकों को वेदों का अध्ययन एवं विशिष्ट ज्ञान से परिचित होने के लिये योग्य आचार्यो के पास गुरुकुलों में भेजा जाता था। वेदारम्भ से पहले आचार्य अपने शिष्यों को ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने एवं संयमित जीवन जीने की प्रतिज्ञा कराते थे तथा उसकी परीक्षा लेने के बाद ही वेदाध्ययन कराते थे। असंयमित जीवन जीने वाले वेदाध्ययन के अधिकारी नहीं माने जाते थे। हमारे चारों वेद ज्ञान के अक्षुण्ण भंडार हैं। गुरुकुल से विदाई लेने से पूर्व शिष्य का समावर्तन संस्कार होता था। इस संस्कार से पूर्व ब्रह्मचारी का केशान्त संस्कार होता था और फिर उसे स्नान कराया जाता था। यह स्नान समावर्तन संस्कार के तहत होता था। इसमें सुगन्धित पदार्थो एवं औषधादि युक्त जल से भरे हुए वेदी के उत्तर भाग में आठ घड़ों के जल से स्नान करने का विधान है। यह स्नान विशेष मन्त्रोच्चारण के साथ होता था। इसके बाद ब्रह्मचारी मेखला व दण्ड को छोड़ देता था जिसे यज्ञोपवीत के समय धारण कराया जाता था। इस संस्कार के बाद उसे विद्या स्नातक की उपाधि आचार्य देते थे। इस उपाधि से वह सगर्व गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का अधिकारी समझा जाता था।

4.5 शब्दावली

वेदारम्भ – वेद का आरम्भ

विशिष्ट – मुख्य

असंयमित –जो संयमित न हो

गृहस्थाश्रम – आश्रमों में एक

अग्नये – अग्नि के लिये

अन्तरिक्षयाय – अन्तरिक्ष के लिए

विप्र – ब्राह्मण

श्रद्धायै – श्रद्धा के लिए

षोडश – सोलह

ब्राह्मणस्य – ब्राह्मण के लिए

विधु – चन्द्रमा

4.6 बोध प्रश्न के उत्तर

1. ज्ञानार्जन से
2. समावर्तन संस्कार
3. 16 वें वर्ष में
4. 48 वर्ष

4.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

सनातन संस्कार विधि – आचार्य गंगा प्रसाद शास्त्री

संस्कारदीपक - श्री नित्यानन्द पर्वतीय

हिन्दू संस्कार - डॉ . राजबली पाण्डेय

कर्मसमुच्चय - रामजी लाल शास्त्री

4.8 दीर्घोत्तरीय प्रश्न

क. वेदारम्भ संस्कार विधि लिखिये ।

ख. समावर्तन संस्कार से आप क्या समझते है। स्पष्ट कीजिये।

ब्लॉक – 3
विवाह प्रकरण

इकाई – 1 विवाह – अर्थ, परिभाषा प्रकार एवं प्रयोजन

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के 201 के तृतीय खण्ड की पहली इकाई 'विवाह – अर्थ, परिभाषा प्रकार एवं प्रयोजन' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने संस्कारों में अक्षराम्भ, उपनयन, वेदारम्भ एवं समावर्तन का अध्ययन कर लिया है। यहॉ अब आप विवाह का अध्ययन करेंगे।

विवाह भारतीय सनातन परम्परा के प्रमुख संस्कारों में एक है। विवाह एक ऐसा अटूट बन्धन हैं जिसमें बन्धकर मानव गृहस्थ जीवन में अपना जीवनयापन करता हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- विवाह को परिभाषित कर सकेंगे।
- विवाह के कितने प्रकार है, बता सकेंगे।
- विवाह के प्रयोजन को समझा सकेंगे।
- विवाह के अर्थों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- विवाह महत्व का प्रतिपादन कर सकेंगे।

1.3 विवाह परिचय

वेदाध्ययन एवं ब्रह्मचर्य व्रत की समाप्ति के पश्चात् समावर्तन संस्कार होने पर जब कुमार घर लौटता है तो प्रजोत्पत्ति की इच्छा से अपने अनुकूल पत्नी का ग्रहण करता है। यह उसका विवाह अथवा उद्वाह कहा जाता है। इस समय जो संस्कार किया जाता है वह विवाह संस्कार कहलाता है। सूत्रकारों ने प्रत्येक संस्कार का एक निश्चित समय बताया है। इसका मुख्य आधार संस्कार की उपयोगिता है। विवाह संस्कार का ठीक समय जानने के लिए, विवाह के प्रयोजन को समझना चाहिए।

विवाह का प्रयोजन एक सर्वसम्मत सी बात है। कन्या का पिता कन्या दान के समय जो संकल्प पढ़ता है, वह इसके प्रयोजन का सर्वाधिक पुष्ट प्रमाण है। इस संकल्प में निम्नलिखित शब्द ध्यान देने योग्य है –

अस्या मम कन्याया अनेन वरेण धर्म्यप्रजया उभयोर्वंशयोर्वंशवृद्ध्यर्थं तथा च मम समस्तपितॄणां निरतिशयसानन्द ब्रह्मलोकावाप्त्यादिश्रुतिस्मृतिपुराणादिकन्यादानकल्पोक्तफलप्राप्तये अनेन

वरेणास्यां कन्यायामुत्पादयिष्यमाणसन्तत्यादशपूर्वान्दशपरान्मां चैकविंशतिं पुनरूद्धर्तु ...... इत्यादि।

संकल्प के इन शब्दों से स्पष्ट है कि विवाह संस्कार का मुख्य उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति द्वारा अपने पितरों का उद्धार करना है इसीलिए सुश्रुतकार कहते हैं -

अथास्मै पंचविंशतिवर्षाय षोडशवर्षां पत्नीमावहेत् । पित्र्यधर्मार्थकामप्रजा: प्राप्स्यतीति ।

ऋग्वेद में बताया गया है –

सोम: प्रथमो विविदे गन्धर्व विविद उत्तर: । तृतीयोऽग्निस्ते पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजा:।

सोमो दद् गन्धवा्रय गन्धर्वोददग्नये । रयिं च पुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम् ।।

अर्थात् कन्या का प्रथम पति सोम अर्थात् चन्द्रमा है फिर गन्धर्व इसको प्राप्त करता है । तीसरा पालक देवता अग्नि है । चौथा पति मानव है । सौम्य का प्रतिनिधि सोम कन्या को सौम्य गुणों एवं कान्ति से युक्त करके गन्धर्व को सौंपता है, जो अपने क्रम में उसके कण्ठ तालु आदि में स्वर भरता है । इसके पश्चात् इसमें उष्णता का समावेश अग्नि के सम्पर्क से होता है – यह अग्निदेवता पति पत्नी को ऐश्वर्य एवं प्रजा के योग्य बनाते है ।

विवाह का शाब्दिक अर्थ है – विशिष्ट वहन, विशिष्ट प्रकारेण वाहयतीति विवाह: । अब प्रश्न उठता है कि किसका वहन ? तो जिसके साथ गृहस्थ जीवन में बॅधने व जीवनयापन के लिए वह सम्बन्ध स्थापित करता है । वह एक कन्या होती है, जो विवाह संस्कार के पश्चात् पत्नी की संज्ञा से संबोधित होती है । भारतीय सनातन परम्परा के अनुसार विवाह एक पवित्र बन्धन है, जिसमें मनुष्य बंधकर सुखीपूर्वक गृहस्थ जीवन का संचालन करता है । इस बन्धन में पुरानी रीति के अनुसार दो अपरिचित लोगों का मिलन होता था, सम्प्रति वह बदल गया है । आजकल विवाह पूर्व में ही सम्बन्ध स्थापित कर किया जा रहा है, जिसे प्रेम का नाम दिया जाता है । जो वस्तुत: प्रेम से भिन्न है। विवाह केवल दो लोगों का मिलन नहीं होता, अपितु दो पवित्र आत्माओं का मिलन होता है । आचार्य रामदैवज्ञ ने मुहूर्त्तचिन्तामणि में विवाह प्रयोजन को बतलाते हुए कहा है कि –

भार्या त्रिवर्ग करणं शुभशीलयुक्ता ।
शीलं शुभं भवति लग्नवशेन तस्या: ।।
तस्माद्विवाहसमये परिचिन्त्यते हि ।
तन्निघ्नतामुपगता सुतशीलधर्मा ।।

अर्थात् भार्या त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, एवं काम) को देने वाली, शुभ आचरण से युक्त तथा शीलवती होनी चाहिए । विवाह के समय यह परीक्षण करने का आदेश दिया गया है । यह विचार कर ही

विवाहादि कार्य करने का विधान आचार्यों के द्वारा प्रतिपादित है।

विवाह के प्रकार -

ब्राह्मं दैवस्तथा चाऽऽर्षः प्राजापत्यतथाऽसुरः ।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ।।

1. **ब्राह्म विवाह** –ब्रह्म विधि द्वारा तय की गई विवाह '**ब्रह्म विवाह**' है। या दूसरे शब्दों **में** वर एवं कन्या दोनों पक्षों की सहमति से समान वर्ग के सुयोग्य वर से कन्या का विवाह निश्चित कर देना 'ब्रह्म विवाह' कहलाता है।
2. **देव विवाह** - किसी सेवा कार्य विशेषत: धार्मिक अनुष्ठा नों के मूल्य के रूप में अपनी कन्या को दान में दे देना '**दैव विवाह**' कहलाता है।
3. **आर्ष विवाह** -कन्या पक्ष वालों को कन्या का मूल्य देकर सामान्यत: गोदान करके कन्या से विवाह कर लेना आर्ष विवाह कहलाता है।
4. **प्राजापत्य विवाह** –कन्या की सहमति के बिना उसका विवाह अभिजात्य वर्ग के वर से कर देना '**प्राजापत्य विवाह**' कहलाता है।
5. **गान्धर्व विवाह** –परिवार वालों की सहमति के बिना वर और कन्या का बिना किसी रीति रिवाज के आपस में विवाह कर लेना '**गान्धर्व विवाह**' कहलाता है। जैसे दुष्यंत ने शकुन्तला से '**गान्धर्व विवाह**' किया था , उनके पुत्र भरत के नाम से ही हमारे देश का नाम '**भारतवर्ष**' बना।
6. **असुर विवाह** – आर्थिक रूप से खरीद कर विवाह कर लेना **'असुर विवाह'** कहलाता है
7. **राक्षस विवाह** –कन्या की सहमति के बिना, उसका अपहरण करके जबरन विवाह कर लेना **राक्षस विवाह** कहलाता है।
8. **पैशाच विवाह –** कन्या की मदहोशी, मानसिक स्थित कमजोर होने का फायदा उठाकर उससे शारीरिक सम्बन्ध बना लेना और उससे विवाह करना **पैशाच विवाह** कहलाता है।

विवाह दो आत्माओं का पवित्र मिलन है। दो प्राणी अपने अलग – अलग अस्तित्वों को समाप्त कर एक सम्मिलित इकाई का निर्माण करते है। स्त्री और पुरूष दोनों में परमात्मा ने कुछ विशेषताएँ और कुछ अपूर्णताएँ दे रखी है। विवाह सम्मिलन से एक दूसरे की अपूर्णताओं को अपनी विशेषताओं से पूर्ण करते है। इससे समय तथा व्यक्तित्व का निर्माण होता है। इसलिए विवाह को सामान्यतया मानव जीवन की एक – एक आवश्यकता माना गया है। एक – दूसरे को अपनी योग्यताओं और भावनाओं का लाभ पहुँचाने हेतु गाड़ी में लगे हुए दो पहियों की तरह प्रगति पथ पर

अग्रसर होते जाना विवाह का उद्देश्य है। वासना वैवाहिक जीवन का एक भाग है शारीरिक सुख एवं संतुलित चित्त के लिए यह किया जाता है। दोनों की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति संतुलित व संयमित रहे इसके लिए यह क्रिया आवश्यक है।

विवाह के स्वरूप –

विवाह का स्वरूप आज विवाह वासना प्रधान बनते चल जा रहे है। रंग रूप एवं वेश – विन्यास के आकर्षण को पति – पत्नी के चुनाव में प्रधानता दी जाने लगी है, यह प्रवृत्ति बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है। यदि लोग इसी तरह सोचते रहे, तो दाम्पत्य जीवन शरीर प्रधान रहने से एक प्रकार के वैध – व्यभिचार का ही रूप धारण कर लेगा। पाश्चात्य जैसी स्थिति भारत में भी आ जायेगा। शारीरिक आकर्षण की न्यूनाधिकता का अवसर सामने आने पर विवाह शीघ्रता से विच्छेद और सन्धि होते रहेंगे। अभी पत्नी का चुनाव शारीरिक आकर्षण का ध्यान में रखकर किये जाने वाला प्रथा चली है। थोड़े ही दिनों में इसकी प्रतिक्रिया पति के चुनाव में भी सामने आयेगी। तब कुरूप पतियों को कोई पत्नी पसन्द नहीं करेगी और उन्हें दाम्पत्य सुख से वंचित ही रहना पड़ेगा। समय रहते ही इस बढ़ती हुई प्रवृत्ति को रोका जाना चाहिए और शारीरिक आकर्षण की उपेक्षा कर सद्गुणों तथा सद्भावनाओं को ही विवाह का आधार पूर्वकाल तरह बने रहने देना चाहिए शरीर का नहीं। आत्मा का सौन्दर्य देखा जाना चाहिए और जीवन साथी में जो कमी है, उसे प्रेम सहिष्णुता, आत्मीयता एवं विश्वास की छाया में जितना सम्भव हो सके, सुधारना चाहिए जो सुधार न हो सके, उसे बिना असन्तोष लाये सहन करना चाहिए। इस रीति – नीति पर दाम्पत्य जीवन की सफलता निर्भर है। अतएव पति – पत्नी को एक दूसरे से आकर्षण लाभ मिलने की बात न सोचकर एक दूसरे के प्रति आत्म समर्पण करने और सम्मिलित शक्ति उत्पन्न करने, उसके जीवन विकास की सम्भावनायें उत्पन्न करने की बात सोचनी चाहिए। चुनाव करते समय तक साथी को पसन्द करने न करने की छूट है। जो कुछ देखना – ढूँढना परखना हो वह कार्य विवाह से पूर्व ही समाप्त कर लेना चाहिए। जब विवाह हो गया तो फिर यह कहने की गुंजाइश नहीं रहती कि भूल हो गई, इसलिए साथी की उपेक्षा की जाए। जिस प्रकार के भी गुण – दोष युक्त साथी के साथ विवाह बन्धन में बंधे उसे अपनी और से कर्तव्य पालन समझकर पूरा करना ही एक मात्र मार्ग रह जाता है। इसी के लिए विवाह संस्कार का आयोजन किया जाता है। समाज के सम्भ्रान्त व्यक्तियों की गुरूजनों की, कुटुम्बी सम्बन्धियों की, देवताओं की उपस्थित इसलिए इस धर्मानुष्ठान के अवसर पर आवश्यक मानी जाती है कि दोनों में से कोई इस कर्तव्य बन्धन की उपेक्षा करे तो उसे रोके और प्रताडित करे। पति – पत्नी इन सम्भ्रान्त व्यक्तियों के सम्मुख अपनी निश्चय की प्रतिज्ञा, बन्धन की घोषणा करते है। यह प्रतिज्ञा समारोह की विवाह

संस्कार है। इस अवसर पर दोनों की ही यह भावनायें गहराई तक अपने मन में स्थिर करनी चाहिए कि वे पृथक व्यक्तियों की सत्ता समाप्त कर एकीकरण की आत्मीयता में विकसीत होते है। कोई किसी पर न तो हुकूमत जमायेगा, न अपने अधीन वशवर्ति रखकर अपने लाभ या अहंकार की पूर्ति करनी चाहेंगे। वरन् वह करेगा जिससे साथी को सुविधा मिलती हो। दोनों अपनी इच्छा आवश्यक को गौण और साथी की आवश्यकता को मुख्या मानकर सेवा और सहायता का भाव रखेंगे, उदारता एवं सहिष्णुता बर्तेंगे, तभी गृहस्थी का रथ ठीक तरह आगे बढ़ेगा। इस तथ्य को दोनो भली प्रकार हृदयंगम कर ले और इसी रीति – नीति को आजीवन अपनाये रखने का व्रत धारण करे, इसी प्रयोजन के लिये यह पुण्य संस्कार आयोजित किया जाता है। इस बात को दोनो भली प्रकार समझ ले और सच्चे मन से स्वीकार कर ले, तो ही विवाह बन्धन में बचे। विवाह संस्कार आरम्भ करने से पूर्व या वेदी पर बैठाकर दोनों को यह तथ्य भली प्रकार समझा दिया जाये और उनकी सहमती मॉगी जाये। यदि दोनों इन आदर्शों को अपनाये रहने की हार्दिक सहमती, स्वीकृति दें, तो ही विवाह संस्कार आगे बढ़ाया जाये।

विवाह प्रयोजन –

प्राचीनकाल में आचार्यों द्वारा विवाह प्रयोजन में उसका मुख्य प्रयोजन सन्तानोत्पत्ति कहा गया है। साथ ही गृहस्थ जीवन के सुख – दु:ख में एक सहभागिनी के रूप में पत्नी का महत्वपूर्ण योगदान कहा गया है। जीवन रूपी गाड़ी दो पहिये पर चलती है उसमें एक पुरूष है तो दूसरी स्त्री। दोनों का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती है। अत: उक्त कार्य के लिए विवाह आवश्यक है।

प्राचीन इतिहास के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि विवाह ऋतुमती होने पर ही करना चाहिए। नल दमयन्ती, दुष्यंत शकुन्तला और सत्यवान –सावित्री के विवाह तो स्पष्ट ही ऋतुमती कन्याओं के विवाह थे। राम – सीता के विवाह के समय सीता की आयु 6-7 वर्ष की कही जाती है, परन्तु मर्यादा पुरूषोत्तम रामचन्द्र के लिए यह सर्वथा उपयुक्त था कि वे ब्रह्मचर्यव्रत की समाप्ति पर ही विवाह करे। अतएव उनके विषय में ऐसा विचार लाना ही अनुपयुक्त है। उस समय राजकुमारियों के वर्णन में वाल्मीकी रामायण का निम्नलिखित शलोक देने योग्य है –

अभिवाद्याभिवाद्यांश्च सर्वा राजसुताश्च ता:।
रेमिरे मुदिता: सर्वा भ्रातृभिर्मुदितै रह: ।

बोध प्रश्न -

1. ऋग्वेद के अनुसार कन्या का प्रथम पति माना जाता है।
2. विवाह के कितने प्रकार है।
3. प्राचीन आचार्यों के अनुसार विवाह का मुख्य प्रयोजन है।
4. वेदाध्ययन एवं समावर्तन के पश्चात् कौन सा संस्कार किया जाता है।
5. विवाह दो आत्माओं का .... मिलन है।

1.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि वेदारम्भ संस्कार ज्ञानार्जन से सम्बन्धित है। वेद का अर्थ होता है ज्ञान और वेदारम्भ के माध्यम से बालक अपने ज्ञान को अपने अन्दर समाविष्ट करना शुरू करे यही अभिप्राय है इस संस्कार का। शास्त्रों में ज्ञान से बढ़कर दूसरा कोई प्रकाश नहीं समझा गया है। स्पष्ट है कि प्राचीन काल में यह संस्कार मनुष्य के जीवन में विशेष महत्व रखता था। यज्ञोपवीत के बाद बालकों को वेदों का अध्ययन एवं विशिष्ट ज्ञान से परिचित होने के लिये योग्य आचार्यो के पास गुरुकुलों में भेजा जाता था। वेदारम्भ से पहले आचार्य अपने शिष्यों को ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने एवं संयमित जीवन जीने की प्रतिज्ञा कराते थे तथा उसकी परीक्षा लेने के बाद ही वेदाध्ययन कराते थे। असंयमित जीवन जीने वाले वेदाध्ययन के अधिकारी नहीं माने जाते थे। हमारे चारों वेद ज्ञान के अक्षुण्ण भंडार हैं। गुरुकुल से विदाई लेने से पूर्व शिष्य का समावर्तन संस्कार होता था। इस संस्कार से पूर्व ब्रह्मचारी का केशान्त संस्कार होता था और फिर उसे स्नान कराया जाता था। यह स्नान समावर्तन संस्कार के तहत होता था। इसमें सुगन्धित पदार्थो एवं औषधादि युक्त जल से भरे हुए वेदी के उत्तर भाग में आठ घड़ों के जल से स्नान करने का विधान है। यह स्नान विशेष मन्त्रोच्चारण के साथ होता था। इसके बाद ब्रह्मचारी मेखला व दण्ड को छोड़ देता था जिसे यज्ञोपवीत के समय धारण कराया जाता था। इस संस्कार के बाद उसे विद्या स्नातक की उपाधि आचार्य देते थे। इस उपाधि से वह सगर्व गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का अधिकारी समझा जाता था।

1.5 शब्दावली

षोडश – सोलह (16)

पंचविंशति – 25

सोम – चन्द्रमा

पालक – पालने वाला

त्रिवर्ग – धर्म, अर्थ एवं काम

भार्या – पत्नी

सन्तानोत्पत्ति – सन्तान की उत्पत्ति

परीक्षण – जॉच

धर्मार्थ – धर्म के लिए

एकविंशति – 21

पितृणां – पितरों का

1.6 बोध प्रश्न के उत्तर

1. सोम (चन्द्रमा)

2. आठ

3. सन्तानोत्पत्ति

4. विवाह

5. पवित्र

1.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

सनातन संस्कार विधि – आचार्य गंगा प्रसाद शास्त्री

संस्कारदीपक - श्री नित्यानन्द पर्वतीय

हिन्दू संस्कार - डॉ . राजबली पाण्डेय

कर्मसमुच्चय - रामजी लाल शास्त्री

1.8 दीर्घोत्तरीय प्रश्न

क. विवाह से आप क्या समझते है ? स्पष्ट कीजिये ।

ख. विवाह परिचय देते हुए उसके स्वरूप एवं महत्व का प्रतिपादन कीजिये ।

इकाई - 2 विवाह मुहूर्त्त में शुभाशुभ विवेक

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 विवाह मुहूर्त्त में शुभाशुभ विवेक

बोध प्रश्न

2.4 सारांश

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 सहायक पाठ्यसामग्री

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के 201 के तृतीय खण्ड की दूसरी इकाई 'विवाह मुहूर्त्त में शुभाशुभ विवेक' से सम्बन्धित है। इसके पूर्व की इकाई में आपने विवाह के अर्थ, परिभाषा, प्रकार एवं प्रयोजन को समझ लिया है। यहॉ आप इस इकाई में विवाह मुहूर्त्त के शुभाशुभ कृत्यों का अध्ययन करने जा रहे है।

विवाह में शुभ क्या है, अशुभ क्या है ? इसका विवेचन इस इकाई में किया गया है। विवाह भारतीय सनातन परम्परा का ही नहीं अपितु मानव जीवन का भी एक अद्वितीय संस्कार हैं। अत: विवाह मुहूर्त्त में शुभाशुभ विवेचन परमावश्यक है।

प्रस्तुत इकाई में आपके पठनार्थ एवं ज्ञानार्थ विवाह में शुभाशुभ कर्मों का उल्लेख किया जा रहा हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- विवाह मुहूर्त्त को बता सकेंगे।
- विवाह में शुभ क्या है। समझा सकेंगे।
- विवाह मुहूर्त्त में अशुभ क्या है, समझ लेंगे।
- विवाह मुहूर्त्त में शुभाशुभ कर्म का विश्लेषण कर सकेंगे।

2.3 विवाह मुहूर्त्त में शुभाशुभ

विवाह मुहूर्त्त में शुभाशुभ विवेचन के पूर्व आइए सर्वप्रथम विवाह मुहूर्त्त को जानते है -

विवाह मुहूर्त्त -

मूल, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, स्वाति, मघा, रोहिणी, इन नक्षत्रों में ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख, मार्गशीर्ष, आषाढ़, इन महीनों में विवाह करना शुभ है। विवाह में कन्या के लिए गुरूबल वर के लिए सूर्यबल और दोनों के लिए चन्द्रबल का विचार करना चाहिए। प्रत्येक पंचांग में विवाह मुहूर्त्त लिखे जाते है। इनमें शुभ सूचक खड़ी रेखाऍ और अशुभ सूचक टेढ़ी रेखाऍ होती है। ज्योतिष में दस दोष बताये गये है। जिस विवाह के मुहूर्त्त में जितने दोष नहीं होते है, उतनी खड़ी रेखाऍ होती है और दोषसूचक टेढ़ी रेखाऍ मानी जाती है। सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त्त दस रेखाओं का होता है। मध्यम सात आठ रेखाओं का और जघन्य पॉच रेखाओं का होता है। इससे कम रेखाओं के मुहूर्त्त को निन्द्य कहते है।

विवाह में गुरूबल विचार -

वृहस्पति कन्या की राशि से नवम पंचम, एकादश, द्वितीय और सप्तम राशि में शुभ, दशम, तृतीय षष्ठ और प्रथम राशि में दान देने से शुभ और चतुर्थ, अष्टम, एवं द्वादश राशि में अशुभ होता है।

विवाह में चन्द्रबल विचार –

चन्द्रमा वर और कन्या की राशि में तीसरा छठा, सातवॉ , दसवॉ, ग्यारहवॉ शुभ पहला, दूसरा, पॉचवॉ, नौवॉ दान देने से शुभ और चौथा, आठवॉ, बारहवॉ अशुभ होता है। विवाह में अन्धादि लग्न व उनका फल दिन में तुला और वृश्चिक राशि में तुला और मकर बधिर है तथा दिन में सिंह, मेष, वृष और रात्रि में कन्या , मिथुन, कर्क अन्ध संज्ञक है।

दिन में कुम्भ और रात्रि में मीन लग्न पंगु होते है। किसी किसी आचार्य के मत से धनु, तुला एवं वृश्चिक ये अपराह्न में बधिर है। मिथुन, कर्क, कन्या ये लग्न रात्रि में अन्धे होते हैं। सिंह, मेष, एवं वृष लग्न ये दिन में अन्धे है और मकर , कुम्भ, मीन ये लग्न प्रात: में हो तो लग्नकाल दरिद्र दिवान्ध विधवाकन्या, रात्रान्ध लग्न में हो तो सन्तति भरण, पंगु में हो तो धन नाश होता है।

विवाह लग्न विचार -

विवाह के शुभ लग्न तुला, मिथुन,कन्या, वृष व धनु है। अन्य लग्न मध्यम होते है।

लग्न शुद्धि – लग्न से १२ वें शनि, दसवें मंगल तीसरे शुक्र लग्न में चन्द्रमा और क्रूरग्रह अच्छे नहीं होते लग्नेश शुक्र मा छठें और आठवें में शुभ नहीं होता है और सातवें में कोई भी ग्रह शुभ चन्द्र - नहीं होता है।

ग्रहों का बल –

प्रथम, चौथे, पॉचवें, नौवें, दसवें स्थान में स्थित वृहस्पति सभी दोषों को नष्ट करता है। सूर्य ग्यारहवें स्थान में स्थित तथा चन्द्रमा सर्वोत्तम लग्न में स्थित नवमांश दोषों को नष्ट करता है। बुध लग्न, चौथे, पॉचवें, नौवें और दसवें स्थान में हो तो सौ दोषों को दूर करता है। यदि शुक्र इन्हीं स्थानों में वृहस्पति स्थित हो तो एक लाख दोषों को दूर करता है। लग्न का स्वामी अथवा नवमांश का स्वामी यदि लग्न, चौथे, दसवें, ग्यारहवें स्थान में स्थित हो तो अनेक दोषों को शीघ्र ही भस्म कर देता है।

विवाह मुहूर्त्त –

विवाह के समय के सम्बन्ध में सर्वसम्मत मत यही है कि गोधूलिवेला सर्वोत्कृष्ट मुहूर्त्त है। आश्वलायन गृह्यसूत्र में लिखा है –

उदगमन आपूर्यमाणपक्षे पुण्ये नक्षत्रे चौलकर्मोपनयन गोदानविवाहा:।

पुण्ये नक्षत्रे दारान् कुर्वीत लक्षण प्रशस्तान् कुशलेन सर्वकालमेके।

इस प्रकार किसी भी दिन शुक्ल पक्ष, पुण्य नक्षत्र में विवाह करना चाहिए । किसी किसी के मत से सभी काल में विवाह हो सकता है। किन्तु ऐसा नहीं है।

गोधूलि वेला का लक्षण इस प्रकार है –

पिण्डीभूते दिनकृति हेमन्र्तो स्यादर्धास्ते तपनसमये गोधूलि: । सम्पूर्णास्ते जलधरमालाकाले त्रेधा योज्या सकल शुभे कार्यादौ।

हेमन्त ऋतु अर्थात् मार्गशीर्ष - पौष महीनों में जब सूर्य पिंडाकार हो, तब गोधूलि का समय हो जाता है। इसी प्रकार माघ – फाल्गुन में भी। ग्रीष्मऋतु में जब सूर्य आधा अस्त हुआ हो तो वह समय गोधूलिवेला है। वर्षाऋतु में आश्विन कार्तिक तक सम्पूर्ण सूर्य अस्त हो जाने पर गोधूलि वेला होती है।

वर वरण तिलक मुहूर्त्त -

कन्याभ्राताऽथवा विप्रो वस्त्रालंकारणादिना।

ध्रुवपूर्वानिलै: कुर्याद्वरवृत्तिं शुभे दिने।।

भावार्थ - कन्या के सहोदर भाई अथवा कोई ब्राह्मण वस्त्र अलंकरण आदि से शुभ दिन में ध्रुव संज्ञक तीनों पूर्वा और कृत्तिका नक्षत्र में वर को तिलक करना चाहिये।

अथ कन्यावरण –

विवाहोक्तैश्च नक्षत्रै: शुभे लग्ने शुभे दिने।

वस्त्रालंकरणाद्यैश्च कन्यकावरणं शुभम्।।

भावार्थ - विवाहोक्त नक्षत्र, शुभ दिन, शुभ लग्न में वस्त्र अलंकार, फल, पुष्प आदि से कन्या वरण करना शुभ होता है।

सिंहस्थ गुरू में विवाह निषेध –

पुण्य नक्षत्रादि की दृष्टि से विवाह का मुहूर्त बताना ज्योतिषशास्त्र का विषय है। परन्तु सिंहस्थ गुरू के विषय में कुछ वक्तव्य अवश्य है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जब – जब सिंह राशि पर वृहस्पति आता है तब 13 मास के लिए ज्योति:शास्त्र वेत्ता पंडित, सभी शुभ कर्मो का, विशेषत: विवाह का निषेध कर देते हैं। परन्तु शास्त्र में इसकी जो व्यवस्था, देश भेद से, पृथक् कर रखी है उसकी ओर वे ध्यान नहीं देते।

मुहूर्त्त सर्वस्व और मुहूर्त्तकल्पद्रुम आदि के अनुसार गंगा गोदावरी के मध्यस्थित देशों में मघादिपंचपादगत सिंह का विवाह के लिए निषेध है। वसिष्ठ जी ने कहा है : -

सिंहे सिहांशके जीवे कलिंगे गौडगुर्जरे।

कालमृत्युरयं योगो दम्पत्योर्निधनप्रद: ॥

अर्थात् कलिंग गौड और गुर्जर देश में वृहस्पति सिंहांशक हो तो वह विवाह के लिए निषिद्ध है। मुहूर्त्तचिन्तामणि में लिखा है : -

मघादिपंचपादेषु गुरू: सर्वत्र वर्जित:।

गंगागोदान्तरं हित्वा शेषांघ्रिषु न दोषकृत्॥

मेषेऽर्के सद्व्रतोद्वाहे गंगागोदान्तरेऽपि च।

सर्व: सिंहगुरूर्वर्ज्य: कलिंगे गौडगुर्जरे॥

अर्थात् मघादि पंचपादगत गुरू, गंगा – गोदावरी के मध्य गत समस्त देशों में वर्जित है अन्य पादों का गंगा गोदावरी के अन्तर में दोष नहीं है।

अशुभ योग –

ज्योतिष शास्त्रानुसार सप्तम भाव से या स्थान से विवाह का विचार किया जाता है। विवाह के **'प्रतिबन्धक योग'** निम्नलिखित है –

1. सप्तमेश शुभ युक्त न होकर 6।8।12 भाव में हो अथवा नीच का या अस्तगत हो तो विवाह नहीं होता है। अथवा विधुर होता है।
2. सप्तमेश द्वादश भाव में हो तो तथा लग्नेश और जन्मराशि का स्वामी सप्तम में हो तो विवाह नहीं होता है।
3. षष्ठेश, अष्टमेश तथा द्वादशेश सप्तम में हो तथा ये ग्रह शुभ ग्रह से दृष्ट अथवा युत न हो तो अथवा सप्तमेश 6।8।12 वें भाव के स्वामी हो तो जातक को स्त्री सुख नहीं मिलता है।
4. यदि शुक्र अथवा चन्द्रमा साथ होकर किसी भाव में बैठें हो और शनि एवं भौम उनसे सप्तम भाव में हो तो विवाह नहीं होता है।
5. लग्न, सप्तम और द्वादश भाव में पापग्रह बैठें हो और पंचमस्थ चन्द्रमा निर्बल हो तो विवाह नहीं होता है।
6. 7 वें 12 वें स्थान में दो – दो पापग्रह हों तथा पंचम में चन्द्रमा हो तो जातक विवाह नहीं होता है।
7. सप्तम में शनि और चन्द्रमा के सप्तम भाव में रहने से जातक का विवाह नहीं होता है। अगर यदि विवाह होता भी है तो स्त्री वन्ध्या होती है।
8. सपतम भाव में पापग्रह के रहने से मनुष्य को स्त्री सुख में बाधा होता है।

9. शुक्र और बुध सप्तम भाव में एक साथ हों तथा सप्तम भाव पर पापग्रहों की दृष्टि हो तो विवाह नही होता किन्तु शुभग्रहों की दृष्टि रहने से बड़ी आयु में विवाह होता है।
10. यदि जन्म लग्न से सप्तम भाव में केतु हो और शुक्र की दृष्टि उन पर हो तो स्त्री सुख कम होता है।
11. शुक्र – मंगल 5।7।9 वें भाव में हो तो विवाह नहीं होता है।
12. लग्न में केतु हो तो भार्यामरण तथा सप्तम में पापग्रह हो और सप्तम पर पापग्रहों की दृष्टि भी हो तो जातक को स्त्री सुख कम होता है।

विवाह योग : -

1. सप्तम भाव शुभ युत या दृष्ट होने पर तथा सप्तमेश के बलवान होने पर विवाह होता है।
2. शुक्र स्वगृही या कन्या राशि में हो तो विवाह होता है।
3. सप्तमेश लग्न में हो या सप्तमेश शुभ ग्रह से युत होकर एकादश भाव में हो तो विवाह होता है।

अभी तक तो आपलोग ज्योतिष के अनुसार एवं कुण्डली के भावों के अनुसार विवाह न होने वाले एवं विवाह होने वाले नियमों की जानकारी प्राप्त की तथा साथ ही विवाह की उपयोगिता के बारे में जानकारी प्राप्त किये आइए अब विवाह पूर्ण रूप से होने वाले नियमों तथा योगों की जानकारी प्राप्त करते है –

1. जितने अधिक बलवान ग्रह सप्तमेश से दृष्ट होकर सप्तम भाव मं गये हो उतनी ही जल्दी विवाह होता है।
2. द्वितीयेश और सप्तमेश 1।4।5।7।9।10 वें स्थान में हो तो विवाह होता है।
3. मंगल तथा सूर्य के नवमांश में बुध - गुरू गये हों या सप्तम भाव में गुरू का नवमांश हो तो विवाह होता है।
4. लग्नेश लग्न में हो, लग्नेश सप्तम भाव में हो, सप्तमेश या लग्नेश द्वितीय भाव में हो तो विवाह योग होता है।
5. सप्तम और द्वितीय स्थान पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तथा द्वितीयेश और सप्तमेश शुभ राशि में हो तो विवाह होता है।
6. लग्नेश दशम में हो और उसके साथ बलवान बुध हो एवं सप्तमेश और चन्द्रमा तृतीय भाव में हो तो जातक का विवाह होता है।
7. वृहस्पति अपने मित्र के नवमांश में हो तो विवाह होता है।
8. सप्तम में चन्द्रमा या शुक्र अथवा दोनों के रहने से विवाह होता है।

9. यदि लग्न से सप्तम भाव में शुभ ग्रह हो या सप्तमेश शुभ ग्रह से युत होकर द्वितीय, सप्तम या अष्टम में हो तो जातक का विवाह होता है।
10. विवाह प्रतिबन्धक योगों के न रहने पर विवाह होता है।

रवि शुद्धि –

जन्मराशेस्त्रिषष्ठायदशमेषु रविः शुभः।
पश्चात् त्रयोदशांशेभ्यो द्विपञ्चनवमेष्वपि।।

भावार्थ – जन्म राशि से ३,६,१०,११ वें रवि शुभ है। यदि रवि १३, अंश से अधिक हो जाय तो २,५,९ वीं राशि में भी शुभ होते है।

चन्द्र शुद्धि –

जन्मराशेस्त्रिषष्ठाद्य सप्तमायरवसंस्थितः।
शुद्धश्चन्द्रो द्विकोणस्थः शुक्ले चाऽन्यत्र निन्दितः।।

भावार्थ – जन्म राशि से ३,६,१,७, ११,१० वें स्थान में चन्द्रमा शुभ होते है, २,५,९ वें में शुक्ल पक्ष में शुभ है। ४,८,१२ वें में अशुभ होते है।

गुरू शुद्धि विचार –

वटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः।
श्रेष्ठो गुरूः खषट्त्र्याद्ये पूजयान्यत्र निन्दितः।।

भावार्थ – बालक और कन्या की जन्म राशि से 2,5,9,7,11 वें स्थान में गुरू शुभ होते है तथा 10,6,3,1 इनमें शान्ति जपदान से शुद्ध होते है। 4,8,12 में अशुभ है।

विशेष –

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरूः।
अशुभोऽपि शुभो ज्ञेयो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसन्।।

भावार्थ - अपने उच्च में अपनी राशि में मित्र की राशि में अपने नवमांश में गुरू रहे तो अशुभ भी शुभ होता है और नीच तथा शत्रु की राशि में रहे तो शुभ भी अशुभ होता है। यहॉं गुरू उपलक्षण है सभी ग्रह (रवि चन्द्रादि) अपने उच्चादि स्थान में रहने पर अनिष्ट स्थान में भी शुभ होते है।

विवाह में मण्डप निर्माण एवं लक्षण -

मंगलेषु च सर्वेषु मण्डपो गृहमानतः।
कार्य षोडशहस्तो वा द्विषड्ढस्तो दशावधि।।
स्तम्भैश्चतुर्भिरेवात्र वेदी मध्ये प्रतिष्ठिता।

शोभिता चित्रिता कुम्भैरासमन्ताच्चतुर्शिम् ।।

द्वारविद्धा बलीविद्धा कूपवृक्षव्यधा तथा।

न कार्या वेदिका तज्ज्ञैः शुभमंगलकर्मणि ।।

समस्त मंगलकार्यों में कर्ता के हाथ से सोलह, बारह या दस हाथ चारों तरफ बराबर माप का मण्डप बनना चाहिए। जिसके बीच में एक सुन्दर वेदी, चार स्तम्भ और चारों दिशा अनेक रंग से चित्रित शोभायमान कलश से युक्त रहे। द्वार, कूप, वृक्ष, खात, दीवार इत्यादि के वेध से रहित विद्वानों के निर्देशानुसार बनाना श्रेष्ठ होता है।

ऐशान्यां स्थापयेत्कुम्भं सिंहादित्रिभगे रवौ।

वृश्चिकादित्रिभे वायौ नैऋत्यां कुम्भतात्रिभे।

वृषात्त्रये तथाऽऽग्नेय्यां स्तम्भखातं तदैव हि।

सिंहादि तीन राशियों में सूर्य के रहने से ईशान कोण में स्तम्भ तथा कुम्भ का पहले स्थापना करना शुभ है। वृश्चिक आदि तीन राशियों में रहने से वायु कोण में, कुम्भ आदि तीन राशि में नैऋत्य कोण में और वृष आदि तीन राशियों में सूर्य के होने से अग्निकोण में स्तम्भ और घट का स्थापना करना शुभ है।

विवाह नक्षत्र –

रोहिण्युत्तररेवत्यो मूलं स्वाती मृगो मघा।

अनुराधा च हस्तश्च विवाहे मंगलप्रदाः ।।

रोहिणी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, रेवती, मूल, स्वाती, मृगशिरा, मघा, अनुराधा और हस्त ये नक्षत्र विवाह में मंगलदायक है।

विवाह मास –

मिथुनकुम्भमृगालिवृषाजगे मिथुनगेऽपि रवौ त्रिलवे शुचेः।

अलिमृगाजगते करपीडनं भवति कार्तिकपौषमधुष्वपि ।।

मिथुन, कुम्भ, मकर, वृश्चिक, वृष और मेष का सूर्य हो तो विवाह करना शुभ है । मिथुन के सूर्य में आषाढ़ शुक्ल प्रतिपदा से दशमी पर्यन्त श्रेष्ठ हैं , वृश्चिक के सूर्य हों तो कार्तिक में, मकर के सूर्य हों तो पौष में और मेष के सूर्य हों तो चैत्र में भी विवाह हो सकता है।

वैवाहिक मास फल –

माघे धनवती कन्या फाल्गुने सुभगा भवेत्।

वैशाखे च तथा ज्येष्ठे पत्युरत्सन्तवल्लभा ।।

आषाढ़े कुलवृद्धि:स्यादन्ये मासाश्च वर्जिता:।

मार्गशीर्षमपीच्छन्ति विवाहे केऽपि कोविदा:॥

माघ में विवाह करने से कन्या धनवती होती है। फाल्गुन में सौभाग्यवती और वैशाख तथा ज्येष्ठ में पति की अत्यन्त प्रिया होती है, एवं आषाढ़ में विवाह करने से कुल की वृद्धि होती है, अन्य मास विवाह में वर्जित हैं परन्तु कोई – कोई विद्वानों ने विवाह में मार्गशीर्ष मास का भी ग्रहण किया है।

विवाह में दस दोष –

लता पातो युतिर्वेधो यामित्रं बाणपञ्चकम्।

एकार्गलोपग्रहौ च क्रान्तिसाम्यं शशीनयो:।

दग्धा तिथिश्च विज्ञेया दश दोषा: करग्रहे।

पञ्चाधिकेषु दोषेषु विवाहं परिवर्जयेत्॥

लता, पात, युति, वेध, यामित्र, बाणपञ्चक, एकार्गल, उपग्रह, क्रान्तिसाम्य एवं दग्ध तिथि ये विवाह में मुख्य दस दोष कहे गये हैं।

बोध प्रश्न –

1. ग्रीष्मऋतु में जब सूर्य आधा अस्त हुआ हो तो वह समय .... है।
2. वृहस्पति कन्या की राशि से .... स्थानों में शुभ होता हैं।
3. विवाह के लिए शुभ लग्न .... होता है।
4. सर्वसम्मति से विवाह के लिए .... काल सर्वोत्कृष्ट है।
5. विवाह में मुख्य .... दोष कहे गये हैं।

2.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि मूल, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, स्वाति, मघा, रोहिणी, इन नक्षत्रों में ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख, मार्गशीर्ष, आषाढ़, इन महीनों में विवाह करना शुभ है। विवाह में कन्या के लिए गुरूबल वर के लिए सूर्यबल और दोनों के लिए चन्द्रबल का विचार करना चाहिए। समस्त मंगलकार्यों में कर्ता के हाथ से सोलह, बारह या दस हाथ चारों तरफ बराबर माप का मण्डप बनना चाहिए। जिसके बीच में एक सुन्दर वेदी, चार स्तम्भ और चारों दिशा अनेक रंग से चित्रित शोभायमान कलश से युक्त रहे। द्वार, कूप, वृक्ष, खात, दीवार इत्यादि के वेध से रहित विद्वानों के निर्देशानुसार बनाना श्रेष्ठ होता है। रोहिणी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, रेवती, मूल,

स्वाती, मृगशिरा, मघा, अनुराधा और हस्त ये नक्षत्र विवाह में मंगलदायक है। मिथुन, कुम्भ, मकर, वृश्चिक, वृष और मेष का सूर्य हो तो विवाह करना शुभ है । मिथुन के सूर्य में आषाढ़ शुक्ल प्रतिपदा से दशमी पर्यन्त श्रेष्ठ हैं , वृश्चिक के सूर्य हों तो कार्तिक में, मकर के सूर्य हों तो पौष में और मेष के सूर्य हों तो चैत्र में भी विवाह हो सकता है। अशुभ योगों में लता, पात, युति, वेध, यामित्र, बाणपञ्चक, एकार्गल, उपग्रह, क्रान्तिसाम्य एवं दग्ध तिथि ये विवाह में मुख्य दस दोष कहे गये हैं। इस प्रकार आपने विवाह में शुभाशुभ योगों को जान लिया है।

2.5 शब्दावली

निन्द्य – निन्दित

क्रूरग्रह – पापग्रह

नवमांश – राशि के नवें भाग

सर्वोत्कृष्ट – सबसे अच्छा

गोदान – गौ का दान

एकार्गल – विवाह के दस दोषों में एक

उपग्रह – विवाह के दस दोषों में एक

धनवती – धन को देने वाली

अलि – वृश्चिक

त्रिलव – तृतीयांश

विधु – चन्द्रमा

2.6 बोध प्रश्न के उत्तर

1. गोधूलि
2. 9, 5, 11, 2, 7
3. 7,3,6,2,9
4. गोधूलि
5. 10

2.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

सनातन संस्कार विधि – आचार्य गंगा प्रसाद शास्त्री

संस्कारदीपक - श्री नित्यानन्द पर्वतीय

हिन्दू संस्कार - डॉ . राजबली पाण्डेय

कर्मसमुच्चय - रामजी लाल शास्त्री

2.8 दीर्घोत्तरीय प्रश्न

क. विवाह मुहूर्त्त का लेखन करते हुए उसके शुभ योगों को लिखिये ।

ख. विवाह के प्रमुख दोषों का निरूपण कीजिये।

इकाई - 3 वधूप्रवेश एवं द्विरागमन विचार

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के 201 के तृतीय खण्ड की तीसरी इकाई 'वधूप्रवेश एवं द्विरागमन' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने विवाह विधि का अध्ययन कर लिया है। अब यहॉ आप वधूप्रवेश एवं द्विरागमन का अध्ययन करने जा रहे है।

विवाह के पश्चात् वधू का पति के गृह में प्रवेश वधूप्रवेश एवं पति के गृह से पिता के गृह जाकर पुन: पति गृह में आना द्विरागमन होता है।

प्रस्तुत इकाई में आपके ज्ञानार्थ एवं पठनार्थ वधूप्रवेश एवं द्विरागमन का वर्णन किया जा रहा है, जिसका अध्ययन कर आप तत्सम्बन्धित विषयों को समझ सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- ❖ वधूप्रवेश किसे कहते है, जान जायेंगे ।
- ❖ वधूप्रवेश कब किया जाता है, समझ लेंगे।
- ❖ द्विरागमन को परिभाषित कर सकेंगे।
- ❖ द्विरागमन को भली – भॉति समझा सकेंगे।
- ❖ वधूप्रवेश एवं द्विरागमन के महत्व को बता सकेंगे।

3.3 वधूप्रवेश एवं द्विरागमन

विवाह के पश्चात् वधू का प्रथम बार पतिगृह में प्रवेश (डोली उतरना) वधूप्रवेश कहलाता है। सामान्यत: विवाह से अगले दिन ही वधूप्रवेश लोक में होता हुआ देखा जाता है। लेकिन जब तुरन्त प्रवेश की प्रथा न हो तो विवाह के दिन से १६ दिनों के भीतर सम दिनों में या ५,७,९ दिनों में वधू प्रवेश, शुभ वेला में शकुनादि विचार कर मांगलिक गीत वाद्यादि ध्वनि के साथ करवाना चाहिये। १६ दिनों के भीतर गुरू – शुक्रास्तादि विचार भी नहीं होता है।

१६ दिन व्यतीत हो जाने पर एक मास के अन्दर विषम दिनों में तथा १ वर्ष के भीतर विषम महीनों में पूर्ववत् तिथि वारादि शुद्धि देखकर वधूप्रवेश कहना चाहिये। पॉच वर्ष के पश्चात् यदि वधू प्रवेश हो तो स्वेच्छा से साधारण दिन शुद्धि देखकर वधूप्रवेश कराया जाना चाहिये।

सम्प्रति लोक में ये बातें कथित तौर पर ही रह गई है। इधर विवाह संस्कार हुआ और उधर डोली तथा सीधे वर के गृह में प्रवेश हो जाता है, फिर भी दूसरा दिन सम दिन होने से ग्राह्य हैं तथा दोपहर

से पूर्व वधूप्रवेश हो जाए तो शास्त्र का विरोध भी नहीं है , लेकिन उसी दिन विवाह होकर, उसी दिन प्रवेश को वर्जित करना चाहिये ।

वधूप्रवेश मुहूर्त्त विचार -

समाद्रिपञ्चाङ्कदिने विवाहाद्वधूप्रवेशोऽष्टिदिनान्तराले ।
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमासदिनेऽक्षवर्षात्परतो यथेष्टम् ॥

विवाह के दिन से १६ दिन के भीतर सम (२,४,६,८,१०,१२,१४,१६) दिनों में और विषम में ५,७,९ वें दिनों में वधूप्रवेश शुभ होता है । यदि १६ दिन के भीतर नहीं हो सके तो उसके बाद प्रथम मास के विषम (१७,१९,२१,२३,२५,२७,२९ वें) दिनों में एक मास के बाद विषम ३,५,७,९,११ वें मासों में और एक वर्ष के बाद विषम वर्ष ३,५ वर्षों में वधूप्रवेश शुभ होता है । परन्तु ५वें वर्ष के बाद वर्ष मास का विचार नहीं होता है अर्थात् ५वें वर्ष के पश्चात् कभी भी शुभ मुहूर्त्त देखकर वधू प्रवेश कराना चाहिये ।

विशेष - विवाह के पश्चात् प्रथम बार पति गृह में प्रवेश को वधूप्रवेश कहते हैं । वधूप्रवेश विवाह से १६ दिन के भीतर प्रत्येक विवाह मास में होती हैं, परनतु १६ दिन के भतर चैत्र – पौष- मलमास – हरिशयन का त्याग करना चाहिये ।

अन्य मत में वधूप्रवेश विचार –

त्रिभवविश्वतिथिप्रभवासरान्
नृपदिनेषु विहाय विवाहतः ।
अनववेश्मसु नूतनकामिनी
निशि विशेत् स्थिरभेऽथ ततः परम् ॥

विवाह संस्कार के बाद वधू का प्रथम पति के साथ पतिगृह में आना वधूप्रवेश है । विवाह का दिन शामिल करते हुए १६ दिनों के भीतर ३,११,१३,१५ वें दिन को छोड़कर अन्य दिनों में वधूप्रवेश शुभ है । वधूप्रवेश बिल्कुल नए गृह में अर्थात् जहॉ गृहप्रवेश के बाद वर के परिवारजनों ने रहना शुरू न किया हो, वहॉ न करें । वधूप्रवेश स्थिर नक्षत्रों में, रात्रि में हो तो विशेष शुभ है । वधूप्रवेश में मंगलवार, व शनिवार न हो तो (कहीं – कहीं बुध भी) ध्रुव, मृदु, क्षिप्र, श्रवण, मूल, मघा, स्वाती नक्षत्र हों तो शुभ होता है ।

वधूप्रवेश में नक्षत्र शुद्धि विचार –

ध्रुवक्षिप्रमृदु श्रोत्रवसुमूलमघानिले ।
वधूप्रवेशः सन्नेष्टो रिक्तारार्के बुधे परेः ॥

ध्रुव - क्षिप्र – मृदु संज्ञक नक्षत्र, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा, और स्वाती इन नक्षत्रों में, रिक्ता (४,९,१४) तिथि और मंगलवार – रविवार को छोड़कर अन्य तिथि –वारों में वधूप्रवेश होता है। अन्य आचार्य के मत से बुधवार को भी प्रवेश को वर्जित किया गया है।

ज्येष्ठे पतिज्येष्ठमथाधिके पतिं हन्त्यादिमे भर्तृगृहे वधू: शुचौ।

श्वश्रूं सहस्ये श्वशुरं क्षये तनुं तातं मधो तातगृहे विवाहत: ।।

विवाह के पश्चात् प्रथम ज्येष्ठ मास में यदि स्त्री पतिगृह में रहे तो पति के ज्येष्ठ भाई को नाश करती है। यदि प्रथम मलमास में रहे तो पति को, प्रथम आषाढ़ में पतिगृह में रहे तो सास को, पौष में रहे तो श्वसुर को और प्रथम क्षयमास में रहे तो अपने को नाश करती है। इसी प्रकार विवाह के पश्चात् प्रथम चैत्र में यदि स्त्री पिता के गृह में रह जाय तो पिता को मारती है।

विशेष - इससे सिद्ध होता है कि विवाह के पश्चात् चैत्र में पिता के गृह में रह जाना, तथा ज्येष्ठ, आषाढ़ पौष, मलमास – क्षयमास में पतिगृह में रहना वधूप्रवेश – यात्रा में शुभ नहीं होता है। अत: व्यावहारिक रूप में वधूप्रवेश के पश्चात् वर्जित समय को ध्यान देना आवश्यक है।

वधूप्रवेश मुहूर्त निर्णय करते समय निम्नलिखित स्थितियों का चयन करें-

शुभ मास - वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, पौष, माघ, फाल्गुन व मार्गशीर्ष।

शुभ वार - सोम, बुध, गुरु व शुक्र।

शुभ तिथि - 2, 3, 5, 6, 7, 8, 10, 12 (शुक्लपक्ष)।

शुभ नक्षत्र - रोहिणी, मृगशिरा, मघा, उफा., हस्त, स्वाति, अनुराधा, मूला, उषा., उभा., रेवती।

शुभ लग्न - सप्तम में सभी ग्रह अनिष्टकारक कहे गए हैं। लग्न में 3, 6, 7, 9 व 12वीं राशि का नवांश श्रेष्ठ कहा गया है। जब जन्म राशि जन्म लग्न से आठवीं या बारहवीं न हो।

विवाह लग्न से सूर्यादि ग्रहों के शुभ भाव अधोलिखित हैं :

सूर्य - 3, 6, 10, 11, 12वें भाव में। चन्द्र - 2, 3, 11वें भाव में।

मंगल - 3, 6, 11वें भाव में।

बुध व गुरु - 1, 2, 3, 4, 6, 9, 10, 11वें भाव में।

शुक्र - 1, 2, 4, 5, 9, 10, 11वें भाव में।

शनि, राहु- केतु - 3, 6, 8, 11वें भाव में।

टिप्पणी - वधू प्रवेश नवीन गृह में सर्वथा त्याज्य है। विषम दिनों, विषम मासों या विषम वर्षों में वर्जित है। इसी तरह भद्रा, व्यतिपात, गुरु- शुक्रास्त, क्षीण चन्द्र भी वर्जित है।

चरेदथौजहायने घटालिमेषगे रवौ रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्य वासरे।
नृयुग्ममीनकन्यकातुलावृषे विलग्नके द्विरागमं लघुध्रुवे चरेस्रपे मृदूडुनि ॥

विवाह से एक वर्ष के पश्चात् विषम ३,५ वर्षों में सूर्य, कुम्भ, वृश्चिक और मेष राशि में हो तो अर्थात् सौर फाल्गुन, अग्रहण वैशाख मासों में, कन्या के लिये सूर्य – गुरू की शुद्धि रहने पर शुभग्रहों (चन्द्र, बुध, गुरू एवं शुक्र) के दिन में, मिथुन – मीन – कन्या – तुला – और वृष लग्न में, लघु संज्ञक –ध्रुवसंज्ञक, चरसंज्ञक, मूल और मृदुसंज्ञक नक्षत्रों में द्विरागमन (विलम्बवधू प्रवेश के लिये पितृगृह से पतिगृह का यात्रा) कराना चाहिये।

द्विरागमन वधूप्रवेश का ही अंग है। वधूप्रवेश के ३ भेद हैं -

१. नूतन वधूप्रवेश २. सामान्य वधूप्रवेश ३. विलम्बित वधूप्रवेश

विवाह के बाद १६ दिन के भीतर पिता के गृह से पतिगृह में प्रवेश को नूतन वधू प्रवेश कहते है।

विवाह के पश्चात् एक वर्ष के भीतर मार्गशीर्ष , फाल्गुन, वैशाख क्रम से पतिगृह में प्रवेश को सामान्य वधूप्रवेश कहते हैं । इसमें सम – विषम मासों – दिनों का विचार एवं शुक्र का विचार नहीं होता है। जैसे -

नित्ययाने गृहे जीर्णे प्राशने परिधानके ।
वधूप्रवेशे मांगल्ये न मौढ्यं गुरू – शुक्रयोः ॥

इस वचनानुसार सामान्य वधूप्रवेश में गुरू – शुक्र के मौढ्य अस्तादि का विचार आवश्यक नहीं होता हैं । व्यवहार में लोग इसे भी प्रथम वर्षीय द्विरागमन कहते हैं । इसमें पिताके गृह से चन्द्रतारानुकूलित यात्रा विचार सहित प्रस्थान के साथ पतिगृह में प्रवेश का मुहूर्त्त देखा जाता है।

विवाह के पश्चात् तृतीय – पंचम विषम वर्ष में पिता के गृह से पतिगृह के लिये स्त्री के प्रस्थान को विलम्बित वधूप्रवेश कहा जाता है। इसमें गुरू – शुक्र के अस्तादि में शुक्र विचार की प्रधानता होती है। सम्मुख दक्षिण शुक्र का विचार प्रधान होता है। आवश्यक पक्ष में शुक्रान्ध - नक्षत्र में यात्रा मुहूर्त्त देखकर पतिगृह में द्विरागमन होता है। शुक्रान्ध नक्षत्र – रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, और मृगशिरा ये ६ नक्षत्र है। इसमें मार्गशीर्ष, फाल्गुन, वैशाख इन तीन मासों में शुक्ल पक्ष, कृष्णपक्ष की पंचमी तक विहित तिथि – वार - नक्षत्र आदि विचार आवश्यक होता है।

दूसरे शब्दों में, ससुराल से पिता के घर में जाकर फिर से पति- परमेश्वर के घर में आने का नाम द्विरागमन है। यह भी शुभ समय में करने श्रेष्ठ होता है। निम्नलिखित वार, तिथि, नक्षत्र एवं लग्न आदि में द्विरागमन शुभ होता है।

शुभ वर्ष - 1, 3, 5, 7, 9, 11, 13 15 व 17

शुभ मास - वैशाख, मार्गशीर्ष एवं फाल्गुन।

शुभ वार - रवि, सोम, बुध, गुरु एवं शुक्र।

शुभ तिथि - 1, 2, 3, 5, 7, 8, 10, 11, 13 (शुक्लपक्ष)।

शुभ नक्षत्र - रोहिणी, पुनर्वसु, मृगशिरा, अनुराधा, धनिष्ठा, श्रवण, चित्रा, स्वाति, रेवती, पुष्य, चित्रा, पूर्वाषाढा, अश्विनी, मूला,हस्त व उत्तरात्रय।

शुभ लग्न - 3, 4, 7, 9 , 10 व 12वीं राशि।

टिप्पणी - शनि और मंगलवार, 4, 6, 9, 12, 14, 30 तिथियां त्याज्य हैं।

प्रथम समागम मुहूर्त

अधोलिखित वार, तिथि, नक्षत्र एवं लग्न आदि में वर- वधू का परस्पर प्रथम समागम करना शुभ होता है।

शुभ वार - रवि, सोम, बुध, गुरु एवं शुक्र।

शुभ तिथि - 1(कृष्णपक्ष), 2, 3, 5, 7, 9, 13, 15 (शुक्लपक्ष)।

शुभ नक्षत्र - इन नक्षत्रों को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है

- पूर्वाद्ध भोगी नक्षत्र - रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा।
- मध्य भोगी नक्षत्र - आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा।
- उत्तरार्ध भोगी नक्षत्र - ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद एवं उत्तराभाद्रपद।

शुभ लग्न - 1, 3, 5, 7, 9, 11वीं राशि।

विशेष - पूर्वाद्ध भोगी नक्षत्र में स्त्री- पुरुष का प्रथम समागम होने पर स्त्री पति को प्रिय होती है, मध्य भोगी नक्षत्र में हो तो परस्पर प्रीति होती है और उत्तरार्ध भोगी नक्षत्र में हो तो पति पत्नी को प्रिय होता है।

कुछ विद्वानों ने मुहूर्त्त ग्रन्थों के द्विरागमन प्रकरण में नवोढ़ा शब्द के प्रयोग के कारण द्विरागमन को वधूप्रवेश सिद्ध करने का प्रयास किया है। कभी – कभी ऐसा देखा जाता है कि विवाहोपरान्त वधू पतिगृह चली जाती है तथा दूसरे ही दिन पुन: पितृगृह में वापस आ जाती है। अनन्तर कुछ समय बाद पुन: पतिगृह में जाती है, (यही द्विरागमन होता है।) ऐसी स्थिति में वधू को नवोढा कहना किसी भी प्रकार से अनुचित नहीं है। नवोढ़ा का अर्थ नवीनोद्वाहिता सद्य: विवाहिता ही होता है। केवल नवोढ़ा शब्द के प्रयोग से द्विरागमन को वधूप्रवेश नहीं कहा जा सकता है। निम्नलिखित

श्लोक से भी द्विरागमन की पृथक् सत्ता का स्पष्ट प्रमाण मिलता है -

विवाहे गुरूशुद्धिः स्यात् शुक्रशुद्धिर्द्विरागमने ।

त्रिगमे राहुशुद्धिश्च चन्द्रशुद्धिश्चतुर्गमे ।।

अर्थात् कन्या के विवाह में गुरू, शुद्धि द्विरागमन में शुक्र शुद्धि, तृतीय यात्रा में राहु की शुद्धि तथा चतुर्थ एवं इसके बाद की यात्राओं में केवल चन्द्रशुद्धि का ही विचार करना चाहिये।

अत: निष्कर्ष यही है कि प्रथम बार पतिगृह में जाना वधूप्रवेश , द्वितीय बार जाना द्विरागमन होता है।

अपि च –

ओजाब्दमासेऽहनि कार्यमेतत्

पंचाब्दतोऽग्रे नियमो न तद्वत् ।

विवाहभाश्वि श्रुतियुग्मचित्रा

गुरूडुभी रिक्तकुजार्क हीनैः ।।

यदि द्विरागमन (गौना) अर्थात् पतिगृह में दूसरी बार आना विवाह के तुरन्त बाद न हुआ तो विवाह से विषम वर्षो , विषम मासों में करना चाहिए ।

गौना पॉचवें वर्ष से आगे होना चाहिए यह नियम युक्तियुक्त नहीं है।

द्विरागमन के लिए विवाह के सभी नक्षत्र, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, चित्रा, पुष्य शुभ हैं। रिक्ता तिथि व मंगल शनिवार को वर्जित करना चाहिए।

द्विरागमो मेषघटालिसंस्थे

सूर्ये मृदुक्षिप्रचलाचलर्क्षे ।

मूले बुधेज्यास्फृजिनां दिनेंगे

रवीज्यशुद्धौ विषमेऽब्द इष्टः ।।

मेष, वृश्चिक, कुम्भ के सूर्य में, मृदु क्षिप्र, लघु व स्थिर नक्षत्र और मूल में, बुध, गुरू, शुक्र के वार व लग्नों में, सूर्य व गुरूबल की शुद्धि में, विषम वर्ष में गौना करना चाहिए।

बोध प्रश्न –

1. द्विरागमन करना चाहिये –

   क. सम वर्षों में ख. विषम वर्षों में ग. दोनों में घ. कोई नहीं

2. द्विरागमन में कहॉ का शुक्र त्याज्य हैं –

   क. सम्मुख और दक्षिण ख. वाम ग. पृष्ठ घ. दक्षिण

3. विवाह के पश्चात् वधू का पति के गृह में प्रवेश कहलाता है –

क. द्विरागमन ख. वधूप्रवेश ग. अग्न्याधान घ. पाणिग्रहण

4. विवाह के दिन से कितने दिनों के भीतर वधूप्रवेश करना चाहिये।

क. १५ दिनों के ख. १८ दिनों के ग. १६ दिनों के घ. २० दिनों के

5. मलमास में वधूप्रवेश करना होता है –

क. शुभ ख. अशुभ ग. दोनों घ. कोई नहीं

3.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि विवाह के पश्चात् वधू का प्रथम बार पतिगृह में प्रवेश (डोली उतरना) वधूप्रवेश कहलाता है। सामान्यत: विवाह से अगले दिन ही वधूप्रवेश लोक में होता हुआ देखा जाता है। लेकिन जब तुरन्त प्रवेश की प्रथा न हो तो विवाह के दिन से १६ दिनों के भीतर सम दिनों में या ५,७,९ दिनों में वधू प्रवेश, शुभ वेला में शकुनादि विचार कर मांगलिक गीत वाद्यादि ध्वनि के साथ करवाना चाहिये। १६ दिनों के भीतर गुरू – शुक्रास्तादि विचार भी नहीं होता है। १६ दिन व्यतीत हो जाने पर एक मास के अन्दर विषम दिनों में तथा १ वर्ष के भीतर विषम महीनों में पूर्ववत् तिथि वारादि शुद्धि देखकर वधूप्रवेश कहना चाहिये। पॉच वर्ष के पश्चात् यदि वधू प्रवेश हो तो स्वेच्छा से साधारण दिन शुद्धि देखकर वधूप्रवेश कराया जाना चाहिये। विवाह से एक वर्ष के पश्चात् विषम ३,५ वर्षों में सूर्य, कुम्भ, वृश्चिक और मेष राशि में हो तो अर्थात् सौर फाल्गुन, अग्रहण वैशाख मासों में, कन्या के लिये सूर्य – गुरू की शुद्धि रहने पर शुभग्रहों (चन्द्र, बुध, गुरू एवं शुक्र) के दिन में, मिथुन – मीन – कन्या – तुला – और वृष लग्न में, लघु संज्ञक –ध्रुवसंज्ञक, चरसंज्ञक, मूल और मृदुसंज्ञक नक्षत्रों में द्विरागमन (विलम्बवधू प्रवेश के लिये पितृगृह से पतिगृह का यात्रा) कराना चाहिये।

3.5 शब्दावली

वेदारम्भ – वेद का आरम्भ

विशिष्ट – मुख्य

असंयमित – जो संयमित न हो

गृहस्थाश्रम – आश्रमों में एक

अग्नये – अग्नि के लिये

अन्तरिक्षयाय – अन्तरिक्ष के लिए

विप्र – ब्राह्मण

श्रद्धायै – श्रद्धा के लिए

षोडश – सोलह

ब्राह्मणस्य – ब्राह्मण के लिए

विधु – चन्द्रमा

3.6 बोध प्रश्न के उत्तर

1. ख
2. क
3. ख
4. ग
5. ख

3.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

मुहूर्तचिन्तामणि – राम दैवज्ञ

संस्कारदीपक - श्री नित्यानन्द पर्वतीय

हिन्दू संस्कार - डॉ . पाण्डेय राजबली

कर्मसमुच्चय - रामजी लाल शास्त्री

3.8 दीर्घोत्तरीय प्रश्न

क. द्विरागमन से आप क्या समझते है । लिखिये।

ख. वधूप्रवेश को स्प्ष्ट कीजिये।

ब्लॉक – 4
शान्ति विधान

इकाई - 1 मूल शान्ति विधान

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में मूल संबंधी शान्ति प्रविधि का अध्ययन का आप अध्ययन करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की शान्ति प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। किसी भी जातक का जन्म यदि मूल वाली नक्षत्रों में हुआ है तो उसकी शान्ति आप कैसे करेगें, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

किसी भी जातक का जन्म जब होता है तो उस समय कोई न कोई नक्षत्र रहती ही है। उनमें से रेवती, अश्विनी, आश्लेषा, मघा, ज्येष्ठा एवं मूल को मूल वाली नक्षत्रों के रूप में जाना जाता है। इन नक्षत्रों में जन्म होने के कारण जातक का जीवन संकटापन्न होता है। जातक के परिवार का सीधा-सीधा संबंध होने के कारण इनसे संबंधित लोगों का भी जीवन प्रभावित होता है। इसलिये शान्ति कराने की आवश्यकता होती है। इसी शान्ति प्रविधि को मूल शान्ति के नाम से जाना जाता है।

इस इकाई के अध्ययन से आप मूल शान्ति करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे संबंधित व्यक्ति का मूल संबंधी दोषों से निवारण हो सकेगा जिससे वह अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, समाज कल्याण की भावना का पूर्णतया ध्यान देना, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान सहित वर्णन करने का प्रयास करना एवं वृहद् एवं संक्षिप्त दोनों विधियों के प्रस्तुतिकरण का प्रयास करना आदि।

1.2. उद्देश्य-

उपर्युक्त अध्ययन से आप शान्ति की आवश्यकता को समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते है।

1.2.1 कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

1.2.2 कर्मकाण्ड की शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।

1.2.3 कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

1.2.4 प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

1.2.5 लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

1.2.6 समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

1.3 मूल शान्ति

1.3.1 मूल का परिचय

यह सर्व विदित है कि संसार में जितने लोगों का जन्म होता है वह किसी न किसी नक्षत्र में होता है। ज्योतिष के अनुसार अभिजित् नक्षत्र को छोड़कर कुल नक्षत्रों की संख्या 27 सत्ताईस है। जिन्हें अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती के नाम से जाना जाता है। इन नक्षत्रों में से रेवती, अश्विनी, आश्लेषा, मघा, ज्येष्ठा एवं मूल को मूल वाली नक्षत्र के रूप में जाना जाता है। इसी शान्ति प्रविधि को मूल शान्ति के नाम से जाना जाता है।

अतः मूल के बारे में अब आप जान गये होगे। अब मूल में भी जो अत्यन्त अशुभ काल है उसके बारे में जानना अति आवश्यक है। इसलिये अग्रिम जानकारी दी जा रही है इसे ध्यान पूर्वक समझना चाहिये।

इन मूल नक्षत्रों में भी कुछ काल यानी समय को जो अत्यन्त अशुभ होते हैं उन्हे गण्डमूल कहा गया है। गण्ड शव्द का अर्थ स्पष्ट है। गण्ड , गांठ को कहा जाता है। जब हम दो डोरे को एक में जोड़ते है तो दोनों के बीच में एक गांठ पड़ जाती है जिसे गण्ड के नाम से जाना जाता है। शास्त्रीय ग्रन्थों में इसकी संज्ञा अभुक्त मूल के नाम से अभिहित है। मुहूर्त्त चिन्तामणि के नक्षत्र प्रकरण में इसको वर्णित करते हुये कहा गया है कि-

अभुक्तमूलं घटिकाचतुष्टयं ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं हि नारदः।
वसिष्ठ एकद्विघटीमितं जगौ वृहस्पतिस्त्वेकघटीप्रमाणतः॥

अन्वयः- ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं घटिकाचतुष्टयं अभुक्तमूलं स्यात् इति नारदः जगौ तथा ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं एकद्विघटीमितम् अभुक्तमूलं इति वसिष्ठः जगौ ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं एकघटीप्रमाणकम् अभुक्तमूलं स्यादिति बृहस्पतिः जगौ।

अर्थात् ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्त्य भाग की चार घटी और और मूल नक्षत्र के आदि की चार घटी यानी आठ घटी का समय अभुक्त मूल माना गया है। यह मान नारद जी के अनुसार बतलाया गया है। साठ घटी का मान चौबीस घंटे के बराबर होता है। ढाई घटी का एक घण्टा जानना चाहिये। अभुक्त मूल के विषय में आचार्य वसिष्ठ जी का मत है कि ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्त्य भाग की एक घटी एवं मूल नक्षत्र के आदि की दो घटी को अभुक्त मूल जानना चाहिये। आचार्य वृहस्पति का इस सन्दर्भ में कथन है कि ज्येष्ठा के अन्त्य और मूल के आदि की आधी - आधी घटी को अभुक्त मूल जानना

चाहिये।

इस सन्दर्भ में एक मत और भी प्राप्त होता है जो इस प्रकार है-

अथोचरन्ये प्रथमाष्टघट्यो मूलस्य शाक्रन्तिमपंचनाड्यः।

जातं शिषुं तत्र परित्यजेद्वा मुखं पितास्याष्टसमा न पश्येत्॥

अन्वयः- अथ अनये त्वेवं उचुः यत् मूलस्य प्रथमाष्टघट्यः शाक्रान्तिमपंचनाड्यः अभुक्तमूलं स्यात्। तत्र जातं शिशुं परित्यजेत् अथवा पिता अस्य मुखं अष्टसमा न पश्येत्।

अर्थात्- ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्त्य की आठ घटी और मूल नक्षत्र के आदि की पांच घटी अभुक्त मूल होता है। ऐसा अन्य आचार्यगण कहते है। इस अभुक्त मूल में जन्म लेने वाले जातकों को त्याग देना चाहिये। यानी आठ वर्ष तक पिता को जातक का मुख नही देखना चाहिये।

कुछ आचार्यों के मत से चार घटी आदि एवं पांच घटी अंत की, कुछ के मत से बारह घटी एवं कुछ के मत से एक घटी माना गया है। परन्तु सामान्य तौर पर ऐसी स्थिति में उत्पन्न होने वाला बालक गण्ड दोष से पीड़ित हो जाता है। प्रयोग पारिजात नामक ग्रन्थ में लिखा गया है कि इस प्रकार जातक का जन्म पिता के लिये, माता के लिये, धन के लिये तथा स्वयं के लिये अरिष्टकारी होता है। इसलिये प्रायश्चित्त पूर्वक इस दोष की शान्ति करनी चाहिये।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते है । अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है । प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- अभिजित् नक्षत्र को छोड़कर कुल नक्षत्रों की संख्या कितनी है?

क- 27 ख- 28 ग- 29 घ- 30

प्रश्न 2- इन नक्षत्रों में से किसको मूल वाली नक्षत्र के रूप में नही जाना जाता है?

क-रेवती को, ख- अश्विनी को, ग- आश्लेषा को , घ- हस्त को।

प्रश्न 3- गण्डमूल किसे कहा गया है?

क- भुक्तमूल को, ख- अभुक्त मूल को, ग-उक्त मूल को, घ- पुनरुक्त मूल को।

प्रश्न 4- नारद जी के अनुसार अभुक्त मूल कितनी घटी का होता है?

क- चार घटी, ख- पांच घटी, ग- सात घटी, घ- आठ घटी।

प्रश्न 5- साठ घटी का मान कितने घंटे के बराबर होता है?

क- चौबीस घंटे के, ख- चौंतीस घंटे के, ग-चौदह घंटे के, घ- बारह घंटे के।

प्रश्न 6- ढाई घटी का कितना घण्टा जानना चाहिये?

क- चार, ख- तीन, ग- दो, घ- एक।

प्रश्न 7- आचार्य वसिष्ठ जी के मत में कितनी घटी को अभुक्त मूल जानना चाहिये?

क- चार, ख- तीन, ग- दो, घ- एक।

प्रश्न 8- आचार्य वृहस्पति के अनुसार कुल कितनी घटी को अभुक्त मूल जानना चाहिये?

क- चार, ख- तीन, ग- दो, घ- एक।

प्रश्न 9- इन नक्षत्रों में से किसको मूल वाली नक्षत्र के रूप में जाना जाता है?

क-रेवती को, ख- भरणी को, ग- आर्द्रा को , घ- हस्त को।

प्रश्न 10- अन्य आचार्यों के मत में ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्त्य की आठ घटी और मूल नक्षत्र के आदि की पांच घटी को होता है।

क- भुक्तमूल , ख- अभुक्त मूल , ग-उक्त मूल , घ- पुनरुक्त मूल ।

1.3.2 मूल के सन्दर्भ में मत मतान्तर

अब आप मूल क्या है इसके विषय में पूरी तरह जान गयें होगें। अब हम ये जानेगें कि मूल के सन्दर्भ में भिन्न-भिन्न जगहों पर भिन्न-भिन्न विद्वानों के द्वारा इस सन्दर्भ में क्या का कहा गया है । ब्रह्मपुराण में कहा गया है कि -

मूलाद्येंऽषे पितुर्नाशो द्वितीये मातुरेव च।
तृतीये धनधान्यादिनाशस्तुर्ये धनागमः।।

यानी मूल नक्षत्र के प्रथम चरण में शिशु का जन्म होने पर उसके पिता के लिये अरिष्ट होता है एवं दूसरे चरण में जन्म होने पर जातक की माता के लिये कष्ट होता है। तीसरे चरण में शिशु का जन्म होने

पर धन धान्यादि का नाश होता है तथा चौथे चरण में जन्म होने पर धन का आगमन होता है। रत्नमाला नामक ग्रन्थ में इसका वर्णन इस प्रकार प्राप्त होता है-
तदाद्यपादके पिता विपद्यते जनन्यथ। तृतीये धनक्षयश्चतुर्थकः शुभावहः। यानी यह श्लोक भी पूर्वोक्त बातें ही सिद्ध करता है। वसिष्ठ संहिता में कुछ विषेष बातें इस प्रकार है-

मूलाद्यपादो दिवसो यदि स्यातज्जः पितुर्नाशकारणं स्यात्।
द्वितीयपादो यदि रात्रिभागे तदुद्भवो मातृविनाशकः स्यात्।
मूलाद्यपादो यदि रात्रिभागे तदात्मनो नास्ति पुनर्विनाशः।
द्वितीयपादो दिनगो यदि स्यान्नमातुरल्पोऽस्ति तदास्ति दोषः।।

अर्थात् मूल नक्षत्र का पहला चरण यदि दिन में हो तो उसमें उत्पन्न होने वाले शिशु के पिता को अरिष्ट होता है। दूसरा चरण रात्रि में हो तो वह शिशु के माता के लिये विनाशक होता है। मूल का प्रथम चरण यदि रात्रि में हो तो स्वयं शिशु के लिये कष्टकारी नही होता है। यदि दूसरा चरण दिन में हो तो माता के लिये कष्टकारी नही होता है। नारद संहिता में लिखा गया है कि-

दिवा जातस्तु पितरं रात्रौ तु जननी तथा।
आत्मानं सन्ध्ययोर्हन्ति ततो गण्डं विवर्जयेत्।।

अर्थात् दिन में जन्म होने पर पिता, रात्रि में जन्म होने पर माता तथा प्रातः एवं सायं सन्ध्याओं में जन्म होने पर स्वयं जातक के लिये कष्टकारी होता है। इसलिये गण्ड मूल विवर्जित करना चाहिये। दोष होने की स्थिति में शान्ति कराना चाहिये। मूल एवं आश्लेषा के सभी चरणों की शान्ति कल्याणकारी होती है ऐसा आचार्य वसिष्ठ का कथन है-

नैर्ऋत्यभौजंगभगण्डदोषनिवारणायाभ्युदयाय नूनम्।
पितामहोक्तां रुचिरां च शान्तिं प्रवच्मिलोकस्य हिताय सम्यक्।
शास्त्रोक्तरीत्या खलु सूतकान्ते मासे तृतीये त्वथ वत्सरान्ते।।

मूल और आश्लेषा के गण्ड दोषों की शान्ति अभ्युदय के लिये अवश्य करनी चाहिये। पितामह ने इस मूल शान्ति का वर्णन करते हुये कहा है कि यह शान्ति सूतक के समाप्ति के बाद, तीसरे महीने में या वर्ष के अन्त में करायी जा सकती है। इसको सामर्थ्य या असामर्थ्य की दृष्टि से वर्णित किया गया है। यदिः मातुः शीतोदकस्नानेऽसामर्थ्यं स्यात्तदा सूतकान्ते एव शान्तिः। दीर्घरोगादीनां तदाप्यशान्तिश्चेत्तर्हि वर्षसमाप्ति दिवसे शान्तिः।। अर्थात् यदि माता शीतल जल से स्नान करने में असमर्थ हो तो सूतक के अन्त में शान्ति करायी जा सकती है। मातृगण्ड के सन्दर्भ में कुछ विशेष कहा गया है-

मातृगण्डे सुते जाते सूतकान्ते विचक्षणः।

कुर्याच्छान्तिं तदृक्षे वा तद्दोषस्यापनुत्तये।।

मातृगण्ड में पुत्रोत्पत्ति होने पर सूतक के अन्त में या उस नक्षत्र में शान्ति करायी जा सकती है। शिष्टाचार के अनुसार जो जन्म की नक्षत्र होती है उसमें शान्ति का व्यवहार करना चाहिये। इसलिये मूल के चौथे चरण की भी शान्ति करनी चाहिये। यद्यपि मूल का चौथा चरण शुद्ध होता है फिर भी शान्ति की अपेक्षा होती है।

लिखा गया है कि चतुर्थ चरण में धन का आगमन होने से इसमें जन्म का फल शुभ है फिर भी कश्यप जी ने कहा है सुहृदश्च तुरीयजः यानी चतुर्थ चरण में जन्म सुहृदों का विनाशक है इसलिये शान्ति अवश्य कराना चाहिये। केवल इतना ही नही मूल वृक्ष के विचार में भी शिशु एवं कन्या के लिये अशुभ फल का कथन किया गया है। कहा गया है कि मूलादि दोष में उत्पन्न होने पर यदि शान्ति नही किया जाता है तो नारद ऋषि ने उसको अनिष्टकर माना है। यथा-

वत्सरात्पितरं हन्ति मातरं तु त्रिवर्षतः।

द्युम्नं वर्षद्वयेनैव श्वसुरं नववर्षतः।

जातं बालं वत्सरेण वर्षे पंचभिरग्रजम्।

श्यालकं चाष्टभिर्वर्षैरक्नुतान् सन्ति सप्तभिः।

तस्माच्छान्तिं प्रकुर्वीत प्रयत्नाद्विधिपूर्वकम्।

तस्मादवश्यं चरणचतुष्टयेऽपि शान्तिर्विधेया इति।

मूल दोष के कारण पिता को एक वर्ष में एवं माता को तीन वर्ष में अरिष्ट होता है। धन को दो वर्ष में एवं श्वसुर को नौ वर्ष में कष्ट होता है। बालक को एक वर्ष में, उसके बड़े भाई को पांच वर्ष में तथा श्यालक को आठवें वर्ष में कष्ट होता है इसलिये प्रयत्न पूर्वक शान्ति कराना चाहिये।

जयार्णव नामक ग्रन्थ में मूल नक्षत्र को एक वृक्ष के रूप में मानकर विचार किया गया गया है। इसमें मूल के सम्पूर्ण घटी को क्रमशः 7, 8, 10, 12, 5, 4 एवं घटी में बाधकर फल बतलाया गया है। जैसे -

मूलं स्तम्भत्वचा शाखा पत्रं पुष्पं फलं शिखा। मुनयोऽष्टौ दिशो रुद्राः सूर्याः पंचाब्धयोऽग्नयः। मूले तु 7 मूलनाश स्यात्स्तम्भे 8 वंशविनाशनम्। त्वचि 10 मातुर्भवेत्क्लेशः शाखायां 11 मातुलस्य च। पत्रे 12 राज्य विजानीयात्पुष्पे 5 मन्त्रिपदं स्मृतम्। फले 4 च विपुला लक्ष्मी शिखाया 3 मपजीवितम्।

अर्थात् मूल रूपी वृक्ष को मूल, स्तम्भ, त्वचा, शाखा, पत्र, पुष्प, फल एवं शिखा इन आठ अंगों में बाटा गया है। मूल नक्षत्र प्रारम्भ होने से 7 घटी तक मूल यानी जड़ होता है जिसका फल विनाश

होता है। अग्रिम 8 से 15 घटी तक स्तम्भ होता है जिसका फल वंश विनाश होता है। 16 घटी से 25 घटी तक स्तम्भ होता है इसमें माता को कष्ट होता है। 26 से लेकर 36 घटी तक मामा को कष्ट होता है। 37 से 48 घटी तक पत्र होता है इसका फल राज्य की प्राप्ति है। 49 से 53 तक मन्त्री पद प्राप्त होता है। 54 से 57 घटी तक फल होता है इसमें विपुल लक्ष्मी का योग होता है तथा 57 से 60 धटी तक वृक्ष की शिखा होती है इसका फल अल्प जीवन होता है।

मूल नक्षत्र में उत्पन्न कन्या के फल का विचार के लिये मूल नक्षत्र प्रारम्भ से 4 घटी तक शीर्ष मानना चाहिये। इसमें जन्म लेने वाली कन्या के पशु धन का नाश होता है। अग्रिम 5 से 10 घटी तक धन हानि, 11घटी से 15घटी तक धनागमन, 16 से 20घटी तक मूल पुरुष का हृदय होता है इसमें जन्म लेने से कुटिलता आती है। 21 से 30 घटी तक बाहु रहता है इसमें जन्म लेने का फल धनागम होता है। 31 से 38 तक पाणि होता है इसका फल दया है। 39 से 42 तक गुह्य है इसका फल कामिनी होता है। 43 से 46 तक जंघा होता है इसका फल ज्येष्ठ मातुल हानि है। 47 से 50 तक जानु होता है इसका फल ज्येष्ठ भातृ हानि होता है। 51 से साठ घटी तक पाद होता है इसका फल बंधक होता है।

इस प्रकार ठीक समय ज्ञात होने पर आप आसानी से बालक एवं बालिकाओं के लिये अलग - अलग फल का निरूपण कर सकते है ।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते है । अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-मूल नक्षत्र के प्रथम चरण में शिशु का जन्म होने पर उसके पिता के लिये होता हैं ?

क- अरिष्ट, ख- इष्ट, ग- शुभ, घ- सुख ।

प्रश्न 2- मूल नक्षत्र के दूसरे चरण में जन्म होने पर जातक की माता के लिये होता है?

क- अरिष्ट, ख- इष्ट, ग- शुभ, घ- सुख ।

प्रश्न 3-मूल नक्षत्र के तीसरे चरण में शिशु का जन्म होने पर नाश होता है ?

क- तन का, ख-धन का, ग-जन का, घ-भाई का।

प्रश्न 4- मूल नक्षत्र के चौथे चरण में जन्म होने पर आगमन होता है।

क- तन का, ख-धन का, ग-जन का, घ-भाई का।

प्रश्न 5- मूल नक्षत्र का पहला चरण यदि दिन में हो तो शिशु के किसको अरिष्ट होता है?

क -माता को, ख- पिता को, ग- भाई को, घ- मामा को

प्रश्न 6- मूल नक्षत्र का दूसरा चरण रात्रि में हो तो वह शिशु के किसको विनाशक होता है?

क -माता को, ख- पिता को, ग- भाई को, घ- मामा को

प्रश्न 7- मूल का प्रथम चरण यदि रात्रि में हो तो शिशु के किसके लिये कष्टकारी नही होता है?

क -माता के, ख- पिता के, ग- भाई के, घ- स्वयं के।

प्रश्न 8-मूल नक्षत्र का दूसरा चरण दिन में हो तो किसके लिये कष्टकारी नही होता है?

क -माता को, ख- पिता को, ग- भाई को, घ- मामा को

प्रश्न 9- मूल दोष के कारण पिता को कितने वर्ष में अरिष्ट होता है?

क- दो वर्ष में, ख- तीन वर्ष में, ग- एक वर्ष में, घ- चार वर्ष में।

प्रश्न 10-मूल दोष के कारण बालक के बड़े भाई को कष्ट होता है।

क- दो वर्ष में, ख- तीन वर्ष में, ग- एक वर्ष में, घ- पांच वर्ष में।

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप मूल के विषय में विभिन्न मत मतान्तरों को जान गये होगें। अब आपको इस विषय में किसी भी प्रकार का भ्रम नही उत्पन्न होगा। अब मूल का वास कहां है इसका विचार आप अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे हैं क्योकि इससे भी मूल के दोषों का आकलन कर सकेगे।

1.3.3 मूल वास विचार-

स्वर्गे शुचिप्रौष्ठपदेषुमाघे भूमौ नभः कार्त्तिकचैत्रपौषे।
मूलं ह्यधस्तात्तु तपस्यमार्गवैशाखशुक्रेष्वशुभं च तत्र ।।

अर्थात् आषाढ़, भाद्रपद, आश्विन और माघ इन चार महीनों में मूल का वास स्वर्ग में होता है। श्रावण, कार्त्तिक, चैत्र, पौष मास में मूल का निवास भूमि पर होता है। फाल्गुन, मार्गशीर्ष, वैशाख और ज्येष्ठ मास में मूल का वास पाताल लोक में होता है। मूल जिस लोक में रहता है वहीं पर फल देता है।

यदि श्रावण, कार्त्तिक, चैत्र, पौष इन चार महीनों में जन्म हो तो मूल शान्ति अवश्य करानी चाहिये। सामर्थ्य रहने पर सभी महीनों में जन्म होनें पर शान्ति करना आवश्यक है। अभुक्त मूल में जन्म होने पर सभी महीनों में शान्ति करनी चाहिये। यह विचार चान्द्र मास के अनुसार किया गया है । किसी आचार्य के अनुसार सौर मास से भी विचार कर सकते है।

ज्योतिषार्णव के अनुसार मार्गशीर्ष, फाल्गुन, वैशाख एवं ज्येष्ठ में मूल का वास रसातल में होता है। माघ, आश्विन, आषाढ़ एवं भाद्रपद में मूल का वास स्वर्ग में होता है। पौष, श्रावण, चैत्र एवं कार्त्तिक

में मूल का वास भूमि पर होता है। भूमिष्ठ मूल अत्यन्त दोष उत्पनन करता है तथा अन्यत्र स्थित मूल स्वल्प यानी अत्यन्त थोड़ा दोष उत्पन्न करता है। इसी प्रकार संक्रान्ति के आधार पर भी मूल वास का विचार किया गया है।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है । प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है -

प्रश्न-1 श्रावण मास में मूल का वास किसमें होता है ?

क- स्वर्ग, ख- भूमि, ग- पाताल, घ- सभी जगह।

प्रश्न-2 आषाढ़ मास में मूल का वास किसमें होता है ?

क- स्वर्ग, ख- भूमि, ग- पाताल, घ- सभी जगह।

प्रश्न-3 वैशाख़ मास में मूल का वास किसमें होता है ?

क- स्वर्ग, ख- भूमि, ग- पाताल, घ- सभी जगह।

प्रश्न-4 माघ मास में मूल का वास किसमें होता है ?

क- स्वर्ग, ख- भूमि, ग- पाताल, घ- सभी जगह।

प्रश्न-5 चैत्र मास में मूल का वास किसमें होता है ?

क- स्वर्ग, ख- भूमि, ग- पाताल, घ- सभी जगह।

प्रश्न-6 सौर मास माना जाता है?

क- चन्द्रमा से, ख- सूर्य से, ग- नक्षत्र से, घ- तारा से।

प्रश्न-7 सामर्थ्य रहने पर शान्ति करानी चाहिये-

क- सभी महीनों में, ख- कुछ महीनों में, ग- स्वेच्छया, घ- नही।

प्रश्न -8 भूमि पर अत्यन्त दोष होता है-

क- भूमिष्ठ मूल का, ख- स्वर्गस्थ मूल का, ग- पातालस्थ मूल का, घ- आकाशस्थ मूल का।

इस प्रकरण में आप ने देखा कि कब- कब मूल का निवास कहां रहता है तथा उसका कितना फल जातक के जीवन पर तथा उसके संबंधियों पर पड़ता है। अब आप यह जानेगें कि मूल की शान्ति कैसे करायी जा सकती है।

1.4 मूल शान्ति विधान -

1.4.1 मूल शान्ति का प्रायोगिक विधान

गोमुख प्रसव शान्ति के अनन्तर मूल शान्ति विधि इस प्रकार है। यजमान सपत्नीक सबालक सम्यक् आसन पर प्राङ्मुख बैठकर अपने दक्षिण में पत्नी को बिठाकर आचमनादि पूर्वक पवित्र होकर स्वस्ति मन्त्रों का पाठ करे। इसके अनन्तर संकल्प करें- अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे अमुकराषिस्थिते चन्द्रे अमुकराषिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रह गुण गण विशेषण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं अस्य जातकस्य अमुक नक्षत्र जनन पित्राद्यरिष्टनिरसनार्थं पंचाभिमन्त्रितकलशैः स्नानमहं करिष्ये।

तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये।

इस प्रकार संकल्प करके यथोपलब्ध पूजन सामग्रियों से श्री गणेशाम्बिका का पूजन करना चाहिये। अपने आगे चावल से श्वेत अष्टदल कमल बनाकर उस पर सप्तधान्य रखकर सौ छिद्र वाले एक कलश को रखें। उसके चारो तरफ पूर्वादि क्रम से या ईशानादि क्रम से प्रारम्भ कर चार कलश, कलश स्थापन विधि के अनुसार स्थापित करें। शतछिद्र कलश के नीचे कोई ऐसा पात्र रखा जाना चाहिये जिसमें शतछिद्र कलश का जल धीरे-धीरे संगृहीत होता रहे। शतछिद्र कलश के अभाव में वहाँ कम्बल का टुकड़ा भी रखा जा सकता है या एक कलश में कम्बल का टुकड़ा लगाकर भी कलश स्थापन किया जा सकता है। उस स्थल पर भी स्नान या अभिषेक करने की विधि है, परन्तु मयूखादि ग्रन्थों ने स्नानं तु कर्मान्ते अभिषेक समये कहकर कर्म के अन्त में अभिषेक या स्नान करने का विधान भी दिया है।

आचारक्रम के अनुसार पूर्व स्थापित कुम्भ में देवदारु, रक्तचन्दन, कमल, कुष्ठ, प्रियंगु, शुण्ठी, मुस्ता, आमलक, वच, सर्षप, अगर, मुरा, मांसी, ऋद्धि, वृद्धि, उशीर इत्यादि औषधियों को डालना चाहिये। रुद्रध्यायं जपेत् कहकर पद्धतिकार ने बतलाया है कि रुद्री के पंचम अध्याय के 66 मन्त्रों का पाठ करना चाहिये। दक्षिण वाले कुम्भ में पंचामृत, गजमृद औषधि, तीर्थोदक यानी तीर्थ का जल, सप्तधान्य और सुवर्ण डालना चाहिये। यहाँ आशुः शिशानः से बारह मन्त्र तक का पाठ करना चाहिये। पश्चिम के कुम्भ में सप्तमृत्तिका डालना चाहिये। इस अवसर पर कृणुष्वपाजः से पाँच मन्त्रों का पाठ करना चाहिये। उत्तर के कुम्भ में पंच रत्न, वट, अश्वत्थ, पलास, प्लक्ष, उदुम्बर के पल्लव डालने चाहिये। जम्बू, निम्ब, कदम्ब, चिंचिडक, वट, उदुम्बर, प्लक्ष, आम्र का छाल और सत्ताइस

कूपों का जल डालना चाहिये। इस अवसर पर रक्षोहणं से चार मन्त्रों का पाठ करना चाहिये। मध्य वाले शतछिद्र कलश में शतौषधि, उसके अभाव में अच्छे वृक्षों का पल्लव, विष्णुक्रान्ता आदि छोड़ना चाहिये। इस अवसर पर त्र्यम्बकं मन्त्र का 108 बार पाठ करना चाहिये।

इस प्रकार कलश स्थापन विधि के अनुसार कलशस्थापन कर पूर्णपात्र के ऊपर वरुण देवता को आवाहित पूजित कर सपत्नीक सजातक यजमान का अभिषेक करना चाहिये। दूर्वाम्रपल्लवों से वामभागस्थ पत्नी सहित यजमान के अभिषेक काल में अग्रलिखित मन्त्रों का उच्चारण करना चाहिये।

पौराणिक मन्त्राः-

सुरास्त्वामभिषिंचन्तु ब्रह्मविष्णु महेश्वराः। वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणोविभुः ।। प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते। आखण्डलो- ग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा। वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः। ब्रह्मणासहिताः सर्वे दिक्पालाः पान्तु ते सदा।। कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धाक्रियामतिः। बुद्धिर्लज्जावपुः शान्तिः पुष्टिश्तुष्टिश्चमातरः।। एतास्त्वामभिषिंचन्तु देवपत्न्यः समागता। आदित्यश्चन्üमा भौमो बुधजीव- सितार्कजाः।। ग्रहास्त्वामभिषिंचन्तु राहुः केतुश्च तर्पिताः। देवदानव गन्धर्वा- यक्षराक्षस पन्नगाः।। ऋषयो मनवो गावो देवमातर एव च। देवपत्न्यो- üुमानागा दैत्याश्चाप्सरसा¯णाः।। अस्त्राणि सर्व शस्त्राणि राजानो वाहनानि च। औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये।। सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः। एतेत्वामभिषिंचन्तु धर्मकामार्थ सिद्धये।। अमृताभिषेको ऽस्तु ।। शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु ।।

तदनन्तर यजमान क्षौर कर्म कराकर तथा पत्नी नाखून आदि निकृन्तन कराकर पैरों में महावर इत्यादि लगाकर शुद्ध वस्त्र धारण कर पूजन स्थल पर उपस्थित हों। समान कार्यो की आवृत्ति न हो इसके लिये यजमान पूर्व में क्षौरादि कर्म करके पूजन स्थल पर उपस्थित होता है और अभिषेकादि विधि पूजनानन्तर सम्पादित होती है। इस प्रकार सारी विधियों का सम्पादन भी किया जा सकता है और समय भी बचाया जा सकता है।

इसके अनन्तर पुनः स्वस्ति पाठ एवं संकल्पादि करके पंचांग पूजन की विधि प्रतिपादित करना चाहिये। यदि पूर्व में ये कार्य सम्पादित हो गये हों तो इसे पुनः सम्पादित करने की आवश्यकता नहीं है।

अब एक भद्र पीठ पर श्वेत वस्त्र फैलाकर चौबीस दल कमल का निर्माण करना चाहिये। मध्य में एक कलश स्थापित करके पूर्णपात्र के ऊपर स्वर्ण की निर्ऋति देवता की प्रतिमा, अधि देवता एवं प्रत्यधि देवता की प्रतिमा रखनी चाहिये। यदि सुवर्ण में अशक्ताभाव हो तो तीन सुपारी रखना चाहिये।

जिसमे मध्य वाली सुपारी को प्रधान देवता मानना चाहिये। अग्न्युत्तारण विधि सहित इन प्रतिमाओं को रखने का विधान है।

अग्न्युत्तारण विधि शान्ति विधानम् के वास्तु शान्ति प्रकरण में उल्लिखित है जिसका अवलोकन किया जा सकता है।

मूल नक्षत्र के प्रधान देवता निर्ऋति होते हैं। इस नक्षत्र के अधिदेवता ज्येष्ठा नक्षत्र के देवता इन्द्र होते है तथा प्रत्यधि देवता अप होते है। इनको अधोलिखित मन्त्रों से आवाहित करना चाहिये-

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः मूलाधिपति इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः मूलस्यप्रत्याधिपति अöयो नमः अप आवाहयामि स्थापयामि।

उसके बाद चौबीस दलों में अग्रलिखित देवताओं को स्थापित करना चाहिये। इन चौबीसों स्थानों में अक्षत पुंज के ऊपर सोपाड़ी रखकर क्रमशः आवाहन किया जाता है।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान् देवानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अष्टवसुभ्यो नमः अष्टवसूनावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अजैकपदे नमः अजैकपादमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अहिर्बुध्न्याय नमः अहिर्बुध्न्यमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः पूष्णे नमः पूषाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः रुद्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अदितये नमः अदितिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः बृहस्पतये नमः बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्पेभ्यो नमः सर्पानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः पितृभ्यो नमः पितृन् आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगाय नमः भगमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अर्यमणे नमः अर्यमाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सवित्रे नमः सवितारमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्वकर्मणे नमः विष्वकर्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राग्नीभ्यां नमः इन्द्राग्नौ आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः मित्राय नमः मित्रमावाहयामि स्थापयामि।

अब मण्डल से बाहर इन्द्रादिदश दिक्पालों का आवाहन करना चाहिये। जिसका क्रम इस प्रकार है- पूर्व में इन्द्र, अग्नि कोण में अग्नि, दक्षिण में यम, नैर्ऋत्य कोण में निर्ऋति, पश्चिम में वरुण, वायव्य कोण में वायु, उत्तर में सोम, ईशानकोण में ईशान, ईशान और पूर्व के बीच में ब्रह्मा एवं पश्चिम तथा नैर्ऋत्य के बीच में अनन्त को आवाहित करना चाहिये। उक्त दिशाओं में अक्षतपुंज के ऊपर सोपाड़ी रखकर अक्षत छोड़ते हुये आवाहन किया जाता है।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तमावाहयामि स्थापयामि ।

हाथ में अक्षत लेकर - नैर्ऋत्यादिदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु। यह कहकर समस्त आवाहित देवताओं की प्राणप्रतिष्ठा करे। नैर्ऋत्यादिदेवताभ्यो नमः कहकर समस्त प्रकार से इनका पूजन करना चाहये।

ततो कुण्डे स्थडिले वाऽग्निं प्रतिष्ठापयेत्- इसके बाद स्थण्डिल या कुण्ड का निर्माण करना चाहिये। यदि कुण्ड का निर्माण किया गया है तो उसकी ऊपरी मेखला श्वेत वर्ण की होगी तथा उसमे विष्णु देवता का आवाहन किया जायेगा। मध्य मेखला रक्त वर्ण की होगी तथा उसमे ब्रह्म देवता की

स्थापना की जायेगी। निचली मेखला कृष्ण वर्ण की होगी तथा उसमे रुद्र देवता की स्थापना होगी। कुण्ड की योनि रक्त वर्ण की होती है तथा इसमे गौरी देवी की स्थापना की जाती है। यथा-

उपरिमेखलायाम् - विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि। मध्यमेखलायाम् - ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि। अधो मेखलायाम् -रुद्राय नमः रुद्रमावाहयामि स्थापयामि। योन्याम् - गौर्यै नमः गौरीमावाहयामि स्थापयामि। अनन्तरं

पंचभूसंस्काराः-

संकल्पः- अस्मिन् मूलशान्तिकर्मणि पंचभूसंस्कारपूर्वकमग्निस्थापनं करिष्ये। कुशैः परिसमूह्य तान् कुशान् ऐशान्यां परित्यज्य।। 1।। गोमयोदकाभ्यामुपलिप्य।। 2।। स्रुवमूलेनोल्लिख्य।। 3।। अनामिकांगुष्ठेनोद्धृत्य।। 4।। जलेनाभ्युक्ष्य।। 5।। इतिपंचभूसंस्काराः।।

पंचभूसंस्कार का अर्थ उस भूमि के पाँच संस्कार से है जहाँ अग्नि स्थापन करना है। सबसे पहले कुशाओं से उस भूमि को साफ किया जाता है तथा उन कुशाओं का ईशान दिशा में परित्याग कर दिया जाता है। गाय के गोबर एवं जल से उस भूमि का उपलेपन किया जाता है। स्रुव के मूल से पश्चिम से पूर्व की तरफ दक्षिण से उत्तर की ओर तीन रेखायें खीचीं जाती है। रेखाकरण से उभरी हुयी कुछ मिट्टियों को दाहिने हाथ की अनामिका एवं अंगुष्ठ से बाहर निकालते है। तथा अन्त में उसके ऊपर जल छोड़ते है। इस प्रकार पंचभूसंस्कार करके ही हवनीय अग्नि की स्थापना की जाती है। अग्निस्थापन के समय अधोलिखित मन्त्र उच्चारित किया जाता है। अग्निंदूतं पुरो दधे हव्यवाहमुपब्रुवे देवाँ2 आसादयादिह। अथवा।। ॐ भूर्भुवः स्वः अग्निनारायणाय नमः आवाहयामि स्थापयामि। इत्यग्निस्थापनम्।

अग्निपात्रे गन्धाक्षतादि दत्वा अर्थात् जिस पात्र में अग्नि लायी गयी हो उस पात्र में गन्धाक्षतादि छोड़ना चाहिये। इसके अनन्तर नवग्रहों का आवाहन करना चाहिये।

ॐ सूर्याय नमः सूर्यमावाहयामि स्थापयामि। ॐ चन्द्रमसे नमः चन्दमसमावाहयामि स्थापयामि। ॐ भौमाय नमः भौममावाहयामि स्थापयामि। ॐ बुधाय नमः बुधमावाहयामि स्थापयामि। ॐ बृहस्पतये नमः बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि। ॐ शुक्राय नमः शुक्रमावाहयामि स्थापयामि। ॐ शनैश्चराय नमः शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि। ॐ राहवे नमः राहुमावाहयामि स्थापयामि। ॐ केतवे नमः केतुमावाहयामि स्थापयामि।

प्रत्येक ग्रहों के दक्षिणभाग में अधिदेवताओं का आवाहन किया जाना चाहिये। ॐ ईश्वराय नमः ईश्वरमावाहयामि स्थापयामि। ॐ उमायै नमः उमामावाहयामि स्थापयामि। ॐ स्कन्दाय नमः स्कन्दमावाहयामि स्थापयामि। ॐ विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि। ॐ ब्रह्मणे नमः

ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि। ॐ इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि। ॐ यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि। ॐ कालाय नमः कालमावाहयामि स्थापयामि। ॐ चित्रगुप्ताय नमः चित्रगुप्तमावाहयामि स्थापयामि।

प्रत्येक ग्रहों के वाम भाग में प्रत्यधिदेवताओं का आवाहन किया जाता है- यथा- ॐ अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि। ॐ अϋयो नमः अप आवाहयामि स्थापयामि स्वाहा। ॐ पृथिब्यै नमः पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि। ॐ विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि। ॐ इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि। ॐ इन्द्राण्यै नमः इन्द्राणीमावाहयामि स्थापयामि। ॐ प्रजापतये नमः प्रजापतिमावाहयामि स्थापयामि। ॐ सर्पेभ्यो नमः सर्पानावाहयामि स्थापयामि। ॐ ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि।

इसके अनन्तर पंचलोकपालों का आवाहन किया जाता है- यथा- ॐ गणपतये नमः गणपतिमावाहयामि स्थापयामि। ॐ दुर्गायै नमः दुर्गामावाहयामि स्थापयामि। ॐ वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि। ॐ आकाशाय नमः आकाशमावाहयामि स्थापयामि। ॐ अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि।

इसके अनन्तर वास्तु एवं क्षेत्रपाल का आवाहन किया जाता है। ॐ वास्तोष्पये नमः वास्तोष्पतिमावाहयामि स्थापयामि। ॐ क्षेत्राधिपतये नमः क्षेत्राधिपतिमावाहयामि स्थापयामि।

इसके अनन्तर दशों दिशाओं में दिक्पालों को आवाहित एवं स्थापित किया जाता है। यथा-

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ सूर्यादि अनन्तान्त देवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदा भवन्तु।

इसके बाद सूर्यादि अनन्तान्तदेवताभ्यो नमः नामक मन्त्र से समस्त उपचारों द्वारा पूजन करना चाहिये। ग्रहों के ईशान भाग में असंख्यात रुद्र की स्थापना की जानी चाहिये। ॐ असंख्यातरुद्र देवताभ्यो नमः आवाहयामि स्थापयामि कहकर असंख्यात कलश के ऊपर वरुण एवं असंख्यात रुद्र दोनों का पूजन करना चाहिये।

इसके अनन्तर शान्ति विधानम् में बतायी गयी विधि के अनुसार कुशकण्डिका करके आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान करनी चाहिये। इसके बाद वराहुति एवं ग्रहाहुति देने का विधान इस प्रकार है।

ॐ गणपतये स्वाहा। ॐ अम्बिकायै स्वाहा। ॐ सूर्याय स्वाहा। ॐ चन्द्रमसे स्वाहा।ॐभौमाय स्वाहा।ॐबुधाय स्वाहा।ॐबृहस्पतये स्वाहा।ॐशुक्राय स्वाहा।ॐशनैष्चराय स्वाहा।ॐराहवे स्वाहा।ॐकेतवे स्वाहा।ॐईष्वराय स्वाहा।ॐउमायै स्वाहा।ॐस्कन्दाय स्वाहा। ॐविष्णवे स्वाहा।ॐब्रह्मणे स्वाहा।ॐइन्द्राय स्वाहा।ॐयमाय स्वाहा।ॐकालाय स्वाहा।ॐचित्रगुप्ताय स्वाहा।ॐअग्नये स्वाहा।ॐअöयः स्वाहा।ॐपृथिब्यै स्वाहा।ॐविष्णवे स्वाहा।ॐइन्द्राय स्वाहा।ॐइन्द्राण्यै स्वाहा।ॐप्रजापतये स्वाहा।ॐसर्पेभ्यः स्वाहा।ॐब्रह्मणे स्वाहा।ॐगणपतये स्वाहा।ॐदुर्गायै स्वाहा।ॐवायवे स्वाहा।ॐगणपतये स्वाहा।ॐआकाशाय स्वाहा।ॐअष्विभ्यां स्वाहा।ॐवास्तोष्पये स्वाहा।ॐक्षेत्राधिपतये स्वाहा।ॐइन्द्राय स्वाहा।ॐअग्नये स्वाहा।ॐयमाय स्वाहा।ॐनिर्ऋतये स्वाहा।ॐवरुणाय स्वाहा।ॐवायवे स्वाहा।ॐसोमाय स्वाहा।ॐईशानाय स्वाहा।ॐब्रह्मणे स्वाहा।ॐअनन्ताय स्वाहा।ॐअसंख्यात रुद्रेभ्यः स्वाहा ।

इसके अनन्तर प्रधान होम 1008, 108, 28 या 8 बार करने का विधान है । यथा-

ॐभूर्भुवः स्वः निर्ऋतये स्वाहा। ॐ भूर्भुवः स्वः मूलाधिपति इन्द्राय स्वाहा ।

ॐभूर्भुवः स्वः मूलस्य प्रत्याधिपति अöयः स्वाहा ।

इसके बाद उक्त चौबीसों देवताओं के लिये अट्ठाइस या आठ बार आहुतियाँ प्रदान करनी चाहिये। यथा-

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः विष्णवे स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः अष्टवसुभ्यः स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः वरुणाय स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः अजैकपदे स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः अहिर्बुध्न्याय स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः पूष्णे स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः यमाय स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः अग्नये स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः प्रजापतये स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः सोमाय स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः रुद्राय स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः अदितये स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः बृहस्पतये स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः सर्पेभ्यः स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः पितृभ्य स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः भगाय स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः अर्यमणे स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः सवित्रे स्वाहा । ॐभूर्भुवः स्वः

विश्वकर्मणे स्वाहा। ॐभूर्भुवः स्वः वायवे स्वाहा। ॐभूर्भुवः स्वः इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा। ॐभूर्भुवः स्वः मित्राय स्वाहा।

ॐइन्द्राय स्वाहा। ॐअग्नये स्वाहा। ॐयमाय स्वाहा। ॐनिर्ऋतये स्वाहा। ॐवरुणाय स्वाहा। ॐवायवे स्वाहा। ॐसोमाय स्वाहा। ॐईशानाय स्वाहा ॐब्रह्मणे स्वाहा। ॐअनन्ताय स्वाहा।

इसके बाद त्र्यम्बकं मन्त्र का 108 बार हवन करना चाहिये। ॐत्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टि वर्द्धनम् । ऊर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। स्वाहा।

ततोऽग्निपूजनम्-(उसके बाद अग्नि का पूजन करें)ॐअग्नेवैश्वानराय नमः। सकलपूजार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। इत्यग्निपूजनम्।

हवनीय द्रव्यं गृहीत्वा-ॐअग्नये स्विष्टकृते स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

ततो भूरादिनवाहुतयः- भूः स्वाहा। इदमग्नये न मम। भुवः स्वाहा। इदं वायवे न मम।। स्वः स्वाहा। इदं सूर्याय न मम।। अग्निवरुणाभ्यां स्वाहा। इदमग्निवरुणाभ्यां न मम।। अग्निवरुणाभ्यां स्वाहा। इदमग्निवरुणाभ्यां न मम। अग्नये अयसे स्वाहा। इदमग्नये अयसे न मम। वरुणाय सवित्रे विष्णवे विष्वेभ्यो देवेभ्यो मरुöयः स्वर्केभ्यश्च स्वाहा। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुöयः स्वर्केभ्यश्च न मम।। वरुणायाऽऽ दित्यायाऽदितये स्वाहा। इदं वरुणायाऽऽ दित्यायाऽदितये न मम। प्रजापतये स्वाहा इदं न मम। इत्याज्येन।।

सर्वप्रथम इन्द्रादि दशदिक्पालों को बलिदान देना चाहिये। उसके बाद ग्रहों को तथा क्षेत्रपाल को बलिदान देना चाहिये। ततो बलिदानम्- इन्द्रादि दश दिक्पालेभ्यो नमः। गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। हाथ में जल और अक्षत लेकर बोलें- इन्द्रादिदशदिक्पालेभ्यः सांगेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः एतान् सदीप दधि माषाक्षत बलीन् समर्पयामि। इति जलाक्षतान् त्यजेत्। ऐसा कहकर हाथ का जल एवं अक्षत त्याग दें। हाथ में पुष्प लेकर प्रार्थना करें- भो भो इन्द्रादिदशदिक्पालाः सांगाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे आयु कर्त्तारः क्षेमकर्त्तारः शान्तिकर्त्तारः पुष्टिकर्त्तारः तुष्टिकर्त्तारः वरदा भवत। हाथ का पुष्प समर्पित कर दें।

हाथ में जल लेकर बोलें- अनेन बलिदानेन इन्द्रादिदशदिक्पालाः प्रीयन्ताम्।

अब ग्रहों के बलिदान का विधान प्रकाशित है- सर्वप्रथम हाथ में गन्धाक्षत पुष्प लेकर नवग्रहों का ध्यान करके उनके ऊपर चढ़ा देतें है।

नवग्रहादिमण्डलस्थ देवताभ्यो नमः। गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

हाथ में जल एवं अक्षत लेकर- ग्रहेभ्यः सांगेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः अधिदेवता प्रत्यधिदेवता गणपत्यादि पंचलोकपाल वास्तोष्पति सहितेभ्यः एतान् सदीप दधि माषाक्षत बलीन्

समर्पयामि। इति जलाक्षतान् त्यजेत्। ऐसा कहकर हाथ का जल एवं अक्षत त्याग दें।

हाथ में पुष्प लेकर प्रार्थना करें- भो भो सूर्यादिग्रहाः सांगाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः अधिदेवता प्रत्यधिदेवता गणपत्यादि पंचलोकपाल वास्तोष्पति सहिताः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे आयु कर्त्तारः क्षेमकर्त्तारः शान्तिकर्त्तारः पुष्टिकर्त्तारः तुष्टिकर्त्तारः वरदा भवत। हाथ का पुष्प समर्पित कर दें। हाथ में जल लेकर बोलें- अनेन बलिदानेन सूर्यादिग्रहाः प्रीयन्ताम्। जल छोड़ देना चाहिये। अथवा नवग्रहों के प्रत्येक मन्त्रों से या नामों से पृथक्- पृथक् बलिदान भी दिया जा सकता है।

अब क्षेत्रपाल बलिदान का विधान विवृत है-ॐक्षेत्रपालाय नमः। सकलपूजार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। हाथ में पुष्प लेकर अग्रलिखित श्लोकों से क्षेत्रपाल की प्रार्थना हाथ जोड़कर करें।

नमो वै क्षेत्रपालस्त्वं भूतप्रेतगणैः सह।

पूजा बलिं गृहाणेमं सौम्यो भवतु सर्वदा।।

पुत्रान् देहि धनं देहि देहि मे गृहजं सुखम्।

आयुरारोग्य मे देहि निर्विघ्नं कुरु सर्वदा।।

क्षेत्रपालाय नमः प्रार्थनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि-

हाथ में जल अक्षत लेकर-ॐक्षेत्रपालाय सांगाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय मारीगणभैरव राक्षस कूष्माण्ड वेताल भूत प्रेत पिशाच शाकिनी डाकिनी पिशाचिनी गण सहिताय एतं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि।

प्रार्थयेत्- हाथ में पुष्प लेकर प्रार्थना करें- भो भो क्षेत्रपाल क्षेत्रं रक्षबलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे आयु कर्त्ता क्षेम कर्त्ता शान्तिकर्त्ता पुष्टिकर्त्ता तुष्टिकर्त्ता वरदो भव। हाथ में जल लेकर- अनेन बलिदानेन क्षेत्रपालः प्रीयताम्। कहकर जल छोड़ दें। तदनन्तर आचमन करके पूर्णाहुति प्रदान करनी चाहिये।

नारियल में रक्त वस्त्र आवेष्टित कर 12 या 6 या 4 स्रुव घी स्रुची में डालकर उसके ऊपर नारिकेल स्थापित कर ॐ पूर्णाहुत्यै नमः मन्त्र से पूजन करके स्रुची को उठाकर पूर्णाहुति देनी चाहिये।

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते। स्वाहा। इदमग्नये वैश्वानराय वसुरुü दित्येभ्यः शतक्रतवे सप्तवते अग्नयेऽयश्च न मम ।।

पूर्णाहुति देने के बाद वसोर्द्धारा हवन करने का विधान है। वसोः पवित्रमसि शतधारं व्वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु व्वसोः पवित्रेण शत धारेण सुप्वा कामधुक्षः स्वाहा।।

उसके बाद अग्नि की एक बार प्रदक्षिणा करके पश्चिम भाग में बैठ जाना चाहिये या स्थित हो जाना

चाहिये। ततो ऽग्निं प्रदक्षिणीकृत्य पश्चिमदेशे प्राङ्मुखोपविश्य।। कुण्ड के ईशान भाग से स्रुव द्वारा भस्म निकाल कर अनामिका अंगुलि से ललाट में, ग्रीवा में, दक्षिण भुजा के मूल में तथा हृदय में लगाना चाहिये।

संस्रव प्राशनम्।। आचमनम्।। पवित्राभ्यां मार्जनम्।। अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः।। ब्रह्मा के लिये पूर्णपात्र प्रदान करने का विधान है। ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम्।। कृतस्य मूलशान्तिहोमकर्मणो ऽ ¯तयाविहितमिदं पूर्णपात्रं सदक्षिणं ब्रह्मणे तुभ्यमहं सम्प्रददे।। इस मन्त्र को पढ़कर ब्रह्मा को पूर्णपात्र देना चाहिए तथा अग्रिम मन्त्र को पढ़कर उसको ग्रहण करने का विधान है।ॐद्यौस्त्वा ददातु पृथिवीत्वा प्रतिगृह्णातु।।

अग्नि के पश्चिम तरफ प्रणीता को उलट दे। प्रणीता विमोक करने पर निःसृत जल का उपयमन कुशा द्वारा मार्जन करे।

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते क्रण्वन्तुभेषजम्।।

उपयमन कुशा को अग्नि में प्रक्षिप्त कर ब्रह्म ग्रन्थि को खोल दें। उपयमन कुशानामग्नौ प्रक्षेपः ब्रह्मग्रन्थि विमोकः।।

अभिषेकः -

योऽसौ वज्र धरो देवो महेन्द्रो गज वाहनः।
मूल जात शिशोर्दोषं मातृपित्रोर्व्यपोहतु।।
योऽसौ शक्ति धरो देवो हुत् भुङ्गेष वाहनः।
सप्तजिह्वष्च देवोऽग्निर्मूलदोषं व्यपोहतु।।
योऽसौ दण्डधरो देवो धर्मो महिष वाहनः।
मूल जात शिशोर्दोषं व्यपोहतु यमो यमः।।
योऽसौ खड्गधरो देवो निर्ऋती राक्षसाधिपः।
प्रशामयतु मूलोत्थं दोषं गण्डान्तसम्भवम्।।
योऽसौ पाशधरो देवो वरुणश्च जलेश्वरः।
नक्रवाह प्रचेता वो मूलदोषं व्यपोहतु।।
योऽसौ देवौ जगत् प्राणो मारुतो मृगवाहनः।
प्रशामयतु मूलोत्थं दोषं बालस्यशान्तिदः।।
योऽसौ निधिपतिर्देवो खड्गभृद्वाजिवाहनः।
मातृपित्रो शिशुश्चैव मूलदोषं व्यपोहतु।।
अयोऽसौ पशुपतिर्देवः पिनाकी वृषवाहनः।

आश्लेषामूलगण्डान्तं दोषमाशु व्यपोहतुु।।
विघ्नेशो क्षेत्रपः दुर्गा लोकपाला नवग्रहाः।
मूल दोष प्रशमनं सर्वे कुर्वन्तु शान्तिदः।।
मूलर्क्षे जात बालस्य मातापित्रोर्धनस्य च।
भ्रातृज्ञाति कुलस्थानां दोषं सर्वं व्यपोहतु।।
योऽसौ वागीश्वरो नाम ह्यधिदेवो बृहस्पति।
मातृपितृशिशोश्चैव गण्डान्तं स व्यपोहतु।।
पितरः सर्वभूतानां रक्षन्तु पितरः सदा।
सार्प नक्षत्र जातस्य वित्तं च ज्ञाति बान्धवान्।।
इस प्रकार से ज्येष्ठा इत्यादि की भी शान्ति करनी चाहिये।
सुरास्त्वामभिषिंचन्तु ब्रह्मविष्णु महेश्वराः।
वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणोविभुः ।।
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते।
आखण्डलोग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा।
वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः।।
ब्रह्मणा सहिताः सर्वे दिक्पालाः पान्तु ते सदा।।
कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रियामतिः।
बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्तिः कान्तिश्तुष्टिश्च मातरः।।
एतास्त्वामभिषिंचन्तु देवपत्न्यः समागता।
आदित्यश्चन्üमा भौमो बुधजीवसितार्कजाः।।
ग्रहास्त्वामभिषिंचन्तु राहुः केतुश्च तर्पिताः।
देवदानव गन्धर्वा यक्षराक्षस पन्नगाः।।
ऋषयो मनवो गावो देवमातर एव च।
देवपत्न्योü मानागा दैत्याश्चाप्सरसाणाः।।
अस्राणि सर्व शस्त्राणि राजानो वाहनानि च ।
औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये।।
सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः।
एतेत्वामभिषिंचन्तु धर्मकामार्थ सिद्धये।।

अमृताभिषेको ऽस्तु ।। शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु ।।

इसके अनन्तर षिशु के समस्त अंगो का स्पर्श करते हुये पिता आशीर्वाद प्रदान करे।

अब घी से भरे हुये कॉसें के पात्र में माता एवं पिता बालक के मुख को देखें। इस अवसर पर रूपाधिष्ठातृसमस्त देवताभ्यो नमः का उच्चारण करना चाहिये। तदनन्तर इस पूरित घृतपात्र को यह कहते हुये दान दे देना चाहिये- कृतस्य मुखावलोकन कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं इदं घृतपूर्णकांस्यपात्रं सहिरण्यं दातुमहमुत्सृजे।

इस प्रकार ब्राह्मण भोजनादि का संकल्प का उत्तर पूजन करना चाहिये एवं विसर्जन करना चाहिये।

क्षमा प्रार्थना-

जपश्च्छिü तपश्शिछü यश्च्छिü शान्तिकर्मणि।

सर्वं भवतु में ऽच्छिü ब्राह्मणानां प्रसादतः।।

प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।

स्मरणादेव तद्विष्णोः संपूर्णं स्यादिति श्रुतिः ।।

यस्य स्मृत्याच नामोक्त्या तपोयज्ञ क्रियादिषु।

न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्।।

ॐ विष्णवे नमः ।। 3।।

तिलकाशीर्वादःµ श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते।

धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः।।

मन्त्रार्थाः सफला सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ।

शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव।।

यज्ञान्ते ब्राह्मणान्भोजयित्वा दीनानाथांश्चान्नादीना सन्तोष्य स्वयं सुहª न्मित्रादियुतो सोत्साहं सन्तुष्टो हविष्यं भुंजीतेति शिवम्।।

यज्ञान्त में ब्राह्मणों को भोजन कराकर अपने इष्ट मित्रों के साथ सानन्द मिष्ठान्नादि ग्रहण करना चाहिये।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न-1 प्रांगमुख का मतलब किस ओर मुख है?

क- पूर्व, ख- दक्षिण, ग-पश्चिम, घ- उत्तर।

प्रश्न-2 सप्तधान्य से मतलब है-

क- सात प्रकार का अन्न, ख- सात प्रकार का फल, ग- सात प्रकार का जल, घ- सात प्रकार का मिष्ठान्न।

प्रश्न 3- सर्षप है-

क- चना, ख- सरसों, ग- मूंग, घ- अरहर।

प्रश्न 4- रुद्री के पंचम अध्याय में कितनं मन्त्र है?

क- 66, ख- 67, ग- 68, घ- 69।

प्रश्न-5 तीर्थोदक क्या है?

क- तीर्थ का फल, ख- तीर्थ का जल, ग- तीर्थ की मिट्टी, ध- तीर्थ का पुष्प।

प्रश्न-6 क्षौर कर्म क्या है?

क- बाल कटवाना, ख- वृक्ष कटवाना, ग- पत्ते तोड़ना, घ-द्वार कटवाना।

प्रश्न-7 पंचांग पूजन में क्या नही है?

क- गणेश पूजन, ख- कलश स्थापन, ग-मातृका पूजन, घ- नवग्रह पूजन।

प्रश्न-8 मूल नक्षत्र के प्रधान देवता हैं-

क- निर्ऋति, ख-इन्द्र, ग- अप, घ- ब्रह्मा।

प्रश्न-9 मूल नक्षत्र के अधि देवता हैं-

क- निर्ऋति, ख-इन्द्र, ग- अप, घ- ब्रह्मा।

प्रश्न-10 मूल नक्षत्र के प्रत्यधि देवता हैं-

क- निर्ऋति, ख-इन्द्र, ग- अप, घ- ब्रह्मा ।

प्रश्न- 11 दक्षिण दिक्पाल हैं-

क- निर्ऋति, ख-इन्द्र, ग- यम, घ- ब्रह्मा ।

प्रश्न-12 उपरी मेखला का वर्ण क्या है ?

क- श्वेत, ख- कृष्ण, ग- पीत, घ- हरित ।

इस प्रकरण से आप मूल शान्ति की विधि को जान गये होगें। इसी प्रकार आप मूल शान्तिदकरा सकते है। अब आप मूल के अन्य नक्षत्रों के शान्ति का विधान आगे देखेंगे ।

1.4.2. मूल के अन्य नक्षत्रों की शान्ति में विशेष-

मूल के समस्त नक्षत्रों की शान्ति इसी प्रकार करायी जाती है परन्तु प्रत्येक नक्षत्र के देवता, अधिदेवता व प्रत्यधि देवता में अन्तर मिलता है। हमें जिस नक्षत्र की शान्ति करनी होती है उस नक्षत्र के देवताओं का प्रयोग वहाँ करना पड़ता है जहाँ इस प्रकरण में मूल के देवताओं का स्थान दिया गया है।

1-आश्लेषा नक्षत्र -ॐभूर्भुवः स्वः सर्पेभ्यो नमः। सर्पानावाहयामि स्थापयामि।

आश्लेषानक्षत्र के अधिदेवता -ॐ भूर्भुवः स्वः बृहस्पतये नमः। बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि।

आश्लेषा नक्षत्र के प्रत्यधि देवता -ॐ भूर्भुवः स्वः पितृभ्यो नमः। पितृनावाहयामि स्थापयामि।

प्रधानपीठ के चौबीस दलों के चौबीस देवता अग्रलिखित हैं-

ॐ भूर्भुवः स्वः भगाय नमः भगमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अर्यमणे नमः अर्यमाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सवित्रे नमः सवितारमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वकर्मणे नमः विश्वकर्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राग्नीभ्यां नमः इन्द्राग्नौ आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः मित्राय नमः मित्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अप आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान् देवानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अष्टवसुभ्यो नमः अष्टवसूनावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अजैकपदे नमः अजैकपादमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अहिर्बुध्न्याय नमः अहिर्बुध्न्यमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः पूष्णे नमः पूषाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः रुद्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अदितये नमः अदितिमावाहयामि स्थापयामि।

अब मण्डल से बाहर इन्द्रादिदश दिक्पालों का आवाहन करना चाहिये। जिसका क्रम इस प्रकार है- पूर्व में इन्द्र, अग्नि कोण में अग्नि, दक्षिण में यम, नैर्ऋत्य कोण में निर्ऋति, पश्चिम में वरुण, वायव्य कोण में वायु, उत्तर में सोम, ईशानकोण में ईशान, ईशान और पूर्व के बीच में ब्रह्मा एवं पश्चिम तथा नैर्ऋत्य के बीच में अनन्त को आवाहित करना चाहिये। उक्त दिशाओं में अक्षतपुंज के ऊपर सोपाड़ी रखकर अक्षत छोड़ते हुये आवाहन किया जाता है।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तमावाहयामि स्थापयामि।

हाथ में अक्षत लेकर - सर्पादिदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदा भवन्तु। यह कहकर समस्त आवाहित देवताओं की प्राणप्रतिष्ठा करे।

सर्पादिदेवताभ्यो नमः कहकर समस्त प्रकार से इनका पूजन करना चाहिये।

2-मघा नक्षत्र देवता -ॐभूर्भुवः स्वः पितृभ्यो नमः। पितृनावाहयामि स्थापयामि।

मघानक्षत्र के अधिदेवता आश्लेषा नक्षत्र के देवता-ॐभूर्भुवः स्वः सर्पेभ्यो नमः। सर्पानावाहयामि स्थापयामि।

मघा नक्षत्र के प्रत्यधि पूर्वाफाल्गुनि के देवता- ॐ भूर्भुवः स्वः भगाय नमः। भगमावाहयामि स्थापयामि।

मघा नक्षत्र के प्रधान पीठ के देवताओं को चौबीस दलों पर इस प्रकार स्थापित करना चाहिये-

ॐ भूर्भुवः स्वः अर्यमणे नमः अर्यमाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सवित्रे नमः सवितारमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वकर्मणे नमः विश्वकर्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राग्नीभ्यां नमः इन्द्राग्नौ आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः मित्राय नमः मित्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अप आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान् देवानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अष्टवसुभ्यो नमः अष्टवसूनावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अजैकपदे नमः अजैकपादमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अहिर्बुध्न्याय नमः अहिर्बुध्न्यमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः पूष्णे नमः पूषाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः रुद्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अदितये नमः अदितिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः बृहस्पतये नमः बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि।

मण्डल से बाहर दश दिक्पालों को इस प्रकार आवाहित किया जाता है-

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तमावाहयामि स्थापयामि।

हाथ में अक्षत लेकर - पित्रादिदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु। यह कहकर समस्त आवाहित देवताओं की प्राणप्रतिष्ठा करे।

पित्रादिदेवताभ्यो नमः कहकर समस्त प्रकार से इनका पूजन करना चाहिए।

3-ज्येष्ठा नक्षत्र के देवता -ॐभूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ज्येष्ठा नक्षत्र के अधिदेवता अनुराधा के देवता-ॐ भूर्भुवः स्वः मित्राय नमः मित्रमावाहयामि स्थापयामि।

ज्येष्ठा नक्षत्र के प्रत्यधिदेवता मूल के निर्ऋति देवता-ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ज्येष्ठा नक्षत्र शान्ति हेतु चौबीस दलों पर अधोलिखित देवताओं को स्थापित करना चाहिये-

ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अप आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान् देवानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अष्टवसुभ्यो नमः अष्टवसूनावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अजैकपदे नमः अजैकपादमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अहिर्बुध्न्याय नमः अहिर्बुध्न्यमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः पूष्णे नमः पूषाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः रुद्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अदितये नमः अदितिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः बृहस्पतये नमः बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्पेभ्यो नमः सर्पानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः पितृभ्यो नमः पितृन् आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगाय नमः भगमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अर्यमणे नमः अर्यमाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सवित्रे नमः सवितारमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वकर्मणे नमः विश्वकर्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राग्नीभ्यां नमः इन्द्राग्नौ आवाहयामि स्थापयामि।

मण्डल से बाहर दिक्पाल देवताओं को इस प्रकार आवाहित किया जाता है-

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तमावाहयामि स्थापयामि।

हाथ में अक्षत लेकर - इन्द्रादिदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदा भवन्तु। यह कहकर समस्त आवाहित देवताओं की प्राणप्रतिष्ठा करे। इन्द्रादिदेवताभ्यो नमः कहकर समस्त प्रकार से इनका पूजन करना चाहये।

4-रेवती नक्षत्र के देवता -ॐभूर्भुवः स्वः पूष्णे नमः पूषाणमावाहयामि स्थापयामि।।

रेवती नक्षत्र के अधिदेवता उत्तराभद्रपद नक्षत्र के देवता-ॐ भूर्भुवः स्वः अहिर्बुध्न्याय नमः

अहिर्बुध्न्यमावाहयामि स्थापयामि।।

रेवती नक्षत्र के प्रत्यधि देवता अश्विनी नक्षत्र के देवता-ॐभूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि।।

चौबीस दलों के देवता इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः रुद्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अदितये नमः अदितिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः बृहस्पतये नमः बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्पेभ्यो नमः सर्पानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः पितृभ्यो नमः पितृन् आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगाय नमः भगमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अर्यम्णे नमः अर्यमाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सवित्रे नमः सवितारमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वकर्मणे नमः विश्वकर्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राग्नीभ्यां नमः इन्द्राग्नौ आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः मित्राय नमः मित्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अप आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान् देवानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अष्टवसुभ्यो नमः अष्टवसूनावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अजैकपदे नमः अजैकपादमावाहयामि स्थापयामि।

मण्डल के बाहर दिक्पालों का स्थापन-

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तमावाहयामि स्थापयामि।

हाथ में अक्षत लेकर - पूषादिदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु। यह कहकर समस्त आवाहित देवताओं की प्राणप्रतिष्ठा करे। पूषादिदेवताभ्यो नमः कहकर समस्त प्रकार से इनका पूजन करना चाहये।

6- अश्विनी नक्षत्र के देवता -ॐभूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि। अश्विनी नक्षत्र के अधिदेवता रेवती के देवता -ॐभूर्भुवः स्वः पूष्णे नमः पूषाणं आवाहयामि स्थापयामि। अश्विनी नक्षत्र के प्रत्यधि देवता भरणी के देवता-ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

चौबीस दलों के देवता इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः रुद्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अदितये नमः अदितिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः बृहस्पतये नमः बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्पेभ्यो नमः सर्पानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः पितृभ्यो नमः पितृन् आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगाय नमः भगमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अर्यम्णे नमः अर्यमाणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सवित्रे नमः सवितारमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वकर्मणे नमः विश्वकर्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राग्नीभ्यां नमः इन्द्राग्नौ आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः मित्राय नमः मित्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अप आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः विश्वान् देवानावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अष्टवसुभ्यो नमः अष्टवसूनावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अजैकपदे नमः अजैकपादमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अहिर्बुध्न्याय नमः अहिर्बुध्न्यमावाहयामि स्थापयामि।।

मण्डल के बाहर दिक्पालों का स्थापन-

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोममावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तमावाहयामि स्थापयामि।

हाथ में अक्षत लेकर - अश्विभ्यामादिदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु। यह कहकर समस्त आवाहित देवताओं की प्राणप्रतिष्ठा करे। अश्विभ्यामादिदेवताभ्यो नमः कहकर समस्त प्रकार से इनका पूजन

करना चाहिए।

शेष विधि का विधान पूर्वोक्त वर्णित विधि के अनुसार करना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1 आश्लेषा नक्षत्र के देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-पितृ, घ- भग।

प्रश्न 2 आश्लेषा नक्षत्र के अधि देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-पितृ, घ- भग।

प्रश्न 3 आश्लेषा नक्षत्र के प्रत्यधि देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-पितृ, घ- भग।

प्रश्न 4 मधा नक्षत्र के देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-पितृ, घ- भग।

प्रश्न 5 मघा नक्षत्र के अधि देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-पितृ, घ- भग।

प्रश्न 6 मघा नक्षत्र के प्रत्यधि देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-पितृ, घ- भग।

प्रश्न 7 ज्येष्ठा नक्षत्र के देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-पितृ, घ- इन्द्र।

प्रश्न 8 ज्येष्ठा नक्षत्र के अधि देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-मित्र, घ- भग।

प्रश्न 9 ज्येष्ठा नक्षत्र के प्रत्यधि देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-निर्ऋति, घ- भग।

प्रश्न 10 रेवती नक्षत्र के देवता है-

क- सर्प, ख- पूषा, ग-पितृ, घ- भग।

प्रश्न 11 रेवती नक्षत्र के अधि देवता है-

क- सर्प, ख- वृहस्पति, ग-पितृ, घ- अहिर्बुध्न्य।

प्रश्न 12 रेवती नक्षत्र के प्रत्यधि देवता है-

क- अश्विनी, ख- वृहस्पति, ग-पितृ, घ- भग।

1.5 सारांश

मूल नक्षत्र में जन्म लेने वाले शिशु की मूल शान्ति की निश्चितता के अनन्तर उत्पन्न शिशु के बारहवें दिन या उसके जन्म नक्षत्र में, शुभदिन में या आठवें वर्ष में मूल शान्ति करानी चाहिये। संकल्प में शान्ति पूर्वक मूल कर रहा हूं। पूर्वांग के रूप में पंचांगपूजन का उल्लेख करके पूजन स्थल पर पंचगव्यादि का प्रक्षेपण करके नैर्ऋत्य दिशा में स्थण्डिल बनाकर अग्नि की स्थापना करें। एक वेदी पर चौबीस दल कमल बनाकर मध्य में छिद्रादि से वर्जित सुन्दर चार ताम्र कुम्भ को कलश स्थापन विधि से स्थापित का स्वर्ण या यथाशक्ति निर्ऋति की प्रतिमा बनाकर अग्न्युत्तारण पूर्वक पंचामृत से या पृथक् पृथक् स्नान कराकर स्थाली में रख दें। विशेष रूप से जो मूल नक्षत्र है उसके अधिनक्षत्र एवं प्रत्यधि नक्षत्र के सहित पूजन एवं हवन करने का विधान है। जैसे प्रधान नक्षत्र यदि मूल है तो उससे एक नक्षत्र पूर्व ज्येष्ठा नक्षत्र अधि नक्षत्र एवं उसके बाद पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र प्रत्यधि नक्षत्र के रूप में जानी जायेगी तथा पूजित होगी। तदनन्तर पंचभूसंस्कार करके अग्नि की स्थापना कर नवग्रह मण्डलस्थ देवताओं की स्थापना एवं पूजा करनी चाहिये। उसके बाद कुशकण्डिका पूर्वक अग्नि पूजन एवं मेखला पूजन, योनि पूजन, नाभि पूजन, कण्ठ पूजन इत्यादि करके आघाराज्याहुतियों को प्रदान कर सूर्यादिनवग्रहों की समिधाओं सहित आहुतियां प्रदान कर प्रधान हवन करना चाहिये। प्रधान हवन में प्रधान देवता एवं अधि देवता तथा प्रत्यधि देवता को 108-108 बार हवन करके अन्यान्य समस्त देवताओं को आहुतियां दी जानी चाहिये। तदनन्तर दिक्पालों को बलिदान करके नवग्रह बलिदान एवं क्षेत्रपाल बलिदान देकर पूर्णाहुति पूजन पूर्वक पूर्णाहुति एवं वसोर्धारा हवन करना चाहिये। उसके बाद अग्नि की एक बार प्रदक्षिणा करके पश्चिम भाग में बैठ जाना चाहिये या स्थित हो जाना चाहिये। कुण्ड के ईशान भाग से स्रुव द्वारा भस्म निकाल कर अनामिका अंगुलि से ललाट में, ग्रीवा में, दक्षिण भुजा के मूल में तथा हृदय में लगाना चाहिये। उसके बाद संस्रव प्राशन, आचमन, पवित्रकों से मार्जन करके अग्नि में पवित्र की प्रतिपत्ति करके ब्रह्मा के लिये पूर्णपात्र प्रदान करने का विधान है। तथा अग्रिम मन्त्र को पढ़कर उसको ग्रहण करने का विधान है।ॐद्यौस्त्वा ददातु पृथिवीत्वा प्रतिगृह्णातु ।।

अग्नि के पश्चिम तरफ प्रणीता को उलट दे । प्रणीता विमोक करने पर निःसृत जल का उपयमन कुशा द्वारा मार्जन करे । उपयमन कुशा को अग्नि में प्रक्षिप्त कर ब्रह्म ग्रन्थि को खोल दें। उसके कलशों से

जल निकाल कर दिये गये पौराणिक मन्त्रों से माता पिता सहित शिशु का अभिषेक करना चाहिये। उसके बाद घी या तेल से किसी कांस्य पात्र को इस प्रकार रखना चाहिये जिसमें जातक एवं उसके पिता का मुह दिखाई पड़े। इस प्रकार अपना एवं शिशु का उस तैल पात्र या घृत पात्र में अवलोकन कर उसका दान कर देना चाहिये। इसे छाया पात्र दान के नाम से जाना जाता है। तदनन्तर आवाहित देवताओं का विसर्जन कर अपने से बड़े बूढ़ों का आशीर्वाद लेकर सकुटुम्ब ब्ा्रह्मण भोजनादि कराकर स्वयं प्रसाद ग्रहण करना चाहिये। इस अवसर दीनों एवं अनाथों को भी दानादि करने का विधान है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली -

अवलोकन - देखना, अभिषेक- जल छीटना, अरिष्टकार- कष्टकारी, अक्षतपुंज- कच्चे चावलों का समूह, अनामिका- कनिष्ठा के बगल वाली अंगुलि का नाम, आज्य- हवन हेतु सुसंस्कृत घी, आवाहन- आवाहित करना, इष्ट मित्र- उपकारक मित्र, उपलेपन- लीपना, उपयमन कुशा- सात कुशों का समूह, कांस्य पात्र- कासें का वर्तन, कुम्भ- घड़ा, घृत पात्र- घी का वर्तन, ताम्बूल पत्र- पान का पत्ता, तुरीयजः- चतुर्थ चरण में जन्मा हुआ, निःसृत- निकले हुये, निकृन्तन- कटा कर, नैवेद्य- प्रसाद हेतु पदार्थ या व्यंजन, प्रणीता- यज्ञ पात्र, प्रक्षिप्त कर- डाल कर, विमोक- उलटा करना, पंच भूसंस्कार- अग्नि स्सथापनीय भूमि के पांच संस्कार, प्रविधि- उत्तम विधि, प्रदक्षिणा- परिक्रमा, प्रधान पीठ- मुख्य पीठ, पंच पल्लव- आम, वट, पीपल, पाकड़ एवं गूलर के पत्ते, पंचरत्न- पांच प्रकार के रत्न, पंचामृत- पांच अमृत यानी गाय का दूध, गाय की दही, गाय का घी, शहद एवं शक्कर, परित्याग- छोड़ देना, प्रतिष्टा- प्रति की स्थापना, पातालस्थ- पाताल में स्थित, पुष्पसार- इत्र, प्राण प्रतिष्ठा- प्राण के प्रति की स्थापना, भूमिष्ठ- भूमि पर स्थित, मण्डलस्थ- मण्डल पर स्थित, मेखला- सीढ़ी, श्यालक- शिशु का मामा, शतक्षिद्रकलश- सौ छिद्र वाला कलश, संकटापन्न- संकट से घिरा हुआ, सम्यक्- उचित, समिधा- हवन योग्य लकड़ियां, सवंर्धित- सम्यक् वृद्धि, सप्तमृत्तिका- सात स्थान की मिट्टी, स्थण्डिल- चौकोर वेदी, समर्पयामि- समर्पित करता हूं, सम्मार्जन कुशा- पांच कुशो का समूह मार्जन हेतु, हवन हेतु, हवनीय- हवन योग्य, रेखाकरण- रेखा खीचना, लोकोपकारक- समाजोपयेगी, हरित- हरा, कृष्ण- काला, पीत- पीला, श्वेत- सफेद, रक्त- लाल, वर्जित- त्याज्य।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर -

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इस उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

1.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-घ, 3-ख, 4-घ, 5-क, 6-घ, 7-ख, 8-घ, 9- क, 10- ख।

1.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-क, 3-ख, 4-ख, 5-ख, 6-क, 7-घ, 8-क, 9- ग, 10- घ।

1.3.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ख, 2-क, 3-ग, 4-क, 5-ख, 6-ख, 7-क, 8-क।

1.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-क, 3-ख, 4-क, 5-ख, 6-क, 7-घ, 8-क, 9- ख, 10- ग,11- ग, 12- क।

1.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-ग, 5-क, 6-घ, 7-घ, 8-ग, 9- ग, 10- ख, 11- घ, 12-क।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मूल शान्तिः।

2-शान्ति- प्रकाशः।

3-कर्मकाण्ड- प्रदीपः।

4-शान्ति- विधानम्।

5-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

6-यजुर्वेद- संहिता।

7- ग्रह- शान्तिः।

1.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- मुहूर्त्त चिन्तामणिः ।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग ।

3- पूजन विधानम् ।

1.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- मूल का परिचय दीजिये।

2- मूल शान्ति के सन्दर्भ में विभिन्न मत मतान्तरों का वर्णन कीजिये।

3- मूल वास के बारे में आप क्या जानते है? वर्णन कीजिये।

4- मूल शान्ति विधि का विधान वर्णित कीजिये।

5- मूल से संबंधित अन्य नक्षत्रों के शान्ति विधियों का वर्णन कीजिये।

6- पंच भू संस्कार क्या है? सविधि लिखिये।

7- पौराणिक अभिषेक विधि का वर्णन कीजिये।

8 मूल शान्ति की हवन विधि का वर्णन कीजिये।

9- पूर्णाहुति के अनन्तर की विधि बतलाइये।

10- पंचांग पूजन से क्या तात्पर्य है? वर्णित करें।

इकाई - 2 नवग्रह शान्ति

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में नवग्रह संबंधी शान्ति प्रविधि का अध्ययन का आप अध्ययन करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की शान्ति प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। किसी भी जातक का जीवन यदि नवग्रहों की दशा या दृष्टि या संबंध के कारण कष्टमय हो गया है तो उसकी शान्ति आप कैसे करेगें, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

भारतीय संस्कृति के अनुसार ग्रहों की संख्या नौ बतलाई गयी है जिसे नवग्रह के रूप में जाना जाता है। इन्हे क्रमशः सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, बृहसपति, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु के नाम से जाना जाता है। किसी भी जातक का जन्म जब होता है तो उस समय किसी न किसी ग्रह का प्रभाव रहता ही है। इन नवग्रहों में से शनि, राहु, केतु को पाप ग्रह, सूर्य एवं मंगल को क्रूर ग्रह एवं अन्य ग्रहों को शुभग्रह जाना जाता है। इनमें से पाप एवं क्रूर ग्रहों के प्रभाव से संबंध होने के कारण जातक का जीवन संकटापन्न होता है। जातक के परिवार का सीधा-सीधा संबंध होने के कारण इनसे संबंधित लोगों का भी जीवन प्रभावित होता है। इसलिये शान्ति कराने की आवश्यकता होती है। इसी शान्ति प्रविधि को नवग्रह शान्ति के नाम से जाना जाता है।

इस इकाई के अध्ययन से आप नवग्रह शान्ति करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे संबंधित व्यक्ति का ग्रह संबंधी दोषों से निवारण हो सकेगा जिससे वह अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, समाज कल्याण की भावना का पूर्णतया ध्यान देना, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान सहित वर्णन करने का प्रयास करना एवं वृहद् एवं संक्षिप्त दोनों विधियों के प्रस्तुतिकरण का प्रयास करना आदि।

2.2 उद्देश्य-

उपर्युक्त अध्ययन से आप शान्ति की आवश्यकता को समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते है।

1 कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

2 कर्मकाण्ड की शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।

3 कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

4 प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

5 लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

6 समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

2.3 नवग्रह शान्ति

2.3.1 नवग्रहों का परिचय

ग्रहाः राज्यं प्रयच्छन्ति ग्रहाः राज्यं हरन्ति च के अनुसार ग्रह राज्य प्रदान करने वाले तथा राज्य का हरण करने वाले भी होते है। इसका तात्पर्यार्थ आप समझ गये होगें कि ग्रह ही मानव को सुख प्रदान करने वाले या दुख प्रदान करने वाले है। अर्थात् ग्रह यदि अनुकूल है तो सुख तथा प्रतिकूल है तो दुख प्रदान करते है। ग्रहों के अनुकूलता प्रतिकूलता का विचार ज्योतिष शास्त्र से किया जाता है। लेकिन सामान्य रूप से परिचय इस प्रकार है-

जब किसी भी व्यक्ति का जन्म होता है तो उस समय कोई न कोई लग्न अवश्य रहता है। इनकी संख्या बारह बतलाई गयी है जिन्हें मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ एवं मीन के नाम से जाना जाता है। इन्ही नामों को राशि के नाम से भी जाना जाता है। इनका ग्रहों संबंध बताते हुये कहा गया है कि मेष एवं वृश्चिक राशि का स्वामी मंगल है। वृष एवं तुला राशि का स्वामी शुक्र है। कन्या एवं मिथुन राशि का स्वामी बुध है। मीन एवं धनु राशि का स्वामी गुरु है। मकर एवं कुम्भ राशि का स्वामी शनि है। सिंह राशि का स्वामी सूर्य है। कर्क राशि का स्वामी चन्द्रमा है। राहु एवं केतु को छाया ग्रह के रूप में माना गया है। जब हम जन्मांग बनाते है तो उसमें बारह भाव बनाते है। इनमें एक एक राशियों का अंक लिखा गया होता है। क्रमशः उन्हे उसी क्रम के नामों से जाना जाता है। जैसे 1 अर्थात् मेष राशि, 2 अर्थात् वृष राशि, 3 अर्थात् मिथुन राशि, 4 अर्थात् कर्क राशि, 5 अर्थात् सिंह राशि, 6 अर्थात् कन्या राशि, 7 अर्थात् तुला राशि, 8 अर्थात् वृश्चिक राशि, 9 अर्थात् धनु राशि, 10 अर्थात् मकर राशि, 11 अर्थात् कुम्भ राशि, 12 अर्थात् मीन राशि है। बारह भावों ग्रहों के स्थित वशात् शुभत्व एवं अशुभत्व का विचार करते है। यदि ग्रह शुभ युक्त है तो शुभ फल दायी तथा अशुभ है तो अशुभ फल दायी योग बनेगा। अशुभ फल दायी परिस्थिति में संबंधित व्यक्ति को कष्टकर स्थितियों का सामना न करना पड़े इसके लिये नवग्रह शान्ति का विधान किया गया है।

नवग्रहों के अनुकूलता एवं प्रतिकूलता का विचार करते हुये कहा गया है कि कोई भी ग्रह यदि अपने शत्रु के घर में बैठा है तो वह अपना पूरा फल नही दे पायेगा। साथ ही यह भी कहा गया शत्रु ग्रहों की दृष्टि भी पूर्ण फल प्रदान करने में बाधक होती है। दृष्टि के सन्दर्भ में कहा गया है कि पश्यन्ति सप्तमं सर्वे शनि जीव कुजा ग्रहाः। त्रिदश त्रिकोण चतुरष्टमान्। अर्थात् सभी ग्रह अपने से सप्तम स्थान

को देखते है । शनि इसके अलावा तीसरे एवं दसवें स्थान को, बृहस्पति पांचवे एवं नवें स्थान को तथा मंगल चौथे एवं आठवें स्थान को अतिरिक्त देखते है । यह विचार पूर्ण दृष्टि को आधार मानकर किया गया है। पाद दृष्टि का विचार इस प्रकरण में नही किया है क्योंकि उसका विशद रूप में विचार ज्योतिष शास्त्र का विषय है ।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा । अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है -

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं । अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है । प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है -

प्रश्न 1- इनमें से छाया ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- शनि, घ- राहु।

प्रश्न 2- सिंह राशि का स्वामी कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- शनि, घ- राहु।

प्रश्न 3- मेष राशि का स्वामी कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- शनि, घ- राहु।

प्रश्न 4- मकर राशि का स्वामी कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- शनि, घ- राहु।

प्रश्न 5- कन्या राशि का स्वामी कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- बुध, घ- राहु।

प्रश्न 6- वृष राशि का स्वामी कौन है?

क- सूर्य, ख- शुक्र, ग- शनि, घ- राहु।

प्रश्न 7- कर्क राशि का स्वामी कौन है?

क- चन्द्रमा, ख- मंगल, ग- शनि, घ- राहु।

प्रश्न 8- चौथे एवं आठवें स्थान को कौन देखता है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- शनि, घ- राहु।

प्रश्न 9- तीसरे एवं दसवें स्थान को कौन देखता है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- शनि, घ- राहु।

प्रश्न 10 - पांचवें एवं नवें स्थान को कौन देखता है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- शनि, घ- गुरू।

प्रश्न 11- ग्यारहवीं राशि से क्या तात्पर्य है?

क- धनु, ख- मकर, ग- कुम्भ, घ- मीन।

प्रश्न 12- बारहवीं राशि से क्या तात्पर्य है?

क- धनु, ख- मकर, ग- कुम्भ, घ- मीन ।

इस प्रकरण में आपने नवग्रहों का सामान्य परिचय प्राप्त किया। इसके अध्ययन से नवग्रहों के बारे में आप सामान्य रूप से जान गये होगें। अब हम अग्रिम प्रकरण में आपको नवग्रहों का मानव जीवन से किस प्रकार का संबंध है यह बता सकते हैं ।

2.3.2 नवग्रहों का मानव जीवन से संबंध-

आशा है कि नवग्रहों का परिचय आपने पूर्व प्रकरण में पूरी तरह पढ़ लिया होगा। अब इसमें प्रत्येक ग्रहों का मानव जीवन से किस प्रकार संबंध है इसको बताया जायेगा। इसके ज्ञान से नवग्रहों की प्रकृति एवं गुणों की विशद रूप से जानकारी आप रख पायेगें जो नवग्रह शान्ति हेतु आवश्यक होगी ।

मित्रों मानव जीवन का ऐसा कोई क्रिया कलाप नही होगा जिसका संबंध नवग्रहों से नही होगा। अर्थात् समस्त क्रिया कलापों से ग्रहों का संबंध है। इसको जान लेने से मानव जीवन का ग्रहों से संबंध ज्ञात हो जायेगा। मानव जीवन के सम्पूर्ण क्रिया कलापों को बारह भावों में बाटा गया है। जिन्हे प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि भावों के रूप में जाना जाता है। प्रत्येक भाव में स्थित अंक उसके अधिपति ग्रह के बारे में बताता है जिसका प्रयोग फलादेश में किया जाता है। फलदीपिका नामक ग्रन्थ के दूसरे अध्याय में बताया गया है कि तांबा, सोना, पिता, शुभ फल, धैर्य, शौर्य, युद्ध में विजय, आत्मा, सुख, प्रताप, राजसेवा, शक्ति, प्रकाश, भगवान शिव संबंधी कार्य, वन या पहाड़ में यात्रा, होम कार्य में प्रवृत्ति, देवस्थान, तीक्ष्णता, उत्साह आदि का विचार सूर्य से करना चाहिये। माता का कुशल, चित्त की प्रसन्नता, समुद्र सनन, सफेद चवर, छत्र, सुन्दर पंखे, फल, पुष्प, मुलायम वस्तु, खेती, अन्न, कीर्ति, मोती, चांदी, कांसा, दूध, मधुर पदार्थ, वस्त्र, जल, गाय, स्त्री प्राप्ति, सुखपूर्वक भोजन, सुन्दरता का विचार चन्द्रमा से किया जाता है। सत्व, पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले पदार्थ, भाई बहनों के गुण, क्रूरता, रण, साहस, विद्वेष, रसोंई की अग्नि, सोना, ज्ञाति यानी दायाद, अस्त्र, चोर, उत्साह, दूसरे पुरुष की स्त्री में रति, मिथ्या भाषण, वीर्य, चित्त की समुन्नति, कालुष्य, व्रण, चोट,

सेनाधिपत्य आदि का विचार मंगल से करना चाहिये। पाण्डित्य, अच्छी वाक् शक्ति, कला, निपुणता, विद्वानों द्वारा स्तुति, मामा, वाक् चातुर्य, उपासना आदि में पटुता, विद्या में बुद्धि का योग, यज्ञ, भगवान, विष्णु संबंधी धार्मिक कार्य, सत्य वचन, सीप, विहार स्थल, शिल्प, बन्धु, युवराज, मित्र, भानजा, भानजी आदि का विचार बुध से किया जाता है। ज्ञान, अच्छे गुण, पुत्र, मंत्री, अच्छा आचार या अपना आचरण, आचार्यत्व, माहात्म्य, श्रुति, शास्त्र स्मृति का ज्ञान, सबकी उन्नति, सद्गति, देवताओं और ब्राह्मणों की भक्ति, यज्ञ, तपस्या, श्रद्धा, खजाना , विद्वत्ता, जितेन्द्रियता, सम्मान, दया आदि का विचार बृहस्पति से करना चाहिये। स्त्री के लिये पति का विचार भी बृहस्पति से किया जाना चाहिये। सम्पत्ति, सवारी, वस्त्र, निधि यानी जमीन के अन्दर गड़ा हुआ या संग्रह किया हुआ द्रव्य, नाचाने, गाने एवं बाद्य बजाने का योग,सुगंधित पुष्प, रति, शैया और उससे संबंधित व्यापार, मकान, धनिक होना, वैभव, कविता का सुख, विलास, मंत्रित्व, सरस उक्ति, विवाह या अन्य शुभ कर्म, उत्सव आदि का विचार शुक्र से करना चाहिये। पुरुष के लिये स्त्री सुख का विचार शुक्र से किया जा सकता है। यह कहा जा सकता है कि पति का विचार बृहस्पति से तथा स्त्री का विचार शुक्र से करना चाहिये। आयु, मरण, भय, पतन, अपमान, विमारी, दुख, दरिद्रता, बदनामी, पाप, मजदूरी, अपवित्रता, निन्दा, आपत्ति, कलुषता, मरने का सूतक, स्थिरता, नीच व्यक्तियों का आश्रय, भैंस, तन्द्रा, कर्जा, लोहे की वस्तु, नौकरी, दासता, जेल जाना, गिरफ्तार होना, खेती के साधन आदि का विचार शनि से करना चाहिये।

इस प्रकार आपने या देखा कि मानव जीवन के लिये आवश्यक वस्तुओं का संबंध किसी न किसी ग्रह से अवश्य पाया गया। अतः आप कह सकते है कि ग्रहों का मानव जीवन से प्रत्यक्षतः संबंध है।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- तांबा से संबंधित ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- शनि, घ- राहु।

प्रश्न 2- मोती से संबंधित ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- चन्द्रमा, घ- राहु।

प्रश्न 3- सेनाधिपत्य से संबंधित ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- चन्द्रमा, घ- राहु।

प्रश्न 4- पाण्डित्य से संबंधित ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- बुध, घ- राहु।

प्रश्न 5- आचार्यत्व से संबंधित ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- बृहस्पति, ग- चन्द्रमा, घ- राहु।

प्रश्न 6- वाद्य से संबंधित ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- शुक्र, घ- राहु।

प्रश्न 7- जेल जाने से संबंधित ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- चन्द्रमा, घ- शनि।

प्रश्न 8- पिता का कारक ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- चन्द्रमा, घ- राहु।

प्रश्न 9- माता का कारक ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- चन्द्रमा, घ- राहु।

प्रश्न 10- कविता से संबंधित ग्रह कौन है?

क- सूर्य, ख- मंगल, ग- चन्द्रमा, घ- शुक्र।

इस प्रकरण में आपने नवग्रहों का मानव जीवन से कैसे संबंध है इसका ज्ञान प्राप्त किया। आशा है इसके बारे में आप जान गये होगें। अब हम किसी ग्रह की शान्ति का विधान कैसे करेगे इसका वर्णन करने जा रहे है जो इस प्रकार है-

2.4 नवग्रह शन्ति का विधान

2.4.1 सूर्य ग्रह शान्ति का विधान

मदन रत्न में लिखा गया है कि हस्त नक्षत्र संयुक्त सूर्यवार से सात रविवार तक भक्ति पूर्वक व्रत करके प्रति रविवार को रक्त पुष्प एवं अक्षत से सूर्य की पूजा करके सातवें रविवार को प्रातः काल स्नानादि करके श्वेत धौत वस्त्र धारण कर आसन पर बैठकर अपने दक्षिण भाग में पूजन सम्भारों को रखकर सपत्नीक (यदि हो तो) दो बार आचमन कर प्राणायामादि करके शांतिपाठ पढ़कर लक्ष्मीनारायण इत्यादि देवताआंे को प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर संकल्प करना चाहिये।

ॐ श्री विष्णुर्विष्णर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य श्री ब्रह्मणोन्हि द्वितीये परार्द्धे विष्णु पदे श्री श्वेत वाराह कल्पे वैवश्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे युगे कलियुगे

कलिप्रथम चरणे जम्बू द्वीपे भूर्लोके भारतवर्षे भरत खण्डे आर्यावर्तैकदेशे अमुक क्षेत्रे अमुक संवत्सरे अमुकायने अमुकऋतौ महामांगल्यप्रदमासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक नक्षत्रे अमुक योगे अमुक करणे अमुकराशि स्थिते श्रीचन्द्रे अमुक राशिस्थिते श्री सूर्ये अमुक राशिस्थिते देवगुरौ अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुतिस्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम कलत्रादिभिः सह जन्म राशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद् गोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्ट स्थान स्थित सूर्येण सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीय एकादश शुभ स्थान स्थितवद् उत्तम फल प्राप्त्यर्थं तथा दशा अन्तरदशा उपदशा-जनित-पीडा-ल्पायु अधिदेवाधिभौतिक आध्यात्मिक जनित क्लेश निवृत्ति पूर्वकं शरीरे आरोग्यार्थं परमैश्वर्यादि प्राप्त्यर्थं श्रीसूर्यनारायण प्रसन्नार्थं च आदित्य शान्तिं करिष्ये।

तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये । तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि शान्तिविधानानुसारेण कुर्यात्।

संकल्प के अनन्तर गणपति पूजन से आचार्य वरणान्त समस्त प्रक्रियाओं का सम्पादन करना चाहिये । तदनन्तर अग्नि स्थापन कर उक्त विधान से ग्रह वेदी का निर्माण कर आवाहन एवं स्थापन कर पूजन करना चाहिये। शान्ति प्रकाश के अनुसार एक वेदी के मध्य में अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर एक ताम्र कलश स्थापित करना चाहिये। ताम्र के पूर्णपात्र में सुवर्ण की सूर्य की प्रतिमा अग्न्युत्तारण पूर्वक प्रधान देवता के रूप में स्थापित की जानी चाहिये।

अग्न्युत्तारण हेतु सर्वप्रथम संकल्प किया जाता है।

संकल्प:- देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रः अमुकशर्माऽहं अस्यां सूर्य मूर्त्तौ अवघातादिदोष परिहारार्थं अग्न्युत्तारणं देवता सान्निध्यार्थं च प्राणप्रतिष्ठां करिष्ये।

सूर्य भगवान की मूर्त्ति को पात्र में रखकर घृत लगाकर उसके ऊपर दुग्धधारा या जलधारा गिरानी चाहिये और अधोलिखित मन्त्रों का अथवा सूर्य के मूल मन्त्र का 108 बार पाठ करना चाहिये।

ॐ समुद्रस्य त्वावकयाग्ने परिव्ययामसि पावको ऽ अस्मब्भ्य गुं शिवो भव। हिमस्य त्वा जरायुणाग्ने परिव्ययामसि। पावकोऽ अस्मभ्य गुं शिवो भव। उप ज्मन्नुप वेतसोऽ वतर नदिष्वा। अग्ने पित्तमपामसि मण्डूकि ताभिरागहि सेमं न्नो यज्ञं पावक वर्ण्ण गुं शिवंकृधि। अपामिदं न्ययन गुं समुद्रस्य निवेशनम्। अन्यास्ते ऽ अस्मत्पन्तु हेतयः पावकोऽ अस्मभ्य गुं शिवो भव। अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया। आ देवा न्वक्षि यक्षि च।। स नः पावक दीदिवोग्ने देवाँ2ऽ इहावह। उप यज्ञ गुं हविश्चनः।। पावकया यश्चितयन्त्या कृपाक्षामन्त्रुरु च ऽउषसो न भानुना। तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रण ऽआ यो घृणेन

ततृषाणो अजरः।। नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽ अस्त्वर्चिषे। अन्याँस्तेऽ अस्मत्पन्तु हेतयः पावको ऽ अस्मभ्य गुं शिवो भव। नृषदे व्वेडप्सुषदे ब्बेड्बर्हिषदे ब्बेड् व्वनसदे व्वेट् स्वर्विदे वेट्।। ये देवा देवानां यज्ञिया यज्ञियाना गुं संवत्सरीणमुप भागमासते।। अहुतादो हविषो यज्ञेऽ अस्मिन्न्स्वयं पिबन्तु मधुनो घृतस्य। ये देवा देवेष्वधि देवत्वमायन्ये ब्रह्मणः पुर एतारोऽअस्य। येभ्यो न ऽऋते पवते धाम किंचन न ते दिवो न पृथिव्याऽ अधिस्नुषु। प्राणदाऽ अपानदा व्यानदा व्वर्चोदा व्वरिवोदाः। अन्यँस्ते ऽ अस्मत्पन्तु हेतयः पावको ऽ अस्मभ्य गुं शिवो भव।

एवं अग्न्युत्तारणं कृत्वा प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्- इस प्रकार अग्न्युत्तारण करके प्राणप्रतिष्ठा करनी चाहिये। प्रतिमा को हाथ से संस्पर्ष करते हुये

अधोलिखित बीज मन्त्रों का जप करना चाहिये।

ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ षँ षँ सँ क्षँ हँ सः सोऽहं अस्यां सूर्य देवस्य प्राणाः इह प्राणाः। पुनःॐआँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ षँ षँ सँ क्षँ हँ सः सोऽहं अस्यां सूर्य देवस्य जीव इह स्थितः। पुनःॐआँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ षँ षँ सँ क्षँ हँ सः सोऽहं अस्यां सूर्य देवस्य वाङ्मनस्त्वक्चक्षुः श्रोत्र जिह्वा घ्राण पाणि पाद पायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। इति प्राणप्रतिष्ठा।

तदनन्तर दो रक्त वस्त्रों से सूर्य की प्रतिमा को आच्छादित कर घृत से स्नान कराकर रक्त चन्दन, रक्त अक्षत एवं रक्त पुष्प से पुरुषसूक्त द्वारा षोडशोपचार पूजन कर लड्डू इत्यादि का नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। कुशकंडिका का सम्पादन कर आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान करनी चाहिये।

ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये न मम । इति मनसा ।

ॐ इन्द्राय स्वाहा । इदं इन्द्राय न मम । इति आघारसंज्ञकौ ।

ॐ अग्नये स्वाहा । इदं अग्नये न मम ।

ॐ सोमाय स्वाहा । इदं सोमाय न मम । इति आज्यसंज्ञकौ ।

तदनन्तर सूर्य के हवनार्थ दधि, खीर, घृताक्तचरु, शाकल्य एवं अर्क समिधा लेकर हवन करें-ओं घृणिः सूर्याय स्वाहा। इदं सूर्याय न मम।। होम के अनन्तर दिक्पाल, क्षेत्रपालादि को बलिदान देकर पूर्णाहुति प्रदान करना चाहिये।

इसके अनन्तर मंजिष्ठा, गजमद, कुंकुम, रक्तचन्दन, जल से भरे हुये घड़े रखकर अभिषेक करना चाहिये ।

अभिषेकः- इसमे समस्त कलशों के जल को एक पात्र में करके दूर्वा एवं पंचपल्लव से उत्तर मुख होकर चार ऋत्विज सकुटुम्ब सपत्नीक पूर्व मुख बैठे हुये यजमान को जल छीटें। अभिषेक हेतु वैदिक एवं पौराणिक दोनों ही मन्त्रों का प्रयोग दिया गया है। वैदिक मन्त्रों के उच्चारण में त्रुटि की सम्भावना

को देखते हुये यहां पौराणिक मन्त्रों का ही उच्चारण श्रेष्ठ है-

ततो रुüकलशदेवतान्तरकलशोदकमेकस्मिन्पात्रे कृत्वा दूर्वा पंचपल्लवैरुदङ्मुख आचार्यस्तिष्ठन् चत्वारो ऋत्विजश्च सकुटुम्बं स्वोत्तरतः सपत्नीकं यजमानं प्राङ्मुखमुपविष्टमभिषिचेयुः।।

अभिषेक मन्त्राः

पौराणिक मन्त्राः-

सुरास्त्वामभिषिंचन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणोविभुः ।।
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्चभवन्तु विजयाय ते ।
आखण्डलोग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा ।।
वरुणः पवनश्चैवधनाध्यक्षस्तथा शिवः ।
ब्रह्मणासहिताः सर्वे दिक्पालाः पान्तु ते सदा ।।
कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधापुष्टिः श्रद्धाक्रियामतिः ।
बुद्धिर्लज्जावपुः शान्तिः कान्तिश्तुष्टिश्च मातरः ।।
एतास्त्वामभिषिंचन्तु देवपत्न्यः समागता ।
आदित्यश्चन्üमा भौमो बुधजीवसितार्कजाः ।।
ग्रहास्त्वामभिषिंचन्तु राहुः केतुश्च तर्पिताः ।
देवदानव गन्धर्वा यक्षराक्षस पन्नगाः ।।
ऋषयो मनवो गावो देवमातर एव च ।
देवपत्न्यो द्रुमानागा दैत्याश्चाप्सरसाणाः ।।
अस्त्राणि सर्व शस्त्राणि राजानो वाहनानि च ।
औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये ।।
सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः ।
एतेत्वामभिषिंचन्तु धर्मकामार्थ सिद्धये ।।
अमृताभिषेको ऽस्तु ।। शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु ।।

उसके बाद योग्य को सूर्य की प्रतिमा का दान कर देना चाहिये।

संकल्प- इमां सूर्यप्रतिमां सोपस्करां तुभ्यमहं सम्प्रददे।। इसके बाद प्रार्थना करनी चाहिये।

ॐआदिदेव नमस्तुभ्यं सप्त सप्त दिवाकर।
त्वं खेतारयस्वस्मान् अस्मत् संसारसागरात्।।

तदनन्तर माणिक्य, गोधूम, धेनु, रक्तवस्त्र, गुड, स्वर्ण, ताम्र, रक्त चन्दन व कमल इत्यादि का सूर्य की प्रसन्ता हेतु दान देना चाहिये। ब्राह्मणादि को भोजन कराकर कर्म पूर्त्ति को भगवान विष्णु को समर्पित करना चाहिये ।

सूर्य पीडासु घोरासु कृता शान्तिः शुभप्रदा ।।

इसके अलावा सूर्य की शान्ति हेतु माणिक्य रत्न के धारण का विधान भी शास्त्रों में दिया गया है । कम से कम ढाई रत्ती का शुद्ध माणिक्य रविवार, सोमवार या बृहस्पतिवार को खरीद कर सोने की अंगूठी में जड़वायें । तदनन्तर शुक्लपक्ष के किसी रविवार के दिन सूर्योदय के समय पहनना चाहिये । इसे धारण करने से पूर्व कच्चे जल या गंगाजल में डुबोकर रखना चाहिये । तदुपरांत शुद्ध जल से स्नान कराकर पुष्प, चन्दन एवं धूपबत्ती से उसकी उपासना करनी चाहिये । इसके साथ ही 7000 बार ॐ घृणिः सूर्याय नमः मन्त्र का जप करना चाहिये । इसे दायें हाथ के तर्जनी अंगुली में धारण करना चाहिये । माणिक्य की विशेषता है कि कमल के कलि पर इसको रखने पर कलि खिल जाती है । गाय के दूध में डालने पर दूध गुलाबी हो जाता है । इस प्रकार जांच कर ही मणिक्य का क्रय करना चाहिये । माणिक्य एक मुल्यवान रत्न है । इसे न खरीद पाने की स्थिति में लालड़ी यानी स्पाइनेल, लाल रंग का तमड़ा यानी गारनेट, सूर्यकान्तमणि यानी जिरकान पहन सकते है ।

इस प्रकार आपने यह देखा कि सूर्य ग्रह की शान्ति कैसे की जायेगी । सूर्य शान्ति हेतु रत्नो के धारण के सन्दर्भ में भी आप जान गये होगे । अतः आप सूर्य ग्रह की शान्ति करा सकते है ।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा । अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं । अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है । प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- सूर्य ग्रह शान्ति हेतु किस नक्षत्र से संयुक्त रविवार व्रत किया जाता है?

क- हस्त, ख- चित्रा, ग- स्वाती, घ- अनुराधा।

प्रश्न 2- सूर्य ग्रह हेतु किस वर्ण का पुष्प देना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- पीत, घ- कृष्ण।

प्रश्न 3- सूर्य शान्ति हेतु किसका कलश स्थापित करना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 4- सूर्य शान्ति हेतु पूर्णपात्र किसका होना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 5- सूर्य की प्रतिमा किसकी बनाई जाती है?

क- स्वर्ण की, ख- रजत की, ग- ताम्र की, घ- कांस्य की।

प्रश्न 6- सूर्य शान्ति हेतु किस समिधा का हवन किया जाता है?

क- अर्क, ख- पलाश, ग-,खदिर, ग- अपामार्ग।

प्रश्न 7- आघारान्त कितनी आहुतियां दी जाती है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 8- आज्यभागान्त प्रथम आहुति क्या है?

क- प्रजापतये स्वाहा, ख- इन्द्राय स्वाहा, ग- अग्नये स्वाहा, घ- सोमाय स्वाहा।

प्रश्न 9- सूर्य का रत्न क्या है?

क- माणिक्य, ख- मोती, ग- मूंगा, घ- पन्ना।

प्रश्न 10- माणिक्य को किस अंगुलि में धारण करना चाहिये?

क- तर्जनी, ख- मध्यमा, ग- अनामिका, ग- कनिष्ठा।

इस प्रकरण में आपने सूर्य ग्रह की शान्ति प्रविधि के बारे में जाना । आशा है अब आप सूर्य ग्रह की शान्ति करा सकेगें । अब हम चन्द्र ग्रह की शान्ति का विधान कैसे करेगे इसका वर्णन करने जा रहे है जो इस प्रकार है-

2.4.2 चन्द्र ग्रह शान्ति का विधान

चित्रा नक्षत्र में सोमवार से प्रारम्भ कर सात सोमवार को प्रतिदिन श्वेत पुष्प इत्यादि से सोम की पूजा करके सातवें सोमवार को प्रातः स्नानादि करके श्वेत धौत वस्त्र धारण कर आसन पर बैठकर अपने दक्षिण भाग में पूजन सम्भारों को रखकर सपत्नीक (यदि हो तो) दो बार आचमन कर प्राणायामादि करके शांतिपाठ पढ़कर लक्ष्मीनारायण इत्यादि देवताओं को प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर संकल्प करना चाहिये।

संकल्पः ॐश्री विष्णुर्विष्णर्विष्णुः अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुतिस्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम कलत्रादिभिः सह जन्म राशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद् गोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्ट स्थान स्थित चन्द्रेण सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीय एकादश शुभ स्थान स्थितवद् उत्तम फल प्राप्त्यर्थं तथा दशा अन्तरदशा उपदशा-जनित-पीडा-ल्पायु अधिदेवाधिभौतिक आध्यात्मिक जनित क्लेश निवृत्ति पूर्वकं शरीरारोग्यार्थं

परमैश्वर्यादि प्राप्त्यर्थं श्री चन्द्रस्य प्रसन्नार्थं च चन्द्र शान्तिं करिष्ये।

तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि शान्तिविधानानुसारेण कुर्यात्।

संकल्प के अनन्तर गणपति पूजन से आचार्य वरणान्त समस्त प्रक्रियाओं का सम्पादन करना चाहिये। तदनन्तर अग्नि स्थापन कर उक्त विधान से ग्रह वेदी का निर्माण कर आवाहन एवं स्थापन कर पूजन करना चाहिये। शान्ति प्रकाश के अनुसार एक वेदी के मध्य में अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर दधि व अन्न से प्रपूरित एक चाँदी का कलश स्थापित करना चाहिये। तदनन्तर कांस्य के पूर्णपात्र में चाँदी की चन्द्रमा की प्रतिमा अग्न्युत्तारण पूर्वक प्रधान देवता के रूप में स्थापित की जानी चाहिये। अग्न्युत्तारण का विधान सूर्य शान्ति में दिया गया है। वहां केवल सूर्य के स्थान पर चान्द्र का प्रयोग करना चाहिये। उसके बाद दो श्वेत वस्त्रों से चन्द्रमा की प्रतिमा को आच्छादित कर स्नान कराकर श्वेत चन्दन, श्वेत अक्षत एवं श्वेत पुष्प से पुरुषसूक्त द्वारा षोडशोपचार पूजन कर घृृृत पायस इत्यादि का नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। कुशकंडिका का सम्पादन कर आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान करना चाहिये।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। इति मनसा।

ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय न मम। इति आघारसंज्ञकौ।

ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। इति आज्यसंज्ञकौ।

तदनन्तर चन्द्रमा के हवनार्थ दधि, मधु, खीर, घृताक्तचरु, शाकल्य एवं पलास समिधा लेकर 108 बार हवन करें-

ॐ सों सोमाय स्वाहा । इदं सोमाय न मम।।

होम के अनन्तर दिक्पाल, क्षेत्रपालादि को बलिदान देकर पूर्णाहुति प्रदान करना चाहिये।

इसके अनन्तर उशीर, शिरीष, कुंकुम, रक्तचन्दन, ष्वेतचन्दन, शंख व चाँदी को जल से भरे हुये घड़े में रखकर पूर्ववद् अभिषेक करना चाहिये। उसके बाद योग्य को चन्द्र की प्रतिमा का दान कर देना चाहिये।

संकल्प- इमां चन्द्रप्रतिमां सोपस्करां तुभ्यमहं सम्प्रददे।। ततो प्रार्थना करनी चाहिये।

ॐ महादेव जातिवल्ली पुष्पगोक्षीर पांडुर।

सोम सौम्य भवास्माकं सर्वदा ते नमो नमः।।

तदनन्तर वंश पात्रस्थ चावल,कर्पूर, मौक्तिक, श्वेतवस्त्र, घृतपूर्णकुम्भ, श्वेतचन्दन इत्यादि का चन्द्रमा की प्रसन्ता हेतु दान देना चाहिये। ब्राह्मणादि को भोजन कराकर कर्म पूर्त्ति को भगवान विष्णु को समर्पित करना चाहिये।

एवं कृते महासौम्यः सोमस्तुष्टिकरो भवेत्।।

इसके अलावा चन्द्र ग्रह की शान्ति के लिये मोती नामक रत्न को चांदी के अंगूठी में पहनना चाहिये। इसे सोमवार या बृहस्पतिवार को खरीदना या मढ़वाना चाहिये। फिर किसी शुक्ल पक्ष के सोमवार को विधिवत् उपासनादि करके 11000 बार चन्द्रमा के मूल मन्त्र का जप करके सन्ध्या के समय धारण करना चाहिये।

इस प्रकार आपने यह देखा कि चन्द्र ग्रह की शान्ति कैसे की जायेगी। चन्द्र शान्ति हेतु रत्नो के धारण के सन्दर्भ में भी आप जान गये होगें। अतः आप चन्द्र ग्रह की शान्ति करा सकते है।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- चन्द्र ग्रह शान्ति हेतु किस नक्षत्र से संयुक्त सोमवार व्रत किया जाता है?

क- हस्त, ख- चित्रा, ग- स्वाती, घ- अनुराधा।

प्रश्न 2- चन्द्र ग्रह हेतु किस वर्ण का पुष्प देना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- पीत, घ- कृष्ण।

प्रश्न 3- चन्द्र शान्ति हेतु किसका कलश स्थापित करना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 4- चन्द्र शान्ति हेतु पूर्णपात्र किसका होना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 5- चन्द्र की प्रतिमा किसकी बनाई जाती है?

क- स्वर्ण की, ख- रजत की, ग- ताम्र की, घ- कांस्य की।

प्रश्न 6- चन्द्र शान्ति हेतु किस समिधा का हवन किया जाता है?

क- अर्क, ख- पलाश, ग-,खदिर, ग- अपामार्ग।

प्रश्न 7- आज्य संज्ञक कितनी आहुतियां दी जाती है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 8- आज्यभागान्त अन्तिम आहुति क्या है?

क- प्रजापतये स्वाहा, ख- इन्द्राय स्वाहा, ग- अग्नये स्वाहा, घ- सोमाय स्वाहा।

प्रश्न 9- चन्द्रमा का रत्न क्या है?

क- माणिक्य, ख- मोती, ग- मूंगा, घ- पन्ना।

प्रश्न 10- मोती को किस अंगुलि में धारण करना चाहिये?

क- तर्जनी, ख- मध्यमा, ग- अनामिका, घ- कनिष्ठा।

इस प्रकरण में आपने चन्द्र ग्रह की शान्ति प्रविधि के बारे में जाना। आशा है अब आप चन्द्र ग्रह की शान्ति करा सकेगें । अब हम भौम ग्रह की शान्ति का विधान कैसे करेगे इसका वर्णन करने जा रहे है जो इस प्रकार है-

2.4.3 मंगल ग्रह शान्ति का विधान

स्वाति नक्षत्र में भौमवार से प्रारम्भ कर सात मंगलवार को प्रतिदिन रक्त पुष्प इत्यादि से भौम की पूजा करके तथा सातवें भौमवार को प्रातः स्नानादि करके श्वेत धौत वस्त्र धारण कर आसन पर बैठकर अपने दक्षिण भाग में पूजन सम्भारों को रखकर सपत्नीक (यदि हो तो) दो बार आचमन कर प्राणायामादि करके शांतिपाठ पढ़कर लक्ष्मीनारायण इत्यादि देवताओं को प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर संकल्प करना चाहिये।

संकल्पःμॐश्री विष्णुर्विष्णर्विष्णुः 0 अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुतिस्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम कलत्रादिभिः सह जन्म राशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद् गोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्ट स्थान स्थित भौमेन् सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीय एकादश शुभ स्थान स्थितवद् उत्तम फल प्राप्त्यर्थं तथा दशा अन्तरदशा उपदशा-जनित-पीडा-ल्पायु अधिदेवाधिभौतिक आध्यात्मिक जनित क्लेश निवृत्ति पूर्वकं शरीरे आरोग्यार्थं परमैश्वर्यादि प्राप्त्यर्थं श्री भौमस्य प्रसन्नार्थं च भौम शान्तिं करिष्ये।

तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि शान्तिविधानानुसारेण कुर्यात्।

संकल्प के अनन्तर गणपति पूजन से आचार्य वरणान्त समस्त प्रक्रियाओं का सम्पादन करना चाहिये। तदनन्तर अग्नि स्थापन कर उक्त विधान से ग्रह वेदी का निर्माण कर आवाहन एवं स्थापन

कर पूजन करना चाहिये। शान्ति प्रकाश के अनुसार एक वेदी के मध्य में अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर एक ताम्र का कलश स्थापित करना चाहिये। ताम्र के पूर्णपात्र में सुवर्ण की मंगल की प्रतिमा अग्न्युत्तारण पूर्वक प्रधान देवता के रूप में स्थापित की जानी चाहिये। अग्न्युत्तारण की विधि सूर्य ग्रह की शान्ति में दी गयी है। उसमें केवल सूर्य के स्थान पर भौम लिखना चाहिये। इसके बाद दो रक्त वस्त्रों से मंगल की प्रतिमा को आच्छादित कर स्नान कराकर कुंकुम, रक्त चन्दन, रक्त अक्षत एवं रक्त पुष्प से पुरुषसूक्त द्वारा षोडशोपचार पूजन कर कंसार इत्यादि का नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। कुशकंडिका का सम्पादन कर आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान करना चाहिये।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। इति मनसा।

ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय न मम। इति आघारसंज्ञकौ।

ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। इति आज्यसंज्ञकौ।

तदनन्तर मंगल के हवनार्थ दधि, मधु, घृताक्त शाकल्य एवं खदिर की समिधा लेकर 108 बार हवन करें-

ॐ भौं भौमाय स्वाहा। इदं भौमाय न मम।।

होम के अनन्तर दिक्पाल, क्षेत्रपालादि को बलिदान देकर पूर्णाहुति प्रदान करना चाहिये।

इसके अनन्तर खदिर, देवदारु, तिल, आमलक, रक्तचन्दन चाँदी के जल से भरे हुये घड़े में रखकर पूर्ववद् अभिषेक करना चाहिये। उसके बाद योग्य को भौम की प्रतिमा का दान कर देना चाहिये।

संकल्प- इमां भौम प्रतिमां सोपस्करां तुभ्यमहं सम्प्रददे।। ततो प्रार्थना करनी चाहिये।

ॐ कुज कुप्रभवोपित्वं मंगलः परिगद्यसे।

अमंगलं निहत्याशु सर्वदा यच्छ मंगलम्।।

तदनन्तर पात्रस्थ प्रवाल, गोधूम, मसूरिका, रक्तवृषभ, गुड, सुवर्ण, रक्त वस्त्र, ताम्र इत्यादि का भौम की प्रसन्ता हेतु दान देना चाहिये। ब्राह्मणादि को भोजन कराकर कर्म पूर्त्ति को भगवान विष्णु को समर्पित करना चाहिये।

एवं कृते महा सौम्य भौमस्तुष्टिकरो भवेत्।।

मंगल की शान्ति हेतु मूंगा नामक रत्न को भी धारण करने का विधान है। मूंगा को सोने की अंगूठी में धारण करने का विधान है। यदि धारक के लिये सोना खरीदना संभव न हो तो चांदी में भी इसे मढ़वाया जा सकता है। मूंगे का वजन 6 रत्ती से कम नही होना चाहिये। मंगलवार को मूंगा खरीदकर उसी दिन अगूठी में जड़वाना चाहिये। 10000बार भौम के मूल मन्त्र का जप करके किसी शुक्लपक्ष

के मंगलवार को सूर्योदय से एक घण्टे बाद दायें हाथ की अनामिका अंगुलि में धारण करना चाहिये। इस प्रकार आपने यह देखा कि भौम ग्रह की शान्ति कैसे की जायेगी। भौम शान्ति हेतु रत्नो के धारण के सन्दर्भ में भी आप जान गये होगें। अतः आप भौम ग्रह की शान्ति करा सकते है।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- भौम ग्रह शान्ति हेतु किस नक्षत्र से संयुक्त मंगलवार व्रत किया जाता है?

क- हस्त, ख- चित्रा, ग- स्वाती, घ- अनुराधा।

प्रश्न 2- भौम ग्रह हेतु किस वर्ण का पुष्प देना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- पीत, घ- कृष्ण।

प्रश्न 3-भौम शान्ति हेतु किसका कलश स्थापित करना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 4- भौम शान्ति हेतु पूर्णपात्र किसका होना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 5- भौम की प्रतिमा किसकी बनाई जाती है?

क- स्वर्ण की, ख- रजत की, ग- ताम्र की, घ- कांस्य की।

प्रश्न 6- भौम शान्ति हेतु किस समिधा का हवन किया जाता है?

क- अर्क, ख- पलाश, ग-,खदिर, ग- अपामार्ग।

प्रश्न 7- आघार संज्ञक कितनी आहुतियां दी जाती है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 8- आज्यभागान्त प्रथम आहुति क्या है?

क- प्रजापतये स्वाहा, ख- इन्द्राय स्वाहा, ग- अग्नये स्वाहा, घ- सोमाय स्वाहा।

प्रश्न 9- भौम का रत्न क्या है?

क- माणिक्य, ख- मोती, ग- मूंगा, घ- पन्ना।

प्रश्न 10- मूंगा को किस अंगुलि में धारण करना चाहिये?

क- तर्जनी, ख- मध्यमा, ग- अनामिका, ग- कनिष्ठा।

इस प्रकरण में आपने भौम ग्रह की शान्ति प्रविधि के बारे में जाना। आशा है अब आप भौम ग्रह की शान्ति करा सकेगें। अब हम बुध ग्रह की शान्ति का विधान कैसे करेगे इसका वर्णन करने जा रहे है जो इस प्रकार है-

2.4.4 बुध ग्रह शान्ति का विधान

विशाखा नक्षत्र में बुधवार से प्रारम्भ कर सात बुधवार को प्रतिदिन रक्त पुष्प इत्यादि से बुध की पूजा करके तथा सातवें बुधवार को प्रातः स्नानादि करके श्वेत धौत वस्त्र धारण कर आसन पर बैठकर अपने दक्षिण भाग में पूजन सम्भारों को रखकर सपत्नीक (यदि हो तो) दो बार आचमन कर प्राणायामादि करके शांतिपाठ पढ़कर लक्ष्मीनारायण इत्यादि देवताओं को प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर संकल्प करना चाहिये।

संकल्पःμॐश्री विष्णुर्विष्णर्विष्णुः अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुतिस्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम कलत्रादिभिः सह जन्म राशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद् गोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्ट स्थान स्थित बुधेन सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीय एकादश शुभ स्थान स्थितवद् उत्तम फल प्राप्त्यर्थं तथा दशा अन्तरदशा उपदशा-जनित-पीडा-ल्पायु अधिदेवाधिभौतिक आध्यात्मिक जनित क्लेश निवृत्ति पूर्वकं शरीर-आरोग्यार्थं परमैश्वर्यादि प्राप्त्यर्थं श्री बुधस्य प्रसन्नार्थं च बुध शान्तिं करिष्ये।

तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि शान्तिविधानानुसारेण कुर्यात्।

संकल्प के अनन्तर गणपति पूजन से आचार्य वरणान्त समस्त प्रक्रियाओं का सम्पादन करना चाहिये। तदनन्तर अग्नि स्थापन कर उक्त विधान से ग्रह वेदी का निर्माण कर आवाहन एवं स्थापन कर पूजन करना चाहिये। शान्ति प्रकाश के अनुसार एक वेदी के मध्य में अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर एक काँसे का कलश स्थापित करना चाहिये। कांस्य के पूर्णपात्र में सुवर्ण की बुध की प्रतिमा अग्न्युत्तारण पूर्वक प्रधान देवता के रूप में स्थापित की जानी चाहिये। अग्न्युत्तारण का विधान इससे पूर्व सूर्य की शान्ति में दिया गया है। उसमें केवल नाम का परिवर्तन करके अग्न्युत्तारण करना चाहिये।दो शुक्ल वस्त्रों से बुध की प्रतिमा को आच्छादित कर स्नान कराकर कुंकुम, चन्दन, अक्षत एवं पुष्प से पुरुष सूक्त द्वारा षोडशोपचार पूजन कर गुड और ओदन इत्यादि का नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। कुशकंडिका का सम्पादन कर आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान करना चाहिये।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम । इति मनसा ।

ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय न मम । इति आघारसंज्ञकौ ।

ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये न मम ।

ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। इति आज्यसंज्ञकौ ।

तदनन्तर बुध के हवनार्थ दधि, मधु, घृताक्त शाकल्य एवं अपामार्ग की समिधा लेकर 108 बार हवन करें -

ॐ बुं बुधाय स्वाहा। इदं बुधाय न मम ॥

होम के अनन्तर दिक्पाल, क्षेत्रपालादि को बलिदान देकर पूर्णाहुति प्रदान करना चाहिये। इसके अनन्तर नदी संगम का जल मिट्टी इत्यादि जल से भरे हुये मिट्टी के घड़े में रखकर पूर्ववद् अभिषेक करना चाहिये। उसके बाद योग्य को बुध की प्रतिमा का दान कर देना चाहिये ।

संकल्प- इमां बुध प्रतिमां सोपस्करां तुभ्यमहं सम्प्रददे।। ततो प्रार्थना करनी चाहिये ।

ॐ बुध त्वं बुद्धिजननो बोधवान्सर्वदा नृणाम् ।

तत्वावबोधं कुरु मे सोम पुत्र नमो नमः ॥

तदनन्तर नील वस्त्र, सुवर्ण, कांस्य, मूंगा, पन्ना, दासी, हाथीदात, पुष्प इत्यादि का बुध की प्रसन्ता हेतु दान देना चाहिये । ब्राह्मणादि को भोजन कराकर कर्म पूर्त्ति को भगवान विष्णु को समर्पित करना चाहिये ।

एवं कृते महा सौम्य बुधस्तुष्टिकरो भवेत् ॥

बुध ग्रह की शान्ति के लिये पन्ना नामक रत्न धारण करने का विधान बतलाया गया है । जहां तक संभव हो पन्ना बुधवार को चांदी की अंगूठी में जड़वाना चाहिये । इसका वनज तीन रत्ती से कम नही होना चाहिये । इसे विधिपूर्वक उपासना करने के बाद बुध के मूल मन्त्र का 9000 बार जप करके किसी शुक्ल पक्ष के बुधवार को सूर्योदय के दो घण्टे बाद धारण करना चाहिये । पन्ना सोने की अंगूठी में भी पहनने का प्रचलन है । इसे दाहिने हाथ की कनिष्ठा उंगली में पहनना चाहिये ।

इस प्रकार आपने यह देखा कि बुध ग्रह की शान्ति कैसे की जायेगी । बुध शान्ति हेतु रत्नो के धारण के सन्दर्भ में भी आप जान गये होगें । अतः आप बुध ग्रह की शान्ति करा सकते है ।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- बुध ग्रह शान्ति हेतु किस नक्षत्र से संयुक्त बुधवार व्रत किया जाता है?

क- हस्त, ख- चित्रा, ग- स्वाती, घ- विशाखा।

प्रश्न 2- बुध ग्रह हेतु किस वर्ण का पुष्प देना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- पीत, घ- कृष्ण।

प्रश्न 3-बुध शान्ति हेतु किसका कलश स्थापित करना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 4- बुध शान्ति हेतु पूर्णपात्र किसका होना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 5- बुध की प्रतिमा किसकी बनाई जाती है?

क- स्वर्ण की, ख- रजत की, ग- ताम्र की, घ- कांस्य की।

प्रश्न 6- बुध शान्ति हेतु किस समिधा का हवन किया जाता है?

क- अर्क, ख- पलाश, ग-,खदिर, घ- अपामार्ग।

प्रश्न 7- आघार एवं आज्य संज्ञक कितनी आहुतियां दी जाती है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 8- आज्यभागान्त अन्तिम आहुति क्या है?

क- प्रजापतये स्वाहा, ख- इन्द्राय स्वाहा, ग- अग्नये स्वाहा, घ- सोमाय स्वाहा।

प्रश्न 9- बुध का रत्न क्या है?

क- माणिक्य, ख- मोती, ग- मूंगा, घ- पन्ना।

प्रश्न 10- पन्ना को किस अंगुलि में धारण करना चाहिये?

क- तर्जनी, ख- मध्यमा, ग- अनामिका, घ- कनिष्ठा।

इस प्रकरण में आपने बुध ग्रह की शान्ति प्रविधि के बारे में जाना। आशा है अब आप बुध ग्रह की शान्ति करा सकेगें। अब हम बृहस्पति ग्रह की शान्ति का विधान कैसे करेगे इसका वर्णन करने जा रहे है जो इस प्रकार है-

2.4.5. बृहस्पति ग्रह शान्ति विधान

अनुराधा नक्षत्र में गुरुवार से प्रारम्भ कर सात गुरुवार को प्रतिदिन पीत पुष्प इत्यादि से गुरु की पूजा

करके तथा सातवें गुरुवार को प्रातः स्नानादि करके श्वेत धौत वस्त्र धारण कर आसन पर बैठकर अपने दक्षिण भाग में पूजन सम्भारों को रखकर सपत्नीक (यदि हो तो) दो बार आचमन कर प्राणायामादि करके शांतिपाठ पढ़कर लक्ष्मीनारायण इत्यादि देवताओं को प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर संकल्प करना चाहिये।

संकल्पः µॐश्री विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुतिस्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम कलत्रादिभिः सह जन्म राशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद् गोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्ट स्थान स्थित गुरुणा सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीय एकादश शुभ स्थान स्थितवद् उत्तम फल प्राप्त्यर्थं तथा दशा अन्तरदशा उपदशा-जनित-पीडा-ल्पायु अधिदेवाधिभौतिक आध्यात्मिक जनित क्लेश निवृत्ति पूर्वकं शरीरे आरोग्यार्थं परमैश्वर्यादि प्राप्त्यर्थं श्री गुरोः प्रसन्नार्थं च गुरु शान्तिं करिष्ये।

तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि शान्तिविधानानुसारेण कुर्यात्।

संकल्प के अनन्तर गणपति पूजन से आचार्य वरणान्त समस्त प्रक्रियाओं का सम्पादन करना चाहिये। तदनन्तर अग्नि स्थापन कर उक्त विधान से ग्रह वेदी का निर्माण कर आवाहन एवं स्थापन कर पूजन करना चाहिये। शान्ति प्रकाश के अनुसार एक वेदी के मध्य में अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर एक सुवर्ण कलश स्थापित करना चाहिये। सुवर्ण के पूर्णपात्र में सुवर्ण की बृहस्पति की प्रतिमा अग्न्युत्तारण पूर्वक प्रधान देवता के रूप में स्थापित की जानी चाहिये।अग्न्युत्तारण की विधि सूर्य ग्रह की शान्ति में दी गयी है। उसमें सूर्य के सथान पर बृहस्पति शब्द का प्रयोग करके अग्न्युत्तारण किया जा सकता है। दो पीत वस्त्रों से गुरु की प्रतिमा को आच्छादित कर स्नान कराकर पीला चन्दन, पीला अक्षत एवं पीले पुष्प से पुरुषसूक्त द्वारा षोडशोपचार पूजन कर खण्ड खाद्य इत्यादि का नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। कुशकंडिका का सम्पादन कर आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान करना चाहिये।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। इति मनसा।

ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय न मम। इति आघारसंज्ञकौ।

ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। इति आज्यसंज्ञकौ।

तदनन्तर गुरु के हवनार्थ दधि, मधु, घृताक्त शाकल्य एवं अश्वत्थ की समिधा लेकर 108 बार हवन करें-

ॐ बृ बृहस्पतये स्वाहा। इदं बृहस्पतये न मम।

होम के अनन्तर दिक्पाल, क्षेत्रपालादि को बलिदान देकर पूर्णाहुति प्रदान करना चाहिये। इसके अनन्तर औदुम्बर, बिल्व, वट, आमलक इत्यादि जल से भरे हुये सुवर्ण के घड़े में रखकर पूर्ववद् अभिषेक करना चाहिये। उसके बाद योग्य को बृहस्पति की प्रतिमा का दान कर देना चाहिये।

संकल्प- इमां बृहस्पति प्रतिमां सोपस्करां तुभ्यमहं सम्प्रददे।। ततो प्रार्थना करनी चाहिये।

ॐ धर्म शास्त्रार्थ तत्वज्ञ ज्ञान विज्ञान पारग।

विबुधार्ति हरा चिन्त्य देवाचार्य नमोस्तुते।।

तदनन्तर पीला वस्त्र, सुवर्ण, पुष्परागमणि, हरिद्रा, षर्करा, पीत धान्य, लवण इत्यादि का बृहस्पति की प्रसन्न्ता हेतु दान देना चाहिये। ब्राह्मणादि को भोजन कराकर कर्म पूर्त्ति को भगवान विष्णु को समर्पित करना चाहिये।

एवं कृते महा सौम्य गुरुस्तुष्टिकरो भवेत्।।

इसके अलावा बृहस्पति की शान्ति हेतु पुखराज धारण करने का विधान है। पुखराज को सोने की अंगूठी में ही धारण करना चाहिये। सात या बारह रत्ती का पुखराज धारण करना चाहिये। बृहस्पतिवार को पुखराज रत्न की अंगूठी जड़वाना चाहिये। अंगूठी को विधिपूर्वक उपासना करने के बाद बृहसपति के मूल मन्त्र का 19000 बार जप करके किसी शुक्ल पक्ष के गुरूवार को सूर्यास्त से एक घझटे पहले तर्जनी उंगली में धारण करना चाहिये।

इस प्रकार आपने यह देखा कि बृहस्पति ग्रह की शान्ति कैसे की जायेगी। बृहसपति शान्ति हेतु रत्न के धारण के सन्दर्भ में भी आप जान गये होगें। अतः आप बृहस्पति ग्रह की शान्ति करा सकते है।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- बृहस्पति ग्रह शान्ति हेतु किस नक्षत्र से संयुक्त बृहस्पतिवार व्रत किया जाता है?

क- हस्त, ख- चित्रा, ग- स्वाती, घ- अनुराधा।

प्रश्न 2- बृहस्पति ग्रह हेतु किस वर्ण का पुष्प देना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- पीत, घ- कृष्ण।

प्रश्न 3-बृहस्पति शान्ति हेतु किसका कलश स्थापित करना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 4- बृहस्पति शान्ति हेतु पूर्णपात्र किसका होना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 5- बृहस्पति की प्रतिमा किसकी बनाई जाती है?

क- स्वर्ण की, ख- रजत की, ग- ताम्र की, घ- कांस्य की।

प्रश्न 6- बृहस्पति शान्ति हेतु किस समिधा का हवन किया जाता है?

क- अर्क, ख- पलाश, ग-,खदिर, घ- पीपल।

प्रश्न 7- आघार संज्ञक में मनसा कितनी आहुतियां दी जाती है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 8- आघार भागान्त प्रथम आहुति क्या है?

क- प्रजापतये स्वाहा, ख- इन्द्राय स्वाहा, ग- अग्नये स्वाहा, घ- सोमाय स्वाहा।

प्रश्न 9- बृहस्पति का रत्न क्या है?

क- माणिक्य, ख- मोती, ग- पुखराज, घ- पन्ना।

प्रश्न 10- पुखराज को किस अंगुलि में धारण करना चाहिये?

क- तर्जनी, ख- मध्यमा, ग- अनामिका, ग- कनिष्ठा।

इस प्रकरण में आपने बृहस्पति ग्रह की शान्ति प्रविधि के बारे में जाना। आशा है अब आप बृहस्पति ग्रह की शान्ति करा सकेगें। अब हम शुक्र ग्रह की शान्ति का विधान कैसे करेगे इसका वर्णन करने जा रहे है जो इस प्रकार है-

2.4.6 शुक्र ग्रह शान्ति विधान

ज्येष्ठा नक्षत्र में शुक्रवार से प्रारम्भ कर सात शुक्रवार को प्रतिदिन श्वेत पुष्प इत्यादि से शुक्र की पूजा करके तथा सातवें शुक्रवार को प्रातः स्नानादि करके श्वेत धौत वस्त्र धारण कर आसन पर बैठकर अपने दक्षिण भाग में पूजन सम्भारों को रखकर सपत्नीक (यदि हो तो) दो बार आचमन कर प्राणायामादि करके शांतिपाठ पढ़कर लक्ष्मीनारायण इत्यादि देवताओं को प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर संकल्प करना चाहिये।

संकल्पःµॐश्री विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुतिस्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम कलत्रादिभिः सह जन्म राशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद् गोचराद्वा चतुर्थाष्टमद्वादशाद्यनिष्ट स्थान स्थित शुक्रेण सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं

सर्वदा तृतीय एकादश शुभ स्थान स्थितवद् उत्तम फल प्राप्त्यर्थं तथा दशा अन्तरदशा उपदशा-जनित-पीडा-ल्पायु अधिदेवाधिभौतिक आध्यात्मिक जनित क्लेश निवृत्ति पूर्वकं शरीरारोग्यार्थं परमैश्वर्यादि प्राप्त्यर्थं श्री शुक्र प्रसन्नार्थं च शुक्र शान्तिं करिष्ये।

तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि शान्तिविधानानुसारेण कुर्यात्।

संकल्प के अनन्तर गणपति पूजन से आचार्य वरणान्त समस्त प्रक्रियाओं का सम्पादन करना चाहिये। तदनन्तर अग्नि स्थापन कर उक्त विधान से ग्रह वेदी का निर्माण कर आवाहन एवं स्थापन कर पूजन करना चाहिये। शान्ति प्रकाश के अनुसार एक वेदी के मध्य में अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर एक रजत कलश स्थापित करना चाहिये। रजत के पूर्णपात्र में सुवर्ण की शुक्र की प्रतिमा अग्न्युत्तारण पूर्वक प्रधान देवता के रूप में स्थापित की जानी चाहिये। अग्न्युत्तारण का विधान सूर्य ग्रह की शान्ति में दिया गया है। वहां सूर्य के स्थान पर शुक्र का उच्चारण करना चाहिये। दो सफेद वस्त्रों से शुक्र की प्रतिमा को आच्छादित कर स्नान कराकर श्वेत चन्दन, श्वेत अक्षत एवं श्वेत पुष्प से पुरुषसूक्त द्वारा षोडशोपचार पूजन कर घृत संयुक्त पायस इत्यादि का नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। कुशकंडिका का सम्पादन कर आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान करना चाहिये।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। इति मनसा।

ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय न मम। इति आघारसंज्ञकौ।

ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। इति आज्यसंज्ञकौ।

तदनन्तर शुक्र के हवनार्थ दधि, मधु, घृताक्त शाकल्य एवं उदुम्बर की समिधा लेकर 108 बार हवन करें -

ॐ शुं शुक्राय स्वाहा। इदं शुक्राय न मम ।।

होम के अनन्तर दिक्पाल, क्षेत्रपालादि को बलिदान देकर पूर्णाहुति प्रदान करना चाहिये। इसके अनन्तर गोरोचन, कस्तूरीका, शतपूष्पा, शतावरी इत्यादि जल से भरे हुये रजत के घड़े में रखकर पूर्ववद् अभिषेक करना चाहिये। उसके बाद योग्य को शुक्र की प्रतिमा का दान कर देना चाहिये।

संकल्प- इमां शुक्र प्रतिमां सोपस्करां तुभ्यमहं सम्प्रददे।। ततो प्रार्थना करनी चाहिये।

ॐ भार्गवो भर्ग शुक्रश्च श्रुति स्मृति विशारदः ।

हत्वा ग्रह कृतान् दोषानायुरारोग्दोस्तु सः ।।

तदनन्तर श्वेत वस्त्र, श्वेत अश्व, धेनु, वज्र, मणि, सुवर्ण, रजत, तंडुल इत्यादि का शुक्र की प्रसन्न्ता हेतु दान देना चाहिये । ब्राह्मणादि को भोजन कराकर कर्म पूर्त्ति को भगवान विष्णु को समर्पित करना चाहिये ।

एवं कृते महा सौम्य शुक्रस्तुष्टिकरो भवेत् ॥

इसके अलावा शुक्र की शान्ति हेतु हीरा नामक रत्न धारण करना चाहिये। हीरे को प्लेटिनम या चांदी की अंगूठी में धारण करना चाहिये। इसे शुक्रवार को बनवाना उत्तम है। हीरा जड़ी अंगूठी का विधिपूर्वक उपासना करके शुक्र के मूल मन्त्र का सोलह हजार बार जप करके किसी शुक्लपक्ष के शुक्रवार को प्रातःकाल श्रद्धा से धारण करना चाहिये।

इस प्रकार आपने यह देखा कि शुक्र ग्रह की शान्ति कैसे की जायेगी। शुक्र शान्ति हेतु रत्नो के धारण के सन्दर्भ में भी आप जान गये होगें। अतः आप शुक्र ग्रह की शान्ति करा सकते है।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- शुक्र ग्रह शान्ति हेतु किस नक्षत्र से संयुक्त शुक्रवार व्रत किया जाता है?

क- हस्त, ख- ज्येष्ठा, ग- स्वाती, घ- अनुराधा।

प्रश्न 2- शुक्र ग्रह हेतु किस वर्ण का पुष्प देना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- पीत, घ- कृष्ण।

प्रश्न 3-शुक्र शान्ति हेतु किसका कलश स्थापित करना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 4- शुक्र शान्ति हेतु पूर्णपात्र किसका होना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 5- शुक्र की प्रतिमा किसकी बनाई जाती है?

क- स्वर्ण की, ख- रजत की, ग- ताम्र की, घ- कांस्य की।

प्रश्न 6- शुक्र शान्ति हेतु किस समिधा का हवन किया जाता है?

क- उदुम्बर, ख- पलाश, ग-,खदिर, ग- अपामार्ग।

प्रश्न 7- आघार संज्ञक अन्तिम कितनी आहुतियां दी जाती है?

क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 8- आज्यभागान्त अन्तिम आहुति क्या है?

क- प्रजापतये स्वाहा, ख- इन्द्राय स्वाहा, ग- अग्नये स्वाहा, घ- सोमाय स्वाहा।

प्रश्न 9- शुक्र का रत्न क्या है?

क- माणिक्य, ख- हीरा, ग- मूंगा, घ- पन्ना।

प्रश्न 10- हीरा को किसमें धारण करना चाहिये?

क- स्वर्ण, ख- रजत, ग- ताम्र, ग- लौह।

इस प्रकरण में आपने शुक्र ग्रह की शान्ति प्रविधि के बारे में जाना। आशा है अब आप शुक्र ग्रह की शान्ति करा सकेगें। अब हम शनि ग्रह की शान्ति का विधान कैसे करेगे इसका वर्णन करने जा रहे है जो इस प्रकार है-

2.4.7 शनि ग्रह शान्ति विधान

जन्म स्थान से द्वादश, अष्टमस्थ शनि रहने पर शान्ति करानी चाहिये। श्रावण आदि मास के प्रथम शनिवार से प्रारम्भ कर सात शनिवार को प्रतिदिन पुष्प इत्यादि से शनि की पूजा करके तथा सातवें शनिवार को प्रातः स्नानादि करके श्वेत धौत वस्त्र धारण कर आसन पर बैठकर अपने दक्षिण भाग में पूजन सम्भारों को रखकर सपत्नीक (यदि हो तो) दो बार आचमन कर प्राणायामादि करके शांतिपाठ पढ़कर लक्ष्मीनारायण इत्यादि देवताओं को प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर संकल्प करना चाहिये।

संकल्पः- ॐश्री विष्णुर्विष्णर्विष्णुः अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुतिस्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम कलत्रादिभिः सह जन्म राशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद् गोचराद्वा अनिष्ट स्थान स्थित शनैश्चरेण सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीय एकादश शुभ स्थान स्थितवद् उत्तम फल प्राप्त्यर्थं तथा दशा अन्तरदशा उपदशा-जनित-पीडा-ल्पायु अधिदेवाधिभौतिक आध्यात्मिक जनित क्लेश निवृत्ति पूर्वकं शरीरे आरोग्यार्थं परमैश्वर्यादि प्राप्त्यर्थं श्री शनि प्रसन्नार्थं च शनिश्चरस्य शान्तिं करिष्ये।

तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि पूजनविधानानुसारेण कुर्यात्।

संकल्प के अनन्तर गणपति पूजन से आचार्य वरणान्त समस्त प्रक्रियाओं का सम्पादन करना चाहिये। तदनन्तर अग्नि स्थापन कर उक्त विधान से ग्रह वेदी का निर्माण कर आवाहन एवं स्थापन

कर पूजन करना चाहिये। शान्ति प्रकाश के अनुसार एक वेदी के मध्य में अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर एक लौह कलश स्थापित करना चाहिये। लौह के पूर्णपात्र में लौह की शनि की प्रतिमा अग्न्युत्तारण पूर्वक प्रधान देवता के रूप में स्थापित की जानी चाहिये। अग्न्युत्तारण की विधि सूर्य ग्रह की शान्ति में दिया गया है। उसमें सूर्य के सथान पर शनि का उच्चारण करके अग्न्युत्तारण किया जा सकता है। दो कृष्ण वस्त्रों से शनि की प्रतिमा को आच्छादित कर पंचामृत या तिल के तैल से स्नान कराकर उड़द, तिल, कम्बल से युक्त कर कस्तूरी, कृष्ण अगरु, कृष्ण पुष्प, चन्दन, अक्षत द्वारा षोडशोपचार पूजन कर कृसरान्न, उड़द, चावल, पायस, वारा, पूरिका इत्यादि का नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। कुशकंडिका का सम्पादन कर आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान करना चाहिये।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। इति मनसा।

ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय न मम। इति आघारसंज्ञकौ।

ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। इति आज्यसंज्ञकौ।

तदनन्तर शनि के हवनार्थ दधि, मधु, घृताक्त शाकल्य एवं शमी की समिधा लेकर 108 बार हवन करें-

ॐ शं शनैश्चराय स्वाहा। इदं शनैश्चराय न मम।।

होम के अनन्तर दिक्पाल, क्षेत्रपालादि को बलिदान देकर पूर्णाहुति प्रदान करना चाहिये। इसके अनन्तर तिल, उड़द, प्रियंगु, गंध व पुष्प इत्यादि जल से भरे हुये लौह के घड़े में रखकर पूर्ववद् अभिषेक करना चाहिये। उसके बाद योग्य को शनि की प्रतिमा का दान कर देना चाहिये।

संकल्प- इमां शनि प्रतिमां सोपस्करां तुभ्यमहं सम्प्रददे।। ततो प्रार्थना करनी चाहिये।

ॐ नीलांजन समाभासं रविपुत्रं यमाग्रजं।

छाया मार्तण्ड सम्भूतं तं नमामि शनैष्चरम्।।

तदनन्तर इन्द्रनील, उड़द, तैल, तिल, कुलित्थ, महिषी, लौह व काली गाय इत्यादि का शनि की प्रसन्ता हेतु दान देना चाहिये। ब्राह्मणादि को भोजन कराकर कर्म पूर्त्ति को भगवान विष्णु को समर्पित करना चाहिये।

एवं कृते महा सौम्य शनिस्तुष्टिकरो भवेत्।।

इसके अलावा शनि के लिये नीलम रत्न धारण करना चाहिये। नीलम को शनिवार के दिन पंचधातु या स्टील की अंगूठी में जड़वाकर विधिवत् उसकी उपासनादि करके सूर्यास्त से दो घण्टे पूर्व मध्यमा उंगली धारण करना चाहिये। नीलम का वजन चार रत्ती हो तो अच्छा है। इसे पहनने से पूर्व शनि के

मूल मन्त्र का 23000 बार जप करना चाहिये। शनि का रत्न नीलम धारण से पूर्व परीक्षण करनी चाहिये।

इस प्रकार आपने यह देखा कि शनि ग्रह की शान्ति कैसे की जायेगी। शनि शान्ति हेतु रत्न के धारण के सन्दर्भ में भी आप जान गये होगें। अतः आप श्नि ग्रह की शान्ति करा सकते है।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न -

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है -

प्रश्न 1- शनि ग्रह शान्ति हेतु कौन सा व्रत किया जाता है?

क- शुक्र, ख- शनि, ग- रवि, घ- सोम।

प्रश्न 2- शनि ग्रह हेतु किस वर्ण का पुष्प देना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- पीत, घ- कृष्ण।

प्रश्न 3-शनि शान्ति हेतु किसका कलश स्थापित करना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- ताम्र का, घ- लोहे का।

प्रश्न 4- शनि शान्ति हेतु पूर्णपात्र किसका होना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- लोहे का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 5- शनि की प्रतिमा किसकी बनाई जाती है?

क- स्वर्ण की, ख- रजत की, ग- लोहे की, घ- कांस्य की।

प्रश्न 6- शनि शान्ति हेतु किस समिधा का हवन किया जाता है?

क- अर्क, ख- शमी, ग-,खदिर, ग- अपामार्ग।

प्रश्न 7- शनि शान्ति हेतु कितना जप अपेक्षित है?

क- 23000, ख-24000, ग-25000, घ-26000।

प्रश्न 8- प्रथम आहुति क्या है?

क- प्रजापतये स्वाहा, ख- इन्द्राय स्वाहा, ग- अग्नये स्वाहा, घ- सोमाय स्वाहा।

प्रश्न 9- शनि का रत्न क्या है?

क- माणिक्य, ख- नीलम, ग- मूंगा, घ- पन्ना।

प्रश्न 10- नीलम को किस अंगुलि में धारण करना चाहिये?

क- तर्जनी, ख- मध्यमा, ग- अनामिका, ग- कनिष्ठा।

इस प्रकरण में आपने शनि ग्रह की शान्ति प्रविधि के बारे में जाना। आशा है अब आप शनि ग्रह की शान्ति करा सकेगें। अब हम राहु एवं केतु ग्रह की शान्ति का विधान कैसे करेगे इसका वर्णन करने जा रहे है जो इस प्रकार है-

2.4.8 राहु एवं केतु शान्ति विधान

शनिवार से प्रारम्भ कर सात शनिवार को प्रतिदिन पुष्प इत्यादि से राहु की पूजा करके तथा सातवें शनिवार को प्रातः स्नानादि करके श्वेत धौत वस्त्र धारण कर आसन पर बैठकर अपने दक्षिण भाग में पूजन सम्भारों को रखकर सपत्नीक (यदि हो तो) दो बार आचमन कर प्राणायामादि करके शांतिपाठ पढ़कर लक्ष्मीनारायण इत्यादि देवताओं को प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर संकल्प करना चाहिये।

संकल्पः - ॐश्री विष्णुर्विष्णर्विष्णुः अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुतिस्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम कलत्रादिभिः सह जन्म राशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा जन्मलग्नाद्वर्षलग्नाद् गोचराद्वा अनिष्ट स्थान स्थित राहु ग्रहेण सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीय एकादश शुभ स्थान स्थितवद् उत्तम फल प्राप्त्यर्थं तथा दशा अन्तरदशा उपदशा-जनित-पीडा-ल्पायु अधिदेवाधिभौतिक आध्यात्मिक जनित क्लेश निवृत्ति पूर्वकं शरीर-आरोग्यार्थं परमैश्वर्यादि प्राप्त्यर्थं श्री राहु प्रसन्नार्थं च राहु शान्तिं करिष्ये।

तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि शान्ति विधानानुसारेण कुर्यात्।

संकल्प के अनन्तर गणपति पूजन से आचार्य वरणान्त समस्त प्रक्रियाओं का सम्पादन करना चाहिये। तदनन्तर अग्नि स्थापन कर उक्त विधान से ग्रह वेदी का निर्माण कर आवाहन एवं स्थापन कर पूजन करना चाहिये। शान्ति प्रकाश के अनुसार एक वेदी के मध्य में अष्टदल कमल बनाकर उसके ऊपर एक लौह कलश स्थापित करना चाहिये। लौह के पूर्णपात्र में लौह की राहु की प्रतिमा अग्न्युत्तारण पूर्वक प्रधान देवता के रूप में स्थापित की जानी चाहिये। अग्न्युत्तारण की विधि सूर्य ग्रह की शान्ति में दिया गया है। उसमें सूर्य के स्थान पर राहु एवं केतु का उच्चारण करना चाहिये। दो कृष्ण वस्त्रों से राहु की प्रतिमा को आच्छादित कर पंचामृत से स्नान कराकर कृष्ण पुष्प, चन्दन, अक्षत द्वारा षोडशोपचार पूजन कर पायस इत्यादि का नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। कुशकंडिका का सम्पादन कर आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान करना चाहिये।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। इति मनसा।

ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय न मम। इति आघारसंज्ञकौ।

ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। इति आज्यसंज्ञकौ।

तदनन्तर राहु के हवनार्थ दधि, मधु, घृताक्त शाकल्य एवं दूर्वा की समिधा लेकर 108 बार हवन करें-

ॐ रां राहवे स्वाहा। इदं राहवे न मम।

होम के अनन्तर दिक्पाल, क्षेत्रपालादि को बलिदान देकर पूर्णाहुति प्रदान करना चाहिये। इसके अनन्तर गुगुल, हिंगुल, हरताल, मनः शील,

गंध व पुष्प इत्यादि जल से भरे हुये लौह के घड़े में रखकर पूर्ववद् अभिषेक करना चाहिये। उसके बाद योग्य को राहु की प्रतिमा का दान कर देना चाहिये।

संकल्प- इमां राहु प्रतिमां सोपस्करां तुभ्यमहं सम्प्रददे।। ततो प्रार्थना करनी चाहिये।

ॐ अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्य विमद्रनम्।

सिंहिका गर्भ संभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम्।।

तदनन्तर गोमेद,नीलवस्त्र, कंबल, तैल, तिल, अष्व, लौह इत्यादि का राहु की प्रसन्न्ता हेतु दान देना चाहिये। ब्राह्मणादि को भोजन कराकर कर्म पूर्त्ति को भगवान विष्णु को समर्पित करना चाहिये।

एवं कृते महा सौम्य राहु तुष्टिकरो भवेत् ।।

इसी प्रकार केतु की भी शान्ति की जाती है। विशेष इस प्रकार हैं - केतु के लिये हवनार्थ कुशा का प्रयोग किया जाता है। हवनार्थ प्रधान मन्त्र-

ॐ कें केतवे स्वाहा। इदं केतवे न मम ।

प्रार्थनामन्त्र-

पालाश धूम्र संकाशं तारका ग्रह मस्तकं ।

रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ।।

अभिषेकार्थ- वाराह विहित पर्वताग्र मृद, बकरी का दुग्ध तथा खड्ग का विशेष प्रयोग होता है।

दानार्थ- बैल, तैल, तिल, कम्बल, कस्तूरी, छाग, काला वस्त्र इत्यादि दिया जाता है।

राहु की शान्ति हेतु गोमेद नामक रत्न धारण करने का विधान मिलता है। शनिवार को चांदी या अष्टधातु की अंगूठी में गोमेद को जड़वाकर विधिवत उपासना करके राहु के मूल मन्त्र का 18000 जप करके दाहिने हाथ की मध्यमा अंगुलि में धारण करना चाहिये। गोमेद का वनज छ रत्ती से कम नही होना चाहिये। केतु की शान्ति के लिये लहसुनिया रत्न धारण करना चाहिये। शनिवार को चांदी

की अंगूठी में लहसुनिया जड़वाकर विधिपूर्वक उपासना करनी चाहिये। इसमें केतु के मूल मन्त्र का 7000जप करना चाहिये। लहसुनिया तीन रत्ती से कम नही होना चाहिये। इसको अर्धरात्रि के समय मध्यमा या कनिष्ठा उंगली में धारण करना चाहिये।

इस प्रकार आपने यह देखा कि राहु एवं ग्रह की शान्ति कैसे की जायेगी। राहु एवं केतु शान्ति हेतु रत्नो के धारण के सन्दर्भ में भी आप जान गये होगें। अतः आप राहु एवं केतु ग्रह की शान्ति करा सकते है।

अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- राहु एवं केतु ग्रह शान्ति हेतु किस वार का व्रत किया जाता है?

क- शनि, ख- सोम, ग- रवि, घ- भौम।

प्रश्न 2- राहु एवं केतु ग्रह हेतु किस वर्ण का पुष्प देना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- पीत, घ- कृष्ण।

प्रश्न 3-राहु शान्ति हेतु किसका कलश स्थापित करना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- रजत का, ग- लोहे का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 4- राहु शान्ति हेतु पूर्णपात्र किसका होना चाहिये?

क- स्वर्ण का, ख- लोहे का, ग- ताम्र का, घ- कांस्य का।

प्रश्न 5- राहु की प्रतिमा किसकी बनाई जाती है?

क- स्वर्ण की, ख- रजत की, ग- लोहे की, घ- कांस्य की।

प्रश्न 6- राहु शान्ति हेतु किस समिधा का हवन किया जाता है?

क- अर्क, ख- पलाश, ग-,खदिर, घ- दूर्वा।

प्रश्न 7- केतु शान्ति हेतु समिधा क्या है?

क- कुशा, ख- दूर्वा, ग- खदिर, घ- अर्क।

प्रश्न 8- केतु शान्ति हेतु रत्न क्या है?

क- गोमेद, ख- लहसुनिया, ग- पुखराज, घ- नीलम।

प्रश्न 9- राहु का रत्न क्या है ?

क- माणिक्य, ख- मोती, ग- गोमेद, घ- पन्ना।

प्रश्न 10- गोमेद को किस अंगुलि में धारण करना चाहिये ?

क- तर्जनी, ख- मध्यमा, ग- अनामिका, ग- कनिष्ठा।

इस प्रकरण में आपने राहु एवं केतु ग्रह की शान्ति प्रविधि के बारे में जाना। आशा है अब आप राहु एवं ग्रह की शान्ति करा सकेगें।

2.5 सारांश

इस ईकाई में आपने नवग्रहों के शान्ति का विधान जाना है। वस्तुतः ग्रहों की संख्या नौ बतलाई गई है जिन्हे सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु ण्वं केतु बतलाया गया है। इन ग्रहों का मानव जीवन पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता ही है। लेकिन ज बवह प्रभाव अनुकूल न होकर प्रतिकूल पड़ने लगता है तो बड़े - बड़े धैर्यवान जन व्याकुल हो जाते है। उनके इस व्याकुलता का शमन करने केलिये और उनके धैर्य को बढ़ाने के लिये पौरोहित्य जिसे कर्मकाण्ड कहा जाता है उसमें नवग्रह शान्ति का विधान किया गया है। इसके अन्तर्गत सूर्य शान्ति हेतु सूर्यवार व्रत, रक्त पुष्प का सूर्य भगवान को प्रदान करना, सूर्य के मूल मन्त्र का जप, सूर्य समिधा अर्क का हवन एवं सूर्य के रत्न के धारण का विधान किया गया है। चन्द्र शान्ति हेतु सोमवार व्रत, सफेद पुष्प का चन्द्रमा को प्रदान करना, चन्द्र के मूल मन्त्र का जप, चन्द्र समिधा पलाश का हवन एवं चन्द्र के रत्न के धारण का विधान किया गया है। भौम शान्ति हेतु भौमवार व्रत, रक्त पुष्प का मंगल यन्त्र या हनुमान जी को प्रदान करना, भौम के मूल मन्त्र का जप, भौम समिधा खदिर का हवन एवं भौम के रत्न के धारण का विधान किया गया है। बुध शान्ति हेतु बुधवार व्रत, रक्त पुष्प का गणेश भगवान को प्रदान करना, बुध के मूल मन्त्र का जप, बुध समिधा अपामार्ग का हवन एवं बुध के रत्न के धारण का विधान किया गया है। बृहस्पति शान्ति हेतु बृहस्पतिवार व्रत, पीत पुष्प का विष्णु भगवान को प्रदान करना, बृहस्पति के मूल मन्त्र का जप, बृहस्पति समिधा पीपल का हवन एवं बृहस्पति के रत्न के धारण का विधान किया गया है। शुक्र शान्ति हेतु शुक्रवार व्रत, सफेद पुष्प का देवी मां को प्रदान करना, शुक्र के मूल मन्त्र का जप, शुक्र समिधा अर्क का हवन एवं शुक्र के रत्न के धारण का विधान किया गया है। शनि राहु एवं केतु शान्ति हेतु शनिवार व्रत, कृष्ण पुष्प का शनि, राहु एवं केतु को प्रदान करना, शनि, राहु एवं केतु के मूल मन्त्र का जप, शनि, राहु एवं केतु समिधा शमी, दुर्वा एवं कुशा का हवन एवं शनि, राहु एवं केतु के रत्न के धारण का विधान किया गया है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली -

सम्भार- सामग्री, रजत- चांदी, कांस्य- कांसा, पायस- खीर, अर्क- मदार, पलाश- पलाश, खदिर- खैर, अपामार्ग- चिचिड़ी, उदुम्बर- गूगल, कृसर- खिचड़ी, छाग- बकरी, खड्ग- तलवार, मृद- मिट्टी, महिषी- भैंस, लौह- लोहा, मुक्ताफल- मोती, विद्रुम- मूंगा, गारुत्मक- पन्ना, पुष्पक- पुखराज, वज्र- हीरा, कुलित्थ- कुलथी, रक्त- लाल, पीत- पीला, कृष्ण- काला, वर्ण- रंग, आमलक- आंवला, माष- उड़द, तंडुल- चावल।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इस उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

1.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-घ, 2-क, 3-ख, 4-ग, 5-ग, 6-ख, 7-क, 8-ख, 9- ग, 10- घ, 11-ग, 12-घ।

1.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ग, 3-ख, 4-ग, 5-ख, 6-ग, 7-घ, 8-क, 9- ग, 10- घ।

1.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-ग, 5-क, 6-क, 7-ख, 8-ग, 9-क, 10-क।

1.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-क, 3-ख, 4-ख, 5-ख, 6-ख, 7-ख, 8-घ, 9- ख, 10- घ, ।

1.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ग, 2-ख, 3-ग, 4-ग, 5-क, 6-ग, 7-ख, 8-ग, 9- ग, 10- ग।

1.4.4 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-घ, 2-ख, 3-घ, 4-घ, 5-क, 6-घ, 7-घ, 8-घ, 9- घ, 10- घ।

1.4.5 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-घ, 2-ग, 3-ग, 4-क, 5-क, 6-घ, 7-क, 8-क, 9- ख, 10-क।

1.4.6 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ख, 2-क, 3-ख, 4-ख, 5-ख, 6-क, 7-क, 8-घ, 9- ख, 10-ख।

1.4.7 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ख, 2-घ, 3-घ, 4-ग, 5-ग, 6-ख, 7-क, 8-क, 9-ख, 10-ख।

1.4.8 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-घ, 3-ग, 4-ख, 5-ग, 6-घ, 7-क, 8-ख, 9-ग, 10-ख।

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मूल शान्तिः।

2-शान्ति- प्रकाशः।

3-कर्मकाण्ड- प्रदीपः।

4-शान्ति- विधानम्।

5-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

6-यजुर्वेद- संहिता।

7- ग्रह- शान्तिः।

8- फलदीपिका

2.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- मुहूर्त्त चिन्तामणिः।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।

3- पूजन विधानम्।

4- रत्न एवं रुद्राक्ष का धारण

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न-

1- नवग्रहों का परिचय दीजिये।

2- नवग्रहों का मानव जीवन से संबंध स्थापित कीजिये।

3- सूर्य ग्रह शान्ति के बारे में आप क्या जानते है? वर्णन कीजिये।

4- चन्द्रमा ग्रह शान्ति विधि का विधान वर्णित कीजिये।

5- मंगल ग्रह शान्ति विधि का वर्णन कीजिये।

6- बुध ग्रह शान्ति सविधि लिखिये।

7- बृहस्पति ग्रह शान्ति विधि का वर्णन कीजिये।

8 शुक्र ग्रह शान्ति की विधि का वर्णन कीजिये।

9-शनि शानित की विधि बतलाइये।

10- राहु एवं केतु शान्ति की विधि वर्णित करें।

इकाई – 3 यमल जनन एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति शान्ति

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

इस इकाई में यमल जनन एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति संबंधी शान्ति प्रविधि का अध्ययन का आप अध्ययन करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की शान्ति प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कोई भी जातक यदि यमल जनन या ज्वरादि रोगोत्पत्ति से परेशान है तो उसकी शान्ति आप कैसे करेगें, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

किसी भी जातक का जन्म जब होता है तो उसके तत्क्षण बाद किसी अन्य जातक या जातिका का जन्म यमल जनन कहलाता है। लोक में इसे जुड़वा बच्चा के रूप में जाना जाता है। शास्त्रों यह निर्देश है कि एक ही नक्षत्र में या एक समय पर जन्म होने पर वे दोनों बच्चे अपना अभ्युदय नही कर पाते । इसका मूल कारण यमल जनन का दोष है।या किसी नक्षत्र विशेष में ज्वरोत्पत्ति होने पर उसका प्रकोप कितना रहेगा तथा उसका उपचार क्या हो सकेगा इसको जानना आवश्यक है। क्योंकि इसके कारण जातक का जीवन संकटापन्न होता है। जातक के परिवार का सीधा-सीधा संबंध होने के कारण इनसे संबंधित लोगों का भी जीवन प्रभावित होता है । इसलिये शान्ति कराने की आवश्यकता होती है। इसी शान्ति प्रविधि को यमल जनन एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति शान्ति के नाम से जाना जाता है ।

इस इकाई के अध्ययन से आप यमल जनन एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति संबंधी शान्ति करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे संबंधित व्यक्ति का यमल जनन एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति संबंधी दोषों से निवारण हो सकेगा जिससे वह अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं संवर्धित हो सकेगा । इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, समाज कल्याण की भावना का पूर्णतया ध्यान देना, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान सहित वर्णन करने का प्रयास करना एवं वृहद् एवं संक्षिप्त दोनों विधियों के प्रस्तुतिकरण का प्रयास करना आदि, इस शान्ति के नाम पर ठगी, भ्रष्टाचार, मिथ्या भ्रमादि का निवारण हो सकेगा ।

3.2 उद्देश्य-

उपर्युक्त अध्ययन से आप शान्ति की आवश्यकता को समझ रहे होगें । इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते है

3.2.1 यमल जनन एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति संबंधी शान्ति के कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना ।

3.2.2 यमल जनन एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति शान्ति की शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन ।

3.2.3 इस कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना ।

3.2.4 प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

3.2.5 लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

3.2.6 समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

3.3 यमल जनन एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति शान्ति

3.3.1 यमल जनन का परिचय

यह सर्व विदित है कि जब जुड़वा बच्च पैदा होता है तो उसकी शान्ति करानी पड़ती है। लेकिन पहले यह शान्ति है क्या? इसका परिचय आप इस प्रकरण के अध्ययन से प्राप्त कर सकेगें। यमल का अर्थ युगल तथा जनन का अर्थ प्रजनन है। जुड़वा बच्चों के जन्म लेने पर जो शान्ति करानी चाहिये उसे यमल जनन शान्ति कहते है। शास्त्रों में तो लिखा गया है कि केवल मनुष्य ही नहीं अपितु पशुओं को भी यदि जुड़वे बच्चे की प्राप्ति हो तो उसके स्वामी को अवश्य यमल जनन शान्ति कराना चाहिये। शान्ति प्रकाश नामक ग्रन्थ में लिखा गया है कि ग्रहों के उत्पात में, उलूक, गृध, कपोत व बाज पक्षी के गृह में प्रवेश करने पर या गृह के खम्भों पर बैठने पर, बल्मीक (चीटियों के घर बना लेने पर), मधुमक्खियों के जाला लगाने पर, घड़े के अकारण रिसने पर, आसन व शयन के जल जाने पर, गृह में आग लग जाने पर, यान के भंग हो जाने पर, गृहकपोतिका व कृकलाश के सरकने पर, छत्र एवं ध्वज के भंग हो जाने पर, उत्पात के समय, भूकम्प होने पर, उल्कापात होने पर, काक एवं सर्प का संगम देखने पर, दासी, महिषी, बडवा, गौ, हस्तिनी को भी यमल जनन होने पर यमल जनन शान्ति कराना चाहिये। उक्त सन्दर्भों से यह पता चलता है कि यमल (जोड़ा) जनन शान्ति का प्रयोग व्यक्ति के लिये अत्यन्त आवश्यक है। इस यमल जनन शान्ति का प्रतिपादन महर्षि कात्यायन ने किया है इसलिये इसको कात्यायनोक्त यमल जनन शान्ति के नाम से भी जाना जाता है। अतः इसका सम्पादन करना उचित है।

इसी सन्दर्भ से जुड़ी हुई एक बात और देखने को मिलती है कि -

एकस्मिन्नेव नक्षत्रे भ्रात्रोर्वा पितृपुत्रयोः ।
प्रसूतिश्चेत्तयोर्मृत्यु भवेदेकस्य निश्चयात् ।।
तत्र शान्ति प्रकर्त्तव्या सर्वाचार्यमतेन तु ।

इस वचन के अनुसार एक ही नक्षत्र में यदि भाई, पिता एवं पुत्र का जन्म हो तो उसमें से एक की मृत्यु निश्चित है। यह प्रतीत होता है कि यमल जनन में भी प्रायः एक नक्षत्र जनन वाली घटना घटती है। लेकिन सबमें नही, क्योंकि हो सकता है यमल जनन हो लेकिन दोनों के दो नक्षत्र हों। यमल जनन शान्ति से दोनो शिशुओं की रक्षा की जाती है।

इस प्रकरण में आपनें यमल जनन क्या है ? इसके बारे में जाना । इसकी जानकारी से आप यमल जनन से हो रही हानि तथा उसकी शान्ति की आवश्यकता को बता सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-यमल का अर्थ क्या है?

क-युगल, ख- त्रिगल, ग- चतुर्गल, घ- पंचगल।

प्रश्न 2- जनन का अर्थ क्या है?

क- अवनेजन, ख- प्रजनन, ग- नियोजन, घ- वियोजन।

प्रश्न 3- ग्रहों के उत्पात मे कौन शान्ति करना चाहिये?

क- मूल शान्ति, ख- दन्त जनन शान्ति, ग-यमल जनन शान्ति, घ-एक नक्षत्र जनन शान्ति।

प्रश्न 4- उलूक व बाज पक्षी के गृह में प्रवेश करने पर कौन शान्ति करना चाहिये?

क- मूल शान्ति, ख- दन्त जनन शान्ति, ग-यमल जनन शान्ति, घ-एक नक्षत्र जनन शान्ति।

प्रश्न 5- बल्मीक यानी चीटियों के घर बना लेने पर कौन शान्ति करना चाहिये?

क- मूल शान्ति, ख- दन्त जनन शान्ति, ग-यमल जनन शान्ति, घ-एक नक्षत्र जनन शान्ति।

प्रश्न 6- मधुमक्खियों के जाला लगाने पर कौन शान्ति करना चाहिये?

क- मूल शान्ति, ख- दन्त जनन शान्ति, ग-यमल जनन शान्ति, घ-एक नक्षत्र जनन शान्ति।

प्रश्न 7- गृह में आग लग जाने पर कौन शान्ति करना चाहिये?

क- मूल शान्ति, ख- दन्त जनन शान्ति, ग-यमल जनन शान्ति, घ-एक नक्षत्र जनन शान्ति।

प्रश्न 8- भूकम्प होने पर कौन शान्ति करना चाहिये?

क- मूल शान्ति, ख- दन्त जनन शान्ति, ग-यमल जनन शान्ति, घ-एक नक्षत्र जनन शान्ति

प्रश्न 9- यमल जनन का प्रतिपादन किसने किया था?

क- वसिष्ठ ने, ख- कात्यायन ने, ग- पुलसत्य ने, घ- गौतम ने।

प्रश्न 10- यमल जनन से रक्षा होती है-

क- नवजातों की, ख- गर्भस्थों की, ग- जन्म लेने वालों की, घ- माता पिता की।

अतः इस प्रकरण में आपने यमल जनन शान्ति के बारे के परिचय के बारे में जाना। अब हम अग्रिम प्रकरण में ज्वरादि रोगोत्पत्ति पर विचार करेगें।

3.3.2 ज्वरादि रोगोत्पत्ति का विचार -

इससे पूर्व बताए गये समस्त बातों को आपने आत्मसात् कर लिया होगा। अब हम इस प्रकरण में ज्वरादि जिसे लोक में बुखार के नाम से जाना जाता है के बारे में आपको ज्ञान प्रदान करना चाहते है। इसका साधारण नियम यह है कि जिस दिन ज्वर प्रारम्भ हो उस दिन पंचांग से यह देख लीजिये कि कौल सी नक्षत्र है? जोभी नक्षत्र होगी उसका नाम नीचे लिखे गये नक्षत्रों से मिलाइये। कोई न कोई नक्षत्र अवश्य मिल जायेगी। अब उस नक्षत्र के आगे का वर्णन पढ़िये। आपको पता चल जायेगा कि यह बुखार कितने दिन तक रहेगा। उसके बाद यदि शान्ति कराने की आवश्यकता समझ में आयेगी तो दिये गये विधान के अनुसार आप शान्ति करा सकते है। यहां इसी सन्दर्भ में विचार किया जा सकता है। इसके विचार से विमारी की गम्भीरता का विचार आप लगा सकते है जो इस प्रकार है।

अश्विन्यां रोगोत्पत्तावेकाह नवदिनानि वा पंचविंशतिदिनानि वा। भरण्यामेकादशैकविंशतिर्वा मासमृत्युर्वा।। कृत्तिकायां दशनवैकविंशतिर्वा। रोहिण्यां दश वा नव सप्त त्रीणिवाऽहनि। मृगे पंच नव वा त्रिंषद्वा। आर्द्रायां मृत्युर्वा दशाहं मासं वा। पुनर्वसौ सप्त नव वामृत्युर्वा। पुष्ये सप्त वा मृत्युः। आश्लेषायां मृत्युर्वा विंशतिस्त्रिंशद्वा नव दिनानि वा पीडा। मघायां मृत्युर्वासार्द्धमासान्वामासं विंशति दिनानि वा पीडा। पूर्वाफाल्गुन्यां मृत्युर्वाऽब्दं मासं वा पंचदश वा षष्टि दिनानि पीडा। उत्तराफाल्गुन्यां सप्तविंशतिः पंचदश सप्त वा दिनानि। हस्ते मृत्युरष्टं वा सप्त पंचदश दिनानि वा। चित्रायां पक्षमष्ट वा दश वैकादशे हानि। स्वात्यां मृत्युर्वैकद्वित्रिचतुः पंचमासै र्वा दशदिनै रोग नाशः। विशाखायां मासं वा पक्षं वा अष्टदिनं विंशतिदिनानि वा पीडा। अनुराधायां दशरात्रं अष्टाविंशतिरात्रं वै ज्येष्ठायां मृत्युर्वा पक्षं वा मासं वैकविंशतिरात्रं वा पीडा। मूले मृत्युः पक्षं नवरात्रं विंशतिरात्रं वा पीडा। पूर्वाषाढायां मृत्युर्वा द्वित्रिषडादिमासै विंषतिदिनैः पक्षेण वा रोगनाशः। उत्तराषाढायां सार्द्धमासं विंशतिरात्रं वा मासम्। श्रवणे पंचविंशतिर्दशवैकादश वा षष्टिर्वा हानि। धनिष्ठायां दशरात्रं पक्षं मासं वा त्र्योदशरात्रम्। शततारकायां द्वादशाष्टैकादश वा। पूर्वाभाद्रपदायां मृत्युर्वा द्वित्र्यादिमासं वा दशरात्रम्। उत्तराभाद्रपदायां सार्द्धमासं पक्षं सप्ताहं दशाहं वा। रेवत्यां ज्वराद्युत्पतौ दशाहमष्टाविंशति रात्रं वा पीडा। जन्म नक्षत्रे जन्मराशौ वाऽष्टमचन्द्रे मृत्युयोगे च रोगोत्पतौ मृत्युः। येषु नक्षत्रेषु मरणमुक्तं तत्र शान्तिरावश्यकी।

उपरोक्त प्रकरण में यह स्पष्ट किया गया है कि किस नक्षत्र में ज्वरादि रोगों की उत्पत्ति होने पर उससे संबंधित व्यक्ति कितने दिन तक प्रभावित रह सकता है। जैसे- अश्विनी नक्षत्र में यदि किसी को रोग की प्राप्ति हो जाय तो वह रोग एक दिन, नौ दिन या पचीस दिन तक व्यक्ति को प्रभावी रखेगा। भरणी

नक्षत्र में ग्यारह, इक्कीस, तीस दिन या मृत्यु पर्यन्त ज्वरादि रोगों का प्रभाव रहता है। कृत्तिका नक्षत्र में दश, नौ या इक्कीस दिन तक एवं रोहिणी में दश, नव, तीन या सात दिन तक प्रभाव रहता है। मृगशिरा में पाँच, नव या तीस, आर्द्रा में दश, एक मास अथवा मृत्यु पर्यन्त तक, पुनर्वसु में सात, नव या मृत्यु पर्यन्त, पुष्य में सात दिन या मृत्यु पर्यन्त तक, आश्लेषा में बीस, तीस, नव दिन या मृत्यु तक, मघा में पैंतालीस, तीस, बीस अथवा मृत्यु तक कष्ट के योग बनते है। पूर्वाफाल्गुनि में पन्द्रह, तीस, साठ, एक वर्ष या मृत्यु पर्यन्त, उत्तराफाल्गुनि में सात, पन्द्रह या सत्ताईस दिन तक, हस्त में आठ, सात, पन्द्रह दिन अथवा मृत्यु तक, चित्रा में आठ, दश, ग्यारह, पन्द्रह दिन तक, स्वाती में दश दिन, एक- दो- तीन-चार या पाँच महीनों में अथवा मृत्यु तक, विशाखा में आठ, पन्द्रह, बीस, तीस दिनों तक, अनुराधा में दश अथवा बाईस रात तक, ज्येष्ठा में पन्द्रह, इक्कीस, तीस दिनों तक या मृत्यु तक, मूल में नव, पन्द्रह, बीस दिनों तक या मृत्यु पर्यन्त, पूर्वाषाढ़ा में पन्द्रह, बीस दिनों तक या दो, तीन अथवा छः महीनों तक, उत्तराषाढ़ा में बीस, तीस अथवा पैंतालिस दिनों तक, श्रवण में दश, ग्यारह, पचीस अथवा साठ दिनों तक, धनिष्ठा में दश, तेरह, पन्द्रह अथवा तीस दिनों तक, शतभिषा में आठ, दश अथवा ग्यारह दिनों तक, पूर्वाभाद्रपद में दश दिनों तक या दो तीन महीनों तक या मृत्यु तक, उत्तराभाद्रपद में सात, दश, पन्द्रह अथवा पैंतालीस दिनों तक तथा रेवती में दश अथवा बाईस दिनों तक कष्ट रहता है। इसके अलावा जन्म नक्षत्र, जन्मराशि अथवा अष्टम चन्द्रमा एवं मृत्यु योग में ज्वरादि रोगों की उत्पत्ति होने पर मृत्यु तक कष्ट रहता है। इसलिये शान्ति अवश्य करनी चाहिये।

इसको और भी सुगम विधि से इस प्रकार समझा जा सकता है-

अश्विनी - 1, 9, 25 दिनों तक।

भरणी - 11, 20, 30 दिनों तक या मरणान्त तक।

कृत्तिका - 9, 10, 21 दिनों तक।

रोहिणी - 9, 10, 7, 3 दिनों तक।

मृगशिरा - 5, 9, 30 दिनों तक।

आर्द्रा - 10, 30 दिनों तक या मरणान्त तक।

पुनर्वसु - 7, 9 या मरणान्त तक।

पुष्य - 7 या मरणान्त तक।

आश्लेषा - 9, 20, 30दिनों तक या मरणान्त तक।

मघा - 20, 30, 45 दिनों तक या मरणान्त तक।

पूर्वाफाल्गुनी- 15, 30, 60 दिनों तक या एक वर्ष तक या मरणान्त तक।

उत्तराफाल्गुनी - 7, 15, 27 दिनों तक।

हस्त - 7, 8, 15 दिनों तक या अन्त तक।

चित्रा - 8, 10, 11, 15 दिनों तक।

स्वाति - 1,2,3,4,5, महीनों या अन्त तक।

विशाखा - 8, 15, 20या 30 दिनों तक।

अनुराधा - 10, 18 दिनों तक।

ज्येष्ठा - 15, 21 या 30दिनों तक या अन्त तक।

मूल - 9, 15, 20 दिनों तक या अन्त तक।

पूर्वाषाढ़ा- 20, 15 दिनों तक या 2, 3, 6 महीनों तक या अन्त तक।

उत्तराषाढ़ा - 20, 30, 45 दिनों तक।

श्रवण - 10, 11, 25 या 60 दिनों तक।

धनिष्ठा - 10, 13, 15 या 30 दिनों तक।

शतभिषा - 8, 11 या 12 दिनों तक।

पूर्वाभाद्रपद - 10 दिन या 2, 3 महीनों तक या अन्त तक।

उत्तराभाद्रपद- 7, 10, 15, 45 दिनों तक।

रेवती - 10 या 28 दिनों तक।

इस प्रकरण में आपनें ज्वरादि रोगोत्पत्ति का क्या है ? इसके बारे में जाना। इसकी जानकारी से आप ज्वरादि रोगोत्पत्ति से हो रही हानि तथा उसकी शान्ति की आवश्यकता को बता सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है -

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

प्रश्न 2-भरणी नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

प्रश्न 3- कृत्तिका नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

प्रश्न 4- रोहिणी नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

प्रश्न 5--मृगशिरा नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

प्रश्न 6-आर्द्रा नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

प्रश्न 7-आश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

प्रश्न 8-मघा नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

प्रश्न 9-चित्रा नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

प्रश्न 10-रेवती नक्षत्र में उत्पन्न ज्वर निम्नलिखित में कितने दिनों तक रह सकता है?

क-एक दिन, ख- पांच दिन, ग- दश दिन, घ- बीस दिन।

इस प्रकार उपरोक्त प्रकरणों में आपने यमल जनन का परिचय एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति विचार के बारे में जाना। अब आपको इन दोनों की शान्तियां कैसे की जायेगी यह जानने की इच्छा कर रही होगी। इसलिये हम अब इनके शान्ति प्रविधियों की चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

3.3.3 यमल जनन शान्ति एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति शान्ति

3.4.1 यमल जनन शान्ति का विधान-

सर्व प्रथम शान्ति हेतु उपयुक्त स्थान का चायन किया जाता है जहां निर्विघ्नतापूर्वक शान्ति करायी जा सके। तदनन्तर शान्ति कर्म में प्रयुक्त होने वाली समस्त सामग्रियों को एकत्रित किया जाता है। कुछ सामग्रियों का चयन उसी दिन किया जाता है जैसे दूध, फूलमाला, दूर्वा इत्यादि। क्योकि ये वस्तुयें पूर्व में संग्रहीत करने पर खराब हो सकती है। इसलिये उसी दिन चयन करने का विधान है। शान्ति कर्म प्रारम्भ करने के एक दिन पूर्व सायंकाल अपने मन में यह दृढ़ निश्चय करना चाहिये कि कल मै यह शान्ति इस कामना के लिये करूंगा। उसके बाद उस दिन सात्विक आहारादि का ग्रहण कर नियमस्थ हो जाना चाहिये।

शान्ति वाले दिन उपयुक्त सामग्रियों के साथ सुनिश्चित स्थान पर पहुच कर आसन इत्यादि बिछा कर गणेशाम्बिका, कलश, षोडशमातृका, सप्तघृतमातृका इत्यादि के लिये सज्जता करनी चाहिये। तदनन्तर यमल जनन शान्ति करना चाहिये। पूर्वोक्त रीति से आचमनादि प्रक्रियाओं का सम्पादन करते हुये स्वस्ति मन्त्रों का पाठ कर संकल्प का आचरण करना चाहिये।

संकल्पः- ॐ श्री विष्णुर्विष्णर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य श्री ब्रह्मणोन्हि द्वितीये परार्द्धे विष्णुपदे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवश्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे युगे कलियुगे कलिप्रथम चरणे जम्बूद्वीपे भूर्लोके भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशे अमुकक्षेत्रे अमुकसंवत्सरे अमुकायने अमुकऋतौ महामांगल्यप्रदमासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक नक्षत्रे अमुक योगे अमुक करणे अमुकराशि स्थिते श्रीचन्द्रे अमुक राशिस्थिते श्री सूर्ये अमुक राशिस्थिते देवगुरौ अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुति स्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम भार्यायाः यमलजननसूचित सर्वारिष्टनिरसनद्वारा शुभता सिद्धये सवोपद्रवशान्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सनवग्रहमखां कात्यायनोक्तां यमलजनन शान्तिं करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये।

तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि शान्तिविधानानुसारेण कुर्यात्।

इसके बाद यज्ञीयकर्मक्षेत्र विघ्नादिकारक तत्वों से रहित हो जाय इसके लिये पीली सरसों को दाहिने हाथ में रखकर बाँये हाथ से ढककर दिग्रक्षण मन्त्रों का पाठ करे।

तत्र मन्त्रः- **यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्यसर्वदा। स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु।**

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमि संस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारः ते नश्यन्तु शिवज्ञया।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्। सर्वेषामविरोधेन शान्ति कर्म समारभे।

पूर्व आदि चारो दिशाओं में छींटकर शान्ति विधान या संबंधित पद्धितियों के अनुसार गणेशाम्बिका पूजन, कलश स्थापन, पुण्याहवाचन, षोडशमातृका पूजन, सप्तघृतमातृका पूजन, आयुष्यमन्त्र जप, नान्दीश्राद्ध, आचार्यवरण, नवग्रहादि स्थापन एवं पूजन करना चाहिये। तदनन्तर भूमौ प्रादेशं कृत्वा (यज्ञ भूमि के ऊपर दाहिने हाथ की तर्जनी एवं अगूंठे को फैलाते हुये वाचन करे) ॐ देवाः आयान्तु, यातुधानाः अपयान्तु, विष्णोदेवयजनं रक्षस्व। मन्त्र का पाठ करना चाहिये।

इसके अनन्तर एक स्थण्डिल या चौकी या पीढ़े पर आठों दिशाओं में आठ कलशों की स्थापना करें। इन समस्त कलशों का स्थापन कलश स्थापन विधि के अनुसार करना चाहिये। उन समस्त कलशों में

सर्वोषधि इत्यादि प्रक्षिप्त कर दम्पति का अभिषेक करना चाहिये। अभिषेकार्थ अग्रलिखित मन्त्रों का प्रयोग किया जा सकता है-

पौराणिक मन्त्राः-

सुरास्त्वामभिषिंचन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।
वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणोविभुः ।।
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्चभवन्तु विजयाय ते।
आखण्डलोग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा।।
वरुणः पवनश्चैवधनाध्यक्षस्तथा शिवः।
ब्रह्मणासहिताः सर्वे दिक्पालाः पान्तु ते सदा।।
कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधापुष्टिः श्रद्धाक्रियामतिः।
बुद्धिर्लज्जावपुः शान्तिः कान्तिश्तुष्टिश्च मातरः।
एतास्त्वामभिषिंचन्तु देवपत्न्यः समागता।
आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुधजीवसितार्कजाः।।
ग्रहास्त्वामभिषिंचन्तु राहुः केतुश्च तर्पिताः।
देवदानव गन्धर्वा यक्षराक्षस पन्नगाः।।
ऋषयो मनवो गावो देवमातर एव च।
देवपत्न्यो द्रुमानागा दैत्याश्चाप्सरसांगणाः।।
अस्त्राणि सर्व शस्त्राणि राजानो वाहनानि च।
औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये।।
सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः।
एतेत्वामभिषिंचन्तु धर्मकामार्थ सिद्धये।।

अथवा इन वैदिक मन्त्रों का भी इस अवसर पर पाठ किया जा सकता है- ॐ आपोहिष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे। ॐ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते ह नः। उशतीरिव मातरः। ॐ तस्माऽअरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः। कया नश्चित्र आभुवदूती सदा वृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता।। कस्त्वा सत्यो मदानामंहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढाचिदारुजे वसु। स्तोकानामिन्दुप्रतिशूरऽ इंद्रो वृषायमाणो वृषभस्तुराषाट्। घृतप्रुषामनसा मादेमाना स्वाहा देवाऽ अमृतामादयन्ताम्।। आ यात्विन्द्रो व्वसऽ उपनडहस्तुतः सधमादस्तुशूरः। व्वावृधानस्तविशीर्यस्य पूर्वी द्यौर्नक्षत्रमभिभूति पुष्यात् ।। आ न इन्द्रो दूरादानऽ आसादभिष्टि

कृदवेयासदुग्रः ओजिष्ठेभिर्नृपतिर्वज्र बाहुः ॐ सङ्गे समत्सु तुर्वणिः पृतन्युन् ॥ आनऽ इन्दो हरिभिर्यात्वच्छार्व्वाचीनोव्वसे राधसे च। तिष्ठाति वज्री मघवा विरप्शीमँयज्ञ मनुना व्वाजसातौ ॥ त्रातारमिन्द्र मवितारमिन्द्र गुं हवे हवे सुहव गुं शूरमिन्द्रमह्वययामि शुक्रम्पुरुहूत मिन्द्र गुं स्वस्ति नो मघवाधात्विन्द्रः॥ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके॥ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्त दाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुष गुं समानमायुः प्रमोषीः। त्वन्नोऽ अग्ने व्वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडोऽ अवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठोवह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषा गुं सि प्रमुमुग्ध्यस्मत्॥ सत्वन्नो । उदुत्तमं ॥ इदमापः प्रवहतावद्यंच मलंचयत्। यच्चाभिदुद्रोहा नृतं यच्च शेपे अभीरुणम् ॥ आपो मा तस्मादेनसः पवमानश्चमुंचतु ॥ अपाघमपकिल्विष मपकृत्यामपोरपः। अपामार्गत्व मस्मदपदुःश्वप्न्य गुं सुव ॥

इस प्रकार से अभिषिक्त यजमान दम्पति वस्त्र एवं चन्दन से अलंकृत होकर बैठे। तदनन्तर पूर्व में दिये गये की भाँति यानी पंचभूसंस्कार करके अग्नि की स्थापना करनी चाहिये। ग्रहों की स्थापना करके पूजन करके कुशकण्डिका विधि का सम्पादन कर आज्यभागान्त आहुतियाँ प्रदान की जानी चाहिये। तद्यथा-

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। इति मनसा

ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय न मम। इति आघारसंज्ञकौ

ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम। इति आज्यसंज्ञकौ

उपरोक्त चारों आहुतियाँ केवल आज्य से की जाती है। उसके बाद यजमान हाथ में जल, अक्षत लेकर यह संकल्प करे- इमानि हवनीय द्रव्याणि या या यक्ष्यमाणदेवताः ताभ्यस्ताभ्यो मया परित्यक्तं न मम यथा दैवतमस्तु।

इसके अनन्तर वराहुति एवं ग्रहाहुति देनी चाहिये। प्रत्येक आहुति 8 या 28 अथवा 108 समिधा, तिल, चरु और घृत से तथा हवन सामग्री से करनी चाहिये। वराहुति से तात्पर्य गणेश एवं अम्बिका जी की आहुति से तथा ग्रहाहुति से तात्पर्य सूर्यादि नवग्रहों की आहुति से है। यथा -

ॐ गणपतये स्वाहा। ॐ अम्बिकायै स्वाहा। ॐ सूर्याय स्वाहा। इसके अनन्तर दिये गये स्नपन मन्त्रों से आज्याहुति देनी चाहिये। तदनन्तर अधोलिखित हवन करना चाहिये।

अग्नये स्वाहा इदं अग्नये न मम॥ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम॥ पवमानाय स्वाहा इदं पावकाय न मम॥ मारुताय स्वाहा इदं मारुताय न मम॥ मरुतयः स्वाहा इदं मरुतयो न मम॥ यमाय स्वाहा इदं यमाय न मम॥ अन्तकाय स्वाहा इदं अन्तकाय न मम॥ मृत्यवे स्वाहा इदं मृत्यवे न मम॥ ब्रह्मणे

स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम।।

इसके अनन्तर एक चरु की आहुति से स्विष्टकृदाहुति प्रदान कर बलिदान देना चाहिये।

ततो बलिदानम्-पहले इन्द्र आदि दशदिक्पालों को बलिदान देना चाहिये- इन्द्रादिदश दिक्पालेभ्यो नमः। गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

हाथ में जल और अक्षत लेकर बोलें- इन्द्रदिदशदिक्पालेभ्यः सांगेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः एतान् सदीप दधि माषाक्षत बलीन् समर्पयामि। इति जलाक्षतान् त्यजेत्। ऐसा कहकर हाथ का जल एवं अक्षत त्याग दें।

हाथ में पुष्प लेकर प्रार्थना करें- भो भो इन्द्रादिदशदिक्पालाः सांगाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे आयु कर्त्तारः क्षेमकर्त्तारः शान्तिकर्त्तारः पुष्टिकर्त्तारः तुष्टिकर्त्तारः वरदा भवत। हाथ का पुष्प समर्पित कर दें। हाथ में जल लेकर बोलें- अनेन बलिदानेन इन्द्रदिदशदिक्पालाः प्रीयन्ताम् ।

अब ग्रहों के बलिदान हेतु गन्धाक्षत पुष्प लेकर नवग्रहों का ध्यान करके उनके ऊपर चढ़ा देतें है। नवग्रहादिमण्डलस्थदेवताभ्योनमः। गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

हाथ में जल एवं अक्षत लेकर- ग्रहेभ्यः सांगेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः अधिदेवता प्रत्यधिदेवता गणपत्यादि पंचलोकपाल वास्तोष्पति सहितेभ्यः एतान् सदीप दधि माषाक्षत बलीन् समर्पयामि। इति जलाक्षतान् त्यजेत्। ऐसा कहकर हाथ का जल एवं अक्षत त्याग दें।

हाथ में पुष्प लेकर प्रार्थना करें- भो भो सूर्यादिग्रहाः सांगाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः अधिदेवता प्रत्यधिदेवता गणपत्यादि पंचलोकपाल वास्तोष्पति सहिताः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे आयु कर्त्तारः क्षेमकर्त्तारः शान्तिकर्त्तारः पुष्टिकर्त्तारः तुष्टिकर्त्तारः वरदा भवत। हाथ का पुष्प समर्पित कर दें। हाथ में जल लेकर बोलें- अनेन बलिदानेन सूर्यादिग्रहाः प्रीयन्ताम्। जल छोड़ देना चाहिये ।

अब क्षेत्रपाल बलिदान में गंधाक्षतपुष्प लेकर क्षेत्रपाल का पूजन करे ।

ॐ क्षेत्रपालाय नमः। सकलपूजार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ।

हाथ में पुष्प लेकर अग्रलिखित श्लोकों से क्षेत्रपाल की प्रार्थना हाथ जोड़कर करें ।

नमो वै क्षेत्रपालस्त्वं भूतप्रेतगणैः सह ।

पूजा बलिं गृहाणेमं सौम्यो भवतु सर्वदा ।।

पुत्रान् देहि धनं देहि देहि मे गृहजं सुखम् ।

आयुरारोग्य मे देहि निर्विघ्नं कुरु सर्वदा ।।

क्षेत्रपालाय नमः प्रार्थनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि।

हाथ में जल अक्षत लेकर- ॐ क्षेत्रपालाय सांगाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय मारीगणभैरव राक्षस कूष्माण्ड वेताल भूत प्रेत पिशाच शाकिनी डाकिनी पिशाचिनी गण सहिताय एतं सदीपमाषभक्तबलिं समर्पयामि।

प्रार्थयेत्- हाथ में पुष्प लेकर प्रार्थना करें- भो भो क्षेत्रपाल क्षेत्रं रक्षबलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे आयु कर्त्ता क्षेम कर्त्ता शान्तिकर्त्ता पुष्टिकर्त्ता तुष्टिकर्त्ता वरदो भव।

हाथ में जल लेकर- अनेन बलिदानेन क्षेत्रपालः प्रीयताम्। कहकर जल छोड़ दें। जल छीटकर पवित्र होकर आचमन करके पूर्णाहुति प्रदान करनी चाहिये।

नारियल में कलावा आवेष्टित कर 12 या 6 या 4 स्रुव घी स्रुची में डालकर उसें ऊपर नारिकेल स्थापित कर ॐ पूर्णाहुत्यै नमः मन्त्र से पूजन करके स्रुची को उठाकर पूर्णाहुति देनी चाहिये।

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते स्वाहा।

इदमग्नये वैश्वानराय वसुरुüदित्येभ्यः शतक्रतवे सप्तवते अग्नये ऽ यश्च न मम।।

पूर्णाहुति देने के बाद वसोर्द्धारा हवन करने का विधान है। वसोः पवित्रमसि शतधारं व्वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु व्वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः स्वाहा।।

उसके बाद अग्नि की एक बार प्रदक्षिणा करके पश्चिम भाग में बैठ जाना चाहिये या स्थित हो जाना चाहिये। ततो ऽग्निं प्रदक्षिणीकृत्य पश्चिमदेशे प्राङ्मुखोपविश्य।। कुण्ड के ईशान भाग से स्रुव द्वारा भस्म निकाल कर अनामिका अंगुलि से ललाट में, ग्रीवा में, दक्षिण भुजा के मूल में तथा हृदय में लगाना चाहिये। संस्रव प्राशनम्।। आचमनम्।। पवित्राभ्यां मार्जनम्।। अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः।। ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम्।। कृतस्य अमुक शान्तिहोमकर्मणो ऽ ¯तयाविहितमिदं पूर्णपात्रं सदक्षिणं ब्रह्मणे तुभ्यमहं सम्प्रददे।। इस मन्त्र को पढ़कर ब्रह्मा को पूर्णपात्र देना चाहिए तथा अग्रिम मन्त्र को पढ़कर उसको ग्रहण करने का विधान है। ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवीत्वा प्रतिगृह्णातु।। अग्नेः पश्चातप्रणीताविमोकः।। ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते क्रण्वन्तुभेषजम्।। उपयमनकुशैर्मार्जयेत्।। उपयमन कुशानामग्नौ प्रक्षेपः ब्रह्मग्रन्थि विमोकः।।

इस प्रकार ब्राह्मण भोजनादि का संकल्प कर उत्तर पूजन करना चाहिये एवं विसर्जन करना चाहिये।

क्षमा प्रार्थना -

ओं विष्णवे नमः ।। 3।।

तिलकाशीर्वादः-

श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते ।

धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः।।

मन्त्रार्थाः सफला सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ।

शत्रूणां बुद्धि नाशोऽ स्तु मित्राणा मुदयस्तव: ।।

यज्ञान्त में ब्राह्मणों को भोजन कराकर अपने इष्ट मित्रों के साथ सानन्द मिष्ठान्नादि ग्रहण करना चाहिये।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें यमल जनन शान्ति का विधान क्या है ? इसके बारे में जाना। इसकी जानकारी से आप यमल जनन शान्ति करा सकते हैं तथा इसकी शान्ति की आवश्यकता को बता सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-दिग्रक्षण किससे किया जाता है?

क-पीली सरसों से, ख- पीले पुष्पों से, ग- चावलों से, घ- जल से।

प्रश्न 2- सर्वप्रथम पूजन किसका किया जाता है ?

क- गणेश जी का, ख- कलश का, ग- षोडशमातृका का, घ- सप्तघृतमातृका का।

प्रश्न 3- भस्म कुण्ड के किस भाग से निकाला जाता है?

क- अग्नि कोण से, ख- ईशान से, ग- पूर्व से, घ- दक्षिण से ।

प्रश्न 4- प्रथम ग्रहाहुति क्या है?

क- सूर्य की, ख- चन्द्र की, ग- मंगल की, घ- बुध की ।

प्रश्न 5- दिग्पाल बलिदान में प्रथम बलिदान किसको दिया जाता है?

क- अग्नि को, ख- इन्द्र को, ग- यम को, घ- कुबेर को ।

प्रश्न 6- द्वितीय ग्रहाहुति क्या है?

क- सूर्य की, ख- चन्द्र की, ग- मंगल की, घ- बुध की ।

प्रश्न 7- दिग्पाल बलिदान में द्वितीय बलिदान किसको दिया जाता है?

क- अग्नि को, ख- इन्द्र को, ग- यम को, घ- कुबेर को ।

प्रश्न 8- अन्त में विष्णवे नमः कितनी बार बोलना चाहिये?

क- एक बार, ख-दो बार, ग- तीन बार, घ- चार बार।

प्रश्न 9- षोडशमातृका मण्डल पर कितने देवता होते है?

क- सोलह, ख- सत्रह, ग- अठ्ठारह, घ- उन्नीस।

प्रश्न 10- पूर्णपात्र का दान किसको किया जाता है?

क- आचार्य को, ख- ऋत्विज को, ग- ब्रह्मा को, घ- सदस्य को।

अब आपको यमल जनन शान्ति का ज्ञान हो गया है। अब हम ज्वरादि रोगोत्पत्ति शान्ति के विषय में विधि का प्रतिपादन करने जा रहे हैं जो अग्रलिखित है-

3.4.2 ज्वरादि रोगोत्पत्ति शान्ति विधि-

ज्वरादि रोगोत्पत्ति का विचार कैसे किया जाता है इसकी जानकारी आपको पूर्व में प्रदान किया जा चुका है। अब यदि आवश्यक हो तो इसकी शान्ति आप कैसे करायेगें इसके विधि विधान के बारे में आपको यहां जानकारी दी जा रही है जो इस प्रकार है-

पूर्वोक्त कालों में उत्पन्न ज्वरादि रोगों के निवारणार्थ शान्ति प्रकाश नामक ग्रन्थ में सर्व नक्षत्र जन्य पीडा शान्ति प्रयोग दिया गया है। उक्त प्रकार से शान्ति करने पर तन्नक्षत्र जन्य पीडा का शमन होता है ऐसा शास्त्रकारों का मत है। सर्व प्रथम सर्व नक्षत्र जन्य पीड़ा शान्ति प्रयोग का विधान करते हुये बतलाया गया है कि पूजन प्रारम्भ करने वाले आचमनादि प्रक्रियाओं को सम्पादित कर संकल्प करना चाहिये। संकल्प में मास पक्ष इत्यादि का

विधान तो होगा ही परन्तु साथ में योजनीय विन्दु अधोलिखित भी होता है- मम उत्पन्नस्य अमुक व्याधेः जीवच्छरीराविरोधेन समूल नाशार्थं अमुक नक्षत्रस्य देवताख्यं जपं करिष्ये। जप संख्या का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि 108 या 1008 या इससे भी अधिक जपादि कराना चाहिये। तद्यथा-

संकल्प:- ॐ श्री विष्णुर्विष्णर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य श्री ब्रह्मणोन्हि द्वितीये परार्द्धे विष्णुपदे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवश्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे युगे कलियुगे कलिप्रथम चरणे जम्बूद्वीपे भूर्लोके भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशे अमुकक्षेत्रे अमुकसंवत्सरे अमुकायने अमुकऋतौ महामांगल्यप्रदमासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक नक्षत्रे अमुक योगे अमुक करणे अमुकराशि स्थिते श्रीचन्द्रे अमुक राशिस्थिते श्री सूर्ये अमुक राशिस्थिते देवगुरौ अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं श्रुति स्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थंमस्माकं शरीरे उत्पन्न व्याधेः समूलनाशार्थं अमुकनक्षत्रे उत्पन्न ज्वरादिरोगोत्पत्तिशान्तिं

करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं आचार्यादिवरणानि च करिष्ये।

तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। एतानि कर्माणि शान्तिविधानानुसारेण कुर्यात्।

इसके बाद यज्ञीयकर्मक्षेत्र विघ्नादिकारक तत्वों से रहित हो जाय इसके लिये पीली सरसों को दाहिने हाथ में रखकर बाँये हाथ से ढककर दिग्रक्षण मन्त्रों का पाठ करे।

तत्र मन्त्रः- यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्यसर्वदा। स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु।

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमि संस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारः ते नश्यन्तु शिवज्ञया।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्। सर्वेषामविरोधेन शान्ति कर्म समारभे।

पूर्व आदि चारो दिशाओं में छींटकर शान्ति विधान या संबंधित पद्धितियों के अनुसार गणेशाम्बिका पूजन, कलश स्थापन, पुण्याहवाचन, षोडशमातृका पूजन, सप्तघृतमातृका पूजन, आयुष्यमन्त्र जप, नान्दीश्राद्ध, आचार्यवरण, नवग्रहादि स्थापन एवं पूजन करना चाहिये। तदनन्तर भूमौ प्रादेशं कृत्वा (यज्ञ भूमि के ऊपर दाहिने हाथ की तर्जनी एवं अगूंठे को फैलाते हुये वाचन करे) ॐ देवाः आयान्तु, यातुधानाः अपयान्तु, विष्णोदेवयजनं रक्षस्व। मन्त्र का पाठ करना चाहिये। पंचांगादि पूजनों का सम्पादन करते हुये आचार्य वरणान्त विधियों का विधान करना चाहिये। तदनन्तर भूमि पर चावल से चतुरस्त्र मण्डल बनाकर यथाविधि ताम्र का एक कलश स्थापित कर जल से भरकर गंध, सर्वोषधि, दूर्वा, पल्लव, पंचत्वक्, सप्तमृत्तिका, पंचरत्न, पंचगव्य, हिरण्यादि उन- उन मन्त्रों के उच्चारण से छोड़ना चाहिये। वस्त्रद्वय से आवेष्टित कर सर्वे समुद्राः सर्वे इत्यादि मन्त्रों से तीर्थों का आवाहन करना चाहिये। वरुण का आवाहन कर यथोपलब्धोपचारों से पूजन करना चाहिये। कलश के ऊपर पूर्णपात्र पर द्वादश दल कमल बनाकर सौवर्णी नक्षत्र देवता की प्रतिमा भी संस्थापित कर पूजन करना चाहिये। सुवर्ण की नक्षत्र प्रतिमा स्थापन अग्न्युत्तारण पूर्वक करना चाहिये जिसका विधान नीचे दिया गया है-

अग्न्युत्तारण हेतु सर्वप्रथम संकल्प किया जाता है।

संकल्पः- देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रः अमुकशर्माऽहं अस्यां मूर्तौ अवघातादिदोष परिहारार्थं अग्न्युत्तारणं देवता सान्निध्यार्थं च प्राणप्रतिष्ठां करिष्ये।

नक्षत्र की मूर्त्ति को पात्र में रखकर घृत लगाकर उसके ऊपर दुग्धधारा या जलधारा गिरानी चाहिये और अधोलिखित मन्त्रों का अथवा नक्षत्र के मूल मन्त्र का 108 बार पाठ करना चाहिये।

ॐ समुद्रस्य त्वावकयाग्ने परिव्ययामसि पावकोऽअस्मभ्य गुं शिवो भव। हिमस्य त्वा जरायुणाग्ने परिव्ययामसि। पावकोऽ अस्मभ्य गुं शिवो भव। उप ज्मन्नुप वेतसोऽ वतर नदिष्वा। अग्ने पित्तमपामसि मण्डूकि ताभिरागहि सेमं न्नो यज्ञं पावक वर्ण्ण गुं शिवंकृधि। अपामिदं न्ययन गुं समुद्रस्य निवेशनम्। अन्यास्ते ऽ अस्मत्पन्तु हेतयः पावकोऽ अस्मभ्य गुं शिवो भव। अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया। आ देवा न्वक्षि यक्षि च।। स नः पावक दीदिवोग्ने देवाँ2ऽ इहावह। उप यज्ञ गुं हविश्चनः।। पावकया यश्चितयन्त्या कृपाक्षामन्त्ररु च ऽउषसो न भानुना। तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रण ऽआ यो घृणो ततृषाणो अजरः।। नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽ अस्त्वर्चिषे। अन्याँस्तेऽ अस्मत्पन्तु हेतयः पावको ऽ अस्मभ्य गुं शिवो भव। नृषदे व्वेडप्सुषदे ब्बेड्बर्हिषदे ब्बेड् व्वनसदे व्वेट् स्वर्विदे वेट्।। ये देवा देवानां यज्ञिया यज्ञियाना गुं संवत्सरीणमुप भागमासते।। अहुतादो हविषो यज्ञेऽ अस्मिन्स्वयं पिबन्तु मधुनो घृतस्य। ये देवा देवेष्वधि देवत्वमायन्ये ब्रह्मणः पुर एतारोऽअस्य। येभ्यो न ऽऋते पवते धाम किंचन न ते दिवो न पृथिव्याऽ अधिस्नुषु। प्राणदाऽ अपानदा व्यानदा व्वर्चोदा व्वरिवोदाः। अन्यॉस्तेऽअस्मत्पन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्य गुं शिवो भव।

एवं अग्न्युत्तारणं कृत्वा प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्- इस प्रकार अग्न्युत्तारण करके प्राणप्रतिष्ठा करनी चाहिये। प्रतिमा को हाथ से संस्पर्ष करते हुये

अधोलिखित बीज मन्त्रों का जप करना चाहिये।

ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ षँ षँ सँ क्षँ हँ सः सोऽहं अस्यां अमुक नक्षत्र देवस्य प्राणाः इह प्राणाः। पुनः ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ षँ षँ सँ क्षँ हँ सः सोऽहं अस्यां अमुक नक्षत्र देवस्य जीव इह स्थितः। पुनः ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ षँ षँ सँ क्षँ हँ सः सोऽहं अस्यां अमुक नक्षत्र देवस्य वाङ्गनस्त्वक्चक्षुः श्रोत्र जिह्वा घ्राण पाणि पाद पायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। इति प्राणप्रतिष्ठा।

स्थण्डिल पर पंचभूसंस्कार करके अग्नि की स्थापना करके सूर्यादिग्रहों की स्थापना करके बतलायी गयी विधि के अनुसार पूजन करना चाहिये। ततो कुशकण्डिका पूर्वक आज्य भागान्त कर्मों का सम्पादन कर दूर्वा, समित्, तिल, आज्य एवं क्षीर से प्रत्येक नक्षत्र देवता मन्त्र से 108 आहुतियाँ प्रदान करनी चाहिये। पीड़ाधिक्यता को देखते हुये यदि आवश्यक प्रतीत हो तो 1008 आहुतियाँ देनी चाहिये। तदनन्तर गायत्री मन्त्र से एक माला यानी 108 आहुतियाँ प्रदान करनी चाहिये। होमशेष को समाप्त कर दधि ओदन का बलिदान देकर शान्ति कलश के जल से यजमान का अभिषेक करना चाहिये। अभिषेक हेतु मन्त्र पूर्व में लिखा गया है आवश्यकतानुसार उसका अनुसरण करके समन्त्रक अभिषेक करा सकते है।

आचार्य के लिये गौ एवं कलश के ऊपर रखी हुयी नक्षत्र प्रतिमा के दान का विधान है जिसे रोगी के द्वारा प्रदान करवाना चाहिये। इसके बाद घी से भरे हुये कटोरे में अपना मुखावलोकन कर दान देकर ब्राह्मण भोजनादि पूर्वक इस शान्ति को सम्पन्न करना चाहिये।

प्रत्येक नक्षत्रों का मन्त्र इस प्रकार है -

अश्विनी नक्षत्र मन्त्र- ॐ अश्विनी नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

भरणी नक्षत्र मन्त्र- ॐ भरणी नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

कृत्तिका नक्षत्र मन्त्र- ॐ कृत्तिका नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

रोहिणी नक्षत्र मन्त्र- ॐ रोहिणी नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

मृगशिरा नक्षत्र मन्त्र- ॐ मृगशिरा नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

आर्द्रा नक्षत्र मन्त्र- ॐ आर्द्रा नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

पुनर्वसु नक्षत्र मन्त्र- ॐ पुनर्वसु नक्षत्राधिपये नमः ।।

पुष्य नक्षत्र मन्त्र- ॐ पुष्य नक्षत्राधिपतये नमः ।।

आश्लेषा नक्षत्र मन्त्र- ॐ आश्लेषा नक्षत्राधिपतये नमः ।।

मघा नक्षत्र मन्त्र- ॐ मघा नक्षत्राधिपतये नमः ।।

पूर्वाफाल्गुनि नक्षत्र मन्त्र-ॐ पूर्वाफाल्गुनि नक्षत्राधिपतये नमः ।।

उत्तरा फाल्गुनि नक्षत्र मन्त्र-ॐ उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रस्याधिपतये नमः।

हस्त नक्षत्र मन्त्र- ॐ हस्त नक्षत्राधिपतये नमः ।।

चित्रा नक्षत्र मन्त्र- ॐ चित्रा नक्षत्राधिपतये नमः ।।

स्वाति नक्षत्र मन्त्रः- ॐ स्वाति नक्षत्राधिपतये नमः ।।

विशाखा नक्षत्र मन्त्रः-ॐ विशाखा नक्षत्राधिपतये नमः ।।

ज्येष्ठा नक्षत्र मन्त्रः-ॐ ज्येष्ठा नक्षत्राधिपतये नमः ।।

मूल नक्षत्र मन्त्रः-ॐ मूल नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र मन्त्रः-ॐ पूर्वाषाढ़ानक्षत्राधिपतये नमः ।।

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र मन्त्रः-ॐ उत्तराषाढ़ानक्षत्राधिपतये नमः ।।

अभिजित नक्षत्र मन्त्रः-ॐ अभिजित् नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

श्रवण नक्षत्र मन्त्रः- ॐ श्रवण नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

धनिष्ठा नक्षत्र मन्त्रः- ॐ धनिष्ठा नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

शतभिषा नक्षत्र मन्त्रः- ॐ शतभिषा नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र मन्त्रः- ॐ पूर्वाभाद्रपद नक्षत्राधिपतये नमः ।।

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र मन्त्रः- ॐ उत्तराभाद्रपद नक्षत्रस्याधिपतये नमः ।।

रेवती नक्षत्र मन्त्रः- ॐ रेवती नक्षत्राधिपतये नमः।।

इस प्रकार आपने प्रत्येक नक्षत्रों के नाम मन्त्रों को देखा। अब हम प्रत्येक नक्षत्र के वैदिक मन्त्रों को लिखने जा रहे है। यह ध्यान रहे कि वैदिक मन्त्रों का अत्यन्त महत्व शास्त्रों में वर्णित है। इसके प्रयोग के पूर्व इन मन्त्रों को गुरुमुखोच्चारणानुच्चारण पद्धति से ठीक तरह से उच्चरित होना जरूरी है। त्रुटिपूर्ण उच्चारण शास्त्रोक्त सफलता को नही प्रदान कर सकता इसलिये अनुष्ठानों के सम्पादन में शुद्धता एवं पवित्रता ध्यान रखना परम आवश्यक है।

अश्विनी नक्षत्र के देवता का नाम अश्विनी कुमार है इसलिये यहां अश्विनी कुमारों के लिये वैदिक मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ अश्विना तेजसा चक्षुः प्राणेन सरस्वती वीर्यम्। व्वाचेन्द्रो बलेनेन्द्राय दधुरिन्द्रियम्।।

भरणी नक्षत्र के देवता यम बतलाये गये है इसलिये यम का मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ यमाय त्वांगिरस्वते पितृमते स्वाहा स्वाहा घर्माय स्वाहा घर्मः पित्रे।।

कृत्तिका नक्षत्र के देवता का नाम अग्नि है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ अयमग्निः सहिस्त्रणो व्वाजस्य शतिनस्पतिः। मूर्द्धाकवीरयिणाम्।।

रोहिणी नक्षत्र के देवता का नाम ब्रह्मा है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ ब्रह्म यज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः शुरुचोव्वेनऽ आवः। स बुध्न्या उपमा यस्य विष्ठाः शतश्च योनिमसतश्च व्विवः।।

मृगशिरा नक्षत्र के देवता का नाम सोम है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ सोमो धेनु गुं सोमोऽ अर्वन्तमासु गुं सोमो व्वीरं कर्मण्यं ददाति। सादन्यं विदथ्य गुं सभेयं पितृश्रवणं यो ददाश दस्मै।।

आर्द्रा नक्षत्र के देवता का नाम रुद्र है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः।।

पुनर्वसु नक्षत्र के देवता का नाम अदिति है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ अदितिर्द्यौरदिति रन्तरिक्षमदिति र्म्माता सपिता सपुत्रः। विष्वेदेवाऽ अदितिः पंचजना ऽ अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्।।

पुष्य नक्षत्र के देवता का नाम वाचस्पति है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ व्वाचस्पतये पवस्व वृष्णोऽ अ गुं शुभ्यांगभस्ति पूतः। देवो देवेभ्यः पवस्व येषां भागोसि।।

आश्लेषा नक्षत्र के देवता का नाम सर्प है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ नमोस्तु सर्प्पेभ्यो ये के च पृथ्वीमनु। येऽ अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्प्पेभ्यो नमः।।

मघा नक्षत्र के देवता का नाम पितृ है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः। अक्षन्पितरोमीमदन्त पितरो तीतृपन्त पितरः पितरः शंधध्वम् ।।

पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र के देवता का नाम भग है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ भगप्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमान्धिय मुदवाददन्नः। भ्भगप्रणोजनय गोभिरश्वैर्भगप्प्रनृभिर्नृवन्तः स्याम ।।

उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र के देवता का नाम सूर्य है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है -

ॐ दैव्या वध्वर्यूऽ आगत गुं रथेन सूर्यत्वचा। मद्ध्वा यज्ञ गुं समंजाथे। तं प्रत्नथा यं व्वेनश्चित्रन्देवानाम् ।।

हस्त नक्षत्र के देवता का से संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ व्विभ्राड् बृहत्पिवतु सोम्म्यमध्वायुद्रधद्यज्ञपता वव्रिहुतम्। व्वातजूतोयोऽ अभिरक्षतित्मना प्रजाः पुपोषपुरुधा व्विराजति।।

चित्रा नक्षत्र के देवता का नाम त्वष्टा है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ त्वष्टा तुरीपोऽ अद्भुतऽ इन्द्राग्नि पुष्टिव्वर्धना। द्विपदाच्छन्दऽ इन्द्रिय मुक्षागौर्न्नव्वयो दधुः।।

स्वाती नक्षत्र के देवता का नाम वायु है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ पीवोऽ अन्नारयिवृधः सुमेधाः। श्वेतः सिषक्ति नियुत्तामभि श्रीः ते वायवे समनसो व्वितस्थुर्विष्वेनरः स्वपत्यानि चक्रुः।।

विशाखा नक्षत्र के देवता का नाम इन्द्राग्नि है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ इन्द्राग्नी ऽ आगत गुं सुतं गीर्भिर्न्नभोवरेण्यम्। अस्य पातन्धियोषिता।।

अनुराधा नक्षत्र के देवता का नाम मित्र है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ नमो मित्रस्य चर्क्षसे महादेवायतद्दत गुं सपर्यत दूरे दृशे देवजाताय केतवे दिवस्पुत्राय सूर्यायश गुं शत ।।

ज्येष्ठा नक्षत्र के देवता का मन्त्र इस प्रकार है -

ॐ स इषु हस्तैः सनिषङ्गि भिर्व्वशीस गुं सृष्टा सयुधऽ इन्द्रो गणेन । स गुं सृष्टजित्सो मपाबाहु शर्द्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिता भिरस्ता ।।

मूल नक्षत्र के देवता का मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ मातेव पुत्रम्पृथिवीपुरीष्यमग्नि गुं स्वेयोनावभारुषा। तां विश्वे देवैर्ऋतुभिः संविदानः प्रजापतिर्विश्वकर्मा विमुंचतु।।

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र के देवता का मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ अपाधमप किल्विषमपकृत्यामपोरपः। अपाम्मार्गत्वमस्मदपदुः श्वप्न्य गुं सुव।।

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के देवता का मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ विश्वे ऽ अद्य मरुतोपिष्वऽऊती विश्वे भवन्त्वग्नयः समिद्धाः। विश्वे नो देवाऽ अवसागमन्तु विश्वमस्तु द्रविणं व्वाजोऽ अस्मे।

अभिजित् नक्षत्र के देवता का मन्त्र इस प्रकार है-

गायत्री मन्त्रः

श्रवण नक्षत्र के देवता का नाम विष्णु है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ इदं विष्णु र्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पा गुं सुरे स्वाहा।।

धनिष्ठा नक्षत्र के देवता का नाम वसु है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ व्वसोः पवित्रमसि शतधारं व्वसोः पवित्रमसि शहस्त्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु व्वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः।।

शतभिषा नक्षत्र के देवता का नाम वरुण है इसलिये उससे संबंधित मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ व्वरुणस्यो त्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भ सर्जनीस्थो व्वरुणस्य ऋतसदन्यसि व्वरुणस्य ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऋतसदनमासीद्।।

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र के देवता का मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ उतनोहिर्बुध्न्यः शृणोत्वजऽ एकपात्पृथिवी समुद्रः। विष्वेदेवाऽ ऋतावृधो हुवानास्तुतामंत्राः कविशस्ताऽ अवन्तु।।

उत्तरभाद्रपद नक्षत्र के देवता का मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ शिवो नामा सिस्वधि पिता नमस्तेऽ अस्तु मामाहि गुं सीः। निवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्याय प्रजननायराय स्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय।।

रेवती नक्षत्र के देवता का मन्त्र इस प्रकार है-

ॐ पूषन्तव व्रते व्वयन्नरिष्येम कदाचन। स्तोतारस्त इहस्मसि।।

इस प्रकार समस्त प्रकार के रोंगों के निवारणार्थ लघुरुद्र, महारुद्र, अतिरुद्र का पाठ एवं अभिषेक अथवा विष्णुसहस्रनाम स्तोत्र का शत (100), सहस्र (1000), अयुत (10000) जप या पाठ, सूर्यसूक्त का पाठ, सूर्य नमस्कार, अर्घ्यदान, पुरुषसूक्त का पाठ, अच्युत अनन्त गोविन्द इन तीनों नामों का जप यानी हरि नाम संकीर्तन, मृत्युंजय जप, श्रीभागवतस्थज्वरस्तोत्र का जप या पाठ इत्यादि रोंगों के अनुसार कराने से शान्ति होती है। रुद्रकल्पद्रुम में रुद्र के पाँच भेद बतलाये गये है। रूपक, रुद्री, लघुरुद्र, महारुद्र और अतिरुद्र। छः अंगो सहित रुद्राध्याय को रूपक, 11 नमस्ते का पाठ रुद्री, रुद्री का ग्यारह गुना लघुरुद्र, लघुरुद्र का ग्यारह गुना महारुद्र एवं महारुद्र का ग्यारह गुना अतिरुद्र होता है। 100 रुद्र मन्त्रों के पाठ को शतरुद्रीय कहते है।

इसके अलावा सभी प्रकार के जपों मे ज्वर गायत्री का पाठ करने का भी विधान पाया जाता है । ज्वर गायत्री इस प्रकार है - ॐ भस्मायुधाय विद्महे ऐं क्रीं एकदंष्ट्राय धीमहि। तन्नो ज्वरः प्रचोदयात्।

इसके अलावा ज्वर स्तोत्र का पाठ भी ज्वर के उपशमन में सहायक होता है। श्रीमद्भागवत महापुराण के दशम स्कन्ध में इस प्रकार ज्वर स्तोत्र दिया गया है। विद्रविते भूतगणे ज्वरस्तु त्रिशिरास्त्रिपात्। अभ्यपद्यत दाशार्हं दहन्निव दिशो दश। अथ नारायणो देवस्तं दृष्ट्वा व्यसृजज्वरम्। माहेश्वरो वैष्णवश्च युयुधाते ज्वरावुभौ। माहेश्वरः समाक्रन्दन् वैष्णवेन बलार्दितः। अलब्ध्वाभयमन्यत्र भीतो माहेश्वरो ज्वरः। शरणार्थी हृषीकेशं तुष्टाव प्रयतांजलिः। ज्वर उवाच। नमामि त्वा अनन्तशक्तिं परेशं सर्वात्मानं केवलं ज्ञपितमात्रकम्। विश्वोत्पत्तिस्थानसंरोधहेतुं यत्तद्ब्रह ब्रह्मलिंगं प्रशान्तम्। कालो दैवं कर्म जीवः स्वभावो द्रव्यं क्षेत्रं प्राण आत्मा विकारः। तत्संघातो बीजरोहः प्रवाहस्त्वन्मायैषा तन्निषेधं प्रपद्ये। नानाभावैर्लीलयैवोपपन्नैर्देवान्साधूंल्लोकसेतून्विभर्षि। हंस्युन्मार्गान्हिंसया वर्तमानान्जन्मैतत्ते भारहाराय भूमेः। तप्तोहं ते तेजसा दुःस्सहेन शांतोग्रेणात्युलबणेन ज्वरेण। तावत्तापो देहिनां तेंघ्रिमूलं नो सेवेरन्यावदाशानुबद्धाः। श्रीभगवानुवाच। त्रिशिरस्ते प्रसन्नोस्मि व्येतु ते मज्ज्वराद्भयम्। यो नौ स्मरति संवादं तस्य त्वन्न भवेद्भयम्। इत्युक्तो अच्युतमानम्य गतो माहेश्वरो ज्वरः। बाणस्तु रथमारूढ़ प्रागाद्योत्स्यंजनार्दनम्। इति श्रीमद्भागवते दशमस्कन्धे ज्वरकृत्स्त्रोत्रम्।

यह स्त्रोत्र अनुष्ठान प्रकाश के पृ. 347 से लिया गया है। इसके अलावा महार्णव में यह दिया गया है कि ज्वर तर्पण करने से भी ज्वर का प्रकोप शान्त होता है। ज्वर तर्पण हेतु अधोलिखित श्लोक दिये गये है-

योसौ सरस्वती तीरे कुत्सगोत्रसमुद्भवः।

त्रिरात्रज्वरदाहेन मृतो गोविन्द संज्ञकः।

ज्वरापनुत्तये तस्मै ददाम्येतत्तिलोदकम् ।

तथा- गंगाया उत्तरे कूले अपुत्रस्तापसो मृतः। रात्रौ ज्वरविनाशाय तस्मै दद्यात्तिलोदकम्।

इन दो श्लोकों को पढ़ते हुये तिल, रक्त अक्षत, रक्त पुष्प् युक्त जल से ज्वर के अनुसार 108 बार या अयुत बार तर्पण ज्वर को उद्देश्य करके करना चाहिये।

इसके अलावा सर्वरोगहर माहेश्वर कवच का भी पाठ परम कल्याणकारी बतलाया गया है जो इस प्रकार है-

अथ सर्वरोगहरमाहेवरकवचम्- राजोवाच। अंगन्यासो यदुक्तो भो महेशाक्षरसंयुतः। विधानं कीदृशं तस्य कर्तव्यः केन हेतुना। तद्वदस्व महाभाग विस्तरेण ममाग्रतः। भृगुरुवाच। कवचं माहेश्वरं राजन्देवैरपि सुदुर्लभम्। यः करोति स्वगात्रेषु पूतात्मा स भवेन्नरः। कृत्वा न्यासमिमं यस्तु संग्रामं प्रविशेन्नरः। न शरास्तोमरास्तस्य खंगशक्तिपरश्वधाः। प्रभवंति रिपोः क्वापि भवेच्छिवपराक्रमः। व्याधिग्रस्तस्तु यः कश्चित् कारयेच्चैव मार्जनम्। एकादशकुशैः सागै्रर्मुक्तो भवति नान्यथा। न भूता न पिशाचाश्च कूष्माण्डा न विनायकाः। शिवस्मरणमात्रेण न विशन्ति कलेवरम्। ओं नमः पंचवक्त्राय शशिसोमार्कनेत्राय भयार्तानामभयाय मम सर्वगात्ररक्षार्थे विनियोगः। ओं हौं हां हं मन्त्रेणानेन वृषगोमयभस्मस्नानम्। आमंत्र्य ललाटे तिलकमादाय पठेत्। त्राहि मां देव दुष्प्रेक्ष शत्रूणां भयवर्द्धन। ओं स्वच्छन्दभैरवः प्राच्यमाग्नेयां शिखिलोचनः। भूतेशो दक्षिणे भागे नैर्ऋत्यां भीमदर्शनः। वारुण्यां वृषकेतुश्च वायौ रक्षतु शंकरः। दिग्वासा सौम्यतो नित्यमैशान्यां मदनान्तकः। वामदेवोर्ध्वतो रक्षेदधो रक्षेत्त्रिलोचनः। पुरारिः पुरतः पातु कपर्द्दी पातु पृष्ठतः। विश्वेशो दक्षिणे भागे वामे कालीपतिः सदा। महेश्वरः शिरो भागे भवो भाले सदैव तु। भ्रुवोर्मध्ये महातेजास्त्रिनेत्रो नेत्रयोद्वयोः। पिनाकी नासिका देशे कर्णयोर्गिरिजापतिः। उग्र कपोलयोः रक्षेन्मुखदेशे महाभुजः। जिह्वायामन्धकध्वंसी दंतान्रक्षतु मृत्युजित्। नीलकंठः सदाकंठे पृष्ठे कामांगनाशनः। त्रिपुरारिः स्कन्धदेशे बाह्वोश्च चन्द्रशेखरः। हस्ति चर्मधरो हस्ते नखांगुलीषु शूलभृत्। भवानीशः पातु हृदि पातूदरकटी मृदः। गुदे लिंगे च मेढ्रे च नाभौ च प्रथमाधिपः। जंघोरुचरणे भीमः सर्वांगे केशवप्रियः। रोमकूपे विरूपाक्षः शबदस्पर्शे च योगवित्। रक्तमज्जावसामांसशुक्रे वसुगणार्चितः। प्राणापानसमानेषूदानव्यानेषु धूर्जटिः। रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन यत्। तत्सर्वं रक्ष मे देव व्याधिदुर्गज्वरार्दितः। कार्यं कर्म त्विदं प्राज्ञैर्दीपं प्रज्वाल्य सर्पिषा। निवेद्य शिखि नेत्राय वारयेत्तु हि उदंग्मुखम् । ज्वरदाहपरिक्रान्तं तथान्यव्याधिसंयुतम् । कुशैः सम्माज्र्यसम्माज्र्य क्षिपेद्दीपशिखां ज्वरम् । एकाहिकं द्वयाहिकं वा तृतीयकचतुर्थकम् । वातपित्तकफोद्भूतं सन्निपातोग्रतेजसम् । अन्यं दुःखदुराधर्षकर्म्मजं चाभिचारिकम्। धातुस्थं कफसं मिश्रं विषमं कामसंभवम्। भूताभिषंगसंसर्गं भूतचेष्टादिसंस्थितम् । शिवाज्ञां घोरमन्द्रेण पूर्ववृत्तं स्वयं

स्मर । त्यजदेहं मनुष्यस्य दीपं गच्छ महाज्वर । कृतं तु कवचं दिव्यं सर्वव्याधिभयार्द्दनम्। न बाधंते ब्याधयस्तं बालग्रहभयानि च । लूताविस्फोटकं घोरं शिरोर्तिच्छर्दिविग्रहम् । कामलां क्षयकाशं च गुल्माश्मरीभगंदराः । शूलोन्मादं च हृद्गयकृती पाण्डुविद्रधिकम् । अतिसारादिरोगांश्च डाकिनीपीडकग्रहान् । पामाविचर्चिकादद्रु कुष्ठव्याधिविषार्दनम् । स्मरणान्नाशयत्याशु कवचं शूलपाणिनः । यस्तु स्मरति नित्यं वै यस्तु धारयते नरः । स मुक्तः सर्वपापेभ्यो वसेच्छिवपुरे चिरम्। संख्या व्रतस्य दानस्य यज्ञस्यास्तीहशास्त्रतः । न संख्या विद्ते शंभोः कवचस्मरणाद्यतः । तस्मात्सम्यगिदं सर्वैः सर्वकामफलप्रदम् । श्रोतव्यं सततं भक्त्या कवचं सर्वकामिकम् । लिखितं तिष्ठते यस्य गृहे सम्यगनुत्तमम् । न तत्र कलहोद्वेगो नाकालमरणं भवेत् । नाल्पप्रजाः स्त्रियस्तत्र न दौर्भाग्यं समाश्रिताः । तस्मान्माहेश्वरं नाम कवचं देव गणार्चितम् । श्रोतव्यं पठितव्यं च मंतव्यं भावुकप्रदम् । श्रीमाहेश्वरकवचं सर्वव्याधिनिषूदनम्।यः पठेत्तु नरो नित्यं स व्रजेच्छांकरं पुरम् । इति सर्वव्याधिहरं श्रीमाहेश्वरकवचं सम्पूर्णम् ।

यह कवच अनुष्ठान प्रकाश नामक ग्रन्थ के 345वें पृष्ठ से लिया गया है ।

इस प्रकार दिये गये शान्ति के विविध उपायों में से उपयुक्त विधि को अपनाकर लाभ उठाया जा सकता है।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें ज्वरादि रोगोत्पत्ति की शान्ति का विधान क्या है ? इसके बारे में जाना । इसकी जानकारी से आप ज्वरादि रोगोत्पत्ति शान्ति करा सकते हैं तथा इसकी शान्ति की आवश्यकता को बता सकते है । अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा । अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न -

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं । अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है । प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है -

प्रश्न 1- अभिषेक किससे जाता है?

क-पीली सरसों से, ख- पीले पुष्पों से, ग- चावलों से, घ- जल से।

प्रश्न 2- शत का अर्थ क्या है?

क- 100, ख- 1000, ग- 10000, घ-100000।

प्रश्न 3- शहस्र का अर्थ क्या है?

क- 100, ख- 1000, ग- 10000, घ-100000।

प्रश्न 4- अयुत अर्थ क्या है?

क- 100, ख- 1000, ग- 10000, घ-100000।

प्रश्न 5- लक्ष का अर्थ क्या है?

क- 100, ख- 1000, ग- 10000, घ-100000।

प्रश्न 6- अश्विनी नक्षत्र के देवता का क्या नाम है?

क- अश्विनी कुमार, ख- यम, ग- अग्नि , घ- ब्रह्मा।

प्रश्न 7- भरणी नक्षत्र के देवता का क्या नाम है?

क- अश्विनी कुमार, ख- यम, ग- अग्नि , घ- ब्रह्मा।

प्रश्न 8- कृत्तिका नक्षत्र के देवता का क्या नाम है?

क- अश्विनी कुमार, ख- यम, ग- अग्नि , घ- ब्रह्मा।

प्रश्न 9- रोहिणी नक्षत्र के देवता का क्या नाम है?

क- अश्विनी कुमार, ख- यम, ग- अग्नि , घ- ब्रह्मा।

प्रश्न 10- ग्यारह नमस्ते का पाठ होता है-

क- रुद्री में, ख- लघु रुद्री में, ग- महारुद्री में, घ- अतिरुद्री में।

इस प्रकरण में आपने ज्वरादि रोगोत्पत्ति की शान्ति प्रविधि के बारे में जाना। आशा है अब आप जवरादि रोगोत्पत्ति की शान्ति करा सकेगें।

3.5 सारांश

इस ईकाई में आपने यमल जनन एवं ज्वरादि रोगोत्पत्ति की शान्ति का विधान जाना है। वस्तुतः यमल जनन में जुड़वा बच्चों की उत्पत्ति होती है जिसके कारण दोषों की उत्पत्ति होती हैं उसकी शान्ति कराने से उन दोनों बच्चों एवं उनके माता पिता का विकास सम्यक् होता रहता है। जीवन में कोई भी दोष हो वह मानव जीवन पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव डालता ही है। उस प्रभाव के कारण व्यक्ति को अधिक परिश्रम करने पर भी सफलता हाथ नही लगती है जिससे व्यक्ति व्याकुल हो जाता है। उनके इस व्याकुलता का शमन करने के लिये और उनके धैर्य को बढ़ाने के लिये पौरोहित्य जिसे कर्मकाण्ड कहा जाता है उसमें तत्संबंधी शान्ति का विधान किया गया है। यदि वह दोष यमल जनन के कारण है तो कर्मकाण्ड में उसके प्रशमनार्थ एक विधि दी गयी है जिसे यमल जनन शान्ति के नाम से जाना जाता है। इसके अन्तर्गत गणेशाम्बिका पूजन, कलश स्थापन, पुण्याहवाचन, षोडशमातृका पूजन, सप्तघृतमातृका पूजन, आयुष्यमन्त्र जप, नान्दीश्राद्ध, आचार्यवरण, नवग्रहादि स्थापन एवं पूजन करना चाहिये।

इसके अनन्तर एक स्थण्डिल या चौकी या पीढ़े पर आठों दिशाओं में आठ कलशों की स्थापना करें। इन समस्त कलशों का स्थापन कलश स्थापन विधि के अनुसार करना चाहिये। उन समस्त कलशों में सर्वोषधि इत्यादि प्रक्षिप्त कर दम्पति का अभिषेक करना चाहिये। उसके बाद शान्ति विधि में बतलाई गयी बिधि के अनुसार हवनादि प्रकियाओं को समपन्न करना चाहिये।

ज्वरादि रोगों के निवारणार्थ शान्ति प्रकाश नामक ग्रन्थ में सर्व नक्षत्र जन्य पीडा शान्ति प्रयोग दिया गया है। उक्त प्रकार से शान्ति करने पर तन्नक्षत्र जन्य पीडा का शमन होता है ऐसा शास्त्रकारों का मत है। सर्व प्रथम सर्व नक्षत्र जन्य पीड़ा शान्ति प्रयोग का विधान करते हुये बतलाया गया है कि पूजन प्रारम्भ करने वाले आचमनादि प्रक्रियाओं को सम्पादित कर संकल्प करना चाहिये। संकल्प में मास पक्ष इत्यादि का विधान तो होगा ही परन्तु साथ में योजनीय विन्दु अधोलिखित भी होता है- मम उत्पन्नस्य अमुक व्याधेः जीवच्छरीराविरोधेन समूल नाशार्थं अमुक नक्षत्रस्य देवताख्यं जपं करिष्ये। जप संख्या का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि 108 या 1008 या इससे भी अधिक जपादि कराना चाहिये। प्रदत्त विधि के अनुसार अभिषेक, मन्त्रों का पाठ एवं जप श्रेयष्कर होता है। इसमें नक्षत्रों को देखकर यह निर्णय किया जाता है कि इस नक्षत्र में उत्पन्न होने वाला ज्वर कितना कष्टकारी होगा। उसी प्रकार का उपचार निर्णीत किया जाता है। अर्थात् इससे रोग की गम्भीरता का विचार किया जाता है।

3.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

सम्भार- सामग्री, पीड़ा- कष्ट, समित्- समिधा, तिल- तिल्ली, आज्य- घृत्, ओदन- भात, यमल- जुड़वा, क्षीर- दुग्ध,पंचत्वक्- पांच पेड़ों की छालें, हिरण्य- सुवर्ण, रजत- चांदी, कांस्य- कांसा, पायस- खीर, पंचगव्य- गौ से निकले पांच पदार्थ, सप्त धान्य- सात प्रकार का अनाज, सप्तमृत्तिका- सात स्थानों की मिट्टी, श्वेत सर्षप- सफेद सरसों, अर्क- मदार, पलाश- पलाश, खदिर- खैर, गोमय- गोबर, पल्लव- वृक्ष का पत्ता, द्राक्षा- खर्जूर, अपामार्ग- चिचिड़ी, उदुम्बर- गूगल, कृसर- खिचड़ी, वृषभ- बैल, निष्क्रय- क्रय करने के लिये, व्याधि- रोग, छाग- बकरी, खड्ग- तलवार, मृद- मिट्टी, महिषी- भैंस, योजनीय- जोड़ने योग्य, वर्जनीय- त्यागने योग्य, अश्व- घोड़ा, लौह- लोहा, मुक्ताफल- मोती, विद्रुम- मूंगा, गारुत्मक- पन्ना, पुष्पक- पुखराज, वज्र- हीरा, कुलित्थ- कुलथी, रक्त- लाल, पीत- पीला, कृष्ण- काला, वर्ण- रंग, आमलक- आंवला, माष- उड़द, तंडुल- चावल, पूंगीफल- सुपारी, मुखवलोकन- मुख का अवलोकन करना, भुर्जपत्र- भोजपत्र, तण्डुल-चावल, शक्कर- देशी चीनी, चड़क- चना, मुद्ग- मूंग, श्यामक- सांवा, गोधूम- गेहूं, कंगु- ककून, बल्मीक- चीटी का स्थान, संगंम- दो या दो से अधिक नदियों का मिलन।

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इस उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

3.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-ग, 5-ग, 6-ग, 7-ग, 8-ग, 9- ख, 10- क।

3.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-घ, 3-ग, 4-ग, 5-ख, 6-ग, 7-घ, 8-घ, 9- गा 10-ग।

3.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-क, 3-ख, 4-क, 5-ख, 6-ख, 7-क, 8-ग, 9-ख, 10-क।

3.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-घ, 2-क, 3-ख, 4-ग, 5-घ, 6-क, 7-क, 8-ग, 9- ख, 10-ग, ।

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मूल शान्तिः।

2-शान्ति- प्रकाशः।

3-कर्मकाण्ड- प्रदीपः।

4-शान्ति- विधानम्।

5-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

6-यजुर्वेद- संहिता।

7- ग्रह- शान्तिः।

8- फलदीपिका

9- अनुष्ठान प्रकाश।

10- कर्मजभवव्याधि दैव चिकित्सा।

3.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- मुहूर्त्त चिन्तामणिः।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग

3- पूजन विधानम्।

4- रत्न एवं रुद्राक्ष का धारण

3.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- यमल जनन का परिचय दीजिये।

2- ज्वरादि रोगोत्पत्ति विचार की प्रासंगिकता बतलाइये।

3- यमल जनन शान्ति के बारे में आप क्या जानते है? वर्णन कीजिये।

4- यमल जनन शान्ति विधि का विधान वर्णित कीजिये।

5- ज्वरादि रोगोत्पत्ति शान्ति विधि का वर्णन कीजिये।

6- अग्न्युत्तारण सविधि लिखिये।

7- दिग्रक्षण विधि का वर्णन कीजिये।

8- अभिषेक की विधि का वर्णन कीजिये।

9- ज्वरोत्पत्ति शान्ति के वैदिक मन्त्रों को लिखिये।

10- पंचांग पूजन के बारे में बतलाइये।

बी0ए0 कर्मकाण्ड

द्वितीय वर्ष

द्वितीय प्रश्न पत्र

खण्ड- 1

प्रारम्भिक पूजन

इकाई-1 पूजन प्रयोजन महत्त्व एवं प्रकार

इकाई की रुप रेखा

1. 1- प्रस्तावना

कर्मकाण्ड बी0ए0के0के-202 से सम्बिन्धत यह पहली इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि कर्मकाण्ड की उत्पति किस प्रकार से हुई है ? कर्मकाण्ड की उत्पति अनादि काल से हुई है। तथा इन्हीं कर्मकाण्डों के माध्यम से आज सनातन धर्म की रक्षा हो रही है।

कर्मकाण्ड को जानते हुए आप पूजा के विषय में परिचित होंगे कि पूजन का प्रयोजन क्या है एवं उसका महत्त्व क्या है इन सभी का वर्णन इस इकाई में किया गया है।

प्रत्येक पूजन के प्रारम्भ में आत्मशुद्धि, गुरु स्मरण, पवित्र धारण, पृथ्वी पूजन, संकल्प, भैरव प्रणाम, दीप पूजन, शंख-घण्टा पूजन के पश्चात् ही देव पूजन करना चाहिए। व्रतोद्यापन एवं विशेश अनुष्ठानों के समय यज्ञपीठ की स्थापना का विशेश महत्त्व होता है, अतः प्रधान देवता की पीठ रचना पूर्व दिशा के मध्य में की जाये। पीठ रचना हेतु विविध रंगों के अक्षत या अन्नादि लिये जाते है। सभी व्रतोद्यापनों में सर्वतोभद्रपीठ विशेषरूप से बनाया जाता है।

पूजन के अनेक प्रकार प्रचलित है और शास्त्रों में पञ्चोपचार, षोड़शोपचार, शतोपचार आदि विविध वस्तुओं से अर्चना के विधि विधान की विस्तार से चर्चा है। श्रद्धा भक्ति के अनुसार उनका संग्रह करना चाहिए।

1.2- उदेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप वेदशास्त्र से वर्णित कर्मकाण्ड का अध्ययन करेंगे।

1. पूजा के विषय में आप परिचित होंगे-
2. पूजा के महत्त्व के विषय में आप परिचित होंगे
3. पूजा के प्रकार के विषय में आप परिचित होंगे
4. कर्मकाण्ड के इतिहास के विषय में आप परिचित होंगे
5. कर्मकाण्ड की समाज में उपयोगिता क्या है। इसके विषय में आप परिचित होंगे

1.3 कर्मकाण्ड का प्रयोजन -

भारतीय सनातन संस्कृति पुनर्जन्म एवं मरण पर आधारित है। इस लोक में सभी जगह सुख-दुख,हानी-लाभ,जीवन-मरण,दरिद्रता-सम्पन्नता, रुग्णता -स्वस्थता, वुद्धिमत्ता-अवुद्धिमत्ता, दया-

क्रुरता और द्वेष-अद्वेश आदि वैभिन्न्य स्पष्ट रुप से दिखायी पडता है। पर यह वैभिन्न्य दृष्ट कारणों से ही होना आवश्यक नहीं,कारण की ऐसे बहुत सारे उदाहरण प्राप्त होते हैं, कि एक ही माता पिता के एक ही साथ जन्मे युग्म बालकों की शिक्षा -दीक्षा , लालन -पालन आदि समान होने पर भी व्यक्तिगत रूप से उनकी परिस्थितियां भिन्न-भिन्न होती हैं, जैसे कोई सुखी कोई दुखी, कोइ हानी कोई लाभ, कोई दरिद्र कोई सम्पन्न कोई रुग्ण कोई स्वस्थ, कोई वुद्धिमान कोई अवुद्धिमान, कोई दयावान कोई क्रुर कोई द्वेश कोई अद्वेश कोई अंगहीन तो कोई सर्वांग-सुन्दर इत्यादि। इन सभी बातों से यह स्पष्ट होता है कि जन्मान्तरीय धर्माधर्म रूप अदृष्ट भी इन भोगों का कारण है। अतः मानव -जन्म लेकर अपने कर्तव्य के पालन और स्व-धर्माचरण के प्रति प्रत्येक व्यक्ति को अत्यधिक सावधान होना चाहिये ।

प्रत्येक मनुष्य के जीवन में कुछ क्षण ऐसे होते हैं,जब उसकी बुद्धि निर्मल और सात्विक रहती है। तथा उन क्षणों में किये हुए कार्य कलाप शुभ कामनाओं से समन्वित एवं पुण्य वर्धन करने वाले होते हैं,पर सामान्यतः काम-क्रोध, लोभ-मोह, मद-मात्सर्य, राग-द्वेश आदि दुर्गुणों के वशीभूत मानव का अधिकतर समय पापाचरण में ही व्यतीत होता है, जिसे वह स्वयं भी नहीं समझ पाता। चौबीस घंटे का समय में यदि हमने एक घंटे का समय भगवदाराधना अथवा परोपकारादि शुभ कार्यों के निमित्त अर्पित किया तो शुभ कार्य का पुण्य हमे अवश्य प्राप्त होगा । पर साथ ही तेईस घंटे का जो समय हमने अवैध अर्थात् अशास्त्रीय भोग विलास में तथा उन भोग्य पदार्थों के साधन संचय में लगाया तो उसका पाप भी अवश्य भोगना पडेगा । इस लिये जीवनका प्रत्येक क्षण भगवद आराधना में लगाना चाहिये । जिससे मनुष्य अपने जीवन काल में भगवद् समीपता प्राप्त कर सके और पुण्य रूप से कल्याण का भागी बने। इसी लिये वेद शास्त्रों में प्रातः काल जागरण से लेकर रात्रि शयन तक तथा जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक सम्पूर्ण क्रिया कलापों का विवेचन विधि निषेध के रूप में हुआ है, जो मनुष्य के कर्तव्याकर्तव्य और धर्माधर्म का निर्णय करता है।

वैदिक सनातन धर्मशास्त्र सम्मत स्वधर्मानुष्ठान ही सर्वेश्वर सर्वशक्तिमान् भगवान् की पूजा ही आवश्यक है। भगवान् की पूजा से श्रेष्ठ कोई महान कार्य नही हैं। भगवान् की पूजा से ही मानव को कल्याण प्रदान करती है। गीता में भगवान् कृष्ण ने स्वयं कहा है-

स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दन्ति मानवः। इस लिये समस्त वेदादि शास्त्रों में नित्य और नैमित्तिक कर्मों को मानव के लिये परम धर्म और परम कर्तव्य कहा है । संसार में सभी मनुष्यों पर तीन प्रकार के ऋण होते हैं-देव-ऋण, पितृ-ऋण और मनुष्य(ऋषी)ऋण। नित्य कर्म करने से मनुष्य तीनों ऋणों से मुक्त हो जाता है-

यत्कृत्वा नृण्यमाप्नोति दैवात् पैत्र्याच्च मानुषात् ।

जो व्यक्ति श्रद्धा भक्ति से जीवनपर्यन्त प्रतिदिन विधिपूर्वक स्नान, सन्ध्या, गायत्री-जप,देवताओं का पूजन, बलीवैश्वदेव, स्व अध्ययन आदि नित्य कर्म करने से उसकी बुद्धि ज्ञानवान हो जाती है। ज्ञानवान बुद्धि हो जाने पर धीरे-धीरे मनुष्य के बुद्धि की अज्ञानता जडता विवेकहीनता अहंकार संकोच और राग द्वेश भेद-भाव समाप्त हो जाता है,उसके बाद वह मनुष्य परमात्मा के चिन्तन में निरन्तर संलग्न होकर निरन्तर पर ब्रह्म परमेश्वर की प्राप्ति के लिये ही प्रयत्न करता रहता है। इसी के कारण उसे परमानन्द की अनुभूति होने लगती है। परमानन्द की अनुभूति होने के कारण मनुष्य धीरे-धीरे दैवी गुणों से सम्पन्न होकर भगवान के समीप पहुच जाता है। भगवान के समीप होनेके करण मनुष्य को वास्तविक तत्त्व का परिज्ञान होने लगता है और पुनः वह सर्वदा के लिये जीवन से मुक्त हो जाता है तथा सत्यं ज्ञानम् अनन्तं ब्रह्म में लीन होकर आत्मोद्धार कर लेता है। यही मानव जीवन का मुख्य कारण है। मानव जीवन को सफल बनाने के लिये मानव प्राणी को नियमित रूप से नित्य कर्म आदि करना चाहिये

कर्मकाण्ड का इतिहास

कर्मकाण्ड का इतिहास यदि हम वैदिक काल से देखें तो हमें अत्यन्त संक्षेप में कर्मकाण्ड का स्वरूप देखने को मिलता है। यद्यपि ऋग्वेद के पुरुश सूक्त में देवताओं द्वारा विहित कर्मकाण्ड देखने में आता है तथापि वहा भी कर्मकाण्ड का सांगोपांग स्वरूप अत्यन्त संक्षिप्त ही है। उस काल में प्रत्येक व्यक्ति श्रद्धा और विश्वास के साथ देवताओं की उपासना करते हुए अपनी अभिलषित वस्तु देवताओं से मांगता था।

प्राचीन काल में उपासक को अभिलषित वस्तु की संख्या में भी वहुत कमी थी। आज की तरह वहुत कामनाओं का ढेर नहीं था। उस समय पुत्र रहित व्यक्ति को स्वर्ग नहीं मिलता था। यह विश्वास था। जैसा कि अथर्ववेद के गोपथ ब्राह्मण में कहा गया है-यच्च पुत्रः पुन्नामनरकमनेकशतं तारं तस्मात्राती पुत्रस्तत्पुत्रस्य पुत्रत्वम् । इसके आधार पर समाज में पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा बहुत अधिक थी। इस तरह कोई देवता से पुत्र मांगता था तो कोई अन्न मांगता था। कोई ब्रह्मवर्चस् कोई राष्ट की कामना करत था। कामनाओं की संख्या में आज की तरह इतना आधिक्य नहीं था। उन कामनाओं के विषय में भी ऐसा ही प्रतीत होता है कि ब्राह्मण ब्रह्मवर्चस् की कामना करता था तो क्षत्रिय राष्ट की कामना करता था। इस प्रकार यह एक भी विशेषता देखने में आती है। वैदिक समय से ही कर्म काण्ड की उपासना चली आ रही है। यह जान लेना उचित होगा कि कर्मकाण्ड में एक ही ऋत्विज की अपेक्षा रहती थी और वह कार्य यजमान स्वयं अकेला ही कर लेता था। साथ में पत्नी

भी रहती थी।

प्रत्येक पूजन के प्रारम्भ में आत्मशुद्धि, गुरु स्मरण, पवित्र धारण, पृथ्वी पूजन, संकल्प, भैरव प्रणाम, दीप पूजन, शंख-घण्टा पूजन के पश्चात् ही देव पूजन करना चाहिए। व्रतोद्यापन एवं विशेश अनुष्ठानों के समय यज्ञपीठ की स्थापना का विशेश महत्त्व होता है, अतः प्रधान देवता की पीठ रचना पूर्व दिशा के मध्य में की जाये। पीठ रचना हेतु विविध रंगों के अक्षत या अन्नादि लिये जाते है। सभी व्रतोद्यापनों में सर्वतोभद्रपीठ विशेषरूप से बनाया जाता है।

पूजन के अनेक प्रकार प्रचलित है और शास्त्रों में पञ्चोपचार, षोड़शोपचार, शतोपचार आदि विविध वस्तुओं से अर्चना के विधि विधान की विस्तार से चर्चा है। श्रद्धा भक्ति के अनुसार उनका संग्रह करना चाहिए।

देवार्चन हेतु विशिष्ट समान -

पंचामृत - घी, दूध, दही, बूरा, शहद।

पंचगव्य - गोबर, गौमूत्र, गौदुग्ध, गाय का घी, गाय का दही।

पंचरत्न - माणिक्य, पन्ना, पुखराज, प्रवाल (मूँगा), मोती।

पंचपल्लव - पीपल, आम, गूलर, बड़, अशोक

सप्तमृत्तिका - हाथी का स्थान, घोड़ा, वल्मीक, दीमक, नदी का संगम, तालाब, गौशाला़राजद्वार।

सप्तधान्य - उड़द, मूँग, गेहूँ, चना, जौ, चावल, कंगनी।

सप्तधातु - सोना, चाँदी, ताम्बा, लोहा, राँगा, सीसा, आरकुट।

अष्टमहादान - कपास, नमक, घी, सप्तधान्य, स्वर्ण, लोहा, भूमि, गौदान।

अष्टांगअर्घ्य - जल, पुष्प, कुशा का अग्रभाग, दही, चांवल, केसर (कुमकुम रोली), दूर्वा, सुपारी, दक्षिणा।

दशमहादान - गौ, भूमि, तिल, स्वर्ण, घी, वस्त्र, धान्य, गुड़, चाँदी, नमक।

पंचोपचार - गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य।

पंचदेव - सूर्य, गणेश, शक्ति, शिव, विष्णु।

सात पाताल - तल, अतल, सुतल, वितल, तलातल, रसातल, पाताल।

सप्तद्वीप - जम्बु, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौंच, शाक, पुष्कर।

जम्बुद्वीप - इलावृत्त, भद्राश्व, हरिवर्ष, केतुमाल, रम्यक, हिरण्यमय, कुरू, किंपुरुष, भारतवर्ष।

बासी जल, पुष्प का निषेध - जो फूल, पत्ते और जल बासी हो गये हों उन्हें देवताओं पर नहीं चढ़ाएँ, केवल तुलसीदल और गंगाजल कभी बासी नहीं होते हैं। तीर्थों का जल भी बासी नहीं होता

है। वस्त्र, यज्ञोपवीत और आभूषणों में भी निर्माल्यदोश नहीं लगता है। माली के घर में रखे हुए फूलों में बासी का दोश नहीं लगता है। फूल को जल में डुबोकर धोना मना है, केवल जल से इसका प्रोक्षण कर देना चाहिए। कमल की कलियों को छोड़कर दूसरी कलियों को चढ़ाना मना है। फूल, फल और पत्ते जैसे उगते है उन्हें वैसे ही चढ़ाना चाहिए। उत्पन्न होते समय इनका मुख ऊपर की ओर होता है, अतरू चढ़ाते समय इनका मुख ऊपर की ओर ही होना चाहिए। दूर्वा एवं तुलसीदल को अपनी ओर तथा बिल्वपत्र को नीचे मुख करके चढ़ाना चाहिए। इससे भिन्न पत्तों को किसी भी प्रकार से चढ़ा सकते हैं। दाहिने हाथ के करतल को उत्तान कर मध्यमा, अनामिका और अंगूठे की सहायता से फूल चढ़ाना चाहिए। चढ़े हुए फूल को अंगूठे व तर्जनी की सहायता से उतारना चाहिए।

देवताओं की पूजा तथा स्थान - पञ्चदेव (सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव, विष्णु) की पूजा सभी कार्यों में करनी चाहिए। गृहस्थी एक मूर्ति की पूजा नहीं करे, अपितु अनेक देवमूर्तियों की पूजा करे। इससे कामना पूरी होती है। घर में दो शिवलिंग, तीन गणेश, दो शंख, दो सूर्य, तीन दुर्गा, दो गोमती चक्र और दो शालिग्राम की पूजा करने से गृहस्थी मनुष्य का कल्याण कभी नहीं होता है। शालिग्राम की प्राण प्रतिष्ठा नहीं होती है। बाण लिंग तीनों लोकों में विख्यात है, उनकी प्राण प्रतिष्ठा, संस्कार या आह्वान कुछ भी नहीं होता है। पत्थर, लकड़ी, सोना या अन्य धातुओं की मूर्तियों की प्रतिष्ठा घर या मन्दिर में करनी चाहिए। कुमकुम, केसर और कर्पूर के साथ घिसा हुआ चन्दन, पुष्प आदि हाथ में तथा चन्दन ताम्र पात्र में रखे। तृण, काष्ठ, पत्ता, पत्थर, ईंट आदि से ढके सोमसूत्र का लंघन किया जा सकता है। पूजन में जिस सामग्री का अभाव हो उसकी पूर्ति मानसिक भावना से करनी चाहिए अथवा उस सामग्री के लिए अक्षत, पुष्प या जल चढ़ा दे, तत्तद् द्रव्यं तु संकल्पस्य पुष्पैर्वापि समर्चयेत्। अर्चनेषु विहीनं यत् तत्तोयेन प्रकल्पयेत् केवल नैवेद्य चढ़ाने से अथवा केवल चन्दनपुष्प चढ़ाने से भी पूजा मान ली जाती है।

केवलनैवेद्यसमर्पणेव पूजासिद्धिरिति...।

गन्धपुष्पसमर्पणमात्रेण पूजासिद्धिरित्यपिपूवैर्ः॥

पूजा करते समय प्रयोग के लिए उपयुक्त आसन

कुश, कम्बल, मृगचर्म, व्याघ्रचर्म और रेशम का आसन जपादि के लिए उत्तम है। बाँस, मिट्टी, पत्थर, तृण, गोबर, पलाश और पीपल जिसमें लोहे की कील लगी हो ऐसे आसन पर नहीं बैठना चाहिए तथा गृहस्थ को मृगचर्म के आसन पर नहीं बैठना चाहिए। स्नान, दान, जप, होम, सन्ध्या और देवार्चन कर्म में बिना शिखा बाँधे कभी कर्म नहीं करना चाहिए।

गणेश, विष्णु, शिव, देवी के पूजन हेतु विशिष्ट नियम -

१. अंगुष्ठ से देवता का मर्दन नहीं करना चाहिए और न ही अधम पुष्पों से पूजन करना चाहिए, कुश के अग्रिम भाग से जल नही प्रोक्षण करना चाहिए, ऐसा करना वज्रपात के समान होता है।

२. अक्षत से विष्णु की, तुलसी से गणेश की, दूर्वा से दुर्गा की और विल्वपत्र से सूर्य की पूजन नहीं करनी चाहिए।

३. अधोवस्त्र में रखा हुआ तथा जल द्वारा भिगोया हुआ पुष्प निर्माल्य हो जाता है, देवता उस पुष्प को ग्रहण नहीं करते है।

४. शिव पर कुन्द, विष्णु पर धत्तूरा, देवी पर अर्क तथा सूर्य पर तगर अर्पित नहीं करना चाहिए।

५. पत्र या पुष्प उलटकर नहीं चढ़ाना चाहिए, पत्र या पुष्प जैसा ऊर्ध्व मुख उत्पन्न होता है, वैसे ही अर्पित करना चाहिए। केवलमात्र विल्वपत्र ही उलटकर अर्पित करना चाहिए।

६. पत्ते के मूलभाग को, अग्रभाग को, जीर्णपत्र को तथा शिरायुक्त को चढ़ाने पर क्रमशः व्याधि, पाप, आयुश क्षय एवं बुद्धि का नाश होता है।

७. नागरबेल के पत्ते की डण्डी व्याधि और अग्रभाग से पाप होता है, सड़ा हुआ पान आयु और शिरा बुद्धि को नष्ट करती है। अतएव डण्डी, अग्रभाग और शिरा को निकाल देवे।

८. संक्रान्ति द्वादशी, अमावस्या, पूर्णिमा, रविवार, और सन्ध्या के समय तुलसी को तोड़ना निषिद्ध है। यदि विशेश आवश्यक (भगवान विष्णु के पूजन हेतु) हो तो नीचे लिखे मन्त्र अथवा भगवान् विष्णु का स्मरण करते हुए तोड़ सकते है -

त्वदंगसम्भवेन त्वां पूजयामि यथा हरिम।
तथा नाशय विघ्नं मे ततो यान्ति परागतिम।।

चरणामृत ग्रहण (तीन बार) विधि - बायें हाथ पर दोहरा वस्त्र रखकर दाहिना हाथ रख दे, तत्पश्चात् चरणामृत लेकर पान करें। चरणामृत ग्रहण करने समय उच्चारणीय मन्त्र -

कृष्ण! कृष्ण! महाबाहो! भक्तानामार्तिनाशनम्।
सर्वपापप्रशमनं पादोदकं प्रयच्छ मे।।

चरणामृत पान करते समय उच्चारणीय मन्त्र -

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम।
विष्णुपादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते।।
दुरूखदौर्भाग्यनाशाय सर्वपापक्षयाय च।
विष्णो पञ्चामृतं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते।।

देव पूजन में विशेश -

१. द्रोण पुष्प का महत्व - ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि को द्रोणपुष्प अत्यन्त प्रिय है। यह पुष्प दुर्गा को सर्वकामना और अर्थ की सिद्धि के लिए प्रदान करना चाहिए।

२. किस देवता की कितनी बार प्रदक्षिणा करे ? - चण्डी की एक परिक्रमा, सूर्य की सात परिक्रमा, गणेश की तीन, विष्णु की चार तथा भगवान शिव की आधी प्रदक्षिण करनी चाहिए।

३. दीप निर्वाण का दोश - देवताओं के पूजन में स्थित दीपक को शान्त (बुझाना) या हटाना नहीं चाहिए क्योंकि दीपक को हरण करे वाला व्यक्ति अन्धा हो जाता है तथा उसे बुझाने वाला व्यक्ति काणा हो जाता है।

४. देवताओं को प्रिय पत्र-पुष्प - भगवान शिव को बिल्वपत्र बहुत प्रिय है, विष्णु को तुलसी, गणेश को दूर्वा (घास), अम्बाजी को विभिन्न प्रकार के पुष्प तथा भगवान सूर्य को लाल रंग का करवीर पुष्प बहुत प्रिय है।

कर्मकाण्ड की महिमा और उसकी समाज में उपयोगिता

संसार में प्रत्येक व्यक्ति सुख की इच्छा करता है। संसार में जितने जीव जन्तु प्राणी है उन सबकी सुख की इच्छा होती है। जो इच्छा के अनुकूल है वही सुख है वह चाहे जिस रूप में हो। किसी को धन रूपी सुख की इच्छा होती है , किसी को पुत्र रूपी सुख की इच्छा होती है किसी को पत्नी रूपी सुख की इच्छा होती है तो किसी को विद्वत्ता रूपी सुख की इच्छा होती है किन्तु यह आवश्यक है कि जो भी अपनी इच्छा के अनुकूल हो वही सुख है और वही सबको चाहिये। जिस प्रकार भूखा प्राणी को भोजन चाहता है उसी प्रकार प्रत्येक प्राणी अपनी इच्छानुकूल वस्तु को चहता है अपनी इच्छानुकूल वस्तु को पाने के लिये अनेक प्रकार का प्रयत्न करता है। वह किसी की सेवा करता है, किसी से अनुराग करता है, किसी से कलह करता है , व्यापार करता है और नौकरी भी करता है। उसे जो भी आवश्यक लगता है वह अपनी शक्ति भर अपनी इच्छा की पूर्ति करने के लिये प्रयत्न करता है जिससे मनचाही वस्तु प्राप्त कर सके।

अभिलषित वस्तु को पाने के लिये अनेक मार्ग हैं। उन्हीं मार्गों में सर्वश्रेष्ठ और वेद-विहित मार्ग कर्मकाण्ड है। साधारण जन अपनी शक्ति की अपेक्षा देवता ,ऋषि मुनि और आप्तजनों की शक्ति को अधिक मानते हैं।और उस पर विश्वास भी करते हैं। मानव अपनी अभिलषित वस्तु को प्राप्त करने के लिये अपनी शक्ति भर प्रयत्न करता है और उसे जब सफलता नही मिलती है तब दैवी शक्ति की ओर दौण पडता है और वह अपने पुज्य जनों से सम्मति भी लेता है। हमारे ऋषि मुनि के पास जाकर पुछता है और दुःख निवृत्ति पूर्वक सुख की कामना करता है तब ऋषि मुनि लोग दया करके उपाय

बतलाते हैं। उसके वाद मानव को अभिलषित वस्तु की प्राप्ति होती है भारतीय धर्मशास्त्र में ऐसे अनेक प्रकार का उदाहरण प्राप्त होते हैं।

कर्मकाण्ड भी इस प्रकार के अनेक उदाहरणों से परिपूर्ण है। इसमें अनेक प्रकार के उपाय बतलाये गये हैं । यदि पुत्र की कामना हो तो पुत्रेष्टि, राष्ट, मित्र और दीर्घायुष्य की इच्छा हो तो मित्रविन्देष्टि और स्वर्ग की कामना हो तो अग्निष्टोम याग करना चाहिये। इस प्रकार अभिलषित वस्तुओं की प्राप्ति के साधनों से हमारा कर्मकाण्ड ओत-प्रोत है। संसार में सबसे बणा और महत्त्व का स्थान वही है जहा से शाश्वत सुख और शान्ति प्राप्त हो सके। यह कर्मकाण्ड से ही सम्भव है। मनुष्य जब अपने प्रयत्न से थक जाता है और निराश का अनुभव करने लगता है तब वहा जाता है जहा सुख और शान्ति मिलने का अशा रहता है। मनुष्य मात्र के लिये वह स्थान अग्नि की उपासना हैं । इसकी छाया में मनुष्य सब कुछ पा सकता है।

पूजा के प्रकार

पूजा मुख्य रूप से दो प्रकार का बताया गया है

1-पंचोपचार पूजन ।

2-षोडशोपचार पूजन ।

1-पंचोपचार पूजन

पंचोपचार पूजन में मुख्य रूप से पांच प्रकार का पूजन बताया गया है। किसी देवी या देवता को इस मन्त्र से पहले स्नान कराना।

शुद्धोदकस्नान- ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विना: श्वेतः श्येताक्षोऽरूणस्ते रूद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः।

लौकिक मन्त्र- गंगा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती।

नर्मदे सिन्धुकावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। (शुद्ध जलसे स्नान कराये)

दूसरा वस्त्र चढाना - वैदिक मन्त्र - वस्त्र- **ॐ युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः। तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो3 मनसा देवयन्तः।**

लौकिक मन्त्र- शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।

देहालंकरणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेषाम्बिकाभ्यां नमः, वस्त्रं समर्पयामि। (वस्त्र को चढावे)

तीसरा-धूप दिखाना- **ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयं धूर्वामः।**

देवानामसि वह्नितम गं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम् ।।

लौकिक मन्त्र- वनस्पतिरसोद् भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।

आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोयं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः धूपमाघ्रापयामि। (धूप को दिखाये)

चौथा-दीप दिखाना-

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।

अग्निर्वचो ज्योतिर्वचः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वचः सहा।।

ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।।

लौकिक मन्त्र-

साज्यं च वर्तिसंयुक्त वह्निना योजितं मया ।

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम् ।।

भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने ।

त्राहि मां निरयाद् घोराद् दीपज्योतिर्नमोस्तुते ।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः दीपं दर्शयामि। (दीप को दिखाये)

पॉचवां - नैवेद्य अर्थात् वर्फी आदि का भोग लगाना।

एक किसी शुद्ध पात्र में यथोपलब्ध खाद्य वस्तु को भगवान के आगे रखकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए उसमें दूर्वा और पुष्प को छोणे।

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकॉ 2 अकल्पयन्।।

लौकिक मन्त्र-

शर्करा खण्डखाद्यानि दधिक्षीर घृतानि च ।

आहारं भक्ष्यभ्योज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः नैवेद्यसमर्पयामि। (नैवेद्य को निवेदित करे)

इसी विधि को पंचोपचार पूजन कहते हैं।

2-षोडशोपचार पूजन

षोडशोपचार पूजन में मुख्य रूप से शोलह प्रकार का पूजन बताया गया है। किसी देवी या देवता को पहले मन्त्र बोलते हुए दोनो हाथ में अक्षत पुष्प लेकर दानों हाथ जोणकर ध्यान करना चाहिये।

भगवान गणेश का ध्यान-

गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारूभक्षणम्।

उमासुतं शोकविनाषकारकं नमामि विघ्नेष्वरपादपंकजम्।।

भगवती गौरी का ध्यान-

नमो देव्यै महादेव्यै षिवायै सततं नमः।

नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्।।

श्रीगणेशाम्बिकाभ्यां नमः, ध्यानं समर्पयामि।

भगवान गणेश का आवाहान-

ॐ गणानां त्वा गणपति हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियजति हवामहे निधीनां त्वा निधिपति हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्।। एह्येहि हेरम्ब महेषपुत्र समस्तविघ्नौघविनाषदक्ष।

मांगल्यपूजाप्रथमप्रधान गृहाण पूजां भगवन् नमस्ते।।

ॐ भूर्भवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि च। हाथ में अक्षत लेकर गणेश जी पर चढा दे।

दूसरा- मन्त्र बोलते हुए दोनों हाथ जोड़कर आवाहन करे-

भगवती गौरी का आवाहन-

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कष्चन।

ससस्त्यष्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासीनीम्।।

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शंकरप्रियाम्।

लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गौर्यै नमः, गौरीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि च।

तीसरा-मन्त्र बोलते हुए आसन के लिये जल चढा दे-

पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽष्विनोर्बाहुभ्यां

स्नानीय, पुराचमनीय पूष्णो हस्ताभ्याम्।। (यजु. 1।10)

एतानि पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानीयपुराचमनीयानि समर्पयामि गणेषाम्बिकाभ्यां नमः। (इतना कहकर जल चढा दे)।

चौथा-पाद्य रूप में जल गिराना। पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, ॐ देवस्य त्वा सवितुः

प्रसवेऽष्विनोर्बाहुभ्यां स्नानीय, पुराचमनीय पूष्णो हस्ताभ्याम्।। एतानि

पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानीयपुराचमनीयानि समर्पयामि गणेषाम्बिकाभ्यां नमः। (इतना कहकर जल चढा दे)।

पॉचवां - अर्घ्य रूप में जल गिराना। पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽष्विनोर्बाहुभ्यां स्नानीय, पुराचमनीय पूष्णो हस्ताभ्याम्।। एतानि पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानीयपुराचमनीयानि समर्पयामि गणेषाम्बिकाभ्यां नमः। (इतना कहकर जल चढा दे)।

छठा- अचमनीयं जलं समर्पयामि ऐसा बोलते हुए अचमन रूप में जल चढाना।

सातवॉ - मन्त्र बोलते हुए स्नान कराना-

शुद्धोदकस्नान- ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त अष्विनाः श्वेतः श्येताक्षोऽरूणस्ते रूद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः।। **लौकिक मन्त्र-** गंगा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती। नर्मदे सिन्धुकावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेषाम्बिकाभ्यां नमः, शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। (षुद्ध जलसे स्नान कराये)

आठवॉ - मन्त्र बोलते हुए वस्त्र को चढावे

वस्त्र- ॐ युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः।

तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो3 मनसा देवयन्तः।। (ऋग. 3।8।4)

लौकिक मन्त्र- शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।

देहालंकरणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेषाम्बिकाभ्यां नमः, वस्त्रं समर्पयामि। (वस्त्र को चढावे)

नौवां- मन्त्र बोलते हुए चन्दन चढाना

चन्दन- ॐ त्वां गन्धर्वा अखनस्त्वामिन्द्रस्त्वां वृहस्पतिः।

त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्षमादमुच्यत।।

लौकिक मन्त्र- श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।

विलेपनं सुरश्रेष्ठ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेषाम्बिकाभ्यां नमः,चन्दनानुलेपनं समर्पयामि। (चन्दन को चढावे)

दशवां- मन्त्र बोलते हुए अगरवत्ती दिखाना-

धूप- ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयं धूर्वामः।

देवानामसि वह्नितम गं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्।।

लौकिक मन्त्र- वनस्पतिरसोद् भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।

आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोयं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः धूपमाघ्रापयामि। (धूप को दिखाये)

ग्यारहवां- मन्त्र बोलते हुए दीपक दिखाना-

दीप- ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।

अग्निर्वचो ज्योतिर्वचः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वचः सहा।।

ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।।

लौकिक मन्त्र-साज्यं च वर्तिसंयुक्त वह्निना योजितं मया।

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम्।।

भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने।

त्राहि मां निरयाद् घोराद् दीपज्योतिर्नमोस्तुते।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः दीपं दर्शयामि। (दीप को दिखाये)

वारहवां-मन्त्र बोलते हुए नैवेद्य अर्थात् वर्फी आदि का भोग लगाना।

नैवेद्य- एक किसी शुद्ध पात्र में यथोपलब्ध खाद्य वस्तु को भगवान के आगे रखकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए उसमें दूर्वा और पुष्प को छोणे।

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ 2 अकल्पयन्।।

लौकिक मन्त्र- शर्करा खण्डखाद्यानि दधिक्षीर घृतानि च।

आहारं भक्ष्यभ्योज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्स ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः नैवेद्यसमर्पयामि। (नैवेद्य को निवेदित करे)

नैवेद्यान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि कहते हुए अधोलिखित वाक्य को बोलते हुए पाच बार जल को चढावे ।

तेरहवां- मन्त्र बोलते हुए लवंग,इलायची, सोपारी सहित पान का पत्ता चढाना।

ताम्बूल- ॐयत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मःशरद्धविः।।

लौकिक मन्त्र- पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।

एलादिचूर्णसंयुक्त ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः मुखवासार्थं एलालवंगपूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि। (इलायची,लौंग-सुपारी सहित ताम्बूल को चढाये)

चौदहवां- मन्त्र बोलते हुए दक्षिणा चढाना।

दक्षिणा-

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातःपतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

लौकिक मन्त्र- हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।

अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः,कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।(द्रव्य दक्षिणा समर्पित करें।)

पन्द्रहवां - मन्त्र बोलते हाथ में फूल लेकर पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

पुष्पांजलि- ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

ॐ गणानां त्वा गणपति हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियजति हवामहे निधीनां त्वा निधिपति हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्।। (यजुर्वेद 23।19)

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कष्चन।

ससस्त्यष्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासीनीम्।। (षु. य. 23।18)

लौकिक मन्त्र- नानासुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।

पुष्पांजलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, पुष्पांजलिं समर्पयामि।(पुष्पांजलि अर्पित करे।)

सोलहवां -मन्त्र बोलते हुए प्रदक्षिणा करना।

प्रदक्षिणा-ॐ ये तिर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषंगिणः।

तेषा ँ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि।।

लौकिक मन्त्र- यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।

तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणपदे पदे।।

प्रार्थना-

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय

लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।

नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय

गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।

भक्तार्ति नाशनपराय गणेश्वराय

सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय।

पिद्याधराय विकटाय च वामनाय

भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते।।

नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः

नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः।

विश्वरूपश्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे

भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक।।

त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति

भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति।

विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति

तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव।।

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या

विश्वस्य बीजं परमासि माया।

सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्

त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति हेतुः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, प्रथनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि।(साष्टांग नमस्कार करे।)

गणेशपूजने कर्मयन्न्यूनमधिकं कृतम्।

तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोस्तु सदा मम।।

अनया पूजया गणेशाम्बिके प्रीयेताम् न मम।

(ऐसा कहकर समस्त पूजनकर्म भगवान् को समर्पित कर दे तथा पुनः नमस्कार करे।)

इसी विधि को षोडशोपचार पूजन कहते हैं।

1.4-सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि समस्त वेदादि शास्त्रों में नित्य और नैमित्तिक कर्मों को मानव के लिये परम धर्म और परम कर्तव्य कहा है । संसार में सभी मनुष्यों पर तीन प्रकार के ऋण होते हैं-देव-ऋण, पितृ-ऋण और मनुष्य(ऋषी)ऋण। नित्य कर्म करने से मनुष्य तीनों ऋणों से मुक्त हो जाता है इस लिये मनुष्य अपने ऋणों से मुक्त होने के लिये कर्मकाण्ड का

अध्ययन करता है तथा अपने जीवन में इसको पालन करता है। क्योंकि अपने ऋणों से मुक्त कर्मकाण्ड के माध्यम से ही होसकता है और उसके पास दूसरा कोई रास्ता नही है। इस लिये कर्मकाण्ड का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्रों को पूजनकर्म से सम्बन्धित सभी आवश्यक कर्मों का ज्ञान हो जायेगा। पूजन के लिए उपयुक्त यज्ञकर्म हेतु भूमि का चयन, विशिष्ट नियम, आसन, पुष्प, पूजन सामग्री आदि का चयन एवं वैदिक पूजन का ज्ञान भी हो जायेगा। इसके अन्तर्गत भूमिपूजन, भूतशुद्धि, आत्मप्राण प्रतिष्ठा, भद्रसूक्त का पाठ, भूतापसारण, दीप पूजन, घण्टा व शंख पूजन, वरुण (जल) पूजन, गुरु स्मरण, तिलक, गणपति स्मरण तथा संकल्प आदि विधियों का ज्ञान मिलेगा। प्रायरू सभी पूजन पद्धतियों में यही प्रारम्भिक पूजन प्रयोग में आता है, केवलमात्र कहीं-कहीं प्रधान पूजन के अनुसार कुछ अंशो की भिन्नता पायी जाती है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्र इन सभी कार्यों को करने में स्वतरू सक्षम हो जायेगा।

1.5 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
स्व	अपने
कर्मणा	कर्म के द्वारा
तम्	उसको
अभ्यर्च	पूजा करके
सिद्धिम्	सिद्धि को
विन्दन्ति	जानते हैं।
मानवः	मनुष्य
यच्च	और जो
पुत्रः	पुत्र ने
पुन्नाम	पुन्नाम
नरकम्	नरक को
अनेकशतम्	अधिक
प्रदक्षिणा	परिक्रमा करना

1.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न -उत्तर

1-प्रश्न- भारतीय सनातन संस्कृति किस पर आधारित है।

उत्तर- भारतीय सनातन संस्कृति पुनर्जन्म एवं मरण पर आधारित है।

2-प्रश्न- स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दन्ति मानवः यह किसने कहा है?

उत्तर- स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दन्ति मानवः यह गीता में भगवान् कृष्ण ने स्वयं कहा है।

3-प्रश्न- पूजा मुख्य रूप से कितने प्रकार का बताया गया है?

उत्तर- पूजा मुख्य रूप से दो प्रकार का बताया गया है। 1-पंचोपचार पूजन। 2-षोडशोपचार पूजन।

4- प्रश्न- अभिलषित वस्तु को पाने के लिये कौन सा मार्ग बताया गया है?

उत्तर- - अभिलषित वस्तु को पाने के लिये सर्वश्रेष्ठ और वेद-विहित मार्ग कर्मकाण्ड बताया गया है।

5- प्रश्न-मनुष्य अपने ऋणों से मुक्त होने के लिये किसका अध्ययन करता है?

उत्तर- मनुष्य अपने ऋणों से मुक्त होने के लिये कर्मकाण्ड का अध्ययन करता है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1.पूजन के प्रकार बताये हैं-

क -तीन प्रकार | ख -दो प्रकार

ग -एक प्रकार | घ -चार प्रकार

2.पूजन दो प्रकार बताये हैं-

क - पंचोपचार | ख -षोडशोपचार पूजन।

ग - नवोपचार | घ -पंचोपचार पूजन,षोडशोपचार पूजन।

3.पंचोपचार में पूजन हैं-

क - एक | ख - दो

ग -पॉच | घ -तीन

4.,षोडशोपचार में पूजन हैं-

क - एक | ख - दो

ग - छः | घ -तीन

5. भारतीय सनातन संस्कृति पुनर्जन्म एवं मरण पर आधारित है-

क - एक शक्तियों पर | ख - द्वादश शक्तियों पर

ग - कर्मकसण्ड पर | घ - दश शक्तियों पर

6. वेदादि शास्त्रों में कर्म बताये गये है-

क -तीन प्रकार ख -दो प्रकार

ग -एक प्रकार घ -चार प्रकार

7.वेदादि शास्त्रों में कर्म है-ख

क -नित्य कर्म ख - नित्य कर्मएवं नैमित्तिक कर्म

ग -नैमित्तिक कर्म घ -प्रायश्चित कर्म

8.नित्य और नैमित्तिक कर्मों को मानव के लिये कहा है-

क -परम धर्म ख - परम धर्म और परम कर्तव्य

ग -परम कर्तव्य घ - परम प्रायश्चित कर्म

9.संसार में सभी मनुष्यों पर ऋण होते हैं-

क -तीन प्रकार के ख -दो प्रकार के

ग -एक प्रकार के घ -चार प्रकार के

10.संसार में सभी मनुष्यों पर तीन प्रकार के ऋण होते हैं-

क - देव-ऋण, ख - मनुष्य(ऋषी)ऋण।

ग - पितृ-ऋण घ - देव-ऋण, पितृ-ऋण और मनुष्य(ऋषी)ऋण।

11. नित्य कर्म करने से मनुष्य तीनों ऋणों से हो जाता है-

क -परम धर्म ख - परम धर्म और परम कर्तव्य

ग- तीनो ऋणों से मुक्त घ - परम प्रायश्चित कर्म

12. मनष्य अपने ऋणों से मुक्त होने के लिये कर्मकाण्ड का अध्ययन करता है-

क - कर्मकाण्ड का ख - सूर्य का

ग - विष्णु का घ – गौरी का

बहुवैकल्पिक प्रश्नों के उत्तर –

1. ख 2. घ 3. ग 4. ग 5. ग 6. ख 7. ख 8. ख 9. क 10. घ 11. ग 12. क

1.7-सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

1-पुस्तक का नाम-दुर्गाचन पूजापद्धति

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाषक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

2-पुस्तक का नाम-सर्वदेव पूजापद्धति

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाषक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

3 धर्मशास्त्र का इतिहास

लेखक - डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे

प्रकाशक:- उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,

लेखक:- पं. बिहारी लाल मिश्र,

प्रकाशक:- गीताप्रेस, गोरखपुर।

5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा

संकलन ग्रन्थ

प्रकाशक:- मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

6 कर्मठगुरुः

लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य

प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती

सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी

सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिश शोध संस्थान, जयपुर।

9 विवाह संस्कार

सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर

1.8-उपयोगी पुस्तकें

1-पुस्तक का नाम-दुर्गाचनपद्धति

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न-पंचोपचार पूजन में मुख्य रूप से पांच प्रकार का पूजन बताया गया है। इसका वर्णन कीजिये-

उत्तर- पंचोपचार पूजन में मुख्य रूप से पांच प्रकार का पूजन बताया गया है। किसी देवी या देवता को इस मन्त्र से पहले स्नान कराना।

शुद्धोदकस्नान- ॐ शुद्धवालः सर्वषुद्धवालो मणिवालस्त अष्विनाः श्वेतः श्येताक्षोऽरूणस्ते रूद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः।

लौकिक मन्त्र- गंगा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती।

नर्मदे सिन्धुकावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। (शुद्ध जलसे स्नान कराये)

दूसरा-वस्त्र चढाना। वस्त्र- ॐ युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः। तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो3 मनसा देवयन्तः।

लौकिक मन्त्र- शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।

देहालंकरणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेषाम्बिकाभ्यां नमः, वस्त्रं समर्पयामि। (वस्त्र को चढावे)

तीसरा-धूप दिखाना- ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयं धूर्वामः।देवानामसि वह्नितम गं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्।।

लौकिक मन्त्र- वनस्पतिरसोद् भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।

आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोयं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः धूपमाघ्रापयामि। (धूप को दिखाये)

चौथा-दीप दिखाना-

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।

अग्निर्वचो ज्योतिर्वचः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वचः सहा।।

ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।।

लौकिक मन्त्र- साज्यं च वर्तिसंयुक्त वह्निना योजितं मया।

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम्।।

भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने।

त्राहि मां निरयाद् घोराद् दीपज्योतिर्नमोस्तुते।।

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः दीपं दर्शयामि। (दीप को दिखाये)

पॉ चवां- नैवेद्य अर्थात् वर्फी आदि का भोग लगाना।

एक किसी शुद्ध पात्र में यथोपलब्ध खाद्य वस्तु को भगवान के आगे रखकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए उसमें दूर्वा और पुष्प को छोणे।

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष ँशीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकॉ 2 अकल्पयन्।।

लौकिक मन्त्र- शर्करा खण्डखाद्यानि दधिक्षीर घृतानि च।

आहारं भक्ष्यभ्योज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्स

ॐ भूभुर्वः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः नैवेद्यसमर्पयामि। (नैवेद्य को निवेदित करे)

इसी विधि को पंचोपचार पूजन कहते हैं।

इकाई – 2 स्वस्तिवाचन एवं संकल्प

इकाई की रुप रेखा

2. 1- प्रस्तावना

कर्मकाण्ड से सम्बन्धित यह दूसरी इकाई है इस इकाई के अध्ययन के आप बता सकते है कि कर्मकाण्ड में संकल्प की उत्पति किस प्रकार से हुई है? कर्मकाण्ड में संकल्प उत्पति अनादि काल से हुई है। तथा संकल्प के ही माध्यम से कर्मकाण्ड में जान आता है। संकल्प कर्मकाण्ड का प्राण है। कर्मकाण्ड में संकल्प यदि अच्छी प्रकार से नही हुआ तो कार्य की सिद्धि नही होती है। इस लिये कर्मकाण्ड में संकल्प की अत्यन्त आवश्यकता है।

किसी भी कार्य को करने के पहले किसी देवी देवता की मंगल पाठ करना अत्यन्त आवश्यक है कर्मकाण्ड में सबसे पहले मंगल पाछ किया गया है जिसको हम स्वस्त्ययन कहते है। इस लिये यहॉ पर पूजन के पहले स्वस्त्ययन का पाठ किया गया है।

2.2- उदेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप स्वस्त्ययन एवं संकल्प का अध्ययन करेंगे।

1. संकल्प के विषय में आप परिचित होंगे-
2. संकल्प दो प्रकार के होते हैं। इसके विषय में आप परिचित होंगे
3. निष्काम संकल्प के विषय में आप परिचित होंगे
4. सकाम संकल्प के विषय में आप परिचित होंगे
5. स्वस्त्ययन के के विषय में आप परिचित होंगे
6. अंगन्यास के विषय में आप परिचित होंगे

2.3-स्वस्त्ययन एवं संकल्प

देवताओं का पूजा तथा स्थान-

पंचदेव (सूर्य. गणेश. दुर्गा. शिव. विष्णु) की पूजा सभी कार्यो में करनी चाहिये। गृहस्थी को एक मूर्ति की पूजा नही करनी चाहिये , अपि तु अनेक देवमूर्तियों की पूजा करनी चाहिये। इससे मन की कामना पूरी होती है। घर में दो शिवलिंग, तीन गणेश, दो शंख, दो सूर्य, तीन दुर्गा, तथा दो शालीग्राम की पूजा करने से गृहस्थी मनुष्य का कल्याण कभी नही होता है। शालीग्राम की प्राणप्रतिष्ठा नहीं करनी चाहिये।पत्थर, लकणी, सोना या अन्य धातुओं की मूर्तियों की प्रतिष्ठा घर अथवा मन्दिर में करनी चाहिये। पूजन में जिस सामग्री का अभाव हो उसकी पूर्ति मानसिक भावना से

करनी चाहिये अथवा उस सामग्री के लिये अक्षत, पुष्प या जल चढा दे, तत्तद् द्रव्यं तु संकल्पस्य पुष्पैर्वापि समर्चयेत् । अर्चनेषु विहीनं यत् तत्तोयेन प्रकल्पयेत् ॥ केवल नैवेद्य चढाने से अथवा केवल चन्दन,पुष्प चढाने से भी पूजा मान ली जाती है।

चौकी स्थापित करके उस पर पञ्चदेवों के क्रम में यथाक्रम स्थापित करे। ईशान कोण में घी का दीपक रखे और अपने दायें हाथ में पूजा सामग्री रख लेवे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख बैठे। कुंकुम (रोली) का तिलक करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन आरम्भ करे ।

कलशोदकेन शरीरप्रोक्षणम्(कलश के जल से शरीर का प्रोक्षण करे) :-

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः।

पुनन्तु विश्वाभूतानि जातवेदः पुनीहिमा।।

ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ३

आचमन (तीन बार आचमन करे):-

ॐ केशवाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय नमः।

प्राणायाम:-

गोविन्दाय नमः बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे-धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करे।

पवित्रीधारणम् - ॐ पवित्रेस्त्थो व्वैष्णव्यौसवितुर्व्व प्प्रसवऽउत्पन्नुनाम्यच्छिन्नद्रेण पवित्रेण सूर्य्य

रश्मिभिः। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य त्कान्नमल पुनेतच्छन्नकेयम्।।

यथा वज्रं सुरेन्द्रस्य यथा चक्रं हरेस्तथा।

त्रिशूलं च त्रिनेत्रस्य तथा मम पवित्रकम्।।

सपत्नीक यजमान के ललाट में स्वस्तितिलक लगाते हुए मन्त्र को बोले-

ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः।

स्वस्ति नस्ताक्ष्यर्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि:पमश्वि नौव्व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

त्रिपुण्डधारणम (त्रिपुण्ड़ का तिलक करे):- परम्परागतनुसार ही त्रिपुण्ड लगाना चाहिए।

त्र्यायुषञ्जमदग्ने कश्श्यपश्यत्र्यायुषम् ।

यद्देवेषु त्तयायुषन्तन्नोऽ अस्तु त्रयायुषम्।

रुद्राक्षमाला धारण (माला धारण करे):-

त्र्यम्बकँ य्यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्म्मृत्त्योर्म्मुक्क्षीय मामृताम्।

शिखा बन्धन (शिखा का बन्धन करे तथा सिर पर वस्त्र रख देवे):-

मा नस्त्तोके तनये मानऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्श्वेषु-रीरिष।

मा नो व्वीरान्रुद्रभामिनो व्वधीर्हविष्म्मन्त सदमित्त्वा हवामहे।

ग्रन्थिबन्धन (लोकाचार से यजमान का सपत्नीक ग्रन्थिबन्धन करे):-

ऊँ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्ब्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः।

नाकङ्गृब्भ्णानाः सुकृतस्यलोके तृतीयपृष्ठेऽअधिरोचने दिवः।।

भूमिपूजन (भूमि की पूजा करे):-

ऊँ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरानिवेशनि।

च्छा नः शर्म्म सप्प्रथाः।। ऊँ कर्मभूम्यै नमः।। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

आसनपूजन (आसन की पूजा करे):-

ऊँ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।

ऊँ कूर्मासनाय नमः।

ऊँ अनन्तासनाय नमः।

ऊँ विमलासनाय नमः। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

भूतापसारण (बायें हाथ में सरसों लेकर उसे दाहिने हाथ से ढककर निम्न मन्त्र पढ़े) -

रक्षोहणं व्वलगहनं व्वैष्णवीमिदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे निष्टयो ममात्यो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे समानोमसमानो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सबन्धुम सबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सजातो मसजातो निचखानोत्कृत्याङ्क्रिामि।

ऊँ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।

ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ।।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम् ।

सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे ।।

निम्न मन्त्रों से सरसों का सभी दिशाओं में विकिरण करे:-

प्राच्यैदिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा दक्षिणायै दिशेस्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा प्प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदर्ध्वायै दिशेस्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः। दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः। उत्तरे श्रीधरो रक्षेद्ऐशान्ये तु गदाधरः।।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः। एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

भैरवनमस्कार (भैरव को नमस्कार करके पूजन की आज्ञा लेवे):-

ॐ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम।

भैरवाय नमस्तुभ्यम् अनुज्ञां दातुमर्हसि।।

कर्मपात्र पूजन् (ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को अक्षतपुञ्ज पर स्थापित करते हुए पूजन करे):-

ॐ तत्वामि ब्ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्बिर्भः।

अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश समानऽ आयुः प्प्रमोषीः।। ॐ वरुणाय नमः।

पूर्वे ऋग्वेदाय नमः। दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः।

पश्चिमे सामवेदाय नमः। उत्तरे अथर्ववेदाय नमः।

मध्ये साङ्गवरुणाय नमः। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

अंकुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्सर्वाणि तीर्थानि आवाहयेत् (दायें हाथ की मध्यमा अङ्गुली से जलपात्र में सभी तीर्थों का आवाहन करे):-

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति।

नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु।।

कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।

मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।

कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।।

अश्च सहिताः सर्वे कलशाम्बु समाश्रिताः।

गायत्री चात्र सावित्री शान्तिः पुष्टिकरा तथा।

आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।

गंगे च यमुने चौव गोदावरी सरस्वती।

नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन्सन्निुध कुरु।।

ब्रह्माण्डोदर तीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे।

तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर।।

ऊँ जलबिम्बाय विद्महे नीलपुरुषाय धीमहि। तन्नो अम्बु प्रचोदयाम्। व मूलेन अष्टवारम्भिमन्त्र्य, धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, मत्स्यमुद्रया आच्छाद्य।

उदकेन पूजासामग्रीं स्वात्मानं च सम्प्रोक्षयेत् (पात्र के जल से पूजन सामग्री एवं स्वयं का प्रोक्षण करे):-

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे।।

योवः शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हनः। उशतीरिवमातरः।।

तस्म्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ आपोजनयथाचनः।।

दीपपूजनम् (देवताओं के दाहिने तरफ घी एवं विशेश कर्मों में बायें हाथ की तरफ तेल का दीपक जलाकर पूजन करना चाहिए):-

अग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्रा देवतादित्त्या देवता मरुतो देवता विश्श्वे देवा देवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता।

ऊँ दीपनाथाय नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

सूर्य नमस्कारः (दिन में पूजन कर रहे हो तो सूर्य को नमस्कार करे):-

ऊँ तच्चक्क्षुर्द्देवहितम्पुरस्त्ताच्छुक्क्रमुच्चरत्।

पश्श्येम शरद्द शतञ्जीवेम शरद्द शत श्शृणुयाम शरद्द

शतम्प्रब्ब्रवाम शरद्द शतमदीना स्याम शरद्द शतम्भूयश्च्च शरद्द शतात्।

चन्द्र नमस्कारः (रात्रि में पूजन कर रहे हो तो चन्द्रमा को नमस्कार करे):-

ऊँ इमन्देवा ऽ असपत्न œ सुवध्वम्महते क्षत्रायमहते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय।

इमममुख्य पुत्रममुख्यै पुत्रमस्यै विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना œ राजा।।

प्रार्थनाः- ऊँ भो दीप देवःपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत्।

यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव।।

शंख पूजन -

1. ॐ अग्निर्ऋषि पवमान पाञ्चजन्य पुरोहित। तमीमहेमहागयम्।

ॐ पाञ्चजन्याय विद्महे पावमानाय धीमहि। तन्नोशंखः प्रचोदयात्।

ॐ भूर्भुवः स्वः शंखस्थ देवतायै नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि समर्पयामि।

घण्टा पूजन -

आगमनार्थं तु देवानां गमनार्थं तु रक्षसाम्।

घण्टानादं प्रकुर्वीत् तस्मात्घण्टां प्रपूजयेत्।

ॐ सुपर्ण्णासि गरुत्क्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्र्ञ्चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ।

स्तोमऽ आत्माच्छन्दाœ स्यङ्ग्नि जूœ षिनाम ।

साम ते तनूर्व्वामदेव्यँज्ञा यज्ञियं पुच्छन्धिष्ण्या शफा।

सुपर्ण्णासि गरुत्क्मान्दिवङ्ग्च्छस्त्र पत। २। ॐ भूर्भुवः स्वः घण्टस्थ गरुड़ाय नमः।

सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि समर्पयामि।

हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा (हाथ में अक्षत-पुष्प लेकर प्रार्थना करे):-

ॐ आनो भद्र्राः क्रतवो यन्तु व्विश्वतो दब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः। देवानो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्प्रायुवोरक्षितारो दिवेदिवे॥१॥ देवानां भद्र्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवाना रातिरभिनोनिवर्त्तताम्। देवाना सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयं देवानऽआयुः प्प्रतिरन्तुजीवसे॥२॥ तान्पूर्वया निविदा हूमहे व्वयं भगम्मित्रमदितिं दक्षमस्रिधर्म्। अमणं व्वरुण सोममश्विना सरस्वती नः सुभगामयस्करत्॥३॥ तन्नोव्वातो मयो भुव्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्॥४॥ तामीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पति-न्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषा नो यथा व्वेदसामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥५॥ स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषाव्विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्यो ऽ अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु॥६॥ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो व्विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्व्वामनवः सूरचक्षसो व्विश्वेनोदेवाऽअवसा गमन्निह॥७॥ भद्र्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्र्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा œ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः॥८॥ शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा त्रा नश्चक्रा जरसंतनूनाम्। पुत्रासो त्र पितरो भवन्ति मानो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः॥९॥ अदितिर्द्यो रदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवा ऽ अदितिः पञ्चजना ऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम्॥१०॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष œ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। व्वनस्पतयः शान्तिर्व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व œ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि॥११॥ यतो यतः समीहसे ततो नो ऽ अभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योभयन्नः

पशुभ्यः॥१२॥ सुशान्तिर्भवतु॥

शिरसाभिवन्द्य गणपतिमण्डलोऽपरि अक्षतपुष्पाणि अर्पयेत्। (अक्षत-पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)

गणपत्यादि देवानां स्मरणम्(गणेशादि देवों का स्मरण करे):-

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजगर्णकः। लम्बोदरश्च विकटोविघ्ननाशो विनायकः। धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि। विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे संकटे चौव विघ्नस्तस्य न जायते। शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये। अभीप्सितार्थ सिध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः। सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः। सर्वमङ्ग्ल माङ्ग्ल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते। सर्वदा सर्व कार्येषु नास्ति तेषाममङ्ग्गलम्। येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः। तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव। विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि। लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः। येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः। यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम। सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रि भुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः। विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गङ्गा भवानी मणिकर्णिकाम्। विनायकं गुरुभानुं ब्रह्मिविष्णुमहेश्वरान्। सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थ सिद्धये।ऊँ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। ऊँ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ऊँ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ऊँ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ऊँ शचीपुरन्दराभ्यां नमः। ऊँ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। ऊँ सर्वपितृदेवताभ्यो नमः। ऊँ इष्टदेवताभ्यो नमः। ऊँ कुलदेवताभ्यो नमः। ऊँ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ऊँ स्थानदेवताभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ऊँ गुरवे नमः। ऊँ परमगुरवे नमः। ऊँ परात्परगुरवे नमः। ऊँ परमेष्ठिगुरवे नमः।

गुरुः ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीः गुरवे नमः॥
ऊँ एतत्कर्मप्रधानदेवताभ्यो नमः।

(क) निष्काम संकल्प

दाहिने हाथमें जल, अक्षत और द्रव्य लेकर संकल्प करे।

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्मण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मवर्तैकदेशे गंगायमुनयोः पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे तीर्थ क्षेत्रे उत्तराखण्ड प्रदेशे हल्द्वानि उपक्षेत्रे अस्मिन्

देवालये (गृहे) देव-ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्ट्मे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्ट्सिम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋर्ता अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्रः (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मनः ममोपादुरितक्षयद्वारा श्रीपरमेष्वरप्रीत्यर्थं. . . .देवस्य पूजनं करिष्ये।

(ख) सकाम संकल्प

इसके बाद दाहिने हाथमें जल, अक्षत और द्रव्य लेकर संकल्प करे।

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मवर्तैकदेशे गंगायमुनयोः पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे तीर्थ क्षेत्रे उत्तराखण्ड प्रदेशे हल्द्वानि उपक्षेत्रे अस्मिन् देवालये (गृहे) देव-ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्ट्मे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्ट्विंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्ट्सिम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन् वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋर्ता अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्रः (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा-मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशेः नामराशेः वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्ट्मद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तैः सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान-स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं पञ्चदेवपूजनं (सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव तथा विष्णु) करिष्ये।

तत्पश्चात्पञ्चदेवों के अन्तर्गत गणपति आदि देवताओं का पूजन करे।

अंगन्यास

संकल्पके पष्चात् न्यास करे। मन्त्र बोलते हुए दाहिने हाथसे कोष्ठमें निर्दिष्ट अंगोका स्पर्श करे।

इसमन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथ से बायाँ हाथ को स्पर्श करे-

सहस्त्रषीर्षा पुरूषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्।

स भूमि सर्वत स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दषांगुलम्।।

इसमन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे करे। दाहिना हाथ को स्पर्श करे-

पुरूष एवेद सर्वं यभ्दूतं यच्च भाव्यम्।

उतामृतत्वस्येषानो यदन्नेनातिरोहति।।

इसमन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे बायाँ पैर को स्पर्श करे-

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँष्च पूरूषः।

पादोऽस्य विष्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे दाहिना पैर को स्पर्श करे-

ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साषनानषने अभि।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे वाम जानु को स्पर्श करे-

ततो विराडजायत विराजो अधि पुरूषः।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाभ्दूमिमथो पुरः।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे दहिना जानु
को स्पर्श करे-

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।

पशूँस्ताँष्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याष्च ये।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे वाम कटिभाग को स्पर्श करे-

तस्माद्यज्ञात् सर्वहतु ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दा सि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे दाहिना कटिभाग को स्पर्श करे-

तस्मादष्वा अजायन्त ये के चोभयादतः।

गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे नाभि को स्पर्श करे-

तं यज्ञं बर्हिषि पौक्षन् पुरूषं जातमग्रतः।

तेन देवा अजयन्त साध्या ऋषयष्च ये।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे हृदय को स्पर्श करे-

यत्पुरूषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।

मुखं किमस्यासीत् किं बाहु किमूरू पादा उच्यते।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे वाम बाहु को स्पर्श करे-

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।

उरू तदस्य यद्वैष्यः पद्भ्या शूद्रो अजायत।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे दक्षिण बाहु को स्पर्श करे-

चन्द्रमा मनसो जातष्चक्षोः सूर्यो अजायत।

श्रोत्राद्वायुष्च प्राणष्च मुखादग्निरजायत।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे कण्ठ को स्पर्श करे-

नाभ्या आसीदन्तरिक्ष शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिषः श्रोत्रात्तथा लोकाँ2 अकल्पयन्।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे मुख

को स्पर्श करे-

यत्पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे आँख को स्पर्श करे-

सप्तास्यासन परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।

देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरूषं पशुम्।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे मूर्धा को स्पर्श करे

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

पंचअंगन्यास

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे हृदय को स्पर्श करे

अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विष्वकर्मणः समवर्तताग्रे।

तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजनमग्रे।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे सिर को स्पर्श करे

वेदाहमेतं पुरूषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।

तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे शिखा को स्पर्श करे

प्रजापतिष्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा वि जायते।

तस्य योनिं परि पश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विष्वा।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे कवचाय हुम्, दोनो कंधो को स्पर्श करे

यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहितः।

पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रूचाय ब्राह्मये।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे अस्त्राय फट्, बायीं हथेली पर ताली बजाये को स्पर्श करे

रूचं ब्राह्मं जनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन्।

यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन् वषे।।

करन्यास

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हॉथ से दोनों अंगूठोका स्पर्श करे

ब्राह्मणोऽस्य मुखीमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।

उरू तदस्य यद्वैष्यः पभ्दया शूद्रो अजायत।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे दोनों तर्जनियों का स्पर्श करे अंगुष्ठाभ्यां नमः

चन्द्रमा मनसो जातष्चक्षोः सूर्यो अजायत।

श्रोत्राद्वायुष्च प्राणष्च मुखादग्निरजायत।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे दोनों मध्यमाओं का स्पर्श करे

नाभ्यो आसीदन्तरिक्ष शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिषः श्रोत्रात्तथा लोकाँ2 अकल्पयन्।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे दोनों अनामिकाओं का स्पर्श करे मध्यमाभ्यां नमः।

यत्पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः।।

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे दोनों कनिष्ठिकाओं का स्पर्श करे

सप्तास्यास्न परिधयस्त्रिः सप्त समधिः कृताः।

देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरूषं पशुम्।। कनिष्ठिकाभ्यां नमः

इस मन्त्र को बोलते हुए दाहिने हाथसे दोनों करतल और करपृष्ठोंका स्पर्श करे

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

2.4-सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्रों को गणपति पूजन की विधि का ज्ञान मिलेगा। इसके अन्तर्गत गणपति पूजन का मुहूर्त विविध मन्त्रों का ज्ञान, नूतन गणपति मूर्ति का स्थापन-विधि, प्राण-प्रतिष्ठा, अंगपूजन, अथर्वशीर्ष का पाठाभ्यास, षड्विनायक पूजन सहित गणपति की सम्पूर्ण पूजन विधि का ज्ञान छात्रों को मिलेगा। गणपति को प्रथमपूज्य का आशीर्वाद सभी देवताओं से प्राप्त है अतएव कोई भी मांगलिक कार्य इनकी पूजन के बिना पूर्णता को प्राप्त नहीं होता है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि समस्त वेदादि शास्त्रों में नित्य और नैमित्तिक कर्मो को मानव के लिये परम धर्म और परम कर्तव्य कहा है । इस लिये नित्य नैमित्तिक कर्म करने के लिये कर्मकाण्ड में स्वस्तिन अर्थात् मंगल पाठ करने का अत्यन्त महत्त्व बताया गया है। मंगल पाठ करने के वाद संकल्प का विधान बताया गया है। इसके वाद अंगों के न्यास करने का विधान बताया गया है।

2.5 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
हृषीकेषाय नमः	हृषीकेश के लिये नमस्कार है।
नारायणाय नमः	नारायण के लिये नमस्कार है।
गोविन्दाय नमः	गोविन्द के लिये नमस्कार है।
महागणाधिपतये नमः	महा गणाधिपति के लिये नमस्कार है।
लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः	लक्ष्मी नारायण के लिये नमस्कार है।
उमा-महेष्वराभ्यां नमः	उमामहेश्वर के लिये नमस्कार है।

मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः माता पिता के चरण कमलों को नमस्कार है।

इष्टदेवताभ्यो नमः इष्ट देवताओं को नमस्कार है।

कुलदेवताभ्यो नमः कुलदेवताओं को को नमस्कार है।

ग्रामदेवताभ्यो नमः ग्रामदेवताओं को नमस्कार है।

वास्तुदेवताभ्यो नमः वास्तुदेवताओं को नमस्कार है।

स्थानदेवताभ्यो नमः स्थानदेवताओं को नमस्कार है।

सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः सभी देवों को नमस्कार है।

सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः सभी ब्राह्मणों को नमस्कार है।

2.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न -उत्तर

1-प्रश्न-किसी कार्य को करने के पूर्व क्या किया जता है?

उत्तर- किसी कार्य को करने के पूर्व मंगल पाठ किया जता है।

2-प्रश्न-आचमन किस मन्त्र से किया जाता है?

उत्तर-ऊँ हृषीकेशाय नमः,'ऊँ नारायणाय नमः, ऊँ गोविन्दाय नमः' इस मन्त्र से किया जाता है?

'3-प्रश्न-पवित्री धारण किस मन्त्र से किया जाता है?

उत्तर-ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रष्मिभिः। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम्।'' इस मन्त्र से किया जाता है?

4- प्रश्न- पवित्र किस मन्त्र से किया जाता है?

उत्तर- ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

5-प्रश्न-संकल्प कितने प्रकार के होते है?

उत्तर-संकल्प दो प्रकार के होते हैं।

6.प्रश्न-किस मन्त्र से त्रिपुण्डधारणम (त्रिपुण्ड़ का तिलक) किया जाता है?

उत्तर-त्र्यायुषञ्जमदग्रे कश्श्यपस्य त्र्यायुषम् ।

यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽ अस्तु त्र्यायुषम्।

7.प्रश्न-किस मन्त्र से रुद्राक्षमाला धारण (माला धारण) किया जाताहै ?

उत्तर-त्र्यम्बकँ य्यजामहे सुगन्धिम्पुष्ट्विवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीय मामृताम्।

8.प्रश्न-किस मन्त्र से शिखा बन्धन (शिखा का बन्धन)किया जाता है?

उत्तर-मा नस्तोके तनये मानऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्श्वेषु-रीरिष।

मा नो व्वीरान्त्रुदर्द्र भामिनो व्वधीर्हविष्मन्त सदमित्त्वा हवामहे।

9.प्रश्न-ग्रन्थिबन्धन (लोकाचार से यजमान का सपत्नीक ग्रन्थिबन्धन) किया जाता है?

उत्तर-ॐ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः।

नाकङ्गृब्भ्णानाः सुकृतस्यलोके तृतीयपृष्ठेऽअधिरोचने दिवः।।

10.प्रश्न-किस मन्त्र से भूमिपूजन (भूमि की पूजा)किया जाता है?

उत्तर-ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरानिवेशनि।

च्छा नः शर्म्म सप्प्रथाः।। ॐ कर्मभूम्यै नमः।। (सर्वापचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

11.प्रश्न-किस मन्त्र से आसनपूजन (आसन की पूजा) किया जाताहै?

उत्तर-ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।(सर्वापचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

12.प्रश्न-कर्मपात्र पूजन किसे कहते है?

उत्तर-कर्मपात्र ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को अक्षतपुञ्ज पर स्थापित करते हुए पूजन किया जाता है।

12.प्रश्न-कर्मपात्र पूजन का मन्त्र किसे कहते है?

उत्तर- ॐ तत्वामि ब्ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः।

अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश समानऽ आयुः प्प्रमोषीः।। ॐ वरुणाय नमः।

पूर्वे ऋग्वेदाय नमः। दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः।

पश्चिमे सामवेदाय नमः। उत्तरे अथर्ववेदाय नमः।

मध्ये साङ्गवरुणाय नमः। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. पंचदेव हैं- ग

क -सूर्य. गणेश. दुर्गा. हरि. विष्णु ख - सूर्य. गणेश. पार्वती. शिव. विष्णु

ग - सूर्य. गणेश. दुर्गा. शिव. विष्णु घ - सूर्य. गणेश. दुर्गा. शिव. हनुमान

2. गृहस्थी को सभी कार्यो में पूजा नही करनी चाहिये-क

क - एक मूर्ति की पूजा ख - पार्वती की पूजा

ग -शिव की पूजा घ -हनुमान की पूजा

3. अनेक देवमूर्तियों की पूजा करने से पूरी होती हैं- क

क - मन की कामना ख - जीवन की कामना

ग - भविष्य की कामना घ - अपनी की कामना

4. घर में शिवलिंग,रखनी चाहिये - क

क - एक ख - दो

ग - अर्द्ध घ -तीन

5. घर में गणेश मूर्ति,रखनी चाहिये - ग

क - चार ख - दो

ग - एक घ -तीन

6. घर में शंख,रखनी चाहिये - ग

क - चार ख - दो

ग - एक घ -तीन

7. घर में शालीग्राम,रखनी चाहिये - ग

क - चार ख - दो

ग - एक घ -तीन

8.घी का दीपक रखनी चाहिये-क

क -ईशान कोण में ख - नैर्ऋत्य कोण में

ग -वायव्य कोण में घ -अग्नि कोण में

9. शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूजा में बैठना चाहिये-

क -ईशान कोण में ख - नैर्ऋत्य कोण में

ग - पूर्वाभिमुख घ -अग्नि कोण में

10. सहस्त्रषीर्षा पुरूषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्।

स भूमि सर्वत स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्षांगुलम्।। इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है-ख

क - दाहिने हाथ से दोनो कानों को ख - दाहिने हाथ से बायाँ हाथ को

ग - दाहिने हाथ से बायाँ पैर को घ -- दाहिने हाथ से दोनो नेत्रो को

11. ततो विराडजायत विराजो अधि पुरूषः।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाभ्दूमिमथो पुरः।।इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है-ख

क - दाहिने हाथ से दोनो कानों को ख - दाहिने हाथसे वाम जानु को

ग - दाहिने हाथ से बायाँ पैर को घ -- दाहिने हाथ से दोनो नेत्रो को

12. तस्माद्यज्ञात् सर्वहतु ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दा सि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।।इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है-घ

क - दाहिने हाथ से दोनो कानों को ख - दाहिने हाथसे वाम जानु को

ग - दाहिने हाथ से बायाँ पैर को घ - दाहिने हाथसे वाम कटिभाग

13. तं यज्ञं बर्हिषि पौक्षन् पुरूषं जातमग्रतः।

तेन देवा अजयन्त साध्या ऋषयष्च ये।।इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है-ग

क - दाहिने हाथ से दोनो कानों को ख - दाहिने हाथसे वाम जानु को

ग - दाहिने हाथसे नाभि को घ - दाहिने हाथसे वाम कटिभाग

14.तं पुरूषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।

मुखं किमस्यासीत् किं बाहु किमूरू पादा उच्यते। इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है-क

क - दाहिने हाथसे हृदय को ख - दाहिने हाथसे वाम जानु को

ग - दाहिने हाथसे नाभि को घ - दाहिने हाथसे वाम कटिभाग

15. ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।

उरू तदस्य यद्वैष्यः पद्भ्या शूद्रो अजायत।। इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है-ख

क - दाहिने हाथसे हृदय को ख - दाहिने हाथसे वाम बाहु को

ग - दाहिने हाथसे नाभि को घ - दाहिने हाथसे वाम कटिभाग

16. नाभ्या आसीदन्तरिक्ष शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिषः श्रोत्रात्तथा लोकाँ2 अकल्पयन्।। इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है-घ

क - दाहिने हाथसे हृदय को ख - दाहिने हाथसे वाम बाहु को

ग - दाहिने हाथसे नाभि को घ - दाहिने हाथसे कण्ठ को

17. यत्पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः।। इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है-ग

क - दाहिने हाथसे हृदय को ख - दाहिने हाथसे वाम बाहु को

ग -दाहिने हाथसे मुख को घ - दाहिने हाथसे कण्ठ को

18. सप्तास्यासन परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।

देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरूषं पशुम्।। इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है-ग

क - दाहिने हाथसे हृदय को ख - दाहिने हाथसे वाम बाहु को

ग -दाहिने हाथसे आख को घ - दाहिने हाथसे कण्ठ को

19.यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।। इस मन्त्र को बोलते हुए स्पर्श किया जाता है- ग

क - दाहिने हाथसे हृदय को ख - दाहिने हाथसे वाम बाहु को

ग -दाहिने हाथसे आख को घ - दाहिने हाथसे मूर्धा को

20. संकल्प होते है - ख

क - चार प्रकार ख - दो प्रकार

ग - एक प्रकार घ -तीन प्रकार

2.7-सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

1-पुस्तक का नाम-दुर्गार्चन पूजापद्धति
लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाषक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

2-पुस्तक का नाम-सर्वदेव पूजापद्धति
लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाषक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

3 धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक - डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशकः- उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
लेखकः- पं. बिहारी लाल मिश्र,
प्रकाशकः- गीताप्रेस, गोरखपुर।

5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा
संकलन ग्रन्थ
प्रकाशकः- मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

6 कर्मठगुरुः
लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिश शोध संस्थान, जयपुर।
9 विवाह संस्कार
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर

2.8-उपयोगी पुस्तकें

1-पुस्तक का नाम-दुर्गाचनपद्धति
लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.प्रश्न- निष्काम संकल्प का वर्णन करे-

उत्तर-ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्मण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मवर्तैकदेशे गंगायमुनयोः पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे तीर्थ क्षेत्रे उत्तराखण्ड प्रदेशे हल्द्वानि उपक्षेत्रे अस्मिन् देवालये (गृहे) देव-ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्ट्मे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्ट्सिम्वत्सराणां मध्येऽस्मिनवर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋर्ता अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्रः (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मनः ममोपादुरितक्षयद्वारा श्रीपरमेष्वरप्रीत्यर्थं. . . .देवस्य पूजनं

करिष्ये।

2.प्रश्न- भूतापसारण का वर्णन करे-

उत्तर-भूतापसारण (बायें हाथ में सरसों लेकर उसे दाहिने हाथ से ढककर निम्र मन्त्र पढ़े) -

रक्षोहणं व्वलगहनं व्वैष्णवीमिदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे निष्ट्यो ममात्यो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे समानोमसमानो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सबर्न्धुम सबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सजातो मसजातो निचखानोत्कृत्याङ्क्रिामि।

ऊँ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।

ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।

सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे।।

निम्न मन्त्रों से सरसों का सभी दिशाओं में विकिरण करे:-

प्राच्यैदिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा दक्षिणायै दिशेस्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा प्प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहोदर्ध्वायै दिशेस्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्रेय्यां गरुड़ध्वजः। दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः। उत्तरे श्रीधरो रक्षेद्ऐशान्ये तु गदाधरः।।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः। एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

इकाई - 3 गणेशाम्बिका पूजन

इकाई की रुप रेखा

3.1- प्रस्तावना

कर्मकाण्ड से सम्बन्धित यह तीसरी इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि गणेशाम्बिका की पूजन की आवश्यकता क्या है इसके विषय में विशेश रूप से वर्णन किया जा रहा है। किसी भी यज्ञादि महोत्सवों, पूजा-अनुष्ठानों अथवा नवरात्र-पूजन शिवरात्रि में शिव-पूजन, पार्थिव-पूजन, रूद्राभिषेक, सत्यनारायण-पूजन, दिवाली-पूजन आदि कर्मो में प्रारम्भ में स्वस्तिवाचन, पुण्याहवाचन, गणेश-कलश-नवग्रह तथा रक्षा-विधान आदि कर्म सम्पन्न किये जाते हैं, इसके अनन्तर प्रधान रूप से गणेश पूजा की जाती है। इसी लिये सभी पूजाओं में प्रधान रूप से गणेश की पूजा की जाती है। क्योंकि सभी देवताओं में प्रधान रूप से गणेश को अग्रगण्य माना गया है। इसका वर्णन शिव महापुराण विशेष रूप से किया गया है।

3.2- उदेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप वेद शास्त्र से वर्णित कर्मकाण्ड का अध्ययन करेगें।

1. गणेश के विषय में आप परिचित होंगे-
2. अम्बिका के विषय में आप परिचित होंगे
3. गणेश अम्बिका के ध्यान के विषय में आप परिचित होंगे
4. गणेश अम्बिका के अवाहन के विषय में आप परिचित होंगे
5. गणेश अम्बिका के प्रतिष्ठा के विषय में आप परिचित होंगे
6. गणेश अम्बिका के पूजन के विषय में आप परिचित होंगे।

3.3-गणेशाम्बिका पूजन

ऋषियों ने मंगलकामना के लिए किये जाने वाले प्रत्येक देवपूजा कर्म के आरम्भ में गणेशार्चन का अनिवार्य रूप से संयोजित करने का निर्देश दिया हैं। गणेश पूजन का विधान पुरातन हैं। शुक्ल यजुर्वेद संहिता के गणानान्त्वा गणपति ठ हवामहे मैत्रायणीय संहिता के 'तत्कराटाय विद्महे हस्तीमुखाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ।। एवं तैत्तरीय आरण्यक अन्तर्गत नारायणोपनिषद के तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात।। आदि मन्त्र इस परम्परा के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं अतैव यह निर्विवाद सिद्ध हैं कि नित्य नैमित्तिक एवं काम्य गणेश उपासना के आचरण में ही मानवमात्र का हित निहित हैं।

किसी देवता की उपासना को सांगोपांग, यथासमय एवं ग्रहानुकूलतापूर्वक सम्पादित करना ही उसकी सार्थकता का साधक हैं, एतद्विषयक विषद ज्ञाननिधि एकमात्र ज्योतिर्विज्ञान में ही संचित हैं तथा वेदों के छरू अंगों में इसे मूर्धन्य (नेत्ररूप) माना गया हैं। अतरू गणेशोपासना विषयक कुछ उपयोगी तथ्यों को त्रिस्कन्धात्मक ज्योतिर्ग्रन्थों से एकत्रित करके यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा हैं। ज्योतिश शास्त्र के संहिता ग्रन्थों में वर्णित गणपति प्रतिष्ठोपयुक्त काल इस प्रकार हैं।

मास - वैशाख, ज्येष्ठ तथा फाल्गुनादि उत्तरायण गत सूर्य के मास। भाद्रपद मास में कृष्णपक्ष की गणेश चतुर्थी भी ग्राह्य हैं।

तिथि - उपर्युक्त मासों की शुक्लपक्षीय २-३-४-५-६-७-८-१०-११-१२

वार - रवि, मंगल, शुक्र व शनि। मतान्तरेण बुधवार भी स्वीकृत हैं।

नक्षत्र - सामान्य रूप से सर्वदेव प्रतिष्ठा में ग्रहण किये हुए नक्षत्रों के साथ ही गणेश प्रतिष्ठा आर्द्रा, हस्त, अनुराधा, श्रवण, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी तथा रेवती में विशेश रूप से कही गयी हैं।

लग्न - मिथुन, सिंह तथा कुम्भ राशि लग्न स्वाधिपति एवं शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट होने पर। पुनश्च केन्द्र, त्रिकोण में शुभग्रह षष्ठ में पापग्रह, ३-११ में कोई ग्रह तथा अष्टम एवं द्वादश में ग्रहों का अभाव अपेक्षित हैं।

विशेष - प्रतिष्ठापक के चन्द्रबल के साथ अन्यशुभ योग प्रतिष्ठा की सार्थकता के द्योतक हैं ,किन्तु देवशयन, मलमास, गुरु-शुक्रास्त, भ्रदा, पात, तारा का निर्बलत्व, तिथिक्षय, तिथिवृद्धि, प्राकृतिक प्रकोप, मासान्त एवं जन्म-मरण अशौच की विद्यमानता प्रतिष्ठा को निष्फल करते हैं।

गणेशोपसना का मुहूर्त - संकट, निवारण, अर्थोपार्जन, आरोग्यता-प्राप्ति, वंशवृद्धि और स्वार्थ सिद्धि आदि किसी भी उद्देश्य की पूर्ति हेतु करिष्यमान गणेश की अराधना का शुभारम्भ निम्नलिखित कालशुद्धि मे वांछित एवं फलद है।

मास - चौत्र (मेषार्क एवं शुक्ल पक्ष से संयुक्त) वैशाख, श्रावण, आश्विन (शुक्ल) माघ तथा फाल्गुन गुरु शुक्र का उदित होना आवश्यक है।

तिथि - भद्रा आदि कुयोग वर्जित शुक्ल पक्ष की २, ३, ५, ७, १०, ११, १३

वार - रवि, चन्द्र, बुध, गुरू, शुक्र।

नक्षत्र - अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुर्नवसु, पुष्य, उत्तराफालगुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, हस्त, स्वाती, अनुराधा श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा एवं रेवती तथा ग्रहणयुक्त नक्षत्र त्याज्य है।

लग्नः- वृष, मिथुन, सिंह, कन्या, वृश्चिक, धनु, कुम्भ, मीन आदि किसी राशि के उदित होने पर जब केन्द्र त्रिकोण मे सौम्य ग्रह ३,६,११ व पाप ग्रह तथा ८,१२ ग्रह ग्रह-विहीन हो। पुनश्च, नवमभाव शुभ

ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तथा भाग्येश निष्कलंक एवं मित्र क्षेत्रीय हो।

विशेश - गणेश चतुर्थी विशिष्ट ग्राह्य हैं तथा उपासना का बल हीन चन्द्र सर्वथा त्याज्य है। पूर्व निश्चित मुहुर्त के दिन यदि कोई बाधा रोग, उत्पात अथवा कोई अप्रिय घटना उपस्थित हो जाए तो उपासना स्थगित कर दे। भद्रा में गणपति पूजन का विशेश महत्त्व है।

श्रीगणेश के विविध मन्त्र -

श्री महागणपतिस्वरूप प्रणव मन्त्र - ॐ

श्री महागणपति का प्रणव सम्पुटित बीज मन्त्र - ॐ गं ॐ

सबीज गणपति मन्त्र - गं गणपतये नमः

प्रणवादि सबीज गणपति मन्त्र - ॐ गं गणपतये नमः

नाम मन्त्र -

ॐ नमो भगवते गजाननाय :- १२ अक्षरों का मन्त्र

श्रीगणेशाय नमः:- ०७ अक्षरों का मन्त्र

ॐ श्रीगणेशाय नमः:- ०८ अक्षरों का मन्त्र

उच्छिष्टगणपति नर्वाण मन्त्र - ॐ हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।

विनियोग - ॐ अस्य श्रीउच्छिष्टगणेशनवार्णमन्त्रस्य कंकोल ऋषिः, विराट छनदः, उच्छिष्टगणपतिर्देवता, अखिलावाप्तये जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)

द्वादशाक्षर उच्छिष्टगणपति मन्त्र - ॐ ह्रीं गं हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।

विनियोग - ॐ अस्य श्रीरद्वादशाक्षरोच्छिष्टगणपति मन्त्रस्य मनुः ऋषिः, विराट छनदः, उच्छिष्ट गणपतिर्देवता, गं बीजम् स्वाहा शक्तिः, ह्रीं कीलकम् अखिलावाप्तये जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)

एकोनविंशत्यक्षरोच्छिष्टगणपतिमन्त्र - ॐ नम उच्छिष्टगणेशाय हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।

विनियोग - ॐ अस्य श्रीउच्छिष्टगणेशमन्त्रस्य कंकोल ऋषिः, विराट छनदः, उच्छिष्टगणपतिर्देवता, अखिलावाप्तये जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)

३७ अक्षरों का उष्छिष्टगणपति मन्त्र -

ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आं क्रीं ह्रीं गं थे थे स्वाहा।

विनियोग - ॐ अस्य श्रीउच्छिष्टगणेशमन्त्रस्य गणक ऋषिः, गायत्रीच्छन्दरू, उच्छिष्टगणपतिर्देवता, गं बीजम, ह्रीं शक्तिरू, आं क्रों कीलकम् ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगरू।। (हाथ में जल लेकर गिराये)

३२ अक्षरों का हरिद्रागणेश मन्त्र -

ऊँ हुं गं ग्लौं हरिद्रागणपतये वर वरद सर्वजन हृदयं स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा।

विनियोग - अस्य श्रीहरिद्रागणनायकमन्त्रस्य मदन ऋषि, अनुष्टुप छनदः, हरिद्रागणनायको देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)

०६ अक्षरों का वक्रतुण्ड मन्त्र - ऊँ वक्रतुण्डाय हुम्।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीगणेशमन्त्रस्य भार्गव ऋषिरू, निचृत अनुष्टुप छनदः, विघ्नेशो देवता, वं बीजम, यं शक्तिः, ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)

३१ अक्षरों का वक्रतुण्ड मन्त्र -

रायस्पोषस्य दाता निधिदातान्नदो मतः। रक्षोहणो वो बलगहनो वक्रतुण्डाय हुम्।।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीवक्रतुण्डगणेशमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः, अनुष्टुप छनदः, विघ्नेशो देवता, वं बीजम्, यं शक्तिः, ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)

शक्तिविनायक ०४ अक्षरों का मन्त्र - ऊँ ह्रीं ग्रीं ह्रीं

विनियोग - अस्य शक्ति विनायक मन्त्रस्य (शक्तिगणाधिपमन्त्रस्य वा) भार्गव ऋषिः विराट छन्दरू शक्तिगणाधिपो देवता (शक्तिविनायको देवता वा) ग्रीं बीजम ह्रीं शक्तिरू ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगरू। (हाथ में जल लेकर गिराये)

२८ अक्षरों का लक्ष्मीविनायक मन्त्र - ऊँ श्रीं गं सौम्याय गणपतये वर वरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीलक्ष्मीविनायकमन्त्रस्य अन्तर्यामी ऋषिरू, गायत्री छन्दरू, लक्ष्मीविनायको देवता श्रीं बीजम स्वाहा शक्तिरू ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगरू। (हाथ में जल लेकर गिराये)

३३ अक्षरों का त्रैलोक्यमोहनकर गणेश मन्त्र - वक्रतुण्डैकंदष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं गं गणपते वर वरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीत्रैलोक्यमोहन कर गणेशमन्त्रस्य गणक ऋषिरू गायत्रीच्छन्दरू त्रैलोक्यमोहन करो गणेशो देवता ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगरू। (हाथ में जल लेकर गिराये)

सिद्धिविनायक मन्त्र - ऊँ नमो सिद्धिविनायकाय सर्वकार्यकर्त्रे सर्वविघ्नप्रशमनाय सर्वराज्य वशकरणाय सर्वजनसर्वस्त्रीपुरूषाकर्षणाय श्री ऊँ स्वाहा।

ऋणहर्तृगणेशमन्त्र -

ऊँ गणेश ऋणं छिन्धि वरेण्य हुं नमरू फट्।

ऊँ हीं श्रीं क्लीं गौं गरू श्रीमन्महागणाधिपये नमः।

ऊँ हीं श्रीं क्लीं गौं वरदमूर्तये नमरू।

ऊँ हीं श्रीं क्लीं नमो भगवते गजाननाय।

ऊँ श्रीं हीं क्लीं गणेशाय नमरू ब्रह्मरूपाय चारवे।

सर्वसिद्धप्रदेशाय विघ्नेशाय नमो नमः।।

बीजाय भालचन्द्राय गणेश परमात्मने। प्रणतक्लेशनाशाय हेरम्बाय नमो नमः।।

आपदामपहर्तारं दातारं सुखसम्पदाम्। क्षिप्रप्रसादनं देवं भूयो भूयो नमाम्यहम्।।

नमो गणपते तुभ्यं हेरम्बायैकदन्तिने। स्वानन्दवासिने तुभ्यं ब्रह्मणस्पतये नमः।।

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं शशिसूर्यनिभाननम्।

प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।।

नमस्तस्मै गणेशाय ब्रह्मविद्याप्रदायिने यस्यागस्त्यायते नाम विघ्नसागरशोषणे।।

यद् भ्रूणप्रणिहितां लक्ष्मीं लभन्ते भक्तकोटय। स्वतन्त्रमेकं नेतारं विघ्नराजं नमाम्यहम्।।

श्री गजानन जय गजानन।

श्री गजानन जय गजानन जय जय गजानन।

हीं गं हीं गणपतये नमः ऊँ वक्रतुण्डाय नमः।

श्री गणेश गायत्री - महाकर्णाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात।

मानसिक शुद्धि हेतु मन्त्रः-

ओम अपवितत्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।। ओम पुण्डरीकाक्षः पुनातु ऐसा तीन बार उच्चारण करें।

किसी कार्य को करने के पहले किसी देवी देवता का प्रार्थना किया जाता है। यहा पर गणेश पूजन करने के पहले कुछ अभिष्ट देवों की प्रार्थना की जा रही है।

स्मरण हेतु मंगलश्लोकः-

गणेश स्मरणः-

प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं,

सिन्दूरपूरपरिशोभितगण्डयुग्मम्।

उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्ड-

माखण्डलादिसुरनायकवृन्दवन्द्यम्।।

समूह के मुखिया अनाथो के बन्धु, सिन्दुर से शोभायमान दोनों गण्डस्थल वाले, प्रबल विघ्न का नाश करने में समर्थ एवं इन्द्रादि देवों से नमस्कृत श्रीगणेश को मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

विष्णुस्मरण:-

प्रातः स्मरामि भवभीतिमहार्तिनाशं,

नारायणं गरूड़वाहनमब्जनाभम्।

ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं,

चक्रायुधं तरूणवारिजपत्रनेत्रम्।।

संसार से भयरूपी महान् दुःख को नष्ट करने वाले, ग्राह से गजराज को मुक्त कराने वाले, चक्रधारी एवं नवीन कमलदल के समान नेत्रवाले पùनाभ गरूड़वाहन भगवान् श्रीनारायण का मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

शिवस्मरण:-

प्रातः स्मरामि भवभीतिहरं सुरेशं,

गंगाधरंवृषभवाहनमम्बिकेशम्।

खट्वांगशूलवरदाभयहस्तमीशं,

संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम्।।

संसार के भय को नष्ट करने वाले, देवेश, गंगाधर, वृषभवाहन, उमापति, हाथ में खट्वांग एवं त्रिशूल लिये और संसाररूपी रोग का नाश करने के लिए अद्वितीय औषध-स्वरूप, अभय एंव वरद मुद्रायुक्त हस्तवाले भगवान् शिव को मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

देवीस्मरण:-

प्रातः स्मरामि शरदिन्दुकरोज्जवलाभां,

सद्रत्नवन्मकरकुण्डलहाभूषाम्।

दिव्यायुधोर्जितसुनीलसहस्त्रहस्तां,

रक्तोत्पलाभचरणां भवतीं परेशाम्।।

शरत्कालीन चन्द्रमा के समान उज्जवल आभायुक्त, उत्तम रत्नों से जटिल मकरकुण्ड तथा हारों से सुशोभित, दिव्यायुधों से दीप्त सुन्दर नीले हजारों हाथों वाली, लाल कमल की आभायुक्त चरणों वाली भगवती दुर्गा देवी का मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

सूर्यस्मरण:-

प्रातः स्मरामि खलु तत्सवितुर्वरेण्यं,

रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूंषि।

सामानि सस्य किरणाः प्रभवादिहेतुं,

ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यरूपम्।।

सूर्य का वह प्रशस्त रूप, जिसका मण्ड ऋग्वेद, कलेवर यजुर्वेद तथा किरणों में सामवेद है। जो सृष्टि आदि के कारण हैं, ब्रह्मा और शिव के स्वरूप हैं तथा जिनका रूप अचिन्त्य और अलक्ष्य हैं, प्रातः काल मैं उनका स्मरण करता हूँ।

त्रिदेवों के साथ नवग्रह का स्मरण:-

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी, भानुः शशी भूमिसुतोबुधश्च।

गुरूश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः, कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु व केतु - ये सभी मेरे प्रातः काल को मंगलमय करे।

ऋषिस्मरण:-

भृगुर्वसिष्ठः क्रतुरंगिराश्च, मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः।

रैभ्यों मरीचिश्च्यवनश्च दक्षः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

भृगु, वसिष्ठ, क्रतु, अंगिरा, मनु, पुलस्त्य, पुलह, गौतम, रैभ्य, मरीचि, च्यवन और दक्ष - ये समस्त मुनिगण मेरे प्रातः काल को मंगलमय करे।

सनत्कुमारः सनकः सनन्दनः सनातनोऽप्यासुरिपिंगलौच।

सप्त स्वराः सप्त रसातलानि कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

सप्तावर्णाः सप्त कुलाचलाश्च सप्तर्षयो द्वीपवनानि सप्त।

भूरादिकृत्वा भुवनानि सप्त कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

ये ऋषिगण - सनत्कुमार, सनक, सनन्दन, सनातन, आसुरि और पिंगल

ये सप्तस्वर - षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पश्पंचम, धैवत तथा निषाद

ये सात अधोलोक - अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल तथा पाताल

उपर्युक्त सभी मेरे प्रातः काल को मंगलमय करे। सातों समुद्र, सातों कुलपर्वत, सप्तर्षिगण, सातों वन तथा सातों द्वीप, भूर्लोक, भुवर्लोक आदि सातों सभी मेरे प्रातः काल को मंगलमय करे।

प्रकृतिस्मरण:-

पृथ्वी सगन्धा सरसास्तथापः, स्पर्शी च वायुर्ज्वलितं च तेजः।

नभः सशब्दं महता सहैव, कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

गन्धयुक्त पृथ्वी, रसयुक्त जल, स्पर्शयुक्त वायु, प्रज्वलित तेज, शब्दसहित आकाश एवं महत्तत्व - ये सभी मेरे प्रातःकाल को मंगलमय करे।

इत्थं प्रभाते परम पवितं पठेत् स्मरेद्वा श्रृणुयाच्च भक्त्या।

दुःस्वप्ननाशस्त्विह सुप्रभातं भवेच्च नित्यं भगवत्प्रसादात्।।

इस प्रकार उपर्युक्त इन प्रातः स्मरणीय परमपवित्र श्लोकों का जो भी व्यक्ति भक्तिपूर्वक प्रातः काल पाठ करता है, स्मरण करता है अथवा श्रवण करता है, भगवद्दया से उसके दुःस्वप्नों का नाश हो जाता है और उसका प्रभाग मंगलमय हो जाता है।

पूजा में जो वस्तु विद्यमान न हो उसके लिये 'मनसा परिकल्प्य समर्पयामि' कहे। जैसे, आभूषणके लिये 'आभूषणं मनसा परिकल्प्य समर्पयामि'।)

गणपति पञ्चायतन पूजन

एक लकड़ी की चौकी के ऊपर गणेश, षोडशमातृका, सप्तमातृका स्थापित करे। दूसरी चौकी पर नवग्रह, पञ्चलोकपाल आदि स्थापति करे। तीसरी चौकी को बीच में स्थापित करके उस पर प्रधान देवता को स्थापित करे। ईशान कोण में घी का दीपक रखे और अपने दायें हाथ में पूजा सामग्री रख लेवे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख बैठे। कुंकुम (रोली) का तिलक करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन आरम्भ करे।

भूमिपरीक्षण -

स्वयं की भूमि पर ही यज्ञादि कर्म करने चाहिए तथापि अन्य तीर्थ अथवा अन्य किसी स्थान पर यज्ञादि कर्म कर रहे है तो उस भूमि का उचित शुक्ल भूस्वामी को दे देना चाहिए अन्यथा यज्ञादि का फल भूस्वामी को ही मिलता है ।

भूमि का परीक्षण करने हेतु चयनित भूमि में एक वर्ग-हाथ का चतुष्कोण खात बनाकर उस गर्त को सूर्यास्त के समय जल से भर देना चाहिए। यदि दूसरे दिन प्रातरू काल उस गड्ढे में जल शेश रह जाये अथवा वह भूमि गीली रह जाये तो वह शुभलक्षण होता है। यदि कीचड़युक्त भूमि रहे तो मध्यफलदायी होता है। यदि उसका जल पूर्णरूप से सूख जाये तो उसमें दरारे पड़ जाये तो उस भूमि को अशुभ फलदायी कहा जाता है। यथा -

श्वभ्रं हस्तमितं खनेदिह जलं पूर्णं निशास्ये न्यसेत्।

प्रातर्दृष्टजलं स्थलं सदजलं मध्यं त्वसत्स्फाटितम्।।

नोट - रेगिस्तान वाले प्रदेशों में यह विधि उपयोगी नही हैं, अतरू क्षेत्रविशेश का ध्यान रखे।

यज्ञकर्म हेतु मण्डप -निर्माण हेतु शुभ भूमि के लक्षण रू-

सुगन्ध युक्त भूमि ब्राह्मणी, रक्तगन्ध वाली भूमि क्षत्रिया, मधुगन्ध वाली भूमि वैश्या, मद्यगन्ध वाली भूमि शूद्राभूमि कही गयी है, अम्लरस युक्त वैश्या, तिक्त रस युक्त शूद्रा, मधुरसयुक्त भूमि ब्राह्मणी और कड़वी गन्ध वाली भूमि क्षत्रियवर्णा होती है।

ब्राह्मणी भूमि सुखकारी, क्षत्रिया राज्यसुख प्रदाता, वैश्याभूमि धनधान्य देने वाली और शूद्रा भूमि त्याज्य होती है।

ब्राह्मण को सफेद भूमि, क्षत्रिय को लालभूमि, वैश्य को पीली, शूद्र को काली भूमि एवं अन्यवर्णों के लिए मिश्रित रङ्ग की भूमि शुभ होती है।

ब्राह्मण आदि चारों वर्णों के लिए क्रम से घी, रक्त, अन्न और मद्यगन्ध वाली भूमि शुभ होती है।

पूर्व दिशा की ओर भूमि ढालदार हो तो धनप्राप्ति, अग्निकोण में अग्निभय, दक्षिण में मृत्यु, नैऋर्त्य में धनहानि, पश्चिम में पुत्रहानि, वायव्य में परदेश में निवास, उत्तर में धनप्राप्ति, ईशान में विद्यालाभ होता है। भूमि में बीच में गड्ढा हो तो वह भूमि कष्टदायक होती है।

ईशान कोण में भूमि ढालदार हो तो यज्ञकर्ता को धन, सुख की प्राप्ति, पूर्व में हो तो वृद्धि, उत्तर में हो तो धन लाभ, अग्निकोण में हो तो मृत्यु तथा शोक, दक्षिण में हो तो गृहनाश, नैऋर्त्य में धनहानि, पश्चिम में मानहानि, वायव्य में मानसिक उद्वेग होता है।

ब्राह्मण को उत्तर, क्षत्रिय को पूर्व, वैश्य को दक्षिण और शूद्र को पश्चिम की ओर ढालयुक्त भूमि शुभ होती है। मतान्तर से ब्राह्मणों के लिए सभी प्रकार की ढ़ालयुक्त भूमि शुभ होती है। अन्य वर्णों के कोई नियम नहीं है।

पूर्व दिशा में ऊँची भूमि पुत्र का नाश करती है। अग्निकोण में ऊँची भूमि धन देती है। अग्निकोण में नीची भूमि धन की हानि करती है। दक्षिणदिशा में ऊँची भूमि स्वास्थ्यप्रद होती है। नैऋर्त्यकोण में ऊँची भूमि लक्ष्मीदायक होती है। पश्चिम में ऊँची भूमि पुत्रप्रद होती है। वायव्यकोण में ऊँची भूमि द्रव्य की हानि करती है। उत्तरदिशा में ऊँची भूमि स्वास्थ्यप्रद तथा ईशानकोण में ऊँची भूमि महाक्लेशकारक होती है।

हल के फाल से भूमि को खोदने पर यदि लकड़ी मिले तो अग्निभय, ईंट मिले तो धनप्राप्ति, भूसा मिले तो धनहानि, कोयला मिले तो रोग, पत्थर मिले तो कल्याणकारी, हड्डी मिले तो कुलनाश, सर्प या बिच्छू आदि जीव मिले तो वे स्वयं ही भय का पर्याय है।

हल के फाल से भूमि को खोदने पर यदि लकड़ी मिले तो अग्निभय, ईंट मिले तो धनप्राप्ति, भूसा मिले तो धनहानि, कोयला मिले तो रोग, पत्थर मिले तो कल्याणकारी, हड्डी मिले तो कुलनाश, सर्प या बिच्छू आदि जीव मिले तो वे स्वयं ही भय का पर्याय है।

११. फटी हुई से मृत्यु, ऊषर भूमि से धननाश, हड्डीयुक्त भूमि से सदा क्लेश, ऊँची-नीची भूमि से शत्रुवृद्धि, श्मशान जैसी भूमि से भय, दीमकों से युक्त भूमि से संकट, गड्ढों वाली भूमि से विनाश और कूर्माकार अर्थात् बीच में से ऊँची भूमि से धनहानि होती है।

आयताकार भूमि (जिसकी दोनों भुजाएँ बराबर एवं चारों कोण सम हो) पर निवास सर्वसिद्धिदायक, चतुरस्रभूमि (जिसकी लम्बाई चौड़ाई समान हो) पर यज्ञादि शुभकर्म करने से धन का लाभ, गोलाकार भूमि पर यज्ञादि शुभकर्म करने से बुद्धिबल की वृद्धि, भद्रासन भूमि पर सभी प्रकार का कल्याण, चक्राकार भूमि पर दरिद्रता, विषम भूमि पर शोक, त्रिकोणाकार भूमि पर राजभय, शकट अर्थात् वाहन सदृश भूमि पर धनहानि, दण्डाकार भूमि पर पशुओं का नाश, सूप के आकार की भूमि पर गायों का नाश, जहाँ कभी गाय या हाथी बंधते हो वहाँ निवास करने से पीड़ा तथा धनुषाकार भूमि पर निवास करने घोर सङ्कट आता है।

भूमि खोदते समय यदि वहाँ पत्थर मिल जाये तो धन एवं आयु की वृद्धि होती है, यदि ईंट मिले तो धनागम होता है। कपाल, हड्डी, कोयला, बाल आदि मिले तो रोग एवं पीड़ा होती है।

यदि गड्ढे में से पत्थर मिले तो स्वर्णप्राप्ति, ईंट मिले तो समृद्धि, द्रव्य से सुख तथा ताम्रादि धातु मिले तो सभी प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है।

भूमि खोदने पर चिऊँटी अर्थात् दीमक, अजगर (अजगर की १६ पक्ष की निद्रा होती है) निकले तो उस भूमि पर निवास नहीं करे। यदि वस्त्र, हड्डी, भूसा, भस्म, अण्डे, सर्प निकले तो गृहस्वामी की मृत्यु होती है। कौड़ी निकले तो दुरूख और झगड़ा होता है, रुई विशेश कष्टकारक है। जली हुई लकड़ी निकले तो रोगकारक होती है, खप्पर से कलहप्राप्ति, लोहा निकले तो गृहस्वामी की मृत्यु होती है, इसीलिए कुप्रभावों से बचने के लिए इन सभी पक्षों पर विचार करना चाहिए।

गणेश पंचायतन में ईशानकोण में विष्णु, अग्निकोण में शिव, नैर्ऋत्यकोण में सूर्य तथ वायव्य कोण में देवी की स्थापना करते मध्य में प्रधानःप में गणपति की स्थापना करते हुए यथोपचार पूजन करना चाहिए ।

मं मण्डूकाय नमः। आं आधारशक्तत्यै नमः। मूं मूलप्रकृत्यै नमः। कं कालाग्निरुद्राय नमः। आं आदिकूर्माय नमः। अं अनन्ताय नमः। आं आदिवराहाय नमः। पं पृथिव्यै नम'। इक्षु अर्णवाय नमः। रं रत्नद्वीपाय नमः। हं हेमगिरये नमः। नं नन्दनोद्यानाय नमः। कं कल्पवृक्षाय नमः। मं मणिभूतलाय नमरू।

दं दिव्यमण्डपाय नमः। सं स्वर्णवेदिकायै नमः। रं रत्नसिंहासनाय नमः। धं धर्माय नमः। ज्ञां ज्ञानाय नमः। वैं वैराग्याय नमः। ऐं ऐश्वर्याय नमः। सं सत्त्वाय नमः। प्रं प्रबोधात्मने नमः। रं रजसे नमः। प्रं प्रकृत्यात्मने नमः। तं तमसे नमः। मं मोहात्मने नमः। सों सोममण्डलाय नमः। सं सूर्यमण्डलाय नमः। वं वह्निड्ढमण्डलाय नमः। मां मायातत्त्वाय नमः। विं विद्यातत्त्वाय नमः। शं शिवतत्त्वाय नमः। ब्रं ब्रह्मणे नमः। मं महेश्वराय नमः। आं आत्मने नमः। अं अन्तरात्मने नमः। पं परमात्मने नमः। जं जीवात्मने नमः। ज्ञं ज्ञानात्मने नमः। कं कन्दाय नमः। नं नीलाय नमः। पं पद्माय नमः। मं महापद्माय नमः। रं रत्नेभ्यः नमः। कें केसरेभ्यः नमः। कं कर्णिकायैनमः।

ऊँ मण्डूकादिपीठदेवताभ्यो नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। (हाथ में अक्षत लेकर मंत्र बोलते हुए छोड़े)

नवशक्ति पूजनम्:- ऊँ तीव्रायै नमः। ऊँ ज्वालिन्यै नमः। ऊँ नन्दायै नमः। ऊँ मोदायै नमः। ऊँ कामरूपिण्यै नमः। ऊँ उग्रायै नमः। ऊँ तेजोवत्यै नमः। ऊँ सत्यायै नमः। ऊँ विघ्ननाशिन्यै नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। (हाथ में अक्षत लेकर मंत्र बोलते हुए छोड़े)

१. विष्णुः- (बाये हाथ में अक्षत लेकर प्रत्येक देव के आवाहन का मंत्र उच्चारित कर उसके स्थान पर छोड़े।)

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम्।

भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम्॥

ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

२. शिवः-

पञ्चवक्त्रं वृषाःढं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम्।

खट्वा‘धारिणं वन्द्यं शिवमावाहयाम्यहम्॥

ऊँ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय शिवतराय च॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः शिवाय नमः, शिवमावहयामि स्थापयामि।

३. सूर्यः-

जपाकुसुमसकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्॥

ऊँ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मत्र्यञ्च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।।

4 देवी : -

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे।

नानाजाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम।।

ॐ अम्बेऽअम्बिके म्बालिकेनमानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गादैव्यै नमः, दुर्गामावाहयामि स्थापयामि।

५. गणेशः-

ॐ मण्डूकादिपीठदेवताभ्यो नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

नवशक्ति पूजनम्ः- ॐ तीव्रायै नमः। ॐ ज्वालिन्यै नमः। ॐ नन्दायै नमः। ॐ मोदायै नमः। ॐ कामःपिण्यै नमः। ॐ उग्रायै नमः। ॐ तेजोवत्यै नमः। ॐ सत्यायै नमः। ॐ विघ्ननाशिन्यै नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

ततः कलशस्थापनम् (मण्डल पर कलश की स्थापना करें) -

ॐ तत्वायामि ब्ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः। अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश œ समानऽ आयुः प्प्रमोषीः।।

ततः ॐ भूर्भुवःस्वः वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः अस्मिन् कलशे सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तुः। गन्धाक्षत पुष्पधूपदीपनैवेद्यैः सम्पूज्य।

अग्न्युत्तारणम्

देशकालौ संकीर्त्य अस्य गणपतिदेवता नूतन स्वर्ण-पाषाण-मृदादि यन्त्र-मूर्ति अग्नितपनताडन अवघातादि दोषपरिहारार्थमग्न्युत्तारणं करिष्ये।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

ततः स्वर्णादिप्रतिमां करेण संस्पृश्य प्राणस्थापनमाचरेत्ः- ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः सोऽहं अस्यां मूर्तौ प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों अस्यां मूर्तौ जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों अस्यां मूर्तौ सर्वेन्द्रियाणि वाड्मनस्त्वक्चक्षुश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणि पादपायूपस्थानि, इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

अस्यै प्राणा प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।

अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन।। ॐ गं गणपतये नमः(दशधाध्पञ्चदश मूलमन्त्रं जपेत्)।

गणपति ध्यानम्

द्वे भार्ये सिद्धिबुद्धि तदनुसहचरौ वृद्धिसिद्धिप्रियौ च,

द्वौ पुत्रौ लक्षलाभौ वसुदलरचिते मण्डले कल्पवृक्षः।

गेहे यस्य प्रभूता मृगमदतिलकाः सिद्धयः प्रोल्लसन्ति,

भूयात् भूत्यै गणेशः कलिवनदहनो विघ्नविच्छेदको नः।।

१. गणपतिः-

ऊँ गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्प्रियाणान्त्वा प्प्रियपति हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति हवामहे व्वसोमम । आहम् जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

प्रतिष्ठापनम्ः- (हाथ की अञ्जलि में अक्षत पुष्प लेवे)

ऊँ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पर्तिज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ज्ञ œ समिमन्दधातु।

विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामो ३ म्प्रतिष्ठ।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नमः।

आसनम् -

रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभम्।

आसनं च मया दत्तं गृहाण परमेश्वरः।।

ऊँ पुरुश ऽ एवेद œ सर्व्वंद्भूतँच्च भाव्व्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पाद्यम् -

गौरीसुत नमस्तेस्तु श'रप्रियसूनवे।

पाद्यं गृहाण देवेश गन्धपुष्पाक्षतैः फलैः।।

ऊँ एतावानस्य महिमातोज्ज्याँश्चपूरुषः।

पादोस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० पादप्रक्षालनार्थं पाद्यं समर्पयामि।

अर्घ्यम् -

ताम्रपात्रस्थितं तोयं गन्धपुष्पफलान्वितम्।

सहिरण्यं ददाम्यर्घं गृहाण परमेश्वरः।।

ॐ धामन्तेव्विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्तः समुद्रेहृद्यन्त रायुषि।

अपामनीकेसमिथेय ऽ आभृतस्तमश्याम मधुमन्तन्त ऽ ऊर्मिम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीयम् -

सर्वतीर्थ समायुक्तं सुगन्धिनिर्मलं जलम्।

आचम्यार्थं मया दत्तं गृहाण गणनायक।।

ॐ इमम्मेव्वरुणŸशुधीहवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० मुखे आचमनीयं समर्पयामि।

जलस्नानम् -

कावेरी नर्मदा वेणी तु‘भद्रा सरस्वती।

गंगा च यमुनातोयं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्न्यसि

वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० स्नानार्थे जलं समर्पयामि।।

पञ्चामृत स्नानम् -

पयो दधिघृतं चौव मधुं च शर्करायुतम्।

पंचामृतं मयादत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्तसस्रोतसः।

सरस्वती तु पञ्चधासो देशेभवत्सरित्।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० मिलितपञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदक स्नानम् -

स्नानार्थे तव देवेश पवित्रं तोयमुत्तम् ।

तीर्थेभ्यश्च समानीतं गृहाण गणनायक ।।

ॐ शुद्धवालः सर्व शुद्धवालो मणिवालस्त ऽ आश्विनाः श्येतः

श्येताक्षो रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्ण्णायामा अवलिप्ता रौद्रानभोःपाः पार्ज्जन्न्याः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

अभिषेकः (गन्धादिभिः सम्पूज्य) -

शुद्धोदकस्नानम।

वस्त्रोपवस्त्रम्-

रक्तवस्त्रमिदं देव देवा‘सदृश प्रभो।

सर्वप्रदं गृहाण त्वं लम्बोदर हरात्मज।।

ऊँ सुजातोज्ज्योतिषा सहशर्म्म व्वरुथमासदत्स्वः।

व्वासो ऽ अग्रे विश्वःप œ सँव्ययस्वव्विभावसो।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् -

‘‘यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्यत्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।।

ऊँ ब्रह्मज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोव्वेनऽआवः।

सबुद्ध्न्याऽउपमा अस्यव्विष्ठ्ठाः सतश्च्चयोनिमसतश्चव्विवः।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

चन्दनम् -

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।

विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।

ऊँ अ œ शुना ते अ œ शुः पृच्यतां परुषा परुः।

गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युतः।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० चन्दनकुंकुमञ्च समर्पयामि।

अक्षताः -

रक्ताक्षतांश्च देवेश गृहाण द्विरदानन।

ललाटपटले चन्द्रस्तस्योपर्यवधार्यताम।।

ऊँ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्प्रियाऽअधूषत।

अस्तोषत स्वभानवो व्विप्रा नविष्ठ्ठयामतीयोजान्विन्द्रते हरी।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० अलङ्करणार्थम् अक्षतान् समपर्यामि।

पुष्पाणि (पुष्पमालां) -

सुगन्धीनि च पुष्पाणि धत्तूरादीनि च प्रभो।
विनायक नमस्तुभ्यं गृहाण परमेश्वर।।

ॐ ओषधिः प्रतिमोददृध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः। अश्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्णवः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० पुष्पाणि समर्पयामि।

अथ गणेशाङ्गपूजनम् -

ह्रीं गणेश्वराय नमः पादौ पूजयामि। ह्रीं विघ्नराजाय नमः जानुनीं पूजयामि । ह्रीं आखुवाहनाय नमः ऊरु पूजयामि। ह्रीं हेरम्बाय नमः कटीं पूजयामि। ह्रीं कामारिसूनवे नमः नाभिं पूजयामि। ह्रीं लम्बोदराय नमः उदरं पूजयामि। ह्रीं गौरीसुताय नमः स्तनौ पूजयामि। ह्रीं गणनायकाय नमः हृदयं पूजयामि। ह्रीं स्थूलकण्ठाय नमः कण्ठं पूजयामि। ह्रीं स्कन्दाग्रजाय नमः स्कन्धौ पूजयामि। ह्रीं पाशहस्ताय नमः हस्तौ पूजयामि। ह्रीं गजवक्त्राय नमः वक्त्रं पूजयामि। ह्रीं विघ्नहर्त्रे नमः ललाटं पूजयामि। ह्रीं सर्वेश्वराय नमः शिरः पूजयामि। ह्रीं गणाधिपाय नमः सर्वाङ्गं पूजयामि।

दुर्वाङ्कुरम् -

दूर्वांकुरान् सुहरितानमृतान्मलप्रदान् ।
आनीताँस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक ।।
ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।
एवा नो दूर्व्वे प्प्रतनु सहस्रेण शतेन च।। ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० दूर्वाङ्कुराणि समर्पयामि।

बिल्वपत्रम् -

त्रिशाखैर्बिल्वपत्रैश्च अच्छिद्रैः कोमलैः शुभैः।
तव पूजां करिष्यामि गृहाण परमेश्वर।।

ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्मिणे च व्वःथिने च नमः
श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुब्भ्याय चाहनन्याय च।।
ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० बिल्वपत्राणि समर्पयामि।

सुगन्धितद्रव्यम् -

स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकेश्वर दयानिधे।
भक्त्या दत्तं मयादेव स्नेहं ते प्रतिगृह्यताम।।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि।

सिन्दूरम् -

उद्यद्भास्करसंकाशं सन्ध्यावदरुण प्रभो ।

वीराल‘णं दिव्यं सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम।।

ॐ सिन्धोरिव प्प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमियः पतयन्ति ह्वाः।

घृतस्य धारा ऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० सिन्दूरं समर्पयामि।

नानापरिमलद्रव्याणि -

अबीरं च गुलालं च चोवा चन्दनमेव च।

अबीरेणार्चितो देव अतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

ॐ अहिरिव भोगैः पेंति बाहुञ्ज्याया हेतिं परिबाधमानः।

हस्तग्घ्नो व्विश्वाव्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा œ सम्परिपातुव्विश्वतः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० परिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपम् -

दशा गुग्गुलं धूपमुत्तमं गणनायक।

गृहाण सर्वं देवेश उमापुत्र नमोस्तु ते।।

धूरसि धूर्व्वधूर्व्वन्तं धूर्व्व तंस्मान् धूर्वतितन्धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः।

देवानामसि व्वह्नितम œ सस्निनतमं पप्प्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० धूपम् आघ्रापयामि।

दीपम् -

सर्वज्ञ सर्वलोकेश सर्वेषान्तिमिरापह।

गृहाण म‘लं दीपं रुद्रप्रिय नमोस्तु ते।।

ॐ अग्निर्ज्योतिज्योर्तिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्योर्तिज्योतिः सूर्यः स्वाहा।

अग्निर्व्वर्चाज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहासूर्व्वर्च्चाज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा।

ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० दीपकं दर्शयामि। हस्तौ प्रक्षाल्य।

नैवेद्यम् -

नमो मोदकहस्ताय भालचन्द्राय ते नमः।

नैवेद्यं गृह्यतां देव सटं मे निवारय॥

नैवेद्यपात्र पुरतो निधाय चन्दनपुष्पाभ्यां समभ्यर्च्च्य। धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य देवस्य अग्रे दक्षिण भागे वा निधाय ग्रासमुद्रां प्रदर्शयेत् - ऊँ प्राणाय स्वाहा। ऊँ अपानाय स्वाहा। ऊँ व्यानाय स्वाहा। ऊँ उदानाय स्वाहा। ऊँ समानाय स्वाहा।

ऊँ नाब्भ्याऽआसीदन्तरिक्ष œ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ २ऽ अकल्पयन्॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये जलं निवेदयामि।

ऋतुफलम् -

नारिकेलञ्च नार कदम्बं मातुलि‘कम्।

द्राक्षाखर्जूरदाडिम्बं गृहाण गणनायक॥

ऊँ याः फलीर्नीया ऽ अफला ऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हसः॥

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० फलं निवेदयामि। पुनः आचमनीयं निवेदयामि।

ताम्बूलम् -

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम॥

एलादिचूर्ण संयुक्तं ताम्बूल प्रतिगृहाताम्॥

ऊँ उतस्म्मास्यद्द्रवतस्तुरण्ण्यतः पर्ण्णन्नवेरनुवाति प्प्रगर्द्धिनः।

श्येनस्ये वद्ध्रजतो ऽ अङ्क सम्परिदधिक्राब्ण्णः सहो तरित्रतः स्वाहा।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० ताम्बूलं समर्पयामि।

दक्षिणा -

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।

तेन प्रीतो गणाध्यक्ष भव सर्वफलप्रद॥

ऊँ द्दत्तँत्परादानँ त्पूर्त्तं ाश्चदक्षिणाः।

तदग्निर्व्वैश्वकर्म्मणः स्वर्द्देवेषु नो दधत्।ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० दक्षिणां समर्पयामि।

नमस्कार -

विनायको योऽखिललोकनायकः, यो विघ्नराजोऽपिहि विघ्ननाशकः।

अनेक दन्तार्चित पादयुग्मकं, तमेकदन्तं प्रणमामि सन्ततम्।।

विशेषार्घम् -

रक्ष रक्ष गणाध्यक्षो रक्ष त्रैलोक्यरक्षक। भक्तानामभयं कर्त्ता त्राता भव भवार्णवात्।।

द्वैमातुरकृपासिन्धो षाण्मातुरग्रज प्रभो। वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद।।

गृहाणार्घ्यमिमं देव सर्वदेव नमस्कृतः। अनेन सफलार्घ्येन फलदोऽस्तु सदा मम।।

अनेन कृताऽर्चनेन श्रीगणेशाम्बिके प्रीयेतां न मम।

गणेश जी की आरती -

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय, लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।

नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय, गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

माता जाकी पार्वती पिता महादेवा।

लड्डुअन को भोग लगे सन्त करे सेवा।

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

एकदन्त दयावन्त चारभुजाधारी।

मस्तक सिन्दूर सोहे मूसे की सवारी। जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

अन्धन को आँख देत कोढिन्न को काया ।

बाँझन को पुत्र देत निर्धन को माया। जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

पान चढ़े फूलचढ़े और चढ़े मेवा।

सभी कार्य सिद्ध करे श्री गणेश देवा। जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

पुष्पाञ्जलि -

त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति।

विद्या प्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव।।१।।

श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेतगन्धैः,

क्षीराब्धौ रत्नदीपैः सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम्।

दोर्भिः पाशाङ्कुशाब्जाभयवरदधतं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रं,

ध्याये शान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम्।।२।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीगणेशाम्बिकाभ्यां नमः पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

शिव पञ्चायतन पूजन

शिव पञ्चायतन पूजन में ईशानकोण में विष्णु, अग्निकोण में सूर्य, नैर्ऋत्यकोण में गणेश, वायव्यकोण में देवी तथा मध्य में प्रधानःप में शिव की स्थापन करते हुए पूजन करना चाहिए। हाथ में अक्षत लेकर ही प्रत्येक देवता का आवाहन करना चाहिए।

१. विष्णुः-

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम।

भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम।।

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

२. सूर्यः-

जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम।।

ॐ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मत्र्यञ्च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सूर्याय नमः, मध्ये सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।

३. गणेशः-

गजास्य गणनाथत्त्वं सर्वविघ्नविनाशनम।

लम्बोदरं त्रिनेत्राढ्यं आगच्छ गणनायकम।।

ॐ गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति हवामहे व्वसोमम । आहम् जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

४. देवीः-

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे ।

नानाजाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम।।

ॐ अम्बेऽअम्बिके म्बालिकेनमानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गादैव्यै नमः, दुर्गामावाहयामि स्थापयामि।

५. शिवः-

ॐ मण्डूकादिपीठदेवताभ्यो नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

नवशक्ति पूजन:- ॐ विमलायै नमः, ॐ उत्कर्षिण्यै नमः, ॐ ज्ञानायै नमः, ॐ त्रियायै नमः, ॐ योगायै नमः, ॐ प्रभव्यै नमः, ॐ सत्यायै नमः, ॐ ईशानायै नमः, ॐ अनुग्रहायै नमः। (गन्धाक्षत-पुष्प से पूजन करे)

तत्पश्चात्गणपति पञ्चायनत देव की भांति कलश स्थापन से प्रारम्भ करते हुए प्राणप्रतिष्ठा तक पूजन करे।

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम्।
भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम्।।

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

पूजनं कुर्यात् (उपलब्ध सामग्री के अनुसार गणपति की भांति ही आसनपाद्यादि से मन्त्र पुष्पाञ्जलि तक पूजन करे।) -

आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। पादयोः पाद्यं समर्पयामि। हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि। मुखे आचमनं समर्पयामि। सर्वांगे स्नानं समर्पयामि। मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

अभिषेकः (गन्धादिभिः सम्पूज्य) -

ॐ अथ पुरुषो ह वै नारायणोऽकामयत प्रजाः सृजेयेति। नारायणात्प्राणो जायते मनः सर्वेन्द्रियाणि च। खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी। नारायणाद्ब्रह्मा जायते। नारायणाद्रुद्रो जायते। नारायणादिन्द्रो जायते। नारायणात्प्रजापतिः प्रजायते। नारायणाद्द्वादशादित्या रुद्रा वसवः सर्वाणि छन्दांसि नारायणादेव समुत्पद्यन्ते। नारायणात्प्रवर्तन्ते। नारायणे प्रलीयन्ते। एतदृग्वेदशिरोऽधीते।।१।। अथ नित्यो नारायणः। ब्रह्मा नारायणः। शिवश्च नारायणः। शक्रश्च नारायणः। कालश्च नारायणः। दिशश्च नारायणः। विदिशश्च नारायणः। ऊर्ध्वं च नारायणः। अधश्च नारायणः। अन्तर्बहिश्च नारायणः। नारायण एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम्। निष्कलङ्को निरञ्जनो निर्विकल्पो निराख्यातः शुद्धो देव एको नारायणो न द्वितीयोऽस्ति कश्चित्। य एवं वेद स विष्णुरेव भवति स विष्णुरेव भवति। एतद्यजुर्वेदशिरोऽधीते।।२।।

ओमित्यग्रे व्याहरेत्। नम इति पश्चात्। नारायणायेत्युपरिष्टात्। ओमित्येकाक्षरम्। नम इति द्वे अक्षरे। नारायणायेति पञ्चाक्षराणि। एतद्वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदम्। यो ह वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदमध्येति।

अनपब्रुवः सर्वमायुरेति। विन्दते प्राजापत्यं रायस्पोषं गौपत्यं ततोऽमृतत्वमश्नुते ततोऽमृतत्वमश्नुत इति। एतत्सामवेदशिरोऽधीते।।३।।

प्रत्यगानन्दं ब्रह्मपुरुषं प्रणवस्वःपम्। अकार उकारो मकर इति। ता अनेकधा समभवत्तदेतदोमिति। यमुक्त्वा मुच्यते योगी जन्मसंसारबन्धनात्। ॐ नमो नारायणायेति मन्त्रोपासको वैकुण्ठभुवनं गमिष्यति। तदिदं पुण्डरीकं विज्ञानघनं तस्मात्तडिदाभमात्रम्। ब्रह्मण्यो देवकीपुत्रो ब्रह्मण्यो मधुसूदनः। ब्रह्मण्यः पुण्डरीकाक्षो ब्रह्मण्यो विष्णुरच्युत इति। सर्वभूतस्थमेकं वै नारायणं कारणपुरुषमकारणं परं ब्रह्मोम्। एतदथर्वशिरोऽधीते।।४।।

प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। तत्सायं प्रातरधीयानः पापोऽपापो भवति। मध्यन्दिनमादित्याभिमुखोऽधीयानः पञ्चमहापातकोपपातकात्प्रमुच्यते। सर्ववेदपारायणपुण्यं लभते। नारायणसायुज्यमवाप्नोति श्रीमन्नारायणसायुज्यमवाप्नोति य एवं वेद।।५।। इति।।

तत्पश्चात्पुरुषसूक्त के षोड़श मन्त्रों से भी अभिषेक अथवा पूजन किया जा सकता है।

। हरिः ॐ । सहस्रशीर्षा पुरुश सहस्राक्ष सहस्रपात्। सभूमि सर्व्वत स्पृत्त्वात्त्यतिष्-द्दशाङ्ग्ुलम्। १। पुरुषऽएवेद सर्वं य्यद्भूतँ य्यच्च भाव्व्यम् । उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति। २। एतावानस्य महिमातो ज्ज्यायाँश्च्च पूरुश । पादोस्य व्विश्श्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि। ३। त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुश पादोस्येहाभवत्त्पुन्न । ततो व्विष्ष्वङ्ङ्व्यक्क्रामत्त्साशनानशनेऽअभि। ४। ततो व्विराडजायत व्विराजोऽअधिपूरुष। सजातो ऽअत्त्यरिच्च्यत पश्च्चाद्भूमिमथो पुर । ५। तस्म्माद्यज्ञात्त्सर्व्वहुत सम्भृतम्पृषदाज्ज्यम्। पशूँस्ताँश्चक्क्रे व्वायव्व्यानारण्ण्या ग्ग्राम्म्याश्च ये। ६। तस्म्माद्यज्ञात्त्सर्व्वहुतऽऋच सामानि जज्ञिरे। छन्दाœ सिजज्ञिरे तस्म्माद्यजुस्त्तस्म्मादजायत। ७। तस्म्मादश्श्वाऽअजायन्त ये के चोभयादत। गावो ह जज्ञिरे तस्म्मात्तस्म्माज्जाताऽ अजावय्र । ८। तँय्यज्ञम्बर्हिषि प्प्रौक्क्षन्पुरुषञ्जातमग्ग्रत। तेन देवाऽअयजन्त साद्ध्याऽऋषयश्च्च ये। ९। यत्त्पुरुषँ व्व्यदधु कतिधा व्व्यकल्प्पयन्। मुखङ्क्मिस्यासी त्किम्बाहू किमूः पादाऽउच्च्येते। १०। ब्राह्म्णोस्य मुखमासीद्बाहू राजन्न्य कृत । ऊः तदस्य य्द्वैश्श्य पद्भ्याœ शूद्द्रोऽ अजायत।११। चन्द्रमा मनसो जातश्च्चक्षो सूर्य्योऽ अजायत। श्रोत्र्राद्वायुश्च्च प्प्राणश्च्च मुखादग्ग्रिरजायत। १२। नाब्भ्याऽ आसीदन्तरिक्ष शीर्ष्णो द्यौ समवर्त्तत। पद्भ्या म्भूमिर्द्दिश श्रोत्र्रात्तथा लोका २ । ऽअकल्प्पयन्।१३। यत्त्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत। व्वसन्तो स्यासी दाज्ज्यङ्ग्ग्रीष्म्मऽइध्ध्म शरद्धवि ।१४।

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रि सप्तसमिधःकृता। देवा यद्यज्ञन्तन्वानाऽ अबध्नन्पुरुषम्पशुम्।१५। यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्प्रथमान्यासन्। तेहनाकम्महिमान्न सचन्त यत्रपूर्व्वे साद्ध्या सन्ति देवा। १६।

वस्त्रं समर्पयामि। यज्ञोपवीतं। वस्त्रयज्ञोपवीतान्ते आचमनं समर्पयामि। गन्धं समर्पयामि। अक्षतान्समर्पयामि। पुष्पमालां समर्पयामि।

अङ्गपूजनम् (गन्धाक्षतपुष्पैः) -

ऊँ दामोदरायै नमः पादौ पूजयामि, ऊँ माधवाय नमः जानुनिं पूजयामि, ऊँ कामपतये नमः गुह्यं पूजयामि, ऊँ वामनाय नमः कटिं पूजयामि, ऊँ पद्मनाभाय नमः नाभिं पूजयामि, ऊँ विश्वमूर्त्तये नमः उदरं पूजयामि, ऊँ ज्ञानगम्याय नमः हृदयं पूजयामि, ऊँ श्रीकण्ठं नमः कण्ठं पूजयामि, ऊँ सहस्रबाहवे नमः बाहौ पूजयामि, ऊँ योगिने नमः नेत्रं पूजयामि, ऊँ उरगाय नमः ललाट पूजयामि, ऊँ सुरेश्वराय नमः नासिका पूजयामि, श्रवणेशाय नमः कर्णा पूजयामि, ऊँ सर्वकर्मप्रदाय नमः शिखा पूजयामि, ऊँ सहस्रशीर्षे नमः शिरः पूजयामि, ऊँ सर्वस्वःपिणे नमः सर्वाङ्ग पूजयामि। (गन्धाक्षत-पुष्प से पूजन करे)

परिमलद्रव्याणि समर्पयामि। सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि। धूपं आघ्रापयामि। दीपं दर्शयामि। हस्तप्रक्षालनम्। नैवेद्यं समर्पयामि। मध्ये आचमनं समर्पयामि। फलं समर्पयामि। पुनः आचमनं समर्पयामि। ताम्बूलं समर्पयामि। द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

आरतिः-

ऊँ जय जगदीश हरे प्रभु! जय जगदीश हरे।
भक्तजनों के सङ्कट क्षण में दूर करे। ऊँ।
जो ध्यावे फलपावै, दुःख विनसै मनका। प्रभु।
सुख सम्पत्तिघर आवे, कष्टमिटे तन का। ऊँ।
मात-पिता तुम मेरे, शरणगहूँ किसकी। प्रभु।
तुमबिन और न दूजा, आस करुँ मैं किसकी। ऊँ।
तुम पूरण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी। प्रभु।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी। ऊँ।
तुम करूणा के सागर, तुम पालनकर्त्ता। प्रभु।

मैं मूरख खलकामी, कृपाकरो भर्त्ता । ऊँ।

तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपति । प्रभु।

किसविधि मिलूँ दयामय! तुमको मै कुमति । ऊँ।

दीनबन्धु दुःखहर्त्ता तुम ठाकुर मेरे । प्रभु।

अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे । ऊँ।

विषय विकार मिटाओ, पापहरो देवा । प्रभु।

श्रद्धाभक्ति बढ़ाओ, सन्तनपद सेवा । ऊँ।

तन, मन, धन सबकुछ है तेरा ।

तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा । ऊँ।

श्रीजगदीशस्वामीकी आरती जो कोई नर गावे,

कहत शिवानन्द स्वामी मनवाञ्छित फलपावै । ऊँ।

पुष्पाञ्जलिः-

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम्,
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्,
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्।।

इस प्रकार सभी देवताओं का पूजन करके अक्षत पुष्प हाथ में लेकर निम्रलिखित मन्त्रों का उच्चारण करेः-

पत्रं पुष्पं फलं तोयं, रत्नानिविविधानि च। गृहाणार्घ्यं मयादत्तं देहि मे वाञ्छितं फलं।:पं देहि जयं देहि, भाग्यं भगवन् देहि मे। पुत्रान देहि धनं देहि, सर्वान् कामांश्च देहि मे। फलेन फलितं सर्वं त्रैलाक्यं सचराचरम्। फलस्यार्घ्यप्रदानेन सफलाः सन्तु मनोरथाः।

निम्र मन्त्रों से अक्षप पुष्प समर्पित करेः-

ऊँ साङ्गाय सायुधाय सावाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय। ऊँ नमो .... नमः। मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

प्रदक्षिणाः- यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च।

तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे। (भगवान्शिव की आधी परिक्रमा, देवी की एक परिक्रमा, विनायक की तीन परिक्रमा, विष्णु की चार तथा सूर्य की सात परिक्रमा करनी चाहिए।)

तत्पश्चात्देवताओं को पञ्चाङ्ग-प्रणाम करते हुए उनका विसर्जन करेः-

विसर्जन:- यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्। इष्टकाम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च लक्ष्मी कुबेरौ विहाय।

इसके बाद अपने परिवार वालों के साथ निम्न मन्त्र द्वारा भगवान को नमस्कार करें -

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

3.4-सारांश

इस इकाई में गणेश पूजन का विशेश रूप से वर्णन किया गया है। देवपूजन में वेद-मन्त्र, फिर आगम-मन्त्र और बाद में नाम-मन्त्र का उच्चारण किया जाता है। यहाँ इसी क्रम का आधार लिया गया है। जिन्हें वेद-मन्त्र न आता हो, उन्हें आगम मन्त्रो का प्रयोग करना चाहिये और जो इनका भी शुद्ध उच्चारण न कर सकें, उनको नाम-मन्त्रों से पूजन करना

3.5 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
गजाननम्	हाथी के समान मुख
भूतगणादि	भूत गण आदि
सेवितम्	सेवित है
कपित्थः	वानर
जम्बूफलम्	जम्बू फल
भक्षणम्	खाते है।
उमासुतम्	उमा के पुत्र
शोकविनाषकारकम्	शंकट को समाप्त करने वाले
नमामि	प्रणाम करता हूँ।
नमो देव्यै	देवी को नमस्कार है
महादेव्यै	महादेवी के लिये
षिवायै सततं नमः	पार्वती कोवार वार नमस्कार है
नमः प्रकृत्यै	प्रकृति को नमस्कार है
भद्रायै	कल्याण के लिये

ध्यानम्	ध्यान को
समर्पयामि	समर्पण करता हूँ
पञ्च	पाँच
आवाहन	देवों का पूजन में आवाहन
पञ्चायतन	समूह के पाँच देवता
अग्न्युत्तारण	मूर्ति को अग्नि में तपाना
अभिषेक	देवप्रतिमा को स्नान कराना
ताम्बूल	पान

3.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न -उत्तर

अतिलघूत्तरीय- प्रश्न

1. प्रश्न-ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी, भानुः शशी भूमिसुतोबुधश्च।
गुरूश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः, कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।। इस श्लोक से किसका स्मरण किया
जाता है?

उत्तर-इस श्लोक से त्रिदेवों के साथ नवग्रह का स्मरण किया जाता है

प्रश्न - : पञ्चदेवों के नाम बताईये ?

उत्तर: सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव और विष्णु।

3-प्रश्न - : गणपति पञ्चायन में किस देव की किस दिशा में स्थापना होती है ?

उत्तर: गणेश पंचायतन में ईशानकोण में विष्णु, अग्रिकोण में शिव, नैर्ऋत्यकोण में सूर्य तथ वायव्य कोण में देवी की स्थापना करते मध्य में प्रधानः में गणपति की स्थापना करते हुए यथोपचार पूजन करना चाहिए।

4-प्रश्न - गणेश के पूजन में किस अथर्वशीर्ष का पाठ करना चाहिए् ?

उत्तर: देवी के पूजन में गणेशाथर्वशीर्ष का पाठ करना चाहिए।

5-प्रश्न - शिव पञ्चायन में किस देव की किस दिशा में स्थापना होती है ?

उत्तर: शिव पञ्चायतन पूजन में ईशानकोण में विष्णु, अग्निकोण में सूर्य, नैर्ऋत्यकोण में गणेश, वायव्यकोण में देवी तथा मध्य में प्रधानःप में शिव की स्थापन करते हुए पूजन करना चाहिए।

6-प्रश्न-भगवान् गणेश का ध्यान किस मन्त्र से किया जाता है?

उत्तर-गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारूभक्षणम्।

उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपंकजम्।।

7-प्रश्न -भगवती गौरी का ध्यान किस मन्त्र से किया जाता है?

उत्तर-नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।

नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्।।

8-प्रश्न-ऋतुफल किस मन्त्र से चढाया जाता है?

उत्तर-ॐ याःफलनिर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः।

वृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्त गं हसः।।

9-प्रश्न-ताम्बूल किस मन्त्र से चढाया जाता है?

उत्तर-ॐयत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मःशरद्धविः।।

10-प्रश्न-पुष्पांजलि किस मन्त्र से किया जाता है?

उत्तर-ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

11-प्रश्न-भगवान् गणेश का ध्यान किस मन्त्र से किया जाता है?

उत्तर-गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारूभक्षणम्।

उमासुतं शोकविनाषकारकं नमामि विघ्नेष्वरपादपंकजम्।।

12-प्रश्न -भगवती गौरी का ध्यान किस मन्त्र से किया जाता है?

उत्तर-नमो देव्यै महादेव्यै षिवायै सततं नमः।

नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्।।

13-प्रश्न-ऋतुफल किस मन्त्र से चढाया जाता है?

उत्तर-ॐ याःफलनिर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः।

वृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्त गं हसः।।

14-प्रश्न-ताम्बूल किस मन्त्र से चढाया जाता है?

उत्तर-ॐयत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मःशरद्धविः।।

15-प्रश्न-पुष्पांजलि किस मन्त्र से किया जाता है?

उत्तर-ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

16-प्रश्न-पञ्चामृत के द्रव्य लिखिये ?

उत्तर - पञ्चामृत के द्रव्य - दूध, दही, घी, शहद, बूरा।

17-प्रश्न - पञ्चगव्य के द्रव्य लिखिये ?

उत्तर - पञ्चगव्य के द्रव्य - गाय का गोबर, गौमूत्र, गौदुग्ध, गाय का घी, गाय का दही।

18-प्रश्न - तुलसीदल किस देवता की पूजन में वर्जित तथा किस देवता को प्रिय है ?

उत्तर -तुलसीदल गणपति-पूजन में वर्जित तथा भगवानड्ढ् विष्णु को प्रिय है।

19-प्रश्न - भगवान शिव की कितनी प्रदक्षिणा करनी चाहिए ?

उत्तर - भगवान शिव की अर्द्ध-प्रदक्षिणा करनी चाहिए ?

20-प्रश्न- पूजन के पूर्व कितने आचमन किये जाते है ?

उत्तर - पूजन के पूर्व तीन बार आचमन किया जाता है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. पंचामृत है-

क - घी, दूध, दही, बूरा, जल   ख - फल, दूध, दही, बूरा, शहद

ग - घी, दूध, दही, बूरा, शहद   घ -घी, दूध, इत्र, बूरा, शहद

2. पंचगव्य हैं-

क -गोबर,गौमूत्र,गौदुग्ध,घी,दही   ख - गोबर,गौमूत्र,शहद,घी,दही

ग - गोबर,गौमूत्र,गौदुग्ध,घी,जल   घ - गोबर,गौमूत्र,गौदुग्ध,इत्र,दही

3. पंचपल्लव हैं-

क - पीपल, आम, गूलर, बड़, अशोक   ख - पीपल, आम, गूलर, बड़, विल्व

ग - पीपल, आम, गूलर, बड़, अमरुद   घ - पीपल, आम, गूलर, नेवू, अशोक

4. पंचोपचार हैं-

क - गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य   ख - गन्ध, पुष्प, धूप, फल, नैवेद्य

ग - गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, इत्र   घ - वस्त्र, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य

5. पंचदेव हैं-

क - सूर्य, गणेश, शक्ति, शिव, हनुमान   ख - रुद्र, गणेश, शक्ति, शिव, विष्णु

ग - सूर्य, गणेश, शक्ति, शिव, विष्णु   घ - सूर्य, गणेश, शक्ति, पार्वती, विष्णु

6. भगवान् शिव की प्रदक्षिणा होती है-

क - एक ख - दो

ग - अर्द्ध घ -तीन

7. पूजन के पूर्व आचमन किये जाते हैं-

क -तीन बार ख -दो बार

ग -एक बार घ -चार बार

8. श्री महागणपतिस्वरूप प्रणव मन्त्र है-

क -गं गणपतये ख -गं

ग - गं गणपतये नमः घ - ऊँ

9. श्री महागणपति का प्रणव सम्पुटित बीज मन्त्र है-

क -गं गणपतये ख - ऊँ गं ऊँ

ग - गं गणपतये नमः घ - ऊँ

10. सबीज गणपति मन्त्र है-

क -गं गणपतये ख - ऊँ गं ऊँ

ग - गं गणपतये नमः घ - ऊँ

11. प्रणवादि सबीज गणपति मन्त्र है-

क -गं गणपतये ख - ऊँ गं ऊँ

ग - ऊँ गं गणपतये नमः घ - ऊँ

12. ऊँ नमो भगवते गजाननाय मन्त्र में अक्षरों की संख्या है-

क -दो ख -तीन

ग -बारह घ - चार

13. श्री गणेशाय नमः मन्त्र में अक्षरों की संख्या है-

क -सात ख -तीन

ग -बारह घ - चार

14. शक्तिविनायक मन्त्र है-

क -गं गणपतये ख - ऊँ गं ऊँ

ग - गं गणपतये नमः घ - ऊँ ह्रीं ग्रीं ह्रीं

15. शक्तिविनायक मन्त्र में अक्षरों की संख्या है-

क -सात ख -तीन

ग -बारह घ - चार

16. वक्रतुण्ड मन्त्र है-

क -गं गणपतये ख - ऊँ वक्रतुण्डाय हुम्

ग - गं गणपतये नमः घ - ऊँ ह्रीं ग्रीं ह्रीं

17. वक्रतुण्ड मन्त्र में अक्षरों की संख्या है-

क -सात ख -तीन

ग -बारह घ - छः

18. भाद्रपद मास में कृष्णपक्ष की चतुर्थी को मनायी जाती है। है-

क - गणेश चतुर्थी ख -तीज

ग -अष्टमी घ - नवमी

19. गणपति की शक्तियों का पूजन प्रारम्भ में किया जाता है-

क - एक शक्तियों का ख - द्वादश शक्तियों का

ग - नव शक्तियों का घ - दश शक्तियों का

20. गणपति पूजन में अथर्वशीर्ष का पाठ किया जाता है -

क - दुर्गा -अथर्वशीर्ष ख - सूर्य-अथर्वशीर्ष

ग - विष्णु-अथर्वशीर्ष घ - गणपति-अथर्वशीर्ष

21. गणपति के साथ पूजन किया जाता है -

क - दुर्गा ख - सूर्य

ग - विष्णु घ - गौरी

22. भद्रा में पूजन का विशेश महत्त्व है-

क - दुर्गा ख - सूर्य

ग - विष्णु घ – गणपति

उत्तर –

1. ग 2. क 3. क 4. क 5. ग 6. ग 7. क 8. घ 9. घ 10. ग 11. ग 12. ग 13. क 14. घ 15. घ 16. घ 17. घ 18. क 19. क 20. घ 21. घ 22. घ

3.7-सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

1-पुस्तक का नाम-दुर्गाचन पूजापद्धति

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाषक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2-पुस्तक का नाम-सर्वदेव पूजापद्धति

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

3धर्मशास्त्र का इतिहास

लेखक - डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे

प्रकाशकः- उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,

लेखकः- पं. बिहारी लाल मिश्र,

प्रकाशकः- गीताप्रेस, गोरखपुर।

5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा

संकलन ग्रन्थ

प्रकाशकः- मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

6 कर्मठगुरुः

लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य

प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती

सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी

सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिश शोध संस्थान, जयपुर।

9 विवाह संस्कार

सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर

3.8- सहायक पुस्तकें

1-पुस्तक का नाम-दुर्गार्चनपद्धति

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1-प्रश्न - पुष्पाञ्जलि किस मन्त्र से किया जाता है इसका वर्णन करे-

उत्तर-

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम्,
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्,
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।।

इस प्रकार सभी देवताओं का पूजन करके अक्षत पुष्प हाथ में लेकर निम्नलिखित मन्त्रों का उच्चारण करेः-

पत्रं पुष्पं फलं तोयं, रत्नानिविविधानि च। गृहाणार्घ्यं मयादत्तं देहि मे वाञ्छितं फलं।:पं देहि जयं देहि, भाग्यं भगवन् देहि मे। पुत्रान देहि धनं देहि, सर्वान् कामांश्च देहि मे। फलेन फलितं सर्वं त्रैलाक्यं सचराचरम्। फलस्यार्घ्यप्रदानेन सफलाः सन्तु मनोरथाः।

निम्न मन्त्रों से अक्षप पुष्प समर्पित करेः-

ॐ साङ्गाय सायुधाय सावाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय। ॐ नमो .... नमः। मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

2-प्रश्न - प्रदक्षिणा किस मन्त्र से किया जाता है इसका वर्णन करे-

उत्तर-यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे। (भगवान्शिव की आधी परिक्रमा, देवी की एक परिक्रमा, विनायक की तीन परिक्रमा, विष्णु की चार तथा सूर्य की सात परिक्रमा करनी चाहिए।)

तत्पश्चात्देवताओं को पञ्चाङ्ग-प्रणाम करते हुए उनका विसर्जन करेः-

3-प्रश्न -विसर्जन किस मन्त्र से किया जाता है इसका वर्णन करे-

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्। इष्टकाम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च लक्ष्मी कुबेरौ विहाय।
इसके बाद अपने परिवार वालों के साथ निम्न मन्त्र द्वारा भगवान को नमस्कार करें -

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

इकाई – 4 श्री गणपत्यथर्वशीर्षम्

इकाई की रुप रेखा

4.1 - प्रस्तावना

4.2 - उद्देश्य

4.3- श्री गणपत्यथर्वशीर्षम्

4.4- सारांश

4.5 - शब्दावली

4.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न- उतर

4.7- सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 -उपयोगी पुस्तके

4.9- निबन्धात्मक प्रश्न

4.1- प्रस्तावना

कर्मकाण्ड से सम्बन्धित यह चौथी इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि श्री गणपत्यथर्वशीर्षम् की पूजन की आवश्यकता क्या है इसके विषय में विशेश रूप से वर्णन किया जा रहा है।

किसी भी यज्ञादि महोत्सवों, पूजा-अनुष्ठानों अथवा नवरात्र-पूजन शिवरात्रि में शिव-पूजन, पार्थिव-पूजन, रूद्राभिषेक, सत्यनारायण-पूजन, दिवाली-पूजन आदि कर्मो में प्रारम्भ में स्वस्तिवाचन, पुण्याहवाचन, गणेश-कलश-नवग्रह तथा रक्षा-विधान आदि कर्म सम्पन्न किये जाते हैं, इसके अनन्तर प्रधान रूप से श्री गणपत्यथर्वशीर्षम् की पूजा की जाती है।

4.2- उदेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप वेदशास्त्र में वर्णित श्री गणपत्यथर्वशीर्षम् का अध्ययन करेंगे।

1. श्रीसङ्कष्टनाशनगणेशस्तोत्र के विषय में आप परिचित होंगे-
2. ॐगं गणपतये नमः इस मन्त्र के विषय में आप परिचित होंगे
3. श्री गणपत्यथर्वशीर्षम् के विषय में आप परिचित होंगे
4. ओंकार के विषय में आप परिचित होंगे
5. गं के विषय में आप परिचित होंगे

4.3 गणपतिऽथर्वशीर्ष -

मानव आरम्भ से ही चिन्तन, मनन व अन्वेषण का अभ्यस्त रहा है, वह केवल स्थूल जगत की चमक-दमक से सन्तुष्ट नहीं हैं, सूक्ष्म जगत के अन्तस्तल तक के रहस्यों को प्रकाश में लाने के लिए कृतसंकल्प रहता आया है। अनन्तकाल से अनुसन्धान करते करते वह कई उपयोगी तथ्यों को प्राप्त कर चुका हैं, जो प्रत्यक्ष जगत में कार्यान्वित होने वाली घटनाओं के कारण रूप हैं। इन उपलब्धियों में मानव जीवन पर ग्रह-प्रभाव की अवगति सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। दार्शनिकों ने यह सिद्ध कर दिया हैं। यथा पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे अर्थात् ब्रह्माण्डस्थ ग्रहों की प्रतिकृतियां प्राणीमात्र के शरीर में भी विद्यमान हैं। दोनों के संचार-नियमन में एकरूपता होने के कारण मानव की विविध गतिविधियाँ भी ग्रहों के द्वारा नियन्त्रित होती हैं, किन्तु प्रश्न उठता हैं कि श्क्या ग्रह स्वेच्छानुसार

मनुष्य के भविष्य का विधान निर्धारित करते हैं ? नहीं, सम्पूर्ण, स्थूल एवं सूक्ष्म जगत के अधिष्ठाता परमपिता परमात्मा के निर्देशानुसार प्राणी के प्रारब्धों से होने वाली भाग्य की व्यूह रचना का प्रतिनिधित्व ही जन्मकालिक ग्रहस्थिति करती हैं। अतः ग्रहाः वै कर्मसूचकाः ग्रह तो केवल कर्माधीन भवितव्य की सूचना देते हैं। सभी देवताओं में गणपति सर्वप्रथम है, इनका पूजन सभी मांगलिक कार्यो में गणपति अथर्वशीर्ष का पाठ करना चाहिए।

अथर्वशीर्ष की परम्परा में गणपति अथर्वशीर्ष का विशेश महत्त्व है । प्रायः सभी मांगलिक कार्यों में गणपति पूजा के बाद प्रार्थना के रूप में इसके पाठ की परम्परा अत्यन्त आवश्यक है।यह अथर्वशीर्ष भगवान गणेश का वैदिक प्रार्थना है। गणेश जी का महामन्त्र है-ओं गं गणपतये नमः एवं गणेश गायत्री मन्त्र का भी इसके अन्तर्गत माहात्म्य सहित समावेश है। कोई भी व्यक्ति किसी भी प्रकारके विघ्न बाधा से परेशान हो तो इसका पाठ करने उसका विघ्न बाधा समाप्त हो जाता है तथा किसी प्रकार का विघ्न बाधा न होते हुए भी महापातकों से मुक्त हो जाता है। इस अथर्वशीर्ष का पाठ करने वाला व्यक्ति धर्म अर्थ काम मोक्ष इन चारो प्रकार के पुरुषार्थों का प्राप्त करता है।

आ नो भद्रं कर्णेभिःश्रृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टु सस्तनूभिव्यशेम देवहितं यदायुः।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः स्वस्ति नस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः?

अर्थ- हे देवगण ! हम भगवान का पुजन आरधना करते हुए कानो से कल्याणमय वचन सुनें। नेत्रों से कल्याण ही देखें। सुदृण अंगो एवं शरीर से भगवान की स्तुति करते हुए हम लोग जो आयु आराध्य देव परमात्मा के काम आ सके उसका उपभोग करें। सब ओर फैले हुए सुयश वाले इन्द्र हमारे लिये कल्याण का पोषण करें। सम्पूर्ण विश्व का ज्ञान रखने वाले पूषा हमारे लिये कल्याण का पोयाण करें। अरिष्टों को मिटाने के लिये चक्रसदृश शक्तिशाली गरुडदेव हमारे लिये कल्याण का पोषण करें। तथा बुद्धि के स्वामी बृहस्पति भी हमारे लिये कल्याण की पुष्टि करें। परमात्मा हमारे लिये त्रिविध ताप की शान्ति हो।

स्तुति-प्रकरण

श्रीसङ्कष्टनाशनगणेशस्तोम्

प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम्! भक्तवासं स्मरेन्नियमायुष्कामार्थसिद्धये!!1

प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्! तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम्!!2

लम्बोदरं पंचमं च षष्ठं विकटमेव च! सप्तमं विघ्नराजेन्द्रं धूम्रवर्णं तथाष्टमम्!!3
नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम्! एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम्!!4
द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः! न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं परम्!!5
विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम्! पुत्रार्थी लभते पुत्रान् मोक्षार्थी लभते गतिम्!!6
जपेद् गणपतिस्तोतं षड्भिर्मासैः फलं लभेत्! संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः!!7
अष्टभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च लिखित्वा यःसमर्पयेत्! तस्य विद्या भवेत् सर्वा गणेशस्य प्रसादतः!!8
!! श्रीनारदपुराणे सङ्कष्टनाशनं नाम गणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्!!

श्री गणपत्यथर्वशीर्षम्

ओम् भद्रं कर्णेभिरिति शान्तिः .... ।

हरिः ओम!!नमस्ते गणपतये! त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि! त्वमेव केवलं कर्तासि! त्वमेव केवलं धर्तासि! त्वमेव केवलं हर्तासि! त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रहमासि! त्वं साक्षादात्मासि नित्यम!।1।

अर्थ-गणपति को नमस्कार है, तुम्हीं प्रत्यक्ष तत्त्व हो, तुम्हीं केवल कर्ता हो, तुम्हीं केवल धारणकर्ता और तुम्हीं केवल समस्त विश्वरूप ब्रह्म हो और तुम्हीं साक्षत् नित्य आत्मा हो ।1।

ऋतं वच्मि! सत्यं वच्मि!।2।

अर्थ-यथार्थ कहता हूँ। सत्य कहता हूँ।2।

अव त्वं माम्। अव वत्कारम्! अव श्रीतारम्! अव दाताराम्! अव धाताराम! अवानूचानमव शिष्यम्! अव पश्चात्तात्! अव पुरस्तात्! अव चोत्तरात्तात्! अव दक्षिणात्तात्! अव चोर्ध्वात्तात्! अवाधस्तात्! सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्।3।

अर्थ-तुम मेरी रक्षा करो। वक्ता की रक्षा करो। श्रोता की रक्षाकरो। दाता की रक्षा करो।षडंग वेदविद आचार्य की रक्षा करो। शिष्य की रक्षा करो। पीछे से रक्षा करो। आगे से रक्षा करो। उत्तर भाग की रक्षा करो। दक्षिण भाग की रक्षा करो। उपर से रक्षा करो। नीचे की ओर से रक्षा करो। सर्वतो भाव से मेरी रक्षा करो। सब दिशाओं से मेरी रक्षा करो।3।

त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः! त्वमानन्द-मयस्त्वं ब्रह्मयः! त्वं सच्चिदानन्दद्वितीयोडसि! त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि! त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोडसि।4।

अर्थ-तुम वाङ्मय हो, तुम चिन्मय हो। तुम आनन्दमय हो, तुम ब्रह्ममय हो। तुम सच्चिदानन्द अद्वितीय परमात्मा हो।तुम प्रत्यक्ष ब्रह्म हो तुम ज्ञानमय हो, तुम विज्ञानमय हो।4।

सर्व जगदिदं त्वत्तो जायते! सर्व जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठिति! सर्व जगदिदं त्वयि लयमेष्यति! सर्व जगदिदं त्वयि प्रत्येति! त्वं भूमिरापोडनलोडनिलो नभः! त्वं चत्वारि वाक्पदानि।5।

अर्थ-यह सारा जगत् तुमसे उत्पन्न होता है। यह सारा जगत् सुरक्षित रहता है।यह सारा जगत् तुम में लीन रहता है। यह अखिल विश्व तुम में ही प्रतीत होता है। तुम्हीं भूमि, जल, अग्नि, वायु और आकाश हो। तुम्हीं परा,पश्यन्ति, मध्यमा और वैखरी चतुर्विध वाणी हो।5।

त्वं गुणत्रयातीतः! त्वं कालत्रयातीतः! त्वं देहत्रयातीतः! त्वं मूलाधार-स्थितोडसि नित्यम्! त्वं शक्तित्रयात्मकः! त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम! त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्रिस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्।6।

अर्थ-तुम सत्त्व-रज-तम इन तीनों गुणों से परे हो। तुम भूत-भविष्यत्-वर्तमान इन तीनों कालों से परे हो। तुम स्थूल ,सूक्ष्म और कारण-इन तीनों देहों से परे हो। तुम नित्य मूलाधारचक्र में स्थित हो। तुम प्रभु-शक्ति, उत्साह -शक्ति और मन्त्र-शक्ति इन तीनों शक्तियों से संयुक्त हो। योगिजन नित्य तुम्हारा ध्यान करते है। तुम ब्रह्मा हो, तुम विष्णु हो, तुम रुद्र हो, तुम इन्द्र हो, तुम अग्नि हो, तुम वायु, तुम सूर्य हो, तुम चन्द्रमा हो, तुम सगुण ब्रह्म हो, तुम निर्गुण त्रिपाद भूः भुवःस्वः एवं प्रणव हो 6।

गणादिं पुर्वमुच्चार्य वर्णादिं तदनन्तरम्! अनुस्वारः परतरः! अर्धेन्दुलसितम्!! तारेण रुद्धम्! एतत्तव मनुस्वरूपम्! गकारः पूर्वरूपम्! अकारो मध्यमरूपम्! अनुस्वारश्चान्त्यरूपम्! बिन्दुरुत्तररूपम्! नादः सन्धानाम्! संहिता सन्धिः! सैषा गणेशविधा! गणक ऋषिः निचृद्गायत्री छन्दः! श्रीमहागणपति-र्देवता! ओम गं गणपतये नमः।7।

अर्थ-गण शब्द के आदि अक्षर गकार का पहले उच्चारण करके अनन्तर आदि वर्ण अकार का उच्चारण करें। उसके बाद अनुस्वार रहे। इस प्रकार अर्ध चन्द्र से पहले शोभित जो गं है, वह ओंकार के द्वारा रुद्ध हो अर्थात् उसके पहले और पीछे भी ओंकार हो। यही तुम्हारे मन्त्र का स्वरूप है। गकार पूर्वरूप है। अकार मध्यम रूपा है। अनुस्वार अन्त्यरूप है। विन्दु उत्तर रूप है नाद संसाधन है। संहिता सन्धि है। ऐसी यह गणेश विद्या हैं इस विद्या के गणक ऋषि है। निचृद् गायत्री छन्द है। और गणपति देवता हैं। मन्त्र है-ओं गं गणपतये नमः।7।

एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।8।

अर्थ-एकदन्त को हम जानते है, वक्रतुण्ड का हम ध्यान करते हैं। दन्ति हमको उस ज्ञान और ध्यान में प्रेरित करें।8।

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमड़्क्श-धारिणम्! अभयं वरदं हस्तैर्ब्रिभ्राणं मूषकध्वजम्!! रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्! रक्तगन्धानुलिप्राडं रक्तपुष्पैः सुपूजितम्!! भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्! आविर्भूतं च सृष्टचादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम्!! एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः।9।

अर्थ-गणपतिदेव एकदन्त और चतुर्बाहु हैं। वे अपने चार हाथों में पाश, अंकुश, दन्त, और वरमुद्रा धारण करते हैं। उनके ध्वज में मूषक का चिन्ह है। वे रक्तवर्ण, लम्बोदर, शूर्पकर्ण तथा रक्त वस्त्रधारी हैं। रक्त चन्दन के द्वारा उनके अंग अनुलिप्त हैं। वह रक्त पुष्पों द्वारा सुपूजित हैं। भक्तों की कामना पूर्ण करने वाले ज्योतिर्मय जगत के कारण अच्युत तथा प्रकृति और पुरुश सा परे विद्यमान वे पुरुषोत्तम सृष्टि के आदि में आविर्भूत हुए। इनका जोइस प्रकार नित्य ध्यान करता है वह योगी योगियों में श्रेष्ठ हैं।9।

नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेडस्तु लम्बोद-रायैकदन्ताय विघ्नविनाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्तये नमो नमः।10।

अर्थ-व्रातपति को नमस्कार ,गणपति को नमस्कार , लम्बोदर , एकदन्त, विघ्न नाशक, शिवतनय श्रीवरदमूर्ति को नमस्कार है।10।

एतदथर्वशिरो योडधीते सब्रह्मभूयाय कल्पते! स सर्वघ्नैर्न बाध्यते! स सर्वतः सुखमेधते! स पंचमहापातकोपपातकात् प्रमुच्यते! सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति! प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति! सायं प्रातः प्रयुंजानोडपपपो भवति! धर्मार्थकाममोक्षं च विन्दति! इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम्! यो यदि मोहाद्यास्यति स पापीयान् भवति! सहस्त्रावर्तनाद्यं यं काममधीते तं तमनेन साधयेत्।11।

अर्थ-इस अथर्वशीर्ष का जो पाठ करता है, वह ब्रह्मीभूत होता है।, वह किसी प्रकार के विघ्नों से बाधित नहीं होता, वह सर्वतोभावेन सुखी होता है,वह पंच महापापों से मुक्त हो जाता है। सायंकाल इसका पाठ करने वाला दिनमें किये हुए पापोंका नाश करता है, प्रातःकाल पाठ करनेवाला रात्रिमें किये हुए पापों का नाश करता है। सायं और प्रातःकाल पाठ करनेवाला निष्पाप हो जाता है।(सदा)सर्वत्र पाठ करने वाला सभी विघ्नों से मुक्त हो जाता है एवं धर्म,अर्थ, काम तथा मोक्ष-इन चारों पुरूषार्थों को प्राप्त करता है। यह अथर्वशीर्ष उसको नहीं देना चाहिये,जो शिष्य न हो। जो

मोहवश अशिष्यको उपदेश देगा, वह महापापी होगा। इसकी एक हजार आवृत्ति करनेसे उपासक जो कामना करेगा, इसके द्वारा उसे सिद्ध कर लेगा।11।

अनेन गणपतिमभिषिंचति स वाग्मी भवति! चतुर्थ्यामनश्नंपति स विद्यवान् भवति! इत्यथर्वणवाक्यम्! ब्रह्माद्याचरणं विद्यात्! न बिभेति कदाचनेति।12।

अर्थ-जो इस मन्त्रके द्वारा श्रीगणपतिका अभिषेक करता है, वह वाग्मी हो जाता है। जो चतुर्थी तिथिमें उपवासकर जप करता है, वह विद्यावान्(अध्यात्मविद्याविशिष्ट)हो जाता है। यह अथर्वण-वाक्य है।जो ब्रह्मादि आवरणको जानता है, वह कभी भयभीत नहीं होता।12।

यो दूर्वाड्कुरैर्यजति स वैश्रवणोपमो भवति यो लाजैर्यजति स यशोवान् भवति! स मेधावान् भवति! यो मोदकसहस्त्रेण यजति स वांछितफलमवाप्नोति! यः साज्यसमिभ्दिर्यजति स सर्वं लभते स सर्वं लभते।13।

अर्थ-जो दूर्वांकुरों द्वारा यजन करता है, वह कुबेर के समान हो जाता है। जो राजाके द्वारा यजन करता है,वह यशस्वी होता है,वह मेधावान् होता है। जो सहस्त्र मोदकों के द्वारा यजन करता है,वह मनोवांछित फल प्राप्त करता है। जो घृताक्त समिधा के द्वारा हवन करता है,वह सब कुछ प्राप्त करता है।13।

अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग्ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति! सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासंनिधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति! महाविघ्नात् प्रमुच्यते! महापापात् प्रमुच्यते! महादोषात् प्रमुच्यते! स सर्वविभ्दवति! स सर्वविभ्दवति! य एवं वेद!! ओम् भद्ररू्कर्णेभिरिति शान्तिः।14।

अर्थ-जो आठ ब्राह्मणों को इस उपनिषद् का सम्यक् ग्रहण करा देता है,वह सूर्यके समान तेजःसम्पन्न होता है। सूर्यग्रहण के समय महा नदी में अथवा प्रतिमाके निकट इस उपनिषद्का जप करके साधक सिद्धमन्त्र हो जाता है। सम्पूर्ण महाविघ्नोंसे मुक्त हो जाता है।महापापोंसे मुक्त हो जाता है। महादोषोंसे मुक्त हो जाता है। वह सर्वविद् हो जाता है-जो इस प्रकार जानता है।इस प्रकार यह ब्रह्मविद्या है।14।

इति एवं धर्म,अर्थ, काम तथा मोक्ष-इन चारों पुरूषार्थों को प्राप्त करताहै।

इति श्री गणपत्यथर्वशीर्षम् ।।

शिव अथर्वशीर्षम्

ऊँ देवा ह वै स्वर्गं लोकमायँस्ते रुद्रमपृच्छन्को भवानिति। सोऽब्रवीदहमेकः प्रथममासवर्तामि च भविष्यामि च नान्यः कश्चिन्मत्तो व्यतिरिक्त इति। सोऽन्तरादन्तरं प्राविशत्दिशश्चान्तरं प्राविशत्सोऽहं दक्षिणाञ्च उदञ्चोहं अधश्चोर्ध्वं चाहं दिशश्च प्रतिदिशश्चाहं पुमानपुमान्स्त्रियश्चाहं गायत्रीं सावित्र्यहं त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्चाहं छन्दोऽहं गार्हपत्यो दक्षिणाग्निराहवनीयोऽहं सत्योऽहं गौरहं गौर्यहमृगहं यजुरहं सामाहमथर्वाङ्गिरसोऽहं ज्येष्ठोऽहं श्रेष्ठोऽहं वरिष्ठोऽहमापोऽहं तेजोऽहं गुह्योऽहमरण्योऽहमक्षरमहं क्षरमहं पुष्करमहं पवित्रमहमुग्रं च मध्यं च बहिश्च पुरस्ताज्ज्योतिरित्यहमेव सर्वेभ्यो मामेव स सर्वः स मां यो मां वेद स सर्वान्देवान्वेद सर्वांश्च वेदान्साङ्गानपि ब्रह्म ब्राह्मणैश्च गां गोभिर्ब्राह्मणान्ब्राह्मणेन हविर्हविषा आयुरायुषा सत्येन सत्यं धर्मेण धर्मं तर्पयामि स्वेन तेजसाद्ध ततो ह वै ते देवा रुद्रमपृच्छन्ते देवा रुद्रमपश्यन्। ते देवा रुद्रमध्यायन्ततो देवा ऊर्ध्वबाहवो रुद्रं स्तुवन्ति॥१॥

ऊँ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च ब्रह्मा तस्मै वै नमो नमः॥१॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च विष्णुस्तस्मै वै नमो नमः॥२॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च स्कन्दस्तस्मै वै नमो नमः॥३॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च यश्चेन्द्रस्तस्मै वै नमो नमः॥४॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्चाग्निस्तस्मै वै नमो नमः॥५॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च वायुस्तस्मै वै नमो नमः॥६॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च सूर्यस्तस्मै वै नमो नमः॥७॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च सोमस्तस्मै वै नमो नमः॥८॥ यो वै रुद्रः स भगवान्ये चाष्टौ ग्रहास्तस्मै वै नमो नमः॥९॥ यो वै रुद्रः स भगवान्ये चाष्टौ प्रतिग्रहास्तस्मै वै नमो नमः॥१०॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च भूस्तस्मै वै नमो नमः॥११॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च भुवस्तस्मै वै नमो नमः॥१२॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥१३॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च महस्तस्मै वै नमो नमः॥१४॥ यो वै रुद्रः स भगवान्या च पृथिवी तस्मै वै नमो नमः॥१५॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्चान्तरिक्षं तस्मै वै नमो नमः॥१६॥ यो वै रुद्रः स भगवान्या च द्यौस्तस्मै वै नमो नमः॥१७॥ यो वै रुद्रः स भगवान्याश्चापस्तस्मै वै नमो नमः॥१८॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च तेजस्तस्मै वै नमो नमः॥१९॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च कालस्तस्मै वै नमो नमः॥२०॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च यमस्तस्मै वै नमो नमः॥२१॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च मृत्युस्तस्मै वै नमो नमः॥२२॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्चामृतं तस्मै वै नमो नमः॥२३॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्चाकाशं तस्मै वै नमो नमः॥२४॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च विश्वं तस्मै वै नमो नमः॥२५॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च स्थूलं तस्मै वै नमो नमः॥२६॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च सूक्ष्मं तस्मै वै नमो नमः॥२७॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च शुक्लं तस्मै वै नमो नमः॥२८॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च कृष्णं तस्मै वै नमो नमः॥२९॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च कृत्स्नं तस्मै वै नमो नमः॥३०॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च सत्यं तस्मै वै नमो नमः॥३१॥ यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च सर्वं तस्मै वै नमो नमः॥३२॥ ॥२॥

भूस्ते आदिर्मध्यं भुवस्ते स्वस्ते शीर्षं विश्वःपोऽसि ब्रह्मैकस्त्वं द्विधा त्रिधा वृद्धिस्त्वं शान्तिस्त्वं पुष्टिस्त्वं हुतमहुतं दत्तमदत्तं सर्वमसर्वं विश्वमविश्वं कृतमकृतं परमपरं परायणं च त्वम्। अपाम सोमममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान्। किं नूनमस्मान्कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतं मात्र्यस्य। सोमसूर्यपुरस्तात्सूक्ष्मः पुरुषः। सर्वं जगद्धितं वा एतदक्षरं प्राजापत्यं सौम्यं सूक्ष्मं पुरुषं ग्राह्यमग्राह्येण भावं भावेन सौम्यं सौम्येन सूक्ष्मं सूक्ष्मेण वायव्यं वायव्येन ग्रसति तस्मै महाग्रासाय वै नमो नमः। हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणाः प्रतिष्ठिताः। हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः। तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारः य ओङ्कारः स प्रणवः स सर्वव्यापी यः सर्वव्यापी सोऽनन्तः योऽनन्तस्तत्तारं यत्तारं तच्छुक्लं यच्छुक्लं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं तत्परं ब्रह्म यत्परं ब्रह्म स एकः य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः य ईशानः स भगवान्महेश्वरः।।३।।

अथ कस्मादुच्यत ओङ्कारो यस्मादुच्चार्यमाण एव प्राणानूर्ध्वमुत्क्रामयति तस्मादुच्यते ओङ्कारः। अथ कस्मादुच्यते प्रणवः यस्मादुच्चार्यमाण एव ऋग्यजुः सामाथर्वाङ्गिरसं ब्रह्म ब्राह्मणेभ्यः प्रणामयति नामयति च तस्मादुच्यते प्रणवः। अथ कस्मादुच्यते सर्वव्यापी यस्मादुच्चार्यमाण एव सर्वान्लोकान्व्याप्नोति स्नेहो यथा पललपिण्डमिव शान्तःपमोतप्रोतमनुप्राप्तो व्यतिषक्तश्च तस्मादुच्यते सर्वव्यापी। अथ कस्मादुच्यतेऽनन्तो यस्मादुच्चार्यमाण एव तिर्यगूर्ध्वमधस्ताच्चास्यान्तो नोपलभ्यते तस्मादुच्यतेऽनन्तः। अथ कस्मादुच्यते तारं यस्मादुच्चार्यमाण एव गर्भजन्मव्याधिजरामरणसंसारमहाभयात्तारयति त्रायते च तस्मादुच्यते तारम्। अथ कस्मादुच्यते शुक्लं यस्मादुच्चार्यमाण एव क्लन्दते क्लामयति च तस्मादुच्यते शुक्लम्। अथ कस्मादुच्यते सूक्ष्मं यस्मादुच्चार्यमाण एव सूक्ष्मो भूत्वा शरीराण्यधितिष्ठति सर्वाणि चाङ्गान्यभिमृशति तस्मादुच्यते सूक्ष्मम्। अथ कस्मादुच्यते वैद्युतं यस्मादुच्चार्यमाण एव व्यक्ते महति तमसि द्योतयति तस्मादुच्यते वैद्युतम्। अथ कस्मादुच्यते परं ब्रह्म यस्मात्परमपरं परायणं च बृहद्बृहत्या बृहंयति तस्मादुच्यते परं ब्रह्म। अथ कस्मादुच्यते एकः यः सर्वान्प्राणान्सम्भक्ष्य सम्भक्षणेनाजः संसृजति विसृजति तीर्थमेके व्रजन्ति तीर्थमेके दक्षिणाः प्रत्यञ्च उदञ्च प्राञ्चोऽभिव्रजन्त्येके तेषां सर्वेषामिह सङ्गति। साकं स एको भूतश्चरति प्रजानां तस्मादुच्यत एकः। अथ कस्मादुच्यते रुद्रः यस्मादृषिभिर्नान्यैर्भक्तैर्द्रुतमस्य:पमुपलभ्यते तस्मादुच्यते रुद्रः। अथ कस्मादुच्यते ईशानः यः सर्वान्देवानीशते ईशानीभिर्जननीभिश्च शक्तिभिः। अभित्वा शूर नोनुमो दुग्धा इव धेनवः। ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुश इति तस्मादुच्यते ईशानः। अथ कस्मादुच्यते भवागन्महेश्वरः यस्माद्भक्ताञ्ज्ञानेन भजत्यनुगृ॰ति च वाचं संसृजति विसृजति च सर्वान्भावान्परित्यज्यात्मज्ञानेन योगैश्वर्येण महति महीयते तस्मादुच्यते भगवान्महेश्वरः। तदेतद्रुद्रचरितम्।।४।।

एषो ह देवः प्रदिशो नु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः। स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः। एको रुद्रो न द्वितीयाय तस्मै य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः। प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सञ्चुकोचान्तकाले संसृज्य विश्वा भुवनानि गोप्ता। यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको येनेदं सर्वं विचरति सर्वम्। तमीशानं वरदं देवमीड्यं निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति। क्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे रुद्रमेकत्वमाहुः। शाश्वतं वै पुराणमिषमूर्जेण पशवोऽनुनामयन्तं मृत्युपाशान्। तदेतेनात्मन्नेतेनार्धचतुर्थेन मात्रेण शान्तिं संसृजति पशुपाशविमोक्षणम्। या सा प्रथमा ब्रह्मदेवत्या रक्ता वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्ब्रह्मपदम्। या सा द्वितीया मात्रा विष्णुदेवत्या कृष्णा वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्वैष्णवं पदम्। या सा तृतीया मात्रा ईशानदेवत्या कपिला वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेदैशानं पदम्। या सार्धचतुर्थी मात्रा सर्वदेवतयाऽव्यक्तीभूता खं विचरति शुद्धस्फटिकसन्निभा वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेत्पदमनामयम्। तदेतदुपासीत मुनयो वाग्वदन्ति न तस्य ग्रहणमयं पन्था विहित उत्तरेण येन देवा यान्ति येन पितरो येन ऋषयः परमपरं परायणं चेति। वालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये विश्वं देवं जातःपं वरेण्यम्। तमात्मस्थं ये नु पश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिर्भवति नेतरेषाम्। यस्मिन्क्रोधं यां च तृष्णां क्षमां चाक्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे रुद्रमेकत्वमाहुः। रुद्रो हि शाश्वतेन वै पुराणेनेषमूर्जेण तपसा नियन्ता। अग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्व ँ ह वा इदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि यस्माद्व्रतमिदं पाशुपतं यद्भस्म नाङ्गानि संस्पृशेत्तस्माद्ब्रह्म तदेतत्पाशुपतं पशुपाशविमोक्षणाय।।५।।

योऽग्नौ रुद्रो योऽप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश। य इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय नमोऽस्त्वग्नये। यो रुद्रोऽग्नौ यो रुद्रोऽप्स्वन्तर्या रुद्र ओषधीर्वीरुध आविवेश। यो रुद्र इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः। यो रुद्रोऽप्सु यो रुद्र ओषधीषु यो रुद्रो वस्पतिषु येन रुद्रेण जगदूर्ध्वं धारितं पृथिवी द्विधा त्रिधा धर्ता धारिता नागा येऽन्तरिक्षे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः।

मूर्धानमस्य संसेव्याप्यथर्वा हृदयं च यत्। मस्तिष्कादूर्ध्वं प्रेरयत्यवमानोऽधिशीर्षतः। तद्वा अथर्वणः शिरो देवकोशः समुज्झितः। तत्प्राणोऽभिरक्षति शिरोऽन्तमथो मनः। न च दिवो देवजनेन गुप्ता न चान्तरिक्षाणि न च भूम इमाः। यस्मिन्निदं सर्वमोतप्रोतं तस्मादन्यन्न परं किञ्चनास्ति। न तस्मात्पूर्वं न परं तदस्ति न भूतं नोत भव्यं यदासीत्। सहस्रपादेकमूर्ध्ना व्याप्तं स एवेदमावरीवर्ति भूतम्। अक्षरात्सञ्जायते कालः कालाद्व्यापक उच्यते। व्यापको हि भगवान्रुद्रो भोगायमानो यदा शेते रुद्रस्तदा संहार्यते प्रजाः। उच्छवसिते तमो भवति तमस आपोऽप्स्वङ्गुल्या मथिते मथितं शिशिरे

शिशिरं मथ्यमानं फेनं भवति फेनादण्डं भवत्यण्डाद्ब्रह्मा भवति ब्रह्मणो वायुः वायोरोङ्कार ऊँकारात्सावित्री सावित्र्या गायत्री गायत्र्या लोका भवन्ति। अर्चयन्ति तपः सत्यं मधु क्षरन्ति यद्ध्रुवम्। एतद्धि परमं तपः आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों नम इति।।६।।

य इदमथर्वशिरो ब्राह्मणोऽधीते अश्रोत्रियः श्रोत्रियो भवति अनुपनीत उपनीतो भवति सोऽग्निपूतो भवति स वायुपूतो भवति स सूर्यपूतो भवति स सोमपूतो भवति स सत्यपूतो भवति स सर्वपूतो भवति स सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति स सर्वैर्वेदैरनुध्यातो भवति स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति तेन सर्वैः क्रतुभिरिष्टं भवति गायत्र्याः षष्टिसहस्राणि जप्तानि भवन्ति इतिहासपुराणानां रुद्राणां शतसहस्राणि जप्तानि भवन्ति। प्रणवानामयुतं जप्तं भवति। स चक्षुषः पङ्क्तिं पुनाति। आ सप्तमात्पुरुषयुगान्पुनातीत्याह भगवानथर्वशिरः सकृज्जप्त्वैव शुचिः स पूतः कर्मण्यो भवति। द्वितीयं जप्त्वा गणाधिपत्यमवाप्नोति। तृतीयं जप्त्वैवमेवानुप्रविशत्यों सत्यमों सत्यमों सत्यम्।।७।। ।। इति ।।

तत्पश्चात्रुद्र सूक्त के षोड़श मन्त्रों से भी अभिषेक अथवा पूजन किया जा सकता है।

। हरिः ऊँ । भूर्भुव स्व्र। नमस्ते रूद्र मन्न्यवऽउतोतऽइषवे नम्र। बाहुब्भ्यामुतते नम्र। १। या ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी । तया नस्तन्न्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि। २। यामिषुङ्ग्रिि शन्त हस्त्ते बिभर्ष्यर्स्तवे। शिवाङ्ग्रित्र ताङ्क्रुमा हि सी पुरुषञ्जगत्। ३। शिवेन व्वचसा त्त्वा गिरिशाच्छा व्वदामसि। यथा न सर्व्व मिज्जगदयक्ष्म सुमनाऽअसत्। ४। अद्ध्यवोचदधिवक्त्ता प्प्रथमो दैव्व्यो भिषक्। अहीँश्च सर्व्वाञ्जम्भयन्त्सर्व्वाश्च्च यातुधान्न्योधराची परासुव।५। असौ यस्ताम्म्रोऽअरुणऽउत बब्भ्रुर् सुमङ्ग्ल। ये चौन रुद्राऽअ भितो दिक्क्षुश्रिता सहस्रशोवैषाœ हेडऽईमहे।६। असौ योवसर्प्पति नीलग्ग्रीवो व्विलोहित। उतैनङ्ग्पाऽअदृ श्रन्नदृश्रन्नुदहार्य्य स दृष्ट्ट् मृडयाति न। ७। नमोस्त्तु नीलग्ग्रीवाय सहस्राक्क्षाय मीढुषे। अथो येऽअस्य सत्त्वानो हन्तेब्भ्यो करन्नम्र। ८। प्रमुञ्च धन्न्वनस्त्वमुभयोरात्क्न्योज्ज्र्याम्। याश्च्चते हस्त्तऽइषव परा ता भगवो व्वप। ९। व्विज्ज्यन्धनु कपर्द्दिनो व्विशल्ल्यो बाणवा२ँ।ऽउत। अनेश न्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्ग्धि। १०। या ते हेतिर्म्मीढुष्ट्म हस्त्ते बभूव ते धनु। तयास्म्मा न्विश्श्वत स्त्त्वमयक्ष्मया परिभुज। ११। परि ते धन्न्वनो हेतिरस्म्मान्न्वृणक्त्तु व्विश्श्वत्। अथो यऽइषुधिस्त्तवारेऽ अस्म्मन्निधेहि तम्। १२। अवतत्त्य धनुष्ट्व सहस्राक्क्ष शतेषुधे। निशीर्य्य शल्ल्या नाम्मुखा शिवो न्न सुमना भव। १३। नमस्त्तऽ आयुधायानातताय धृष्णवे। उभाब्भ्यामुत ते नमो बाहुब्भ्यान्तव धन्न्वने। १४। मा नो महान्तमुतमानोऽ अर्ब्भकम्मा नऽउक्क्षन्तमुत मा नऽउक्क्षितम्। मा नो व्वधी पितरम्मोत मातरम्मा न्न

प्रियास्त्तन्वो रुद्र रीरिष। १५। मा नस्त्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मानोऽअश्श्वे षुरीरिष। मा नो व्वीरान्न्रुदद्र भामिनो व्वधीर्हविष्म्मन्त सदमित्त्वा हवामहे। १६।

4.4-सारांश

अथर्वशीर्ष की परम्परा में गणपति अथर्वशीर्ष का विशेश महत्त्व है । प्रायः सभी मांगलिक कार्यों में गणपति पूजा के बाद प्रार्थना के रूप में इसके पाठ की परम्परा अत्यन्त आवश्यक है।यह अथर्वशीर्ष भगवान गणेश का वैदिक प्रार्थना है। इस अथर्वशीर्ष का पाठ करने वाला व्यक्ति धर्म अर्थ काम मोक्ष इन चारो प्रकार के पुरुषार्थों का प्राप्त करता है।

4.5 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
नमस्ते गणपतये	गणपति को नमस्कार है,
त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि	गणपति को नमस्कार है,
त्वमेव केवलं कर्तासि!	तुम्हीं केवल कर्ता हो,
त्वमेव केवलं धर्तासि	तुम्हीं केवल धारणकर्ता हो
त्वमेव केवलं हर्तासि	तुम्हीं केवल हरणकर्ता हो
त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रहमासि	तुम्हीं केवल समस्त विश्वरूप ब्रह्म हो
त्वं साक्षादात्मासि नित्यम	तुम्हीं साक्षत् नित्य आत्मा हो
ऋतं वच्मि	यथार्थ कहता हूँ
सत्यं वच्मि	सत्य कहता हूँ
त्वं वाड़मयः	तुम वाङ्मय हो,
त्वं चिन्मयः	तुम चिन्मय हो।
त्वमानन्दमयः	तुम आनन्दमय हो
त्वं ब्रह्मयः	तुम ब्रह्ममय हो
त्वं सच्चिदानन्दद्वितीयोऽसि	तुम सच्चिदानन्द अद्वितीय परमात्मा हो
त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि	तुम प्रत्यक्ष ब्रह्म हो
त्वं ज्ञानमयः	तुम ज्ञानमय हो

विज्ञानमयोऽसि तुम विज्ञानमय हो

4.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न -उत्तर

1-प्रश्न-श्रीसङ्कष्टनाशनगणेशस्तो में कितने मन्त्र है?

उत्तर- श्रीसङ्कष्टनाशनगणेशस्तो में आठ मन्त्र है

2-प्रश्न-श्रीगणपत्यथर्वशीर्ष कितने मन्त्र है?

उत्तर- श्रीगणपत्यथर्वशीर्ष चौदह मन्त्र है

3-प्रश्न- गणपतिदेव क्या है?

उत्तर- गणपतिदेव एकदन्त और चतुर्बाहु हैं।

4-प्रश्न- श्रीगणपत्यथर्वशीर्षका पाठ करने से क्या होता है?

उत्तर- श्रीगणपत्यथर्वशीर्षका पाठ करने से धर्म,अर्थ, काम तथा मोक्ष-इन चारों पुरूषार्थों की प्राप्ती हाती है।

5-प्रश्न- श्रीगणपत्यथर्वशीर्षका जो चतुर्थी तिथिमें उपवासकर जप करता है, वह क्या होजाता है

उत्तर-विद्यावान्(अध्यात्मविद्याविशिष्ट)हो जाता है।

6.प्रश्न- जो आठ ब्राह्मणों को इस उपनिषद् का सम्यक् ग्रहण करा देता है,वह किसके समान हो जाता है?

उत्तर-जो आठ ब्राह्मणों को इस उपनिषद् का सम्यक् ग्रहण करा देता है, वह सूर्यके समान तेजःसम्पन्न हो जाता है।सूर्यग्रहण के समय महा नदी में अथवा प्रतिमाके निकट इस उपनिषद्का जप करके साधक सिद्धमन्त्र हो जाता है। सम्पूर्ण महाविघ्नोंसे मुक्त हो जाता है।महापापोंसे मुक्त हो जाता है। महादोषोंसे मुक्त हो जाता है। वह सर्वविद् हो जाता है इस प्रकार यह ब्रह्मविद्या है। इति एवं धर्म,अर्थ, काम तथा मोक्ष-इन चारों पुरूषार्थों को प्राप्त करताहै।

7.प्रश्न- पुरुषार्थ कितने प्रकार का होता है?

उत्तर- धर्म,अर्थ, काम तथा मोक्ष ये चार प्रकार का पुरुषार्थ होता है

4.7-सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

1-पुस्तक का नाम-दुर्गाचन पूजापद्धति

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाषक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

2-पुस्तक का नाम-सर्वदेव पूजापद्धति

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाषक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी
3. धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक - डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशकः- उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।
4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
लेखकः- पं. बिहारी लाल मिश्र,
प्रकाशकः- गीताप्रेस, गोरखपुर।
5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा
संकलन ग्रन्थ
प्रकाशकः- मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।
6 कर्मठगुरुः
लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिश शोध संस्थान, जयपुर।
9 विवाह संस्कार
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर

4.8-उपयोगी पुस्तकें

1-पुस्तक का नाम-दुर्गाचनपद्धति
लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1-प्रश्न- स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः स्वस्ति नस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु। ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः? इस मन्त्र का अर्थ लिखे-

उत्तर- हे देवगण ! हम भगवान का पुजन आरधना करते हुए कानो से कल्याणमय वचन सुनें। नेत्रों से कल्याण ही देखें। सुदृण अंगो एवं शरीर से भगवान की स्तुति करते हुए हम लोग जो आयु आराध्य देव परमात्मा के काम आ सके उसका उपभोग करें। सब ओर फैले हुए सुयश वाले इन्द्र हमारे लिये कल्याण का पोषण करें। सम्पूर्ण विश्व का ज्ञान रखने वाले पूषा हमारे लिये कल्याण का पोयाण करें। अरिष्टों को मिटाने के लिये चक्रसदृश शक्तिशाली गरुडदेव हमारे लिये कल्याण का पोषण करें। तथा बुद्धि के स्वामी बृहस्पति भी हमारे लिये कल्याण की पुष्टि करें। परमात्मा हमारे लिये त्रिविध ताप की शान्ति हो।

2-प्रश्न- श्री सङ्कष्टनाशन गणेश स्तोत्र में कितने मन्त्र है उसका वर्णन करे

उत्तर-प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम्! भक्तवासं स्मरेन्नियमायुष्कामार्थसिद्धये!!1

प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्! तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम्!!2

लम्बोदरं पंचमं च षष्ठं विकटमेव च! सप्तमं विघ्नराजेन्द्रं धूम्रवर्णं तथाष्टमम्!!3

नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम्! एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम्!!4

द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः! न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं परम्!!5

विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम्! पुत्रार्थी लभते पुत्रान् मोक्षार्थी लभते गतिम्!!6

जपेद् गणपतिस्तोतं षड्भिर्मासैः फलं लभेत्! संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः!!7

अष्टभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च लिखित्वा यःसमर्पयेत्! तस्य विद्या भवेत् सर्वा गणेशस्य प्रसादतः!!8

प्रश्न-एतदथर्वशिरो योऽधीते सब्रह्मभूयाय कल्पते! स सर्वघ्नैर्न बाध्यते! स सर्वतः सुखमेधते! स पंचमहापातकोपपातकात् प्रमुच्यते! सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति! प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति! सायं प्रातः प्रयुंजानोडपपपो भवति! धर्मार्थकाममोक्षं च विन्दति! इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम्! यो यदि मोहाद्यास्यति स पापीयान् भवति! सहस्त्रावर्तनाद्यं यं काममधीते तं तमनेन साधयेत्। इस मन्त्र का अर्थ लिखिये-

उत्तर-इस अथर्वशीर्ष का जो पाठ करता है, वह ब्रह्मीभूत होता है।, वह किसी प्रकार के विघ्नों से बाधित नहीं होता, वह सर्वतोभावेन सुखी होता है,वह पंच महापापों से मुक्त हो जाता है। सायंकाल इसका पाठ करने वाला दिनमें किये हुए पापोंका नाश करता है, प्रातःकाल पाठ करनेवाला रात्रिमें किये हुए पापों का नाश करता है। सायं और प्रातःकाल पाठ करनेवाला निष्पाप हो जाता

है।(सदा)सर्वत्र पाठ करने वाला सभी विघ्नों से मुक्त हो जाता है एवं धर्म,अर्थ, काम तथा मोक्ष-इन चारों पुरूषार्थों को प्राप्त करता है। यह अथर्वशीर्ष उसको नहीं देना चाहिये,जो शिष्य न हो। जो मोहवश अशिष्यको उपदेश देगा, वह महापापी होगा। इसकी एक हजार आवृत्ति करनेसे उपासक जो कामना करेगा, इसके द्वारा उसे सिद्ध कर लेगा।

खण्ड - 2

कलश स्थापन एवं पूजन

इकाई – 1 कलशादि स्वरूप विवेचन

इकाई की रूप रेखा

1.1 - प्रस्तावना

1.2 - उद्देश्य

1.3- कलशादिस्वरूप विवेचन

1.3.1 कलश प्रकार एवं परिमाण

1.3.2 कलश पर नारियल रखने की विधि

1.4- सारांश

1.5 - शब्दावली

1.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न- उतर

1.7- सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 -उपयोगी पुस्तके

1.9- निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई से पूर्व की इकाई के प्रथमखण्ड में आपको पूजन प्रयोजन, महत्त्व तथा पूजन विधि (प्रकार) का अध्ययन कराया गया, साथ ही स्वस्तिवाचन एवं संकल्प के साथ श्री गणेशाम्बिका का पूजन तथा स्तोत्रपाठ की विधि भी बतायी गई, जो प्रत्येक पूजन के प्रारम्भ में अनिवार्य रूप से आचार्यों द्वारा सम्पन्न करायी जाती है।

प्रस्तुत इस खण्ड में कलश पूजन के प्रयोजन एवं महत्त्व का आप अध्ययन करेंगे जो गणेश पूजन का अनिवार्य अंग है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप कलश पूजन का महत्त्व एवं प्रकार के विषय मे अच्छी जानकारी प्राप्त कर लेंगे। इसके साथ ही पुण्याहवाचन क्यों? तथा कैसे सम्पन्न होता है ? इस विधि को भी अगली इकाई में अच्छी तरह आप जानेंगे। अन्त में अभिषेक की प्रक्रिया क्या है? तथा कैसे सम्पन्न होगा? इन सभी बातों को आप अच्छी तरह समझ जायेंगे तथा वर्तमान समाज के लिए धार्मिक दिषा प्रेरक के रूप में आप अत्यन्त उपकारी सिद्ध होंगे।

1.3 कलशादिस्वरूपविवेचन

मुख्य खण्ड -1

भारतीय संस्कृति में ‘मंगल कलश’ का सर्वोच्च स्थान है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सभी धार्मिक कार्यों का शुभारम्भ मंगलकलश स्थापन से ही होता है। ‘आप देखते हैं कि छोटे अनुष्ठानों से लेकर बड़े बड़े यज्ञों में भी सबसे पहले मंगलकलश यात्रा (जलयात्रा) निकलती है, जिसमें सौभाग्यसम्पन्न महिलाएँ तथा कन्यायें सम्मिलित होकर मंगलकलश को अपने सिर पर रखकर मंगलगीत गाते हुए मगलवाद्यों के साथ सोल्लास किसी नदी के तटपर जाती हैं तथा वहाँ आचार्यों के द्वारा वरुण पूजन (जलपूजन) सम्पन्न कराया जाता है जिसके बाद उस पवित्र जल से कलश को भरकर (पूर्णकर) उसे आम्रपल्लव (आम्र वृक्ष का पत्ता) आदि से सुषोभित कर यज्ञस्थल पर महिलाएँ लाती हैं। इसके बाद ही यज्ञ का शुभारम्भ होता है। यही नहीं आप देखते होंगे कि बड़े बड़े मन्दिरों के ऊपर भी मंगल कलश (धातु निर्मित) स्थापित रहते हैं। आपके मन में यह जिज्ञासा जरुर होगी कि

वास्तव में इसका महत्त्व इतना क्यों है? इसका ऐतिहासिक स्वरूप क्या है? आदि आदि। इसी बात को सरलरूप से बताने के लिए यह छोटा सा प्रयास किया जा रहा है जो कि अत्यन्त आवश्यक है।

सर्वप्रथम आप यह जानते हैं कि कलश का अर्थ घट (घड़ा) होता है। फिर जिज्ञासा होगी कि इसे कलश क्यों कहते हैं, तो आइये हम बताते हैं-

कलश शब्द का अर्थ करते हुए महर्षि यास्क ने कहा है-

'कलश: कस्मात् ? कला अस्मिन् शेरते इति' अर्थात् देवताओं की कलायें (दिव्य तत्त्व या दिव्य अंश) जिसमें निवास करें वही कलश है। इसका तात्पर्य यह है कि देवताओं के दिव्य अंश को मन्त्र पढकर हम इस कलश में आवाहन करते हैं तथा वे तत्त्व इस कलश में अनुष्ठान पूर्ण होने तक सुरक्षित रहते हैं जिनका दर्शन हमें दिव्य जल के रूप में होता है। इसीलिए कलशपूजन के समय - ''यावत् कर्म समाप्तिः स्यात् तावत्त्वं सुस्थिरो भव''' ऐसा कहते हैं। अस्तु !

इस प्रकार यह सिद्ध हुआ कि देवताओं की दिव्य कलाओं का जिसमें आवाहन किया जाय तथा अनुष्ठानपूर्ण होने तक जिसमें उन दिव्यतत्त्वों को सुरक्षित रखा जाय उसी का नाम कलश है। संभवतः इसीलिए कलशपूजन के क्रम में यह प्रसिद्ध श्लोक भी पढ़ा जाता है।

''कला कला हि देवानां दानवानां कलाः कलाः
संगृह्य निर्मितो यस्मात् कलशस्तेन कथ्यते।''

अब हम आपसे इसके ऐतिहासिक स्वरूप की भी कुछ चर्चा संक्षेप में करेंगे जो यहाँ अनिवार्य है जिसे शायद आप जानते भी होंगे।

पौराणिक दृष्टि से इस कलश का प्रादुर्भाव समुद्र से होता है क्योंकि जब अमृत प्राप्ति के लिए समुद्र-मन्थन हो रहा था, तब उसमें से 14 रत्न निकले जिसमें स्वयं भगवान् धन्वन्तरि अमृत से भरे हुए कलश को लेकर प्रकट हुए। ये चौदह रत्न निम्नलिखित हैं -

1. लक्ष्मी,
2. मणि,
3. रम्भा,
4. वारुणी (मदिरा),
5. अमिय (अमृत),
6. शंख,
7. गजराज (ऐरावत हाथी),
8. कल्पद्रुम

9. चन्द्रमा

10. कामधेनु,

11. धन,

12. धन्वन्तरि (वैद्य),

13. विष,

14. उच्चैःश्रवा (घोड़ा)।

इसे याद रखने के लिए एक हिन्दी का प्रसिद्ध दोहा है जिसे मैं आपको बताने जा रहा हूँ।

श्रीमणिरम्भावारुणी अमियषंखगजराज।

कल्पद्रुमशशिधेनुधन धन्वन्तरिविषवाजि ।।

यह पूरा प्रसंग श्रीमद्भागवत के अष्टम-स्कन्ध में वर्णित है। प्रसंगवश इसे मैने बताया। इसे विषयान्तर न समझें। इसी का संकेत कलषपूजन के समय वरुण-प्रार्थना के रूप में किया गया है।

देव दानव संवादे मथ्यमाने महोदधौ।

उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्।।

इसके आगे के श्लोकों की चर्चा प्रसंग आने पर हम आपसे करेंगे।

यह कलश उसी समुद्रमन्थन का प्रतीक आज भी है। इसमें भरा हुआ जल ही अमृत है। जटाओं से युक्त ऊँचा नारियल ही मानो मन्दराचल है। कलश की ग्रीवा में लपेटे गये रक्षासूत्र ही वासुकि है। मन्थन करने वाले यजमान एवं पुरोहित हैं।

यदि इस कलश को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाय तो इस पृथिवी को ही कलश के रूप में स्थापित किया जाता है। चूँकि पृथिवी एक कलश की भाँति है जो जल को सम्भालकर लगातार वृत्ताकार में घूम रही है।

दूसरी बात यह है कि ब्रह्मा द्वारा निर्मित जगत् की पहली सृष्टि जल है (अप एव ससर्जादौ) जिसके देवता वरुण है। इसलिए भी आदि सृष्टि के प्रतीक के रूप में हम कलश स्थापन करते हैं।

यही नहीं और भी देखें, किसी भी अनुष्ठान के षुभारम्भ में हम आचमन जल से ही करते हैं, ऐसा क्यों? इसका समाधान देते हुए षतपथब्राह्मण ग्रन्थ में कहा गया है कि जल पवित्रतम होता है तथा उपासक या अनुष्ठान करने वाला व्यक्ति (अमेध्य) अपवित्र होता है क्योंकि वह स्वभावतः मिथ्या (झूठ) बोलता रहता है। अतः इस जल के आचमन से वह (उपासक) पवित्र हो जाता है, यही रहस्य आचमन का है। जिसका मूल-वचन भी प्रमाण के रूप में आपके सामने रखा जा रहा है। 'तद्यदप उपष्पृषति - अमेध्यो वै पुरुषो यदनृतं वदति तेन पूतिरन्तरतः। मेध्या वा आपः। मेध्यो भूत्वा

व्रतमुपायानीति। पवित्रं वा आपः। पवित्रपूतो व्रतमुपायानीति तस्माद्वा अप उपस्पृषति।

इसका प्रसंग भी संक्षेप में आपको बताया जा रहा है - यह एक वैदिक यज्ञ है जिसका नाम दर्शपूर्णमास है। इसे करने के लिए उद्यत यजमान आहवनीय एवं गार्हपत्य अग्नि के बीच (मध्य) में पूर्वाभिमुख खड़े होकर व्रतग्रहण के लिए जल से आचमन करता है। तथा व्रत करने के लिये संकल्प लेता है। यही आचमन का प्रयोजन बताया गया है। अर्थात् जल अत्यन्त पवित्र होता है, मनुष्य उसे अनुष्ठानकाल में पीकर भीतर एवं बाहर से पवित्र होता है।

अतः यहाँ भी कलषस्थित जल परम पवित्र है, क्योंकि इसमें सभी वेदों, नदियों तथा पवित्र तीर्थों का आवाहन होता है, जिसे कलशपूजन विधि के प्रसंग में हम आपको आगे बतायेंगे।

इस प्रकार यहाँ हमें विश्वास है कि आप कलश स्थापन के महत्त्व को अच्छी तरह समझ गये होंगे। अब यहाँ कुछ बोध प्रश्न दिये जा रहे हैं आपके लिए-

बोधप्रश्न -

1. गणेश पूजन के बाद किसका पूजन होता है?
2. जल के प्रधान देवता कौन है?
3. अनुष्ठान के प्रारम्भ में व्यक्ति जल से ही आचमन क्यों करता है?
4. समुद्रमन्थन से कितने रत्न निकले थे?
5. पौराणिक दृष्टि से कलश की उत्पत्ति कहाँ से हुई है?
6. समुद्र से अमृतकलश लिए किसका प्राकट्य हुआ था?

1.3.1 कलश प्रकार एवं परिमाण

उपखण्ड - 1

अब हम इस प्रसंग में कलश के प्रकार एवं परिमाण की चर्चा आपसे करेगे। क्योंकि कलश पूजन का महत्त्व जानने के बाद यह स्वाभाविक जिज्ञासा होगी कि वह कलश किससे बना हुआ होता है। तथा कितना बड़ा या छोटा, अर्थात् उसका परिमाण कितना होगा। इसके विषय में शास्त्रों में निर्देश यह मिलता है कि-

स्वर्णं वा राजतं वापि ताम्रं मृन्मयजं तु वा।
अकालमव्रणं चैव सर्वलक्षणसंयुतम्।।

अर्थात् कलश सोने का, चाँदी का, ताम्बे का एवं मिट्टी का भी बना होता है। ये जो भेद देखा जा रहा है वह अधिकारी भेद से है। अर्थात् बड़े-बड़े राजाओं के यहाँ पूजन में सोने के कलश आते थे। इसके बाद सामर्थ्य न होने पर चाँदी के कलश का भी पूजन में प्रयोग होता है। आप वर्तमान में भी देखते होंगे कि बड़े-बड़े मठाधीषों सन्तों महात्माओं तथा श्री विद्या आदि के परम उपासको के पास आज भी हम देखते हैं कि पूजन के सभी पात्र कलश आदि चाँदी के बने रहते हैं जिनसे वे नित्य पूजन करते हैं। इसके बाद बड़े-बड़े शहरों में विभिन्न अवसरों पर जो धार्मिक यज्ञ आयोजित किये जाते हैं, उसमें हम देखते हैं कि चारों वेदियों पर रखने के लिए बड़े-बड़े ताम्र कलश आज भी उपयुक्त होते हैं। हमलोग भी प्रायः नवरात्र आदि के अवसरों पर घर में ताम्रकलश स्थापित करते हैं। फिर भी आज के मँहगाई के समय में जिनका अधिक सामर्थ्य नहीं है वे मिट्टी के बने कलश को बाजार से लाकर अपने अपने घरों में अनुष्ठान के समय धार्मिक अवसरों पर उपयोग में लाते हैं।

अब यहाँ जिज्ञासा होगी कि क्या स्वर्ण या चाँदी के बनाये गये कलशों से अधिक पुण्य होता है, तो ऐसी बात नहीं है। परमात्मा के द्वारा जिसका जैसा सामर्थ्य मिला है उसे वैसा प्रयोग करना चाहिए, पुण्य सबका समान है। हाँ यह बात जरुर है कि धन रहते हुए जो धार्मिक अनुष्ठानों में कृपणता करता है वह उससे भी अधिक दरिद्र अगले जन्म में होता है। अतः सामर्थ्य का ईमानदारी से अनुपालन ईष्वर के सामने करना चाहिए। क्योंकि जिसने आपको दिया है वह आपका सामर्थ्य अच्छी तरह जानता है।

यदि आप सामर्थ्यानुसार मिट्टी के कलश का प्रयोग करते हैं तो आगे परमात्मा स्वर्ण कलश प्रयोग तक अवष्य ही आपको सामर्थ्य देगा यह लेखक का विष्वास है। अस्तु।

अब हम कलश के प्रकार के बाद परिमाण (माप) की भी चर्चा करेंगे। जैसा कि शास्त्रों में निर्दिष्ट है-

पंचाशांगुल्य वैपुल्यमुत्सेधे षोडशांगुलम्।
द्वादशांगुलकं मूलं मुखमष्टांगुलं भवेत्।।

अर्थात् कलश 15 अंगुल बड़ा, इसकी ऊँचाई 16 अंगुल, 12 अंगुल गहरा तथा इसका मुख भाग (ऊपर का भाग) आठ अंगुल का होना चाहिए।

यहाँ एक बात और ध्यान दीजिए कि मूल श्लोक में पंचाश शब्द आया है, इसका मतलब 50 अंगुल नहीं है। इसका संस्कृत में विग्रह ''पंच च आशा च'' अर्थात् आशा का अर्थ यहाँ दिशा से है जिसकी संख्या 10 है। कुल मिलाकर 15 हुई । ये इस श्लोक का रहस्य है ।

दूसरी बात यह है कि इसके पूर्व के श्लोक में - '**अकालमव्रणं चैव सर्वलक्षण संयुतम्**' का अर्थ रह गया था, उसे हम आपको बता रहे हैं। अकाल का अर्थ, कृष्णवर्ण रहित है, कलश कृष्णवर्ण रहित हो। अर्थात् काले रंग का न हो, तथा पुराना न हो, नया कलश हो। इसकी व्युत्पत्ति भी जान लीजिए - नास्ति कालः = कृष्णवर्णः। तथा अकालं का एक अर्थ यह भी है - अल्पः कालः यस्य अर्थात् अप्राचीनः।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि पूजन का कलश काले रंग का न हो, तथा पुराना न हो। अव्रणं का अर्थ है टूटा फूटा या उसमें कही कोई विकृत चिन्ह आदि न हो। यदि टूटा रहेगा तो जल उसमें स्थिर ही नहीं रह सकता। अस्तु।

''काल का कृष्णवर्ण'' यह अर्थ मेदिनी कोश मे आया है-'कालो मृत्यो महाकाले समये यम कृष्णयोः।' इस प्रकार अकाल शब्द का अर्थ कृष्ण वर्ण रहित, ऐसा कलश हो।

अब आप कलश से सम्बन्धित विशेष बातों को भी जान गये है जिन्हें बड़े बड़े आचार्यों को भी ज्ञात नहीं होता है, क्योकि उन्हे तो मात्र कलश पूजन कराने से अभिप्राय है शब्दार्थ में उन्हें कोई विषेश आस्था नहीं होती है। ये वाक्य केवल आपके उत्साह को बढ़ाने के लिए ही है आचार्यों की निन्दा से तात्पर्य मेरा नहीं है। अस्तु।

1.3.2 कलश पर नारियल रखने की विधि

उपखण्ड-2

यहाँ एक बात और आपको बताने जा रहा हूँ जो अत्यावष्यक है। हम प्रायः देखते हैं कि कलश के ऊपर नारियल खड़ा करके रखा जाता है। या गलत तरीके से रखा जाता है, देखिये अनुष्ठानादि में जो विधियाँ हमें षास्त्रों मे बताई गई है उनका ही अनुपालन हमें करना चाहिए। अपने मन से या सुन्दर लगने की भावना से नहीं। इसमें षास्त्र, भगवान् की आज्ञा स्वरूप होते है। अतः षास्त्रानुमोदित ही कार्य करना चाहिए। इसी बात को श्रीमद्भगवद्गीता में भी भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं कहते हैं-

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्।।
तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।

ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्मकर्तुमिहार्हसि।।

अर्थात् जो शास्त्रोक्त विधि को छोड़कर मनमाना बर्ताव (व्यवहार) करता है, उसे न सिद्धि मिलती है न सुख मिलता है और न ही उत्तम गति मिलती है। इसलिए कर्तव्य अकर्तव्य का निर्णय करने के लिए तुम्हें शास्त्रों को ही प्रमाण मानना चाहिए। एवं शास्त्रों में जो कुछ कहा है उसको समझकर तदनुसार इस लोक में कर्म करना चाहिए।

यह श्लोक प्रसंगवश मैंने आपको बताया। संभवतः आप इसे जानते भी होगे। अब हम आपको कलश के ऊपर नारियल रखने की विधि को बताते हैं। शास्त्रों में कहा गया है कि-

अधोमुखं शत्रुविवर्धनाय
ऊर्ध्वस्य वक्त्रं बहुरोगवृध्यै।
प्राचीमुखं वित्तविनाशनाय
तस्माच्छुभं सम्मुखनारिकेलम्।।

अर्थात् कलश पर नारियल को अधोमुख (नीचे की ओर मुख) रखने से अपने षत्रुओं की वृद्धि होती है। ऊपर की ओर मुख करके रखने से घर में रोग की वृद्धि होती है। पूर्व की ओर मुख करके रखने से धन का नाश होता है। इसलिए हमें अनुष्ठान करते या कराते समय कलश पर नारियल को अपने सम्मुख (सामने) रखना चाहिए। अर्थात् जटावाला भाग अपने सामने करने लिटाकर रखना चाहिए। दूसरी बात यह भी है कि सूखा नारियल कभी भी कलश पर नहीं रखना चाहिए। जलदार ही रखना चाहिए। सूखे नारियल का उपयोग पूर्णाहुति में किया जाता है।

आशा है, आप अब कलश के विषय मे बहुत कुछ जान गये होगे। अब आपके सामने इस खण्ड से कुछ बोध प्रष्न रखे जायेंगे जो निम्नलिखित है।

बोधात्मक प्रश्न - 2

1. मृन्मयजं शब्द का क्या अर्थ है?
2. कलश का मुख भाग कितने अंगुल का होना चाहिए?
3. पूजन में किस वर्ण का कलश नहीं रखना चाहिए?
4. उत्सेध शब्द का क्या अर्थ होगा?
5. कलश पर अधोमुख नारियल रखने से क्या होता है?
6. सूखे नारियल का उपयोग कहाँ होता है?

1.4 सारांश

प्रस्तुत ''**कलशादि-स्वरूप-विवेचन**'' नामक इकाई में कलश का महत्त्व उसका ऐतिहासिक तथा आध्यात्मिक स्वरूप प्रमाण सहित आपको बताया गया। कलश की उत्पत्ति के पौराणिक स्वरूप पर दृष्टिपात करते हुए वैज्ञानिक दृष्टि से भी कलश का स्वरूप बताया गया। प्रसंगतः जल के वैशिष्ट्य को बताते हुए आचमन क्यों किया जाता है, यह प्रसंग, शतपथ-ब्राह्मण के माध्यम से आपके सामने रखा गया। इसके साथ ही कलश के प्रकार एवं परिमाण की भी चर्चा की गई तथा मुख्य बात कलश पर नारियल, शास्त्रीय विधि से कैसे रखा जाता है, वैसे न रखने से क्या दुष्परिणाम होता है आदि बातों की चर्चा आपसे की गई।

1.5 शब्दावली

ग्रीवा - गर्दन

वरुण - जल के प्रधान देवता

अमेध्य - अपवित्र

अनृत - झूठ

अप - जल

राजतम् - चाँदी का (कलश)

उत्सेध - ऊँचाई

प्राचीमुख - पूर्व दिशा की ओर मुख

वक्त्रं - मुख

ज्ञात्वा - जानकर

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. गणेश पूजन के बाद कलश पूजन होता है।
2. जल के प्रधान देवता वरुण हैं।
3. जल अत्यन्त पवित्र होता है, पुरुश झूठ बोलने के कारण अपवित्र होता है, इसीलिए अनृत से (मनुष्यभाव से देवभाव को प्राप्त करना) सत्य की ओर आचमन करने से प्रवृत्त होता है।
4. समुद्रमंथन से चौदह रत्न निकले।
5. पौराणिक दृष्टि से कलश की उत्पत्ति समुद्र से हुई है

6. समुद्र से अमृत कलश लिए श्रीधन्वन्तरि जी (वैद्य) प्रकट हुए।

बोधप्रश्न 2 के उत्तर

1. मृन्मयजं का अर्थ मिट्टी से बना हुआ।
2. कलश का मुख आठ अंगुल का होना चाहिए।
3. पूजन में काले वर्ण का कलश नहीं होना चाहिए।
4. उत्सेध का अर्थ ऊँचाई है।
5. नीचे की ओर कलश का मुख रखने से अपने षत्रुओं की वृद्धि होती है।
6. सूखे नारियल का उपयोग पूर्णाहुति में होता है।

1.7 सन्दर्भग्रन्थसूची

1. निरुक्त - आचार्य यास्क
2. भगवन्तभास्कर - श्रीषंकरभट्ट
3. अमरकोश - श्रीअमरसिंह
4. ग्रहषान्ति - श्रीवायुनन्दनमिश्र
5. संस्कारदीपक - श्रीनित्यानन्दपर्वतीय

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

क. पौराणिक दृष्टि से कलश के उत्पत्ति का निरूपण करें।

ख. कलश के परिमाण एवं नारियल स्थापन की विधि, शास्त्रीय दृष्टि से विवेचित करें।

इकाई – 2 कलश स्थापन विधि

इकाई की रुप रेखा

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई से पूर्व की इकाई में कलश पूजन क्यों किया जाता है तथा इसका आध्यात्मिक एवं वर्तमान सन्दर्भ में वैज्ञानिक महत्त्व क्या है ? इन बातों को आप अच्छी तरह समझ गये होंगे । इसके साथ ही इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि क्या है ? कलश का परिमाण एवं कलश पर नारियल स्थापन की विधि क्या है ? यह भी आप जान गये होगे।

आप देखें । वर्तमान युग विज्ञापन का युग है। किसी भी वस्तु के महत्त्व ज्ञान के अथवा आवश्यकता के बिना वह वस्तु लोगों द्वारा ग्राह्य नहीं होती है। इसीलिए इसके पूर्व खण्ड में कलश के महत्त्व को सविधि बताया गया।

इसके बाद आपको कलश पूजन की विधि को हम बताने जा रहे है । क्योंकि कर्मकाण्ड प्रयोग प्रधान है। केवल सैद्धान्तिक ज्ञान से काम नहीं चलता अपितु उसके प्रयोग का भी ज्ञान आवष्यक है। इसीलिए आपको कलश पूजन की शास्त्रीय विधि को बताने जा रहा हूँ।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप कहीं भी, कभी भी कलश पूजन शास्त्रीय विधि से करा सकते है।

एक बात आप अवश्य यहाँ ध्यान दें कि कर्मकाण्ड को बढ़ाया भी जा सकता है तथा कम भी किया जा सकता है । अब आप पूछेंगे कि कम करने पर विधि का लोप होने का डर है जिससे पाप का भागी बनना पडेगा परन्तु ऐसी बात नहीं है। एक ही देवता के 50 स्तोत्र हैं, क्या 50 स्तोत्र पढेंगे तभी भगवान प्रसन्न होंगे? ऐसी बात नहीं है। देखें! आचार दो प्रकार के होते है, एक शास्त्रीय आचार तथा दूसरा लोकाचार । लोकाचार स्थान भिन्न भिन्न होने पर परिवर्तन हो सकता है परन्तु ‘शास्त्रीय आचार सार्वदेशिक तथा सार्वकालिक होता है, इसमें कोई परिवर्तन नही होता है। जैसे पूरे भारत में ‘‘गणानां त्वा’’ मन्त्र से ही श्रीगणेश जी का आवाहन होता है। षोडशोपचार की विधि सब जगह एक ही तरह से सम्पन्न होती है। किसी भी देश में या स्थान में आवाहन के बाद ही आसन एवं पाद्य आदि दिये जाते हैं न कि पहले प्रदक्षिणा एवं वस्त्र, स्नान आदि विलोम क्रम से।

अतः आपको यहाँ शास्त्रानुसार की ही विधि बतलायी जा रही है। यह सर्वत्र एक ही समान होगी। हाँ! जहाँ पर लोकाचार, विवाह आदि उत्सवों में देखा जाता है वहाँ वह आवष्यक होगा, लेकिन कोई कहे कि संकल्प या वैदिक स्वस्तिवाचन मन्त्रो में कोई परिवर्तन हो, नये मंत्र हो ऐसी बात बिलकुल ध्यान से हटा दीजिए। यह मेरा निवेदन है। इसे आप भी जानते हैं। यहाँ जितनी विधि

कलश पूजन में आवष्यक है उन्हीं शास्त्रीय प्रयोगों को बताया जायेगा। अर्थात् अपेक्षित अंश ही यहाँ ग्राह्य है। अनपेक्षित नही। जैसा कि आचार्य मल्लिनाथ ने अपनी व्याख्या के लिए कहा है - ''नामूलं लिख्यते किंचित् नानपेक्षितमुच्यते''।

2.3 कलश स्थापन विधि

सबसे पहले कलश को जल से पवित्र करना चाहिए। इसके बाद यदि सर्वतोभद्र-मण्डल या किसी भी मंडल के ऊपर जो छोटी चौकी पर बने हों उस पर यदि कलश स्थापन करना हो तो मण्डल के बीच में पर्याप्त चावल रखकर जिससे कलश स्थिर रहे गिरे, न इस प्रकार रखना चाहिए। जो बड़े बड़े यागों मे आप देखते भी है। यदि पृथ्वी पर कलश स्थापन करना हो तो कलश के नीचे पर्याप्त मिट्टी रखकर उस पर कुंकुम या रोली आदि से अष्टदल कमल बनाकर, कलश मे स्वस्ति का चिन्ह बनाकर उसमे कलाबा (रक्षासूत्र) तीन बार लपेटकर बाँध देना चाहिए। कलश के ऊपर भी रखने के लिए एक कसोरे मे चावल भरकर उस पर अष्टदल या स्वस्ति का चिन्ह बनाकर नारियल में लाल रंग का वस्त्र लपेटकर पहले से ही तैयार रखना चाहिए।

दूसरी बात यह है कि पूजा की तैयारी पूजन से पहले ही कर लेनी चाहिए। सभी आवश्यक उपचारों को पहले से ही व्यवस्थित तरीके से रखकर तब पूजन प्रारम्भ करना या कराना चाहिये । इससे पूजन में व्यग्रता नहीं होती है। शान्ति बनी रहती है । अस्तु

यजमान कलश के नीचे की भूमि का स्पर्श करे इस मन्त्र को पढ़ते हुए-

ॐ महीद्यौः पृथिवी च नऽइमं यज्ञ मिमिक्षताम्। पिपृतान्नो भरीमभिः।

एक बात अवश्य यहाँ ध्यान दें कि सम्पूर्ण मन्त्र पढ़ने के बाद ही क्रिया करनी चाहिए । क्योंकि मन्त्र द्रव्य एवं देवता के स्मारक होते हैं, जैसा कि लिखा है - ''प्रयोग समवेतार्थस्मारकाः मन्त्रा'' अतः मन्त्र के प्रारंभ में या आधे में क्रिया न करें मन्त्र पूरा हो जाने के बाद ही क्रिया करनी चाहिए। यही शास्त्रीय विधि है। इसके बाद -

ॐ ओषधयः समवदन्त सोमेन सह राज्ञा।
यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तं राजन्पारयामसि।।

उपरोक्त इस मन्त्र को पढ़कर कलश के नीचे की मिट्टी पर सप्तधान्य रखें । अब आप पूछेगे कि सप्तधान्य क्या होता है ? मैं बताता हूँ-

(सप्तधान्य)

(यव गोधूम धान्यानि तिलाः कंगुस्तथैव च।
श्यामकाश्चणकाष्चैव सप्तधान्यानि संविदुः।।)

अर्थात् यव, गेहूँ, धान, तिल, कंगु, (एक प्रकार का धान्य विशेष), सावाँ (धान्य विशेष), चना ये सप्त धान्य होते है। इन्हें कलश के नीचे रखना चाहिए। उपलब्ध न होने पर उस द्रव्य के अभाव में अक्षत (चावल) छोड़ना चाहिए।

नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर सप्तधान्य के ऊपर कलश रखें।

ऊँ आजिघ्र कलशं मह्यात्वाव्विशन्त्विन्दवः।

पुनरुर्जानिवर्तस्वसानः सहस्रन्धुक्ष्वोरुधारापयस्वती पुनर्म्माविषताद्रयिः।''

इसके बाद नीचे-लिखे मन्त्र को पढ़कर कलश में जल डाले। यहाँ जल डालने से अभिप्राय कलश को जल से भरने से है।

ऊँ वरुणस्योत्तम्भ नमसिव्वरुणस्य स्कम्भसर्ज्जनीस्थो व्वरुणस्यऽऋतसदन्यसि व्वरुणस्यऽऋत- सदनमसिव्वरुणस्यऽऋतसदनमासीद।।

इसके बाद नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर कलश मे चन्दन छोड़ें-

ऊँ त्वांगन्धर्व्वाऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः।

त्वामोषधे सोमोराजाव्विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत।।

इसके बाद नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर सर्वौषधी कलश के भीतर छोड़े-

ऊँ याऽओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगम्पुरा।

मनैनुबभ्रूणामह षतन्धामानि सप्त च।।

यहाँ सर्वौषधी किसे कहते हैं आपको बताया जा रहा है-

(मुरा माँसी वचा कुष्ठं शैलेयं रजनी द्वयम्।
सठी चम्पकमुस्ता च सर्वौषधि गणः स्मृतः।।)

इसके बाद कलश में हरी दूर्वा छोड़ें-

ऊँ काण्डात् काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।

एवा नो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण षतेन च।।

दूर्वा (दूब) छोड़ने के बाद पंचपल्लव को कलश में नीचे लिखे मत्र से छोड़ें-

ऊँ अश्वत्थे निषदनम्पर्ण्णेवोव्वसतिष्कृता।

गोभाजऽइत्किलासथयत्सनवथपूरुषम्।।

पंचपल्लव में वट, गूलर, पीपल, आम तथा पाकड के पल्लव (पत्ते) लिए जाते है। जैसा कि लिखा

है-

''न्यग्रोधोदुम्बरोऽष्वत्थष्चूतः पलक्षस्तथैव च''।

पंचपल्लव छोड़ने के बाद कलश में सप्तमृत्तिका निम्न मंत्र से छोड़े-

ऊँ स्योना पृथिवि नो भवान्नृक्षरा निवेषनी यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः।

सात जगह की मिट्टी को सप्तमृत्तिका कहते है। जैसे-

(अश्वस्थानाद्गजस्थानादवल्मीकात्संगमाध्रदात्

राजद्वाराच्च गोष्ठाच्च मृदऽआनीय निःक्षिपेत्।।)

अर्थात् घोड़े के स्थान की, हाथी के, स्थान की, दीमक, संगम, तालाब राजद्वार तथा गोशाले की मिट्टी को लाकर कलश में छोड़ना चाहिए।

सप्तमृत्तिका के बाद पूगीफल (सोपाड़ी) कलश में नीचे लिखे मत्र से छोड़ें-

ऊँ याः फलिनीर्य्याऽअफलाऽपुष्पायाष्चपुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानोमुंचत्व हसः।।

इसके बाद नीचे लिखे मंत्र को पढ़कर पंचरत्न कलश में छोड़ दे-

ऊँ परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत।

दधद्रत्नानि दाषुषे।।

पंचरत्नों के नाम निम्नलिखित है-

(कनकं कुलिषं भुक्ता पद्मरागं च नीलकम् ।

एतानि पंचरत्नानि सर्वकार्येषु योजयेत् ।।)

पंचरत्न के बाद सुवर्ण या चाँदी का सिक्का कलश में नीचे के मंत्र से छोड़े-

ऊँ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत्।

स दाधारपृथिवीन्द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा व्विधेम।।

इसके बाद कलश के उपरि भाग में वस्त्र से लपेटकर कलावे से बाँध दें-

ऊँ सुजातो ज्योतिषासहषर्म्मव्वरुथमासदत्स्वः।

व्वासोऽग्नेव्विष्वरूपं संव्ययस्वव्विभावसो।।

इसके बाद नीचे लिखे मंत्रों से कलश पर पूर्णपात्र अर्थात् पहले से एक कसोरे या ताम्रपात्र में कलश को ढकने के लिए चावल भरकर उस पर स्वस्ति या अष्टदल बनाकर रखें, तथा नारियल को उस पर रखकर कलश पर रखें

ऊँ पूर्णादर्व्विपरापतसुपूर्णापुनरापत।

व्वस्न्नेवव्विक्रीणावहाऽइषमूर्ज्जं षतक्रतो।।

कलश पर स्वात्माभिमुख नारिकेल सहित पूर्णपात्र रखकर नीचे के मंत्र से कलश पर वरुण देवता का आवाहन करें।

ऊँ तत्त्वायामि ब्रह्मणाव्वन्दमानस्तदाषास्ते यजमानोहविर्भिः।

अहेडमानोव्वरुणेहबोध्युरुषं समानऽआयुः प्रमोषीः।।

अस्मिन् कलषे वरुणं सांगं सपरिवारं सायुधं सषक्तिकमावाहयामि। स्थापयामि। अपांपतये वरुणाय नमः। इसके बाद पंचोपचार से (गन्ध, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य) से वरुण का पूजन करके कलश में गंगादि नदियों का आवाहन करें। आवाहन करते समय, अक्षत बायें हाथ में लेकर दाहिने हाथ से दो दो दाना कलश पर छोड़ें-

कला कला हि देवानां दानवानां कलाःकलाः।
संगृह्य निर्मितो यस्मात् कलषस्तेन कथ्यते।।
कलषस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले त्वस्यस्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।
कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपा च मेदिनी।
अर्जुनी गोमती चैव चन्द्रभागा सरस्वती।।
कावेरी कृष्णवेणा च गंगा चैव महानदी।
तापी गोदावरी चैव माहेन्द्री नर्मदा तथा।।
नदाष्च विविधा जाता नद्यः सर्वास्तथापराः।
पृथिव्यां यानि तीर्थानि कलषस्थानि तानि वै।।
सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदानदाः।
आयान्तु मम षान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदोऽह्यथर्वणः।
अंगैष्च सहिताः सर्वे कलषं तु समाश्रिताः।।
अत्र गायत्री सावित्री षान्तिः पुष्टिकरी तथा।
आयान्तु मम षान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।

(इमान् श्लोकान् पठेत्। ततो यजमानः स्वहस्ते पुनरक्षतान् गृहीत्वा-)

इन श्लोको को पढ़कर नीचे लिखे मंत्र के द्वारा कलश में वरुणादि-देवताओं का तथा पृथिवी पर स्थित समस्त तीर्थों एवं पवित्र पुण्यसलिला नदियों की कलश में प्रतिष्ठा करे।

ॐ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञं समिमन्दधातु। विष्वेदेवासऽइहमादयन्तामों3 प्रतिष्ठ।।
अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमचार्यै मामहेति च कष्चन।।
''अस्मिन् कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु।
ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः।

प्राणप्रतिष्ठा के बाद कलश पर आवाहित वरुणदेवता के साथ अन्य आवाहित देवों का भी विधि एवं श्रद्धा के साथ षोडषोपचार पूजन करें।

आसन -

ॐ पुरुषऽएवेदं सर्व्वं यद्भूतं यच्च भाव्व्यम्।
उतामृतत्वस्येषानो यदन्नेनातिरोहति।।
(विचित्ररत्नखचितं दिव्यास्तरणसंयुतम्।
स्वर्णसिंहासनं चारु गृह्णीष्व सुरपूजितम्।।)
ॐ कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। (आसन देने के लिए कलश पर अक्षत पुष्प चढावें)

पाद्य -

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँष्च पूरुषः।
पादोऽस्यव्विष्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।
(सर्वतीर्थ समुद्भूतं पाद्यं गन्धादिभिर्युतम्।
जलाध्यक्ष! गृहाणेदं भगवन्! भक्तवत्सल!।)
कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। पादयोः पाद्यं समर्पयामि (पैर धोने के लिए एक आचमनी जल कलश पर छोड़ें)

अर्घ्य -

ॐ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः।
ततोव्विष्वङ्व्यक्रामत्साषनानषने ऽअभि।।
(जलाध्यक्ष! नमस्तेऽस्तु गृहाण करुणाकर!
अर्घ्यं च फलसंयुक्तं गन्धमाल्याक्षतैर्युतम्।।)

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि। (यहाँ एक छोटे से पात्र में गन्ध पुष्प अक्षत लेकर अर्घ्य प्रदान करें)

आचमन -

ऊँ ततो व्विराडजायतव्विराजोऽअधिपूरुषः।
सजातोऽअत्यरिच्यतपष्चाद्भूमिमथोपुरः।।
(जलाध्यक्ष! नमस्तुभ्यं त्रिदशैरभिवन्दितः ।
गंगोदकेन देवेश कुरुष्वाचमनं प्रभो!।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि। (एक आचमनी कलश पर जल छोड़ें)

स्नान -

तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्ज्यम्।
पशूँस्ताँष्चक्रेव्वायव्यानारण्याग्राम्याष्चये।।
(मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम्।
तदिदं कल्पितं देव! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। स्नानीयं जलं समर्पयामि। (स्नान के लिए एक आचमनी जल कलश पर छोड़ें)

पंचामृत -

पंचनद्यः सरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः।
सरस्वती तु पंचधा सोदेषे भवत्सरित्।।
(पंचामृतं मयाऽऽनीतं पयोदधि घृतं मधु।

शर्करा च समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि।

(ध्यान दें पंचामृत में गाय का दूध, गाय की दधि, गाय का घृत, षहद तथा चीनी (षर्करा) मिली हुई होती है। कभी-कभी भगवान् षिव के अभिषेक या विषेषानुष्ठानों में अलग अलग द्रव्य जैसे पहले दूध से इसके बाद दधि से इस प्रकार से देवताओं को स्नान कराया जाता है। अतः अलग-

अलग द्रव्य से भी स्नान के मंत्र आपके ज्ञानवृद्धि के लिए यहाँ बताया जा रहा है। जिसे आप अच्छी तरह अलग-अलग द्रव्यों (दूध, घी आदि) से करा सकते हैं) आप देश काल द्रव्य के अनुसार अलग-अलग द्रव्यों से एवं मिलित द्रव्यों से भी सुविधानुसार स्नान करा सकते हैं।

पयः (दूध) स्नानम् -

ॐ पयः पृथिव्यां पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः।
पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्।
(कामधेनु समुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम्।
पावनं यज्ञहेतुष्च पयः स्नानार्थमर्पितम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः पयः स्नानं समर्पयामि। पयः स्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

दधिस्नानम् -

ॐ दधिक्राब्णोऽअकारिषं जिष्णोरष्वस्यव्वाजिनः।
सुरभि नो मुखाकरत्प्रणऽआयूंषितारिषत।।
(पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्।
दध्यानीतं मया देव! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, दधिस्नानं समर्पयामि। दधिस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

घृतस्नानम् -

ॐ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृतेश्रितोघृतम्वस्य धाम।
अनुष्वधमावहमादयस्वस्वाहाकृतं वृषभव्वक्षिहव्यम्।।
(नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारकम्।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः घृतस्नानं समर्पयामि। घृतस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

मधुस्नानम् -

ॐ मधुव्वाताऽऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्न्नः सन्त्वोषधीः। मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवंरजः मधुद्यौरस्तुनः पिता। मधुमान्नोव्वनस्पतिर्मधुमाँऽस्तु सूर्य्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः।

(पुष्परेणु समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः मधुस्नानं समर्पयामि। मधुस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

शर्करास्नानम् -

ॐ अपा रसमुद्वयस सूर्य्ये सन्तं समाहितम्।
अपांरसस्ययोरसस्तं व्वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येश ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्।

(इक्षुरससमुद्भूतां शर्करां पुष्टिदां शुभाम्।
मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः षर्करास्नानं समर्पयामि। शर्करास्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

शुद्धोदकस्नानम् -

ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्तआष्विनाः श्येतः श्येताक्षोरुणस्ते रुद्राय पषुपतये कर्णायामाऽअवलिप्ता रौद्रा नभो रूपाः पार्ज्जन्याः।

(गंगा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती।
नर्मदा सिन्धु कावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

वस्त्रम् -

सुजातो ज्योतिषा सह शर्म्मव्वरुथमासदत्स्वः।
व्वासोऽअग्ने विष्वरूपं संव्ययस्वव्विभावसो।।

(शीतवातोष्णसन्त्राणं लज्जायाः रक्षणं परम्।
देहालंकरणं वस्त्रमतः षान्तिं प्रयच्छ मे।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, वस्त्रं समर्पयामि। तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

उपवस्त्रम् -

ॐ युवा सुवासा परिपीतऽआगात्सउश्रेयान्भवतिजायमानः।
तन्धीरासऽकवयऽउन्नयन्तिसाध्योमनसा देवयन्तः।।

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः उपवस्त्रार्थे मांगलिकसूत्रं (मौली) समर्पयामि। तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् -

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात् ।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुंच शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ।।
(नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेष्वर।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः उपवीतं (जनेऊ) समर्पयामि। तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

चन्दनम् -

ॐ त्वांगन्धर्व्वाऽअखनँस्तवामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः।
त्वामोषधे सोमोराजा व्विद्वान्यक्षमादमुच्यत।।
(श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः अलंकारार्थे अक्षतान् समर्पयामि।

पुष्पाणि (फूल एवं माला) -

ॐ ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः।
अष्वाऽइव सजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्ण्वः।।
(माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मयाहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः पुष्पाणि पुष्पमालां च समर्पयामि।

ॐ अहिरिव भोगैः पर्य्येतिबाहुंज्यायाहेतिम्परिबाधमानः।
हस्तघ्नो व्विष्वाव्वयुनानिव्विद्वान्पुमान्पुमां सम्परिपातु व्विष्वतः।।
(नानापरिमलैर्द्रव्यैर्निर्मितं चूर्णमुत्तमम्।
अबीरनामकं चूर्णं गन्धं चारुप्रगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

ऊँ सिन्धोरिवप्राद्ध्वनेषूघनासोव्वातप्रमियःपतयन्तियहवाः घृतस्य धाराऽअरुषोनव्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।

(सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्द्धनम्।

शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः सिन्दूरं समर्पयामि।

सुगन्धिद्रव्यम् -

ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्।।

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः सुगन्धिद्रव्यम् अनुलेपयामि। (सुगन्धिद्रव्य का अर्थ यहाँ इत्र एवं सुगन्धित तैल से है)

''नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूप-दीपौ च देयौ''

धूपम् -

ऊँ ब्राह्मणोऽस्यमुखमासीद्बाहूराजन्यः कृतः।

ऊरुतदस्ययद्वैष्यः पद्भ्यां शूद्रोऽअजायत।।

(वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।

आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।)

आवाहितदेवताभ्यो नमः। धूपमाघ्रापयामि।

दीपम् -

ऊँ चन्द्रमामनसो जातष्चक्षोः सूर्य्योऽअजायत।

श्रोत्राद्वायुष्च प्राणष्चमुखादग्निरजायत।।

(साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम्।।

भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने।

त्राहि मां निरयाद्घोराद् दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः दीपं दर्षयामि हस्तप्रक्षालनम्।

नैवेद्यम् -

ऊँ नाब्भ्याऽआसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्द्दिश: श्रोत्रात्तथालोकाँ2ऽअकल्पयन्।।

(नैवेद्यं गृह्यतां देव! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु।
इप्सितं मे वरं देहि परत्र च परां गतिम्।।
शर्करा खण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।
आहारं भक्ष्य-भोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। नैवेद्यं निवेदयामि नैवेद्यान्ते, ध्यानं, ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। प्रणायस्वाहा, अपानायस्वाहा, व्यानायस्वाहा, उदानायस्वाहा समानायस्वाहा। इति ग्रासमुद्रां प्रदर्ष्य नैवेद्यं निवेदयेत्।

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, आचमनीयं जलं मध्ये पानीयं उत्तरापोषनं च समर्पयामि।

करोद्वर्तनम् -

ऊँ अ षुना तेऽअं षुः पृच्यतां परुषापरुः।
गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽच्युतः।।
(चन्दनं मलयोद्भूतं केसरादिसमन्वितम्।
करोद्वर्तनकं देव! गृहाण परमेष्वर!।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, करोद्वर्तनार्थे गन्धानुलेपनं समर्पयामि।

(ध्यान दें! करोद्वर्तन का अर्थ दोनों हाथों के अनामिका एवं अंगुष्ठ में केसरयुक्त चन्दन लगाकर देवताओं पर छिड़कें)

ऋतुफलम् -

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि।।
(ऊँ याः फलिनीर्य्याऽअफलाऽअपुष्पायाष्च पुष्पिणीः।
बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुंचन्त्वं हसः।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, इमानि ऋतुफलानि समर्पयामि।

ताम्बूलम् -

यत्पुरुषेणहविषादेवायज्ञमतन्वत।
व्वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्मऽइध्मः षरद्धविः।।
(पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।
एलालवंगसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, मुखवासार्थे ताम्बूलपत्रं पूगीफलं एलालवंगानि च समर्पयामि।

दक्षिणा -

हिरण्गर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत्।

स दाधार पृथ्वीन्द्यामुते मांकस्मै देवाय हविषा विधेम।।

(हिरण्यगर्भ गर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।

अनन्तपुण्यफलदभतः षान्तिं प्रयच्छ मे।।)

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

प्रदक्षिणा -

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।

तानि सर्वाणि नष्यन्ति प्रदक्षिणां पदे पदे।।

प्रदक्षिणां समर्पयामि।

कर्पूरनीराजनम् (आरती) -

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।

सदावसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि।।

(कदलीगर्भसम्भूतं कपूरं तु प्रदीपितम्।

आरार्तिकमहं कुर्वे पष्य मे वरदो भव।।)

ॐ इदं हविः प्रजननम्मेऽस्तु दषवीरं सर्व्वगणं स्वस्तये

आत्मसनिप्रजासनि पषुसनिलोकसन्यभयसनि अग्निः।

प्रजां बहुलाम्मे करोत्वन्नं पयोरेतोऽअस्मासु धत्त।।

वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः कर्पूरनीराजनं समर्पयामि।

हस्तौ प्रक्षाल्य मंत्रपुष्पांजलिः -

यज्ञेन यज्ञमयजन्तदेवास्तानिधर्म्माणिप्रथमान्यासन्।

ते ह नाकम्महिमानः सचन्तयत्र पूर्वे साद्धयाः सन्ति देवाः।।

नाना सुगन्धि पुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।

पुष्पांजलिर्मया दत्तो गृहाणपरमेश्वर।।

वरुणाद्यावाहितं देवताभ्यो नमः मंत्रपुष्पांजलिं समर्पयामि।

प्रार्थना हस्ते पुष्पाणि गृहीत्वा -

देवदानव संवादे मथ्यमाने महोदधौ।

उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्यवम्।।

त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।।
षिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः।
आदित्या वसवो रुद्रा विष्वेदेवाः सपैतृकाः।।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः।
त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहं जलोद्भव।।
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा।
नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय
सुष्वेतहाराय सुमंगलाय।
सुपाषहस्ताय झषासनाय
जलाधिनाथाय नमो नमस्ते।।
पाशपाणे! नमस्तुभ्यं पद्मिनीजीवनायक।
यावत् कर्म करिष्येऽहं तावत्त्वं सुस्थिरो भव।।

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। प्रार्थनापूर्वकनमस्कारान् समर्पयामि। हस्ते जलमादाय अनेन यथालब्धोपचारपूजनाख्येन कर्मणा वरुणाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्ताम् न मम।

यहाँ एक बात आपको अवश्य ध्यान देना है कि षोडशोपचार से सविधि वरुण (कलशपूजन) पूजन की विधि बताई गई है जो अत्यन्त षुद्ध एवं शास्त्रीय है।

दूसरी बात यह है कि आपकी सुविधा के लिए वैदिक मन्त्रों के साथ साथ पौराणिक मन्त्र भी कोष्ठ में दिये गये हैं। जिनका उपयोग आप पूजन के समय कर सकते हैं। जहाँ तक वैदिक मन्त्रों का उच्चारण एवं उनका स्वरज्ञान है वह अत्यन्त कठिन है उस अवस्था में अर्थात् पूजन के समय वैदिक मंत्रोच्चारण न करके दिये गये पौराणिक मंत्रों का भी आप पाठ कर सकते हैं । पुण्य फल दोनों का समान ही होगा। अतः अपने सुविधानुसार यथाज्ञान के अनुसार पौराणिक या वैदिक मंत्रों का उच्चारण आप पूजन के समय करने में स्वतंत्र है।

तीसरी बात यह है कि कलश पूजन के क्रम में जहाँ पंचरत्न या सर्वौषधि की चर्चा की गई है वहाँ कोष्ठ में बताये गये श्लोक को पढ़ना नहीं है, ये केवल आपके जानकारी के लिए है। इतना यदि ध्यान दें तो कलशपूजन निर्विघ्नरूप से आप सर्वत्र करा सकते हैं तथा इसमें बताये गये मंत्रों का अक्षरश: प्रयोग आप अन्य पूजन में भी कर सकते हैं।

आशा है अब आप कलशपूजन की विधि अच्छी तरह समझ गये होंगे, तो क्यों न आपसे

कुछ प्रश्न किया जाय, तो लीजिए कुछ नीचे बोध प्रश्न आपके लिए दिए जा रहे हैं, जिनका उत्तर आप को देना है।

2.4 बोधात्मक प्रश्न

1. पाद्य शब्द का क्या अर्थ है?
2. पंचरत्न का प्रयोग कहाँ किया जाता है?
3. कौन सा आचार (विधि) सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक होता है?
4. अश्वत्थ शब्द का क्या अर्थ है?
5. रुद्र कितने होते हैं?
6. परिमल द्रव्य किसे कहते हैं?

2.5 सारांश

प्रस्तुत ''कलशपूजनविधि'' नामक इस इकाई में कलशस्थापन की विधि एवं उसमें छोड़े जाने वाले पदार्थों की चर्चा सप्रमाण की गई। इसके साथ ही कलश पूजन कैसे करें? एवं इसके षोडशोपचार की विधि क्या है? इसे वैदिक एवं पौराणिक मन्त्रों के साथ आपको बताई गयी। आप कलशपूजन अपनी सुविधानुसार देश काल परिस्थिति को देखते हुए पंचोपचार से भी कर सकते हैं। साथ ही वैदिक मन्त्रों के उच्चारण एवं स्वर ज्ञानाभाव के कारण पौराणिक मंत्रों से भी पूजन करा सकते हैं जिसका संकेत यथाप्रसंग किया गया है। अथवा जो विज्ञ हैं, वैदिक मन्त्रों को सस्वर पढ़ने में समर्थ हैं वे तो वैदिक मन्त्रों से ही करावें।

2.6 शब्दावली

अनपेक्षित	-	अनावश्यक
आचार	-	विधि
मांगलिक सूत्र	-	कलावा (कलाई में बांधने वाला लाल रंग का)
यज्ञोपवीत	-	जनेऊ
शुद्धोदक	-	शुद्धजल
न्यग्रोध	-	वट (वृक्ष)
प्लक्ष	-	पाकड़ का वृक्ष

चूत	-	आम का वृक्ष
औदुम्बर	-	गूलर का वृक्ष
मृत्तिका	-	मिट्टी

2.7 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

1. देवताओं के पैर धोने के लिए प्रयुक्त जल को पाद्य कहते हैं।
2. पंचरत्न का प्रयोग कलशपूजन में करते हैं।
3. शास्त्रीय आचार (विधि) सार्वदेशिक तथा सार्वकालिक होता है।
4. अश्वत्थ का अर्थ पीपल होता है।
5. रुद्र ग्यारह होते हैं।
6. अबीर गुलाल आदि को परिमल द्रव्य कहते हैं।

2.8 सन्दर्भग्रन्थसूची

ग्रन्थ	**-**	**लेखक**
अर्थसंग्रह	-	श्रीलौगाक्षिभास्कर
ग्रहषान्ति	-	श्रीवायुनन्दन मिश्र
कर्मसमुच्चय	-	पं. श्री रामजीलाल षास्त्री
संस्कारदीपक	-	महामहोपाध्याय श्री नित्यानन्दपर्वतीय

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

क. कलश स्थापन का प्रयोग लिखें।

ख. षोडशोपचार कलश पूजन कैसे किया जाता है लिखें।

इकाई – 3 पुण्याहवाचन एवं अभिषेक

इकाई की रुप रेखा

3.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में आपको कलश पूजन की शास्त्रीय विधि वैदिक एवं पौराणिक मंत्रों के साथ बताई गयी जो अत्यन्त प्रमाणिक है । आगे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि आप इसके अध्ययन के बाद कलश पूजन अच्छी तरह सम्पन्न करा सकते हैं।

इस इकाई में आपको जिज्ञासा होगी कि प्रारम्भ में स्वस्तिवाचन एवं संकल्प नहीं है लेकिन आप तो गणेश पूजन के पहले ही स्वस्तिवाचन एवं संकल्प अच्छी तरह जान चुके हैं, बार-बार स्वस्तिवाचन एवं संकल्प नहीं होता है। प्रधान संकल्प एक बार ही होता है, इसीलिए यहाँ संकल्पादि नहीं दिये गये हैं। अस्तु।

प्रस्तुत इकाई में आप पुण्याहवाचन एवं अभिषेक की विधि का अध्ययन करेंगे जो पंचांगपूजन का अंग है, तथा सभी यागों में या धार्मिक अनुष्ठानों में प्रायः आचार्यों द्वारा सम्पन्न कराया जाता है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद पुण्याहवाचन एवं अभिषेक की शास्त्रीय विधि क्या है? इसका अच्छी तरह ज्ञान आपको हो जायेगा। इसके साथ ही आपकी सुविधा के लिए महर्षि बौधायनोक्त संक्षिप्त पुण्याहवाचन का भी ज्ञान आपको कराया जायेगा जो कम समय में ही सम्पन्न होता है एवं फल दोनों का समान होता है।

3.3.1 पुण्याहवाचन

पुण्याहवाचन कलश पूजन के ठीक बाद में होता है। इसीलिए यहाँ भी कलश पूजन के ठीक बाद में पुण्याहवाचन दिया गया है, क्योंकि पूजन का शास्त्रीय क्रम इस प्रकार है-

क. गणेशाम्बिका पूजन

ख. कलश पूजन

ग. पुण्याहवाचन

घ. अभिषेक

ङ. षोडशमातृकापूजन

च. सप्तघृतमातृकापूजन

छ. आयुष्यमंत्रजप

ज. नान्दीश्राद्ध

झ. आचार्यादिवरण

खण्ड-1

ग्रहतत्त्वदीपिका ग्रन्थ में कहा गया है-

पुण्याहवाचने विप्राः युग्मा वेदविदः शुभाः।
यज्ञोपवीतिनः षस्ताः प्राङ्मुखाः स्युः पवित्रिणः।।

इस कर्म में कम से कम दो ब्राह्मण अवश्य रहते हैं। जैसा कि उपरोक्त वचन से ज्ञात होता है। इसमें ब्राह्मणों का हस्तपूजन एवं उनसे आशीर्वाद के लिए यजमान प्रार्थना करता है। पुण्याहवाचन के लिए एक ताम्बे या पीतल का कमण्डलु होना चाहिए। जिसमें टोंटी लगी हो, जल गिरने के लिए।

विधि - यजमान दोनों घुटनों को पृथिवी पर मोड़कर अर्थात् वज्रासन में बैठे, तथा दोनों हाथों को उपर करके खिले हुए कमल के समान बनाये जिसमें आचार्य तीन बार पुण्याहवाचन-कलश को उठाकर यजमान के सिर पर रखते हैं तथा मंत्रपाठ करते हैं।

''ततो यजमानः अवनिकृतजानुमण्डलः कमलमुकुलसदृश मंजलिं शिरस्याधाय दक्षिणेन पाणिना (उभाभ्यां कराभ्याम्) पूर्णकलषं स्वांजलौ धारयित्वा स्वमूर्ध्ना संयोज्य च आशिषः प्रार्थयेत्।

ऊँ दीर्घानागा नद्यो गिरयस्त्रीणिविष्णुपदानि च।
तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु।।

विप्राः - ''अस्तु दीर्घमायुः''

ऊँ त्रीणि पदाव्विचक्रमेव्विष्णुर्गोपाऽअदाब्भ्यः।
अतो धर्माणि धारयन्।।
तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु। (इति यजमानो ब्रूयात्)।

विप्राः - ''अस्तु दीर्घमायुः। इस प्रकार तीन बार इस मंत्र का पाठ एवं क्रिया करनी चाहिये ।

ततो यजमानः ब्राह्मणानां हस्ते जलं दद्यात् -

अपां मध्ये स्थिता तोयाः सर्वमप्सु प्रतिष्ठितम्।
ब्राह्मणानां करे न्यस्ताः षिवा आपो भवन्तु ते।।

''ऊँ शिवा आपः सन्तु'' इति जलं दद्यात्। ''सन्तु शिवा आपः'' इति विप्रा वदेयुः।

यजमानः -

लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मीर्वसति पुष्करे।
सा मे वसतु वै नित्यं सौमनस्यं तथाऽस्तु नः।।

‘‘सौमनस्यमस्तु’’ (इति विप्रहस्तेषु पुष्पं दद्यात्)

विप्राः - ‘‘अस्तु सौमनस्यम्’’।

यजमानः -

अक्षतं चास्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशोबलम्।

यद्यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम ।।

‘‘अक्षतंचारिष्टं चास्तु’’ (इति विप्रहस्तेषु अक्षतान् दद्यात्)

विप्राः - अस्त्वक्षतमरिष्टं च।

यजमानः - ‘‘गन्धाः पान्तु’’ इति विप्रहस्तेषु गन्धं दद्यात्।

विप्राः - सुमंगल्यं चास्तु।

यजमानः - ‘‘पुनरक्षताः पान्तु’’ इति विप्रहस्तेषु अक्षतान् दद्यात्।

विप्राः - ‘‘आयुष्यमस्तु’’

यजमानः - ‘‘पुष्पाणि पान्तु’’

विप्राः - ‘‘सौश्रियमस्तु’’

यजमानः - ‘‘सफलताम्बूलानि पान्तु’’

विप्राः - ‘‘ऐश्वर्यमस्तु’’

यजमानः - दक्षिणाः पान्तु

विप्राः - बहुधनमस्तु

यजमानः - ‘‘पुनरत्रापः पान्तु।

विप्राः - सकलाराधने स्वर्चितमस्तु

यजमानः - दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यषोविद्याविनयोवित्तं बहुपुत्रं बहुधनं चायुष्यं चास्तु। (इति वाक्येन विप्रान् प्रार्थयेत्)

विप्राः - तथास्तु।

यजमानः - यं कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते, तमहमोंकारमादिं कृत्वा यजुराशीर्वचनं बहुऋषिसंमतं भवद्भिरनुज्ञातं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये।

विप्राः - वाच्यताम्।

यजमानः - ऊँ द्रविणोदाः पिपीषति जुहोतप्रचतिष्ठत। नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत।।1।।

सवितात्वा सवानां सुवतामग्निर्गृहपतीनां सोमोव्वनस्पतीनाम् । बृहस्पतिर्व्वाचऽइन्द्रोज्ज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्योव्वरुणो धर्मपतीनाम् ।।2।।

न तद्रक्षां सि न पिषाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजं ह्येतत्। यो बिभर्ति दाक्षायणं हिरण्यं स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः। स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ।।3।।

उच्चा ते जातमन्धसो दिविसद्भूम्याददे। उग्रं षर्म्ममहिश्रवः ।।4।।

उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभिदेवाँ2इयक्षते ।5।।

व्रत-जप-नियम-तप-स्वाध्याय-क्रतु-षम-दम-दया-दान-विषिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम् । (इति विप्रान् प्रार्थयेत्)

विप्राः - समाहितमनसः स्मः ।

यजमानः - प्रसीदन्तु भवन्तः ।

विप्राः - प्रसन्नाः स्मः

यजमानः - ऊँ शान्तिरस्तु। ऊँ पुष्टिरस्तु। ऊँ तुष्टिरस्तु। ऊँ वृद्धिरस्तु। ऊँ अविघ्नमस्तु। ऊँ आयुष्यमस्तु। ऊँ आरोग्यमस्तु। ऊँ शिवमस्तु। ऊँ शिवं कर्मास्तु। ऊँ कर्मसमृद्धिरस्तु। ऊँ धर्मसमृद्धिरस्तु। ऊँ वेदसमृद्धिरस्तु। ऊँ शास्त्रसमृद्धिरस्तु। ऊँ इष्टसम्पदस्तु। बहिः ऊँ अरिष्टनिरसनमस्तु। ऊँ यत्पापं रोगोऽषुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु।

अन्तः ऊँ यच्छ्रेयस्तदस्तु। ऊँ उत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु। ऊँ उत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धिरस्तु। ऊँ उत्तरोत्तराः क्रियाः षुभाः षोभनाः सम्पद्यन्ताम्। ऊँ तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नसम्पदस्तु। ऊँ तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रलग्नाधिदेवताः प्रीयन्ताम्। ऊँ तिबकरणे समुहूर्ते-सनक्षत्रे-सग्रहे-सलग्ने-साधिदैवते प्रीयेताम्। ऊँ दुर्गापांचाल्यौ प्रीयेताम्। ऊँ अग्निपुरोगा विश्वे देवाः प्रीयन्ताम्। ऊँ इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम्। ऊँ ब्रह्मपुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयन्ताम्। ऊँ विष्णुपुरोगाः एकपत्न्यः प्रीयन्ताम्। ऊँ ब्रह्म च ब्राह्मणाष्च प्रीयन्ताम्। ऊँ श्री सरस्वत्यौ प्रीयेताम्। ऊँ श्रद्धामेधे प्रीयेताम्। ऊँ भगवती कात्यायनी प्रीयताम्। ऊँ भगवती माहेष्वरी प्रीयताम्। ऊँ भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम्। ऊँ भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम्। ऊँ भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम्। ऊँ भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम्। ऊँ भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम्। ऊँ सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम्। ऊँ सर्वाः ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम्। ऊँ सर्वाः इष्टदेवताः प्रीयन्ताम्। बहिः ऊँ हताष्च ब्रह्मद्विषः। ऊँ हताष्च परिपन्थिनः। ऊँ हताष्च विघ्नकर्तारः। ऊँ षत्रवः पराभवं यान्तु। ऊँ षाम्यन्तु घोराणि। ऊँ षाम्यन्तु पापानि। ऊँ षाम्यन्त्वीतयः। ऊँ षाम्यन्तूपद्रवाः। अन्तः ऊँ षुभानि वर्द्धन्ताम्। ऊँ षिवा आपः सन्तु। ऊँ षिवा ऋतवः सन्तु। ऊँ षिवा अग्नयः सन्तु। ऊँ षिवा आहुतयः सन्तु। ऊँ षिवा वनस्पतयः सन्तु। ऊँ षिवा ओषधयः सन्तु। ऊँ षिवा अतिथयः सन्तु।

ॐ अहोरात्रे षिवे स्याताम्। ॐ निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्। ॐ षुक्रांगारकबुधबृहस्पतिषनैष्चरराहुकेतुसोमसहितादिव्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम्। ॐ भगवान् नारायणः प्रीयताम्। ॐ पुरोऽनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु।

यजमानः - एतत्कल्याणयुक्तं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये।

विप्राः - वाच्यताम्।

यजमानः -

ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम्।
वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः।।

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः पुण्याह भवन्तो ब्रुवन्तु। (इति क्रमेण मन्द्रमध्यमोच्चस्वरेण त्रिर्ब्रूयात्।) ॐ पुण्याहं, ॐ पुण्याहं, ॐ पुण्याहम् इति त्रिर्विप्राः ब्रूयुः। ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः। पुनन्तु व्विष्वाभूतानिजातवेदः पुनीहि मा।

यजमानः -

पृथिव्यामुद्धृतायां तु यत्कल्याणं पुराकृतम्।
ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः।।

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः - ॐ कल्याणं! ॐ कल्याणं। ॐ कल्याणम्।

ॐ यथेमां व्वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्ब्रह्मराजन्याभ्यां षूद्राय चार्याय च स्वायचारणाय च। प्रियो देवानान्दक्षिणायै दातुरिहभूयासमयम्मेकामः समृद्ध्यतामुपमादोनमतु।।

यजमानः -

सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता।
सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां च ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः।।

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः -

ॐ कर्म ऋध्यताम्। ॐ कर्म ऋध्यताम्। ॐ कर्म ऋध्यताम्। ॐ

सत्रस्यऽऋद्धिरस्यगन्मज्योतिरमृताऽभूम। दिवम्पृथिव्याऽअध्यारुहामाविदामदेवान्त्स्वर्ज्योतिः।

यजमानः -

स्वस्तिस्तु याऽविनाषाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा।

विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रवन्तु नः।।

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः -

ऊँ आयुष्मते स्वस्ति। ऊँ आयुष्मते स्वस्ति। ऊँ आयुष्मते स्वस्ति।

ऊँ स्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विष्ववेदाः।

स्वस्तिनस्ताक्ष्योऽरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

यजमानः -

समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका।

हरिप्रिया च मांगल्या तां श्रियं च बुवन्तु नः।।

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाण (अमुक) कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः -

ऊँ अस्तु श्रीः। ऊँ अस्तु श्रीः। ऊँ अस्तु श्रीः।

श्रीष्चतेलक्ष्मीष्चपत्न्यावहोरात्रे पार्श्वेनक्षत्राणिरुपमश्विनौ व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाणसर्व्वलोकम्मऽइषाण ।।

यजमानः -

मृकण्डसूनोरायुर्यद्ध्रुवलोमषयोस्तथा।

आयुषा तेन संयुक्ता जीवेम षरदः षतम्।।

विप्राः -

शतं जीवन्तु भवन्तः। शतं जीवन्तु भवन्तः। शतं जीवन्तु भवन्तः।

ऊँ शतमिन्नु शरदोऽअन्तिदेवायत्रानष्चक्राजरसन्तनूनाम्।

पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मानो मध्यारीरिषतायुर्गन्तोः।।

यजमानः -

शिवगौरीविवाहे या या श्रीरामे नृपात्मजे।

धनदस्य गृहे या श्रीरस्माकं साऽस्तु सद्मनि।।

भो! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे श्रियं भवन्तो ब्रुवन्तु। श्रियं भवन्तो ब्रुवन्तु। श्रियं भवन्तो ब्रवुन्तु।

विप्राः -

अस्तु श्रीः। अस्तु श्रीः। अस्तु श्रीः।

मनसः काममाकूतिं व्वाचः सत्यमषीय।

पशूनां रुपमन्नस्यरसो यश: श्रीः श्रयताम्मयि स्वाहा।।

यजमानः -

प्रजापतिर्लोकपालो धाताब्रह्मा च देवराट्।

भगवांछाष्वतो नित्यं नो रक्षन्तु च सर्वतः।।

विप्राः -

ॐ भगवान्प्रजापतिः प्रीयताम्।

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्योव्विष्वारूपाणिपरितो बभूव।

यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु व्वयं स्याम पतयो रयीणाम्।।

यजमानः -

आयुष्मते स्वस्तिमते यजमानाय दाशुषे।

श्रिये दत्ताषिषः सन्तु ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः।।

विप्राः -

ॐ आयुष्मते स्वस्ति। ॐ आयुष्मते स्वस्ति। ॐ आयुष्मते स्वस्ति।

ॐ प्रतिपन्थामपद्महिस्वस्तिगामनेहसम्।

येन व्विश्वा: परिद्विषो व्वृणक्ति व्विन्दते व्वसु।।

ॐ स्वस्तिवाचन समृद्धिरस्तु।

ततो यजमानः हस्ते जलाक्षत द्रव्यं चादाय संकल्पं कुर्यात् -

कृतस्य स्वस्तिवाचनकर्मणः सांगतासिध्यर्थं तत् सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं च पुण्याहवाचकेभ्यो ब्राह्मणेभ्य इमां दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृजे।

पुनर्हस्ते जलमादाय अनेन पुण्याहवाचनेन भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम्।

(इस पुण्याहवाचन का मूल प्रयोग पारस्करगृह्यसूत्र 1 कण्डिका के गदाधर भाष्य में किया गया है)

(किसी कारणवश या समयाभाव के कारण इस बृहद् पुण्याहवाचन को यदि न कर सकें तो

बौधायनोक्त संक्षिप्त पुण्याहवाचन कर सकते हैं। जो अधोलिखित है)

बौधायनोक्त पुण्याहवाचन

यजमानः -

ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम्।
वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रवुन्तु नः।।

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य (अमुकाख्यस्य) कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मण पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु।

विप्राः -

ऊँ पुण्याहम्। ऊँ पुण्याहम्। ऊँ पुण्याहम्।

ऊँ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः।
पुनन्तु व्विष्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा।।

यजमानः -

पृथिव्यामुद्धृतायां तु यत्कल्याणं पुराकृतम्।
ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं बुवन्तु नः।।

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य अमुकाख्यस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु।

विप्राः -

ऊँ कल्याणम्। ऊँ कल्याणम्। ऊँ कल्याणम्।

ऊँ यथेमां व्वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्यां षूद्रायचार्याय च स्वायचारणाय च।।
प्रियोदेवादक्षिणायै दातुरिहभूयासमयम्मेकामः समृध्यताभुपमादो नमतु।।

यजमानः -

सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृताः।
सम्पूर्णा सुप्रभावा च तांच ऋद्धिं ब्रवुन्तु नः।।

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य अमुकाख्य कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु।

विप्राः -

ॐ आयुष्मते स्वस्ति। ॐ आयुष्मते स्वस्ति। ॐ आयुष्मते स्वस्ति।

ॐ स्वस्तिनऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विष्ववेदाः
स्वस्तिनस्ताक्ष्र्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।

यजमानः -

वैधृतौ च व्यतीपाते संक्रान्तौ राहुपर्वणि।
यादृग्वृद्धिमवाप्नोति तां च वृद्धिं ब्रवुन्तु नः।।

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य अमुकाख्यस्य कर्मणः वृद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः वृद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः वृद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु।

ॐ ज्यैष्ठ्यंच मऽआधिपत्यंचमे मन्युष्च मे भामश्च मेऽमष्चमेऽभश्च मे जेमा च मे महिमा च मे व्वरिमा च मे प्रथिमा च मे व्वर्षिमा च मे द्राघिमा च मे वृद्धं च मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।

यजमानः -

सरित्पतेश्च या कन्या या श्रीर्विष्णुर्गृहेस्थिता।
सर्वसौख्यवती लक्ष्मीस्तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः।।

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणस्य अमुकाख्यस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्य कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु।

विप्राः -

अस्तु श्रीः। अस्तु श्रीः। अस्तु श्रीः।

ॐ मनसः काममाकूतिम्व्वाचः सत्यमषीय।
पषूनांरूपमन्यस्य रसो यषः श्रीः श्रयताम्मयि स्वाहा।।

यजमानः -

शंखासुरविपत्तौ च यथाशान्तिर्धरातले।
यथा च देव देवानां तां च शान्तिं ब्रुवन्तु नः।।

भो ब्राह्मणाः मया क्रियमाणे अस्मिन् कर्मणि मम गृहे च शान्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मिन् कर्मणि मम गृहे च शान्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु। अस्मिन् कर्मणि मम गृहे च शान्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु।

विप्राः -

ॐ शान्तिः। ॐ शान्तिः। ॐ शान्तिः।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवीशान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः व्वनस्पतयः
शान्तिर्व्विष्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सा मा शान्तिरेधि। ॐ

विष्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्नऽआसुव।
मंत्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तथा।।
भद्रमस्तु षिवं चास्तु महालक्ष्मीः प्रसीदतु।
रक्षन्तु त्वां सदा देवाः सम्पदः सन्तु सर्वदा।।
सपत्ना दुर्ग्रहा पापा दुष्टसत्वाद्युपद्रवाः।
पुण्याहं च समालोक्य निष्प्रभावा भवन्तु ते।।
(अन्ते च ब्राह्मणाः यजमान भाले तिलकं कृत्वा, हस्ते आशीर्वादं दद्युः।
इति बौधायनोक्तं पुण्याहवाचनम्।)

(यह पुण्याहवाचन प्रयोग ''संस्कारदीपक'' (महामहोपाध्यायश्रीनित्यानन्दपर्वतीयजी द्वारा लिखित ग्रन्थ) प्रथमभाग पृ. सं. 124 से लिया गया है)

बोधप्रश्न -

1. कलशपूजन के बाद कौन सा पूजन होता है?
2. पुण्याहवाचन में कम से कम कितने ब्राह्मण होते हैं?
3. पुण्याहवाचन में छोटे-छोटे वाक्यों की संख्या कितनी है?
4. स्वस्ति के योग में कौन सी विभक्ति होती है?
5. ''शान्तिरस्तु'' इत्यादिवाक्यों में हम क्या करते हैं?
6. आचार्य बौधायन किस षाखा के विद्वान् थे?
7. माध्यन्दिनशाखा के अनुसार पुण्याहवाचन का मूल प्रयोग कहाँ लिखा गया है?

3.3.2 अभिषेकः

आचार्यः पुण्याहवाचनकलशात् किंचित् जलं पात्रे गृहीत्वा वामे पत्नीं चोपवेष्य चतुर्भिर्ब्राह्मणैः सह दूर्वायुतेनाम्रपल्लवैः कलशोदकेन सकुटुम्बं यजमानमभिषिंचेत्।

(पुण्याहवाचन कलश से थोड़ा जल, एक पात्र में लेकर पत्नी को वाम भाग में बिठाकर, आचार्य चार ब्राह्मणों के द्वारा दूर्वा आम्रपल्लव के साथ पुण्याहवावचन कलश के जल से सपरिवार यजमान का अभिषेक करें)

मन्त्राः -

1. ऊँ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽष्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताब्भ्याम्। सरस्वत्वै व्वाचोयन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिंचाम्यसौ।

2. ऊँ देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेऽष्विनोर्ब्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताब्भ्याम्। सरस्वत्यै व्वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिंचामि।

3. ऊँ देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेऽष्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताब्भ्याम्। अष्विनोर्मैषज्ज्येन तेजसे व्व्रह्मवर्चसायाभिषिंचामि सरस्वत्यै भैषज्जेन व्वीर्यायान्नाद्यायाभिषिंचामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलायश्रिये यषसेऽभिषिंचामि।

4. ऊँ आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणाय चक्षसे।

5. ऊँ योवः शिवतमोरसस्तस्य भाजयते हनः। उषतीरिवमातरः।

6. ऊँ तस्माऽअरं गमामवो यस्ययक्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा चनः।

7. ऊँ पंचनद्यः सरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः। सरस्वती तु पंचधा सोदेषे भवत्सरित्।।

8. ऊँ वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्थोव्वरुणस्यऽऋतसदन्यसिव्वरुणस्य ऋत-सदनमसिव्वरुणस्यऽऋतसदनमासीद

9. ऊँ पुनन्तुमा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः। पुनन्तु व्विष्वाभूतानि जातवेदः पुनीहि मा।

10. ऊँ पयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षेपयोधाः पयस्वतीः प्रदिषः सन्तु मह्यम्।

11. ऊँ विष्वानि देव सवितुर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रन्तन्नऽआसुव।

12. ऊँ धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः। सचेतसो व्विष्वेदेवा यज्ञम्प्रावन्तुनः षुभे।

13. ऊँ त्वं ययविष्ठदाषुषो नॄँ हे पाहि श्रृणुधीगिरः। रक्षातोकमुतत्मना।

14. ऊँ अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य षुष्मिणः। प्रप्रदातारन्तारिषऽऊर्ज्जन्नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।।

15. ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवीशान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः व्वनस्पतयः शान्तिर्व्विष्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सा मा शान्तिरेधि।

16. ऊँ यतोयतः समीहसे ततो नोऽअभयंकुरुः। शन्नः कुरुप्रजाभ्योऽभयन्नः पशुभ्यः।

ऊँ शान्तिः। शान्तिः। शान्तिः। अमृताभिषेकोऽस्तु।

पौराणिकाभिषेकश्लोका: -

सुरास्त्वामभिषिंचन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा: ।

वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणो विभुः।।

प्रद्युम्नष्चानिरुद्धष्च भवन्तु विजयाय ते।
आखण्डलोग्निर्भगवान् यमो वै नैर्ऋतिस्तथा।।
वरुणः पवनष्चैव धनाध्यक्षस्तथा षिवः।
ब्रह्मणा सहिताः सर्वे दिक्पालाः पान्तु त्वां सदा।।
कीतिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रिया मतिः।
बुद्धिर्लज्जावपुः षान्तिस्तुष्टिः कान्तिस्तु मातरः।।
एतास्त्वामभिषिंचन्तु देवपत्न्यः समागताः।
आदित्यः चन्द्रमा भौम बुधजीवसितार्कजाः।।
ग्रहास्त्वामभिषिंचन्तु राहुकेतुष्च तर्पिताः।
देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः।।
ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च।
देवपत्न्यो द्रुमा नागा दैत्याष्चाप्सरसांगणाः।।
अस्त्राणि सर्वषस्त्राणि राजानो वाहनानि च।
औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाष्च ये।।
सरितः सागराः सर्वे तीर्थानि जलदा नदाः।
एते त्वामभिषिंचन्तु धर्मकामार्थ सिद्धये।।

इत्यभिषिच्य 'अमृताऽभिषेकोऽस्तु' इति ब्राह्मणा वदेयुः। ततो यजमानः द्विराचामेत्। पत्नी च सकृदाचम्य पत्युर्दक्षिणत उपविषेत्।

इस प्रकार अमृताभिषेकोऽस्तु यह वाक्य ब्राह्मण बोलते हैं। इसके बाद यजमान दो बार षुद्ध जल से आचमन करें उसकी धर्मपत्नी एक बार आचमन कर पति के दक्षिण भाग में बैठें।

यजमान अभिषेक दक्षिणा का संकल्प करें -

कृतैतदभिषेककर्मणः सांगतासिध्यर्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं च ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये।

ऐसा संकल्प कर ब्राह्मणों को दक्षिणा देनी चाहिए।

इत्यभिषेकविधिः

3.3.3 बोधप्रश्न

1. अभिषेक में पत्नी, पति के किस भाग में बैठती है?
2. किस जल से अभिषेक सम्पन्न होता है?

3. पौराणिक अभिषेक श्लोक कहाँ से उद्धृत किये गये हैं?
4. संकर्षण किसे कहा गया है?
5. अर्कजः किसे कहते हैं?
6. धनाध्यक्ष किसे कहते हैं?
7. आपो हिष्ठामयोभुवः किस वेद का मंत्र है?

3.4 सारांश

इस इकाई में पुण्याहवाचन एवं अभिषेक की विधि बताई गयी है। पुण्याहवाचन में आचार्य के अलावा दो विप्रों का हस्तपूजन होता है। हस्तपूजन का तात्पर्य उनके हाथ में मंत्र पढ़ते हुए जल गन्ध, अक्षत, दक्षिणा आदि देते हैं तथा वे प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं। यह एक प्रकार से ब्राह्मणपूजन ही है। इसमें यजमान अपने सकुटुम्ब एवं सपरिवार के लिए कल्याण, स्वस्ति, लक्ष्मीप्राप्ति, यशोवृद्धि, आयुवृद्धि, आदि की कामना करता है। जिसमें ब्राह्मण शास्त्रोक्तविधि से उसे आशीर्वाद देते हैं।

यह पुण्याहवाचन बड़े बड़े यागों में चारों वेदों के द्वारा भी सम्पन्न होता है, परन्तु यहाँ प्रयोजनाभाव के कारण नहीं दिया गया। वस्तुतः इसमें चारों वेदों के विद्वानों की आवष्यकता होती है जो अपनी अपनी षाखा के अनुसार मंत्र पाठ करते हैं। इसकी विधि स्पष्टरूप से देखना हो तो महामहोपाध्याय नित्यानन्दपर्वतीय कृत संस्कारदीपक प्रथम भाग आप देख सकते हैं।

पुण्याहवाचन में लगभग 72 वाक्य हैं। कुछ वेदमंत्र तथा श्लोक हैं जो शास्त्रोक्त हैं। इस प्रकार पुण्याहवाचन का प्रयोग आपको बताया गया है

अभिषेक में पुण्याहवाचन कलश से थोड़ा जल निकालकर एक पात्र में रखकर उसमें दूर्वा आम्रपल्लव आदि मांगलिक द्रव्य से युक्त जल से सपरिवार यजमान का चार ब्राह्मण मंत्रपाठ करते हुए अभिषेक करते हैं।

3.5 शब्दावली

प्रसीदन्तु भवन्तः - आप प्रसन्न हों।
सन्तु शिवा आपः - ये जल कल्याणकारी हों
गिरयः - पर्वत
सौमनस्यमस्तु - आपका मन सद्भाव युक्त हो

अक्षतं चारिष्टं चास्तु - आपका सुतिकागृह विघ्नों से रहित हो अर्थात् स्वस्थ- सन्तान युक्त आपका घर हो।

दक्षिणेन पाणिना - दाहिने हाथ से

मूर्ध्ना संयोज्य - शिर से लगाकर

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. कलशपूजन के बाद पुण्याहवाचन होता है।
2. पुण्याहवाचन में कम से कम दो ब्राह्मण अवश्य रहते हैं। या फिर चार ब्राह्मण।
3. पुण्याहवाचन में छोटे छोटे वाक्य लगभग 72 हैं।
4. स्वस्ति के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है। जैसे अस्मै कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु।
5. शान्तिरस्तु इत्यादि वाक्यों में कलश के ऊपर अक्षत छोड़ते हैं।
6. आचार्यबौधायन कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीयशाखा के विद्वान् थे।
7. पुण्याहवाचन का मूल प्रयोग पारस्करगृह्यसूत्र के प्रथम काण्ड के द्वितीय कण्डिका के ऊपर गदाधरभाष्य में है।

3.7 द्वितीय अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. अभिषेक में पत्नी पति के वाम भाग में बैठती है।
2. पुण्याहवाचन कलश के जल से अभिषेक से सम्पन्न होता है।
3. अभिषेक में पौराणिक श्लोक कर्मसमुच्चय नामक ग्रन्थ से उद्धृत है।
4. संकर्षण श्रीबलराम जी की संज्ञा है।
5. अर्कजः शनि को कहा जाता है।
6. धनाध्यक्ष कुबेर को कहते हैं।
7. आपोहिष्ठा मयोभुवः यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा का मंत्र है।

3.8 सन्दर्भग्रन्थसूची

ग्रन्थनाम	लेखक	प्रकाशन
क. संस्कारदीपक	महामहोपाध्यायनित्यानन्दपर्वतीय	वाराणसी
ख. कर्मसमुच्चय	श्रीरामजीलालशास्त्री	वाराणसी
ग. ग्रहशान्ति	श्रीवायुनन्दनमिश्र	वाराणसी
घ. पारस्करगृह्यसूत्र	महर्षि पारस्कर	वाराणसी

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

क. अभिषेक की विधि समन्त्रक लिखें।

ख. बौधायनोक्त पुण्याहवाचन की विधि (प्रयोग) लिखें।

खण्ड 3
मातृका पूजन एवं नान्दी श्राद्ध प्रयोग

इकाई - 1 षोडशमातृका एवं सप्तघृतमातृका का आवाहन पूजन

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 202 के तृतीय खण्ड की पहली इकाई षोडशमातृका एवं सप्तघृतमातृका आवाहन पूजन से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने कलश पूजन का अध्ययन कर लिया है। अब आप षोडशमातृका एवं सप्तघृतमातृका पूजन का अध्ययन करने जा रहे है।

षोडश का अर्थ सोलह होता है, अत: नाम से ही स्पष्ट है – षोडशमातृका अर्थात् सोलह मातृका। षोडशमातृका में सोलह कोष्ठक बनें होते है। इसमें गौरी गणेश, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, स्वाहा, मातर, लोकमातर, धृति, पुष्टि, तुष्टि, आत्मन: कुल देवता की स्थापना की जाती है। सप्तघृतमातृका में सात मातृकायें होती है। इसमें श्री, लक्ष्मी, धृति,मेधा,पुष्टि, श्रद्धा एवं सरस्वती की स्थापना की जाती है।

इस इकाई में आपके पाठनार्थ षोडशमातृका एवं सप्तघृतमातृका का आवाहन पूजन की विधि बताई जा रही है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- षोडशमातृका क्या है। समझा सकेंगे।
- षोडशमातृका के आवाहन पूजन को जान लेंगे।
- सप्तघृतमातृका को बता सकेंगे।
- सप्तघृतमातृका के आवाहन पूजन को समझ लेंगे।
- षोडशमातृका एवं सप्तघृतमातृका पूजन महत्व को समझा सकेंगे।

1.3 षोडशमातृका का आवाहन पूजन

मातृका पूजन पंचांग पूजन का अंग है गणेश पूजन के अनन्तर मातृकाओं का पूजन होता है। सर्वप्रथम पूजन के पूर्व संकल्प का विधान है। संकल्प करें ------

ऊँ विष्णःविष्णुःविष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरूषस्य विष्णो राज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे विष्णुपदे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे युगे कलियुगे

कलिप्रथमचरणे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशे विक्रमशके बौद्धावतारे अमुकनामसंवत्सरे श्रीसूये अमुकायने अमुकऋतौ महामांगल्यप्रदमासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे एवं ग्रहगुण - विशेषण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः अमुकशर्मा सपत्निकोऽहं मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सर्वपापक्षयपूर्वक- दीर्घायुर्विपुल - धन- धान्य- पुत्र-पौत्राद्यनवच्छिन्न- सन्ततिवृद्धि-स्थिरलक्ष्मी-कीर्तिलाभ शत्रु पराजय सदभीष्टसिद्ध्यर्थं .... गणेशपूजनं, षोडशमातृका पूजन, सप्तघृतमातृका पूजनं च संकल्प: अहं करिष्ये।

स्थापना -

षोडशमातृकाओं की स्थापना के लिये पूजक दाहिनी ओर पॉच खड़ी पाइयों और पॉच पड़ी पाइयों का चौकोर मण्डल बनायें। इस प्रकार सोलह कोष्ठक बन जायेंगे। पश्चिम से पूर्व की ओर मातृकाओं का आवाहन और स्थापन करें। कोष्ठकों में रक्त चावल, गेहूँ या जौ रख दे। पहले कोष्ठक में गौरी का आवाहन होता है, अत: गौरी के आवाहन के पूर्व गणेश का भी आवाहन पुष्पाक्षतों द्वारा कोष्ठक में करे । इसी प्रकार अन्य कोष्ठकों में भी निम्नांकित मन्त्र पढ़ते हुए आवाहन करे -

षोडशमातृका - चक्र

आत्मन: कुलदेवता १६	लोकमातर: १२	देवसेना ८	मेधा ४
तुष्टि: १५	मातर: ११	जया ७	शची ३
पुष्टि १४	स्वाहा १०	विजया ६	पद्मा २
धृति १३	स्वधा ९	सावित्री ५	गौरी गणेश १

आवाहन एवं स्थापन मन्त्र –

ॐ गणपतये नम:, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ गौर्ये नम:, गौरीमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ पद्मायै नम:, पद्मावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ शच्यै नम:, शचीमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ मेधायै नम: मेधामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ सावित्र्यै नम:, सावित्रीमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ विजयायै नम:, विजयामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ जयायै नम: , जयामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ देवसेनायै नम:, देवसेनामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ स्वधायै नम:, स्वधामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ स्वाहायै नम:, स्वाहामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ मातृभ्यों नम:, मातृ: आवाहयामि, स्थापयामि।

ॐ लोकमातृभ्यो नम: लोकमातृ: आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ धृत्यै नम:, धृतिमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ पुष्टयै नम: पुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि

ॐ तुष्टयै नम: तुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि

ॐ आत्मन: कुलदेवतायै नम:, आत्मन: कुलदेवतामावाहयामि, स्थापयामि।

इस प्रकार षोडशमातृकाओं का आवाहन, स्थापना कर **ॐ मनोर्जूति जुषतामा... 0 ,** मंत्र से अक्षत छोड़ते हुए मातृका मण्डल की प्रतिष्ठा करनी चाहिये। तत्पश्चात् निम्नलिखित नाम मन्त्र से गन्धादि उपचारों द्वारा पूजन करनी चाहिये –

ॐ गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातृकाभ्यो नम: ।

विशेष : - मातृकाओं को यज्ञोपवीत नही चढ़ाना चाहिये।

नैवेद्य के साथ - साथ घृत और गुड़ का भी नैवेद्य लगाना चाहिये।

विशेष अर्घ्य दे।

फल का अर्पण - नारियल आदि फल अंजलि में लेकर प्रार्थना करे –

ॐ आयुरारोग्यमैश्वर्यं ददध्वं मातरो मम।
निर्विघ्नं सर्वकार्येषु कुरूध्वं सगणाधिपा: ।।

इस तरह प्रार्थना करने के पश्चात् नारियल आदि फल चढ़ाकर हाथ जोड़कर बोले –

गेहे वृद्धिशतानि भवन्तु, उत्तरे कर्मण्यविघ्नमस्तु ।

इसके बाद –

अनया पूजया गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातर: प्रीयन्ताम् न मम।

इस वाक्य का उच्चारण कर मण्डल पर अक्षत छोड़कर प्रणाम करना चाहिये -

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः।।
धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता।
गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्याश्च षोडश।।

1.4 सप्तघृतमातृका आवाहन पूजन

आग्नेय कोण में किसी वेदी अथवा काष्ठपीठ पर प्रादेशमात्र स्थान में पहले रोली या सिन्दूर से स्वस्तिक बनाकर 'श्रीः' लिखे। इसके नीचे एक बिन्दु और इसके नीचे दो बिन्दु दक्षिण से करके उत्तर की ओर दे। इसी प्रकार सात बिन्दु क्रम से चित्रानुसार बनाना चाहिये -

पूर्व

।। श्रीः ।।

0

0 0

0 0 0

0 0 0 0

0 0 0 0 0

0 0 0 0 0 0

0 0 0 0 0 0 0

वसोर्धारा
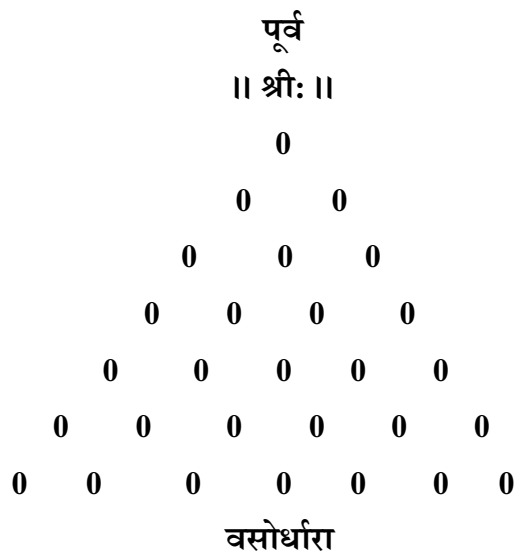
इसके पश्चात् नीचे वाले सात बिन्दुओं पर घी या दूध से प्रादेश मात्र सात धाराएँ निम्नलिखित मन्त्र से दे –

घृत धाराकरण –

ऊँ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् ।
देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः।।

इसके बाद गुड़ के द्वारा बिन्दुओं की रेखाओं को उपर्युक्त मन्त्र पढ़ते हुए मिलाये। तदनन्तर निम्नलिखित वाक्यों का उच्चारण करते हुए प्रत्येक मातृका का आवाहन और स्थापना करे –

आवाहन स्थापन –

ॐ भूर्भुव: स्व: श्रियै नम:, श्रियमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुव: स्व: लक्ष्म्यै नम:, लक्ष्मीमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुव: स्व: धृत्यै नम:, धृतिमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुव: स्व: मेधायै नम:, मेधामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुव: स्व: पुष्ट्यै नम:, पुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुव: स्व: श्रद्धायै नम:, श्रद्धामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुव: स्व: सरस्वत्यै नम:, सरस्वतीमावाहयामि स्थापयामि।

प्रतिष्ठा - इस प्रकार आवाहन - स्थापन के पश्चात् एतं ते देव .... 0 मन्त्र से प्रतिष्ठा करने, तत्पश्चात् ॐ भूर्भुव:स्व: सप्तघृतमातृकाभ्यो नम: इस नाम मन्त्र से यथालब्धोपचार पूजन करे -

प्रार्थना- तदनन्तर हाथ जोड़कर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर प्रार्थना करे -

> **ॐ यदङ्गत्वेन भो देव्य: पूजिता विधिमार्गत: ।**
>
> **कुर्वन्तु कार्यमखिलं निर्विघ्नेन क्रतूद्भवम् ।।**

अनया पूजया वसोर्धारादेवता: प्रीयन्ताम् न मम। ऐसा उच्चारण कर मण्डल पर अक्षत छोड़ दे। पूजक अंजलि में पुष्प ग्रहण करे तथा ब्राह्मण आयुष्य मन्त्र का पाठ करें।

आयुष्य मन्त्र –

ॐ आयुष्यं वर्चस्य गॅू रायस्पोषमौद्भिदम्। इद गॅू हिरण्यं वर्चस्वजैत्रायाविशतादु माम्। ॐ न तद्रक्षा गॅू सि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोज: प्रथमज गॅू ह्येतत् ।। यो विभर्ति दाक्षायण गॅू हिरण्य गॅू स देवेषु कृणुते दीर्घमायु: स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायु:।

> **ॐ यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्य गॅू शतानीकाय सुमनस्यमाना: । तन्म आ बध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम् ।।**
>
> **यदायुष्यं चिरं देवा: सप्तकल्पान्तजीविषु।**
>
> **ददुस्तेनायुषा युक्ता जीवेम शरद: शतम् ।।**
>
> **दीर्घा नागा नगा नद्योऽनन्ता: सप्तार्णवा दिश: ।**

सत्यानि पञ्चभूतानि विनाशरहितानि च।

अविनाश्यायुषा जद्वज्जीवेम शरद: शतम्।।

पुष्पार्पण - आयुष्यमन्त्र के श्रवण के बाद अंजलि के पुष्पों को सप्तघृतमातृका मण्डल पर अर्पण कर दें।

बोध प्रश्न -

१. निम्नलिखित में मातृका पूजन किसका अंग है –

क. पंचांग पूजन का ख. गणेश पूजन का ग. श्राद्ध पूजन का घ. षोडशमातृका पूजन का

२. षोडशमातृका में कितने कोष्ठक होते हैं –

क. १५ ख. १६ ग. १७ घ. ८

३. षोडशमातृका में सातवॉ स्थान हैं –

क. मेधा ख. जया ग. विजया घ. पद्मा

४. सप्तघृतमातृका काष्ठपीठ के किस कोण में बनाना चाहिये –

क. ईशान कोण ख. वायव्य कोण ग. आग्नेय कोण घ. नैर्ऋत्य कोण

५. सप्तघृत मातृका में कितनी मातृकायें होती है।

क. ८ ख. १० ग. ७ घ. ९

1.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि मातृका पूजन पंचांग पूजन का अंग है गणेश पूजन के अनन्तर मातृकाओं का पूजन होता है। षोडश का अर्थ सोलह होता है, अत: नाम से ही स्पष्ट है – षोडशमातृका अर्थात् सोलह मातृका। षोडशमातृका में सोलह कोष्ठक बनें होते है। इसमें गौरी गणेश, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, स्वाहा, मातर, लोकमातर, धृति, पुष्टि, तुष्टि, आत्मन: कुल देवता की स्थापना की जाती है। सप्तघृतमातृका में सात मातृकायें होती है। इसमें श्री, लक्ष्मी, धृति,मेधा,पुष्टि, श्रद्धा एवं सरस्वती की स्थापना की जाती है। मातृकाओं में षोडशमातृका एवं सप्तघृतमातृका प्रधान है। पूजन में इनका महत्व भी पण्डित समाज को सर्वविदित है। अत: इस इकाई के अध्ययन से आपने जान लिया है कि षोडशमातृका एवं स्पतघृतमात्का पूजन का क्या महत्व है। उनका आवाहन पूजन कैसे किया जाता है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

षोडश – सोलह

सप्त – सात

पूजक – पूजन करने योग्य

कोष्ठक – खाने

जयायै – जय के लिए

श्री- लक्ष्मी

आवाहयामि – आवाहन करता हूँ।

स्थापयामि – स्थापना करता हूँ।

यथोपलब्ध - जितना उपलब्ध हो।

अनन्त – जिसका अन्त न हो।

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

१. क

२. ख

३. ख

४. ग

५. ग

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

नित्यकर्मपूजाप्रकाश

कर्मकाण्ड प्रदीप

संस्कार प्रदीप

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

१.षोडशमातृका का आवाहन पूजन मन्त्र सहित लिखिये।

२. सप्तघृतमातृका पूजन का चक्र द्वारा समझाते हुए आवाहन पूजन लिखिये।

३. कर्मकाण्ड में षोडशमातृका एवं सप्तघृतमातृका पूजन का महत्व बतलाइए।

इकाई - 2 नान्दी श्राद्ध परिचय एवं प्रयोग विधि

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के – 202 की तृतीय खण्ड की दूसरी इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई के पूर्व आपने षोडशमातृका एवं सप्तघृतमातृका का आवाहन पूजन का अध्ययन कर लिया है। अब इस इकाई में आप नान्दी श्राद्ध का अध्ययन करने जा रहे हैं ।

नान्दी श्राद्ध सभी शुभ कार्यों में भी किया जाता है। इसके पूजन की विधि क्या है। विवाह में इसे किस प्रकार किया जाता है, इसे करने हेतु शुभ समय कौन सा होता है आदि इत्यादि का ज्ञान आप प्रस्तुत इकाई में करने जा रहे है।

श्रद्धापूर्वक पितरों की शान्ति हेतु किया गया कार्य 'श्राद्ध' कहलाता है। श्राद्ध का सम्बन्ध वस्तुत: पितरों से है। नान्दी श्राद्ध अशुभ के साथ शुभ कार्यों में भी किया जाता है। आइये इस इकाई में हम नान्दी श्राद्ध का अध्ययन करते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ नान्दी श्राद्ध को परिभाषित कर सकेंगे।
- ❖ नान्दी श्राद्ध पूजन को जान जायेंगे।
- ❖ कर्मकाण्ड में इसके महत्व निरूपण कर सकेंगे।
- ❖ विवाह में नान्दी श्राद्ध को समझा सकेंगे।
- ❖ नान्दी श्राद्ध का प्रयोजन समझा सकेंगे।

2.3 नान्दी श्राद्ध

'श्रद्धया दीयते यत् तत् श्राद्धम्' पितरों की तृप्ति के लिए जो सनातन विधि से जो कर्म किया जाता है उसे '**श्राद्ध**' कहते हैं। किसी भी कर्म को यदि श्रद्धा और विश्वास से नहीं किया जाता तो वह निष्फल होता है। महर्षि पाराशर का मत है कि देश-काल के अनुसार यज्ञ पात्र में हवन आदि के द्वारा, तिल, जौ, कुशा तथा मंत्रों से परिपूर्ण कर्म श्राद्ध होता है। इस प्रकार किया जाने वाला यह पितृ यज्ञ कर्ता के सांसारिक जीवन को सुखमय बनाने के साथ परलोक भी सुधारता है। साथ ही जिस

दिव्य आत्मा का श्राद्ध किया जाता है उसे तृप्ति एवं कर्म बंधनों से मुक्ति भी मिल जाती है। अनेक धर्मग्रंथों के अनुसार नित्य, नैमित्तिक, काम्य, वृद्धि और पार्वण **पाँच प्रकार के श्राद्ध** बताए गए हैं जिनमें प्रतिदिन पितृ और ऋषि तर्पण आदि द्वारा किया जाने वाला श्राद्ध **नित्य श्राद्ध** कहलाता है। इसमें केवल जल प्रदान करने से भी कर्म की पूर्ति हो जाती है। इसी प्रकार, एकोद्दिष्ट श्राद्ध को नैमित्तिक, **किसी कामना की पूर्ति हेतु काम्य श्राद्ध, पुत्र प्राप्ति, विवाह आदि मांगलिक कार्यों में जिनसे कुल वृद्धि होती है, के पूजन के साथ पितरों को प्रसन्न करने के लिए वृद्धि श्राद्ध किया जाता है जिसे 'नान्दी श्राद्ध भी कहते हैं।** इसके अलावा पुण्यतिथि, अमावस्या अथवा पितृ पक्ष (महालय) में किया जाने वाला श्राद्ध कर्म पार्वण श्राद्ध कहलाता है। भादों की पूर्णिमा से आश्विन अमावस्या तक के सोलह दिन पितरों की जागृति के दिन होते हैं जिसमें पितर देवलोक से चलकर पृथ्वी की परिधि में सूक्ष्म रूप में उपस्थित हो जाते हैं तथा भोज्य पदार्थ एवं जल को अपने वंशजों से श्रद्धा रूप में स्वीकार करते हैं। आज के प्रगतिवादी युग में प्रायः लोगों के पास इस विज्ञान के रहस्य को जानने की अपेक्षा नकारने की हठधार्मिता ज्यादा दिखाई देती है।

यदि हम विचार करें तो सामान्य सांसारिक व्यवहारों में भी दावत या पार्टियों में इष्ट मित्रों की उपस्थिति से कितनी प्रसन्नता होती है। यदि हम अपने पूर्वजों की स्मृति में वर्ष में एक-दो बार श्राद्ध पर्व मनाते हुए स्वादिष्ट भोज्य पदार्थों का पितृ प्रसाद मिल बाँट कर खाएँ तो उससे जो आत्मीय सुख प्राप्त होता है वह शायद मौज-मस्ती के निमित्त की गई पार्टियों से कहीं आगे होगा।

कुछ लोग यह भी सोचते होंगे कि श्राद्ध में प्रदान की गई अन्न, जल, वस्तुएँ आदि सामग्री पितरों को कैसे प्राप्त होती होगी। यहाँ यह भी तर्क दिया जाता है कि कर्मगति के अनुसार जीव को अलग-अलग गतियाँ प्राप्त होती हैं। कोई देव बनता है तो कोई पितर, कोई प्रेत तो कोई पशु पक्षी। अतः श्राद्ध में दिए गए पिण्डदान एवं एक धारा जल से कैसे कोई तृप्त होता होगा? इन प्रश्नों के उत्तर हमारे शास्त्रों में सूक्ष्म दृष्टि से दिए गए हैं। 'नाम गोत्र के आश्रय से विश्वदेव एवं अग्निमुख हवन किए गए पदार्थ आदि दिव्य पितर ग्रास को पितरों को प्राप्त कराते हैं। यदि पूर्वज देव योनि को प्राप्त हो गए हों तो अर्पित किया गया अन्न-जल वहाँ अमृत कण के रूप में प्राप्त होगा क्योंकि देवता केवल अमृत पान करते हैं। पूर्वज मनुष्य योनि में गए हों तो उन्हें अन्न के रूप में तथा पशु योनि में घास-तृण के रूप में पदार्थ की प्राप्ति होगी। सर्प आदि योनियों में वायु रूप में, यक्ष योनियों में जल आदि पेय पदार्थों के रूप में उन्हें श्राद्ध पर्व पर अर्पित पदार्थों का तत्व प्राप्त होगा।

श्राद्ध पर अर्पण किए गए भोजन एवं तर्पण का जल उन्हें उसी रूप में प्राप्त होगा जिस योनि में जो उनके लिए तृप्ति कर वस्तु पदार्थ परमात्मा ने बनाए हैं। साथ ही वेद मंत्रों की इतनी शक्ति होती है कि

जिस प्रकार गायों के झुंड में अपनी माता को बछड़ा खोज लेता है उसी प्रकार वेद मंत्रों की शक्ति के प्रभाव से श्रद्धा से अर्पण की गई वस्तु या पदार्थ पितरों को प्राप्त हो जाते हैं। वस्तुतः श्रद्धा एवं संकल्प के साथ श्राद्ध कर्म के समय प्रदान किए गए पदार्थों को भक्ति के साथ बोले गए मंत्र पितरों तक पहुँचा देते हैं। मनुष्य और परमात्मा के बीच की कड़ी चन्द्रलोक में स्थित पितर ही होते है। जब मनुष्य श्रद्धापूर्वक पितर को याद करता है, तो पितर भी उसकी बात परमात्मा तक शीघ्र पहुॅचा देते है। जिससे मनुष्य का जीवन सुखमय हो जाता है। जो मनुष्य अपने पितरों का श्राद्धादि कर्म करते हैं, नि:शंसय ही उनका कल्याण होता है।

नान्दी श्राद्ध आरम्भ का मन्त्र –

देवताभ्यः देवताभ्य महायोगिभ्य एव च
नमः स्वाहायै नित्यमेव नमो नमः वार च
सप्तव्याधा दशार्णेषु मृगा कालञ्जरे गिरौ
चक्रवाकाः शरदिद्वपे हंसाः सरीस मानसे
तेऽपि जाताः कुरूक्षेत्र ब्रह्मणा वेद पारणाः
प्रस्थितादीर्य मध्वान धूयं किमवासीदथ
श्राद्धकाले गयां ध्यात्वदेव गदाधरम-
मनसा च पिततन्ध्त्वा नान्दीश्रादं समारभे ॥

वृद्धावस्था प्राप्त हो जाने पर पुत्रवान कुटुम्बी, आस्तिक धनी काशीवास कर लेते थे, अथवा अन्यत्र कहीं गंगातट पर- निवास करके ईश्वर भजन करते थे-। पर अब लोग पुत्रादि के समीप रहना आवश्यक समझते हैं। मृत्यु के समय गीता और श्रीमद्भागवतादि का पाठ सुनना, रामनाम का जप करना स्वर्गदायक समझा जाता है। गोदान और दशदान कराके-, होश रहतेरहते मृतक को चारपाई से - उठाकर जमीन में लिटा दिया जाता है। प्राण रहते गंगा जल डाला जाता है। प्राण निकल जाने पर मुखछिद्रादि में-नेत्र- सुवर्ण के कण ड़ाले जाते हैं। फिर स्नान कराकर चंदन व यज्ञोपवीत पहनाये जाते हैं। शहर व गाँव के मित्र, बांधव तथा पड़ोसी उसे श्मशान ले जाने के लिए मृतक के घर पर एकत्र होते हैं। मृतक के ज्येष्ठ पुत्र, उसके अभाव में कनिष्ठ पुत्र, भाईभतीजे या बांधव को मृतक का दाह - तथा अन्य संस्कार करने पड़ते हैं। जौ के आटे से पिंडदान करना होता है। नूतन वस्त्र के गिलाफ (खोल) में प्रेत को रखते हैं, तब रथी में वस्त्र बिछाकर उस प्रेस को रख ऊपर से शाल, दुशाले या अन्य वस्त्र ड़ाले जाते हैं। मार्ग में पुन: पिंड़दान होता है। घाट पर पहुँचकर प्रेत को स्नान कराकर चिता में रखते हैं। श्मशानघाट- ज्यादातर दो नदियों के संगम पर होते हैं। पुत्रादि कर्मकर्ता अग्नि देते

हैं। कपाल क्रिया करने के पश्चात् चिता की शांति दुग्ध आदि से करते है। कपूतविशेष कपोत) यानि कबूतक के तुल्य सिर पर बाँधना होता है। इस 'छोपा' कहते हैं। मुर्दा फूँकनेवाले सब लोगों को स्नान करना पड़ता है। पहले कपड़े भी धोते थे। अब शहर में कपड़े कोई नहीं धोता। हाँ, देहातों में कोई धोते हैं। गोसूत्र के छींटे देकर सबकी शुद्धि होती है। देहात में बारहवें दिन मुर्दा फूँकनेवालों का 'कठोतार' के नाम से भोजन कराया जाता या सीधा दिया जाता है। नगर में उसी समय मिठाई, चाय या फल खिला देते हैं। कर्मकर्ता को आगे करके घर को लौटते हैं। मार्ग में एक काँटेदार शाखा को पत्थर से दबाकर सब लोग उस पर पैर रखते हैं। श्मशान से लौटकर अग्नि छूते हैं, खटाई खाते हैं।

कर्मकर्ता को एक बार हविष्यान्न भोजन करके ब्रह्मणचर्यपूर्वक रहना पड़ता- है। पहले, तीसरे, पाँचवे, सातवें या नवें दिन से दस दिन तक प्रेत को अंजलि दी जाती है, तथा श्राद्ध होता है। मकान के एक कमरे में लीपपोतकर गोबर की बाढ़ लगाकर दीपक जला देते हैं।- कर्मकर्ता को उसमें रहना होता है। वह किसी को छू नहीं सकता। जलाशाय के समीप नित्य स्नान करके तिलाञ्जलि के बाद पिंडदान करके छिद्रयुक्त मिट्टी की हाँड़ी को पेड़ में बाँध देते हैं, उसमें जल व दूध मिलाकर एक दंतधावन (दतौन) रख दिया जाता है और एक मंत्र पढ़ा जाता है, जिसका आशय इस प्रकार है - "शंखरायण प्रेतके मेक्ष देवें। आकाश में वायुभूतधारी ना-चक्र गदा- निराश्रय जो प्रेत है, यह जल मिश्रित दूध उसे प्राप्त होवे। चिता की अग्नि से भ किया हुआ, बांधवों से परिव्यक्त जो प्रेत है, उसे सुखशान्ति मिले-, प्रेतत्व से मुक्त होकर वह उत्तम लोक प्राप्त करे।के सात पुश्तके भीतर " बांधव-वर्गों को क्षौर और मुंडन करके अञ्जलि देनी होती है। जिनके मातापिता होते हैं-, वे बांधव मुंडन नहीं करते, हजामत बनवाते हैं। दसवें दिन कुटुम्बी बांधव सबको घर की लीपापोती व शुद्धि करके - सब वस्त्र धोने तथा बिस्तर सुखाने पड़ते हैं। तब घाट में स्नान व अञ्जलिदान करने जाना पड़ता है। १० वें दिन प्रेत कर्म करने वाला हाँड़ी को फोड़ दंड व चूल्हे को भी तोड़ देता है, तथा दीपक को जलाशय में रख देता है। इस प्रकार दस दिन का क्रियाकर्म पूर्ण होता है। कुछ लोग दस दिन तक - नित्य दिन में गरुड़पुराण सुनते हैं।

ग्यारहवें दिन का कर्म एकादशाह तथा बारहवें दिन का द्वादशाह कर्म कहलाता है। ग्यारहवें दिन दूसरे घाट में जाकर स्नान करके मृतशय्या पुन: नूतन शय्यादान की विधि पूर्ण करके वृषोत्सर्ग होता है, यानि एक बैल को दाग देते हैं। बैल न हुआ, तो आटे गा बैल बनाते हैं। ३६५ दिन जलाये जाते हैं। ३६५ घड़े पानी से भरकर रखे जाते हैं। पश्चात् मासिक श्राद्ध तथा आद्य श्राद्ध का विधान है द्वादशाह के दिन स्नान करके सपिंडी श्राद्ध किया जाता है। इससे प्रेतमंडल से प्रेत का हटकर पितृमंडल में - पितृगणों के साथ मिलकर प्रेत का बसुहै। इसके न होने से प्रेत का निकृष्ट स्वरुप होना माना जाता-

योनि से जीव नहीं छूट सकता, ऐसा विश्वास बहुसंख्यक हिन्दुओं का है। इसके बाद पीपलवृक्ष की - पूजा, वहाँ जल चढ़ाना, फिर हवन, गोदान या तिल पात्रदान करना होता है। इसके अनन्तर- शुक शान्ति तेरहवीं का कर्म ब्रह्मभोजनादि इसी दिन कुमाऊँ में करते हैं। देश में यह तेरहवीं को होता है। श्राद्ध तिथि पर मृतक का मासिक-प्रतिमास मृत्यु -श्राद्ध किया जाता है। शुभ कर्म करने के पूर्व मासिक श्राद्ध एकदम कर दिए जाते हैं, जिन्हें "मासिक चुकाना कहते हैं। "साल भर तक ब्रह्मचर्य पूर्वकस्व-पाकी रहकर वार्षिक नियम मृतक के पुत्र को करने होते हैं। बहुत सी चीजों को न खाने व न बरतने का आदेश है । साल भर में जो पहला श्राद्ध होता है, उसे 'वर्षा' कहते हैं । प्रतिवर्ष मृत्यु- श्राद्ध किया जाता है। आश्विन तिथि को एकोदिष्ट कृष्णपक्ष में प्रतिवर्ष पार्वण श्राद्ध किया जाता है। काशी, प्रयाग, हरिद्वार आदि तीर्थों में तीर्थश्राद्ध किया जाता है। तथा गयाधाम में -गयाश्राद्ध- करने की विधि है। गया में मृतकश्राद्ध करने के बाद श्राद्ध न भी करे-, तो कोई हर्ज नहीं माना जाता। प्रत्येक संस्कार तथा शुभ कर्मों में आभ्युदयिक "नान्दी श्राद्धपूजन -करना होता है। देव " पूजन भी होना चाहिए।-के साथ पितृ कर्मेष्ठी लोग नित्य तपंण, कोईकोई नित्य श्राद्ध भी करते हैं। -हर अमावस्या को भी तपंण करने की रीति है। घर का बड़ा ही प्रायइन कामों को : करता है। शिल्पकार हरिजन जो सनातनधर्मी हैं, वे अमंत्रक क्रियाकर्म तथा मुंडन करते- हैं, और श्राद्ध ज्यादातर आश्विन कृष्ण अमावस्या को करते है। जमाई या भांजे ही उनके पुरोहित होते हैं।

नान्दी श्राद्ध कर्म तो सभी शुभ कार्यों में भी किया जाता है। यहॉ विवाह में नान्दी श्राद्ध का क्या औचित्य है इसको समझियें -

1. विवाह मे अशौच आदि की सभावना हो तो 10 दिनो पहले नान्दी मुख श्राद्ध करना चाहिये नान्दी मुख श्राद्ध के बाद विवाह सम्पन्न अशौच होने पर भी वर- वधु को और श्राद्ध करना चाहिये। नान्दी श्राद्ध करने के पश्चात् वर – वधू एवं उनके माता – पिता को अशौच नहीं लगता है।

2. "कुष्माण्ड सूक्तके अनुसार नान्दी् श्राध्द के पहले भी विवाह के लिए " सामग्री तैयार होने पर आशौच प्राप्ति हो तो प्रायश्चित करके विवाह कार्यक्रम होता है. प्रायश्चित के लिए हबन , गोदान और पञ्चगव्य प्राशन करें।

3. विवाह के समय हवन में पूर्व अथवा मध्य में या अन्त में कन्या यदि रजस्वला हो जाने पर कन्या को स्नान करा कर ``युञ्जान``इस मंत्र से हवन करके अवशिष्ट कर्म करना चाहिये

4. वधु या वर के माता को रजोदर्शन की संभावना हो तो नान्दी श्राद्ध दस दिनो के पूर्व कर लेना चाहिये। नान्दी श्राद्ध के बाद रजोदर्शनजन्य दोष नहीं होता।

5. नान्दी श्राद्ध के पहले रजोदर्शन होने पर " शुद्ध होकर श्राद्ध करना चाहिये।

6. वर या वधू की माता के रजस्वला अथवा सन्तान प्राप्ति होने पर विवाह करके श्रीशांति कर सकता है।

7. विवाह में आशौच की संभावना हो तो, आशौच के पूर्व अन्न का संकल्प कर देना चाहिये। फिर उस संकल्पित अन्न का दोनों पक्षों के मनुष्य भोजन कर सकते हैंउसमें कोई दोष नहीं होता है.। परिवेषण असगोत्र के मनुष्य को करना चाहिये।

8. विवाह में वरवधू को- "ग्रन्थिबन्धन.शास्त्र विहित है कन्यादान के पूर्व " .कन्यादान के बाद नहीं कन्यादाता को अपनी स्त्री के साथ ग्रन्थिबन्धन कन्यादान के पूर्व होना चाहिये।

9. दो कन्या का विवाह एक समय हो सकता है परन्तु एक साथ नही। लेकिन एक कन्या का वैवाहिक कृत्यं समाप्त होने पर द्वार. भी हो सकता है भेद और आचार्य भेद से-

10. एक समय में दो शुभ कर्म करना उत्तम नहीं है। उसमें भी कन्या के विवाह के अनन्तर पुत्र का विवाह हो सकता है। परन्तु पुत्र विवाह के अनन्तर पुत्री का विवाह छ: महिने तक नहीं हो सकता।

11. समान गोत्र और समान प्रवर वाली कन्या के साथ विवाह निषिध्द है।

12. विवाह के पश्चात एक वर्ष तक पिण्डदान, मृत्तिका स्नान, तिलतर्पण, तीर्थयात्रा,मुण्डन, प्रेतानुगमन आदि नहीं करना चाहिये।

13. विवाह में छिंक का दोष नहीं होता है।

14. वैवाहिक कार्यक्रम में स्पर्शास्पर्श का दोष नहीं होता।

15. वैवाहिक कार्यक्रम में चतुर्थ, द्वादश, चन्द्रमा ग्राहय है।

16. विवाह में छट, अष्टमी, दशमी तथा शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा रिक्ता आदि तिथि निषेद्ध है।

17. विवाह के दिन या पहले दिन अपनेअपने घरों में कन्या के पिता और वर के पिता- को स्त्री,कन्या.स्नानकरना चाहिये पुत्र सहित मंगल- और शुद्ध नवीन वस्त्र -तिलकआभूषण आदि से - करना (नान्दी श्राद्ध) विभूषित होकर गणेश मातृका पूजन चाहिये।

18. श्रेष्ठ दिन में सौलह या बारह या दस या आठ हाथ के परिमाण का मण्डप चारौं द्वार सहित बनाकर उसमें एक हाथ की चौकौर हवनकरती हुई बनावें उसे हल्दी वेदी पूर्व को नीची-, गुलाल, गोघुम तथा चूने आदि से सुशोभित करें. वेदी के चारों ओर काठ की चार-हवन खुंठी निम्नप्रकार से रोपे, उन्हीं के बाहर सूत लपेटे कन्या, सिंह और तुला राशियां संक्राति में तो ईशान कोण में प्रथम वृश्चक, धनु, और मकर ये राशियां संक्राति में तो वायव्य कोण में प्रथम मीन, मेष और कुम्भ ये राशियां संक्रांति में तो नऋत्य कोण में प्रथम. वृष , मिथुन और कर्क ये राशियां संक्राति में तो नान्दी श्राद्ध करना चाहिए।

प्रयोग विधि –

नान्दी श्राद्ध पंचांग पूजन का अंग है सभी संस्कारो से और शुभ कर्मों से पूर्व आभ्युदयिक करना अनिवार्य है।

सर्वप्रथम एक पुष्प लेकर हाथ जोड़ें और मन्त्र बोलें

यं ब्रता वेदान्तविदो वदन्ति परं प्रधानं पुरूषं तथान्ये।
विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय॥
अभीप्सितार्थसिद्धयर्थं पूजितो यः सुरैरपि।
सर्वविघ्नच्छिदे तस्मै गणाधिपतये नमः॥

पुष्प गणेश जी में चढायें। अपने दायी और कर्म पात्र स्थापन करें भूमि का स्पर्श करें।

स्वदक्षिण भागे कर्म पात्रस्था पनम्- ॐ भूरीरस्यदितिरसि विश्वधाया व्विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री पृथिवीं अच्छ पृथिवी दृ ह पृथिवीं मा हि सीः॥

भूमि में गन्धादि से शंखचक्र लिखें आसन के लिये तीन दूर्वा रखें फिर पात्र और पात्र के ऊपर दूर्वा की पवित्री रखें।

भूमौ गन्धारिना शंखचक्र लिखित्वा आसनंदूर्वात्रय आसने पात्रं पवित्रीकरणं दूर्वात्रयेण -

ॐ पवित्रे स्थे बैष्णव्यो सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यीच्छद्रेण पीकोण सूर्यस्य रश्मिभिः॥

तत्पश्चात् अर्धा में जल चढ़ाये और मन्त्र बोलें-

ॐ शन्नो देवीरभीष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्त्रवन्तु नः ।

अब कर्म पात्र में जौ गन्ध अक्षत पुष्प चढ़ायें

यवान-ॐ यवोऽसि यवयास्मद् देषो यवयारातीः

ॐ यवोऽसि सोम देवत्यो गोसवो देवनिर्मितः प्रत्नमद्भिःपृष्टया नान्दीमुखाँन्नोकान्प्रीणाहिनःस्वहा॥

यव गन्धाक्षत पुष्पादितूष्णी निक्षित्य

तेन जलेन आत्मानं नान्दीमुखश्राद्धं सामग्रीं च सम्प्रीक्ष्य अपवित्र............।

दूर्वा और जौ लेकर हाथ जोडें मन्त्र बोलें--

देवताभ्यः देवताभ्य महायोगिभ्य एवं च
नमः स्वाहायै नित्यमेव नमोनमः बार
सप्तव्याधा दशार्णेषु मृगा कालज्जरे गिरौ
चक्रवाकाः शरदिद्वपे हंसाः सरीस मानसे
तेडप जाताःकुरूक्षेत्र ब्रह्मणा वेद पारणाः

प्रस्थितादीर्य मध्वान धूयं किमवासीदथ

श्राद्धकाले गयां ध्यात्वदेव गदाधरम-

मनसा चपिततन्ध्त्वा नान्दीश्रादं समारभे।।

इसके बाद जौ और दूर्वा दाई कमर में धोती में दबा लें और मन्त्र बोलें--

ऊँ सोमस्य नीविरसि विष्णोः शर्म्मासि शर्म-षजमानस्य योनिरीस सुसस्याः कृपीकृधी ।।

दिखन्धनम्- दूर्वा और जौ लेकर चारों दिशाओं में छोडें मन्त्र बोलें--

ऊँ अग्निष्वाताः पितृगणाः प्राचींक्षन्तुमेदिशम्

तथा बार्हिषदः पान्तु याम्यां यक पितरस्तथा।

प्रतीचीमाज्यस्तद्वदुदीचीमापि सोमपाः

विदिशष्च गणाः सर्वे रक्षन्तूर्ध्वमधोपि वा

रक्षोभूमश्चाधिपस्तेषां यगो रक्षां करोतु मे।।

यवा रक्षन्तु दितिजात दर्भा रक्षन्तु राक्षसात्

पांत्ति वै श्रेत्रियो रक्षेदीतीथिः,

अब गायत्री मन्त्र का स्मरण करके कर्म पात्र के जल को अभिमन्त्रित करें

गायत्रा कर्मपात्रोदभं अभिमन्त्रय तेन जलेनशुद्दि दृष्टिदोष निपातादामात्रा दीनां पकितास्तु इति अन्नं संप्रोक्ष

तत्पश्चात् पतिज्ञा संकल्प करें --

प्रतिज्ञासंकल्पः- अद्येहेत्यादि देशकालो संकोर्त्य अमुक गोत्राणामस्मन्मातृपिता महीप्रपितामहीनाम अमुकामुक देर्वानां वसुरूप्रादित्यस्वरूपाणां नान्दीमुखीनां तथ्सस मुक गोत्राणामस्मत्पतृपितामह प्रपितामहानां अमुकामुक देवानां वसुरूद्रदित्यस्वरूपाणां नान्दीमुखानां तथा अमुक गोत्राणामस्मन्मातमहप्रतामह्त्ववृद्धप्रमातामहानाम अमुकामुक देवानां सपत्नीकानां वसुरूद्रदित्यस्वरूपाणां नान्दीमुखानां प्रीतये अमुककर्म्मनिमित्तकं सत्यवसुसंज्ञक विश्वेदेव पूर्वकं संक्षिप्त संकल्पाविधिना नान्दी मुचखश्राद्धमहं करिष्ये।।

आसनदान संकल्प --

पहला आसन विश्वेदेव का होगा 1- अद्येह नान्दीमुखा अमुकगोत्रास्मन्मात्रादित्रय तथा पित्रादित्रय तथाऽमुक गोत्रास्मन्मातामहादित्रय श्राद्धसम्बन्धिनां सत्यवसुसंज्ञकानां विश्वेषां देवानां अदमासनं वो नमो वृद्धिश्रियै।।

दूसरा आसन माता दादी परदादी के लिये होगा -

2-अद्येह अमुकगोत्राणामस्मन्मातृमाहिप्रपीतामहानाम् इदमासनं वो नमो वृद्धि श्रियै॥

तीसरा आसन पिता दादा परदादा के लिये होगा---

3-अद्येह अमुकगोत्राणा मस्मपितृपितामानाम् अमुकामुक देवानां वसुस्द्रदित्यस्वरूपाणां नान्दीमुर्खीनी इदमासनं वो नमो वृद्धि2 श्रियै॥

चौथा आसन नाना परनाना वृद्धनाना के लिये होगा--

4-अद्येह अमुकामुकदेवानां सपत्नीकानां वसुरूद्रदित्यस्वरूपाणी नान्दीमुखानाम् अदमासनं वो नमो विद्ध रश्रियै॥

आसन दान के बाद आसनों का पूजन करें--

आसनपूजनंम्-सप्तऋषयः प्रपिहिताः शरीरे सप्तरक्षीन्त सदमप्रांद सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतौ अरचप्नजौ सत्रसदौ चदेवौ॥

ऊँ सत्यवसुसंज्ञेकेभ्यो विश्वेभ्योदेवेभ्योनमः

‘‘ मातृपितामहि प्रपीतहीभ्यो नमः

‘‘ पितृपितामह प्रपितामहेभ्यो नमः

‘‘ मातामहप्रमाताम प्रमातामहेभ्योभ्यो नमः

धूपदीपसंकल्पः- अद्येह अमुकगोत्रास्मन्मात्रदित्रय तथा मुकगोत्रास्मन्मातामहादियश्राद्ध-सम्बन्धिनःसत्यवसुज्जक विश्वेदेवा बासनार्चनविधौ-तथा अमुकामुकी देव्यःनान्दीमुख्यः तथाऽमुकगोत्रा अस्मत्पितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकदेवा-वसुरूद्रादित्यस्वरूपाः नान्दीमुखाः तथाऽमुकदेवा अस्मन्मातामममहप्रमातामहबृद्धप्रमातामहा अमुकामुकदेवा सपत्नीका वसुरूद्रादित्यस्वस्पा नान्दीमुखाः आसनार्चनविधाविमानिगंधाक्षतपुष्पधूपदीप नैवेद्य भूषणदीनि यथा विभागं वो नमो बृद्धि 2 श्रियै॥

आमान्न (कच्चा भोजन सामाग्री) के चार भाग करें

आमान्नं चतुर्धाविभज्य-

पहला भाग विश्वेदेव का होगा 1- अद्येहअमुकगोत्रास्मन्मात्रादित्रय तथा पित्रादित्रय तथाऽमुकगोत्रास्मन्मातामहादित्रसश्राद्धसम्बन्धिभ्यः त्यवसुसंज्ञकेभ्योविश्वेभ्योदेवेभ्य बमासनं दधिधृतजलसहितं यथाषैन वो नमो बृद्धिरश्रियै॥

दूसरा भाग माता दादी परदादी के लिये होगा -

2-तथा मुकगोत्राभ्यः अरमन्मातपितामहि प्रसिता महीभ्यः अमुकामुकदेवीभ्यो वसुरयादित्य स्वरूपाभ्यो नान्दी मुखीभ्यः इदमासाभं दीपवृत जलसहिते यथाविभागं वो नमो वृद्धि2श्रिपै॥

तीसरा भाग पिता दादा परदादा के लिये होगा---

3-तथाऽमुकगोत्रेभ्योऽस्मनपिता पितामहेभ्योऽमुकासुक देवेभ्यो वसुरुद्रादित्य स्वरूपेभ्यो नान्दीमुखेभ्य इदमामान्नं दधिघृजजलसहितं यथाविभागं वो नमो बृद्धिर श्रियै।।

चैाथा आसन नाना परनाना वृद्धनाना के लिये होगा--

4-तथाऽमुकगोत्रेभ्योऽमन मातामहप्रमाताभहबृद्धप्रभातमेहेइयो अमुकामुकदेवेभ्यो सपत्निकभ्यो वसुरूद्रदित्यस्वरूपभ्यो नान्दीमुखेभ्यः-इदमामान्नं दधिघृतजल सहितं यथाविभागं वो नमो बृद्धि रश्रियै।

अन्नपूजनम्- अन्नका पूजन करें-यथेमां वाचं कल्याणी मावदानि जनेभ्यः ब्रह्मरायाभ्या œ शूद्राय चार्याय च स्वायचारणाय च। प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूया œ समयम्मे कामः समृद्ध्यताम्।।

तत्पश्चात् दक्षिणा संकल्प करें- दक्षिणासंकल्पःअस्मन्यातृपितामहीप्रपितामहीनी अमुकामुकदेवानां वसुरूद्रदित्यस्वरूपाणां नान्दीमुखीनां तथाऽमुकगोत्राणां अस्मत्पितृपितामहप्रपितामहानाम् अमुकामुकदेवानां वसुरूद्रदित्यस्वपाणी नान्दीमुखानां तथाऽमुकगोत्राणाम् अस्मन्मातामहप्रमातामहबृमातामहानाम् अमुकामुकदेवानांसवत्नीकाना वसुरूद्रदित्यस्वरूपाणां नान्दीमुखानां

प्रीतयेऽमुककर्मनिमितकसत्यवसंज्ञक विश्वे देवपूर्वक नान्दीमुखश्राद्धकर्मणः साइफलप्राप्तये साद्गुण्यार्थ च मातृणां पितृणां मातामहानां विश्वेषां देवानां चप्रितये इमां दधिद्राक्षामलकनिष्क्रयिणीं दक्षिणी यथा विभागं वो नमो वृद्धि 2 श्रियै।।

स्वयं को तिलक करें स्वतिलकम्-   सत्यानुष्ठानसम्पन्नाः सर्वदायज्ञबृद्धयः

पितृमातृपराश्चैव सन्त्वस्मत्कुलजराः।।

पुष्प लेकर हाथ जोडें विशेष पूजन करें - आयुः प्रजां धनं विद्या स्वर्गं मोक्षं सुखानिच

प्रयच्छन्तु तथा राज्यं नृणां प्रीताः पितामहाः।।

आयुः पुत्रान यशःस्वर्ग कीर्तिं पुष्टिं बलं श्रियम्।

पशून्सुखं धर्म धान्यं प्राप्नुयां पितृजूननात।।

हाथ में जल लें और कहें- अमुककर्मणःपूर्वाइवेन कूतं नान्दीमुखाभ्युदीयक राद्धं विसर्जये। इदं श्राद्धं मथा देशहीनं श्रद्धाहीनं दक्षिणाहीनं भावनाहीनं वाक्याहीनं यत्कृतं तत्सुकृमस्तु यन्नकृतं तत् श्रीविष्णोः प्रसादात ब्राहनण वचनात सर्व परिपूर्णमिस्तु अस्तुपरिपूर्णम-।।

कर्मपात्र को हाथ में लें और एक परिक्रमा करें-

कर्मपात्रं भ्रातयित्वा- ऊँ आमा व्वाजस्य प्रसवोजगम्या देवे द्यावापृथिवी विश्वरूपे आमा गन्तां पितरा मातरा चामा सोमो अमृतत्वेन गम्यात्।

पुनः आचमन करके अच्युताय नमः तीन बार कहें।

बोध प्रश्न -

१. श्रद्धया दीयते यत् तत् .... ।

क. पूजनम् ख. श्राद्धम् ग. नान्दी श्राद्धम् घ. श्रद्धा

२. धर्मग्रन्थानुसार श्राद्ध कितने प्रकार के होते है ।

क. ५ ख. ६ ग. ७ घ. ८

३. कुल वृद्धि हेतु पितरों को प्रसन्न करने वाला श्राद्ध होता है –

क. नित्य ख. नान्दी श्राद्ध ग. काम्य घ. वृद्धि

४. विवाह में यदि अशौच की सम्भावना हो तो कितने दिन पूर्व श्राद्ध करना चाहिए –

क. ९ ख. २ ग. १० घ. १२

५. श्राद्ध में तर्पण किससे दिया जाता है –

क. कुशा से ख. जल से ग. तिल से घ. तीनों से

2.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि 'श्रद्धया दीयते यत् तत् श्राद्धम्' पितरों की तृप्ति के लिए जो सनातन विधि से जो कर्म किया जाता है उसे श्राद्ध कहते हैं । किसी भी कर्म को यदि श्रद्धा और विश्वास से नहीं किया जाता तो वह निष्फल होता है। महर्षि पाराशर का मत है कि देश-काल के अनुसार यज्ञ पात्र में हवन आदि के द्वारा, तिल, जौ, कुशा तथा मंत्रों से परिपूर्ण कर्म श्राद्ध होता है। इस प्रकार किया जाने वाला यह पितृ यज्ञ कर्ता के सांसारिक जीवन को सुखमय बनाने के साथ परलोक भी सुधारता है। साथ ही जिस दिव्य आत्मा का श्राद्ध किया जाता है उसे तृप्ति एवं कर्म बंधनों से मुक्ति भी मिल जाती है। अनेक धर्मग्रंथों के अनुसार नित्य, नैमित्तिक, काम्य, वृद्धि और पार्वण पाँच प्रकार के श्राद्ध बताए गए हैं जिनमें प्रतिदिन पितृ और ऋषि तर्पण आदि द्वारा किया जाने वाला श्राद्ध नित्य श्राद्ध कहलाता है। इसमें केवल जल प्रदान करने से भी कर्म की पूर्ति हो जाती है। इसी प्रकार, एकोद्दिष्ट श्राद्ध को नैमित्तिक, किसी कामना की पूर्ति हेतु काम्य श्राद्ध, पुत्र प्राप्ति, विवाह आदि मांगलिक कार्यों में जिनसे कुल वृद्धि होती है, के पूजन के साथ पितरों को प्रसन्न करने के लिए वृद्धि श्राद्ध किया जाता है जिसे नान्दी श्राद्ध भी कहते हैं। इसके अलावा पुण्यतिथि, अमावस्या अथवा पितृ पक्ष (महालय) में किया जाने वाला श्राद्ध कर्म पार्वण श्राद्ध कहलाता है।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

तृप्ति – पूर्ण इच्छा

श्रद्धया – श्रद्धा पूर्वक

काम्य – काम करने योग्य

पितृपक्ष – महालया आश्विन कृष्णपक्ष के प्रतिपदा से अमावस्या पर्यन्त

पुण्यतिथि – देहावसान की तिथि

तर्पण- अंजलि द्वारा जलार्पण

आवाहयामि – आवाहन करता हूॅ।

नित्य – प्रतिदिन

नैमित्तिक – निमित्त वाला

वृद्धि – बढ़ना

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

१. ख

२. क

३. ख

४. ग

५. घ

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

नित्यकर्मपूजाप्रकाश

कर्मकाण्ड प्रदीप

संस्कार प्रदीप

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

१. नान्दी श्राद्ध से आप क्या समझते है। स्पष्ट कीजिये।

२. पूजन में नान्दी श्राद्ध का महत्व निरूपण कीजिये।

३. नान्दी श्राद्ध पूजन मन्त्र लिखिए।

खण्ड – 4

नवग्रह मण्डल पूजन

ईकाई - 1 नवग्रहमण्डल निर्माण

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 नवग्रह मण्डल
1.3.1 नवग्रह मण्डल का परिचय
1.3.2 नवग्रह वेदी एवं मण्डल निर्माण का परिमाण
1.4 नवग्रह मण्डल निर्माण विधान
1.4.1 नवग्रह मण्डल रचना प्रकार
1.4.2 नवग्रह मण्डल पर ग्रहों की प्रतिमा, आकार एवं विशेष विचार
1.5 सारांशः
1.6 पारिभाषिक शब्दावली
1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.8 बोधप्रश्नों के उत्तर
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में नवग्रह मण्डल निर्माण संबंधी प्रविधि का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व शान्ति प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कोई भी जातक यदि कोई शान्ति कराता है तो प्रायः शान्ति प्रविधियों में नवग्रह मण्डल का निर्माण करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में नवग्रह मण्डल का निर्माण आप कैसे करेगें, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

किसी भी पौरोहित्यिक कर्म में नवग्रह मण्डल का निर्माण प्रायः किया जाता है। ग्रहाधीनं जगत्सर्वं कहते हुये आचार्यों ने बतलाया है कि ग्रहों के अधीन ही सारा संसार चलता है। इसलिये ग्रहों की कृपा व्यक्ति के ऊपर होनी आवश्यक है। मानव जीवन का सम्पूर्ण काल किसी न किसी ग्रह की दशा में व्यतीत होता है। इसलिये भी वह काल शुभ रहे इसकी अपेक्षा व्यक्ति करता है। इसके साथ- साथ ही सामान्य रूप से पौरोहित्य कर्म में भी नवग्रह मण्डल का निर्माण किया जाता है । ग्रहों के नाम पर सामान्य लोगों में यही धारणा बनी रहती है कि नौ ग्रह है उनका नाम ले लो, बश, हो गई शान्ति । लेकिन जब आप नवग्रह मण्डल का विधान देखेंगे तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि नवग्रह मण्डल पर तो कुल चौवालीश 44 देवता होते हैं। इनका कहाँ - कहॉं स्थापन किया जाता है ? इनका वर्ण क्या होता है? इत्यादि विविध ज्ञान की प्राप्ति आपको इस ईकाई से होगी।

इस इकाई के अध्ययन से आप नवग्रह मण्डल निर्माण करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे संबंधित व्यक्ति का संबंधी दोषों से निवारण हो सकेगा जिससे वह अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं संवर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, समाज कल्याण की भावना का पूर्णतया ध्यान देना, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान सहित वर्णन करने का प्रयास करना एवं वृहद् एवं संक्षिप्त दोनों विधियों के प्रस्तुतिकरण का प्रयास करना आदि, इस शान्ति के नाम पर ठगी, भ्रष्टाचार, मिथ्या भ्रमादि का निवारण हो सकेगा।

1.2 उद्देश्य-

उपर्युक्त अध्ययन से आप नवग्रह मण्डल निर्माण की आवश्यकता को समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते है।

- नवग्रह मण्डल निर्माण कर समस्त कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।
- नवग्रह मण्डल निर्माण की शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
- इस कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।
- प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
- लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
- समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

1.3 नवग्रह मण्डल

1.3.1 नवग्रह मण्डल का परिचय

यह सर्व विदित है कि जब भी हम कोई शान्ति करते हैं तो नवग्रह मण्डल का निर्माण अवश्य करते हैं। न केवल शान्ति अपितु यज्ञों में भी नवग्रह मण्डल बनाना पड़ता है। नवग्रह मण्डल के निर्माण के बिना हम किसी भी अनुष्ठानिक प्रक्रिया का सम्पादन नही कर सकते इसलिये नवग्रह मण्डल का ज्ञान अति आवश्यक है। ईशाने ग्रह वेदिका कहते हुये यह बतलाया गया है कि नवग्रह मण्डल का स्थान ईशान कोण में होता है। किसी भी यज्ञ के सम्पादन में अग्नि कोण में योगिनी मण्डल, नैर्ऋत्य कोण में वास्तु मण्डल , वायव्य कोण में क्षेत्रपाल मण्डल एवं ईशान में नवग्रह मण्डल बनाने का नियम है। नवग्रह मण्डल पर कुल 44 चौवालीस देवता होतें है। जिसमें नवग्रह के रूप में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु होते है। प्रत्येक ग्रहों के एक-एक अधिदेवता एवं एक-एक प्रत्यधि देवता होते है। अधि देवता का स्थान ग्रह के दक्षिण भाग में तथा प्रत्यधि देवता का स्थान ग्रह के वाम भाग में होता है।

शिवः शिवा गुहो विष्णु ब्रह्मेन्द्र यमकालकाः।
चित्रगुप्तो अथ भान्वादि दक्षिणे चाधिदेवताः।।

अर्थात् शिव, शिवा, स्कन्द, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, काल, एवं चित्रगुप्त को अधिदेवता तथा अग्नि, आप, धरा, विष्णु, शक्र, इन्द्राणी, प्रजापति, सर्प एवं ब्रह्मा प्रत्यधि देवता के रूप में जाने जाते है। तदनन्तर पंचलोकपालों के रूप गणेश, अम्बिका, वायु, आकाश एवं अश्विनी कुमार माने जाते है। इसके अलावा वास्तु एवं क्षेत्रपाल का भी स्थान होता है। दशदिक्पाल इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, पश्चिम, वायु, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा एवं अनन्त होते हैं। इस प्रकार से कुल 44 देवताओं का स्थान नवग्रह मण्डल पर होता है।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें नवग्रह मण्डल का परिचय आपने जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रह मण्डल पर कितने देवता होते हैं इनके बारे में आप पुष्टता से बता सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-नवग्रह मण्डल कहां बनाया जाता है?

क-अग्नि कोण में, ख- नैर्ऋत्य कोण में, ग- बायव्य कोण में, घ- ईशानकोण में।

प्रश्न 2- नवग्रह मण्डल पर कुल कितने देवता होते हैं?

क- 44, ख- 45, ग- 46, घ- 47।

प्रश्न 3-नवग्रह के अधिदेवताओं की संख्या कितनी होती है?

क- 7, ख-8, ग-9, घ-10।

प्रश्न 4-नवग्रह के प्रत्यधिदेवताओं की संख्या कितनी होती है?

क-7, ख- 8, ग-9, घ-10।

प्रश्न 5- आकाश क्या है?

क- नवग्रह, ख- अधिदेवता, ग-प्रत्यधि देवता, घ- पंचलोकपाल।

प्रश्न 6- अश्विनी कुमार क्या है?

क- नवग्रह, ख- अधिदेवता, ग-प्रत्यधि देवता, घ- पंचलोकपाल।

प्रश्न 7- शिव क्या है?

क- नवग्रह, ख- अधिदेवता, ग-प्रत्यधि देवता, घ- पंचलोकपाल।

प्रश्न 8- धरा क्या है?

क- नवग्रह, ख- अधिदेवता, ग-प्रत्यधि देवता, घ- पंचलोकपाल।

प्रश्न 9- स्कन्द क्या है?

क- नवग्रह, ख- अधिदेवता, ग-प्रत्यधि देवता, घ- पंचलोकपाल।

प्रश्न 10- शुक्र क्या है?

क- नवग्रह, ख- अधिदेवता, ग-प्रत्यधि देवता, घ- पंचलोकपाल।

इस प्रकरण में आपने नवग्रह मण्डल का सामान्य परिचय जाना। अब हम आपका ध्यान नवग्रह वेदी उवं नवग्रह मण्डल निर्माण के व्यासादि परिमाण की ओर आकर्षित करना चाहते हैं जिसका सम्पूर्ण विवरण अग्रिम अंक में इस प्रकार है-

1.3.2. नवग्रह वेदी एवं मण्डल निर्माण का परिमाण-

इस प्रकरण में आप इस बात का ज्ञान प्राप्त करेगें कि नवग्रह वेदी एवं मण्डल बनाते समय वेदी एवं ग्रह का कितना व्यास होना चाहिये अर्थात् कितने अंगुल की वेदी होगी तथा उस पर निर्मित किये जाने वाले सूर्यादि ग्रहों का क्या परिमाण होगा इत्यादि। इस ज्ञान के अभाव में किया गया वेदी निर्माण या नवग्रह मण्डल का निर्माण पूर्णतया शुद्ध एवं प्रामाणिक नही होता है इसलिये इसका ज्ञान प्रत्येक कर्मकाण्ड करने वाले को अवश्य होना चाहिये अन्यथा उसका कर्मकाण्ड सफलता दायक नही हो सकता है।

मत्स्य पुराण एवं कोटि होम पद्धति में लिखा गया है कि-

द्वादशांगुलक सूर्यः सोमे तु द्विगुणो भवेत्।
त्र्यंगुलस्तु भवेद्भौमे बुधे च चतुरंगुलः।
गुरौ षडंगुलः प्रोक्तः शुक्रे चैव नवांगुलः।
द्वयंगुलस्तु शनेश्चैव राहौ च द्वादशांगुलः।
केतौ षडंगुलो व्यासो मण्डलेति कथितो बुधैरिति।

अर्थात् उपरोक्त श्लोक से यह सिद्ध होता है कि नवग्रह मण्डल में सूर्य का निर्माण बारह अंगुल का किया जाना चाहिये। चन्द्रमा को सूर्य का दुगूना यानी चौबीस अंगुल का बनाना चाहिये। मंगल को तीन अंगुल का, बुध को चार अंगुल का, बृहस्पति को छः अंगुल का, शुक्र को नव अंगुल का, शनि को दो अंगुल का, राहु को बारह अंगुल का एवं केतु को छः अंगुल का निर्माण करना चाहिये। आचार्य वसिष्ठ ने ग्रह पीठ की चर्चा करते हुये यह बतलाया है कि नवग्रह का पीठ कुण्ड के रुद्र भाग यानी ईशान कोण में दो हाथ की वेदी पर होना चाहिये। इस वेदी का मध्य भाग किंचित् उन्नत होना चाहिये। इस वेदी की ऊचाई बारह अंगुल की होनी चाहिये तथा कुण्ड एवं पीठ से तीस अंगुल का अन्तराल होना चाहिये। इस अवसर पर वेदी किस प्रकार बनाना चाहिये इसका भी ज्ञान कर्मकाण्ड के लिये आवश्यक है इसलिये हम वेदी के निर्माण के विषय पर आवश्यक विन्दुओं को इस प्रकार आत्मसात कर सकते हैं।

वेदी की रचना का प्रमाणिक ग्रन्थ कुण्डमण्डपसिद्धि स्वीकार किया गया है। इस ग्रन्थ के

रचयिता प्राचीन आचार्य बूव शर्मा जी के पुत्र विठ्ठल जी दीक्षित है। इनके अनुसार सबसे पहले हस्तादिमान तैयार करना चाहिये। किसी भी प्रकार के वेदी मण्डप इत्यादि के निर्माणार्थ कर्ता समतल भूमि पर सीधा खड़ा होकर अपनी दोनों भुजायें आकाश की ओर यानी ऊपर की ओर फैलायें। हाथ के अंगुलियों के छोर यानी मध्यमा अंगुलि के सबसे ऊपरी तल से पैर की अंगुलियों तक माप लेना चाहिये। उस सम्पूर्ण माप का शरांश निकालना चाहिये। शरांश का मतलब पंचमांश मानना चाहिये। यह पंचमांश एक हाथ कहलाता है। तात्पर्यार्थ यह भी निकाला जा सकता है कि हर ऊर्ध्व बाहु किये हुये व्यक्ति के पंचमाश का मान उसके हाथ से एक हाथ होता है। कुण्डमण्डप सिद्धि नामक ग्रन्थ में इस प्रकार का श्लोक देखने को मिलता है-

कृतोर्ध्वबाहोः समभूगतस्य कर्तुः शरांशो प्रवदोच्छ्रितस्य।
यो वा सहस्तो अस्य जिनांशकोपि स्यादंगुलं तत्तदिभांशका ये।
यवो यूका चलिक्षा च वालाग्रं चैवमादयः।
कृतमुष्टिः करो रत्निररत्निरकनिष्ठिका।।

इसके अनुसार शरांश द्वारा निकाला गया हस्त मान एक प्रकार का है। दूसरे प्रकार का हाथ अपने अंगुल से चौबीस अंगुल का होता है। एक प्रकार का हाथ , हाथ की कोहनी से मध्यमा अंगुलि तक के मान तक होता है। मुष्टि बनाकर भी एक प्रकार का हाथ होता है। अकिनिष्ठिका वाला हाथ भी एक प्रकार का हाथ होता है। इस प्रकार उपरोक्त प्रकरण से स्पष्ट हुआ कि पांच प्रकार का हस्त मान होता है। हस्तमान के निर्धारण हो जाने के बाद हमें अंगुल का निर्धारण करना चाहिये। एक हाथ के चौबीसवें भाग को अंगुल कहते हैं। अर्थात् हस्तमान निर्धारित हो जाने पर अंगुल का निधारण आसान हो जाता है। अंगुल का इभांश यव होता है। इभांश का मतलब इभ अंश होता है। इभ मतलब होता है आठ यानी आठवां अंश इभांश कहलाता है । अंगुल का आठवॅा भाग यव होता है, यव का आंठवां भाग यूका होता है। यूका का आठवां भाग लिक्षा होता है। लिक्षा का आठवां भाग बालाग्र होता है। अर्थात् इसका पैमाना इस प्रकार है-

आठ बालाग्र - एक लिक्षा।
आठ लिक्षा - एक यूका।
आठ यूका - एक यव।
आठ यव - एक अंगुल।
चौबीस अंगुल - एक हाथ।

इसके अलावा एक बात और विचारणीय है कि ग्रह वेदिका ईशान में तब बनेगी जब ईशान

निधारित हो जायेगा। इस बात को कुण्डदर्पण नामक ग्रन्थ में लिखा गया है कि बिना दिक्साधन किये कुण्ड मण्डपादि का निर्माण मृत्युभय प्रदायक होता है। वृद्ध नारद के वचन के अनुसार दिशाओं की सम्यक् जानकारी न होने पर कुण्डमण्डपादि का निर्माण कुल नाशक होता है। कुण्ड प्रदीप नामक ग्रन्थ में लिखा है कि आचार्य एवं यजमान के दिशा ज्ञान के अभाव में किया गया कर्म धनक्षय का कारक होता है। वहां स्पष्ट रूप से लिखा गया है कि यदि यज्ञ कर्ता दिशाओं की स्थिति के विषय में भ्रान्त है तो उस दिंभ्रान्त वेदी पर पूजन का फल भी भ्रान्तिदायक होता है। परन्तु यदि होमस्थान पर्वत, नदीतट, गृह या रुद्रायन की भूमि हो तो दिक्साधन की आवश्यकता नही है। परन्तु वर्तमान में दिक्सूचक यन्त्र की सहायता से किसी भी स्थान में दिशाओं की सही जानकारी की जा सकती है।

अब प्रश्न उठता है कि जहां दिक्सूचक यन्त्र नही है वहां कैसे दिशा का निर्धारण किया जा सकेगा? या दिक्सूचक यन्त्र के आविष्कार के पहले यदि यज्ञीय गतिविधियां होती थी तो कैसे होती थी? इस प्रश्न का उत्तर जब हम आध्यात्मिक शास्त्रों में खोजते हैं तो प्राप्त होता है कि पहले दिक्साधन की विधि थी उसके अनुसार दिशा का साधन किया जाता था। उस पूर्व प्राचीन विधि के ज्ञानार्थ संक्षेप में प्राचीन दिक्साधन विधि का वर्णन करना उचित समझता हूं।

ज्ञात्वा पूर्वं धरित्रीं दहनखननं सप्लावनैः संविशोध्य ।
पश्चात् कृत्वा समानां मुकुरजठरवद्वाचयित्वा द्विजेन्द्रैः ।
पुण्याहं कूर्मशेषौ क्षितिमपि कुसुमाद्यैः समाराध्यशुद्धे ।
वारे तिथ्यां च कुर्यात् सुरपतिककुभः साधनं मण्डपार्थम् ।।

सर्वप्रथम जिस स्थान पर हमें वेदी या मण्डप या कुण्ड बनाना हो उस स्थान का ज्ञान कर यानी यह स्थान उपयुक्त होगा ऐसा जानकर भूमि को जलाना चाहिये। तदनन्तर उसका खनन किया जाता है । तदनन्तर उसमें जल डालकर जल प्लवन किया जाता है। उसके बाद उस भूमि का सम्यक् विशोधन किया जाता है यानी उसमें अनुपयुक्त चीजें हो तो निकाल देना चाहिये। आज कल लोगों के अन्दर एक धारणा काम कर रही है कि भूमि के अन्दर क्या है इसको मत सोचो । कहते हैं प्लास्टिक वगैरह जितने हैं इनको भूमि में दबा दो लेकिन यह उचित नही है । अनुपयुक्त चीजें भूमि में गाड़ने से उसका प्रभाव भूमि के तत्वों पर पड़ेगा और उस भूमि के जो आवश्यक गुण है जिसे विज्ञान की भाषा में तत्व कहते हैं का ह्रास होने लगेगा। जिससे उस पर रहने वालों लोगों की क्रियाये एवं प्रक्रियायें प्रभावित होती रहती है। वास्तु शास्त्र भी इसी ओर हमारा ध्यान आकर्षित करना चाहता है कि यदि तुम अशुद्ध भूमि पर रहोगे तो उस भूमि पर तुम्हारा विकास अवरुद्ध हो जायेगा। आप अपना निधारित कार्य करने का लक्ष्य पूरा नही कर सकेगें। इस बात को लोक में भी प्रायः देखा जता है कि लोग कहते हैं हमारी

यह भूमि जिस पर मेरा घर बना है शायद अशुद्ध है क्योकि जब से मैने अपना आवास यहां बनाया है तब से हमारा कार्य अवरुद्ध हो रहा है। लोग पण्डितों से पूछते रहते हैं कि थोड़ा विचार कर लीजिये इस भूमि पर मै घर बनाना चाहता हूं बनाना उचित होगा कि नही। कृषि विज्ञान भी इसको प्रमाणित करते हुये कहता है कि अपने मिट्टी की जांच कराइये उसके बाद उसके अनुसार उत्पादन लीजिये। जो भूमि शुद्ध एवं सही हो उस भूमि पर किसी भी प्रकार से प्रक्षेपित किया गया बीज जम जाता है और अच्छा उत्पादन होता है लेकिन ठीक इसके विपरीत जिस भूमि को ऊषर बतलाया गया है उसमें कितना ही परिश्रम क्यों न किया जाय, डाले गये बीज की लागत भी वापस नही आ पाती है। इसलिये भूमि का बहुत बड़ा प्रभाव उस व्यक्ति के ऊपर पड़ता है। ठीक इसी बात को सिद्ध करने के लिये इस ग्रन्थकार ने भी वेदी बनाने से पूर्व मिट्टी को दहन, खनन ,संप्लावन एवं संविशोधन की बात की है। इस प्रकार उस भूमि को दर्पण के समान चिकना एवं समतल बना देना चाहिये। तदनन्तर आचार्यों को बुलाकर पुण्याह वाचन कराया जाता है।

पुण्याह वाचन क्या है? यह कर्मकाण्ड का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंश है। जो गणेशाम्बिका पूजन के अनन्तर कलश स्थापन से प्रारम्भ होता है। इसका प्रयोग तो आप उसके इकाई में देखेगें परन्तु सामान्यतया यही अवधेय है कि पुण्याह वाचन में पुण्यों का वाचन वैदिक विद्वानों द्वारा किया जाता है। इसमें यजमान यह कामना करता है कि हम जिस उद्देश्य को लेकर इस वेदी का निर्माण करने जा रहे है वह हमारा उद्देश्य शान्ति करने वाला हो, पुष्टि प्रदान करने वाला हो, तुष्टि यानी संतुष्टि प्रदान करने वाला हो, वृद्धि करने वाला हो, अविघ्नता प्रदान करने वाला हो, आरोग्य प्रदान करने वाला हो, कल्याणकारी हो, हमारे सारे कर्म कल्याणकारी हो, कर्म मेरी समृद्धि हो यानी मेरे में कर्म करने की क्षमता बनी रहे, धर्म में समृद्धि बनी रहे, ज्ञान में हमारी समृद्धि बनी रहे, शास्त्र में हमारी समृद्धि बनी रहे। जो अनुशासन दे उसे शास्त्र कहते है। शास्त्र एक नियम देता है उस नियम से नियमित प्राणी पुण्य का भागी होता है। आज कल एक उक्ति अत्यन्त चरितार्थ होती है कि पुण्य लोग करना नही चाहते लेकिन पुण्य के फल को अवश्य लेना चाहते है। पाप करतें हैं लेकिन पाप के फल को नही लेना चाहते। ऐसा सम्भ्व नही है, यदि आप पुण्य के फल को भोगने की आशा रखते हों तो आपको पाप के फल को भोगने के लिये भी तैयार रहना चाहिये यदि आप पाप करते हैं तो। इष्टसम्पदस्तु अर्थात् इष्ट सम्पत्तियां मिलती रहें। आज लोगों का बश यही सोचना है कि सम्पत्ति मिलती रहे। यदि उनसे पूछा जाय कि कैसी सम्पति मिलती रहे? तो वे कहते हैं कैसी भी मिले, सम्पत्ति तो सम्पत्ति है, लेकिन पुण्याहवाचन में यजमान यह कामना करता है कि हमें जो भी सम्पत्तियां मिले वे इष्ट सम्पत्तियां ही हों क्योंकि सुख तो इष्ट संपंत्तियों से ही सम्भव है। अनिष्ट सम्पत्तियों को दूर ही नष्ट हो जाने की कामना

पुण्याहवाचन में की गई है। जो पाप है, रोग है, अशुभ है, अकल्याण है वह दूर ही प्रतिहत हो जाय यानी स्वयं नष्ट हो जाय। ऐसा तब सम्भव होगा जब वेदी निर्माण का संकल्प लोक हितकारी होगा। संकल्प शुद्ध होगा। इस प्रकार अन्य भी पुण्य विषयों का वाचन करना चाहिये। तदनन्तर कूर्म एवं शेष का पूजन भी वहां शुभ वारों एवं तिथियों में किया जाता है। कूर्म यानी कच्छप एवं शेष अर्थात् नागराज। यहीं दो आधार है जिन पर यह पृथ्वी टिकी हुई है ऐसा पुराणों का कथन है। इसलिये कूर्म एवं शेष का पूजन अनिवार्य बतलाया गया है। तदनन्तर दिशाओं का साधन करना चाहिये।

नृपांगुलैः सम्मितकर्कटेन सूत्रेण वा वृत्तवरं विलिख्य।
रव्यंगुलशंकुममुष्यमध्ये निवशयेत्खाक्षिमितांगुलीभिः ।।
चतस्रृभिश्चापि ऋजूत्तमाभिः संस्पृष्टशीर्षं तु समेषिताभिः।
तच्छंकुभा यत्र विशेदपेयाद् वृत्ते क्रमात् स्तो वरुणेन्द्रकाष्ठैः ।।

इसका अर्थ यह है कि सोलह अंगुल के परिमित कर्कट से या सूत्र से एक श्रेष्ठ वृत्त बनाना चाहिये। बारह अंगुल का एक शंकु इस वृत्त के बीच में गाड़ना चाहिये। बीस - बीस अंगुल के चार शंकुओं को चार स्थानों पर समान दूरी पर गाड़ना चाहिये। सूर्योदय कालीन छाया जिस से बाहर निकले वह पश्चिम दिशा तथा उससे विपरीत पूर्व दिशा का निर्धारण करना चाहिये। कहा गया है कि कर्क , वृश्चिक, वृष, मकर इन राशियों के सूर्य में पूर्व दिशा की छाया को जब सूर्य उत्तरायण में रहे तो उत्तर की तरफ दो यूका का चालन और सिंह, कन्या, तुला, कुम्भ, मीन, मेष इन राशियों के सूर्य हो तो दो यूका का चालन करें। यानी उस चिन्ह से दो यूका हटकर चिन्ह दें। मिथुन एवं धन के सूर्य रहे तो जहां पर छाया का चिन्ह है वही पर वास्तविक चिन्ह जानें। यानी वही पूर्व पश्चिम की दिशा होगी।

अब उत्तर दक्षिण दिशा का साधन कहते हुये कहा गया है कि जैसे पूर्व पश्चिम का साधन करके कील दिया गया है उसी कील से उत्तर दक्षिण का साधन करते है। जितना बड़ा मण्डप बनाना हो उसकी दूनी रस्सी ले। उसके मध्य में गॉठ दे और दोनों कोर पर फन्दा बना दें। एक फन्दा पूरब की कील में फैलावे दूसरा फन्दा पश्चिम की कील में फसावें। तदनन्तर मध्य की गठ्ठी थाम कर बुद्धिमान् पुरुष दक्षिण एवं उत्तर की तरफ खीचे। जहां तक वह रस्सी जाय वहां पर एक - एक कील गाड़ दें। इस प्रकार दक्षिण उत्तर की दिशा सिद्ध होती है।

अब रात्रि में पूर्व दिशा के साधन हेतु कहा गया है कि श्रवण नक्षत्र का जहां पर उदय हो या पुष्य नक्षत्र का उदय हो या कृत्तिका नक्षत्र का उदय हो वहां पूर्व जानना चाहिये। अथवा चित्रा एवं

स्वाती नक्षत्र के मध्य में पूर्व दिशा जानना चाहिये। पूर्व, पश्चिम दिशा का साधन हो जाने पर पूर्वोक्त तरीके से उत्तर, दक्षिण दिशा का साधन करना चाहिये। अन्य उपायों का वर्णन करते हुये कहा गया है कि एक शलाका से चित्रा नक्षत्र की तारा को वेधन करे। फिर मध्य चिन्ह से युक्त एक तीसरी शलाका दें और उसके मध्य चिन्ह को पूर्व जाने। यह भी कहा गया है कि दिनमान के दल यानी मध्यान्ह में सात अंगुल शंकु को गाडे । जमीन में उस शंकु की छाया का अग्र जहां आवे वहां पर शंकु की जड़ से एक रेखा खीचें वही दक्षिणोत्तर दिशा होती है ।

दिक्साधन की अन्य विधियों का वर्णन करते हुये कहा गया है कि जिस दिन दिक् साधन करना हो उसके दिनमान को परमदिन से घटा देना चाहिये। जो अंक शेष आवे उसको पांच से गुणन करके छः से भाग देना चाहिये। तब छाया प्राप्त होती है। उदाहरण हेतु जैसे परम दिन 34.5, दिक्साधन दिवस का दिनमान 25.55 को परम दिन में घटाया तो 8.10 शेष आया। इसको पांच से गुणा करने पर 40.50 हुआ । इसको छः से भाग दिया तो छ अंगुल छ यव तीन यूका की छाया जहां पर आवे उसके अग्र भाग पर चिन्ह करें । वही उत्तर दिशा जाने । पूर्व, पश्चिम को पूर्ववत् साधना चाहिये।

वेदी चतुरस्र होती है । अभी हमने वृत्त बनाया । अब हम यह जानेगें कि वृत्त से चतुरस्र कैसे बनाया जाता है क्योंकी वेदी तो चतुरस्रा ही होगी। पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण क्रम से जो-जो चिन्ह हैं, उन-उन चिन्हों के शंकु में जितने हाथ की वेदी बनानी हो उतने हाथ रस्सी में फन्दा लगावें । पूर्व, दक्षिण के शंकु में फन्दा लगाकर अग्नि कोण की तरफ खीचें । फिर दक्षिण पश्चिम के शंकु में फन्दा लगाकर नैर्ऋत्य की तरफ खीचें। फिर पश्चिम, उत्तर के शंकु में फन्दा लगाकर वायव्य कोण की तरफ खीचें । फिर उत्तर, पूर्व की शंकु में फन्दा लगाकर ईशान कोण की तरफ खीचें। इस प्रकार से चौकोर सिद्ध होता है।

इस प्रकार दिक्साधन की अन्य सारी विधियों का वर्णन मिलता है , परन्तु यहां इतना ही करना उचित प्रतीत हो रहा है।

इस प्रकार दिक्साधन करके वेदी का निर्माण करना चाहिये । नवग्रह वेदी को त्रिवप्र वाली बनाने का निर्देश हैं । अर्थात् तीन सीढ़ियों वाली वेदी बनाना चाहिये । जिसका परिमाण प्रथम सीढ़ी 2 अंगुल चौड़ी, 2 अंगुल ऊंची, दूसरी सीढ़ी दो अंगुल चौड़ी तीन अंगुल ऊंची, तीसरी सीढ़ी 2 अंगुल चौड़ी तीन अंगुल ऊंची बनानी चाहिये।

इस प्रकार से निर्मित वेदी को वस्त्र से आच्छादित करके प्रमाण के अनुसार बुद्धिमान पुरुष को नवग्रह

मण्डल का निर्माण करना चाहिये।

प्रायोगिक प्रकिया में प्रायः यह देखने को मिलता है कि वेदी की व्यवस्था न होने पर लोग छोटी चौकी का प्रयोग करते हैं। चौकी का प्रयोग वेदी के विकल्प के रूप में माना जाना चाहिये मुख्य नियम के रूप में नही। क्योकि वेदी निर्माण से संबंधित प्रमाण को बतलाते हुये कुण्ड मण्डप सिद्धि में यह स्पष्ट उल्लेख है कि वेदी त्रिवप्रा होनी चाहिये। त्रिवप्रा का मतलब तीन वप्रों वाली। वप्र का अर्थ सीढ़ी माना जाता है। वेदी या कुण्ड में हम वप्र रखते हैं । कुण्ड में उसी वप्र का नाम मेखला हो जाता है। इसका निर्माण वेदी रचना में ही हो जाता है। जब हम चौकी पर नवग्रह मण्डल का निर्माण करते हैं उसी पर तीन मेखला सत्व, रज एवं तम के रूप में बना देते है। यह भी वप्र का ही विकल्प होता है।

नवग्रह मण्डल में ग्रहों की आकृति किस प्रकार निर्मित की जायेगी इसके बारे में आचार्य वसिष्ठ का कथन है कि सूर्य का मण्डल वृत्ताकार होता है। सोम का मण्डल चतुष्कोण, मंगल का मण्डल त्रिकोण, बुध का बाण का आकार, बृहस्पति का पट्ट का आकार, शुक्र का पंचकोण, शनि का धनुष, राहु का शूर्प एवं केतु का ध्वजा का आकार वाला मण्डल बनाना चाहिये।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें नवग्रह वेदी एवं नवग्रह मण्डल के परमाण का परिचय आपने जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रह वेदी का परिमाण बता सकते है एवं नवग्रह मण्डल पर किस ग्रह की क्या आकृति होती हैं तथा उनका परिमाण क्या है इसके बारे में भी आप पुष्टता से बता सकते हैं। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-नवग्रह मण्डल में सूर्य का परिमाण कितना होता है?

क- बारह अंगुल, ख- तीन अंगुल, ग- छ अंगुल, घ- नव अंगुल।

प्रश्न 2-नवग्रह मण्डल में मंगल का परिमाण कितना होता है?

क- बारह अंगुल, ख- तीन अंगुल, ग- छ अंगुल, घ- नव अंगुल।

प्रश्न 3-नवग्रह मण्डल में बृहस्पति का परिमाण कितना होता है?

क- बारह अंगुल, ख- तीन अंगुल, ग- छ अंगुल, घ- नव अंगुल।

प्रश्न 4-नवग्रह मण्डल में शुक्र का परिमाण कितना होता है?

क- बारह अंगुल, ख- तीन अंगुल, ग- छ अंगुल, घ- नव अंगुल।

प्रश्न 5-नवग्रह मण्डल में बुध का परिमाण कितना होता है?

क- बारह अंगुल, ख- तीन अंगुल, ग- चार अंगुल, घ- नव अंगुल।

प्रश्न 6-नवग्रह मण्डल में शनि का परिमाण कितना होता है?

क- बारह अंगुल, ख- तीन अंगुल, ग- छ अंगुल, घ- दो अंगुल।

प्रश्न 7-नवग्रह मण्डल में राहु का परिमाण कितना होता है?

क- बारह अंगुल, ख- तीन अंगुल, ग- छ अंगुल, घ- नव अंगुल।

प्रश्न 8-नवग्रह मण्डल में केतु का परिमाण कितना होता है?

क- बारह अंगुल, ख- तीन अंगुल, ग- छ अंगुल, घ- नव अंगुल।

प्रश्न 9-नवग्रह मण्डल में सूर्य का आकार कैसा होता है?

क- वृत्त, ख- चतुरस्र, ग- पंचकोण, घ- त्रिकोण।

प्रश्न 10-नवग्रह मण्डल में मंगल आकार कैसा होता है?

क- वृत्त, ख- चतुरस्र, ग- पंचकोण, घ- त्रिकोण।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण नवग्रह मण्डल में नवग्रहों की आकृति तथा उसके व्यासादि परिमाण को जाना। अब आप ठीक ढंग से नवग्रह मण्डल का निर्माण कर सकते है। अग्रिम प्रकरण में हम नवग्रह मण्डल की रचना विधान प्रतिपादित करेगें।

1.4 नवग्रह मण्डल निर्माण विधान-

1.4.1 नवग्रह मण्डल रचना प्रकार

इससे पूर्व का प्रकरण आपको समझ में आ गया होगा । अब हम आपको रचना का विधान बतलाने जा रहे है-

सर्वप्रथम नवग्रह मण्डल की रचना के लिये उपयुक्त स्थान का चयन कर लेते है। उस स्थान पर यदि वेदी निर्माण कर नवग्रह मण्डल बनाना हो तो वेदी का निर्माण कर लेते हैं अन्यथा किसी चौकी पर नवग्रह मण्डल बनाना हो तो उसको प्रक्षालित कर उस पर सफेद वर्ण वाला वस्त्र बिछाकर रेखा-आरेख किया जाता है । रेखा-आरेख करके कुल नव वर्ग बनाये जाते है। इसके लिये पूर्वा-पर पांच-पांच रेखायें खीची जाती है। इस प्रकार रेखा-आरेख करने से कुल नव प्रकोष्ठ बनकर तैयार हो जाता है। इन नव प्रकोष्ठों में एक-एक प्रकोष्ठ चारों दिशाओं यानी पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण में तथा एक-

एक प्रकोष्ठ चारो कोनों अर्थात् अग्नि कोण, नैर्ऋत्य कोण, वायव्य कोण एवं ईशान कोण में होता है। इन सबके बीच में एक प्रकोष्ठ हो जाता है। इस प्रकार कुल नव प्रकोष्ठ बनकर तैयार हो जाता है। ऊपर जो हमने दिशाओं और कोणों की बात की वह उस चौकी या वेदी की दिशा एवं कोण से संबंधित समझना चाहिये।

इस प्रकार प्रकोष्ठ निर्माण करके उन प्रकोष्ठों में ग्रहो का वर्ण इस प्रकार दर्शाया जाता है। आचार्य वसिष्ठ ने कहा है कि-

भास्करांगारकौ रक्तौ शुक्लौ शुक्र निशाकरौ।
बुधजीवसुवर्णाभौ कृष्णौ राहु शनैश्चरौ।
केतवो धूम्रवर्णा च सर्वे तेजोमया ग्रहाः।

अर्थात् सूर्य एवं मंगल को रक्त वर्णीय बनाना चाहिये। शुक्र एवं चन्द्रमा को श्वेतवर्णीय बनाना चाहिये। बुध एवं बृहस्पति को सुवर्ण की आभा वाले वर्ण से बनाना चाहिये। राहु एवं शनि को कृष्ण वर्ण का तथा केतु को धूम्र वर्ण का बनाना चाहिये । इन ग्रहों को इन्ही वर्ण का क्यों बनाना चाहिये इसका कारण बताते हुये आचार्य लोग कहते है कि इसी-इसी वर्ण के ये ग्रह होते हैं इसलिये इनका यही वर्ण होना चाहिये। इसके अलावा एक प्रकारान्तर और मिलता है जिसमें केवल दो ग्रहों के वर्ण में अन्तर पूर्वोक्त प्रकरण से दिखलाई देता है। पूर्व श्लोक में बुध को सुवर्ण की आभा वाला एवं केतु को धूम्र वर्णीय माना गया है। लेकिन नीचे दिये गये श्लोक के अनुसार बुध को हरित वर्णीय एवं केतु को कृष्णवर्णीय बतलाया गया है। दोनो विधियों में से किसी भी विधि से किया नवग्रह मण्डल का निर्माण शास्त्रीय है। इसमें संशय नही है। अतः इस विधि को प्रकारान्तर से इस प्रकार बतलाया गया है-

अरुणौ सूर्यभौमो च श्वेतौ शुक्रनिशाकरौ।
हरितवर्णो बुधश्चैव पीतवर्णो गुरुस्तथा।
कृष्णवर्णाः शनिराहुकेतवस्तु तथैव च।।

अर्थात् सूर्य एवं मंगल का वर्ण लाल, शुक्र एवं चन्द्रमा का वर्ण श्वेत,
बुध का वर्ण हरा, गुरू का वर्ण पीला तथा शनि, राहु एवं केतु का वर्ण काला होता है। वर्ण निर्धारण के अनन्तर स्थान निर्धारण इस प्रकार किया गया है-

मध्ये तु भास्करं विंद्याच्छशिनं पूर्वदक्षिणे।

दक्षिणे लोहितं विंद्याद्बुधं पूर्वोत्तरे स्मृतः।
उत्तरे तु गुरुं विंद्यात्पूर्वे चैव तु भार्गवं।
पश्चिमे तु शनिं विंद्याद्राहुं दक्षिणपश्चिमे।
पश्चिमोत्तरः केतून्स्थाप्यावाशुक्लतण्डुलैरिति।

अर्थात् जो नव प्रकोष्ठ बनाये गये थे उन नव प्रकोष्ठों में मध्य प्रकोष्ठ में भास्कर यानी सूर्य का स्थान होगा। पूर्व एवं दक्षिण के मध्य यानी अग्निकोण वाले प्रकोष्ठ में शशि का स्थान दिया जायेगा। दक्षिण में रक्त वर्णीय मंगल का स्थान दिया जायेगा। पूर्व एवं उत्तर के मध्य वाले यानी ईशान कोण वाले प्रकोष्ठ में बुध का स्थान होगा। उत्तर वाले प्रकोष्ठ में देव गुरू बृहस्पति का स्थान होगा। पूर्व प्रकोष्ठ में शुक्र का स्थान होगा। पश्चिम में शनि का स्थान होगा। दक्षिण एवं पश्चिम के मध्य यानी नैर्ऋत्य कोण वाले प्रकोष्ठ में राहु का तथा पश्चिम एवं उत्तर यानी वायव्य कोण में केतु नामक ग्रह का स्थान होगा। इन ग्रहों का मुख किधर होगा इस विषय में विचार करते हुये कहा गया है कि-

शुक्रार्कौ प्रांगमुखो ज्ञेयौ गुरुसौम्या उदंगमुखः ।
प्रत्यंगमुखो सोम शनि शेषाः दक्षिणतो मुखाः ।।

अर्थात् शुक्र एवं सूर्य का मुख पूर्व की ओर होता है। बुध एवं गुरु का मुख उत्तर की ओर होता है। सोम एवं शनि का मुख पश्चिम की ओर तथा शेष ग्रहों का मुख दक्षिण की ओर होता है। इसके अलावा एक और भी विधान शास्त्रों में देखने को मिलता है-

आदित्याभिमुखाः सर्वेसाधिप्रत्यधिदेवताः।।
अधिदेवता दक्षिणे वामे प्रत्यधिदेवताः।।

अर्थात् यह भी विधान मिलता है कि अधि प्रत्यधि देवताओं के सहित सभी ग्रहों का मुख सूर्य की ओर होता है। प्रत्येक ग्रह के दक्षिण भाग में अधि देवता एवं वाम भाग में प्रत्यधि देवता होते है।
मुख के साथ-साथ नवग्रह मण्डल पर इन ग्रहों की आकृति क्या होनी चाहिये इसका विचार आवश्यक है। इस सन्दर्भ में कहा गया है कि-

ईशाने मण्डलं कृत्वा ग्रहाणां स्थापनं ततः।
वृत्तमण्डलमादित्यमर्ध- चन्द्रं निशाकरम्।
त्रिकोणं मगलं चैव बुधं वै धनुषाकृतिम्।
गुरुमष्टदलं प्रोक्तं चतुष्कोणं च भार्गवम्।
नराकृतिं शनिं विद्याराहुं च मकराकृतिम्।
केतुं खड्गसमं ज्ञेयं ग्रहमण्डलके शुभे।।

नवग्रह मण्डल में देवताओं की स्थापना ईशान कोण में करने का
विधान है। सूर्य गोल आकार तथा चन्द्रमा अर्ध चन्द्र के आकार के होते हैं। मंगल की आकृति त्रिकोण की एवं बुध की धनुष की आकृति होती है। गुरु की आकृति अष्टदल और शुक्र की आकृति चतुष्कोण होती है। शनि की आकृति मनुष्य की, राहु की मकर की एवं केतु की खड्ग की आकृति होती है। परन्तु इस सन्दर्भ में दो विचार मिलते है। इन दोनों विचारों को जानना इसलिये आवश्यक है कि उसका ज्ञान होने पर ही किसी भी आचार्य के द्वारा बनाई गयी दूसरी विधि वाली आकृति को भी हम शास्त्रीय मान सकेगे। अन्यथा भ्रम का उपपादन होने लगेगा। इसलिये यहां प्रकारान्तर का भी उल्लेख करना मै उचित समझत हूं। अतः प्रकारान्तर का वर्णन इस प्रकार है-

प्रकारान्तरम् (अधोलिखित प्रमाण भी मिलता है)

वृत्तमण्डलमादित्यं चतुरस्रं निशाकरम् ।
त्रिकोणं म¯लं चैव बुधं वै बाण सन्निभम् ।।
गुरवेपट्टिशाकारं पंचकोणं भृगुन्तथा ।
मन्दे च धनुषाकारं सूर्पाकारन्तु राहवे ।।
केतवे च ध्वजाकारं मण्डलानि क्रमेण तु ।।

ग्रहों की आकृति के सन्दर्भ में शास्त्रों में प्रकारान्तर से कुछ और भी विधान मिलता है जिसका वर्णन यहाँ किया जा रहा है। सूर्य को वृत्त, चन्द्रमा को चतुरस्र, मंगल को त्रिकोण, बुध को बाण, गुरु को पट्टी, शुक्र को पंचकोण, शनि को धनुष, राहु को सूप एवं केतु को ध्वज के आकार का बतलाया गया है।

नवग्रह मण्डल के निर्माण में दो प्रकार की विधायें आचार्यों द्वारा प्रतिपादित होती दिखती है। प्रथम विधा तो यह है कि सफेद रंग का चावल ले लेते है। तदनन्तर उसमें विभिन्न प्रकार के रंग यानी लाल, पीला, हरा एवं काला रंग मिला देते है जिससे वह चावल उस रंग का हो जाता है और उसका प्रयोग बताये गये वर्णो के प्रयोग के लिये किया जाता है। दूसरी विधा यह है कि उस वर्ण के लिए उस प्रकार की दालों का प्रयोग देखने को मिलता है। जैसे हरित वर्ण के हरी मूंग या उसका छिलका, रक्त वर्ण के लिये छिलका रहित सबूत लाल मसूर, पीत वर्ण के लिये चने की दाल, कृष्ण वर्ण के लिये काली उड़द या काली उड़द का छिलका तथा सफेद वर्ण के लिये सफेद चावल का प्रयोग। इस प्रकार से आचार्य के निर्धारण के अनुसार जिस विधि की उपयुक्तता हो उस विधि का प्रयोग करके नवग्रह मण्डल का निर्माण किया जाता है। दालों में थोड़ा घी रगड़ देने से उसमें तेज की वृद्धि हो जायेगी

जिससे देखने में वह मण्डल चमकीला होगा और आकर्षक भी। कर्मकाण्ड में इस बात पर जोर दिया गया है कि जो भी हम काम करे सुव्यवस्थित करें और तदनुसार रचना करें। तदनुसार रचना का मतलब यह है कि किसी भी कार्य का सम्पादन उस कार्य के वास्तविक स्वरूप के अनुसार होना चाहिये। कर्मकाण्ड का एक सहज सूत्र है देवं भूत्वा देवं यजेत्। यानी देवता बनकर देवता की पूजा करो। इससे क्या तात्पर्य है? इससे तात्पर्य यह है कि जितना शुद्ध और पवित्र आप होगें उतना शुद्ध एवं पवित्र वह सामग्री एवं स्थान इत्यादि भी होना चाहिये। पवित्रता में ईश्वर का निवास होता है इसलिये पवित्रता पर ध्यान देना आवश्यक है। वेदी का निर्माण स्वछता से करना चाहिये। सामग्रियों का संग्रह भी स्वच्छता से होना चाहिये। यह नही होना चाहिये कि नवग्रह बनाने के लिये दालें ली गयी परन्तु दालों में धूल, कंकड़ इत्यादि मिला हुआ हो। आज बाजारों में भी स्वच्छता अभाव देखने को मिलता है ऐसी स्थिति में वस्तुओं को शुद्ध एवं पवित्र करने का जिम्मा उसी व्यक्ति का होगा जो इस अनुष्ठान से लाभ उठाने वाला है । इसलिये बार-बार निर्देश है कि येन केन प्रकारेण वाली स्थिति से बचते हुये कर्मकाण्डीय प्रक्रियाओं का अनुपालन कल्याणकारी होता है।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें नवग्रह मण्डल के रचना प्रकार के परिचय आपने जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रह मण्डल पर किस ग्रह की क्या आकृति होती हैं तथा उनका वर्ण, मुख आदि क्या है इसके बारे में आप पुष्टता से बता सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-नवग्रह मण्डल में प्रकोष्ठ संख्या कितना होता है?

क- दो, ख- तीन , ग- चार, घ- नव।

प्रश्न 2- सूर्य को किस वर्णीय बनाना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- हरित, घ- कृष्ण।

प्रश्न 3- मंगल को किस वर्णीय बनाना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- हरित, घ- कृष्ण।

प्रश्न 4- शुक्र को किस वर्णीय बनाना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- हरित, घ- कृष्ण।

प्रश्न 5- चन्द्रमा को किस वर्णीय बनाना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- हरित, घ- कृष्ण।

प्रश्न 6- राहु को किस वर्णीय बनाना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- हरित, घ- कृष्ण।

प्रश्न 7- शनि को किस वर्णीय बनाना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- हरित, घ- कृष्ण।

प्रश्न 8- बुध को किस वर्णीय बनाना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- हरित, घ- कृष्ण।

प्रश्न 9- केतु को किस वर्णीय बनाना चाहिये?

क- सफेद, ख- रक्त, ग- हरित, घ- कृष्ण।

प्रश्न 10- बृहस्पति को किस वर्णीय बनाना चाहिये?

क- सफेद, ख- पीत, ग- हरित, घ- कृष्ण।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण नवग्रह मण्डल का रचना प्रकार को जाना। अब आप ठीक ढंग से नवग्रह मण्डल का निर्माण कर सकते है। अग्रिम प्रकरण में हम नवग्रह मण्डल में ग्रहों के प्रतिमा एवं आकार पर विचार करेगें।

1.4.2 नवग्रह मण्डल पर ग्रहों की प्रतिमा, आकार एवं विशेष विचार-

आशा है नवग्रह मण्डल के विषय में पूर्व में बतायी गयी समस्त बातों को आपने आत्मसात किया होगा। अब हम नवग्रह मण्डल के नवग्रहों की प्रतिमा किस धातु की बनायी जायेगी ? तथा नवों ग्रहों का आकार किस प्रकार का होगा। इस पर विचार किया जायेगा।

ग्रहों की प्रतिमा पर विचार करते हुये आचार्य याज्ञवल्क्य ने कहा है कि-

ताम्रिकात्स्फाटिकाद्रक्तचन्दनात्स्वर्णकावुभौ।
राजतादयसः सीसकात्कांस्यात्कार्याग्रहाः क्रमात् ।।
स्ववर्णैर्वापटे लेख्या गंधैर्मंडलकेषुवेति।

अर्थात् ताम्र का सूर्य, स्फटिक का चन्द्रमा, रक्त चन्दन का मंगल, स्वर्ण का बुध, स्वर्ण के बृहस्पति, चन्द्रमा के शुक्र, लोहे का शनि, सीसे का राहु एवं कांसे का केतु बनाया जा सकता है। नवग्रह मण्डल

के ऊपर ग्रहों को उनके वर्णों के अनुसार उनका लेखन किया जा सकता है। ग्रहों के प्रतिमाओं के आकारों का वर्णन करते हुये मत्स्य पुराण में यह बतलाया गया है कि-

पद्मासनः पद्माकरः पद्मगर्भसमद्युति।

सप्ताश्वरथसंस्थोपिद्विभुजः स्यात्सदा रविः।।

सूर्य की आकृति का वर्णन करते हुये इस श्लोक में बतलाया गया है कि सूर्य पद्मासन युक्त यानी कमल के आसन पर विराजमान, हाथ में कमल लिये हुये, कमल के गर्भ के समान आभा निकल रही हो ऐसे आभा यानी तेज पुंज वाले, सात अश्वों वाले रथ पर सवार होने वाले एवं दो भुजाओं वाले भगवान भास्कर है।

श्वेतः श्वेताम्बरधरोदशाश्वः श्वेतभूषणः।

गदापाणिर्द्विबाहुश्चकर्तव्यो वरदः शशी ।।

चन्द्रमा का आकार सफेद, श्वेत वस्त्रधारी, दश अश्वों वाले रथ पर आरूढ़, श्वेत आभूषण धारण करने वाले, हाथ में गदा लिये हुये, दो बाहुओं वाले एवं वर देने वाले है।

रक्तमाल्यांबरधरः शक्तिशूलगदाधरः।

चतुर्मुखो मेषगमोवरदः स्याद्धरासुतः।।

मंगल की आकृति का वर्णन करते हुये कहा गया है कि मंगल लाल वर्ण की माला धारण करते हैं और लाल रंग का वस्त्र भी धारण करते है। भुजाओं में शक्ति, शूल एवं गदा धारण किये रहते है। चार मुखों वाले तथा मेष से यात्रा करने वाले तथा वरद मुद्रा से सदैव भक्तों को आशीर्वाद देने वाले है।

पीतमाल्यांबरधरः कर्णिकारसमद्युतिः।

खड्गचर्मगदापणिः सिंहस्थो वरदो बुधः।।

बुध के आकार का वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि पीले माला एवं पीत वस्त्र धारण करने वाले तथा कर्णिकार के समान आभा वाले, अपनी भुजाओं में खड्ग यानी तलवार, चर्म यानी ठाल और गदा जो प्रसिद्ध है को धारण करने वाले, सिंह की सवारी पर विराजमान एवं सदैव वर देने वाले मुद्रा में व्याप्त चन्द्रमा के पुत्र बुध महाराज का इस प्रकार का स्वरूप है।

देवदैत्यगुरू तद्वत् पीतश्वेतौ चतुर्भुजौ।

दण्डिनौ वरदौ कार्यौ साक्षसूत्रकमण्डलू।।

इस श्लोक में देव गुरू एवं दैत्य गुरू यानी बृहस्पति एवं शुक्र के स्वरूप का वर्णन किया है। बृहस्पति का स्वरूप पीला और शुक्र का स्वरूप सफेद है। दोनों चार भुजाओं वाले है। दोनों बृहस्पति

एवं शुक्र दण्ड धारण करने वाले एवं वर देने वाले है। साथ ही ये दोनों अक्ष, सूत्र एवं कमण्डलु धारण करने वाले है।

इन्द्रनीलद्युतिः शूली वरदौ गृध्रवाहनः।
बाणबाणासनधरः कर्तव्योर्कसुतः सदा।।

इस श्लोक में शनि के स्वरूप का वर्णन करते हुये यह कहा गया है कि इन्द्र नील के समान इनकी आभा है, ये शूल लिये हुये है, वर देने वाले रूप में है, गृध्र का वाहन है, बाण का आसन धारण करने वाले सूर्य के पुत्र शनि है।

करालवदनः खंगचर्मशूलीवरप्रदः।
नीलसिंहासनस्थश्चराहुरत्रप्रशस्यते।।

इस श्लोक मे राहु के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा है कि कराल वदन वाले, खड्ग, ठाल, शूल धारण करने वाले तथा वर देने वाले राहु है। नीले सिंहासन पर स्थित हैं राहु।

ध्रूमाद्विबाहवः सर्वे गदिनो विकृतानना।
गृधासनगतानित्यं केतवः स्युर्वरप्रदाः।

इस श्लोक में केतु के स्वरूप का वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि केतु नील सिंहासन पर विराजमान है, धूम्र वर्ण है, दो भुजाओं वाले, गदा धारण करने वाले , विकृत आनन वाले एवं ग्रृध्र आसन वाले है।

सर्वे किरीटिनः कार्याग्रहालोकहितावहाः।
स्वांगुले नोच्छ्रिताः सर्वेशतमष्टोत्तरंसदेति।।

इन ग्रहों को लोक हित के लिये मुकुट धारण किये हुये माना जाना चाहिये।

विशेष विचार-ग्रहों के विषय में तत्तद ग्रहों का ग्रह देश भी बतलाया गया है। यह वर्णन मत्स्य पुराण एवं कोटि होम पद्धति में किया गया है।

उत्पन्नो अर्कः कलिंगेषु यमुनायां च चन्द्रमा।
अंगारकस्त्ववन्त्यां मगधायां हिमांशुजः।
सैन्धवेषुगुरुर्जातः शुक्रोभोजकटे तथा।
शनैश्चरस्तु सौराष्ट्रे राहु वैराठिनापुरे।
अन्तर्वेद्या तथा केतुः ग्रहदेशाः प्रकीर्तिताः।।

इस सन्दर्भ में यह बतलाया गया कि सूर्य का उद्भवस्थान कलिंग देश है। चन्द्रमा का उद्भवस्थान यमुना है। अंगारक यानी मंगल का उद्भव स्थान अवन्ती देश है। हिमांशुज अर्थात् चन्द्रमा से जन्म

लिया यानी पुत्र बुध का उद्भव स्थान मगध देश है। देव गुरु बृहस्पति का उद्भवस्थान सैन्धव देश है। शुक्र का उद्भव स्थान भोजकट देश है। शनैश्चर का उद्भव स्थान सौराष्ट्र है। राहु का उद्भव स्थान वैराठिनापुर है। केतु का उद्भव स्थान अन्तर्वेदि है इस प्रकार ग्रहों के देश स्थान का वर्णन किया गया है।

ग्रहों के गोत्र इत्यादि का ज्ञान भी नवग्रह मण्डल निर्माणक को होना चाहिये। जिससे वह रचना करते समय उस बातों को ध्यान रख सके जो उस ग्रह से संबंधित है।

आदित्यः काश्यपेयस्तु आत्रेयः चन्द्रमा भवेत्।
भारद्वाजो भवेद्धौमस्तथात्रेयश्च सोमजः।
गुरुश्चैवागिंरोज्ञेयः शुक्रो वै भार्गवस्तथा।
शनिः काश्यपएवाथराहुः पैठिनसः स्मृतः।
केतवो जैमिनीयाश्च ग्रहगोत्राणि कीर्तयेत्।।

सूर्य के गोत्र का नाम कश्यप है, चन्द्रमा के गोत्र का नाम अत्री है। मंगल के गोत्र का नाम भारद्वाज है। बुध के गोत्र का नाम अत्री है। बृहस्पति के गोत्र का नाम अंगिरा है। शुक्र के गोत्र का नाम भार्गव है। शनि के गोत्र का नाम कश्यप है। राहु के गोत्र का नाम पैठिनसि है तथा केतु के गोत्र का नाम जैमिनी है।

आचार्य वसिष्ठ ने कहा है कि-

जन्मभूर्गोत्रमग्निवर्णस्थानमुखानि च।
यो अज्ञात्वा कुरुते शान्ति ग्रहास्तेनावमानिता।।

अर्थात् किसी भी ग्रह के जन्म भूमि, गोत्र, वर्ण, स्थान, मुख को बिना जाने यदि ग्रह की शान्ति करते है तो वह ग्रह शान्ति से शान्त नही होता है। इसलिये संबंधित सारे विषयों का ज्ञान होना चाहिये।

ग्रहों के लिये विशेष रूप से धूप बतलाया गया है-

रवे कुन्दरुकं धूपं शशिनस्तु घृताक्षताः।
भौमे सर्जरसं चैव अगरुं च बुधे स्मृतः।
सिंहल्कं गुरवे दद्यात् छुक्रे विल्वागरुं तथा।
गुग्गुलं मन्दवारे तु लाक्षाराहोश्चकेतवे।।

सूर्य के लिये कुन्दरु का धूप बनाकर जलाना है। चन्द्रमा के लिये घी एवं अक्षत का धूप देना चाहिये। सर्जरस के पौधे से मंगल का धूप तैयार करना चाहिये। बुध के लिये अगरु का धूप जलाना चाहिये। गुरु के लिये सिहल्क का धूप देना चाहिये। शुक्र के लिये विल्वागरु का धूप जलाना चाहिये। शनि के

लिये गुग्गुल तथा राहु एवं केतु के लिये लाक्षा का धूप देना चाहिये।
इसी प्रकार दीप के विषय में मिलता है कि-

नववर्तियुतंदीपं घृतेन परिपूरित।
ग्रहाणामग्रहः कुर्यात्तेजोसीतिप्रकल्पयेदिति।।

इस विषय में आचार्य वशिष्ठ का कथन है कि घी से परिपूरित नव वत्तियों को ग्रहों के प्रसन्नार्थ तेजोसीति मन्त्र से देना चाहिये।

आचार्य याज्ञवल्क्य ने प्रत्येक ग्रह के लिये अलग से नैवेद्य समर्पित करने का विधान किया है।

गुडोदनं पायसं च हविष्यं क्षीरं षाष्टिकम्।
दध्योदनं हविश्चूर्णं मांसंचित्रान्नमेव च।।
दद्याद् ग्र्रहक्रमादेवविप्रेभ्योभोजनं बुधः।
शक्तितोवायथालाभं सत्कृत्यविधिपूर्वकम्।।

अर्थात् क्रमशः वर्णन करते हुये कहा है कि- सूर्य के लिये गुडोदन अर्थात् गुड़ और भात देना चाहिये। ओदन का अर्थ चावल से है परन्तु कुछ आचार्य गण कहते है तण्डुल शब्द का प्रयोग यदि यहां होता तो चावल का अर्थ ठीक होता। ओदन का अर्थ पका हुआ चावल समझना चाहिये। पके हुये चावल को लोक में भात के नाम से जाना जाता है। पायस का नैवेद्य चन्द्रमा के लिये लगाना चाहिये। मंगल हेतु हविष्य नैवेद्य का विधान किया गया है। हविष्य का मतलब ऐसा पदार्थ जो हवन के योग्य हो। हविष्य पदार्थ से तात्पर्य प्रायः पायस से ही होता है। पायस से हवन करने का विधान है। अतः मंगल के लिये हविष्य देना चाहिये। बुध को नैवेद्य हेतु क्षीर देना चाहिये । क्षीर का अर्थ लोग दुग्ध भी करते हैं और खीर भी करते है। बृहस्पति हेतु षाष्टिक देने का विधान है। षष्टिक एक प्रकार का चावल होता है जिसे फलाहार में स्वीकृत किया गया है। शुक्र के लिये दधि एवं ओदन का नैवेद्य लगाना चाहिये। शनि के लिये हविश्चूर्ण, राहु के लिये मांस एवं केतु के लिये चित्र विचित्र अन्न देना चाहिये। अथवा शक्ति के अनुसार जो भी उपलब्ध हो सके उसका नैवेद्य लगाया जा सकता है।

ग्रहों से संबंधित फलों का भी विचार किया गया है।

द्राक्षेक्षुपूगनारिंगजंबीरंबिजपूरकं।
उत्ततिनालिकेरं स्याद्दाडिमानियथाक्रमम्।।
अलाभे तु यथालाभं तद्ग्रहेभ्यः प्रदापयेत्।

यह मत आचार्य वसिष्ठ का है। आचार्य वसिष्ठ ने समझाया है कि सूर्य द्राक्षा यानी खजुर का फल देना चाहिये। चन्द्रमा के लिये इक्षु यानी ईख प्रदान करने का नियम बतलाया गया है। मंगल के लिये

पूंगीफल, बुध के लिये नारंग, बृहस्पति के लिये जंबीर का फल यानी जामुन, शुक्र के लिये बीजपूर, शनि राहु के लिये नरियल तथा केतु के लिये अनार प्रदान करना चाहिये। अलाभ की स्थिति में जो भी फल मिले उसे नवग्रहों के लिये चढ़ाया जा सकता है। ग्रहों के लिये तांबूल का विचार करते हुये कहा गया कि-

खेचराणां तु तांबूलमेकैकंसंप्रदापयदिति

अर्थात् ग्रहों को एक-एक तांबूल प्रदान करना चाहिये।

ग्रहों की दक्षिणा के विषय में आचार्य याज्ञवल्क्य का विचार है कि-

धेनुः शंखस्तथानड्वान् हेमवासोहयः क्रमात्।
कृष्णागौरायसछाग एतावैदक्षिणाः स्मृताइति।।

अर्थात् सूर्य के लिये दक्षिणा धेनु होती है। चन्द्रमा की दक्षिणा शंख होता है। ंमंगल की दक्षिणा अनड्वान है। बुध की दक्षिणा हेम है। बृहस्पति की दक्षिणा वस्त्र है। शुक्र की दक्षिणा घोड़ा हैं। शनि की दक्षिणा काली गाय है। राहु की दक्षिणा आयस यानी लोहा है। केतु की दक्षिणा छाग यानी बकरा या बकरी है।

ग्रहों के होम में हवन द्रव्य का वर्णन करते हुये कहा गया है कि समिधा, आज्य, चरु, तिल इत्यादि से हवन करना चाहिये चाहिये। ग्रहों के लिये पृथक्-पृथक् समिधाओं का वर्णन किया गया है लेकिन उनके अभाव में पलाश की समिधाओं से हवन करने का भी विधान दिया गया है। हवन की संख्या का विचार करते हुये एक-एक ग्रह के लिये एक सौ आठ बार या अठ्ठाइस बार हवन करने का विधान पाया जाता है। हवनीय पदार्थ में मधु, घी या दधि और पायस मिलाकर हवन करना ग्रह शान्ति हेतु अत्यन्त प्रभावकारी माना गया है। ग्रहों के पूजन के सन्दर्भ में हेमाद्रि में वर्णन मिलता है कि एक-एक ग्रह का पृथक्-पृथक् पूजन करना चाहिये । इसके अभाव में एक तन्त्रेण पूजन कर सकते है।

इस प्रकार ग्रहों के स्वरूप के बारे में विचार विमर्श किया गया। इस प्रकरण में आपनें नवग्रह मण्डल पर ग्रहों के स्वरूप एवं प्रतिमा के बारे में आपने जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रह मण्डल पर किस ग्रह की प्रतिमा किसकी तथा उनका स्वरूप आदि क्या है इसके बारे में आप पुष्टता से बता सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित

प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-सूर्य की प्रतिमा किसकी बननी चाहिये?

क- ताम्र का, ख- स्फटिक का, ग- रक्त चन्दन का, घ- स्वर्ण का।

प्रश्न 2-चन्द्रमा की प्रतिमा किसकी बननी चाहिये?

क- ताम्र का, ख- स्फटिक का, ग- रक्त चन्दन का, घ- स्वर्ण का।

प्रश्न 3-मंगल की प्रतिमा किसकी बननी चाहिये?

क- ताम्र का, ख- स्फटिक का, ग- रक्त चन्दन का, घ- स्वर्ण का।

प्रश्न 4-बुध की प्रतिमा किसकी बननी चाहिये?

क- ताम्र का, ख- स्फटिक का, ग- रक्त चन्दन का, घ- स्वर्ण का।

प्रश्न 5- बृहस्पति की प्रतिमा किसकी बननी चाहिये?

क- ताम्र का, ख- स्फटिक का, ग- रक्त चन्दन का, घ- स्वर्ण का।

प्रश्न 6-शुक्र की प्रतिमा किसकी बननी चाहिये?

क- ताम्र का, ख- स्फटिक का, ग- चांदी का, घ- स्वर्ण का।

प्रश्न 7- शनि की प्रतिमा किसकी बननी चाहिये?

क- लोहे का, ख- स्फटिक का, ग- रक्त चन्दन का, घ- स्वर्ण का।

प्रश्न 8- राहु की प्रतिमा किसकी बननी चाहिये?

क- ताम्र का, ख- सीसे का, ग- रक्त चन्दन का, घ- स्वर्ण का।

प्रश्न 9- केतु की प्रतिमा किसकी बननी चाहिये?

क- ताम्र का, ख- स्फटिक का, ग- रक्त चन्दन का, घ- कांसे का।

प्रश्न 10- पद्मासनः किसका स्वरूप है?

क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

इस प्रकरण में आपने नवग्रह मण्डल बनाने की प्रविधि के बारे में जाना। आशा है अब आप नवग्रह मण्डल का निर्माण आप कर सकेगें।

1.5 सारांश

इस ईकाई में आपने नवग्रह मण्डल के निर्माण का विधान जाना है। वस्तुतः किसी भी प्रकार की शान्ति के लिये या पौरोहित्यिक कर्मकाण्ड के लिये नवग्रह मण्डल का निर्माण एक अत्यन्त आवश्यक अंग होता है। मण्डल का निर्माण बिना वेदी रचना के सम्भव नही है। किसी भी प्रकार के वेदी मण्डप इत्यादि के निर्माणार्थ कर्ता समतल भूमि पर सीधा खड़ा होकर अपनी दोनों भुजायें आकाश की ओर यानी ऊपर की ओर फैलायें। हाथ के अंगुलियों के छोर यानी मध्यमा अंगुलि के सबसे ऊपरी तल से पैर की अंगुलियों तक माप लेना चाहिये। उस सम्पूर्ण माप का शरांश निकालना चाहिये। शरांश का मतलब पंचमांश मानना चाहिये। यह पंचमांश एक हाथ कहलाता है। तात्पर्यार्थ यह भी निकाला जा सकता है कि हर ऊर्ध्व बाहु किये हुये व्यक्ति के पंचमाश का मान उसके हाथ से एक हाथ होता है।हस्तमान निर्धारित हो जाने के बाद उस हाथ से नापकर वेदी का निर्माण किया जाता है। वेदी निर्माण के अननतर मण्डल निर्माण का कार्य किया जाता है। इस मण्डल पर हम नवों ग्रहों को स्थान देते है। तथा उनका अर्चन करते है। इसके अलावा अन्य स्थलों पर यह भी पाया जाता है कि किसी एक ग्रह की शान्ति में उसका आकार बनाकर मुख्य पूजन किया जाता है । कहीं-कहीं पर नवग्रह मण्डल निर्माण हेतु सम्पूर्ण विधि व्यवस्थायें नही उपलब्ध हो पाती है ऐसी स्थिति में सांकेतिक रूप से आम्र पल्लवों के ऊपर या अक्षत पुंजो के ऊपर ही ग्रहों को आवाहित कर पूजित किया जाता है। कभी-कभी उतना बृहद् आयोजन नही होता या समय का अभाव होता है तो नवग्रहों का पृथक्-पृथक् नाम से आवाहन न करके केवल ध्यान कर लेते है।

ब्रह्मा मुरारी त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च।
गुरुश्चशुक्रः शनिराहु केतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकराः भवन्तु।।

इस श्लोक से ध्यान कर और आगे का उपक्रम करते हैं।नवग्रह मण्डल के आरम्भ में सर्वप्रथम रेखा आरेख किया जाता है। रेखा आरेख करके कुल नव वर्ग बनाये जाते है। इसके लिये पूर्वा पर पांच-पांच रेखायें खीची जाती है। इस प्रकार रेखा आरेख करने से कुल नव प्रकोष्ठ बनकर तैयार हो जाता

है। इन नव प्रकोष्ठों में एक-एक प्रकोष्ठ चारो दिशाओं यानी पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण में तथा एक-एक प्रकोष्ठ चारो कोनांे अर्थात् अग्नि कोण, नैर्ऋत्य कोण, वायव्य कोण एवं ईशान कोण में होता है। इन सबके बीच में एक प्रकोष्ठ हो जाता है। इस प्रकार कुल नव प्रकोष्ठ बनकर तैयार हो जाता है। इन नवों प्रकोष्ठों में मध्य प्रकोष्ठ में भास्कर यानी सूर्य का स्थान होगा। पूर्व एवं दक्षिण के मध्य यानी अग्निकोण वाले प्रकोष्ठ में शशि का स्थान दिया जायेगा। दक्षिण में रक्त वर्णीय मंगल का स्थान दिया जायेगा। पूर्व एवं उत्तर के मध्य वाले यानी ईशान कोण वाले प्रकोष्ठ में बुध का स्थान होगा। उत्तर वाले प्रकोष्ठ में देव गुरू बृहस्पति का स्थान होगा। पूर्व प्रकोष्ठ में शुक्र का स्थान होगा। पश्चिम में शनि का स्थान होगा। राहु का दक्षिण एवं पश्चिम के मध्य यानी नैर्ऋत्य कोण वाले प्रकोष्ठ में तथा पश्चिम एवं उत्तर यानी वायव्य कोण में केतु नामक ग्रह का स्थान होगा। सूर्य एवं मंगल को रक्त वर्णीय बनाना चाहिये। शुक्र एवं चन्द्रमा को श्वेतवर्णीय बनाना चाहिये। बुध एवं बृहस्पति को सुवर्ण की आभा वाले वर्ण से बनाना चाहिये। राहु एवं शनि को कृष्ण वर्ण का तथा केतु को धूम्र वर्ण का बनाना चाहिये। इस प्रकार नवग्रह मण्डल का निर्माण करके पूजन करने का विधान मिलता है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

प्रकोष्ठ- घर या खाना, अर्चन- पूजन, हरित- हरा, कराल- विकराल, शूली- शूल धारण किये हुये, गदी- गदा लिये हुये, चर्म- ठाल, खड्ग- तलवार, सर्षप- सरसों, मण्डल- धेरा, रेखा- आरेख-रेखा खीचना, सम्भार- सामग्री, पीड़ा- कष्ट, ताम्र- तांबा, रजत- चांदी, आयस- लोहा समित्- समिधा, तिल- तिल्ली, आज्य- घृत्, ओदन- भात, यमल- जुड़वा, क्षीर- दुग्ध, पंचत्वक्- पांच पेड़ों की छालें, हिरण्य- सुवर्ण, रजत- चांदी, कांस्य- कांसा, पायस- खीर, पंचगव्य- गौ से निकले पांच पदार्थ, सप्त धान्य- सात प्रकार का अनाज, सप्तमृत्तिका- सात स्थानों की मिट्टी, श्वेत सर्षप- सफेद सरसों, अर्क- मदार, पलाश- पलाश, खदिर- खैर, गोमय- गोबर, पल्लव- वृक्ष का पत्ता, द्राक्षा- खर्जूर, अपामार्ग- चिचिड़ी, उदुम्बर- गूगल, कृसर- खिचड़ी, वृषभ- बैल, निष्क्रय- क्रय करने के लिये, व्याधि- रोग, छाग- बकरी, खड्ग- तलवार, मृद- मिट्टी, महिषी- भैंस, योजनीय- जोड़ने योग्य, वर्जनीय- त्यागने योग्य, अश्व- घोड़ा, लौह- लोहा, मुक्ताफल- मोती, विद्रुम- मूंगा, गारुत्मक- पन्ना, पुष्पक- पुखराज, वज्र- हीरा, कुलित्थ- कुलथी, रक्त- लाल, पीत- पीला, कृष्ण- काला, वर्ण- रंग, आमलक- आंवला, माष- उड़द, तंडुल- चावल, पूंगीफल- सुपारी, मुखवलोकन- मुख का अवलोकन करना, भुर्जपत्र- भोजपत्र, तण्डुल-चावल, शक्कर- देशी चीनी, चड़क- चना, मुद्ग- मूंग, श्यामक- सांवा, गोधूम- गेहूं,

कंगु- ककून, बल्मीक- चीटी का स्थान, संगंम- दो या दो से अधिक नदियों का मिलन, पद्म- कमल, कर- हाथ, वज्री- वज्र धारण करने वाला, किरीट- मुकुट, परिमाण- मात्रा ।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इस उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

1.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-घ, 2-क, 3-ग, 4-ग, 5-घ, 6-घ, 7-ख, 8-ग, 9- ख, 10- क।

1.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-ग, 6-घ, 7-क, 8-ग, 9- क 10-घ।

1.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-घ, 2-ख, 3-ख, 4-क, 5-क, 6-घ, 7-घ, 8-ग, 9-घ, 10-ख।

1.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-घ, 6-ग, 7-क, 8-ख, 9- घ, 10-क ।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-कुण्डमण्डपसिद्धिः।

2- कुण्डार्क।

3- कुण्ड- प्रदीपः।

4-शान्ति- विधानम्।

5-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

6-यजुर्वेद- संहिता।

7- ग्रह- शान्तिः।

8- कुण्ड दर्पण।

9- अनुष्ठान प्रकाश।

10- कर्मजभवव्याधि दैव चिकित्सा।

11- संस्कार-भास्करः । वीणा टीका सहिता।

12- मनोभिलषितव्रतानुवर्णनम्- भारतीय व्रत एवं अनुष्ठान।

1.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- मुहूर्त्त चिन्तामणिः।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।

3- पूजन विधानम्।

4- रत्न एवं रुद्राक्ष का धारण।

5- संस्कार- विधानम्।

1.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- नवग्रह मण्डल का परिचय दीजिये।

2- नवग्रहों के स्वरूप की प्रासंगिकता बतलाइये।

3- नवग्रहों के आकृति के बारे में आप क्या जानते है? वर्णन कीजिये।

4- नवग्रह मण्डल निर्माण में वर्ण विधान वर्णित कीजिये।

5- नवग्रह रचना प्रकार की विधि का वर्णन कीजिये।

6- ग्रहों का प्रतिमा विचार सविधि लिखिये।

7- सूर्य एवं चन्द्र के स्वरूपो का वर्णन कीजिये।

8- मंगल एवं बुध के स्वरूपों का वर्णन कीजिये।

9- गुरू एवं शुक्र के स्वरूप संबंधी श्लोकों को लिखिये।

10- शनि एवं राहु के स्वरूपों के बारे में बतलाइये।

ईकाई – 2 नवग्रह स्थापन

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 नवग्रह
2.3.1 नवग्रहों की प्रकृति
2.3.2 नवग्रहों का स्वरूप एवं काल पुरुष से संबंध
2.4 नवग्रह स्थापन
2.4.1 वैदिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन
2.4.2 पौराणिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन
2.4.3 नाम मन्त्रों से नवग्रह स्थापन
2.4.4 तान्त्रिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन
2.5 सारांशः
2.6 पारिभाषिक शब्दावली
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 बोधप्रश्नों के उत्तर
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में नवग्रहों की स्थापना संबंधी प्रविधि का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व नवग्रह मण्डल निर्माण सहित अन्य शान्ति प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कोई भी जातक यदि कोई शान्ति कराता है तो प्रायः शान्ति प्रविधियों में नवग्रहों का स्थापन करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में नवग्रहों की स्थापना आप कैसे करेगें, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

किसी भी पौरोहित्यिक कर्म में नवग्रहों का स्थापन प्रायः किया जाता है। '**ग्रहाधीनं जगत्सर्वं** कहते हुये आचार्यों ने बतलाया है कि ग्रहों के अधीन ही सारा संसार चलता है। इसलिये ग्रहों की कृपा व्यक्ति के ऊपर होनी आवश्यक है। मानव जीवन का सम्पूर्ण काल किसी न किसी ग्रह की दशा में व्यतीत होता है। इसलिये भी वह काल शुभ रहे इसकी अपेक्षा व्यक्ति करता है। इसके साथ -साथ ही सामान्य रूप से पौरोहित्य कर्म में भी नवग्रह मण्डल का निर्माण करके नवग्रहों का स्थापन किया जाता है। ग्रहों के नाम पर सामान्य लोगों में यही धारणा बनी रहती है कि नौ ग्रह है उनका नाम ले लो बश हो गई शान्ति। लेकिन जब आप नवग्रह मण्डल पर ग्रहों का स्थापन विधान देखेंगे तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि नवग्रह मण्डल पर तो कुल चौवालीश 44 देवता होते है। अभी हम केवल नवग्रहों का कहां कहा स्थापन किया जाता है ? इसपर चर्चा करेगे। इन नवग्रहों का जन्मस्थान एवं गोत्रादि क्या होता है? साथ ही इससे संबंधित विविध ज्ञान की प्रप्ति आपको इस ईकाई से होगी।

इस इकाई के अध्ययन से आप नवग्रह मण्डल पर नवग्रह स्थापना करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे संबंधित व्यक्ति का संबंधी दोषों से निवारण हो सकेगा जिससे वह अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित होते हुये लोकोपकारक हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, समाज कल्याण की भावना का विकास करना, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान सहित वर्णन करने का प्रयास करना एवं वृहद् एवं संक्षिप्त दोनों विधियों के प्रस्तुतिकरण का प्रयास करना आदि, इस शान्ति के नाम पर समाज में व्याप्त कुरीतिओं, कुप्रथाओं, ठगी, भ्रष्टाचार, मिथ्या भ्रमादिकों का निवारण हो सकेगा।

2.2 उद्देश्य-

इस ईकाई के अध्ययन से आप नवग्रह मण्डल पर नवग्रहों के स्थापन की आवश्यकता को समझ रहे होगें। अतः इसका उद्देश्य तो वृहद् है परन्तु संक्षिप्त में इस प्रकार आप जान सकते है।

- नवग्रहों की स्थापना से समस्त कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।
- नवग्रह स्थापन की शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
- इस कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।
- प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
- लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
- समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।
- संदर्भित शिक्षा के विविध तथ्यों को प्रकाश में लाना।

2.3 नवग्रह

2.3.1 नवग्रहों की प्रकृति

यह सर्व विदित है कि जब भी हम कोई शान्ति करते हैं तो नवग्रह मण्डल का निर्माण कर नवग्रहों की स्थापना अवश्य करते हैं। न केवल शान्ति अपितु यज्ञों में भी नवग्रहों की स्थापना करनी पड़ती है। नवग्रहों की स्थापना के बिना हम किसी भी अनुष्ठानिक प्रक्रिया का सम्पादन नही कर सकते इसलिये नवग्रहों का ज्ञान अति आवश्यक है। ईशाने ग्रह वेदिका कहते हुये यह बतलाया गया है कि नवग्रह वेदी का निर्माण ईशान कोण में करके नवग्रहों की स्थापना करनी चाहिये। किसी भी यज्ञ के सम्पादन में अग्नि कोण में योगिनी मण्डल, नैर्ऋत्य कोण में वास्तु मण्डल , वायव्य कोण में क्षेत्रपाल मण्डल बनाने एवं ईशान में नवग्रह मण्डल पर नवग्रह स्थापन का नियम है। नवग्रहों के रूप में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु होते हैं।

इन नवग्रहों में सूर्य को सभी ग्रहों में प्रधान ग्रह माना गया है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार सूर्य को अखिल ब्रह्माण्ड का केन्द्र कहा गया है। इसे ब्रह्माण्ड नायक भी कहा जाता है। वेदों में सूर्य को जगदात्मा सूर्य आत्मा जगतस्तुश्च कहकर किया गया है। सूर्य सम्पूर्ण सौर मण्डल का पिता एवं ग्रहों के अधिपति के रूप में जाना जाता है। यह सृष्टि की जीवनी शक्ति एवं गति का कारक है। उपनिषदों और पुराणों में सूर्य का वर्णन सृष्टि के उत्पादन एवं हिरण्यगर्भ के रूप में मिलता है। गायत्री छन्द के उपास्य देव यही भगवान् सविता है।

दूसरे ग्रह के रूप में चन्द्रमा को जाना जाता है। चन्द्रमा मनसो जातः शुक्लयजुर्वेद के इस मन्त्र से स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में ऋषियों ने चन्द्र का मन से घनिष्ठ संबंध प्रत्यक्ष कर लिया था।

कालान्तर में इस पर विचार करते हुये आचार्यों ने चन्द्रमा को मन के रूप में स्वीकार किया है। चन्द्रमा को ज्योतिष में कालपुरुष का मन मानते हुये व्यक्ति की मानसिकता का कारक एवं नियामक माना गया है। संक्षेपतः यह कहा जा सकता है कि बलवान चन्द्रमा स्वस्थ्य मानसिकता तथा निर्बल चन्द्रमा संकुचित मानसिकता का संसूचक होता है। व्यक्ति के जीवन में इस बात को ध्यान देने की जरूरत है कि लग्न शरीर का तथा चन्द्रमा मन का प्रतिनिधित्व करता है। शरीर ही वह क्षेत्र है जहां हम कृत कर्मों का फल भोगते है। यदि लग्न एवं चन्द्रमा दोनों ही पापग्रह से आक्रान्त हों तो दूषित मस्तिष्क चन्द्रमा की स्थिति को स्पष्ट करता है और जातक को बुरे कामों में लगाता है।

तीसरे ग्रह के रूप में मंगल की चर्चा की गयी है। ब्रह्मवैवर्त्त पुराण के अनुसार मंगल की माता का नाम पृथ्वी एवं पिता का नाम श्री विष्णु है। मंगल की उत्पत्ति भगवान विष्णु के पसीने की बूंद को पृथ्वी द्वारा धारण किये जाने के कारण मानी गयी है। वामन पुराण में वर्णन मिलता है कि भगवान् शिव के द्वारा अन्धकासुर का वध कर दिये जाने के कारण उनके शरीर से उत्पन्न पसीने से मंगल का जन्म हुआ। पद्म पुराण के अनुसार जब भगवान शंकर ने दक्ष का यज्ञ विध्वंस किया तब उनके पसीने की बूंद से वीरभद्र उत्पन्न हुये एवं उनको पृथ्वी से दूर मंगल ग्रह के रूप में रहने का आदेश प्राप्त हुआ। सभी कथानकों के अनुसार मंगल का जन्म शिव या विष्णु के पसीना को पृथ्वी द्वारा धारण करने पर माना गया है। मंगल को काल पुरुष का सत्व कहा गया है। यह अत्यधिक क्रियात्मक एवं तामसिक ग्रह है तथा व्यक्ति के शारीरिक शक्ति, क्रिया और पाश्व प्रवृत्तियों का सूचक है।

चौथे ग्रह बुध को काल पुरुष की वाणी कहा गया है। व्यक्ति के स्नायु मण्डल एवं बुद्धि पर इसका विशेष प्रभाव रहता है। वाणी एवं भावाभिव्यक्ति के कारक इस ग्रह के पाप पीड़ित होने के कारण बुद्धि एवं बोलने में गतिरोध होता है। यह सौम्य एवं नपुंसक ग्रह है। शुभग्रह के साथ शुभ एवं पाप ग्रह के साथ पापी हो जाता है। सूर्य के साथ बैठकर भी उससे आक्रान्त नही होता अपितु बुधादित्य नामक विशिष्ट कल्याणकारी योग बनाता है।

पांचवें ग्रह के रूप में बृहस्पति को माना गया है। बृहस्पति सौर मंडल का सबसे बड़ा एवं सर्वाधिक शुभग्रह है। इसे काल पुरुष के ज्ञान के रूप में स्वीकार किया गया है। ज्ञान एवं सुख का प्रधान कारक बृहस्पति को माना गया है। यह जिस भाव में उपस्थित रहता है उसके कारकत्व के लिये बाधक रहता है परन्तु इसकी दृष्टि परम शुभ मानी गयी है। यह जिस भाव को देखता है उस भाव के शुभता में वृद्धि कर देता है। ग्रहों में यह प्रधान मंत्री और आध्यात्मिक ग्रह के रूप में जाना जाता है।

छठवें ग्रह के रूप में शुक्र को स्वीकार किया गया है। शुक्र को दैत्यों का आचार्य माना गया है। शुक्रवार को देवी की उपासना हेतु अच्छा माना गया है। जातक के भौतिक व्यक्तित्व का यह प्रतीक

माना जाता है। व्यक्ति में आकर्षण का कारण शुक्र को माना गया है। ज्येतिष में शुक्र को शुभग्रह के रूप में स्वीकार किया गया है।

सातवे ग्रह के रूप में शनि का स्थान आता है। नवग्रहों में से सबसे क्रूर, कठोर एवं प्रभावशाली पापग्रह शनि को माना गया है। ऐसा नही है कि शनि सभी भावों में स्थित होने पर पाप फल ही देता है। कुछ भावों में शनि की स्थिति परम लाभप्रद भी होती है। किन्तु ऐसा अपवाद स्वरूप ही देखने में आता है। अधिकांश जातक शनि के प्रभाव से पीड़ा ही पाते है। दुष्ट, दुर्भाग्यशाली, अमंगल, हानिकारक एवं भयानक रूप वाले व्यक्ति को बोलचाल की भाषा में लोग शनिचर कह दिया करते है। इसका तात्पर्य यह है कि शनि अमंगल, हानि एवं दुर्भाग्य का प्रतीक माना जाता है। एक बात और सत्य है कि जिस प्रकार जीवन के साथ मृत्यु का संयोग अवश्यम्भावी है उसी प्रकार सृष्टि का प्रत्येक प्राणी किसी न किसी रूप में शनि से अवश्य प्रभावित होता है।

आठवें ग्रह के रूप में राहु तथा नवें ग्रह के रूप में केतु को माना गया है। पौराणिक कथाओं के अनुसार राहु एक चतुर तथा धूर्त्त राक्षस था। जो समुद्र मन्थन से निकले अमृत वितरण के समय, मोहिनी रूपधारी भगवान विष्णु के छल को उसी क्षण समझकर अमृत पान के लिये रूप बदल कर देवताओं की पंक्ति में बैठ गया था। सूर्य एवं चन्द्रमा ने भगवान विष्णु को उसके इस कृत्य के बारे में बतलाया। राहु की सत्यता का ज्ञान होने पर भगवान विष्णु ने सुदर्शन चक्र से उसके शिर को काट दिया किन्तु वह अमृत पान कर चुका था इसलिये उसकी मृत्यु नही हो पायी। फलतः वह दो रूपों में सामने आया जिसमें शिर भाग का नामकरण राहु के रूप में एवं शरीर भाग का नामकरण केतु के रूप में किया गया। इसलिये राहु को सूर्य एवं चन्द्रमा का शत्रु माना जाता है तथा ग्रहण का कारण बनता है।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें नवग्रहों की प्रकृति एवं कालपुरुष से संबंध का विचार जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रहों बारे में आप पुष्टता से बता सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-नवग्रहों में प्रधान ग्रह किसे माना गया है?

क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।

प्रश्न 2- नवग्रहों में आत्मा का कारक कौन हैं ?

क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।

प्रश्न 3-नवग्रहों में मन का ग्रह किसे माना गया है?

क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।

प्रश्न 4- पृथ्वी किसकी माता है?

क-सूर्य की, ख- चन्द्रमा की, ग- मंगल की, घ- बुध की।

प्रश्न 5- काल पुरुष का सत्व किसे माना गया है?

क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।

प्रश्न 6-काल पुरुष की वाणी किसे माना गया है?

क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।

प्रश्न 7-नवग्रहों में नपुंसक ग्रह किसे माना गया है?

क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।

प्रश्न 8-नवग्रहों में प्रधान मंत्री किसे माना गया है?

क-बृहस्पति को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।

प्रश्न 9-नवग्रहों में काल पुरुष का ज्ञान किसे माना गया है ?

क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बृहस्पति को।

प्रश्न 10-नवग्रहों में दैत्याचार्य किसे माना गया है?

क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- शुक्र को, घ- बुध को।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में नवग्रहों का परिचय प्राप्त किया। आशा आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम इन नवग्रहों का स्वरूप कैसा है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है, जो इस प्रकार है-

2.3.2 नवग्रहों का स्वरूप एवं काल पुरुष से संबंध

पूर्व प्रकरण में आपने नवग्रहों की प्रकृति को जाना। अब हम इस प्रकरण में आपसे नवग्रहों के स्वरूप की चर्चा करेगें जिससे आपको आगे नवग्रहों के स्थापन को समझने में अत्यन्त सुख की अनुभूति होगी।

नवग्रहों में प्रथम ग्रह सूर्य के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि सूर्य पुरुष, उग्र एवं अग्नि प्रधान ग्रह है। यह क्रूर ग्रह है। इसका वर्ण रक्त श्याम है, नेत्र शहद के समान कुछ पीला लिये हुये, दृष्टि तीक्ष्ण, अल्प केश तथा शरीर चौकोर है। उष्ण एवं तीक्ष्ण होने के कारण इसकी प्रकृति पित्त प्रधान है। सूर्य ग्रह सत्व गुणी है । इसकी दिशा पूर्व एवं स्थान देवालय है। इस ग्रह की धातु ताम्र एवं स्वर्ण है। यह क्षत्रिय वर्ण का ग्रह है। सूर्य की ऋतु ग्रीष्म एवं रत्न माणिक्य है। सूर्य उत्तरायन एवं मध्यान्ह में बली होता है। इसके अधिदेवता रुद्र एवं प्रत्यधि देवता अग्नि है। सूर्य ग्रह व्यक्ति के आत्मिक शक्ति एवं तेजस का परिचायक है। जन्म कुण्डली में पिता, नेत्र, आरोग्यता, राज्य, राजनैतिक पद, शासन, जीवनी शक्ति, क्षात्र कर्म, अधिकार, महत्वाकांक्षा, नियामक क्षमता, राजसी वैभव, यश, स्पष्टता, उष्णता, उग्रता, उत्तेजना, प्रभाव, रुचि, आत्मज्ञान, शरीर की बनावट, शिवोपासना आदि का विचार सूर्य से करने के लिये बतलाया गया है।

चन्द्रमा के स्वरूप की चर्चा करते हुये बतलाया गया है कि फलित ग्रन्थों के अनुसार इसका शरीर वर्तुल यानी गोल एवं दुर्बल, नेत्र मराल के समान सुन्दर, प्रकृति कफ वायु प्रधान, वर्ण गौर एवं मृदु वाणी है। इसे अत्यन्त चंचल, बुद्धिमान्, दयालु, कामी तथा प्रभावी वक्ता के रूप में स्वीकार किया गया है। चन्द्रमा जल तत्व प्रधान एवं स्त्री ग्रह है। चन्द्रमा तरुण, सत्वगुणी एवं वैश्य वर्ण का ग्रह है। चन्द्रमा की धातु रक्त, रस लवण, दिशा वायव्य, ऋतु वर्षा एवं मणि मोती है। यह ग्रह रात्रि बली होता है। शुक्ल पक्ष की पंचमी से कृष्णपक्ष की दशमी तक चन्द्र को पूर्ण बली माना गया है। जन्म कुण्डली में सुगन्ध, पुष्प, बुद्धि, मन, मानसिक भाव एवं संरचना, लावण्य, कान्ति, जलीय पदार्थ, चांदी, मोती, माता का दुग्ध, मासिक रजोदर्शन, आलस्य, कफ, सर्दी, दया, लता, क्रोध, अश्रु, कल्पना, चावल, कपास, सफेद वस्त्र इत्यादि का विचार चन्द्रमा नामक ग्रह से किया जाता है। रात्रि में जन्म होने पर चन्द्रमा माता का कारक तथा दिन में जन्म होने पर चन्द्रमा मौसी का कारक माना जाता है। चन्द्रमा का वाम नेत्र पर विशेष अधिकार होता है।

मंगल के स्वरूप की चर्चा करते हुये बतलाया गया है कि मंगल पुरुष, अग्नि तत्व प्रधान एवं पापग्रह है। तैजस तत्व की प्रधानता के कारण यह पित्त प्रकृति तथा उग्र बुद्धि वाला है। मंगल की दृष्टि में कूररता है। मंगल का रंग गोरापन लिये हुये लाल, केश चमकीले एवं घुंघराले, कमर पतली, कच्छ ऊंचा, दृढ़ प्रकृति तमोगुणी हिंसक, गर्वीला, उग्र किन्तु उदार तिक्त रस प्रिय एवं तरुण अवस्था वाला है। यह रात्रि बली तथा रति क्रिया में कामी माना गया है। शरीर में मज्जा भाग पर तथा हड्डियों पर विशेष रूप से इसका अधिकार है। मंगल का वर्ण क्षत्रिय, दिशा दक्षिण, ऋतु ग्रीष्म, पदार्थ कटु, रत्न मूंगा एवं इसके देवता षडानन है। जन्म कुण्डली में इस ग्रह से बल, पराक्रम, संघर्ष, युद्ध विजय,

कूररता, हिंसक अपराध, अधिकार की भावना, आतंक, धैर्य, काम वासना, कामोन्माद, मनोविकार, आवेश, ऋण, पाश्विक वृत्तियां, सेनापति, सर्जन, चोर, हत्यारा, डकैत, मिथ्याभाषण, विश्वासघात, परस्त्रीगमन, क्रोध, द्वेष, उग्र वाद विवाद, पौरुषशक्ति, महत्वाकांक्षा, कार्य निपुणता, स्वतंत्रता, भूमि, बाग, वंश, देवता, लाल पदार्थ, अग्नि, उष्णता, व्रण, शस्त्र, दुर्घटना, आग्नेयास्त्र, रक्त, घाव, रक्त जमना एवं भाइयों का विचार किया जाता है। प्रथम, चतुर्थ, अष्टम एवं द्वादश भावों में यह मांगलिक दोष कारी माना गया है जो पापग्रहों के प्रभाव के कारण जीवन में विष घोल देता है। पुत्रहीनता एवं ऋणग्रस्तता भी दूषित मंगल की ही देन है।

बुध के स्वरूप की चर्चा करते हुये बतलाया गया है कि इसका रंग नवीन दूर्वा के समान, नेत्र विशाल और आरक्त वाणी, मधुर एवं परिहासशील, त्वचा स्वस्थ्य, शरीर हृष्ट पुष्ट, प्रकृति त्रिदोष मिश्रित एवं अवस्था कुमार मानी जाती है। रजोगुणी प्रवृत्ति वाले, बुद्धिमान, स्पष्ट वक्ता, रूपवान्, आकर्षक, पृथ्वी तत्व वाला, रत्न पन्ना, ऋतु शरद और दिशा उत्तर है। इसकी दृष्टि तिरछी है अर्थात् कटाक्ष पात करने वाला है। बुध शुक्र से पराजित होता है तथा राहु दोष का शमन करने वाला है। जन्मकुण्डली में वाणी, विद्या, विवेक, बुद्धिमत्ता, गणित ज्योतिष एवं वैद्यक कलाओं में निपुणता, उपासना आदि में पटुता, भाषण चातुर्य शिल्प, चमत्कार पूर्ण भाषा विज्ञान, वाणिज्य, तर्कशास्त्र, हास्य, लेखन, गोत्र, समृद्धि, यज्ञ, विष्णु भक्ति विहार स्थल, बंधु, मामा, मित्र, दत्तक पुत्र, हरे पत्ते वाले पेड़, रत्न संशोधक आदि का विचार बुध से किया जाता है। उच्च शिक्षा, अन्तर्ज्ञान, पत्रकारिता एवं अभिचार का बुध कारक माना जाता है।

बृहस्पति के स्वरूप का वर्णन करते हुये यह पाया जाता है कि बृहस्पति सत्वगुणी, पुरुष ग्रह, बड़े स्थूल शरीर तथा उदर के स्वामी, पीत वर्ण, नेत्र एवं शिर के बाल कुछ भूरा लिये हुये, कफात्मक वाणी शंख की तरह गंभीर तथा बुद्धि श्रेष्ठ एवं धार्मिक होता है। ग्रह के गुण एवं प्रकृति के अनुसार ही जातक का रूप एवं स्वभाव होता है। विनीत, निपुण, सर्वशास्त्राधिकारी, क्षमाशील एवं प्रसन्न रहना गुरु का स्वभाव है।यह धन का प्रधान कारक ग्रह है। पाप पीड़ित या निर्बल होकर विपन्नता प्रदान करता है। जन्मकुण्डली में इससे गुर्दे, व्यक्ति की सौम्यता, धर्म आध्यात्म नैतिक मूल्यों का विचार, परमार्थिक चित्त, श्वेत या पवित्र पदार्थों का व्यवसाय, शिक्षा का क्षेत्र, धार्मिक क्षेत्रों से संबंधित कार्य एवं व्यवसाय आदि का विचार बृहस्पति से किया जाता है।

शुक्र के स्वरूप का वर्णन विशद रूप से नही ज्ञात होता है। इसके स्वरूप के बारे में पुराणों में बतलाया गया है कि तपस्वी का स्वरूप, साधना प्रिय, दैत्यों के गुरु, जटायें बढ़ी हुयी, अपने कार्य

सिद्धि हेतु दृढ़ प्रतिज्ञ एवं स्वभिमान प्रिय हैं। जन्म कुण्डली में शुक्र से सुन्दरता, भोग विलास, कला रोमांस, गीत, संगीत, चित्रकारी, मूर्तिकला, ऐश्वर्य, स्त्री सुख, सौन्दर्य प्रसाधन, घर, वाहन सुख, वीर्य, काम वासना की विशेषता या दोष, कामजनित पीड़ा, खाद्य पदार्थ, रस, विलास सामग्री से संबंधित व्यवसाय आदि विषय शुक्र के अधिकार क्षेत्र में आते है।

शनि के स्वरूप का संक्षेप में वर्णन करते हुये यह प्राप्त होता है कि नराकृति, विकराल आंखे, भयानक चेहरा, न्याय प्रिय, कुरर, हठी, कृष्ण शरीर वाला शनि का स्वरूप है। जन्म कुण्डली में तृष्णा, अभाव, दरिद्रता, परीक्षा, प्रतियोगिता, किसी भी कार्य में विलम्ब, दुख, भटकाव, धैर्य, मतिभ्रम, कष्टों की श्रृंखला, उच्च शिक्षा, गहन अध्यात्म, वैराग्य मोक्ष प्राप्ति के प्रयास, राजनीति में प्रवेश, जनता का समर्थन, घर में वृद्ध जनों से प्राप्त सुख या दुख, लोहा, कोयला, लकड़ी, तेल, आटो पार्ट्स, लौह उद्योग, वाहन उद्योग, पुरानी वस्तुओं का व्यवसाय या संग्रह आदि का विचार शनि से किया जाता है।

राहु के स्वरूप का विचार करते हुये बतलाया गया है कि इसका रंग काला, वस्त्र काला एवं चित्र विचित्र, जाति शूद्र, आकार दीर्घ और भयानक, तीक्ष्ण स्वभाव, नीची दृष्टि, तामसी गुण , वात प्रकृति एवं अतिवृद्ध अवस्था मानी जाती है। गारुणी एवं मायाचारी विद्या के कारक इस ग्रह की दिशा नैर्ऋत्य, भूमि ऊषर, धातु लोहा, स्थान साप का बिल, अस्थि रोग तथा ऋतु शिशिर है। यह ग्रह एक राशि में अट्ठारह महीने भ्रमण करता है। सदा वक्री रहता है यानी उल्टा ही चलता है। कुण्डली में झूठ, कुतर्क, दुष्ट अथवा अन्त्यज स्त्री गमन, नीच जनों का आश्रय, गुप्त एवं षड़यंत्रकारी कार्य, धोखेबाजी, विश्वासघात, जुआ, अधार्मिकता, चोरी, पशु मैथुन, रिश्वत लेना, भ्रष्ट आचार, निन्द्य एवं गुप्त पाप कर्म, कठोर भाषण, विदेश गमन, विषम स्थान भ्रमण, दुर्गा की उपासना, राजवैभव, पितामह एवं आकस्मिक विपत्तियों का कारक माना जाता है।

केतु के स्वरूप का विचार करते हुये बतलाया गया है कि केतु का वर्ण धूयें के समान, स्वभाव तामस एवं प्रभाव से कुछ आध्यात्मिक रुझान लिये हुये, आकार पूंछ जैसा, शरीर दीर्घ एवं वृद्ध, वस्त्र पुराने तथा फटे हुये, तत्व तेजस मंगल के समान, दिशा उत्तर पश्चिम तथा जाति अन्त्यज माना जाता है। गुप्त तन्त्र मन्त्र, छुद्र विद्या, विदेशी भाषा आदि में प्रवीण इस ग्रह की धातु अष्ट धातु, द्रव्य कांसा, रत्न लहसुनिया एवं रस फीका है। जन्मकुण्डली में इस ग्रह से आकस्मिक बाधायें, विपत्ति, क्षय, रोग, पीड़ा, भूख, दुर्भिक्ष, बंधन, दरिद्रता, शारीरिक एवं मानसिक मलीनता, बालारिष्ट, मातामह, परदादा, गणेशादि देवोपासना आदि का विचार किया जाता है।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें नवग्रहों के स्वरूप को जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रहों बारे में आप पुष्टता से बता सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- सबसे अधिक अग्नि तत्व प्रधान ग्रह किसे माना गया है?
क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।
प्रश्न 2- नवग्रहों में जल तत्व प्रधान ग्रह किसको कहते हैं ?
क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।
प्रश्न 3- पित्त प्रकृति एवं उग्र तत्व वाला ग्रह किसको कहा जाता हैं ?
क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।
प्रश्न 4- पृथ्वी तत्व वाला, रत्न पन्ना, ऋतु शरद और दिशा उत्तर वाला ग्रह किसे कहा जाता है?
क-सूर्य को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।
प्रश्न 5-विनीत, निपुण, सर्वशास्त्राधिकारी, क्षमाशील एवं प्रसन्न रहने वाला ग्रह किसे माना जाता है?
क-बृहस्पति को, ख- चन्द्रमा को, ग- मंगल को, घ- बुध को।
प्रश्न 6- तपस्वी का स्वरूप, साधना प्रिय, दैत्यों के गुरु किसको कहा जाता है?
क-बृहस्पति को, ख- शुक्र को, ग- मंगल को, घ- बुध को।
प्रश्न 7- नराकृति, विकराल आंखे, भयानक चेहरा, न्याय प्रिय किस ग्रह को कहा जाता है?
क-बृहस्पति को, ख- शुक्र को, ग- शनि को, घ- राहु को।
प्रश्न 8-तीक्ष्ण स्वभाव, नीची दृष्टि, तामसी गुण, वात प्रकृति एवं अतिवृद्ध अवस्था किसको व्यक्त करता है?
क-बृहस्पति को, ख- शुक्र को, ग- शनि को, घ- राहु को।
प्रश्न 9- ग्रह की धातु अष्ट धातु, द्रव्य कांसा, रत्न लहसुनिया से किसको व्यक्त किया गया है?
क-केतु को, ख- शुक्र को, ग- शनि को, घ- राहु को।
प्रश्न 10- विश्वासघात, जुआ, अधार्मिकता, चोरी इत्यादि का कारक किसको माना जाता है?

क-केतु को, ख- शुक्र को, ग- शनि को, घ- राहु को।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में नवग्रहों के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त किया। आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम इन नवग्रहों की स्थापना कैसे की जाती है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है, जो इस प्रकार है-

2.4 नवग्रह स्थापन

नवग्रहों का स्थापन विविध प्रकारों से बतलाया गया है। उन विधियों में चार विधियां मुख्य है जिनकी यहा मैं चर्चा करूंगा जिसमें वैदिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन, पौराणिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन, नाम मन्त्रों से नवग्रह स्थापन एवं तान्त्रिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन है।

2.4.1 वैदिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन-

इस विधि में हम नवग्र्रहों के स्थापन हेतु बताए गए वैदिक मन्त्रों का प्रयोग करने जा रहे है। इस सन्दर्भ में याज्ञवल्क्य स्मृतिः के आचाराध्याय के ग्रह शान्ति प्रकरण में दिया गया है कि-

आकृष्णेन इमं देवा अग्निर्मूधा दिवः ककुत्।
उद्बुध्यस्वेति च ऋचो यथासंख्यं प्रकीर्तिताः।।
बृहस्पते अतियदर्यस्तथैवान्नात्परिस्रुतः।
शं नो देवीस्तथा काण्डात्केतुं कृण्वन्निमांस्तथा।।

इस श्लोक में नवग्रहों के लिये वैदिक मन्त्रों का संकेत किया गया है कि आप किस मन्त्र से किसका स्थापन करेगें। इसका विशद विवरण इस प्रकार है-

नवग्रहों के आवाहन में सर्वप्रथम सूर्य का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में सूर्य का स्थान मध्य प्रकोष्ठ में वृत्ताकार होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर सूर्य के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही सूर्य का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

1- ॐ आकृष्णेन रजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च। हिरण्ययेनसवितारथेनादेवोयाति भुवनानिपश्यन्।। ॐ भूर्भुवः स्वः कलिदेशोव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नमः। सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।।

सूर्य के आवाहन स्थापन के अनन्तर चन्द्रमा का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में चन्द्रमा का स्थान मण्डल के अग्नि कोण वाले प्रकोष्ठ में अर्ध चन्द्राकार के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर चन्द्र के ऊपर अक्षत

चढ़ाना होता है। साथ ही चन्द्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

2- ॐ इमंदेवा ऽ असपत्न गुं सुबद्धम्महतेक्षत्राय महते ज्येष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय।। इमममुष्यपुत्रममुष्यैपुत्रमस्यै व्विशऽएषवोमी राजा सोमो ऽ अस्माकं ब्राह्मणाना गुं राजा।। ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोöव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम इहागच्छ इह तिष्ठ सोमाय नमः।। सोममावाहयामि स्थापयामि।।

चन्द्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर मंगल का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में मंगल का स्थान मण्डल के दक्षिण वाले रक्त वर्णीय प्रकोष्ठ में त्रिकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर मंगल के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही मंगल का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

3- ॐ अग्निमूर्मुर्द्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्या ऽअयम् । अपा गुं रेता गुं सी जिन्वति ।। ॐ भूर्भुवः स्वः अवंतिकापुरोव भारद्वाजसगोत्र रक्तवर्ण भो भौम इहागच्छ इह तिष्ठ भौमाय नमः भौममावाहयामि स्थापयामि।।

मंगल के आवाहन स्थापन के अनन्तर बुध का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बुध का स्थान मण्डल के ईशान कोण वाले हरित वर्णीय प्रकोष्ठ में बाण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर बुध के उप ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बुध का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

4- ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजाग्रहित्वमिष्टापूर्त्ते स गुं सृजेथामयं च।। अस्मिन्सधस्थे ऽ अध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवायजमानश्चसीदत।। ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोöव आत्रेयसगोत्र हरितवर्ण भो बुध इहागच्छ इह तिष्ठ बुधाय नमः बुधमावाहयामि स्थापयामि ।।

बुध के आवाहन स्थापन के अनन्तर बृहस्पति का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बृहस्पति का स्थान मण्डल के उत्तर वाले पीत वर्णीय प्रकोष्ठ में अष्टकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर

बृहस्पति के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बृहस्पति का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

5- ॐ बृहस्पते ऽअतियदर्योऽअर्हाद्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवस ऽ ऋतप्रजाततदस्मासुüविणन्धेहि चित्रम्।। ॐ भूर्भुवः स्वः

सिंधुदेशोव आंगिरसगोत्र पीतवर्ण भो बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ बृहस्पतये नमः बृहस्पतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

बृहस्पति के आवाहन स्थापन के अनन्तर शुक्र का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शुक्र का स्थान बुध एवं चन्द्रमा के बीच श्वेत वर्णीय प्रकोष्ठ में पंचकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शुक्र के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शुक्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

6- ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणाव्यपिबत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्üयं व्विपान गुं शुक्रमन्धस ऽ इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोमृतं मधु।। ॐ भूर्भुवः स्वः भोजकट देशोöव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ शुक्राय नमः शुक्रमावाहयामि स्थापयामि।।

शुक्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर शनि का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शनि का स्थान पश्चिम तरफ राहु एवं केतु के बीच कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मनुष्य की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शनि के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शनि का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

7- ॐ शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्रवन्तुनः।। ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोöव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि ।।

शनि के आवाहन स्थापन के अनन्तर राहु का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में राहु का स्थान पश्चिम तरफ नैर्ऋत्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मकर की आकृति के रूप में दिया

होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर राहु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही राहु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

8- ॐ कयानश्चित्र ऽआभुवदूतीसदावृधः सखा। कयाशचिष्ठयाव्वृता।। ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनापुरोöव पैठिनस गोत्र कृष्णवर्ण भो राहो इहागच्छ इह तिष्ठ राहवे नमः राहुं आवाहयामि स्थापयामि ।।

राहु के आवाहन स्थापन के अनन्तर केतु का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में केतु का स्थान पश्चिम तरफ वायव्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में खड्ग की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर केतु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही केतु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

9- ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशोमर्याऽअपेशसे।। समुष रजायथाः ।। ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुöव जैमिनीसगोत्र कृष्णवणर भो केतो इहागच्छ इह तिष्ठ केतवे नमः केतुमावाहयामि स्थापयामि।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें नवग्रहों के स्थापन के वैदिक विधि को जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रहों का स्थापन वैदिक मन्त्रों से करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- आकृष्णेन मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 2- इमं देवा मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 3- अग्निर्मूर्द्धा मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 4- उद्बुध्यस्वाग्ने मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 5- बृहस्पते मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- बृहस्पति का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 6- अन्नात्परिस्रुत मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- शुक्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 7- शं नो देवी मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- शनि का, घ- बुध का।

प्रश्न 8- कया नश्चित्र मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- राहु का।

प्रश्न 9- केतु कृण्वन्न मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- केतु का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 10- नर आकृति से किसका ज्ञान किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- शनि का, घ- बुध का।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में नवग्रहों का वैदिक विधि से स्थापन के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त किया। आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम इन नवग्रहों के स्थापन की पौराणिक मन्त्रों से स्थापना कैसे की जाती है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है, जो इस प्रकार है-

2.4.2 पौराणिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन

इससे पूर्व आपने वैदिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन की विधि को जाना। लेकिन वैदिक मन्त्रों का प्रयोग उसे ही करना चाहिये जो गृरुमुखोच्चारण परम्परा से मन्त्रों को पढ़ा है, सुना है और देखा है। अन्यथा इसके अभाव में अशुद्धि होने का भय हो सकता है। कर्मकाण्ड में अशुद्ध मन्त्रों का उच्चारण यानी संकल्प का सिद्ध न होना और गलत मन्त्रों के उच्चारण का दोष उच्चारण कर्ता को लग जाना है। इसलिये समस्त आचार्य गणो ने इसके मौलिक स्वरूप की रक्षा होती रहे तथा पूजन विधि का सम्पादन भी होता रहे इसके लिये पौराणिक मन्त्रों का सृजन किया है। आप स्वतः पौराणिक मन्त्रों को देखेगें तो वे मन्त्र वैदिक मन्त्रों से सरल प्रतीत होगें। इस प्रकार यहां पौराणिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन की विधि बतलायी जा रही है।

नवग्रहों के आवाहन में सर्वप्रथम सूर्य का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में सूर्य का स्थान मध्य प्रकोष्ठ में वृत्ताकार होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि

स्थापयामि कहकर सूर्य के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही सूर्य का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उचचारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

1- **जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।**

तमोऽरिं सर्वपाघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः कलि देशोव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नमः। सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।।

सूर्य के आवाहन स्थापन के अनन्तर चन्द्रमा का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में चन्द्रमा का स्थान मण्डल के अग्नि कोण वाले प्रकोष्ठ में अर्ध चन्द्राकार के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर चन्द्र के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही चन्द्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

2- **दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसंभवम्।**

ज्योत्स्नापतिं निशानाथ सोममावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोöव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम इहागच्छ इह तिष्ठ सोमाय नमः।। सोममावाहयामि स्थापयामि।।

चन्द्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर मंगल का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में मंगल का स्थान मण्डल के दक्षिण वाले रक्त वर्णीय प्रकोष्ठ में त्रिकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर मंगल के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही मंगल का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

3- **धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्तेज समप्रभम्।**

कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अवंतिकापुरोöव भारद्वाजसगोत्र रक्तवर्ण भो भौम इहागच्छ इह तिष्ठ भौमाय नमः भौममावाहयामि स्थापयामि।।

मंगल के आवाहन स्थापन के अनन्तर बुध का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बुध का स्थान मण्डल के ईशान कोण वाले हरित वर्णीय प्रकोष्ठ में बाण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर बुध के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बुध का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

4- **प्रियंगुकलिकाभासं रूपेणाप्रतिमंबुधम्।**

सौम्यंसौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोöव आत्रेयसगोत्र हरितवर्ण भो बुध इहागच्छ इह तिष्ठ बुधाय नमः बुधमावाहयामि स्थापयामि ।।

बुध के आवाहन स्थापन के अनन्तर बृहस्पति का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बृहस्पति का स्थान मण्डल के उत्तर वाले पीत वर्णीय प्रकोष्ठ में अष्टकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर बृहस्पति के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बृहस्पति का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

5- **देवानां च मुनीनां च गुरुं कांचनसन्निभम्।**

वंद्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सिंधुदेशोöव आंगिरसगोत्र पीतवर्ण भो बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ बृहस्पतये नमः बृहस्पतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

बृहस्पति के आवाहन स्थापन के अनन्तर शुक्र का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शुक्र का स्थान बुध एवं चन्द्रमा के बीच श्वेत वर्णीय प्रकोष्ठ में पंचकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शुक्र के

ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शुक्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

6- **हिमकुन्द मृणालाभं दैत्यानां परमं गुरूम् ।**

सर्वशास्त्रप्रवक्तारं शुक्रमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः भोजकट देशोöव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ शुक्राय नमः शुक्रमावाहयामि स्थापयामि।।

शुक्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर शनि का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शनि का स्थान पश्चिम तरफ राहु एवं केतु के बीच कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मनुष्य की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शनि के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शनि का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

7- **नीलाम्बुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।**

छायामार्तण्ड सम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोöव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि ।।

शनि के आवाहन स्थापन के अनन्तर राहु का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में राहु का स्थान पश्चिम तरफ नैर्ऋत्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मकर की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर राहु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही राहु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

8- **अर्द्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्य विमर्दनम्।**

सिंहिका गर्भ संभूतं राहुमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनापुरोöव पैठिनस गोत्र कृष्णवर्ण भो राहो इहागच्छ इह तिष्ठ राहवे नमः राहुं

आवाहयामि स्थापयामि ।।

राहु के आवाहन स्थापन के अनन्तर केतु का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में केतु का स्थान पश्चिम तरफ वायव्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में खड्ग की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर केतु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही केतु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

9- पालास धूम्र संकाशं तारकाग्रहमस्तकम् ।

रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं केतुमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुöव जैमिनीसगोत्र कृष्णवर्ण भो केतो इहागच्छ इह तिष्ठ केतवे नमः केतुमावाहयामि स्थापयामि।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें नवग्रहों के स्थापन के पौराणिक विधि को जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रहों का स्थापन पौराणिक मन्त्रों से करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- जपा कुसुम संकाशं मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?
क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।
प्रश्न 2- दधि शंख मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?
क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।
प्रश्न 3- धरणी गर्भ मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?
क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।
प्रश्न 4- प्रियंगु कलिका मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 5- देवानां च मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- बृहस्पति का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 6- हिमकुन्द मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- शुक्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 7- नीलाम्बुज समाभासं मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- शनि का, घ- बुध का।

प्रश्न 8- अर्धकायं से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- राहु का।

प्रश्न 9- पालाश धुम्र मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- केतु का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 10- वृत्त आकृति से किसका ज्ञान किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- शनि का, घ- बुध का।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में नवग्रहों का पौराणिक विधि से स्थापन के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्ठी तरह समझ गये होगें। अब हम इन नवग्रहों का नाम मन्त्रों से स्थापना कैसे की जाती है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है, जो इस प्रकार है-

2.4.3 नाम मन्त्रों से नवग्रह स्थापन

इससे पूर्व आपने पौराणिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन की विधि को जाना। लेकिन पौराणिक मन्त्रों के प्रयोग में कभी-कभी समय ज्यादा लग रहा है ऐसा प्रतीत होने लगता है।विभिन्न प्रकार के कर्मकाण्डों में प्रधान कार्य अधिक होने के कारण नवग्रहादि सहायक कार्यों से समय निकाल कर बचाना पड़ता है नही तो मुख्य कार्य सम्पादन हेतु समयाभाव होने लगता है। ऐसी स्थिति में शीघ्र मन्त्रों के उच्चारण के कारण अशुद्ध उच्चारण का दोष उच्चारण कर्ता को लग जाता है। प्रधान कार्य के सम्यक् सम्पादन नही होने से भी संकल्प सिद्धि नही हो पाती है। इसलिये नाम मन्त्र से आवाहन में मन्त्र छोटा होने के करण समय भी कम लगता है।

अतः नाम मन्त्रों से नवग्रह स्थापन इस प्रकार करना चाहिये-

नवग्रहों के आवाहन में सर्वप्रथम सूर्य का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में सूर्य का स्थान मध्य प्रकोष्ठ में वृत्ताकार होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि

स्थापयामि कहकर सूर्य के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही सूर्य का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उचचारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

1- ऊँ घृणिः सूर्याय नमः ।। ऊँ भूर्भुवः स्वः कलिदेशोöव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नमः। सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।।

सूर्य के आवाहन स्थपन के अनन्तर चन्द्रमा का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में चन्द्रमा का स्थान मण्डल के अग्नि कोण वाले प्रकोष्ठ में अर्ध चन्द्राकार के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर चन्द्र के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही चन्द्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

2- ओं सों सोमाय नमः।। ऊँ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोöव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम इहागच्छ इह तिष्ठ सोमाय नमः।। सोममावाहयामि स्थापयामि।।

चन्द्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर मंगल का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में मंगल का स्थान मण्डल के दक्षिण वाले रक्त वर्णीय प्रकोष्ठ में त्रिकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर मंगल के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही मंगल का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

3- ओं अं अंगारकाय नमः। ऊँ भूर्भुवः स्वः अवंतिकापुरोöव भारद्वाजसगोत्र रक्तवर्ण भो भौम इहागच्छ इह तिष्ठ भौमाय नमः भौममावाहयामि स्थापयामि।।

मंगल के आवाहन स्थापन के अनन्तर बुध का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बुध का

स्थान मण्डल के ईशान कोण वाले हरित वर्णीय प्रकोष्ठ में बाण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर बुध के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बुध का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

4- ओं बुं बुधाय नमः। ऊँ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोöव आत्रेयसगोत्र हरितवर्ण भो बुध इहागच्छ इह तिष्ठ बुधाय नमः बुधमावाहयामि स्थापयामि ।।

बुध के आवाहन स्थापन के अनन्तर बृहस्पति का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बृहस्पति का स्थान मण्डल के उत्तर वाले पीत वर्णीय प्रकोष्ठ में अष्टकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर बृहस्पति के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बृहस्पति का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

5- ॐ बृं बृहस्पतये नमः ।। ॐ भूर्भुवः स्वः

सिंधुदेशोöव आंगिरसगोत्र पीतवर्ण भो बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ बृहस्पतये नमः बृहस्पतिं आवाहयामि स्थापयामि ।। बृहस्पति के आवाहन स्थापन के अनन्तर शुक्र का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शुक्र का स्थान बुध एवं चन्द्रमा के बीच श्वेत वर्णीय प्रकोष्ठ में पंचकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शुक्र के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शुक्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

6- ॐ शुं शुक्राय नमः। ॐ भूर्भुवः स्वः भोजकट देशोöव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ शुक्राय नमः शुक्रमावाहयामि स्थापयामि।।

शुक्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर शनि का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शनि का स्थान पश्चिम तरफ राहु एवं केतु के बीच कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मनुष्य की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शनि के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शनि का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

7- ॐ शनैश्चराय नमः । ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोöव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि ।।

शनि के आवाहन स्थापन के अनन्तर राहु का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में राहु का स्थान पश्चिम तरफ नैर्ऋत्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मकर की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर राहु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही राहु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी

उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

8- ॐ रां राहवे नमः । ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनापुरोöव पैठिनस गोत्र कृष्णवर्ण भो राहो इहागच्छ इह तिष्ठ राहवे नमः राहुं आवाहयामि स्थापयामि ।।

राहु के आवाहन स्थापन के अनन्तर केतु का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में केतु का स्थान पश्चिम तरफ वायव्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में खड्ग की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर केतु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही केतु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

9- ॐ कें केतवे नमः । ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुöव जैमिनीसगोत्र कृष्णवर्ण भो केतो इहागच्छ इह तिष्ठ केतवे नमः केतुमावाहयामि स्थापयामि।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें नवग्रहों के स्थापन के नाम मन्त्र की विधि को जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रहों का स्थापन नाम मन्त्रों से करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा । अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- ओं घृणिः सूर्याय नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 2- ओं सों सोमाय नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 3- ओं अं अंगारकाय नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 4- ओं बुं बुधाय नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 5- ओं बृं बहस्पतये नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- बृहस्पति का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 6- ओं शुं शुक्राय मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- शुक्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 7- ओं शं शनैश्चराय नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- शनि का, घ- बुध का।

प्रश्न 8- ओं रां राहवे से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- राहु का।

प्रश्न 9- ओं कें केतवे नमः से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- केतु का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 10- त्रिकोण आकृति से किसका ज्ञान किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- मंगल का, ग- शनि का, घ- बुध का।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में नवग्रहों का नाम मन्त्र की विधि से स्थापन के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम इन नवग्रहों का तांत्रिक मन्त्रों से स्थापना कैसे की जाती है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है, जो इस प्रकार है-

2.4.4 तांत्रिक मन्त्रों से नवग्रह स्थापन

इससे पूर्व आपने नाम मन्त्रों से नवग्रह स्थापन की विधि को जाना। लेकिन कोई कोई आचार्य

तांत्रिक विधि से नवग्रह स्थापन को अत्यधिक प्रभावशाली मानते है। इसलिये छात्रों के सम्यक् ज्ञान हेतु तांत्रिक मन्त्रों द्वारा स्थापन विधि की भी चर्चा करना आवश्यक समझता हूं। इसलिये तांत्रिक विधि से नवग्रह स्थापन की विधि का वर्णन यहां किया जा रहा है।

नवग्रहों के आवाहन में सर्वप्रथम सूर्य का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में सूर्य का स्थान मध्य प्रकोष्ठ में वृत्ताकार होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर सूर्य के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही सूर्य का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

1- ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः ।। ॐ भूर्भुवः स्वः कलिदेशोöव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नमः। सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।।

सूर्य के आवाहन स्थपन के अनन्तर चन्द्रमा का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में चन्द्रमा का स्थान मण्डल के अग्नि कोण वाले प्रकोष्ठ में अर्ध चन्द्राकार के रूप् में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर चन्द्र के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही चन्द्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

2- ॐ श्रां श्रीं श्रौं सः चन्द्राय नमः।। ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोöव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम इहागच्छ इह तिष्ठ सोमाय नमः।। सोममावाहयामि स्थापयामि।।

चन्द्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर मंगल का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में मंगल का स्थान मण्डल के दक्षिण वाले रक्त वर्णीय प्रकोष्ठ में त्रिकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर मंगल के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही मंगल का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

3- ॐ क्रां क्रीं क्रौं सः भौमाय नमः। ॐ भूर्भुवः स्वः अवंतिकापुरोöव भारद्वाजसगोत्र रक्तवर्ण भो भौम इहागच्छ इह तिष्ठ भौमाय नमः भौममावाहयामि स्थापयामि।।

मंगल के आवाहन स्थापन के अनन्तर बुध का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बुध का स्थान मण्डल के ईशान कोण वाले हरित वर्णीय प्रकोष्ठ में बाण की आकृति के रूप में दिया होता है।

आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर बुध के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बुध का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

4- ॐ ब्रां ब्रीं ब्रौं सः बुधाय नमः। ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोöव आत्रेयसगोत्र हरितवर्ण भो बुध इहागच्छ इह तिष्ठ बुधाय नमः बुधमावाहयामि स्थापयामि ।।

बुध के आवाहन स्थापन के अनन्तर बृहस्पति का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में बृहस्पति का स्थान मण्डल के उत्तर वाले पीत वर्णीय प्रकोष्ठ में अष्टकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर बृहस्पति के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही बृहस्पति का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

5- ॐ ग्रां ग्रीं ग्रौं सः गुरवे नमः ।। ॐ भूर्भुवः स्वः

सिंधुदेशोöव आंगिरसगोत्र पीतवर्ण भो बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ बृहस्पतये नमः बृहस्पतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

बृहस्पति के आवाहन स्थापन के अनन्तर शुक्र का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शुक्र का स्थान बुध एवं चन्द्रमा के बीच श्वेत वर्णीय प्रकोष्ठ में पंचकोण की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शुक्र के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शुक्र का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

6- ॐ द्रां द्रीं द्रौं सः शुक्राय नमः। ॐ भूर्भुवः स्वः भोजकट देशोöव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ शुक्राय नमः शुक्रमावाहयामि स्थापयामि।।

शुक्र के आवाहन स्थापन के अनन्तर शनि का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में शनि का स्थान पश्चिम तरफ राहु एवं केतु के बीच कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मनुष्य की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर शनि के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही शनि का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

7- ॐ प्रां प्रीं प्रौं शनये नमः । ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोöव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि ।।

शनि के आवाहन स्थापन के अनन्तर राहु का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में राहु का स्थान पश्चिम तरफ नैर्ऋत्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में मकर की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर राहु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही राहु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

8- ॐ भ्रां भ्रीं भ्रौं सः राहवे नमः । ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनापुरोöव पैठिनस गोत्र कृष्णवर्ण भो राहो इहागच्छ इह तिष्ठ राहवे नमः राहुं आवाहयामि स्थापयामि ।।

राहु के आवाहन स्थापन के अनन्तर केतु का आवाहन किया जाता है। नवग्रह मण्डल में केतु का स्थान पश्चिम तरफ वायव्य कोण की ओर कृष्ण वर्णीय प्रकोष्ठ में खड्ग की आकृति के रूप में दिया होता है। आवाहन करने वाले अक्षत को मन्त्र पढ़ लेने के बाद आवाहयामि स्थापयामि कहकर केतु के ऊपर अक्षत चढ़ाना होता है। साथ ही केतु का उद्भव स्थान, उनका गोत्र एवं उनका वर्ण भी उच्चारित करना पड़ता है। नीचे ठीक उसी प्रकार लिखा गया है-

9- ॐ स्रां स्रीं स्रौं सः केतवे नमः । ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुöव जैमिनीसगोत्र कृष्णवर्ण भो केतो इहागच्छ इह तिष्ठ केतवे नमः केतुमावाहयामि स्थापयामि।

इस प्रकार इस प्रकरण में आपनें नवग्रहों के स्थापन के तान्त्रिक मन्त्र की विधि को जाना । इसकी जानकारी से आप नवग्रहों का स्थापन तांत्रिक मन्त्रों से करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 2- ओं श्रां श्रीं श्रौं सः सोमाय नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 3- ओं क्रां क्रीं क्रौं सः भौमाय नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 4- ओं ब्रां ब्रीं ब्रौं सः बुधाय नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 5- ओं ग्रां ग्रीं ग्रौं सः गुरवे नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- बृहस्पति का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 6- ओं द्रां द्रीं द्रौं सः शुक्राय मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- शुक्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 7- ओं प्रां प्रीं प्रौं सः शनये नमः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- शनि का, घ- बुध का।

प्रश्न 8- ओं भ्रां भ्रीं भ्रौं सः राहवे से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- राहु का।

प्रश्न 9- ओं स्रां स्रीं स्रौं सः केतवे नमः से किसका आवाहन किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- केतु का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 10- नराकृति से किसका ज्ञान किया जाता है?

क- सूर्य का , ख- मंगल का, ग- शनि का, घ- बुध का।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में नवग्रहों का तान्त्रिक मन्त्र की विधि से स्थापन के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्ठी तरह समझ गये होंगे।

2.5 सारांश

इस ईकाई में आपने नवग्रह स्थापन का विधान जाना है। वस्तुतः किसी भी प्रकार की शान्ति के लिये या पौरोहित्यिक कर्मकाण्ड के लिये नवग्रह मण्डल का निर्माण करके नवग्रहों की स्थापना करते है। क्येंकि बिना स्थापना के वह ग्रह या देवता वहां आकर विराजमान नही होता जिसकी हम पूजा करना चाहते है। नवग्रह मण्डल का केवल निर्माण करने से पूजन करना आप प्रारम्भ नही कर सकते है। क्योकि बिना स्थापन के ग्रह वहां विराजमान ही नही होगें तो पूजा किसकी की जायेगी ? इसलिये ग्रह स्थापन अति आवश्यक है।

ग्रहों या देवताओं की स्थापना कैसे की जायेगी इस सन्दर्भ पर हम विचार करते हैं तो हम पाते है कि

दैवाधीनं जगत्सर्वं,
मन्त्राधीना तु देवता ।
ते मन्त्रा ब्राह्मणा धीना,
तस्मात् ब्राह्मण देवता ।।

अर्थात् देवताओं के अधीन सारा संसार होता है। देवता मन्त्रों के अधीन होते हैं। मन्त्र ब्राह्मण के आधीन होते हैं इसलिये ब्राह्मण देवता होता है। कहने का मतलब यह है कि नव ग्रहों का स्थापन करना हो तो मन्त्रों के उच्चारण से उनको आवाहित किया जा सकता है। मन्त्रों को नवग्रहों के स्थापनार्थ चार प्रकारों में बांटा गया है। जिसे वैदिक मन्त्रों द्वारा आवाहन, पौराणिक मन्त्रों क्षरा आवाहन, नाम मन्त्रों द्वारा आवाहन एवं तांत्रिक मन्त्रों द्वारा आवाहन के रूप में जाना जाता है।
वैदिक मन्त्रों के सन्दर्भ में याज्ञवल्क्य स्मृतिः के आचाराध्याय के ग्रह शान्ति प्रकरण में दिया गया है कि-

आकृष्णेन इमं देवा अग्निर्मूधा दिवः ककुत् ।
उद्बुध्यस्वेति च ऋचो यथासंख्यं प्रकीर्तिताः ।।
बृहस्पते अतियदर्यस्तथैवान्नात्परिस्रुतः।

शं नो देवीस्तथा काण्डात्केतुं कृण्वन्निमांस्तथा ।।

इन-इन मन्त्रों से क्रमशः नवग्रहों को आवाहित एवं स्थापित करना चाहिये। जैसे आकृष्णेन 0 मन्त्र से सूर्य का स्थापन करना चाहिये। इमं देवा मन्त्र से चन्द्रमा का स्थापन करना चाहिये। अग्निर्मूधा मन्त्र से मंगल का आवाहन करना चाहिये। उद्बुध्य मन्त्र से बुध का स्थापन करना चाहिये। बृहस्पते मन्त्र से बृहस्पति का आवाहन करना चाहिये। शं नो देवी मन्त्र से शनि का आवाहन, काण्डात् मन्त्र से राहु तथा केतु कृण्वन् मन्त्र से केतु को स्थापित करना चाहिये।

इसी प्रकार पौराणिक मन्त्रों से या समयाभाव हो तो नाम मन्त्र या तांत्रिक मन्त्रों से नवग्रहों का स्थापन किया जाता है। आवाहन स्थापन के उपरान्त नवग्रहों का यथालब्धोपचार या षोडशोपचार से पूजन किया जाता है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

अनुष्ठानिक- अनुष्ठान के, मण्डल- घेरा, जगदात्मा- जगत की आत्मा, घनिष्ठ- गहरा, प्रत्यक्ष- साक्षात्, कालान्तर- समयान्तर, नियामक- नियन्त्रक, संसूचक- सम्यक सूचित करने वाला, प्रतिनिधित्व- नेतृत्व, कृत- किया हुआ, पाश्व- पशु, स्नायु- धमनियां, भावाभिव्यक्ति- भाव की अभिव्यक्ति, अनुभूति- अनुभव किया हुआ, हिंसक- हिंसा करने वाला, गर्वीला- गर्व करने वाला, कटु- कड़वा, आनन- मुख, कामोन्माद- काम का उन्माद, मनोविकार- मन का विकार, सर्जन- सृजन करने वाला, मिथ्या भाषण- झूठ बोलने वाला, विश्वासघात- विश्वास पर आघात पहुचाने वाला, आग्नेयास्त्र- ज्वलनशील अस्त्र, ऋणग्रस्त- ऋण से ग्रसित, परिहासशील- परिहास युक्त, पटुता- चतुराई, नराकृति- मनुष्य की आकृति, मति भ्रम- बुद्धि का भ्रमित हो जाना, मायाचारी- माया का आचरण करने वाला, बालारिष्ट- बाल्य काल का अरिष्ट, मातामह- नाना, रक्त- लाल, पीत- पीला, कृष्ण- काला, वर्ण- रंग, उद्भव- उत्पत्ति, काश्यपेय- कश्य के पुत्र, महाद्युति- महान तेज वाले, निशा नाथ- रात्रि के पति, ज्योत्स्नापति-चन्द्रमा, धरणी गर्भ संभूत- पृथ्वी के गर्भ से उत्पन्न, विद्युत्तेज- विद्युत के समान तेज, कांचन के समान आभा, नीलाम्बुज- नीले कमल के समान, यमाग्रज- यमराज के अग्रज।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको

सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

2.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-क, 3-ख, 4-ग, 5-ग, 6-घ, 7-घ, 8-क, 9- घ, 10- ग।

2.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9- क 10-घ।

2.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

2.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-क।

2.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ख।

2.4.4 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-नित्य कर्म पूजा प्रकाशः।

2-व्रतोद्यापन- प्रकाशः।

3-बृहद् ब्रह्म नित्य कर्म समुच्चय।

4- शान्ति- विधानम्।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-यजुर्वेद- संहिता।

7- कर्मजव्याधिदैवी चिकित्सा।

8- फलदीपिका

9- अनुष्ठान प्रकाश।

10- सर्व देव प्रतिष्ठा प्रकाशः।

11- संस्कार-भास्करः । वीणा टीका सहिता।

12- मनोभिलषितव्रतानुवर्णनम्- भारतीय व्रत एवं अनुष्ठान।

13- संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

2.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- पूजन विधानम्।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।

3- भारतीय रत्न सिद्धान्त।

4- याज्ञवल्क्य स्मृतिः।

5- संस्कार- विधानम्।

2.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- नवग्रहों की प्रकृति समझाइये दीजिये।

2- सूर्य का स्वरूप एवं काल पुरुष से संबंध बतलाइये।

3- नवग्रह स्थापन की वैदिक विधि बतलाइये।

4- नवग्रह स्थापन की पौराणिक विधि वर्णित कीजिये।

5- नवग्रह स्थापन की नाम मन्त्र की विधि का वर्णन कीजिये।

6- नवग्रह स्थापन की तांत्रिक विधि सविधि लिखिये।

7- चन्द्रमा का स्वरूप एवं काल पुरुष से संबंध का वर्णन कीजिये।

8- मंगल का स्वरूप एवं काल पुरुष से संबंध का वर्णन कीजिये।

9- गुरू का स्वरूप एवं काल पुरुष से संबंध का वर्णन कीजिये ।

10- शनि का स्वरूप एवं काल पुरुष से संबंध का वर्णन कीजिये।

ईकाई – 3 अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपाल आवाहन एवं पूजन

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

इस इकाई में अधिदेवता प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपाल का आवाहन एवं पूजन संबंधी प्रविधि का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व नवग्रह स्थापन सहित अन्य शान्ति प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कोई भी जातक यदि कोई शान्ति कराता है तो प्रायः शान्ति प्रविधियों में नवग्रहों का स्थापन एवं अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपाल का आवाहन पूजन करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों की स्थापना आप कैसे करेगें, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

किसी भी कर्मकाण्ड में नवग्रहों का स्थापन प्रायः किया जाता है। ग्रह स्थापन के नाम पर सामान्य लोगों में यही धारणा बनी रहती है कि नौ ग्रह है उनका नाम लिया जाता है। लेकिन जब आप नवग्रह मण्डल पर ग्रहों का स्थापन विधान देखेंगे तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि नवग्रहों के अलावा उनके अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का भी आवाहन स्थापन करना पड़ता है इनके अभाव में नवग्रह मण्डल के देवताओं का पूजन हो ही नही पाता क्योकि मण्डल पर तो कुल चौवालीश 44 देवता होते है। अभी हम केवल नवग्रहों का कहां -कहां स्थापन किया जाता है ? इसको हमने जाना है। लेकिन अब उन नवग्रहों के कौन-कौन से अधि देवता है? कौन-कौन प्रत्यधि देवता है एवं कौन-कौन पंलोकपाल है? उनका स्थान कहां-कहां होता है? इस पर विचार करेंगें। इस प्रकार इस ईकाई के अध्ययन से आपको संबंधित समस्त विषयों का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

इस इकाई के अध्ययन से आप नवग्रह मण्डल पर अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों की स्थापना करने की विधि एवं पूजन करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे अंग सहित नवग्रहों के स्थापन का ज्ञान हो जायेगा जिसका प्रयोग आप संबंधित व्यक्ति के दोषों से निवारण में कर सकेगें जिससे वह अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित होते हुये लोकोपकारक हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, समाज कल्याण की भावना का विकास करना, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान सहित वर्णन करने का प्रयास करना एवं वृहद् एवं संक्षिप्त दोनों विधियों के प्रस्तुतिकरण का प्रयास करना आदि, इस शान्ति के नाम पर समाज में व्याप्त कुरीतिओं, कुप्रथाओं, ठगी, भ्रष्टाचार, मिथ्या भ्रमादिकों का निवारण हो सकेगा।

3.3 उद्देश्य-

इस ईकाई के अध्ययन से आप नवग्रह मण्डल पर नवग्रहों के स्थापन की आवश्यकता को समझ रहे होगें। अतः इसका उद्देश्य तो वृहद् है परन्तु संक्षिप्त में इस प्रकार आप जान सकते है।

- ❖ अधि देवता प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों की स्थापना से समस्त कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।
- ❖ अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के स्थापन की शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
- ❖ इस कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।
- ❖ प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
- ❖ लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
- ❖ समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।
- ❖ संदर्भित शिक्षा के विविध तथ्यों को प्रकाश में लाना।

3.3 अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का परिचय

3.3.1 अधिदेवता एवं प्रत्यधि देवताओं का परिचय

यह सर्व विदित है कि जब भी हम कोई शान्ति करते हैं तो नवग्रह मण्डल का निर्माण कर नवग्रहों की स्थापना अवश्य करते हैं। न केवल शान्ति अपितु यज्ञों में भी नवग्रहों की स्थापना करनी पड़ती है। नवग्रहों की स्थापना के बिना हम किसी भी अनुष्ठानिक प्रक्रिया का सम्पादन नही कर सकते इसलिये नवग्रहों का ज्ञान अति आवश्यक है। ईशाने ग्रह वेदिका कहते हुये यह बतलाया गया है कि नवग्रह वेदी का निर्माण ईशान कोण में करके नवग्रहों की स्थापना करनी चाहिये। नवग्र्रहों के रूप में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एव केतु होते हैं। इन नवों ग्रहों के दक्षिण अधि देवता एवं बाम भाग में प्रत्यधि देवता विराजित होते हैं। कहा गया है-

अधि देवता दक्षिणे वामे प्रत्यधि देवता।

इसमें दक्षिण एवं वाम का विचार उन ग्रहों से करना चाहिये। प्रायः इस बात को समझने में भूल हो जाती है कि दक्षिण और बाम तो एक ओर होगा लेकिन ऐसा नही है। क्योकि लिखा गया-

शुक्रार्कौ प्रांगमुखो ज्ञेयौ गुरुसौम्या उदंगमुखः।

प्रत्यंगमुखो सोम शनि शेषाः दक्षिणतो मुखाः।।

अर्थात् शुक्र एवं सूर्य का मुख पूर्व की ओर होता है। बुध एवं गुरु का मुख उत्तर की ओर होता है। सोम एवं शनि का मुख पश्चिम की ओर तथा शेष ग्रहों का मुख दक्षिण की ओर होता है। इस स्थिति पर विचार करना चाहिये। कोई व्यक्ति यदि पूर्व की ओर मुख करके खड़ा है तो उसका दाहिना जिधर होगा उधर पश्चिम की ओर मुख करके खड़े हुये व्यक्ति का नही होगा। ठीक उसी प्रकार उत्तर की ओर मुख करके खडे हुये व्ययक्ति का दहिना बाया भाग जिस ओर होगा दक्षिण की ओर मुख किये व्यक्ति का दायां बाया भाग उससे विपरीत होगा। इस लिये अधि देवता एवं प्रत्यधि देवता के स्थापन में हमें सावधानी पूर्वक ग्रहों के मूख का ज्ञान रखना होगा तभी अधि एवं प्रत्यधि देवताओं की स्थापना सम्यक् तरीके से हो पायेगी। इसके अलावा एक और भी विधान शास्त्रों में देखने को मिलता है-

आदित्याभिमुखाःसर्वेसाधिप्रत्यधिदेवताः ।
अधिदेवता दक्षिणे वामे प्रत्यधिदेवताः ।।

यहां भी उसी प्रकार की स्थिति उत्पन्न हो रही है। सूर्य सभी ग्रहों के मध्य में विराजमान है। अब सारे ग्रह सूर्य को देख रहे हैं ऐसी स्थिति में उनके मुख की दिशा अलग-अलग होगी जिसके कारण उनका दायां एवं बायां भाग बदल जायेगा और अधि-प्रत्यधि देवताओं का स्थान उसके अनुरूप होगा।

अब यहां विचारणीय होगा कि अधि देवता कौन-कौन है? इसके उत्तर के सन्दर्भ में मत्स्य पुराण एवं कोटि होम पद्धति में लिखा गया है कि-

ईश्वरश्च उमा चैव स्कन्दो विष्णुस्तथैव च। ब्रह्मेन्द्रौ यमकालाश्च चित्रगुप्ताधिदेवताः।

अर्थात् ईश्वर, उमा, स्कन्द्र, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, काल एवं चित्रगुप्त ये अधि देवता कहे गये है। इसको और अच्छी तरह हम इस प्रकार समझ सकते है। सूर्य के दक्षिण भाग में ईश्वर का स्थान होता है। चन्द्रमा के दक्षिण भाग में उमा का स्थान होता है। मंगल के दक्षिण भाग में स्कन्द का स्थान होता है। बुध के दक्षिण भाग में विष्णु का स्थान होता है। बृहस्पति के दक्षिण भाग में ब्रह्मा का स्थान होता है। शुक्र के दक्षिण भाग में इन्द्र का स्थान होता है। शनि के दक्षिण भाग में यम का स्थान होता है। राहु के दक्षिण भाग में काल का स्थान होता है एवं केतु के दक्षिण भाग में चित्रगुप्त का स्थान होता है।

इसी प्रकार प्रत्यधि देवताओं के बारे में विचार करते हुये कहा गया है कि-

अग्निरापो धरा विष्णुः इन्द्रश्चैन्द्री प्रजापतिः। सर्पाब्रह्मा च निर्दिष्टा प्रत्यधिदेवा यथाक्रमम्।।

अर्थात् अग्नि, अप, धरा, विष्णु, इन्द्र, ऐन्द्री, प्रजापति, सर्प एवं ब्रह्मा प्रत्यधि देवता होते हैं। इसको इस प्रकार सरलता से समझा जा सकता है। सूर्य के वाम भाग में अग्नि का स्थान होता है। चन्द्रमा के वाम भाग में अप का स्थान होता है। मंगल के वाम भाग में धरा का स्थान होता है। बुध के वाम भाग में विष्णु का स्थान होता है। बृहस्पति के वाम भाग में इन्द्र का स्थान होता है। शुक्र के वाम भाग में ऐन्द्री का स्थान होता है। शनि के वाम भाग में प्रजापति का स्थान होता है। राहु के वाम भाग में सर्प का स्थान होता है एवं केतु के वाम भाग में ब्रह्मा का स्थान होता है।

इस प्रकार से आपने अधि देवता एवं प्रत्यधि देवताओं का परिचय जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों का स्थापन अधि देवता प्रत्यधि देवता सहित करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- ईश्वर किसका अधि देवता है ?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 2- उमा किसकी अधिदेवता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 3- स्कन्द किसका अधिदेवता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 4- विष्णु किसका अधिदेवता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 5- इन्द्र किसका प्रत्यधि देवता है?

क- बृहस्पति का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 6- ऐन्द्री किसका प्रत्यधि देवता है?

क- सूर्य का , ख- शुक्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 7- प्रजापति किसके प्रत्यधि देवता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- शनि का, घ- बुध का।

प्रश्न 8- सर्प किसके प्रत्यधि देवता है?

क- सूर्य का , ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- राहु का।

प्रश्न 9- ब्रह्मा किसके प्रत्यधि देवता है?

क- सूर्य का , ख- केतु का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 10- काल किसके अधि देवता है?

क- सूर्य का , ख- मंगल का, ग- शनि का, घ- राहु का।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में अधिदेवता एवं प्रत्यधि देवताओं का नाम स्थान सहित परिचय का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम पंचलोकपालों की स्थापना कैसे की जाती है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है, जो इस प्रकार है-

3.3.2 पंचलोकपालों का परिचय-

नवग्रह मण्डल पर पंच लोकपालों की स्थापना की जाती है। पंचलोकपालों के विषय में लिखा है कि

ग्रहाणामुत्तरे पंच लोकपालाः व्यवस्थिताः। अर्थात् ग्रहों के उत्तर में पंच लोकपालों की व्यवस्था की गयी है। इन पंचलोकपालों के नाम के सन्दर्भ में प्राप्त होता है कि गणेशश्चाम्बिका वायु आकाशश्चाश्विनौ तथा। अर्थात् गणेश, अंबिका, वायु, आकाश एवं अश्विनी कुमार ये पॉच लोकपाल है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार प्राप्त होता है-

1- श्री गणेश का स्वरूप-

चतुर्भुजस्त्रिनेत्रश्च कर्तव्योत्र गजाननः। नागयज्ञोपवीतश्च शशांक कृतशेखरः ।
दक्षे दन्तं करे दद्यात् द्वितीये चाक्षसूत्रकम्। तृतीये परशुं दद्याच्चतुर्थे मोदकं तथा ।।

उपरोक्त श्लोक में श्री गणेश जी के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि पंचलोकपाल के रूप में व्यवस्थित गणेश जी चार भुजा वाले हैं, तीन नेत्रों वाले हैं तथा उनका मुख गज का बना हुआ है। नाग के यज्ञोपवीत धारण करते है तथा उनके शिखर पर चन्द्रमा विराजमान रहता है। दाहिने हाथ में दांत धारण किये हुये है। ऐसी किंवदन्ती है कि गणेश जी के हाथी वाले मुख में दो दांत थे। एक दांत उन्होने स्वयं ही तोड़ दिया इसलिये अब केवल एक दांत ही बचा रह गया जिसके कारण वे एकदन्त हो गये। वहीं कहा गया एक दांत उनका कहां चला गया ? जिसे उन्होने तोड़ा तो बतलाया गया उसी

को दाहिने हाथ में अस्त्र के रूप में धारण कर लिये। इसलिये श्री गणेश जी एकदन्त हो गये। दूसरे हाथ में अक्ष एवं सूत्र लिये हुये है। तीसरे हाथ में परशु लिये हुये है तथा चौथे हाथ में मोदक लिये हुये है। इस प्रकार का स्वरूप श्रीगणेश लाकपाल का है।

2- अम्बिका का स्वरूप-

शक्तिं बाणं तथा शूलं खड्गं चक्रं च दक्षिणे। चन्द्रबिम्बमधो वामे खेटमूर्ध्वे कपालकम्।
सुकंकटं च विभ्राणा सिंहारूढ़ा तु दिग्भुजा। एषा देवी समुद्दिष्टा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी।

इस श्लोक में दूसरे लोकपाल अम्बिका का वर्णन किया गया है। इसके अनुसार अम्बिका नाम की दुर्गा देवि शक्ति, बाण, शूल, खड्ग, एवं चक्र दाहिनी ओर धारण की हुई है। वाम भाग में चन्द्र बिम्ब, ग्रह, कपाल एवं सुकंकट धारण की हुयी सिंह पर आरूढ़ दश भुजाओं वाली दुर्गा देवि का स्वरूप इस प्रकार है।

3- **वायु का स्वरूप**-

तीसरे लोकपाल के रूप में वायु को स्वीकार किया गया है। वायु के स्वरूप का वर्णन करते हुये दानमयूख में इस प्रकार कहा गया है।

धावद्धरणिपृष्ठस्थो ध्वजधारी समीरणः।
वरदानकरो धूम्रवर्णः कार्यो विजानता।

वायु के स्वरूप के बारे में कहा गया है कि वायु लोकपाल धरणिपृष्ठ यानी भूमि के पृष्ठ पर दौड़ रहे है। ये वायु देवता ध्वज धारण किये हुये है। एक हाथ से वरदान वाली मुद्रा बनाये हुये है। इनका वर्ण धूम्र है। इस प्रकार वायु लोकपाल का स्वरूप बतलाया गया है।

4-**आकाश का स्वरूप**-

चौथे लोकपाल के रूप में आकाश को स्वीकार किया गया है। आकाश नामक लोकपाल के स्वरूप का वर्णन करते हुये पाया गया है कि-

नीलोत्पलाभं गगनं तद्वर्णाम्बरधारि च।
चन्द्रार्क हस्तं कर्तव्यं द्विभुजं सौम्यखण्डवत्।

आकाश के स्वरूप के बारे में कहा गया है कि नीले उत्पल यानी कमल के समान गगन नामक दिग्पाल की आभा है। और उसी वर्ण का अम्बर भी धारण किया हुआ है। आकाश जी की दो भुजायें है इन दोनों भुजाओं में चन्द्रमा एवं सूर्य को धारण किये हुये है। आकाश अखण्ड स्वरूप में एवं सौम्य स्वरूप में विराजमान है।

5- **अश्विनी कुमार का स्वरूप**-

पॉंचवे लोकपाल के रूप में अश्विनी कुमार को जाना जाता है। अश्विनी कुमार के स्वरूप की चर्चा करते हुये दानमयूख में कहा गया है कि-

द्विभुजौ सौम्य वरदौ कर्तव्यो रूपसंयुता। तयोरोषधयः कार्या दिव्या दक्षिण हस्तयोः।

वामयोः पुस्तकौ कार्यौ दर्शनीयौ तथा द्विजाः। एकस्य दक्षिणे पार्श्वे वामे चास्य च यादवः।

नारी युगं प्रकर्तव्यं सुरूपं चारुदर्शनम्। रत्नभाण्डकरे कार्ये चन्द्रशुक्लाम्बरे तथा।

अश्विनी कुमार की विशेषता यह है कि ये देवता तो एक है लेकिन ये दो कुमारों के स्वरूप में रहते है। दो भुजायें धारण करने वाले उन भुजाओं से वर देने वाले तथा औषधि का काम करने वाले है। दक्षिण एवं वाम पार्श्व के रूप में विराजमान है। इनका दर्शन अत्यन्त मनोहर है। नारिओं जैसा ये दिखाई देते है। रत्न भाण्ड यानी पात्र लिये हुये होते है।

इस प्रकार से आपने पंच लोकपालों का परिचय जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों का स्थापन पंच लोकपालों सहित करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- नवग्रह मण्डल पर कितने लोकपाल होते है?

क- 2, ख- 3, ग- 4, घ- 5।

प्रश्न 2- प्रथम लोकपाल कौन है?

क- गणेश, ख- अम्बिका, ख- वायु, ग- आकाश।

प्रश्न 3- द्वितीय लोकपाल कौन है?

क- गणेश, ख- अम्बिका, ग- वायु, घ- आकाश।

प्रश्न 4- तृतीय लोकपाल कौन है?

क- गणेश, ख- अम्बिका, ग- वायु, घ- आकाश।

प्रश्न 5- चतुर्थ लोकपाल कौन है?

क- गणेश, ख- अम्बिका, ग- वायु, घ- आकाश।

प्रश्न 6- पंचम लोकपाल कौन है?

क- गणेश, ख- अम्बिका, ग- अश्विनी कुमार, घ- आकाश।

प्रश्न 7- चतुर्थे मोदकं तथा किस लोकपाल के लिये है?

क- गणेश, ख- अम्बिका, ग- वायु, घ- आकाश।

प्रश्न 8- सिंहारूढ़ा कौन लोकपाल है?

क- गणेश, ख- अम्बिका, ग- वायु, घ- आकाश।

प्रश्न 9- ध्वजधारी लोकपाल कौन है?

क- गणेश, ख- अम्बिका, ग- वायु, घ- आकाश।

प्रश्न 10- नीलोत्पलाभ लोकपाल कौन है?

क- गणेश, ख- अम्बिका, ग- वायु, घ- आकाश।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में पंचलोकपालों के परिचय का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्ठी तरह समझ गये होगें। अब हम अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों की स्थापना कैसे की जाती है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है, जो इस प्रकार है-

3.4. अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का आवाहन-

अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के विविध तरीके है। उनमें से हम वैदिक मन्त्रों से आवाहन, पौराणिक मन्त्रों से आवाहन एवं नाम मन्त्रों से आवाहन की विधि पर विचार करेगें जो इस प्रकार है-

3.4.1 वैदिक मन्त्रों के अधि देवताओं, प्रत्यधि देवताओं एवं पंचलोकपालों का आवाहन-

आप अधि देवताओं, प्रत्यधि देवताओं एवं पंचलोकपालों के बारे परिचय प्राप्त कर लिये है। अब इनका आवाहन इस प्रकार है-

अधिदेवता स्थापनम्

1-सूर्य के दक्षिण में ईश्वर का आवाहन- ॐ त्र्यंबकं यजामहे सुगंधिम्पुष्टिवर्द्धनम्। उर्वारुकमिव बन्ध-नान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्। ओं भूर्भुवः स्वः ईश्वराय नमः। ईश्वरं आवाहयामि स्थापयामि।।

2- चन्द्रमा के दक्षिण में उमा का आवाहन- श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि

रुपमश्विनौव्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुम्म ऽ इषाण सर्व्वलोकम्म ऽइषाण।। ॐ भूर्भुवः स्वः उमायै नमः उमामावाहयामि स्थापयामि।।

3- मंगल के दक्षिण में स्कन्द का आवाहन- ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान ऽउद्यन्त्समुद्रादुतवापुरीषात्। श्येनस्य पक्षाहरिणस्यबाहू उपस्तुत्यम्महिजातन्ते ऽ अर्व्वन्।। ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय नमः स्कन्दं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- बुध के दक्षिण में विष्णु का आवहन- ॐ विष्णोरराटमसि व्विष्णोः श्नप्त्रेस्थो व्विष्णोः स्यूरसिव्विष्णोर्ध्रुवोसि। व्वैष्णवमसि व्विष्णवे त्वा ।। ओं भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।।

5- बृहस्पति के दक्षिण में ब्रह्मा का आवाहन- ॐ आ ब्रह्मन्ब्राह्मणोब्रह्मवर्च्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर ऽ इषव्योतिव्याधीमहारथोजायतांदोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरंधिर्योषाजिष्णूरथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य व्वीरो जायतान्निकामे निकामे नः पर्ज्जन्यो व्वर्षतु फलवत्यो न ऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।। ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि।।

6- शुक्र के दक्षिण में इन्द्र का आवाहन- ॐ सयोषा ऽ इन्द्र सगणो मरु सोमंपिबव्वृत्रहा शूर विद्वान्। जहिशत्रूँ2 रपमृधोनुदस्वाथाभ्यङ्कृणुहि विश्वतो नः।। ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि ।।

7- शनि के दक्षिण में यम का आवाहन- ओं यमाय त्वांगिरस्वते पितृमते स्वाहा। स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म्मः पित्रे।। ओं भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यमं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- राहु के दक्षिण में काल का आवाहन- ॐ कार्षिरसि समुüस्य त्वाक्षित्या ऽ उन्नयामि समापो ऽ अरग्मतसमोषधीभिरोषधीः।। ॐ भूर्भुवः स्वः कालाय नमः कालं आवाहयामि स्थापयामि।।

9- केतु के दक्षिण में चित्रगुप्त का आवाहन- ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय ॐ भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्ताय नमः चित्रगुप्तमावाहयामि स्थापयामि।।

प्रत्यधिदेवतास्थापनम्

1-सूर्य के वाम भाग में अग्नि का आवाहन- ॐ अग्निदूतं पुरोदधे हव्यावाहमुपब्रुवे। देवाँ आसादयादिह । ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निम् आवाहयामि स्थापयामि।।

2- चन्द्रमा के वाम भाग में अप का आवाहन- ओं आपो हिष्ठामयोभुवस्तान ऽउर्ज्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे।। ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अपः आवाहयामि स्थापयामि।।

3- मंगल के वाम भाग में पृथ्वी का आवाहन-ओ स्योनापृथिवी नो भवानृक्षरानिवेशनी। यच्छानः शर्म्म शप्प्रथाः।। ओं भूर्भुवः स्वः पृथिव्यै नमः पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि।।

4- बुध के वाम भाग में विष्णु का आवाहन- ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम्। समूढमस्य पा गुं सुरे स्वाहा।। ओं भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुं आवाहयामि स्थापयामि।।

5-बृहस्पति के वाम में इन्द्र का आवाहन- ॐ इन्द्रऽआसान्नेता बृहस्पतिर्दक्षिणायज्ञः पुर ऽ एतु सोमः। देवसेनानामभिभंजतीनांजयन्तीनांमरुतोयंत्वग्रम् ।। ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि।।

6- शुक्र के वाम में इन्द्राणी का आवाहन- ॐ आदित्यै रास्ना सीन्द्राण्या उष्णीषः। पूषासि घर्माय दीष्व।। ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राण्यै नमः, इन्द्राणीं आवाहयामि स्थापयामि।।

7- शनि के वाम में प्रजापति का आवाहन- ॐ प्रजापते नत्वदेतान्यन्योव्विश्वारुपाणि परिताबभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो ऽ अस्तु व्वय गुं स्यामपतयोरयीणाम् ।। ओं भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- राहु के वाम भाग में सर्प का आवाहन- ॐ नमोस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये ऽ अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्प्पेभ्यो नमः ।। ॐ भूर्भुवः स्वः सर्प्पेभ्यो नमः सर्पान् आवाहयामि स्थापयामि

9- केतु के वाम भाग में ब्रह्म का आवाहन- ॐ ब्रह्मयज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमितः सुरुचोव्वेन ऽ आवः। स बुध्न्याऽ उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च व्विवः।। ¬ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि ।।

विनायकादिपंचलोकपालानामावाहनम्

1- गणेश का आवाहन- ॐ गणान्त्वा गणपति गुं हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति गुं हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति गुं हवामहे व्वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भ्भधम्।। ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ।।

2- अम्बिका का आवाहन- ॐ अम्बे ऽ अम्बिके अम्बालिके न मा मयति कश्चन। ससत्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्। ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गायै नमः दुर्गामावाहयामि स्थापयामि ।।

3- वायु का आवाहन- ॐ व्वायो ये ते सहस्त्रिणो रथासस्तेभिरागहि। नियुत्वान्सोमपीतये ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुं आवाहयामि स्थापयामि॥

4- आकाश का आवाहन-ओं घृतं घृतपावानः पिबतव्वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्यहविरसि स्वाहा ॥ दिशः प्रदिश ऽ आदिशो व्विदिशिऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा॥ ॐ भूर्भुवः स्वः आकाशाय नमः आकाशं आवाहयामि स्थापयामि ॥

5-अश्विनी कुमार का आवाहन- ओं यावांकशामधुमत्यश्विना सूनृतावती। तया यज्ञं मिमिक्षतम्॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि ॥

इस प्रकार से आपने वैदिक मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंच लोकपालों के आवाहन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ अधि देवता, प्रत्यधि देवता का स्थापन पंच लोकपालों सहित करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- नवग्रह मण्डल पर कितने अधिदेवता होते है?

क- 7, ख- 8, ग- 9, घ- 10।

प्रश्न 2- त्र्यम्बकं मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 3- यदक्रन्दः प्रथमं मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 4- इदं विष्णु मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 5- सयोषा इन्द्र मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 6- अग्निं दूतं मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- अग्नि का, ख-अप का, ग- विष्णु का, घ- पृथ्वी का।

प्रश्न 7- आपो हिष्ठा मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- अप का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 8- विष्णो रराट मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- अग्नि का, ख-अप का, ग- विष्णु का, घ- पृथ्वी का।

प्रश्न 9- स्योना पृथ्वी मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- अग्नि का, ख-अप का, ग- विष्णु का, घ- पृथ्वी का।

प्रश्न 10-घृतं घृतपावानः से किसका आवाहन करते है?

क- गणेश का, ख- अम्बिका का, ग- वायु का, घ- आकाश का?

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों को वैदिक मन्त्रों से आवाहन का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों की स्थापना पौराणिक मन्त्रों से कैसे की जाती है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है। इस सन्दर्भ में हमने एक निवेदन पूर्व में भी किया है कि वैदिक मन्त्रों का उच्चारण वे ही कर सकते जिन्होने गुरुमुखोच्चारण पद्धति मन्त्रों से पढ़ा है अन्यथा वे मन्त्र अशुद्ध ही पढ़ जायेगें। इसलिये इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखा जाय कि जो शुद्ध रूप से वेद मन्त्रों का उच्चारण न कर सकते हो वे पौराणिक मन्त्रों से आवाहन कर सकते है। पौराणिक मन्त्र वैदिक मन्त्र की अपेक्षा काफी सरल एवं सुगम है। अतः पौराणिक मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का आवाहन इस प्रकार है-

3.4.2 पौराणिक मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का आवाहन

1-सूर्य के दाहिने भाग में ईश्वर का स्थान होता है। इनका आवाहन इस प्रकार है-

एह्येहि विश्वेश्वर नस्त्रिशूल कपालखड्वांगधरेण सार्धम्।

लोकेश यज्ञेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाण पूजा भगवन्नमस्ते।।

ओं भूर्भुवः स्वः ईश्वराय नमः। ईश्वरं आवाहयामि स्थापयामि।।

2- चन्द्रमा के दक्षिण में उमा का स्थान होता है । इनका आवाहन इस प्रकार है-

हेमाद्रि तनयां देवीं वरदां शंकरप्रियाम्।

लम्बोदरस्य जननीमुमामावाहयाम्यहम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः उमायै नमः उमामावाहयामि स्थापयामि।।

3- मंगल के दक्षिण में स्कन्द का स्थान है उनका आवाहन इस प्रकार है-

रुद्रतेजः समुत्पन्नं देवसेनाग्रगं विभुम्।

षण्मुखं कृत्तिकासूनुं स्कन्दं आवाहयाम्यहम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय नमः स्कन्दं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- बुध के दक्षिण में विष्णु का स्थान है। अतः आवहन इस प्रकार है-

देवदेवं जगन्नाथं भक्तानुग्रहकारकम्।

चतुर्भुजं रमानाथं विष्णुमावाहयाम्यहम्

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।।

5- बृहस्पति के दक्षिण में ब्रह्मा का स्थान होता है जिनका आवाहन इस प्रकार है-

ॐ कृष्णाजिनांबरधरं पद्मसंस्थं चतुर्मुखम्।

वेदाधारं निरालम्बं विधिमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूभुर्वः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि।।

6- शुक्र के दक्षिण में इन्द्र का स्थान है इनका आवाहन इस प्रकार किया जाता है-

ओं देवराजं गजारूढ़ं शुनासीरं शतक्रतुम्।

वज्रहस्तं महाबाहुमिन्द्रमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि ।।

7- शनि के दक्षिण में यम का सथान होता है जिसका आवाहन इस प्रकार है-

ओं धर्मराजं महावीर्यं दक्षिणादिक्पतिं प्रभुम्।

रक्तेक्षणं महाबाहुं यममावाहयाम्यहम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यमं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- राहु के दक्षिण में काल का स्थान होता है जिसका आवाहन इस प्रकार है-

ओं अनाकारमनन्ताख्यं वर्तमानं दिने दिने।

कलाकाष्ठादिरूपेण कालमावाहयाम्यहम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः कालाय नमः कालं आवाहयामि स्थापयामि।।

9- केतु के दक्षिण में चित्रगुप्त का स्थान होता है जिसका आवाहन इस प्रकार है-

ओं धर्मराजसभासंस्थं कृताकृतविवेकिनम्।

आवाहये चित्रगुप्तं लेखनी पत्रहस्तकम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्ताय नमः चित्रगुप्तमावाहयामि स्थापयामि।।

प्रत्यधिदेवतास्थापनम्

1-सूर्य के वाम भाग में अग्नि का आवाहन-

ॐ रक्तमाल्याम्बरधरं रक्तपद्मासनस्थितम्।

वरदाभयदं देवमग्निमावाहयाम्यहम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निम् आवाहयामि स्थापयामि।।

2- चन्द्रमा के वाम भाग में अप का आवाहन-

ओं आदिदेवसमुद्भूत जगत्छुद्धिकराः शुभाः।

औषध्याप्यायनकरा अप आवाहयाम्यहम्।।

ओं भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अपः आवाहयामि स्थापयामि।।

3- मंगल के वाम भाग में पृथ्वी का आवाहन-

ॐ शुक्लवर्णां विशालाक्षीं कूर्मपृष्ठोपरिस्थिताम्।

सर्वशस्याश्रयां देवीं धरामावाहयाम्यम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिव्यै नमः पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि।।

4- बुध के वाम भाग में विष्णु का आवाहन-

ॐ शंखचक्रगदापद्महस्तं गरुड़वाहनम्।

किरीटकुण्डलधरं विष्णुमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुं आवाहयामि स्थापयामि।।

5-बृहस्पति के वाम में इन्द्र का आवाहन-

ॐ ऐरावत गजारूढ़ं सहस्राक्षं शचीपतिम्।

वज्रहस्तं सुराधीशमिन्द्रमावाहयाम्यहम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि।।

6- शुक्र के वाम में इन्द्राणी का आवाहन-

ॐ प्रसन्नवदनां देवीं देवराजस्य वल्लभाम्।

नानालंकारसंयुक्तां शचीमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राण्यै नमः, इन्द्राणीं आवाहयामि स्थापयामि।।

7- शनि के वाम में प्रजापति का आवाहन-

ॐ आवाहयाम्यहं देवदेवेशं च प्रजापतिम्।

अनेकव्रतकर्तारं सर्वेषां च पितामहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- राहु के वाम भाग में सर्प का आवाहन-

ओं अनन्ताद्यान् महाकायान् नानामणिविराजितान्।

आवाहयाम्यहं सर्पान् फणासप्तकमण्डितान्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्प्पेभ्यो नमः सर्पान् आवाहयामि स्थापयामि ।।

9- केतु के वाम भाग में ब्रह्मा का आवाहन-

ओं हंसपृष्ठसमारूढं देवतागणपूजितम्।

आवाहयाम्यहं देवं ब्रह्माणं कमलासनम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि ।।

विनायकादिपंचलोकपालानामावाहनम्

1- गणेश का आवाहन-

ॐ लम्बोदरं महाकायं गजवक्त्रं चतुर्भुजम्।

आवाहयामयहं देवं गणेशं सिद्धिदायकम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ।।

2- अम्बिका का आवाहन-

ॐ पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे।

नानाजाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गायै नमः दुर्गामावाहयामि स्थापयामि ।।

3- वायु का आवाहन-

ॐ आवाहयाम्यहं वायुं भूतानां देहधारिणम्।

सर्वाधारं महावेगं मृगवाहनमीश्वरम् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- आकाश का आवाहन-

ॐ अनाकारं शब्दगुणं द्यावाभूम्यन्तरस्थितम्।

आवाहयाम्यहं देवमाकाशं सर्वगं शुभम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः आकाशाय नमः आकाशं आवाहयामि स्थापयामि ।।

5-अश्विनी कुमार का आवाहन-

ॐ देवतानां च भैषज्ये सुकुमारौ भिषक्वरौ।

आवाहयाम्यहं देवावश्विनौ पुष्टिवर्द्धनम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि ।।

इस प्रकार से आवाहन करके प्रतिष्ठा करनी चाहिये। क्योंकि बिना प्रतिष्ठा के पूजन नही हो पायेगा। इसलिये हाथ में अक्षत लेकर अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुये प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिये।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।

अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चनः।।

इस प्रकार से आपने पौराणिक मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंच लोकपालों के आवाहन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ अधि देवता, प्रत्यधि देवता का स्थापन पंच लोकपालों सहित करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- नवग्रह मण्डल पर कितने प्रत्यधिदेवता होते है?

क- 7, ख- 8, ग- 9, घ- 10।

प्रश्न 2- एह्येहि विश्वेश्वर मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 3- रुद्रतेजः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 4- देव देव जगन्नाथ मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 5-देवराजं गजारूढ़ं मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 6- धर्मराजं महावीर्यं मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-यम का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 7- धर्मराज सभासंस्थं मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क-चित्रगुप्त का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 8-रक्तमाल्यम्बरधरः मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- अग्नि का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 9- शुक्लवर्णां विशालाक्षीं मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- पृथ्वी का।

प्रश्न 10- ऐरावत गजारूढ़ मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों को पौराणिक मन्त्रों से आवाहन का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों की स्थापना नाम मन्त्रों से कैसे की जाती है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है। इस सन्दर्भ में हमने एक निवेदन पूर्व में भी किया है कि वैदिक मन्त्रों का उच्चारण वे ही कर सकते हैं जिन्होने गुरुमुखोच्चारण पद्धति से मन्त्रों को पढ़ा है अन्यथा वे मन्त्र अशुद्ध ही पढ़े जायेगें। इसलिये इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखा जाय कि जो शुद्ध रूप से वेद मन्त्रों का उच्चारण न कर सकते हो वे पौराणिक मन्त्रों से आवाहन कर सकते है। पौराणिक मन्त्र वैदिक मन्त्र की अपेक्षा काफी सरल एवं सुगम है। परन्तु पौराणिक मन्त्रों से भी आवाहन करने में काठिन्य हो रहा हो तो नाम मन्त्रों से आवाहन करना चाहिये लेकिन किसी भी हालत में अशुद्धि नही होनी चाहिये। अतः पौराणिक मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का आवाहन इस प्रकार है-

3.4.3 नाम मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का आवाहन

1-सूर्य के दाहिने भाग में ईश्वर का स्थान होता है। इनका आवाहन इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः ईश्वराय नमः। ईश्वरं आवाहयामि स्थापयामि।।

2- चन्द्रमा के दक्षिण में उमा का स्थान होता है । इनका आवाहन इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः उमायै नमः उमामावाहयामि स्थापयामि।।

3- मंगल के दक्षिण में स्कन्द का स्थान है उनका आवाहन इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय नमः स्कन्दं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- बुध के दक्षिण में विष्णु का स्थान है। अतः आवहन इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।।

5- बृहस्पति के दक्षिण में ब्रह्मा का स्थान होता है जिनका आवाहन इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि।।

6- शुक्र के दक्षिण में इन्द्र का स्थान है इनका आवाहन इस प्रकार किया जाता है-

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि ।।

7- शनि के दक्षिण में यम का स्थान होता है जिसका आवाहन इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यमं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- राहु के दक्षिण में काल का स्थान होता है जिसका आवाहन इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः कालाय नमः कालं आवाहयामि स्थापयामि।।

9- केतु के दक्षिण में चित्रगुप्त का स्थान होता है जिसका आवाहन इस प्रकार है-

ॐ भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्ताय नमः चित्रगुप्तमावाहयामि स्थापयामि।।

प्रत्यधिदेवतास्थापनम्

1-सूर्य के वाम भाग में अग्नि का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्निम् आवाहयामि स्थापयामि।।

2- चन्द्रमा के वाम भाग में अप का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः अपः आवाहयामि स्थापयामि।।

3- मंगल के वाम भाग में पृथ्वी का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिव्यै नमः पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि।।

4- बुध के वाम भाग में विष्णु का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णुं आवाहयामि स्थापयामि।।

5-बृहस्पति के वाम में इन्द्र का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि।।

6- शुक्र के वाम में इन्द्राणी का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राण्यै नमः, इन्द्राणीं आवाहयामि स्थापयामि।।

7- शनि के वाम में प्रजापति का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः प्रजापतिं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- राहु के वाम भाग में सर्प का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्प्पेभ्यो नमः सर्पान् आवाहयामि स्थापयामि ।।

9- केतु के वाम भाग में ब्रह्मा का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि ।।

विनायकादिपंचलोकपालानामावाहनम्

1- गणेश का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ।।

2- अम्बिका का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गायै नमः दुर्गामावाहयामि स्थापयामि ।।

3- वायु का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- आकाश का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः आकाशाय नमः आकाशं आवाहयामि स्थापयामि ।।

5-अश्विनी कुमार का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यां नमः अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि ।।

इस प्रकार से आवाहन करके प्रतिष्ठा करनी चाहिये। क्योंकि बिना प्रतिष्ठा के पूजन नही हो पायेगा। इसलिये हाथ में अक्षत लेकर अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुये प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिये।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।

अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चनः।।

इस प्रकार से आपने नाम मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंच लोकपालों के आवाहन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ अधि देवता, प्रत्यधि देवता का स्थापन पंच लोकपालों सहित करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- नवग्रह मण्डल पर कितने पुरुष प्रत्यधिदेवता होते है?

क- 7, ख- 8, ग- 9, घ- 10।

प्रश्न 2- ओं भूर्भुवः स्वः ईश्वराय मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 3- ओं भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 4- ओं भूर्भुवः स्वः विष्णवे मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 5-ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्राय मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 6- ओं भूर्भुवः स्वः यमाय मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-यम का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 7- ओं भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्ताय मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क-चित्रगुप्त का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 8-ओं भूर्भुवः स्वः अग्नये मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- अग्नि का, घ- इन्द्र का।

प्रश्न 9- ओ भूर्भुवः स्वः पृथीव्यै मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- पृथ्वी का।

प्रश्न 10- ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्राय मन्त्र से किसका आवाहन किया जाता है?

क- ईश्वर का, ख-स्कन्द का, ग- विष्णु का, घ- इन्द्र का।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों को नाम मन्त्रों से आवाहन का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का पूजन कैसे किया जाता है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

3.4.4 अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का वैदिक विधि से पूजन

अब आप अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के पूजन का विधान देखेगें।

आसनम्- पूजन में सर्वप्रथम आवाहन किया जाता है जो आप देख चुके है। आवाहन के अनन्तर आसन दिया जाता है। आसन हेतु हाथ में अक्षत लेकर दिये वैदिक मन्त्र को पढ़ते है और अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के ऊपर अक्षत छोड़ते है।

ओं पुरुषऽएवेद गुं सर्व्वं यद भूतं यच्च भाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्ने नातिरोहति।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि।।

पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयं जलम्- आसन के बाद पाद्य, अर्घ्य एवं आचमन का जल चढ़ाया जाता है। इसमें पाद्य अर्थात् पाद प्रक्षालनार्थ जल, हस्त प्रक्षालनार्थ अर्घ्य, मुख प्रक्षालन हेतु आचमनीय का जल, स्नान हेतु स्नानीय जल एवं पुनः आचमन का जल इस प्रकार चढ़ाना चाहिये।
ततः पादयोः पाद्यं हस्तयोरर्घ्यं आचमनीयं जलं -देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताभ्याम्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः एतानि पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानीय पुनराचमनीयानि समर्पयामि।।
अब दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर को एक में मिलाकर पंचामृत बनाया जाता है। इससे स्नान कराया जाता है। कहीं कहीं पृथक्- पृथक् स्नान भी कराया जाता है। आचार्य याज्ञवल्क्य के अनुसार प्रत्येक स्नान में आचमनीय जल देना अति आवश्यक है
पंचामृतस्नानम्- ओं पंचनद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः सरस्वती तु पंचधा सो देशेभवत्सरित्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पंचामृतस्नानं समर्पयामि आचमनीयं जलं समर्पयामि।।
पंचामृत स्नान के बाद शुद्धोदक स्नान जल से कराया जाता है।

ततः शुद्धोदकस्नानम्- शुद्धवालः सर्व्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विनाः। श्येतः श्येताक्षोरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्ण्णायामाऽअवलिप्ता रौद्रानभो रूपाः पार्ज्जन्न्याः।। शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।। स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

स्नान के अनन्तर वस्त्र चढ़ाया जाता है। वस्त्र में पुरुष देवता के लिये पुरुष वस्त्र एवं स्त्री देवता के लिये स्त्री वस्त्र चढ़ाया जाता है। इसके अभाव में मांगलिक सूत्र ही चढ़ा दिया जाता है।

वस्त्रम्- ओ युवा सुवासाः परिवीतऽ आगात्सऽउश्रेयान्भवति जायमानः। तं धीरासः कवयऽ उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयंतः।। शीतवातोष्ण संत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्। देहालंकरणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः वस्त्रं समर्पयामि वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

वस्त्र के अनन्तर आचमनीय जल चढ़ाकर यज्ञोपवीत चढ़ाया जाता है।

यज्ञोपवीतम्- ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्। आयुष्यमग्रयं प्रतिमुंचशुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमःयज्ञोपवीतं समर्पयामि तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उपवस्त्र का मतलब होता है उत्तरीय वस्त्र। उत्तरीय वस्त्र हेतु जो आवश्यक उपवस्त्र हो उसे चढ़ाना चाहिये या रक्षा सूत्र चढ़ाना चाहिये।

उपवस्त्रम्- ओं सुजातो ज्योतिषा सह शर्म्म वरुथ मासदत्स्वः।। व्वासो ऽअग्ने विश्वरूप गुं संव्ययस्व व्विभावसो।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः उपवस्त्रं समर्पयामि उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उवपस्त्र के अनन्तर चन्दन को गन्ध के रूप में चढ़ाते है। चन्दन के अभाव में रोली भी चढ़ा सकते है।

गन्धम्- ओं त्वांगन्धर्वाऽ अँखनसूँत्वा मिन्द्रस्त्वाम्बृहस्पतिः।। त्वामोषधे सोमोराजा व्विद्वान्यक्ष्मादमुच्चत।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

गन्ध के बाद अक्षत चढ़ाने का विधान है।

अक्षतान्- ओं अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽ अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो व्विप्प्रा न विष्ठया मतीयोजान्विद्रतेहरी।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।।

इसके बाद फूलों की गुथी हुयी माला चढ़ाने का विधान मिलता है।

पुष्पमालाम्- ओं ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः अश्वा इव सजीत्वरीर्व्विरुधः पारयिष्णवः। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पुष्पमालां समर्पयामि।।

दूर्वाङ्कुरान्-ओं काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवानो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि।। सौभाग्य सिन्दूरम्-ओ सिन्धोरिव प्प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमियः पतयन्तियह्वाः। घृतस्यधाराऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः सौभाग्यसिन्दूरं समर्पयामि।

नाना परिमल द्रव्य में अबीर गुलाल, अभ्रक, मेहदी चूर्ण, हल्दी चूर्ण इत्यादि को चढ़ाया जाता है। नानापरिमलद्रव्याणि- ओं अहिरिवभोगैः पर्य्येतिबाहुंज्यायाहेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा व्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा गुं सं परिपातु विश्वतः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

दिये जाने वाले नैवेद्य प्रसाद को देवता के सामने रखकर धूप एवं दीप घण्टी वादन पूर्वक देना चाहिये। नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूपदीपौ च देयौ- घण्टीवादनपूर्वकं धूपम्- ओं धूरसि धूर्व्व धूर्व्वन्तं धूर्वतं योऽस्मान्धूर्वतितं धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः। देवानामसि व्वन्हितम् गुं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमन्देव हूतमम्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।।

इसके बाद दीपक दिखाना चाहिये-

दीपम्-ओं अग्निर्ज्योति ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिर्ज्योतिः सूर्य्यः स्वाहा। अग्नि र्व्वर्च्चो ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्य्यो व्वर्च्चो ज्योति र्व्वर्च्चः स्वाहा। ज्योतिः सूर्य्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।। हस्तौ प्रक्षाल्य।

दीप दिखाकर हस्त प्रक्षालन करके नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। नैवेद्य चढ़ाकर ध्यान करके आचमनीय का जल पांच बार प्रदान किया जाता है।

नैवेद्यम् - ओं नाभ्याऽ आसीदन्तरिक्ष गुं शीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत। पद्भ्यां भूमिर्द्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँऽ अकल्पयन् ।। नैवेद्यं निवेदयामि।। नैवेद्यान्ते ध्यानम्।। ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि मुद्रां च प्रदर्श्य ओं प्राणाय स्वाहा।। ओं अपानाय स्वाहा।। ओं व्यानाय स्वाहा।। ओं उदानाय स्वाहा।। ओं समानाय स्वाहा।। आचमनीयं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं जलं समर्पयामि। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

चन्दन से करोद्वर्तन करने का नियम है।

करोद्वर्तनम्-ओं अ गुं शुनाते अ गुं शुः पृच्यतां परुषांपरुः। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽ अच्युतः।। चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके बाद फल प्रदान करते है। फल से मतलब सभी प्रकार के फलों से है। इसमें ऋतुफल एवं अखण्डऋतुफल दोनों आता है। अखण्ड ऋतुफल का मतलब सभी ऋतुओं में पाया जाने वाला फल है।

फलानि-ओं याः फलिनीर्य्याऽ अफलाऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः। बृहस्पति प्रसूतास्ता नो मुंचन्त्व गुं हसः।। इमानि फलानि नारिकेलंच समर्पयामि।।

इसके बाद ताम्बूल पत्र लवंग इलायची के साथ मुख सुगन्धी के लिये समर्पित करना चाहिये।

ताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकं च-ओं यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत। व्वसन्तो स्यासी दाज्यङ्ग्रीष्मऽ इध्मः शरद्धविः।। मुखवासार्थे पूंगीफलताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके अनन्तर पूजनीय द्रव्यों में कोई कमी रह गयी हो तो उस कमी को पूरा करने के लिये दक्षिणा चढ़ाने का विधान है।

ततो द्रव्यदक्षिणा-ओं हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽ आसीत्। सदाधार पृथिवीन्द्या मुतेमां कस्¬¬मै देवाय हविषा विधेम।। कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके बाद आरती करना चाहिये।

आरार्तिक्यम् - इद गुं हविः प्रजननम्मे ऽअस्तु दशव्वीर गुं सर्व्वगण गुं स्वस्तये । आत्मशनि प्प्रजाशनि पशुशनि लोकसन्न्यभयसनि। अग्निः प्रजाम्बहुलाम्मे करोत्वन्नं पयोरेतोऽ अस्मासु धत्त।। आ रात्रि पार्थिव गुं रजः पितुर प्रायिधामभिः। दिवः सदा गुं सि वृहती व्वितिष्ठस ऽआत्वेषं वर्त्तते तमः।। कर्पूरनीराजनं समर्पयामि।।

तदनन्तर हाथ में पुष्प लेकर पुष्पांजलि देना चाहिये-

मन्त्रपुष्पांजलिः- ¬ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्। तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्व्वे साध्याः सन्ति देवाः।। मन्त्रपुष्पांजलिं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

प्रदक्षिणा- ¬ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृका हस्ता निषंगिणः।। तेषा गुंसहस्र योजनेव धन्वानि तन्मसि।। प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

हस्ते जलमादाय अनया पूजया अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपाल देवता प्रीयन्तां न मम।।

इस प्रकार से आपने वैदिक मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंच लोकपालों के पूजन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ अधि देवता, प्रत्यधि देवता का पूजन पंच

लोकपालों सहित करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- पुरुष एवेद मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 2- पंचनद्यः मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 3- ओषधीः मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 4- अहिरिव भोगैः मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 5- धूरसि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- धूप, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 6-अग्निर्ज्योति मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- दीप, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 7- नाभ्या मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- नैवेद्य, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 8- यत् पुरुषेण मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- ताम्बूल।

प्रश्न 9- याः फलिनीर्या मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- फल, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 10- यज्ञेन मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पांजलि, घ- नाना परिमल द्रव्य।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण में अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों को वैदिक मन्त्रों से पूजन का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम अधि देवता,

प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का पूजन पौराणिक विधि से कैसे किया जाता है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

3.4.5 अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का पौराणिक विधि से पूजन-

अब आप अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का पौराणिक विधि से पूजन का विधान देखेगें।

आसनम्- पूजन में सर्वप्रथम आवान किया जाता है जो आप देख चुके है। आवाहन के अनन्तर आसन दिया जाता है। आसन हेतु हाथ में अक्षत लेकर दिये पौराणिक मन्त्र को पढ़ते है और अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के ऊपर अक्षत छोड़ते है।

ओं अनेकरत्नसंयुक्तं नानामणिगणान्वितम्। भावितं हेममयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि।।

पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयं जलम्- आसन के बाद पाद्य, अर्घ्य एवं आचमन का जल चढ़ाया जाता है। इसमें पाद्य अर्थात् पाद प्रक्षालनार्थ जल इस श्लोक को पढ़कर दें।

ओं गंगोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम्। पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं मे प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि।।

हस्त प्रक्षालनार्थ अर्घ्य का जल इस श्लोक से देना चाहिये-

ओं गंधपुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया। गृहाणार्घ्यं मया दत्तं प्रसन्नो वरदो भव।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः अर्घ्यार्थे जलं समर्पयामि।।

मुख प्रक्षालन हेतु आचमनीय का जल इस प्रकार देना चाहिये-

ओं कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम्। तोयमाचमनीयार्थं गृहाण वरदो भव।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि।।,

स्नान हेतु स्नानीय जल इस मन्त्र से देना चाहिये-

ओं मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम्। तदिदं कल्पितं देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः स्नानीयं जलं समर्पयामि।।

पुनः आचमन का जल इस प्रकार चढ़ाना चाहिये।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पुनराचमनीयानि समर्पयामि।।

अब दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर को एक में मिलाकर पंचामृत बनाया जाता है। इससे स्नान कराया जाता है। कहीं-कहीं पृथक्- पृथक् स्नान भी कराया जाता है। आचार्य याज्ञवल्क्य के अनुसार प्रत्येक स्नान में आचमनीय जल देना अति आवश्यक है

पंचामृतस्नानम्-

ओं पयो दधिघृतं चैव मधुशर्करयान्वितम्। पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पंचामृतस्नानं समर्पयामि आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

पंचामृत स्नान के बाद शुद्धोदक स्नान जल से कराया जाता है।

ततः शुद्धोदकस्नानम्-

शुद्धं यत्सलिलं दिव्यं गंगाजलसमं स्मृतम्। समर्पितं मया भक्त्या शुद्धस्नानाय गृह्यताम्। शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।। स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

स्नान के अनन्तर वस्त्र चढ़ाया जाता है। वस्त्र में पुरुष देवता के लिये पुरुध वस्त्र एवं स्त्री देवता के लिये स्त्री वस्त्र चढ़ाया जाता है। इसके अभाव में मांगलिक सूत्र ही चढ़ा दिया जाता है।

वस्त्रम्-

ॐ शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्। देहालंकरणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः वस्त्रं समर्पयामि वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

वस्त्र के अनन्तर आचमनीय जल चढ़ाकर यज्ञोपवीत चढ़ाया जाता है।

यज्ञोपवीतम्-

ओं नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्। उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उपवस्त्र का मतलब होता है उत्तरीय वस्त्र। उत्तरीय वस्त्र हेतु जो आवश्यक उपवस्त्र हो उसे चढ़ाना चाहिये या रक्षा सूत्र चढ़ाना चाहिये।

उपवस्त्रम्-

ओं उवपस्त्रं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने। भक्त्या समर्पितं देव प्रसीद परमेश्वर ।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः उपवस्त्रं समर्पयामि उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उवपस्त्र के अनन्तर चन्दन को गन्ध के रूप में चढ़ाते है। चन्दन के अभाव में रोली भी चढ़ा सकते है।

गन्धम्-

ओं श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाठ्यं सुमनोहरम्। विलेपनं सुररेष्ठ चन्दनं प्रतिग्रह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

गन्ध के बाद अक्षत चढ़ाने का विधान है।

अक्षतान्-

ओं अक्षताश्च सुरश्रेष्ठाः कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः। मया निवेदिता भक्त्या गृहाण सर्वदेवता।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।।

इसके बाद फूलों की गुथी हुयी माला चढ़ाने का विधान मिलता है।

पुष्पमालाम्-

ओं माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो। मयाहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पुष्पमालां समर्पयामि।।

दूर्वाङ्कुरान्-

ओं दूर्वांकुरान् सुहरितानमृतान् मंगलप्रदान्। आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण परमेश्वर।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि।।

सौभाग्य सिन्दूरम्-

ओ सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम्। शुभदं कामदं चैव सिन्दूरम् प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः सौभाग्यसिन्दूरं समर्पयामि।

नाना परिमल द्रव्य में अबीर गुलाल, अभ्रक, मेहदी चूर्ण, हल्दी चूर्ण इत्यादि को चढ़ाया जाता है।

नानापरिमलद्रव्याणि-

ओं अबीरं च गुलालं च हरिद्रादिसमन्वितम्। नाना परिमलं द्रव्यं गृहाण परमेश्वर।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

दिये जाने वाले नैवेद्य प्रसाद को देवता के सामने रखकर धूप एवं दीप घण्टी वादन पूर्वक देना चाहिये।

नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूपदीपौ च देयौ- घण्टीवादनपूर्वकं धूपम्-

ओं वनस्पति रसोद्भूतो गन्धाठयो गन्ध उत्तमः। आघ्रेयः सर्व देवानां धूपो अयं प्रतिगृह्यताम्।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।।

इसके बाद दीपक दिखाना चाहिये-

दीपम्-

ओं साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया। दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।। हस्तौ प्रक्षाल्य।

दीप दिखाकर हस्त प्रक्षालन करके नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। नैवेद्य चढ़ाकर ध्यान करके आचमनीय का जल पांच बार प्रदान किया जाता है।

नैवेद्यम् -

ओं शर्कराखण्डखाद्यादि दधिक्षीरघृतानि च। आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्।।

नैवेद्यं निवेदयामि।। नैवेद्यान्ते ध्यानम्।। ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि मुद्रां च प्रदशर्य

ओं प्राणाय स्वाहा।। ओं अपानाय स्वाहा।। ओं व्यानाय स्वाहा।। ओं उदानाय स्वाहा।। ओं समानाय स्वाहा।। आचमनीयं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं जलं समर्पयामि। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

चन्दन से करोद्वर्तन करने का नियम है।

करोद्वर्तनम्-

ओं चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम्। करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर।।

चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके बाद फल प्रदान करते है। फल से मतलब सभी प्रकार के फलों से है। इसमें ऋतुफल एवं अखण्डऋतुफल दोनों आता है। अखण्ड ऋतुफल का मतलब सभी ऋतुओं में पाया जाने वाला फल है।

फलानि-

ओं इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव। तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनिजन्मनि ।।

इमानि फलानि नारिकेलंच समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके बाद ताम्बूल पत्र लवंग इलायची के साथ मुख सुगन्धी के लिये समर्पित करना चाहिये।

ताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच-

ओं पूंगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्। एलादिचूर्ण संयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्।।

मुखवासार्थे पूंगीफलताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके अनन्तर पूजनीय द्रव्यों में कोई कमी रह गयी हो तो उस कमी को पूरा करने के लिये दक्षिणा चढ़ाने का विधान है।

ततो द्रव्यदक्षिणा-

ओं हिरण्यगर्भ गर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः। अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।। इसके बाद आरती करना चाहिये।

आरार्तिक्यम् -

कदली गर्भ सम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्। आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव।।

कर्पूरनीराजनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

तदनन्तर हाथ में पुष्प लेकर पुष्पांजलि देना चाहिये-

मन्त्रपुष्पांजलिः-

ॐ नाना सुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानिच। पुष्पांजलिर्मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

मन्त्रपुष्पांजलिं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

प्रदक्षिणा-

ॐ यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च। तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदेपदे। प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

हस्ते जलमादाय अनया पूजया अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपाल देवता प्रीयन्तां न मम।।

इस प्रकार से आपने पौराणिक मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंच लोकपालों के पूजन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ अधि देवता, प्रत्यधि देवता का पूजन पंच लोकपालों सहित करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु

विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- अनेक रत्न संयुक्तं मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 2- पयो दधि घृतं चैव मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 3- माल्यादीनि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 4- अबीरं च गुलालं च मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 5- वनस्पति रसो मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- धूप, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 6-साज्यं च मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- दीप, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 7- शर्कराखण्ड मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- नैवेद्य, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 8- पूंगीफल महद्दिव्यं मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- ताम्बूल।

प्रश्न 9- इदं फलं मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- फल, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 10- नाना सुगन्धि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पंाजलि, घ- नाना परिमल द्रव्य।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण में अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों को पौराणिक मन्त्रों से पूजन का ज्ञान प्राप्त किया। आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का पूजन नाम मन्त्र की विधि से कैसे किया जाता है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

3.4.6 अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का नाम मन्त्र की विधि से पूजन-

अब आप अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का नाम मन्त्र की विधि से पूजन का विधान देखेगें।

आसनम्- पूजन में सर्वप्रथम आवाहन किया जाता है जो आप देख चुके है। आवाहन के अनन्तर आसन दिया जाता है। आसन हेतु हाथ में अक्षत लेकर दिये नाम मन्त्र को पढ़ते है और अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के ऊपर अक्षत छोड़ते है।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि।।

पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयं जलम्- आसन के बाद पाद्य, अर्घ्य एवं आचमन का जल चढ़ाया जाता है। इसमें पाद्य अर्थात् पाद प्रक्षालनार्थ जल इस मन्त्र को पढ़कर दें।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि।।

हस्त प्रक्षालनार्थ अर्घ्य का जल इस श्लोक से देना चाहिये-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः अर्घ्यार्थे जलं समर्पयामि।।

मुख प्रक्षालन हेतु आचमनीय का जल इस प्रकार देना चाहिये-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि।।,

स्नान हेतु स्नानीय जल इस मन्त्र से देना चाहिये-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः स्नानीयं जलं समर्पयामि।।

पुनः आचमन का जल इस प्रकार चढ़ाना चाहिये।

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पुनराचमनीयानि समर्पयामि।।

अब दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर को एक में मिलाकर पंचामृत बनाया जाता है। इससे स्नान कराया जाता है। कहीं-कहीं पृथक्- पृथक् स्नान भी कराया जाता है। आचार्य याज्ञवल्क्य के अनुसार प्रत्येक स्नान में आचमनीय जल देना अति आवश्यक है ।

पंचामृतस्नानम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पंचामृतस्नानं समर्पयामि।। आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

पंचामृत स्नान के बाद शुद्धोदक स्नान जल से कराया जाता है।

ततः शुद्धोदकस्नानम्-

शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।। स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

स्नान के अनन्तर वस्त्र चढ़ाया जाता है। वस्त्र में पुरुष देवता के लिये पुरुष वस्त्र एवं स्त्री देवता के लिये स्त्री वस्त्र चढ़ाया जाता है। इसके अभाव में मांगलिक सूत्र ही चढ़ा दिया जाता है।

वस्त्रम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः वस्त्रं समर्पयामि वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

वस्त्र के अनन्तर आचमनीय जल चढ़ाकर यज्ञोपवीत चढ़ाया जाता है।

यज्ञोपवीतम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उपवस्त्र का मतलब होता है उत्तरीय वस्त्र। उत्तरीय वस्त्र हेतु जो आवश्यक उपवस्त्र हो उसे चढ़ाना चाहिये या रक्षा सूत्र चढ़ाना चाहिये।

उपवस्त्रम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः उपवस्त्रं समर्पयामि उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उवपस्त्र के अनन्तर चन्दन को गन्ध के रूप में चढ़ाते है। चन्दन के अभाव में रोली भी चढ़ा सकते है।

गन्धम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

गन्ध के बाद अक्षत चढ़ाने का विधान है।

अक्षतान्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।।

इसके बाद फूलों की गुथी हुयी माला चढ़ाने का विधान मिलता है।

पुष्पमालाम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः पुष्पमालां समर्पयामि।।

दूर्वाङ्कुरान्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि।।

सौभाग्य सिन्दूरम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः सौभाग्यसिन्दूरं समर्पयामि।

नाना परिमल द्रव्य में अबीर गुलाल, अभ्रक, मेहदी चूर्ण, हल्दी चूर्ण इत्यादि को चढ़ाया जाता है।

नानापरिमलद्रव्याणि-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

दिये जाने वाले नैवेद्य प्रसाद को देवता के सामने रखकर धूप एवं दीप घण्टी वादन पूर्वक देना चाहिये।

नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूपदीपौ च देयौ- घण्टीवादनपूर्वकं धूपम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।।

इसके बाद दीपक दिखाना चाहिये-

दीपम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।। हस्तौ प्रक्षाल्य।

दीप दिखाकर हस्त प्रक्षालन करके नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। नैवेद्य चढ़ाकर ध्यान करके आचमनीय का जल पांच बार प्रदान किया जाता है।

नैवेद्यम् -

नैवेद्यं निवेदयामि।। नैवेद्यान्ते ध्यानम्।। ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि मुद्रां च प्रदर्श्य

ओं प्राणाय स्वाहा।। ओं अपानाय स्वाहा।। ओं व्यानाय स्वाहा।। ओं उदानाय स्वाहा।। ओं समानाय स्वाहा।। आचमनीयं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं जलं समर्पयामि। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

चन्दन से करोद्वर्तन करने का नियम है।

करोद्वर्तनम्-

चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके बाद फल प्रदान करते है। फल से मतलब सभी प्रकार के फलों से है। इसमें ऋतुफल एवं अखण्डऋतुफल दोनों आता है। अखण्ड ऋतुफल का मतलब सभी ऋतुओं में पाया जाने वाला फल है।

फलानि-

इमानि फलानि नारिकेलंच समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके बाद ताम्बूल पत्र लवंग इलायची के साथ मुख सुगन्धी के लिये समर्पित करना चाहिये।

ताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच-

मुखवासार्थे पूंगीफलताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

इसके अनन्तर पूजनीय द्रव्यों में कोई कमी रह गयी हो तो उस कमी को पूरा करने के लिये दक्षिणा चढ़ाने का विधान है।

ततो द्रव्यदक्षिणा-

कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।। इसके बाद आरती करना चाहिये।

आरार्तिक्यम् -

कर्पूरनीराजनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

तदनन्तर हाथ में पुष्प लेकर पुष्पांजलि देना चाहिये-

मन्त्रपुष्पांजलिः-

मन्त्रपुष्पांजलिं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

प्रदक्षिणा-

प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः।।

हस्ते जलमादाय अनया पूजया अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपाल देवता प्रीयन्तां न मम।।

इस प्रकार से आपने नाम मन्त्रों से अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंच लोकपालों के पूजन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ अधि देवता, प्रत्यधि देवता का पूजन पंच लोकपालों सहित करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- आसनं समर्पयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 2- पंचामृतं समर्पयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 3- पुष्पमालां समर्पयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 4- नाना परिमलद्रव्याणि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 5- धूपं आघ्रापयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- धूप, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 6-दीपं दर्शयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- दीप, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 7- नैवेद्यं निवेदयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- नैवेद्य, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 8- ताम्बूल पत्राणि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- ताम्बूल।

प्रश्न 9- इमानि फलानि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- फल, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 10- मन्त्र पुष्पांजलि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पांजलि, घ- नाना परिमल द्रव्य।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालो का पूजन नाम मन्त्र की विधि से जाना । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होंगे। अब हम इसका सारांश वर्णित करने जा रहे है।

3.5 सारांश

इस ईकाई में आपने नवग्रह मण्डल पर अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के स्थापन का विधान जाना है। वस्तुतः किसी भी प्रकार की शान्ति के लिये या पौरोहित्यिक कर्मकाण्ड के लिये नवग्रह मण्डल का निर्माण करके नवग्रहों की स्थापना करके पूजन करते है। क्येंकि बिना स्थापना के वह ग्रह या देवता वहां आकर विराजमान नही होता जिसकी हम पूजा करना चाहते है। इसलिये स्थापन जानना आवश्यक है और पूजन भी जानना अति आवश्यक है।

इस ईकाई में यह बात स्पष्ट की गयी की प्रत्येक ग्रह के अधिदेवता होते हैं और प्रत्येक ग्रह के प्रत्यधि देवता भी होते हैं। अर्थात् नवग्रह यदि नव है तो उनके अधिदेवता भी नव तथा प्रत्यधि देवता

भी नव ही होगें। नवग्रहों की संख्या तथा उनके नामों का वर्णन करते हुये मत्स्य पुराण कहता है कि- सूर्यः सोमो महीपुत्रः सोमपुत्रो बृहस्पतिः। शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चेति ग्रहा नव।। अर्थात् सूर्य , चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु को नवग्रह कहा गया है। अब इन नवग्रहों के दाहिने अधिदेवता एवं बाम भाग में प्रत्यधि देवता रहते हैं। अब प्रश्न उठता है कि इनके क्या-क्या नाम है? इस सन्दर्भ में कहा गया है कि ईश्वरश्च उमा चैव स्कन्दो विष्णुस्तथैव च।ब्रह्मेन्द्रौयमकालाश्चचित्रगुप्ताधिदेवता।। यानी क्रमशः सूर्यादि नवग्रहों के दक्षिण में ईश्वर, उमा, स्कन्द, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, काल, चित्रगुप्त ये अधिदेवता है। इन्ही सूर्यादि ग्रहों के बाम भाग में क्रमशः देवता विराजमान रहते हें जिन्हे प्रत्यधि देवता के रूप में जाना जाता है। इनके नाम क्रमशः अग्निरापोधराविष्णुशक्रेन्द्रणिपितामहाः। पन्नगाकः क्रमाद्वामे ग्रह प्रत्यधि देवता।। अर्थात् अग्नि, आप, धरा, विष्णु , शक्र, इन्द्राणि, पितामह, पन्नग और ब्रह्मा क्रम से ग्रहों के वाम में प्रत्यधि देवता होते है। इसके अलावा नवग्रह मण्डल पर पंचलोकपाल होते है जिनके बारे में कहा गया है कि गणेशश्चाम्बिकावायुआकाशश्चाश्विनौ तथा। अर्थात् गणेश, अम्बिका, वायु, आकाश एवं अश्विनी कुमार ये पंच लोकपाल के रूप में जाने जाते है।

इन सभी ग्रहों और देवताओं के आवाहन को तीन प्रकारों में बांटा गया है। जिसे वैदिक मन्त्रों द्वारा आवाहन, पौराणिक मन्त्रों द्वारा आवाहन एवं नाम मन्त्रों द्वारा आवाहन के रूप में जाना जाता है। न केवल आवाहन स्थापन अपितु इनका पूजन भी तीन ही विधाओं में बांटा गया है जिन्हे वैदिक मन्त्रों द्वारा, पौराणिक मन्त्रों द्वारा एवं नाम मन्त्रों द्वारा बतलाया गया है। इसमें वैदिक मन्त्रों से यदि नही करना हो तो पौराणिक मन्त्रों करना चाहिये या इसी प्रकार पौराणिक मन्त्रों से या समयाभाव हो तो नाम मन्त्रों से नवग्रहों का स्थापन किया जाता है। आवाहन स्थापन के उपरान्त नवग्रहों का यथालब्धोपचार या षोडशोपचार से पूजन किया जाता है।

3.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

विश्वेश्वर- विश्व के ईश्वर, अप- जल, लोकेश- लोक के स्वामी, यज्ञेश्वर- यज्ञ के इश्वर, हेमाद्रि- हिमालय, शंकरप्रियाम्- शंकर की प्रिया, देवसेनाग्रगं- देवसेना के आगे चलने वाले। षण्मुख- छः मुख, कुत्तिका सूनु- कृत्तिका के पुत्र, जगन्नाथ- जगत् के स्वामी, चतुर्भुज- चार भुजाओं वाले, रमानाथ- रमा के पति, अम्बर- वस्त्र, पद्मसंस्थ- कमल पर स्थित, चतुर्मुख- चार मुख, वेदाधार- वेद का आधार, निरालम्ब- बिना सहारा के, देवराज- देवताओं के राजा, गजारूढ़- हाथी पर सवार, शतक्रतु- सौ यज्ञ करने वाला, वज्र हस्त- हाथ में वज्र, धर्म राज- धर्म के स्वामी, महावीर्य- महा बलवान, दिक्पति- दिशा के पति, अनाकार- बिना आकार के, कृताकृत- किया या न किया,

शुक्लवर्णा- सफेद वर्ण, विशालाक्षी- विशाल आंख वाली, सर्व शस्याश्रया- सभी प्रकार के अन्नों का आश्रय, गरुड़वाहन- गरुड़ का वाहन, कुण्डलधर- कुण्डल धारण करने वाले, सहस्राक्ष- सहस्रों आंखे, शचीपति- शची के पति इन्द्र, सुराधीश- देवताओं के अधिपति, प्रसन्न वदनाः- प्रसन्न मुख वाली, महाकाय- विशाल शरीर, गजवक्त्र- हाथी का मुख, सिद्धिदायक- सिद्धि देने वाले, विपिन- वन, सर्वग- सभी जगह जाने वाले।

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

3.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-ध, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-घ।

3.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-घ, 2-क, 3-ख, 4-ग, 5-घ, 6-ग, 7-क, 8-ख, 9- ग, 10-घ।

3.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ग, 2-क, 3-ख, 4-ग, 5-घ, 6-क, 7-क, 8-ग, 9-घ, 10-घ।

3.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ग, 2-क, 3-ख, 4-ग, 5-घ, 6-ख, 7-क, 8-ग, 9-घ, 10-घ ।

3.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-क, 3-ख, 4-ग, 5-घ, 6-ख, 7-क, 8-ग, 9-घ, 10-घ ।

3.4.4 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग ।

3.4.5 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग ।

3.4.6 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग ।

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-दान मयूख।

2-प्रतिष्ठा मयूख।

3-बृहद् ब्रह्म नित्य कर्म समुच्चय।

4- शान्ति- विधानम्।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-उत्सर्ग मयूख।

7- कर्मजव्याधिदैवी चिकित्सा।

8- फलदीपिका

9- अनुष्ठान प्रकाश।

10- सर्व देव प्रतिष्ठा प्रकाशः।

11- संस्कार-भास्करः । वीणा टीका सहिता।

12- मनोभिलषितव्रतानुवर्णनम्- भारतीय व्रत एवं अनुष्ठान।

13- संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

3.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- पूजन विधानम्।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।

3- भारतीय रत्न सिद्धान्त।

4- याज्ञवल्क्य स्मृतिः।

5- संस्कार- विधानम्।

3.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- अधिदेवताओ एवं प्रत्यधि देवताओं का परिचय दीजिये।

2- पंच लोकपालों का स्वरूप बतलाइये।

3- अधिदेवता स्थापन की वैदिक विधि बतलाइये।

4- प्रत्यधि देवता स्थापन की पौराणिक विधि वर्णित कीजिये।

5- पंचलोकपाल स्थापन की नाम मन्त्र की विधि का वर्णन कीजिये।

6- अधिदेवताओं का वैदिक मन्त्रों से पूजन सविधि लिखिये।

7- प्रत्यधि देवताओं का पौराणिक मन्त्रों से पूजन लिखिये।

8- पंचलोकपालों का पूजन नाम मन्त्रों से लिखिये।

9- गणेश लोकपाल के स्वरूप का वर्णन कीजिये।

10- वायु लोकपाल के स्वरूप का वर्णन कीजिये।

ईकाई – 4 वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का आवाहन एवं पूजन

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई में वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का आवाहन एवं पूजन संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व नवग्रह स्थापन सहित अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का आवाहन पूजन सहित अन्य शान्ति प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया है। कोई भी व्यक्ति यदि कोई शान्ति कराता है तो प्रायः शान्ति प्रविधियों में नवग्रहों का स्थापन एवं अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपाल का आवाहन पूजन करना पड़ता है। इसके अलावा नवग्रह मण्डल पर ही वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का आवाहन एवं पूजन भी करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का आवाहन एवं पूजन आप कैसे करेगें, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

प्रायः कर्मकाण्डीय प्रक्रियाओं में नवग्रहों का स्थापन किया जाता है। ग्रह स्थापन के नाम पर सामान्य लोगों में यही धारणा बनी रहती है कि नौ ग्रह है उनका नाम लिया जाता है। लेकिन जब आप नवग्रह मण्डल पर ग्रहों का स्थापन विधान देखेंगे तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि नवग्रहों के अलावा उनके अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों सहित वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का भी आवाहन स्थापन करना पड़ता है इनके अभाव में नवग्रह मण्डल के देवताओं का पूजन हो ही नही पाता क्योकि मण्डल पर तो कुल चौवालीश 44 देवता होते है। अभी हमने केवल नवग्रहों का तथा अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों का कहां -कहां स्थापन किया जाता है ? इसको जाना है। लेकिन अब वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का आवाहन स्थान कहां-कहां होता है? कैसे किया जाता है? पूजन की विधि क्या है इस पर विचार करेंगें। इस प्रकार इस ईकाई के अध्ययन से आपको संबंधित समस्त विषयों का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

इस इकाई के अध्ययन से आप नवग्रह मण्डल पर वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का आवाहन एवं पूजन करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे अंग सहित नवग्रहों के स्थापन का ज्ञान हो जायेगा जिसका प्रयोग आप संबंधित व्यक्ति के दोषों से निवारण में कर सकेगें जिससे वह अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित होते हुये लोकोपकारक हो सकेगा।

4.2 उद्देश्य-

इस ईकाई के अध्ययन से आप नवग्रह मण्डल पर नवग्रहों के स्थापन की आवश्यकता को समझ रहे होगें। अतः इसका उद्देश्य तो वृहद् है परन्तु संक्षिप्त में इस प्रकार आप जान सकते है।

- वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का आवाहन एवं पूजन से समस्त कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।
- वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का आवाहन एवं पूजन की शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
- इस कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।
- प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
- लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
- समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।
- संदर्भित शिक्षा के विविध तथ्यों को प्रकाश में लाना।

4.3 वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का परिचय

4.3.1 वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल का परिचय

यह सर्व विदित है कि जब भी हम कोई शान्ति करते हैं तो नवग्रह मण्डल का निर्माण कर नवग्रहों की स्थापना अवश्य करते हैं। न केवल शान्ति अपितु यज्ञों में भी नवग्रहों की स्थापना करनी पड़ती है। नवग्रहों की स्थापना के बिना हम किसी भी अनुष्ठानिक प्रक्रिया का सम्पादन नही कर सकते इसलिये नवग्रहों का ज्ञान अति आवश्यक है। ईशाने ग्रह वेदिका कहते हुये यह बतलाया गया है कि नवग्रह वेदी का निर्माण ईशान कोण में करके नवग्रहों की स्थापना करनी चाहिये। नवग्ररहों के रूप में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एव केतु होते है। इन नवों ग्रहों के दक्षिण अधि देवता एवं बाम भाग में प्रत्यधि देवता विराजित होते हैं।

नवग्रह मण्डल पर वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल की स्थापना की जाती है। इन दोनों देवताओं को नवग्रह मण्डल पर अंग देवता के रूप में जाना जाता है। वास्तोष्पति को वास्तु देवता भी कहा जाता है। निरुक्तकार महर्षि यास्क ने इसकी व्याख्या करते हुये कहा है कि वासतुर्वसतेर्निवास कर्मणः। अर्थात् जहां हम निवास करते हैं वहा वास्तु देवता का वास होता है। इसीलिये जब किसी नवीन ग्रह में प्रवेश करते हैं तो वहां वास्तु पूजन कराते है। जब हम किसी नवीन भवन के प्रारम्भ का उद्घाटन करते है तो वहां भी वास्तु पूजन कराने का विधान है। परन्तु इन स्थानों पर जो वास्तु शान्ति करायी जाती है वह नवग्रह के वास्तोष्पति से भिन्न होती है क्योकि वहां अलग से वास्तुमण्डल बनाकर

पूजन किया जाता है। यहां अर्थात् नवग्रह मण्डल पर एक स्थान पर वास्तोष्पति के रूप में अक्षत पुंज को रखा जाता है और उनकी पूजा की जाती है। वास्तु के आवाहन मन्त्र के रूप में वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशो अनमीवो भवा नः। यत्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शं न्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे। मन्त्र को जाना जाता है।

क्षेत्रपाल के परिचय में भी यह बतलाया गया है कि क्षेत्र के स्वामी को क्षेत्राधिपति कहते है। ये देवता समस्त क्षेत्रों से हमारी रक्षा करते है। क्षेत्रपाल के ध्यान का यह श्लोक अत्यन्त महत्वपूर्ण है जो इस प्रकार है-

नमो वै क्षेत्रपालस्त्वं भूतप्रेतगणैस्सह। पूजा बलिं गृहाणेम सौम्यो भवति सर्वदा।
पुत्रान्देहिधनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे। आयुरारोग्य मे देहि निर्विघ्नं कुरु सर्वदा।।

इसमें यह स्पष्ट रूप से बतलाया गया है कि भूत प्रेत गणों के साथ क्षेत्रपाल जी रहते है इसलिये उनको इन गणों के साथ नमस्कार है। मेरे द्वारा दी गयी पूजा एवं बलि को ग्रहण करें और हमारे प्रति सौम्य रहे। मुझे पुत्र, धन एवं सभी कामनाओं को दे और आयु एवं आरोग्य को प्रदान करे तथा हमारे सारे कार्य निर्विघ्न सम्पन्न करें। वैसे तो क्षेत्रपाल का पृथक् मण्डल बनाया जाता है तो एकोनपंचाशत् यानी उन्चास या एकपंचाशत् अर्थात् इक्यावन देवता होते है। परन्तु यहाँ एक ही स्थान पर अक्षत पुंज रखकर क्षेत्रपाल का आवाहन किया जाता है।

इस प्रकार से वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल देवता को नवग्रह मण्डल पर अंग देवता के रूप में स्वीकार किया गया है। पृथक् मण्डल बनाये जाने पर एवं पूजित होने पर भी इनका नवग्रह मण्डल पर पूजन किया ही जाता है।

इस प्रकार से आपने नाम वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल का परिचय जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल के परिचयात्मक ज्ञान को जान सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- वास्तोष्पति को नवग्रह मण्डल पर क्या माना जाता है?

क- प्रधान देवता, ख- अंग देवता, ग- अधि देवता, घ- प्रत्यधि देवता।

प्रश्न 2- क्षेत्रपाल को नवग्रह मण्डल पर क्या माना जाता है?

क- प्रधान देवता, ख- अंग देवता, ग- अधि देवता, घ- प्रत्यधि देवता।

प्रश्न 3- वास्तोष्पति को क्या कहा जाता है?

क- वास्तु देवता, ख- अंग देवता, ग- अधि देवता, घ- प्रत्यधि देवता।

प्रश्न 4- क्षेत्राधिपति को क्या कहा जाता है?

क- प्रधान देवता, ख- अंग देवता, ग- क्षेत्रपाल देवता, घ- प्रत्यधि देवता।

प्रश्न 5- वास्तोष्पते मन्त्र के देवता है?

क- प्रधान देवता, ख- अंग देवता, ग- अधि देवता, घ- वास्तोष्पति देवता।

प्रश्न 6- नमो वै क्षेत्रालस्त्वं के देवता है?

क- प्रधान देवता, ख- क्षेत्रपाल देवता, ग- अधि देवता, घ- प्रत्यधि देवता।

प्रश्न 7- भूत प्रेत गणों के साथ कौन रहता है?

क- क्षेत्रपाल देवता, ख- अंग देवता, ग- अधि देवता, घ- प्रत्यधि देवता।

प्रश्न 8- बलि के आकांक्षी देवता के रूप में किसे जाना जाता है?

क- प्रधान देवता, ख- अंग देवता, ग- क्षेत्रपाल देवता, घ- प्रत्यधि देवता।

प्रश्न 9- एकोनपंचाशत् का अर्थ कितना है?

क- 49, ख- 50, ग- 51, घ- 52।

प्रश्न 10- एकपंचाशत् का अर्थ कितना है?

क- 49, ख- 50, ग- 51, घ- 52।

इस प्रकार अपने इस प्रकरण में वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल का परिचय प्राप्त किया । अब हम दश दिग्पालों का परिचय अग्रिम प्रकरण में प्रदान करने जा रहें हैं जो इस प्रकार है-

4.3.2 दश दिक्पालों का परिचय-

इससे पूर्व में आपने वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल के विषय में परिचय प्राप्त किया। अब हम इस प्रकरण में दश दिक्पालों के विषय में ज्ञान प्राप्त करने जा रहे हैं। दश दिक्पाल को विच्छेदित करने पर तीन भागों में उसका विभाजन देखने को मिलता है जो दश, दिक् और पाल है। दश का अर्थ दश संख्या, दिक् का अर्थ दिशायें एवं पाल का अर्थ है पालने वाला अर्थात् दशों दिशाओं से हमारा

पालन करने वाला दश दिक्पाल कहलाता है। अब प्रश्न उठता है कि ये दशो दिशायें कौन है? क्योंकि चार दिशा पूर्व, पश्चिम, उत्तर एवं दक्षिण को तो हम जानते है। हम यह भी जानते है कि चार विदिशा यानी अग्नि कोण, नैर्ऋत्य कोण, वायव्य कोण एवं ईशान कोण है। लेकिन फिर कुल मिलाकर आठ ही हुआ। अभी दो और दिशायें बाकी हैं जिन्हे ऊपर और नीचे के रूप में जानते है। एक प्रश्न और यहां खड़ा होता है कि ऊपर और नीचे दो दिशायें हैं तो उनके स्वामिओं को नवग्रह मण्डल पर कैसे दिखाया जायेगा? इसका उत्तर देते हुये बतलाया गया है पूर्व एवं ईशान के बीच में आकाश का स्थान एवं नैर्ऋत्य पश्चिम के बीच में पाताल का स्थान नवग्रह मण्डल पर होता है । इस प्रकार उनके स्वामिओं को वहां दिखाया जा सकता है। अब क्रमशः दिशाओं के अधिपतियों का नाम इस प्रकार जाना जा सकता है।

इन्द्रोवह्निपितृपतिनैर्ऋतोवरुणोमरुत्। कुबेरईशोब्रह्मा च अनन्तो दश दिक्पतिः।।

इसको यदि और स्पष्ट किया जाय तो इस प्रकार कहा जा सकता है। पूर्व दिशा का स्वामी इन्द्र हैर्। अिगन कोण का स्वामी अग्नि है। दक्षिण दिशा का स्वामी यम है। नैर्ऋत्य कोण का स्वामी निर्ऋति है। पश्चिम दिशा का स्वामी वरुण है। वायव्य कोण का स्वामी वायु है। उत्तर दिशा का स्वामी कुबेर है। ईशान कोण का स्वामी ईशान है। पूर्व एवं ईशान के बीच का स्वामी ब्रह्मा है तथा पश्चिम एवं नैर्ऋत्य के बीच का स्वामी अनन्त है । अब हम इन दिग्पालों के स्वरूपों की चर्चा करेगें जिससे इनका परिचय और प्रगाढ़ हो जायेगा।

1- इन्द्र का स्वरूप-

चतुर्दन्तगजारूढ़ो वज्री कुलिशभृत्करः। शचीपति प्रकर्तव्यो नानाभरणभूषितः।।

इन्द्र के स्वरूप का वर्णन करते हुये कहा गया है कि चार दांतों वाले हाथियों पर इन्द्र विराजमान है। इन्द्र के हाथी का नाम ऐरावत है। वज्र एवं ठाल हाथों में लिये हुये हैं। शची के पति हैं तथा विभिन्न प्रकार के आभूषणों से विभूषित है।

2- **अग्नि का स्वरूप**- दूसरे दिक्पाल के रूप में अग्नि को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

पिंगलशमश्रुकेशाक्षः पीनांगोजवरो अरुण। छागस्थः साक्षसूत्रोग्निः सप्तार्चिः शक्तिधारकः।।

अर्थात् पिंगल वर्ण की मूछें, पिंगल वर्ण के केश एवं पिंगल वर्ण की आंखें है। अग्नि का अंग पीनांग

है, इनके अंगों से तीव्र तेज लाल स्वरूप में निकलता रहता है। छाग अग्नि देवता का वाहन हैं। अक्ष माला एवं सूत्र धारण किया हुआ है। सात जिह्वाओं वाला इनका मुख है और शक्ति को धारण करने वाले ये देवता है।

3- यम का स्वरूप- तीसरे दिक्पाल के रूप में यम को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

ईषन्नीलो यमः कार्यो दण्डहस्तो विजानता। रक्तदृक्पाशहस्तश्च महामहिषवाहनः।

अर्थात् थोड़ा नीला लिये हुये काला यम का स्वरूप है। इनको दण्ड हाथ में लिये हुये जाना जाता है। लाल-लाल इनकी आंखे है, हाथों में पाश लिये हुये हैं। इसी पाश से ये मनुष्यों को खीचकर लाते हैं। महा महिष के वाहन पर विराजते है।

4- निर्ऋति का स्वरूप- चौथे दिक्पाल के रूप में निर्ऋति को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

खड्गचर्मधरोबालो निर्ऋतिर्नरवाहनः। ऊर्ध्वकेशो विरूपाक्षः करालः कालिकाप्रियः।।

निर्ऋति के बारे में बतलाया गया कि तलवार और ठाल धारण किये हुये नर के वाहन पर सवार, सदा ऊर्ध्व केश रखने वाले विरूप अक्षों वाले किराल स्वरूप वाले कालिका के प्रिय निर्ऋति देवता है।

5- वरुण का स्वरूप- पांचवें दिक्पाल के रूप में वरुण को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

नागपाशधरो रक्तभूषणः पद्मिनीपतिः। वरुणो अंबुपतिः स्वर्णवर्णो मकरवाहनः।

अर्थात् नागों के पाश को धारण करने वाले, लाल आभूषण धारण करने वाले, पद्मिनी के पति वरुण देवता जल के स्वामी है और स्वर्ण वर्ण वाले है तथा मकर के वाहन पर विराजमान है।

6- वायु का स्वरूप- छठवें दिक्पाल के रूप में वायु को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

धावद्धरणिपृष्ठस्थो ध्वजधारी समीरणः। वरदानकरो धूम्रवर्णः कार्यो विजानता।।

अर्थात् धरणिपृष्ठ यानी भूमि के ऊपर वायु देवता दौड़ते रहते हैं। वायु देवता ध्वज धारण किये रहते हैं। वरदान करने वाले धूम्रवर्ण के रूप में इनको जाना जाता है।

7- कुबेर का स्वरूप- सातवें दिक्पाल के रूप में कुबेर को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

नरयुत पुष्पकविमानस्थं कुण्डलकेयूरहारविभूषितं वरदगदाधरदक्षिणवामहस्तं मुकुटिनं महोदरं स्थूलकायं ह्रस्व पिंगलनेत्रं पीतविग्रहं शिवसखं विमानस्थं कुबेरं ध्यायेत्॥

अर्थात् मनुष्य के स्वरूप वाले पुष्पक विमान पर स्थित, कुण्डल एवं केयूर हार से विभूषित, वरद मुद्रा एवं गदा धारण करने वाले, मुकुट पहने हुये, बड़े पेट वाले, स्थूल शरीर वाले, छोटे-छोटे पिंगल नेत्रों वाले, पीले विग्रह को धारण करने वाले शिव के सखा कुबेर का स्वरूप है।

8- ईशान का स्वरूप- आठवें दिक्पाल के रूप में ईशान को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

एह्येहि विश्वेश्वरनस्त्रिशूलकपालखड्वांगधरेणसार्द्धम्।

लोकेन यज्ञेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाणपूजां भगवन्नमस्ते।।

अर्थात् विश्वेश्वर के रूप में जाने जाने वाले, कपाल एवं खट्वांग धारण करने वाले, लोक के यज्ञ के सिद्धि के लिये पूजा ग्रहण करने वाले है। इनको नमस्कार है।

सर्वाधिपो महादेव ईशानो शुक्ल ईश्वरः। शूलपाणिर्विरूपाक्षः तस्मै नित्यं नमो नमः।।

इसे भी ईशान का स्वरूप बतलाया गया है।

9- ब्रह्मा का स्वरूप- नवें दिक्पाल के रूप में ब्रह्मा को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

पद्मासनस्थो जटिलो ब्रह्माकार्यश्चतुर्मुखः। अक्षमाला स्रुवं विभ्रत्पुस्तकं च कमण्डलुम्।।

अर्थात् ब्रहमा कमल के आसन पर विराजमान, जटा धारण किये हुये, चार मुखों वाले, रुद्राक्ष की माला धारण किये हुये, स्रुव , पुस्तक एवं कमण्डल धारण किये हुये है।

10- अनन्त का स्वरूप- दसवें दिक्पाल के रूप में अनन्त को जाना जाता है। इनके स्वरूप का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

अनन्तं शमनासीनं फणसप्तकमण्डितम्।।

योसावनन्तरूपेण ब्रह्माण्डं सचराचरं। पुष्पवद्धारयेनमूर्ध्नी तस्मै नित्यं नमो नमः।।

अनन्त सात फणों वाले है। पृथ्वी को इस प्रकार धारण किये रहते है जैसे कोई पुष्प धारण किया रहता है।

इस प्रकार से आपने नाम दश दिक्पतियों का परिचय जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ दिक्पतियों के परिचयात्मक ज्ञान को जान सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- पूर्व दिशा का दिक्पति कौन है?

क- इन्द, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 2- अग्नि कोण का दिक्पति कौन है?

क- इन्द, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 3- दक्षिण दिशा का दिक्पति कौन है?

क- इन्द, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 4- निर्ऋति विदिशा का दिक्पति कौन है?

क- इन्द, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 5- पश्चिम दिशा का दिक्पति कौन है?

क- वरुण, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 6- वायव्य विदिशा का दिक्पति कौन है?

क- इन्द, ख- वायु, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 7- उत्तर दिशा का दिक्पति कौन है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- कुबेर, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 8- ईशान विदिशा का दिक्पति कौन है?

क- इन्द, ख- अग्नि, ग- यम, घ- ईशान।

प्रश्न 9- पूर्व एवं ईशान दिशा के बीच का दिक्पति कौन है?

क- इन्द, ख- अग्नि, ग- ब्रह्मा, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 10- नैर्ऋत्य एवं पश्चिम के बीच की दिशा का दिक्पति कौन है?

क- इन्द, ख- अनन्त, ग- यम, घ- निर्ऋति।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण में वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का परिचय का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का आवाहन, स्थापन से कैसे किया जाता है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

4.4. वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का आवाहन-

अब आप वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों के आवाहन के बारे में जानेगें।इन सभी के आवाहन को कर्मकाण्ड में तीन भागों में बाटा गया है जिसे वैदिक मन्त्रों से आवाहन, पौराणिक मन्त्रों से आवाहन एवं नाम मन्त्रों से आवाहन के रूप में जाना जाता है। जो इस प्रकार है-

4.4.1 वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का वैदिक मन्त्रों से आवाहन -

नवग्रह मण्डल पर पंचलोकपालों के आवाहन के अनन्तर वास्तोष्पति का आवाहन किया जाता है। जिसका मन्त्र इस प्रकार है-

1- वास्तोष्पति के आवाहन का मन्त्र-

ओंवास्तोष्पतेप्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशो ऽअनमीवोभवानः। यत्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्वशन्नोभव द्विपदे शं चतुष्पदे ।। ॐ भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतये नमः वास्तोष्पतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

2- क्षेत्रपाल के आवाहन का मन्त्र- ॐ नहिस्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुर ऽ एतारमग्नेः।। एमेनमवृधन्नमृता ऽअमर्त्यवैश्वानरं क्षेत्रजित्यायदेवाः ।। ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्राधिपतये नमः ।। क्षेत्राधिपतिं आवाहयामि स्थापयामि।।

मण्डल से बाहर दश दिक्पालों का आवाहन करना चाहिये जो इस प्रकार है।

मण्डलाद्वाह्ये दशदिक्पिालानामावाहनम्

1- इन्द्र का आवाहन-

ओं त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र गुं हवे हवे सुहव गुं शूरमिन्द्रम्। ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्र गुं स्वस्तिनोमघवाधात्विन्द्रः।। ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि ।।

2- अग्नि का आवाहन-

ओं त्वं न्नो अग्ने तवदेवपायुभिर्मघोनोरक्षतन्वश्चवन्द्य। त्रातातोकस्य तनये गवामस्य निमेष गुं रक्षमाणस्तवव्रते ।। ॐ भूर्भुव: स्वः अग्नये नमः ।। अग्निं आवाहयामि स्थापयामि ।।

3- यम का आवाहन-

ॐ यमाय त्वां गिरस्वते पितृमते स्वाहा। स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्मः पित्रे। ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यमं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- निर्ऋति का आवाहन-

ॐ असुन्वन्त मयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य। अन्यमस्मदिच्छसात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ।। ॐ भूर्भवः स्वः निर्ऋृतये नमः निर्ऋृतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

5- वरुण का आवाहन-

ओं तत्वायामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्ब्भिः। अहडमानो वरुणेह बोध्युरुश गुं समान आयुः प्रमोषीः।। ॐ वरुणाय नमः वरुणं आवाहयामि स्थापयामि ।।

6- वायु का आवाहन-

ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वर गुं सहस्त्रिणी भिरुपयाहि यज्ञम्। व्वायो ऽ अस्मिन्सवने मादयस्वयूयम्पात स्वस्तिभिः सदा नः।। ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुं आवाहयामि स्थापयामि।।

7- कुबेर का आवाहन-

ॐ उपयामगृहीतो अस्यश्विभ्यां त्वा सरसवत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्ण। एष ते योनिस्तेजसे त्वा वीर्याय त्वा।। ¬ भूर्भुवः स्वः कुबेराय नमः कुबेरं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- ईशान का आवाहन-

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्प्पतिन्धियन्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषानो यथा व्वेद सामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।। ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानं आवाहयामि स्थापयामि।।

9- ब्रह्मा का आवाहन-

ओं अस्मै रुद्रा मेहना पर्व्वतासो वृत्रहत्यै भरहूतौ सजोषाः। यः श गुं सते स्तुवते धायि पज्ज्र ऽ इन्द्र ज्येष्ठा ऽ अस्माऽ 2 ऽ अवन्तु देवाः ।। ¬ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि।।

10- अनन्त का आवाहन-

ॐ स्योनापृथिवीनोभवानृक्षरानिवेशनी। यच्छाः नः शर्म्म सप्रथाः।। ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तं आवाहयामि स्थापयामि ।।

इस प्रकार आवाहन करके प्राण प्रतिष्ठा अधोलिखित मन्त्रों से करनी चाहिये-

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।। अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन।। ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञ गुं समिमन्दधातु ।। विश्वेदेवास ऽ इहमादयन्तामों 3 प्रतिष्ठ।। ॐ सूर्यादि अनन्तान्तदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु।।

इस प्रकार से वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का वैदिक मन्त्रों से आवाहन किया जाता है।

इस प्रकार से आपने वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पतियों का वैदिक मन्त्रों से आवाहन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पतियों का वैदिक मन्त्रों से आवाहन कर सकते हैं। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- त्रातारमिन्द्र मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 2- त्वन्नो अग्ने मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 3- यमाय मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 4- असुन्वन्त मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 5- तत्वायामि मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- वरुण, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 6- आनोनियुद्भिः मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- वायु, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 7- उपयाम मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- कुबेर, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 8- तमीशानं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- ईशान।

प्रश्न 9 -अस्मै रुद्रा मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- ब्रह्मा, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 10- स्योना पृथ्वी मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- अनन्त, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण में वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का वैदिक मन्त्रों से आवाहन विधान का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का आवाहन, स्थापन पौराणिक मन्त्रों से कैसे किया जाता है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

4.4.2 वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का पौराणिक मन्त्रों से आवाहन-

अब हम वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का पौराणिक मन्त्रों से आवाहन की विधि बताने जा रहे है। क्योकि वैदिक मन्त्र सर्वगम्य नही है। वैदिक मन्त्रों का उच्चारण वे ही कर सकते है जो इन मन्त्रों का गुरुमुखोच्चारण परम्परा से ज्ञान प्राप्त किये हो। वैदिक मन्त्र जटिल होता है मेरे कहने का अभिप्राय यह है। उच्चारण की अशुद्धि से बचने के लिये पौराणिक मन्त्रों का प्रयोग श्रेयष्कर माना गया है। अतः पौराणिक मन्त्रों से वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का आवाहन इस प्रकार है-

1- वास्तोष्पति के आवाहन का मन्त्र-

ओंवास्तोष्पतिं विदिक्कायं भुशय्याभिरतं प्रभुम्।
आवाहयाम्यहं देव सर्वकर्मफलप्रदम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतये नमः वास्तोष्पतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

2- क्षेत्रपाल के आवाहन का मन्त्र-

ॐ भूतप्रेतपिशाचाद्यैरावृतं शूलपाणिनम्।
आवाहये क्षेत्रपालं कर्मण्यस्मिन् सुखाय नः।।
ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्राधिपतये नमः ।। क्षेत्राधिपतिं आवाहयामि स्थापयामि।।

मण्डल से बाहर दश दिक्पालों का आवाहन करना चाहिये जो इस प्रकार है।

मण्डलाद्वाह्ये दशदिक्पालानामावाहनम्

1- इन्द्र का आवाहन-

ओं इन्द्रं सुरपतिं श्रेष्ठं वज्रहस्त महाबलम्।
आवाहये यज्ञसिद्ध्यै शतयज्ञाधिपं प्रभुम्।।
ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि ।।

2- अग्नि का आवाहन-

ओं त्रिपादं सप्तहस्तं च द्विमुर्द्धानं द्विनासिकम्।
षण्नेत्रं चतुः श्रोत्रमग्निमावाहयाम्यहम्।।
ॐ भूर्भुव: स्वः अग्नये नमः ।। अग्निं आवाहयामि स्थापयामि ।।

3- यम का आवाहन-

ॐ महामहिषमारूढ़ं दण्डहस्तं महाबलम्।
यज्ञसंरक्षणार्थाय यममावाहयाम्यहम्।।
ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यमं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- निर्ऋति का आवाहन-

ॐ सर्वप्रेताधिपं देवं निर्ऋतिं नीलविग्रहम्।

आवाहये यज्ञसिद्ध्यै नरारूढं वरप्रदम्।।

ॐ भूर्भवः स्वः निर्ऋतये नमः निर्ऋतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

5- वरुण का आवाहन-

ओं शुद्धस्फटिकसंकाशं जलेशं यादसां पतिम्।

आवाहये प्रतीचीशं वरुणं सर्वकामदम्।।

ॐ वरुणाय नमः वरुणं आवाहयामि स्थापयामि ।।

6- वायु का आवाहन-

ॐ मनोजवं महातेजं सर्वतश्चारिणं शुभम्।

यज्ञसंरक्षणार्थाय वायुमावाहयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुं आवाहयामि स्थापयामि।।

7- कुबेर का आवाहन-

ॐ आवाहयामि देवेशं धनदं यक्षपूजितम्।

महाबलं दिव्यदेहं नरयानगतिं विभुम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमाय नमः सोमं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- ईशान का आवाहन-

ॐ सर्वाधिपं महादेवं भूतानां पतिमव्ययम्।

आवाहये तमीशानं लोकानामभयप्रदम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानं आवाहयामि स्थापयामि।।

9- ब्रह्मा का आवाहन-

ओं पद्मयोनिं चतुर्मुर्तिं वेदगर्भं पितामहम्।

आवाहययामि ब्रह्माणं यज्ञसंसिद्धि हेतवे ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि।।

10- अनन्त का आवाहन-

ॐ अनन्तं सर्वनागानामधिपं विश्वरूपिणम्।

जगतां शान्तिकर्तारं मण्डले स्थापयाम्यहम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तं आवाहयामि स्थापयामि ।।

इस प्रकार आवाहन करके प्राण प्रतिष्ठा अधोलिखित मन्त्र से करनी चाहिये-

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन।।
ॐ सूर्यादि अनन्तान्तदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु।।

इस प्रकार से वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का पौराणिक मन्त्रों से आवाहन किया जाता है।

इस प्रकार से आपने वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पतियों का पौराणिक मन्त्रों से आवाहन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पतियों का पौराणिक मन्त्रों से आवाहन कर सकते हैं। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- इन्द्रं सुरपतिं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 2- त्रिपादं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 3- महामहिषमारूढ़ं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 4- सर्वप्रेताधिपं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 5- शुद्धस्फटिकसंकाशं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- वरुण, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 6- मनोजवः मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- वायु, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 7- आवाहयामि देवेश धनदं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- कुबेर, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 8- सर्वाधिपं महादेवं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- ईशान।

प्रश्न 9 -पद्मयोनिं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- ब्रह्मा, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 10- अनन्तं मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- अनन्त, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण में वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का पौराणिक मन्त्रों से आवाहन विधान का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का आवाहन, स्थापन नाम मन्त्रों से कैसे किया जाता है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

4.4.3 वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का नाम मन्त्रों से आवाहन-

अब हम वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का नाम मन्त्रों से आवाहन की विधि बताने जा रहे है। क्योकि वैदिक मन्त्र सर्वगम्य नही है। पौराणिक मन्त्र भी कम पढ़े लिखे लोगों के लिये कठिन है। तथा कभी-कभी कार्य की व्यस्तता होने से समयाभाव हो जात है। ऐसी स्थिति में प्रधान कार्य में व्यवधान न हो इसके लिये नाम मन्त्रों का सहारा लेना पड़ता है। जिससे समय की बचत हो जाती है और प्रयोग भी सविधि सम्पन्न हो जाता है।

अतः नाम मन्त्रों से आवाहन इस प्रकार है-

1- वास्तोष्पति के आवाहन का मन्त्र-

ॐ भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतये नमः वास्तोष्पतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

2- क्षेत्रपाल के आवाहन का मन्त्र-

ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्राधिपतये नमः ।। क्षेत्राधिपतिं आवाहयामि स्थापयामि।।

मण्डल से बाहर दश दिक्पालों का आवाहन करना चाहिये जो इस प्रकार है।

मण्डलाद्बाह्ये दशदिक्पालानामावाहनम्

1- इन्द्र का आवाहन-

ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि ।।

2- अग्नि का आवाहन-

ॐ भूर्भुव: स्वः अग्नये नमः ।। अग्निं आवाहयामि स्थापयामि ।।

3- यम का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यमं आवाहयामि स्थापयामि।।

4- निर्ऋति का आवाहन-

ॐ भूर्भवः स्वः निर्ऋृतये नमः निर्ऋृतिं आवाहयामि स्थापयामि ।।

5- वरुण का आवाहन-

ॐ वरुणाय नमः वरुणं आवाहयामि स्थापयामि ।।

6- वायु का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः वायुं आवाहयामि स्थापयामि।।

7- कुबेर का आवाहन-

ओं भूर्भुवः स्वः कुबेराय नमः कुबेरं आवाहयामि स्थापयामि।।

8- ईशान का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशानाय नमः ईशानं आवाहयामि स्थापयामि।।

9- ब्रह्मा का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि।।

10- अनन्त का आवाहन-

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्तं आवाहयामि स्थापयामि ।।

इस प्रकार आवाहन करके प्राण प्रतिष्ठा अधोलिखित मन्त्र से करनी चाहिये-

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन।।

ॐ सूर्यादि अनन्तान्तदेवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु।।

इस प्रकार से वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का नाम मन्त्रों से आवाहन किया जाता है।

इस प्रकार से आपने वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पतियों का नाम मन्त्रों से आवाहन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पतियों का नाम मन्त्रों से आवाहन कर सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- इन्द्राय मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 2- अग्नये मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 3- यमाय मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 4- निर्ऋतये मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 5- वरुणाय मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- वरुण, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 6- वायवे मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- वायु, ग- यम, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 7- धनदाय मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- कुबेर, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 8- ईशानाय मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- यम, घ- ईशान।

प्रश्न 9 -ब्रह्मणे मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- इन्द्र, ख- अग्नि, ग- ब्रह्मा, घ- निर्ऋति।

प्रश्न 10- अनन्ताय मन्त्र से किसका आवाहन कर सकते है?

क- अनन्त, ख- अग्नि, ग- यम, घ- निर्ऋति।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण में वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का नाम मन्त्रों से आवाहन विधान का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का पूजन कैसे किया जाता है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

4.4.4 वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का वैदिक मन्त्रों से पूजन -

अब हम वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों का वैदिक मन्त्रों से पूजन की विधि बताने जा रहे है। जो इस प्रकार है-

आसनम्- पूजन में सर्वप्रथम आवाहन किया जाता है जो आप देख चुके है। आवाहन के अनन्तर आसन दिया जाता है। आसन हेतु हाथ में अक्षत लेकर दिये वैदिक मन्त्र को पढ़ते है और वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दश दिक्पालों के ऊपर अक्षत छोड़ते है।

ओं पुरुषऽएवेद गुं सर्व्वं यदभूतं यच्च भाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्ने नातिरोहति।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि।।

पद्यं अर्घ्यं आचमनीयं जलम्- आसन के बाद पाद्य, अर्घ्य एवं आचमन का जल चढ़ाया जाता है। इसमें पाद्य अर्थात् पाद प्रक्षालनार्थ जल, हस्त प्रक्षालनार्थ अर्घ्य, मुख प्रक्षालन हेतु आचमनीय का जल, स्नान हेतु स्नानीय जल एवं पुनः आचमन का जल इस प्रकार चढ़ाना चाहिये।

ततः पादयोः पाद्यं हस्तयोरर्घ्यं आचमनीयं जलं -देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताभ्याम्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः एतानि पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानीय पुनराचमनीयानि समर्पयामि।।

अब दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर को एक में मिलाकर पंचामृत बनाया जाता है। इससे स्नान कराया जाता है। कहीं-कहीं पृथक्- पृथक् स्नान भी कराया जाता है। आचार्य याज्ञवल्क्य के अनुसार प्रत्येक स्नान में आचमनीय जल देना अति आवश्यक है

पंचामृतस्नानम्- ॐ पंचनद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः सरस्वती तु पंचधा सो देशेभवत्सरित्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पंचामृतस्नानं समर्पयामि आचमनीयं जलं समर्पयामि।।शुद्धोदक स्नान जल से कराया जाता है।

ततः शुद्धोदकस्नानम्- शुद्धवालः सर्व्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विनाः। श्येतः श्येताक्षोरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्ण्णायामाऽअवलिप्ता रौद्रानभो रूपाः पार्ज्जन्न्याः।। शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।। स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

स्नान के अनन्तर वस्त्र चढ़ाया जाता है। वस्त्र में पुरुष देवता के लिये पुरुष वस्त्र एवं स्त्री देवता के लिये स्त्री वस्त्र चढ़ाया जाता है। इसके अभाव में मांगलिक सूत्र ही चढ़ा दिया जाता है।

वस्त्रम्- ओ युवा सुवासाः परिवीतऽ आगात्सऽउश्रेयान्भवति जायमानः। तं धीरासः कवयऽ उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयंतः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः वस्त्रं समर्पयामि वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

वस्त्र के अनन्तर आचमनीय जल चढ़ाकर यज्ञोपवीत चढ़ाया जाता है।

यज्ञोपवीतम्- ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्। आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुंचशुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उपवस्त्र का मतलब होता है उत्तरीय वस्त्र। उत्तरीय वस्त्र हेतु जो आवश्यक उपवस्त्र हो उसे चढ़ाना चाहिये या रक्षा सूत्र चढ़ाना चाहिये।

उपवस्त्रम्- ओं सुजातो ज्योतिषा सह शर्म्म वरुथ मासदत्स्वः।। व्वासो ऽअग्ने विश्वरूप गुं संव्ययस्व व्विभावसो।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः उपवस्त्रं समर्पयामि उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उवपस्त्र के अनन्तर चन्दन को गन्ध के रूप में चढ़ाते है। चन्दन के अभाव में रोली भी चढ़ा सकते है।

गन्धम्- ओं त्वांगन्धर्वाऽ अँखनसूँत्वा मिन्द्रस्त्वाम्बृहस्पतिः।। त्वामोषधे सोमोराजा व्विद्वान्यक्ष्मादमुच्चत।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

गन्ध के बाद अक्षत चढ़ाने का विधान है।

अक्षतान्- ओं अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽ अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो व्विप्प्रा न विष्ठया मतीयोजान्विद्रतेहरी।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।।

इसके बाद फूलों की गुथी हुयी माला चढ़ाने का विधान मिलता है।

पुष्पमालाम्- ओं ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः अश्वा इव सजीत्वरीर्व्विरुधः पारयिष्ण्वः। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पुष्पमालां समर्पयामि।।

दूर्वाङ्कुरान्-ओं काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवानो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि।।

सौभाग्य सिन्दूरम्-ओ सिन्धोरिव प्प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमियः पतयन्तियह्वाः। घृतस्यधाराऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः सौभाग्यसिन्दूरं समर्पयामि।

नाना परिमल द्रव्य में अबीर गुलाल, अभ्रक, मेहदी चूर्ण, हल्दी चूर्ण इत्यादि को चढ़ाया जाता है।

नानापरिमलद्रव्याणि- ओं अहिरिवभोगैः पर्य्येतिबाहुंज्यायाहेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा व्वयुनानि विद्वान्पुमान्पुमा गुं सं परिपातु विश्वतः।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

दिये जाने वाले नैवेद्य प्रसाद को देवता के सामने रखकर धूप एवं दीप घण्टी वादन पूर्वक देना चाहिये।

नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूपदीपौ च देयौ- घण्टीवादनपूर्वकं धूपम्- ओं धूरसि धूर्व्व धूर्व्वन्तं धूर्वतं योऽ स्मान्धूर्वतितं धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः। देवानामसि व्वन्हतम् गुं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमन्देव हूतमम्।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।।

इसके बाद दीपक दिखाना चाहिये-

दीपम्- ॐ अग्निर्ज्योति ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिज्योर्ति: सूर्य्यः स्वाहा। अग्नि र्व्वर्च्चो ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्य्यो व्वर्च्चो ज्योति र्व्वर्च्चः स्वाहा। ज्योतिः सूर्य्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।। हस्तौ प्रक्षाल्य।

दीप दिखाकर हस्त प्रक्षालन करके नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। नैवेद्य चढ़ाकर ध्यान करके आचमनीय का जल पांच बार प्रदान किया जाता है।

नैवेद्यम् - ॐ नाभ्याऽ आसीदन्तरिक्ष गुं शीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत। पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँऽ अकल्पयन् ।। नैवेद्यं निवेदयामि।। नैवेद्यान्ते ध्यानम्।। ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि मुद्रां च प्रदर्श्य ओं प्राणाय स्वाहा।।ओं अपानाय स्वाहा।। ओं व्यानाय स्वाहा।। ओं उदानाय स्वाहा।। ओं समानाय स्वाहा।। आचमनीयं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं जलं समर्पयामि। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः नैवेद्यं निवेदयामि।।

चन्दन से करोद्वर्तन करने का नियम है।

करोद्वर्तनम्-ओं अ गुं शुनाते अ गुं शुः पृच्यतां परुषांपरुः। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽ अच्युतः।। चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

इसके बाद फल प्रदान करते है। फल से मतलब सभी प्रकार के फलों से है। इसमें ऋतुफल एवं अखण्डऋतुफल दोनों आता है। अखण्ड ऋतुफल का मतलब सभी ऋतुओं में पाया जाने वाला फल है।

फलानि-ओं याः फलिनीर्य्याऽ अफलाऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः। बृहस्पति प्रसूतास्ता नो मुंचन्त्व गुं हसः।। इमानि फलानि नारिकेलंच समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः

इसके बाद ताम्बूल पत्र लवंग इलायची के साथ मुख सुगन्धी के लिये समर्पित करना चाहिये।

ताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच-ओं यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत। व्वसन्तो स्यासी दाज्यङ्ग्रीष्मऽ इध्मः शरद्धविः।। मुखवासार्थे पूंगीफलताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

इसके अनन्तर पूजनीय द्रव्यों में कोई कमी रह गयी हो तो उस कमी को पूरा करने के लिये दक्षिणा चढ़ाने का विधान है।

ततो द्रव्यदक्षिणा-ओं हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽ आसीत्। सदाधार पृथिवीन्द्या मुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।। कृतायाः पूजायाः सादुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।। इसके बाद आरती करना चाहिये।

आरार्तिक्यम् - इद गुं हविः प्रजननम्मे ऽअस्तु दशव्वीर गुं सर्व्वगण गुं स्वस्तये । आत्मशनि प्प्रजाशनि पशुशनि लोकसन्न्यभयसनि। अग्निः प्रजाम्बहुलाम्मे करोत्वन्नं पयोरेतोऽ अस्मासु धत्त।। आ रात्रि पार्थिव गुं रजः पितुर प्रायिधामभिः। दिवः सदा गुं सि वृहती व्वितिष्ठस ऽआत्वेषं वर्त्तते तमः।। कर्पूरनीराजनं समर्पयामि।।

तदनन्तर हाथ में पुष्प लेकर पुष्पांजलि देना चाहिये-

मन्त्रपुष्पांजलि:- ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्न्। तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्व्वे साध्याः सन्ति देवाः।। मन्त्रपुष्पांजलिं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

प्रदक्षिणा- ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृका हस्ता निषंगिणः।। तेषा गुंसहस्र योजनेव धन्वानि तन्मसि।। प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

हस्ते जलमादाय अनया पूजया नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालदेवता प्रीयन्तां न मम।।

इस प्रकार से आपने वैदिक मन्त्रों से वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालों के पूजन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पाल देवता का पूजन करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- पुरुष एवेद मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 2- पंचनद्यः मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 3- ओषधीः मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 4- अहिरिव भोगैः मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 5- धूरसि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- धूप, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 6-अग्निर्ज्योति मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- दीप, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 7- नाभ्या मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- नैवेद्य, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 8- यत् पुरुषेण मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- ताम्बूल।

प्रश्न 9- याः फलिनीर्या मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- फल, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 10- यज्ञेन मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पांजलि, घ- नाना परिमल द्रव्य।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण में वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालें को वैदिक मन्त्रों से पूजन का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालों का पूजन पौराणिक विधि से कैसे किया जाता है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

4.4.5 वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालों का पौराणिक विधि से पूजन-

अब आप वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालों का पौराणिक विधि से पूजन का विधान देखेगें।

आसनम्- पूजन में सर्वप्रथम आवान किया जाता है जो आप देख चुके है। आवाहन के अनन्तर आसन दिया जाता है। आसन हेतु हाथ में अक्षत लेकर दिये पौराणिक मन्त्र को पढ़ते है और अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के ऊपर अक्षत छोड़ते हैं।

ओं अनेकरत्नसंयुक्तं नानामणिगणान्वितम्। भावितं हेममयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि।।

पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयं जलम्- आसन के बाद पाद्य, अर्घ्य एवं आचमन का जल चढ़ाया जाता है। इसमें पाद्य अर्थात् पाद प्रक्षालनार्थ जल इस श्लोक को पढ़कर दें।

ओं गंगोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम्। पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं मे प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि।।

हस्त प्रक्षालनार्थ अर्घ्य का जल इस श्लोक से देना चाहिये-

ॐ गंधपुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया। गृहाणार्घ्यं मया दत्तं प्रसन्नो वरदो भव।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः अर्घ्यार्थे जलं समर्पयामि।।

मुख प्रक्षालन हेतु आचमनीय का जल इस प्रकार देना चाहिये-

ॐ कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम्। तोयमाचमनीयार्थं गृहाण वरदो भव।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

स्नान हेतु स्नानीय जल इस मन्त्र से देना चाहिये-

ॐ मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम्। तदिदं कल्पितं देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः स्नानीयं जलं समर्पयामि।।

पुनः आचमन का जल इस प्रकार चढ़ाना चाहिये।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पुनराचमनीयानि समर्पयामि।।

अब दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर को एक में मिलाकर पंचामृत बनाया जाता है। इससे स्नान कराया जाता है। कहीं-कहीं पृथक्- पृथक् स्नान भी कराया जाता है। आचार्य याज्ञवल्क्य के अनुसार प्रत्येक स्नान में आचमनीय जल देना अति आवश्यक है

पंचामृतस्नानम्-

ओं पयो दधिघृतं चैव मधुशर्करयान्वितम्। पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पंचामृतस्नानं समर्पयामि आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

पंचामृत स्नान के बाद शुद्धोदक स्नान जल से कराया जाता है।

ततः शुद्धोदकस्नानम्-

शुद्धं यत्सलिलं दिव्यं गंगाजलसमं स्मृतम्। समर्पितं मया भक्त्या शुद्धस्नानाय गृह्यताम्। शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।। स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

स्नान के अनन्तर वस्त्र चढ़ाया जाता है। वस्त्र में पुरुष देवता के लिये पुरुष वस्त्र एवं स्त्री देवता के लिये स्त्री वस्त्र चढ़ाया जाता है। इसके अभाव में मांगलिक सूत्र ही चढ़ा दिया जाता है।

वस्त्रम्-

ॐ शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्। देहालंकरणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः वस्त्रं समर्पयामि वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

वस्त्र के अनन्तर आचमनीय जल चढ़ाकर यज्ञोपवीत चढ़ाया जाता है।

यज्ञोपवीतम्-

ओं नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्। उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उपवस्त्र का मतलब होता है उत्तरीय वस्त्र। उत्तरीय वस्त्र हेतु जो आवश्यक उपवस्त्र हो उसे चढ़ाना चाहिये या रक्षा सूत्र चढ़ाना चाहिये।

उपवस्त्रम्-

ओं उवपस्त्रं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने। भक्त्या समर्पितं देव प्रसीद परमेश्वर ।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः उपवस्त्रं समर्पयामि उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उपवस्त्र के अनन्तर चन्दन को गन्ध के रूप में चढ़ाते है। चन्दन के अभाव में रोली भी चढ़ा सकते है।

गन्धम्-

ओं श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाठ्यं सुमनोहरम्। विलेपनं सुररेष्ठ चन्दनं प्रतिग्रह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

गन्ध के बाद अक्षत चढ़ाने का विधान है।

अक्षतान्-

ओं अक्षताश्च सुरश्रेष्ठाः कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः। मया निवेदिता भक्त्या गृहाण सर्वदेवता।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।।

इसके बाद फूलों की गुथी हुयी माला चढ़ाने का विधान मिलता है।

पुष्पमालाम्-

ओं माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो। मयाहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पुष्पमालां समर्पयामि।।

दूर्वाङ्कुरान्-

ओं दूर्वांकुरान् सुहरितानमृतान् मंगलप्रदान्। आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण परमेश्वर।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि।।

सौभाग्य सिन्दूरम्-

ओ सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम्। शुभदं कामदं चैव सिन्दूरम् प्रतिगृह्यताम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः सौभाग्यसिन्दूरं समर्पयामि।

नाना परिमल द्रव्य में अबीर गुलाल, अभ्रक, मेहदी चूर्ण, हल्दी चूर्ण इत्यादि को चढ़ाया जाता है।

नानापरिमलद्रव्याणि-

ओं अबीरं च गुलालं च हरिद्रादिसमन्वितम्। नाना परिमलं द्रव्यं गृहाण परमेश्वर।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

दिये जाने वाले नैवेद्य प्रसाद को देवता के सामने रखकर धूप एवं दीप घण्टी वादन पूर्वक देना चाहिये।

नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूपदीपौ च देयौ- घण्टीवादनपूर्वकं धूपम्-

ओं वनस्पति रसोद्भूतो गन्धाठयो गन्ध उत्तमः। आघ्रेयः सर्व देवानां धूपो अयं प्रतिगृह्यताम्।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।।

इसके बाद दीपक दिखाना चाहिये-

दीपम्-

ओं साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया। दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम्।।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।। हस्तौ प्रक्षाल्य।

दीप दिखाकर हस्त प्रक्षालन करके नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। नैवेद्य चढ़ाकर ध्यान करके आचमनीय का जल पांच बार प्रदान किया जाता है।

नैवेद्यम् -

ओं शर्कराखण्डखाद्यादि दधिक्षीरघृतानि च। आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्।।

नैवेद्यं निवेदयामि।। नैवेद्यान्ते ध्यानम्।। ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि मुद्रां च प्रदर्श्य

ओं प्राणाय स्वाहा।। ओं अपानाय स्वाहा।। ओं व्यानाय स्वाहा।। ओं उदानाय स्वाहा।। ओं समानाय स्वाहा।। आचमनीयं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं जलं समर्पयामि। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

चन्दन से करोद्वर्तन करने का नियम है।

करोद्वर्तनम्-

ओं चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम्। करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर।।

चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

इसके बाद फल प्रदान करते है। फल से मतलब सभी प्रकार के फलों से है। इसमें ऋतुफल एवं

अखण्डऋतुफल दोनों आता है। अखण्ड ऋतुफल का मतलब सभी ऋतुओं में पाया जाने वाला फल है।

फलानि-

ओं इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव। तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनिजन्मनि ।।

इमानि फलानि नारिकेलंच समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

इसके बाद ताम्बूल पत्र लवंग इलायची के साथ मुख सुगन्धी के लिये समर्पित करना चाहिये।

ताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकं च-

ओं पूंगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्। एलादिचूर्ण संयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्।।

मुखवासार्थे पूंगीफलताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

इसके अनन्तर पूजनीय द्रव्यों में कोई कमी रह गयी हो तो उस कमी को पूरा करने के लिये दक्षिणा चढ़ाने का विधान है।

ततो द्रव्यदक्षिणा-

ओं हिरण्यगर्भ गर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः। अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

कृतायाः पूजायाः सादुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।। इसके बाद आरती करना चाहिये।

आरार्तिक्यम् -

कदली गर्भ सम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्। आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव।।

कर्पूरनीराजनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

तदनन्तर हाथ में पुष्प लेकर पुष्पांजलि देना चाहिये-

मन्त्रपुष्पांजलिः-

ॐ नाना सुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानिच। पुष्पांजलिर्मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

मन्त्रपुष्पांजलिं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

प्रदक्षिणा-

ॐ यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च। तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदेपदे। प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः।।

हस्ते जलमादाय अनया पूजया वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पाल देवता प्रीयन्तां न मम।।

इस प्रकार से आपने पौराणिक मन्त्रों से वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालदेवता के पूजन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ वास्तोष्पति क्षेत्रपाल देवता का पूजन दशदिक्पालों सहित करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- अनेक रत्न संयुक्तं मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 2- पयो दधि घृतं चैव मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 3- माल्यादीनि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 4- अबीरं च गुलालं च मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 5- वनस्पति रसो मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- धूप, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 6-साज्यं च मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- दीप, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 7- शर्कराखण्ड मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- नैवेद्य, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 8- पूंगीफल महद्दिव्यं मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- ताम्बूल।

प्रश्न 9- इदं फलं मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- फल, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 10- नाना सुगन्धि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पांजलि, घ- नाना परिमल द्रव्य।

इस प्रकार आपने इस प्रकरण में वास्तोष्पति क्षेत्रपाल देवता एवं दशदिक्पालों को पौराणिक मन्त्रों से पूजन का ज्ञान प्राप्त किया । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होगें। अब हम वास्तोष्पति क्षेत्रपाल देवता एवं दशदिक्पालों का पूजन नाम मन्त्र की विधि से कैसे किया जाता है इसकी चर्चा अग्रिम प्रकरण में करने जा रहे है।

4.4.6 वास्तोष्पति क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का नाम मन्त्र की विधि से पूजन-

अब आप वास्तोष्पति क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का नाम मन्त्र की विधि से पूजन का विधान देखेगें।

आसनम्- पूजन में सर्वप्रथम आवाहन किया जाता है जो आप देख चुके है। आवाहन के अनन्तर आसन दिया जाता है। आसन हेतु हाथ में अक्षत लेकर दिये नाम मन्त्र को पढ़ते हैं और अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों के ऊपर अक्षत छोड़ते है।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि।।

पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयं जलम्- आसन के बाद पाद्य, अर्घ्य एवं आचमन का जल चढ़ाया जाता है। इसमें पाद्य अर्थात् पाद प्रक्षालनार्थ जल इस मन्त्र को पढ़कर दें।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि।।

हस्त प्रक्षालनार्थ अर्घ्य का जल इस श्लोक से देना चाहिये-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः अर्घ्यार्थे जलं समर्पयामि।।

मुख प्रक्षालन हेतु आचमनीय का जल इस प्रकार देना चाहिये-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

स्नान हेतु स्नानीय जल इस मन्त्र से देना चाहिये-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः स्नानीयं जलं समर्पयामि।।

पुनः आचमन का जल इस प्रकार चढ़ाना चाहिये।

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पुनराचमनीयानि समर्पयामि।।

अब दूध, दही, घी, शहद एवं शक्कर को एक में मिलाकर पंचामृत बनाया जाता है। इससे स्नान कराया जाता है। कहीं-कहीं पृथक्- पृथक् स्नान भी कराया जाता है। आचार्य याज्ञवल्क्य के अनुसार प्रत्येक स्नान में आचमनीय जल देना अति आवश्यक है

पंचामृतस्नानम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पंचामृतस्नानं समर्पयामि।। आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

पंचामृत स्नान के बाद शुद्धोदक स्नान जल से कराया जाता है।

ततः शुद्धोदकस्नानम्-

शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ।। स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

स्नान के अनन्तर वस्त्र चढ़ाया जाता है। वस्त्र में पुरुष देवता के लिये पुरुष वस्त्र एवं स्त्री देवता के लिये स्त्री वस्त्र चढ़ाया जाता है। इसके अभाव में मांगलिक सूत्र ही चढ़ा दिया जाता है।

वस्त्रम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः वस्त्रं समर्पयामि वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

वस्त्र के अनन्तर आचमनीय जल चढ़ाकर यज्ञोपवीत चढ़ाया जाता है।

यज्ञोपवीतम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि तदन्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उपवस्त्र का मतलब होता है उत्तरीय वस्त्र। उत्तरीय वस्त्र हेतु जो आवश्यक उपवस्त्र हो उसे चढ़ाना चाहिये या रक्षा सूत्र चढ़ाना चाहिये।

उपवस्त्रम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः उपवस्त्रं समर्पयामि उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।।

उवपस्त्र के अनन्तर चन्दन को गन्ध के रूप में चढ़ते है। चन्दन के अभाव में रोली भी चढ़ा सकते है।

गन्धम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

गन्ध के बाद अक्षत चढ़ाने का विधान है।

अक्षतान्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।।

इसके बाद फूलों की गुथी हुयी माला चढ़ाने का विधान मिलता है।

पुष्पमालाम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः पुष्पमालां समर्पयामि।।

दूर्वाङ्कुरान्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य अधिदेवता प्रत्यधि देवता पंचलोकपालेभ्यो नमः दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि।।

सौभाग्य सिन्दूरम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः सौभाग्यसिन्दूरं समर्पयामि।

नाना परिमल द्रव्य में अबीर गुलाल, अभ्रक, मेहदी चूर्ण, हल्दी चूर्ण इत्यादि को चढ़ाया जाता है।

नानापरिमलद्रव्याणि-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

दिये जाने वाले नैवेद्य प्रसाद को देवता के सामने रखकर धूप एवं दीप घण्टी वादन पूर्वक देना चाहिये।

नैवेद्यं पुरतः संस्थाप्य धूपदीपौ च देयौ- घण्टीवादनपूर्वकं धूपम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।।

इसके बाद दीपक दिखाना चाहिये-

दीपम्-

श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।। हस्तौ प्रक्षाल्य।

दीप दिखाकर हस्त प्रक्षालन करके नैवेद्य चढ़ाना चाहिये। नैवेद्य चढ़ाकर ध्यान करके आचमनीय का जल पांच बार प्रदान किया जाता है।

नैवेद्यम् -

नैवेद्यं निवेदयामि।। नैवेद्यान्ते ध्यानम्।। ध्यानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि मुद्रां च प्रदर्श्य

ओं प्राणाय स्वाहा।। ओं अपानाय स्वाहा।। ओं व्यानाय स्वाहा।। ओं उदानाय स्वाहा।। ओं समानाय स्वाहा।। आचमनीयं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं जलं समर्पयामि। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ।।

चन्दन से करोद्वर्तन करने का नियम है।

करोद्वर्तनम्-

चन्दनेन करोद्वर्तनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ।।

इसके बाद फल प्रदान करते है। फल से मतलब सभी प्रकार के फलों से है। इसमें ऋतुफल एवं अखण्ड ऋतुफल दोनों आता है। अखण्ड ऋतुफल का मतलब सभी ऋतुओं में पाया जाने वाला फल है।

फलानि-

इमानि फलानि नारिकेलंच समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ।।

इसके बाद ताम्बूल पत्र लवंग इलायची के साथ मुख सुगन्धी के लिये समर्पित करना चाहिये।

ताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच-

मुखवासार्थे पूंगीफलताम्बूलपत्रं लवंग एलादिकंच समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ।।

इसके अनन्तर पूजनीय द्रव्यों में कोई कमी रह गयी हो तो उस कमी को पूरा करने के लिये दक्षिणा चढ़ाने का विधान है।

ततो द्रव्यदक्षिणा-

कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ।। इसके बाद आरती करना चाहिये।

आरार्तिक्यम् -

कर्पूरनीराजनं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ।।

तदनन्तर हाथ में पुष्प लेकर पुष्पांजलि देना चाहिये-

मन्त्रपुष्पांजलिः-

मन्त्रपुष्पांजलिं समर्पयामि।। श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ।।

प्रदक्षिणा-

प्रदक्षिणापूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि श्री नवग्रह मण्डलस्य वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालेभ्यो नमः ।।

हस्ते जलमादाय अनया पूजया वास्तोष्पति क्षेत्रपाल दशदिक्पालाः प्रीयन्तां न मम।।

इस प्रकार से आपने नाम मन्त्रों से वास्तोष्पति क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों के पूजन का विधान जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ वास्तोष्पति क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का पूजन करा सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- आसनं समर्पयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 2- पंचामृतं समर्पयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 3- पुष्पमालां समर्पयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 4- नाना परिमलद्रव्याणि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 5- धूपं आघ्रापयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- धूप, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 6-दीपं दर्शयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- दीप, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 7- नैवेद्यं निवेदयामि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- नैवेद्य, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 8- ताम्बूल पत्राणि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पमाला, घ- ताम्बूल।

प्रश्न 9- इमानि फलानि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- फल, ग- पुष्पमाला, घ- नाना परिमल द्रव्य।

प्रश्न 10- मन्त्र पुष्पांजलि मन्त्र से क्या समर्पित करते है?

क- आसन, ख- पंचामृत, ग- पुष्पांजलि, घ- नाना परिमल द्रव्य।

इस प्रकार आपनें इस प्रकरण में वास्तोष्पति क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का पूजन नाम मन्त्र की विधि से जाना । आशा है आप इसे अच्छी तरह समझ गये होंगे। अब हम इसका सारांश वर्णित करने जा रहे है।

4.5 सारांश

इस ईकाई में आपने नवग्रह मण्डल पर वास्तोष्पति क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों के स्थापन का विधान जाना है। वस्तुतः किसी भी प्रकार की शान्ति के लिये या कर्मकाण्ड के लिये नवग्रह मण्डल का निर्माण करके नवग्रहों की स्थापना करके पूजन करते हैं। क्येंकि बिना स्थापना के वह ग्रह या

देवता वहां आकर विराजमान नही होता जिसकी हम पूजा करना चाहते है। इसलिये स्थापन जानना आवश्यक है और पूजन भी जानना अति आवश्यक है।

इस ईकाई में यह बात स्पष्ट की गयी की प्रत्येक ग्रहमण्डल पर वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पालों का आवाहन किया जाता है तथा उनका पूजन किया जाता है। वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल को अंग देवता के रूप में नवग्रह मण्डल पर स्थान दिया जाता है। इसके अनन्तर नवग्रह मण्डल पर दश दिक्पालों को स्थापित किया जाता है। इसको समझने के लिये दश दिक्पाल को विच्छेदित करने पर तीन भागों में उसका विभाजन देखने को मिलता है जो दश, दिक् और पाल है। दश का अर्थ दश संख्या, दिक् का अर्थ दिशायें एवं पाल का अर्थ है पालने वाला अर्थात् दशों दिशाओं से हमारा पालन करने वाला दश दिक्पाल कहलाता है। अब प्रश्न उठता है कि ये दशा दिशायें कौन है? क्योंकि चार दिशा पूर्व, पश्चिम, उत्तर एवं दक्षिण को तो हम जानते है। हम यह भी जानते है कि चार विदिशा यानी अग्नि कोण, नैर्ऋत्य कोण, वायव्य कोण एवं ईशान कोण है। लेकिन फिर कुल मिलाकर आठ ही हुआ। अभी दो और दिशायें बाकी हैं जिन्हे ऊपर और नीचे के रूप में जानते हैं। एक प्रश्न और यहां खड़ा होता है कि ऊपर और नीचे दो दिशायें हैं तो उनके स्वामिओं को नवग्रह मण्डल पर कैसे दिखाया जायेगा। इसका उत्तर देते हुये बतलाया गया है पूर्व एवं ईशान के बीच में आकाश का स्थान एवं नैर्ऋत्य पश्चिम के बीच में पाताल का स्थान नवग्रह मण्डल पर होता है । इस प्रकार उनके स्वामिओं को वहां दिखाया जा सकता है। अब क्रंमशः दिशाओं के अधिपतियों का नाम इस प्रकार जाना जा सकता है।

इन्द्रोवह्निपितृपतिनैर्ऋतोवरुणोमरुत्। कुबेरईशोब्रह्मा च अनन्तो दश दिक्पतिः।।

इसको यदि और सपष्ट किया जाय तो इस प्रकार कहा जा सकता है। पूर्व दिशा का स्वामी इन्द्र है। अग्नि कोण का स्वामी अग्नि है। दक्षिण दिशा का स्वामी यम है। नैर्ऋत्य कोण का स्वामी निर्ऋति है। पश्चिम दिशा का स्वामी वरुण है। वायव्य कोण का स्वामी वायु है। उत्तर दिशा का स्वामी कुबेर है। ईशान कोण का स्वामी ईशान है। पूर्व एवं ईशान के बीच का स्वामी ब्रह्मा है तथा पश्चिम एवं नैर्ऋत्य के बीच का स्वामी अनन्त है । इस प्रकार इनका आवाहन किया जाता है। जिसे वैदिक मन्त्रों द्वारा आवाहन, पौराणिक मन्त्रों द्वारा आवाहन एवं नाम मन्त्रों द्वारा आवाहन के रूप में जाना जाता है। न केवल आवाहन स्थापन अपितु इनका पूजन भी तीन ही विधाओं में बांटा गया है जिन्हे वैदिक मन्त्रों द्वारा, पौराणिक मन्त्रों द्वारा एवं नाम मन्त्रों द्वारा बतलाया गया है।

4.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

भू शैया- भूमि की शैया, शूलपाणिन- हाथ मे त्रिशूल वाला, सुरपति- देवताओं के स्वामी, शतयज्ञाधिप- सौ यज्ञों के स्वामी, त्रिपाद- तीन पैरों वाला, सप्तहस्त- सात हाथों वाला, द्विमूर्धा- दो शिर, द्विनासिका- दो नाक, षण्नेत्र- छः आखें, चतुः श्रोत्र- चार कान, महिष-भैस, दण्डहस्त- हाथ में दण्ड, सर्वप्रेताधिप- सभी प्रेतों के स्वामी, नीलविग्रह- नीला शरीर, नरारूढ़- मनुष्य पर सवार, वरप्रद- वर देने वाला, जलेश- जल का स्वामी, प्रतीचीशं- पश्चिम दिशा का स्वामी, मनोजव- मन के समान गति करने वाला, महातेज- अत्यन्त तेज से समन्वित, धनद- धन देने वाला, यक्षपूजित- यक्षों से पूजित, दिव्यदेह- दिव्य शरीर, नरयान- मनुष्य का यान, सर्वाधिप- सभी का राजा, अव्यय- जो व्यय न हो, अभयप्रद- अभय देने वाले, पद्मयोनि- कमल से उत्पन्न, चतुर्मुर्ति- चार मुख, सर्वनागानामधिप- सभी नागों के स्वामी, दिक्- दिशायें, पाल- रक्षक, वरेण्य- श्रेष्ठ, विश्वजित- विश्व को जीतने वाला, अर्चक- अर्चा करने वाला, समर्पयामि- समर्पित करता हूं, दर्शयामि- दिखाता हूं, निवेदयामि- निवेदन करता हूं, आघ्रापयामि- सुघाता हूं, पाद्य- पैर प्रक्षालित करने हेतु जल, आराम- बागीचा, मुद्रा- जो प्रसन्न कर दे, द्रवित कर दे, पितृपति- पितरों के स्वामी, मरुत्- वायु, , सर्षप- सरसों, दिवाकर- सूर्य, गजेन्द्र- हाथियों का स्वामी, लम्बोदर- लम्बा उदर, जम्बू- जामुन, चारु- सुन्दर, भव- होवो, पराभव- हार, विभव- धन-सम्पदा।

4.7अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

4.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-ख, 2-ख, 3-क, 4-ग, 5-घ, 6-ख, 7-क, 8-ग, 9-क, 10-ग।

4.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9- ग, 10-ख।

4.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-ध, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ग, 10-क।

4.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ग, 10-क ।

4.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ग, 10-क।

4.4.4 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

4.4.5 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

4.4.6 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-दान मयूख।

2-प्रतिष्ठा मयूख।

3-बृहद् ब्रह्म नित्य कर्म समुच्चय।

4- शान्ति- विधानम्।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-उत्सर्ग मयूख।

7- कर्मजव्याधिदैवी चिकित्सा।

8- फलदीपिका

9- अनुष्ठान प्रकाश।

10- सर्व देव प्रतिष्ठा प्रकाशः।

11- संस्कार-भास्करः । वीणा टीका सहिता।

12- मनोभिलषितव्रतानुवर्णनम्- भारतीय व्रत एवं अनुष्ठान।

13- संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

4.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- पूजन विधानम्।

2- श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।

3- भारतीय रत्न सिद्धान्त।

4- याज्ञवल्क्य स्मृतिः।

5- संस्कार- विधानम्।

4.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- क्षेत्रपाल एवं वास्तोष्पति देवताओं का परिचय दीजिये।

2- इन्द्र दिक्पाल का स्वरूप बतलाइये।

3- वास्तोष्पतिदेवता स्थापन की वैदिक विधि बतलाइये।

4- क्षेत्रपाल देवता स्थापन की पौराणिक विधि वर्णित कीजिये।

5- दशदिक्कपाल स्थापन की नाम मन्त्र की विधि का वर्णन कीजिये।

6- क्षेत्रपाल का वैदिक मन्त्रों से पूजन सविधि लिखिये।

7- प्रत्यधि देवताओं का पौराणिक मन्त्रों से पूजन लिखिये।

8- दश दिक्पालों का पूजन नाम मन्त्रों से लिखिये।

9- यम दिक्पाल के स्वरूप का वर्णन कीजिये।

10- वरुण दिक्पाल के स्वरूप का वर्णन कीजिये।

ईकाई – 5 असंख्यातरुद्र स्थापन, पूजन एवं नवग्रह स्तोत्र पाठ

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

इस इकाई में असंख्यात रुद्र स्थापन पूजन एवं नवग्रह स्तोत्र पाठ संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे है । इससे पूर्व नवग्रह स्थापन सहित अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपाल, वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल, दश दिक्पाल आदि के आवाहन पूजन सहित अन्य शान्ति प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया है। कोई भी व्यक्ति यदि कोई शान्ति कराता है तो प्रायः शान्ति प्रविधियों में नवग्रहों का स्थापन एवं अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपाल, वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल, दश दिक्पालों का आवाहन पूजन करना पड़ता है। लेकिन इसके अलावा नवग्रह मण्डल के नजदीक ही असंख्यात रुद्र का स्थापन भी करना ही पड़ता है। ऐसी स्थिति में असंख्यात रुद्र का स्थापन , आवाहन एवं पूजन आप कैसे करेगें, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

प्रायः कर्मकाण्डीय प्रक्रियाओं में नवग्रहों का स्थापन किया जाता है। ग्रह स्थापन के नाम पर सामान्य लोगों में यही धारणा बनी रहती है कि नौ ग्रह है उनका नाम लिया जाता है। लेकिन जब आप नवग्रह मण्डल पर ग्रहों का स्थापन विधान देखेंगे तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि नवग्रहों के अलावा उनके अधि देवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपालों सहित वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल एवं दशदिक्पाल का भी आवाहन स्थापन करना पड़ता है इनके अभाव में नवग्रह मण्डल के देवताओं का पूजन हो ही नही पाता क्योकि मण्डल पर तो कुल चौवालीश 44 देवता होते है। अभी हम केवल नवग्रहों का तथा अधिदेवता, प्रत्यधि देवता एवं पंचलोकपाल, वास्तोष्पति, दिक्पाल का कहां -कहा स्थापन किया जाता है ? इसको हमने जाना है। लेकिन अब असंख्यात रुद्र का आवाहन, स्थापन कहां-कहां होता है? कैसे किया जाता है? पूजन की विधि क्या है इस पर विचार करेंगें। इस प्रकार इस ईकाई के अध्ययन से आपको संबंधित समस्त विषयों का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

इस इकाई के अध्ययन से आप नवग्रह मण्डल पर पूजन सहित असंख्यात रुद्र का आवाहन एवं पूजन करने की विधि का एवं नवग्रह स्तोत्र पाठ का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे अंग सहित नवग्रहों के स्थापन का ज्ञान हो जायेगा जिसका प्रयोग आप संबंधित व्यक्ति के दोषों से निवारण में कर सकेगें जिससे वह अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित होते हुये लोकोपकारक हो सकेगा।

5.2 उद्देश्य-

इस ईकाई के प्रस्तावना में बताये विषयों का अध्ययन करने के बाद आपको यह पूर्णतया बोध हो गया होगा कि नवग्रहों के साथ-साथ असंख्यात रुद्र के स्थापन पूजन संबंधी ज्ञान की परम आवश्यकता है जो आपको इस ईकाई के अध्ययन से प्राप्त हो सकेगी। अतः इसका उद्देश्य तो वृहद् है परन्तु संक्षिप्त में इस प्रकार आप जान सकते है।

- असंख्यात रुद्र के आवाहन एवं पूजन से समस्त कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

- असंख्यत रुद्र के आवाहन एवं पूजन की शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।

- इस कर्मकाण्ड में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

- प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

- लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

- समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

- संदर्भित शिक्षा के विविध तथ्यों को प्रकाश में लाना।

5.3 असंख्यात रुद्र का परिचय एवं नवग्रह स्तोत्र पाठ विधि का महत्त्व

5.3.1 असंख्यात रुद्र का परिचय

रुतं हरति पापात् न्यवारयति स रुद्रः के अनुसार रोगों का जो हरण करे और पापों का जो निवारण करता है उसे रुद्र कहते है। रुद्र को भगवान शंकर के रूप में जाना जाता है। कल्याण करने वाले को शिव कहते है। श्रीरामचरितमानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास जी तो मानस में लिखते हैं **भाभिहि मेटि सकहि त्रिपुरारी** । अर्थात् दुर्भाग्य को मिटाने में यदि कोई समर्थ है तो वह केवल भगवान शंकर है। शंकर में शं शब्द का अर्थ लोगों ने शान्ति या शुभ बतलाया है। जो शान्ति करे या जो शुभ करे उसे शंकर कहते है। उन्ही का एक स्वरूप है जिन्हे असंख्यात रुद्र के रूप में जाना जाता है। बिना असंख्यात रुद्र की पूजा के कोई भी यज्ञ पूर्ण नही होता है इसलिये समस्त याज्ञिक प्रविधियों

में असंख्यात रुद्र की स्थापना एवं पूजा करनी पड़ती है। इसके पीछे एक घटना है जिसका वर्णन करना मैं यहां उचित समझता हूं।

एक बार दक्ष जी को राजा घोषित किया गया। राजा घोषित होने के बाद दक्ष को राज मद हो गया। अब उन्होने कहा कि सबसे बड़ा मै हूं । मुझसे बड़े केवल ब्रह्मा जी है और विष्णु जी है। शंकर जी तो अपने दामाद है इसलिये वो तो हमारे आशीर्वाद के पात्र है। एक बार प्रजापतियों एवं देवताओं का सम्मेलन हुआ। उसमें समस्त देवता गण पधारे। सबसे अन्त में दक्ष प्रजापति उस सभा में आये। उस सभा में सभी देवताओं ने दक्ष प्रजापति का खड़ा होकर के स्वागत किया लेकिन भगवान भोलेनाथ न ही खड़े होकर उनका स्वागत किया न ही उनको प्रणाम किया। क्योकि वे तो देवों में देव महादेव जो ठहरे। भगवान शंकर अपने ध्यान में लीन थे लेकिन दक्ष ने सोचा कि इस शंकर ने खडा़ न होकर हमारा अपमान किया है। सभा समाप्त हुई। सभी अपने-अपने स्थान को चले गये। कुछ दिनों के पश्चात् प्रजापति दक्ष ने एक बहुत बड़ा यज्ञ करने का निर्णय किया। लेकिन उस यज्ञ में भगवान शंकर को निमंत्रित न करने की प्रतिज्ञा किया। यज्ञ प्रारम्भ हुआ। सभी देवगण सपत्नीक आकाश मार्ग से उस यज्ञ में भाग लेने हेतु जाने लगे। भगवती सती ने पूछा कि आज क्या बात है भगवन् आकाश मार्ग से बहुत विमान जा रहे है। भगवान शिन ने कहा कि तुम्हारे पिता दक्ष जी यज्ञ कर रहें हैं। उस यज्ञ में भाग लेने के लिये ये सभी देवगण जा रहे है। उन्होने कहा, अरे हमारे पिता यज्ञ कर रहे हैं। और हमें उन्होने निमंत्रण तक भी नही भेजा है। शंकर जी ने कहा कि एक बार उनकी सभा मे मैं उठकर खड़ा नही हुआ जिसके कारण वे हमसे नाराज हो गये और उसी कारण तुमसे भी नाराज होकर के निमंत्रण नही दिया होगा। सती ने कहा यदि ऐसी बात है तो आप मुझे आज्ञा दीजिये मैं अपने पिता के यज्ञ में जाऊंगी। भगवान शिव ने कहा कि बिना निमंत्रण के देवि उस यज्ञ में जाना ठीक नही है इसलिये तुम उस यज्ञ में मत जाओ। सती ने कहा कि पिता के घर में बिना आमंत्रण के भी जाने में कोई दोष नही है। भगवान शिव ने कहा-

तदपि विरोध मान जह कोई। तहां गये कल्यान न होई ।

जहां जाने पर विरोध माना जाय वहां जाने से कल्याण नही होता है। इसलिये तुम्हारे पिता का वह घर अवश्य है लेकिन विरोध माने जाने के कारण वहां नही जाना चाहिये। सती ने भगवान शिव की बात नही माना और वह उस यज्ञ में चली गयी। भगवान शिव ने उनके साथ अपने गणों भूत, प्रेत गणों को रक्षार्थ लगा दिया। उस यज्ञ में भगवान शिव का स्थान न देखकर सती अत्यन्त क्रोधित हो गयी और उस यज्ञ में योग बल से अपने शरीर का अन्त कर लिया। फलतः वह यज्ञ विध्वंस हो गया। तबसे ब्रह्मा जी ने घोषणा किया कि बिना भगवान शिव की स्थापना के कोई भी यज्ञ पूर्ण नही हो

सकेगा। इसीलिये सभी यज्ञों में जहॉं नवग्रह वेदी की स्थापना की जाती है उसके उत्तर में असंख्यात रुद्र की स्थापना होती ही है चाहे वह यज्ञ कोई भी हो। असंख्यात रुद्र की स्थापना हेतु अधोलिखित मन्त्र वेद से लिया जाता है।

असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूम्याम्। तेषा गुं सहस्र योजनेव धन्वानि तन्मसि।।

असंख्यात रुद्र में रुद्र के असंख्य स्वरूपों का अर्चन एवं वंदन किया जाता है। वैसे रुद्र से ग्यारह संख्या को समझा जाता है।

इस प्रकार से आपने असंख्यात रुद्र का परिचय जाना। इसकी जानकारी से आप नवग्रहों के साथ असंख्यात रुद्र के ज्ञान को जान सकते है। अब हम संबंधित विषय को आधार बनाकर कुछ अभ्यास प्रश्न बनायेगें जिसका उत्तर आपको देना होगा। अभ्यास प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- रोगों का जो हरण करे वह क्या है?

क- रुद्र, ख- शिव , ग- शंकर, घ- महादेव ।

प्रश्न 2- कल्याण करने वाले को क्या कहते है?

क- रुद्र, ख- शिव , ग- शंकर, घ- महादेव।

प्रश्न 3- शुभ करने वाले को क्या कहा जाता है?

क- रुद्र, ख- शिव , ग- शंकर, घ- महादेव।

प्रश्न 4- देवों में देव को क्या कहा जाता है?

क- रुद्र, ख- शिव , ग- शंकर, घ- महादेव।

प्रश्न 5- असंख्याता मन्त्र के देवता है?

क- रुद्र, ख- अंग देवता, ग- अधि देवता, घ- वास्तोष्पति देवता।

प्रश्न 6- एक बार प्रजापतियों में राजा कौन बना?

क- रुद्र, ख- दक्ष , ग- अधि देवता, घ- प्रत्यधि देवता।

प्रश्न 7- भूत प्रेत गणों के साथ कौन रहता है?

क- रुद्र, ख- ब्रह्मा, ग- विष्णु, घ- इन्द्र।

प्रश्न 8- शिव के मना करने पर भी पिता के यज्ञ में कौन गयीं?

क- सती, ख- सावित्री, ग- सीता, घ- राधा।

प्रश्न 9- ग्रहों के उत्तर में कौन रहता है?

क- रुद्र, ख- ब्रह्मा , ग- विष्णु, घ- इन्द्र।

प्रश्न 10- रुद्र का अर्थ कितना है?

क- 11, ख-12, ग-13, घ-14।

5.3.2 नवग्रह स्तोत्र का महत्त्व -

ग्रहाधीना नरेन्द्राणामुच्छ्रायाः पतनानि च।
भावाभावौ च जगतस्तस्मात्पूज्यतमा ग्रहाः।।
ग्रहाणामादित्यमातिथ्यं कुर्यात्संवत्सरादपि।
आरोग्यबलसंपन्नो जीवेत्स शरदः शतम्।।

उपरोक्त श्लोक याज्ञवल्क्य स्मृति के आचारध्याय के ग्रह शान्ति प्रकरण से लिया गया है। इस श्लोक में कहा गया है कि राजाओं का उत्थान एवं पतन ग्रहों के आधीन होता है। जगत् का भाव या अभाव यानी संसार का अस्तित्व एवं विनाश ग्रहों के आधीन होता है। इसलिये ये ग्रह पूज्यतम है। अर्थात् ग्रहों का पूजन अवश्य करना चाहिये। कहा गया है कि संवत्सर यानी वर्ष में एक बार भी ग्रहों का अर्चन किया जाय तो व्यक्ति आरोग्य एवं बल से संपन्न हो जाता है और सौ शरद ऋतु तक जीता है। अब प्रश्न उठता है कि क्या पूजा किये जाने पर ये ग्रह मान जाते है? या स्तोत्र पाठ करने पर क्या ये ग्रह मान जाते है? इस सन्दर्भ में याज्ञवल्क्य स्मृति के आचारध्याय का 307 वां श्लोक देना उचित समझता हूं जो इस प्रकार है-

यश्च यस्य यदा दुःस्थ स तं यत्नेन पूजयेत्। ब्रह्मणैषां वरो दत्तः पूजिताः पूजयिष्यथ।।

अर्थात् ब्रह्मा जी ने वर दिया है कि जिस व्यक्ति के लिये जो प्रतिकूल हो उस उस ग्रह की विधिपूर्वक पूजा करें। और पूजित सभी ग्रहों का दायित्व है कि पूजक को सुखी एवं प्रसन्न रखे। वैसे ग्रहों की आराधना किसी भी प्रकार की इच्छा रखने वाले को करनी चाहिये। चाहे वह श्री यानी लक्ष्मी का कामना हो, चाहे शान्ति की कामना हो, चाहे वृष्टि, आयु एवं पुष्टि की कामना हो तथा अभिचार संबंधी कामना भी क्यों न हो सभी के लिये ग्रहों की अर्चना करनी चाहिये। ग्रहों के रूप में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु को माना गया है। इनकी संख्या नव होने के कारण इन्हें नवग्रह के रूप में स्वीकार किया जाता है।

5.4 नवग्रहों का मानव जीवन से सम्बन्ध

मानव जीवन का ऐसा कोई क्रिया कलाप नही होगा जिसका संबंध नवग्रहों से नही होगा। अर्थात् समस्त क्रिया कलापों से ग्रहों का संबंध है। इसको जान लेने से मानव जीवन का ग्रहों से संबंध ज्ञात हो जायेगा। मानव जीवन के सम्पूर्ण क्रिया कलापों को बारह भावों में बाटा गया है। जिन्हे प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि भावों के रूप में जाना जाता है। प्रत्येक भाव में स्थित अंक उसके अधिपति ग्रह के बारे में बताता है जिसका प्रयोग फलादेश में किया जाता है। फलदीपिका नामक ग्रन्थ के दूसरे अध्याय में बताया गया है कि तांबा, सोना, पिता, शुभ फल, धैर्य, शौर्य, युद्ध में विजय, आत्मा, सुख, प्रताप, राजसेवा, शक्ति, प्रकाश, भगवान शिव संबंधी कार्य, वन या पहाड़ में यात्रा, होम कार्य में प्रवृत्ति, देवस्थान, तीक्ष्णता, उत्साह आदि का विचार सूर्य से करना चाहिये। माता का कुशल, चित्त की प्रसन्नता, समुद्र सनन, सफेद चवर, छत्र, सुन्दर पंखे, फल, पुष्प, मुलायम वस्तु, खेती, अन्न, कीर्ति, मोती, चांदी, कांसा, दूध, मधुर पदार्थ, वस्त्र, जल, गाय, स्त्री प्राप्ति, सुखपूर्वक भोजन, सुन्दरता का विचार चन्द्रमा से किया जाता है। सत्व, पृथ्वी से उत्पन्न होने वाले पदार्थ, भाई बहनों के गुण, क्रूरता, रण, साहस, विद्वेष, रसोंई की अग्नि, सोना, ज्ञाति यानी दायाद, अस्त्र, चोर, उत्साह, दूसरे पुरुष की स्त्री में रति, मिथ्या भाषण, वीर्य, चित्त की समुन्नति, कालुष्य, व्रण, चोट, सेनाधिपत्य आदि का विचार मंगल से करना चाहिये। पाण्डित्य, अच्छी वाक् शक्ति, कला, निपुणता, विद्वानों द्वारा स्तुति, मामा, वाक् चातुर्य, उपासना आदि में पटुता, विद्या में बुद्धि का योग, यज्ञ, भगवान, विष्णु संबंधी धार्मिक कार्य, सत्य वचन, सीप, विहार स्थल, शिल्प, बन्धु, युवराज, मित्र, भानजा, भानजी आदि का विचार बुध से किया जाता है। ज्ञान, अच्छे गुण, पुत्र, मंत्री, अच्छा आचार या अपना आचरण, आचार्यत्व, माहात्म्य, श्रुति, शास्त्र स्मृति का ज्ञान, सबकी उन्नति, सद्गति,

देवताओं और ब्राह्मणों की भक्ति, यज्ञ, तपस्या, श्रद्धा, खजाना , विद्वत्ता, जितेन्द्रियता, सम्मान, दया आदि का विचार बृहस्पति से करना चाहिये। स्त्री के लिये पति का विचार भी बृहस्पति से किया जाना चाहिये। सम्पत्ति, सवारी, वस्त्र, निधि यानी जमीन के अन्दर गड़ा हुआ या संग्रह किया हुआ द्रव्य, नाचाने, गाने एवं बाद्य बजाने का योग,सुगंधित पुष्प, रति, शैया और उससे संबंधित व्यापार, मकान, धनिक होना, वैभव, कविता का सुख, विलास, मंत्रित्व, सरस उक्ति, विवाह या अन्य शुभ कर्म, उत्सव आदि का विचार शुक्र से करना चाहिये। पुरुष के लिये स्त्री सुख का विचार शुक्र से किया जा सकता है। यह कहा जा सकता है कि पति का विचार बृहस्पति से तथा स्त्री का विचार शुक्र से करना चाहिये। आयु, मरण, भय, पतन, अपमान, विमारी, दुख, दरिद्रता, बदनामी, पाप, मजदूरी, अपवित्रता, निन्दा, आपत्ति, कलुषता, मरने का सूतक, स्थिरता, नीच व्यक्तियों का आश्रय, भैंस, तन्द्रा, कर्जा, लोहे की वस्तु, नौकरी, दासता, जेल जाना, गिरफ्तार होना, खेती के साधन आदि का विचार शनि से करना चाहिये।

5.5 सारांशः

इस इकाई में असंख्यात रूद्र एवं नवग्रह स्तोत्र पाठ का विवेचन किया गया है । कर्मकाण्ड की पद्धति में इन दोनों विषयों का विशेष महत्व है । अत: पाठक गण इन विषयों का अध्ययन इस इकाई में करेंगे और आशा है कि आपलोग इन विषयों का ज्ञान प्राप्त कर लाभान्वित होंगे ।

5.6 पारिभाषिक शब्दावली

असंख्यात रूद्र

नवग्रह

नवग्रह स्तोत्र

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1-दान मयूख।

2-प्रतिष्ठा मयूख।

3-बृहद् ब्रह्म नित्य कर्म समुच्चय।

4- शान्ति- विधानम्।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-उत्सर्ग मयूख।

7- कर्मजव्याधिदैवी चिकित्सा।

8- फलदीपिका

9- अनुष्ठान प्रकाश।

10- सर्व देव प्रतिष्ठा प्रकाशः।

5.8 बोधप्रश्नों के उत्तर

इकाईयों का अध्ययन कर पाठक बोध प्रश्नों का उत्तर समझे।

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. असंख्यात् रूद्र से आप क्या समझते है। विस्तार से वर्णन कीजिये।
2. नवग्रह स्तोत्र पाठ का विस्तार से उल्लेख कीजिये।

बी0ए0 कर्मकाण्ड
तृतीय वर्ष
प्रथम पत्र
स्तोत्र पाठ एवं होम विधि

खण्ड – 1

सूक्त पाठ

इकाई-1 पुरूष सूक्त

इकाई की रुप रेखा

1. 1 प्रस्तावना

कर्मकाण्ड से सम्बन्धित खण्ड-1 की यह पहली इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि **'पुरूष सूक्त'** का प्रयोजन क्या है इसकी उत्पति किस प्रकार से हुई है? इसकी उत्पति अनादि काल से हुई है। तथा इसी सूक्त के माध्यम से आज सनातन धर्म की रक्षा हो रही है ।

सभी सूक्तों में **'पुरूषसूक्त'** श्रेष्ठ माना गया है। इसका सम्बन्ध सृष्टि सृजन से जुड़ा हुआ है। इसमें सोलह ऋचाएँ हैं, जो भगवान् नारायण के सृष्टि सृजन के स्वरूप को लेकर इससे जुड़ी हुई हैं। इन सोलह ऋचाओं से ही देवता के षोड़शोपचार पूजन हैं। पूजन के प्रत्येक उपचार के साथ पुरूषसूक्त की एक एक ऋचा जुड़ी है। इसके भावार्थ से ही सृष्टि सृजन का बोध होता है। इसके प्रथम मन्त्र में ही सहस्त्र शिरो से भाव है समस्त ब्रह्माण्ड जिसका अंश अस विश्व मृत्युलोक में समसत प्राणियों से जुड़ा हुआ है।यह स्वरूप हजारों नेत्र, हाथ पैर, अन्द्रिय होने से विराट् स्वरूप में प्रत्यक्ष है, जीवन में प्रत्यक्ष इसका आविर्भाव होता है। जीव का अंत हो जाने पर इसका तिरोभाव होताहै। इससे परब्रह्म महानारायण परमात्मा का व्यक्त और अव्यक्त निराकार और साकार रूप प्रकट होता है, जो अनंत स्वरूप है, जिसकी हजारों मूर्तियाँ है, जिसके हजारों पाँव, आँखें भुजाएँ हैं वह अच्युत पुरूष कोटियुगों से विद्यमान है। वस्तुतः वही सृष्टि का सृजन तत्त्व रूप में विद्यमान है। उस पुरूषोत्तम पुरूष को हम बार-बार नमस्कार करते हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप वेदशास्त्र से वर्णित पुरूष सूक्त का अध्ययन करेंगे।

1. पुरूष सूक्त के विषय में आप परिचित होंगे-
2. पुरूष सूक्त के सोलह मन्त्रों के विषय में आप परिचित होंगे
3. चारों वर्णों के उत्पत्ति के विषय में आप परिचित होंगे
4. पुरूष सूक्त के पन्द्रहवें मन्त्र के विषय में आप परिचित होंगे
5. पुरूष सूक्त के सोलहवें मन्त्र के विषय में आप परिचित होंगे

1.3 वर्ण विषय : पुरूष सूक्त

सहस्त्राशीर्षा पुरूषः सहस्त्राकक्षः सहस्त्रपात् ।
सभूमि गं सर्व्वतस्पृत्त्वात्त्यतिष्ठद्दशांगुलम् ।। 1 ।।

हे मनुष्यों! जिस पूर्ण परामात्मा में हम मनुष्य आदि के असंख्य शिर, आँखे और पैर आदि अवयव है जो भूमि आदि से उपलक्षित हुए पाँच स्थूल और पाँच सूक्ष्म भूतों से युक्त जगत् को अपनी सत्ता से पूर्ण कर जहाँ जगत नहीं वहाँ भी पूर्ण हो रहा है।

पुरूषऽएवेदः गूँ सर्वंय्यद भूतँ य्यच्चभाव्व्यम्।

उतामृतत्त्वस्येशानों यदन्नेनातिरोहति।। 2 ।।

वह विराट पुरूष ही भूतत, भविष्य और वर्तमान है, वही ''अमृतत्वस्य ईशानः'' अर्थात अमरता का स्वामी है।यत् अन्नेन अतिरोहति अर्थात् जो अन्न से बढ़ता है। अन्न का अर्थ प्राण भी है।

एतावानस्य महिमातो ज्ज्यायाँश्च्च पूरुषः।

पदोस्य व्विश्श्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि ।। 3 ।।

इस विराट की इतनी महिमा है कि उससे भी बढ़कर व परूष महिमा वाला है इसके एक पादस्वरूप यह समस्त चराचर जगत है और तीन पादस्वरूप अमृतत्व दिव्य लोभ है।

त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरूषः पादोस्येहाभवत्पुनः।

ततो व्विष्ष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ।। 4 ।।

यह पूर्वोक्त परमेश्वर कार्यजगत् से पृथक तीन अंश से प्रकाशित हुआ एक अंश अपने सामर्थ्य से सब जगत को बार बार उत्पन्न करता है, पीछे उस चराचर जगत् में व्याप्त होकर स्थित है। अर्थात् अनशन और अशन की सृष्टि में शासन के अन्तर्गत जगत जिसमें अन्नादि सृष्टि के प्राणी एवं अनशन अर्थात दिव्यलोक के प्राणी निवास करते है।

ततो व्विराडजायत व्विराजोऽअधिपूरूषः।

सजातो ऽअत्त्यरिच्च्यतपश्च्चाद्भूमिमथो पुरः ।। 5 ।।

परमेश्वर ही से सब समष्टिरूप जगत् उत्पनन होता है, वह उस जगत् से पृथक् उसमें व्याप्त भी हुआ, उसके दोषों से लिप्त न होकर इस सबका अधिष्ठाता है। इस प्रकार सामान्य रूप से जगत की रचना का वर्णन कर विशेषकर भूमि आदि की रचना को क्रम से कहते है।

तस्म्माद्द्यज्ञात्त्सर्व्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्ज्यम्।

पशूँस्ताँश्चक्क्रे व्वयव्व्यानारण्ण्या ग्राम्म्याश्च ये ।। 6 ।।

जिस सबका गहण करने योग्य, पूजनीय परमेश्वर ने सब जगत के हित के लिए दही आदि भोग्य पदार्थो ओर ग्राम के तथा वन के पशु बनायें है उसकी सब लोग उपासना करो।

तस्म्माद्यज्ञात्त्सर्व्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दाःगं सिजज्ञिरे तस्म्माद्द्यजुस्त्स्म्मादजायत ।। 7 ।।

हे मनुष्यां! तुम को चाहिए कि उस पूर्ण अत्यन्त पूजनीय जिसके अर्थ सब लोग समस्त पदार्थों को देते या समर्पण करते है उस परमात्मा से ऋग्वेद, सामवेद उत्पन हुआ; उस परमात्मा से अथर्ववेद उत्पन्न हुआ और उस पुरूष से यजुर्वेद उत्पन्न होता है और उस वेद को पढ़ो और उसकी आज्ञा के अनुकूल वर्त्त के सुखी होओ।

तस्म्मादश्श्वाऽअजायन्त ये के चोभयादतः

गावो हे जज्ञिरे तस्म्मात्तस्म्माज्जाताऽअजावयः ।। 8 ।।

हे मनुष्यों! तुम को घोड़े तथा जो कोई गदहा आदि दोनों, ओर ऊपर नीचे दाँतों वाले हैं वे

उस परमेश्वर से उत्पन्न हुए उसी से गौवें या अन्य भी एक ओर दाँत वाले जीव निश्चय करके उत्पन्न हुए हैं, इस प्रकार कहना चाहिए।

तँय्यज्ञम्बर्हिषि प्प्रौक्षन्नपुरूषंजातमग्रतः।

तेन देवाऽअयजन्त साद्ध्याऽऋषयश्च्च ये ।। 9 ।।

विद्वान मनुष्यों को चाहिए कि सृष्टिकर्त्ता ईश्वर का योगाभ्यासादि से सदा हृदयरूप अवकाश में ध्यान और पूजन किया करे।

यत्त्पुरूषँ व्व्यदधुः कतिधा व्व्यकल्प्पयन्।

मुखंकिमस्यासीत्त्किम्बाहू किमूरू पदाऽउच्च्येते ।। 10 ।।

हे विद्वानों! आप जिस पूर्ण परमेश्वर को विविध प्रकार से धारण करते हो उसको कितने प्रकार से विशेषकर कहते हैं और इस ईश्वर की सृष्टि में मुख के समान श्रेष्ठ कौन है? भुजबल को धारण करने वाला कौन है? उरू अर्थात् घोंटू के कार्य करने वाले कौन है और पाँव के समान तुच्छ कौन कहे जाते हैं?

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्बाहू राजन्नयः कृतः।

ऊरू तदस्य यद्वैश्श्यः पद्भ्याम् गं शूद्द्रोऽ अजायत ।। 11 ।।

हे जिज्ञासु लोगो! तुम उस ईश्वर की सृष्टि में वेद व ईश्वर का ज्ञाता इनका सेवक या उपासक मुख के तुल्य उत्तम ब्राह्मण है। भुजाओं के तुल्य बल पराक्रमयुक्त राजन्य (क्षत्रिय) है। ऊरू अर्थात् जंघाओं के तुल्य वेगादि से काम करने वाला अथवा व्यापारविद्या में प्रवीण वैश्य है। सेवा और अभिमान से रहित होने से शूद्र उत्पन्न हुआ है।

चन्द्रमा मनसो जातश्च्चक्षोः सूर्य्योऽ अजायत।

श्रोत्त्राद्वायुश्च्च प्प्राणश्च्च मुखादग्निरजायत ।। 12 ।।

जो यह सब जगत् कारण ईश्वर ने उत्पन्न किया है उसमें चन्द्रलोक मनरूप, सूर्यलोक नेत्ररूप वायु और प्राण श्रोत्र के तुल्य, मुख के तुल्य अग्नि औषधि और वनस्पति रोमों के तुल्य नदी नाड़ियों के तुल्य और पर्वतादि हड्डी के तुल्य है ऐसा जानना चाहिए।

नाब्भ्याऽ आसीदन्तरिक्षः गं शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत।

पद्भ्याम्भूमिर्द्दिशः श्रोत्त्रात्तथा लोकां ऽअकल्प्पयन् ।। 13 ।।

हे मनुष्यों! जो जो इस सृष्टि में कार्यरूप वस्तु है वह सब विराटरूप कार्यकारण का अवयवरूप है, ऐसा जानना चाहिए।

यत्त्पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्न्वत।

व्वसन्तो स्यासी दाज्जयङ्ग्रीष्ष्मऽइध्ध्मः शरद्धविः ।। 14 ।।

जब ब्राह्य सामग्री के अभाव में विद्वान् लोग सृष्किर्त्ता ईश्वर की उपासनारूप मानस ज्ञानयज्ञ को विस्तृत करें तब पूर्वाह्ण आदि काल ही साधनरूप से कल्पना करना चाहिए।

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्तसमिधकृताः।

देवा यद्यज्ञन्तन्नवानाऽ अबध्नन्पुरूषम्पशुम् ।। 15 ।।

हे मनुष्यों! जिस मानस ज्ञानयज्ञ को विस्तृत करते हुए विद्वान लोग जानने योग्य परमात्मा को हृदय में बांधते है। इस यज्ञ के सात गायत्री आदि छन्द चारों ओर से सूत के सात लपेटों (परिधि) के समान है। इक्कीस अर्थात् प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, पाँच सूक्ष्मभूत, पाँच स्थूलभूत, पाँच ज्ञानेन्द्रिय और सत्व, रजस् तीन गुण ये सामग्री रूप किये उस यज्ञ को अथावत् जानो। इस विशेषताओं वाले पुरूष को यज्ञ विस्तार है उसकी पशुता को समाप्त करने के लिए बाँधा अर्थात् यज्ञ वेदी पर आहूत किया।

यज्ञेन यज्ञमयजनत देवास्त्तानि धर्म्माण प्प्रथमान्यासन्।

तेहनाकम्महिमान» सचन्त यत्रपूर्व्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः ।। 16 ।।

हे मनुष्यों! जो विद्वान् लोग पूर्वोक्त ज्ञानयज्ञ से पूजनीय सर्वरक्षक अग्निवत् तेजस्वि ईश्वर की पूजा करते है, वे ईश्वर की पूजा आदि धारणरूप धर्म अनादि रूप से मुख्य है, वे विद्वान् महत्व से युक्त हुए जिस मुख में इस समय से पूव साधनों को किये हुए प्रकाशमान विद्वान् है उस सब दुःखरहित मुक्तिसुख को ही प्रापत होते है, उसको तुमलोग भी प्राप्त होवोगे।

1.4 सारांश

कर्मकाण्ड से सम्बन्धित खण्ड-1 की यह पहली इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप पुरूष सूक्त के सोलह मन्त्रों का अध्ययन किया है इन सोलह मन्त्रों में **'सहस्त्रशीर्ष'** शब्द अनन्त द्युलोक से युक्त उस महाविराट्पुरुष का द्योतक है। उस महाविराट् से ही इस क्षुद्र विराट् की उत्पत्ति होती है। उस महान् विराट् पुरूष के रोम-रोम से अनन्त भूः भुवः एवं स्वर्लोकों से समन्वित अगणित ब्रह्माण्ड वर्तमान रहते हैं। वह चतुष्पात् पूर्ण पुरूष एकपाद से अगणित ग्रह्माण्डों के रूप में विकसित रहता है। उसे ही महानारायण विष्णु रूप में कहा गया है। सहस्त्रशीर्षा पुरूष चतुष्पात् पूर्ण पुरूष है। वह अपने एक पाद से अगणित विश्व ब्रह्माण्डों के रूप में विकसित हुआ। वह अन्तर्यामी रूप में सन्निविष्ट रहताहै। इसे कोटी महनारायण या विष्णु कहकर पुकारते हैं। वह ज्यायमान है। पुराणों में इसे ही शेष अथवा अनन्त कहते हैं।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि समस्त वेदादि शास्त्रों में नित्य और नैमित्तिक कर्मो को मानव के लिये परम धर्म और परम कर्तव्य कहा है। संसार में सभी मनुष्यों पर तीन प्रकार के ऋण होते हैं-देव-ऋण, पितृ-ऋण और मनुष्य(ऋषी)ऋण। नित्य कर्म करने से मनुष्य तीनों ऋणों से मुक्त हो जाता है इस लिये मनुष्य अपने ऋणों से मुक्त होने के लिये कर्मकाण्ड का अध्ययन करता है तथा अपने जीवन में इसको पालन करता है। क्योंकि अपने ऋणों से मुक्त कर्मकाण्ड के माध्यम से ही होसकता है और उसके पास दूसरा कोई रास्ता नही है। इस लिये कर्मकाण्ड का ज्ञान अत्यन्त

आवश्यक है।

1.5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
सहस्त्र	हजारों
शीर्षा	शिर
पुरूषः	पुरुष
सहस्त्राक्षः	हजारो नेत्र वाले
सहस्त्रपात्	हजारो पैर वाले
महिमातो	महिमा वाला है
पदोस्य	पादस्वरूप
व्विश्वाभूतानि	समस्त चराचर जगत्
ब्राह्मणोस्य	उत्तम ब्राह्मण है।
मुखमासीद्	उपासक मुख के तुल्य
बाहू	बाहू
राजन्नयः कृतः।	तुल्य बल पराक्रमयुक्त राजन्य (क्षत्रिय) है।
ऊरू	जंघाओं के तुल्य वेगादि से काम करने वाला अथवा तदस्य
वैश्श्यः	व्यापारविद्या में प्रवीण वैश्य है।
पद्भ्याम्	पैरों से
शूद्द्रो	शूद्र
अजायत	उत्पन्न हुआ है

1.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न -उत्तर

1-प्रश्न- असंख्य शिर, का वर्णन पुरूष सूक्त के किस मन्त्र में किया गया है है?

उत्तर- असंख्य शिर, का वर्णन पुरूष सूक्त के पहले मन्त्र में किया गया है।

2-प्रश्न- विराट पुरूष, का वर्णन पुरूष सूक्त के किस मन्त्र में किया गया है?

उत्तर- विराट पुरूष, का वर्णन पुरूष सूक्त के दूसरे मन्त्र में किया गया है।

3-प्रश्न- सृष्टिकर्त्ता ईश्वर का वर्णन पुरूष सूक्त के किस मन्त्र में किया गया है?

उत्तर- सृष्टिकर्त्ता ईश्वर का वर्णन पुरूष सूक्त के नौवें मन्त्र में किया गया है।

4-प्रश्न-पुरूष सूक्त में कितने मन्त्र है?

उत्तर- पुरूष सूक्त में सोलह मन्त्र है।

5-प्रश्न- जगत् को ईश्वर ने उत्पन्न किया है, इसका वर्णन पुरूष सूक्त के किस मन्त्र में किया गया है?

उत्तर- जगत् को ईश्वर ने उत्पन्न किया है, इसका वर्णन पुरूष सूक्त के बारहवें मन्त्र में किया गया है।

1.7-सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

1 पुस्तक का नाम-रुद्रष्टाध्यायी
लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2 पुस्तक का नाम-सर्वदेव पूजापद्धति
लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

3 धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक - डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशक:- उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
लेखक:- पं. बिहारी लाल मिश्र,
प्रकाशक:- गीताप्रेस, गोरखपुर।

5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा
संकलन ग्रन्थ
प्रकाशक:- मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

6 कर्मठगुरुः
लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

9 विवाह संस्कार
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर

1.8-उपयोगी पुस्तकें

1-पुस्तक का नाम- रुद्राष्टाध्यायी

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- यज्ञेन यज्ञमयजनत देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन्।

तेहनाकम्महिमान: सचन्त यत्रपूर्व्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः। इस मन्त्र का वर्णन कीजिये।

इकाई - 2 श्री सूक्तम्

इकाई की रुप रेखा

2.1-प्रस्तावना

2.2-उद्देश्य

2.3 श्री सूक्तम्

2.4 सारांश

2.5 शब्दावली

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न उतर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 उपयोगी पुस्तके

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2. 1- प्रस्तावना

कर्मकाण्ड से सम्बन्धित खण्ड एक की यह दूसरी इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि '**श्री सूक्त**' की उत्पति किस प्रकार से हुई है? श्रीसूक्त की उत्पति अनादि काल से हुई है। तथा इन्ही सूक्तों के माध्यम से आज सनातन धर्म की रक्षा हो रही है।

'**श्रीसूक्त**' को जानते हुए आप पूजा के विषय में परिचित होंगे कि पूजन का प्रयोजन क्या है एवं उसका महत्त्व क्या है इन सबका वर्णन इस इकाई में किया गया है

प्रत्येक पूजन के प्रारम्भ में आत्मशुद्धि, गुरु स्मरण, पवित्र धारण, पृथ्वी पूजन, संकल्प, भैरव प्रणाम, दीप पूजन, शंख-घण्टा पूजन के पश्चात् ही देव पूजन करना चाहिए। व्रतोद्यापन एवं विशेष अनुष्ठानों के समय यज्ञपीठ की स्थापना का विशेष महत्त्व होता है, अतः प्रधान देवता की पीठ रचना पूर्व दिशा के मध्य में की जाये। पीठ रचना हेतु विविध रंगों के अक्षत या अन्नादि लिये जाते है।

2.2- उदेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप वेदशास्त्र से वर्णित श्रीसूक्त का अध्ययन करेंगे।

1. श्रीसूक्त के विषय में आप परिचित होंगे-
2. श्रीसूक्त के महत्त्व के विषय में आप परिचित होंगे
3. श्रीसूक्त पाठ के विषय में आप परिचित होंगे
4. श्रीसूक्त के न्यास के विषय में आप परिचित होंगे
5. श्रीसूक्त की समाज में उपयोगिता क्या है। इसके विषय में आप परिचित होंगे

2.3 श्री सूक्तम्

विधि-

लक्ष्मी की उपासना के लिये श्री सूक्त का पाठ किया जाता है। यह तथ्य सर्वसाधारण के लिये जान लेना अत्यधिक आवश्यक है अतः ध्यान दे कि-

सदा स्मरण रखें कि -जो भी पाठ हो उस पाठ को शुद्ध तथा शुद्धता से करें।

एक निश्चत संख्या में पाठ करें। पूर्व दिवस में पाठ किये गये पाठों से आगामी दिनों में कम पाठ न करे यदि चाहे तो अधिक पाठ कर सकते हैं परन्तु स्मरण यही रखना है कि भूतकाल से वर्तमान काल के पाठ कम न हो।

पाठ का उच्चारण होंठों से बाहर आना चाहिये यदि अभ्यास न होने के कारण यह विधि प्रयुक्त न हो सके तो धीमे स्वर में पाठ करें।

पाठ काल में धूप-दीप जलता रहे।

पुस्तक देखकर ही पाठ करे।

पाठ काल में श्री यन्त्र की प्रतिमा , फोटों समक्ष रखना चाहिये

श्री सूक्त का पाठ कुश या कम्बल के आसन पर बैठकर करें।

जिस स्थान पर जिस स्थान पर पाठ का शुभारम्भ हो वही पर आगामी दिनों में भी पाठ करना चाहिये

पाठ काल में मन को पाठ से मिलायें ।

मिथ्या सम्भाषण न करें।

स्त्री सेवन न करे ।

आलस्य जम्भाई यथाशक्ति त्याग दें।

श्री सूक्त का पाठ पूर्व दिशा के तरफ मुख करके ही करें।

देवालय या विष्णु मन्दिर में बैठकर पूजन सामग्री का सम्प्रोक्षण करके आचमन प्रणायाम करे- सर्वप्रथम गौरी गणेश का पूजन करे।

एक लकड़ी की चौकी के ऊपर गणेश, षोडशमातृका, सप्तमातृका स्थापित करे। दूसरी चौकी पर नवग्रह, पञ्चलोकपाल आदि स्थापति करे। ईशान कोण में घी का दीपक रखे और अपने दायें हाथ में पूजा सामग्री रख लेवे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख बैठे। कुंकुम (रोली) का तिलक करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन आरम्भ करे।

पवित्रीकरण-(अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए कलश के जल से अपने उपर तथा पूजनादि की सामग्रियों पर जल छिडके):-

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु , ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु , ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ,

आचमन (तीन बार आचमन करे):-

ॐ केशवाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय नमः।

प्राणायामः-

गोविन्दाय नमः बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे-धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करे।

पवित्रीधारणम् -

ॐ पवित्रेस्त्थो व्वैष्णव्यौसवितुर्व्वः प्रसव उत्पन्नुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्स्य रश्मिभिः।

तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम्।।

सपत्नीक यजमान के ललाट में स्वस्तितिलक लगाते हुए मन्त्र को बोले-

ॐ स्वस्तिन इन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः।

स्वस्ति नस्ताक्ष्र्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि नौव्व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

ग्रन्थिबन्धन- (लोकाचार से यजमान का सपत्नीक ग्रन्थिबन्धन करे):-

ॐ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः।

नाकङ्गृब्भ्णानाः सुकृतस्यलोके तृतीयपृष्ठेऽअधिरोचने दिवः।।

आसनपूजन (आसन की पूजा करे):-

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।

ॐ कूर्मासनाय नमः।

ॐ अनन्तासनाय नमः।

ॐ विमलासनाय नमः। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

भूतापसारण (बायें हाथ में सरसों लेकर उसे दाहिने हाथ से ढककर निम्र मन्त्र पढ़े) -

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।

ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।

सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे।।

निम्न मन्त्रों को पढ़ते हुए सरसों का सभी दिशाओं में विकिरण करे:-

प्राच्यैदिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा दक्षिणायै दिशेस्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा प्प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदर्ध्वायै दिशेस्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः। दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः। उत्तरे श्रीधरो रक्षेद् ऐशान्ये तु गदाधरः।।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः। एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

कर्मपात्र पूजन् (ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को अक्षतपुञ्ज पर स्थापित करते हुए पूजन करे):-

ॐ तत्वामि ब्ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः।

अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश समानऽ आयुः प्प्रमोषीः।।   ॐ वरुणाय नमः।

पूर्वे ऋग्वेदाय नमः।   दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः।

पश्चिमे सामवेदाय नमः।   उत्तरे अथर्ववेदाय नमः।

मध्ये साङ्गवरुणाय नमः। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

अंकुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्सर्वाणि तीर्थानि आवाहयेत् (दायें हाथ की मध्यमा अङ्गुली से जलपात्र में सभी तीर्थों का आवाहन करे):-

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति।

नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु॥

कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।

मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः॥

कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः॥

अश्च सहिताः सर्वे कलशाम्बु समाश्रिताः।

गायत्री चात्र सावित्री शान्तिः पुष्टिकरा तथा।

आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः॥

उदकेन पूजासामग्रीं स्वात्मानं च सम्प्रोक्षयेत् (पात्र के जल से पूजन सामग्री एवं स्वयं का प्रोक्षण करे):-

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे॥

योवः शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हनः। उशतीरिवमातरः॥

तस्म्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ आपोजनयथाचनः॥

दीपपूजनम् (देवताओं के दाहिने तरफ घी एवं विशेष कर्मों में बायें हाथ की तरफ तेल का दीपक जलाकर पूजन करना चाहिए):-

अग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्य्या देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वे देवा देवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता।

ऊँ दीपनाथाय नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि (गन्ध अक्षत पुष्प दीपक के सामने छोडे।)

प्रार्थनाः-(हाथ में अक्षत-पुष्प लेकर अधोलिखित श्लोक को पढते हुए दीपक के सामने छोड़े

ऊँ भो दीप देवस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत।

यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव॥

सर्वप्रथम श्री सूक्त की अधिकार प्राप्ति के लिये प्रायश्चित्तरूप में गोदान का संकल्प करना चाहिये

प्रायश्चित संकल्प हाथ में जल अक्षत-पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर प्रायश्चित संकल्प करे-

हरिः ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ऊँ तत्सदद्यैतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे

कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्ता (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं क्रियमाण श्री सूक्त पाठ कर्मणि अधिकार प्राप्त्यर्थं कायिक वाचिकमानसिक सांसर्गिकचतुर्विधपापशमनार्थं शरीरशुद्ध्यर्थं गोनिष्क्रयद्रव्यं '''''''''गोत्राय''''''''शर्मणे आचार्याय भवते सम्प्रददे (ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य ब्राह्मण के हाथ में देदे।

मंगल पाठ -हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा (हाथ में अक्षत-पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करे):-

ॐ आनो भद्राः क्रतवो यन्तु व्विश्वतो दब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः। देवानो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्प्रायुवोरक्षितारो दिवेदिवे॥१॥ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवाना रातिरभिनोनिवर्त्तताम्। देवाना सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयं देवानऽआयुः प्प्रतिरन्तुजीवसे॥२॥ तान्पूर्वया निविदाहूमहे व्वयं भगम्मित्रमदितिं दक्षमस्रिधम्। अर्यमणं व्वरुण सोममश्विना सरस्वती नः सुभगामयस्करत्॥३॥ तन्नोव्वातो मयो भुव्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्॥४॥ तामीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पति-न्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषा नो यथा व्वेदसामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥५॥ स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषाव्विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो ऽ अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु॥६॥ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो व्विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्व्वामनवः सूरचक्षसो व्विश्वेनोदेवाऽअवसा गमन्निह॥७॥ भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा œ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः॥८॥ शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा त्रा नश्चक्रा जरसंतनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मानो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः॥९॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवा ऽ अदितिः पञ्चजना ऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम्॥१०॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष œ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। व्वनस्पतयः शान्ति व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व œ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि॥११॥ यतो यतः समीहसे ततो नो ऽ अभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योभयन्नः पशुभ्यः॥१२॥ सुशान्तिर्भवतु॥ (अक्षत-पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)

गणपत्यादि देवानां स्मरणम्- (हाथ में अक्षत-पुष्प लेकर गणेश जी की प्रार्थना करे)

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजगर्णकः। लम्बोदरश्च विकटोविघ्ननाशो विनायकः। धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो

भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि। विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे संकटे चौव विघ्नस्तस्य न जायते। शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये। अभीप्सितार्थ सिध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः। सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः। सर्वमङ्ग्ल माङ्ग्ल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते। सर्वदा सर्व कार्येषु नास्ति तेषाममङ्ग्गलम्। येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः। तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव। विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेंऽघ्रियुगं स्मरामि। लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः। येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः। यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्री र्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम। सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रि भुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः। विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गङ्गा भवानी मणिकर्णिकाम्। विनायकं गुरुभानुं ब्रह्म्विष्णुमहेश्वरान्। सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थ सिद्धये।ऊँ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। ऊँ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ऊँ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ऊँ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ऊँ शचीपुरन्दराभ्यां नमः। ऊँ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। ऊँ सर्वपितृदेवताभ्यो नमः। ऊँ इष्टदेवताभ्यो नमः। ऊँ कुलदेवताभ्यो नमः। ऊँ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ऊँ स्थानदेवताभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ऊँ गुरवे नमः। ऊँ परमगुरवे नमः। ऊँ परात्परगुरवे नमः। ऊँ परमेष्ठिगुरवे नमः।(अक्षत-पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)

संकल्प-हाथ में जल अक्षत-पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर संकल्प करे-

हरिः ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ऊँ तत्सदद्यैतस्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयोः अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्ता (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्रः (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं (ब्राह्मण के लिए शर्मा, क्षत्रिय के लिए वैश्य, वैश्य के लिए गुप्ता, शूद्र के लिए दासान्त) सपुत्रस्त्रीबान्धवो अहं मम जन्मलग्नाच्चन्द्रलग्नाद् वर्ष मास दिन गोचराष्टक वर्गदशान्तर्दशादिषु चतुर्थाष्टं द्वादशस्थान् स्थित क्रूरग्रहास्तेषां अनिष्टफल शान्ति पूर्वकं द्वितीयसप्तम् एकादशस्थानस्थित सकल शुभफल प्राप्त्यर्थं मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य नित्यकल्याणप्राप्त्यर्थम् अलक्ष्मीविनाशपूर्वक मनो अभिलषित विपुल लक्ष्मीप्राप्त्यर्थ सर्वदा मम गृहे लक्ष्मी निवासार्थं च श्री महालक्ष्मी देव्याः प्रप्त्यर्थं श्री सूक्तस्य पाठमहं

करिष्ये (वा ब्राह्मण द्वारा कारयिष्ये) । ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।

पुनः हाथ में जल अक्षत-पुष्प कुश तथा द्रव्य लेकर बोले -

तदंगत्वेन कार्यस्य सिद्ध्यर्थं आदौ गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये। ऐसा कहकर हाथ का संकल्प जल तथा द्रव्य गणेश जी के सामने छोड़ दे।

पूजा में जो वस्तु विद्यमान न हो उसके लिये 'मनसा परिकल्प्य समर्पयामि' कहे। जैसे, आभूषणके लिये 'आभूषणं मनसा परिकल्प्य समर्पयामि'।)

सर्वप्रथम श्रीगणपति का पूजन आप कर ले।

प्राणप्रतिष्ठा- बायें हाथ में अक्षत लेकर निम्नलिखित मन्त्रों को पढ़ते हुए दाहिने हाथ से उन अक्षतों को लक्ष्मी जी के प्रतिमा पर छोड़ते जाय।

ॐ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ज्ञ œ समिमन्दधातु।

विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामोम्प्रतिष्ठ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः। सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेताम्

प्रार्थना:-(हाथ में अक्षत-पुष्प लेकर अधोलिखित श्लोक को पढ़ते हुए लक्ष्मी जी के सामने छोडे

या सा पद्मासनस्थ विपुल कटि तटि पद्म पत्रायताक्षी

गम्भीरा वर्तनाभिः स्तनभरनमितांशुभ्र वस्त्रोत्तरीया।

लक्ष्मीर्दिव्यैर्गजेन्द्रैर्मणिगणा खचितैः स्नापिता हेमकुम्भै

र्नित्यं सा पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमांगल्ययुक्ता।।

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्।

चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह।।१।।

आसनम् -(हाथ में पुष्प लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर छोड़े

ॐ पुरुष ऽ एवेद œ सर्व्वंद्भूतँच्च भाव्व्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पाद्यम् --(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर छोड़े

ॐ एतावानस्य महिमातोज्ज्यॉंश्चपूरुषः।

पादोस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, पादप्रक्षालनार्थं पाद्यं समर्पयामि।

अर्घ्यम् --(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर छोडे

ॐ धामन्तेव्विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्तः समुद्रेहृद्यन्त रायुषि।

अपामनीकेसमिथेय ऽ आभृतस्तमश्याम मधुमन्तन्त ऽ ऊर्मिम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीयम् --(हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर छोडे

सर्वतीर्थ समायुक्तं सुगन्धिनिर्मलं जलम्।

आचम्यार्थं मया दत्तं गृहाण गणनायक।।

ऊँ इमम्मेव्वरुणŸशुधीहवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, मुखे आचमनीयं समर्पयामि।

जलस्नानम् -(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर जल छोडे

ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्यसि

वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, स्नानार्थे जलं समर्पयामि।।

पञ्चामृत स्नानम् -(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर पंचामृत से स्नान करावे

पयो दधिघृतं चैव मधुं च शर्करायुतम्।

सरस्वती तु पञ्चधासो देशेभवत्सरित्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, मिलितपञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदक स्नानम् -(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर शुद्ध जल से स्नान करावे)

ऊँ शुद्धवालः सर्व शुद्धवालो मणिवालस्त ऽ आश्विनः श्येतः

श्येताक्षो रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्णायामा अवलिप्ता रौद्रानभोःरूपाः पार्ज्जन्न्याः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

वस्त्रोपवस्त्रम्-(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर रक्त सूत्र चढावे)

ऊँ सुजातोज्ज्योतिषा सहशर्म्म व्वरुथमासदत्स्वः।

व्वासो ऽ अग्ने विश्वरूप œ सँव्ययस्वव्विभावसो।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

चन्दनम् --(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए गणेश जी और गौरी लक्ष्मी जी के उपर चन्दन चढावे)

ऊँ अ œ शुना ते अ œ शुः पृच्यतां परुषा परुः।

गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युतः।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, चन्दनकुंकुमञ्च समर्पयामि।

अक्षताः --(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर अक्षत चढावे)

ऊँ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्प्रियाऽ अधूषत।

अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठयामती योजान्विन्द्रते हरी।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, अलङ्करणार्थम् अक्षतान् समपर्यामि।

पुष्पाणि (पुष्पमालां) --(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर पुष्पमाला अथवा पुष्प चढावे)

ॐ ओषधिः प्रतिमोदद्ध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः।

अश्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्णवः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, पुष्पाणि समर्पयामि।

दुर्वाङ्कुरम् --(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर दूर्वा चढावे)

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।

एवा नो दूर्व्वे प्प्रतनु सहस्रेण शतेन च।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, दूर्वाङ्कुराणि समर्पयामि।

बिल्वपत्रम् --(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर बिल्वपत्र चढावे)

ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्मिणे च वथिने च नमः

श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुब्भ्याय चाहनन्याय च।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, बिल्वपत्राणि समर्पयामि।

सुगन्धितद्रव्यम् --(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर इत्र चढावे)

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि।

सिन्दूरम् --(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर सिन्दूर चढावे)

ॐ सिन्धोरिव प्प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमियः पतयन्ति ह्यवाः।

घृतस्य धारा ऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, सिन्दूरं समर्पयामि।

नानापरिमलद्रव्याणि --(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर अवीर चढावे)

ॐ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुञ्ज्याया हेतिं परिबाधमानः।

हस्तघ्नो व्विश्वाव्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा œ सम्परिपातुव्विश्वतः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, परिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपम् --(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर धूप दिखावे)

धूरसि धूर्व्वधूर्व्वन्तं धूर्व्व तंयोस्म्मान् धूर्वतितन्धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः।

देवानामसि व्वह्नितम œ सस्निनतमं पप्प्रितमं जुष्टतमं देवहूतम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, धूपम् आघ्रापयामि।

दीपम् ---(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर दीप दिखावे)

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।

अग्निर्व्वर्चाे ज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्यो वर्च्चाे ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा।

ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, दीपकं दर्शयामि।

हस्तौ प्रक्षाल्य। (इसके बाद हाथ धोये)

नैवेद्यम् ---(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी को भोग लगावे)

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष œ शीर्ष्णाे द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ २ अकल्पयन्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये जलं निवेदयामि। (इसके बाद पॉच बार जल चढावे)

ऋतुफलम् ---(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए गणेश जी और गौरी लक्ष्मी जी के उपर फल चढावे)

ॐ याः फलनीर्या ऽ अफला ऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हसः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, फलं निवेदयामि। पुनः आचमनीयं निवेदयामि।(इसके बाद पुनः जल चढावे)

ताम्बूल-मन्त्र बोलते हुए लवंग,इलायची, सोपारी सहित पान का पत्ता लक्ष्मी जी के उपर चढावे।

ॐयत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मःशरद्धविः।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः। मुखवासार्थं एलालवंगपूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि। (इलायची,लौंग-सुपारी सहित ताम्बूल को चढाये)

दक्षिणा-(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी के उपर दक्षिणा चढ़ावे)

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातःपतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः ,कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।(द्रव्य दक्षिणा समर्पित करें।)

आरती-(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी को कर्पूर की आरती करे)

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम् ।

आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य में वरदो भव।।

ॐ भूभुर्वः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, आरार्तिकं समर्पयामि। आरती के बाद जल गिरा दे।

पुष्पाञ्जलि - (हाथ में अक्षत-पुष्प लेकर लक्ष्मी जी की प्रार्थना करे):-

ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, पुष्पांजलिं समर्पयामि।(पुष्पांजलि अर्पित करे।)

प्रदक्षिणा--(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी को प्रदक्षिणा करे)

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणा पदे पदे।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, प्रदक्षिणा समर्पयामि।(प्रदक्षिणा करे।)

प्रार्थना- मन्त्र बोलते हुए हाथ में फूल लेकर लक्ष्मी जी की पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

सुरासुरेन्द्रादिकिरीटमौक्तिकै
युक्तं सदा यत्तव पादपंकजम्।
परावरं पातु वरं सुमंगलं
नमामि भक्त्याखिलकामसिद्धये।।

भवानि त्वं महालक्ष्मी सर्वकामप्रदायिनी।
सुपूजिता प्रशन्ना स्यात् महालक्ष्मि! नमोस्तुते ।।

नमस्ते सर्वदेवानां वरदासि हरिप्रिये।
या गतिस्त्वत्प्रपन्नानां सा मे भूयात् त्वदर्चनात्।।

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।

भक्तार्ति नाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, प्रार्थना पूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि। (साष्टांग नमस्कार करे।

नोटः- श्रीसूक्त से भी अभिषेक अथवा यथोपचार पूजन किया जा सकता है।

विनियोग-हाथ में जल लेकर अधोलिखित मन्त्र को पढते हुए जल को गीरावें

ऊँ हिरण्य वर्णामिति पंचदशर्चस्य श्री सूक्तस्य श्री आनन्द कर्दम चिक्लीतेन्दिरा सुता महर्षयः श्री अग्निर्देवता आद्यास्तिस्त्रो अनुष्टुपः । चतुर्थी वृहती, पंचमीषष्ठयो त्रिष्टुभौ ततो अष्टावनुष्टुभः अन्त्या प्रस्तार पंक्तिः छन्दसि । हिरण्य वर्णामिति बीजम् ताम आवह जातवेद इति शक्तिः। कीर्तिमृद्धिं ददातु मे इति कीलकम्। ममसकल विधि धनधान्य यशः श्रीः पौत्रादि प्राप्त मे श्री महालक्ष्मी वरप्रसादात् सिद्ध्यर्थे न्यासे पाठे विनियोगः।। (जल को गीरावें)

कर शुद्धिः- श्री बीज का उच्चारण करते हुए तीन बार हाथ धोवे।

ऋष्यादिन्यासः -ऊँ आँ ह्रीं क्रों ऐं श्रीं क्लीं ब्लूं यौं रं बं श्रीं ऊँ

(प्रत्येक ऋचा से पहले इनी बीज मन्त्रों को लगाये)

ऊँ हिरण्यवर्णामिति शिरसि (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।

तम् आवह जातवेदेति नेत्रयोः (दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों को स्पर्श करे)।

अश्वपूर्वामिति कर्णयोः(दाहिने हाथ से दोनो कानों को स्पर्श करे)।

कांसोस्मितामिति नासिकायाम् (दाहिने हाथ से नासिका को स्पर्श करे)।

चन्द्रप्रभासामिति मुखे (दाहिने हाथ से मुख को स्पर्श करे)।

आदित्यवर्णामिति कण्ठे (दाहिने हाथ से कण्ठ को स्पर्श करे)।

उपेतुमामिति बाह्यौ(दाहिने हाथ से पुरे शरीर को स्पर्श करे)।

क्षुत्पिपासामिति हृदये (दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)।

गन्धद्वारामिति नाभौ (दाहिने हाथ से नाभी को स्पर्श करे)।

मनसः कामामिति गुह्ये दाहिने हाथ से गुदा को स्पर्श करे)।

कर्दमेनेति वायौ (दाहिने हाथ से वायु को स्पर्श करे)।

आपः सृजन्तमिति उच्चै (दाहिने हाथ से उपर करे)।

आर्दा पुष्करिणी पुष्टिमिति जाह्ववौः। (दाहिने हाथ से जानु को स्पर्श करे)।

आर्दा यः करिणीमिति जंघयोः। (दाहिने हाथ से जंघा को स्पर्श करे)

तां म आवह जातवेदो इति पादयोः। (दाहिने हाथ से दोनों पैरों को स्पर्श करे)

करन्यासः - ऊँ श्रां नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै हरिण्यवर्णाय अंगुष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अंगूठों का स्पर्श करे) ।

ऊँ श्रीं नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै हरिण्यै तर्जनीभ्याँ नमः (दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श करे) ।

ऊँ श्रुं नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै स्वर्ण रजत स्रजायै मध्यमाभ्याँ नमः(अंगूठों से मध्यमा अंगुलियों का स्पर्शकरे)।

ऊँ श्रैं नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै चन्द्रायै अनामिकाभ्याँ नमः (अंगूठों से अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करे)

ऊँ श्रौं नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै हिरण्मयै कनिष्ठिकाभ्याँ नमः (अंगूठों से कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श करे)

ऊँ श्रः नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै लक्ष्म्यै करतलकरपृष्ठाभ्याँ नमः(हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का परस्पर स्पर्श करे) ।

षडङ्गन्यासः

ॐ श्रां नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै हरिण्यवर्णाय हृदयाय नमः (दाहिने हाथ से हृदय को स्पर्श करे)
ॐ श्रीं नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै हरिण्यै शिरसे स्वाहा (दाहिने हाथ से शिर को स्पर्श करे)।
ॐ श्रुं नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै स्वर्ण रजत स्रजायै शिखायै वषट् (दाहिने हाथ से शिखा को स्पर्श करे
ॐ श्रैं नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै चन्द्रायै कवचाय हुँ (दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कन्धे का और बायें हाथ की अंगुलियों से दाहिने कन्धे का साथ ही स्पर्श करे)।
ॐ श्रौं नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै हिरण्मयै नेत्रत्रयाय वौषट् (दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों और ललाट के मध्य भाग को स्पर्श करे)।
ॐ श्रः नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै लक्ष्म्यै अस्त्रायफट् यह वाक्य पढ़कर दाहिने हाथ को सिर के उपर से बायी ओर से पीछे की ओर लेजाकर दाहिनी ओर से आगे की ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये)।
हाथों में पुष्प लेकर अधोलिखित श्लोक को पढ़ते हुए गणेश जी का प्रार्थना करे
या सा पद्मासनस्थ विपुल कटि तटि पद्म पत्रायताक्षी
गम्भीरा वर्तनाभिः स्तनभरनमितांशुभ्र वस्त्रोत्तरीया।
लक्ष्मीर्दिव्यैर्गजेन्द्रैर्मणिगणा खचितैः स्नापिता हेमकुम्भै
र्नित्यं सा पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमांगल्ययुक्ता।।
पाठ करना प्रारम्भ करे।

अथ श्रीसूक्तम् -

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह ।। १ ।।

अर्थ-हे अग्ने! जिनका वर्ण सुवर्ण के समान उज्ज्वल है जो हरिणी के समान रूपवाली हैं, जिनके कण्ठ में सुवर्ण और चॉदी के फूलों की माला शोभा पाती है, जो चन्द्रमा के समान प्रकाशमान है, जिनकी माला देह सुवर्णमय है उन्हीं लक्ष्मीदेवी का हमारे निमित्त आवाहन करो। हे हुताशन! तुम्ही देवताओं के होता हो, लक्ष्मी देवी का आवाहन करके बुलाने में केवल तुम्हारी ही सामर्थ्य है।।१।।

तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ।। २ ।।

अर्थ-हे अग्ने! जिनके प्रसन्न होकर आने सुवर्ण, भूमि , अश्व (घोड़ा) पुत्रपौत्रादि सबकुछ प्राप्त हो जाता है, उन्हीं अनुगामी (उन्हीं के पीछे जानेवाली) लक्ष्मी को हमारे लिये आवाहन करों । ।। २ ।।

अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ।। ३ ।।

अर्थ- घोड़े जिनके आगे चलते हैं, सम्पूर्ण रथ जिनके मध्य में स्थिर है , जो हाथियों की चग्घाण से सबको जगाती है , जो एकमात्र देवी और आश्रय है , उन्हीं लक्ष्मी का आवाहन करता हूँ वह आकर

हमारी सेवा को स्वीकार करें ।।३।।

कां सोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।

पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोप ह्वये श्रियम् ।। ४ ।।

अर्थ-जिनका शरीर विकसित कमल के समान हॅसता हुआ विराजित है, जिनका वर्ण सुवर्ण के समान सुन्दर है,जो क्षीर सागर के निकलने से सदा गीली है जिनकी सदा उज्ज्वल कान्ती है,सदा परितृप्त और जो प्रसन्न हो मनोरथ देकर आश्रित भक्त जनों को तृप्त करती हैं जो कमल के आसन पर विराजमान और कमल के समान वर्णवाली है, मै उन्हीं श्रीलक्ष्मी देवी का आवाहन करता हूॅं ।।। ४।।

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।

तां पद्मिनीमीं शरणं प्रपद्ये ऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ।। ५ ।।

अर्थ- जो चन्द्रमा के समान प्रभायुक्त है जो परम दीप्तिमान है, जो यश के समूह से प्रकाशमान है सुरपुर में सदा देवता लोग जिनकी आराधना करते हैं, जो उदारचित्तवालीहै, कमल के समान रूपवाली और ईकारस्वरूपिणी है, मै उन्हीं लक्ष्मी देवी की शसण होता हूँ। हे देवी! मैं तुम्हे प्रणाम कर प्रार्थना करता हूँ कि तुम हमारी दरिद्रता को दूर करो।।। ५ ।।

आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः।

तस्य फलानि तपसा नुदन्तु या अन्तरा याश्च बाह्या अलक्ष्मीः।।६।।

अर्थ-हे देवी! तुम्हारा वर्ण सूर्य के समान उज्ज्वल है तुम्हारी तपस्या के प्रभाव से ही फलवान् बिल्ववृक्षादि उत्पन्न होते हैं। हे शरण्ये!उन्हीं बिल्ववृक्षों के पके हुए फलसमूह हमारे अन्तस्थ और बाहर की अलक्ष्मी को दूर करें। ।।६।।

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह।

प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धि ददातु मे ।। ७ ।।

अर्थ-हे देवि! तुम्हारे अनुग्रह से शिाव का मित्र कुबेर और कीर्ति देवी मणिरत्नादि सहित हमारे निकट उपस्थित हों, मैने इस संसार में देह धारण किया है, वहा आकर ऋद्धि और सिद्धि प्रदान करें ।।७।।

क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्।

अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात्।।८।।

अर्थ-मै क्षुधा और तृष्णा से मल परिपूर्ण और अलक्ष्मी का विनाश करूँगा हे देवि! तुम हमारे घर से सम्पूर्ण अभूति को और असमृद्धि को दूर करो। ।।८।।

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।

ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।।९।।

अर्थ- गन्ध ही जिसका लक्षण है, जिसको काई भी परस्त करने में समर्थनहीं है, जो सदा गौ इत्यादि पशुओं से युक्त है, जो सम्पूर्ण जीवों की ईश्वरी है,मैं उन्हीं लक्ष्मी देवी का आवाहन करता हूॅं ।।९।।

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि।

पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः।।१०।।

अर्थ-हे देवि! प्रसन्न होकर आशीर्वाद दो , तुम्हारे प्रसाद से हमारा मनोरथ पूर्ण, संकल्प सिद्ध हो सदा सत्यवचन बोलने में वृद्धि रहे , मुझे गाय का दूध बहुत सा प्राप्त हो, चारों ओर हमारे घर में आवश्यकतानुसार अन्न विद्यमान रहे और समृद्धि व यश हमेशा मेरा आश्रय करे। ।।१०।।

कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भव कर्दम।

श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्।।११।।

अर्थ- कर्दम जी से ही सम्पूर्ण प्रजा उत्पन्न हुई है। इस कारण हे कर्दम! तुम हमारे स्थान में स्थिति करो और अपनी जननी पद्ममालिनी लक्ष्मी देवी को हमारे वंश में स्थापित करो ।।११।।

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे।

नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले।।१२।।

अर्थ-हे कर्दम जलदेवतागण चिकना द्रव्य उत्पन्न करें, तुम सदा मेरे स्थान में स्थित रहो, अपनी जननी लक्ष्मी देवी को हमारे कुल में स्थापित करो।।१२।।

आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलां पद्ममालिनीम्।

चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह।।१३।।

अर्थ- हे अग्ने! जो गीले देहवाली है, जिनके हाथ में शोभायमान लकड़ी विराजमान है, जो पुष्टि युक्त है, जो पीले वर्णवाली है, जो पद्मचारिणी,पद्ममालिनी और जिनका वर्ण सुवर्ण के समान देदीप्यमान है, उन्हीं लक्ष्मी देवी का हमारे लिये यहा आवाहन करो।।१३।।

आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्।

सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह।।१४।।

अर्थ- हे अनल! जो गीले देहवाली है, जिनके हाथ में शोभायमान लकड़ी विराजमान है, जो सुवर्ण के समान वर्णवाली और हममालिनी है ,जिनी कान्ति सूर्य के समान देदीप्यमान है, उन्हीं लक्ष्मी देवी को हमारे लिये यहा आवाहन करो।।१४।।

तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।

यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं पुरुषानहम्।।१५।।

अर्थ- हे अग्ने! जिसकी अनुग्रह से वहुत सा सुवर्ण, गौ, अश्व, दास-दासी, पुत्र-पौत्र इत्यादि प्रप्त कर सकें, तुम उन्हीं अनपगामिनी लक्ष्मी देवी का हमारे यहा आवाहन करो।।१५।।

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्।

सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत्।।१६।।

अर्थ- जो मनुष्य लक्ष्मी की कामना करता हो वह पवित्र और सावधान होकर प्रतिदिन अग्नि में गौघृत का हवन और साथ ही श्री सूक्त की पन्द्रह ऋचाओं का प्रतिदिन पाठ करे ।।१६।।

2 **माता महालक्ष्मी की आरती**

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मी
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धि।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्॥

ऊँ जय लक्ष्मीमाता, (मैय्या) जय लक्ष्मी माता।
तुमको निशिदिन ध्यावत, हर विष्णु धाता॥ ऊँ जय॥
उमा, रमा, ब्रह्माणी, तुम ही जग-माता।
सूर्य-चन्द्रमा ध्यावत, नारद ऋषि गाता॥ ऊँ जय॥
दुर्गारूप निरञ्जनी, सुख-सम्पत्ति-दाता।
जो कोई तुमको ध्यावत, ऋद्धि-सिद्धि धन पाता॥ ऊँ जय॥
तुम पाताल-निवासिनी, तुम ही शुभदाता।
कर्म-प्रभाव-प्रकाशिनी, भवनिधि की त्राता॥ ऊँ जय॥
जिस घर तुम रहती, तहँ सब सदड्ढ्गुण आता।
सब सम्भव हो जाता, मन नहीं घबराता॥ ऊँ जय॥
तुमबिन यज्ञ न होते, वस्त्र न हो पाता।
खान-पान का वैभव सब तुमसे आता॥ ऊँ जय॥
शुभ-गुण-मन्दिर सुन्दर, क्षीरोदधि-जाता।
रत्न चतुर्दश तुम बिन कोई नहीं पाता॥ ऊँ जय॥
या आरती लक्ष्मीजी की जो कोई नर गाता,
उर आनन्द अति उमगे पाप उतर जाता॥ ऊँ जय॥

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, आरार्तिकं समर्पयामि। आरती के बाद जल गिरा दे।

पुष्पाञ्जलि - (हाथ में अक्षत-पुष्प लेकर लक्ष्मी जी की प्रार्थना करे):-

ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, पुष्पांजलिं समर्पयामि।(पुष्पांजलि अर्पित करे।)

प्रदक्षिणा--(अधोलिखित मन्त्र पढते हुए लक्ष्मी जी को प्रदक्षिणा करे)

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणा पदे पदे॥

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, प्रदक्षिणा समर्पयामि।(प्रदक्षिणा करे।)

प्रार्थना- मन्त्र बोलते हुए हाथ में फूल लेकर लक्ष्मी जी की पुष्पांजलि अर्थात् प्रार्थना करना।

सुरासुरेन्द्रादिकिरीटमौक्तिकै

र्युक्तं सदा यत्तव पादपंकजम्।
परावरं पातु वरं सुमंगलं
नमामि भक्त्याखिलकामसिद्धये।।
भवानि त्वं महालक्ष्मी सर्वकामप्रदायिनी।
सुपूजिता प्रशन्ना स्यात् महालक्ष्मि! नमोस्तुते ।।
नमस्ते सर्वदेवानां वरदासि हरिप्रिये।
या गतिस्त्वत्प्रपन्नानां सा मे भूयात् त्वदर्चनात्।।
विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।
भक्तार्ति नाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री महालक्ष्म्यै नमः, प्रार्थना पूर्वक नमस्कारान् समर्पयामि। (साष्टांग नमस्कार करे।)

समर्पण-पूजन के अन्त में -कृतार्चनेन पूजनेन भगवती महालक्ष्मीदेवी प्रीयताम्, न मम। (यह वाक्य बोलकर समस्त पूजन-कर्म भगवती महालक्ष्मी को समर्पित करे तथा जल गिराये।)

2.4 सारांश:-

इस इकाई में श्रीसूक्त का पाठ किया गया है जिसमें सोलह मन्त्र पढ़े गये है। इन सूक्तों में लक्ष्मी जी के स्वरूप का वर्णन किया गया है प्रथम सूक्त में लक्ष्मी जी के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहते है कि जिनका वर्ण सुवर्ण के समान उज्ज्वल है जो हरिणी के समान रूपवाली हैं, जिनके कण्ठ में सुवर्ण और चॉदी के फूलों की माला शोभा पाती है, जो चन्द्रमा के समान प्रकाशमान है, जिनकी माला देह सुवर्णमय है उन्हीं लक्ष्मीदेवी का हमारे निमित्त आवाहन करो। हे हुताशन! तुम्ही देवताओं के होता हो, लक्ष्मी देवी का आवाहन करके बुलाने में केवल तुम्हारी ही सामर्थ्य है।

घोड़े जिनके आगे चलते हैं, सम्पूर्ण रथ जिनके मध्य में स्थिर है , जो हाथियों की चग्घाण से सबको जगाती है , जो एकमात्र देवी और आश्रय है , उन्हीं लक्ष्मी का आवाहन करता हूॅ वह आकर हमारी सेवा को स्वीकार करें इन सबका वर्णन इस इकाई में किया गया है।

2.5 शब्दावली -

शब्द	अर्थ
ताम्	उसको
आवह	अवाहन करते है
जातवेदो	प्रसन्न होकर
लक्ष्मीमनपगामिनीम्	उन्हीं अनुगामी (उन्हीं के पीछे जानेवाली) लक्ष्मी को
यस्यां	जिनके
हिरण्यं	त्रसुवर्ण,
विन्देयं	प्राप्त हो जाता है,
गामश्वं	अश्व
अश्वपूर्वां	घोड़े जिनके आगे चलते हैं,
रथमध्यां	रथ जिनके मध्य में स्थिर है ,
हस्तिनाद	हाथियों की चग्घाण से
प्रमोदिनीम्।	सबको जगाती है
श्रियम्	आश्रय है ,
देवीमुपह्वये	उन्हीं लक्ष्मी का आवाहन करता हूँ
श्रीर्मा देवी	एकमात्र देवी
जुषताम्	सेवा को स्वीकार करें

2.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न -उत्तर

1-प्रश्न- श्रीसूक्त में कितने मन्त्र है?

उत्तर- श्रीसूक्त में सोलह मन्त्र है।

2-प्रश्न- किसकी उपासना के लिये श्री सूक्त का पाठ किया जाता है?

उत्तर- लक्ष्मी की उपासना के लिये श्री सूक्त का पाठ किया जाता है।

3-प्रश्न-पाठ का उच्चारण कहॉ से बाहर आना चाहिये है?

उत्तर- पाठ का उच्चारण होंठों से बाहर आना चाहिये है?

4-प्रश्न-श्रीसूक्त में किसके स्वरूप का वर्णन किया गया है?

उत्तर- श्रीसूक्त में लक्ष्मी के स्वरूप का वर्णन किया गया है।

5-प्रश्न- पाठ काल में मन को किससे मिलायें ।

उत्तर-- पाठ काल में मन को पाठ से मिलायें ।

2.7-सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

1 पुस्तक का नाम - रुद्रष्टाध्यायी

लेखक का नाम - शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2 पुस्तक का नाम-सर्वदेव पूजापद्धति
लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

3 धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक - डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशक:- उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
लेखक:- पं. बिहारी लाल मिश्र,
प्रकाशक:- गीताप्रेस, गोरखपुर।

5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा
संकलन ग्रन्थ
प्रकाशक:- मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

6 कर्मठगुरुः
लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

9 विवाह संस्कार
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर

2.8- उपयोगी पुस्तकें

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
लेखक:- पं. बिहारी लाल मिश्र,
प्रकाशक:- गीताप्रेस, गोरखपुर।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्।
सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत्।।१६।। इस मन्त्र का वर्णन कीजिये।

इकाई - 3 रूद्र सूक्त

इकाई की रुप रेखा

3.1 प्रस्तावना

कर्मकाण्ड से सम्बन्धित यह खण्ड एक की **तीसरी इकाई** है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि रूद्रसूक्त की उत्पति किस प्रकार से हुई है ? रूद्रसूक्त की उत्पति अनादि काल से हुई है तथा इन्हीं सूक्तों के माध्यम से आज सनातन धर्म की रक्षा हो रही है।

कर्मकाण्ड को जानते हुए आप रूद्रसूक्त के विषय में परिचित होंगे कि रूद्रसूक्त का प्रयोजन क्या है एवं उसका महत्त्व क्या है इन सबका वर्णन इस इकाई में किया गया है

नमक चमक के द्वारा शिवलिंग के आभिषेक की पुरानी परम्परा है। रुद्राष्टाध्यायी का पंचम अध्याय शतरूद्रिय माना जाता है। इसे भगवान् रूद्रके सौ से अधिक नाम गिनाएँ गए हैं। शतरूद्रिय पाठ समस्त वेदों के पारायण के तुल्य माना जाता है। इसको ही रूद्राध्याय भी कहते है। शतरूद्रिय परम पवित्र तथा धन, यश और आयु की वृद्धि करने वाला है। इसके पाठ से सम्पूर्ण मनोरथों की सिद्धि होती है। इसका पाठ परम पवित्र एवं पापों का नाश करने वाला होता है। ये मनोरथ की सिद्धि इसी से प्राप्त होती है, दुःख और भय को दूर करने वाला होता है। जो कोई इसके परम पवित्र पाठ का श्रवण करता है, वह उत्तम कामनाओं को प्राप्त करता है।

1.2- उदेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप वेदशास्त्र से वर्णित रूद्रसूक्त का अध्ययन करेंगे।

1. रूद्र सूक्त के विषय में आप परिचित होंगे-
2. रूद्रसूक्त के महत्त्व के विषय में आप परिचित होंगे
3. शिवलिंग के प्रकार के विषय में आप परिचित होंगे
4. शिवलिंग के इतिहास के विषय में आप परिचित होंगे
5. रूद्रसूक्त की समाज में उपयोगिता क्या है। इसके विषय में आप परिचित होंगे

3.3 रुद्र सूक्तः-

विभिन पदार्थो द्वारा निर्मित शिवलिंग -

अपने देश में प्रायः सभी स्थानों पर पार्थिव-पूजा का प्रचलन व मान्यता है। लिंग मात्र की पूजा में पार्वती व शिव दोनों की पूजा हो जाती है। लिंग के मूल ब्रह्म, मध्यभाग में श्री विष्णु और ऊपर ओंकार रूप महादेव विराजमान है। वेदी महादेवी और लिंग महादेव है। गरूडपुराण में अनेक पदार्थो के शिवलिंग निर्माण करके, अनेक अभीष्ट कार्यो की सिद्धि हेतु पूजन करने का प्रकरण विस्तार से है, जिसमें सवार्धिक महत्व पारद निर्मित शिवलिंग का बताया गया है। शास्त्रों में अनुसार शिवलिंग अनन्त स्वरूप और निर्माण-विधियों का वर्णन भी मिलता है। विभिन्न कामना सिद्धि हेतु अनेक पदार्थो के शिवलिंग निर्माण किए जाते है, जिनमें कुछ इस प्रकार है -

गन्धलिंग:- यह लिंग दो भाग कस्तूरी, चार भाग चन्दन तथा तीन भाग कुंकुम द्वारा निर्मित किया जाता हैं। इसकी पूजा शिव का सायुजय प्राप्त करने के लिए की जाती है।

पुष्पलिंग:- इसका निर्माण विभिन्न रंगों के फूलों द्वारा किया जाता है, पृथ्वी का आधिपत्य प्राप्त करने के लिए इसकी पूजा की जाती है।

रजोमयलिंग:- यह मिट्टी (बालूका) द्वारा बनाया जाता है। इसका अर्चन करने से विद्या की प्राप्ति होती है।

यवगोधूमशालिजलिंग:- जौ, गेहूँ, चावल इन तीनों का आटा समान भाग लेकर इसका निर्माण किया जाता है। इसकी पूजा सौन्दर्य, स्वास्थ्य और पुत्र-प्राप्ति के लिए करनी चाहिए।

सिताखंडमयलिंग:- यह मिश्री के बने हुए सिट्टे का बनाया जाता है। रोगों से मुक्ति पाने तथा स्वास्थ्य के लिए इसका पूजन सार्थक माना गया है।

लवणजलिंग:- हरताल त्रिकूट (सोंठ, मिर्च, पीपल) को नमक में मिलाकर इसका निर्माण करते हैं। वशीकरण के अर्थ में इसका पूजन तत्काल फलदायक है।

तिलपिष्टोन्थलिंग:- तिलो को पीसने के बाद उसका लिंग बनावे। इसका पूजन सभी प्रकार की इच्छापूर्ति हेतु किया जाता है।

गुडोत्थलिंग:- यज्ञकुन्ड से लेकर बनाए गए लिंग को भस्मलिंग कहा जाता है। इसका पूजन अनेक प्रकार से फलदायक है।

शर्करामयशिवलिंग:- चीनी (शर्करा) द्वारा निर्मित लिंग के पूजन से सुख-शान्ति प्राप्त होती है।

वशांकुरमयलिंग:- बांस के कोमल अंकुर द्वारा बनाए गए शिवलिंग की पूजा करने से वंश की वृद्धि होती है।

दधिदुग्धोवलिंग:- कच्चे दूध को लेकर उसमें दही मिलावें। इस प्रकार दूध और दही के बने हुए शिवलिंग की पूजा करने से यश और लक्ष्मी, दोनों की प्राप्ति होत है।

धान्यजशिवलिंग:- कई प्रकार के धान्य (अनाज) गुड़ के साथ मिलकर उसका लिंग पूजन करने से धन (अनाज) की वृद्धि होती है।

फलोत्थालिंग:- फलों को धागे में पिरोकर लिंगरूप बनाया जाता है। ऐसे लिंग के अर्चन से फलसिद्धि होती है।

धात्रीफलमयलिंग:- आँवले को पीसकर बनाया गया शिवलिंग मुक्ति देने वाला होता है।

नवनीतजलिंग:- वृक्षों के कोमल पत्तों को पीसकर बनाए गए लिंग पूजन से यश और सौभाग्य प्राप्त होता है।

कर्पूरजलिंग:- कपूर से बनाया गया लिंग भक्ति का प्रेरक कहलाता है।

अयस्यान्तकमणिजलिंग:- लोहे (धातु) द्वारा बनाया गया शिवलिंग सिद्धिदायक है।

मौक्तिशिवलिंग:- मोतियों द्वारा बनाया गया लिंग स्त्रियों को सौभाग्य प्रदान करता है। पुरूष इसकी पूजा करे तो भाग्य-वृद्धि होती है।

स्वर्णनिर्मितलिंग:- सोने के शिवलिंग का पूजन करने से धनधन्य और सुख-समृद्धि प्राप्त होते है। अनन्तः मनुष्य मुक्ति को प्राप्त होताहै।

रजमयशिवलिंग:- चाँदी के लिंग का पूजन भी सभी प्रकार की सुख-समृद्धि को देने वाला है।

वैदूर्यंजमणिलिंग:- लहसुनिया से निर्मित लिंग शत्रुनाश करने वाला सर्वत्र विजय प्राप्त करने वाला है।

स्फटिकमणिलिंग:- स्फटिकमणि से निर्मित लिंग का पूजन इच्छाओं की पूर्ति हेतु सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसके दर्शन मात्र से ही पापों का नाश हो जाता है। इसके पूजन से अनेक प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती है।

इसके अलावा भी अन्य कई प्रकार के लिंगो का निर्माण और उनकी पूजा का विधन बताया गया है। गरूड़पुराण में लिंगो का महत्व उनका आकार-प्रकार और उनके प्रकार की फल प्राप्तियो का विस्तार पूर्वक उल्लेख मिल जाता है।

॥ हरिः ओम।

पाँचवाँ अध्याय

भूर्भुवः स्वः **नमस्ते रुद्द्र मन्न्यवऽउतोतऽइषवे नमः। बाहुब्भ्यामुततेनमः** ॥1॥

दुःख दूर करने वाले (अथवा ज्ञान प्रदान करने वाले) हे रूद्र! आपके क्रोध के लिये नमस्कार है, आपके बाणों के लिये नमस्कार है और आपकी दोनों भुजाओं के लिये नमस्कार है ॥1॥

यातेरुद्द्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी।

तया नस्तन्न्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥2॥

कैलास पर रहकर संसार का कल्याण करने वाले (अथवा वाणी में स्थित होकर लोगों को सुख देने वाले) हे रूद्र! आपका जो मंगलदायक, सौम्य, केवल पुण्यप्रकाशक शरीर है, उस अनन्त सुखकारक शरीर से हमारी ओर देखिये अर्थात् हमारी रक्षा कीजिये ॥2॥

यामिषुंगिरिशन्त हस्त्ते बिभर्ष्यस्त्तवे।

शिवांगिरित्त्र तांकुरुमा हिः सीः पुरुषंजगत् ॥3॥

कैलास पर रहकर संसार का कल्याण करने वाले तथा मेघों में स्थित होकर वृष्टि के द्वारा जगत् की रक्षा करने वाले है सर्वज्ञ रूद्र! शत्रुओं का नाश करने के लिये जिस बाण को आप अपने हाथ में धारण करते हैं वह कल्याणकारक हो और आप मेरे पुत्र-पौत्र तथा गो, अश्व आदिका नाश मत कीजिये ॥3॥

शिवेन व्वचसा त्त्वा गिरिशाच्छा व्वदामसि।

यथा नः सर्व्व मिज्जगदयक्ष्मः गुं सुमनाऽअसत् ।।4।।

हे कैलास पर शयन करने वाले! आपको प्राप्त करने के लिये हम मंगलमय वचन से आपकी स्तुति करते हैं। हमारे समस्त पुत्र-पौत्र तथा पशु आदि जैसे भी नीरोग तथा निर्मल मनवाले हों, वैसा आप करें ।।4।।

अद्ध्यवोचदधिवक्ता प्प्रथमो दैव्व्यों भिषक्।

अहींश्च सर्व्वांजम्भयन्त्सर्व्वाश्च्च यातुधान्योधराचीः परासुव ।।5।।

अत्यधिक वन्दनशील, समस्त देवताओं में मुख्य, देवगणों के हितकारी तथा रोगों का नाश करने वाले रूद्र का मुझसे सबसे अधिक बोलें, जिससे मैं सर्वश्रेष्ठ हो जाऊँ। हे रूद्र ! समस्त सर्प, व्याघ्र आदि हिंसकों का नाश करते हुए आप अधोगमन कराने वाली राक्षसियों को हमसे दूर कर दें ।।5।।

असौ यस्ताम्म्रोऽअरुणऽउत बब्भ्रुः सुमंगलः ।

ये चैनः रुद्द्राऽअभितो दिक्क्षु श्श्रिताः सहस्त्रशोवैषाः हेडऽईमहे ।।6।।

उदय के समय ताम्र वर्ण (अत्यन्त रक्त)अस्त काल में अरूण वर्ण (रक्त)अन्य समय में वभ्रू (पिंगल)वर्ण तथा शुभ मंगलोंवाला जो यह सूर्यरूप है, वह रूद्र ही है। किरण रूप में ये जो हजारों रूद्र इन आदित्य के सभी ओर स्थित हैं, इनके क्रोध का हम अपनी भक्ति मय उपासना से निवारण करते हैं ।।6।।

असौ योवसर्प्पति नीलग्ग्रीवो व्विलोहितः।

उतैनंगोपाऽअदृ श्श्रन्नदृश्श्रन्नुदहार्य्यः स दृष्ट्टो मृडयाति नः ।।7।।

जिन्हें अज्ञानी गोप तथा जल भरने वाली दासियाँ भी प्रत्यक्ष देख सकती हैं, विष धारण करने से जिनका कण्ठ नीलवर्णका हो गया है, तथापि विशेषतः रक्तवर्ण होकर जो सर्वदा उदय और अस्तको प्राप्त होकर गमन करते हैं, वे रविमण्डल-स्थित रूद्र हमें सुखी कर दें ।।7।।

नमोस्तु नीलग्ग्रीवाय सहस्त्राक्षाय मीढुषे।

यथो येऽअस्य सत्त्वानो हन्तेब्भ्यो करन्नमः ।।8।।

नीलकण्ठ, सहस्त्रनेत्रवाले, इन्द्रस्वरूप और वृष्टि करने वाले रूद्र के लिये मेरा नमस्कार है। उस रूद्र के जो भृत्य हैं, उनके लिये भी मैं नमस्कार करता हूँ ।।8।।

प्रमुंच धन्नवनस्त्वमुभयोरात्क्न्योंज्ज्याम्।

याश्च्चते हस्त्तऽइषवः परा ता भगवो व्वप ।।9।।

हे भगवान्! आप धनुष की दोनों कोटियों के मध्य स्थित प्रत्यंचका त्याग कर दें और अपने हाथ में स्थित बाणों को भी दूर फेंक दें ।।9।।

व्विज्जयन्धनुः कपर्द्दिनो व्विशल्ल्यो बाणवा२ँ।।ऽउत।

अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषंगधिः ।।10।।

जटाजूट धारण करने वाले रूद्रका धनुष प्रत्यंचा रहित रहे, तूणीर में स्थित बाणों के नोंकदार अग्रभाग नष्ट हो जायँ, इन रूद्रके जो बाण हैं, वे भी नष्ट हो जायँ तथा इनके खड्ग रखने का कोश भी खड्गरहित हो जाय अर्थात् वे रूद्र हमारे प्रति सर्वथा शस्त्ररहित हो जायँ ।10।।

या ते हेतिर्म्मीढुष्ट्टम हस्त्ते बभूव ते धनुः ।

तयास्म्मा न्विश्श्वत स्त्वमयक्ष्मया परिभुज ।।11।।

अत्यधिक वृष्टि करने वाले हे रूद्र! आपके हाथ में जो धनुष रूप आयुध है, उस सुदृढ़ तथा अनुपद्रवकारी धनुष से हमारी सब ओर से रक्षा कीजिये।।11।।

परि ते धन्न्वनो हेतिरस्म्मान्वृणक्तु व्विश्श्वतः।

अथो यऽइषुधिस्त्तवारेऽ अस्म्मन्निधेहि तम् ।।12।।

हे रूद्र ! आपका धनुष रूप आयुध सब ओर से हमारा त्याग करे अर्थात् हमें न मारे और आपका जो बाणों से भरा तरकश है, उसे हमसे दूर रखिये ।।12।।

अवतत्त्य धनुष्ट्वः सहस्त्राक्ष शतेषुधे।

निशीर्य्य शल्ल्या नाम्मुख शिवो नः सुमना भव।।13।।

सौ तूणीर और सहस्त्र नेत्र धारण करने वाले हे रूद्र! धनुष की प्रत्यंचा दूर करके और बाणों के अग्र भागों को तोड़कर आप हमारे प्रति शान्त और शुद्ध मनवाले हो जायँ।।13।।

नमस्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे।

उभाब्भ्यामुत ते नमो बाहुब्भ्यान्तव धन्न्वने ।।14।।

हे रूद्र ! शत्रुओं को मारने में प्रगल्भ और धनुषपर न चढ़ाये गये आपके बाण के लिये हमारा प्रणाम है। आपकी दोनों बाहुओं और धनुष के लिये भी हमारा प्रणाम है ।।14।।

मा नो महान्तुमुतमानोऽ अर्ब्भकम्मा नऽउक्षन्तमुत मानऽक्षितम्।

मा नो व्वधीः पितरम्मोत मातरम्मा नः प्प्रियास्त्तन्वो रुद्द्र रीरिषः।।15।।

हे रूद्र! हमारे गुरू, पितृव्य आदि वृद्धजनों को मत मारिये, हमारे बालक की हिंसा मत कीजिये, हमारे तरूण को मत मारिये, हमारे गर्भस्थ शिशु का नाश मत कीजिये, हमारे माता-पिता को मत मारिये तथा हमारे प्रिय पुत्र-पौत्र आदिकी हिंसा मत कीजिये ।।15।।

मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मानोऽअश्श्वे षुरीरिषः।

मा नो व्वीरान्नुद्द्र भामिनो व्वधीर्हविष्म्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ।।16।।

हे रूद्र! हमारे पुत्र-पौत्र आदि का विनाश मत कीजिये, हमारी आयु को नष्ट मत कीजिये, हमारी गौओं को मत मारिये, हमारे घोड़ों का नाश मत कीजिये, हमारे क्रोधयुक्त वीरों की हिंसा मत कीजिये। हवि से युक्त होकर हम सब सदा आपका आवाहन करते हैं।।16।।

नमो हिरण्ण्यबाहवे सेनान्न्ये दिशांच पतये नमो नमोव्वृक्षेब्भ्यो हरिकेशेब्भ्यः पशूनाम्पतये नमो नमः शष्पिंजराय त्त्विषीमते पथीनाम्पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्ट्टानाम्पतये

नमो नमो बब्भ्लुशाय॥17॥

भुजाओं में सुवर्ण धारण करने वाले सेनानायक रूद्र के लिये नमस्कार है, दिशाओं के रक्षक रूद्र के लिये नमस्कार है, पूर्ण रूप् हरे केशों वाले वृक्ष रूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, जीवों का पालन करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, कान्तिमान् बालतृण के समान पीत वर्णवाले रूद्र के लिये नमस्कार है, मार्गों के पालक रूद्र के लिये नमस्कार है, नीलवर्ण-केश से युक्त तथा मंगल के लिये यज्ञोपवीत धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, गुणों से परिपूर्ण मनुष्यों के स्वामी रूद्र के लिये नमस्कार है॥17॥

नमो बब्भ्लुशाय व्व्याधिनेन्नाम्पतये नमो नमो भवस्य हेत्त्यै जगताम्पतये नमो रुद्द्रायाततायिने क्क्षेत्त्राणाम्पतये नमो नम: सूतायाहन्त्यै व्वनानाम्पतये नमो नमोरोहिताय॥18॥

कपिल (वर्णवाले अथवा वृषभपर आरूढ़ होने वाले) तथा शत्रुओं को बेधने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, अन्नों पालक रूद्र के लिये नमस्कार है, संसार के आयुधरूप (अथवा जगन्निवर्तक) रूद्र के लिये नमस्कार है, जगत् का पाल करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, उद्यत आयुध वाले रूद्र के लिये नमस्कार है देवों के पालन करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है न मारने वाले सारथी रूद्र के लिये नमस्कार है, तथा वनों के रक्षक रूद्र के लिये नमस्कार है॥18॥

नमो रोहिताय स्त्थपतये व्वृक्षाणाम्पतये नमो नमो भुवन्तये व्वारिवस्कृतायौषधीनाम्पतये नमो नमो मन्त्रिणे व्वाणिजाय कक्क्षाणाम्पतये नमो नमऽउच्चैर्ग्घोषायाक्क्रन्दयते पत्तीनाम्पतये नमो नम: कृत्स्नायतया ॥19॥

लोहितवर्णवाले तथा गृह आदि के निर्माता विश्वकर्मारूप रूद्र के लिये नमस्कार है, वृक्षों के पालक रूद्र के लिये नमस्कार है, भुवन का विस्तार करने वाले तथा समृद्धि कारक रूद्र के लिये नमस्कार है, ओषधियों के रक्षक रूद्र के लिये नमस्कार है, आलोचकुशल व्यापारकर्त्तारूप रूद्र के लिये नमस्कार है, वन के लतावृक्ष आदि के पालक रूद्र के लिये नमस्कार है, युद्ध में उग्र शब्द करने वाले तथा शत्रुओं को रूलाने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, (हाथी, घोड़ा, रथ, पैदल आदि) सेनाओं के पालक रूद्र के लिये नमस्कार है ॥19॥

नम: कृत्स्नायतयाधावते सत्त्वनाम्पतये नमो नमः सह मानाय निव्व्याधिनऽ आव्व्याधिनीनाम्पतये नमो नमो निषंगिणे ककुभाय स्तेनानाम्पतये नमो नमो निचेरवे परिचरायारण्ण्या नाम्पतये नमो नमो व्वंचले॥20॥

कर्णपर्यन्त प्रत्यंचा खींचकर युद्ध में शीघ्रता पूर्वक दौड़ने वाले (अथवा सम्पूर्ण लाभ की प्राप्ति कराने वाले) रूद्र के लिये नमस्कार है, शरणागत प्राणियों के पालक रूद्र के लिये नमस्कार है, शत्रुओं का तिरस्कार करने वाले तथा शुत्रओं को बेधने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, सब प्रकार से प्रहार करने वाली शूर सेनाओं के रक्षक रूद्र के लिये नमस्कार है, खड्ग चलाने वाले महान् रूद्र के लिये

नमस्कार है, गुप्त चोरों के रक्षक रूद्र के लिये नमस्कार है, अपहार की बुद्धि से निरन्तर गतिशील तथा हरण की इच्छा से आपण (बाजार)-वाटिका आदि में विचरण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है तथा वनों के पालक रूद्र के लिये नमस्कार है ।।20।।

नमो व्वंचते परिवंचते स्त्तायूनाम्पतये नमो नमो निषंगिणऽइषुधिमते तस्क्कराणाम्पतये नमो नम: सृकायिब्भ्यो जिघा: सद्भ्यो मुष्णताम्पतये नमो नमो सिमद्भ्यो नक्तंचरद्भ्यो व्विकृन्तानाम्पतये नम:।।21।।

वंचना करने वाले तथा अपने स्वामी को विश्वास दिलाकर धन हरण करके उसे ठगने वाले रूद्र रूप के लिये नमस्कार है, गुप्त धन चुराने वालों के पालक रूद्रके लिये नमस्कार है, बाण तथा तूणीर धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, प्रकटरूप में चोरी करने वालों के पालक रूद्र के लिये नमस्कार है, वज्र धारण करने वाले तथा शत्रुओं को मारने की इच्छावाले रूद्रके लिये नमस्कार है, खेतों में धान्य आदि चुराने वालों के रक्षक रूद्र के लिये नमस्कार है, प्राणियों पर घात करने के लिये खड्ग धारण कर रात्रि में विचरण करने वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है तथा दूसरों को काटकर उनका धन हरण करने वालों के पालक रूद्र के लिये नमस्कार है।।21।।

नमऽ उष्णीषिणे गिरिचराय कुलुंचानाम्पतये नमो नमऽइषुमद्भ्यो धन्वायिब्भ्यश्च्च वो नमो नमऽ आतन्वानेब्भ्य: प्प्रतिदधाने ब्भ्यश्च्च वो नमो नमऽ आयच्छद्भ्योस्यद्भ्यश्च्च वो नमो नमोव्विसृजद्भ्य» ।।22।।

सिर पर पगड़ी धारण करके पर्वतादि दुर्गम स्थानों में विचरने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, छलपूर्वक दूसरों के क्षेत्र, गृह आदिका हरण करने वालों के पालक रूद्र रूप के लिये नमस्कार है, लोगों को भयभीत करने के लिये बाण धारण करने वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, धनुष धारण करने वाले आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, धनुष पर बाण का संधान करने वाले आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, धनुष को भली भाँति खींचने वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, बाणों को सम्यक् छोड़ने वाले आप रूद्रों के लिये नमस्कार है।।22।।

नमो व्विसृजद्भ्यो व्विद्ध्यद्भ्यश्च्च वो नमो नम: स्वपद्भ्यो जाग्ग्रद्भ्यश्च्च वो नमो नम: शयानेब्भ्यऽ आसीनेब्भ्यश्च्च वो नमो नमस्त्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च्च वो नमा नम: सभाब्भ्य:।।23।।

पापियों के दमन के लिये बाण चलाने वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, शत्रुओं को बेधने वाले आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, स्वप्नावस्था का अनुभव करने वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, जाग्रत् अवस्था वाले आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, सुषुप्ति अवस्था वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, बैठे हुए आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, स्थित रहने वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, वेगवान् गतिवाले आप रूद्रों के लिये नमस्कार है।।23।।

नम: सभाब्भ्य: सभापतिब्भ्यश्च्च वो नमो नमो श्श्वेब्भ्यो श्श्वपतिब्भ्यश्च्च वो नमो

नमऽआव्व्याधिनीब्भ्यो व्विविद्ध्यन्तीब्भ्यश्च्च वो नमो नमऽ उगाणाब्भ्यस्तृ: गं हतीब्भ्यश्च्च वो नमो नमो गणेब्भ्य: ।।24।।

सभारूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, सभापतिरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, अश्वरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, अश्वपतिरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, सब प्रकार से बेधन करने वाले देवसेनारूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, विशेषरूप से बेधन करने वाले देवसेनारूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, उत्कृष्ट भृत्यसमूहों वाली ब्राह्मी आदि मातास्वरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है और मारने में समर्थ दुर्गा आदि माता स्वरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है ।।24।।

नमो गणेब्भ्यो गणपतिब्भ्यश्च्च वो नमो नमो व्व्रतेब्भ्यो व्व्रातपतिब्भ्यश्च्च वो नमो नमो गृत्त्सेब्भ्यो गृत्त्सपतिब्भ्यश्च्च वो नमो नमो व्विरूपेब्भ्यो व्विश्श्वरूपेब्भ्यश्च्च वो नमो नमः सेनाब्भ्यः।।25।।

देवानुचर भूतगणरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, भूतगणों अधिपतिरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, भिन्न-भिन्न जाति समूहरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, विभिन्न जाति समूहों के अधिपतिरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, मेधावी ब्रह्मजिज्ञासुरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, निकृष्ट रूपवाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, नानाविध रूपों वाले विश्वरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है।।25।।

नमः सेनाब्भ्यः सेनानिब्भ्यश्च्च वो नमो नमो रथिब्भ्योऽअर थेब्भ्यश्च्च वो नमो नम: क्क्षतृब्भ्य: सड्ग्रहीतृब्भ्यश्च्च वो नमो महद्भ्यो ऽ अब्भकेब्भ्यश्च्च वो नम:।।26।।

सेनारूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, सेनापतिरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, रथीरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, रथविहीन आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, रथों के अधिष्ठातारूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, सारथिरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, जाति तथा विद्या आदि से उत्कृष्ट प्राणिरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, प्रमाण आदि से अल्परूप रूद्रों के लिये नमस्कार है ।।26।।

नमस्त्तक्क्षब्भ्यों रथकारेब्भ्यश्च्च वो नमो नमः कुलालेब्भ्यः कम्म्मारेब्भ्यश्च्च वो नमो नमो निषादेब्भ्य: पुंजिष्ट्ब्भ्यश्च्च वो नमो नम: श्वनिब्भ्यो मृगयुब्भ्यश्च्च वो नमो नमः श्वब्भ्य:।।27।।

शिल्पकाररूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, रथ निर्मातारूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, कुम्भकाररूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, लौहकाररूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, वन-पर्वतादि में विचरने वाले निषादरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, पक्षियों को मारने वाले पुल्कसादिरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, श्वानों के गले में बँधी रस्सी धारण करने वाले रूद्र रूपों के लिये नमस्कार है और मृगों की कामना करने वाले व्याधरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है।।27।।

नमः श्वब्भ्यः श्वपतिब्भ्यश्च्च वो नमो नमो भवाय च रुद्द्राय च नम:शर्व्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्ग्रीवाय च शिति कण्ठाय च म: कपर्द्दिने।।28।।

श्वानरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, श्वानों के स्वामीरूप आप रूद्रों के लिये नमस्कार है, प्राणियों के

उत्पत्तिकर्त्ता रूद्र के लिये नमस्कार है, दुःखों के विनाशक रूद्र के लिये नमस्कार है, पापों का नाश करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, पशुओं के रक्षक रूद्र के लिये नमस्कार है, हलाहलपान के फलस्वरूप नीलवर्ण के कण्ठवाले रूद्र के लिये नमस्कार है और श्वेत कण्ठवाले रूद्र के लिये नमस्कार है ।।28।।

नमः कपर्द्दिने च व्व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिशयाय च शिपिविष्ट्टाय च नमो मीढुष्ट्टमाय चेषुमते च नमो ह्रस्वाय।।29।।

जटाजूट धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, मुण्डित केशवाले रूद्र के लिये नमस्कार है, हजारों नेत्र वाले इन्द्ररूप रूद्र के लिये नमस्कार है, सैकड़ों धनुष धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, कैलास पर्वतपर शयन करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, सभी प्राणियों के अन्तर्यामी विष्णुरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, अत्यधिक सेचन करने वाले मेघरूप रूद्र के लिये नमस्कार है और बाण धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है।।29।।

नमः ह्रस्वाय च व्वामनाय च नमो बृहते च व्वर्षीयसे च नमो व्वृद्धाय च सवृधे च नमोग्याय च प्प्रथमाय च नमऽआशवे।।30।।

अल्प देहवाले रूद्र के लिये नमस्कार है, संकुचित अंगों वाले वामनरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, बृहत्काय रूद्र के लिये नमस्कार है, अत्यन्त वृद्धावस्था वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, अधिक आयुवाले रूद्र के लिये नमस्कार है, विद्याविनयादिगुणों से सम्पन्न विद्वानों के साथीरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, जगत् के आदिभूत रूद्र के लिये नमस्कार है और सर्वत्र मुख्यस्वरूप रूद्रके लिये नमस्कार है।।30।।

नमऽआशवे चाजिराय च नमः शीग्घ्रयाय च शीब्भ्याय च नमऽ-ऊर्म्म्याय चावस्वन्न्याय च नमो नादेयाय च द्द्वीप्प्याय च।।31।।

जगद्व्यापी रूद्र के लिये नमस्कार है, गतिशील रूद्र के लिये नमस्कार है, वेगवाली वस्तुओं में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है, जलप्रवाह में विद्यमान आत्मश्लाघी रूद्र के लिये नमस्कार है, जलतरंगों में व्याप्त रूद्र के लिये नमस्कार है, स्थिर जलरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, नदियों में व्याप्त रूद्रके लिये नमस्कार है और द्वीपों में व्याप्त रूद्र के लिये नमस्कार है,।।31।।

नमो ज्ज्येष्ट्ठाय च कनिष्ट्ठाय च नमः पूर्व्वजाय चापरजाय च नमो मद्ध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्न्याय च बुद्ध्न्याय च नमः सोब्भ्याय।।32।।

अति प्रशस्य ज्येष्ठरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, अत्यन्त युवा (अथवा कनिष्ठ)-रूप रूद्र के लिये नमस्कार है, जगत् के आदि में हिरण्यगर्भरूप से प्रादुर्भूत हुए रूद्र के लिये नमस्कार है, प्रलय के समय कालाग्निके सदृश रूप धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, अव्युत्पन्नेन्द्रिय रूद्र के लिये नमस्कार है अथवा विनीत रूद्र के लिये नमस्कार है, (गाय आदि के) जघनप्रदेश से उत्पन्न होने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है और वृक्षादिकों के मूल में निवास करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है।।32।।

नमः सोब्भ्या प्प्रतिसर्य्याय च नमो याम्म्याय च क्षेम्मयाय च नमः श्श्लोक्याय चावसन्न्याय च

नमऽउर्व्वर्य्याय च खल्ल्याय च नमो व्वन्न्याय॥33॥

गन्धर्वनगर में होने वाले (अथवा पुण्य और पापों से युक्त मनुष्यलोक में उत्पन्न होने वाले) रूद्र के लिये नमस्कार है, प्रत्यभिचार में रहने वाले (अथवा विवाह के समय हस्त सूत्र में उत्पन्न होने वाले) रूद्र के लिये नमस्कार है, पापियों को नरक की वेदना देने वाले यम के अन्तर्यामी रूद्र के लिये नमस्कार है, कुशलकर्म में रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, वेदके मन्त्र (अथवा यश)-द्वारा उत्पन्न हुए होने वाले धान्यरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, धान्यविवेचन-देश (खलिहान)-में उत्पन्न हुए रूद्र के लिये नमस्कार है॥33॥

नमो व्वन्न्याय च कक्ष्याय च नम: रवाय च प्प्रतिश्श्रवाय च नमऽआशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च नमो बिल्म्मिने॥34॥

वनों में वृक्ष-लतादिरूप रूद्र अथवा वरूणस्वरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, शुष्क तृण अथवा गुल्मों में रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, प्रतिध्वनिस्वरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, शीघ्रगामी सेनावाले रूद्रके लिये नमस्कार है, शीघ्रगामी रथवाले रूद्र के लिये नमस्कार है, युद्ध में शूरता प्रदर्शित करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, तथा शत्रुओं को विदीर्ण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है॥34॥

नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्म्मिणे च व्वरूथिने च नम: श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुब्भ्याय चाहनन्न्यायच नमो धृष्णवे॥35॥

शिरस्त्राण धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है कपास-निर्मित देहरक्षक (अंगरखा) धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, लोहे का बख्तर धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, गुंबदयुक्त रथवाले रूद्र के लिये नमस्कार है, संसार में प्रसिद्ध रूद्रके लिये नमस्कार है, प्रसिद्ध सेनावाले रूद्र के लिये नमस्कार है, दुन्दुभी (भेरी)-में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है, भेरी आदि वाद्यों को बजाने में प्रयुक्त होने वाले दण्ड आदि में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है॥35॥

नमो धृष्णवे च प्प्रमृशाय च नमो निषंगिणे चेषुधिमते च नमस्त्ती-क्ष्णेषवे चायुधिने च नम:स्वायुधाय च सुधन्न्वने च॥36॥

प्रगल्भ स्वभाव वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, सत्-असत्का विवेकपूर्वक विचार करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, खड्ग धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, तूणीर (तरकश) धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, तीक्ष्ण बाणोंवाले रूद्र के लिये नमस्कार है, नानाविध आयुधों को धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, उत्तम त्रिशूलरूप आयुध धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है और श्रेष्ठ पिनाक धनुष धारण करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है॥36॥

नमः स्रुत्त्याय च पत्थ्याय च नमः काट्ट्याय च नीप्प्याय च नमः कुल्ल्याय च सरस्याय च नमो नादेयाय च व्वैशन्ताय च नमः कूप्प्याय॥37॥

क्षुद्रमार्ग में विद्यमान रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, रथ-गज-अश्व आदि के योग्य विस्तृत मार्ग में विद्यमान रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, दुर्गम मार्गों में स्थित रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, जहाँ झरनों का जल गिरता है, उस भूप्रदेश में उत्पन्न हुए अथवा पर्वतों के अधोभाग में

विद्यमान रूद्रके लिये नमस्कार है, नहर के मार्ग में स्थित अथवा शरीरों में अन्तर्यामी रूप से विराजमान रूद्र के लिये नमस्कार है, अल्प सरोवर में रहनेवाले रूद्र के लिये नमस्कार है,।। 37।।

नमः कूप्प्याय चावट्टयाय च नमो व्वीध्रयाय चातप्पयाय च नमो मेग्घ्याय च व्विद्द्युत्त्याय च नमो व्वर्ष्याय चावर्ष्याय च नमो व्वात्त्याय।।38।।

कुपों में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है, गर्त स्थानों में रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, शरद्-ऋतु के बादलों अथवा चन्द्र-नक्षत्रादि-मण्डल में विद्यमान विशुद्ध स्वभाव वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, आतप (धूप)-में उत्पन्न होने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, मेघों में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है, विद्युत् में होने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, वृष्टि में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है तथा अवर्षण में स्थित रूद्र के लिये नमस्कार है।।38।।

नमो व्वात्त्याय च रेष्म्मयाय च नमो व्वास्तव्व्याय च वास्तुपाय च नमः सोमाय च रूद्द्राय च नमस्ताम्प्राय चारूणाय च नम: शंगवे।।39।।

वायु में रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, प्रलयकाल में विद्यमान रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, गृह-भूमि में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है अथवा सर्वशरीरवासी रूद्र के लिये नमस्कार है, गृहभूमि के रक्षक रूप रूद्र के लिये नमस्कार है, चन्द्रमा में स्थित अथवा ब्रह्मविद्या महाशक्ति उमासहित विराजमान सदाशिव रूद्र के लिये नमस्कार है, सर्वविध अनिष्ट के विनाशक रूद्र के लिये नमस्कार है, उदित होने वाले सूर्य के रूप में ताम्रवर्णके रूद्र के लिये नमस्कार है और उदय के पश्चात् अरूण (कुछ-कुछ रक्त) वर्ण वाले रूद्र के लिये नमस्कार है।।39।।

नम: शंगवे च पशुपतये च नमऽ उग्राय च भीमाय च नमोग्ग्रेवधाय च दूरेवधाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च नमो व्वृक्षेब्भ्यो हरिकेशेब्भ्यो नमस्त्ताराय।।40।।

भक्तों को सुख की प्राप्ति कराने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, जीवों के अधिपतिस्वरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, संहार-काल में प्रचण्ड स्वरूपवाले रूद्रके लिये नमस्कार है, अपने भयानक रूप में शत्रुओं को भयभीत करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, सामने खड़े होकर वध करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, दूर स्थित रहकर संहार करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, हनन करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है प्रलय काल में सर्वहन्ता रूप रूद्र के लिये नमस्कार है हरित वर्ण के पत्र रूप केशों वाले कल्पत स्वरूप् रूद्र के लिये नमस्कार है और ज्ञानोपदेश के द्वारा अधिकारी जनों को तारनेवाले रूद्रके लिये नमस्कार है।।40।।

नम:शम्भवाय च मयोभवाय च नम: शंकराय च मयस्क्कराय च नम: शिवाय च शिवतराय च।।41।।

सुख के उत्पत्ति स्थान रूप रूद्र के लिये नमस्कार है, भोग तथा मोक्ष का सुख प्रदान करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, लौकिक सुख देने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, वेदान्त शास्त्र में होने वाले ब्रह्मात्मैक्य साक्षात्कार स्वरूप् रूद्र के लिये नमस्कार है, कल्याणरूप निष्पाप रूद्र के लिये नमस्कार

है और अपने भक्तों को भी निष्पाप बनाकर कल्याणरूप कर देने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है।।41।।

नमः पार्य्याय चावार्य्याय च नम प्प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमस्तीर्त्थ्याय च कूल्ल्याय च नमः शष्प्याय च फेन्न्याय च नमः सिकत्त्याय।।42।।

संसार समुद्र के अपर तीर पर रहने वाले अथवा संसारातीत जीवन्मुक्त विष्णुरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, संसार व्यापी रूद्र के लिये नमस्कार है, दुःख-पापादि से प्रकृष्ट रूप से तारने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, उत्कृष्ट ब्रह्म साक्षात्कार कराकर संसार से तारने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है ,तीर्थस्थलों में प्रतिष्ठित रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है,गग्ङा आदि नदियों के तटपर उत्पन्न रहने वाले कुशाङ्कुरादि बालतृणरूप रूद्र के लिये नमस्कार है और जलके विकार स्वरूप फेन में विद्यमान रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है ।।42।।

नमः सिकत्त्या च प्रवाह्य्याय च नमः किः शिलाय च क्षयणाय च नमः कपर्द्दिने च पुलस्तये च नमऽइरिण्ण्यायच प्प्रपत्थ्याय च नमो व्व्रज्ज्याय।।43।।

नदियों की बालुकाओं में होने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, नदी आदि के प्रवाह में होने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, क्षुद्र पाषाणों वाले प्रदेश के रूप में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है, स्थिर जल से परिपूर्ण प्रदेशरूप रूद्र के लिये नमस्कार है जटामुकुटधारी रूद्र के लिये नमस्कार है, शुभाशुभ देखने की इच्छा से सदा सामने खड़े रहने वाले अथवा सर्वान्तर्यामीस्वरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, उसर भूमि रूप रूद्र के लिये नमस्कार है और अनेक जनों से संसेवित मार्ग में होने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है,।।43।।

नमो व्व्रज्ज्याय च गोष्ठ्याय नमस्तल्प्याय च गेह्य्याय च नमो ह्रदय्याय च निवेष्प्याय च नमः काट्ट्याय च गव्हरेष्ठ्याय च नमः शुष्क्क्याय ।।44।।

गो समूह में विद्यमान अथवा व्रज में गोपेश्वर के रूप में रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है , गोशालाओं में रहने वाले गोष्ठ्य रूप रूद्र के लिये नमस्कार है शय्या में विद्यमान रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, गृह में विद्यमान रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है , ह्रदय में रहने वाले जीव रूपी रूद्र के लिये नमस्कार है, जल के भवर में रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है दुर्ग-अरण्य अदि स्थानों में रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है और विषम गिरि गुहा आदि अथवा गम्भिर जल में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है ।।44।।

नमः शुष्क्याय च हरित्यायच नमः पा गं सव्व्यायच रजस्यायचनमो लोप्यायचलोप्याय च नम उव्व्र्याय च सूर्व्याय च नमः पर्ण्णाय।।45।।

काष्ठ आदि शुष्क पदार्थों में भी सत्तारूप से विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है, आर्द्र काष्ठ आदि में सत्तारूप से विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है, धूलि आदि में विराजमान पांसव्यरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, रजोगुण अथवा प्रलय में भी साक्षी बनकर रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, सम्पूर्ण इन्द्रियों के व्यापार की शान्ति होने पर भी अथवा प्रलय में भी साक्षी में रहने वाले रूद्र के लिये

नमस्कार है, बल्वजादि तृणविशेषों में होने वाले उलप्यरूपी रूद्र के लिये नमस्कार है, बडवानल में विराजमान रूद्र के लिये नमस्कार है और प्रलयाग्नि में विद्यमान रूद्र के लिये नमस्कार है।।45।।

नम: पर्ण्णाय च पर्ण्णशदाय च मनऽउद्गुरमाणाय चाभिग्घ्नते च नमऽआखिदते च प्प्रखिदते च नमऽइषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च्च वो नमो नमो वः किरिकेब्भ्यो देवानाः हृदयेब्भ्यो नमो व्विचिन्वत्त्केब्भ्यो नमो व्विक्षिणत्त्केब्भ्यों नमऽआनिर्हतेब्भ्य»।।46।।

वृक्षों के पत्र रूप रूद्र के लिये नमस्कार है, वृक्ष-पर्णों के स्वतः शीर्ण होने के काल-वसन्त-ऋतुरूप रूद्र के लिये नमस्कार है, पुरूषार्थपरायण रहने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, सब ओर शत्रुओं का हनन करने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, सब ओर से अभक्तों को दीन-दुःखी बना देने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, अपने भक्तों के दुःखों से दुःखी होने के कारण दया से आर्द्रहृदय होने वाले रूद्र के लिये नमस्कार है, बाणों का निर्माण करने वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, ध्नुषों का निर्माण करने वाले रूद्रों के लिये नमस्कार है, वृष्टि आदि के द्वारा जगत् का पालन करने वाले देवताओं के हृदयभूत अग्नि-वायु-आदित्यरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है, धर्मात्मा तथा पापियों का भेद करने वाले अग्नि आदि रूद्रों के लिये नमस्कार है, भक्तों पाप-रोग-अमंगलको दूर करने वाले तथा पाप-पुण्य के साक्षीस्वरूप अग्नि आदि रूद्रों के लिये नमस्कार है और सृष्टि के आदि में मुख्यतया इन लोकों से निर्गत हुए अग्नि-वायु-सूर्यरूप रूद्रों के लिये नमस्कार है।।46।।

द्रापेऽ अन्धसस्प्ते दरिद्द्र नीललोहित।

आसाम्प्रजानामेषाम्पशूनाम्मा भेर्म्मारोङ्ङ्मोचनः किंचनाममत्।।47।।

हे द्रापे (दुराचारियों को कुत्सित गति प्राप्त कराने वाले)! हे अन्धसस्पते (सोमपालक)! हे दरिद्र (निष्परिग्रह)! हे नीललोहित! हमारी पुत्रादि प्रजाओं तथा गो आदि पशुओं को भयभीत मत कीजिये, उन्हें नष्ट मत कीजिये और उन्हें किसी भी प्रकार के रोग से ग्रसित मत कीजिये।।47।।

इमा रूद्द्राय तवसे कपर्द्दिने क्षयद्द्वीराय प्प्रभरामे मती।

यथा शमसद्द्विपदे चतुष्प्पदे विश्श्वम्पुष्ट्टङ्ग्रामेऽ अस्मिन्ननातुरम।।48।।

जिस प्रकार से मेरे पुत्रादि तथा गौ आदि पशुओं को कल्याण की प्राप्ति हो तथा इस ग्राम में सम्पूर्ण प्राणी पुष्ट तथा उपद्रवरहित हों, इसके निमित्त हम अपनी इन बुद्धियों को महाबली, जटाजूटधारी तथा शूरवीरों के निवासभूत रूद्र के लिये समर्पित करते हैं।।48।।

या ते रूद्द्र शिवा तनूः शिवा व्विश्श्वाहा भेषजी।

शिवा रूतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे।।49।।

हे रूद्र ! आपका जो शान्त, निरन्तर कल्याणकारक, संसार की व्याधि निवृत्त करने वाला तथा शारीरिक व्याधि दूर करने का परम औषधिरूप शरीर है, उससे हमारे जीवन को सुखी कीजिये।।49।।

परि नो रूद्द्रस्य हेतिर्व्वृणक्त्तु परि त्त्वेषस्य दुर्म्मतिरघायोः।

अव स्थिरा मघवद्भ्यस्त्तनुष्व मीढ्स्तोकाय तनयाय मृड।।50।।

रूद्र के आयुध हमारा परित्याग करें और क्रुद्ध हुए द्वेषी पुरूषों की दुर्बुद्धि हम लोगों को वर्जित कर दे (अर्थात् उनसे हमलोगों को किसी प्रकार की पीड़ा न होने पावे)। अभिलषित वस्तुओं की वृष्टि करने वाले हे रूद्र ! आप अपने धनुष को प्रत्यंचारहित करके यजमान-पुरूषों के भयको दूर कीजिये और उनके पुत्र-पौत्रों को सुखी बनाइये।।50।।

मीढुष्ट्म शिवतम शिवो नःसुमना भव।

परमे वृक्षऽआयु धन्निधाय कृत्तिँव्वसनऽआचार पिनाकम्बिभ्रदागहि।।51।।

अभीष्ट फल और कल्याणों की अत्यधिक वृष्टि करने वाले हे रूद्र ! आप हम पर प्रसन्न रहें, अपने त्रिशूल आदि आयुधों को कहीं दूरस्थित वृक्षों पर रख दीजिये, गजचर्म का परिधान धारण करके तप कीजिये और केवल शोभा के लिये धनुष धारण करके आइये।।51।।

व्विकिरद्द्र व्विलोहित नमस्त्तेऽ अस्त्तु भगवः।

यास्त्ते सहस्त्रः हेतयोन्नयमस्म्मान्निवपन्तु ताः।।52।।

विविध प्रकार के उपद्रवों का विनाश करने वाले तथा शुद्धस्वरूप वाले हे रूद्र ! आपको हमारा प्रणाम है, आपके जो असंख्य आयुध हैं, वे हमसे अतिरिक्त दूसरों पर जाकर गिरें।।52।।

सहस्त्राणि सहस्त्रशो बाह्वोस्त्तव हेतय।

तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि।।53।।

गुण तथा ऐश्वर्यों से सम्पन्न हे जगत्पति रूद्र ! आपके हाथों में हजारों प्रकार के जो असंख्य आयुध है, उनके अग्रभागों (मुखों)- को हमसे विपरीत दिशाओं की ओर कर दीजिये (अर्थात् हम पर आयुधों का प्रयोग मत कीजिये)।।53।।

असङ्ख्याता सहस्त्राणि ये रूद्द्राऽअधि भम्म्याम्।

तेषाः सहस्त्रयोजनेव धन्न्वानि तन्म्मसि।।54।।

पृथ्वी पर जो असंख्य रूद्र निवास करते है, उनके असंख्य धनुषों को प्रत्यंचारहित करके हम लोग हजारों कोसों के पार जो मार्ग है, उस पर ले जाकर डाल देते हैं।।54।।

अस्म्मिन्न्महत्त्यर्ण्णवेन्तरिक्षे भवाऽअधि।

तेषाः सहस्त्रयोजनेव धन्न्वाति तन्म्मसि।।55।।

मेघ मण्डल से भरे हुए इस महान् अन्तरिक्ष में जो रूद्र रहते है, उनके असंख्य धनुषों को प्रत्यंच्चारहित करके हम लोग हजारों कोसों के पारस्थित मार्ग पर ले जाकर डाल देते हैं।।55।।

नीलग्ग्रीवाः शितिकण्ठा दिवः रूद्द्राऽउपश्रिताः।

तेषाः गं सहस्त्रयो जनेवधन्न्वानि तन्म्मसि।।56।।

जिनके कण्ठका कुछ भाग नीलवर्णका है और कुछ भाग श्वेतवर्ण का है तथा जो द्युतोक में निवास करते हैं, उन रूद्रों के असंख्य धनुषों को प्रत्यंच्चारहित करके हम लोग हजारों कोस दूरस्थित मार्ग पर ले जाकर डाल देते हैं।।56।।

नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्व्वाऽ अधः क्षमाचरा।

तेषाः सहस्त्रयो जनेव धन्वानि तन्मसि।।57।।

कुछ भाग में नीलवर्ण और कुछ भाग में शुक्लवर्ण के कण्ठवाले तथा भूमि के अधोभाग में स्थित पाताल लोक में निवास करने वाले रूद्रों के असंख्य धनुषों को प्रत्यंच्चारहित करके हम लोग हजारों कोस दूरस्थित मार्ग पर ले जाकर डाल देते हैं।।57।।

ये व्वृक्षेषु शष्प्पिंजरा नीलग्रीवा व्विलोहिताः

तेषाः गुं सहस्त्रयो जनेव धन्वानि तन्मसि।।58।।

बाल तृण के समान हरित वर्ण के तथा कुछ भाग में नील वर्ण एवं कुछ भाग में शुक्लवर्ण के कण्ठवाले, जो रूधिररहित रूद्र (तेजोमय शरीर रहने से उन शरीरों में रक्त और मांस नहीं रहता) हैं, वे अश्वत्थ आदि के वृक्षों पर रहते हैं। उन रूद्रों के धनुषों को प्रत्यंच्चारहित करके हम लोग हजारों कोसों के पारस्थित मार्ग पर डाल देते हैं।।58।।

ये भूतानामधिपतयो व्विशिखासः कपर्द्दिनः।

तेषाः गुं सहस्त्रयो जनेवा धन्वानि तन्मसि।।59।।

जिनके सिर पर केश नहीं हैं, जिन्होंने जटाजूट धारण कर रखा है और जो पिशाचों के अधिपति है, उन रूद्रों के धनुषों को प्रत्यंच्चारहित करके हम लोग हजारों कोसों के पारस्थित मार्ग पर ले जाकर डाल देते हैं।।59।।

ये पथाम्पथिरक्षयऽ ऐलबृदाऽ आयुर्य्युधः।

तेषाः गुं सहस्त्रयो जनेवा धन्वानि तन्मसि।।60।।

अन्न देकर प्राणियों का पोषण करने वाले, आजीवन युद्ध करने वाले, लौकिक-वैदिक मार्ग का रक्षण करने वाले तथा अधिपति कहलाने वाले जो रूद्र हैं, उनके धनुषों को प्रत्यंच्चारहित करके हमलोग हजारों कोसों के पारस्थित मार्ग पर जाकर डाल देते हैं।।60।।

ये तीर्त्थानि प्प्रचरन्ति सृकाहस्त्ता निषंगिणः।

तेषाः गुं सहस्त्रयो जनेवा धन्वानि तन्मसि।।61।।

वज्र और खड्ग आदि आयुधों को हाथ में धारण कर जो रूद्र तीर्थों पर जाते हैं, उनके धनुषों को प्रत्यंच्चारहित करके हम लोग हजारों कोसों के पारस्थित मार्ग पर ले जाकर डाल देते हैं।।61।।

येन्नेषु व्विविद्ध्यन्ति पात्त्रेषु पिबतो जनान्।

तेषाःगुं सहस्त्रयो जनेवा धन्वानि तन्मसि।।62।।

खाये जाने वाले अन्नों में स्थित जो रूद्र अन्नभोक्ता प्राणियों को पीड़ित करते हैं (अर्थात् धातु वैषम्य के द्वारा उनमें रोग उत्पन्न करते हैं) और पात्रों में स्थित दुग्ध आदि में विराजमान जो रूद्र, उनका पान करने वाले लोगों को (व्याधि आदि के द्वारा) कष्ट देते हैं, उनके धनुषों को प्रत्यंच्चारहित करके हम

लोग हजारों कोस दूरस्थित मार्ग पर जाकर डाल देते हैं।।62।।

यऽएतावन्तश्च्च भूयाः गुं सश्च्च दिशो रूद्द्रा व्वितस्त्थिरे।

तेषाः गुं सहस्त्रयो जनेवा धन्वानि तन्न्मसि।।63।।

दसों दिशाओं में व्याप्त रहने वाले अनेक रूद्र हैं, उनके धनुषों को प्रत्यंच्चारहित करके हम लोग हजारों कोस दूरस्थित मार्ग पर ले जाकर डाल देते हैं।।63।।

नमोस्त्तु रूद्द्रेब्भ्यो ये दिवि येषाँव्वर्षमिषवः।

तेब्भ्यो दश प्प्राचीर्द्दश दक्षिणादश प्प्रतीचीर्द्दशोर्द्ध्वाः।

तेब्भ्यो नमोऽअस्त्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्म्मो यश्च्च नो द्वेष्ट्टि

तमेषांजम्भे दद्ध्मः।।64।।

जो रूद्र द्युलोक में विद्यमान हैं तथा जिन रूद्रों के बाण वृष्टि रूप हैं, उन रूद्रों के लिये नमस्कार है। उन रूद्रों के लिये पूर्व दिशा की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ, दक्षिण की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ, पश्चिम की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ, उत्तर की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ और ऊपर की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ (अर्थात् हाथ जोड़कर सभी दिशाओं में उन रूद्रों के लिये प्रणाम करता हूँ)। वे रूद्र हमारी रक्षा करें और वे हमें सुखी बनायें। वे रूद्र जिस मनुष्य से द्वेष करते हैं, हमलोग जिससे द्वेष करते हैं और जो हम से द्वेष करता है, उस पुरूष को हम लो उन रूद्रों के भयंकर दाँतों वाले मुख में डालते हैं (अर्थात् वे रूद्र हमसे द्वेष करने वाले मनुष्य का भक्षण कर जायँ)।।64।।

नमोस्त्तु रूद्द्रेब्भ्यो येन्तरिक्षे येषाँव्वातऽइषवः।

तेब्भ्यो दश प्प्राचीर्द्दश दक्षिणा दश प्प्रतीचीर्द्दशोदीचीर्द्दशोर्द्ध्वाः।

तेब्भ्यो नमोऽअस्त्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्म्मो यश्च्च नो

द्वेष्ट्टि तमेषांजम्भे दद्ध्मः।।65।।

जो रूद्र अन्तरिक्षमें विद्यमान हैं तथा जिन रूद्रों के बाण पवनरूप हैं, उनरूद्रों के लिये नमस्कार है। उन रूद्रों के लिये पूर्व दिशा की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ, दक्षिण की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ, पश्चिम की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ, उत्तर की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ और ऊपर की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ (अर्थात् हाथ जोड़कर सभी दिशाओं में उन रूद्रों के लिये प्रणाम करता हूँ)। वे रूद्र हमारी रक्षा करें और वे हमें सुखी बनायें। वे रूद्र जिस मनुष्य से द्वेष करते हैं, हम लोग जिससे द्वेष करते हैं और जो हमसे द्वेष करता है, उस पुरूष को हम लोग उन रूद्रों के भयंकर दाँतों वाले मुख में डालते हैं (अर्थात् वे रूद्र हम से द्वेष करने वाले मनुष्य का भक्षण कर जायँ)।।65।।

नमोस्त्तु रूद्द्रेब्भ्यो ये पृथिव्वयाँ य्येषामन्नमिषवः।

तेब्भ्यो दश प्प्राचीर्द्दश दक्षिणा दश प्प्रतीचीर्द्दशोदीचीर्द्दशोर्द्ध्वाः।

तेब्भ्यो नमोऽअस्त्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्म्मो यश्च्च नो

द्वेष्ट्टि तमेषांजम्भेदद्ध्यः।।66।।

जो रूद्र पृथ्वीलोक में स्थित हैं तथा जिनके बाण अन्नरूप हैं, उन रूद्रों के लिये नमस्कार है। उन रूद्रों के लिये पूर्व दिशा की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ, दक्षिण दिशा की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ, पश्चिम की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ, उत्तर की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ और ऊपर की ओर दसों अंगुलियाँ करता हूँ (अर्थात् हाथ जोड़कर सभी दिशाओं में उन रूद्रों के लिये प्रणाम करता हूँ)। वे रूद्र हमारी रक्षा करें और वे हमें सुखी बनावें। वे रूद्र जिस मनुष्य से द्वेष करते हैं, हमलोग जिससे द्वेष करते हैं और जो हमसे द्वेष करता है, उस पुरूष को हम लोग उन रूद्रों के भयंकर दाँतों वाले मुख में डालते हैं (अर्थात् वे रूद्र हमसे द्वेष करने वाले मनुष्य का भक्षण कर जायँ)।।66।।

इस प्रकार रूद्रपाठ (रूद्राष्टाध्यायी)-का पाँचवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।।5।

3.4-सारांश

इस इकाई में महर्षि याज्ञवल्क्य ने शतरूद्रिय पाठ को अमृतत्व का साधन माना है। शतरूद्रिय पाठ करने वाला, पूत होता है, वायुपूत होता है, आत्मपूत होता है, सुरापान या मदिरापान दोष से छूटता है, ब्रह्म हत्या के दोष से मुक्त हो जाता है। शुभाशुभ कर्मों से उद्धार पाठ करता है। सदाशिव आश्रित हो जाता है। इस प्रकार उसे मोक्ष जन्म मरण विमुक्त होकर कैवल्य प्राप्त होता है।

3.5 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
नमोस्तु	नमस्कार है
रूद्र्रेभ्यो	उन रूद्रों के लिये
ये पृथ्वियाँ	जो रूद्र पृथ्वीलोक में स्थित हैं
येषामन्नमिषवः	जिनके बाण अन्नरूप हैं
तेभ्यो दश	उन रूद्रों के लिये दसों
प्प्राचीर्द्दश	पूर्व दिशा की ओर
दक्षिणा,	अंगुलियाँ करता हूँ
तेभ्यो	उन के लिये
नमोऽअस्तु	उन रूद्रों के लिये
ते नोवन्तु	प्रणाम करता हूँ
ते नो मृडयन्तु	दसों अंगुलियाँ करता हूँ,
ते यन्द्विष्म्मो	वे हमें सुखी बनावें।
यश्च्च नो	हमलोग जिससे द्वेष करते हैं

3.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न -उत्तर

1-प्रश्न- जौ, गेहूँ, चावल इन तीनों का आटा समान भाग लेकर इसका निर्माण किया जाता है। इसकी पूजा किसकी प्राप्ति के लिए करनी चाहिए?

उत्तर- जौ, गेहूँ, चावल इन तीनों का आटा समान भाग लेकर इसका निर्माण किया जाता है। इसकी पूजा सौन्द्रर्य, स्वास्थ्य और पुत्र-प्राप्ति के लिए करनी चाहिए।

2-प्रश्न-तिलो को पीसने के बाद उसका लिंग बनावे। इसका पूजन से किसकी पूर्ति हेतु किया जाता है?

उत्तर- तिलो को पीसने के बाद उसका लिंग बनावे। इसका पूजन सभी प्रकार की इच्छापूर्ति हेतु किया जाता है।

3-प्रश्न-रुद्राष्टाध्यायी का पंचम अध्याय किस नाम से जाना जाता है।

उत्तर-रुद्राष्टाध्यायी का पंचम अध्याय शतरूद्रिय नाम से माना जाता है।

4-प्रश्न-रुद्राष्टाध्यायी के पंचम अध्याय में कितने मन्त्र है?

उत्तर-रुद्राष्टाध्यायी के पंचम अध्याय में छाछठ मन्त्र है?

5-प्रश्न-शतरूद्रिय पाठ किसके तुल्य माना जाता है।

उत्तर-शतरूद्रिय पाठ समस्त वेदों के पारायण के तुल्य माना जाता है।

3.7-सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

1-पुस्तक का नाम-रुद्रष्टाध्यायी
लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2-पुस्तक का नाम-सर्वदेव पूजापद्धति
लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र
प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

3 धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक - डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशकः- उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
लेखकः- पं. बिहारी लाल मिश्र,
प्रकाशकः- गीताप्रेस, गोरखपुर।

5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा
संकलन ग्रन्थ

प्रकाशक:- मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

6 कर्मठगुरुः

लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य

प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती

सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी

सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

9 विवाह संस्कार

सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर

3.8-उपयोगी पुस्तकें

1-पुस्तक का नाम- रुद्रष्टाध्यायी

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- नमोस्तु रूद्द्रेब्भ्यो येन्तरिक्षे येषाँव्वातऽइषवः।

तेब्भ्यो दश प्प्राचीर्द्दश दक्षिणा दश प्प्रतीचीर्द्दशोदीचीर्द्दशोर्द्ध्वाः।

तेब्भ्यो नमोऽअस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्म्मो यश्च्च नो

द्वेष्ट्टि तमेषांजम्भे दद्ध्मः। इस मन्त्र का हिन्दी में व्याख्या कीजिये।

इकाई - 4 शिव संकल्प सूक्त

इकाई की रुप रेखा

4.1 प्रस्तावना:-

कर्मकाण्ड से सम्बन्धित यह खण्ड एक की चौथी इकाई है इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि शिवसंकल्प सूक्त की उत्पति किस प्रकार से हुई है? शिवसंकल्प सूक्त की उत्पति अनादि काल से हुई है। तथा इन्हीं सूक्तों के माध्यम से आज सनातन धर्म की रक्षा हो रही है। इस देश मे जितने प्रकार के उपवास व्रत पूजन अथवा होम-नियम प्रचलित है उनमे शिवरात्रि-व्रत के समान अन्य किसी का प्रचार नही देखा जाता। इस विशाल भारत में स्त्री-पुरूष, बाल-वृद्ध ,प्रौढ - युवा प्रायः किसी न किसी रूप मे इसके अनुष्ठान मे रत देख जाते है। बहुत से लोग पूजा आदि न करते हुए भी उपवास कर लेते है। जिनकी उपवास मे रूचि नही होती ,वे रात्रि - जागरण करके ही इस व्रत का पुण्य प्राप्त करते है।

4.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप वेदशास्त्र से वर्णित शिवसंकल्प सूक्त का अध्ययन करेंगे।

1. शिव के विभिन्न वैशिष्ट्यो का ज्ञान करा सकेगे।
2. साम्ब सदाशिव की आराधना से चतुर्वर्ग फलाप्ति का अमोघ वैदिक उपाय है। इसका ज्ञान करा सकेगे।
3. शिव और रूद्र ब्रह्म के ही पर्यायवाची शब्द है। इसका ज्ञान करा सकेगे।
4. संक्षिप्त अभिषेक विधि को बता सकेगें।
5. इस इकाई के माध्यम से यजुर्वेद के वैशिस्ट्य को समझा सकेगें।

4.3 शिवसंकल्पसूक्त:-

मनुष्य के शरीर मे सभी कुछ महत्वपूर्ण है। हाथ की छोटी से छोटी अगुंली भी अपना महत्व रखती है , परन्तु मन का महत्व सर्वाधिक है। इसमे विलक्षण शक्ति निहित है। मनुष्य के सुख-दुःख तथा बन्धन और मोक्ष मन के ही अधीन है। संसार में ऐसा कोई स्थल नही जो मन के लिए अगम्य हो, मन सर्वत्र जा सकता है, एक पल मे जा सकता है। चक्षुरादि इन्द्रियाँ जहाँ नही पहुँच सकती , जिसे नही देख सकती , मन वहाँ जा सकता है , उसे ग्रहण कर सकता है। जिस आत्म ज्ञान से शोकसागर को पार कर नित्य निरतिशय सुख का अनुभव किया जा सकता है , वह मन के ही अधीन है। मन ही आत्म आक्षात्कार के लिए नेत्रवत् है। श्रुति भी कहती है -'मनसैवानुद्रष्टव्यम्' संसार मे हम जो भी उत्कर्ष प्राप्त करते है, उनकी मुख्य हेतु है -हमारी स्वस्थ और सक्षम ज्ञानेन्द्रियाँ। कानो से सुनायी न देता हो, आँखो से दिखायी न देता हो तो कोई कितना भी कुशाग्रबुद्धि क्यो न हो , कैसे विद्या प्राप्त करेगा ? विज्ञान एवं कला के मे कैसे व क्या वैशिष्ट्य सम्पादन करेगा ? अर्थोपार्जन भी

कैसे करेगा ? ऐसा व्यक्ति तो संसार मे दीन-हीन रहेगा। अपनी जीवनयात्रा के लिए भी वह दूसरो पर आधारित होकर भारभूत ही होगा। अतः इस सत्य से कोई इन्कार नही कर सकता कि हमारे उत्कर्ष प्रथम एवं महत्वपूर्ण साधन है - हमारी स्वस्थ और सक्षम ज्ञानेन्द्रियाँ। परन्तु यह नही भूलना चाहिए कि इन्द्रियो का प्रवर्तक है मन। यदि मन असहयोग कर दे तो स्वस्थ तथा सक्षम इन्द्रियाँ भी अपने विषय को ग्रहण करने मे समर्थ नही रह जायेगी। जब इन्द्रियो का प्रवर्तन-निवर्तन मन पर आधारित है और स्पष्ट हो जाता है कि हमारा अभ्युदय की प्राप्ति सम्यक् कर्म सम्पादन पर आधारित है , तब यह आपने आप स्पष्ट हो जाता है कि हमारा अभ्युदय मन के शुभ संकल्प युक्त होने पर निर्भर है इसीलिए मन्त्रद्रष्टा ऋषि इस शिवसंकल्प सूक्त के माध्यम से प्रार्थना करते है।

यज्जाग्रतो दूरमुदैति देवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेक तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। (शुक्लयजुर्वेद, 34/1)

मेरा वह मन धर्मविषयक सकंल्पवाला (शिवसंकल्प) हो , मन में कभी पापभाव न हो , जाग्रदवस्था में देखे-सुने दूर से दूर स्थल तक दौड़ है-(दूरमुदैति) और सुषुप्तावस्था में पुनः अपने स्थान पर लग जाता है। जो ज्योतिः स्वरूप (देव) आत्मा को ग्रहण करने का एकमात्र साधन है (दूर मम्) , दूरगामी तथा विषयों को प्रकाशित करने वाली इन्द्रियों-ज्योतियों-का एकपात्र प्रकाशक (ज्योतिरेकं) अर्थात् प्रवर्तक हैं। वह मेरा मन शुभ सकल्पों वाला हो।

मन के ही निर्मल , उत्साहयुक्त और श्रद्धावान् होने पर बुद्धिमान् यज्ञ-विधि-विधानज्ञ कर्मपरायणजन यज्ञों की सब क्रियाओ को सम्पन्न करते है। मेधावी पुरूष बुद्धि के सम्यक् प्रयोग से वेदादि सच्छास्त्रो का प्रामाण्य समझ सकते है। न्याय और मीमांसा आदि दर्शनशास्त्रो की प्रक्रिया का गूढ़ अनुशीलन कर अप्रामाण्य की सब शंकाओ को दूर कर अपने हृदय में दृढतापूर्वक यह निश्चय कर सकते है। वेदादि - शास्त्र अपने विषय मे (धर्म और ब्रह्म के विषय में) निर्विवाद प्रमाण है। अकोसहित वेदो का अध्ययन करके विविध फलों का सम्पादन करने वाले के विधि-विधान और अनुष्ठान की सम्पूर्ण तभी हो सकता है, जब मन निर्मल ,श्रद्धोपेत तथा उत्साहयुक्त हो। वैदिक क्रियाओ कालप मन की अनुकूलता पर निर्भर है। हम एक-आध बार भले ही मन की उपेक्षा कर दें , परन्तु हम सदा ऐसा नही कर सकते हैं, मन को सदा खिन्न रखकर हम अपना जीवन भी नही चला सकते हैं, मन को भगवान स्वयं अपनी 'विभूति' बतलाते है-'इन्द्रियाणां मनश्र्चास्मि' (गीता, 10/12) -' इन्द्रियो मे मैं मन हूँ।' अतः मन पूज्य है। हमे उसकी पूजा करनी ही पडेगी, उसका रूख देखना ही पडेगा इसलिए ऋषि दूसरी ऋचा में प्रार्थना करते है-

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्त प्रजानां तन्मे मनः शिवसकंल्पमस्तु।।

जिस मन के स्वस्थ और निर्मल होने पर मेधावी पुरूष (मनीषिणः) यज्ञ में कार्य करते है- (कर्माणि कृण्वन्ति), मेधावी जो कर्मपरायण है (अपसः) तथा यज्ञसम्बन्धी विधि-विधान (विदथेषु) मे बड़े दक्ष (धीराः) है तथा जो मन संकल्प विकल्पों से रहित हुआ साक्षात् आत्मरूप ही है। 'यदपूर्वं' इत्यादि श्रुति इन लक्षणों से आत्म का ही लक्ष्य कराती है और पूज्य (यक्षम्) है, जो प्राणियो के शरीर के अन्दर ही स्थित है (अन्तः प्रजानाम्), वह मेरा मन शुभसंकल्प वाला हो।

प्रत्यक्षादि प्रमाणो के माध्यम से उत्पन्न होने वाली ज्ञानवस्तु मन के द्वारा ही उत्पन्न होता है। सामान्य तथा विशेष दोनो प्रकार के ज्ञानों का जनक मन ही है। क्षुधा और पिपासा इत्यादि की पीडा से मन जब अत्यन्त व्यथित हो जाता है , तब बुद्धि मे कुछ भी ज्ञान स्फुरित नही हो पाता। ज्ञान ही मनुष्य की विशेषता है। ज्ञान के बल से ही वह मर्त्यलोक के अन्य जीवों से श्रेष्ठ बना , उनका सिरमौर बना। ज्ञान की वृद्धि करके उसने अतुल सुख और सम्पत्ति प्राप्त की। ज्ञान के ही द्वारा उसने पशुओ की अपेक्षा अपने जीवन को मधुर बनाया। मोक्ष भी आत्मज्ञान से ही प्राप्त किया जा सकता है । उस ज्ञान का जनक यह मन ही है।

हमारी जीवनयात्रा निष्कण्टक नहीं। अनेक विघ्न-बाधायं े इसमे उपस्थित होती है । अभ्युदय और उत्कर्ष का कोई मार्ग अपनाओ , वह निरापद नहीं होगा। कठिनाइयाँ और क्लेश हमारे सामने आयेगे ही । यदि हम उन कठिनाईयो को जीतने में समर्थ नही तो मार्गपर आगे प्रगति नही कर सकते है। यदि प्रगति अभीष्ट है तो कठिनाईयो से सघर्ष करके उन पर विजय प्राप्त करना होगा। । इसके लिए धैर्य चाहिए । थोडी-थोडी कठिनाईयों में अधीर हो जाने वाले व्यक्ति तो कोई भी उद्यम नही कर सकते। कार्य उद्यम करने से सिद्ध होते है , मनोरथमात्र से नहीं। अतः सफलतारूप प्रसाद का एक मुख्य स्तम्भ धैर्य है। धैर्य मन मे ही अभिव्यक्त होता है , अतः धैर्य का उत्पादक होने से जल को जीवन कहने की भाँति मन को ही धैर्य मन में ही अभिव्यक्त होता है, अतः धैर्य का उत्पादक होने से जल को जीवन कहने की भाँति मन को ही धैर्यरूप कहा गया है। मन के बिना कोई भी लौकिक-वैदिक कर्म सम्पादित नहीं किया जा सकता है। अतः तीसरी ऋचा से ऋषि कामना करते है-

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।

यस्मान्न ऋते किं चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।

(शुक्लयजुर्वेद,34/3)

जो मन प्रज्ञान अर्थात् विशेषरूप से ज्ञान उत्पन्न करने वाला है तथा पदार्थो को प्रकाशित करने वाला (चेतः) सामान्य ज्ञानजनक है जो धैर्यरूप है, सभी प्राणियो में (प्रजासु) स्थित होकर अन्तज्योर्ति अर्थात् इन्द्रियादि को अथवा आभ्यन्तर पदार्थो को प्रकाशित करने वाला है एवं जिसकी सहायता और अनुकूलता के बिना कोई कार्य सम्पन्न नही हो सकता , मेरा वह मन शुभसंकल्प वाला हो।

चक्षुरादि इन्द्रियाँ केवल उन पदार्थो को ग्रहण कर सकती है , जिनसे उनका साक्षात् सम्बन्ध

हो , पर उन अप्रत्यक्ष पदार्थो को भी ग्रहण करने मे समर्थ है। चतुर्थ ऋचा से ऋषि यही भाव व्यक्त करते है-

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्।

येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। - (शुक्लयजुर्वेद, 34/4)

जिस मन के द्वारा यह सब भलीप्रकार जाना जाता है ,ग्रहण किया जाता है (परिगृहीतम्) , भूत , भविष्यत् और वर्तमान सम्बन्धी सभी बातो को परिज्ञान होता है (भूतं भुवनं भविष्यत्) जो मन शाश्रवत है- संकल्प- विकल्प से रहित हुआ आत्मरूप (अमृतेन) ही है जिस श्रद्धायुक्त और स्वस्थ मन से सप्त होताओ वाला (अग्निष्टोम यज्ञ में सप्त होता है।) किया जाता है (तायते), वह मेरा मन शुभसंकल्प वाला हो।

हमारा जितना भी ज्ञान है , वह सब शब्द-राशि में ओतप्रोत है। शब्दानुगम से रहित लोक मे कोई भी ज्ञान उपलब्ध नहीं होता । जैसे आत्मा की अभिव्यक्ति शरीर मे होती है , वैसे ही ज्ञान की अभिव्यक्ति शब्दरूप कलेवर मे ही होती है। वे शब्द मन में ही प्रतिष्ठित होते है । मन के स्वस्थ होने पर उनकी स्फूर्ति होगी और मन के व्यग्र होने पर वे स्फुरित नहीं होगें । छन्दोग्योपनिषद् मे कहा गया है - ‘ अन्नमयं हि सोम्य मनः ‘ - ‘ हे सोम्य ! मन अन्नमय है। ‘ इस सत्य का अनुभव कराने के लिए शिष्य को कुछ दिनों तक भोजन नही दिया गया। भोजन न मिलने से जब वह बहुत कृश हो गया , तब उसे पढे हुए वेद को सुनाने के लिए कहा गया । वह बोला कि ‘ इस समय वह पढ हुआ कुछ भी मन में स्फुरित नही हो रहा है ।‘ अनन्तर उसे भोजन कराया गया है । भोजन से तृप्त होने पर उसके मन में वह पढा हुआ वेद स्फुरित हो गया । इस अन्वय और व्यातिरेक से यह भी सिद्ध होता है कि ज्ञान की प्रतिष्ठा तथा स्फुर्ति मन मे ही होती है। यदि मन प्रसन्न है तो ज्ञान-सम्पादन और विचार-विमर्श सफल होगें। यदि वह व्यग्र एवं अधीर हो रहा है तो कोई भी कार्य सफल न होगा। अतः मन का निर्मल और प्रसन्न होना सबसे अधिक महत्व का है इसलिए पाँचवी ऋचा में ऋषि प्रार्थना करते है-

यस्मिन्नृचः साम यजूषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।

यस्मिँश्चित्त सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।। - (शुक्लयजुर्वेद , 34/5)

जिस मन मे ऋक्, यजुः और सामरूप वेदत्रयी ठीक उसी प्रकार प्रतिष्ठित है , जैसे रथचक्र नाभि मे चक्के-अरे, जिस मन मे प्राणियो का लोक विषयकज्ञान (चित्तम्) पट में तन्तु की भाँति ओतप्रोत है , वह मेरा मन शुभसंकल्प वाला हो।

बुद्धिमान् सब जानते हैं कि मन ही मनुष्य को सब जगह भटकाता रहता है। यही आग्रह करके उन्हें किसी मार्ग में प्रवृत्त करता है अथवा उससे निवृत्त करता है। नयन और नियमन मन के ही अधीन हैं। यदि मन पवित्र संकल्प वाला होगा तो उत्तम स्थान पर लेजायेगा और सत्-प्रवृत्तियों से इसका नियमन करेगा। यदि मन पाप संकल्पों से आक्रान्त होगा तो मनुष्य को बुरे मार्ग में लगाकर उसके विनाश दुर्गति का कारण बन जाएगा। छटी ऋचा में ऋषि ने यही बात कहकर मन के पवित्र

होने की प्रार्थना की है।

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनव इव।

हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।- (शुक्लजयुर्वेद, 34/6)

जैसे कुशल सारथि (सुषारथिः) चाबुक हाथ में लेकर (अश्वान्) घोडों को जिधर चाहता है, ले जाता है (नेनीयते), वैसे ही जो मन मनुष्यों को (मनुष्यान्) जिधर चाहता है, ले जाता है तथा जिस प्रकार सुसारथि बागडोर हाथ में लेकर (अभीशुभिः) घोड़ों का अपने मनचाहे स्थान पर ले जाता है (वाजिनः नेनीयते), वैसे ही जो मन मनुष्य को ले जाता हैं, जो प्राणियों के हृदय में प्रतिष्ठित है (हृत्प्रतिष्ठम्), शरीर के वृद्ध होने पर भी जो वृद्ध नहीं होता, जो अत्यन्त वेगवान् है (जविष्ठम्), मेरा वह मन शुभसंकल्पवाला हो।

दो दृष्टान्त देकर बतलाया कि ‘मन शरीर का नयन और नियमन दोनों करता है। शरीर के शिथिल होने पर भी मन का वेग कम नहीं होता। अत्यन्त वेगवान् होने से जल्दी वश में नहीं आता है।‘ बिगड़ उठे तो बलवान् होने से व्यक्ति बुरी तरह झकझारे देता है। यदि मन शुद्ध और पवित्र बन जाये तो हमारे जीवन की धारा बदल जाएगी और हमारी समस्त शक्तियाँ मंगलमय कार्यों में ही लगेगी।

4.4-सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि समस्त वेदादि शास्त्रों में शिवसंकल्प सूक्त मानव के लिये परम धर्म और परम कर्त्तव्य कहा है। साम्ब सदाशिव की आराधना से चतुर्वर्ग फलाप्ति का अमोघ वैदिक उपाय है ‘‘रूद्राभिषेक‘‘। शिव और रूद्र ब्रह्म के ही पर्यायवाची शब्द है। ‘वेदः शिवः शिवो वेदः‘ वेद शिव है और शिव ही वेद है अर्थात् शिव वेदस्वरूप है। ‘ वेदो नारायणः साक्षात् ‘ भी कहा गया है । वास्तव मे श्रीमद्भागवतोक्त वचनानुसार ‘‘ परः पुरूष एक एवास्य धत्ते स्थित्यादये हरिविरचिहरेति संज्ञाम्‘‘ यही सनातन धर्म का संस्थापित सिद्धान्त है। आशुतोष शिव की अर्चना सर्वदेवार्चनमयी है । ‘‘ सर्वदेवात्मको रूद्रः सर्वे देवाः शिवात्मकाः ‘‘ तथा ‘‘ ब्रह्मविष्णुमयो रूद्र अग्नि सोमात्मकं जगत्‘‘ आदि से यही सिद्ध होता है।

शिवसंकल्प सूक्त में कहा गया है कि इसका पाठ करने सुख की प्राप्ति होती है तथा दुःख और शोक दूर हो जाता है। इससे धन-धान्य में वृद्धि होती है तथा सौभाग्य व संतान की प्राप्ति होती है। प्राणी को चारों दिशाओं में विजयश्री दिलाने वाले इस पाठ को व्यक्ति किसी भी दिन पूर्ण श्रद्धा व भक्ति से कर सकता है।

जिस भाँति ,दुग्ध से नवनीत निकाल लिया जाता है,उसी भाँति मानव कल्याणार्थ शुक्लयजुर्वेद से रूद्राष्टध्यायी का संग्रह किया गया है। इस मन्त्रो मे गृहस्थ - धर्म ,राजधर्म, ज्ञान- वैराग्य, ईश्वर -स्तवन

आदि विषयो का वर्णन किया गया है।

4.5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
यस्मिन्नृचः	जिस मन मे ऋक्,
सम	सामरूप
यजूषि	यजुः
यस्मिन्	ठीक उसी प्रकार
प्रतिष्ठिता	प्रतिष्ठित है
रथनाभाविवाराः	रथचक्र नाभि मे
यस्मिँश्चित्त	जिस मन मे प्राणियो का लोक विषयकज्ञान
सर्वमोतं	तन्तु की भाँति ओतप्रोत है ,
प्रजानां	प्रजाओं का
तन्मे मनः	वह मेरा मन
शिवसंकल्पमस्तु	शुभसंकल्प वाला हो।
सुषारथिः	कुशल सारथि
अश्वान्	घोडों को जिधर चाहता है,
नेनीयते	लेकर ले जाता है
मनुष्यान्	मनुष्यों को
अभीशुभिः	घोड़ों का अपने मनचाहे स्थान पर ले जाता है
वाजिनः नेनीयते	मनुष्य को ले जाता हैं,

4.6 -अभ्यासार्थ प्रश्न -उत्तर

1-प्रश्न-मनुष्य के शरीर मे सभी अंग क्या है?

उत्तर- मनुष्य के शरीर मे सभी अंग महत्वपूर्ण है।

2-प्रश्न- मनुष्य के सुख-दुःख तथा बन्धन और मोक्ष किसके अधीन है ?

उत्तर- मनुष्य के सुख-दुःख तथा बन्धन और मोक्ष मन के ही अधीन है।

3-प्रश्न- मन आत्म आक्षात्कार के लिए क्या है?

उत्तर- मन आत्म आक्षात्कार के लिए नेत्रवत् है।

4-प्रश्न- शिव और रूद्र ब्रह्म के क्या है?

उत्तर- शिव और रूद्र ब्रह्म के ही पर्यायवाची शब्द है।

5-प्रश्न-मानव कल्याणार्थ शुक्लयजुर्वेद से किसका संग्रह किया गया है?

उत्तर- मानव कल्याणार्थ शुक्लयजुर्वेद से रूद्राष्टध्यायी का संग्रह किया गया है।

4.7-सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

1-पुस्तक का नाम-रुद्रष्टाध्यायी

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

2-पुस्तक का नाम-सर्वदेव पूजापद्धति

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाषन वाराणसी

3 धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक - डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशक:- उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

4 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
लेखक:- पं. बिहारी लाल मिश्र,
प्रकाशक:- गीताप्रेस, गोरखपुर।

5 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा
संकलन ग्रन्थ
प्रकाशक:- मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

6 कर्मठगुरुः
लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

7 हवनात्मक दुर्गासप्तशती
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

8 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

9 विवाह संस्कार
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर

4.8-उपयोगी पुस्तकें

1-पुस्तक का नाम- रुद्राष्टाध्यायी

लेखक का नाम- शिवदत्त मिश्र

प्रकाशक का नाम- चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।

हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। इस मन्त्र का हिन्दी में व्याख्या कीजिये।

खण्ड – 2

स्तोत्र पाठ

इकाई – 1 आदित्य हृदय स्तोत्र

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 आदित्य हृदय स्तोत्र का परिचय एवं महत्व

1.4 मुख्य स्तोत्र पाठ : आदित्य हृदय स्तोत्र

1.5 आदित्यस्वरूप

1.6 सारांश

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई से पूर्व की अनुष्ठान या पूजन विधियों से आप अच्छी तरह अवगत हो गये हैं, यह हमें विश्वास है। इन्हीं विधियों से सम्बद्ध यह स्तोत्र पाठ विधि भी है। क्योंकि प्रत्येक पूजन के अन्त में तत्सम्बद्ध देवता की स्तुति अवश्य की जाती है। यह शास्त्रीय मान्यता है।

प्रस्तुत इस इकाई में प्रसिद्ध ''आदित्यहृदयस्तोत्र'' के विषय में आपको जानकारी दी जायेगी। इसके साथ ही इस स्तोत्र का अर्थ एवं न्यासादि-विधि का भी ज्ञान आपको कराया जायेगा।

1.2 उद्देश्य

वैसे तो यह स्तोत्र सभी लोगों के लिए है। परन्तु विशेष रूप से जो आरोग्य सुख प्राप्त करना चाहते हैं, अर्थात् जिन्हें शारीरिक या मानसिक कोई भी रोग हो तो इस स्तोत्र के पाठ से वे अपने रोग को सदा के लिए नष्ट कर सकते हैं। ऐसी शास्त्रीय मान्यता है। इसके पाठ से पुराना से पुराना कुष्ठरोग भी निश्चित ही दूर हो जाता है।

दूसरी बात यह है कि जिस किसी की कुंडली में सूर्यग्रह प्रतिकूल हों उन्हें भी इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। उन्हें भी लाभ प्राप्त होता है। न केवल आरोग्य ही अपितु इस स्तोत्र के पाठ से सभी जगह विजय भी प्राप्त हो जाता है। क्योंकि इसके फलश्रुति में लिखा है - ''सर्वत्र विजय-प्रदम्''। इसमें भगवान् आदित्य (सूर्य) की प्रार्थना की गई है। इससे सम्बद्ध विशेष विवरण आपको आगे बताया जायेगा।

इस स्तोत्र के पाठ से आप भी स्वस्थ रहेंगे एवं आपका परिवार भी। साथ ही जिसके लिए आप इसका पाठ करेंगे वह भी स्वस्थ हो जायेगा। अतः यह आरोग्य प्रदान करने वाला प्रसिद्ध स्तोत्र है। शास्त्रों में भी कहा गया है कि ''आरोग्यं भास्करादिच्छेत् धनमिच्छेद्धुताशनात्'' अर्थात् आरोग्य की कामना से सूर्य की उपासना एवं धन की कामना के लिए अग्नि की उपासना करनी चाहिए।

1.3 आदित्य हृदय स्तोत्र का परिचय एवं महत्त्व

यह स्तोत्र श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण के युद्धकाण्ड के 105वें सर्ग से लिया गया है। जब भगवान् श्रीराम के साथ रावण का युद्ध हो रहा था तब विविध अस्त्र शस्त्रों के प्रयोग करने पर भी जब रावण की मृत्यु नहीं हो पा रही थी, तब श्रीराम जी को कुछ चिन्ता होने लगी। उसी समय भगवत्कृपा से अगस्त्य ऋषि का आगमन हुआ तथा वे श्रीराम जी को चिन्तातुर देखकर इस आदित्य-हृदय-स्तोत्र का उपदेश किये जिसके प्रभाव से सूर्य के प्रसन्न होने पर भगवान् श्रीराम रावण को मारकर विजय को प्राप्त किये। इसमें कुल 31 श्लोक हैं।

एक जिज्ञासा यहाँ स्वाभाविक होती है कि देवताओं का स्तोत्र या स्तुति से क्या सम्बन्ध हैं? हम स्तोत्र पाठ आदि क्यों करते हैं? तथा इससे लाभ क्या होता है? क्या स्तोत्र पाठ से देवता प्रसन्न होते हैं? इत्यादि।

इन प्रश्नों के समाधान में आप भी कुछ न कुछ अवश्य ही जानते हैं, फिर भी अपनी बुद्धि के अनुसार कुछ शास्त्रीय विचार आपके सामने रखे जा रहे हैं। यदि रुचिकर लगे तो लेखक का प्रयास सार्थक होगा।

देखिये! सामान्यतः देवता की परिभाषा - जो दान देने वाला है, प्रकाशरूप (तेजोमय) एवं द्युलोक (स्वर्ग) में निवास करने वाला है उसे ही देवता कहते हैं। निरुक्तशास्त्र के अनुसार वैदिक देवता 33 होते हैं, जिनमें 11 पृथिवीस्थानीय, 11 अन्तरिक्षस्थानीय एवं 11 द्युस्थानीय देवता है। इन्हीं वैदिक देवताओं का विकास पुराणों में शिव, विष्णु आदि के रूप में हुआ है। मुख्यरूप से वैदिक देवता 33 ही होते हैं। जैसा कि निरुक्तग्रन्थ में लिखा है ''देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा द्युस्थानो भवतीति वा''। मनुष्य का सम्बन्ध देवताओं से सनातन से है क्योंकि सृष्टि के समय ब्रह्मा जी ने स्पष्ट रूप से मनुष्यों को कहा कि तुम यज्ञ में प्रदत्त हवि एवं स्तुति आदि के द्वारा देवताओं को सन्तुष्ट करो, देवता प्रसन्न होकर तुम्हारे सभी मनोरथों को पूर्ण करेंगे। इस प्रकार परस्पर एक दूसरे को सुखी सम्पन्न बनाते हुए परम कल्याण को प्राप्त करो। जैसा कि गीता में लिखा है-

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ।।

इसीलिए मनुष्य अन्यान्य लौकिक आश्रयों को छोड़कर देवता की शरण में जाता है। साक्षात् श्रुति भी इसी बात का समर्थन करते हुए कहती है-

देहि मे ददामि ते निमेधे हि नितेदधे।

इस मन्त्र में इन्द्र मनुष्यों से कहते हैं कि हे मनुष्यों! तुम सर्वप्रथम मुझे हवि प्रदान करो, फिर मैं तुम्हारे सभी मनोरथों को पूर्ण कर दूँगा। इसमें सर्वप्रथम मनुष्य ही देवताओं को यज्ञ या स्तुति आदि से प्रसन्न करता है। इसके बाद प्रसन्न एवं संतुष्ट होकर देवता उसके सारे अभिमत फल को प्रदान करते हैं।

एक बात और भी यहाँ ध्यान देने की है - सामान्यतया लोकव्यवहार में देवता दो प्रकार के होते हैं। (क) वैदिक देवता एवं (ख) पौराणिक देवता। सामान्य रूप से तो विचार करने पर वैदिक देवताओं का विकास ही पौराणिक देवता है। जैसे - वैदिक देवता रुद्र है जिन्हें पुराणादि में शिव, महेश्वर आदि नामों से कहा गया है। फिर भी इतना अन्तर अवश्य है कि वैदिक देवताओं के लिए त्रेता आदि युगों में नाना प्रकार के श्रौतानुष्ठानों से यागों में हवि प्रदान करके उन्हें प्रत्यक्षरूप से सन्तुष्ट किया जाता था, परन्तु युगानुसार आज पौराणिक देवताओं को उनकी स्तुति प्रार्थना आदि करके ही उन्हें प्रसन्न किया जाता है क्योंकि द्रव्यादि के शुचिता का अभाव सर्वत्र है। इस प्रकारं उनसे अभिलषित पदार्थों की कामना की जाती है। देवता भी प्रसन्न होकर भक्त की इच्छा को पूर्ण करते हैं। इस प्रकार मनुष्य के फल प्राप्ति का साधन स्तुति या स्तोत्र है। जो देवताओं की प्रसन्नता द्वारा प्राप्त होता है। प्रत्यक्ष रूप से हमारे यहाँ पुराणों में वर्णित स्तुति या स्तोत्र आदि विपुल मात्रा में अत्यन्त

प्रसिद्ध है। जिनके आधार ग्रन्थ हमारे पुराण है। इनमें तो प्रायः हवि आदि देने का वैदिक विधान प्राप्त नहीं है, केवल स्तोत्र या स्तुति पाठ से ही उनकी प्रसन्नता स्वयं हो जाती है। हविः प्रदान तो चरु पुरोडाश आदि के रूप में दिया जाता है जो अत्यन्त श्रमसाध्य है। परन्तु आज श्रुतियोगों का सर्वथा अभाव दिखाई देता है।

बात यह है कि अन्य युगों में मन्त्रों से आवाहन करने पर देवता स्वयं उपस्थित होकर अपनी हवि ग्रहण करते थे। परन्तु अब तो देवताओं का प्रत्यक्ष होना संभव नहीं है। अतः हम उन्हें स्तुति आदि से ही प्रसन्न करते हैं।

इन देवताओं के स्वभाव एवं प्रसन्नता के साधन की चर्चा करते हुए आचार्य यास्क कहते हैं कि कुछ देवता हविप्रिय होते हैं, कुछ स्तुतिप्रिय होते हैं एवं कुछ हवि एवं स्तुति दोनों की अभिलाषा रखते हैं।

एषु केचन स्तुतिभाजः, केचन हविर्भाजः केचन च उभयप्रिया भवन्ति।

अतः मनुष्यों को देवताओं के स्वभाववश अपनी अपनी कामना के अनुसार उन्हें सन्तुष्ट करना चाहिए एवं उनकी प्रसन्नता से अभिलषित फल पुरुष को प्राप्त करना चाहिए।

इस प्रकार दानशील स्वभाव होने के कारण देवता हमारे स्तुतियों से प्रसन्न होते हैं एवं हमें अभिलषित फल प्रदान करते हैं। यही परस्पर में आदान-प्रदान का क्रम स्तुति के माध्यम से होता है। अच्छे मनुष्य का एक स्वभाव है कि अपने सामर्थ्य पर विश्वास करता है और उसे अपने प्रयास से पाने की चेष्टा भी करता है, परन्तु जहाँ अपना सामर्थ्य (शक्ति) काम नहीं आता तब वह देवताओं की शरण में जाता है एवं श्रद्धा विश्वास पूर्वक देवाराधन से फल को प्राप्त करता है।

हाँ एक बात अवश्य ध्यान देना चाहिए कि स्तुति पाठ में श्रद्धा एवं विश्वास दोनों का होना नितान्त आवश्यक है। इसके बिना कार्य सफल नही होता है। आराधना जितना ही सात्विक भाव से की जायेगी उसके अनुसार ही फल की प्राप्ति होगी। कदाचित् फलप्राप्ति में समय (देर) भी लग सकता है, परन्तु फलप्राप्ति अवश्य ही होती है, क्योंकि श्रौतसूत्रकार कहते हैं - ''फलयुक्तानि कर्माणि'' अर्थात् संसार में ऐसा कोई भी कर्म नहीं है जिसका फल न हो। अतः पाप कर्म हो या पुण्य कर्म दोनों का फल अवश्य ही मिलता है और यह भी ध्यान रखें। कर्म का फल मनुष्य को अवश्य ही भोगना पड़ता है। चाहे वह पाप हो या पुण्य हो। जैसा कि-

नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि।
अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाऽशुभम्।।

एक बात और मन में आ रही है कि, अपने उत्कर्ष की कामना मनुष्य योनि में ही रहती है, अन्य योनियों में नहीं। क्योंकि ''ज्योतिष्टोमेन स्वर्गकामो यजेत्'' इस वाक्य में स्वर्ग की कामना वाला मनुष्य ज्योतिष्टोम याग करे, यह कहा गया है। इससे यह बात सामने आती है कि मनुष्य को ही स्वर्ग की अभिलाषा या कामना हो सकती है पशुओं को नहीं। क्योंकि मनुष्य ही पूर्ण रूप से तत्तत्कर्मों का

अनुष्ठान अच्छी तरह से कर सकता है जिससे उसे फलप्राप्ति हो सकती है। एक वाक्य में यदि कहा जाय तो मनुष्य का उत्कर्ष (प्रमोशन) ही देवता भाव है, एवं पतन (डिमोशन) ही दानव भाव है। अब जिसको जहाँ जाना हो या जो चुनना हो वह समर्थ एवं स्वतन्त्र है। अर्थात् हमें दानव बनना है या देवता, निर्णय हमारे हाथ में है। अस्तु।

इसी देवभाव या देवतारूप की प्राप्ति के लिए लौकिक एवं पारलौकिक फल की कामना मनुष्य करता है जो देवताओं की स्तुति से प्राप्त होती है। यही देवताओं का स्तुति या स्तोत्र से मुख्य सम्बन्ध है।

स्तुति, स्तोत्र, स्तवन आदि शब्द अपर पर्याय रूप हैं। उनके अर्थ में कोई भेद नहीं है। अतः श्रद्धा एवं विश्वास के साथ स्तुति पाठ करने से हमारी मनोकामनायें पूर्ण होती है।

निष्कर्ष रूप से यदि कहा जाय तो यही स्तुतिपाठ का महत्त्व एवं देवताओं का मनुष्य से शाश्वत-सम्बन्ध सामान्यतया है। अस्तु।

अब आपके सामने आदित्य-हृदय-स्तोत्र पाठ की विधि, श्लोक एवं उनके अर्थ भी नीचे दिये जा रहे हैं।

देखिये! शास्त्रीय विधि से हीनकर्म फलप्रद नहीं होते हैं क्योंकि गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं-

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्।।

अतः शास्त्र विधि का भी होना नितान्त आवश्यक है। दूसरी बात यह है कि संस्कृत के श्लोक कुछ कठिन तो अवश्य ही होते हैं, जिनके उच्चारण बिना गुरु के संभव नहीं होता। उच्चारण के बाद उन श्लोकों का अर्थ करना और कठिन है। क्योंकि पाठक को अर्थपूर्वक पाठ करने से ही श्रद्धा की अभिवृद्धि देवता में आती है। अर्थ न जानने पर मात्र एक रोंटिंग वर्क होकर रह जाता है। अन्य कार्यों की तरह उसे भी करना है ऐसा सोचकर आदमी गलती सही कुछ भी पढने लगता है, जो ठीक नहीं होता है। अतः अर्थानुसन्धान पूर्वक श्रद्धा के साथ स्तोत्र का पाठ करना चाहिए इस दृष्टि से ही यहाँ प्रत्येक श्लोक के अन्त में उसका अर्थ दिया गया है। अस्तु।

1.4 मुख्यस्तोत्रपाठ

अथ आदित्यहृदयस्तोत्रम्

विनियोग

ॐ अस्य आदित्यहृदयस्तोत्रस्यागस्त्य ऋषिरनुष्टुप् छन्दः, आदित्यहृदयभूतो भगवान्ब्रह्मा देवता निरस्ताशेषविघ्नतया ब्रह्मविद्यासिद्धौ सर्वत्र जयसिद्धौ च विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः

ॐ अगस्त्यऋषये नमः, शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः, मुखे। आदित्य-हृदयभूत-ब्रह्मदेवतायै नमः, हृदि। ॐ बीजाय नमः, गुह्ये। रश्मिमते शक्तये नमः, पादयोः। ॐ तत्सवितुरित्यादिगायत्रीकीलकाय नमः, नाभौ।

करन्यासः

इस स्तोत्र के अंगन्यास और करन्यास तीन प्रकार से किये जाते हैं। केवल प्रणव से, गायत्री मन्त्र से अथवा 'रश्मिमते नमः' इत्यादि छः नाम-मन्त्रों से। यहाँ नाम-मन्त्रों से किये जाने वाले न्यास का प्रकार बताया जाता है।

ॐ रश्मिमते अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ समुद्यते तर्जनीभ्यां नमः। ॐ देवासुरनमस्कृताय मध्यमाभ्यां नमः। ॐ विवस्वते अनामिकाभ्यां नमः। ॐ भास्कराय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ भुवनेश्वराय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि-अङ्गन्यास

ॐ रश्मिमते हृदयाय नमः। ॐ समुद्यते शिरसे स्वाहा। ॐ देवासुरनमस्कृताय शिखायै वषट्। ॐ विवस्वते कवचाय हुम्। ॐ भास्कराय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ भुवनेश्वराय अस्त्राय फट्।

इस प्रकार न्यास करके निम्नांकित मन्त्र से भगवान सूर्य का ध्यान एवं नमस्कार करना चाहिये-

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

तत्पश्चात् 'आदित्य हृदय' स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

स्तोत्र

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम्।
रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम्।।1।।

दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम्।
उपगम्याब्रवीद्रामगस्त्यो भगवांस्तदा।।2।।

उधर श्रीरामचन्द्र जी युद्ध से थककर चिन्ता करते हुए रण भूमि में खड़े थे। इतने में रावण भी युद्ध के लिये उनके सामने उपस्थित हो गया। यह देख भगवान अगस्त्य मुनि, जो देवताओं के साथ युद्ध देखने के लिये आये थे, श्रीराम के पास जाकर बोले।

राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम्।
येन सर्वानरीन् वत्स! समरे विजयिष्यसे।।3।।

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम्।
जयावहं जपं नित्यमक्षयं परमं शिवम्।।4।।

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम्।
चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम् ।।5।।

सबके हृदय में रमण करने वाले महाबाहो राम! यह सनातन गोपनीय स्तोत्र सुनो। वत्स! इसके जप से तुम युद्ध में अपने समस्त शत्रुओं पर विजय पा जाओगे। इस गोपनीय स्तोत्र का नाम है 'आदित्य हृदय'। यह परम पवित्र और सम्पूर्ण शत्रुओं का नाश करने वाला है। इसके जपसे सदा विजय की प्राप्ति होती है। यह नित्य अक्षय और परम कल्याणमय स्तोत्र है। सम्पूर्ण मंगलों का भी मंगल है। इसमें सब पापों का नाश हो जाता है। यह चिन्ता और शोक को मिटाने तथा आयु को बढ़ाने वाला उत्तम साधन है।

रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम्।
पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम्॥6॥
सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावनः।
एष देवासुरगणाँल्लोकान् पाति गभस्तिभिः॥7॥
एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः।
महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपाम्पतिः॥8॥
पितरो वसवः साध्या अश्विनौ मरुतो मनुः।
वायुर्वह्निः प्रजाः प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः॥9॥
आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्।
सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः॥10॥
हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान्।
तिमिरोन्मथनः शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्डकोंऽशुमान्॥11॥
हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोऽहस्करो रविः।
अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शङ्खः शिशिरनाशनः॥12॥
व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुः सामपारगः।
घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवङ्गमः॥13॥
आतपी मण्डली मृत्युः पिङ्गलः सर्वतापनः।
कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः॥14॥
नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावनः।
तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तु ते॥15॥

भगवान सूर्य अपनी अनन्त किरणों से सुशोभित (रश्मिमान्) हैं। ये नित्य उदय होने वाले (समुद्यन्), देवता और असुरों से नमस्कृत, विवस्वान् नाम से प्रसिद्ध प्रभा का विस्तार करने वाले (भास्कर) और संसार के स्वामी (भुवनेश्वर) हैं। तुम इनका (रश्मिमते नमः, समुद्यते नमः, देवासुरनमस्कृताय नमः, विवस्वते नमः, भास्कराय नमः, भुवनेश्वराय नमः-इन नाम मन्त्रों के द्वारा) पूजन करो। सम्पूर्ण देवता इन्हीं के स्वरूप हैं। ये तेज की राशि तथा अपनी किरणों से जगत् को सत्ता

एवं स्फूर्ति प्रदान करने वाले हैं। ये ही अपनी रश्मियों का प्रसार करके देवता और असुरों सहित सम्पूर्ण लोकों का पालन करते हैं। ये ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव, स्कन्द, प्रजापति, इन्द्र, कुबेर, काल, यम, चन्द्रमा, वरुण, पितर, वसु, साध्य, अश्विनीकुमार, मरुद्गण, मनु, वायु, अग्नि, प्रजा, प्राण, ऋतुओं को प्रकट करने वाले तथा प्रभा के पुंज हैं। इन्हीं के नाम आदित्य (अदितिपुत्र), सविता (जगत् को उत्पन्न करने वाले), सूर्य (सर्वव्यापक), खग (आकाश में विचरने वाले), पूषा (पोषण करने वाले), गभस्तिमान् (प्रकाशमान), सुवर्णसदृश, भानु (प्रकाशक), हिरण्यरेता (ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के बीज), दिवाकर (रात्रि का अन्धकार दूर करके दिन का प्रकाश फैलाने वाले), हरिदश्व (दिशाओं में व्यापक अथवा हरे रंग के घोड़े वाले), सहस्रार्चि (हजारों किरणों से सुशोभित), सप्तसप्ति (सात घोड़ों वाले), मरीचिमान् (किरणों से सुशोभित), तिमिरोन्मथन (अन्धकारा का नाश करने वाले), शम्भु (कल्याण के उदगम स्थान), त्वष्टा (भक्तों का दुःख दूर करने अथवा जगत् का संहार करने वाले), मार्तण्डक (ब्रह्माण्ड को जीवन प्रदान करने वाले), अंशुमान् (किरण धारण करने वाले), हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा), शिशिर (स्वभाव से ही सुख देने वाले), तपन (गर्मी पैदा करने वाले), अहस्कर (दिनकर), रवि (सबकी स्तुति के पात्र), अग्निगर्भ (अग्नि को गर्भ में धारण करने वाले), अदिति पुत्र, शंख (आनन्द स्वरूप एवं व्यापक), शिशिरनाशन (शीत का नाश करने वाले), व्योम नाथ (आकाश के स्वामी), तमोभेदी (अन्धकार को नष्ट करने वाले), ऋग् यजुः और सामवेद के पारगामी, घनवृष्टि (घनी वृष्टि के कारण), अपां मित्र (जल को उत्पन्न करने वाले), विन्ध्यवीथीप्लवंगम (आकाश में तीव्र वेग से चलने वाले), आतपी (घाम उत्पन्न करने वाले), मण्डली (किरण-समूह को धारण करने वाले), मृत्यु (मौत के कारण), पिंगल (भूरे रंग वाले), सर्वतापन (सबको ताप देने वाले), कवि (त्रिकालदर्शी), विश्व (सर्वस्वरूप), महातेजस्वी, रक्त (लाल रंग वाले), सर्वभवोद्भव (उत्पत्ति के कारण), नक्षत्र, ग्रह और तारों के स्वामी, विश्वभावन (जगत् की रक्षा करने वाले), तेजस्वियों में भी अति तेजस्वी तथा द्वादशात्मा (बारह स्वरूपों में अभिव्यक्त) है। (इन सभी नामों से प्रसिद्ध सूर्यदेव!) आपको नमस्कार है।

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः।
ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः।।16।।
जयाय जय भद्राय हर्यश्वाय नमो नमः।
नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः।।17।।
नमः उग्राय वीराय सारङ्गाय नमो नमः।
नमः पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते।।18।।
ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरायादित्यवर्चसे।
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः।।19।।
तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने।

कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः।।20।।

तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे।

नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे।।21।।

पूर्वगिरि-उदयाचल तथा पश्चिमगिरि-अस्ताचल के रूप में आपको नमस्कार है। ज्योतिर्गणों (ग्रहों और तारों) के स्वामी तथा दिन के अधिपति आपको प्रणाम है। आप जय स्वरूप तथा विजय और कल्याण के दाता है। आपके हाथ में हरे रंग के घोड़े जुते रहते हैं। आपको बारम्बार नमस्कार है। सहस्रों किरणों से सुशोभित भगवान सूर्य! आपको बारम्बार प्रणाम है। आप अदिति के पुत्र होने के कारण आदित्य नाम से प्रसिद्ध है, आपको नमस्कार है। उग्र (अभक्तों के लिये भयंकर), वीर (शक्ति-सम्पन्न) और सारंग (शीघ्रगामी) सूर्य देव को नमसकार है। कमलों को विकसित करने वाले प्रचण्ड तेजधारी मार्तण्ड को प्रणाम है। (परात्पर रूप में) आप ब्रह्मा, शिव और विष्णु के भी स्वामी हैं। सूर आप की संज्ञा है, यह सूर्यमण्डल आपका ही तेज है, आप प्रकाश से परिपूर्ण हैं, सबको स्वाहा कर देने वाला अग्नि आपका ही स्वरूप है, आप रौद्र रूप धारण करने वाले हैं, आपको नमस्कार है। आप अज्ञान और अन्धकार के नाशक, जड़ता एवं शीत के निवारक तथा शत्रु का नाश करने वाले हैं, आपका स्वरूप अप्रमेय है। आप कृतघ्नों का नाश करने वाले सम्पूर्ण ज्योतियों के स्वामी और देवस्वरूप है, आपको नमस्कार है। आपकी प्रभा तपाये हुए सुवर्ण के समान है, आप हरि (अज्ञान का हरण करने वाले) और विश्वकर्मा (संसार की सृष्टि करने वाले) हैं, तम के नाशक, प्रकाश स्वरूप और जगत् के साक्षी हैं, आपको नमस्कार है।

नाशयत्येष वै भूतं तमेव सृजति प्रभुः।

पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः।।22।।

एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः।

एष चैवाग्निहोरात्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम्।।23।।

देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च।

यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः।।24।।

एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च।

कीर्तयन् पुरुषः कश्चिन्नावसीदति राघव।।25।।

पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम्।

एतत्त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यसि।।26।।

अस्मिन् क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जहिष्यसि।

एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम्।।27।।

रघुनन्दन! ये भगवान सूर्य ही सम्पूर्ण भूतों का संहार, सृष्टि और पालन करते हैं। ये ही अपनी किरणों से गर्मी पहुँचाते और वर्षा करते हैं। ये सब भूतों में अन्तर्यामी रूप से स्थित होकर उनके सो

जाने पर भी जागते रहते हैं। ये ही अग्निहोत्र तथा अग्निहोत्री पुरुषों को मिलने वाले फल हैं। (यज्ञ में भाग ग्रहण करने वाले) देवता, यज्ञ और यज्ञों के फल भी ये ही हैं। सम्पूर्ण लोकों में जितनी क्रियाएँ होती हैं, उन सबका फल देने में ये ही पूर्ण समर्थ हैं। राघव! विपत्ति में, कष्ट में, दुर्गम मार्ग में तथा और किसी भय के अवसर पर जो कोई पुरुष इन सूर्यदेवता का कीर्तन करता है, उसे दुःख नहीं भोगना पड़ता। इसलिये तुम एकाग्रचित्त होकर इन देवाधिदेव जगदीश्वर की पूजा करो। इस आदित्यहृदय का तीन बार जप करने से कोई भी युद्ध में विजय प्राप्त कर सकता है। महाबाहो! तुम इसी क्षण रावण का वध कर सकोगे। यह कहकर अगस्त्य जी जैसे आये थे, उसी प्रकार चले गये।

एतच्छुत्वा महातेजाः नष्टशोकोऽभवत् तदा।
धारयामास सुप्रीतो राघवः प्रयतात्मवान्।।28।।
आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान्।
त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान्।।29।।
रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा जयार्थं समुपागमतम्।
सर्व यत्नेन महता वृतस्तस्य वधेऽभवत्।।30।।
अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं
मुदितमनाः परमं प्रहृष्यमाणः।
निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा
सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति।।31।।

उनका उपदेश सुनकर महातेजस्वी श्रीरामचन्द्र जी का शोक दूर हो गया। उन्होंने प्रसन्न होकर शुद्ध चित्त से आदित्य हृदय को धारण किया और तीन बार आचमन करके शुद्ध हो भगवान् सूर्य की ओर देखते हुए इसका तीन बार जाप किया। इससे उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। फिर परम पराक्रमी रघुनाथ जी ने धनुष उठाकर रावण की ओर देखा और उत्साहपूर्वक विजय पाने के लिये वे आगे बढ़े। उन्होंने पूरा प्रयत्न करके रावण के वध का निश्चय किया। उस समय देवताओं के मध्य में खड़े हुए भगवान सूर्य ने प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्र जी की ओर देखा और निशाचरराज रावण के विनाश का समय निकट जानकर हर्षपूर्वक कहा - 'रघुनन्दन! अब जल्दी करो'।

1. बोधप्रश्न

क. आदित्य के माता का नाम क्या है?

ख. आरोग्यसुख के लिए किसकी आराधना करनी चाहिए?

ग. आदित्य हृदय स्तोत्र का उपदेश श्रीराम को किसने किया?

घ. यह आदित्य हृदय स्तोत्र कहाँ से उद्धृत है?

ङ. आदित्य हृदय स्तोत्र में कितने श्लोक हैं?

च. अदिति के पति कौन थे?

1.5 आदित्य स्वरूप

आदित्य का ही अपर पर्याय सूर्य शब्द है। भगवान सूर्य चराचरजगत् की आत्मा है। इसीलिए वेदों में कहा गया है-सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च। ब्राह्मणग्रन्थों में इन्हें साक्षात् ब्रह्म कहा गया है। असौ वा आदित्यो ब्रह्म, यो हि अहरहः पुरस्ताज्जायते'।

ये सूर्यदेव पृथिवी के सम्पूर्ण प्राणियों के प्राण है - प्राणः प्रजानामुदयत्येष सूर्यः।

सूर्य के बिना संसार की स्थिति की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। भगवान् सूर्य प्रत्यक्ष देवता है। वे ही सच्चिदानन्दमय परमात्मा है। वेदों एवं उपनिषदों में इनकी अनन्त महिमा का वर्णन मिलता है। हमारे सभी धर्म (सम्प्रदाय) किसी न किसी रूप अवश्य ही इनका आश्रय ग्रहण करते हैं।

ये वैदिक देवताओं में द्युस्थानीय देवता है। पौराणिक मान्यता के अनुसार भगवान सूर्य का अवतार कश्यप ऋषि की पत्नी अदिति के गर्भ से हुआ था। इसीलिए इन्हें आदित्य भी कहा जाता है। भगवान सूर्य ही समस्त सृष्टि के आदि कारण हैं।

हम देखते हैं कि लोक में एक प्रसिद्धि है कि द्वादश आदित्य होते हैं। यही नहीं बारह महीनों के भिन्न-भिन्न सूर्यो का नाम भी शास्त्रों में देखा जाता है। तथा इनके साथ कुछ गण भी रहते हैं। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं वैदिक द्वादश आदित्य ही पुराणों के अनुसार चैत्रादि 12 मासों के अधिपति है। जिनका संक्षेप में वर्णन आपके सामने रखा जा रहा है।

1. धाता सूर्य

धाता कृतस्थली हेतर्वासुकी रथकृन्मुने।
पुलस्त्यस्तुम्बरुरिति मधुमासं नयन्त्यमी।।
धाता शुभस्य मे दाता भूयो भूयोऽपि भूयसः।
रश्मिजालसमाश्लिष्टस्तमस्तोमविनाशनः ।।

जो भगवान् सूर्य चैत्र मास में धाता नाम से कृतस्थली अप्सरा, पुलस्त्य ऋषि, वासुकी सर्प, रथकृत् यक्ष, हेति राक्षस तथा तुम्बुरु गन्धर्व के साथ अपने रथ पर रहते हैं, उन्हें हम बार-बार नमस्कार करते हैं। वे रश्मि जाल से आवृत होकर हमारे अन्धकार को दूर करें तथा हमारा पुनः पुनः कल्याण करें। धाता सूर्य आठ हजार किरणों के साथ तपते हैं तथा उनका रक्त वर्ण है।

भगवान् सूर्य चराचर जगत् की आत्मा है। पुराणों में सूर्य की अनन्त कथाएँ हैं। सूर्य के बिना संसार की स्थिति की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। भगवान् सूर्य प्रत्यक्ष देवता हैं। वे ही सत्-चित्-आनन्द स्वरूप परमात्मा हैं। वेदों और उपनिषदों में उनकी अनन्त महिमा का वर्णन मिलता है। सभी धर्म इनको किसी-न-किसी रूप में मान्यता देते हैं। भगवान् सूर्य का अवतार कश्यप ऋषि की पत्नी अदिति के गर्भ से हुआ था। इसलिए उनको आदित्य कहा जाता है। कश्यप के पुत्र होने के

कारण उन्हें काश्यप भी कहते हैं। भगवान् सूर्य ही समस्त सृष्टि के आदि कारण हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव भी उन्हीं के रूप है। चैत्र मास में तपने वाले सूर्य का नाम धाता है। वही प्रजापति के रूप में सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करते हैं। धाता भगवान् सूर्य के बारह स्वरूपों में दूसरे स्वरूप हैं। जब भगवान् विष्णु के नाभि कमल से धाता (ब्रह्मा का) प्राकट्य हुआ तो सर्वप्रथम उनके मुख से ऊँ की ध्वनि निकलकर सारे जगत् में व्याप्त हो गई। वह ऊँ के रूप में समस्त जगत् का कारण ज्योतिर्मय स्तम्भ ही सूर्य है। वही सूर्य धाता (ब्रह्मा) के रूप में सृष्टि करते हैं तथा विष्णु रूप में पालन और शिव रूप में संहार करते हैं। चैत्र मास में रविवार के दिन धाता की पूजा करने, अर्घ्य देने तथा नैवेद्य में घृत, पूरी तथा अनार चढ़ाने से भगवान् सूर्य भक्तों का सभी तरह कल्याण करते हैं। 'भानवे नमः' इस मन्त्र से सूर्य की पूजा करनी चाहिये तथा स्वयं चैत्र में रविवार को केवल दूध पीकर व्रत करना चाहिए।

2. अर्यमा सूर्य

अर्यमा पुलहोऽथोर्जः प्रहेतिः पुंजिकस्थली।

नारदः कच्छनीरश्च नयन्त्येते स्म माधवम्।।

मेरुशृंगान्तरचरः कमलाकरबान्धवः।

अर्यमा तु सदा भूत्यै भूयस्यै प्रणतस्य मे।।

वैशाख मास में सूर्य अर्यमा नाम से विख्यात है तथा पुलह ऋषि, उर्ज, यक्ष, पुंजिकस्थली अप्सरा, प्रहेति राक्षस, कच्छनीर सर्प और नारद नामक गन्धर्व के साथ अपने रथ पर निवास करते हैं। मेरु पर्वत के शिखर पर भ्रमण करने वाले तथा कमलों के वन को विकसित करने वाले भगवान् अर्यमा मुझ प्रणाम करने वाले का सदा कल्याण करें। अर्यमा सूर्य दस सहस्र किरणों के साथ तपते हैं तथा पीतवर्ण है।

भगवान् सूर्य के छठे अवतार का नाम अर्यमा है। यह वैशाख मास में तपते हैं। वायु रूप में चराचर के अधिपति हैं। श्राद्ध में पितरों की तुष्टि इन्हीं की तृप्ति से होती है। यज्ञ में मित्र और वरुण के साथ ये 'स्वाहा' तथा श्राद्ध में 'स्वधा' का दिया हव्य-कव्य दोनों स्वीकार करते हैं। अर्यमा मित्रता के अधिष्ठाता हैं। मित्र की प्राप्ति, मित्रता का निर्वाह आदि इन्हीं की कृपा से सम्भव होता है। वंश परम्परा की रक्षा के लिये भी इनकी आराधना का विधान है। किसी भी प्रकार की पैतृक व्याधि की शान्ति अर्यमा की पूजा से सहज ही हो जाती है। वैशाख मास के प्रत्येक रविवार को 'तपनाय नमः' कहकर सूर्य की पूजा करें। नैवेद्य में उड़द, घृत तथा अर्घ्य में अँगूर या मुनक्का दें। ब्राह्मण को भोजन और दक्षिणा दें।

3. मित्र सूर्य

मित्रोऽत्रिः पौरुषेयोऽथ तक्षको मेनका हहा।

रथस्वन इति ह्येते शुक्रमासं नयन्त्यमी।।

निशानिवारणपटुरुदयाद्रिकृताश्रयः ।

मित्रोस्तु मम मोदाय तमस्तोमविनाशनः।।

जो भगवान् सूर्य ज्येष्ठ मास में मित्र नाम से जाने जाते हैं तथा जिनके साथ अत्रि ऋषि, तक्षक सर्प, पौरुषेय राक्षस, मेनका अप्सरा, हाहा गन्धर्व और रथस्वन नामक यक्ष निवास करते हैं। वे रात्रि के निवारण में अत्यन्त पटु, उदय पर्वत पर निवास करने वाले और अन्धकार राशि का विनाश करने वाले भगवान् मित्र हमें आनन्द प्रदान करें। मित्र आदित्य सात सहस्र किरणों से तपते हैं तथा उनका अरुण वर्ण हैं।

मित्र आदित्य भगवान् सूर्य के बारहवें अवतार हैं। समस्त ब्रह्माण्डों के हित के लिये चन्द्रभागा नदी के तट पर कठोर तपस्या करने के कारण इनका मित्र नाम प्रसिद्ध हुआ। ज्येष्ठ मास में इनकी उपासना का विशेष महत्त्व है। ज्येष्ठ में प्रत्येक रविवार को 'मित्राय नमः' कहकर इनको अर्घ्य देना चाहिये। नैवेद्य में सत्तू, दही और दलिया चढ़ाना चाहिये। दान में ब्राह्मण को दही, चावल, आम और दक्षिणा देनी चाहिये। मित्र आदित्य की उपासना और कृपा से कुष्ठ जैसे भयानक रोग दूर हो जाते हैं।

4. वरुण सूर्य

वसिष्ठो ह्यरुणो रम्भा सहजन्यस्तथा हुहूः।
शुकश्चित्रस्वनश्चैव शुचिमासं नयन्यमी।।
सूर्यस्यन्दनमारूढ अर्चिर्मालीप्रतापवान्।
कालभूतः कामरूपो ह्यरुणस्सेव्यते मया।।

आषाढ़ मास में तपने वाले सूर्य का नाम अरुण (वरुण) है। उनके साथ वसिष्ठ ऋषि, सहजन्य नाग, रम्भा अप्सरा, हूहू गन्धर्व, शुक राक्षस तथा चित्रस्वन नामक यक्ष रहते हैं। रथ पर आरूढ़ तथा किरण जाल से समाविष्ट, काल के स्वामी, परम प्रतापी और इच्छानुसार रूप धारण करने वाले भगवान् अरुण (वरुण) की मैं उपासना करता हूँ। अरुण (वरुण) आदित्य पाँच सहस्र किरणों से तपते हैं तथा उनका वर्ण श्याम है।

सूर्य देव के ग्यारहवें लीला मूर्ति का नाम वरुण है। यह जल में रहकर प्रजा को पोषण करते हैं। आषाढ़ मास में प्रत्येक रविवार को 'रवये नमः' कहकर सूर्य की पूजा करनी चाहिये। नैवेद्य में चिउड़ा तथा अर्घ्य में जायफल देना चाहिए। ब्राह्मण को दही-भात का भोजन तथा दक्षिणा देनी चाहिये। स्वयं केवल तीन दाना मरिच खाकर व्रत करना चाहिए। वरुण आदित्य का उपासक कभी दरिद्रता का कष्ट नहीं भोगता।

इनकी उपासना से पुत्र प्राप्ति होती है। वरुण आदित्य ही जल के अधिष्ठाता हैं। वे समुद्रों के स्वामी हैं। वे अपनी आराधना करने वाले के समस्त कल्याणों का विधान करके उसका पालन-पोषण करते हैं। वे शत्रुओं के नाशक, अर्यमा और मित्र के सहचर तथा संसार के साक्षी हैं। ऋग्वेद के अनुसार वे भक्तों की अभिलाषा पूर्ण करने वाले तथा धन देने वाले हैं। वे पश्चिम दिशा के स्वामी तथा

कश्यप-अदिति के पुत्र हैं।

5. इन्द्र सूर्य

इन्द्रो विश्वावसुश्श्रोता चेलापुत्रस्तथाङ्गिराः।
प्रम्लोचा राक्षसश्शर्यो नभोमासं नयन्त्यमी।।
सहस्ररश्मिसंवीतमिन्द्रं वरदमाश्रये।
शिरसाप्रणमाम्यद्य श्रेयो वृद्धिप्रदायकम्।।

श्रावण मास के अधिपति सूर्य का नाम इन्द्र आदित्य है। वे अपने रथ पर अंगिरा ऋषि, विश्वावसु गन्धर्व, प्रम्लोचा अप्सरा, एलापुत्र नाग, श्रोता यक्ष तथा शर्य राक्षस के साथ चलते हैं। मैं सहस्र रश्मियों से आवृत ऐसे वरदाता इन्द्र आदित्य की शरण ग्रहण करता हूँ। शिर से प्रणाम करता हूँ। वे मुझे कल्याण व वृद्धि प्रदान करें। इन्द्र आदित्य सात सहस्र रश्मियों से तपते हैं तथा उनका वर्ण श्वेत हैं।

भगवान् सूर्य का प्रथम लीला-विग्रह इन्द्र नाम से प्रसिद्ध है। यह देवराज के पद पर आसीन हैं। ये देवताओं के रक्षक तथा वृष्टि के स्वामी हैं। वृष्टि से ही संसार का जीवन चलता है। वैदिक काल में इन्द्र के निमित्त अनेक यज्ञ होते थे। त्रेता में वानरराज वाली और द्वापर में अर्जुन इन्हीं के अंश से उत्पन्न हुए थे। द्वापर में जब भगवान् श्रीकृष्ण ने इनका यज्ञ बन्द करवा दिया, तब नाराज होकर ये सात दिन तक लगातार प्रलय-वृष्टि करते थे। भगवान् श्रीकृष्ण के ग्वाल-बालों की इनके कोप से रक्षा करने के लिये गोवर्धन पर्वत उठाना पड़ा था। इन्होंने दीर्घकाल तक ब्रह्मचर्य पूर्वक रहकर ब्रह्मा जी से ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया था। अध्यात्म ज्ञान मानव-जगत् में इन्हीं की कृपा से आया। इन्द्र आदित्य ही आयुर्वेद के आदि उपदेष्टा हैं। भगवान् धन्वन्तरि ने इन्हीं से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया था। इन्द्र आदित्य की प्रसन्नता के लिये श्रावण मास के प्रत्येक रविवार को व्रत करना चाहिये और बिना नमक के केवल एक समय भोजन करना चाहिये। श्रावण मास में 'इन्द्राय नमः' कहकर भगवान् सूर्य को अर्घ्य देने वाले पर भगवान् सूर्य परम प्रसन्न होकर उसे ऐश्वर्य और विद्या देते हैं। 'गभस्तयो नमः' कहकर श्रावण के सूर्य की करवीर पुष्प से पूजा करनी चाहिये। नैवेद्य में सत्तू, पूरी तथा खीरा चढ़ाना चाहिये। ब्राह्मण को रविवार के दिन भोजन तथा दक्षिणा देनी चाहिए।

6. विवस्वान् सूर्य

विवस्वानुग्रसेनश्च व्याघ्र आसारणो भृगुः।
अनुम्लोचाश्शंखपालो नभस्याख्यं नयन्त्यमी।।
जगन्निर्माणकर्त्तारं सर्वदिग्व्याप्ततेजसम्।
नभोग्रहमहादीपं विवस्वन्तं नमाम्यहम्।।

भाद्रपद मास में विवस्वान् नामक आदित्य (सूर्य) भृगु ऋषि, अनुम्लोचा अप्सरा, उग्रसेन गन्धर्व, शंखपाल नाग, आसारण यक्ष तथा व्याघ्र राक्षस के साथ अपने रथ पर चलते हैं। मैं जगत् के

निर्माणकर्ता, सारी दिशाओं में व्याप्त तेज वाले आकाशचारी ग्रह, महादीप भगवान् विवस्वान् को प्रणाम करता हूँ। विवस्वान् सूर्य दस सहस्र रश्मियों से तपते हैं, उनका वर्ण वभ्रु है।

भगवान् सूर्य का आठवाँ स्वरूप साक्षात् अग्नि देव का है। अग्नि को ही विवस्वान् कहते हैं। इसका अर्थ यह है कि अग्नि में जो ताप या ऊष्मा है, वह विवस्वान् स्वरूप है। जल को शोषण, शीत-निवारण और प्राणियों के भोजन का पाचन यह सब अग्नि का कार्य है। वैसे तो विवस्वान् सूर्य भाद्रपद मास में सूर्य के रथ के अधिपति हैं। लेकिन जहाँ भी अग्नि है, वहाँ विवस्वान् देव की ही उपस्थिति मानी जाती है। अग्नि देव के रूप में भगवान् विवस्वान् ही दक्षिण और पूर्व दिशा के मध्य कोण के स्वामी हैं। प्राणियों के भीतर वही जठराग्नि रूप से अन्न का पाचन करते हैं। समुद्र में वडवाग्नि के रूप में भगवान् विवस्वान् ही प्रज्वलित रहते हैं। वन में दावाग्नि तथा सूर्य मण्डल में इन्हीं को दिव्याग्नि कहा जाता है। लोक में व्यक्त एवं अव्यक्त रूप में वही अग्नि है। वही ज्ञान के स्वरूप हैं। भाद्रपद मास में प्रत्येक रविवार को व्रत रखकर भगवान् विवस्वान् को अर्घ्य देना चाहिये तथा 'यमाय नमः' कहकर चावल, घृत और कुम्हड़ा चढ़ाना चाहिए। इनकी कृपा से बुद्धि और यश प्राप्त होता है।

7. पूषा सूर्य

पूषा धनंजयो धाता सुषेणस्सुरुचिस्तथा।
घृताची गौतमश्चेति तपोमासं नयन्त्यमी।।
पूषा तोषाय मे भूयात्सर्वपापापनोदनात्।
सहस्रकरसंवीतस्समस्ताशान्तरान्तरः ।।

आश्विन मास में सूर्य के रथ पर पूषा नामक आदित्य, गौतम ऋषि, घृताची अप्सरा, सुरुचि गन्धर्व, धनंजय नाग, सुषेण यक्ष तथा धाता राक्षस के साथ परिभ्रमण करते हैं। सहस्र रश्मियों से आवृत भगवान् पूषा मेरे सभी पापों का नाश करके मुझे संतोष प्रदान करें। पूषा आदित्य छः सहस्र रश्मियों से तपते हैं तथा उनका अलक्तक वर्ण है।

भगवान् सूर्य के पाँचवें विग्रह का नाम पूषा है। ये अन्न में रहकर प्रजाजनों की पुष्टि करते हैं। यही आश्विन मास में सूर्य के रथ पर अपने सहचरों के साथ रहते हैं। पूषा आदित्य पशु सम्पत्ति की वृद्धि करते हैं। यही इन्द्रजाल क्रिया के मुख्य देवता हैं। आश्विन मास के प्रत्येक रविवार को 'हिरण्यरेतसे नमः' कहकर पूषा सूर्य की पूजा करनी चाहिए। नैवेद्य में चीनी तथा अनार चढ़ाना चाहिये। ब्राह्मण को भक्ति परायण होकर भोजन, चावल और चीनी देनी चाहिये।

8. पर्जन्य सूर्य

क्रतुर्वर्चा भरद्वाजः पर्जन्यस्सेनजित्तथा।
विश्वश्चैरावतश्चैव तपस्याख्यं नयन्त्यमी।।
प्रपंचं प्रतपन्भूयो वृष्टिभिर्मादयन्पुनः।

जगदानन्दजनकः पर्जन्यः पूज्यते मया।।

कार्तिक मास में सूर्य के रथ पर पर्जन्य आदित्य (सूर्य) भारद्वाज ऋषि, वर्चा गन्धर्व, ऐरावत नाग, सेनजित् यक्ष तथा विश्व राक्षस के साथ संचरण करते हैं। जो समस्त सृष्टि को प्रतप्त करने के पश्चात् पुनः वृष्टि द्वारा आनन्द प्रदान करते हैं, उन भगवान् पर्जन्य की मैं पूजा करता हूँ। पर्जन्य आदित्य नौ हजार रश्मियों से तपते हैं तथा उनका वर्ण अरुण है।

सूर्य देव का तीसरा लीला-विग्रह पर्जन्य के नाम से विख्यात है। यह बादलों में स्थित होकर अपनी किरणों द्वारा वर्षा करते हैं। कार्तिक मास के प्रत्येक रविवार को अगस्त्य, पुष्प तथा अपराजित धूप के द्वारा उनकी पूजा करनी चाहिये। नैवेद्य के स्थान पर गुड़ के बनाये हुए पूए तथा ईख का रस चढ़ाना चाहिए, उसी नैवेद्य के द्वारा ब्राह्मण को यथाशक्ति भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिये। कार्तिक मास में जो सूर्यदेव के मन्दिर में दीप दान करता है, उसे सम्पूर्ण यज्ञों का फल प्राप्त होता है और वह सूर्य के समान तेजस्वी होता है।

9. अंशुमान् सूर्य

अथांशुः काश्यपस्तार्क्ष्य ऋतसेनस्तथोर्वशी।
विद्युच्छत्रुर्महाशंखस्सहोमासं नयन्त्यमी।।
सदा विद्रावणरतो जगन्मङ्गलदीपकः।
मुनींद्रनिवहस्तुल्यो भूतिदोंशुर्भवेन्मम।।

मार्गशीर्ष मास में अंशुमान् सूर्य (आदित्य) कश्यप ऋषि, उर्वशी अप्सरा, ऋतसेन गन्धर्व, महाशंख नाग, तार्क्ष्य यक्ष तथा विद्युच्छत्रु राक्षस के साथ अपने रथ पर संचरण करते हैं। अन्धकार का नाश तथा शत्रु दमन करने में समर्थ, सारे जगत् के मंगल-दीपक और मुनिवृंदों द्वारा नित्य वन्दनीय भगवान् अंशुमान् हमें सदा ऐश्वर्य प्रदान करें। अंशुमान् आदित्य नौ सहस्र किरणों से तपते हैं और उनका वर्ण हरा है।

भगवान् सूर्य के दसवें स्वरूप को अंशुमान् कहते हैं। ये मार्गशीर्ष मास के अधिपति हैं। यह वायुरूप में प्राण तत्त्व बनकर समस्त प्राणियों को सजग, सतेज तथा प्रसन्न बनाये रखते हैं। तात्पर्य यह है कि वायु में भी सूर्य का तत्त्व ही समाहित है। अंशु का एक अर्थ है, रश्मि, ऊष्मा। मार्गशीर्ष मास में भगवान् सूर्य अंशुमान् रूप से शीत के प्रभाव को कम करके प्राणियों को सुख देते हैं। पुराणों के अनुसार अंशुमान् सूर्य वायु रूप से कश्यप-अदिति के पुत्र हैं। ऐसी कथा है कि जब भगवान् विष्णु ने हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु को मार डाला तो दैत्य माता दिति अत्यन्त दुःखी थीं। दिति का रोष इन्द्र पर था। इन्द्र के लिये ही तो उनके पुत्र मारे गये। इसलिये उन्होंने बड़े संयम और प्रेम से महर्षि कश्यप को प्रसन्न किया। दिति ने सन्तुष्ट पति से इन्द्र का वध करने वाला पुत्र चाहा। महर्षि कश्यप ने दिति को पुंसवन-व्रत करने का आदेश दिया। जब इन्द्र को इस रहस्य का पता लगा तो वे चिन्तित हो गये। वे दिति की सेवा करने लगे। दिति व्रत-पालन में अत्यन्त सावधान रहती थीं, परन्तु एक दिन

प्रमादवश सन्ध्याकाल में सो गयीं। इन्द्र को मौका मिल गया और उन्होंने उनके गर्भ में घुसकर गर्भ को उनचास टुकड़ों में काट डाला, पर वे टुकड़े मरे नहीं। वे बस व्रत के प्रभाव से उनचास बालक हो गये। इन्द्र ने उनको देवता बना लिया। वायु के उनचास रूप हैं और वायु मूलरूप से अंशुमान् आदित्य ही हैं। इनकी आराधना से शरीर स्वस्थ रहता है तथा सिद्धि के साथ ऐश्वर्य भी प्राप्त होता है। मार्गशीर्ष में प्रत्येक रविवार को व्रत करना चाहिये तथा भगवान् सूर्य को नैवेद्य में चावल, घृत तथा गुड़ के साथ नारियल चढ़ाना चाहिये।

10. भग सूर्य

भगः स्फूर्जोऽरिष्टनेमिरूर्ण आयुश्च पश्चमः।
कर्कोटकः पूर्वचित्तिः पौषमासंनयन्त्यमी।।
तिथिमांसऋतूनां च वत्सरायनयोरपि।
घटिकानां च यः कर्ता भगो भाग्य प्रदोऽस्तु मे।।

पौष मास में भग नामक आदित्य (सूर्य) अरिष्टनेमि ऋषि, पूर्वचित्ति अप्सरा, ऊर्ण गन्धर्व, कर्कोटक सर्प, आयु यक्ष तथा स्फूर्ज राक्षस के साथ अपने रथ पर संचरण करते हैं। तिथि, मास, संवत्सर, अयन, घटी आदि के अधिष्ठाता भगवान् भग मुझे सौभाग्य प्रदान करें। ग्यारह हजार रश्मियों से तपने वाले भगवान् भग का रक्त वर्ण है।

भगवान् सूर्य के सातवें विग्रह का नाम भग है। यह ऐश्वर्य रूप से समस्त सृष्टि में निवास करते हैं तथा पौष मास में सूर्य के रथ पर चलते हैं। भग का अर्थ - सूर्य, चन्द्रमा, शिव, सौभाग्य, प्रसन्नता, यश, सौन्दर्य, प्रेम, गुण-धर्म, प्रयत्न, मोक्ष तथा शक्ति है। पौष के भयंकर शीत में सूर्य चन्द्र की भाँति शैत्य बढ़ाकर, शिव की भाँति कल्याण कर प्रकृति में स्वर्गीय सुषमा की सृष्टि करते हैं तथा अपने उपासकों को ऐश्वर्य और मोक्ष प्रदान करते हैं। सम्पूर्ण ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान, वैराग्य-ये छः भग कहे जाते हैं और इनके स्वामी विष्णु हैं, अतः पौष मास के प्रत्येक रविवार को 'विष्णवे नमः' कहकर सूर्य को अर्घ्य देना चाहिये। नैवेद्य में भगवान् सूर्य को तिल, चावल की खिचड़ी तथा अर्घ्य में बिजौरा नीबू देना चाहिये।

11. त्वष्टा सूर्य

त्वष्टा ऋचीको रक्षश्चकम्बलाख्यस्तिलोत्तमा।
ब्रह्मरातोऽथ शतजिद्धृतराष्ट्र इषंभरा।।
त्वष्टा शुभाय मे भूयाच्छिष्टावलिनिषेवितः।
नानाशिल्पकरो नानाधातुरूपः प्रभाकरः।।

माघ मास में त्वष्टा नामक सूर्य (आदित्य) ब्रह्मरात ऋषि, तिलोत्तमा अप्सरा, धृतराष्ट्र गन्धर्व, कम्बल नाग, शतजित् यक्ष तथा ऋचीक राक्षस के साथ अपने रथ पर चलते हैं। वे शिष्टों द्वारा सेवित, नाना शिल्पों के आविष्कर्ता, विविध धातुमय, प्रभाकर भगवान् त्वष्टा मेरा शुभ करें। त्वष्टा

आठ हजार रश्मियों से तपते हैं, उनका चित्र वर्ण है।

भगवान् सूर्य के चौथे विग्रह का नाम त्वष्टा है। माघ मास में त्वष्टा नामक सूर्य तपते हैं। वे सम्पूर्ण वनस्पतियों तथा औषधियों में स्थित रहते हैं। त्वष्टा कहते हैं - देवशिल्पी विश्वकर्मा को। यह नाम भी सार्थक है, क्योंकि माघ मास में त्वष्टा प्रकृति के उपादानों को एक कुशल शिल्पी की भाँति तराशकर (काट-छाँटकर) सुन्दर स्वरूप प्रदान करते हैं। सर्वमेध के द्वारा इन्होंने जगत् की सृष्टि की और आत्म बलिदान करके निर्माण कार्य पूरा किया। ये समस्त शिल्प के अधिदेवता हैं। भगवान् श्रीराम के लिये समुद्र पर सेतु निर्माण करने वाले नल-नील इन्हीं के अंश से पैदा हुए थे। अपने शिल्प कर्म की उन्नति के लिये हिन्दू-शिल्पी भाद्रपद की संक्रान्ति को इन्हीं की आराधना करते हैं। उस दिन शिल्प का कोई उपकरण व्यवहार में नहीं आता। माघ मास के शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि को उपवास करके गन्धादि उपचारों से भगवान् सूर्य की पूजा करनी चाहिये तथा रात्रि में उनके सम्मुख शयन करना चाहिये। इसके बाद प्रातःकाल सप्तमी को विधिपूर्वक पूजा करें और उदारतापूर्वक ब्राह्मणों को भोजन करायें। इस प्रकार माघ से फाल्गुन मास पर्यन्त एक वर्ष तक सप्तमी का व्रत करना चाहिये तथा भगवान् सूर्य की रथ यात्रा निकालनी चाहिये। रथस्थ भगवान् सूर्य की भली-भाँति पूजा कर तथा सुवर्ण, रत्नादि से अलंकृत सूर्य नारायण की प्रतिमा की प्रतिष्ठा कर ब्राह्मण को दान कर दें। यह माघ सप्तमी बहुत उत्तम तिथि है। इस दिन भगवान् सूर्य के निमित्त की गयी पूजा और दान हजार गुना अधिक फलदायक हो जाते हैं। जो कोई भी इस व्रत को करता है, उसके सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। रथ सप्तमी के माहात्म्य का श्रवण करने वाला व्यक्ति ब्रह्म हत्या जैसे महान् पाप से भी मुक्त हो जाता है।

12. विष्णु सूर्य

विष्णुरश्वतरो रम्भा सूर्यवर्चाश्च सत्यजित्।
विश्वामित्रो महाप्रेत ऊर्जमासं नयन्त्यमी।।
भानुमण्डलमध्यस्थं वेदत्रयनिषेवितम्।
गायत्रीप्रतिपाद्यं तं विष्णुं भक्त्या नमाम्यहम्।।

फाल्गुन मास में विष्णु (आदित्य) सूर्य के साथ उनके रथ पर विश्वामित्र ऋषि, रम्भा अप्सरा, सूर्यवर्चा गन्धर्व, सत्यजित् यक्ष, अश्वतर नाग तथा महाप्रेत राक्षस रहते हैं। ऐसे भानु मण्डल के मध्य में स्थित, तीनों वेदों द्वारा सेवित तथा गायत्री द्वारा प्रतिपाद्य विष्णु आदित्य को मैं भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ। विष्णु आदित्य छः सहस्र रश्मियों से तपते हैं, उनका वर्ण अरुण है।

फाल्गुन के सूर्य का नाम है - विष्णु। पराशर जी के अनुसार विष्णु का अर्थ है - रक्षक, विश्व व्यापक। यह सम्पूर्ण विश्व उन परमात्मा की शक्ति से ही व्याप्त है, अतः वे विष्णु कहलाते हैं, क्योंकि विश धातु का अर्थ - प्रवेश करना। फाल्गुन मास में पहुँचते-पहुँचते सूर्य शक्ति सम्पन्न हो जाते हैं। वह ठण्ड से सिकुड़ी हुई सृष्टि में शक्ति का संचार करते हैं। उनकी उत्पादक शक्ति प्रखर हो जाती है। इस प्रकार एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति की भाँति विष्णु आदित्य सृष्टि के पालन की भूमिका को सम्पन्न करते हैं।

देवताओं के शत्रुओं का संहार करने वाले तथा समस्त सृष्टि का पालन करने वाले भगवान् विष्णु वास्तव में सूर्य के ही अवतार हैं। इन्हें ही द्वादशादित्यों में विष्णु कहा जाता है। शतपथ ब्राह्मण में विष्णु आदित्य का ही वामन नाम से उल्लेख हुआ है। ऋग्वेद-संहिता में इसी विष्णु आदित्य के लिये 'उरुगाय नमः' तथा 'उरुक्रम' विशेषण का प्रयोग हुआ है। अतः सूर्यरूप विष्णु का अर्थ है-सर्वत्र गमनशील। ऋग्वेद में ही विष्णु के तीन पदों का प्रयोग बारह बार हुआ है। इसका अर्थ है कि तीन पदो के द्वारा विष्णु ने तीनों लोकों को व्याप्त कर लिया है। सायण के अनुसार द्युलोक या सत्यलोक विष्णु आदित्य का तृतीय पद है। इसी विष्णु आदित्य की उपासना देवमाता अदिति ने पयोव्रत के द्वारा किया था और यह वामन रूप में प्रकट होकर अपने तीन पदों से तीनों लोकों को नाप लिये थे। श्रीमद्भागवत में पयोव्रत की बड़ी महिमा बतायी गयी है। फाल्गुन मास में पयोव्रत द्वारा विष्णु रूपी आदित्य की उपासना करने से सूर्य के समान यशस्वी पुत्र की प्राप्ति होती है।

2. बोधात्मक प्रश्न

1. चैत्रमास के सूर्य का नाम क्या है?
2. काश्यप किसे कहा जाता है?
3. अर्यमा किस मास के सूर्य का नाम है?
4. श्रावण मास के अधिपति सूर्य का क्या नाम है?
5. फाल्गुन के सूर्य का नाम क्या है?
6. उरुगाय शब्द किसके लिए प्रयुक्त है?

1.6 सारांश

प्रस्तुत ''आदित्य हृदय स्तोत्र'' नामक इस इकाई में भगवान् आदित्य की प्रसन्नता एवं आरोग्य प्राप्ति के लिए आदित्य हृदय स्तोत्र का सविधि स्तोत्र पाठ अर्थ के साथ आपके सामने प्रस्तुत किया गया।

विशेष रूप से कुष्ठ आदि रोगों से ग्रस्त जीवों के लिए तथा स्वयं को स्वास्थ्य सुख की प्राप्ति की कामना से इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। दूसरी बात यह है कि उदीयमान सूर्य को देखते हुए इस स्तोत्र का तीन बार पाठ करना चाहिए। जो इस स्तोत्र के फलश्रुति में भी कहा गया है - एतत् त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यति'। अस्तु।

इसके साथ ही बारह महीनों के भिन्न-भिन्न नाम वाले 12 सूर्यों का वर्णन भी अर्थ के साथ किया गया है। जिसमें उनका ध्यान एवं उनके साथ में रहने वाले उनके गणों की भी चर्चा की गई है। जिसका आधारग्रन्थ शुक्लयजुर्वेदीय माध्यन्दिन संहिता है। जिसके 15वें अध्याय में इनका वर्णन प्राप्त होता है। प्रकारान्तर से वैदिक द्वादश आदित्य ही चैत्रादि बारह महीनों के अधिष्ठाता हैं। यह ज्ञानवर्धक होगा आपके लिए।

इस प्रकार ये दोनों स्तोत्र अर्थ सहित आपके लिए प्रस्तुत है। ये स्तोत्र केवल पठनीय ही नहीं है अपितु अनुकरणीय भी है। अस्तु।

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

क. निरीक्ष्य = देखकर

ख. प्रहृष्यमाणः = प्रसन्न होकर

ग. कान्तारेषु = दुर्गम मार्ग में

घ. पूर्वगिरि = उदयाचल

ङ. उग्र = भयंकर

च. भुवनेश्वर = संसार के स्वामी

छ. तपोमास = आश्विन महीना

ज. तपस्य = कार्तिक महीना

झ. सहोमास = मार्गशीर्ष

´. दिति = दैत्यों की माता

बोध प्रश्न 1 के उत्तर

क. आदित्य के माता का नाम अदिति था।

ख. आरोग्य सुख के लिए भगवान् सूर्य की आराधना करनी चाहिए।

ग. आदित्य हृदय स्तोत्र का उपदेष अगस्त्य ऋषि ने श्रीराम को दिया था।

घ. यह स्तोत्र वाल्मीकीय रामायण के युद्धकाण्ड के 105वें सर्ग से उद्धृत है।

ङ. इस स्तोत्र में 31 श्लोक हैं।

च. अदिति के पति कश्यप थे।

बोध प्रश्न 2 के उत्तर

1. चैत्रमास के सूर्य का नाम धाता है।
2. काश्यप सूर्य को कहा गया है।
3. वैशाखमास के सूर्य का नाम अर्यमा है।
4. श्रावणमास के अधिपति सूर्य का नाम इन्द्र है।
5. फाल्गुन मास के सूर्य का नाम विष्णु है।
6. उरुगाय शब्द विष्णु के लिये प्रयुक्त है।

1.8 सन्दर्भग्रन्थूसची

क. वाल्मीकीय रामायणम् - युद्धकाण्डम्

ख. सूर्यपुराण

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

क. आदित्यहृदय स्तोत्र के पारंभिक 10 श्लोंको अर्थ सहित लिखें।

ख. बारह महीनों के 12 सूर्यों का नाम लिखें।

इकाई – 2 अन्नपूर्णा स्तोत्र

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना-

इस इकाई से पूर्व की इकाई में आपको आदित्य हृदयस्तोत्र के पाठ की विधि विनियोग के साथ बता दी गई है । उसके साथ ही स्तोत्र पाठ का फल महत्व आदि भी आपको ज्ञात हो गया होगा ।

बारह महीनों के सूर्यो का नाम (जिन्हें द्वादशादित्यों के रूप में पुराणों के अनुसार जाना जाता है) भी श्लोको के साथ बताया जा चुका है। सरलता के लिए उसकी हिन्दी व्याख्या भी प्रस्तुत की गई है।

प्रस्तुत इस इकाई में अन्नपूर्णा स्तोत्र के विषय में आप अध्ययन करेगें। इसके साथ ही पाठ की विधि एवं फल भी बताया जायेगा जो मानव जीवन की उपासना के क्रम में अनिवार्य है।

2.2 उद्देश्य-

यह अन्नपूर्णास्तोत्र, भगवती-अन्नपूर्णा की उपासना है। इसके पाठ से घर में सदा सुख एवं शान्ति बनी रहती है। साथ ही घर धन धान्य से पूर्ण एवं वैभव से सम्पन्न हो जाता है। जन्म-जन्मान्तर की दरिद्रता दूर हो जाती है। आज के समाज में समस्त लोग धन-धान्य से पूर्ण होना चाहते है। अतः वर्तमान समाज के लिए यह स्तोत्र-पाठ अत्यन्त लाभदायक है।

2.3 अन्नपूर्णास्तोत्र का परिचय

अन्नपूर्णा शब्द का अर्थ यह है कि जो, अन्न, धन, धान्यादि से स्वयं पूर्ण हो एवं अपने आश्रित जनों को भी धनादि से पूर्ण करें वही अन्नपूर्णा है। जैसा कि - संस्कृत-व्युत्पत्ति के अनुसार हम इसे इस प्रकार समझ सकते है - अन्नेन विविधभोग्यजातेन आश्रितजनान् या पूरयति सा अनपूर्णा। इसका भाव यह है कि विश्व के समस्त प्राणियों का जो भरण पोषण करें वही अन्नपूर्णा हैं। आप अनुभव करते होगें कि भरण पोषण की अत्यन्त उत्तम-क्षमता जितनी माताओं में होती हैं, उतनी क्षमता संसार के किसी भी मानव विशेष में नही होती हैं। इसीलिए यह भरण पोषण का कार्यभार यहाँ माता के लिए परमात्मा ने प्रदान किया। यहि नही पिता शिव स्वयं जिसके आश्रित हो वही माता अन्नपूर्णा है। यहां आप देखे साक्षात् भगवान्-शिव भी माता-अन्नपूर्णा से भिक्षा ग्रहण करते हुए कुछ चित्रों में दिखाई देते है। अतः विश्व का भरण पोषण करने में समर्थ माता अन्नपूर्णा के अलावा कोई भी नही होसकता। 'अन्नं सकलभोग्यं यस्या सा अन्नपूर्णा' अर्थात् ब्रह्माण्ड के अन्नकोषागार को जो पूर्ण करें एवं जो विविध भोग्यपदाथों को स्वामिनि हैं, वही अन्नपूर्णा है। यह परमात्मा की कृपाशक्ति के रूप में अवतार ग्रहण करके सम्पूर्ण प्रणियों का पालन करती हैं। आज भी काशी में एक प्रसिद्धि है कि काशी में रहने वाला कोई भी प्राणी रात्रि में विना भोजन के (भुखे) नही सो सकता है। दिन में आहार मिले या ना मिले परन्तु रात्रि में माता-अन्नपूर्णा उसे सोने से पहले अवश्य ही भोजन कराकर

शयन कराती है। अस्तु!

लोकव्यवहार में भी देखा जाय तो प्राचीन लोग पहले के जमाने में घर में उत्तम गृहिणियों को अन्नपूर्णा शब्द से व्यवहार करते थे। जिनके अभाव में उन्हें घर में उत्तम स्वादिष्ट एवं आरोग्य वर्धक भोज्य पदार्थ प्राप्त नही हो सकता था। शायद इसीलिए उन्हें अन्नपूर्णा कहा जाता रहा होगा। भाई! भोजन तो माता के हाथ से ही उत्तम रहता है। माँ के हाथ का भोजन अमृत तुल्य हो ता है। इसीलिए उत्तम - नारियों के लिए 'भोज्येषु माता' कहा गया है । पुरा श्लोक इस प्रकार से है-

कायेषु मन्त्री करणेषु दासी, भोज्येषु माता शयने सुरम्भा।
धर्मानुकूला क्षमया धरित्री भार्या च षाड्गुण्यवतीह दुर्लभा।।

इस प्रकार लोक में ये मातायें अन्नपूर्णा के रूप में ही देखी जाती हैं ओर देखा जाना भी चाहिए। इस प्रकार की दृष्टि हो जाने पर समाज में कहीं भी दोष नही आयेगा। यहाँ प्रसंगतः ही इसकी चर्चा हो गाई ।

लोक में जो एक परिवार के भरणपोषण या विभिन्न-भोज्य पदार्थ-प्रदान की शक्ति से सम्पन्न है, यदि उसे अन्नपूर्णा की संज्ञा दी गई है तो विचार करें! जो विश्वका भरण-पोषण करता है उसे अन्नपूर्णा देवता मानने में भला सन्देह ही कहा है। इस प्रकार उसी अन्नपूर्णा माता की कृपा से धर में भी सुयोग्य अन्नपूर्णा प्राप्त होती है यह सर्वदा सत्य है।

यह अन्नपूर्णा-स्तोत्र आदिशंकराचार्यजी द्वारा विरचित है। इसमें 12 श्लोक हैं जो अत्यन्त सरल एवं भावपूर्ण है। इनके अर्थ भी सरल ही है। इसके श्रद्धा एवं विश्वास पूर्वक पाठ से व्यक्ति निश्चित ही धनधान्य एवं विविध वैभव से पूर्ण हो जाता है। इस स्तोत्र के प्रत्येक तीसरे चरण में 'काशीपुराधीश्वरी' इस पद का प्रयोग किया गया है आप जानते हैं शास्त्र प्रसिद्धि यही है कि काशी सप्तपूरीयों में एक है क्योंकि-

अयोघ्या मथुरा माया काशी कांची ह्यवन्तिका ।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिका ।।

यहां के अधीश्वर (राजा) भगवान शिव है एवं अधीश्वरी (महारानी) भगवती-अन्नपूर्णा है। इसी लिए 'काशीपुराधीश्वरी' पद का प्रयोग भगवान् शंकराचार्य ने बार बार किया है। शंकराचार्य शिव के परम-भक्त थें जिन्हे आप लोग अच्छितरह जानते हैं। काशीवास के समय में इस पुनीत स्तोत्र की रचना उन्होंने की, जिससे भगवती-अन्नपूर्णा का साक्षात्कार उन्हें हुआ था। साक्षात्कार का तात्पर्य प्रत्यक्ष दर्शन से है। आप आश्चर्य न करें यह कोई विशेष बात तत् कालीन सन्तों, महात्माओं, एवं आचार्यों के लिए नहीं थी। आप देखें, लगभग 500 वर्ष पहले श्रीगोस्वामी-तुलसीदास जी को भी पवित्र चित्रकूट तीर्थ में भगवान श्रीराम के दर्शन हुए थे। जैसा कि लिखा गया है-

चित्रकूट के घाटपर भइ सन्तों की भीर। तुलसीदास चन्दन घिसे तिलक देत रघुवीर।।

यह प्रभु श्रीराम का दर्शन श्रीहनुमान जी की अहेतुकी कृपा से उन्हें हुआ था। अस्तु

यहां एक जिज्ञासा हो सकती है कि अन्नपूर्णा कोई दूसरी शक्ति (देवता) है या शिव की शक्तिरूपा पार्वती के रूप में ही काशी में विराजमान है। इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि अन्नपूर्णा कोई दूसरी शक्ति नही है अपितु श्रीपार्वती जी ही है । क्योंकि भगवान् शिव के साथ अनादि रूप से या नित्यरूप से उनकी शक्ति के रूप में विराजमान हैं। उन्हें ही यहां अन्नपूर्णा के रूप में कहा गया है।

आप यह भी जानते हैं कि शक्ति ओर शक्तिमान में कोई भेद नही हैं । शक्तिमान सदा से ही शक्ति के आश्रय में विद्यमान रहता है। यहाँ शिव शक्तिमान हैं एवं शक्ति श्रीपार्वती हैं। आप इसे भी जानिये कि शिव शब्द में शकारोत्तर वर्ती इकार शक्ति का वाचक है। इस इकार रूपी के शक्तित्व विना शिव शव के समान है। इसीलिए शक्ति अर्थात् पार्वती की ही यहाँ प्रार्थना की गई है। भगवान् शिव तो संहार के देवता है फिरभी भगवती-पार्वती रूप अन्नपूर्णा से भिक्षा मांगते है। जो मेरे आराध्य ही भगवती से याचना करते हैं तब हमें याचना करने में संकोच नहीं करना चाहिए।

प्रस्तुत स्तोत्र में प्रयुक्त पद 'काशीपुराधीश्वरी' का तात्पर्य यह भी है कि भगवान शिव नित्यरूप से भगवती अन्नपूर्णा के साथ ही काशी में विराजमान रहते है। वे कभी भी काशी-क्षेत्र का परित्याग नहीं करते है। इसीलिए काशी को अविमुक्त तीर्थ भी कहा गया है। भगवान् शिव को पूरी(काशी) अत्यन्त प्रिय है। इनके साथ अन्यान्य-देवता भी यहां नित्यरूप से विराजमान रहते है। दुसीर बात यह है कि अन्यान्य तीर्थो में सभी देवता अपने अपने एक एक कलाओं से विद्यमान रहते है परन्तु काशीपुरी में ये अपनी सम्पूर्ण कलाओं से निवास नित्य करते है। काशी की महिमा बताते हुए कहा गया है- 'काशते प्रकाशते ब्रह्मतत्त्वं या सा काशी' अर्थात् जहां ब्रह्मतत्त्व का ज्ञान होता है वही काशी है। क्योंकि 'ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः' अतः काशी ज्ञानदायिनी एवं मुक्तिदायिनी नगरी है। जहां शरीर छोडने के बाद जीव कभी भी शरीर धारण नही करता। सदा के लिए मुक्त हो जाता है। इसीलिए गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी भी कहते हैं-

मुक्तिजन्म महिजानि ज्ञानखानी अध हानि कर।
जहँ बस शम्भुभवानि, सो काशी सेइय कस न।।
जरत सकल सुरबृन्द विषम गरल जेहि पान किय।
तेहि न भजसि मतिमन्द, को कृपाल शंकर सरिस।।

अर्थात् जहाँ भगवान् शिव एवं भवानी(अन्नपूर्णा) नित्य निवास करते हैं, ऐसी यह काशी पुरी मुक्ति की जन्मभूमि ज्ञान की खानी ओर पापों कों नाश करने वाली है। अतः इस पुरी का सेवन क्यों न तीर्थो की दृष्टि से किया जाय।

जिस भीषण हलाहल (विष) से देवतागण जल रहे थे, उसको जिन्होनें स्वयं पान कर लिया। रे मनमन्द! उन शंकरजी को क्यों नही भजता ? उनके समान कृपालु ओर कौन है? अर्थात् कोई नहीं है।

इस प्रकार काशीपुरी के अधीश्वरी भगवती अन्नपूर्णा के साथ काशी का यह संक्षिप्त वर्णन अप्रासांगिक नही हुआ होगा, एसा मै मानता हूं। अस्तु!

इसी अन्नपूर्णा पार्वती को इंगित करते हुए गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी कहते हैं-

भव भव विभव पराभव कारिनी। विश्व विमोहनि स्ववश विहारिनि।।

जयजय गिरिवरराज किशोरी। जय महेश मुखचन्द चकोरी।।

दीन्हि तव आदि मध्य अवसाना । अमित प्रभाव वेद नहि जाना।।

यह प्रसंग भगवती श्रीसीताजी के विवाह से सम्बद्ध है भगवती-सीता भगवान श्रीराम को प्राप्त करने के लिए अर्थात् अपने मनोरथ की भिक्षा माता से मांग रही है। माँ अन्नपूर्णा से आप कैसी है! तो आपका न आदि है, न मध्य है, न अन्त है। आपके असीम-प्रभाव को वेद भी नही जानते है। आप संसार को उत्पन्न पालन और संहार करने वाली भी है। इस विश्व को मोहित करने वाली ओर स्वतन्त्र रूप से विहार करने वाली है।

यही अन्नपूर्णा भगवतीपार्वती का स्वरूप है। इस प्रसंग को आप आच्छी तरह जानते है, अतः यहाँ इसका विशेष वर्णन नहीं किया जा रहा है। अन्यथा विस्तार हो जायगा। यह बात, पार्वती ही अन्नपूर्णा है, इसको बताने के लिए ही यहां प्रस्तुत किया गया। अस्तु!

इस स्तोत्र के प्रत्येक चतुर्थ चरण में- ‘भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी’ कहा गया है। यहां भिक्षा शब्द से मनोरथ या कामना की पूर्ति के लिए प्रार्थना की गई है। यहां एक जिज्ञासा अवश्य हो सकती है, कि भगवान शंकराचार्य पक्के शैव थे, अर्थात् शिव के सर्चोच्च उपासक थे, तो शिव से ही क्यों न प्रार्थना की, क्योंकि भगवान शिव भी सर्व-प्रदाता है सब कुछ देने में समर्थ है, परन्तु मित्रों! बात यह है कि लोक में भी भिक्षा के लिए निवेदन करने पर या किसी विशेष प्राप्ति की प्रार्थना करने पर पिताजी कदाचित् परिस्थितिवश् या उचितानुचित विचारकर मना भी कर सकते हैं। अर्थात् उसकी आवश्यकता एवं पात्रता का शायद विचार कर सकते है, परन्तु माता, बालक की प्रार्थना या निवेदन करने पर कभी भी अपने बच्चों की पात्रता या उचितानुचित आदि का विचार नही करतीं। वह याचना के भाव में शिशु के सम्मुख होते ही सबकुछ पुत्र के गुणदोष को भूल जाती है एवं अविलम्ब ही पुत्र के सकल मनोरथों को सद्यः प्रसन्न होकर उसे पूर्ण कर देती है। इसीलिए शायद शंकराचार्य भी इस स्तोत्र में भिक्षा की याचना भगवती अन्नपूर्णा से ही कर रहें हैं।

यहाँ एक प्रसंग मैं और आपको बताना चाहता हूं, चूंकि आप कर्मकाण्ड विषय से जुडे है शायद जानते भी होंगे। उपनयन-संस्कार के समय ‘भिक्षाचर्यचरणम्’ अर्थात् ब्रह्मचारी के रूप मैं भिक्षाटन करने माणवक(बटु) जाता है। वहाँ ब्राह्मण के लिए ‘भवति भिक्षां देहि। ’ यह विधान किया गया है। यहाँ एक जिज्ञासा होती है कि सर्वप्रथम भिक्षा किससे ली जाय। सूत्रकार-आचार्यपारस्कर लिखते है- ‘मातरं प्रथमाभेके’ अर्थात् बालक सबसे पहले माता के यहाँ ही भिक्षा लेने के लिए जाता है, क्योकि कदाचित् कोई दुसरा-व्यक्ति उसे भिक्षा देने से इनकार भी कर दें अर्थात् खाली हाँथ लौटना पडे बटु को परन्तु यदि सबसे पहले वह माता के यहाँ भिक्षा के लिए जाता है तो माता उसे कभी भी खाली हाँथ लौटने नही देगी। क्योंकि वह अन्नपूर्णा है। बच्चे को अपने पास देखकर माता स्वतः सबकुछ

उसके गुणदोष को भूलकर अपना लेती है। इसीलिए सूत्रकार सबसे पहले माता के यहाँ भिक्षा के लिए जाने का विधान बताते है। यह व्यक्तिगत लेखक की भावना है।

संभवतः इसीकारण से आदिशंकराचार्य भी भगवान् शिव से प्रार्थना न करते हुए माता अन्नपूर्णा से याचना करते है 'भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी'। जिसे सुनकर माता प्रसन्न होकर दर्शन देते हुए उनके सकल मनोरथो को पूर्ण की। अस्तु!

स्तोत्र पाठ की विधि एवं फल-

इस स्तोत्र का पाठ प्रातःकाल पूजन के समय करना चाहिए। जैसा कि लिखा है-

यः पठेत् प्रातरुत्थाय पूजाकाले विशेषतः।
ऐश्वर्यं विपुलां लक्ष्मीं लभते नात्र संशयः।
स्तोत्रमात्रस्य पाठेन पलायन्ते महापदः।
दुःस्वप्ननाशनं स्तोत्रं सर्व सौभाग्यवर्द्धनम्।।

अर्थात् इस स्तोत्र के पाठमात्र से ही मानव की सभी विपत्तियां दुर हो जाती है एवं सौभाग्य, धन, धान्य से व्यक्ति पूर्ण हो जाता है। कम से कम प्रतिदिन एक बार इस स्तोत्र का अवश्य ही श्रद्धापूर्वक पाठ करना चाहिए, जिससे भगवती अन्नपूर्णा प्रसन्न होती हैं।

आपके मन मैं अब स्तोत्र जानने की उत्कट इच्छा हो गई होगी, तो ठीक है यह आपके लिए स्तोत्र प्रस्तुत है।

(ख) श्रीअन्नपूर्णास्तोत्रम् -

नित्यानन्दकरी वराभयकरी सौन्दर्यरत्नाकरी
निर्धूताखिलघोरपावनकरी प्रत्यक्षमाहेश्वरी।
प्रालेयाचलवंशपावनकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।1।।
नानारत्नविचित्रभूषणकरी हेमाम्बराडम्बरी
मुक्ताहारविलम्बमानविलसद्वक्षोजकुम्भान्तरी।
काश्मीरागुरुवासितांगरुचिरे काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।2।।
योगानन्दकरी रिपुक्षयकरी धर्मार्थनिष्ठाकरी
चन्द्रार्कानलभासमानलहरी त्रैलोक्यरक्षाकरी।
सर्वैश्वर्यसमस्तवांछितकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।3।।
कैलासाचलकन्दरालयकरी गौरी उमा शंकरी
कौमारी निगमार्थगोचरकरी ओंकारबीजाक्षरी।

मोक्षद्वारकपाटपाटनकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।4।।
दृश्यादृश्यविभूतिवाहनकरी ब्रह्माण्डभाण्डोदरी
लीलानाटकसूत्रभेदनकरी विज्ञानदीपांकुरी।
श्रीविश्वेशमनःप्रसादनकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।5।।
उर्वीसर्वजनेश्वरी भगवती मातान्नपूर्णेश्वरी
वेणीनीलसमानकुन्तलहरी नित्यान्नदानेश्वरी।
सर्वानन्दकरी सदा शुभकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।6।।
आदिक्षान्तसमस्तवर्णनकरी शम्भोस्त्रिभावाकरी
काश्मीरात्रिजलेश्वरी त्रिलहरी नित्यांकुरा शर्वरी।
कामाकांक्षकरी जोनदयकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।7।।
देवी सर्वविचित्ररत्नरचिता दाक्षायणी सुन्दरी
वाम स्वादु पयोधरप्रियकरी सौभाग्यमाहेश्वरी।
भक्ताभीष्टकरी सदाशुभकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।8।।
चन्द्रार्कानलकोटिकोटिसदृशी चन्द्रांशुबिम्बाधरी
चन्द्रार्काग्निसमानकुन्तलधरी चन्द्रार्कवर्णेश्वरी।
मालापुस्तकपाशसांकुशधरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।9।।
क्षत्रत्राणकरी महाऽभयकरी माता कृपासागरी
साक्षान्मोक्षकरी सदा शिवकरी विश्वेश्वरीश्रीधरी।
दक्षाक्रन्दकरी निरामयकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी।।10।।
अन्नपूर्णे सदापूर्णे शंकरप्राणवल्लभे।
ज्ञानवैराग्यसिद्ध्यर्थं भिक्षां देहि च पार्वती।।
माता च पार्वती देवी पिता देवो महेश्वरः।
बान्धवाः शिवभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम्।।
।।श्रीमच्छंकराचार्यविरचित अन्नपूर्णास्तोत्रं सम्पूर्णम्।।

आब आपके लिए बहुबोध प्रश्न यहाँ अन्नपूर्णा स्तोत्र पूर्ण हो रहा है। दिय जा रहे है जिनका समुचित उत्तर आपको देना है।

बोधप्रश्न- 1

(क) यह अन्नपूर्णा स्तोत्र किसके द्वारा विरचित है?

(ख) यहाँ अन्नपूर्णेश्वरी कौन हैं?

(ग) काशी में कौन सा ज्योतिर्लिंग है?

(घ) काशी को अविमुक्त क्यों कहा गया?

(ङ) सर्वप्रथम भिक्षा किससे ली जाती है?

(च) यह स्तोत्र कहाँ से लिया गया है?

2.4 अन्नपूर्णा स्तोत्र : पाठ एवं फल

यहाँ अन्नपूर्णा स्तोत्र एक और भी है, जो दक्षिण भारत में विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इसके भी रचनाकार आदिशंकराचार्य जी ही है। बात यह है कि जिसप्रकार उत्तरभारत में काशी (वाराणसी) तीर्थ मन्दिरों के लिए, माता गंगा जी, भगवान विश्वनाथ, जो द्वादश ज्योतिर्लिंगों में एक है जिनका नाम अविमुक्तेश्वर है, एवं भगवती अन्नपूर्णा के लिए प्रसिद्ध है। उसी प्रकार दक्षिण-भारत के तीर्थ-प्रदेशों में भगवती कामाख्या ही अन्नपूर्णा के रूप में विद्यमान है, क्योंकि इस दूसरे अन्नपूर्णास्तोत्र में उनका नाम बहुत अधिक बार प्रयोग में देखा जाता है। यह भी देखें कि जहाँ पर दाक्षिणात्य विद्वान् मन्दिरों में पूजक या अर्चक हैं, वहाँ भगवती कामाख्या की पूजा होती है। जो अन्नपूर्णा की मूर्ति के रूप में प्रतिष्ठित हैं। एक बात यहाँ ओर आप ध्यान दें, कि एक और माता कामाख्या हैँ जो(तन्त्र की अधष्ठात्री देवी आसाम में हैं) वे कामाख्या माता यहाँ नही है, अपितु त्रिपुरसुन्दरी माँ कामाख्या अन्नपूर्णा जी की पूजा दक्षिणभारत के मन्दिरों में प्राचीन पूजा पद्धतियों से होता है एवं सात्विक देवी के रूप में उनकी उपासना होती है। आसाम में तो देशकालानुसार बलि आदि का प्रयोग आज भी होता है। जो वहाँ के लिए ही है। अस्तु!

हम यहाँ दक्षिणभारतीय मन्दिरों में प्रसिद्ध त्रिपुरसुन्दरी भगवती कामाख्या जी की चर्चा कर रहे हैं, जिनका सात्विक रूप से अर्चन सर्वत्र होता है। यह देवी न केवल दक्षिणभारत में ही है अपितु जहाँ जहाँ शंकराचार्यजी से सम्बद्ध स्थान या मन्दिर हैं वहाँ वहाँ दक्षिण भारतीय आचार्य अपनी पूजा पद्धति से इनका अर्चन करते हैं। उनके प्रभाव से सम्पूर्ण भारत के लोग भी यहॉं आकर अपने मनोरथों कों सिद्ध करते हैं। एक बात यहाँ अवश्य ध्यान दें, कि इनका नाम भले ही कामाख्या है पर इनका पूजन अन्नपूर्णा के रूप में ही होता है। क्योंकि आचार्यशंकर द्वारा निर्मित यह भी अन्नपूर्णा स्तोत्र ही है। जिसकी चर्चा बृहत्स्तोत्ररत्नाकर में की गई है। तथा अन्नपूर्णा के रूप में इस शब्द का प्रयोग बहुधा प्रयुक्त है।

इसके पहले प्रकरण में आपको यह भी बता दिया गया है, कि यहाँ अन्नपूर्णा के रूप में भगवता पार्वती ही भगवान शिव के साथ विद्यमान है। अतः इस स्तोत्र में भी पार्वती ही अन्नपूर्णा के रूप में स्तुत है। कदाचित् समृद्धि आदि का देखकर माता लक्ष्मी को न अन्नपूर्णा समझें। क्योंकि इस अन्नपूर्णा स्तोत्र के चतुर्थ चरण में सभी जगह भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्। लिखा गया है। यहाँ गिरिजा पद के सम्बोधन में गिरिजे यह पद प्रयुक्त है जो कि भगवती पार्वती का बोधक है। इसमें ग्यारह श्लोक है। यह अन्नपूर्णा स्तोत्र आपकी जानकारी एवं श्रीपार्वती की अन्नपूर्णात्व को व्यक्त करने के लिए ही यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

इस स्तोत्र में एक विशेष बात यह है कि भगवती श्रीअन्नपूर्णा के करकमलों में पायस(खीर) भरे पात्र के साथ दर्वी (जिससे खीर परोसी जाती है) लोक में कलछल या बडे चम्मच के रूप में प्रत्येक घर में रहता है वह विराजमान है, जिससे माता भक्तों को अन्नादि एवं विविध भोग्य पदार्थो से सदा के लिए सन्तुष्ट करदेती है। इस दरबार की यह विशेषता है कि जो एक बार भी श्रद्धावनत होकर इस काल्पतरु के नीचे हाँथ फैला दिया उसे दुसरी जगह हाँथ फैलाने की जरुरत कभी भी नही पडती। इस भाव को निम्न श्लोक में इसप्रकार कहा गया है -

दुग्धान्नपात्रवरकांचनदर्विहस्ते।

भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।

इस स्तोत्र में दो, तीन, स्थलों पर श्रीदुर्गासप्तशती के श्लोक अक्षरशः देखे जाते हैं। जैसे-दारिद्रदुःखभयहारिणि का त्वदन्या, यह श्लोक दुर्गापाठ के चतुर्थ अध्याय में प्राप्त होता है। उसी प्रकार-शब्दात्मिके शशिकलाभरणार्धदेहे। एवं स्वाहा स्वधासि पितृदेवगणार्तिहन्त्री। यह इस स्तोत्र की विशेषता के लिए ही यहां प्रस्तुत किया गया न कि पुनरावृत्ति के प्रदर्शनार्थ प्रस्तुत है।

इसमें दस श्लोकों से भगवती अन्नपूर्णा की वन्दना की गई है एवं एक श्लोक से उस स्तोत्र के पाठ का फल प्रस्तुत किया गया है। जैसा कि श्लोक में कहा गया है-

भक्त्या पठन्ति गिरिजा दशकं प्रभाते

मोक्षार्थिनो बहुजनाः प्रथितोऽन्नकामाः।

प्रीता महेशवनिता हिमशैलकन्या

तेषां ददाति सुतरां मनसेप्सितानि।।

अर्थात् इस स्तोत्र का पाठ भक्ति एवं श्रद्धा पूर्वक करने से अभ्युदय एवं निःश्रेयस् दोनों की प्राप्ति होती है। अभ्युदय का अर्थ है लौकिक उन्नति, एवं निःश्रेयस् का अर्थ है मोक्ष। इस प्रकार भगवती पार्वती स्वरूपा अन्नपूर्णा मनुष्यों को इह-लौकिक एवं पारलौकिक सभी कामनाओं को पूर्ण करती है। अतः इसका पाठ श्रद्धा पूर्वक हमें भी करना चाहिए। अब आपके मन में स्तोत्र पाठ की जिज्ञासा जग गई होगी, तो लीजिए यह स्तोत्र आपके सामने प्रस्तुत है-

(ग) श्रीअन्नपूर्णास्तोत्रम्

मन्दार-कल्प-हरिचन्दन-पारिजात-
मध्ये शशांक-मणिमण्डित-वेदिसंस्थे।
अर्धेन्दु-मौलि-सुललाट-षडर्घनेत्रे
भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।1।।
केयूर-हार-कटकांगद-कर्णपूरे
कांची-कलाप-मणिकान्ति-लसद्दुकूले।
दुग्धा-ऽन्नपात्र-वर-कांचन-दर्विहस्ते
भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।2।।
आली-कदम्ब-परिसेवित-पार्श्वभागे
शक्रादिभि-र्मुकुलितांजलिभिः पुरस्तात्।
देवि! त्वदीय-चरणौ शरणं प्रपद्ये
भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।3।।
गन्धर्व-देव-ऋषि-नारद-कौशिका-ऽत्रि
व्यासा-ऽम्बरीष-कशलो ॅव-कश्यपाद्याः।
भक्त्या स्तुवन्ति निगमाऽऽगम-सूत्रमन्त्रै-
र्भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।4।।
लीला वचांसि तव देवि! ऋगादिवेदाः
सृष्ट्यादि कर्मरचना भवदीय-चेष्टा।
त्वत्तेजसा जगदिदं प्रतिभाति नित्यं
भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।5।।
शब्दात्मिके शशिकलाभरणार्धदेहे
शम्भोरुरस्थल-निकेतन-नित्यवासो।
दारिद्र्य-दुःख-भयहारिणि का त्वदन्या
भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।6।।
सन्ध्यात्रये सकल-भूसुर-सेव्यमाने
स्वाहा स्वधासि पितृदेवगणार्तिहन्त्री।
जायाः सुताः परिजनातिथयोऽन्नकामाः
भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।7।।
स ॅक्त-कल्पलतिके भुवनैकवन्द्ये
भूतेश-हृत्कमलमग्न-कुचाग्रभृंगे।
कारुण्यपूर्णनयने किमुपेक्षसे मां

भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।8।।

अम्ब! त्वदीय-चरणाम्बुज-संश्रयेण

ब्रह्मादयोऽप्यविकलां श्रियमाश्रयन्ते।

तस्मादहं तव नतोऽस्मि पदारविन्दं

भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।9।।

एकाग्रमूलनिलयस्य महेश्वरस्य

प्राणेश्वरी प्रणत-भक्तजनाय शीघ्‍्राम्।

कामाक्षि-रक्षित-जगत्-त्रितयेऽन्नपूर्णे

भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम्।।10।।

भक्त्या पठन्ति गिरिजा दशकं प्रभाते

मोक्षार्थिनो बहुजनाः प्रथितोऽन्नकामाः।

प्रीता महेशवनिता हिमशैलकन्या

तेषां ददाति सुतरां मनसेप्सितानि।।

।। इति श्रीशंकराचार्यविरचितमन्नपूर्णस्तोत्रं सम्पूर्णम्।।

स्तोत्र पाठ के बाद अब आपके सामने कुछ बोधप्रश्न प्रस्तुत किये जा रहे हैं, जिनका समुचित उत्तर आपको देना है।

बोधप्रश्न- 2

(क) इस श्लोक में कितने श्लोक हैं फलश्रुति को छोडकर ?

(ख) महेशवनिता किसे कहा गया है?

(ग) चरणाम्बुज का अर्थ क्या है?

(घ) हिमशैलकन्या कौन हैं?

(ङ) निगम शब्द का क्या अर्थ है?

खण्ड-ग 'अन्नपूर्णासहस्रनामस्तोत्रम्'

आदिशंकराचार्य जी द्वारा विरचित इन दोनों अन्नपूर्णास्तोत्र के बाद अब हम आपको अन्नपूर्णासहस्रनामस्तोत्र के विषय में बताने जा रहा हूं। स्तोत्रों के क्रम में सहस्रनामावली का भी एक विशेष स्थान है। यह अन्नपूर्णा सहस्रनामस्तोत्र अत्यन्त कठिन-परिश्रम से प्राप्त हुआ है। अतः आपके सामने प्रस्तुत करते हुए बडा हर्ष हो रहा है। जिस प्रकार बिष्णु की प्रसन्नता के लिए बिष्णुसहस्रनाम शिवसहस्रनाम गंगासहस्रनाम आदि प्रसिद्ध है उसी प्रकार इस स्तोत्र पाठ के क्रम में माता अन्नपूर्णा की प्रसन्नता के लिए अन्नपूर्णासहस्रनाम की विधि प्रस्तुत की जारही है। यह नामस्तोत्र, एक तान्त्रिक ग्रन्थ-विश्वसारतन्त्र ग्रन्थ में साक्षात् भगवान् एवं पार्वती के संवाद रूप में प्राप्त हुआ है। यह ग्रन्थ दुर्लभ ग्रन्थ की कोटि में है। अतः यह अत्यन्त प्रामाणिक एवं सारगर्भित है। इसके साथ ही इसकी फलश्रुति

भी दी गई है। यह स्तोत्र अत्यन्त सरल है। आपके पाठ्य-ग्रन्थ के स्वरुपानुकूल श्लोकबद्ध यहाँ प्रस्तुत है। यह सहस्रनामावलि यथावसर भिन्नभिन्ननामों से भी प्रस्तुत किया जा सकता है। परन्तु यहाँ उचित नही है। इस का भी महत्व अत्यन्त उच्चकोटि का है। क्योंकि तन्त्र का एक अपना ही स्वरूप है। इसमें सारे रहस्य भगवत् कृपा से स्वतः व्यक्त हो जाता हैं। इस स्तोत्र से कोई उत्तम स्तोत्र नही है। एवं इससे श्रेष्ठ कोई स्तोत्र नही है। 'नातः परतरं स्तोत्रं नातः परतरं समः।।' अव थोडा भी विलम्ब न करते हुए इस सहस्रनामस्तोत्र का आनन्द लीजिए।

(ग) श्रीमदन्नपूर्णादिव्यसहस्रनामस्तात्रम्

ओं अस्यान्नपूर्णादिव्यसहस्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य शिवर्षिः पङ्क्तिच्छन्दो भगवती श्रीमदन्नपूर्णादेवता धर्मार्थ-काममोक्षार्थे जपे विनियोगः।

श्रीशिव उवाच

अथ वक्ष्ये महेशानि देव्या नाम सहस्रकम्।

शृणु त्वं परया भक्त्या येन सिद्धिर्भविष्यति।।1।।

अन्नपूर्णा महाविद्या कथिता भुवि दुर्लभा।

सहस्रनाम तस्याश्च कथयामि श्रणुष्व तत्।।2।।

विना पूजोपचारेण विना योगोपसाधनैः।

केवलं जपमात्रेण प्रसन्ना वरदायिनी।।3।।

पाठनाद्धारणान्मर्त्यः सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्।

नातः परतरं स्तोत्रं नातः परतरं मनुः।।4।।

सुन्दरी शोभना काली कलिकल्मषनाशिनी।

अन्नपूर्णा महापूर्णा सर्वपूर्णा सुभाविनी।।5।।

अन्नदा मोक्षदा माया महामाया मदोत्करा।

भुवनेशी तथा दुर्गा सर्वदुर्गतितारिणी।।6।।

अनन्ता पूर्णिमा कृष्णा वासुदेवारिनाशिनी।

योगिनी योगगम्या च योगमार्गप्रकाशिनी।

योगा सत्या योगमाया महायोग्या महोदया।।7।।

योगमाता योगवती योगिनी योगसेविता।

सुमतिः कुमतिर्माता मातृभावप्रकाशिनी।।8।।

शूलनी पाशिनि चैव टंकिनी चापिनी परा।

कमला कामदा कामदायिनी शम्भुसुन्दरी।।9।।

विश्वमातृविधाश्रीश्च विश्वाद्या विश्वभाविनी।

कामाख्या शारदा देवी परमापदनाशिनी।।10।।

देवमाता देवहरा देवकार्यपरायणा।

दैत्या दैत्यवती दीना दीननाथा दयावती।।11।।
धृतिर्मेधा धरा धीरा धीरबुद्धिः प्रदायनी।
क्षेमंकरि शंकरी च सर्वसम्मोहकारिणी।।12।।
सर्वानन्दकरी कन्या कनकाचलवासिनी।
कल्पस्था कल्पवृक्षा च सिंहपृष्ठनिवासिनी।।13।।
भैरवी क्षोभणा क्षोभा क्षोभणी क्षोभनाशिनी।
क्षेमा क्षेमंकरी शीला सुशीला पुरभैरवी।।14।।
भाविका भाविनी भाव्या भावना भयनाशिनी।
श्रीःसुरूपा महाविद्या कपिला पिंगला कला।।15।।
शचीप्रिया रूपवती गान्धरी सुरसुन्दरी।
विश्वाद्या विश्वरूपा च विश्वसंकटतारिणी।।16।।
यमुना यामिनी रात्रिः कालरात्रिः कलाकला।
सुलज्जा च विलज्जा च महालज्जा च लज्जिनी।।17।।
गंगागीता महातीर्था सुतीर्था तीर्थदायिनी।
कुब्जिका पूर्णिमा ज्योत्स्ना चारुदेहविधारिणी।।18।।
शरणेशी शीलवती द्वारकाचित्ररूपिणी।
हिमाचलसुता साध्वी साध्यकर्मप्रकाशिनी।।19।।
पट्टाम्बरा महादेवी पुष्पमाला विधारिणी।
पुष्पप्रिया पुष्परता पुष्पवाणविधारिणी।।20।।
पुष्पकोदण्डताडंका महादेवपिया रतिः।
मनोहरा मनोज्ञो च मोहिनीरूपधारिणी।।21।।
सुचरित्रा विचरित्रा विश्वमाता यशस्विनी।
शिवा शैव च रुद्राणी तथैव योगिनी महा।।22।।
हरपिया गिरिसुता हरिरूपा हरप्रिया।
शिवदा शुभदा तारा तारिणी दुर्गतारिणी।।23।।
बालिका तरुणी वृद्धा किशोरी युवति तथा।
त्रिपुरा परमेशानी षोडशी भुवनेश्वरी।।24।।
लाक्षारूपावती लाक्षा सुलक्षलक्षितानना।
नलिनी नालिका नाला लाक्षारसस्वरूपिणी।।25।।
अरुणा लोलिता लोला नलिनीरूपधारिणी।
ज्वलिनी ज्वालिनी सौम्या सुवेशी गहिनी जया।।26।।

विजया च महामाया यमलार्जुनभंजनी।
भस्मिनी भस्मपत्नी च भस्मतल्पविलासिनी।।27।।
भस्मेशी चैव भस्माढ्या भवेशी भवनशिनी।
ऋद्धिः काली महाकाली कालिका कालरूपिणी।।28।।
घनाघनप्रिया घण्टा धनरूपा घनद्युतिः।
घोररूपा धोरनादा घोराधोरा च घूर्णिता।।29।।
रत्ना रत्नवती नीला रत्नामाल्याविभूषणा।
सुरत्ना रत्नमाल्या च रत्नाभरणभूषिता।।30।।
नानारत्नसुशोभा च रत्नपुष्पा समुत्सुका।
रत्नाढ्या रत्नपूर्णा च सर्वरत्नस्वरूपिणी।।31।।
रत्नकुंकुमवस्त्रा च रत्नवस्त्रविधारिणी।
ब्रह्माणी ब्रह्मदात्री व ब्रह्मरूपा गुणालया।।32।।
वैष्णवी विष्णुमाता च विष्णुपुत्री परात्मका।
रूद्राणी रुद्रपत्नी च रुद्रमाता च शंकरी।।33।।
वाराही वासुनी विद्या क्षमा धात्री कृपामयी।
श्राधिका रमणी रामा रामणी रमणी रमा।।34।।
इन्द्राणी इन्द्रपत्नी च त्वन्द्रराज्यप्रदायिनी।
इन्द्रा इन्द्रवती इन्द्रा इन्द्राणी इन्द्रवल्लभा।।35।।
कादम्बिनी कविः काली लोचनत्रयशोभिता।
दानवा दीननाथा च दीनरूपा च दीनदा।।36।।
इन्द्रा धात्री च इन्द्राणी महाभैरवशासनी।
लोलाक्षी लोचना लोला विलोला लोभनाशिनी।।37।।
स्त्रीस्वरूपा ब्रह्मरूपा विश्वरूपा विलासिनी।
मेहिनी क्षोभणी भीमा भीमनादा च भीमहा।।38।।
कालिका जृम्भिणी पूषा पुष्प हस्ता मघाश्विनी।
चन्द्रमा चन्द्रिका शीला भक्षाभयहरा तथा।।39।।
चन्द्रिका चारुवदना चारुकेशी सुकेशिका।
सुनासा दीर्घनासा च महाचक्रेश्वरी तथा।।40।।
चन्द्रानना चकोराक्षी चन्द्रमण्डलवर्तिनी।
श्रीर्लक्ष्मीश्च सुकेशा च मुक्तकेशी महोत्कचा।।41।।
घरणी धारिणी धारा धवलाम्बुनिवासिनी।
पार्वती पर्वता पाता तुंगपर्वतवासिनी।।42।।

हिमाद्रितनया वेश्या वेश्यावेशविणायिनी।
गौरी गुरुतरा चैव गुणकर्मपरायणा।।43।।
गुणवती गुणागीता गन्धर्वगणसेविता।
जालन्धरी तुलसी च वृन्दावनविलासिनी।।44।।
माधवी मधुमत्ता च प्रेमा चैव प्रियम्वदा।
स्वर्गस्था स्वर्गरूपा च स्वर्गपूजा समुत्सुका।।45।।
चण्डिका चर्चिका माया सन्तानवनवासिनी।
ध्यानगम्या ध्यानवश्या सर्ववश्या सनातनी।।46।।
छिन्ना कुल्ला तथा श्यामा छिन्नपाशा सुपाशिका।
नित्या नित्यवती निन्दा तन्त्रिका तान्त्रिकप्रिया।।47।।
नित्यानन्दमयी देवी नित्यानन्दास्वरूपिणी।
ज्ञानध्यानप्रकाशा च चेतनारूपधारिणी।।48।।
कामुका कामना कामा सर्वकामस्वरूपिणी।
शुचीमुखी कालमुखी लोलाक्षी लोललोचना।।49।।
तारुण्या मालती गीता शीता शीतवती तथा।
सूर्यस्वरूपा सूर्या च सूर्यमण्डलवासिनी।।50।।
सूर्यात्मिका सूर्यरूपा सूर्यपूजापरायणा।
सूर्यकार्यकरा चैव सूर्यलोकप्रदायिनी।।51।।
सर्वशृंगारवेशा च सर्वश्रृंगारकारिणी।
मातंगिनी करिगति हंसी संसारतारिणी।।52।।
विश्वमाता दया दीना चोपेन्द्रा चन्द्रमण्डला।
वृक्षस्था वृक्षरूपा च वृक्षमध्याग्रवासिनी।।53।।
वृक्षमूलस्थिता देवी पातालतलवासिनी।
हरिणी हारिणी हारा हालाहलपरायणा।।54।।
यज्ञप्रिया यज्ञरता जपयज्ञपरायणा।
यज्ञमाता यज्ञलोला यज्ञकर्मपरायणा।।55।।
यज्ञांगी यज्ञशीला च यज्ञकर्मप्रसाधिनी।
यज्ञशीला यज्ञकला याज्ञिका यज्ञभुक्प्रिया।।56।।
यज्ञानन्दमयी नित्या परमामृतरंजिनी।
यज्ञमना यज्ञमयी यज्ञसाधनतत्परा।।57।।
नर्मदा क्षोभणी शोभा प्रेमा चैव प्रियम्बदा।

सुखिनी सुखदात्री च दुःखदारिद्रनाशिनी।।58।।
जयिनी जयदात्री च जगदानन्दकारिणी।
वीरभद्रा सुभद्रा च वीरासनसदाश्रया।।59।।
वीरमाता वीरवती वीरवैश्या सनातनी।
लीलावती नीलदेहा नीलांजनासमप्रभा।।60।।
जननी जानकी जाया जगती सर्वमंगला।
मायालंकृतविद्या च तीक्ष्णदैत्यविनाशिनी।।61।।
महिषासुरनाशा च रक्तवीजविनासिनी।
मधुकैठभहन्त्री च चण्डमुण्डविनासिनी।।62।।
ललिता लवंगिनी लाक्षा लाक्षारुणाविलासिनी।
लीलावती जगद्रुपा चित्ररूपा च चित्रिणी।।63।।
चिन्ताचिन्त्या बालका च बालरूपा बलाबला।
महाबला बलाका च गलवृद्धिप्रदायिनी।।64।।
राज्यप्रिया राज्यमाता राजराजेश्वरी परा।
राज्यदा बलदा देवी राज्यभोगविधायिनी।।65।।
सर्वराज्येश्वरी राजा राजभोगप्रदायिनी।
सर्वविद्यामयी देवी विद्याविद्यास्वरूपिणी।।66।।
महाशंखेश्वरी मीना मत्स्यगन्धा महोदया।
लम्बोदरी च लम्बोष्ठी ललजिह्वा तनूदरी।।67।।
निम्नोदरी लक्षनामा लम्बश्यामा त्वलम्बुका।
अतिलम्बा महालम्बा महालम्बप्रदायिनी।।68।।
लम्बहा लम्बाशक्तिश्च लम्बास्था लम्बपूजना।
विलम्बा च सुलम्बा च महालम्बा वृहत्तनुः।।69।।
चण्डघण्टा महाघण्टा घण्टानादपिया सदा।
राज्यप्रिया राज्यरता राज्यसम्पद नाशिनी।।70।।
रमा रामा सुरामा च रमणीया सुभाविनी।
सुरम्या रम्यदा रम्भा रम्भोरू रामवल्लभा।।71।।
रामप्रिया रामकरी रामांगी रमणी रतिः।
रतिप्रिया रतिमति रतिसेव्या रतिप्रिया।
सुमतिः कुमतिः शोभा विशोभा शोकनाशिनी।।72।।
सुशोभा च महाशोभा त्वतिशोभातिशोभिता।

शोभनीया महालोभा सुलोभा लोभवर्द्धिका।।73।।
लोभांगि लोकवन्द्या च लोभार्चा लोभनाशका।
लोभप्रिया महालोभा लोभनिन्दकनिन्दका।।74।।
लोभांगि रागिणी गन्धा विगन्धा गन्धनाशिनी।
पद्मा पद्मावती प्रेमा पद्मगन्धा सुगन्धिका।।75।।
पद्मालया पद्मगन्धा पद्मवाहकवाहना।
पद्मस्था पद्मवन्द्या चपद्मक्रीडा सुरंजिका।।76।।
पद्मान्तका पद्मवहा पद्मप्रेमा प्रियंकरी।
पद्मनिन्दकनिन्दा च पद्मसन्तोषवाहना।।77।।
रक्तोत्पलधरा देवी रक्तोत्पलप्रिया सदा।
रक्तोत्पलसुगन्धा च रक्तोत्पलनिवाशिनी।।78।।
रक्तोत्पलगृहा माला रक्तोत्पलमनोहरा।
रक्तोत्पलसुनेत्रा च रक्तोत्पलस्वरूपधृक्।।79।।
नारी नारायणी नीला नारायणगृहप्रिया।
नारायणस्य देहस्था नारायणमनोहरा।।80।।
नारायणांगसम्भूता नारायणतनुप्रिया।
वैष्णवी विष्णुपूज्या च वैष्णवादिविलासिनी।।81।।
विष्णुपूजकपूज्या व वैष्णवे संस्थिता तनुः।
हरपूज्या हरश्रेष्ठा हरस्य वल्लभा क्षमा।।82।।
संहारी हरदेहस्था हरपूजनतत्परा।
हरदेहसमुद्भूता हरांगवाहिनी कुहुः।।83।।
हरिपूजकपूज्या च हरवन्धनतत्परा।
हरदेहसमृद्भूता हरक्रिडा सदा रतिः।।84।।
असंगासंगरहिता चासंगा संगनाशिनी।
दुर्गनेहान्तका दुर्गारूपिणी दुर्गरूपिणी।।85।।
प्रेतप्रिया प्रेतकरा प्रेतदेह-समुद्भवा।
प्रेतांगसंगिनी प्रेता प्रेतदेह-विवर्द्धिका।।86।।
डाकिनी योगिनी दैत्या कालरात्रिप्रिया सदा।
कालरात्रि महाकाली कृष्णदेहा महातनुः।।87।।
कृष्णांगि कुलिशांगि च वज्रांगी वज्रारूपाधृक्।
नानारूपधरा धन्या षट्चक्रविनिवाशिनी।।88।।

मूलाधारनिवासा च मूलाधाररस्थिता सदा।
वायुरूपा महारूपा वायुमार्गविलासिनी।।89।।
वायुयुक्ता वायुकरा वायुपुरकपूरिता।
वायुरूपधरा देवी सुषुम्नामार्गवाहिनी।।90।।
देहस्था देहरूपा च देहस्था च सुदेहिका।
नाडीरूपा च नाडीस्था नाडीस्थाननिवासिनी।।91।।
उत्पत्तिस्थितिसंहर्त्री प्रलयापदनाशिनी।
महाप्रलययुक्ता च सृष्टिसंहारकारिणी।।92।।
स्वाहा स्वधा वषट्कारा हव्यकाव्यप्रिया सदा।
हव्यस्था हव्यभोक्त्री च हव्यदेहसमुद्भवा।।93।।
हव्यक्रीडा कामधेनुस्वरूपा रूपसम्भवा।
सुरभी नन्दिनी भीमा यज्ञांगी यज्ञ सम्भवा।।94।।
यज्ञस्था यज्ञदेहा च योनियोगनिवासिनी।
अयोनिजा सती सत्या चासती कुलरातनुः।।95।।
अहल्या गौतमी गम्या विदेहा देहनाशिनी।
गान्धारी द्रौपदी दूती शिवदूति शिवप्रिया।।96।।
त्रिपुरेशी पौर्णमासी पंचमी च चतुर्दशी।
पंचदशी तथ षष्ठी नवमी चाष्टमी तथा।।97।।
एकादशी द्वादशी च वाररूपा भयंकरी।
संक्रान्तिः सौररूपा च ऋतु-रूपा ऋतुप्रिया।।98।।
मुहूर्ता परमा मासा घटिका दण्डरूपघृक्।
यामरूपा महाकाली सन्ध्या सन्ध्यांगनाशिनी।।99।।
त्रियामा यमरूपा च यमकन्या यमानुजा।
मातंगी कुलरूपा च कुलीनकुलनाशिनी।।100।।
कुलकाला कृष्णकृष्णा कृष्णदेहा च कुब्जिका।
कुलीना कुलवत्यम्बा कुलशास्त्रमयी परा।।101।।
नदी कान्ता रमा कान्तिः शान्तिरूपा शान्तिदा।
आशा तृष्णा क्षमा क्षोभा क्षोभणा च विलासिनी।।102।।
शची मेधा धरा तुष्टिधृतिस्मृतिश्रुतिमयी।
दिवा रात्रिश्च सन्ध्या च महासन्ध्या प्रदोशिका।।103।।
कुरुकुल्वा छिन्नमस्ता नागयज्ञोपवीतिनी।

वारुणी वासुनी चैव विशालाक्षी च कोटरा।।104।।

प्रत्यंगिरा महाविद्या चाजिता जयदायिनी।

जया च विजया चैव महिषासुरनाशिनी।।105।।

मधुकैटभहन्त्री च चण्डमुण्डविनाशिनी।

निशुम्भशुम्भहन्त्री च रक्तवीजक्षयंकरी।।106।।

काशीवासविलासा च मथुरा माधवी जया।

अपर्णा चण्डिका चण्डी मृडानी चण्डिका कला।।107।।

शुक्लकृष्णा रक्तवर्णा शारदेन्दु कलावती।

रुक्मिणी राधिका चैव भैरवी छिन्नमस्तका।

तारा काली च बाला च त्रिपुरासुन्दरी तथा।।108।।

दुर्गा वाणी विशालाक्षी शब्दब्रह्ममयी सदा।

तानि तानि च नामानि भवान्याः परिकीर्तिताः।।109।।

।। इति श्रीविश्वसारतन्त्रे हरपार्वतीसंवादे श्रीमदन्नूर्णादिव्यसहस्रनामस्तोत्रम् सम्पूर्णम्।।

(घ) अथ पाठफलम् -

अष्टाधिकसहस्राणि देव्या नामानुकीर्तनम्।

महापातकयुक्तोऽपि मुच्यते नात्र संशयः।।1।।

ब्रह्महत्यासुरापानं स्तेयं गुर्वंगनागमः।

पातकानि च नश्यन्ति पठनान्नात्र संशयः।।2।।

प्रपठन् वा स्मरन्मर्त्यः सर्वपापैः प्रमुच्यते।

पुत्रार्थी लभते पुत्रं धनाथी लभते धनम्।।3।।

अणिमादिविभूतीनामीश्वरः क्षितिमण्डले।

कुवेरसमतां वित्ते प्रतापे सूर्यरूपधृक्।।4।।

स्तोत्रमात्रस्य पाठेन पलायन्ते महाप्रदः।

दुःस्वप्ननाशनं स्तोत्रं सर्वसौभाग्यवर्धनम्।।5।।

प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा नित्यं तद्गतमानसः।

अश्वमेधायुतं पुण्यं लभते नात्र संशयः।।6।।

स्तवराजं इति ख्यातस्त्रिषु लोकेषु दुर्लभः।

पठेद्वा पाठयेद्वापि साक्षादीशो न संशयः।।7।।

मारणं स्तम्भनंचैव मोहमाकर्षणं तथा।

शत्रुच्चाटनकंचैव जायन्ते सर्वसिद्धयः।।8।।

धृत्वा सुवर्णमध्यस्थं सर्वकामफलप्रदम्।

सिंहराशौ गुरौ याते कर्कटस्थे दिवाकरे॥9॥

मीनराशौ गुरौ याते लिखेद् यत्नेन साधकः।

कुमारीं पूजयित्वा च पठेत् स्तोत्रं समाहितः॥10॥

सर्वान् कामानवाप्नोति यावन्मनसि संस्थितम्।

सभायां विजयो नित्यं जायते नात्र संशयः॥11॥

विना पूजां विना ध्यानं विनाजापैर्महेश्वरी।

पाठमात्रेण सिद्धिः स्यात् सत्यमेव न संशयः॥12॥

अष्टाम्याम्वा नवम्यांच चतुर्दस्यामथापि वा।

यः पठेत्साधकश्रेष्ठः स ईशो नात्र संशयः॥13॥

यः पठेत्प्रातरुत्थाय पूजाकाले विशेशतः।

ऐश्वर्यं विपुलां लक्ष्मीं लभते नात्र संशयः॥14॥

न दद्यात्कृपणे मूर्खे गुणशीलविवर्जिते।

देयं शिष्याय शान्ताय गुरुभक्तियुताय च॥15॥

कुलीनाय महोत्साय दान्ताय दम्भवजिर्ते।

गुह्याद् गुह्यतरं ह्येतन्न प्रकाश्यं कदाचन॥16॥

मातृजारसमं ज्ञात्वा गोपयेत् स्तवराजकम्।

सत्यं सत्यं महेशानि गोप्यं सर्वागमेषु च॥17॥

॥ इति श्रीविश्वसारतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादे श्रीमदन्नपूर्णादेव्याः सहस्रनामस्तोत्रपाठफलं समाप्तम्॥

॥ श्रीमदन्नपूर्णार्पणमस्तु॥

॥ तत्सदिति॥

इस सहस्रनामस्तोत्र से कुछ बोधप्रश्न आपके लिए दिये जारहे हैं।

बोधप्रश्न- 3

(क) इस स्तोत्र में प्रयुक्त मनु शब्द का क्या अर्थ है?

(ख) कामाख्या शब्द का क्या अर्थ है?

(ग) सर्वानन्दकरी किसे कहा गया है?

(घ) क्षेमंकरी शब्द का क्या अर्थ है?

(ङ) स्तेयं पद का क्या अर्थ है?

(च) भारतवर्ष में कितनी पुरियाँ हैं?

2.5 सारांश-

इस इकाई में श्री आदिशंकराचार्यजी द्वारा विरचित दो अन्नपूर्णास्तोत्र के विषय में आपको परिचय कराया गया। इसके पाठ का महत्व एवं प्रयोजन विभिन्न उदाहरणों के द्वारा स्पष्ट कराया गया। इस दोनों से सम्बद्ध कुछ बोधप्रश्न भी आपके लिए दिये गये हैं जिनका उत्तर भी यथास्थान दिया गया है। इसके बाद विश्वसारतन्त्र नामक ग्रन्थ जो आज अत्यन्त दुर्लभ है, उसमें शिवपार्वती संवाद है। इस संवाद में ही प्रसंगतः अन्नपूर्णा सहस्रनाम दिया गया है जो आपके लिए सादर प्रस्तुत है। इसके महत्व के विषय में यह लिखा है कि इस स्तोत्र से बढकर अन्नपूर्णा जी को प्रसन्न करने बाला दुसरा कोई भी स्तोत्र नहीं है इसी

2.6 शब्दावली

शशांक - चन्द्रमा

अर्धेन्दुमौलि - शिव

आली कदम्ब - सखियों का समूह

शम्भोरुरस्थल - शिवजी का हृदयस्थान

नतोऽस्मि - प्रणाम करता हूं

प्रभाते - प्रातः काल में

मनसेप्सितानि - मनोरथों को

प्रालेयाचल - हिमालय

रिपुक्षयकरी - शत्रुों का संहार करनेवाली

चन्द्रार्कानल - चन्द्र, सूर्य, अग्नि,

चण्डिका - प्रचण्ड कोप से युक्त

2.7 बोधप्रश्न के उत्तर- 1

(क) यह अन्नपूर्णास्तोत्र आदिशंकराचार्यजी द्वारा विरचित है।

(ख) अन्नपूर्णेश्वरी भगवती पार्वती है।

(ग) काशी में विश्वेश नाम के ज्योतिर्लिंग है।

(घ) शिवजी काशी का परित्याग नही करते इसलिए इसे अविमुक्त कहा गया है।

(ङ) सर्वप्रथम भिक्षा माता से ली जाती है।

(च) यह स्तोत्र बृहत्स्तोत्ररत्नाकरग्रन्थ से लिया गया है।

बोधप्रश्न के उत्तर- 2

(क) इस स्तोत्र में दस श्लोक हैं।

(ख) महेशवनिता श्रीअन्नपूर्णाजी के लिए कहा गया है।

(ग) अग्नि के पत्नी का नाम स्वाहा हैं।

(घ) चरणाम्बुज का अर्थ चरणकमल है।

(ङ) हिमशैलकन्या पार्वती है।

(च) निगम का अर्थ वेद होता है।

बोध प्रश्न के उत्तर- 3

(क) मनु शब्द का अर्थ मन्त्र है।

(ख) कामाख्या, कामं मनोरथं आख्याति, प्रापयति इति कामाख्या।

(ग) सर्वानन्दकरी, अर्थात्- सभी को आनन्द प्रदान करे वाली।

(घ) क्षेमंकरी का अर्थ कल्याण करने वाली।

(ङ) स्तेय शब्द का अर्थ चोरी करना होता है।

(च) भारतवर्ष में सात पुरियाँ हैं।

2.8 सन्दर्भग्रन्थसूची

1.बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः

2. पारस्करगृह्यसूत्रम्

3.विश्वसारतन्त्रम्

4.श्रीरामचरितमानसः

5.स्तोत्ररत्नाकरः

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. काशीपुराधीश्वरी का वर्णन करें।

2. अन्नपूर्णासहस्रनाम पाठ के महत्व पर प्रकाश डालें।

इकाई – 3 देव्यापराध क्षमापन स्तोत्र

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 देव्यपराधक्षमापन स्तोत्र परिचय

3.4 सारांश

3.5 शब्दावली

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना-

इससे पूर्व की इकाई में आपको अन्नपूर्णास्तोत्र से सम्बद्ध कुछ विषयों से अवगत कराया गया। संभवतः आप परिचित हो गये होंगे। प्रस्तुत इस इकाई में देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र के विषय में आपको जानकारी दी जा रही है।

3.2 उद्देश्य -

यह क्षमापनस्तोत्र न केवल दुर्गापाठ का ही अंग है, अपितु कही भी किसी भी मन्दिर में भगवती को प्रसन्न करने के लिए इस स्तोत्र का पाठ आप कर सकते हैं। इससे सम्बद्ध कुछ बातें इस स्तोत्र के परिचय में आपसे कही जायेगी जो अत्यन्त उपादेय एवं आवश्यक हैं।

3.3 खण्ड-1 देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र परिचय

सर्वप्रथम इस स्तोत्र के नाम पर कुछ विचार करते है कि यह देव्यापराधक्षमापनस्तोत्र है या देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र है। क्योंकि बहुत जगह देव्यापराधक्षमापन भी लिखा मिलता है। देखिये! इसके लिए हमें संस्कृत की शरण में जाना पड़ेगा। वस्तुतः व्याकरण की दृष्टि से एवं इसका शुद्धरूप ''देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र ही है।'' क्योंकि यहां देव्याम् अपराधः इति देव्यपराधः ऐसा विग्रह करेगें। देव्याम् में सप्तमी विभक्ति है। जिसे वैषयिक सप्तमी वैयाकरण लोग बताते हैं। हम विशेष व्याकरण की प्रक्रिया को जटिलता में न समझाते हुए इतना ही कहेंगे कि देवी विषयक जो अपराध है अर्थात् देवी के प्रति हमसे जो अपराध हुआ है वह क्षम्य हो उसके लिए हम प्रर्थना करते है। इसका भाव यही है। देवी$अपराध में यण् होकर देव्यपराध रूप बनेगा। यदि देव्यापराध करेगें तो विग्रह होगा देव्याः अपराध अर्थात् देवी का अपराध और जब देवी का ही अपराध है तो क्या वे क्षमा याचना आपसे करगी ? यह विलकुल ही निराधार अर्थ है। अतः इसे अवश्य ही ध्यान में रखे कि देव्यपराघ ही शुद्ध प्रयोग है।

दूसरी बात यह है कि यह स्तोत्र दुर्गापाठ के अन्त में पढा जाता है। नवरात्रि के समय प्रायः सर्वत्र देवी की उपासना. अनुष्ठान. यज्ञ आदि होते रहते है। यहॉ तक कि न केवल सार्वजनिक स्थान पर हि ये सब धर्माचरण होते हैं अपितु प्रत्येक घर में भी लोग अपनी श्रद्धा के अनुसार स्वयं दुर्गापाठ करते हैं एवं दुर्गापाठ के अन्त में इस देव्यपराधक्षमापन स्तोत्र का अत्यन्त श्रद्धा के साथ पाठ करते हैं।

यहॉ एक बात ओर ध्यान देने योग्य है जो काफी विवादास्पद है जिसका समुचित उत्तर इस इकाई में आपको बताया जायेगा। कुछ लोग ही नही अपितु पढे लिखे लोग या कुछ विद्वान लोग भी इस स्तोत्र को आदिशंकराचार्य की रचना मानते है। क्योंकि आचार्य शंकर ने बहुत ही स्तोत्रों की रचना की हैं। इस क्रम में लोग भी इसे इन्ही की रचना बताते है। यही नही इस स्तोत्र के अन्त में भी प्रकाशित ग्रन्थो में भी लिखा है कि इति श्रीशंकराचार्य पिरचित क्षमापन स्तोत्रं सम्पूर्णम् । लेकिन आप विचार करे कि शंकराचार्य जी मात्र 32बर्ष तक ही इस भारतभूमि पर रहे। ये अलौकिक मेधा सम्पन्न पुरुष थे। इनकी

अलौकिक विद्वता सर्वातिशायिनी शेमुषी असाधारणतर्कपटुता को देखकर किसी भी आलोचक का मस्तक गौरव से इनके सामने नत हुए बिना नही रहता। इनका जन्म 788ई.में एवं निर्वाण काल 820ई.में ग्रन्थकारों ने माना है। 32वर्ष की स्वल्प आयु में आचार्य ने वैदिकधर्म के उद्धार तथा प्रतिष्ठा का जो महनीय कार्य सम्पादन किया वह अद्वितीय है। इनके विषय में एक प्रसिद्ध श्लोक है जिसे आप भी जान लीजिऐ।

अष्टवर्षे चतुर्वेदी द्वादशे सर्वशास्त्रवित्।

षोडशे कृतवान् भाष्यं द्वात्रिंशे मुनिरभ्यगात्।।

ये शंकर के अवतार थे। इन्होंने काशी को अपना कर्म क्षेत्र बनाया। जब ये 32वर्ष की स्वल्प अवस्था में ही शरीर छोड दिये तब स्तोत्र में प्रयुक्त है- मया पंचाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि।

इसकी संगति कैसे लगेगी ? इस श्लोक में कहा गया है कि है गणेश जननी! मैने अपनी पचासी वर्ष से अधिक आयुबीत जाने पर विविध विधियों द्वारा पूजा करने से घबडाकर सभी देवों को छोड दिया है। यदि शंकराचार्य जी 85वर्ष के उपर जीवित रहते तब तों यह बात सार्थक होती- लेकिन वे तो 32वर्ष तक ही रहे। इसीलिए यह स्तोत्र शंकराचार्य जी द्वारा विरचित नही है। अन्यथा वे अपने को इस प्रकार कैसे कहते।

अव जिज्ञासा होती है कि इसके रचयिता आचार्य शंकर नही है तो कोन है? आइए इसपर हम कुछ चर्चा करते है।

यह स्तोत्र अत्यन्ततपोनिष्ठ स्वामी विद्यारण्य जी द्वारा रचित है। मध्यकालीन भारत के धार्मिक इतिहास में विद्यारण्य स्वामी का नाम अत्यन्त महत्त्व रखता है। आप अपने समय के एक नितान्त तपोनिष्ठ सन्यासी थे, जिन्होनें अपना पूरा समय अद्वैत-वेदान्त के प्रतिपादन तथा प्रचार में व्यतीत किया। स्वामी शंकराचार्य जी द्वारा प्रतिष्ठित तथा धार्मिक जनता के द्वारा महनीय मठों में सवसे प्रसिद्ध श्रृंगेरीमठ में शंकराचार्य के अत्यन्त उच्च पद पर विराजमान थे।क्योंकि श्रृंगेरीमठ से सम्बद्ध बहुत से शिलालेखों में आपका बढी श्रद्धा तथा आदर से उल्लेख पाया जाता है। लोगों के ह्दयपटल पर श्रृंगेरीमठाधीशों के प्रति जो आज भी इतने सत्कार की छाप पड़ी हुई है उसका विशेष कारण आप जेसे विमल प्रतिभासम्पन्न प्रकाण्डपाण्डित्यमण्डित तपोनिष्ठ सन्यासी का प्रातःस्मरणीय चरित्र ही है।

ये आचार्य सायण के ज्येष्ठभ्राता थे। जिनका नाम माधवाचार्य था। माधव ने अपने जीवन के मघ्यार्किकाल में विजयनगर के महाराजाधिराजो के प्रधानमन्त्री तथा गुरू के गौरवपूर्ण पद पर रहकर अत्यन्त ही कर्मप्रधान जीवन को बिताया। परन्तु जब जीवन के सन्ध्याकाल का आभास मिलने लगा तब इन्होंने गृहस्थाश्रम को छोडकर भारतीय धार्मिक संस्कृति की जागृति की मंगलकामना से प्रेरित होकर नितान्त शान्ति के साथ अपना जीवन बिताने का निश्चय किया। राज काज की झंझटों से ऊबकर शान्ति के साथ जीवन बिताने की बात स्वभाविक ही है।

ये सन्यासी बनकर श्रृंगेरीमठ के प्रधान शंकराचार्य जब आसीन हुए तब इनका नाम विद्यारण्य स्वामी पड़ा। अर्थात् माधवाचार्य का ही सन्यास दीक्षा ग्रहण करने पर विद्यारण्य नाम पड़ा।

विद्यारण्य स्वामी ने नब्बे साल की आयु में अपनी ऐहिक लीला का संवरण किया। यहां देव्यपराधक्षामपनस्तोत्र स्वामी विद्यारण्य के द्वारा ही रचित माना जाता है। इसमें स्वामी जी ने अपने को पच्चासी से भी अधिकवर्ष बीत जाने पर, हे माता! तुम्हारी कृपा यदि मुझ पर न होगी तो है लम्बोदर जननी! निरालम्ब में किसकी शरण में जाउँगा?

परित्यक्ता देवा विविधविधिसेवाकुलतया
मया पंचाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम्।।

इसप्रकार इसके रचयिता स्वामी विद्यारण्यजी है। इस श्लोक की संगति भी अच्छीतरह बैठ जाती है। यह बात आचार्य बलदेव उपाध्यायजी द्वारा रचित आचार्य सायण और माधव नामक ग्रन्थ में वर्णित है। यदि विशेष जिज्ञासा हो तो उसे भी आप देख सकते है। अस्तु!

इसप्रकार इसस्तोत्र के रचनाकार का पता हमलोगों ने लगाया। आप देखे! इस क्षमापन स्तोत्र का पाठ लोग क्यों करते है? इसपर भी कुछ विचार किया जाय।

क्षमापन शब्द में क्षमुष् सहने धातु है। जिससे पुक आदि आगम करके ल्युट् प्रत्यय करने पर क्षमापन शब्द बनता है। या क्षमा को नामधतु मानकर क्षमां यापयति प्रापयति वा क्षमापनम्। जिसका अर्थ है जो क्षमा को प्रदान करे वहीं क्षमादात्री है। व्यक्ति से जाने या अनजाने में जब अपराध होता है तो वह क्षमा मांगता है। क्षमा मांगना व्यक्ति की ईमानदारी एवं हृदयनैर्मल्य को व्यक्त करता है। संसार में लोग गलती करते है, आगे भी करते रहते है, लेकिन उन्हे अपनी गलती का एहसास नहीं होता है, जिसका परिणाम भयानक होता है! और जो व्यक्ति अपनी गलती को समझकर तन्निमित्त क्षमा याचना कर लेता है तो उससे दुसरी बार गलती होने की संभावना कम हो जाती है।

यदि देखा जाये तो गलती भी मनुष्य से ही होती है ओर क्षमायाचना का क्रम भी मनुष्य में ही होता है। यह क्षमायाचना या क्षमादान का भाव पशुओं में नहीं पाया जाता। अतः सच्चा मनुष्य वही है जो गलत कार्य करके क्षमा अवश्य मांगले। तथा दूसरी बार बह गलतकार्य न करे। मनुष्य से गलती अज्ञान के कारण ही होती है। रही बात क्षमायाचना की तो संसार में व्यक्ति द्वारा कियेगये अपराध को क्षमा करने के लिए माता के अतिरिक्त कोई भी पूर्णसमर्थ नही हो सकता! क्योंकि माता अपने सामने श्रद्धावनत पुत्र को देखकर उसके सारे अपराधों को भूलकर गले से लगा लेती है। अतः यहां भी स्वामी विद्यारण्य जी माता से ही क्षमा की याचना करते है।

विशेष बातें आपको स्तोत्र के हिन्दी अनुवाद में स्वतः ज्ञात हो जायेगी अतः बहुत कुछ न कहते हुए सीधे स्तोत्र पाठ की ओर आपको ले चलते है जिसका हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत है जिससे श्लोकों का अर्थ स्वतः स्पष्ट हो जायेगा।

देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो

न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम्।।1।।
विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया
विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत्।
तदेतत्क्षन्तव्यं जननि! सकलोद्धारिणि शिवे!
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।।2।।
पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि! बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे!
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।।3।।
जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि! द्रविणमपि भूयस्तव मया।
तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।।4।।
परित्यक्ता देवा विविधविधिसेवाकुलतया
मया पंचाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम्।।5।।
श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातंको रंको विहरति चिरं कोटिकनकैः।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जनीते जननि! जपनीयं जपविधौ।।6।।
चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः।
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि! त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम्।।7।।
न मोक्षस्याकांक्षा भवविभववांछापि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि! सुखेच्छापि न पुनः।
अतस्त्वां संयाचे जननि! जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव! शिव! भवानीति जपतः।।8।।

नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः

किं रुक्षचिन्तनपरैर्न कृतं वचोभिः।

श्यामे त्वमेव यदि किंचन मय्यनाथे

धत्से कृपामुचितमम्ब परं तवैव।।9।।

आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं

करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि

नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः

क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति।10।।

जगदम्बा विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि।

अपराधपरम्परावृतं न हि माता समुपेक्षते सुतम्।।11।।

मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि।

एवं ज्ञात्वा महादेवि! यथायोग्यं तथा कुरु।।12।।

।।इति श्रीविद्यारण्यकृतं देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्।।

भावार्थ-

हे मातः! मैं तुम्हारा मन्त्र, यन्त्र, स्तुति, आवाहन, ध्यान, स्तुतिकथा, मुद्रा तथा विलाप कुछ भी नहीं जानता; परन्तु सब प्रकारके क्लेशोंको दूर करनेवाला आपका अनुसरण करना(पीछे चलाना) ही जानता हूॅं ।1। सबका उद्धार करनेवाली हे करुणामयी माता! तुम्हारी पूजाकी विधि न जाननेके कारण, धनके अभावमें आलस्यसे और विधियोंका अच्छी पूरा तरह न कर सकनेके कारण, तुम्हारे चरणोंकी सेवा करनेमें जो भूल हुई हो उसे क्षमा करो, क्योंकि पूत तो कुपूत हो जाता है पर माता कुमाता नहीं होती।2। मॉं! भूमण्डल में तुम्हारे सरल पुत्र अनेकों हैं पर उनमें एक मैं विरल ही बडा चंचल हूॅं, तो भी हे शिवे! मुझे त्याग देना तुम्हें उचित नहीं क्योकि पूत तो कुपूत हो जाता है पर माता कुमाता नहीं होती।3। हे जगदम्ब! हे मातः! मैंने तुम्हारे चरणोंकी सेवा नहीं की अथवा तुम्हारे लिये प्रचुर धन भी समर्पण नहीं किया; तो भी मेरे ऊपर यदि तुम ऐसा अनुग्रह रखती हो तो यह सच ही है कि पूत तो कुपूत हो जाता है पर माता कुमाता नहीं होती।4। हे गणेशजननि! मैंनं अपनी पचासी वर्षसे अधिक आयु बीत जानेपर विविध विधियोंद्वारा पूजा करनेसे घबडाकर सब देवोंको छोड दिया है, यदि इस समय तुम्हारी कृपा न हो तो मैं निराधार होकर किसकी शरणमें जाऊॅं ?।5। हे माता अपर्णे! तुम्हारे मन्त्राक्षरोके कानमें पडते ही चाण्डाल भी मिठाईके समान सुमधुरवाणीसे युक्त बडा भारी वक्ता बन जाता है ओर महादरिद्र भी करोडपति बनकर चिरकालतक निर्भय विचरता है तो उसके जपका अनुष्ठान करनेपर जपनेसे जो फल होता है, उसे कौन जान सकता है?।6। जो चिताका भस्म रमाये हैं, विष खाते हैं, नंगे रहते है, जटाजूट बॉंधे हैं गलेमें सर्पमाल पहने हैं, हाथमें खप्पर लिये हैं, पशुपति और भूतोंके स्वमी हैं, ऐसे शिवजीने भी जो एकमात्र जगदीश्वरकी पदवी प्राप्त की है वह हे भवानि! तुम्हारे साथ विवाह होनेका ही फल हें।7। हे चन्द्रमुखी माता! मुझे मोक्षकी इच्छा नहीं है, सांसारिक वैभवकी भी लालसा नहीं है, विज्ञान तथा सुखकी भी अभिलाषा नहीं है, इसलिये मैं तुमसे यही

मॉंगता हूँ कि मेरे सारी आयु मृडानी, रुद्राणी, शिव-शिव, भवानी आदि नामोंके जपते-जपते ही बीते।8। हे श्यामे! मैंने अनेकों उपचारोंसे तुम्हारी सेवा नहीं की (यहीं नहीं, इसके विपरीत) अनिष्टचिन्तनमें तत्पर अपने वचनोंसे मैंने क्या नहीं किया ?(अर्थात् अनेकों बुराइयॉ की हैं) फिर भी मुझ अनाथपर यदि तुम कुछ कृपा रखती हो तो यह तुम्हें बहुत उचित है, क्योंकि तुम मेरी माता हो।9। हे दुर्गे! हे दयासागर महेश्वरी! जब मैं किसी विपत्तिमें पडता हूँ तो तुम्हारा ही स्मरण करता हूँ, इसे तुम मेरी धृष्टता मत समझना, क्योंकि भूखेप्यासे बालक अपनी मॉं को ही याद किया करते हैं।10। हे जगज्जननी! मुझपर तुम्हारी पूर्ण कृपा है, इसमें आश्चर्य ही क्या है ? क्योंकि अनेक अपराधोंसे युक्त पुत्रको भी माता त्याग नहीं देती।11। हे महादेवी! मेरे समान कोई पापी नही है और तुम्हारे समान कोई पापनाश करनेवाली नहीं है यह जानकर जैसा उचित समझो वैसा करो ।12।

इस स्तोत्र पाठ के बाद अब आपसे कुछ प्रश्न पूछे जायेंगे जिनका उत्तर आपसे अपेक्षित है।

बोध प्रश्न-

(क) देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र किसके द्वारा रचित है ?

(ख) विद्यारण्य स्वामी का पूर्वनाम क्या था ?

(ग) 8वर्ष में ही चारो वेदों का अध्ययन किसने किया था ?

(घ) सायण ओर माधव ग्रन्थ के लेखक कौन है ?

(ङ) पापघ्नी का क्या अर्थ है ?

(च) मत्समः पातकी नास्ति कौन कह रहा है ?

अब आपके लिए एक छोटा सा और क्षमापन स्तोत्र प्रस्तुत हैं। इस स्तोत्र में भी क्षमा की याचना की गई है। यह स्तोत्र तो दुर्गापाठ की पुस्तक में भी है। इस स्तोत्र का पाठ भी दुर्गापाठ के अन्त में अवश्य ही किया जाता है। इसके केवल 8ही श्लोक हैं।

स्तोत्र पाठ

(1) अपराध सहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशंमया ।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमश्व परमेश्वरी।।
(2) आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि।।
(3) मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि।
यत्पूजितं मयादेवि परिपूर्णं तदस्तु मे।।
अपराधं शतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत्।
यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः।।

यहां स्तोत्र इतना सरल है कि इसका हिन्दी अनुवाद यहॉं नहीं दिया जा रहा है। इसमे से भी कुछ बोधप्रश्न दिये जारहे है। जिनका समाधान आपसे अपेक्षित है।

बोधप्रश्न-

(क) अपराध सहस्राणि का क्या अर्थ है ?

(ख) स्तोत्र में अनुकम्प्यः कौन है ?

(ग) इस स्तोत्र में कितने श्लोक हैं ?

(घ) आवाहनं शब्द का क्या अर्थ है ?

(ङ) इसमें कामेश्वरि किसे कहा गया है ?

इन बोधप्रश्नों का उत्तर आगे दिया जारहा है। अब आपके लिए इस इकाई का सारांश प्रस्तुत है।

3.4 सारांश

प्रस्तुत इस इकाई में देव्यपराधक्षमापन स्तोत्र के विषय में आपको ज्ञान कराया गया। इस स्तोत्र के रचनाकार के विषय में जो विद्वानो में मतभेद आदि हैं उसे भी युक्तिपूर्वक एवं प्रामाणिक रूप से दूर किया गया। इसके नाम का अर्थ एवं प्रयोजन भी आपको बता दिया गया। इसके साथ ही एक ओर छोटा सा स्तोत्र क्षमा याचना से सम्बधित आपको बताया गया। जिसका पाठ दुर्गासप्तशतीस्तोत्रपाठ के अन्त में अवश्य किया जाता है। यह सभी के लिए अनिवार्य हे। श्लोक इतने छोटे से अनुष्टुप छन्द में है कि शीघ्र ही आपको कण्ठ हो जायेगा इस प्रकार अपने अन्यान्य अंगो के साथ यह इकाई भी पूर्ण होती है। इसका विस्तृत अध्ययन इसके मूल में विद्यमान है।

3.5 शब्दावली-

श्वपाकः-चाण्डाल

जल्पाकः-अच्छी तरह बोलने वाला

गरलमशनम्-विष (जहर) खाने बाले भगवान शिव

मनुवर्ण-मन्त्रवर्ण

भुजगपतिहारी-गले में सर्पो को धारण करने वाला

रंक- महादरिद्र

विविधोपचारैः- अनेक उपचारों से

आपत्सु-विपत्ति में

शठत्वं- दुष्टता

पापघ्नी-पापों का नाश करनेवाली

3.6 बोधप्रश्नों के उत्तर-

प्रथमखण्ड-

क. यह स्तोत्र स्वामी विद्यारण्य जी द्वारा विरचित है।

ख. विद्यारण्यस्वामी का पूर्वनाम आचार्य माधव था।

ग. 8वर्ष की अवस्था में ही चारोंवेदों का अध्ययन आदिशंकराचार्य जी ने किया था।

घ. सायण और माधव ग्रन्थ के लेखक आचार्यबलदेव उपाध्याय है।

ङ. पापघ्नी का अर्थ पापों का नाश करने वाली।

च. यह प्रार्थना करने वाला या उपासक कहता है।

द्वितीयखण्ड-

बोधप्रश्नों के उत्तर-

क. अपराध सहस्राणि का तात्पर्य हजारो अपराधों से है।

ख. अनुकम्प्यः स्तुति करने वाला है।

ग. इसमें मात्र 8ही श्लोक है।

घ. आवाहन का अर्थ हैं किसी को बुलाना।

ङ कामेश्वरि माता दुर्गा के लिए कहा गया है।

3.7 सन्दर्भग्रन्थसूची

ग्रन्थनाम-

1. स्तोत्ररत्नावली - गीताप्रेस गोरखपुर
2. बृहत्स्तोत्ररत्नावली - गीताप्रेस गोरखपुर
3. आचार्यसायण और माधव - बलदेव उपाध्याय
4. श्रीदुर्गासप्तशती - गीताप्रेस गोरखपुर

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न-

1. दुर्गाक्षमापन स्तोत्र का तात्पर्य लिखें।
2. देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र के किन्ही चार श्लोको का अर्थ लिखें।

इकाई – 4 शिवपंचाक्षर एवं रूद्राष्टक स्तोत्र

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में अन्नपूर्णा स्तोत्र से सम्बद्ध विविध विषयों की जानकारी आपको प्रदान की गई।

प्रस्तुत इस इकाई में शिवपंचाक्षर एवं रुद्राष्टक-स्तोत्र के विषय से आप अवगत होंगे। इन दोनों स्तोत्रों से सम्बद्ध कुछ विशेष बातों को भी आप तक पहुँचाने की सार्थक कोशिश की जायेगी।

4.2 उद्देश्य

ये दोनों स्तोत्र समाज में अत्यन्त ही प्रसिद्ध है। संभवतः जिन्हें शिवजी के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं होता, वे भी इस स्तोत्र का पाठ करके अपने को धन्य मानते हैं, परन्तु इस स्तोत्र का महत्त्व तथा प्रकरण प्रसंगतः यदि यहाँ ज्ञात हो जाय, तो सोने में सुगन्ध हो जाय। इसी दृष्टि से यहाँ इन दोनों स्तोत्रों की हिन्दी अनुवाद के साथ प्रसंग से भी आपका परिचय कराया जायेगा। शिवपंचाक्षर तो शंकराचार्य जी द्वारा विरचित है परन्तु रुद्राष्टक के रचनाकार गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी है।

4.3 स्तोत्र-परिचय (शिवपंचाक्षर)

यह स्तोत्र भगवान शिव का है। शिव जी का एक नाम आशुतोष है। अर्थात् अत्यन्त शीघ्र ही प्रसन्न होने वाले ये देवता है। इसीलिए इन्हें आशुतोष भी कहा जाता है। इसी गुण का लाभ कभी कभी असुर भी उठा लेते हैं। इनके यहाँ देव या असुर, राक्षस या मनुष्य कोई भी हो, यदि निर्मल हृदय से इनकी स्तुति करता है तो ये जल्दी ही प्रसन्न हो जाते हैं। इनका एक नाम शिव है। शिव का अर्थ कल्याण है। अर्थात् सभी का कल्याण करने वाले।

वैसे आप कहेंगे कि शिव तो संहार करने वाले है, क्योंकि ब्रह्मा जगत की सृष्टि करते हैं, विष्णु, इसका पालन करते हैं एवं शिवजी सभी का संहार करते हैं, तो इनसे कल्याण की इच्छा कैसे हम करें।

इस जिज्ञासा की शान्ति के लिए हम आपको वेदों की ओर कुछ देर के लिए ले चलेंगे, क्योंकि अन्यान्य प्रमाणों की अपेक्षा श्रुति प्रमाण सभी प्रमाणों से प्रबल है। यजुर्वेद के रुद्रसूक्त में कहा गया है-

ऊँ या ते रुद्र शिवातनूरघोरापापकाशिनी।
तयानस्तन्वाशन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि।।

प्रसंगतः यहाँ इसका भाव यह है कि भगवान शिव के दो रुप हैं। (क) घोर (ख) अघोर। घोर का अर्थ है संहार करने वाले शिव एवं अघोर का अर्थ कल्याणमय, अर्थात् सभी का कल्याण करने वाले इसीलिए इस सूक्त के पहले मन्त्र में रुद्र (शिव) के घोर रूप क्रोध को प्रणाम किया गया है एवं इस दूसरे मन्त्र में अघोर रूप का। जिसका तात्पर्य यह है - हे रुद्रदेव! सुख की वृद्धि करने वाले

आपका, जो शरीर शान्त, सौम्य एवं पुण्यप्रदायक है, उसी कल्याणमय-शरीर से हमारी ओर दृष्टि-निक्षेप करते हुए हमारा कल्याण करें।

इस सूक्त के चौथे मन्त्र में उपासक स्तुति करते हुए कहता है - हे पर्वतवासी रुद्र हम मंगलमय स्तोत्रों से आपको प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करता हैं। यही प्रार्थना है कि आप अपने कल्याणमय, वपु के प्रभाव से इस पृथिवी पर स्थित सभी लोग नीरोग एवं प्रसन्न रहें। मन्त्र यह है-

शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छाव्वदामसि।

यथानः सर्वमिज्जगदयक्ष्मं सुमनाऽसत्।।

अब आप ही बतायें! ऐसे देवता किसे प्रिय नहीं होंगे। आज के वर्तमान समाज में नीरोग एवं सुख की कामना सभी को होती है। अतः आइये, हमलोग मिलकर भगवान आशुतोष शिव के स्तोत्र का पाठ श्रद्धापूर्वक करते हैं। इस स्तोत्र में 5 ही श्लोक है। एक श्लोक फलश्रुति है। इसका रहस्य यह है कि शिवजी के मन्त्र ''नमः शिवाय'' में भी 5 ही अक्षर है, जिसे पंचाक्षरी मन्त्र कहा जाता है। इसे ही यहाँ शिवपंचाक्षर के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यहाँ अविलम्ब ही अब स्तोत्र पाठ को प्रस्तुत किया जा रहा है।

शिवपंचाक्षर-स्तोत्र

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय, भस्मांगरागाय महेश्वराय।
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय, तस्मै 'न' काराय नमः शिवाय।।1।।

मन्दाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय, नन्दीश्वरप्रमथनाथमहेश्वराय।
मन्दारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय, तस्मै 'म' काराय नमः शिवाय।।2।।

शिवाय गौरीवनदनाब्जवृन्दसूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय।
श्रीनीलकण्ठाय वृषभध्वजाय, तस्मै 'शि' काराय नमः शिवाय।।3।।

वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमार्यमुनीन्द्रदेवार्चितशेखराय।
चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय, तस्मै 'व' काराय नमः शिवाय।।4।।

यक्षस्वरूपाय जटाधराय, पिनाकहस्ताय सनातनाय।
दिव्याय देवाय दिगम्बराय, तस्मै 'य' काराय नमः शिवाय।।5।।

पंचाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते।।6।।

जिनके कण्ठ में साँपों का हार है, जिनके तीन नेत्र हैं, भस्म ही जिनका अंगराग (अनुलेपन) है, दिशाएँ ही जिनका वस्त्र है (अर्थात् जो नग्न हैं), उन शुद्ध अविनाशी महेश्वर 'न' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है।।1।।

गंगाजल और चन्दन से जिनकी अर्चा हुई है, मन्दार-पुष्प तथा अन्यान्य कुसुमों से जिनकी सुन्दर पूजा हुई है, उन नन्दी के अधिपति प्रमथगणों के स्वामी महेश्वर 'म' कारस्वरूप शिव को

नमस्कार है।।2।।

जो कल्याणस्वरूप हैं, पार्वतीजी के मुखकमल को विकसित (प्रसन्न) करने के लिये जो सूर्य स्वरूप हैं, जो दक्ष के यज्ञ का नाश करने वाले हैं, जिनकी ध्वजा में बैल का चिह्न है, उन शोभाशाली नीलकण्ठ 'शि' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है।।3।।

वसिष्ठ, अगस्त्य और गौतम आदि श्रेष्ठ मुनियों तथा इन्द्र आदि देवताओं ने जिनके मस्तक की पूजा की है, चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि जिनके नेत्र हैं, उन 'व' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है।।4।।

जिन्होंने यक्षरूप धारण किया है, जो जटाधारी हैं, जिनके हाथ में पिनाक हैं, जो दिव्य सनातन पुरुष हैं, उन दिगम्बर देव 'य' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है।।5।।

जो शिव के समीप इस पवित्र पंचाक्षर स्तोत्र का पाठ करता है, वह शिवलोक को प्राप्त करता और वहाँ शिवजी के साथ आनन्द पूर्वक निवास करता है। अस्तु!।6।।

इस स्तोत्र की यह विशेषता है कि इसका आदि अक्षर 'न' से प्रारंभ होकर 'य' अक्षर पर समाप्त होता है। एवं अन्तिम के चरणों में 'तस्मै 'न' काराय नमः शिवाय, इसी प्रकार अन्त में तस्मै 'य' काराय नमः शिवाय।

इस प्रकार यह स्तोत्र 'नमः शिवाय' मय है। यह अत्यन्त सरल एवं लघु है। इस स्तोत्र के पाठ से व्यक्ति के पाप जलकर भस्म हो जाते हैं और उसे शाश्वत सुख की प्राप्ति होती है।

इसी प्रसंग में (12) द्वादश ज्योतिर्लिंगों के नाम एवं उनका स्थान भारतवर्ष में कहाँ है? यह भी यहाँ जानना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि साक्षात् भगवान् शिव उस लिंग में नित्य रूप से निवास करते हैं, ये विग्रह है साक्षात् शिव के। अतः इसका ज्ञान होना यहाँ अप्रासंगिक नहीं होगा। तो लीजिए आपके लिए यह भी प्रस्तुत है-

4.3.1 द्वादश ज्योतिर्लिंगानि

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम्।
उज्जयिन्यां महाकालमोंकारममलेश्वरम्।।1।।
परल्यां वैद्यनाथं च डाकिन्यां भीमशंकरम्।
सेतुबन्धे तु रामेशं नागेशं दारुकावने।।2।।
वाराणस्यां तु विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे।
हिमालये तु केदारं घुश्मेशं च शिवालये।।3।।
एतानि ज्योतिर्लिंगानि सायं प्रातः पठेन्नरः।
सप्तजन्मकृतं पापं स्मरणेन विनश्यति।।4।।

(1) सौराष्ट्रप्रदेश (काठियावाड़) में श्रीसोमनाथ, (2) श्रीशैल पर मल्लिकार्जुन, (3) उज्जयिनी (उज्जैन) में श्रीमहाकाल, (4) ऊँकारेश्वर अथवा अमलेश्वर।। (5) परली में वैद्यनाथ, (6) डाकिनी नामक स्थान में श्रीभीमशंकर, (7) सेतुबन्ध पर श्रीरामेश्वर, (8) दारुकावन में श्रीनागेश्वर।। (9)

वाराणसी (काशी) में श्रीविश्वनाथ, (10) गौतमी (गोदावरी) के तट पर श्रीयम्बकेश्वर, (11) हिमालय पर केदारखण्ड में श्रीकेदारनाथ और (12) शिवालय में श्रीघुश्मेश्वर को स्मरण करे॥3॥ जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल और सन्ध्या के समय इन बारह ज्योतिर्लिंगों का नाम लेता है, उसके सात जन्मों का किया हुआ पाप इन लिंगों के स्मरणमात्र से मिट जाता है॥4॥

अब इन दोनों स्तोत्रों से कुछ बोध प्रश्न आपके लिए दिये जा रहे हैं। जिनका समाधान आपसे अपेक्षित है।

बोधप्रश्न - 1

क. स्तोत्र में पंचाक्षर क्या है?

ख. शिवजी के कितने नेत्र हैं?

ग. सोमनाथ ज्योतिर्लिंग कहाँ पर स्थित है?

घ. उज्जयिनी में कौन सा ज्योतिर्लिंग है?

ङ. अवन्तिकापुरी का दूसरा नाम क्या है?

च. गोदावरी के तट पर कौन सा लिंग है?

4.3.2 रुद्राष्टक-स्तोत्र

परिचय

यह स्तोत्र गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी द्वारा विरचित है, यह स्तुति श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड के 108 वें दोहें में वर्णित है। इसे रुद्राष्टक इसलिए कहते हैं कि इसमें 8 ही श्लोक है। यह स्तुति क्यों की गई? किसने की? किस प्रसंग में की? आदि जिज्ञासायें स्वाभाविक हैं। अतः इनका समुचित उत्तर देते हुए ही आपको स्तुति पाठ का ज्ञान कराया जायेगा। प्रसंग ज्ञात हो जाने से स्तुति में श्रद्धा और भी बढ़ जाती है। तो लीजिए प्रसंग का आनन्द, यह कथा रामचरित मानस ग्रन्थ के उत्तरकाण्ड में है-

एक बार की बात है कि किसी कारणवश प्रभु श्रीराम के चरित को देखकर पक्षिराज गरुड जी को मोह उत्पन्न हो गया। वे प्रभु श्रीराम को सामान्य मानव की श्रेणी में समझने लगे। जिससे श्रीराम के ईश्वरत्व में इन्हें सन्देह होने लगा। ये व्याकुल होकर ब्रह्मा नारद आदि सभी देवताओं से मिले, परन्तु इनका सन्देह दूर नहीं हुआ। व्याकुलता बढ़ती ही गई। इसके बाद भगवान शिव से इनकी मिलन होती है। भगवान शिव ने इन पर कृपा कर काकभुशुंडि के यहाँ भेजा कि वहाँ नित्य कथा भगवान की होती है वहाँ पर जाकर श्रवण करो। जिससे तुम्हारा सन्देह दूर हो जायेगा। गरुड जी काकभुसुंडि के आश्रम पर गये। इसी क्रम में सम्पूर्ण प्रभु श्री राम की कथा काकभुसुंडि जी ने गरुड को सुनाया। गरुड जी का मोह दूर हो गया। एवं प्रभु का दर्शन भी हुआ। इसके बाद काकभुसुंडि जी अपने पूर्वजन्म के चरित्र को गरुडजी से सुना रहे हैं। हे गरुडजी! कलियुग में मेरा जन्म एक दास परिवार में हुआ। मेरा जन्म कही दूसरी जगह नहीं भगवत्कृपा से अयोध्या में हुआ। मैं मन, वचन, कर्म से

शिवजी का सेवक था एवं दूसरे देवताओं की निन्दा करने वाला तथा अभिमानी था। मैं धन के मद से मतवाला, उग्र बुद्धिवाला एवं दम्भी था। श्रीरघुनाथ जी के पुरी (अयोध्या) में रहते हुए भी पुरी का प्रभाव मैं जान नहीं पाया। अयोध्या में बहुत वर्षों तक रहने के बाद वहाँ अकाल पड़ गया जिससे दुखी होकर उज्जैन चला गया। कुछ काल तक हमने भगवान शिव की सेवा की। आज जो महाकालेश्वर के रूप में विद्यमान है। वहाँ एक ब्राह्मण थे जो वैदिक विधि से नित्य ही महाकाल की पूजा करते थे। वे शिव के उपासक तो थे, परन्तु हरि की निन्दा नहीं करते थे। सभी देवताओं के प्रति उनका सम्मान था। मैं कपट पूर्वक उनकी सेवा करता था। वे बड़े दयालु एवं नीतिज्ञ थे। बाहर से हमें अति नम्र देखकर पुत्र की तरह हमें ज्ञान देते थे। उन्होंने शिव मन्त्र की दीक्षा दी। मैं जाति स्वभाव के कारण के भक्तों को देखकर जलता था। डाह करता था। परन्तु मेरे मति में यह बुद्धि नहीं आती थी कि हरि एवं हर में कोई भेद नहीं है। ये दोनों अभेद ही है। एक बार गुरु अपने घर में बुलाये और बहुत तरह से हमें उपदेश दिये। इसी क्रम में उन्होंने एक बात कही कि ''शिवजी हरि के सेवक हैं'' शिवजी के सेवा का फल है कि प्रभु श्रीराम के चरणों में अविरल भक्ति हो जाती है। यह बात हमें अच्छी नहीं लगी और गुरु से ही हमने द्रोह करना आरम्भ कर दिया। जिस प्रकार सर्प को दूध यदि पिलाया जाय तो संभवतः वह सर्प पिलाने वाले को ही काट लेता है। इसलिए विद्वान् लोग खल की संगति नहीं करते हैं। एकबार मैं शिवजी के मन्दिर में पूर्वोक्त पंचाक्षर मंत्र का जप कर रहा था, उसी समय मेरे गुरुजी पूजन करने आये, मैं अभिमान-वश बैठा ही रह गया। गुरुजी तो दयालुता-वश कुछ भी नहीं बोले परन्तु मन्दिर से ही भगवान शिव के द्वारा आकाशवाणी होने लगी अर्थात् साक्षात् शिवजी ने कहा अरे मूर्ख तू गुरु का अपमान करता है, गुरु के आने पर भी अजगर की तरह बैठा ही रह गया जा तू अजगर (सर्प) हो जा।

इस प्रकार शिवजी के शाप को सुनकर गुरुजी ने हाहाकार कर वे दोनों हाथ जोड़कर मेरे शाप की निवृत्ति के लिए गद्गद् वाणी से शिवजी की स्तुति करने लगे। जो आपके सामने हैं।

यह स्तोत्र श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड के 108वें दोहे में वर्णित है। इसके साथ ही यह कथा भी उसी प्रसंग में एवं इसी काण्ड में वर्णित है।

4.4 श्रीरुद्राष्टकम्

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं
विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं
चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं।।1।।
निराकारमोंकारमूलं तुरीयं
गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।
करालं महाकाल कालं कृपालं
गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।2।।
तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरं

मनोभूत कोटि प्रभा श्री शरीरं।

स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा

लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजंगा।।3।।

चलत्कुंडलं भ्रू सुनेत्रं विशालं

प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालं।

मृगाधीशचर्माम्बरं कुंडमालं

प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि।।4।।

प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं

अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशं।

त्रयः शूल निर्मूलनं शूलपाणिं

भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं।।5।।

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी

सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी।

चिदानंद संदोह मोहापहारी

प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी।।6।।

न यावद् उमानाथ पादारविन्दं

भजंतीह लोके परे वा नराणाम्।

न तावत्सुखं शान्ति सन्तापनाशं

प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं।।7।।

न जानामि योगं जपं नैव पूजां

नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं।

जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं

प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो।।8।।

रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।

ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति।।9।।

हे ईशान! मैं मुक्तिस्वरूप, समर्थ, सर्वव्यापक, ब्रह्म, वेदस्वरूप, जिनस्वरूप में स्थित, निर्गुण, निर्विकल्प, निरीह, अनन्त ज्ञानमय और आकाश के समान सर्वत्र व्याप्त प्रभु को प्रणाम करता हूँ।।1।।

जो निराकार हैं, ओंकार रूप आदि कारण हैं, तुरीय हैं, वाणी, बुद्धि और इन्द्रियों के पथ से परे हैं, कैलासनाथ हैं, विकराल और महाकाल के भी काल, कृपालु, गुणों के आगार और संसार से तारने वाले हैं, उन भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ।।2।।

जो हिमालय के समान श्वेतवर्ण, गम्भीर और करोड़ों कामदेव के समान कान्तिमान्

शरीरवाले हैं, जिनके मस्तक पर मनोहर गंगाजी लहरा रही हैं, भालदेश में बालचन्द्रमा सुशोभित होते हैं और गले में सर्पों की माला शोभा देती है।।3।।

जिनके कानों में कुण्डल हिल रहे हैं, जिनके नेत्र एवं भृकुटी सुन्दर और विशाल हैं, जिनका मुख प्रसन्न और कण्ठ नील है, जो बड़े ही दयालु हैं, जो बाघ की खाल का वस्त्र और मुण्डों की माला पहनते हैं, उन सर्वाधीश्वर पिय्रतम शिव का मैं भजन करता हूँ।।4।।

जो प्रचण्ड, सर्वश्रेष्ठ, प्रगल्भ, परमेश्वर, पूर्ण, अजन्मा, कोटि सूर्य के समान प्रकाशमान, त्रिभुवन के शूलनाशक और हाथ में त्रिशूल धारण करने वाले हैं, उन भावगम्य भवानीपति का मैं भजन करता हूँ।।5।।

हे प्रभो! आप कलारहित, कल्याणकारी और कल्प का अन्त करने वाले हैं। आप सर्वदा सत्पुरुषों को आनन्द देते हैं, आपने त्रिपुरासुर का नाश किया था, आप मोहनाशक और ज्ञानानन्दघन परमेश्वर हैं, कामदेव के आप शत्रु हैं, आप मुझ पर प्रसन्न हों, प्रसन्न हों।।6।।

मनुष्य जब तक उमाकान्त महादेव जी के चरणारविन्दों का भजन नहीं करते, उन्हें इहलोक या परलोक में कभी सुख और शान्ति की प्राप्ति नहीं होती और न उनका सन्ताप ही दूर होता है। हे समस्त भूतों के निवास स्थान भगवान् शिव! आप मुझपर प्रसन्न हों।।7।।

हे प्रभो! हे शम्भो! हे ईश! मैं योग, जप और पूजा कुछ भी नहीं जानता, हे शम्भो! मैं सदा-सर्वदा आपको नमसकार करता हूँ। जरा, जन्म और दुःखसमूह से सन्तप्त होते हुए मुझ दुःखी की दुःख से आप रक्षा कीजिए।।8।।

जो मनुष्य भगवान् शंकर की तुष्टि के लिए ब्राह्मण द्वारा कहे हुए इस रुद्राष्टक का भक्तिपूर्वक पाठ करते हैं, उन पर शंकर जी प्रसन्न होते हैं।।9।।

स्तोत्र पाठ के बाद कुछ बोध प्रश्न आपके लिए दिये जाते हैं।

बोधप्रश्न – 2

क. श्रीराम के चरित्र पर मोह किसे हुआ था?
ख. इस स्तोत्र में कितने श्लोक हैं?
ग. गरुड जी को रामकथा किसने सुनायी?
घ. काकभुसुंडि जी का जन्म कहाँ हुआ था?
ङ. रामचरितमानस के रचनाकार कौन है?

4.5 सारांश

इस इकाई में आपको शिवपंचाक्षर, द्वादशज्योतिर्लिंगों का परिचय एवं रुद्राष्टकस्तोत्र के विषय में ज्ञान कराया गया है। इसके साथ ही रुद्राष्टक का प्रसंग भी गरुड-काकभुसुण्डि संवाद के माध्यम से आपको विशेषरूप से अवगत कराया गया।

शिवपंचाक्षर स्तोत्र की विशेषता एवं स्तोत्र में प्रयुक्त कुछ विशेष पदों की प्रासंगिकता का भी बोध कराया गया। इसके साथ ही भारतवर्ष में कितने ज्योतिर्लिंग है? एवं वे कहाँ कहाँ है? एवं

इनका क्या महत्त्व है? इस पर भी प्रामाणिक चर्चा आपसे की गई।

4.6 शब्दावली

क. निर्वाणरूपम् - मुक्तिस्वरूप

ख. चिदाकाश - अनन्त ज्ञानमय

ग. तुषाराद्रि - हिमालय के समान

घ. वालेन्दु - बालचन्द्रमा

ङ. त्रिलोचन - तीन नेत्र वाले

च. मन्दाकिनी - गंगा

छ. सौराष्ट्र - काठियावाड

ज. रामेश्वर तीर्थ - तमिलनाडू प्रान्त के रामनाथ जिले में है।

4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्नों के उत्तर - 1

क. स्तोत्र में पंचाक्षर ''नमः शिवाय'' है।

ख. शिवजी के तीन नेत्र होते हैं।

ग. सोमनाथ ज्योतिर्लिंग सौराष्ट्र प्रदेश में हैं।

घ. उज्जयिनी में महाकालेश्वर है।

ङ. अवन्तिकापुरी को उज्जैन भी कहा जाता है।

च. गोदावरी के तट पर त्र्यम्बकेश्वर जी विद्यमान है।

बोध प्रश्नों के उत्तर – 2

क. श्रीराम के चरित्र पर गरुड जी को मोह हुआ था।

ख. इसमें आठ श्लोक हैं।

ग. गरुड को श्रीराम कथा काकभुसुण्डी जी ने सुनाई थी।

घ. काकभुसुण्डी जी का जन्म अयोध्यापुरी में हुआ था।

ङ. रामचरितमानस के रचनाकार श्री गोस्वामीतुलसीदास जी हैं।

4.8 सन्दर्भग्रन्थ

क. श्रीरामचरितमानस

ख. बृहत्स्तोत्ररत्नाकर

ग. बृहत्स्तोत्ररत्नमाला

घ. नित्यकर्मविधि

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

क. द्वादशज्योतिर्लिंगों के नाम एवं स्थान का परिचय करायें।

ख. शिवपंचाक्षरस्तोत्र का अभिप्राय लिखें।

खण्ड – 3
नवरात्र विधान

इकाई – 1 नवरात्र परिचय एवं महत्व

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 नवरात्र परिचय

1.4 कुमारी पूजन

1.5 सारांश

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0के0के0 - 301 के तृतीय खण्ड के प्रथम इकाई **'नवरात्र परिचय एवं महत्व'** से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में शिवपंचाक्षर, रुद्राष्टक एवं द्वादशज्योर्लिंगों के विषय में प्रामाणिक ज्ञान आपको कराया गया।

प्रस्तुत इस इकाई में नवरात्र का परिचय, महत्त्व आदि के विषय में आपको ज्ञान कराया जायेगा।

1.2 उद्देश्य

हमारे भारतवर्ष में नवरात्र के समय शक्ति की उपासना अवश्य ही की जाती है। यह बात सर्वविदित है। नवरात्र में शक्ति की उपासना क्यों? इसका प्रयोजन क्या है? तथा नवरात्र किसे कहते हैं? एवं नवरात्र कितने होते हैं? कब होते हैं? आदि विशेष बातें भी आपको प्रामाणिक रूप से यहाँ ज्ञात करायी जायेगी। जो वर्तमान समय के लिए अत्यन्त ही उपादेय हैं।

1.3 नवरात्र परिचय

सर्वप्रथम, नवरात्र शब्द को लेकर यहाँ विचार किया जा रहा है, क्योंकि विचार के क्रम में शब्द ही पहले आते हैं इसके बाद अर्थ। संस्कृत में 'रात्रि' शब्द है, तो नवरात्रि शब्द का प्रयोग लोग क्यों नहीं करते हैं? लोग इसे नवरात्र ही क्यों कहते हैं? यह पहली जिज्ञासा है।

इसके लिए हम आपको कुछ देर के लिए व्याकरणशास्त्र की ओर ले चलेंगे, वहाँ इसका प्रामाणिक समाधान होगा।

महर्षि पाणिनि का एक सूत्र है - **'अहः सर्वैकदेशसंख्यातपुण्याच्चरात्रेः'** इसका अर्थ यह है - अहः, सर्व, एकदेश-सूचक शब्द, संख्यात तथा पुण्य के साथ, रात्रि का समास होने पर समासान्त अच् प्रत्यय हो जाता है और समस्तपद रात्रि को रात्र हो जाता है। संख्या एवं अव्यय के साथ भी इसी प्रकार होता है। जैसे अहश्च रात्रिश्चेति अहोरात्रः। सर्वा रात्रिः इति सर्वरात्रः। उसी तरह नवरात्र शब्द में भी नवानां रात्रीणां समाहारः नवरात्रम्, इसी तरह द्विरात्रम् आदि शब्द भी निष्पन्न होते हैं। अब जिज्ञासा होती है कि 'अच्' प्रत्यय होने पर अहोरात्रः की तरह नवरात्रः क्यों नहीं हुआ? तब महर्षि कात्यायन का एक वार्तिक है - ''संख्यापूर्वं रात्रं क्लीबम्'' अर्थात् संख्यापूर्व रात्रन्त समास वाले शब्द नपुंसक लिंग में ही प्रयुक्त होते हैं। यथा - द्विरात्रम्, त्रिरात्रम् एवं नवरात्रम्। अस्तु! इस प्रकार संस्कृत में नवरात्रं कहेंगे एवं हिन्दी में इसे नवरात्र कहा जाता है। यह आपके विशेष जानकारी के लिए ही प्रस्तुत किया गया ताकि नवरात्रं, नवरात्र आदि शब्दों में सन्देह न हो।

यहाँ समाहार द्वन्द्व समास है। अस्तु।

अब विचार करना है कि नवरात्र ही इसे क्यों कहा गया? तथा इसके कितने प्रकार है? और कब, कब मनाये जाते हैं? इसका समाधान इस प्रकार दिया जा रहा है।

अनन्तकोटि ब्रह्माण्डों का परिचालन ईश्वर के द्वारा होता है यह ध्रुव सत्य है। यह परिचालन का कार्य एक प्रकार से प्रभु की शक्ति से ही सम्पन्न होता है यह बात भी निर्विवाद है। इस शक्ति की उपासना ही हम जीवधारियों का परम लक्ष्य है। यही परमात्मा की शक्ति, काल के रूप में हम सदा ही अनुभव करते हैं। काल भी नित्य है एवं परमात्मा की विभूति है। जैसा कि गीता में कहा गया - ''कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्त्तुमिहप्रवृत्तः''। इस प्रकार ऋतु या मौसम के रूप में यह काल रूप, ईश्वर-शक्ति जगत् में सतत परिवर्तन करती रहती है। इसका अनुभव प्रत्येक प्राणी को स्पष्ट रूप से होता है। संवत्सर में 360 दिन-रात होते हैं। इनको यदि 9,9 के खण्डों में विभक्त किया जाय तो सम्पूर्ण वर्ष में 40 नवरात्र होते हैं। अब प्रश्न यह होता है कि नौ, नौ के ही खण्ड क्यों?

इसका अभिप्राय यह है कि संख्याओं में नौ संख्या सभी से बड़ी है, अर्थात् एक अंक की सबसे बड़ी संख्या नौ है। यहाँ एक संख्या का अर्थ ईश्वर है। दूसरी बात यह है कि इस नौ संख्या के साथ प्रकृति का एक संबंध है - क्योंकि प्रकृति में तीन गुण है। सत्व, रज एवं तम। और ये तीनों परस्पर मिले हुए त्रिवृत कहलाते हैं। जिसका संकेत वेदों में आता है। इसको हम इस प्रकार समझ सकते हैं -

यज्ञोपवीत में तीन तार होते हैं। (धागे हैं) फिर एक एक में तीन धागे होते हैं, इस प्रकार तीन तीन मिलाकर नौ हो जाते हैं। इसीलिए यज्ञोपवीत संस्कार के समय, जनेऊ में ''ऊँकार'' आदि नव देवताओं का नौ तन्तुओं में आवाहन करते हैं। यही प्रकृति का स्वरूप है। प्रकृति के तीन गुण और फिर तीनों में एक एक सम्मिलित है जिसे हमलोग प्रकृतितत्त्व को ही निरन्तर जनेऊ के रूप में धारण करते हैं। यह एक प्रकार से प्रकृति का मानचित्र है। जैसे भारत का मानचित्र होता है।

उपरोक्त 40 नवरात्रों में मुख्यरूप से 4 नवरात्र प्रधान है जिसका संकेत देवीभागवत के इस श्लोक में प्राप्त होता है-

चैत्रेऽश्विने तथाषाढे माघे कार्यो महोत्सवः।

नवरात्रे महाराज पूजाकार्या विशेषतः।।

अर्थात् चैत्र, आश्विन, आषाढ एवं माघ के शुक्ल पक्ष कीं प्रतिपदा तिथि से नवमी तिथि तक नवरात्र रहता है। दो गुप्त नवरात्र है, जो आषाढ एवं माघ महीने में होते हैं। इनमें भी दो नवरात्र वर्तमान समय में अत्यन्त ही प्रसिद्ध हैं। चैत्र एवं अश्विन मास वाले ये दोनों ही नवरात्र ग्रीष्म और शीत, दो प्रधान ऋतुओं के आरम्भ की सूचना देने वाले हैं। इस अवसर पर प्रधानशक्ति सम्पूर्ण जगत् का परिवर्तन करती है। इस समय उस महाशक्ति का रूप प्रत्यक्ष होता है। इसीलिए विज्ञान की भित्ति पर प्रतिष्ठित सनातन धर्म में ये शक्ति उपासना के प्रधान अवसर माने गये हैं।

दूसरी बात यह है कि कृषि प्रधान भारत देश में चैत्र एवं आश्विन में ही महालक्ष्मी का स्वरूप प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है। वर्षा की फसल आश्विन में और शीत की फसल चैत्र में पककर तैयार हो जाती है। मानों भारत की धनधान्य समृद्धि अपने पूर्णरूप में प्रत्यक्ष हो जाती है। जब भारतवर्ष में सुख समृद्धि अधिक था, उन दिनों आश्विन एवं चैत्र महीनों में घर घर में लोग बड़ी उत्सुकता के साथ महालक्ष्मी का स्वागत करते थे। इस अवसर पर कृतज्ञ भारतवासी जगत् की शक्ति महालक्ष्मी की उपासना बड़ी श्रद्धा के साथ करते थे। अपने अहंकार को भूलकर जिस परमात्मा की परमशक्ति की कृपा से यह सुख समृद्धि प्राप्त हुई है, उसके चरणों में नत होना अपना कर्तव्य समझते थे। संभवतः इसीलिए दोनों नवरात्र शक्ति उपासना के लिए प्रधान समय माने गये हैं। आश्विन का महीना जैसे धन धान्य आदि समृद्धि के लिए प्रसिद्ध है उसी तरह विविध बीमारियों भी इसी समय में लोगों को होती है। इसीलिए - ''वैद्यानां शारदीमाता'' कहा गया है। क्योंकि वर्षा का अन्त एवं शीत का प्रारम्भ इसी काल में होता है। इन दोनों ऋतुओं के सन्धिकाल में ही नाना प्रकार के रोग होते हैं। आयुर्वेद में इसे यमद्रंष्ट्रा काल कहा गया है। इस समय प्राकृतिक आपत्ति से बचने के लिए भी यथाशक्ति महाशक्ति की उपासना अवश्य ही सभी को करना चाहिए।

जिन दिनों भारत के वीरक्षत्रिय संसार भर में विजय का डंका बजाते थे, उन दिनों इस आश्विन मास का और भी अधिक महत्त्व था। चातुर्मास में विजय यात्रा स्थगित रहती थी, वे घर पर विश्राम करते थे, आश्विन मास के आते ही ''वर्षा गत शरद् ऋतु आई'' इस वचन के अनुसार शक्ति की उपासना करके वे फिर विजययात्रा का आरम्भ कर देते थे। इसलिए आश्विन मास के नवरात्र में शक्ति की उपासना के लिए सबसे प्रधान काल माना गया है और इसके पूर्ण होते ही विजय यात्रा का दिन (विजयादशमी) भी आता है।

एक बात और यहाँ आप ध्यान दें। मैंने इसके पहले नवरात्र को प्रकृति की संज्ञा दी थी। इसके साथ ही प्रकृति में तीन गुण सत्, रज एवं तम है। प्रकृति रूप शक्ति के सौम्य क्रूर आदि भेद से नाना प्रकार के रूप हैं। अपने अपने अधिकारानुसार सिद्धि भी विभिन्न प्रकार की प्रत्येक मनुष्य चाहता है। अर्थात् अपनी इच्छानुसार ही विभिन्न रूपों की उपासना व्यक्ति करता है। यहाँ सत्व, श्वेत का प्रतीक है। रज, रक्त का एवं तम, कृष्णवर्ण (काला) का प्रतीक है। स्वच्छता, संघर्ष और आवरण का बोध कराने के लिए ही हम इन रूपों की उपासना करते हैं। यहाँ भी महालक्ष्मी सत्वस्वरूपा, श्रीमहासरस्वती रजस्वरूपा (रक्तरूपा) एवं महाकाली तमस्वरूपा (कृष्णवर्णात्मिका) है।

इन्हीं गुणों के अनुकूल ही उनके हाथों में आयुध या अन्य चिह्न भी देखे जाते हैं। इनकी उपासना से अपने अपने कार्य में सभी को विजय प्राप्त होती है यही विजयादशमी का लक्ष्य है। विशेष रूप से हमारे भारतवर्ष में दो नवरात्र अत्यन्त ही प्रसिद्ध है। इसका संकेत दुर्गापाठ में भी है - शरत्काले महापूजा, क्रियते या च वार्षिकी। अर्थात् आश्विन, शुक्ल एवं चैत्र, शुक्ल, प्रतिपदा से नवमी पर्यन्त नवरात्र होता है।

यह तो नवरात्र का एक सामान्य परिचय था। नवरात्र में प्रमाण क्या है? क्या इसका संकेत कहीं शास्त्रों में है? यह भी जानना अत्यन्त अनिवार्य है। देखिये! युक्ति के साथ प्रमाण की भी

आवश्यकता होती। यदि कोई आप से पूछ दें कि इन मासों में ही नवरात्र क्यों मनाया जाता है? इसमें प्रमाण क्या है? तो उत्तर आपको शास्त्रवचन के रूप में अवश्य ही देना होगा। क्योंकि कार्याकार्य में निर्णायक शास्त्र ही होते हैं। इसमें प्रमाण के लिए रुद्रयामल नाम के ग्रन्थ में ऐसा लिखा है-

आश्विने मासि सम्प्राप्ते शुक्लपक्षे विधेस्तिथिम्।

प्रारभ्य नवरात्रं स्याद् दुर्गा पूज्या तु तत्र वै।।

देवीपुराण में कहा गया है -

मासि चाश्वयुजे शुक्ले नवरात्रं विशेषतः।

सम्पूज्य नवदुर्गां च नक्तं कुर्यात् समाहितः।।

यहाँ रात्रि शब्द से दिन और रात दोनों का ग्रहण किया गया है। यह नवरात्र नित्य विधि की तरह है - जैसा कि लिखा है ''वर्षे वर्षे विधातव्यं स्थापनं च विसर्जनम्''। इससे यह ज्ञात होता है कि प्रत्येक वर्ष नवरात्र में भगवती की स्थापना, पूजन एवं विसर्जन अवश्य ही करना चाहिए। अब कोई कहे कि यदि न किया जाय तो क्या होगा? इसके उत्तर में कालिका पुराण में कहा गया है-

यो मोहादथवालस्याद्देवीं दुर्गां महोत्सवे।

न पूजयति दुष्टात्मा तस्य कामानिष्टान्निहन्ति च।।

यहाँ अर्थ तो अत्यन्त ही स्पष्ट है। आगे चलते हैं। इसीलिए 'पूजयित्वाश्विने मासे विशोको जायते नरः' कहा गया है। वर्तमान में सभी लोग अपने शोक (दुःख) को दूर करना चाहते हैं अतः शारदीय नवरात्र में शक्ति की उपासना उन्हें अवश्य ही करनी चाहिए। अधिकार की दृष्टि से इस नवरात्र पूजन में चारो वर्णों का अधिकार है। अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र। क्योंकि लिखा गया है-

स्नातैः प्रमुदितै र्हृष्टैः ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्नृप।

वैश्यैः शूद्रैर्भक्तियुतैर्म्लेच्छैरन्यैश्च मानवैः।।

इसका तात्पर्य यह है कि चारों वर्णों को श्रद्धा विश्वास पूर्वक दुर्गापाठ के माध्यम से शक्ति की उपासना करनी चाहिए। एवं जो शुद्ध दुर्गापाठ आदि करने में समर्थ हैं वे तो स्वयं करें एवं जिन्हें शुद्धता आदि में सन्देह है वे ब्राह्मणों से करा सकते हैं। परन्तु नवरात्र में शक्ति की उपासना अवश्य ही करनी चाहिए। यदि नौ दिनों तक आप करने में असमर्थ हैं, तो तीन दिन, सप्तमी से नवमी तक या एक दिन अष्टमी को करनी चाहिए। ऐसा शास्त्रों का कहना है। जैसा कि-

त्रिरात्रं वापि कर्तव्यं सप्तम्यादि यथाक्रमम्।

अष्टम्यां नवम्यां च जन्ममोक्षप्रदां शिवम्।।

अब यहाँ कुछ नवरात्र से सम्बन्धित मुहूर्त की थोड़ी चर्चा आपसे होगी। मुहूर्त का अर्थ है अच्छा समय या शुभकाल भी इसे कहते हैं। नवरात्र तो वैसे ही शुभकाल है फिर भी शास्त्रीय जो सिद्धान्त है उससे आपका परिचय कराया जा रहा है।

आप जानते हैं कि पूर्वाह्न काल देवताओं का होता है, मध्याह्नकाल मनुष्यों का एवं अपराह्न काल पितरों का होता है। जैसा कि लिखा है-

''पूर्वाह्नो वे देवानाम्, मध्यन्दिनो मनुष्याणाम् अपराह्नो पितृणाम्।

इस प्रकार नवरात्र में शुद्ध प्रतिपदा अर्थात् सूर्योदय में होने वाली प्रतिपदा तिथि में पूर्वाह्न - प्रातः काल के समय नवरात्र के निमित्त कलशस्थापन करना चाहिए। जैसा कि लिखा है - ''शुद्धे तिथौ प्रकर्तव्या प्रतिपच्चोर्ध्वगामिनी'' अर्थात् प्रतिपदा तिथि में सूर्योदय हो एवं वह तिथि अपराह्नकाल तक रहे वही तिथि यहाँ ग्राह्य है। यही प्रतिपदा का मुहूर्त है। यहाँ पूजन की विधि नहीं दी जा रही है, क्योंकि पूजन का विधान आपको पहले से ज्ञात है। यहाँ मात्र प्रतिपदा तिथि के दिन नवरात्र में नित्यकर्म समाप्त करके शुद्ध होकर गौरी गणेश पूजन पूर्वक कलश स्थापन अवश्य करना चाहिए। इसके बाद दुर्गा सप्तशती स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। इसका विशेष विधान आगे की इकाई में बताया जायेगा ।

1.4 कुमारी पूजन

नवरात्र में कुमारी पूजन भी होता है। इस समय में कुमारी पूजन का बड़ा ही महत्त्व शास्त्रों में कहा गया है। जैसा कि लिखा है -

पितरो वसवो रुद्रा आदित्या गणलोकपाः।

सर्वे ते पुजितास्तेन कुमार्यो येन पूजिताः।।

कुमारी (कन्या) के पूजन से सभी पितर, वसु, रुद्र, आदित्य आदि प्रसन्न हो जाते हैं। अब जिज्ञासा होती है कि कुमारी का उम्र क्या है? तो शास्त्र कहता है - दो वर्ष से लेकर 10 वर्ष तक की कन्या कुमारी का पूजन करना चाहिए। संख्या के विषय में बताते हुए लिखा गया है कि एक कन्या से लेकर नौ कन्याओं तक का पूजन किया जा सकता है। अपने सामर्थ्य के अनुसार उनका पंचोपचार से पूजन करें, भोजन कराकर दक्षिणा देते हुए प्रणाम करें। सबसे पहले उनके चरणों को धोयें। इसके बाद उनका पूजन करना चाहिए। एक, तीन, सात या नौ कन्याओं का पूजन करना चाहिए। कन्या पूजन का मन्त्र यह है-

मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम्।
नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यां सम्पूजयाम्यहम्।।
जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
पूजां गृहाण कौमारि जगन्मातर्नमोऽस्तुते।।
कन्या पूजन के बाद

अब हम आपको प्रतिमा स्थापन की दिशा के विषय में कुछ विशेष बातें बताते हैं। प्रतिमा की स्थापना उत्तरदिशा की ओर नहीं करना चाहिए। पूर्व, पश्चिम एवं दक्षिण में प्रतिमा स्थापन करना चाहिए -

याम्यास्याच्छुभदा दुर्गा पूर्वास्याज्जयवर्द्धिनी।

पश्चिमाभिमुखी नित्यं न स्थाप्या सौम्यदिङ्मुखी।।

अष्टमी तिथि को महानिशा में विशेष पूजन करना चाहिए एवं जागरण आदि भी करना चाहिए। जैसा कि लिखा है-

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः।
श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम्।।

नवरात्र व्रत की पारणा नवमी तिथि को करनी चाहिए। एवं नवरात्र का विसर्जन दशमी को।

दशम्यां पारिता देवी कुलनाशं करोति हि।
तस्मात्तु पारणं कार्य नवम्यां विबुधाधिप।।
आश्विने शुक्लपक्षे तु नवरात्रमुपोषितः।
नवम्यां पारणं कुर्याद्दशमी सहिता न चेत्।।

अर्थात् दशमी तिथि में पारण करने से कुल का नाश होता है अतः नवमी में ही पारण करना चाहिए।

नवरात्र में शक्ति की उपासना तीन प्रकार से होती है। सात्विकी, राजसी, तामसी।

शारदी चण्डिका पूजा त्रिविधा परिगीयते।
सात्विकी जपयज्ञाद्यैर्नैवेद्यैश्च निरामिषैः।
माहात्म्यं भगवत्याश्च पुराणादिषु कीर्तितम्।
पाठस्तस्य जपः प्रोक्तो पठेद्देवीमनास्तथा।।
राजसी बलिदानेन नैवेद्यैः सामिषैस्तथा।
सुरामांसाद्युपाहारैर्जपयज्ञैर्विना तु या।।

विना मन्त्रैस्तामसी स्यात् किरातानां च संमता।
ब्राह्मणः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैरन्यैश्च मानवैः।।

इसका तात्पर्य यह है कि सात्विकी पूजा में पाठ, जप, होम एवं षोडशोपचार से भगवती की पूजा करना चाहिए। यही पूजा वर्तमान समय में अत्यन्त उत्तम है। राजसी पूजा में बलिदान आदि होते हैं, जो विशेष रूप से मात्र क्षत्रिय लोगों के लिए है। जहाँ वेदमन्त्र पाठ आदि का अभाव है एवं सुरा मांसादि का म्लेच्छ लोग माता को नैवेद्य लगाते हैं वह तामसी पूजा है। जो शास्त्र में निन्दित है। यह पूजा विशेष तान्त्रिक उपासना में लगे लोगों के लिए है, सभी के लिए नहीं। अतः वर्तमान समय में सात्विकी पूजा ही अधिक उपयुक्त है। जिसमें दुर्गापाठ नवार्ण मन्त्र का जप, तिल आदि द्रव्यों से होम, एवं शुद्ध शाकाहारी भोजन ब्राह्मणों को कराना चाहिए। यही पक्ष सर्वमान्य है। इस प्रकार नवरात्र के विषय में बहुत कुछ बातें आपको बताई गई है। शेष बातें अगले इकाई में बताई जायेगी।

काल निरूपण

आज के समय में सभी लोगों को प्रायः जिज्ञासा होती है कि पूर्वाह्न काल क्या है? इसका समय क्या

है? पंचांगों में यह समय घटी पल के रूप में लिखा रहता है परन्तु सभी लोग इसे जान नहीं पाते, क्योंकि आज के लोग घण्टा मिनट को ही अच्छी तरह जानते हैं। अतः यहाँ आपके लिए पूर्वाह्न काल आदि का निरूपण घण्टा मिनट के अनुसार दिया जा रहा है।

पूर्वाह्नकाल

सूर्योदय से 3 मुहूर्त (2 घण्टा 24 मिनट) तक प्रातःकाल, उसके बाद 2 घण्टा 24 मिनट तक संगव काल, इसके बाद 2 घण्टा 24 मिनट तक मध्याह्नकाल, फिर 2 घण्टा 24 मिनट के बाद अपराह्नकाल और फिर आगे 2 घण्टा 24 मिनट तक सायंकाल होता है।

उदाहरण के लिए यदि सूर्योदय 6 बजे प्रातः होता है तो, 8 बजकर 24 मिनट तक प्रातःकाल, 10 बजकर 48 मिनट तक संगवकाल, 1 बजकर 12 मिनट तक मध्याह्नकाल, 3 बजकर 36 मिनट तक अपराह्णकाल एवं 6 बजे तक सांयकाल होता है।

इस प्रकार नवरात्र के विषय में मुख्य मुख्य बातें आपको बता दी गई। अब आपके सामने कुछ बोध प्रश्न रखे जा रहे हैं। जिनका उत्तर आपसे अपेक्षित है।

बोधप्रश्न

क. 'नवरात्रम्' पद का विग्रह कैसे करेंगे?

ख. क्लीबम् का अर्थ क्या है?

ग. प्रसिद्ध नवरात्र दो कौन हैं?

घ. आषाढ़ महीने के किस पक्ष में गुप्त नवरात्र होता है?

ङ. त्रिगुणा कौन है?

च. अपराह्णकाल कब होता है?

छ. देवताओं का कौन सा काल है?

ज. व्रत का पारण किस तिथि को करनी चाहिए?

झ. विसर्जन किस तिथि को करना चाहिए?

ञ. 'मन्त्राक्षरमयी' से किसका पूजन होता है?

1.5 सारांश

इस इकाई में नवरात्र का परिचय विस्तृत रूप से आपको अवगत कराया गया। नवरात्र किस किस महीने में होते हैं एवं गुप्त नवरात्र तथा प्रसिद्ध नवरात्र कौन-कौन से हैं? ये सभी बातें आपको बता दी गई है। इसके साथ इसका विज्ञान या आधुनिक जीवन के साथ सम्बद्धता कैसे हैं? इस पर भी विचार किया गया है। इसी क्रम में पूजा के अंग, त्रिविध पूजा, कुमारी पूजा आदि के महत्त्व एवं प्रयोगों की जानकारी आपको इस इकाई में दी गई है।

दूसरी बात यह है कि लोगों में प्रायः पूर्वाह्नकाल कब होता है? आदि जिज्ञासाओं को ध्यान में रखते हुए उसे भी प्रचलित घण्टा मिनट में बदलकर उसे सरल ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

1.6 शब्दावली

क. आश्वयुज - आश्विनमास

ख. नक्तम् - रात्रि

ग. वसु - आठ वसु होते हैं

घ. रुद्र - रुद्रों की संख्या एकादश है

ङ. याम्या - दक्षिणदिशा

च. श्रोष्यन्ति - सुनेंगे

1.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

क. नवानां रात्रीणां समाहारः नवरात्रम्

ख. 'क्लीबम्' का अर्थ नपुंसकलिंग होता है।

ग. प्रसिद्ध नवरात्र चैत्र एवं आश्विन महीने में होते हैं।

घ. आषाढ़ महीने के शुक्लपक्ष में।

ङ. त्रिगुणा प्रकृति है।

च. अपराह्ण काल दिन में। 12 बजे से लेकर 3:36 तक यह काल होता है। जिसमें विशेष रूप से पितरों का कार्य होता है।

छ. देवताओं का काल पूर्वाह्ण होता है।

ज. व्रत की पारणा नवमी में करनी चाहिए।

झ. देवी का विसर्जन दशमी तिथि को करना चाहिए।

ञ. मन्त्राक्षरमयी से कन्यापूजन होता है।

1.8 सन्दर्भग्रन्थसूची

क. स्मृतिकौस्तुभ, श्रीवासुदेवशर्मा

ख. ब्रह्मपुराण

ग. दुर्गासप्तशती

घ. व्याकरण सिद्धान्त कौमुदी

ङ. ब्रह्माण्डपुराण

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

क. नवरात्र में कुमारी पूजन पर प्रकाश डालें।

ख. नवरात्र के महत्त्व का वर्णन करें।

इकाई – 2 दुर्गासप्तशती पाठ विधि

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में नवरात्रों का परिचय एवं कुछ नवरात्रों से सम्बद्ध-विशेष-मुहूर्तों की भी चर्चा आपसे की गई। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि आप नवरात्र के विषय में बहुत कुछ जानकारी प्राप्त कर लिये होंगे।

अब इस प्रस्तुत इकाई में दुर्गापाठ की विधि से आप अवगत होंगे।

2.2 उद्देश्य

आप जानते हैं कि भारतवर्ष में नवरात्रों में दुर्गासप्तशती के पाठ विशेष रूप से होते हैं। क्योंकि नवरात्र पर्व शक्ति की उपासना के लिए ही प्रसिद्ध है तथा दुर्गासप्तशती के रहस्य में शक्तिस्वरूपा दुर्गा जी को ही आद्याशक्ति के रूप में बताया गया है। यह बात आपको इससे पहले भी बताई जा चुकी है। इस अनुष्ठानात्मक उपासना में या साधना में सर्वोत्तम साधन के रूप में दुर्गासप्तशती का ही पाठ प्रसिद्ध है। इसके पाठ के बिना नवरात्रों का कोई भी महत्त्व नहीं है। प्रायः आप देखते होंगे कि घर-घर में एवं जहाँ जहाँ मूर्तियों की स्थापना भी होती है वहाँ भी लोग बड़ी ही श्रद्धा एवं विश्वास के साथ दुर्गा जी का पाठ कराते हैं एवं स्वयं भी करते हैं। इसके विशेष महत्त्व को आगे बताया जा रहा है।

सर्वप्रथम प्रश्न यह है कि यह दुर्गापाठ केवल अन्य संस्कृत पुस्तकों की तरह है? या इसका कोई विशेष महत्त्व या पाठ करने की कोई विशेष विधि है? इत्यादि विषयों पर हम आगे विचार करेंगे। इन्हीं प्रश्नों का शास्त्रोचित समाधान इस इकाई में आपको दिया जायेगा ।

2.3 दुर्गासप्तशती ग्रन्थ का परिचय

यह दुर्गा सप्तशती का पाठ, श्रीमार्कण्डेय पुराण के सावर्णिक मन्वन्तर के देवी माहात्म्य से लिया गया है। क्योंकि इसके प्रत्येक अध्याय के अन्त में 'इति श्री मार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे प्रथमोऽध्यायः' दिया गया है। यही इसमें प्रमाण है। पुराणों की मान्यता के अनुसार यह दुर्गासप्तशती का पाठ मार्कण्डेय पुराण में 78वें अध्याय से प्रारम्भ होता है, तथा 90वें अध्याय में समाप्त होता है। यहाँ पर क्रौष्टुकि ऋषि ने मार्कण्डेय मुनि से स्थावर, जंगम जगत् की उत्पत्ति तथा मनुओं के विषय में पूछा है। जिसका समाधान श्री मार्कण्डेय ऋषि करते हैं। मार्कण्डेय जी 7 मनुओं का वर्णन कर चुके हैं, अब 8वें मनु का वर्णन करते हुए क्रौष्टुकि ऋषि से कहते हैं।

सावर्णिः सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः।
निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम।।

इसमें 13 अध्याय एवं 700 श्लोक हैं। 700 श्लोक के कारण ही इसे सप्तशती कहते हैं। संस्कृत में इसका विग्रह इस प्रकार होगा - सप्तानां शतानां समाहारः सप्तशती। इसका तात्पर्य यह है

कि सप्त का अर्थ 7 एवं शतानां का अर्थ है 100। इस प्रकार जिससे 700 उवाच आदि मिलाकर श्लोक है उसे ही सप्तशती कहते हैं। श्लोकों की 700 संख्या प्रथम अध्याय से 13वें अध्याय तक है। इसमें तीन चरित्र है। प्रथम चरित्र, मध्यमचरित्र एवं उत्तमचरित्र। प्रथम अध्याय में महाकाली का चरित्र है। दूसरे अध्याय से लेकर चौथे अध्याय तक, मध्यम चरित्र एवं श्री महालक्ष्मी की स्तुति की गई है तथा पाँचवें अध्याय से तेरहवें अध्याय तक, श्रीमहासरस्वती के द्वारा शुम्भ आदि राक्षसों के वध का वर्णन है जिसे उत्तम चरित्र कहा जाता है। अस्तु।

यहाँ एक जिज्ञासा अवश्य ही आपको कुछ कहने के लिए विवश करती होगी कि सभी देवताओं को छोड़कर दुर्गा जी की ही नवरात्र में प्रधानता क्यों है? एवं शक्ति की उपासना के लिए दुर्गासप्तशती का ही पाठ क्यों? इन दोनों प्रश्नों का समाधान यथारुचि आपके सामने रखा जा रहा है। पहले प्रश्न का उत्तर - सनातन वैदिक धर्मग्रन्थों के प्रमाणानुरूप वैदिक देवता 33 कोटि (प्रकार) होते हैं। 11 पृथिवी-स्थानीय, 11 अन्तरिक्ष-स्थानीय एवं 11 द्यु-स्थानीय देवता हैं। जिसका संकेत निरुक्त ग्रन्थ में आचार्य यास्क ने किया है। लेकिन पौराणिक मान्यताओं के अनुसार देवताओं की संख्या और भी अधिक हो जाती है। दुर्गा जी पौराणिक एवं वैदिक दोनों देवता है। वैदिक देवीसूक्त आदि में इन्हीं का वर्णन है। परन्तु पुराणों में इनका विस्तृत वर्णन उपलब्ध होता है। जैसा कि देवीभागवत पुराण आदि में। एक दृष्टि से देखा जाय तो वैदिक देवताओं का विकास ही पौराणिक देवता है। जो अनन्त हैं। इसीलिए वैदिक मान्यता के अनुसार एक देवतावाद एवं बहुदेवतावाद दोनों सिद्धान्त सर्वथा शास्त्रों में प्रचलित है। यहाँ अधिक गहराई में न जाकर विषय पर आते हैं, क्योंकि शास्त्र में अधिक गंभीरता में जाने पर विषय की दुरूहता होने के कारण नीरसता का भय हो जाता है। इस प्रकार हम यहाँ यह दृढपूर्वक कह सकते हैं कि जो कार्य सभी देवता मिलकर नहीं कर सके वह कार्य भगवती श्री दुर्गा जी देवताओं के विविध तेज से निर्मित हुई उन्होंने कर दिया। इसीलिए अन्य देवताओं में इनकी प्रधानता अवश्य ही है। शास्त्र कहता है 'कलौ चण्डी विनायकौ' अर्थात् कलियुग में गणेश जी एवं श्री दुर्गा जी के अलावे सभी देवता अप्रधान रूप से विद्यमान है। अर्थात् इस युग में इन्हीं दो देवताओं की प्रधानता है। अन्य देवता युगानुरूप अल्पशक्ति सम्पन्न होते हैं। जैसे काई व्यक्ति अपने समय में पद पर रहता है तो उसका महत्त्व अधिक रहता है समय समाप्त होने पर महत्त्व कम हो जाता है। आप देखें! लोक में भी सभी माँगलिक कार्यों के आरम्भ में गणेश जी एवं दुर्गा जी (अम्बिका) की पूजा तो लोग करते ही है। सुप्रसिद्ध दीपावली पर्व पर भी भगवती दुर्गा ही महालक्ष्मी अपने पुत्र गणेश जी के साथ सभी के द्वारा पूजित होती है। दुर्गा सप्तशती के मध्यम चरित्र में भी श्रीमहालक्ष्मी जी ही दुर्गा के रूप में वर्णित है। अर्थात् एक ही महालक्ष्मी, काली एवं सरस्वती के रूप में पूजित होती है। क्योंकि 'सर्वस्याद्या महालक्ष्मीः' अर्थात् सभी देवताओं के आदि में महालक्ष्मी ही है। जिन महिषासुर, शुम्भादि दैत्यों के वध को कोई भी देवता न कर सके उसे भगवती अकेले ही की। अतः वे सभी देवताओं में श्रेष्ठ हैं। भगवती महालक्ष्मी रूपा दुर्गा जी का निर्माण समस्त देवों के तेज से हुआ है। इसीलिए सभी देवता उन्हीं में अपने अपने तेज से प्रविष्ट है। जैसा कि लिखा है -

अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेव शरीरजम्।
एकस्थं तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा।।

श्रीदुर्गा जी जगत् के जन्म, पालन और संहार करने में अकेले ही समर्थ हैं। जबकि देवताओं में अत्यन्त प्रसिद्ध ब्रह्मा जी केवल जन्म देते हैं, विष्णु जी केवल पालन एवं शिव जी संहार करते हैं। इस प्रकार भगवती दुर्गा स्त्री (शक्ति) रूप में परब्रह्म है। क्योंकि परब्रह्म में ही ये तीनों कार्य एक साथ पाये जाते हैं। वास्तव में तो दुर्गा परब्रह्म से भी बढ़कर है, क्योंकि ये परब्रह्म में विद्यमान शाश्वत शक्तिस्वरूपा है। जिस प्रकार शक्तिरूप आश्रय के बिना मनुष्य शव के समान है, यही दशा परब्रह्म की भी है। जगत् का अणु अणु इस पराशक्ति से व्याप्त है। जगत् के कल्याण के लिए दुर्गा (श्रीमहालक्ष्मी) ही परब्रह्मतत्त्व के रूप में प्रकट हो गई। जैसा कि लिखा है - 'अहं ब्रह्मरूपिणी मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत्'। आप देखें! भागवत में श्रीकृष्ण जी ने रास के समय इसी दुर्गा जी का आश्रय पाकर महारास में प्रविष्ट हुए, जिन्हें वहाँ योगमाया के रूप में कहा गया है। 'वीक्ष्यरन्तुं मनश्चक्रे योगामायामुपाश्रितः'।

इस प्रकार इस कलिकाल में सभी देवताओं में प्रधान भगवती दुर्गा ही है। अतः इनकी ही आराधना, उपासना, स्तुति आदि जगत् के जीवों को अपने कल्याण या विश्व के कल्याण के लिए अवश्य ही करना चाहिए।

हमारे भारतवर्ष में जिस किसी भी महापुरुष की उन्नति या ऐश्वर्य आज भी चर्चित है उसमें प्रधानता शक्ति की उपासना ही है। कुछ महापुरुषों का नाम उदाहरण के लिए यहाँ प्रस्तुत करना अप्रासंगिक नहीं होता।

सर्वप्रथम पूज्यपाद आदिशंकराचार्य जी! आप लगभग 500 वर्ष पूर्व दक्षिण भारत में पैदा हुए थे। इन्होंने संस्कृत में भगवती त्रिपुरसुन्दरी के अनेको स्तोत्रों की रचना की। आपने विन्ध्यवासिनी माता का प्रत्यक्ष दर्शन किया था। यह भगवती दुर्गा का ही प्रभाव था कि दुर्धर्ष दिग्विजयी बौद्धों को पराजित कर भारत में पुनः वैदिक सनातन धर्म की प्रतिष्ठा आचार्य शंकर के द्वारा हुई।

महाकवि कालिदास का नाम भी इस पवित्र वर्णन के प्रसंग में हम भूल नहीं सकते हैं। ये केवल भारत के ही नहीं अपितु संसार के सर्वोत्तम संस्कृत कवि माने जाते हैं। इन्हें भगवती काली का साक्षात् दर्शन हुआ था। ये माता के उपासना के कारण ही कालिदास कहलाये। इसी क्रम में महाकवि हर्ष, जिन्होंने नैषधीयचरित महाकाव्य आदि ग्रन्थों की रचना की, इन्हें भी साक्षात् भगवती सरस्वती का दर्शन हुआ था। ये इतने बड़े उद्भट विद्वान् थे कि इनके लिखे गये ग्रन्थों का अर्थ कोई भी समझ नहीं पाता था, तो एक दिन क्षुब्ध होकर दुखी हुए। इन्हें माता का स्वप्न में दर्शन हुआ एवं निर्देश मिला कि रात्रि में दधि खाओ, जिससे कुछ बुद्धि मलिन होगी। जिससे लोगों को तुम्हारे द्वारा रचित ग्रन्थों का अर्थ समझने में सरलता होगी।

क्षत्रपति शिवाजी महाराज एवं गुरुगोविन्द सिंह जी - जिन्होंने अत्यन्त संकटकाल में हिन्दू जाति की रक्षा की, अन्यथा नराधम औरंजेब के उस अत्याचारकाल में हिन्दू जाति का लेश मात्र भी आज नहीं दिखता। आज जो हम आप शिखा सूत्र से सम्पन्न हैं, यह इन्हीं दोनों महावीरों के कार्यों का फल है। ये दोनों भगवती दुर्गा के अनन्य भक्त थे। इन्हे 500 वर्ष पहले जगदम्बा के साक्षात् दर्शन हुए थे।

तात्याटोपे तथा झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के अमर इतिहासों से आप भलीभाँति परिचित है

इन्हें भी भगवती के साक्षात् दर्शन हुए थे।

श्रीरामकृष्णपरमहंस जी जिनके शिष्य विवेकानन्द जी थे। जिन्हें सारा देश जानता है। इनका जन्म बंगाल में हुआ था। ये महाकाली के अत्यन्त उच्चकोटि के उपासक थे। आपको महाकाली का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ था।

लोकमान्य तिलक जिन्होंने अमर ग्रन्थ गीता रहस्य की रचना की। ये अपने समय के देश के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष थे, इन्होंने अनेको बार भारत स्वराज्य के लिए जेल गए। आप जेल में ही गीता रहस्य की रचना की। आप शक्ति की उपासना से ही इतने उच्चकोटि के महापुरुष हुए। ये प्रतिदिन देवी की वैदिक स्तुति करते थे। ऐसे महापुरुषों में पं. महामना मदनमोहन मालवीय जी नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आदि असंख्य महापुरुष, माँ भगवती की आराधना से ही उच्चकोटि के सन्त विद्वान् महापुरुषों की श्रेणी में अपने को स्थापित किये। अस्तु! यह वर्णन भगवती शक्ति रूपा दुर्गा जी में श्रद्धा बढाने के लिए ही यथाशक्ति यहाँ प्रस्तुत किया गया। इसके बाद-

अब यहाँ दूरी जिज्ञासा जो दुर्गा के विविध स्तोत्रों के रहते हुए दुर्गापाठ (सप्तशती) ही क्यों पढा जाय? इसका समाधान यहाँ यथाशक्ति प्रस्तुत है। वर्तमान समय में भी शास्त्रीय ग्रन्थों में श्री दुर्गा जी के असंख्य स्तोत्र है। यही नहीं लौकिक संस्कृत भाषा में देशी हिन्दी भाषाओं में भी माँ दुर्गा के स्तोत्र है। ऐसी दशा में स्तोत्र का चयन कठिन हो जाता है। इस कारण से यहाँ उनका निर्णय करना अप्रासंगिक नहीं होगा। सभी भाषाओं की अपेक्षा संस्कृत को अतिप्राचीन भाषा के रूप में हम देखते हैं। क्योंकि सभी भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा है। हमारे वेद, पुराण, उपनिषद् शास्त्र, धर्मशास्त्र आदि सभी ग्रन्थ संस्कृत भाषा में आज भी उपलब्ध होते हैं। संस्कृत को देववाणी या अमरवाणी भी कहा जाता है जिसका तात्पर्य है कि यह देवताओं की वाणी है। यही कारण है सात्विक ज्ञान का भंडार, यम नियमादि के प्रतिष्ठित सिद्धान्त तथा आध्यात्मिक सदुपदेश सर्वविध कल्याण की कामना से तीनों दुःखों की निवृत्ति के जो अलौकिक उपाय हमारे ऋषियों के द्वारा बताये गये हैं वे संस्कृत भाषा में ही है। अतः संस्कृत भाषा हमारे लिए अत्यन्त ही आदरणीय भाषा है।

दुर्गासप्तशती भी संस्कृत भाषा में ही है। अतः इसी का पाठ करना चाहिए।

आज संस्कृत में तीन प्रकार के स्तोत्र उपलब्ध होते हैं। ऋषि-मुनि प्रणीत कवियों द्वारा रचित एवं विद्वानों द्वारा रचित इन तीनों में ऋषिप्रणीत स्तोत्र ही प्राधान्य है। क्योंकि ऋषियों को तपस्या एवं योग बल से वह दिव्य नेत्र प्राप्त था जिससे तीनों काल की होने वाली घटनायें उन्हें ज्ञात होती थी। यही नहीं, जिनको उद्देश्य करके विविध छन्दों में जिनकी स्तुति करते थे उनका उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन होता था। अर्थात् ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः इस उक्ति के अनुसार ऋषि-मुनि देवता का दर्शन करते हुए स्तोत्रों का निर्माण करते थे। इनके द्वारा कथित शब्दों का अनुकरण अर्थ स्वयं करते थे। आजकल के कवि या विद्वान् अर्थ के अनुसार शब्दों की रचना करते हैं। अतः ऋषिकृत स्तोत्र ही अत्यन्त उत्तम एवं सभी के कल्याण के लिए उपयुक्त है। मनुष्य आदि में तो भ्रम प्रमाद आलस्यादि दोषों के कारण छन्दों में दोष भी आ जाता है परन्तु ऋषि प्रणीत स्तोत्रों में इन दोषों का सर्वथा अभाव होने से ये ही ग्राह्य है। कहा भी गया है-

न च स्वयं कृतं स्तोत्रं तथान्येन च यत्कृतम्।

यतः कलौ प्रशंसन्ति ऋषिभिर्भाषितं तु यत्।।

अब देखा जाय तो ऋषिप्रणीत स्तोत्र भी अनेक है। इसके लिए भी दयालु शास्त्रकार स्वयं लिखते हैं-

मार्कण्डेयपुराणोक्तं नित्यं चण्डीस्तवं पठेत्।
सम्यक् हृदिस्थितां नित्यं जन्म कर्मावलिः स्तुतिः।।
एतां द्विजमुखाज्ज्ञात्वा अधीयानो नरः सदा।
विधूय निखिलां मायां सम्यक् ज्ञानं समश्नुते।।
अस्ति गुह्यतमं देव्या माहात्म्यं सर्वसिद्धिदम्।
वाक्यैरर्थैष्च पद्यैष्च सप्तषत्याः शुभप्रदम्।।

इस प्रकार हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि सभी स्तोत्रों में सर्वश्रेष्ठ स्तोत्र भगवती दुर्गा की उपासना के लिए दुर्गासप्तशती ही है। अतः हमें दुर्गासप्तशती का ही पाठ नवरात्र आदि शुभ अवसरों पर करना चाहिए।

2.3.1 दुर्गापाठ के अनुष्ठान में कुछ आवश्यक नियम

दुर्गापाठ में शीघ्रता, गाना गाने की तरह उच्चारण करना, सिर हिलाकर पाठ करना, अपने द्वारा लिखित दुर्गापाठ करना, अर्थ बिना समझे तथा अत्यन्त धीमे स्वर से पाठ करना, ये सभी उपरोक्त बातें निषिद्ध हैं। ऐसा नहीं करना चाहिए। जैसा कि लिखा है-

गीती शीघ्री शिरः कम्पी तथा लिखित पाठकः।
अनर्थज्ञोऽल्पकण्ठश्च षडेते पाठकाऽधमाः।।

हमने सुना है कि कुछ समय पहले कवच के प्रसंग में एक सज्जन ने 'भार्यां रक्षतु भैरवी' की जगह 'भार्यां भक्षतु भैरवी' का पाठ किया, एक मास के पाठ के बाद ही स्त्री उनकी उन्हें छोड़कर स्वर्ग चली गई। अतः पाठ में सावधानी अवश्य ही रखनी चाहिए। उच्चारण में शुद्धता होनी चाहिए। हाथ में रखकर पुस्तक को पाठ नहीं करना चाहिए। शुद्ध शब्दों का उच्चारणपूर्वक पाठ करना चाहिए। मानसिक पाठ नहीं। एक विशेष बात और है कि अध्यायों के अन्त में आने वाले 'इति' अध्याय और 'वध' शब्द का उच्चारण नहीं करना चाहिए। इति शब्द के उच्चारण से लक्ष्मी का नाश, वध शब्द के उच्चारण से कुल का नाश, एवं अध्याय शब्दोच्चारण से प्राण का क्षय हो जाता है। अतः इनका उच्चारण नहीं करना चाहिए। जैसा कि कहा गया है-

इति शब्दो हरेल्लक्ष्मीः वधः कुलविनाशकः।
अध्यायो हरते प्राणान् सत्याः सन्तु फलप्रदः।।

इसका शुद्ध उच्चारण इस प्रकार करना चाहिए 'श्री मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सत्याः सन्तु मम कामाः या यजमानस्य कामाः' बोलना चाहिए। यह परम्परा काशी के विद्वानों में आज भी देखी जाती है। क्योंकि सर्वाधिक उत्तम पाठ इसी परम्परा में प्राप्त है। अस्तु।

भाई! अब सुनते सुनते आप भी थक गए होंगे एवं लिखते-लिखते हम भी। तो अब आपसे क्यों न कुछ प्रश्न पूछ लिया जाय। तो आइए, तैयार हो जायें, उत्तर देने के लिए।

बोधप्रश्न

क. दुर्गासप्तशती में कितने श्लोक हैं?

ख. इस ग्रन्थ में किस मनु का वर्णन है?

ग. दुर्गापाठ में ऋषि शब्द से किसे कहा गया है?

घ. दुर्गासप्तशती किस पुराण के किस अध्याय से लिया गया है?

ङ. संस्कृत में कितने प्रकार के स्तोत्र मिलते हैं?

च. सप्तशती का संस्कृत में विग्रह कैसे होगा?

च. दुर्गापाठ में कितने चरित्र एवं कितने अध्याय हैं?

2.4 दुर्गा पाठ की विधि

दुर्गा पाठ करने की विधि विविध शास्त्रों के अनुसार (तन्त्र एवं आगम ग्रन्थों के अनुसार) भिन्न भिन्न हैं। हम निर्णय नहीं कर पाते हैं कि कौन सा न्यास छोड़ें और कौन सा करें। यदि शास्त्रों के अनुसार सभी अंगों (पाठों) का अनुपालन करते हैं, तो 24 घंटा बीत जायेंगे पर पाठ का क्रम पूर्ण नहीं हो सकता है। इसके साथ ही इसका निर्णय भी (कर्तव्याकर्तव्य का) हम स्वयं नहीं कर सकते हैं। इसके लिए शास्त्रीय पक्ष ही निर्णायक हैं। इन सभी ऊहापोहों पर विचार करते हुए हम एक निर्णय पर पहुँचते हैं जो सभी के लिए ग्राह्य एवं शास्त्रानुमोदित पक्ष है। यह दुर्गापाठ की परम्परा, काशी की है, जो लगभग हजारों वर्षों से चली आ रही है। एवं जिसका मूल अत्यन्त प्राचीन हस्तलिखित पाठ दुर्गा पाठ की विधि में लेखक ने (हमने) प्रत्यक्ष देखा है। क्योंकि हमें भी छात्र जीवन में इस काशी की परम्पराप्राप्त पाठ में कहीं कहीं सन्देह होने लगा था कि ऐसा ही क्यों? इसके समाधान के लिए मैं एक प्रतिष्ठित विद्वान् से अपनी जिज्ञासा रखी तब उन्होंने एक प्राचीन पद्धति जो हस्तलिखित एवं लगभग 500 वर्ष पुरानी थी उसमें उन्होंने हमें दिखाया, वही परम्परा आज भी है तब जाकर हमें भी विश्वास हुआ। यही परम्परा प्राप्त दुर्गा पाठ आज हम भी करते एवं कराते हैं। सौभाग्य से हमने अक्षरशः गुरुमुख से काशी में दुर्गापाठ पढ़ा है, अतः वही पाठ आपके सामने रख रहा हूँ।

साधक स्मरण करके पवित्र होकर पवित्र आसन पर बैठ कर शुद्ध जल (गंगाजल) से आचमन, प्राणायाम करके 'अपवित्रः पवित्रो वा' इस मन्त्र से अपने ऊपर जल छिड़के। पवित्री धारण करके 'द्यौः शान्तिः' मन्त्र का पाठ करें। इसके बाद हाथ में अक्षत, जल, पुष्प, द्रव्य लेकर भगवती की मूर्ति के सामने संकल्प करें। संकल्प आप को बताया जा चुका है अतः यहाँ देने की जरुरत नहीं है। विशेष रूप से - 'गोत्रः शर्माऽहं' आदि का उच्चारण करके 'अस्मिन् नवरात्र पर्वणि त्रिगुणात्मिकायाः भगवत्याः श्री दुर्गादेव्याः कृपाप्रसादेन सकलापच्छान्तिपूर्वकं सदभीष्टकामना

संसिद्ध्यर्थं त्रिगुणात्मिका जगदम्बा श्री दुर्गादेवता प्रीत्यर्थं, (यदि कोई कामना हो तो उसका उच्चारण करें) यदि निष्काम भाव से करना हो तो यही संकल्प पर्याप्त है। लेखक सदा से ही निष्काम संकल्प (यही संकल्प) करता आया है, क्योंकि माँ सर्वज्ञ हैं, हमारी न्यूनता या दोषों, बाधाओं को अच्छी तरह वह जानती है अतः उनके सामने हम क्या कहें। 'दुर्गासप्तशतीस्तोत्रस्य कवचार्गलाकीलकसहितं नवार्णमन्त्रजपपुरस्सरं देवीसूक्तरात्रिसूक्तं रहस्यत्रयसमन्वितं दुर्गापाठमहं करिष्ये।

इस प्रकार संकल्प करके भगवती दुर्गा का यथालब्धोपचार से पूजन करें एवं प्रणाम करते हुए विनियोग पूर्वक कवच का पाठ करें। कवच पाठ करने के बाद अर्गला स्तोत्र एवं कीलक का पाठ करें। जिसका निर्देश रुद्रयामल में इस प्रकार किया गया है। कुछ आचार्यों के मत से शापोद्धार आदि भी करना चाहिए लेकिन यह मत सर्वमान्य नहीं है। उपरोक्त पाठ ही शास्त्रसम्मत है।

कवचं बीजमादिष्टमर्गलाशक्तिरुच्यते।
कीलकं कीलकं प्राहुः सप्तशत्यामहामनोः।।

यथा सर्वमन्त्रेषु बीजशक्तिकीलकानां प्रथममुच्चारणं तथा सप्तशतीपाठेऽपि कवचार्गलाकीलकानां प्रथमं पाठः स्यात्।

कवचार्गलाकीलक पाठ करने के बाद नर्वाणमन्त्र जप का न्यास करें। ऊँ अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः, गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि, श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः, ऐं बीजम्, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकम्, श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः

ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः, शिरसि। गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दोभ्यो नमः, मुखे। श्री महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताभ्यो नमः, हृदि। ऐं बीजाय नमः, गुह्ये । ह्रीं शक्तये नमः, पादयोः। क्लीं कीलकाय नमः, नाभौ।

'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इस मूल मन्त्र से हाथों की शुद्धि करके करन्यास करे।

करन्यासः

ऊँ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। (दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अंगुठों का स्पर्श)

ऊँ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। (दोनों हाथों के अंगुठों से दोनों तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श)

ऊँ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः। (अंगूठों से मध्यमा अंगुलियों का स्पर्श)

ऊँ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः। (अनामिका अंगुलियों का स्पर्श)

ऊँ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः। (कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श)

ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। (हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का परस्पर स्पर्श)

हृदयादिन्यासः

ऊँ ऐं हृदयाय नमः (दाहिने हाथ की पाँचों अंगुलियों से हृदय का स्पर्श)

ऊँ ह्रीं शिरसे स्वाहा। (सिर का स्पर्श)
ऊँ क्लीं शिखायै वषट् (शिखा का स्पर्श)
ऊँ चामुण्डायै कवचाय हुम् (दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कन्धे का और बायें हाथ की अंगुलियों से दाहिने कन्धे का साथ ही स्पर्श)
ऊँ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट् (दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्र भाग से दोनों नेत्रों और ललाट के मध्य भाग का स्पर्श)

ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट् (यह वाक्य पढ़कर दाहिने हाथ को सिर के ऊपर से बायीं ओर से पीछे की ओर ले जाकर दाहिनी ओर से आगे की ओर ले जायें और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये)

अक्षरन्यासः

ऊँ ऐं नमः, शिखायाम्। ऊँ ह्रीं नमः, दक्षिणनेत्रे। ऊँ क्लीं नमः, वामनेत्रे। ऊँ चां नमः, दक्षिणकर्णे। ऊँ मुं नमः, वामकर्णे। ऊँ डां नमः, दक्षिणनासापुटे। ऊँ यैं नमः, वामनासापुटे। ऊँ विं नमः, मुखे। ऊँ च्चें नमः, गुह्ये।

इस प्रकार न्यास करके मूलमन्त्र से आठ बार व्यापक (दोनों हाथों द्वारा सिर से लेकर पैर तक के सब अंगों का स्पर्श) करें, फिर प्रत्येक दिशा में चुटकी बजाते हुए न्यास करे-

दिङ्न्यासः

ऊँ ऐं प्राच्यै नमः। ऊँ ऐं आग्नेय्यै नमः। ऊँ ह्रीं दक्षिणायै नमः। ऊँ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः। ऊँ क्लीं प्रतीच्यै नमः। ऊँ क्लीं वायव्यै नमः। ऊँ चामुण्डायै उदीच्यै नमः। ऊँ चामुण्डायै ऐशान्यै नमः। ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः। ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूयै नमः।

इन सभी न्यासों को पूर्ण करते हुए श्रीमहाकाली महालक्ष्मी एवं महासरस्वती का निम्न श्लोकों से ध्यान करें।

खड्गं चक्रगदेषु चापपरिधां छूलं भुशुण्डीं शिरः
शंखं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांगभूषावृताम्।
नीलाष्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकाम्
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम्।।
अक्षस्त्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्।।
घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुः सायकं

हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्।।

फिर 'ऐं ह्रीं अक्षमालिकायै नमः' इस मन्त्र से माला की पूजा करके प्रार्थना करे-

ऊँ मां माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव।।
ऊँ अविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये।।

ऊँ अक्षमालाधिपतये सुसिद्धिं देहि देहि सर्वमन्त्रार्थसाधिनि साधय साधय सर्वसिद्धिं परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहा।

इसके बाद ''ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे' इस मन्त्र का 108 बार जप करे और -

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि।।

नवार्ण मन्त्र जप के बाद ' ऊँ ऐं हृदयाय नमः, ऊँ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ऊँ क्लीं शिखायै वषट्, ऊँ चामुण्डायै कवचाय हुम, ऊँ विच्चै नेत्रत्रयाय वौषट्, ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चै अस्त्राय फट्' पढ़कर ह्रदयादि न्यास करें।

यहाँ पर नवार्ण मन्त्र जप के पहले भी न्यास एवं जप के बाद रात्रिसूक्त का पाठ करना चाहिए। जो 'विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थिति संहारकारिणी' से लेकर 'बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ' तक है। इसमें 15 श्लोक हैं। रात्रिसूक्त पाठ के बाद सप्तशती के पाठ का विनियोग हाथ में जल लेकर करना चाहिए।

प्रथममध्यमोत्तरचरित्राणां ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषय, श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः, गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि, नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः, रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामयोर्बीजानि, अग्निवायुसूर्यास्तत्त्वानि, ऋग्यजुःसामवेदा ध्यानानि, सकलकामनासिद्धये श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

इसके बाद दुर्गा पाठ का न्यास करें -

करन्यासः

ऊँ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणो तथा।
शंखिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिधायुधा।। अंगुष्ठाभ्यां नमः।
ऊँ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च।। तर्जनीभ्यां नमः।
ऊँ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि।। मध्यमाभ्यां नमः।

ॐ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम्।। अनामिकाभ्यां नमः।
ॐ खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके।
करपल्लवसंगीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः।। कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तुते।। करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।
ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा ...... हृदयाय नमः।
ॐ शूलेन पाहि नो देवि .... शिरसे स्वाहा।
ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां .... शिखायै वषट्।
ॐ सौम्यानि यानि .... कवचाय हुम्।
ॐ खड्गशूलगदादीनि ...... नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे .... अस्त्राय फट्।

ध्यानम्

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम्।
हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे।।

(यहाँ पर कुछ आचार्य कहते हैं कि इस विनियोग की आवश्यकता नहीं है क्योंकि प्रत्येक चरित्र के आरम्भ में वही विनियोग है। बात भी ठीक है। इसे कर लेने से भी कोई हानि नहीं होगी। यहाँ कर लेने के बाद तत्तत् चरित्रों के आरम्भ में भी विनियोग कर सकते हैं।)

यह विनियोग एवं ध्यान दुर्गा पाठ का है। अतः सीधे प्रथम चरित्र का विनियोग एवं खड्गं चक्रगदेषु चाप का पाठ करते हुए ध्यान करके प्रथम चरित्र का पाठ प्रारम्भ करना चाहिए। जो सावर्णिः सूर्यतनयो. से प्रारम्भ होता है। एक बात अवश्य ध्यान देना चाहिए कि अध्याय के बीच में कोई व्यवधान आ जाय, या कुछ बोल देने पर पुनः अध्याय को प्रारम्भ से पढ़ना चाहिए। 'अध्यायमध्ये न विरमेत्' लिखा है। इसके बाद क्रमशः तेरह अध्याय तक पाठ करना चाहिए। पाठ के बाद - 'खड्गिनी शूलिनी घोरा' से करन्यास एवं हृदयादिन्यास करें तथा तत्रोक्त देवीसूक्त का पाठ करना चाहिए। नमो देव्यै महादेव्यै से लेकर भक्तिविनम्रमूर्तिभिः. तक यह तन्त्रोक्त देवीसूक्त है। इस देवी सूक्त के पाठ के बाद नर्वाण मन्त्र जप का - ॐ ऐं हृदयाय नमः' आदि से अस्त्राय फट् तक न्यास करें एवं नवार्ण मन्त्र का जप करें। जप निवेदन के बाद पुनः हृदयादि न्यास करें। इसके साथ ही तीनों रहस्यों का पाठ विनियोग सहित करें। पाठ करने के बाद कुंजिका स्तोत्र का पाठ एवं देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र का पाठ करें एवं पाठ भगवती को समर्पित करें। इस प्रकार आपका एक दिन का पाठ यहाँ पूर्ण हो गया। इसी क्रम से नवरात्र में यथाशक्ति चण्डी पाठ करना चाहिए। यह एक पाठ

हुआ। ऐसे ही नव पाठ करें। शास्त्रीय मान्यताओं के अनुसार यहाँ दुर्गापाठ के प्रारम्भ में नर्वाण मन्त्र जप एवं अन्त में तथा रात्रिसूक्त का पाठ आदि में एवं देवी सूक्त का पाठ अन्त में करने का विधान बताया गया है जो आपको यहाँ बताया गया।

यही दुर्गापाठ की अत्युत्तम विधि है। इस क्रम से पाठ करने पर शास्त्रविधि से पाठ सम्पन्न होता है एवं शास्त्र आज्ञा का अनुपालन भी हो जाता है।

इसके अतिरिक्त जो भिन्न- भिन्न विधियाँ एवं पाठ का क्रम अन्य ग्रन्थों में दिया गया है वह भी आदरणीय है उसका भी चिन्तन मनन आप अवश्य कर सकते हैं परन्तु दुर्गापाठ के अंगभूत वे स्तोत्र नहीं है। दूसरी बात यह है यह पाठ सात्विक परम्पराओं का अनुपालन करता है। जो लोग राजस, तामस परम्परा प्राप्त पद्धति से पाठ करना चाहते हैं वे हमारे लिए प्रणम्य है। वे स्वेच्छापूर्वक जिस प्रकार चाहे वैसा कर सकते हैं। लेकिन जो विधि आपको बताई गई यह वे वैदिक सनातन धर्म परम्परा प्राप्त पद्धति है। अनुकरण के लिए आप स्वतन्त्र है। अस्तु!

अब आपके लिए कुछ इससे भी सम्बद्ध बोध प्रश्न दिये जा रहे हैं। जिनका उत्तर आपको देना है।

बोध प्रश्न

क. रात्रिसूक्त का पाठ कब करें?

ख. कवच का क्या अर्थ है?

ग. अर्गला किसे कहते हैं?

घ. देवीसूक्त का कब पाठ करते हैं?

2.5 सारांश

प्रस्तुत इस इकाई में प्रधान रूप से दुर्गापाठ के नियम एवं पाठ करने की विधि का शास्त्रीय रीति से ज्ञान कराया गया। इसके साथ ही दुर्गासप्तशती का परिचय, कुछ शाक्त सन्त महापुरुषों की भगवती दुर्गा के प्रति उपासना या साधना का फल जिसके प्रभाव से आज भी वे अपने यशःकाय से जीवित हैं। इसमें भगवती दुर्गा की उपासना का ही प्रत्यक्ष फल ज्ञात होता है। इसमें सन्देह नहीं। इसी क्रम में आपको यह भी बताया गया है कि अन्य देवताओं को छोड़कर दुर्गा जी की ही आराधना क्यों किया जाय? एवं नवरात्रों में दुर्गापाठ का ही महत्त्व इतना अधिक क्यों है? इन सभी विषयों पर प्रकाश डाला गया। पाठ से सम्बद्ध कुछ विशेष नियम को बताते हुए चण्डी पाठ कैसे करें? इसे भी आपको उहापोह पूर्वक काशी की पाण्डित्य परम्परा के अनुसार यथासंभव आपके लिए प्रस्तुत किया गया। इस प्रकार यह इकाई दुर्गापाठ की विधि से पूर्ण होती है।

2.6 पारभाषिक शब्दावली

क. अनर्थज्ञः	-	अर्थ न जानने वाला
ख. शीघ्री	-	अत्यन्त शीघ्र पाठ करने वाला
ग. लिखितपाठकः	-	अपने हाथ से लिखकर स्तोत्र पढने वाला
घ. क्रौष्टुकि	-	भागुरि ऋषि
ङ. दारैः	-	भार्या द्वारा
च. वैश्य	-	समाधि नाम का वैश्य
छ. राजोवाच	-	राजा सुरथ ने कहा
ज. प्रणव	-	ऊँकार
झ. तुष्टाव	-	स्तुति किया

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर (क)

क. दुर्गासप्तशती में उवाच, अर्ध श्लोक आदि मिलाकर 700 श्लोक हैं।

ख. इसमें 8वें मनु 'सावर्णिः' का वर्णन है।

ग. इसमें क्रौष्टुकि जी को ऋषि शब्द से कहा गया है।

घ. यह मार्कण्डेय पुराण के (78 से 90 अध्याय तक) से लिया गया है।

ङ. संस्कृत में लगभग तीन प्रकार के स्तोत्र पाये जाते हैं।

च. सप्तानां शतानां समाहारः इति सप्तशती ऐसा विग्रह होता है।

छ. दुर्गा पाठ में तीन चरित्र एवं तेरह अध्याय हैं।

बोधप्रश्न के उत्तर (ख)

क. रात्रिसूक्त का पाठ दुर्गापाठ के प्रारम्भ में किया जाता है।

ख. कवच शरीर की रक्षा करता है। इसे रक्षक कहते हैं। वर्म भी कहते हैं।

ग. यह दरवाजे को बन्द करके रोकने के लिए लकड़ी का बना यन्त्र है। यह शब्द अवरोध के अर्थ में बहुधा प्रयुक्त होता है।

घ. देवीसूक्त का पाठ दुर्गापाठ के अन्त में किया जाता है।

2.8 सन्दर्भग्रन्थसूची

क. दुर्गासप्तशती

ख. रुद्रयामलतन्त्र

ग. मार्कण्डेय पुराण

घ. दुर्गार्चन पद्धति

ङ. दुर्गोपासना कल्पद्रुम

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

क. श्रीदुर्गा जी के महत्त्व पर प्रकाश डालें।
ख. दुर्गापाठ की विधि का विस्तार से वर्णन करें।

इकाई – 3 शतचण्डी एवं सहस्रचण्डी पाठ विचार

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में दुर्गा सप्तशती के पाठ की शास्त्रीय विधि का ज्ञान आपको कराया गया। इसके साथ ही इस विषय से सम्बद्ध बहुत सारी बातों को आप तक पहुँचाने का सार्थक प्रयास किया गया। अब आप पूर्वोक्त इकाई के ज्ञान से दुर्गापाठ स्वयं कर सकते हैं तथा अन्यत्र भी करा सकते हैं यह मुझे पूर्णतया विश्वास है। क्योंकि पाठ के पहले जो भी आपके मन में जिज्ञासायें उत्पन्न होगी, उन्हें मैं स्वयं प्रस्तुत करके उनका समाधान शास्त्रीय रीति से दिया है। अतः सन्देह का तो कहीं भी अवसर ही नहीं हैं। यहाँ से नई इकाई प्रारम्भ हो रही है।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में शतचण्डी एवं सहस्रचण्डी पाठ का विधान क्या है? क्यों किया जाता है? कितने समय में पूरा होगा? कितने ब्राह्मण रहेंगे? एवं कैसे सम्पन्न होगा? आदि-आदि विषयों से आपका परिचय कराया जायेगा। इसी व्याज से इन प्रश्नों का शास्त्रीय समाधान भी आपको मिल जायेगा।

3.3 शतचण्डी-पाठ परिचय

आप देखें! इस संसार में जिस प्रकार से दो प्रकार के पदार्थ देखे जाते हैं - एक छोटा, एक बड़ा । उसी तरह विभिन्न अवसरों पर अनुष्ठान भी छोटा या बड़ा होता है। जैसे - नवचण्डी छोटा है, तो शतचण्डी बड़ा। समय समय पर दोनों की आवश्यकता जीवन में होती है। जहाँ सुई की आवश्यकता है, वहाँ तलवार से काम नहीं चलता है, उसी प्रकार जहाँ तलवार की जरुरत है, वहाँ सुई निरर्थक सिद्ध होती है। अतः दोनों की आवश्यकता होती है। इसी बात को प्रकारान्तर से शास्त्रों में व्यष्टि एवं समष्टि शब्द से कहा गया है। हम उधर नहीं जायेंगे, क्योंकि विषय कठिन हो जायेगा। यहाँ छोटा, बड़ा या व्यष्टि, समष्टि से तात्पर्य यह है कि वृक्षों के समूह को हम जंगल कहते हैं जो समष्टि है, एवं प्रत्येक अलग-अलग वृक्ष को हम व्यष्टि कहते हैं। व्यष्टि छोटा होता है एवं समष्टि बड़ा होता है। व्यक्ति व्यष्टि है तो समाज समष्टि है।

वृक्ष से एक व्यक्ति को लाभ मिलता है, लेकिन जंगल से बहुत लोगों को। इसीलिए हमारे यहाँ शास्त्रों में भी यज्ञ के दो भेद बताये गये हैं - एक यज्ञ एवं दूसरा महायज्ञ। जो अपने (व्यक्तिगत) ऐहिक तथा पारलौकिक कल्याण के लिए किया जाय उसे यज्ञ कहते हैं, जैसे पुत्रेष्टि याग आदि। एवं जो विश्व के कल्याण के लिए किया जाय, उन्हें महायज्ञ कहते हैं। जैसे - पंचमहायज्ञ आदि। इसीलिए शास्त्र में 'समष्टिकल्याणसम्बन्धात् महायज्ञः' कहा गया है। महर्षि अंगिरा ने भी - यज्ञमहायज्ञौ व्यष्टि समष्टि सम्बन्धात्' कहा है।

इस प्रकार यह सिद्ध हुआ कि जो स्वयं की कामना से प्रेरित होकर केवल आत्मलाभ के लिए जो अनुष्ठान किया जाता है उसे यज्ञ कहते हैं। इसमें स्वार्थ की प्रधानता होती है, एवं महायज्ञ, जगत् के कल्याण के लिए किया जाता है। इसका सम्बन्ध समष्टि से होने के कारण इसमें निःस्वार्थता की प्रधानता होती है। इसीलिए स्वयं के लिए यज्ञ करने के अवसर पर तो मुहूर्त आदि भी देखे जाते हैं, परन्तु विश्वकल्याण के निमित्त यज्ञ करने के अवसर पर कभी कभी मुहूर्त आदि का भी विचार नहीं

किया जाता है, क्योंकि उसमें कोई व्यक्तिगत कामना नहीं रहती है। यह जगत् के कल्याण के लिए होता है। उसी प्रकार यहाँ चण्डीपाठ (दुर्गापाठ) नवरात्र आदि में करना यह एक प्रकार से आत्मकल्याण के लिए है, परन्तु शतचण्डी या सहस्रचण्डी महायाग करना या कराना विश्वकल्याण के लिए ही है। परन्तु आजकल बड़े बड़े लोगों के यहाँ भी शतचण्डी या सहस्रचण्डी याग देखे जाते हैं। परन्तु शास्त्रीय मान्यता तो यही है कि सहस्रचण्डी आदि याग विश्वकल्याण के निमित्त ही किया जाय। इसके लिए आगे हम शास्त्रीय प्रमाणों को भी आपके लिए उपलब्ध करायेंगे। यहाँ एक बात और ध्यान देने की है, कि जिन महानुभावों की कामनाओं की पूर्ति कदाचित् नवचण्डी से नहीं होती है, वे अपने लिए भी शतचण्डी याग करते हैं, क्योंकि बड़े लोगों की बड़ी कामना होती है। अस्तु!

सर्वप्रथम प्रश्न यह है कि हम शतचण्डी क्यों करें? एवं शतचण्डी का अर्थ क्या है? पहले शतचण्डी का अर्थ आप समझें! दुर्गासप्तशती के 100 पाठ को शतचण्डी कहते हैं। लेकिन अनुष्ठानात्मक होने के कारण इसमें 110 पाठ होना चाहिए। दुर्गापाठ की विधि में जो आपको बताया गया है वह एक पाठ है। उसी तरह सौ पाठ $ 10 पाठ जिस अनुष्ठान में हो उसे शतचण्डी कहते हैं। कुछ दुर्गापाठ की संख्याओं एवं उनके फलों का निर्देश वाराहीतन्त्र ग्रन्थ में इस प्रकार किया गया है।

ग्रहों की शान्ति के लिए 5 दुर्गापाठ, महाभय होने पर सात पाठ, नवपाठ से घर में शान्ति होती है। ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए 11 पाठ, बन्धन (कारागृह) से मुक्ति के लिए 25 पाठ। इसी प्रकार भूकम्प, महापातक, राष्ट्र में अशान्ति दुर्भिक्ष महाप्रलय आदि के होने पर 100 पाठ करना चाहिए जिसे यहाँ शतचण्डी शब्द से कहा गया है। लक्ष्मी की वृद्धि, राज्य की वृद्धि एवं मन में चिन्तित सभी मनोरथों की प्राप्ति के लिए 108 पाठ करना चाहिए। शतचण्डी में 110 पाठ होना चाहिए। अधिकस्य अधिकं फलम्। इस अनुष्ठानात्मक यज्ञ में दशांश, तर्पण, मार्जन आदि न करने पर 125 पाठ से शतचण्डी पूर्ण हो जाती है। इसका मूल भाग यह है-

ग्रहोपशान्त्यै कर्तव्यं पंचावृत्तं वरानने
महाभये समुत्पन्ने सप्तावृत्तं समुन्नयेत्।
नवावृत्या भवेच्छान्तिर्वाजपेयफलं भवेत्
राजवश्याय भूत्यै च रुद्रावृत्तमुदीरयेत्।।
पंचाविंशावर्तनात्तु भवेद् बन्ध विमोक्षणम्
वैरिवृद्धौ व्याधिवृद्धौ तथा च जलप्लावने।
राष्ट्रे आपत्ति जाते च तथा चैवातिपातके
श्रेयो वृद्धिः शतावृत्या राज्यवृद्धिस्तथापरा।।
मनसा चिन्तितं देवि सिध्येदष्टोत्तरात् शतात्।
देशे सर्वत्र शान्त्यर्थं शतचण्डीमिमां जपेत्।।

अब जिज्ञासा होती है कि लगभग 125 पाठ वाली शतचण्डी कैसे हो? इस पर विचार करते हैं।

शतचण्डी तो पाँच दिन या नव दिन में सम्पन्न होती है। इसमें ब्राह्मणों की संख्या के अनुसार 7 दिन में भी सम्पन्न होती है। पाँच दिन में होने वाली शतचण्डीयाग में वृद्धिक्रम से दुर्गापाठ होगा। इसमें 10 ब्राह्मण मिलकर पहले दिन एक पाठ = 10 पाठ, दूसरे दिन दो पाठ = 20 पाठ, तीसरे दिन

3 पाठ = 30 पाठ, चौथे दिन 4 पाठ = 40 पाठ इस प्रकार 10$20$30$40=100 पाठ हो जायेगा। पाँचवे दिन हवन तर्पण मार्जन पूर्णाहुति ब्राह्मणभोजन आदि होगा। सात दिन के अनुसार 10 ब्राह्मण पहले दिन एक पाठ = 10 पाठ, दूसरे दिन से 2 पाठ प्रत्येक ब्राह्मण = 20 पाठ, छठे दिन तक एवं सातवें दिन पूर्णाहुति। नव दिन वाले शतचण्डी में 10 पाठ प्रतिदिन होगा एवं अन्तिम दिन एक-एक पाठ करेंगे जो मिलकर 10 पाठ हुआ एवं अन्तिम दिन मिलकर 20 पाठ होगा एवं पूर्णाहुति आदि होगी।

यह तो शतचण्डी पाठ की संख्या, ब्राह्मणों की संख्या एवं दिन की संख्या पर आपसे कुछ चर्चा हुई।

अब कुछ और शास्त्रीय विधानों पर आपसे चर्चा करेंगे -

3.3.1 याग विधि

अब हम आपको रुद्रयामलग्रन्थ का अवलोकन करायेंगे - जहाँ शतचण्डीयाग का विधान, विशेष रूप से वर्णित है। यथा-

शतचण्डी विधानं तु प्रोच्यमानं श्रृणुष्वतत्
सर्वोपद्रवनाशार्थं शतचण्डीं समारभेत्।
षोडशस्तम्भसंयुक्तं मण्डपं पल्लवोज्वलम्
चतुःकोणयुतां वेदीं मध्ये कुर्याद् विधानतः।
पक्वेष्टका चितां रम्यामुच्छ्राये हस्तसंमिताम्
पंचवर्णरजोभिश्च कुर्यान्मण्डलकं शुभम्॥
आचार्येण समं विप्रान्वरयेद्दशसुव्रतान्
ऐशान्यां स्थापयेत् कुंभं पूर्वोक्तं विधिनाहरेः।
मूर्तिं च देव्याः कुर्वीत सुवर्णस्य पलेन वै
देवीं सम्पूज्य विधिवज्जपं कुर्युर्दशद्विजाः
शतमादौ शतं चान्ते जपेन्मन्त्रं नवार्णकम्
चण्डीसप्तशतीमध्ये संपुटोऽमुदाहृतः।
एकं द्वे त्रीणि चत्वारि जपेद्दिनचतुष्टयम्।
पंचमे दिवसे प्रातर्होमं कुर्याद् विधानतः॥
शुद्धं च पायसं दुर्वा यवान्शुक्लतिलानपि
चण्डीपाठस्य होमं तु प्रतिश्लोकं दशांशतः॥
हुत्वा पूर्णाहुतिं दद्याद् विप्रेभ्यो दक्षिणां क्रमात्
अभिषेकं ततः कुर्युयजमानस्य ऋत्विजः
एवं कृत्वाभरेशान् सर्वसिद्धिः प्रजायते
इति रुद्रयामलोक्तं शतचण्डीविधानम्।

यह विधान रुद्रयामलतन्त्र में विस्तार से वर्णित है यहाँ मैंने कुछ मुख्य-मुख्य विषयों को ही लिया है। यह तो संस्कृत में हैं। अब आपको इसका भाव हिन्दी में समझा रहा हूँ।

सभी उपद्रवों के नाश के लिए शतचण्डी याग किया जाता है। इसमें 16 स्तम्भ से युक्त

मण्डप का निर्माण करना चाहिए। मण्डप 18 या 16 हाथ का लम्बा-चौड़ा उत्तम होता है। इन 16 स्तम्भों में देवताओं का आवाहन होता है - क्रम से - ब्रह्मा, विष्णु, शिव, रुद्र, सूर्य, गणेश, यम, नागराज, स्कन्द, वायु, सोम, वरुण, अष्टवसु, कुबेर, बृहस्पति और विश्वकर्मा। यह मण्डप ध्वजा पताकाओं से सुशोभित होना चाहिए।

मण्डप के भीतर चारों दिशाओं में चार वेदी बनती है। जैसे ईशानकोण में ग्रहवेदी, अग्निकोण में योगिनी वेदी, नैर्ऋत्यकोण में वास्तुवेदी, वायव्यकोण में क्षेत्रपालवेदी एवं प्रधानवेदी मध्य में होती है। सुवर्ण की प्रतिमा भगवती दुर्गा की होती है जिसका प्रधानवेदी पर आवाहन स्थापन एवं पूजन प्रतिदिन होता है। आचार्य के साथ 10 अन्य ब्राह्मणों का मधुपर्क से अर्चन करके यज्ञ में वरण किया जाता है। जो जितेन्द्रिय एवं सन्तोषी तथा वेदज्ञ होते हैं।

यज्ञमण्डप के बाहर 18 कलश होते हैं जिनमें 4 कलश मण्डप के चारों दिशाओं में एवं चार विदिशाओं में रखे जाते हैं। एक कलश पूर्व एवं ईशानकोण के मध्य ब्रह्मा का होता है और एक कलश पश्चिम एवं नैर्ऋत्यकोण के मध्य में अनन्त देवता का होता है। ये दस कलश दिकपाल के होते हैं। मण्डप के चारों द्वारों पर दो-दो कलश होते हैं जिन्हें द्वारकलश कहते हैं। इस प्रकार यज्ञमण्डप में 18 कलश होते हैं।

इस प्रकार के मण्डप में प्रतिदिन ब्राह्मणलोग देवी का पूजन सम्पन्न करके दुर्गापाठ करते हैं। इस पाठ के आदि एवं अन्त में नवार्ण मन्त्र का विधिवत् जप किया जाता है। यहाँ वृद्धिक्रम से पाठ का विधान वर्णित है जिसे परिचय में ही आपको बता दिया गया है। पाँचवें दिन, घी, तिल, पायस (खीर) आदि हवनीय द्रव्यों से प्रतिश्लोक पढ़कर दशांश हवन करना चाहिए। दशांश का अर्थ यह है, कि सौ पाठ पूर्ण होने पर 10 पाठ से हवन करना चाहिए। यदि 10 ब्राह्मणों को हवन में नियुक्त कर एक आवृत्ति दुर्गापाठ की हो तो दशांश हो जाता है। इसके बाद तर्पण, मार्जन, पूर्णाहुति एवं ब्राह्मणभोजन कराया जाता है। ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर, यजमान का कलश के जल से अभिषेक करना चाहिए। इस प्रकार शतचण्डी याग के करने से यजमान के सभी मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं। यह प्रयोग (शतचण्डी याग) रुद्रयामलतन्त्र के अनुसार लिखा गया है। आज कल भी इसी परम्परा का निर्वहण ब्राह्मणलोग करते हैं, जिसके फलस्वरूप करने वाले सुखी रहते हैं।

शतचण्डी का एक विधान डामरतन्त्र में भी लिखा है, उसे भी थोड़ा देख लिया जाय। यदि इसमें कुछ विशेष बातें होगी तो उन्हें भी यहाँ लिखने का प्रयास किया जायेगा।

शतचण्डी विधानं हि यथावत् कथयाम्यहम्।
सुघोरायामनावृष्ट्यां भूकम्पे च सुदारुणे॥
परचक्रभये तीव्रे क्षयरोग उपस्थिते।
राजवादादिकार्येषु आपत्सु सुतजन्मनि॥
महोपघातनाशाय पंचविंशतियोजने।
देशे सर्वत्रशान्त्यर्थं शतचण्डीमिमां जपेत्॥

शतचण्डी याग का यही प्रयोजन पूर्वोक्त तन्त्र में भी दिया गया है। मण्डप का निर्माण एवं कुण्ड निर्माण आदि की प्रक्रिया भी पूर्व की ही तरह है। हाँ! एक बात यह है कि यज्ञ में किस प्रकार के ब्राह्मणों का वरण हो, इसमें ब्राह्मणों के गुणों का वर्णन है। ब्राह्मण कैसे हो?

सदाचाराः कुलीनाश्च ह्रीमन्तः सत्यवादिनः।
चण्डिकापाठसम्पूर्णा दयावन्तो जितेन्द्रियः।।
ईदृग्लक्षणसंयुक्ता दम्भमोहविवर्जिताः
दशविप्रान-समभ्यर्च्य महालक्ष्मीस्वरूपिणः
मधुपर्कविधानेन यथावद्तद्वदाम्यहम्।।

अर्थात् शतचण्डी याग में वृणीत ब्राह्मणों को दयावान्, जितेन्द्रिय, लज्जाशील, विद्वान्, सदाचारी, दम्भमोह से रहित आदि गुणों से युक्त होना चाहिए। ऐसे ब्राह्मणों का मधुपर्क विधान से पूजन करके वरण करना चाहिए। इनमें जो आचार्य होते हैं उन्हें देशिक कहा गया है।

ददाति पूजनेऽनुज्ञां देशिकस्य कृतांजलिः
देशिकः सर्वमन्त्रज्ञो नवभिर्ब्राह्मणैः सह।
नवग्रहांश्च दिग्देवीलोकपाल समन्वितः।
दिशापालांश्च सम्पूज्य कलशस्थाप्य पूज्य च।
मण्डपस्य चतुर्दिक्षु दत्वा भूतबलिर्बहिः।
मण्डपे कलशौ द्वौ द्वौ द्वारि द्वारि निवेशयेत्।

इस प्रकार यहाँ नवग्रहों का पूजन, दिकपालों का पूजन एवं प्रत्येक द्वार पर दो दो कलशों के रखने का विधान बताया गया है। 10 कन्याओं के भोजन का विधान भी इस ग्रन्थ में दिया गया है-

कुमार्यो दस संख्याता भोज्या विप्रा दशोत्तमः ।
महाकाली महालक्ष्मी सरस्वत्या जपं जपन् ।।

इस ग्रन्थ के अनुसार यह कार्य पहले दिन होना चाहिए। लेकिन अन्य शास्त्रों के अनुसार एवं लौकिक आचार को भी ध्यान में रखकर यह यज्ञ के अन्त में अर्थात् पूर्णाहुति के दिन कन्या पूजन के रूप में होता है। कुछ लोग अष्टमी को भी कर लेते हैं। यहाँ भी पाँचवें दिन होम का विधान है - होमः स्यात् पंचमेऽहनि। पायसं सर्पिषायुक्तं तिलैः शुक्लैर्विमिश्रितम्। इसमें काली तिल की जगह सफेद तिल से भी हवन करने का विधान बताया गया है। जो आज के समय के लिए ग्राह्य है। क्योंकि काली तिल में आजकल तेल नहीं दिखता है। इसका कारण आप भी जानते हैं बताने की जरुरत नहीं है।

पुष्पांजलि के लिए विशेष निर्देश है - यस्याः प्रभावमतुलं - इस श्लोक से देवी को पुष्पांजलि करने को कहा गया है। शेष बातें सामान्य है। अतः उन्हें यहाँ लिखने की जरुरत नहीं है।

मन्त्रमहोदधिग्रन्थ में भी शतचण्डी याग का विधान प्राप्त होता है जो अधिक प्रचलित है। उसे भी क्यों न यहाँ देख लिया जाय, तो आइये! उसे भी देखते हैं।

3.3.2 शतचण्डीप्रयोगः

मन्त्रमहोदधौ-
शतचण्डीविधानं तु प्रवक्ष्ये प्रीतये नृणाम् ।
नृणोपद्रव आपन्ने दुर्भिक्षे भूमिकम्पने ।।
अतिवृष्ट्यामनावृष्टौ परचक्रभये क्षये ।
सर्वे विघ्ना विनश्यन्ति शतचण्डीविधौ कृते ।।

मन्त्रमहोदधि-वर्णित-शतचण्डी प्रयोग - साधक के कल्याण के लिए शतचण्डी विधान का

वर्णन करते हैं। राज्योपद्रव, दुर्भिक्ष, भूकम्प, अतिवृष्टि, अनावृष्टि और शत्रुकृत चक्रभय आदि समस्त विघ्न शतचण्डी विधान के जानने एवं करने से नष्ट होते हैं।

रोगाणां वैरिणां नाशौ धन-पुत्र-समृद्धयः ।
शंकरस्य भवान्या वा प्रासादनिकटे शुभम् ।।
मण्डपं द्वारवेद्याढ्यं कुर्यात् स-ध्वजतोरणम् ।
तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा ।।

इसी प्रकार इसके करने से रोग, शत्रु आदि भी नष्ट होते हैं। शिव अथवा दुर्गा-मन्दिर में, ध्वजा, तोरण आदि से सुसज्जित मण्डप एवं द्वार का निर्माण करे। तथा पश्चिम की ओर अथवा मध्य भाग में कुण्ड का निर्माण करे।।

स्नात्वा नित्यक्रियां कृत्वा वृणुयाद् दशवाडवान् ।
जितेन्द्रियान् सदाचारान् कुलीनान् सत्यवादिनः ।।
व्युत्पन्नांश्चण्डिकापाठरतान् लज्जा-दयावतः ।
मधुपर्कविधानेन स्वर्ण-वस्त्रादि-दानतः ।।

साधक को चाहिए कि स्नान आदि नित्य क्रिया से निवृत्त होकर जितेन्द्रिय, सदाचारी, कुलीन, सत्यवादी, व्युत्पन्न, देवी के नित्य पाठ में तत्पर एवं लज्जा, दयावान् ऐसे दश ब्राह्मणों का मधुपर्क विधान तथा स्वर्ण, वस्त्र आदि से सत्कृत कर वरण करें।

जपार्थमासनं मालां दद्यात्तेभ्योऽपि भोजनम्।
ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः।।
भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिकास्तवम्।
मार्कण्डेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सचेतसः।।
नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चाऽयुतं पृथक्।

(अष्टमी-नवमी-चतुर्दशी-पौर्णमासीषु यथा शतावृत्तिमसमाप्तिर्भवति तथाऽऽरम्भः कर्तव्य इति साम्प्रदायिकाः।)

यजमानः पूजयेच्च कन्यानां नवकं शुभम्।।
द्विवर्षाद्या दशाब्दान्ताः कुमारीः परिपूजयेत्।
नाऽधिकांगीं न हीनांगीं कुष्ठिनीं च व्रणांकिताम्।।
अन्धां काणां केकरां च कुरूपां रोमयुक्-तनुम्।
दासीजातां रोगयुक्तां दुष्टां कन्यां न पूजयेत्।।

उन वृणीत ब्राह्मणों को आसन एवं जप के लिए रुद्राक्ष की माला तथा भोजन प्रदान करे। वृणीत ब्राह्मणों को चाहिए कि वे हविष्यान्न ही भोजन करें। अपने अन्तःकरण में निरन्तर चण्डी (दुर्गा) मन्त्रार्थ का चिन्तन करते हुए भूमि पर शयन करें। इस प्रकार मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत दुर्गा सप्तशती का पाठ करें तथा दस हजार जापक नित्य नवार्ण मन्त्र का जप करें, या प्रत्येक ब्राह्मण प्रतिदिन दस हजार जप करें। (साथ ही अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी और पूर्णिमा तिथि में शतावृत्ति पाठ समाप्त हो ऐसी व्यवस्था करें।) तत्पश्चात् यजमान दो वर्ष से लेकर दस वर्ष पर्यन्त नव कुमारिकाओं

का पूजन करें। वे कुमारियाँ अधिक अंग, हीन अंग, कोढ़ी, फोड़ा-फुन्सी से उत्पन्न, रोगी और दुष्ट स्वभाव वाली न हो, ऐसी कन्याओं का पूजन न करे।

विप्रां सर्वेष्टसंसिद्ध्यै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ।
वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ।।

समस्त कार्य की सिद्धि के लिए ब्राह्मण कुमारिकाओं का, यश के लिए क्षत्रिय कुमारिकाओं का, धन-प्राप्ति के लिए वैश्य कुमारिकाओं का और पुत्र-प्राप्ति के निमित्त शूद्र कुमारिकाओं का पूजन करें। यहाँ जिज्ञासा होगी कि कुमारी किसे कहा जाता है? इसका उत्तर नीचे दिया जा रहा है।

द्विवर्षा सा कुमार्युक्ता त्रिमूर्तिर्हायनत्रिका ।
चतुरब्दा तु कल्याणी पंचवर्षा तु रोहिणी ।।
षडब्दा कालिका प्रोक्ता चण्डिका सप्तहायनी ।
अष्टवर्षा शाम्भवी स्याद् दुर्गा तु नवहायनी ।।
सुभद्रा दशवर्षोक्ता नाममन्त्रैः प्रपूजयेत् ।
तासामावाहने मन्त्रः प्रोच्यते शंकरोदितः ।।
मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम् ।
नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम् ।।
कुमारिकादि-कन्यानां पूजामन्त्रान् ब्रुवेऽधुना ।

दो वर्ष की कन्या 'कुमारी', तीन वर्ष की 'त्रिमूर्ति', चार वर्ष की 'कल्याणी', पाँच वर्ष की 'रोहिणी', छह वर्ष की 'कालिका', सात वर्ष की 'ख्ण्डिका', आठ वर्ष की 'शाम्भवी', नव वर्ष की 'दुर्गा' तथा दस वर्ष की कन्या का नाम 'सुभद्रा' है। इन नवों कन्याओं का शंकर द्वारा कथित आवाहन आदि के मन्त्रों से 'मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं.......' से लेकर 'कन्यामावाहयाम्यहम्' तक पढ़कर पूजन करे।

कन्यापूजनमन्त्राः

जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ।
पूजां गृहाण कौमारि! जगन्मातर्नमोऽस्तु ते।।
त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्गज्ञानरूपिणीम् ।
त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ।।

इसके बाद कुमारिका पूजन आदि मन्त्रों का वर्णन करते हुए कहते हैं, जो इस प्रकार है - 'जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये.....' से लेकर 'जगन्मातर्नमोऽस्तु ते' तक पढ़कर कुमारी का पूजन करे। 'त्रिपुरां त्रिपुराधारां......' से 'त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम्' पर्यन्त पढकर त्रिमूर्ति कुमारी का गन्ध, अक्षत और पुष्पादि द्वारा अर्चना करे।

कालात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम्।
कल्याणजननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम्।।
अणिमादिगुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम्।
अनन्तशक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम्।।
कामाचारां शुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम्।

कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम्।।

'कालात्मिकां कलातीतां .....' से लेकर 'कल्याणीं पूजयाम्यहम्' तक पढ़कर कल्याणी का, 'अणिमादि-गुणाधारां.........' से 'रोहिणीं पूजयाम्यहम्' तक पढ़कर रोहिणी का तथा 'कामाचारां शुभां कान्तां ....' से 'कालिकां पूजयाम्यहम्' तक पढ़कर कालिका का पूजन करे।

चण्डवीरां चण्डमायां चण्ड-मुण्ड-प्रभंजनीम्।
पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां चण्डविक्रमाम्।।
सदाऽऽनन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम्।
सर्वभूतात्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम्।।
दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भव-दुःख-विनाशिनीम्।
पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गार्ति-नाशिनीम्।।
सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुख-सौभाग्य-दायिनीम्।
सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम्।।
एतैर्मन्त्रैः पुराणोक्तैस्तां तां कन्यां समर्चयेत्।
गन्धैः पुष्पैर्भक्ष्य-भोज्यैर्वस्त्रैराभरणैरपि।।

'चण्डवीरां चण्डमायां ....' से 'चण्डिकां चण्डविक्रमाम्' पर्यन्त मन्त्र का उच्चारण कर चण्डिका का, 'सदाऽऽनन्दकरीं शान्तां ....' से आरम्भ कर 'शाम्भवीं पूजयाम्यहम्' तक पढ़कर शाम्भवी का, 'दुर्गमे दुस्तरे कार्ये ....' से लेकर 'दुर्गां दुर्गार्ति-नाशिनीम्' तक कहकर दुर्गा का और 'सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां ....' से 'सुभद्रां पूजयाम्यहम्' तक कहकर सुभद्रा आदि नव कुमारिकाओं को गन्ध, पुष्प, वस्त्र, आभरण आदि समर्पित करे।

वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले।
घटं संस्थाप्य विधिना तत्राऽवाह्याऽर्चयेच्छिवाम् ।।
तदग्रे कन्यकाश्चाऽपि पूजयेद् ब्राह्मणानपि ।
उपचारैस्तु विविधैः पूर्वोक्तावरणादपि ।।

सर्वतोभद्रमण्डल में विधि-विधान से घटस्थापन कर दुर्गा का आवाहन एवं पूजन करे। उस मण्डल के आगे विविध उपचारों से ब्राह्मणों एवं कन्याओं का पूजन करे।

होमद्रव्याणि

एवं चतुर्दिनं कृत्वा पंचमे होममाचरेत्।
पायसान्नै-स्त्रिमध्वक्तै-र्द्राक्षारम्भा-फलादिभिः।।
मातुलिंगैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलयुतैस्तिलैः।
जातीफलैराम्रफलैरन्यैर्मधुर-वस्तुभिः।।
सप्तशत्या दशावृत्त्या प्रतिमन्त्रं द्रुतं चरेत्।
अयुतं च नवार्णेन स्थापितेऽग्नौ विधानतः।।

इस प्रकार चार दिन पर्यन्त पूजन कर पाँचवें दिन से पायस (खीर) त्रिमधु, दाख, केला, मातुलिंग, इक्षुखण्ड (ऊँख के टुकड़े), नारियल, तिल, जातीफल एवं आम का फल आदि मधुर वस्तुओं से शतचण्डी प्रयोग में सप्तशती के दस पाठ का हवन करें, और दस हजार नवार्ण मन्त्र का

हवन करे।

कृत्वा-ऽऽवरण-देवानां होमं तन्नाममन्त्रतः।
कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग् देवमग्निं विसृज्य च।।
अभिषिंचेकं च यष्टारं विप्रौघः कलशोदकैः।
निष्कं सुवर्णमथवा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत्।।
भोजयेच्च शतं विप्रान् भक्ष्य-भोज्यैः पृथग्विधैः।
तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्त्वा गृह्णीयादाशिषस्तथा।।

तथा उन उन नाममंत्रों से आवरण देवताओं का हवन कर पूर्णाहुति करना चाहिए। तत्पश्चात् अग्नि का विसर्जन और ब्राह्मण लोग कलश के जल से यजमान का अभिषेक करे। यजमान भी इन ब्राह्मणों को सुवर्ण अथवा मन-ईप्सित (मनचाही) दक्षिणा देवे और यजमान को चाहिए कि अनेक स्वादिष्ट व्यंजनों द्वारा सामर्थ्य के अनुसार ब्राह्मणों को भोजन कराये तथा उन्हें दक्षिणा प्रदान कर, उन ब्राह्मणों से आशीर्वाद ग्रहण करे।

एवं कृते जगद्वश्यं सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः।
राज्यं धनं यशः पुत्रानिष्टमन्यल्लभेत सः।।

इस प्रकार शतचण्डी प्रयोग करने वाला मनुष्य राज्य, धन, यश, पुत्र आदि समस्त मनचाही वस्तुओं को प्राप्त करता है, तथा उसके समस्त उपद्रव वगैरह नष्ट होते हैं।

3.4 सहस्रचण्डीयाग

सहस्रचण्डीयाग का नाम श्रीदुर्गाजी के सहस्र (हजार) पाठ के कारण ही है। जैसे शतचण्डी में 100 पाठ सामान्यरूप से होते हैं उसी प्रकार इसमें भी एक हजार दुर्गापाठ होते हैं। इसमें ब्राह्मणों की संख्या 100 होती है। पाठ की संख्या के अनुसार दिन भी निश्चित कर सकते हैं। प्रायः 10 दिन में अच्छी तरह पाठ हो सकता है। फिर पाठ का दशांश हवन, तर्पण, मार्जन, ब्राह्मणभोजन आदि शतचण्डी की तरह ही सम्पन्न कराये जाते हैं। तर्पण करते समय 'दुर्गां तर्पयामि' एवं मार्जन के समय 'दुर्गां मार्जयामि' कहा जाता है। यह शास्त्रीय मान्यता है।

अब आपसे कुछ चर्चा प्रयोजन पर होगी। इस याग का प्रयोजन भी हमें अवश्य जानना चाहिए। अतः अब सहस्रचण्डी याग का प्रयोजन के विषय में चर्चा करते हैं।

सहस्रचण्डी याग का प्रयोजन

इस याग का प्रयोजन एवं विधान रुद्रयामलग्रन्थ में इस प्रकार बताया गया है-

सहस्रचण्डीं विधिवत् श्रुणु विष्णो महामते!
राज्यभ्रंशादि प्रकृत्य इत्यादि विविधे दुःखे, क्षयरोगादिजे भये।
सहस्रचण्डी कार्या तु कुर्याद्वा कारयेत्तथा।
जापकास्तु शतं प्रोक्ता विंशद्हस्तश्च मण्डपः।
भोज्याः सहस्रं विप्रेन्द्राः शतं गावश्च दक्षिणाः
गुरुवे द्विगुणं देयं शय्यादानं तथैव च
सप्तधान्यं च भूदानं श्वेताश्वं च मनोहरम्।
पंचनिष्कमिता मूर्तिः कर्तव्या परिणामतः

अष्टादशभुजा देवी सर्वायुधविभूषिता
अवारितान्नं दातव्यं सहस्रं प्रत्यष्टं विभो
शतं वा नियताहार पयः पानेन वर्तयेत्।
एवं यश्चण्डिकापाठं सहस्रं तु समाचरेत्
तस्य स्यात् कार्यसिद्धिस्तु नात्र कार्या विचारणा।

इसका भाव भी संक्षेप में आपको बताया जा रहा है। विविध प्रकार के दुःख यदि एक साथ उपस्थित हो क्षयरोगादि से उत्पन्न भय होने पर, राज्य छीन लिए जाने पर, सहस्रचण्डी याग करना, या कराना चाहिए। इसमें जापक (पाठक) 100 ब्राह्मण रहेंगे। बीस हाथ का मण्डप रहेगा। कम से कम 11 हजार ब्राह्मणों का भोजन होना चाहिए। आचार्य को दुगुना दक्षिणा देनी चाहिए। शय्यादान, सप्तधान्य, अन्नदान, पृथिवीदान, अश्वदान आदि किये जाते हैं। पाँच पल की सुवर्ण की मूर्ति होनी चाहिए। अष्टभुज से युक्त श्री दुर्गा जी की पूजा करनी चाहिए। इसके साथ ही ब्राह्मणों को उचित दक्षिणा एवं भोजन आदि से सन्तुष्ट करके जो सहस्रचण्डी याग करता है उसके सभी मनोरथ अवश्य ही पूर्ण हो जाते हैं।

इस प्रकार यहाँ सहस्रचण्डी याग के विषय में भी संक्षेपरूप से कुछ विशिष्ट विधियों का ज्ञान कराया गया।

आपको शतचण्डी याग से सम्बद्ध पाठविधियों को तीन ग्रन्थों के माध्यम से ज्ञान कराया गया। (रुद्रयामल ग्रन्थ, डामरतन्त्रग्रन्थ एवं मन्त्रमहोदधि ग्रन्थ)

विशेषरूप से इन यागों का सविधि विधान पद्धतियों में दिया गया है। जैसे श्रीवायुनन्दन मिश्र जी की शतचण्डीयाग पद्धति एवं सहस्रचण्डीयाग पद्धति। विशेष आवश्यकता पड़ने पर इन पद्धतिग्रन्थों को भी आप देख सकते हैं। अस्तु।

अब आपके लिए कुछ बोध प्रश्न दिये जा रहे हैं जिनका समाधान आपको करना है-

बोधप्रश्न - 1

क. शतचण्डी में पूर्णरूप से कितने दुर्गापाठ होते हैं?
ख. शतचण्डी में हवन कितने पाठ से होता है?
ग. यज्ञमण्डप में कुल कितने स्तम्भ होते हैं?
घ. महायज्ञ किसे कहते हैं?
ङ. शतचण्डी में लगभग कितने ब्राह्मण पाठ के लिए होते हैं?
च. ग्रहों की शान्ति के लिए कितने दुर्गापाठ किये जाते हैं?
च. नवचण्डी पाठ का क्या फल है?

बोधप्रश्न - 2

क. कारागृह से मुक्ति के लिए कितने दुर्गापाठ करना चाहिए?
ख. सहस्रचण्डी याग में कितने दुर्गापाठ होते हैं?

ग. नवार्णमन्त्र में कितने अक्षर होते हैं?
घ. वृद्धिपाठ में हवन किस दिन करना चाहिए?
ङ. उत्तम मण्डप का परिमाण क्या है?
च. ग्रहवेदी किस दिशा में रखी जाती है?
छ. अग्निकोण में कौन सी वेदी की स्थापना होती है?
ज. इस याग में प्रधान वेदी कहाँ रहती है?
झ. यज्ञमण्डप के बाहर कितने कलश होते हैं?
ञ. दिकपाल कितने होते हैं?

3.5 सारांश

इस इकाई में शतचण्डी एवं सहस्रचण्डी पाठ की विधि बताई गई है। शतचण्डी एवं सहस्रचण्डी याग में दुर्गापाठ की संख्या क्या होती है? कितने ब्राह्मण रहेंगे? एवं कितने दिन में सम्पन्न होगा। ये सभी बातें प्रामाणिकरूप से आपको ज्ञात कराया गया। इसके साथ ही भिन्न-भिन्न कामनाओं के अनुसार फलप्राप्ति के लिए दुर्गापाठ की संख्या का (निर्धारण) भी आपको बोध कराया गया। शतचण्डी याग के विषय में विविध शास्त्रों में प्रयुक्त विधियों की प्रमाण के साथ आपको जानकारी दी गई। दोनों विषयों से बोधप्रश्न एवं उनके उत्तर भी इसमें लिखे गये हैं।

शाक्ततान्त्रिकग्रन्थों के अनुसार कुछ विशेष नियमों को एवं प्रचलित कर्मकाण्ड के अनुसार सामान्य विधियों में अन्तर दिखाकर उचित एवं सरलविधि का ज्ञान इसमें कराया गया है। विषय से सम्बन्धित कुछ जिज्ञासाओं को स्वयं प्रस्तुत करते हुए उनका उत्तर आपको बताया गया है।
इस प्रकार संक्षेप में इस इकाई का सारांश यहाँ प्रस्तुत किया गया।

3.6 शब्दावली

क. अनावृष्ट्याम् - वृष्टि न होने पर
ख. शिवाभ्याशे - श्रीशिवजी के मन्दिर में
ग. सत्यवादिनः - सत्य बोलने वाले द्विज
घ. नवार्ण - नौ अक्षर वाला मन्त्र
ङ. त्वदीयः - तुम्हारा
च. मामकीन - मेरा
छ. सनातन - सदा (नित्य)
ज. प्राक्तन - पुराने समय का
झ. गरीयस् - बड़ा भारी
ञ. स्थवीयस् - बहुत मोटा
ट. दाक्षिणात्य - दक्षिण का
ठ. पौर्वात्य - पूर्व का

3.7 बोधप्रश्नों के उत्तर (1)

क. शतचण्डी याग में सम्पूर्ण पाठों की संख्या 100 है।

ख. शतचण्डी याग में दशांश पाठ से हवन होता है अर्थात् 100 पाठ होने पर 10 पाठ से हवन होगा।

ग. यज्ञमण्डप में मुख्य रूप से कुल 16 स्तम्भ होते हैं।

घ. जो विश्वकल्याण की कामना से या समाज अथवा राष्ट्र के कल्याण की कामना से सम्पादित किया जाय उसे महायज्ञ कहते हैं। जैसे पंचमहायज्ञ आदि।

ङ. शतचण्डी याग में पाठ करने के लिए कम से कम आचार्य को लेकर 11 ब्राह्मण होने चाहिए।

च. ग्रहों की शान्ति के लिए 5 दुर्गापाठ करना चाहिए।

छ. नवचण्डी याग करने से घर में शान्ति बनी रहती है। यही वर्तमान में अत्यधिक फल है।

बोधप्रश्न के उत्तर (2)

क. कारागृह से मुक्ति के लिए 25 पाठ दुर्गा का करना चाहिए।

ख. सहस्रचण्डी याग में सामान्य रूप से 1000 पाठ अनिवार्य हैं।

ग. नवार्णमन्त्र में 9 अक्षर होते हैं।

घ. वृद्धिपाठ के क्रम में हवन पाँचवें दिन होगा।

ङ. उत्तम मण्डप 18 हाथ का माना गया है।

च. ग्रहवेदी ईशानकोण में होती है।

छ. अग्निकोण में योगिनी वेदी स्थापित की जाती है।

ज. शतचण्डी में प्रधान वेदी मध्य में रहती है।

झ. यज्ञमण्डप के बाहर 18 कलश होते हैं।

ञ. दिकपाल दस होते हैं।

3.8 सन्दर्भग्रन्थसूची

क. स्मृतिकौस्तुभ

ख. ग्रहशान्ति

ग. विष्णुयागपद्धति

घ. यज्ञमीमांसा

ङ. डामरतन्त्र

च. दुर्गासप्तशतीटीका

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

क. उत्तम मण्डप की रचना की सांगोपांग विधि का वर्णन करें।

ख. शतचण्डी याग का वर्णन करें।

इकाई – 4 श्री दुर्गासप्तशती हवन विधान

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 हवन विधान
4.3.1 हवनीय द्रव्य (शाकल्य) और उसका परिमाण
4.3.2 नित्य हवन में विहित द्रव्य के अभाव में प्रतिनिधि द्रव्य
4.4 अग्नि के जिह्वा के नाम
4.4.1 विधिहीन अग्नि में हवन करने से हानि
4.4.2 अग्नि में हवनार्थ स्थान का विचार
4.5 सारांश
4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.7 पारिभाषिक शब्दावली
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में आप ''शतचण्डी एवं सहस्रचण्डी पाठ विचार'' से अच्छी तरह अवगत हो गये होंगे। याग के दो स्वरूप शास्त्रों में देखे जाते हैं, पाठ एवं होम। पाठ की पूर्णता बिना होम के संभव नहीं होती। अतः यहाँ भी पाठ के बाद होम का विधान बताया जा रहा है।

प्रस्तुत इस इकाई में श्रीदुर्गासप्तशती के पाठ से हवन कैसे होगा? इसके विषय में आपको ज्ञान कराया जायेगा।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में प्रयुक्त होमविधान के ज्ञान से आप यज्ञ के दोनों पक्षों से परिचित हो जायेंगे। अर्थात् पाठ के बाद उसका अंग होम कैसे? एवं क्यों कराया जाता है? आदि विविध विषयों का ज्ञान आपको हो जायेगा। जो वर्तमान समाज के लिए अत्यन्त उपादेय है ।

4.3 हवन विधान

सामान्यतः होमशब्द का प्रयोग श्रौतग्रन्थों में देखा जाता है। यह शब्द याग के साथ प्रयुक्त हुआ है। जैसा कि कात्यायन श्रौतसूत्र में लिखा गया है-

यजति जुहोतीनां को विशेषः - तिष्ठद्धोमावषट्कारप्रदाना याज्यापुरोऽनुवाक्यावन्तो यजतयः। उपविष्टहोमा स्वाहाकारप्रदाना जुहोतयः।

ये दोनों लक्षण याग एवं होम के हैं। प्रसंगतः यहाँ होम शब्द का ही अर्थ किया जा रहा है - जिस याग में बैठकर स्वाहाकार पूर्वक देवता के निमित्त द्रव्य का त्याग मन्त्रपाठपूर्वक अग्नि में किया जाय वही होम है। यह होम, श्रौतयाग एवं स्मार्तयाग अर्थात् वेदों में वर्णित याग एवं स्मृतिग्रन्थों में वर्णित याग दोनों में होता है। इसीलिए (श्रौतयाग) दर्शपूर्णमासेष्टि याग में एक जुहोति स्थान भी होता है जहाँ जाकर अध्वर्यु होम करता है एवं यजति स्थान पर जाकर याग करता है। इस प्रकार यह होम की परिभाषा श्रौतसूत्र के अनुसार दी गई।

न केवल श्रौतयज्ञों में ही अपितु स्मार्तयज्ञों में या संस्कारों के अनुष्ठान का गृह्यसूत्रों में जहाँ से प्रारम्भ होता है वहाँ भी सर्वप्रथम होम का ही विधान किया गया है। जैसे - संस्कार विधायक प्रसिद्ध ग्रन्थ पारस्करगृह्यसूत्र में सबसे पहले होम का ही विधान किया गया है जैसे अथातो गृह्यस्थालीपाकानां कर्म। यहाँ से प्रारम्भ होकर एष विधिर्यत्र क्वचिद् होमः तक एक कण्डिका समाप्त होती है। इसमें होम के अंगभूत कुशकण्डिका का विधान किया गया है। यहाँ जिज्ञासा यह होती है कि पारस्करगृह्यसूत्र, संस्कार प्रतिपादक ग्रन्थ होने के कारण सर्वप्रथम होम का विधान यहाँ क्यों किया गया तो समाधान यही है कि प्रायः सभी संस्कारों के अन्त में होम होता ही है। अतः प्रत्येक संस्कार के अन्त में देने की अपेक्षा पहले ही इसे यहाँ दे दिया गया है। जिससे पाठकों को सुविधा होगी। यही विधि सभी होमों में होगी। इस प्रकार यहाँ होम की अनिवार्यता अत्यन्त ही स्पष्ट

है। लोक में भी बड़े से बड़े यागों में यदि (होम) हवन न हो तो लोग उसे याग की संज्ञा नहीं देते हैं। अतः याग एवं होम दोनों परस्पर में सापेक्ष है। श्रौत याग हो या स्मार्त याग या अनुष्ठान हो, सर्वत्र हवन का विधान होता ही है। क्योंकि यज्ञ की सम्पूर्णता हवन से ही होती है, जिसे पूर्णाहुति कहते हैं। अतः हवन या होम सभी अनुष्ठानों में होता है। इसके बिना यज्ञ की सम्पूर्णता ही नहीं होती है।

दुर्गासप्तशती होम विधान में विशेषरूप से जो कर्म किये जाते हैं उन्हीं का निरूपण यहाँ किया जा रहा है। क्योंकि होम के पहले पंचभूसंस्कार, कुशकण्डिका, आद्याज्यहोम, प्रायश्चित्तहोम आदि विधियों का ज्ञान आपको हो चुका है। अतः यहाँ केवल मुख्य कार्यों का ही निर्देश आपको दिया जा रहा है। इसके साथ ही होम के विषय में अन्य विधियों का भी ज्ञान कराया जायेगा, जैसे होमीयवस्तु क्या है? होम में कितनी मात्रा तिल आदि की होनी चाहिए। होम में ब्राह्मणों की संख्या कितनी हो? यह सम्पन्न कैसे हो? आदि बहुत सारी बातें आपको यहाँ बताई जायेगी।

सर्वप्रथम दुर्गासप्तशती होम में 10 दुर्गापाठ से हवन होगा अर्थात् प्रत्येक अध्याय के प्रत्येक श्लोकों से तिल, आज्य, पायस आदि द्रव्यों से देवी के निमित्त होम करना चाहिए। क्योंकि लिखा है -

प्रतिश्लोकं च जुहुयात् पायसं तिलसर्पिषा ।
जुहुयात् स्तोत्रमन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः ।।
भूयोनामपदैर्देवीं पूजयेत सुसमाहितः ।

अर्थात् सप्तशती का प्रत्येक श्लोकमन्त्र रूप है। उससे तिल और घृत से मिली हुई खीर (पायस) की आहुति दें। अथवा इसमें जो स्तोत्र आये हैं, उन्हीं के मन्त्रों से चण्डिका के लिए पवित्र हविष्य का होम करें। तथा दुर्गा जी के सहस्रनामावली से भी होम करने का विधान यहाँ प्राप्त होता है। यह एक सामान्यविधि है। पुस्तक के सहारे शुद्धोच्चारणपूर्वक सभी के द्वारा यह कर्म किया जा सकता है। परन्तु कुछ आवश्यक जानने योग्य शास्त्रीय बातें भी हैं - जैसे शाकल्य का परिमाण (मात्रा) क्या हो? हवन कैसे करे? आज्य किसे कहते हैं? तिल का महत्त्व क्या है? अग्नि का ध्यान? चरु किसे कहते हैं? अग्नि की सात जिह्वा कौन-कौन सी है? अग्नि को प्रज्वलित कैसे करें? आदि बहुत आवश्यक जिज्ञासाओं का शास्त्रीय समाधान आपके सामने रखा जा रहा है। जो आज के समय में जानना अत्यन्त अनिवार्य है।

4.3.1 हवनीय द्रव्य (शाकल्य) और उसका परिमाण

'व्रीहीन् यवान्वा हविषि' 'होमं समारभेत् सर्पिर्यवव्रीहितिलादिना' इन श्रुति-स्मृति- प्रमाणों से तिल, यव, चावल और घृत की ही हवि संज्ञा सिद्ध होती है। हवनादि में विशेषतया उपर्युक्त हविर्द्रव्य का ही अधिक उपयोग होता है।

हवनार्थ हवनीय द्रव्य की आहुति देने के विषय में शास्त्रज्ञों ने नियमित व्यवस्था कर दी है। अतः याज्ञिकों को उचित है कि द्रव्य के विषय में जो परिमाण बतलाया गया है तदनुकूल द्रव्य-योजना कर हविर्द्रव्य का व्यवहार करना चाहिये। शास्त्रानुमोदित मार्ग के अनुकूल कार्य करने से ही उचित फल प्राप्त होता है, अन्यथा अनेक प्रकार की हानि भोगनी पड़ती है। हविर्द्रव्य के परिमाण का

विववरण शास्त्रों में इस प्रकार मिलता है-

तिलार्धं तण्डुला देयास्तण्डुलार्धं यवास्तथा।
यवार्धं शर्कराः प्रोक्ताः सर्वार्धं च घृतं स्मृतम् ।।

तिल का आधा चावल और चावल का आधा जौ देना चाहिये जौ से आधा शर्करा कही गई है और सबसे आधा घृत कहा गया है।

तिलार्धं तण्डुलाः प्रोक्तास्तण्डुलार्धं यवास्तथा।
तण्डुलैस्त्रिगुणं चाज्यं यथेष्टं शर्करा मता ।।

तिल के आधे चावल कहे गये हैं, चावलों के आधे जौ और चावलों से तिगुना घृत कहा गया है। शर्करा जितनी इच्छा हो उतनी कही गई है।

तिलास्तु द्विगुणाः प्रोक्ता यवेभ्यश्चैव सर्वदा।
अन्ये सौगन्धिकाः स्निग्धा गुग्गुलादि यवैः समाः ।।

यव की अपेक्षा तिल को द्विगुणित रखना चाहिए और अन्य सुगन्धित गुग्गुल इत्यादि द्रव्यों को यव के बराबर ही रखना चाहिए।

तिलार्धं तु यवाः प्रोक्ता यवार्धं तण्डुलाः स्मृताः ।
तण्डुलार्धं शर्कराः प्रोक्ता आज्यभागचतुष्टयम् ।।

तिल का आधा यव, यव का आधा चावल, चावल की आधी चीनी और चतुर्गुण घृत से शाकल्य का निर्माण उत्तम कहा गया है। यही पक्ष उत्तम एवं ग्राह्य है।

तिलाधिक्ये भवेल्लक्ष्मीर्यवाधिक्ये दरिद्रता।
घृताधिक्ये भवेन्मुक्तिः सर्वसिद्धिस्तु शर्करा ।।

तिल की अधिकता से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है और यव की अधिकता से दरिद्रता की प्राप्ति होती है। घृत के आधिक्य से मुक्ति और शर्करा के आधिक्य से सर्वसिद्धि होती है।

आयुःक्षयं यवाधिक्यं यवसाम्यं धनक्षयम्।
सर्वकामसमृद्ध्यर्थं तिलाधिक्यं सदैव हि ।।

तिल से यव के अधिक होने पर आयु का नाश होता है, तिल के बराबर यव के रहने पर धन का नाश होता है, अतः सर्वदा तिल की अधिकता ही उचित है। इससे सम्पूर्ण कार्यों की सिद्धि होती है।

तिलाः कृष्णा घृताभ्यक्ताः किंचिद्यवसमन्विताः।

घृत से सने काले तिल, कुछ यवों से युक्त हवनीय कहे गये हैं।

अक्षतान्वा तिलान्वापि यवान्वा समिधोऽपि वा।
शम्भवायेति जुहुयात्सर्वास्तानाज्यसिक्तकान् ।।

अक्षत (चावल) अथवा तिल या जौ अथवा समिधों को घी में डुबोकर कर ‘नमः

शम्भवाय' इस मन्त्र से आहुति देनी चाहिये।

इस प्रकार उपर्युक्त मत-मतान्तरों की आलोचना से 'बहुवचनं .... प्रमाणम्' (अनेक वचन जिस विषय को कहें वही प्रमाणभूत है। इस न्याय से यही निष्कर्ष निकलता है कि तिल की अधिकता से ही यजमान को सर्वविध फल की प्राप्ति होती हैं।

कहीं-कहीं ग्रन्थ-विशेष में 'यवार्द्धं तण्डुलाः प्रोक्ताः तण्डुलार्द्धं तथा तिलाः' यह वचन भी मिलता है। यद्यपि यह वचन यवाधिकता का ही विधान सिद्ध करता है, किन्तु सहायक प्रामाणिक वचनान्तरों की न्यूनता के कारण यवाधिक्य सर्वथा उपेक्षणीय और त्याज्य है।

हवनीय द्रव्य का एकादश विभाग आवश्यक है

पंचभागास्तिलाः प्रोक्तास्त्रिभागास्तण्डुलास्तथा।

द्वौ भागौ च यवस्योक्तौ भागैकं गुग्गुलादिकम् ॥

रुद्रभागैः कृते होमे जायते सिद्धिरुत्तमा।

पाँच हिस्सा तिल, तीन हिस्सा चावल, दो हिस्सा जौ और एक हिस्से में गुग्गुल इत्यादि सुगन्धित द्रव्य-इस प्रकार एकादश भागों के संयुक्त हवनसामग्री से जो हवन किया जाता है, वह सर्वप्रकार की उत्तम सिद्धि हो देता है।

4.3.2 नित्य हवन में विहित द्रव्य के अभाव में प्रतिनिधि द्रव्य

नित्य हवन में विहित द्रव्य के अभाव में प्रतिनिधि द्रव्य से भी कार्य हो सकता है। महर्षि कात्यायन कहते हैं-

नित्ये सामान्यतः प्रतिनिधिः स्यात्।

घृतार्थे गोधृतं ग्राह्यं तदभावे तु माहिषम्।

आजं वा तदभावे तु साक्षात्तैलमपीष्यते।।

तैलाभावे ग्रहीतव्यं तैलं जर्तिलसम्भवम्।

तदभावोऽतसीस्नेहः कौसुम्भः सर्षपोद्भवः।।

वृक्षस्नेहोऽथवा ग्राह्यः पूर्वालाभे परः परः।

तदभावे यवव्रीहिश्यामाकान्यतमोद्भवः।।

हवन के लिये सबसे अच्छा गोघृत होता है, उसके अभाव में बकरी का घृत, उसके अभाव में शुद्ध तेल से हवन करना चाहिये। तेल के अभाव में जर्तिल (जंगल में होने वाला तिल) का तेल, उसके अभाव में तीसी का तेल, उसके अभाव में कुसुम्भ, उसके अभाव में पीली सरसों, उसके अभाव में सरसों का तेल, उसके अभाव में गोंद ग्राह्य है। इनमें जो-जो वस्तु पहले वाली न मिले, उसके स्थान में उसके आगे की लिखी हुई वस्तु से काम चलावे। पूर्वोक्त वस्तुओं के अभाव में यव, चावल, साँवाँ - इन तीनों में से किसी एक से काम करे।

आज्यहोमेषु सर्वेषु गव्यमेव भवेद् घृतम्।

तदलाभे तु माहिष्यं आजमाविकमेव वा ।।

तदभावे तु तैलं स्यात्तदभावे तु जार्तिलम् ।

तदभावे तु कौसुम्भं तदभावे तु सार्षपम् ।।

समस्त प्रकार के घृत के हवन में गौ का घृत ही उचित है। गाय घृत के अभाव में भैंस का अथवा बकरी एवं भेड़ का घृत, उसके अभाव में तेल, उसके अभाव में जंगल में होने वाले तिल का तेल, उसके अभाव में कुसुम्भ और उसके अभाव में सरसों का ग्रहण उचित है।

गव्याज्याभावतश्छागोमहिष्यादेर्घृतं क्रमात् ।

तदभावे गवादीनां क्रमात् क्षीरं विधीयते ।।

तदभावे दधि ग्राह्यमलाभे तैलमपीष्यते ।

यदि गौ के घृत का अभाव हो तो क्रम से बकरी या भैंस आदि घृत विहित है। यदि उसका भी अभाव हो तो उसके बदले क्रम से गौ आदि का दुग्ध कहा गया है। यदि दही भी न मिले तो तेल भी लिया जा सकता है।

दध्यलाभे पयो ग्राह्यं मध्वलाभे तथा गुडः ।

घृतप्रतिनिधिं कुर्यात् पयो वा दधि वा नृप ।।

दधि के अभाव में दुग्ध से, शहद के अभाव में गुड़ से, घृत के अभाव में दुग्ध अथवा दधि से काम चलावे।

आज्य शब्द का अर्थ

घृतं वा यदि वा तैलं पयो दधि च यावकम्।

संस्कारयोगादेतेषु आज्यशब्दोऽभिधीयते।।

घृत हो अथवा तेल हो, दूध हो या दही हो अथवा यावक (आधे भुने या पके हुए जौ आदि) हो संस्कार-सम्बन्ध होने से इन सबको आज्य शब्द से कहा जाता है।

घृत के उत्तम, मध्यम और अधम का निर्देश

उत्तमं गोघृतं प्रोक्तं मध्यमं महिषीभवम् ।

अधमं छागलीजातं तस्माद् गव्यं प्रशस्यते ।।

गोघृत सर्वोत्तम, भैंस का घृत मध्यम और बकरी का घृत अधम कहा गया है, अतः इनमें गोघृत ही प्रशस्त है।

घृतादि के अभाव में तिल ग्राह्य है

यत्र यत्र च संकीर्णमात्मानं मन्यते द्विजः ।

तत्र तत्र तिलैर्होमो गायत्र्या वाचनं तथा ।।

जहाँ-जहाँ घृत के अभाव के कारण द्विज अपनी आत्मा में संकीर्णता (संकोच) का अनुभव करे, वहाँ-वहाँ वह तिल से होम करे और गायत्री का जप करे।

तिल का महत्त्व

तिलान् ददाति यः प्रातस्तिलान् स्पृशति खादति ।

तिलस्नायी तिलांजुह्वन् सर्वं तरति दुष्कृतम् ।।

जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल तिल का दान करता है, तिल का स्पर्श करता है, तिल को खाता है, तिल से स्नान करता है और तिल से हवन करता है, वह सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है।

तिलाः पुण्याः पवित्राश्च सर्वपापहराः स्मृताः ।
शुक्लाश्चैव तथा कृष्णा विष्णुगात्रसमुद्भवाः ।।

तिल अत्यन्त पवित्र और पुण्यप्रद है तथा वह समस्त प्रकार के पापों को दूर करने वाला है। वह तिल सफेद और काला दो प्रकार का भगवान् विष्णु के शरीर से उत्पन्न हुआ है।

हवन में घृताक्त तिल का उपयोग उचित है

'घृताक्तं जुहुयाद्धविः'

घृताक्त हवि से हवन करना चाहिये।

हवनीय द्रव्य

पायसान्नैस्त्रिमध्वाक्तैद्राक्षारम्भाफलादिभिः ।
मातुलुंगैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलयुतैस्तिलैः ।।
जातीफलैराम्रफलैरन्यैर्मधुरवस्तुभिः ।

त्रिमधुर अथवा त्रिमधु (मिश्रित मिश्री, शहद और घृत) से, मिश्रित खीर से, दाख, केले के फल आदि से, बिजौरा नीबू (चकोतरा) से, ईख के टुकड़े से, नारियल की गिरी से युक्त तिलों से, जातीफल से, आम के फल से, अन्यान्य और भी मधुर मीठी वस्तुओं से हवन करना चाहिये।

हवन में विहित धान्य

कृतमोदनसक्त्वादि तण्डुलादि कृताकृतम् ।
व्रीह्यादि चाकृतं प्रोक्तमिति हव्यं त्रिधा बुधैः ।।

सत्तू आदि सिद्ध अन्न, तण्डुल (चावल) आदि सिद्ध और असिद्ध दोनों प्रकार के और व्रीहि आदि केवल असिद्ध यों विद्वानों ने होम में ये तीन प्रकार के हविर्द्रव्य कहे हैं।

कामनाभेद से हवनीय पदार्थ का विचार

दूर्वा भव्याश्च समिधो गोघृतेन समन्विताः ।
होतव्याः शान्तिके देवि शान्तिर्येन भवेत् स्फुटम् ।।
समिधो राजवृक्षोत्था होतव्याः स्तम्भकर्मणि ।
मेषीघृतेन संयुक्ताः स्तम्भसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।।
खदिरा मारणे प्रोक्ताः कटुतैलेन संयुताः ।
होतव्याः साधकेन्द्रेण मारणं येन सिद्ध्यति ।।
उच्चाटने चूतजाता कटुतैलेन संयुताः ।

उच्चाटयेन्महीं सर्वां सशैलवनकाननाम् ।।
वश्ये चैव सदा होमः कुसुमैर्दाडिमोद्भवैः ।
अजाघृतेन देवेशि! वशयेत् सचराचरम् ।।
विद्वेषे चैव होतव्या उन्मत्तसमिधो मताः ।
अतसीतैलसंयुक्ता विद्वेषणकरं परम् ।।

हे देवि! शान्ति कर्म में गोघृत से तर दूर्वोद्भव (दूब की) समिधाओं का हवन करना चाहिये जिससे निश्चय (निस्सन्देह) शान्ति होती है।

यदि किसी का स्तम्भन करना हो तो राजवृक्ष (धन वहेड़ा) की समिधाओं का भेड़ के घी से तरकर हवन करना चाहिये। निश्चय ही स्तम्भन कर्म में सिद्धि होती है।

मारण कर्म में खैर की समिधाएँ कही गई हैं। कडुवे तेल में भिगो कर उनका श्रेष्ठ साधक पुरुष को हवन करना चाहिये, जिसमें मारण की सिद्धि होती है।

उच्चाटन कर्म में कडुवे तेल से संयुक्त आम की समिधाएँ कही गयी है, उनसे हवन करता हुआ साधक पुरुष और तो और पर्वत, वन, महावन सहित सारी पृथ्वी का उच्चाटन कर देता है।

हे देवेशि! वश्य कर्म में दाडिम के फूलों से बकरी के घृत के साथ सदा होम करना चाहिये, जिससे साधक चराचर जगत् को वश में कर लेता है।

विद्वेष कर्म में धत्तूर वृक्ष की समिधाओं का हवन कहा गया है, उन्हें अलसी (तीसी) के तेल में भिगाकर हवन करने से परम विद्वेषण होता है।

अन्यत्र भी लिखा है-

पुत्रार्थे शालिबीजेन धनार्थे बिल्पत्रकैः।
आयुष्कामस्तु दूर्वाभिः पुष्टिकामस्तु वेतसैः।।
कन्याकामस्तु लाजाभिः पशुकामो घृतेन तु।
विद्याकामस्तु पालाशैर्दशांशेन तु होमयेत्।।
धान्यकामो यवैश्चैव गुग्गुलेन रिपुक्षये।
तिलैरारोग्यकामस्तु व्रीहिभिः सुखमश्नुते।।

पुत्र प्राप्ति के लिये साठी के बीजों से, धन प्राप्ति के लिये बिल्व के पत्रों से, आयु की कामनावाला पुरुष दूर्वा से, पुष्टि चाहने वाला पुरुष वेंत की समिधाओं से, कन्या चाहने वाला पुरुष धान के लावों से, पशु चाहने वाला पुरुष घृत से और विद्या चाहने वाला पुरुष पलाश की समिधाओं से दशांश होम करे। धान्य (अन्न) चाहने वाला यवों से, शत्रुक्षय के निमित्त गुग्गुल से तथा आरोग्य चाहने वाला तिलों से हवन करे। व्रीहियों (धानों) से हवन करने वाला सुख प्राप्त करता है।

हवनीय पदार्थ के अभाव में विचार

यथोक्तवस्त्वसम्पत्तौ ग्राह्यं तदनुकारि यत् ।
यवानामिव गोधूमा व्रीहीणामिव शालयः ।।

हवन के लिये जो सामग्री कही गयी है, यदि उसका अभाव हो, तो अनुकूल वस्तु लेना चाहिये। जैसे यव की जगह गेहूँ और धान की जगह साठी लेना चाहिये।

कृमि-कीटादि से युक्त हवनीय पदार्थ का त्याग उचित है

कृमिकीटपतंगादि द्रव्येषु पतितं यदि ।

तद् द्रव्यं वर्जयेन्नित्यं देवयागेषु सर्वतः ।।

तद्दैवत्यं शतं हुत्वा चान्यद् द्रव्यं समाहरेत् ।

यज्ञादि में प्रयुक्त होने वाले हवनीय पदार्थों में यदि कीड़े-मकोड़े, पतंग आदि गिर जाये ंतो उस हवनीय सामग्री का त्याग कर देना चाहिये और उस यज्ञ के प्रधान देवता के निमित्त विशेष रूप से सौ बार घृत की आहुति देकर हवनार्थ दूसरे पवित्र द्रव्य को लाना चाहिए।

हवनीय पदार्थ की गड़बड़ी से यजमान की हानि

यत्कीटावपन्नेन जुहुयादप्रजा अपशुर्यजमानः स्यात् ।

यज्ञाग्नि में कूड़ा, कंकर (पत्थर आदि) कीड़ी आदि जन्तुओं से युक्त हवनीय द्रव्य के द्वारा हवन करने से यजमान पुत्रादि पशु और धनादि से रहित हो जाता है।

चरु

चरति होमादिकमस्मादसौ चरुः ओदनविशेषः।

यह (होता) जिससे होम करता है वह चरु कहलाता है अर्थात् ओदन-विशेष (एक प्रकार का भात)।

चरुर्वै देवानामन्नमोदनो हि चरुः।

चरु देवताओं का अन्न है। ओदन (भात) को चरु कहते हैं।

अनिर्गतोष्मा सुस्विन्नो ह्यदग्धोऽकठिनश्चरुः।

न चातिशिथिलः पाच्यो न वीतरसो भवेत्।।

जिसकी उष्णता (गर्मी) निकल न गई हो अर्थात् गर्मागर्म जो खूब पका हो जला न हो और कड़ा न हो वह चरु है। उसे इस तरह पकाना चाहिये जिससे वह न तो बहुत गीला रहे और न उसका गीलापन बिलकुल चला जाय।

अन्वर्थः श्रपितः स्विन्नो ह्यदग्धोऽकठिनः शुभः।

न चातिशिथिलः पाच्यो न चरुश्चारसस्तथा।।

पकाया हुआ हो, खूब उबला हुआ अर्थात् गला हुआ हो, जला हुआ न हो, कड़ा न हो, नाम के अनुरूप चरु (ओदन) शुभ माना गया है। उसे (चरु को) इस प्रकार पकाना चाहिये जिससे वह न तो बहुत गीला रहे और न बिना रस का (सूखा) हो।

हविष्य पदार्थ

चरुभैक्षसक्तुकणयावकपयोदधिघृतमूलफलोदकानि हवींष्युत्तरोत्तरं प्रशस्तानि।

चरु (भात), भिक्षा का अन्न, भुने हुए जौ का सत्तू कण, यावक (आधे भुने हुए जौ), गोदुग्ध, दधि, घृत, मूल, फल और जल ये खाने के योग्य हविष्यान्न है। इनमें आगे-आगे की वस्तु श्रेष्ठ है।

हविष्यान्नं तिला नीवारा व्रीहयो यवाः ।
इक्षवः शालयो मुद्गाः पयो दधि घृतं मधु ।।
हविष्येषु यवा मुख्यास्तदनु व्रीहयः स्मृताः ।
व्रीहीणामप्यलाभे तु दध्ना वा पयसाऽपि वा ।।
यथोक्तवस्त्वसम्पत्तौ ग्राह्यं तदनुकल्पतः ।
यवानामिव गोधूमा व्रीहीणामिव शालयः ।।
अभावे व्रीहियवयोर्दध्ना वा पयसापि वा ।।

तिल, उरद, तिन्नी, भदौह, धान, जौ, ईक्ष, वासमती, मूँग, दूध, दही, घी और शहद ये हविष्यान्न हैं। हविष्य अन्नों में जौ मुख्य है, उसके बाद धानों का स्थान कहा गया है। यदि धान भी न मिल सके तो दूध से अथवा दही से काम लेना चाहिये। जहाँ जो वस्तु कही कई है वह यदि न मिल सके तो उसके स्थान में उसके अनुकल्प का (उससे मिलते जुलते गुणवाली वस्तु का) ग्रहण करना उचित है। जैसे जौ के स्थान में गेहूँ और धानों के स्थान में वासमती धान है। इनके अभाव में धान, जो, दधि अथवा दुग्ध का ग्रहण उचित है।

हविष्येषु यवा मुख्यास्तदनुं व्रीहयः स्मृताः ।
माषकोद्रवगौरादि सर्वालाभे विवर्जयेत् ।।

हविष्य अन्नों में जौ मुख्य है, उसके बाद धानों को कहा है। यदि हविष्य कोई भी प्राप्त न हो, तो उड़द, कोदों और सरसों का कभी भी हविष्य रूप में उपयोग न करे।

ज्ञात्वा स्वरूपमाग्नेयं योऽग्नेराराधनं चरेत् ।
ऐहिकाऽऽमुष्मिकैः कामैः सारथिस्तस्य पावकः ।।
आहूयैव तु होतव्यं यो यत्र विहितो भवेत् ।

जो मनुष्य अग्नि के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान न कर हवन करता है उसका किया हुआ हवन सर्वथा निष्फल होता है, न उसका उत्तम संस्कार होता है और न वह कर्मफल को ही प्राप्त करता है। जो अग्नि के स्वरूप को जानकर अग्नि की आराधना करता है। उसके ऐहिक तथा पारलौकिक कार्यों में अग्नि सारथि का कार्य करता है। अतः जिस अग्नि का जहाँ विधान हो उस अग्नि का उस कार्य में आह्वान करके ही हवनादि करना चाहिये।

अग्नि का ध्यान

सप्तहस्तश्चुःशृंगः सप्तजिह्वो द्विशीर्षकः ।
त्रिपात्प्रसन्नवदनः सुखासीनः शुचिस्मितः ।।
मेषारूढो जटाबद्धो गौरवर्णो महौजसः ।
धूम्रध्वजो लोहिताक्षः सप्तार्चिः सर्वकामदः ।।

शिखाभिर्दीप्यमानाभिरूर्ध्वगाभिस्तु संयुतः।
स्वाहां तु दक्षिणो पार्श्वे देवी वामे स्वधां तथा।।
विभ्रद्दक्षिणहस्तैस्तु शक्तिमन्नं स्रुचं स्रुवम्।
तोमरं व्यजनं वामे घृतपात्रं च धारयन्।।
आत्माभिमुखमासीन एवंरूपो हुताशनः।

अग्नि के सात हाथ, चार सींग, सात जिह्वाएँ, दो सिर और तीन पैर हैं। वे प्रसन्न मुख और मन्दहास्ययुक्त सुखपूर्वक आसन पर विराजमान रहते हैं। वे मेष (भेड़ा) पर आरूढ़ जटाबद्ध, गौरवर्ण, महातेजस्वी, धूम्रध्वज, लाल नेत्रवाले, सात ज्वालावाले, सब कामनाओं को पूर्ण करने वाले, देद्दीप्यमान, ऊर्ध्वगामी, ज्वालाओं से युक्त है। उनके दक्षिण भाग में स्वाहा और वाम भाग में स्वधादेवी विराजमान हैं और वे अपने दाहिने हाथों में शक्ति, अन्न, स्रुक्, स्रुव, तोमर, पंखा और बाएँ हाथ में घृतपात्र धारण किये हुए हैं। अपने सम्मुख उपस्थित ऐसे रूपवाले अग्नि का ध्यान करना चाहिये।

अग्नि का दूसरा ध्यान इस प्रकार लिखा है-

इष्टं शक्तिं स्वस्तिकाभीतिमुच्चै-
र्दीर्घैर्दोर्भिर्धारयन्तं जपाभम्।
हेमाकल्पं पद्मसंस्थं त्रिनेत्रं
ध्यायेद् वह्निं वह्निमौलिं जटाभिः।।

जो अपनी ऊँची भुजाओं में इष्टमुद्रा, शक्ति (आयुध-विशेष), स्वस्तिक, अभय मुद्रा को धारण किये हुए, जपाकुसुम की तरह कान्तिवाले, सुवर्ण के आभूषणों को धारण करने वाले, कमल पर बैठे हुए, तीन नेत्रवाले और जिनका मस्तक अग्नि की ज्वालाओं से धधक रहा है, ऐसे अग्निदेव का ध्यान करे।

अग्नि का तीसरा ध्यान यों लिखा है-

अग्नि के दो मुख, एक हृदय, चार कान, दो नाक, दो मस्तक, छः नेत्र, पिंगल वर्ण और सात जिह्वाएँ हैं। उनके वाम भाग में तीन हाथ और दक्षिण भाग में चार हाथ हैं। स्रुक्, स्रुवा, अक्षमाला और शक्ति-ये सब उनके दाहिने हाथों में हैं। उनके तीन मेखला और तीन पैर हैं। वे घृतपात्र और दो चँवर धारण किये हुए हैं। भेड़ (छाग) पर सवार हैं। उनके चार सींग हैं। बाल सूर्य के सदृश उनकी अरुण कान्ति है। वे यज्ञोपवीत धारण करके जटा और कुण्डलों से सुशोभित है।

अग्नि के मुख आदि का विचार

सधूमोऽग्निः शिरो ज्ञेयो निधूर्मश्चक्षुरेव च।
ज्वलत्कृशो भवेत्कर्णः काष्ठलग्नश्च नासिका।।
अग्निर्ज्वालायते यत्र शुद्धस्फटिकसन्निभः।
तन्मुखं तस्य विज्ञेयं चतुरंगुलमानतः।।

धूमसहित अग्नि को अग्नि का सिर जानना चाहिये, धूमरहित अग्नि अग्नि का नेत्र है, जलता हुआ मन्द अग्नि अग्नि का कान है, काठ से सटा हुआ अग्नि की नासिका है, जहाँ शुद्ध स्फटिक के तुल्य अग्नि ज्वालायुक्त है (दहकता है), वहाँ नाप से चार अंगुल का वह अग्नि मुख जानना चाहिये।

4.4 अग्नि की जिह्वा के नाम

काली कराली च मनोजवा च

सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा।

स्फुलिंगिनी विश्वरूची च देवी

लेलायमाना इति सप्त जिह्वाः।।

काली (काले रंगवाली), कराली (अत्यन्त उग्र), मनोजवा (मन की तरह अत्यन्त चंचल), सुलोहिता (सुन्दर लाल रंगवाली), सुधूम्रवर्णा (सुन्दर धूएँ के सदृश रंगवाली), स्फुलिंगिनी (चिनगारियों वाली) और विश्वरुची देवी (सब ओर से प्रकाशित) इस प्रकार ये सात प्रकार की लपलपाती हुई अग्नि की जिह्वाएँ हैं।

कराली धूमिनी श्वेता लोहिता नीललोहिता।

सुवर्णा पद्मरागा च सप्त जिह्वा विभावसोः।।

कराली, धूमिनी, श्वेता, लोहिता, नीललोहिता, सुवर्णा और पद्रागा - ये अग्नि की सात जिह्वाएँ कही गई है।

हिरण्या कनका रक्ता कृष्ण तदनु सुप्रभा ।

बहुरूपाऽतिरिक्ता च वह्निजिह्वा च सप्त च ।।

हिरण्या, कनका, रक्ता, कृष्णा, सुप्रभा, बहुरूपा और अतिरिक्ता - ये अग्नि की सात जिह्वाएँ कही गई है।

कर्म-भेद से अग्नि की जिह्वाओं के नाम

विवाहे वारुणी जिह्वा मध्यमा यज्ञकर्मसु ।
उत्तरा चोपनयने दक्षिणा पितृकर्मसु ।।
प्राचीना सर्वकार्येषु ह्याग्नेयी सर्वकर्मसु ।
ऐशानी चोग्रकार्येषु ह्येतद् होमस्य लक्षणम् ।।

विवाह में वारुणी, यज्ञ कर्म में मध्यमा, उपनयन में उत्तरा, पितृकर्म में दक्षिणा, समस्त कार्य में प्राचीना, समस्त कर्म में आग्नेयी और उग्र कर्म में ऐशानी नाम की जिह्वा कही गई है। यही हवन का लक्षण है।

अग्नि को प्रज्वलित करने का विचार

न पाणिना न शूर्पेण न च मेध्याजिनादिभिः ।

मुखेनोपधमेदग्निं मुखादेवव्यजायत ।।

पटकेन भवेद् व्याधिः शूर्पेण धननाशनम् ।
पाणिना मृत्युमाप्नोति कर्मसिद्धिर्मुखेन तु ।।

यज्ञाग्नि को न तो हाथ से दहकावे, न सूप से और न पवित्र चर्म आदि से (आदि पद से वस्त्र का ग्रहण है)। मुख से ही यज्ञाग्नि धौंके, क्योंकि वह मुख से उत्पन्न हुआ है - 'मुखादग्निरजायत'।

वस्त्र (चर्म आदि) से अग्नि धौंकने पर व्याधि (रोग) होती है, सूप से धौंकने पर धन-नाश होता है, हाथ से धौंकने पर मरण होता है, किन्तु मुख से धौंकने पर कर्मसिद्धि होती है।

होतव्ये च हुते चैव पाणिशूर्पस्फ्यदारुभिः ।
न कुर्यादग्निधमनं कुर्याद्वा व्यजनादिना ।।
मुखेनैके धमन्त्यग्निं मुखाद्ध्येषोऽध्यजायत ।
नाग्निं मुखेनेति च यल्लौकिके योजयन्ति तम् ।।

हाथ, सूप, स्फ्य और लकड़ियों से हवन करना हो और हवन किया गया हो - ऐसी यज्ञाग्नि में अग्निधमन न करे (अग्नि को धौंके) यदि धौंके तो पंखे आदि से। कुछ लोग मुख से अग्नि धौंकते हैं, क्योंकि यह मुख से ही उत्पन्न हुआ है। 'मुख से अग्नि की उत्पत्ति हुई' ऐसी श्रुति है। 'नाग्निं मुखेनोपधमेन् नग्नां नेक्षेत च स्त्रियम्' यह स्मृतिवचन भी मुख से अग्नि को धौंकने का निषेध करता है, उसकी लौकिक अग्नि में योजना करते हैं अर्थात् लौकिक अग्नि को मुख से नहीं धौंकना चाहिये, किन्तु पंखे आदि से धौंकना चाहिये। यज्ञीय अग्नि को तो मुख से धौंकना चाहिये।

न कुर्यादग्निधमनं कदाचिद् व्यजनादिना ।
मुखेनैव धमेदग्निं धमन्या वेणुजातया ।।

यज्ञाग्नि को पंखे आदि से कभी न धौंके, बाँस की बनी हुई धौंकनी द्वारा मुख से ही यज्ञाग्नि को दहकावे।

न कुर्यादग्निधमनं पाणिशूर्पादिभिः क्वचित् ।
मुखेनैव धमेदग्निं यतो वेदा विनिःसृताः ।।

यज्ञाग्नि को हाथ से अथवा सूप आदि से कदापि प्रज्वलित न करे, किन्तु मुख से ही प्रज्वलित करे, क्योंकि मुख से वेदों का प्रादुर्भाव हुआ है।

जुहूषंश्च हुते चैव पाणिशूर्पस्फ्यदारुभिः ।
न कुर्यादग्निधमनं कुर्याच्च व्यजनादिना ।।
मुखेनैके धमन्त्यग्निं मुखाद्ध्येषोऽध्यजायत ।।

अग्नि में हवन करने की इच्छा हो अथवा हवन हो चुका हो, दोंनों ही अवस्थाओं में हाथ, सूप, स्फ्य (यज्ञपात्र) तथा काष्ठ आदि से अग्नि को नहीं धौंकना चाहिये, पंखे आदि से भी अग्नि को नहीं धौंकना चाहिये। मुख से ही अग्नि को धौंकते हैं, क्योंकि यह (अग्नि) मुख से उत्पन्न हुआ है।

न पक्षकेणोपधमेन्न शूर्पेण न पाणिना।

मुखेनाग्निं समिन्धीत मुखादग्निरजायत।।

मयूर आदि के पंख से निर्मित पंखे से, सूप से और हाथ से अग्नि को प्रज्वलित नहीं करना चाहिये। मुख से ही अग्नि को प्रज्वलित करना चाहिये, क्योंकि भगवान् के मुख से अग्नि उत्पन्न हुआ है।

न पक्षकेणोपधमेन्न शूर्पेण न पाणिना।
मुखेनैव धमेदग्निं मुखादग्निरजायत।।

विभिन्न वस्तुओं से अग्नि के जलाने का विभिन्न फल

वस्त्रवाते भवेद् व्याधिः शूर्पेण च धनक्षयः।
पाणिना जायते मृत्युः कर्मसिद्धिर्मुखेन तु।।

वस्त्र द्वारा अग्नि को प्रज्वलित करने से रोग होता है, सूप द्वारा अग्नि को प्रज्वलित करने से धनक्षय होता है, हस्तद्वारा अग्नि को प्रज्वलित करने से मृत्यु होती है और मुखद्वारा अग्नि को प्रज्वलित करने से समस्त प्रकार के कर्मों की सिद्धि होती है।

जुहूतश्चाथ पर्णेन पाणिशूर्पपटादिना।
न कुर्यादग्निधमनं तथा च व्यजनादिना।।
पर्णेनैव भवेद् व्याधिः शूर्पेण धननाशनम्।
पाणिना मृत्युमाप्नोति पटेन विफलं भवेत्।।
व्यजनेनातिदुःखाय आयुः पुण्यं मुखाद्धमात्।
मुखेन धमयेदग्निं मुखादग्निरजायत।।
अग्निं मुखेनेति तु यल्लौकिके योजयेच्च तत्।
वेणोरग्निप्रसूतित्वाद्वेणुरग्नेश्च पातनः।
तस्माद्वेणुधमन्यैव धमेदग्निं विचक्षणः।।

अब आपको होम के विषय में बहुत सारे ग्रन्थों का प्रमाण देने के बाद आहुति शब्द की व्याख्या बताते हैं।

आहुति शब्द का अर्थ

लोक में 'आहुति' शब्द ही प्रचलित है। आङ् पूर्वक 'हु दानादानयोः' इस धातु से क्तिन् प्रत्यय करने पर 'आहुति' शब्द बनता है। 'आहुति' शब्द में तो आङ्पूर्वक ह्वेञ्' धातु से 'क्तिन्' प्रत्यय होता है।

देवताओं के उद्देश्य से वेदमन्त्रोच्चारणपूर्वक अग्नि में एक बार हविर्द्रव्य का जितना अंश 'स्वाहा' कहकर समर्पण किया जाय उसे 'आहुति' कहते हैं।

देवोद्देशेन वह्नौ मन्त्रेण हविः प्रक्षेप आहुतिः'

देवता के उद्देश्य से मन्त्र द्वारा अग्नि में जो हविर्द्रव्य डाला जाता है, उसे आहुति कहते हैं।

ह्वयति देवाननया सा आहूतिः। जुहोति प्रक्षिपति हविरनया इति वा। आहूतयो वै नामैता यदाहुतयः, एताभिर्देवान् यजमानो ह्वयति तदाहूतीनामाहूतित्वम्।

जिससे देवताओं को बुलाया जाय उसे 'आहूति' कहते हैं। अथवा जिससे हविर्द्रव्य का अग्नि में प्रक्षेप किया जाय उसे 'आहुति' कहते हैं। आहुति को आहुतित्व इसलिये है कि इनके द्वारा यजमान देवताओं को बुलाता है।

होम शब्द का अर्थ

देवतोद्देश्यपूर्वक मुख्यरूप से हविर्द्रव्य के प्रक्षेपात्मक त्याग को 'होम' कहते हैं। होम का लक्षण इस प्रकार लिखा है-

उपविष्टहोमाः स्वाहाकारप्रदानाः जुहोतयः।

जिस कर्म-विशेष में बैठकर स्वाहाकारपूर्वक हविर्द्रव्य का त्याग किया जाय, उसे 'होम' कहते हैं।

हवन के मन्त्र का निर्णय

यस्य देवस्य यो मोहस्तस्य मन्त्रेण होमयेत्

जो होम जिस देवता के उद्देश्य से हो, उसका उसी के मन्त्र से हवन करना चाहिये।

हवन करने की विधि

उत्तानेन तु हस्तेन अंगुष्ठाग्रेण पीडितम्।
संहतांगुलिपाणिस्तु वाग्यतो जुहुयाद्धविः।।

उत्तान (सीधे) हाथ से अंगूठे के अग्रभाग से हविर्द्रव्य को दबाकर हाथ की अंगुलियों को सटाकर मौन होकर हवन करना चाहिये।

पाण्याहुतिर्द्वादशपर्वपूरिका
कांसादिना चेत् स्रुवमात्रपूरिका।
दैवेन तीर्थेन च हूयते हविः
स्वंगारिणि स्वर्चिषि तच्च पावके।।

यदि पाण्याहुति हो अर्थात् हाथ से आहुति दी जाय तो हाथ के अंगुलियों के बारहों पर्व (पंउरियाँ) पूरे होने चाहिये। काँसे के चम्मच आदि से दी जाय, तो केवल स्रुव के बराबर होनी चाहिये। हवि का सुन्दर दहकते हुए अंगारवाले तथा खूब अधिक ज्वाला वाले अग्नि में दैवतीर्थ (अंगुलियों के अग्रभाग) से हवन किया जाता है।

आहुतिस्तु घृतादीनां स्रुवेणाधोमुखेन च।
हुनेत् तिलाद्याहुतीश्च दैवेनोत्तानपाणिना।।

अग्नि में घृत की आहुति देने के लिए स्रुवा का मुख नीचे करना चाहिये और तिल आदि की आहुति देने के लिए अपने हाथ को उत्तान (सीधा) करके देवतीर्थ से आहुति डालना चाहिये।

आहुति के प्रक्षेप का समय

मन्त्रेणोंकारपूतेन स्वाहान्तेन विचक्षणः।
स्वाहावसाने जुहुयाद् ध्यायन् वै मन्त्रदेवताम्॥

ऊँकार से पवित्र तथा स्वाहान्त मन्त्र से स्वाहा के अवसान में मन्त्र एवं देवता का ध्यान करता हुआ विद्वान् आहुति दे।

मन्त्रेणोंकारपूतेन स्वाहान्तेन विचक्षणः।
स्वाहावसाने जुहुयाद् ध्यायन्वै मन्त्रदेवताम्॥

ऊँकारपूर्वक (ऊँकार है पूर्व में जिसके) स्वाहान्त (स्वाहा है अन्त में जिसके ऐसे) मन्त्र से विद्वान् पुरुष को मन्त्र देवता का ध्यान करते हुए 'स्वाहा' के बाद अग्नि में हविष् का प्रक्षेप (त्याग) करना चाहिए।

स्वाहावसाने जुहुयात् स्वाहया सह वा हविः।
त्यागान्ते ब्रुवते केचिद् द्रव्यप्रक्षेपणं बुधाः॥

होता स्वाहा के अन्त से हवन करे अथवा स्वाहा के साथ करे। कुछ विद्वानों का मतह ै कि हविर्द्रव्य का अग्नि में प्रक्षेप करके ही 'स्वाहा' शब्द कहना चाहिए।

स्वाहान्ते जुहुयात् होता स्वाहया सह वा हविः।
त्यागान्ते ब्रुवते केचित् द्रव्यप्रक्षेपणं बुधाः॥

होता को स्वाहा के अन्त में हवन करना चाहिए (अग्नि में हविष् का त्याग करना चाहिए) अथवा स्वाहा के साथ ही कुछ विद्वान् हविष् त्याग (अग्नि में प्रक्षेपण) के बाद 'स्वाहा' कहते हैं।

स्वाहा कुर्यान्न मन्त्रान्ते न चैव जुहुयाद्धविः।
स्वाहाकारेण हुत्वाऽग्नौ पश्चान्मन्त्रं समापयेत्॥

मन्त्र के अन्त में स्वाहा न करे और न हविष् का हवन करे स्वाहाकार से अग्नि में हवन करके बाद में मन्त्र को समाप्त करे।

आदौ द्रव्यपरित्यागः पश्चाद्धोमो विधीयते।

प्रथम द्रव्य का परित्याग कर पश्चात् हवन करना चाहिए।

सकारे सूतकं विद्याद्धकारे मृत्युमादिशेत्।
आहुतिस्तत्र दातव्यः यत्र आकार दृश्यते॥

स्वाहा में स् व् आ और ह आ ये पाँच अक्षर हैं। सकार में सूतक जानना चाहिए और हकार में मृत्यु कहना चाहिए। अतः आहुति उस समय देनी चाहिए जिस समय हकारोत्तरवर्ती आकार दिखाई देता है अर्थात् स् के उच्चारण में आहुति सूतक के दोष से दुष्ट हो जाती है, हकार के उच्चारण में मृत्यु का भय होता है। इसलिए हकारोत्तरवर्ती आकार के उच्चारण के समय आहुतिप्रक्षेप करना चाहिए।

कुछ आचार्यों का 'स्वेच्छया जुहुयाद्धविः' यह भी मत है किन्तु यह मत ठीक नहीं है। स्वेच्छाचार से भयंकर अनवस्था दोष हो जाता है। अतः उपर्युक्त देवयाज्ञिक, विष्णुधर्म, कर्मकौमुदी एवं परशुरामकारिका आदि के ही मत मान्य और अनुकरणीय है।

आहुति देने का विचार

प्रश्न

अधोमुख ऊर्ध्वपादः प्राङ्मुखो हव्यवाहनः।
तिष्ठत्येव स्वभावेन आहुतिः कुत्र दीयते?॥

अग्नि (जो हवीय द्रव्य चरु आदि को तत्तत् देवताओं को पहुँचाता है) स्वभावतः ही अधोमुख (नीचे की ओर मुखवाला) ऊर्ध्वपाद (ऊपर की ओर पैरवाला) रहता है। उसका मुँह पूर्व की ओर रहता है ऐसी स्थिति में आहुति कहाँ दी जाय?।

उत्तर

सपवित्राम्बुहस्तेन वह्नेः कुर्यात्प्रदक्षिणम्।
हव्यवाट् सलिलं दृष्ट्वा बिभेति सम्मुखो भवेत्॥

हाथ में पवित्री और जल लेकर कर्ता अग्नि की प्रदक्षिणा करे। हव्यवाहन (अग्नि) जल को देखकर डर जाता है और सम्मुख (हवनकर्ता के सामने) हो जाता है। इसलिए सामने होम करना चाहिए।

4.4.1 विधिहीन अग्नि में हवन करने से हानि

क्षुत्तृट्क्रोधसमायुक्तो हीनमन्त्रो जुहोति यः।
अप्रवृद्धे सधूमे वा सोऽन्धः स्याज्न्मजन्मनि॥
स्वल्पे रूक्षे सस्फुलिंग वामावर्त्ते भयानके।
आर्द्रकाश्ठैश्च सम्पूर्णे फूत्कारवति पावके॥
कृष्णार्चिषि सदुर्गन्धे तथा लिहति मेदिनीम्।
आहुतिर्जुहुयाद्यस्तु तस्य नाशो भवेद् ध्रुवम्॥

जो पुरुष भूख, प्यास से व्याकुल तथा क्रोधयुक्त होकर मन्त्र रहित, पूर्णरूप से न सुलगी हुई (ज्वाला-माला-विहीन) अथवा धूएँ से व्याप्त अग्नि में हवन करता है, वह प्रत्येक जन्म में अन्धा होता है। जो पुरुष स्वल्प रूखी (धूमिल वर्ण की) चिनगारियों से भरी, जिसकी ज्वालाएँ बाईं ओर लपक रही हों, जो देखने में भयानक प्रतीत होती हों, जो गीली लकड़ियों से भरी हों, जिसका फुफकार का शब्द हो रहा हो, जिसकी ज्वालाएँ काली हों, जिसमें से दुर्गन्ध निकल रही हो तथा जो ज्वालाएँ भूमि का स्पर्श कर रही हों, ऐसी अग्नि में आहुतियाँ डालता है, उसका अवश्य नाश होता है।

अन्धो बुधः सधूमे च जुहुयाद्यो हुताशने।
यजमानो भवेदन्धः सपुत्र इति च श्रुतिः॥

जो विद्वान् धूमवाली अग्नि में हवन करता है, वह अन्ध होता है और जो यजमान सधूम अग्नि में हवन करता है, वह पुत्र के सहित अन्धा होता है।

अप्रबुद्धे सधूमे च जुहुयाद्यो हुताशने।
यजमानो भवेदन्धः सोऽपुत्र इति नः श्रुतम्॥

जो यजमान अग्नि के ठीक-ठीक न जलने पर और धूम के रहते हुए अग्नि में हवन करता है, वह अन्धा और पुत्रहीन होता है ऐसा हमने सुना है।

प्रज्वलित अग्नि में ही हवन करना चाहिए

योऽनर्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यंगारिणि च मानवः।
मन्दाग्निरामयावी च दरिद्रश्च स जायते॥
तस्मात्समिद्धे होतव्यं नासमिद्धे कदाचन॥

जो मनुष्य तेजहीन अग्नि तथा अंगारहीन अग्नि में आहुति देता है वह मन्दागिन इत्यादि दुःखी तथा दरिद्रता को प्राप्त होता है। अतः प्रज्वलित अग्नि में ही हवन करना सर्वथा श्रेष्ठ है।

योऽनर्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यंगारिणि च मानवः।
मन्दाग्निरामयावी च दरिद्रश्च स जायते॥
तस्मात्समिद्धे होतव्यं नासमिद्धे कदाचन।
आरोग्यमिच्छतायुश्च श्रियमात्यन्तिकीं पराम्॥

जो पुरुष तेजरहित अग्नि और अंगार रहित अग्नि में आहुति डालता है वह मन्दाग्नि आदि रोगों से दुःखित और दरिद्रता को प्राप्त होता है। अतः आरोग्य, दीर्घायु और विशिष्टरूप में लक्ष्मी की प्राप्ति के इच्छुक को प्रज्वलित अग्नि में ही हवन करना चाहिए।

यदा लेलायते ह्यर्चिः समिद्धे हव्यवाहने।
तदाज्यभागावन्तरेणाहुतीः प्रतिपादयेत्॥

जब अग्नि भलीभाँति जलायी जा चुके और उसमें ज्वाला उठने लगे, तब उसमें घी तथा हवन सामग्री आदि की आहुतियाँ श्रद्धापूर्वक देनी चाहिये।

अप्रदीप्ते न होतव्यं मध्यमे नाप्यनिन्धिते।
प्रदीप्ते लेलिहानेऽग्नौ होतव्यं कर्मसिद्धये॥

अप्रदीप्त (अप्रज्वलित) अग्नि में होम नहीं करना चाहिए। कुछ-कुछ जली हुई अग्नि में भी हवन नहीं करना चाहिए। जो खूब प्रज्वलित न धधकी हो ऐसी अग्नि में भी हवन नहीं करना चाहिए। खूब प्रज्वलित धधकती हुई अग्नि में कर्मसिद्धि के लिये हवन करना चाहिए।

अदीप्तेऽग्नौ हतो होमः।

अप्रज्वलित अग्नि में किया हुआ हवन नष्ट हो जाता है।

4.4.2 अग्नि में हवनार्थ स्थान का विचार

सर्वकार्यप्रसिद्ध्यर्थं जिह्वायां तत्र होमयेत्।
चक्षुः कर्णादिकं ज्ञात्वा होमयेद्देशिकोत्तमः।।
अग्निकर्णे हुतं यस्तु कुर्याच्चेद् व्याधितो भयम्।
नासिकायां महद्दुःखं चक्षुषोर्नाशनं भवेत्।।
केशे दारिद्र्यदं प्रोक्तं तस्माज्जिह्वासु होमयेत्।
यत्र काष्ठं तत्र श्रोत्रे यत्र धूमस्तु नासिके।।
यत्राल्पज्वलनं नेत्रं यत्र भस्म तु तच्छिरः।
यत्र च ज्वलितो वह्निस्तत्र जिह्वा प्रकीर्तिता।।

समस्त कार्यों की सिद्धि के लिये अग्नि की जिह्वा में होम करना चाहिए। श्रेष्ठ आचार्य चक्षु (नेत्र), कर्ण, नासिका, सिर, आदि की पहचान कर हवन करें। अग्नि के कान में यदि हवन करे तो उसे व्याधि से भय होता है, नासिका में हवन करे तो महादुःख होता है, नेत्रों में हवन करें तो विनाश होता है। केशों में किया गया हवन दारिद्र्यप्रद कहा गया है। इसलिये जिह्वाओं में हवन करना चाहिए।

जहाँ काठ है वहाँ अग्नि के कान कहे गये हैं, जहाँ धूआँ है वहाँ अग्नि की नासिका कही गई है, जहाँ अग्नि कम जलती है वहाँ अग्नि के नेत्र कहे गये हैं, जहाँ भस्म है वहाँ अग्नि का सिर कहा गया है और जहाँ अग्नि ज्वालायुक्त है, वहाँ अग्नि की जिह्वा कही गई है।

अन्यत्र भी लिखा है-

यत्र काष्ठं तत्र कर्णौ हुनेच्चेद् व्याधिकृन्नरः ।
धूमस्थानं शिरः प्रोक्तं मनोदुःखं भवेदिह ।।
यत्राल्पज्वलनं नेत्रं यजमानस्य नाशनम् ।
भस्मस्थाने तु केशः स्यात् स्थाननाशो धनक्षयः ।।
अंगारे नासिकां विद्यान्मनोदुःखं विदुर्बुधाः ।
यत्र प्रज्वलनं तत्र जिह्वा चैव प्रकीर्तिता ।।
गजवाजिप्रदात्री तु वह्निः शुभफलप्रदः ।।

जहाँ काष्ठ है वहाँ कान है वहाँ यदि मनुष्य हवन करे तो वह हवन व्याधिकारी होता है। धूम का स्थान सिर कहा गया है वहाँ हवन करने से मानसिक कष्ट होता है। जहाँ अग्नि का ज्वलन बहुत थोड़ा हो वहाँ नेत्र हैं वहाँ हवन करने से यजमान का नाश होता है। भस्म के स्थान में अग्नि के केश हैं वहाँ हवन करने से स्थान का नाश और धन का नाश होता है। अंगार में अग्नि की नासिका जाननी चाहिए वहाँ हवन करने से मानस दुःख होता है। जहाँ अग्नि की ज्वाला हो वहाँ जिह्वाएँ कही गई है। गज और अश्व की तरह शब्द करने वाला वह्नि शुभ फल प्रदान करता है। जैसे हाथी चिंघाड़ता है और घोड़ा हिनहिनाता है वैसा दहकते हुए शब्द करने वाला अग्नि शुभ फलदायक है।

वह्नेः शिरसि नासायां श्रोत्रेष्वक्षिषु वा तथा ।
जुहुयाच्चेत्तदा क्षिप्रं तदंगानि विनाशयेत् ।।

अग्नि के सिर में, नासिका में अथवा कानों में तथा नेत्रों में हवन करे तो वह हवन मनुष्य के उन-उन अंगों को शीघ्र विनाश देता है।

निष्कर्ष यह है कि हवन कर्ता को अग्नि की जिह्वा में ही हवन करना चाहिए। जो पुरुष अग्नि की जिह्वा को छोड़कर अग्नि के अन्य अंगों में हवन करता है, उसका तत्तत् अंग क्षय होता है।

मन्त्र के वर्ण का उच्चारण प्रकार

वर्णः स्पष्टतरः कार्यो नासाश्वासावधीति वा ।

मुखश्वासावधि श्रृण्वन्नभिषेकार्चनादिषु ।।

अभिषेक, अर्चन, हवन आदि में मन्त्र के वर्ण का स्पष्ट उच्चारण इस प्रकार करना चाहिए जिसमें वह अपने को सुनाई दे। नासिका से श्वास छोड़ने में अथवा मुख से श्वास लेने में जितना समय लगता है उतना समय वर्ण के उच्चारण में लगना चाहिए।

हवनादि में मन्त्रों के उच्चारण का प्रकार

शिख्यादिनाममन्त्रैस्तु स्वाहान्तैः प्रणवादिभिः।

प्रणवादि (ऊँकार है आदि में जिनके) तथा स्वाहान्त (स्वाहा है अन्त में जिनके) 'शिखी' आदि नाम मन्त्रों से (जैसे-ऊँ शिखिने स्वाहा) हवन करना चाहिए।

प्रणवादिचतुर्थ्यन्तः स्वाहाशब्दसमन्वितः।

यन्त्रपीठादिदेवानां होमे मन्त्रः प्रकीर्तितः।।

यन्त्र और पीठ आदि के देवताओं के होम में ऊँकारादि (ऊँकार है आदि में जिनके), चतुर्थ्यन्त (चतुर्थी विभक्ति है अन्त में जिसके) से 'स्वाहा' शब्द से युक्त मन्त्र कहा गया है। जैसे - ऊँ अग्नये स्वाहा', ऊँ सोमाय स्वाहा आदि।

होमे स्वाहान्तिमा मन्त्राः पूजान्यासे नमोऽन्तिकाः ।

तर्पणे तर्पयाम्यन्ता ऊहानीया बुधैः सदा ।।

सदा विद्वान् पुरुषों को होम में स्वाहान्त (स्वाहा है अन्त में जिसके) मन्त्र, पूजा में नमोन्त (नमः है अन्त में जिनके) मन्त्र और तर्पण में तर्पयाम्यन्त (तर्पयामि है अन्त में जिनके) मन्त्र होते हैं, हमेशा समझना चाहिए।

हवन के समय मन्त्रान्त में स्वाहा कहना आवश्यक है

सर्वे मन्त्राः प्रयोक्तव्याः स्वाहान्ता होमकर्मसु

हवन के समय सभी मन्त्रों के अन्त में 'स्वाहा' कहकर उच्चारण करना चाहिए।

स्वाहा के साथ आहुति न देने पर कर्त्तव्य

विपर्यासो यदि भवेत् स्वाहाकारप्रदानयोः ।

तदा मनोजूतिरिति जुहुयाद्वै मनस्वतीम् ।।

स्वाहा के साथ आहुति न देकर स्वाहा के पहले या बाद में आहुति देने से जो दोष होता है, उसके परिहार के लिए 'मनो जूतिः.' (शु. य. 2/13) इस मन्त्र से आहुति देनी चाहिए।

हवन के समय मन्त्रों के ऋषि और छन्दादि का स्मरण अनावश्यक है

न च स्मरेत् ऋषि छन्दः श्राद्धे वैतानिके मखे।

ब्रह्मयज्ञे च वै तद्वत्तथोंकारं विवर्जयेत्॥

श्राद्ध में, वैतानिक (अग्निहोत्र) नामक यज्ञ में और ब्रह्मयज्ञ में मन्त्रों के ऋषि, छन्द एवं ओंकार का स्मरण वर्जित है।

अग्निहोत्रे वैश्वदेवे विवाहादिविधौ तथा।

होमकाले न दृश्यन्ते प्रायश्छन्दर्षिदेवताः॥

शान्तिकादिषु कार्येषु मन्त्रपाठक्रियादिषु।

होमे नैव प्रकर्तव्याः कदाचिदृषिदेवताः॥

अग्निहोत्र में, वैश्वदेव में तथा विवाहादि विधि में होम के समय प्रायः छन्द, ऋषि और देवता नहीं दिखाई देते। शान्ति आदि कर्मों में, मन्त्रपाठ आदि में तथा होम में कभी भी ऋषि और देवता का स्मरण नहीं करना चाहिए।

ऋषिदैवतच्छंदांसि प्रणवं ब्रह्मयज्ञके।

मन्त्रादौ नोच्चरेच्छ्राद्धे यागकालेऽपि चैव हि॥

ब्रह्मयज्ञरूप अध्यापन में एवं मन्त्र के आदि में ऋषि, देवता, छन्द और प्रणव का उच्चारण नहीं करना चाहिए। श्राद्ध तथा यज्ञकाल में भी यही बात जानना चाहिए।

हवनादि में विनियोग का विचार

प्रातःकालेऽथवा पूजासमये होमकर्मणि।

जपकाले समस्ते वा विनियोगः पृथक् पृथक्॥

प्रातःकाल पूजा के समय में, होम के समय में, जप के समय में अथवा समस्त कर्मों में विनियोग अलग अलग करना चाहिए।

हवन के समय प्रत्येक मन्त्र में ओंकारोच्चारण अनावश्यक है

नोंकुर्याद्धोममन्त्राणां पृथगादिषु कुत्रचित्।

अन्येषां चाविकृष्टानां कालेनाचमनादिना॥

होम मन्त्रों के आदि में अलग ऊँकार कहीं पर भी नहीं लगाना चाहिए। आचमनादि काल से अव्यवहित अन्य मन्त्रों के आदि में भी ऊँकार नहीं लगाना चाहिए।

हवनादि में हस्तस्वर का निषेध

उपस्थाने जपे होमे दोहे च यज्ञकर्मणि।

हस्तस्वरं न कुर्वीत शेषास्तु स्वरसंयुताः॥

उपस्थान में, जप में, गोदोहन (गोदोहन-कर्म श्रौतयाग में होता है) में और यज्ञकर्म में हस्तस्वर नहीं लगाना चाहिए। शेष कर्मों में स्वर लगाना चाहिए।

अब आपके लिए इस इकाई से सम्बन्धित कुछ बोध प्रश्न दिये जा रहे हैं जिनका समाधान आपको करना है-

बोधप्रश्न

क. होम में तिल की अधिकता से क्या प्राप्त होता है?

ख. होम में तण्डुल (चावल) की मात्रा कितनी होनी चाहिए?

ग. आज्य शब्द से किस वस्तु का ग्रहण होता है?

घ. दधि के अभाव में कौन सा द्रव्य उपयोगी है?

ङ. त्रिमधु किसे कहते हैं?

च. विद्याप्राप्ति के लिए किस द्रव्य से होम करना चाहिए?

छ. चरु किसे कहते हैं?

ज. अग्नि के कितने हाथ हैं?

झ. मनोजवा क्या है?

ञ. आहुति शब्द में कौन सी धातु है?

ट. आहुति कब करनी चाहिए?

4.5 सारांश

इस इकाई में दुर्गासप्तशती के पाठ से हवन की विधि बताई गई है। इसके साथ ही समाज में व्याप्त होम के विषय में जो-जो भ्रान्तियाँ हैं, या जिज्ञासाएँ हैं उनका समाधान विविध शास्त्रों के वचनों से किया गया है।

सर्वप्रथम होम शब्द का अर्थ, उसका शास्त्रों में प्रयोग, होम शब्द का आदि में प्रयोग, आदि तत्त्वों को सैद्धान्तिक रूप से उपदिष्ट किया गया है। श्रौत एवं स्मार्त याग का भेद एवं होम से सम्बन्धित विशेष शास्त्रीय वचनों से पाठकों की जिज्ञासाओं का समाधान यहाँ किया गया है। अब यह इकाई यही पूर्ण होती है।

4.6 शब्दावली

क. यथेष्टम् - अपनी इच्छा से

ख. जर्तिल - जंगल में उत्पन्न होने वाला तिल

ग. आज्य - संस्कारयुक्त गाय का घी

घ. स्पृशति - स्पर्श करता है

ङ. खदिर - खैर की लकड़ी

च. चूतवृक्ष - आम का पेड़

छ. दाडिमीफल - अनारफल

ज. छागलीजातम् - बकरी का घृत

झ. संकीर्णम् - संकोच

ञ. लाजाभिः - धान के लावों से

ट. द्विशीर्षकः - दो शिर वाला

ठ. लोहिताक्षः - लाल नेत्र वाले

ड. जपाभम् - जपाकुसुम की तरह आभावाले

4.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

क. तिल की अधिकता से लक्ष्मी प्राप्ति होती है।

ख. तिल का आधा भाग चावल होना चाहिए।

ग. आज्य से संस्कारयुक्त घी का बोध होता है।

घ. दधि के अभाव में दूध से काम चलाना चाहिए।

ङ. शहद, घी, एवं मिश्री तीनों का मिश्रण त्रिमधु है।

च. विद्याप्राप्ति के लिए पलाश की समिधा से होम करना चाहिए।

छ. देवताओं के लिए पकाया गया चावल (ओदन या भात)।

ज. अग्नि के सात हाथ होते हैं।

झ. मनोजवा अग्नि की जिह्वा है।

ञ. आहुति शब्द में आङ् पूर्वक हु धातु है।

ट. मन्त्र के अन्त में हवन करना चाहिए।

4.8 सन्दर्भग्रन्थसूची

क. पद्मपुराण

ख.यज्ञमीमांसा

ङ. कात्यायनस्मृति

च. वायुपुराण

छ. देवीभागवत

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

क. दुर्गापाठ से होम की विधि का निरूपण करें।

ख. अग्नि के स्वरूप का वर्णन करें।

ब्लॉक - 4 हवन विधि

इकाई – 1 पंचभू संस्कार

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 पंचभूसंस्कारार्थ भूमि के लक्षण एवं कुण्ड मण्डपादि फल विचार

1.3.1 भूमि के लक्षण का विचार

1.3.2 कुण्डादि प्रकार एवं फल-

1.4 कुण्ड निर्माण विधान एवं पंचभूसंस्कार

1.4.1 चतुरस्रादि कुण्ड निर्माण विधान

1.4.2 पंचभूसंस्कारार्थ कुशों का महत्त्व

1.4.3 पंच भू संस्कार

1.5 सारांश

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.9 सहायक पाठ्यसामग्री

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में पंचभू संस्कार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कर्मकाण्ड में अनुष्ठानादि की सम्पन्नता हेतु हवन का विधान सर्वविदित है। हवन के अभाव में किसी भी अनुष्ठान की पूर्णता नही हो पाती है। हवन कार्य का प्रथम उपक्रम पंचभूसंस्कार है । यदि यह कहा जाय कि पंचभूसंस्कार के अभाव में हवन कार्य हो ही नही सकता तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी।

वास्तविक रूप से देखा जाय तो पंचभूसंस्कार का मतलब है भूमि के पांच संस्कार। अब यहां प्रश्न उपस्थित होता है कि किस भूमि के पांच संस्कार ? उत्तर में आता है कि जिस भूमि पर अग्नि स्थापन करना हो उस भूमि के पांच संस्कार किये जाते हैं, जिसे पंच भू संस्कार कहते हैं। संस्कार शब्द से आप सभी लोग सुपरिचित होगें ही , फिर भी सामान्यतया संस्कार शुद्धिकरण की प्रक्रिया है। किसी भी चीज का संस्कार करना यानी उसको शुद्ध या सुसंस्कृत बनाना संस्कार कहलाता है। संस्कार के अभाव में शुद्धता का संचार नही हो पाता। शुद्धता के अभाव में सफलता की प्राप्ति नही हो सकती । इसलिये भूमि के संस्कार करने अति आवश्यक है। पंच भूसंस्कार को जब हम देखते तो यह अत्यन्त लघु कार्य समझ में आता है लेकिन जब हम विषय की गंभीरता पर विचार करते हैं तो पाते है कि जिस भूमि पर यज्ञ होना है उस स्थान पर भूमि का विचार करके तदनन्तर मण्डप कुण्डादि स्थण्डिलादि के निर्माण का विचार करके पंचभूसंस्कार्य उपक्रम का सम्पादन कर हवनादि की अग्रिम प्रक्रियाओं का सम्पादन किया जाता है।

इस इकाई के अध्ययन से आप पंच भूसंस्कार इत्यादि के विचार करने की विधि एवं सम्पादन करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे यज्ञादि कार्यों या अनुष्ठानादि के अवसर किये जाने वाले पंचभूसंस्कार विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

1.2 उद्देश्य-

अब पंचभूसंस्कार विचार एवं सम्पादन की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं।

-कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

-पंचभूसंस्कार सम्पादनार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।

- पंचभूसंस्कार के सम्पादन में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

-प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

-लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

-समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

1.3 पंचभूसंस्कारार्थ भूमि के लक्षण एवं कुण्ड मण्डपादि फल विचार -

इसमें पंच भू संस्कार विचार हेतु भूमि का लक्षण एवं कुण्ड मण्डपादि फल विचार का ज्ञान आपको कराया जायेगा क्योकि बिना इसके ज्ञान के पंच भू संस्कार का आधारभूत ज्ञान नही हो सकेगा। आधारभूत ज्ञान हो जाने पर उस कर्म के सम्पादन का प्रभूत एवं पुष्ट फल मिलता है। इसलिये कुण्डमण्डपादि निर्माणार्थ भूमि का विचार करके फलों का निरूण्ण करके पंचभूसंस्कार पूर्वक यागादि का सम्पादन करना चाहिये।

1.3.1 भूमि के लक्षण का विचार-

पंच भू संस्कार कुण्ड या स्थण्डिल में किया जाता है। कुण्ड या स्थण्डिल किस भूमि पर निर्माण करना चाहिये इसका विचार आवश्यक है। इसे जानने के लिये हमें भूमि का ज्ञान प्राप्त करना होगा कि कौन सी भूमि उत्तम है? क्योकि उत्तम भूमि पर किया गया यज्ञानुष्ठान शीघ्र पूर्ण सफलता प्रदान करने वाला होता है। इसलिये भूमि का लक्षण इस प्रकार दिया जा रहा है।

1- **वर्णपरत्वेन भूमिलक्षणानि-**

शुभस्य शुभदा ज्ञेया दशा पापस्य चाधमा।
शुक्ला मृत्स्ना च या भूमिर्ब्राह्मणी सा प्रकीर्तिता।
क्षत्रिया रक्तमृत्स्ना च हरिद्वैश्या।
कृष्णा भूमिर्भवेच्छूद्रा चतुर्धा परिकीर्तिता।

इसमें चार प्रकार की भूमि का वर्णन किया गया है। सफेद वर्ण वाली मिट्टी की भूमि को ब्राह्मणी भूमि वाली मिट्टी , लाल वर्ण की क्षत्रिया भूमि, हरित वर्ण की वैश्या भूमि और काले वर्ण वाली भूमि को शूद्रा कहा जाता है।

2-**प्रकारान्तरेण भूमिलक्षणानि-**

ब्राह्मणी भू: कुशोपेता क्षत्रिया स्याच्छराकुला।
कुशकाशाकुला वैश्या शूद्रा सर्वतृणाकुला।।

कुश युक्त भूमि ब्राह्मणी, शर यानी मूंज वाली क्षत्रिया, कुश-काश मिश्रित वैश्या और सब प्रकार के तृणों से युक्त भूमि को शूद्रा कहा गया है।

3- **कल्पद्रुमोक्त भूमिलक्षणानि-**

सुगन्धा ब्राह्मणी भूमी, रक्त गन्धा तु क्षत्रिया।
मधुगन्धा भवेद्वैश्या मद्यगन्धा च शूद्रिका।
अम्ला भूमिर्भवेद्वैश्या तिक्ता शूद्रा प्रकीर्तिता।
मधुरा ब्राह्मणी भूमिः कषायाः क्षत्रिया मता।

अर्थात् सुगन्ध युक्त भूमि को ब्राह्मणी, रक्त गन्ध वाली भूमि को क्षत्रिया, मधु गन्धा भूमि को वैश्या और मद्य गन्धा सम्पन्न भूमि को एतदतिरिक्ता कहा जाता है। अम्ल रस युक्त वैश्या, तिक्त रस युक्त शूद्रा, मधुररसयुक्त ब्राह्मणी और कषाय रस युक्त क्षत्रिया भूमि होती है। इनके फलों का वर्णन करते हुये कहा गया है कि ब्राह्मणी भूमि सुखदा, क्षत्रिया भूमि राज्यप्रदा, वैश्या भूमि धनधान्यकरी और एतदतिरिक्ता भूमि त्याज्य होती है। आचार्य वसिष्ठ ने वर्णों के अनुसार भूमि का प्रतिपादन करते हुये कहा है कि ब्राह्मण की भूमि सफेद वर्ण की, क्षत्रिय की लाल वर्ण की, वैश्य की पीली वर्ण की और अन्य की काली वर्ण की होनी चाहिये। नारद जी के मत में ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिये क्रम से घृत, रक्त, अन्न, और मद्य गन्ध वाली भूमि सुखद होती है।

भूमि के प्लव का भी विचार किया गया है। पूर्व दिशा की ओर भूमि ढालदार हो तो धन प्राप्ति, अग्नि कोण में दाह, दक्षिण में मृत्यु, नैर्ऋत्य में धननाश, पश्चिम में पुत्र हानि, वायव्य में परदेश निवास, उत्तर में धनागम, ईशान में विद्यालाभ तथा बीच में गड्ढा वाली भूमि कष्टदायक होती है। इस मत के अलावा मतान्तर से भी विचार करते हुये बतलाया गया है कि ईशान कोण में भूमि ढालू हो तो धन सुख, पूर्व में हो तो वृद्धि, उत्तर में धनलाभ, अग्निकोण में मृत्यु तथा शोक, दक्षिण में गृहनाश, नैर्ऋत्य में धनहानि, पश्चिम में अपयश, बायव्य में मानसिक उद्वेग करती है।

नरायण भट्ट के मत में ब्राह्मण के लिये उत्तर ठालवाली भूमि शुभ है। क्षत्रिय के लिये पूर्व ठाल वाली भमि शुभ मानी गयी है। वैश्य के लिये दक्षिण ठाल वाली भूमि शुभ मानी गयी है। अन्य लोगों के लिये पश्चिम की ओर ठाल वाली भूमि शुभ जानना चाहिये। वास्तु विद्या में तो कहा गया है कि-

पूर्वप्लवा वृद्धिकरी उत्तरा धनदा स्मृता।
अर्थक्षयकरीं विद्यात् पश्चिमप्लवना ततः।
दक्षिण प्लवना पृथ्वीं नराणां मृत्तिदा भवेत्।

अर्थात् पूर्व की ओर ठाल वाली भूमि धन धान्य की वृद्धि करने वाली होती है। पश्चिम की ओर ठाल वाली भूमि अर्थनाश कारक और दक्षिण की ओर ठाल वाली भूमि मृत्यु का कारण होती है। इस प्रकार उचित भूमि का चयन करके कुण्ड या स्थण्डिल का निर्माण करना चाहिये। जिससे उस भूमि का फल प्रथम दृष्ट्या व्यक्ति को उत्त्म मिले।

इस प्रकार भूमि के लक्षण एवं किस प्रकार की भूमि का क्या फल है इसके विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों

या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- .... ब्राह्मणी भूमी।

क- सुगन्धा, ख- रक्त गन्धा, ग- मधुगन्धा, ध- मद्यगन्धा।

प्रश्न 2-................... तु क्षत्रिया।

क- सुगन्धा, ख- रक्त गन्धा, ग- मधुगन्धा, ध- मद्यगन्धा।

प्रश्न 3- .... भवेद्वैश्या।

क- सुगन्धा, ख- रक्त गन्धा, ग- मधुगन्धा, ध- मद्यगन्धा।

प्रश्न 4- .... च शूद्रिका।

क- सुगन्धा, ख- रक्त गन्धा, ग- मधुगन्धा, ध- मद्यगन्धा।

प्रश्न 5-........... भूमिर्भवेद्वैश्या।

क- अम्ला, ख- तिक्ता, ग- मधुरा, ध- कषायाः।

प्रश्न 6- .... शूद्रा प्रकीर्तिता।

क- अम्ला, ख- तिक्ता, ग- मधुरा, ध- कषायाः।

प्रश्न 7- .... ब्राह्मणी भूमिः।

क- अम्ला, ख- तिक्ता, ग- मधुरा, ध- कषायाः।

प्रश्न 8- .... क्षत्रिया मता।

क- अम्ला, ख- तिक्ता, ग- मधुरा, ध- कषायाः।

प्रश्न 9- पूर्वप्लवा वृद्धिकरी, ... धनदा स्मृता।

क-उत्तरा ख- पश्चिमप्लवा, ग-पूर्वप्लवा, घ- दक्षिणप्लवा।

प्रश्न 10- अर्थक्षयकरीं विद्यात् .... ततः।

क-उत्तरप्लवा ख- पश्चिमप्लवना, ग-पूर्वप्लवा, घ- दक्षिणप्लवा।

1.3.2 कुण्डादि प्रकार एवं फल-

इस प्रकरण में कुण्डों के प्रकार एवं फल के बारे में अध्ययन करेगें। इससें आपको कुण्डों के बारे में सटीक जानकारी हो सकेगी। साथ ही साथ कामना के अनुसार कुण्ड निर्माण का ज्ञान भी आपको हो जायेगा।

कुण्ड के पक्ष में आपको तीन पक्ष मिलेगें जिन्हें नवकुण्डी, पंचकुण्डी एवं एककुण्डी के नाम से जाना जाता है। नव कुण्डी में नौ कुण्ड, पंच कुण्डी में पांच कुण्ड तथा एक कुण्डी में एक कुण्ड होता है। नौ कुण्डी पक्ष में नौ कुण्ड इस प्रकार होता है-

प्राच्या चतुष्कोण भगेन्दुखण्ड त्रिकोणवृत्तांगभुजाम्बुजानि।
अष्टास्त्रिशशक्रेश्वरयोस्तु मध्ये वेदा स्त्रिवा वृत्तमुशन्तिकुण्डम्।।

अर्थात् पूर्व दिशा में चतुष्कोण कुण्ड बनाना चाहिये। अग्नि कोण में योनि कुण्ड बनाना चाहिये। दक्षिण में अर्धचन्द्र कुण्ड बनाना चाहिये। नैर्ऋत्य कोण में त्रिकोण कुण्ड बनाना चाहिये। पश्चिम दिशा में वृत्त कुण्ड बनाना चाहिये। वायव्य कोण में षडस्र कुण्ड बनाना चाहिये। उत्तर में पद्मकोण कुण्ड बनाना चाहिये। ईशान कोण में अष्टास्र कुण्ड बनाना चाहिये। ईशान एवं उत्तर के बीच में चतुष्कोण या त्रिकोण या वृत्त कुण्ड बनाना चाहिये।

उपरोक्त अध्ययन से पता चलता है कि नौ दिशाओं एवं विदिशाओं में बनाये जाने वाले कुण्डों का प्रकार आठ ही है। नौवां कुण्ड उन्हीं आठों में से कोई एक कुण्ड है। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि कुण्ड आठ प्रकार के ही होते हैं। कहीं कहीं हम लोग यह देखते हैं कि एक सौ एक बनाये गये हैं परन्तु उनका प्रकार इन्ही आठों प्रकारों में से ही कोई होता है।

इसी प्रकार एक दूसरा पक्ष होता है जिसे पंच कुण्डी पक्ष के रूप में जाना जाता है।

आशेषकुण्डैरिहपंचकुण्डी चैकं यदा पश्चिमसोम शैवे।।

इसमें बतलाया गया है कि पूर्व दिशा में चतुष्कोण कुण्ड बनाना चाहिये। दक्षिण में अर्धचन्द्र कुण्ड बनाना चाहिये। पश्चिम दिशा में वृत्त कुण्ड बनाना चाहिये। उत्तर में पद्मकोण कुण्ड बनाना चाहिये। ईशान कोण पूर्व के बीच में चतुष्कोण या त्रिकोण या वृत्त कुण्ड बनाना चाहिये। इसमें यह पाया जाता है कि कोणों के कुण्डों को छोड़कर केवल दिशाओं के कुण्डों को स्वीकार किया गया है। एक कुण्डी पक्ष में इन्ही में से कोई एक कुण्ड बनाने का विधान हैं

इन कुण्डों के अलग अलग फल बताये गये है। कुण्ड मण्डप सिद्धि नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि-

सिद्धिः पुत्राः शुभं शत्रुनाशः शान्तिर्मृतिच्छदे।
वृष्टिरारोग्यमुक्तं हि फलं प्राच्यादि कुण्डके।।

अर्थात् चतुष्कोण कुण्ड में सिद्धि कामना के लिये हवन कराना चाहिये। पुत्र कामना के लिये योनि कुण्ड में हवन करना चाहिये। शुभ कामना के लिये अर्धचन्द्र कुण्ड में हवन करना चाहिये। शत्रु नाश के लिये त्रिकोण कुण्ड में हवन करना चाहिये। शान्ति के लिये वृत्त कुण्ड में हवन करना चाहिये। मृत्युच्छेदन के लिये षट्कोण कुण्ड में हवन करना चाहिये। वृष्टि के लिये पद्मकोण कुण्ड में हवन करना चाहिये। और आरोग्यता के लिये अष्टकोण कुण्ड में हवन करना चाहिये।

कुण्डों के निर्माण में आहुति को प्रमाण माना गया है। 50 आहुति हेतु इक्कीस अंगुल का रत्मिात्र का

कुण्ड होना चाहिये। एक सौ आहुति में अरत्निमात्र बाईस अंगुल से यव का कुण्ड होना चाहिये। एक हजार आहुति में एक हाथ यानी चौबीस अंगुल का कुण्ड बनाना चाहिये। दस हजार आहुति में दो हाथ यानी चौंतीस अंगुल का कुण्ड बनाना चाहिये। एक लाख आहुति में चार हाथ यानी अड़तालीस अंगुल का कुण्ड बनाना चाहिये। दस लाख आहुति में छः हाथ यानी अट्ठावन अंगुल छः यव का कुण्ड बनाना चाहिये। एक करोड़ आहुति में आठ हाथ यानी सड़सठ अंगुल सात यव का कुण्ड बनाना चाहिये।

कुण्डों के निर्माण प्रमाण के अनुसार करना चाहिये अन्यथा उसका विपरीत फल प्राप्त होता है। कहा गया है कि-

खाताधिके भवेद्रोगी, हीने धेनु क्षयस्तथा।
वक्रकुण्डे च सन्तापो, मरणं छिन्नमेखले।
मेखला रहिते शोको अभ्यधिके वित्तसंक्षयः।
भार्यादिनाशनं प्रोक्तं कुण्डं योन्याविनाकृते।
कुण्डं यत्कण्ठरहितं सुतानां तन्मृतिप्रदम्।
अनात्मके मृत्युमुपैति बन्धुस्तथैवमानाधिककेस्वयंचेति।। परशरामकारिकायाम्।।

कुण्डों के निर्माण में यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रमाण के अनुसार ही उसमें खात हो। यदि ऐसा नही होता है तो उसका विपरीत फल देखने को मिलता है। जैसे-

जिस कुण्ड में गड्ढा मान से अधिक होता है तो उसका फल रोगी होना बतलाया गया है। जिस कुण्ड में गड्ढा मान से कम होता है तो उसका फल धेनु का क्षय बतलाया गया है। यदि कुण्ड टेढ़ा मेढ़ा हो तो सन्ताप होता है। यदि कुण्ड में मेखलायें टूटी फटी हो तो उसका फल मरण बतलाया गया है। मेखला से रहित कुण्ड यदि निर्मित किया जाता है उससे शोक की प्राप्ति होती है। यदि अधिक मेखला हो तो धन का क्षय होता है। योनि के बिना कुण्ड निर्माण करने पर भार्या का विनाशक फल होता है। कण्ठ रहित कुण्ड का फल पुत्र की मृत्यु बतलायी गयी है। इस प्रकार यथा शास्त्रोक्त कुण्ड निर्माण करके पंचभूसंस्कार करना चाहिये । तदनन्तर हवन का विधान करना चाहिये ।

इस प्रकार कुण्ड के प्रकार एवं फल के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- पूर्व दिशा में .... कुण्ड बनाना चाहिये।

क- चतुष्कोण, ख- योनि, ग- अर्धचन्द्र, घ- त्रिकोण।

प्रश्न 2- अग्नि कोण में ....कुण्ड बनाना चाहिये।

क- चतुष्कोण, ख- योनि, ग- अर्धचन्द्र, घ- त्रिकोण।

प्रश्न 3- दक्षिण में .... कुण्ड बनाना चाहिये।

क- चतुष्कोण, ख- योनि, ग- अर्धचन्द्र, घ- त्रिकोण।

प्रश्न 4- नैर्ऋत्य कोण में .... कुण्ड बनाना चाहिये।

क- चतुष्कोण, ख- योनि, ग- अर्धचन्द्र, घ- त्रिकोण।

प्रश्न 5-पश्चिम दिशा में .... कुण्ड बनाना चाहिये।

क- वृत्त कुण्ड, ख- षडस्र, ग- पद्मकोण कुण्ड, घ- अष्टास्र कुण्ड।

प्रश्न 6- वायव्य में .... कुण्ड बनाना चाहिये।

क- वृत्त कुण्ड, ख- षडस्र, ग- पद्मकोण कुण्ड, घ- अष्टास्र कुण्ड।

प्रश्न 7- उत्तर में .... कुण्ड बनाना चाहिये।

क- वृत्त कुण्ड, ख- षडस्र, ग- पद्मकोण कुण्ड, घ- अष्टास्र कुण्ड।

प्रश्न 8- ईशान कोण में .... कुण्ड बनाना चाहिये।

क- वृत्त कुण्ड, ख- षडस्र, ग- पद्मकोण कुण्ड, घ- अष्टास्र कुण्ड।

प्रश्न 9- ईशान एवं उत्तर के बीच में चतुष्कोण या त्रिकोण या .... कुण्ड बनाना चाहिये।

क- वृत्त कुण्ड, ख- षडस्र, ग- पद्मकोण कुण्ड, घ- अष्टास्र कुण्ड।

प्रश्न 10- शान्ति के लिये किस कुण्ड में हवन करना चाहिये।

क- वृत्त कुण्ड, ख- षडस्र, ग- पद्मकोण कुण्ड, घ- अष्टास्र कुण्ड।

1.4 कुण्ड निर्माण विधान एवं पंचभूसंस्कार-

इसमें आपको कुण्ड या स्थण्डिल के निर्माण का विधान बतलाया जायेगा। इसके ज्ञान से आप कुण्ड का निर्माण कर सकेगें। जहां कुण्ड बनाने की आवश्यकता न हो वहां स्थण्डिल बनाकर पंचभूसंस्कार करके हवन किया जा सकता है। इस प्रकार इस प्रकरण के अध्ययन से कुण्ड निर्माण संबंधी ज्ञान आपका प्रगाढ़ हो जायेगा।

1.4.1-चतुरस्रादि कुण्ड निर्माण विधान-

इससे पूर्व के प्रकरण में आप अच्छी तरह जान चुके हैं कि किस कुण्ड का निर्माण किस दिशा में करना चाहिये। साथ ही साथ आपको यह भी भान हो गया है कि किस कुण्ड का क्या फल होता है। अब हम इन कुण्डों को कैसे बनाते हैं इसका विचार करने जा रहे हैं।

चतुरस्र कुण्ड निर्माण विधान-

द्विघ्नं व्यासं तुर्यचिन्हं सपाशं सूत्रं शंकौ पश्चिमे पूर्वगेपि।

दत्वा कर्षेत्कोणयोः पाशतुर्यं स्यादेवं वा वेदकोणं समानम्।।

अर्थात् एक हाथ के व्यास को दुगूना करने पर यानी जितने व्यास का कुण्ड बनाना हो उसका दुगूना कर पाश के चार चिन्ह बनाना चाहिये। उसके बाद दोनों पाशों को पूर्व एवं पश्चिम की कील में फंसाकर दोनों की चतुर्थांश गांठ को पकड़कर अग्नि तथा नैर्ऋत्य की तरफ खीचें। उसी प्रकार वायव्य तथा ईशान कोण की ओर भी खीचें तो चतुरस्र कुण्ड सिद्ध हो जाता है। इसी प्रकार सभी प्रकार के कुण्डों में सबसे पहले चतुरस्र का क्षेत्र निर्धारित करना चाहिये। इसी के आधार पर अन्य कुण्ड बनाये जा सकते हैं।

योनिकुण्ड निर्माण विधान-

क्षेत्रे जिनांशे पुरतः शरांशान् संवर्ध्य च स्वीयरदांश युक्तान्।
कर्णांघ्रिमानेन लिखेन्दुखण्डं प्रत्यंकुरो अंकाद् गुणतो भगाभम्।।

अर्थात् प्रकृतक्षेत्र का चौबीस भाग कर उसके पांच भाग को ग्रहण करें। और उसको बत्तीसवां हिस्सा से युक्त करने पर पांच अंगुल एक यव दो यूका हुआ। इतनें को प्रकृतक्षेत्र के मध्य में आगे बढ़ावे और पीछे के दोनों भाग चतुरस्र में चारों कोण से रेखा देकर कर्णांघ्रि में परकाल रखकर दो आधार वृत्त तैयार करें। पार्श्व से आगे चिन्ह से रेखा देने पर शुद्ध योनि कुण्ड होता है।

अर्धचन्द्रकुण्ड निर्माण विधान-

स्वशतांशयुतेषु भागहीनः स्वधरित्रिमितकर्कटेन लब्ध्यात्।
कृतवृत्तदले अग्रतश्च जीवां विदधात्विन्दुदलस्य साधु सिद्ध्यै।।

अर्थात् प्रकृतक्षेत्र का पांचवां अंश लेकर उसमें शतांश को युत करने पर 4 अंगुल, 6 यव, 6 यूका, 2 लिक्षा, 1 बालाग्र को 24 अंगुल के क्षेत्र में से घटाने पर 19 अंगुल, 1यव, 1 यूका, 6 लिक्षा, 4 बालाग्र इतनें से चतुरस्र के मध्य में परकाल रखकर वृत्त का आधा भाग खीचें। वृत्तार्ध के आगे सूत्र देने पर अर्धचन्द्र कुण्ड सिद्ध होता है।

त्रिकोण एवं वृत्त कुण्ड निर्माण विधान-

वह्न्यंशं पुरतो निधाय चपुनः श्रोण्यश्चतुर्थांशकः।
चिन्हेषु त्रिषु सूत्रदानत इदं स्यात्त्यस्त्रिकष्टोज्झितम्।
विश्वांशैः स्वजिनांशकेन सहितैः क्षेत्रे जिनांशे कृते।
व्यासार्धेन मितेन मण्डलमिदं स्यात् वृत्तसंज्ञं शुभम्।।

अर्थात् प्रकृति क्षेत्र का 24 हिस्सा करें, उसमें से तृतीयांश अंगुल लेकर प्रकृत क्षेत्र जो चतुरस्र उसमें आगे पूर्व की तरफ बढ़ावें। 24 का चौथा हिस्सा छः अंगुल चतुरस्र की दोनों श्रेणी में दक्षिण उत्तर की तरफ बढ़ावे। बाद में तीनों चिन्ह से मिलकर सूत्र देने से त्रिकोण कुण्ड सिद्ध होता है। वृत्त कुण्ड हेतु प्रकृत क्षेत्र को चौबीस भाग करके उसमें 24 अंगुल लेवें। उसमें से तेरह अंगुल की अपने चौबीसवें हिस्से के सहित हो तब चतुरस्र के मध्य में परकाल रखकर वृत्त बनाने से वृत्त कुण्ड होता है।

षट्कोण कुण्ड निर्माण विधान-

भक्तेक्षेत्रे जिनांशैर्धृतिमितलवकैः स्वाक्षिशैलांशयुक्तै।

व्यासार्द्धान्मण्डले तन्मितधृतगुणके कर्कटे चेन्दुदिक्तः।

षट् चिन्हेषु प्रदद्याद्रसमितगुणकानेकमेकं तु हित्वा।

नाशे सन्ध्यर्तुदोषामपि च वृत्तिकृतर्नेत्ररम्यं षडस्रम्।

अर्थात् प्रकृत क्षेत्र 24 अंगुल में से 18 अंगुल लेवें। उस 18 अंगुल का 72वां हिस्सा युक्त करना हो तो 2 यव हुआ। अर्थात् 18 अंगुल 2 यव के परकाल से उत्तर तरफ से वृत्त करना चाहिये। उसी परकाल से वृत्त में 6 चिन्ह करना चाहिये। एक - एक चिन्ह को छोड़कर तीसरे चिन्ह पर सूत्र देने से और सब सन्धि की रेखा को मिटाने से षट्कोण सिद्ध होता है।

पद्मकुण्ड निर्माण विधान-

अष्टांशाच्च यतश्च वृत्तशरके तत्रादिमं कर्णिका।

युग्मे षोडशके पराणि चरमे स्वाष्टत्रिभागोनिते।

भक्ते षोडशधा शरान्तरधृते स्युः कर्कटे अष्टौ छदाः।

सर्वां तां खनकर्णिकां त्यज निजायामोच्चकां स्यात्कजम्।।

अर्थात् प्रकृत क्षेत्र 24 के अष्टमांश से एक-एक वृत्त में अष्टमांश बढ़ा - बढ़ा कर पांच वृत्त बनावें। परन्तु पांचवें वृत्त में वह अष्टमांश अपने 38 वें हिस्से से हीन करके उस अष्टमांश के व्यासार्ध से 2 अंगुल, 6 यव, 2 यूका, 1 लिक्षा, 2 बालाग्र से पांचवां वृत्त करें। पहला वृत्त 3 अंगुल, दूसरा वृत्त 6 अंगुल, तीसरा वृत्त 9 अंगुल, चौथा वृत्त 12 अंगुल, पांचवां वृत्त 14 अंगुल, 6 यव, 2 यूका, 1 लिक्षा, 2 बालाग्र के परकाल से करके अन्तिम वृत्त में 16 चिन्ह करें। दिशा विदिशा एवं विदिशा दिशा के बीच में पांचवें चिन्ह पर परकाल रखकर दिशा विदिशा में आठ पत्र करें। पत्र के मध्य तथा केसर को छोड़कर कर्णिका के मध्य में रखें तो स्वच्छ पद्मकुण्ड होता है।

अष्टकोण कुण्ड निर्माण विधान-

क्षेत्रे जिनांशेगजचन्द्रभागैः स्वाश्लिष्टभागेन युतैस्तु वृत्ते।

विदिग्विशोरन्तरतो अष्टसूतैस्तृतीययुक्तैरिदमष्टकोणम्।।

अर्थात् प्रकृत क्षेत्र 24 उसमें से 10 हिस्सों को अपने अट्ठाइसवें हिस्से के सहित लेवें तो 18 अंगुल, 5 यव, 1यूका, 1लिक्षा, एक बालाग्र हुआ। इतने के व्यासार्द्ध को परकाल से वृत्त करें। और दिशा-विदिशा के मध्य में आठ चिन्ह करें। बाद में दो-दो चिन्ह के मध्य में छोड़कर तीसरे चिन्हों को मिलाकर आठ चिन्ह देवें। इस प्रकार अष्टास्र कुण्ड तैयार होता है।

स्थण्डिल निर्माण विधान-

हवन करने के लिये दो ही स्थान कर्मकाण्ड में निर्धारित किये गये हैं जिसमें एक है कुण्ड एवं दूसरा है स्थण्डिल । कुण्डों के बारे में आप जान चुके हैं अतः स्थण्डिल का विचार यहां किया जा रहा है।

अथवापि मृदा सुवर्णभाषा करमानं चतुरंगुलोच्चमल्पे।

हवने विदधीत वांगुलोच्चं विबुधः स्थण्डिलमेव वेदकोणम्।

सुवर्ण जैसी मृत्तिका लेकर 1 हाथ लम्बी, 1 हाथ चौड़ी , चार अंगुल ऊंची या 1 अंगुल ऊंची चौकोर वेदी बनावें। थोड़े हवन में या स्थण्डिल में भी योनी व मेखला करना किसी आचार्य के मत से प्राप्त होता है। इसका प्रमाण देते हुये कहा गया है कि- सूतसंहितायाम्-

स्थण्डिले मेखला कार्या कुण्डोक्तस्थण्डिलाकृतिः।
योनिस्तत्र प्रकर्तव्या कुण्डवत्तत्रवेदिभिः।।
समेखलं स्थण्डिलं तु प्रशस्तं होमकर्मणि।
कण्ठं तु वर्जयस्तत्र खाते तत्र कण्ठः प्रकीर्तितः।

अर्थात् स्थण्डिल में भी मेखला करना चाहिये। उसकी आकृति कुण्डोक्त स्थण्डिल आकृति के समान है। कुण्ड के समान योनि भी बनाने का विधान है। मेखला सहित स्थण्डिल होम में प्रशस्त माना गया है। कण्ठ को वर्जित करते हुये खात में उसको विहित किया गया है।

इस प्रकार यथोक्त रीति से कुण्ड या स्थण्डिल का निर्माण करके पंचभूसंस्कार करना चाहिये।

इस प्रकार कुण्ड निर्माण विधान एवं स्थण्डिल निर्माण विधान के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- द्विघ्नं .... तुर्यचिन्हं सपाशं ।

क- व्यासं, ख- पश्चिमे, ग- पाशतुर्यं, घ- वेदकोणं।

प्रश्न 2- सूत्रं शंकौ .... पूर्वगेपि।

क- व्यासं, ख- पश्चिमे, ग- पाशतुर्यं, घ- वेदकोणं।

प्रश्न 3- दत्वा कर्षेत्कोणयोः .... ।

क- व्यासं, ख- पश्चिमे, ग- पाशतुर्यं, घ- वेदकोणं।

प्रश्न 4- स्यादेवं वा .... समानम्।।

क- व्यासं, ख- पश्चिमे, ग- पाशतुर्यं, घ- वेदकोणं।

प्रश्न 5-अथवापि मृदा सुवर्णभाषा ....चतुरंगुलोच्चमल्पे।

क- करमानं, ख- स्थण्डिलमेव, ग- मेखला, घ- योनिस्तत्र।

प्रश्न 6- हवने विदधीत वांगुलोच्चं विबुधः .... वेदकोणम्।

क- करमानं, ख- स्थण्डिलमेव, ग- मेखला, घ- योनिस्तत्र।

प्रश्न 7- स्थण्डिले .... कार्या कुण्डोक्तस्थण्डिलाकृतिः।

क- करमानं, ख- स्थण्डिलमेव, ग- मेखला, घ- योनिस्तत्र।

प्रश्न 8- .... प्रकर्तव्या कुण्डवत्तत्रवेदिभिः।।

क- करमानं, ख- स्थण्डिलमेव, ग- मेखला, घ- योनिस्तत्र।

प्रश्न 9- समेखलं .... तु प्रशस्तं होमकर्मणि।

क- करमानं, ख- स्थण्डिलं, ग- मेखला, घ- योनिस्तत्र।

प्रश्न 10-........... तु वर्जयस्तत्र खाते तत्र कण्ठः प्रकीर्तितः।

क- कण्ठं, ख- स्थण्डिलमेव, ग- मेखला, घ- योनिस्तत्र।

1.4.2- पंचभूसंस्कारार्थ कुशों का महत्त्व - पंच भू संस्कार कुशों से करने का विधान है। इस प्रकरण में अपको कुशों के महत्त्व और उसके विकल्पों पर विचार किया जायेगा। इसके ज्ञान से आप कुशों के साथ या अभाव में विकल्प के द्वारा पंच भू संस्कार कर सकते हैं। लिखा गया है कि-

कुशेन रहिता पूजा विफला कथिता मया।

उदकेन विना पूजा विना दर्भेण याक्रिया।

आज्येन च विना होमः फलं दास्यन्ति नैव ते। यज्ञ मीमांसा पृष्ठ 371.

अर्थात् कुश के बिना जो पूजा होती है वह निष्फल कही गयी है। कहा गया है कि कुश के बिना जो यज्ञादि क्रिया है, जल के बिना जो पूजा है एवं घृत के बिना जो होम है वह कदापि फलप्रद नही होता है।

बिना दर्भेण यत्स्नानं यच्च दानं विनोदकम्।

असंख्यातं च यज्जप्यं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्।। प्रयोग पारिजात।

अर्थात् बिना दर्भ के स्नान, जल के बिना दान, संख्या के विना किया हुआ जप निष्फल हो जाता है।

बिना दर्भेण यत्कर्म विना सूत्रेण वा पुनः।

राक्षसं तद्भवेत् सर्वं नामुत्रेह फलप्रदम्।।

कुश एवं यज्ञोपवीत के बिना किया हुआ समस्त कर्म राक्षस कहलाता है। और वह इहलोक में फलप्रद नही होता है।

कुशमूले स्थितो ब्रह्मा कुशमध्ये जनार्दनः।

कुशाग्रे शंकरो देवः त्रयो देवाः कुशे स्थिताः।।

अर्थात् कुश के मूल में ब्रह्मा, कुश के मध्य में जनार्दन और कुश के अग्र भाग में शंकर इन तीनों देवताओं का निवास रहता है।

कुशस्थाने च दूर्वाः स्युर्मंगलस्याभिवृद्धये।

मांगलिक कार्यों की अभिवृद्धि के लिये कुश के स्थान पर दूर्वा का प्रयोग किया जा सकता है।

कुश काशास्तथा दूर्वा यवपत्राणिव्रीहयः।

बल्वजाः पुण्डरीकाश्च कुशाः सप्तप्रकीकर्तताः।।

अर्थात् कुशा, काशा, दूर्वा, जौ का पत्ता, धान का पत्ता, बल्वज और कमल ये सात प्रकार के कुश कहे गये है।

इस प्रकार कुशा के महत्त्व एवं उसके विकल्प के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- कुशेन रहिता पूजा ....कथिता मया।

क- विफला, ख- दर्भेण, ग- आज्येन, ध- दानं।

प्रश्न 2 -उदकेन विना पूजा विना .... याक्रिया।

क- विफला, ख- दर्भेण, ग- आज्येन, ध- दानं।

प्रश्न 3-.......... च विना होमः फलं दास्यन्ति नैव ते।

क- विफला, ख- दर्भेण, ग- आज्येन, ध- दानं।

प्रश्न 4- बिना दर्भेण यत्स्नानं यच्च .... विनोदकम्।

क- विफला, ख- दर्भेण, ग- आज्येन, ध- दानं।

प्रश्न 5- असंख्यातं च .... तत्सर्वं निष्फलं भवेत्।।

क-यज्जप्यं, ख- दर्भेण, ग- राक्षसं, ध- ब्रह्मा।

प्रश्न 6- बिना .... यत्कर्म विना सूत्रेण वा पुनः।

क-यज्जप्यं, ख- दर्भेण, ग- राक्षसं, ध- ब्रह्मा।

प्रश्न 7-............तद्भवेत् सर्वं नामुत्रेह फलप्रदम्।।

क-यज्जप्यं, ख- दर्भेण, ग- राक्षसं, ध- ब्रह्मा।

प्रश्न 8- कुशमूले स्थितो ....।

क-यज्जप्यं, ख- दर्भेण, ग- राक्षसं, ध- ब्रह्मा।

प्रश्न 9- कुशमध्ये ....।

क-यज्जप्यं, ख- दर्भेण, ग- राक्षसं, ध-जनार्दनः।

प्रश्न 10-कुशाग्रे .... देवः त्रयो देवाः कुशे स्थिताः।।

क-यज्जप्यं, ख- दर्भेण, ग- राक्षसं, ध- शंकरो।

1.4.3 पंच भू संस्कार-

इसमें आप पंच भू संस्कार के बारे में जानेगें। जिस भूमि पर अग्नि स्थापन किया जाना है उस भूमि के पांच संस्कार को पंच भू संस्कार कहते हैं। वे पंच भू संस्कार अधोलिखित हैं-

परिसमुह्योपलिप्योल्लिख्योद्धृत्याभ्युक्ष्येतिपंचभूसंस्काराः।

तत्र क्रमः- प्राङ्मुखोपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ स्मृत्वा अमुक् कर्मांगतया पंचभूसंस्कारान् करिष्ये इति संकल्पं कुर्यात्। तथा च संकल्प एव मुख्य स्यात् स्नानदानादिकर्मसु। कर्म संकल्परहितं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्। ततः शुद्धायां भूमौ चतुर्विंशति अंगुलायतं स्थण्डिलं परिकल्पयेत्। तथा चोक्तम् स्थण्डिलं मृन्मयं कार्यं चतुर्विंशांगुलायतम्। द्विरंगुलं भवेत्कण्ठं व्यासस्य वचनं यथा। कर्मप्रदीपे विषेषः अष्टांगुलसमुत्सेधं चतुर्विंशांगुलायतम्। पन्नगास्तत्र सीदन्ति तदर्थं स्थण्डिलं भवेत्।

परिसमुह्यादि से क्वचिद्धोमः तक सूत्र पारस्कर गृह्यसूत्र में पाया जाता है। पारस्कर गृह्योक्त कुशकण्डिका सूत्रों के ऊपर हरिहर भाष्य सहित विभिन्न व्याख्यायें लिखी गयी है। उनके अनुसार कर्ता स्नानादि करके शुद्ध होकर सफेद वस्त्र धारण करके उत्तरीय पूर्वक कर्म स्थान में आकर वारणादि यज्ञीय वृक्षों के आसन पर प्रागग्र या उदगग्र कुशों को बिछाकर पूर्व मुख बैठकर आचमन प्राणायाम पूर्वक देशकाल का स्मरण करके अमुक कर्म के लिये पंचभूसंस्कार कर रहा हूँ ऐसा संकल्प करे। कहा गया है कि स्नान दानादि कर्मों में संकल्प ही मुख्य है। संकल्प रहित सारे कर्म निष्फल हो जाते है। शुद्ध भूमि पर चौबीस अंगुल के क्षेत्र में स्थण्डिल की परिकल्पना करनी चाहिये। कहा गया है- चौबीस अंगुल वाला स्थण्डिल मिट्टी का बनाना चाहिये। व्यास का वचन है कि दो अंगुल का कण्ठ होता है। कर्मप्रदीप में लिखा है आठ अंगुल ऊँचा एवं चौबीस अंगुल आयतन वाला स्थण्डिल बनावें। ऐसा नही करने पर पन्नग लोग दुखी होते हैं।

1- परिसमूह्य इति सूत्रे त्रिभिर्दर्भैः पांसूनपसार्य इति हरिहरभाष्यम्। वादरायणोऽपि कृमि कीट पतंगाश्च विचरन्ति महीतले। तेषां संरक्षणार्थाय परिसमूह्येति कथ्यते। दर्भसंख्या- धृत्वांगुष्ठकनिष्ठाभ्यां मूलैः साग्रैः कुशत्रयम्। तदग्रैस्तस्य रजसां पूर्वस्यामपसर्पणम्।

2-उपलिप्य इति सूत्रम्। गोमयोदकेन इति हरिहरः पुरा इन्द्रेण बज्रेण हतो वृत्रो महासुरः। व्यापिता मेदसा पृथ्वी तदर्थमुपलेपनम्। गोमये वसते लक्ष्मीः पवित्रा सर्वमंगला। यज्ञार्थे संस्कृता भूमिः

तदर्थमुपलेपनम्। गोमयलक्षणम् रुग्णा वृद्धा प्रसूता च बन्ध्या सन्धिन्यमेध्यभुक्। मृतवत्सा च नैतासां ग्राह्यं मुत्रं सकृत्पयः। स्वच्छं तु गोमयं ग्राह्यं स्थाने च पतिते शुचौ। उपर्यधः परित्यज्य आर्द्रं जन्तु विवर्जितम्।

3-त्रिरुल्लिख्य इति सूत्रम् त्रिः खादिरेण हस्तमात्रेण खंगाकृतिनास्फ्येन उल्लिख्य प्रागग्रा उदक् संस्थाः स्थण्डिलपरिमाणास्तिस्रो रेखाः कृत्वा इति हरिहरः।कल्पवल्यामपि उल्लेखनं ततः कुर्यादस्थिकण्टकमेव च। तेषामुद्धरणार्थाय उल्लेखः कथितो बुधैः। रेखात्रयमुदक्संस्थं प्रागग्रमस्थिण्डलावधि। अथवा तत्र कुर्वीत द्वादशांगुलमानतः।

फलेन फलमाप्नोति पुष्पेण श्रियमृच्छति। पत्रेण धनलाभं च दीर्घमायुः कुशेन तु।

भवेन्नखेन कुनखी कीलेन व्याधिमृच्छति। भस्मना हुतनाशः स्यान्मृन्मयेन कलिधर्वम्।

तस्मात् फलेन पत्रेण कुशेन कुसुमेन वा। प्राग्लेखोल्लेखने विप्र सिद्धिः कर्मसु सर्वदा।

प्रथमा सात्विकी ज्ञेया द्वितीया राजसी मता। तृतीया तामसी तासां देवा ब्रह्माच्युतेश्वराः।

4-उद्धृत्य इति सूत्रम्। अनामिकांगुष्ठाभ्यामग्निकार्ये तथोत्करम्। तेषां संरक्षणार्थाय उद्धृत्य कथितं बुधैः।

5-अभ्युक्ष्य इति सूत्रम्। मणिकाद्भिरभ्युक्ष्याभिषिच्य इति हरिहरः। कारिकायामपि आपो देवगणाः सर्वे आपः पितृगणाः स्मृताः। तेनैवाभ्युक्षणं प्रोक्तमृषिभिर्वेदवादिभिः। संग्रहे विशेषः उत्तानेन तु हस्तेन कर्त्तव्यं प्रोक्षणं बुधैः अवाचीनेन हस्तेन कर्तव्यं तदवेक्षणम्। मुष्टिकृतेन हस्तेन चाभ्युक्षणमुदाहृतम्। एते पंचभूसंस्काराः।

1-अग्निकार्य में परिसमूहनादि विचार- पंचभूसंस्कार का पहला सूत्र परिसमूह्य है। इस सन्दर्भ में हरिहर भाष्य में लिखा गया है कि तीन कुशों से स्थण्डिल के धूल को झाड़ना। कारण बताते हुये आचार्य वादरायण जी ने कहा है कि कृमी, कीट, पतंग इत्यादि इस पृथ्वी पर विचरते रहते हैं उनके संरक्षण के लिये परसमूहन कहा गया है। दर्भ की संख्या कितनी होनी चाहिये इस पर कहा गया अंगुष्ठ एवं कनिष्ठा अंगुलि से तीन कुशाओं के मूल को पकड़कर अग्रभाग से झाड़ना चाहिये। धूल को पूर्व की ओर सरकाना चाहिये।

2-उपलिप्य इस सूत्र की व्याख्या में हरिहर जी गोमय से उपलेपन का विधान करते हैं। पूर्व काल में इन्द्र के वज्र से वृत्र नामक महा असुर मारा गया। उसके मेद से यह पृथ्वी व्याप्त हो गयी इसलिये उपलेपन किया जाता है। गोबर में लक्ष्मी का वास होता है, वह पवित्र एवं मंगल करने वाला होता है। यज्ञीय भूमि के संस्कारार्थ उपलेपन किया जाता है। गोमय का लक्षण करते हुये कहा गया है कि रोगी, वृद्ध, सद्यः व्यायी हुयी, बन्ध्या, गाभिन, अपवित्र पदार्थों का भक्षण करने वाली एवं मृतवत्सा का गोमय, गोमूत्र, गोदुग्ध नही ग्रहण करना चाहिये। स्वच्छ स्थान में स्वच्छ गोमय ऊपर एवं नीचे के भाग तथा जल भाग को छोड़कर गोमय स्वीकार करना चाहिये।

3-त्रिरुल्लिख्य इस सूत्र की व्याख्या में हस्त मात्र खदिर के स्फ्य से प्रागग्र करके उदक् संस्थित तीन रेखा स्थण्डिल के परिमाण के बराबर खीचनी चाहिये। कल्पवल्ली नामक ग्रन्थ में वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि अस्थिकण्टक के उद्धरणार्थ उल्लेखन करना चाहिये। इसमें तीन रेखा उदक्

संस्थ प्रागग्र स्थण्डिलावधि तक होनी चाहिये या बारह अंगुल के मान से रेखा करनी चाहिये। फल से फल, पुष्प से श्रिय, पत्र से धन लाभ एवं कुश से दीर्घ आयु की प्राप्ति होती है। नख से रेखा करने पर कुनखी, कील से करने पर व्याधि, भस्म से हुतनाश एवं मिट्टी से कलि की प्रप्ति होती है। इसलिये फल से, पत्र से, कुश से एवं पुष्प से उल्लेखन कर्म विप्र को कर्मों में सिद्धि प्रदान करता है। उल्लेखन में जो तीन रेखायें की जाती हैं उनमें पहली रेखा सात्विकी, दूसरी रेखा राजसी एवं तीसरी रेखा तामसी मानी जाती है। इनके ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर क्रमशः देवता बतलाये गये हैं।

4-उद्धृत्य इस सूत्र में अनामिका एवं अंगुष्ठ अंगुलियों की सहायता से रेखाओं से किंचिद् पांसु यानी धूल लेकर उत्कर यानी कुण्ड या स्थण्डिल से बाहर कर देना चाहिये। कारिका में लिखा गया है कि आकाशपथगामी पिशाचादि जो पृथ्वी तल पर विचरण करते हैं उनसे संरक्षण के लिये उद्धृत्य कहा गया है।

5- पॉचवा सूत्र अभ्युक्ष्य है इसके विषय में हरिहर जी व्याख्या करते है कि अंजली में जल भरकर अभ्युक्षण करना चाहिये। कारिका में आया है कि जल में देवगण व पितृगण होते हैं इसलिये जल से अभ्युक्षण करना चाहिये। उत्तान हस्त से अभिषिंचन प्रोक्षण, अधो हस्त से अवेक्षण एवं मुष्टिकृद्धस्त से अभ्युक्षण किया जाता है। ये अग्नि स्थापनार्थ स्थण्डिल के किये जाने वाले पाँच भूमि के संस्कार है।

इस प्रकार पंचभूसंस्कार के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-फलेन फलमाप्नोति .... श्रियमृच्छति।

क- पुष्पेण, ख- कुशेन, ग- कीलेन, घ- मृन्मयेन।

प्रश्न-2 पत्रेण धनलाभं च दीर्घमायुः .... तु।

क- पुष्पेण, ख- कुशेन, ग- कीलेन, घ- मृन्मयेन।

प्रश्न 3- भवेन्नखेन कुनखी .... व्याधिमृच्छति।

क- पुष्पेण, ख- कुशेन, ग- कीलेन, घ- मृन्मयेन।

प्रश्न 4-भस्मना हुतनाशः स्यान्.............. कलिधर्वम्।

क- पुष्पेण, ख- कुशेन, ग- कीलेन, घ- मृन्मयेन।

प्रश्न 5- तस्मात् फलेन .... कुशेन कुसुमेन वा।

क- पत्रेण, ख- सिद्धिः, ग- राजसी, घ- तामसी।

प्रश्न 6- प्राग्लेखोल्लेखने विप्र .... कर्मसु सर्वदा।

क- पत्रेण, ख- सिद्धिः, ग- राजसी, घ- तामसी।

प्रश्न 7-प्रथमा सात्विकी ज्ञेया द्वितीया ....मता।

क- पत्रेण, ख- सिद्धिः, ग- राजसी, घ- तामसी।

प्रश्न 8- तृतीया .... तासां देवा ब्रह्माच्युतेश्वराः।

क- पत्रेण, ख- सिद्धिः, ग- राजसी, घ- तामसी।

प्रश्न 9- पहला पंचभूसंस्कार है-

क-परिसमुह्य ,ख- उपलिप्य ग-उल्लिख्य, घ-उद्धृत्य।

प्रश्न 9- दूसरा पंचभूसंस्कार है-

क-परिसमुह्य ,ख- उपलिप्य ग-उल्लिख्य, घ-उद्धृत्य।

1.5 सारांश-

इस इकाई में पंच भू संस्कार विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया। पंचभूसंस्कार के ज्ञान के अभाव में पूर्णिमा आदि के अवसर पर हवन विधियों का आयोजन, विष्णु यज्ञादि अनुष्ठानों के अवसर पर हवनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसके बिना अग्नि स्थापन ही नही होगा तो हवन कैसे किया जा सकता है।

स्नानादि करके शुद्ध होकर सफेद वस्त्र धारण करके उत्तरीय पूर्वक कर्म स्थान में आकर वारणादि यज्ञीय वृक्षों के आसन पर प्रागग्र या उदगग्र कुशों को बिछाकर पूर्व मुख बैठकर आचमन प्राणायाम पूर्वक देशकाल का स्मरण करके अमुक कर्म के लिये पंचभूसंस्कार कर रहा हूँ ऐसा संकल्प करें। कहा गया है कि स्नान दानादि कर्मों में संकल्प ही मुख्य है। संकल्प रहित सारे कर्म निष्फल हो जाते है। शुद्ध भूमि पर चौबीस अंगुल के क्षेत्र में स्थण्डिल की परिकल्पना करनी चाहिये। कहा गया है- चौबीस अंगुल वाला स्थण्डिल मिट्टी का बनाना चाहिये। व्यास का वचन है कि दो अंगुल का कण्ठ होता है। कर्मप्रदीप में लिखा है आठ अंगुल ऊँचा एवं चौबीस अंगुल आयतन वाला स्थण्डिल बनावें। ऐसा नही करने पर पन्नग लोग दुखी होते हैं। पंचभूसंस्कार का पहला सूत्र परिसमूह्य है। इसमें लिखा गया है कि तीन कुशों से स्थण्डिल के धूल को झाड़ना। कारण बताते हुये आचार्य वादरायण जी ने कहा है कि कृमी, कीट, पतंग इत्यादि इस पृथ्वी पर विचरते रहते हैं उनके संरक्षण के लिये परसमूहन कहा गया है। उपलेपन में विधान करते हैं- पूर्व काल में इन्द्र के वज्र से वृत्र नामक महा असुर मारा गया। उसके मेद से यह पृथ्वी व्याप्त हो गयी इसलिये उपलेपन किया जाता है। गोबर में

लक्ष्मी का वास होता है, वह पवित्र एवं मंगल करने वाला होता है। यज्ञीय भूमि के संस्कारार्थ उपलेपन किया जाता है।

तीसरे संस्कार की व्याख्या में हस्त मात्र खदिर के स्फ्य से प्रागग्र करके उदक् संस्थित तीन रेखा स्थण्डिल के परिमाण के बराबर खीचनी चाहिये। कल्पवल्ली नामक ग्रन्थ में वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि अस्थिकण्टक के उद्धरणार्थ उल्लेखन करना चाहिये। इसमें तीन रेखा उदक् संस्थ प्रागग्र स्थण्डिलावधि तक होनी चाहिये या बारह अंगुल के मान से रेखा करनी चाहिये। फल से फल, पुष्प से श्रिय, पत्र से धन लाभ एवं कुश से दीर्घ आयु की प्राप्ति होती है। नख से रेखा करने पर कुनखी, कील से करने पर व्याधि, भस्म से हुतनाश एवं मिट्टी से कलि की प्रप्ति होती है। इसलिये फल से, पत्र से, कुश से एवं पुष्प से उल्लेखन कर्म विप्र को कर्मों में सिद्धि प्रदान करता है। उद्धृत्य इस सूत्र में अनामिका एवं अंगुष्ठ अंगुलियों की सहायता से रेखाओं से किंचिद् पांसु यानी धूल लेकर उत्कर यानी कुण्ड या स्थण्डिल से बाहर कर देना चाहिये। पॉचवा सूत्र अभ्युक्ष्य है इसके विषय में हरिहर जी व्याख्या करते है कि अंजली में जल भरकर अभ्युक्षण करना चाहिये। कारिका में आया है कि जल में देवगण व पितृगण होते हैं इसलिये जल से अभ्युक्षण करना चाहिये। उत्तान हस्त से अभिषिंचन प्रोक्षण, अधो हस्त से अवेक्षण एवं मुष्टिकृद्धस्त से अभ्युक्षण किया जाता है। ये अग्नि स्थापनार्थ स्थण्डिल के किये जाने वाले पाँच भूमि के संस्कार है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

शुक्ल- सफेद, मृत्स्ना- मिट्टी, ब्राह्मणी - ब्राह्मण वर्ण वाली, सा- वह, प्रकीर्तिता- कही गयी है, क्षत्रिया- क्षत्रिय वर्ण वाली, रक्तमृत्स्ना- लाल मिट्टी, च- और, हरिद्वैश्या- हरे रंग की वैश्य वर्ण की, कृष्णा- काली, चतुर्धा- चार प्रकार की, भूः- भूमि, कुशोपेता- कुश सहिता, सर्वतृणाकुला-सब प्रकार के तृणों से युक्त भूमि , सुगन्धा- सुन्दर गन्ध वाली, रक्त गन्धा- खून के गन्ध वाली, मधुगन्धा- मधु के गन्ध वाली, मद्यगन्धा- मदिरा की गन्ध वाली, अम्ला- अम्लयुक्ता, तिक्ता- तीखी, पूर्वप्लवा- पूर्व की ओर झुकी हुयी, वृद्धिकरी- वृद्धि करने वाली, धनदा- धन देने वाली, अर्थक्षयकरी-अर्थ क्षय करने वाली, विद्यात्- जानी जाती है, पश्चिमप्लवा- पश्चिम की ओर ढाल वाली, दक्षिणप्लवा- दक्षिण की ओर ढाल वाली, मृत्तिदा-मिट्टी देने वाली, नवकुण्डी- नव कुण्ड, पंचकुण्डी- पांच कुण्ड, प्राच्या- पूर्व, चतुष्कोण- चतुरस्र, भग- योनि, इन्दुखण्ड- अर्धचण्ड, त्रिकोण- तीन कोना, अंगभुजा- छ कोण, अम्बुज- कमल, अष्टास्त्र- अष्टास्र, शक्रेश्वर-इन्द्र, शत्रुनाशः- शत्रु का नाश, खाताधिके- गड्ढा अधिक होना, भवेद्रोगी- रोगी होता है, हीने - गड्ढा से हीन , धेनु क्षय- गाय की हानि, वक्रकुण्डे- टेढ़ा कुण्ड,सन्तापा- दुख, छिन्नमेखले- टूटी हुयी मेखला वाला, मेखला रहिते - मेखला से हीन, शोक- दुख, अभ्यधिके - अधिक, वित्तसंक्षयः- धनहानि, भार्यादिनाशनं - स्त्री विनाश, प्रोक्तं- कहा गया है, कुण्डं योन्याविनाकृते- योनि के बिना कुण्ड करने से, कण्ठरहितं - कण्ठ से रहित, द्विघ्नं -

दुगूना, व्यासं - व्यास, तुर्यचिन्हं - चार चिन्ह, सपाशं- फन्दा सहित, सूत्रं - सूता, शंकौ - शंकु में, पश्चिमे- पश्चिम में, पूर्वगेपि- पूर्व से भी, दत्वा- देकर, कर्षेत्कोणयोः- कोणों में खीचें, पाशतुर्यं -चार फन्दे, वेदकोणं - चतुष्कोण, समानम्- समान, क्षेत्रे - क्षेत्र, पुरतः - पूर्व से, शरांशान् - पंचमांश, रदांश- चौबीसवां अंश, युक्तान्- युक्त, लिखेत्- रेखा आरेख, शतांश- सौंवां अंश, अग्रतः- आगे से, वह्न्यंशं - त्र्यंश, पुरतो - सामने, चतुर्थांशकः-चौथा अंश, अष्टांशा- अष्टमांश, आदिमं -पहला, कर्णिका- कोणों, युग्मे - जोड़ा, षोडशधा - सोलह भाग, शर- पांच, जिनांशे- चौबीसवां अंश, गज- आठ, चन्द्रभागः- एक भाग, विदिग्- कोण, मृदा- मिट्टी, करमानं - एक हाथ के मान के बराबर, चतुरंगुलोच्च- चार अंगुल उचाई, हवने - हवन में, उदकेन - जल से, दर्भेण- दर्भ से, आज्येन- घी से, विनोदकम्- बिना जल के, प्राङ्मुखोपविश्य - पूर्व मुख बैठकर।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

1.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

1.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-क।

1.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-क।

1.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-घ, 10-घ ।

1.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-कुण्डमण्डप सिद्धि।

2-वृह्द वास्तु मालाः।

3-वास्तुराज वल्लभ।

4-शब्दकल्पद्रुमः।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-नित्य कर्म पूजा प्रकाश।

7-पूजन- विधान।

8-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

1.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- यज्ञ मीमांसा।

2- प्रयोग पारिजात।

3- अनुष्ठान प्रकाश।

1.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- भूमि का परिचय बतलाइये।

2- चतुरस्र का स्वरूप बतलाइये।

3- त्रिकोण कुण्ड का परिचय लिखिये।

4- अर्धचन्द्र कुण्ड निर्माण की विधि लिखिये।

5- वृत्त कुण्ड निर्माण की विधि लिखिये।

6- षडस्र कुण्ड निर्माण की विधि लिखिये।

7- पद्म कुण्ड की विधि लिखिये।

8- अष्टास्र कुण्ड निर्माण की विधि लिखिये।

9- कुशे का महत्त्व लिखिये ।

10- पंच भू संस्कार लिखिये।

इकाई – 2 अग्नि स्थापन

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 अग्नियों के नाम एवं अग्नि जिह्वाओं के नाम का विचार

2.3.1 कर्म विशेष में अग्नियों के नाम

2.3.2 अग्नि जिह्वाओं के नाम

2.4 अग्निस्थापन की विधि

2.4.1 अग्निप्रज्वालनविचारः

2.4.2 अग्नि का स्वरूप

2.5 सारांश

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.9 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में अग्निस्थापन की प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कर्मकाण्ड में अनुष्ठानादि की सम्पन्नता हेतु हवन का विधान सर्वविदित है। हवन के अभाव में किसी भी अनुष्ठान की पूर्णता नही हो पाती है। हवन कार्य का प्रारभ अग्नि स्थापन से होता है । यदि यह कहा जाय कि अग्नि स्थापन के अभाव में हवन कार्य हो ही नही सकता तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी।

वास्तविक रूप से देखा जाय तो अग्नि स्थापन का मतलब है अग्नि की स्थापना। अब यहां प्रश्न उपस्थित होता है कि अग्नि को कैसे स्थापित करना चाहिये? उत्तर में आता है कि जिस भूमि पर अग्नि स्थापन करना हो उस भूमि के पांच संस्कार किये जाते हैं तदनन्तर अग्नि स्थापन किया जाता हैं। अग्नि स्थापन की विधि को बिना जाने यदि कोई अग्नि स्थापन करता है तो उसे उसके किये गये हवनीय कृत्य के फल की प्राप्ति नही होती है। हालांकि शास्त्रों में अलग- अलग कार्यों के लिये अलग- अलग अग्नियों का विधान पाया जाता है, जिसका ज्ञान स्थापन के समय अवश्य होना चाहिये, क्योंकि जब हम अग्नि स्थापन करते हैं तो उस समय संकल्प करते हैं कि अमुक नाम की अग्नि को अमुक कार्य की सिद्धि हेतु स्थापित करने जा रहा हूँ । अग्नि को स्वाभिमुख स्थापित करने का विधान है। कई लोग स्वप्रतिकूलाभिमुख ही अग्नि स्थापित करके अनुष्ठान करते हैं जो उचित नही है। कर्मकाण्ड के प्रमुख महत्वपर्ण कार्यों में अग्नि का स्थापन एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है , इसलिये अग्नि स्थापन की सम्यक् विधि का ज्ञान आवश्यक है।

इस इकाई के अध्ययन से आप अग्नि स्थापन के विचार करने की विधि एवं सम्पादन करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे यज्ञादि कार्यों या अनुष्ठानादि के अवसर किये जाने वाले अग्नि स्थापन विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

2.2 उद्देश्य-

अब अग्नि स्थापन विचार एवं सम्पादन की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं।

-कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

-अग्नि स्थापन के सम्पादनार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।

- अग्नि स्थापन के सम्पादन में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

-प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

-लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

-समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

2.3. अग्नियों के नाम एवं अग्नि जिह्वाओं के नाम का विचार -

अग्नि स्थापन में सर्व प्रथम अग्नि के नामों को जानना अति आवश्यक है। इसके ज्ञान से आपको यह पता चल जायेगा कि किस काम के लिये किस नाम की अग्नि का ध्यान , आवाहन या पूजन किया जायेगा। इसके साथ ही साथ अग्नि जिह्वाओं के बारे में पुष्ट ज्ञान की प्राप्ति हो सकेगी। जो अधोलिखित है-

2.3.1-कर्म विशेष में अग्नियों के नाम-

पावको लौकिके अग्निः प्रथमः संप्रकीर्तितः। अग्निस्तु मारुतो नाम गर्भाधाने विधीयते।

पुंसवने चन्द्र नामा शुभ कर्मणि शोभनः। सीमन्ते मंगलो नाम प्रगल्भो जात कर्मणि।

नाम्नि वै पार्थिवो ह्यग्निः प्राशाने तु शुचिः स्मृतः।

सभ्यो नाम स चौले तु व्रतादेशे समुद्भवः। गोदानेसूर्यनामाग्निर्विवाहे योजको मतः।

आवसथ्ये द्विजो ज्ञेयो वैश्वदेवे तु रुक्मकः। प्रायश्चित्ते विटश्चैव पाकयज्ञेषु पावकः।

देवानां हव्यवाहश्च पितृणां कव्यवाहनः। शान्तिके वरदः प्रोक्तः पौष्टिके बलबर्धनः।

पूर्णाहुत्यां मृडो नाम क्रोधाग्निश्चाभिचारिके। वश्यार्थे कामदो नाम वनदाहे तु दूषकः।

कुक्षौ तु जाठरो ज्ञेयः क्रव्यादौ मृतदाहके। वह्निनामा लक्षहोमे कोटिहोमे हुताशनः।

वृषोत्सर्गे ध्वरो नाम शुचये ब्राह्मणः स्मृतः। समुद्रे वाडवो ह्यग्निः क्षये संवर्तकस्तथा।

ब्रह्मा वै गार्हपत्यश्च ईश्वरो दक्षिणस्तथा। विष्णुरावहनीयः स्यात् अग्निहोत्रे त्रयोग्नयः

ज्ञात्वैवमग्निनामानि गृह्यकर्म समाचरेत्।

ग्रहहोमे विशेषः आदित्ये कपिलो नाम पिंगलः सोम उच्यते। धूमकेतुस्तथा भौमे जाठरोऽग्निर्बुधे स्मृतः।

गुरो चैव शिखी नाम शुक्रे भवति हाटकः। शनैश्चरे भवति महातेजा राहुकेत्वोर्हुताशनः।

-कर्म विशेष के अनुसार अग्नियों के नाम इस प्रकार है। लौकिक अग्नियों में पावक नाम की अग्नि को प्रथम माना गया है। गर्भाधान संस्कार में मारुत नाम के अग्नि का आवाहन होता है। पुंसवन में पावमान, सीमन्त में मंगल, जातकर्म में प्रबल, अन्नप्राशन में पार्थिव चौल संस्कार में सभ्य, उपनयन में समुद्भव, गोदान में सूर्य, विवाह में योजक, वैश्वदेव में रुक्मक, प्रायश्चित्त में विट, पाकयज्ञों में पावक, देवों को हव्यवाहन, पितरों को कव्यवाहन, शान्तिक कार्यों में वरद, पौष्टिक कार्यों में बलबर्धन, पूर्णाहुति में मृड, अभिचारि कर्मों में क्रोधाग्नि, वश्यार्थ कामद, वनदाह में दूषक, कुक्षि में

जठर, मृतदाह कार्य में क्रव्याद, लक्षहोम या कोटि होम में हुताशन, वृषोत्सर्ग में अध्वर, समुद्र में वाडव, क्षय में संवर्तक अग्नियों के नाम है। गार्हपत्याग्नि, दक्षिणाग्नि एवं आहवनीयाग्नि ये तीन अग्निहोत्र की अग्नियों को क्रमशः ब्रह्मा, शिव एवं विष्णु के रूप में जाना जाता है। अग्नियों के नाम जानकर के ही गृह्य कर्म का आचरण करना चाहिये। ग्रहों के हवन में भी अग्नियों के नाम क्रमशः लिखे गये हैं। सूर्य हेतु कपिल, चन्द्रमा हेतु पिंगल, भौम हेतु धूमकेतु, बुध हेतु जाठर, गुरु के लिये शिखी, शुक्र के लिये हाटक, शनि के लिये महातेजा तथा राहु एवं केतु के लिये हुताशन अग्नियों के नाम बतलाये गये है।

इस प्रकार अग्नि के नामों के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-पावको लौकिके अग्निः प्रथमः संप्रकीर्तितः। अग्निस्तु .... नाम गर्भाधाने विधीयते।

क- मारुतो, ख- प्रगल्भो, ग- पार्थिवो, घ- सभ्यो।

प्रश्न 2- पुंसवने चन्द्र नामा शुभ कर्मणि शोभनः। सीमन्ते मंगलो नाम .... जात कर्मणि।

क- मारुतो, ख- प्रगल्भो, ग- पार्थिवो, घ- सभ्यो।

प्रश्न 3- नाम्नि वै .... ह्यग्निः प्राशने तु शुचिः स्मृतः।

क- मारुतो, ख- प्रगल्भो, ग- पार्थिवो, घ- सभ्यो।

प्रश्न 4- .... नाम स चौले तु व्रतादेशे समुद्भवः। गोदानेसूर्यनामाग्निर्विवाहे योजको मतः।

क- मारुतो, ख- प्रगल्भो, ग- पार्थिवो, घ- सभ्यो।

प्रश्न 5- आवसथ्ये द्विजो ज्ञेयो वैश्वदेवे तु रुक्मकः। प्रायश्चित्ते विटश्चैव पाकयज्ञेषु ....।

क- पावकः, ख- वरदः, ग- वश्यार्थे, घ- कोटिहोमे।

प्रश्न 6-देवानां हव्यवाहश्च पितृणां कव्यवाहनः। शान्तिके .... प्रोक्तः पौष्टिके बलबर्धनः।

क- पावकः, ख- वरदः, ग- वश्यार्थे, घ- कोटिहोमे।

प्रश्न 7- पूर्णाहुत्यां मृडो नाम क्रोधाग्निश्चाभिचारिके। .... कामदो नाम वनदाहे तु दूषकः।

क- पावकः, ख- वरदः, ग- वश्यार्थे, घ- कोटिहोमे।

प्रश्न 8- कुक्षौ तु जाठरो ज्ञेयः क्रव्यादौ मृतदाहके। वह्निनामा लक्षहोमे .... हुताशनः।

क- पावकः, ख- वरदः, ग- वश्यार्थे, घ- कोटिहोमे।

प्रश्न 9- वृषोत्सर्गे ध्वरो नाम शुचये ब्राह्मणः स्मृतः। समुद्रे .... ह्यग्निः क्षये संवर्तकस्तथा।

क- पावकः, ख- वरदः, ग- वश्यार्थे, घ-वाडवो।

प्रश्न 10- ब्रह्मा वै गार्हपत्यश्च ईश्वरो दक्षिणस्तथा। विष्णुरावहनीयः स्यात् .... त्रयोग्नयः।

क- पावकः, ख- वरदः, ग- अग्निहोत्रे, घ- कोटिहोमे।

2.3.2.-अग्नि जिह्वाओं के नाम-

याभिर्हव्यं समश्नाति हुतं सम्यक् द्विजोत्तमैः।

काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता चैव सुधूम्रवर्णा।

स्फुलिंगिनी विश्वरुचिस्तथा च चलायमाना इति सप्तजिह्वाः।

एताश्चोक्ता विशेषेण ज्ञातव्या ब्राह्मणेन तु। आहूय चैव होतव्यो यो यत्र विहितो विधिः।

अविदित्वा तु यो ह्यग्निं होमयेदविचक्षणः। न हुतं न च संस्कारो न तु यज्ञफलं भवेत्।

अन्यत्र- जिह्वैककरणं प्रोक्तं सप्तानामेकया ऋचा। समुद्रादुर्मिरनया होतव्यं कर्मसिद्धये।

जिह्वा स्थानानि- कुण्डस्य पूर्वदिग्भागे काली जिह्वा प्रकीर्तिता। आग्नेये तु करालाख्या दक्षिणे तु मनोजवा।

सुलोहिता नैर्ऋते च धूम्रवर्णा तु वारुणे। स्फुलिंगिनी तु वायव्ये सौम्ये विश्वरुचिस्तथा।

काल्यां कराल्यां वा कुर्याच्छान्तिकं पौष्टिकं तथा। मनोजवायां जिह्वायामभिचारो भिधीयते।

सुलोहितायां जिह्वायां तस्यामुच्चाटनं विदुः। सर्वार्थसिद्धिकां विश्वरुचिं मन्त्रविदो विदुः।

अपरे वसुधारेति जिह्वां पूर्वोदितां जगुः। उपजिह्वेति सा प्रोक्ता लक्ष्मीस्तत्र प्रतिष्ठिता।

कुण्डस्य मध्यमं पार्श्वमग्नेरास्यं प्रकीर्तितम्। तस्मिन् सर्वाणि कार्याणि साधनीयानि नित्यशः।

संग्रहे विशेषः विवाहे वारुणी जिह्वा मध्यमा यज्ञकर्मसु। उत्तरा चोपनयने दक्षिणा पितृकर्मसु।

प्राचीना सर्वकार्येषु ह्याग्नेयी ऐषानी चोग्रकार्येषु बुद्ध्येतद्धोमलक्षणम्।

-अग्नि जिह्वाओं के नाम- द्विजोत्तमों के द्वारा प्रदत्त आहुतियों को जिससे देवताओं तक पहुचाया जाता है उसन अग्नि जिह्वाओं के नाम काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, सुधूम्रवर्णा, स्फुलिंगिनी, विश्वरुचि और चलायमाना ये सात जिह्वायें हैं। इनका आवाहन करके विधि के अनुसार हवन करना चाहिये। बिना जाने जो अग्नि में हवन करता है उसका हवन न तो हुत होता है न ही संस्कृत होता है तथा न ही यज्ञ के फल को प्राप्त करता है। अन्यत्र स्थलों पर एक ही ऋचा से सातों जिह्वाओ कें एकीकरण का विधान है। समुद्रादुर्मि नामक ऋचा से कर्म के सिद्ध्यर्थ अवश्य हवन करना चाहिये। जिह्वा के स्थान के बारे में वर्णन मिलता है कि कुण्ड के पूर्व भाग में काली , आग्नेय में कराली, दक्षिण में मनोजवा, नैर्ऋत्य में सुलोहिता, पश्चिम में धूम्रवर्णा, वायव्य में स्फुलिंगिनी, उत्तर में विश्वरुचि नामक जिह्वायें मन्त्रज्ञ लोग जानते है। काली अथवा कराली नामक जिह्वा में पौष्टिक कर्म करना चाहिये। मनोजवा में अभिचार करना चाहिये। दूसरे आचार्यगण पूर्व में वसुधा नाम की जिह्वा बताते हैं। इसको उपजिह्वा कहा जाता है यहॉं लक्ष्मी विराजमान रहती है। कुण्ड के मध्य पार्श्व में अग्नि का मुख होता है। उसमें व्यक्ति को अपने सभी कार्यों का साधन करना चाहिये। संग्रह नामक ग्रन्थ में

विशेष करके लिखा गया है कि विवाह में वारुणी जिह्वा, यज्ञकर्म में मध्यमा, उपनयन में उत्तरा, पितृ कर्मों में दक्षिणा, सभी कार्यों में प्राचीना तथा उग्र कामों में ऐशानी अग्नि जिह्वाओं को जानना चाहिये।

इस प्रकार अग्नि के जिह्वाओं के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- काली कराली च मनोजवा च .... चैव सुधूम्रवर्णा।

क- सुलोहिता, ख- चलायमाना, ग- यज्ञफलं, घ- ऋचा।

प्रश्न 2- स्फुलिंगिनी विश्वरुचिस्तथा च .... इति सप्तजिह्वाः।

क- सुलोहिता, ख- चलायमाना, ग- यज्ञफलं, घ- ऋचा।

प्रश्न 3- अविदित्वा तु यो ह्यग्निं होमयेदविचक्षणः। न हुतं न च संस्कारो न तु .... भवेत्।

क- सुलोहिता, ख- चलायमाना, ग- यज्ञफलं, घ- ऋचा।

प्रश्न 4- जिह्वैककरणं प्रोक्तं सप्तानामेकया ....। समुद्रादुर्मिरनया होतव्यं कर्मसिद्धये।

क- सुलोहिता, ख- चलायमाना, ग- यज्ञफलं, घ- ऋचा।

प्रश्न 5- कुण्डस्य पूर्वदिग्भागे .... जिह्वा प्रकीर्तिता। आग्नेये तु करालाख्या दक्षिणे तु मनोजवा।

क- सुलोहिता, ख- काली, ग- यज्ञफलं, घ- ऋचा।

प्रश्न 6- .... नैर्ऋते च धूम्रवर्णा तु वारुणे। स्फुलिंगिनी तु वायव्ये सौम्ये विश्वरुचिस्तथा।

क- सुलोहिता, ख- चलायमाना, ग- यज्ञफलं, घ- ऋचा।

प्रश्न 7- काल्यां कराल्यां वा कुर्याच्छान्तिकं पौष्टिकं तथा। .... जिह्वायामभिचारो भिधीयते।

क- सुलोहिता, ख- मनोजवायां, ग- यज्ञफलं, घ- ऋचा।

प्रश्न 8- .... जिह्वायां तस्यामुच्चाटनं विदुः। सर्वार्थसिद्धिकां विश्वरुचिं मन्त्रविदो विदुः।

क- सुलोहितायां, ख- चलायमाना, ग- यज्ञफलं, घ- ऋचा।

प्रश्न 9- अपरे वसुधारेति जिह्वां पूर्वोदितां जगुः। उपजिह्वेति सा .... लक्ष्मीस्तत्र प्रतिष्ठिता।

क- सुलोहिता, ख- चलायमाना, ग- यज्ञफलं, घ- प्रोक्ता।

प्रश्न 10- कुण्डस्य मध्यमं पार्श्वमग्नेरास्यं प्रकीर्तितम्। तस्मिन् सर्वाणि कार्याणि साधनीयानि ....।

क- सुलोहिता, ख- चलायमाना, ग- नित्यशः , घ- ऋचा।

इस प्रकार से आपने अग्नियों के नाम एवं अग्नि जिह्वाओं के नामों को जाना। आशा है आपको

इसका सम्यक् ज्ञान हो गया होग। अब हम अग्नि सथापन की विधि का वर्णन करने जा रहे हैं जो इस प्रकार है-

2.4- अग्निस्थापन की विधि-

अग्निमुपसमाधाय इति सूत्रम्।

कर्मसाधनभूतं लौकिकं स्मार्तं श्रौतं वाग्निम् आत्माभिमुखं स्थापयित्वा इति हरिहरः। पात्रान्तरेणपिहितं ताम्रपात्रादिके शुभे। अग्निप्रणयनं कुर्याच्छरावे तादृशेऽपि वा। शुभ्रं पात्रं तु कांस्यं स्यात्तेनाग्निं प्रणयेद्बुधः। तस्याभावे शरावेण नवेनापि दृढ़ेन च । शरावे भिन्नपात्रे वा कपाले चोल्मुकेऽपि वा। नाग्निप्रणयनं कुर्याद् व्याधिहानिभयावहम्। इत्यत्र शरावनिशेधकं वचनं मुख्यपात्र संभवे वेदितव्यम्। कपालं खर्प्परम्। उल्मुकं ज्वलदग्नेरेकदेषमित्यर्थः। संपुटेनाग्निमानीय स्थाप्याग्नेर्दिशि कुण्डतः। आमक्रव्यभुजौ तस्मात्यक्त्वा कुण्डे विनिक्षिपेत्। अग्निमानीयपात्रे तु प्रक्षिपेदक्षतोदकम्। यद्येवं नैव कुर्वीत् यजमानभयावहम्। आनीतपात्रयोरेव प्लावनं तत्क्षणे भवेत्। नो चेत्कर्तुमनस्ताप स्यात्संतापस्तयोरपि। अग्निनियमः उत्तमो अरणिजन्यो अग्निर्मध्यमः सूर्यकान्तजः। उत्तमः श्रोत्रियागारान्मध्यमः स्वगृहादिजः। सूर्यकान्तादिसंभूतं यद्वा श्रोत्रियगेहजम्। आनीय चाग्निं पात्रेण क्रव्यादांशां परित्यजेत्। सूर्यकान्तादरणितः श्रोत्रियागारतोपिऽवा। पात्रेण पिहिते पात्रे वह्निमेवानयेत्ततः। अस्त्रेणादाय तत्पात्रं वर्मणोद्घाटयेत्तु तम्। अस्त्र मन्त्रेण नैर्ऋत्ये क्रव्यादांशं ततस्त्यजेत्। मूलेन पुरतो धृत्वा संस्कारांश्च ततश्चरेत्। त्याज्याग्निः- चाण्डालाग्निरमेध्याग्निः सूतकाग्निश्च कर्हिचित्। पतिताग्निश्चिताग्निश्च न शिष्टग्रहणोचितः।

अर्थत् इस विधि से अग्नि स्थापन करना चाहिये- अग्निमुपसमाधाय इस सूत्र से अग्नि के स्थापन के क्रम का निर्देश होता है। कर्म के साधन भूत लौकिक, स्मार्त या श्रौत अग्नियों को आत्माभिमुख यानी अपनी ओर करके स्थापित करना चाहिये। तामा्रदि पात्रों में पात्र से ढँककर अग्नि की स्थापना करनी चाहिये। अथवा शराव यानी मिट्टी के पात्र से या शुभ्र कांस्य पात्र से या नवीन दृढ़ पात्र से अग्नि का प्रणयन किया जा सकता है। संस्कारभास्कर में लिखा गया है कि शराव पात्र में, कपाल पात्र में या उल्मुक पात्र में रखी हुयी अग्नि से अग्नि प्रणयन नही करना चाहिये क्योकि उससे व्याधि एवं हानि का भय रहता है। यहॉं शराव निषेधक वचन मिलता है। कपाल का मतलब खप्पर, उल्मुक पात्र यानी पूर्व में प्रज्वलित अग्नि वाला पात्र। संपुटपात्र में अग्नि लाकर अग्नि कोण में स्थापित करके आमक्रव्यभुक् अग्नि का त्याग करके अग्नि प्रणयन करना चाहिये। कुशकण्डिका भाष्य में लिखा गया है कि जिस पात्र में अग्नि लाया जाय उस पात्र में प्रणयन के बाद अक्षत एवं जल डालना चाहिये नही तो यजमान के लिये वह भयावह होता है।

जिस पात्र में अग्नि को लाया जाय उस पात्र का प्लावन तुरत करना चाहिये। नही तो कर्ता के मन में एवं कराने वाले दोनों के मन में संताप की प्राप्ति होती है। अग्नि नियम की व्याख्या करते हुये बतलाया गया है कि अरणी जन्य अग्नि उत्तम, सूर्यकान्त जन्य मध्यम एवं श्रोत्रियागार की अग्नि उत्तम तथा अपने घर की अग्नि मध्यम होती है। सूर्यकान्त से या श्रोत्रिय के घर से लायी गयी अग्नि से

क्रव्यादांश निकालकर अग्नि का प्रयोग करना चाहिये। मन्त्र महोदधि में कहा गया है कि सूर्यकान्त से या अरणी से निःसृत अग्नि को ढँक कर यत्न पूर्वक लाना चाहिये। उसके बाद मूल मन्त्र से उसका संस्कार करते हुये स्थापित करना चाहिये। त्याज्य अग्नि का वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि चाण्डाल की, अमेध्य, सूतकाग्नि, चिताग्नि और पतिताग्नि को शिष्ट ग्रहण नही माना गया है।

इस प्रकार अग्नि के स्थापन के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-अग्नियों को स्थापित करना चाहिये-

क- आत्माभिमुख, ख- परात्माभिमुख, ग- सूर्याभिमुख, घ- चन्द्राभिमुख।

प्रश्न 2- किस दृढ़ पात्र से अग्नि का प्रणयन किया जा सकता है।

क- प्राचीन, ख- नवीन, ग- टूटे हुये, घ- विदीर्ण।

प्रश्न 3- संस्कारभास्कर में लिखा गया है कि शराव पात्र में, कपाल पात्र में या उल्मुक पात्र में रखी हुयी अग्नि से अग्नि प्रणयन नही करना चाहिये क्योकि उससे क्या भय रहता है?

क-मित्र हानि, ख- शत्रु हानि, ग- क्षत्र हानि,घ- व्याधि।

प्रश्न 4- अग्नि को किस कोण से स्थापित करना चाहिये?

क- ईशान, ख-वायव्य, ग- अग्नि, घ- नैर्ऋत्य।

प्रश्न 5- कुशकण्डिका भाष्य में लिखा गया है कि जिस पात्र में अग्नि लाया जाय उस पात्र में प्रणयन के बाद अक्षत एवं जल डालना चाहिये नही तो यजमान के लिये वह .... होता है।

क- भयावह, ख- सुखद, ग- मिश्रित, घ- कुछ भी नही।

प्रश्न 6- जिस पात्र में अग्नि को लाया जाय उस पात्र का .... तुरत करना चाहिये।

क- मिलावन, ख- प्लावन, ग- सुलावन, घ- दिखावन।

प्रश्न 7- अरणी जन्य अग्नि है-

क- उत्तम, ख- मध्यम, ग- अधम, घ- सभी।

प्रश्न 8-सूर्यकान्त जन्य अग्नि है-

क- उत्तम, ख- मध्यम, ग- अधम, घ- सभी।

प्रश्न 9- श्रोत्रियागार की अग्नि है-

क- उत्तम, ख- मध्यम, ग- अधम, घ- सभी।

प्रश्न 10- अपने घर की अग्नि क्या होती है?

क- उत्तम, ख- मध्यम, ग- अधम, घ- सभी।

2.4.1 अग्निप्रज्वालनविचारः-

इस प्रकरण में अग्नि के प्रज्वालन यानी जलाने का विचार किया जायेगा। असल में लोगों के मन में एक सामान्य प्रकार की धारणा है कि किसी भी तरह अग्नि को जलाना है ,परन्तु शास्त्रों में इसके लिये नियम बनाये गये हैं । उन नियमों को ध्यान में रखकर ही अग्नि का प्रज्वालन शास्त्र सम्मत हो सकेगा तथा उस अग्नि में किये हवनादि कार्य फलप्रदायी होंगे।

न कुर्यादग्निधमनं कदाचिद्व्यजनादिना। मुखेनैव धमेदग्निं धमन्या वेणुजातया।

जुहुतश्चाथपर्णेन पाणि शूर्पपटादिना। न कुर्याग्निधमनं कदाचिद्व्यजनादिना।

पर्णेनैव भवेद्व्याधिः शूर्पेणधननाशनम्। पाणिना मृत्युमाप्नोति पटेन विफलं भवेत्।

व्यजनेनातिदुःखाय आयुः पुण्यं मुखाद्धमात्। मुखेन धमयेदग्निं मुखादग्निरजायत।

अग्निं मुखेनेति तु यल्लौकिके योजयेत्तु तत्। वेणुरग्निप्रसूतित्वाद्वेणोरग्नश्चपातनः।

तस्माद्वेणुधमन्यैव धमेदग्निविचक्षणः।

यो अनर्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यंगारिणि च मानवः। मन्दाग्निश्चामयावी च दरिद्रश्चैव जायते।

तस्मात्समिद्धे होतव्यं नासमिद्धे कथंचन। आरोग्यमिच्छतायुश्च श्रियमात्यन्तिकीं पराम्।

इन संबंधित श्लोकों को जहां से संग्रहीत किया गया है उनका सन्दर्भ विवरण अंक क्रमांक से दे दिया गया है। उपरोक्त श्लोकों के अर्थों को समझने से आपको अग्नि प्रज्वालन संबंधी विषय ज्ञात हो जायेगा।

कभी भी पंखे से अग्नि को नही जलाना चाहिये। मुख से या वेणु धमनी से अग्नि का प्रज्वालन किया जा सकता है। वेणु धमनी का मतलब है बांस की धमनी। आजकल लोग लोहे की या स्टील की धमनी बना लेते हैं और उसी से फूक मारते है। लेकिन इसका कोई प्रमाण दृष्टिगोचर नही होता है। प्रमाण वेणु धमनी का मिलता है उसका प्रयोग करना उचित है। पत्ते से, हाथ से, सूप से, पटे से या पंखे से कभी अग्नि का प्रज्वालन नही करना चाहिये। पत्ते से अग्नि जलाने से व्याधि, सूप से धन का नाश, हाथ से मृत्यु की प्राप्ति एवं पटे से अग्नि धमन से विफलता की प्राप्ति होती है। व्यजन से अति दुख की प्राप्ति एवं मुख से आयु तथा पुण्य की प्राप्ति होती है। मुख से अग्नि का धमन करना चाहिये क्योकि मुख से अग्नि की उत्पत्ति हुयी है। लौकिक में मुख से अग्नि धमन को देखा जाता है। वेणु से अग्नि की उत्पत्ति हुयी है इसलिये विद्वान् व्यक्ति को वेणु से अग्नि धमन करना चाहिये। यहाँ वेणु का मतलब बांस की बनी हुयी फोफी से लगाया जाना चाहिये। जो बिना अग्नि की पूजा किये अग्नि में हवन करता है या बिना अंगार वाली अग्नि में हवन करता है वह मन्दाग्नि वाला एवं दरिद्र होता है इसलिये आरोग्य, आयु, श्रिय एवं मुक्ति की इच्छा रखने वाले को अच्छी प्रकार से जलती हुयी अग्नि में हवन करना चाहिये। अप्रज्वलित अग्नि में कभी भी हवन नही करना चाहिये।

इस प्रकार अग्नि के प्रज्वालन के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे

आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- न कुर्यादग्निधमनं कदाचिद्व्यजनादिना। मुखेनैव धमेदग्निं .... वेणुजातया।

क- धमन्या, ख- पाणि, ग-पटेन, घ- मुखेनेति।

प्रश्न 2-जुहुतश्चाथपर्णेन .... शूर्पपटादिना। न कुर्याग्निधमनं कदाचिद्व्यजनादिना।

क- धमन्या, ख- पाणि, ग-पटेन, घ- मुखेनेति।

प्रश्न 3- पर्णेनैव भवेद्व्याधिः शूर्पेणधननाशनम्। पाणिना मृत्युमाप्नोति .... विफलं भवेत्।

क- धमन्या, ख- पाणि, ग-पटेन, घ- मुखेनेति।

प्रश्न 4- व्यजनेनातिदुःखाय आयुः पुण्यं मुखाद्धमात्। .... धमयेदग्निं मुखादग्निरजायत।

क- धमन्या, ख- पाणि, ग-पटेन, घ- मुखेन।

प्रश्न 5- अग्निं .... तु यल्लौकिके योजयेत्तु तत्। वेणुरग्निप्रसूतित्वाद्वेणोरग्नश्चपातनः।

क- धमन्या, ख- पाणि, ग-पटेन, घ- मुखेनेति।

प्रश्न 6- तस्माद्वेणुधमन्यैव ....ग्निविचक्षणः।

क- धमेद, ख- पाणि, ग-पटेन, घ- मुखेनेति।

प्रश्न 7- यो अनर्चिषि जुहोत्यग्नौ .... च मानवः। मन्दाग्निश्चामयावी च दरिद्रश्चैव जायते।

क- धमन्या, ख- व्यंगारिणि, ग-पटेन, घ- मुखेनेति।

प्रश्न 8- तस्मात्समिद्धे होतव्यं .... कथंचन। आरोग्यमिच्छतायुश्च श्रियमात्यन्तिकीं पराम्।

क- धमन्या, ख- पाणि, ग-नासमिद्धे, घ- मुखेनेति।

प्रश्न 9- अग्नि की उत्पत्ति कहां से है-

क- मुख से, ग- कान से, ग- आंख से, घ - नाक से।

प्रश्न 10- अप्रज्वलित अग्नि में हवन क्या किया जाता है?

क- किया जाता है, ख- नही किया जाता है, ग- पूछ कर किया जाता है, घ- जैसा मन करे।

2.4.2 अग्नि का स्वरूप-

इस प्रकरण में अग्नि के स्वरूप पर विचार किया जायेगा। क्योकि इससे पूर्व के प्रकरण में एक वचन आया है कि यदि अग्नि पूजन बिना किये अग्नि में हवन किया जाता है तो वह हवन फलदायी नही होता। इसलिये यह जानना परम आवश्यक है अग्नि का स्वरूप क्या है? क्योंकि इसके अभाव में ध्यान नही हो पायेगा तथा ध्यान के अभाव में पूजन नही हो पायेगा। आइये इसमें हम अग्नि का स्वरूप जानें जो इस प्रकार है-

सप्तहस्तश्चतुःश्रृंगः सप्तजिह्वो द्विशीर्षकः।

त्रिपात्प्रसन्नवदनः सुखासीनः शुचिस्मितः।

मेषारूढो जटाबद्धो गौरवर्णो महौजसः।।

धुम्रध्वजो लोहिताक्षः सप्तार्चिः सर्वकामदः।

शिखाभिर्दीप्यमानाभिः उर्ध्वगाभिस्तु संयुतः।

स्वाहां तु दक्षिणे पार्श्वे देवीं वामे स्वधां तथा।

विभ्रद्दक्षिणहस्तैस्तु शक्तिमन्नं स्रुचं स्रुवम्।

तोमरं व्यजनं वामे घृतपात्रं च धारयन्।

आत्माभिमुखमासीनं एवं रूपो हुताशनः।।

अर्थात् अग्नि देवता के सात हाथ, चार सींग, सात जिह्वायें, दो सिर और तीन पैर है। वे प्रसन्नमुख और मन्द हास्ययुत सुखपूर्वक आसन पर आसीन रहते हैं। वे मेष पर आरूढ़ जटाबद्ध, गौरवर्ण, महातेजस्वी, धूम्रध्वज, लाल नेत्रवाले, सात ज्वाला वाले, सब कामनाओं को पूर्ण करने वाले, देदीप्यमान, उर्ध्वगामी ज्वालाओं से युक्त हैं। अग्नि के दक्षिण भाग में स्वाहा और वाम भाग में स्वधादेवि विराजमान रहती है। अग्नि अपने दाहिने हाथों में शक्ति, अन्न, स्रुक्, स्रुव, तोमर, पंखा और बांयें हाथ में घृतपात्र धारण किये हुये है। अग्नि का दूसरा ध्यान इस प्रकार है-

इष्टं शक्तिं स्वस्तिकाभीतिमुच्चै-

दीर्घैर्दोर्भिर्धारयन्तं जपाभम्।

हेमाकल्पं पद्मसंस्थं त्रिनेत्रं,

ध्यायेद् वह्निं वह्निमौलिं जटाभिः।। शारदातिलके 5.34

इसमें अग्नि नारायण का वर्णन करते हुये कहा गया है कि जो अपनी उंची भुजाओं में इष्टमुद्रा, शक्ति, स्वस्तिक, अभय मुद्रा को धारण किये हुये हैं, जपा कुसुम की तरह कान्तिवाले हैं, सुवर्ण के आभूषणों को धारण किये हुये हैं, कमल पर बैठे हुये हैं, तीन नेत्रों वाले हैं और जिनका मस्तक अग्नि की ज्वालाओं से धधक रहा है ऐसा स्वरूप श्री अग्नि नारायण का बतलाया गया है।

एक दूसरे ध्यान में अग्नि के स्वरूप को बतलाते हुये कहा गया है कि अग्नि के दो मुख, एक हृदय चार कान, दो नाक , दो मस्तक, छः नेत्र, पिंगल वर्ण और सात जिह्वायें हैं। उनके वाम भाग में तीन हाथ और दक्षिण भाग में चार हाथ है। स्रुक्, स्रुवा, अक्षमाला और शक्ति ये सब उनके दाहिने हाथो में है। उनके तीन मेखला और तीन पैर हैं। वे घृतपात्र और दो चंवर धारण किये हुये हैं। छाग पर सवार हैं। उनके चार सींग हैं। बालसूर्य के सदृश उनकी अरुण कान्ति है। वे यज्ञोपवीत धारण करके जटा और कुण्डलों से सुशोभित है।

इसी सातत्य में एक और महत्वपूर्ण विचार आया है कि धूम सहित अग्नि को अग्नि का सिर जानना चाहिये। धूम रहित अग्नि अग्नि का नेत्र हैं, जलता हुआ मन्द अग्नि अग्नि का कान हैं, काठ से सटा

हुआ अग्नि अग्नि की नासिका है। शुद्ध स्फटिक से युक्त अग्नि ज्वालायुक्त है। वहां से नाप से चार अंगुल ही अग्नि का मुख जानना चाहिये।

इस प्रकार अग्नि के स्वरूप के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- सप्तहस्तश्चतुःश्रृंगः .... द्विशीर्षकः।

क- सप्तजिह्वो, ख- सुखासीनः, ग-जटाबद्धो, घ- सर्वकामदः।

प्रश्न 2- त्रिपात्प्रसन्नवदनः .... शुचिस्मितः।

क- सप्तजिह्वो, ख- सुखासीनः, ग-जटाबद्धो, घ- सर्वकामदः।

प्रश्न 3- मेषारूढो .... गौरवर्णो महौजसः।

क- सप्तजिह्वो, ख- सुखासीनः, ग-जटाबद्धो, घ- सर्वकामदः।

प्रश्न 4- धुम्रध्वजो लोहिताक्षः सप्तार्चिः ....।

क- सप्तजिह्वो, ख- सुखासीनः, ग-जटाबद्धो, घ- सर्वकामदः।

प्रश्न 5- शिखाभिर्दीप्यमानाभिः उर्ध्वगाभिस्तु ....।

क- सयुतः, ख- सुखासीनः, ग-जटाबद्धो, घ- सर्वकामदः।

प्रश्न 6- स्वाहां तु दक्षिणे पार्श्वे देवीं वामे .... तथा।

क- सप्तजिह्वो, ख- स्वधां, ग-जटाबद्धो, घ- सर्वकामदः।

प्रश्न 7- विभ्रद्दक्षिणहस्तैस्तु शक्तिमन्नं .... स्रुवम्।

क- सप्तजिह्वो, ख- सुखासीनः, ग- स्रुचं, घ- सर्वकामदः।

प्रश्न 8- तोमरं व्यजनं वामे घृतपात्रं च धारयन्।

क- सप्तजिह्वो, ख- सुखासीनः, ग-जटाबद्धो, घ- घृतपात्रं।

प्रश्न 9-आत्माभिमुखमासीनं एवं रूपो ....।।

क- सप्तजिह्वो, ख- हुताशनः, ग-जटाबद्धो, घ- जटाभिः।

प्रश्न 10- ध्यायेद् वह्निं वह्निमौलिंः।।

क- सप्तजिह्वो, ख- हुताशनः, ग-जटाबद्धो, घ- जटाभिः।

2.5 सारांश-

इस इकाई में अग्नि स्थापन विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया। अग्नि स्थापन के ज्ञान के अभाव में पूर्णिमा आदि के अवसर पर हवन विधियों का आयोजन, विष्णु यज्ञादि अनुष्ठानों के अवसर पर हवनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसके बिना अग्नि स्थापन ही नही होगा तो हवन कैसे किया जा सकता है।

कर्म के साधन भूत लौकिक, स्मार्त या श्रौत अग्नियों को आत्माभिमुख यानी अपनी ओर करके स्थापित करना चाहिये। ताम्रादि पात्रों में पात्र से ढँककर अग्नि की स्थापना करनी चाहिये। अथवा शराव यानी मिट्टी के पात्र से या शुभ्र कांस्य पात्र से या नवीन दृढ़ पात्र से अग्नि का प्रणयन किया जा सकता है। संस्कारभास्कर में लिखा गया है कि शराव पात्र में, कपाल पात्र में या उल्मुक पात्र में रखी हुयी अग्नि से अग्नि प्रणयन नही करना चाहिये क्योकि उससे व्याधि एवं हानि का भय रहता है। यहॉं शराव निषेधक वचन मिलता है। कपाल का मतलब खप्पर, उल्मुक पात्र यानी पूर्व में प्रज्वलित अग्नि वाला पात्र। संपुटपात्र में अग्नि लाकर अग्नि कोण में स्थापित करके आमक्रव्यभुक् अग्नि का त्याग करके अग्नि प्रणयन करना चाहिये। कुशकण्डिका भाष्य में लिखा गया है कि जिस पात्र में अग्नि लाया जाय उस पात्र में प्रणयन के बाद अक्षत एवं जल डालना चाहिये नही तो यजमान के लिये वह भयावह होता है।

जिस पात्र में अग्नि को लाया जाय उस पात्र का प्लावन तुरत करना चाहिये। नही तो कर्ता के मन में एवं कराने वाले दोनों के मन में संताप की प्राप्ति होती है। अग्नि नियम की व्याख्या करते हुये बतलाया गया है कि अरणी जन्य अग्नि उत्तम, सूर्यकान्त जन्य मध्यम एवं श्रोत्रियागार की अग्नि उत्तम तथा अपने घर की अग्नि मध्यम होती है। सूर्यकान्त से या श्रोत्रिय के घर से लायी गयी अग्नि से क्रव्यादांश निकालकर अग्नि का प्रयोग करना चाहिये। मन्त्र महोदधि में कहा गया है कि सूर्यकान्त से या अरणी से निःसृत अग्नि को ढँक कर यत्न पूर्वक लाना चाहिये। उसके बाद मूल मन्त्र से उसका संस्कार करते हुये स्थापित करना चाहिये। त्याज्य अग्नि का वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि चाण्डाल की, अमेध्य, सूतकाग्नि, चिताग्नि और पतिताग्नि को शिष्ट ग्रहण नही माना गया है। अग्नि के स्वरूप को बतलाते हुये कहा गया है कि अग्नि के दो मुख, एक हृदय चार कान, दो नाक , दो मस्तक, छः नेत्र, पिंगल वर्ण और सात जिह्वायें हैं। उनके वाम भाग में तीन हाथ और दक्षिण भाग में चार हाथ है। स्रुक्, स्रुवा, अक्षमाला और शक्ति ये सब उनके दाहिने हाथो में है। उनके तीन मेखला और तीन पैर हैं। वे घृतपात्र और दो चंवर धारण किये हुये हैं। छाग पर सवार हैं। उनके चार सींग हैं। बालसूर्य के सदृश उनकी अरुण कान्ति है। वे यज्ञोपवीत धारण करके जटा और कुण्डलों से सुशोभित है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

कुर्यात्- करना चाहिये, दग्निधमनं - अग्नि को धौकना, व्यजन- पंखा, मुखेनैव- मुख से ही, धमेदग्निं – अग्नि जलाना चाहिये, धमन्या- धमनी से, वेणुजातया- बांस से, पर्णेन- पत्ते से, पाणि- हाथ , शूर्प- शूप, पट- वस्त्र, व्याधिः- रोग, धननाशनम्- धन का नाश, पाणिना- हाथ से, मृत्युमाप्नोति - मृत्यु प्राप्त होती है, विफलं - बिना फल वाला, भवेत्- होता है, लौकिके- लौकिक, योजयेत्- योजन करना चाहिये, विचक्षणः- विद्वान्, अनर्चिषि- बिना प्रज्वलित अग्नि में, जुहोत्यग्नौ- अग्नि में हवन करता है, व्यंगारिणि- बिना अंगार वाली, मन्दाग्नि- अग्निमान्द्य हो जाना, सप्तहस्तः- सात हाथ, चतुःश्रृंगः- चार सीगें, सप्तजिह्वो- सात जिह्वा, द्विशीर्षकः- दो शिर, त्रिपात्प्रसन्नवदनः - तीन पैर है , प्रसन्न मुख, सुखासीनः- सुख से बैठे हुये, मेषारूढो - मेष पर आरुढ़, जटाबद्धो - जटा बधी हुयी है, गौरवर्णो - गौर वर्ण, महौजसः- महा तेज, धुम्रध्वजो - धूम्र वर्ण की ध्वजा, लोहिताक्षः- लाल लाल आखें, सप्तार्चिः- सात जिह्वायें, सर्वकामदः- सभी प्रकार के कामनाओं को देने वाला, शिखाभिर्दीप्यमानाभिः- जलती ज्वालाये शिखा है, उर्ध्वगाभिस्तु - ऊपर की ओर ही जाने वाली, दक्षिणे पार्श्वे - दाहिनी ओर, वामे स्वधां तथा- बायें भाग में स्वधा, विभ्रद्- धारण की हुयी, दक्षिणहस्तैस्तु - दाहिने हाथ में, शक्तिम्- शक्ति, अन्नं- अन्न, स्रुचं- यज्ञ पात्र, स्रुवम्- हवनार्थ यज्ञ पात्र, घृतपात्रं - घी का पात्र, धारयन्- धारण किये हुये है, आत्माभिमुखमासीनं - अपनी ओर मुख करके बैठे हुये, एवं - इस प्रकार, हुताशनः- अग्नि, अर्थात् - इसका मतलब, इष्टं - अभिष्ट, शक्तिं- शक्ति, स्वस्तिक- स्वस्ति, आभीति- अभय, दीर्घै- विस्तृत, हेमाकल्पं- स्वर्ण के समान, पद्मसंस्थं- कमल पर स्थित, त्रिनेत्रं- तीन नेत्र वाले ध्यायेद् - ध्यान करना चाहिये, वह्निं - अग्नि, वह्निमौलिं- अग्नि का सर्वोच्च भाग, जटाभिः- जटाओं से, इष्टमुद्रा- अभिलषित मुद्रा, धेनु क्षय- गाय की हानि, वक्रकुण्डे- टेढ़ा कुण्ड, सन्तापा- दुख, छिन्नमेखले- टूटी हुयी मेखला वाला, मेखला रहिते - मेखला से हीन, शोक- दुख, अभ्यधिके - अधिक, वित्तसंक्षयः- धनहानि, भार्यादिनाशनं - स्त्री विनाश, प्रोक्तं- कहा गया है, कुण्डं योन्याविनाकृते- योनि के बिना कुण्ड करने से, कण्ठरहितं - कण्ठ से रहित, द्विघ्नं - दुगूना, व्यासं - व्यास, तुर्यचिन्हं - चार चिन्ह।

2.7अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

2.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-घ, 10-ग।

2.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-.ख, 6-क, 7-ख, 8-क, 9-घ, 10-ग।

2.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-घ, 4-ग, 5-क, 6-ख, 7-क, 8-ख, 9-क, 10-ख।

2.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-घ, 6-क, 7-ख, 8-ग, 9-क, 10-ख ।

2.4.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-घ।

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-कुण्डमण्डप सिद्धि।

2-वृह्द वास्तु मालाः।

3-वास्तुराज वल्लभ।

4-शब्दकल्पद्रुमः।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-नित्य कर्म पूजा प्रकाश।

7-पूजन- विधान।

8-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

2.9- सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री -

1- यज्ञ मीमांसा ।

2- प्रयोग पारिजात ।

3- अनुष्ठान प्रकाश ।

2.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- अग्नि का परिचय बतलाइये।

2- अग्नि का स्वरूप बतलाइये।

3- अग्निओं के नामों को लिखिये।

4- अग्नि के जिह्वाओं को लिखिये।

5- अग्नि के शिर, कान, नाक आदि लिखिये।

6- अग्नि स्थापन की विधि संस्कृत में लिखिये।

7- हिन्दी में अग्नि स्थापन की विधि लिखिये।

8- अग्नि जिह्वाओं के नाम संस्कृत में लिखिये।

9- अग्नि प्रज्वालन विचार लिखिये।

10- अग्नियों के नाम कर्म के अनुसार संस्कृत में लिखिये।

इकाई 3 कुश कण्डिका

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

इस इकाई में कुश कण्डिका की प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कर्मकाण्ड में अनुष्ठानादि की सम्पन्नता हेतु हवन का विधान सर्वविदित है। हवन के अभाव में किसी भी अनुष्ठान की पूर्णता नही हो पाती है। हवन कार्य का प्रारभ अग्नि स्थापन से होता है । अग्नि स्थापन के बाद कुश कण्डिका किया जाता है। यदि यह कहा जाय कि कुश कण्डिका के अभाव में हवन कार्य हो ही नही सकता तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी।

वास्तविक रूप से देखा जाय तो कुश कण्डिका का मतलब है कुश से की जाने वाली क्रियायें। अब यहां प्रश्न उपस्थित होता है कि कुशों को कैसे स्थापित करना चाहिये? उत्तर में आता है कि जिस तरह गृह्य सूत्रों मे लिखा गया है उस प्रकार कुशों को अग्नि कुण्ड या स्थण्डिल के चारो ओर स्थापित करना कुश कण्डिका कहलाता है। पारस्कर गृह्य सूत्र में लिखा गया है कि एष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः अर्थात् जहां कही भी हवन होता है वहां इस विधि का प्रयोग करना चाहिये। कुशकण्डिका ही वह विधि है जिसमें अग्नि का तथा अग्नि में डाले जाने वाले समस्त पदार्थों को सुसंस्कृत किया जाता है। इस प्रकार से विशेष संस्कार सम्पन्न करने वाले इस कुशकण्डिका नामक उपक्रम का सम्पादन किया जाता है तो हमारे द्वारा प्रदत्त आहुति उस देवता को प्राप्त होती है जिसके लिये हमने आहुति प्रदान किया है। कुश कण्डिका का संस्कार होने के कारण घी की आज्य संज्ञा हो जाती है। इसी उपक्रम में दिये प्रक्रम के कारण अग्नि सम्मुख होकर आहुतियों को स्वीकार करते हैं अन्यथा अग्नि स्वाभाविक रूप से अधोमुख होकर पड़े रहते हैं। उस समय दी जाने वाली आहुतियां उनके मस्तक पर गिरती है, मुख में नही, इसलिये उसमे दोष आ जाता है। अतः कुशकण्डिका का ज्ञान आवश्यक है।

इस इकाई के अध्ययन से आप कुश कण्डिका के विचार करने की विधि एवं सम्पादन करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे यज्ञादि कार्यों या अनुष्ठानादि के अवसर किये जाने वाले कुष्कण्डिका विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

3.2 उद्देश्य-

अब कुश कण्डिका विचार एवं सम्पादन की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य

भी इस प्रकार आप जान सकते हैं।

-कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

- कुश कण्डिका के सम्पादनार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।

- कुश कण्डिका के सम्पादन में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

-प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

-लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

-समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

3.3 कुश कण्डिका में प्रयुक्त पात्रों एवं वृक्षों का परिचय -

कुशकण्डिका में सर्व प्रथम प्रयुक्त पात्रों का परिचय जानना अति आवश्यक है। इसके ज्ञान से आपको यह पता चल जायेगा कि किन- किन पात्रों का नाम क्या है और उसका नाम क्या है? इससे सही तरीके से कोइ्र भी प्रयोग करने आ जायेगा। कुश कण्डिका के बारे में पुष्ट ज्ञान की प्राप्ति हो सकेगी। जो अधोलिखित है-

3.3.1- पात्रादि विचार एवं समिधाओं का परिचय-

इसके अन्तर्गत आपको कुश कण्डिका में प्रयुक्त होन वाले पात्रों एवं वृक्षों का परिचय कराया जायेगा। जिससे आपको कुशकण्डिका का सम्यक् प्रकार से ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

चरुस्थाली- चरुस्थाली दृढ़ा प्रादेशमात्रोर्घ्वं तिर्यङ् नाति बृहन्मुखी। मृन्मयौदुम्बरी वापि चरुस्थाली प्रशस्यते।

सम्मार्जन कुशा- **सम्मार्जनकुशानाह बादरायणः -स्रुवसम्मार्जनार्थाय पंच वाथ त्रयोपि वा। प्रादेशमात्रान्गृह्णीयात्सम्मार्जन कुश संज्ञकान्।**

उपयमन कुशा- उपयमन कुशाः सप्त पंच वाथ त्रयोपि वा।

समिद्वृक्षाः-

समिद्वृक्षानाह मरीचिः पलाशः खदिरो ऽश्वत्थ शमी वट उदुम्बरः। अपामागार्क दूर्वाश्च कुशाश्चेत्यपरे विदुः। शमीपलाशन्यग्रोधप्लक्षवैकंकतोद्भवाः। अश्वत्थोदुम्बरौ बिल्वश्चन्दनस्सरलस्तथा।

सालश्चदेवदारुश्च खदिरश्चैव यज्ञियाः।

स्रुव- स्रुवलक्षणम् खदिरादेः स्रुवः कार्यो हस्तमात्रप्रमाणतः। अंगुष्ठपर्वखातं तत्रिभागं दीर्घपुष्करम्।

शमीमयः स्रुवः कार्यस्तदलाभे ऽन्यवृक्षजः। खादिरस्तु स्रुवः कार्यः सर्वकामार्थ सिद्धये।

स्रुवे देवता विचारः- स्रुवोन्तष्चतुर्विंशः स्यात्षड्देवास्तत्र संस्थिताः।

अग्निरुद्रौ यमश्चैव विष्णुः शक्रः प्रजापतिम्। विष्णुस्थेन च हूयेत एवं कर्म शुभप्रदम्।

स्रुवधारणफलम्-

अग्रे धृत्वा तु वैधव्यं मध्ये धृत्वा प्रजाक्षयः। मूले च म्रियते होता स्रुवस्थानं कथं भवेत्।

अग्रान्मध्यस्तु यन्मध्यं मूलान्मध्यस्तु मध्यमः। स्रुवं च धारयेद्विद्वानायुरारोग्यदं सदा।

अरत्निमात्रकः स्रुवः-

अग्निः सूर्यश्च सोमश्च विरंचरनिलो यमः। एते वै षड्देवाश्च चतुरंगुलभागिनः।

अग्निभागे अर्थनाशाय सूर्ये व्याधिकरो भवेत्। सोमे च निष्फलो धर्मो विरंचिः सर्वकामदः।

अनिले रोगमाप्नोति यमे मृत्युः प्रजायते।

शौनकेन विशेषः उक्तः-

खादिरेण स्रुवः कार्यः पालाशेन जुहूर्भवेत्। तदभावे पलाशस्य पर्णाभ्यां हूयते हविः।

पलाशपर्णाभावे तु पर्णैर्वा पिप्पलोद्भवैः। पलाशपर्णं मध्यमं ग्राह्यम् मध्यमेन पर्णेन जुहोति इति श्रुतिः।

स्रुचिधारणे कारिका-

अग्निः सोमो हरिर्ब्रह्मा वायुः कीनाश एव च। षडंगुलविभागेन स्रुचि देवा व्यवस्थिताः।

स्रुचिस्वरूपम्-

षट्त्रिंशांगुलं स्रुचं कारयेद् खदिरादिभिः। कर्दमे गोपदाकारं पुष्करं तद्वदेव हि।

पुष्कराग्रं षडंशं तु खातं द्वयंगुलविस्तृतम्। अंगुष्ठैकं स्थूलतरे दण्डे तस्य च कंकणम्।

अर्थात् इसको इस प्रकार समझना चाहिये-

चरुस्थाली- चरुस्थाली दृढ़, प्रादेश मात्र उची, ताम्र पात्र की या मिट्टी की होनी चाहिये परन्तु अति बृहन्मुख वाली नही होनी चाहिये।

सम्मार्जन कुशा- स्रुव सम्मार्जन के लिये पॉच या तीन कुशाओं का प्रादेश मात्र लम्बा परिमाण ग्रहण करना चाहिये।

उपयमन कुशा- उपयमन कुशा में सात, पॉच या तीन कुशाओं का समूह होता है।

समिधा- समिधाओं हेतु वृक्षों का वर्णन करते हुये मरीच ने पलाश, खैर, पीपल, शमी, वड़, गूलर, चिचिड़ी, दूर्वा, कुशा बतलाया है। अन्य आचार्यगणों ने इसके अलावा पाकड़, बिल्व, चन्दन, आम, साल, देवदारु को भी स्वीकार किया है।

स्रुव-खैर के लकड़ी का एक हाथ का स्रुव अंगुष्ठ पर्व के बराबर गड्ढा वाला होना चाहिये। खैर के अभाव में शमी का या उसके अभाव में अन्य लकड़ियों का भी बनाया जा सकता है। सभी कामनाओं की सिद्धि के लिये खैर का स्रुव माना गया है।

स्रुव में देवता का विचार-चौबीस अंगुल के स्रुव में अग्नि, रुद्र, यम, विष्णु, इन्द्र, प्रजापति ये छः देवताओं का निवास बतलाया गया है। विष्णु जी के स्थान में धारण करना शुभप्रदायक माना गया है।

स्रुव धारण का फल- स्रुव धारण के फलों का वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि स्रुव को आगे से पकड़ने से वैधव्य, मध्य में पकड़ने से सन्तान क्षय तथा मूल में धारण कर आहुतियाँ देने से हवन करने वाले की मृत्यु का फल प्राप्त होता है। अग्र एवं मध्य का मध्य भाग तथा मूल एवं मध्य का मध्य भाग

स्रुव का धारण कर हवन करने से आयु एवं आरोग्य की प्राप्ति होती है। अग्नि, सूर्य, सोम, ब्रह्मा, वायु एवं यम चार-चार अंगुल के अन्तर पर स्रुव में पाये जाते हैं। अग्नि से अर्थनाश, सूर्य भाग से व्याधि, सोम से निष्फलता, ब्रह्मा से सर्व कामना की प्राप्ति, वायु भाग से रोग एवं यम भाग से मृत्यु की प्राप्ति होती है। आचार्य शौनक ने कहा है कि खदिर का स्रुव एवं पलाश का जुहू बनाना चाहिये उसके अभाव में पलाश पत्ते से हवन करना चाहिये। पलाश पर्ण का अभाव होने पर पिप्पलादि किसी पत्ते का प्रयोग किया जा सकता है।

स्रुचि धारण कारिका- अग्नि, सोम, हरि, ब्रह्मा, वायु एवं यमराज छः अंगुल के विभाग से स्रुचि में देवता के रूप में व्यवस्थित होते हैं।

स्रुचि का स्वरूप- खदिर की समिधा से छत्तीस अंगुल का स्रुचि बनाना चाहिये। एक अंगुष्ठ के बराबर दण्ड के षष्ठांश में दो अंगुल का विस्तृत खात होना चाहिये।

इस प्रकार सामान्य रूप से कुशकण्डिका में प्रयुक्त होन वाले पात्रों के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- दृढ़ा प्रादेशमात्रोर्ध्वं तिर्यङ् नाति बृहन्मुखी। मृन्मयौदुम्बरी वापि ....प्रशस्यते।

क- चरुस्थाली, ख- सम्मार्जन, ग- उपयमन, घ- दूर्वाश्च।

प्रश्न 2-स्रुवसम्मार्जनार्थाय पंच वाथ त्रयोपि वा। प्रादेशमात्रान्गृह्णीयात्........ कुश संज्ञकान्।

क- चरुस्थाली, ख- सम्मार्जन, ग- उपयमन, घ- दूर्वाश्च।

प्रश्न 3- ....कुशाः सप्त पंच वाथ त्रयोपि वा।

क- चरुस्थाली, ख- सम्मार्जन, ग- उपयमन, घ- दूर्वाश्च।

प्रश्न 4- मरीचिः पलाशः खदिरो ऽश्वत्थ शमी वट उदुम्बरः। अपामार्गार्क ....कुशाश्चेत्यपरे विदुः।

क- चरुस्थाली, ख- सम्मार्जन, ग- उपयमन, घ- दूर्वाश्च।

प्रश्न 5- शमीपलाशन्यग्रोधप्लक्षवैकंकतोद्भवाः। ....दुम्बरौ बिल्वश्चन्दनस्सरलस्तथा।

क- अश्वत्थो, ख- सम्मार्जन, ग- उपयमन, घ- दूर्वाश्च।

प्रश्न 6- खदिरादेः ....कार्यो हस्तमात्रप्रमाणतः। अंगुष्ठपर्वखातं तत्रिभागं दीर्घपुष्करम्।

क- चरुस्थाली, ख- स्रुवः, ग- उपयमन, घ- दूर्वाश्च।

प्रश्न 7- .... स्रुवः कार्यस्तदलाभे ऽन्यवृक्षजः। खादिरस्तु स्रुवः कार्यः सर्वकामार्थ सिद्धये।

क- चरुस्थाली, ख- सम्मार्जन, ग- शमीमयः, घ- दूर्वाश्च।

प्रश्न 8- स्रुवोन्तष्चतुर्विंशः स्यात्षड्देवास्तत्र ....।

क- चरुस्थाली, ख- सम्मार्जन, ग- उपयमन, घ- संस्थिताः।

प्रश्न 9- अग्निरुद्रौ यमश्चैव .... शक्रः प्रजापतिम्। विष्णुस्थेन च हूयेत एवं कर्म शुभप्रदम्।

क- चरुस्थाली, ख- विष्णुः, ग- उपयमन, घ- दूर्वाश्च।

प्रश्न 10- अग्रे धृत्वा तु वैधव्यं मध्ये धृत्वा प्रजाक्षयः। ....च म्रियते होता स्रुवस्थानं कथं भवेत्।

क- चरुस्थाली, ख- सम्मार्जन, ग- उपयमन, घ- मूले।

3.3.2 कुश कण्डिका कृत्य में विशेष विचार-

इस प्रकरण में कुश कण्डिका कृत्य से संबंधित विशेष विचार किया जायेगा। इससे कुश कण्डिका में आने वाले विशेष शब्दावलियों के आते ही उनके प्रयोग की विधि का भान आसानी से हो सकेगा।

आज्यादिविचारः- उत्तमं गोघृतं प्रोक्तं मध्यमं महिषी भवम्। अधमं छागलीजातं तस्माद् गव्यं प्रशस्यते।

चरुविचारः- त्रिभिः प्रक्षालितं दैवे सकृत्पित्र्ये च कर्मणि। पात्रासादनकाले च तेषां प्रक्षालनं भवेत्।

हविष्येषु यवा मुख्यास्तदनु ब्रीहयः स्मृता। यथेक्तवस्त्वसंपत्तौ ग्राह्यौ तदनुकारि यत्।

यवानामिवगोधूमा ब्रीहिणमिवशालयः। अभावे ब्रीहियवयोः दध्ना वा पयसापि वा।

आज्यादिविचार- गाय का घृत उत्तम, भैंस का घृत मध्यम एवं बकरी का घृत अधम बतलाया गया है।

चरु विचार- देव कार्य में तीन बार एवं पितृ कार्य में एक बार पात्रासादन काल में चरु द्रव्यों का प्रक्षालन होता है। हविर्द्रव्यों में यव मुख्य है, उसके बाद ब्रीहि मुख्य है। यव के समान गेंहू तथा ब्रहि के समान चावल है। ब्रीहि एवं यव के अभाव में दधि या दूध का प्रयोग किया जा सकता है।

पूर्णपात्रविचार- अकृते पूर्णपात्रे च छिद्रयज्ञः प्रजायते। पूर्णपात्रे च संपूर्णे सर्वं संपूर्णता भवेत्।

अष्टमुष्टिर्भवेत्किंचित् किंचिदष्टौ च पुष्कलम्। पुष्कलानि च चत्वारि पूर्णपात्रं प्रचक्षते।

यावतान्नेन भोक्तुस्तु तृप्तिः पूर्णैव जायते। तद्वरार्थमतः कुर्यात् पूर्णपात्रमिति स्थितिः।

यवैर्वा व्रीहिभिर्पूर्णं भवेत्पूर्णपात्रकम्। वराभिलषितं द्रव्यं सारभूतं तदुच्यते।

पवित्रकरणविचारः- पवित्रे कृत्वा इति सूत्रम्। प्रथमं त्रिभिः कुशतरुणैरग्रतः प्रादेशमात्रं विहाय द्वे कुशतरुणे प्रच्छिद्य इति हरिहरः। एवमासादनं कृत्वा पवित्रच्छेदने कुशैः। अंगुष्ठांगुलिपर्वभ्यां छिन्द्यात्प्रादेशसम्मितम्। इति अंगुलिरनामिकापर्व।

प्रोक्षणी संस्कारविचारः- प्रोक्षणीपात्रं प्रणीता सन्निधौ निधाय तत्र पात्रान्तरेण हस्तेन वा प्रणीतोदकमासिच्य पवित्राभ्यामुत्पूय पवित्रे प्रोक्षणीषु निधाय दक्षिणेन हस्तेन प्रोक्षणीपात्रमुत्थाप्य सव्ये कृत्वा तदुदकं दक्षिणेनोच्छाल्य प्रणीतोदकेन प्रोक्ष्य इति हरिहरभाष्यम्।

प्रोक्षणविचारः- अर्थवत्प्रोक्ष्य इति सूत्रम्। अर्थवन्ति प्रयोजनवन्ति आज्यस्थाल्यादीनि पूर्णपात्रपर्यन्तानि प्रोक्षणीभिरद्भिरासादनक्रमेणैकैकशः प्रोक्ष्य असंचरे प्रणीताग्न्योरन्तराले प्रोक्षणीपात्रं निधाय इति हरिहर भाष्यम्। कारिकायाम् पात्राणि क्रमशः प्रोक्ष्य निदध्यात्तामसंचरे। असंचरः प्रणीताग्न्ययोरन्तरेण प्रकीर्तितः।

पूर्णपात्र का विचार- बिना पूर्णपात्र के यज्ञ छिद्र वाला होता है इसलिये संपूर्णता हेतु पूर्णपात्र आवश्यक है। आठ मुट्ठी का एक किंचित् होता है, आठ किंचित् का एक पुष्कल एवं चार पुष्कल का एक पूर्णपात्र होता है। गदाधर भाष्य में लिखा गया है कि जितने अन्न से भोजन करने वाले की पूर्ण तृप्ति हो जाय उतने अन्न को वरान्न कहते हुये पूर्णपात्र कहा जाता है। पूर्णपात्र यव या व्रीहि से पूर्ण होना चाहिये।

पवित्र करण विचार- पवित्रक बनाने के लिये हरिहर जी कहते है पहले तीन तरुण कुशों के आगे से प्रादेश मात्र छोड़कर दो कुशों से छेदन करें। पवित्रच्छेदन के लिये अगूंठे एवं अंगुलि से विधान किया गया है। यहाँ अंगुलि का मतलब अनामिका से है।

प्रोक्षणी का संस्कार का विचार- प्रोक्षणीपात्र को प्रणीता के सन्निधि में रखकर पात्रान्तर से या हाथ से प्रणीता के जल से आसिंचन कर पवित्रक से उत्पवन कर प्रोक्षणी में पवित्र को रखकर दाहिने हाथ से प्रोक्षणी पात्र को उठाकर बायें हाथ में करके उसके जल को दहिने हाथ से उछालकर प्रणीता के जल से प्रोक्षणी का प्रोक्षण करना चाहिये।

प्रोक्षण विचार- उस कार्य के लिये प्रयोजनवान् जितने भी पदार्थ वहाँ रखे गये हैं उन सभी पदार्थों का प्रोक्षणी के जल से प्रोक्षण करना चाहिये। सबसे पहले प्रोक्षणी का प्रोक्षण करके उसे अग्नि एवं प्रणीता के बीच में रखकर अन्य पात्रों एवं पदार्थों का प्रोक्षण करें।

इस प्रकार सामान्य रूप से कुशकण्डिका में प्रयुक्त होन वाले विशेष विचारों के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- उत्तमं गोघृतं प्रोक्तं मध्यमं महिषी भवम्। अधमं छागलीजातं तस्माद् ....प्रशस्यते।

क- गव्यं, ख- प्रक्षालनं, ग- ब्रीहयः, घ- दध्ना।

प्रश्न 2- त्रिभिः प्रक्षालितं दैवे सकृत्पित्र्ये च कर्मणि। पात्रासादनकाले च तेषां ....भवेत्।

क- गव्यं, ख- प्रक्षालनं, ग- ब्रीहयः, घ- दध्ना।

प्रश्न 3- हविष्येषु यवा मुख्यास्तदनु .... स्मृता। यथेक्तवस्त्वसंपत्तौ ग्राह्यौ तदनुकारि यत्।

क- गव्यं, ख- प्रक्षालनं, ग- ब्रीहयः, घ- दध्ना।

प्रश्न 4- यवानामिवगोधूमा ब्रीहिणमिवशालयः। अभावे ब्रीहियवयोः ....वा पयसापि वा।

क- गव्यं, ख- प्रक्षालनं, ग- ब्रीहयः, घ- दध्ना।

प्रश्न 5- .... पूर्णपात्रे च छिद्रयज्ञः प्रजायते। पूर्णपात्रे च संपूर्णे सर्वं संपूर्णता भवेत्।

क- अकृते, ख- प्रक्षालनं, ग- ब्रीहयः, घ- दध्ना।

प्रश्न 6- अष्टमुष्टिर्भवेत्किंचित् किंचिदष्टौ च पुष्कलम्। .... च चत्वारि पूर्णपात्रं प्रचक्षते।

क- गव्यं, ख- पुष्कलानि, ग- ब्रीहयः, घ- दध्ना।

प्रश्न 7- यावतान्नेन भोक्तुस्तु .... पूर्णैव जायते। तद्वरार्थमतः कुर्यात् पूर्णपात्रमिति स्थितिः।

क- गव्यं, ख- प्रक्षालनं, ग- तृप्तिः, घ- दध्ना।

प्रश्न 8- यवैर्वा व्रीहिभिर्पूर्णं भवेत्पूर्णपात्रकम्। वराभिलषितं .... सारभूतं तदुच्यते।

क- गव्यं, ख- प्रक्षालनं, ग- ब्रीहयः, घ- द्रव्यं।

प्रश्न 9- पवित्रकरणविचारः- पवित्रे कृत्वा इति ....।

क- सूत्रम्, ख- प्रक्षालनं, ग- ब्रीहयः, घ- दध्ना।

प्रश्न 10- अंगुष्ठांगुलिपर्वभ्यां छिन्द्यात्प्रादेशसम्मितम्। इति अंगुलि................।

क- गव्यं, ख- अनामिकापर्व, ग- ब्रीहयः, घ- दध्ना।

3.4 कुश कण्डिका का विधान-

इसमें कुश कण्डिका की विधि का निरूपण किया जा रहा है। इसके ज्ञान से आप आसानी से कुश कण्डिका प्रयोग का सम्पादन कर सकते है।

3.4.1 कुशकण्डिकाविधानम्-

दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्य इति सूत्रम् । तस्याग्नेर्दक्षिणस्यां दिशि ब्रह्मणे आसनं वारणादियज्ञीयदारुनिर्मितं पीठमास्तीर्य कुशैः स्तीर्त्वा तत्र वरणाभरणाभ्यां पूर्वसम्पादितं कर्मसु तत्वज्ञं ब्राह्मणं तदभावे पंचाशतकुशनिर्मितमुपवेश्य इति हरिहर भाष्यम्। तथा चोक्तं कारिकायाम् अग्नेर्दक्षिणतो ब्रह्मासनं कृत्वा कुशास्तृतम्। ब्रह्माणं वरयेदग्निमुत्तरेणगुणान्वितम्। आसनं ब्रह्मणः कार्यं वारणं वा विकंकतम्। चतुरस्रं हस्तमात्रं मूलदण्ड समन्वितम्। द्विषडंगुलसंख्यातो मूलदण्डो विकंकतात्। करिष्ये अमुक शर्माऽ हं ब्रह्मा त्वं तत्र मे भव। ब्रह्मा भवामि चेत्युक्त्वा गच्छेदग्नेस्तु पूर्वतः। अपरेणाथवा कुर्यादासनस्येक्षणं ततः। एकदेशं तृणस्यापि स्वासने चोपवेश्येत्।

उत्तरे सर्व पात्राणि प्रणीतादीन्यनुक्रमात्। पूर्वेपौर्व द्विजाः सर्वे ब्रह्माकिमुत दक्षिणे?

दक्षिणे दानवाः प्रोक्ताः पिशाचो रगराक्षसाः। तेषां संरक्षणार्थाय ब्रह्मा तिष्ठति दक्षिणे।

ब्रह्मलक्षणं- वेदैकनिष्ठं धर्मज्ञं कुलीनं श्रोत्रियं शुचिम्। स्वशाखाठ्यमनालस्यं विप्रं कर्तारमीप्सितम्।

ब्रह्मवरणार्थमलंकरणमाह वस्त्रयुग्मं तथाप्पूरं केयूरं कर्णभूषणम्। अंगुलीभूषणं चैव मणिबन्धस्यभूषणम्।

कण्ठाभरणयुक्तानि प्रारम्भे सर्वकर्मणि। विप्राभावे दर्भवटुमाह कुशग्रन्थिमयं विप्रं ब्रह्माणमुपवेशयेत्।

तल्लक्षणं पंचाशता भवेद् ब्रह्मा तदर्द्धेन तु विष्टरः। उर्ध्वकेशो भवेद् ब्रह्मा लम्बकेशस्तु विष्टरः।

दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु विष्टरः।

प्रणीय इति सूत्रम् अप इति शेषः। तद्यथा अग्नेरुत्तरतः प्रागग्रं कुशैरासनद्वयं कल्पयित्वा वारणं द्वादशांगुलदीर्घं चतुरंगुलविस्तारं चतुरंगुलखातं चमसं सव्यहस्ते कृत्वा दक्षिणहस्तोद्धृतपात्रस्थोदकेन पूरयित्वा पश्चिमासने निधायालभ्य पूर्वासने स्थापयित्वा इति हरिहरभाष्यम्। कर्मप्रदीपे द्वादशांगुलदीर्घेण चतुरस्रः सगर्तकः प्रस्थमात्रोदकग्राही प्रणीता चमसो भवेत्।

कुशकण्डिका विधि- अग्नि के दक्षिण दिशा में ब्रह्मा के लिये आसन यज्ञीय समिधाओं से निर्मित कर बिछावें उस पर तत्वज्ञ ब्रह्मा बैठें। उसके अभाव में पचास कुशाओं से निर्मित करके ब्रह्मा को बिठाया जाय ऐसा हरिहर जी ने कहा है। कारिका में कहा गया है कि अग्नि के दक्षिण में ब्रह्मा का आसन रखकर उस पर कुश बिछावें। ब्रह्मा का आसन वारण या विकंकत यानी कण्टाई की लकड़ी का होना चाहिये। यह एक हाथ का चतुरस्र हो। छब्बीस अंगुल विकंकत का भी बनाया जा सकता है। ब्रह्मा होऊँ ऐसा कहकर ब्रह्मा अपने आसन पर बैठे। दूसरे आचार्य गण कहते हैं या तो आसन को देखना चाहिये। अब यहाँ प्रश्न उठता है कि सभी पात्र उत्तर में प्रणीता के क्रम से पौर्वापर्य रखे जाते हैं लेकिन ब्रह्मा को दक्षिण में क्यों रखा जाता है ? इस प्रश्न के उत्तर में यह कहा गया है कि दक्षिण में दानव, पिशाच एवं राक्षस इत्यादि रहते हैं इसलिये ब्रह्मा को दक्षिण में बिठाया जाता है। ब्रह्मा का लक्षण बतलाते हुये बतलाया गया है वेद में एकनिष्ठ धर्मज्ञ कुलीन श्रोत्रिय पवित्र एवं अपने शाखाध्ययन में आलस्य रहित होकर रत रहने वाला विप्र हो। ब्रह्मवरणार्थ अलंकरण का वर्णन करते हुये कहा गया दो वस्त्र, केयूर, कर्णभूषण, अंगुलिभूषण, मणिबन्ध भूषण एवं कण्ठाभरण कहा गया है। विप्र के अभाव में दर्भ वटु बनाने का विधान मिलता है। इसे कुशे को ग्रन्थियुक्त करके बनाया जाता है। इसका लक्षण बताते हुये कहा गया पचास कुशे का ब्रह्मा एवं उसके आधे का विष्टर बनाता है। उर्ध्वकेश ब्रह्मा एवं लम्बकेश विष्टर होता है। दक्षिणावर्त ब्रह्मा एवं वामावर्त विष्टर होता है।

अगला सूत्र प्रणीय आता है इसमें अप शब्द शेष है अर्थात् जल। अग्नि के उत्तर प्रागग्र दो कुशों को आसन के लिये रखकर बारह अंगुल लम्बा, चार अंगुल चौड़ा एवं चार अंगुल गहरा चमस को बायें

हाथ में करके दाहिने हाथ में स्थित जल पात्र से पूरित कर पश्चिम के आसन पर रखकर पूर्व के आसन पर रखना चाहिये। कर्म प्रदीप में प्रणीता को प्रस्थ मात्र जल ग्रहण करने की छमता वाला बतलाया गया है।

परिस्तीर्य इति सूत्रम्। अग्निं बर्हि मुष्टिमादाय ईशानादिप्रागग्रैर्बार्होमरुदक्संस्थमग्ने: परिस्तरणम् इति हरिहरभाष्यम्।

परिस्तरणप्रयोजनम् वेदिका दर्भहीना तु विनग्ना प्रोच्यते बुधैः। परिधानं ततः कुर्याद्दर्भेणैव विशेषतः।

स्थाननियमः एकमेखलके कुण्डे मेखलाधः परिस्तरेत्। द्विमेखले द्वितीयायां तृतीयायां त्रिमेखले।

दर्भसंख्या अग्निं षोडशभिर्दर्भैः परिस्तीर्य दिशं प्रति। प्रागादीशानपर्यन्तमुदक्संस्था परिस्तृतिः।

एकैकस्यां दिशि चत्वारो चत्वारि एवं षोडश। तच्च प्रागुदगग्रैः दक्षिणतः प्रागग्रैः, प्रत्यगुदगग्रैः, उत्तरतः प्रागग्रैरिति संस्कार भास्करे।

बर्हिर्लक्षणम् कात्यायनेनोक्तम् कुशा दीर्घाश्च बर्हिषः। उपमूललूनबर्हिषां मुष्टिबर्हिः इति कुशकण्डिकाटीकाकारः।

परिस्तीर्य इस सूत्र की व्याख्या में अग्निकुण्ड के चारों तरफ मुष्टि में कुशों को लेकर प्रागग्र करके बिछाना चाहिये। परिस्तरण का प्रयोजन बतलाते हुये कहा गया है कि दर्भहीन वेदिका को नग्न वेदिका माना जाता है। दर्भ वेदिका का परिधान विशेष माना जाता है। एक मेखला वाले कुण्ड में मेखला के अधो भाग में परिस्तरण करना चाहिये। दो मेखला वाले कुण्ड में दूसरी के तथा त्रिमेखला वाले कुण्ड में तीसरी मेखला के नीचे कुशों का आस्तरण करना चाहिये। सोलह कुशाओं का परिस्तरण यानी एक-एक दिशा में चार-चार कुशाओं को बिछाना चाहिये। पूर्व दिशा में उदगग्र, दक्षिण दिशा में प्रागग्र, पश्चिम दिशा में उदगग्र एवं उत्तर दिशा में प्रागग्र ऐसा संस्कार भास्कर में लिखा है। बर्हि का लक्षण बतलाते हुये कहा गया दीर्घ कुशा बर्हि है। जिसका मूल छिन्न हो उस कुशा को भी बर्हि की उपमा दी गयी है। मुष्टि में जितना कुशा आ जाता है उसे बर्हि कहा जाता है।

अर्थवदासाद्य इति सूत्रम्। यावद्भिः पदार्थैरर्थः प्रयोजनं तावतः पदार्थान् द्वन्द्वं प्राक्संस्थान् उदगग्रानग्नेरुत्तरतः पश्चाद्वा आसाद्य इति हरिहरः। अग्नेरुत्तरतस्तानि आसाद्योदग्विलानि च। प्रागग्राणि यदा पश्चात्सादये प्राग्विलानि च। आसादनं तु पात्राणां प्रादेशान्तरके बुधः। अंगुलद्वयमानेन द्वन्द्वं द्वन्द्वान्तरे न्यसेत्। उत्तरतश्चेदुदकसंस्थम् असंभवे प्राक्संस्थं पश्चिमसंस्थमुदक् संस्थमपीतिदेवयाज्ञिकभाष्ये। पवित्रलक्षणम् अनन्तगर्भिणं साग्रं कौशं द्विदलमेव च। प्रादेशमात्रं विज्ञेयं पवित्रं यत्र कुत्रचित्। पवित्रप्रयोजनम् इन्द्रवज्रं हरेश्चक्रं त्रिशूलं शंकरस्य च। दर्भरूपेण ते त्रीणि पवित्रच्छेदनानि च।

पुरा वृत्रवधं प्राप्ते रक्तपूर्णा वसुन्धरा। द्वौ दर्भौ देवता त्रीणि पवित्रच्छेदनानि च।

प्रोक्षणी विचारः वारणं पाणिपात्रं च द्वादशांगुलविस्तृतम्। पद्मपत्राकृतिर्वापिप्रोक्षणीपात्रमीरितम्।

आज्यस्थाली कांस्यमयी यद्वा ताम्रमयी तथा। प्रादेशमात्रदीर्घा सा ग्रहीतव्या अव्रणा शुभा।

आज्यस्थाली च कर्त्तव्या तैजसी द्रव्य संभवा। महीमयी वा कर्तव्या सर्वास्वाज्याहुतीषु च।

आज्यस्थाली प्रमाणं तु यथाकामं तु कारयेत्। सुदृढ़ामव्रणां भद्रामाज्यस्थालीं प्रचक्षते।

अर्थवदासाद्य इस सूत्र की व्याख्या करते हुये आचार्य हरिहर कहते हैं जितने पदार्थों की तत्कार्य हेतु आवश्यकता है उतने पदार्थों को अग्नि के उत्तर में प्राक्संस्थ, उदक्संस्थ या पश्चिमसंस्थ रखें। दो-दो अंगुलों के अन्तराल पर प्रत्येक पदार्थों को रखा जायेगा। विद्वान् लोग पात्रों का आसादन प्रादेश मात्र में करने का निर्देश करते है। पवित्र का लक्षण करते हुये कहा गया है कि अनन्तगर्भी कुशाओं के दो दलों के अग्र भाग से प्रादेश मात्र परिमाण से सर्वत्र पवित्र बनाना चाहिये। पवित्र का प्रयोजन इस प्रकार है। इन्द्र के वज्र, हरि के चक्र एवं शंकर के त्रिशूल के रूप में तीन दर्भ होते हैं जिससे पवित्र छेदन किया जाता है। वृत्र वध के समय यह पृथ्वी रक्त पूर्णा हो गयी थी जिसे पवित्र करने के लिये दर्भों की उत्पति हुई। प्रोक्षणी का विचार करते हुये बतलाया गया है कि प्रोक्षणी वारण का बारह अंगुल विस्तृत् होना चाहिये। पद्मपत्र के आकृति वाली भी हो सकती है। आज्यस्थाली कांस्यमयी अथवा ताम्रमयी प्रादेशमात्र दीर्घा एवं छिद्र रहिता होनी चाहिये। किसी धातु की आज्यस्थाली बनाई जा सकती है या मिट्टी की भी सभी प्रकार की आहुतियों में आज्यस्थाली हो सकती है। कामना के अनुसार आज्यस्थाली को बतलाया गया है जो सुदृढ़, अव्रण व देखने में सुन्दर हो।

निरुप्याज्यमिति सूत्रम्। आसादितमाज्यं आज्यस्थाल्यां पश्चादग्नेर्निहितायां प्रक्षिप्य चरुश्चेद्चरुस्थाल्यां प्रणीतोदकमासिच्य आसादितांस्तण्डुलान्प्रक्षिप्य अधिश्रयणं कुर्यात्। तत्राज्यं ब्रह्माधिश्रयति तदुत्तरतः स्वयं चरुमेवं युगपदग्नावारोप्य ज्वलदुल्मुकं प्रदक्षिणमाज्यचर्वोः समन्ताद्भ्रामयेत् अर्द्धश्रिते चरौ। द्वयोः पर्यग्निकरणं कृत्वा दक्षिणहस्तेन स्रुवमादाय प्रांचमधोमुखमग्नौ तापयित्वा सव्ये पाणौ कृत्वा दक्षिणेन संमार्गाग्रैर्मूलतो अग्रपर्यन्तं मूलैरग्रमारभ्य अधस्तान्मूलपर्यन्तं सम्मार्जयेत्। पुनः प्रतप्य दक्षिणतो निदध्यात्। आज्यमुत्थाप्य चरोः पूर्वेण नीत्वा अग्नेरुत्तरतः स्थापयित्वा चरुमुत्थाप्य आज्यस्य पश्चिमतो नीत्वा आज्यस्योत्तरतः स्थापयित्वा आज्यमग्नेः पश्चादानीय चरुं चानीय आज्यस्योत्तरतो निधाय उत्पूय अवेक्ष्य अपद्रव्यस्य निरसनं कृत्वा उपयमन कुशानादाय समिधोभ्याधाय तिष्ठन्समिधः अग्नौ प्रक्षिपेत्। लाजहोमे समिद्धोमे उर्ध्वहोमे तथैव च। तिष्ठतैव हि कर्तव्याः स्वाहाकारा अपि ध्रुवम्। ततो प्रोक्षण्युदकेन सर्वेण सपवित्रेण दक्षिणचुलुकेन गृहीतेन अग्निमीशानादि उदगपवर्गं परिषिच्य जुहुयात्। आघारादीन् संस्रव धारणार्थं पात्रं प्रणीताग्न्ययोर्मध्ये निदध्यात्।

आज्यस्थाली में आज्य एवं चरुस्थाली में आसादित चरुपदार्थों को डालकर अधिश्रयण करना चाहिये। आज्य के उत्तर में चरु को अग्नि पर चढ़ाकर जलते हुये उल्मुक से प्रदक्षिण क्रम से आज्य

एवं चरु का पर्यग्निकरण करके इतरथावृत्ति करनी चाहिये। तदनन्तर दाहिने हाथ से स्रुव लेकर अधो मुख अग्नि में तपा कर बायें हाथ में करके दाहिने हाथ से सम्मार्जन कुशा के अग्र भाग से स्रुव के अग्र भाग का मध्य भाग से स्रुव के मध्य भाग का एवं अन्त्य भाग का अन्त्य भाग से मार्जन करना चाहिये। इसके बाद पुनः स्रुव का प्रतपन कर दक्षिण स्थान में रखना चाहिये। आज्य को उठाकर चरु के पूर्व से लाकर अग्नि के उत्तर में स्थापित कर चरु लाकर आज्य के उत्तर में रखें। पवित्रक से उत्पवन करके आज्य का सावधानी पूर्वक निरीक्षण करना चाहिये। यदि उस आज्य में अपद्रव्य हो तो उसे निकाल देना चाहिये। उपयमन कुषाओं को बाये हाथ में लेकर तीन समिधाओं को अग्नि में प्रक्षिप्त करना चाहिये। कारिका में मिलता है कि लाज होम में, समिद्ध होम एवं उर्ध्व होम में खड़े होकर हवन करना चाहिये। तदनन्तर सपवित्रक प्रोक्षणी के जल को चुलू में लेकर अग्नि कोण से प्रदक्षिण क्रम से ईशानादि तक परिषिंचन करना चाहिये। आघारादीन् संस्रव के धारणार्थ पात्र को प्रणीता एवं अग्नि के बीच में रखते है।

पारस्कर गृह्य सूत्र में आता है कि-

अग्निमुपसमाधाय दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्य प्रणीय परिस्तीर्यार्थवदासाद्य पवित्रे कृत्वा प्रोक्षणीः संस्कृत्यार्थवत् प्रोक्ष्य निरूप्याज्यमधिश्रित्य पर्यग्निं कुर्यात्। स्रुवं प्रतप्य समृज्याभ्युक्ष्य पुनः प्रतप्य निदध्यादाज्यमुद्वास्योत्पूयावेक्ष्य प्रोक्षणीश्च पूर्ववदुपयमनकुशानादाय समिधो- भ्यादाय पर्युक्ष्य जुहुयादेष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः।

लिखा गया है कि प्रणीता के जल को प्रोक्षणी पात्र में तीन बार डालें। फिर प्रणीता के जल से प्रोक्षणी का मार्जन करें। तदनन्तर प्रोक्षणी पात्र को प्रणीता पात्र वाले आसन पर रखकर प्रणीता का जल सभी आसादित वस्तुओं पर छिड़कें। तदनन्तर यज्ञाग्नि और प्रणीता के बीच में प्रोक्षणी पात्र को रख दें। पुनः घी को देखें , यज्ञाग्नि के पीछे रखे घी को आज्य स्थाली में डालकर आग पर घी को पिघलाने के लिये रखे। उसके बाद पर्यग्नि करें । पर्यग्नि का मतलब जलती हुयी समिधा की लकड़ी को चरुपात्र आच्यस्थाली के चारो ओर घुमाकर पिघला दें। अधोमुख स्रुवा को होमाग्नि में तपाकर मूल भाग से अन्त तक सम्मार्जन कुशा से उसे छाड़कर, प्रणीता के जल से उसे अभिषिंचित कर पहले की ही तरह उसे आग पर फिर से तपाकर वेदी के दाहिनी ओर रख दें। घृतपात्र को आग पर से उतार कर पवित्र कर घी में कोई अपद्रव्य हो तो उसे निकाल दें। फिर उपयमन नामक कुशों को दायें हाथ से उठाकर बायें हाथ में लेकर आग में समिधायें डालकर जल छिड़ककर हवन करें। जहां कहीं भी हवन होगा यही विधि अपनायी जायेगी।

इस प्रकार सामान्य रूप से कुशकण्डिका के विधान के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- .... सर्व पात्राणि प्रणीतादीन्यनुक्रमात्। पूर्वेपौर्व द्विजाः सर्वे ब्रह्माकिमुत दक्षिणे?

क- उत्तरे, ख- दक्षिणे, ग-कुलीनं, घ-केयूरं।

प्रश्न 2-दक्षिणे दानवाः प्रोक्ताः पिशाचो रगराक्षसाः। तेषां संरक्षणार्थाय ब्रह्मा तिष्ठति ....।

क- उत्तरे, ख- दक्षिणे, ग-कुलीनं, घ-केयूरं।

प्रश्न 3- वेदैकनिष्ठं धर्मज्ञं .... श्रोत्रियं शुचिम्। स्वशाखाढ्यमनालस्यं विप्रं कर्तारमीप्सितम्।

क- उत्तरे, ख- दक्षिणे, ग-कुलीनं, घ-केयूरं।

प्रश्न 4- वस्त्रयुग्मं तथाप्पूरं .... कर्णभूषणम्। अंगुलीभूषणं चैव मणिबन्धस्यभूषणम्।

क- उत्तरे, ख- दक्षिणे, ग-कुलीनं, घ-केयूरं।

प्रश्न 5- कण्ठाभरणयुक्तानि प्रारम्भे सर्वकर्मणि। विप्राभावे दर्भवटुमाह कुशग्रन्थिमयं .... ब्रह्माणमुपवेशयेत्।

क- विप्रं, ख- दक्षिणे, ग-कुलीनं, घ-केयूरं।

प्रश्न 6- पंचाशता भवेद् ब्रह्मा तदर्द्धेन तु विष्टरः। उर्ध्वकेशो भवेद् .... लम्बकशस्तु विष्टरः।

क- उत्तरे, ख- ब्रह्मा, ग-कुलीनं, घ-केयूरं।

प्रश्न 7- दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु ....।

क- उत्तरे, ख- दक्षिणे, ग-विष्टरः, घ-केयूरं।

प्रश्न 8- .... दर्भहीना तु विनग्ना प्रोच्यते बुधैः। परिधानं ततः कुर्याद्दर्भेणैव विशेषतः।

क- उत्तरे, ख- दक्षिणे, ग-कुलीनं, घ-वेदिका।

प्रश्न 9- एकमेखलके कुण्डे मेखलाधः परिस्तरेत्। द्विमेखले द्वितीयायां तृतीयायां ....।

क- त्रिमेखले, ख- दक्षिणे, ग-कुलीनं, घ-केयूरं।

प्रश्न 10- अग्निं षोडशभिर्दर्भैः परिस्तीर्य दिशं प्रति। प्रागादीशानपर्यन्तमुदक्संस्था ....।

क- उत्तरे, ख- परिस्तृतिः , ग-कुलीनं, घ-केयूरं।

3.5 सारांश-

इस इकाई में कुश कण्डिका विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया । कुश कण्डिका के ज्ञान के अभाव में पूर्णिमा आदि के अवसर पर हवन विधियों का आयोजन, विष्णु यज्ञादि अनुष्ठानों के अवसर पर हवनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसके बिना हवन प्रारम्भ ही नही होगा तो हवन कैसे किया जा सकता है।

कुश कण्डिका का मतलब है कुश से की जाने वाली क्रियायें। अब यहॉ प्रश्न उपस्थित होता है कि

कुशों को कैसे स्थापित करना चाहिये? उत्तर में आता है कि जिस तरह गृह्य सूत्रों मे लिखा गया है उस प्रकार कुशों को अग्नि कुण्ड या स्थण्डिल के चारो ओर स्थापित करना कुश कण्डिका कहलाता है। पारस्कर गृह्य सूत्र में लिखा गया है कि एष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः अर्थात् जहां कही भी हवन होता है वहां इस विधि का प्रयोग करना चाहिये। कुष्कण्डिका ही वह विधि है जिसमें अग्नि का तथा अग्नि में डाले जाने वाले समस्त पदार्थों को सुसंस्कृत किया जाता है। इस प्रकार से विशेष संस्कार सम्पन्न करने वाले इस कुशकण्डिका नामक उपक्रम का सम्पादन किया जाता है तो हमारे द्वारा प्रदत्त आहुति उस देवता को प्राप्त होती है जिसके लिये हमने आहुति प्रदान किया है। कुश कण्डिका का संस्कार होने के कारण घी की आज्य संज्ञा हो जाती है।

कुश कण्डिका में अग्निकुण्ड के चारों तरफ मुष्टि में कुशों को लेकर प्रागग्र करके बिछाना चाहिये। परिस्तरण का प्रयोजन बतलाते हुये कहा गया है कि दर्भहीन वेदिका को नग्न वेदिका माना जाता है। दर्भ वेदिका का परिधान विशेष माना जाता है। एक मेखला वाले कुण्ड में मेखला के अधो भाग में परिस्तरण करना चाहिये। दो मेखला वाले कुण्ड में दूसरी के तथा त्रिमेखला वाले कुण्ड में तीसरी मेखला के नीचे कुशों का आस्तरण करना चाहिये। सोलह कुशाओं का परिस्तरण यानी एक-एक दिशा में चार-चार कुशाओं को बिछाना चाहिये। पूर्व दिशा में उदगग्र, दक्षिण दिशा में प्रागग्र, पश्चिम दिशा में उदगग्र एवं उत्तर दिशा में प्रागग्र ऐसा संस्कार भास्कर में लिखा है। बर्हि का लक्षण बतलाते हुये कहा गया दीर्घ कुशा बर्हि है। जिसका मूल छिन्न हो उस कुशा को भी बर्हि की उपमा दी गयी है। लिखा गया है कि प्रणीता के जल को प्रोक्षणी पात्र में तीन बार डालें। फिर प्रणीता के जल से प्रोक्षणी का मार्जन करें। तदनन्तर प्रोक्षणी पात्र को प्रणीता पात्र वाले आसन पर रखकर प्रणीता का जल सभी आसादित वस्तुओं पर छिड़कें। तदनन्तर यज्ञाग्नि और प्रणीता के बीच में प्रोक्षणी पात्र को रख दें। पुनः घी को देखें , याग्नि के पीछे रखे घी को आज्य स्थाली में डालकर आग पर घी को पिघलाने के लिये रखे। उसके बाद पर्यगिन करें । पर्यगिन का मतलब जलती हुयी समिधा की लकड़ी को चरुपात्र आच्यसथाली के चारो ओर घुमाकर पिघला दें। अधोमुख स्रुवा को होमाग्नि में तपाकर मूल भाग से अनत तक सम्मार्जन कुशा से उसे छाड़कर, प्रणीता के जल से उसे अभिषिंचित कर पहले की ही तरह उसे आग पर फिर से तपाकर वेदी के दाहिनी ओर रख दें।

3.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

दक्षिणतो- दक्षिण की ओर, ब्रह्मासनमास्तीर्य - ब्रह्मा का आसन बिछाकर, तस्याग्नेर्दक्षिणस्यां दिशि- उस अग्नि के दक्षिण दिशा में, ब्रह्मणे- ब्रह्मा के लिये, आसनं - आसन, वारणादियज्ञीयदारुनिर्मितं पीठमास्तीर्य - वारणादि यज्ञीय लकड़ी का पीठ बनाकर, कुशैः स्तीर्त्वा - कुशा बिछाकर, तत्वज्ञं - तत्व को जानने वाले, ब्राह्मणं - ब्राह्मण को, तदभावे - उसके अभाव में, पंचाशतकुशनिर्मितमुपवेश्य- पचास कुशे का निर्मित करके बैठाया जाय, अग्नेर्दक्षिणतो - अग्नि से दक्षिण तरफ, ब्रह्मासनं - ब्रह्मा का आसन करके कुशे को बिछाना चाहिये, चतुरस्रं - चार भुजाओं वाले, हस्तमात्रं - एक हाथ का, उत्तरे - उत्तर में, सर्व- सभी, पात्राणि- पात्र, प्रणीता- पात्र का नाम, पूर्वेपौर्व - पूर्वापर्य, द्विजाः - द्विज,-

द्विज, दक्षिणे- दक्षिण में, संरक्षणार्थाय- संरक्षण के लिये, तिष्ठति- विराजतान होते है, वेदैकनिष्ठं - केवल वेद में निष्ठा रखने वाला, धर्मज्ञं- धर्म को जानने वाला, कुलीनं- उच्च कुल वाला, श्रोत्रियं - वैदिक, शुचिम्- पवित्र, स्वशाखाठ्यमनालस्यं - अपनी शाखा में आलस्य न रखने वाला, कर्तारमीप्सितम्- कर्म करने की अभिलाषा वाला, ब्रह्मवरणार्थमलंकरणमाह- ब्रह्मा वरण के लिये अलंकरण कहा गया है, वस्त्रयुग्मं - दो वस्त्र, केयूरं - आभूषण का नाम, कर्णभूषणम्- कान का आभूषण, अंगुलीभूषणं - अंगुली का आभूषण, मणिबन्धस्यभूषणम्- मणिबन्ध का आभूषण, कण्ठाभरण- कण्ठ का आभूषण, विप्राभावे - विप्र के अभावमें दर्भवटुमाह- कुशे का वटु कहा गया है, कुशग्रन्थिमयं- कुशा जो गांठ से युक्त हो, विप्रं ब्रह्माणमुपवेशयेत्- उसका विप्र बनाकर ब्रह्मा को उपवेशित करना चाहिये, तल्लक्षणं - उसका लक्षण, पंचाशता- पचास का भवेद् - होता है ,ब्रह्मा- ब्रह्मा, तदर्द्धेन - उसके आधे का, विष्टरः- विष्टर, उर्ध्वकेशो- उपर केश वाला, लम्बकेशस्तु - लम्बा केश वाला, दक्षिणावर्तको- दक्षिण की ओर आवर्तन वाला, वामावर्तस्तु - वामावर्त वाला, प्रणीय- प्रणयन करके, अप - जल, तद्यथा- इस प्रकार, अग्नेरुत्तरतः- अग्नि के उत्तर से, प्रागग्रं- पूर्व की ओर अग्र भाग हो जिसका, कुशैरासनद्वयं - कुशों से दो आसन, कल्पयित्वा- कल्पना करके, द्वादशांगुलदीर्घं - बारह अंगुल लम्बा, चतुरंगुलविस्तारं- चार अंगुल चौड़ा, चतुरंगुलखातं - चार अंगुल का गड्ढा, सव्यहस्ते - बायें हाथ में करके, दक्षिणहस्तोद्धृतपात्रस्थोदकेन- दक्षिण हस्त स्थित पात्र के जल से, पूरयित्वा - पूरा करके, पश्चिमासने - पश्चिम दिशा में आसन रखकर, कर्मप्रदीपे - कर्म प्रदीप नामक ग्रन्थ में, द्वादशांगुलदीर्घेण- बारह अंगुल लम्बा, सगर्तकः- गड्ढे को, प्रस्थमात्रोदकग्राही - प्रस्थ मात्र जल से, शाखाध्ययन- शाखा का अध्ययन, मुष्टिमादाय - मुष्टि में लेकर, दर्भहीना- कुशे से हीन, प्रोच्यते - कहा गया है, बुधैः- विद्वानों के द्वारा, परिधानं - वस्त्र, मेखलाधः- मेखला के नीचे, परिस्तरेत्- फैलाना चाहिये, द्विमेखले - दो मखला वाले में, द्वितीयायां - दूसरे मेखला पर, तृतीयायां- तीसरे मेखला पर, त्रिमेखले- तीन मेखला वाले में।

3.7अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

2.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-घ।

2.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

2.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मनोभिलषितव्रतानुवर्णनम्।

2-पारस्कर गृह्य सूत्रम्।

3- अनुष्ठान निधानम्।

4-शब्दकल्पद्रुमः।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-संस्कार भास्करः।

7-पूजन- विधान।

8-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

3.9- सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री-

1- यज्ञ मीमांसा।

2- प्रयोग पारिजात।

3- अनुष्ठान प्रकाश।

4- पूर्त्तकमलाकरः।

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न-

1- चरुस्थाली का परिचय बतलाइये।

2- प्रोक्षणी का स्वरूप बतलाइये।

3- यज्ञीय वृक्ष विचार को लिखिये।

4- स्रुव धारण नियम लिखिये।

5- स्रुचि का लक्षण लिखिये।

6- प्रोक्षण की विधि लिखिये।

7- कुश परिस्तरण की विधि लिखिये।

8- कुश कण्डिका की विधि लिखिये।

9- स्रुव संस्कार की विधि लिखिये।

10- कुश वटु बनाने की विधि लिखिये ।

इकाई - 4 हवन

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हवन की प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कर्मकाण्ड में अनुष्ठानादि की सम्पन्नता हेतु हवन का विधान सर्वविदित है। हवन के अभाव में किसी भी अनुष्ठान की पूर्णता नही हो पाती है। हवन कार्य का प्रारभ अग्नि स्थापन से होता है । अग्नि स्थापन के बाद कुश कण्डिका किया जाता है। कुश कण्डिका के बाद हवन कार्य प्रारम्भ होता ह।

शास्त्रीय दृष्टि से देखा जाय तो हवन का मतलब है आहुति प्रदान करना। अब यहॉ प्रश्न उपस्थित होता है कि हवन कैसे करना चाहिये? उत्तर में आता है कि जिस तरह गृह्य सूत्रों में लिखा गया है उस प्रकार से किया गया हवन फलदायी माना गया है। पारस्कर गृह्य सूत्र में लिखा गया है कि एष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः अर्थात् जहां कही भी हवन होता है वहां इस विधि का प्रयोग करना चाहिये। वस्तुतः हवन ही एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत हवनीय पदार्थ को मन्त्र पाठ के द्वारा अग्नि में प्रदान किया जाता है जिसके बाद अग्नि देवता उस हवि पदार्थ को जिस देवता के लिये प्रदान किया है वहां तक पहुचाते हैं। जिसका फल उस यजमान को प्राप्त होता है। यदि हवन शास्त्रोक्त विधि से नही होगा तो हवनीय पदार्थ अग्नि में ही जल कर राख हो जायेगा लेकिन उस देवता तक वह आहुति नही पहुच पायेगी। इसी प्रक्रिया को ठीक ठंग से जानने एवं करने की प्रक्रिया का नाम हवन है। आज हम लोग अपने आस पास बहुत से लोगों को देखते होगें जा हवन तो करते हैं, परन्तु उसमें प्रदत्त विधियों का अनुपालन नही करते हैं। ऐसी स्थिति में उनको लाभ सही पहुचें इसके लिये आवश्यक है कि हवन की सम्यक् विधि का ज्ञान होता को यानी हवन करने वाले या कराने वाले को हो।

इस इकाई के अध्ययन से आप हवन करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे यज्ञादि कार्यों या अनुष्ठानादि के अवसर किये जाने वाले हवन विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि ।

4.2 उद्देश्य-

अब कुश कण्डिका विचार एवं सम्पादन की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं।

-कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

-हवन के सम्पादनार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।

- हवन के सम्पादन में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

-प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

-लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

-समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

4.3 हवन में मुद्रा आदि विविध विचार -

हवन कैसे किया जाय, इसका उत्तर हमें हवन मुद्रा इत्यादि विचार में मिलेगा। क्योकि हवन का मतलब हम लोग समझते हैं कि किसी भी तरह हवनीय पदार्थों को अग्नि में डालना है। लेकिन ऐसा नही है। अग्नि के प्रकरण में आप देख चुके है कि अग्नि के मुख का परिमाण क्या है और उसी में आहुति डालने से हवन की संज्ञा हो सकेगी। अतः मुद्रा इत्यादि के ज्ञान से हवन करने की विधि का ठीक ज्ञान हो जायेगा जो अधोलिखित है-

4.3.1 होममुद्राविचारः-

इसके अन्तर्गत आपको आहुतियों को प्रदान करने के लिये किस मुद्रा का प्रयोग करना चाहिये इस विधि का ज्ञान कराया जायेगा। जिससे आप सम्यक् प्रकार से हवन कर सकेगें।

होममुद्रा त्रिधा ज्ञेया मृगी हंसी च सूकरी।

सूकरीसर्वांगुलीभिर्हंसीमुक्तकनिष्ठिका। मृगी कनिष्ठतर्जन्योर्मुद्रात्रयमुदाहृतम्।

यज्ञे शान्ति कल्याणे मृगी हंसी प्रकीर्तिता। अभिचारादिके होमे सूकरी कथिता बुधैः।

मयूरी कुक्कटी हंसी सूकरी च मृगी तथा। पंचमुद्राविजानीयाद्धोमद्रव्यग्रहे बुधैः।

न्युब्जेन पाणिनाद्रव्यं तर्जनी रहितेन यत्। क्रियते हवनं विप्रैर्मयूरीं तां विदुर्बुधाः।

अंगुष्ठयंत्रिताः सर्वा अंगुल्यो तानलक्षिताः। हवनं क्रियते याभिः कुक्कुटी सा प्रकीर्तिता।

विकनिष्ठिका तु हंसी मुकुलाभा च सूकरी। मध्यमानामिकांगुष्ठैर्मृगी चैवोपलक्षिताः।

फलमूलयजौ ज्ञेया मुद्रा श्रेष्ठा शिखण्डिनी। जारमारण कर्त्तव्ये कुक्कुटी तु प्रकीर्तिता।

वश्योच्चाटनपूर्वाणां कर्मणां सूकरी मता। शान्तिके पौष्टिके कार्ये मृगी हंसी तथोत्तमा।

होम मुद्रा का विचार -होम मुद्रा के तीन प्रकार मृगी, हंसी एवं सूकरी बतलाया गया है। सभी अंगुलियों के साथ सूकरी मुद्रा एवं कनिष्ठिका को छोड़कर की गयी हवन की मुद्रा हंसी कहलाती है। कनिष्ठा एवं तर्जनी को छोड़कर अन्य अंगुलियो से की गयी हवन की मुद्रा हंसी के नाम से जानी जाती है। यज्ञ में, शान्ति एवं कल्याण में मृगी एवं हंसी मुद्राओं को रखा गया है। अभिचारादि कर्मों में सूकरी मुद्रा को स्थान दिया गया है। कुशकण्डिका भाष्य के अनुसार मयूरी, कुक्कुटी, हंसी, सूकरी और मृगी ये पांच मुद्रायें बतलायी गयी है। तर्जनी अंगुली को छोड़कर न्युब्ज हाथ से दी जाने वाली हवन मुद्रा का नाम मयूरी विद्वान् लोग कहते है। अंगुष्ठयंत्रित समस्त अंगुलियों से दी जाने वाली हवन

मुद्रा का नाम कुक्कुटी विद्वान् लोग कहते है। बिना कनिष्ठा के दी जाने वाली हवन मुद्रा का नाम हंसी एवं मुकुल आभा सदृश मुद्रा से दी जाने वाली हवन मुद्रा का नाम सूकरी विद्वान् लोग कहते है। मध्यमा, अनामिका एवं अंगुष्ठ से दी जाने वाली हवन मुद्रा को मृगी कहा गया है। फल मूलों के आहुति के लिये शिखण्डिनी मुद्रा का प्रयोग करना चाहिये। जार या मारण के लिये कुक्कुटी मुद्रा का प्रयोग करना चाहिये। वश्य एवं उच्चाटन के लिये सूकरी एवं शान्तिक, पौष्टिक कार्यों के लिये मृगी तथा हंसी मुद्राओं का प्रयोग होना चाहिये।

शाकल्य का प्रमाण- यव से तिल हमेशा दुगूना होना चाहिये। अन्य सौगन्धिक पदार्थ गुग्गलादि यव के समान होना चाहिये। त्रिकारिका में लिखा है यव की अधिकता से आयु का क्षय एवं तिल के बराबर यव की साम्यता से धन का क्षय होता है। सभी कामनाओं की समृद्धि के लिये शाकल्य में तिल की अधिकता होनी चाहिये।

कोटि होमविचारः- मात्स्ये

अस्माच्छतगुणः प्रोक्तः कोटिहोमः स्वयंभुवा। आहुतिभिः प्रयत्नेन दक्षिणाभिः फलेन च।
पूर्ववद्ग्रहदेवानामावाहनविसर्जने। होममन्त्रास्त एवोक्ताः स्नाने दाने तथैव च।
कुण्डमण्डप वेदीनां विशेषोऽयं निबोध मे। कोटिहोमे चतुर्हस्तं चतुरस्रं तु सर्वतः।
योनिवक्रद्वयोपेतं तदप्याहुस्त्रिमेखलम्। द्वयंगुलाश्चेति विस्तारः पूर्वयोरेव शस्यते।
वितस्तिमात्रा योनिः स्यात्षट् सप्तांगुलविस्तृता। कूर्मपृष्ठोन्नता मध्ये पार्श्वयोश्चांगुलोच्छ्रिता।
गजोष्ठसदृशी तद्वदायता छिद्रसंयुता। एतत्सर्वेषु कुण्डेषु योनिलक्षणमुच्यते।
वेदिश्च कोटिहोमे स्याद्वितस्तीनां चतुष्टयम्। चतुरस्रा समन्ताच्च त्रिभिर्वप्रैस्तु संयुता।
वप्रप्रमाणं पूर्वोक्त वेदीनां च तथोच्छ्रयः। तथा षोडशहस्तः स्यान्मण्डपश्च चतुर्मुखः।
पूर्वद्वारे च संस्थाप्य बह्वृचं वेदपारगम्। यजुर्विदं तथा याम्ये पश्चिमे सामवेदिनम्।
अथर्ववेदिनं तद्वदुत्तरे स्थापेद्बुधः। अष्टौ तु होमकाः कार्याः वेदवेदांगवंदिनः।
एवं द्वादशविप्रास्तु वस्त्रमाल्यानुलेपनैः।

लक्षहोम विचार-बिना दिया हुआ लोभ से लेने पर कुल क्षय होता है। कल्याण की इच्छा से यजमान को यथाशक्ति अन्नदान करना चाहिये। अन्नहीन यज्ञ करने से दुर्भिक्ष का फल प्राप्त होता है। लक्ष होम बहु वित्त पूर्वक होना चाहिये। विधान पूर्वक यज्ञ करने से सभी कामनाओं की प्राप्ति होती है। कोटि होम विचार-मात्स्य के अनुसार कोटि होम में, लक्ष होम से सौ गुना दक्षिणा एवं फल कहा गया है। देवताओं का आवाहन एवं विसर्जन पूर्ववत् होता है। स्नान , दान एवं होमादि में वे ही मन्त्र प्रयुक्त होते हैं। कुण्ड मण्डप वेदियों में कुछ विशेष होता है इसलिये उसका वर्णन किया जा रहा है। कोटि होम में चार हाथ का चतुरस्र होता है। उसी के अनुसार योनि एवं मेखला होती है। दो-दो अंगुलों का विस्तार किया जा सकता है। वितस्ति मात्र योनि होती है। छ सात अंगुल चौड़ी कूर्म पृष्ठ के समान उन्नत चारो ओर से एक अंगुल ऊँची हाथी के ओठ के समान आयताकार छिद्र से संयुक्त योनि का

लक्षण बताया गया है। कोटि होम में उसी प्रकार का चतुरस्र तीनों वप्र एवं वेदियॉ बनानी चाहिये। चार मुख वाला एवं सोलह हाथ का मण्डप बनाना चाहिये। पूर्व द्वार में ऋग्वेद के विद्वान को, दक्षिण में यजुर्वेद के , पश्चिम में सामवेद के एवं उत्तर द्वार में अथर्व वेद के विद्वान को रखना चाहिये। आठ हवन करने वाले वेद वेदांग पारग व्यक्ति होने चाहिये। इस प्रकार से बारह विप्रों को वस्त्र माला से विभूषित करके पूजना चाहिये।

इस प्रकार सामान्य रूप से हवन के मुद्रा के विधान के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- होममुद्रा त्रिधा ज्ञेया .... हंसी च सूकरी।

क- मृगी, ख- हंसी, ग- सूकरी , घ- कुक्कुटी।

प्रश्न 2- सूकरीसर्वांगुलीभि..........मुक्तकनिष्ठिका। मृगी कनिष्ठतर्जन्योर्मुद्रात्रयमुदाहृतम्।

क- मृगी, ख- हंसी, ग- सूकरी , घ- कुक्कुटी।

प्रश्न 3- यज्ञे शान्ति कल्याणे मृगी हंसी प्रकीर्तिता। अभिचारादिके होमे .... कथिता बुधैः।

क- मृगी, ख- हंसी, ग- सूकरी , घ- कुक्कुटी।

प्रश्न 4- मयूरी .... हंसी सूकरी च मृगी तथा। पंचमुद्राविजानीयाद्धोमद्रव्यग्रहे बुधैः।

क- मृगी, ख- हंसी, ग- सूकरी , घ- कुक्कुटी।

प्रश्न 5- न्युब्जेन पाणिनाद्रव्यं .... रहितेन यत्। क्रियते हवनं विप्रैर्मयूरीं तां विदुर्बुधाः।

क- तर्जनी, ख- हंसी, ग- सूकरी , घ- कुक्कुटी।

प्रश्न 6- अंगुष्ठयंत्रिताः सर्वा अंगुल्यो तानलक्षिताः। ...... क्रियते याभिः कुक्कुटी सा प्रकीर्तिता।

क- मृगी, ख- हवनं, ग- सूकरी , घ- कुक्कुटी।

प्रश्न 7 विकनिष्ठिका तु हंसी मुकुलाभा च ....। मध्यमानामिकांगुष्ठैर्मृगी चैवोपलक्षिताः।

क- मृगी, ख- हंसी, ग- सूकरी , घ- कुक्कुटी।

प्रश्न 8- फलमूलयजौ ज्ञेया मुद्रा श्रेष्ठा शिखण्डिनी। जारमारण कर्त्तव्ये .... तु प्रकीर्तिता।

क- मृगी, ख- हंसी, ग- सूकरी , घ- कुक्कुटी।

प्रश्न 9- वश्योच्चाटनपूर्वाणां कर्मणां सूकरी मता। शान्तिके पौष्टिके कार्ये ....हंसी तथोत्तमा।

क- मृगी, ख- हंसी, ग- सूकरी , घ- कुक्कुटी।

प्रश्न 10-वप्रप्रमाणं पूर्वोक्त .... च तथोच्छ्रयः। तथा षोडशहस्तः स्यान्मण्डपश्च चतुर्मुखः।

क-वेदीनां, ख-अग्नीनां, ग- देवानां, घ- वेदानां।

4.3.2 कामना के अनुसार अग्नि वास एवं ग्रह मुख आहुति विचार-

इसके अन्तर्गत् कामना के अनुसार हवन कब करना चाहिये तथा किस ग्रह के मुख में आहुति जा रही है एवं उसका परिहारादि क्या होगा, इन सभी विषयों पर विचार किया जायेगा।

काम्यहोमादौ वह्निवासस्तत्फलंच-

सैकातिथिर्वारयुताकृताप्ता शेषे गुणेभ्रे भुवि वन्हिवासः।

सौख्यायहोमे शशियुग्मशेषे प्राणार्थनाशौ दिवि भूतले च।

सूर्यभात्रित्रिभे चान्द्रे सूर्य विच्छुक्रपंगवः। चन्द्रारेज्यागुशिखिनो नेष्टहोमाहुतिः खले।

अग्निवासस्य विचारः कदा भवेत् इत्यस्मिन् विषये ग्रन्थान्तरे प्राप्यते -

अग्नेः स्थापनवेलायां पूर्णाहुत्यामथापि वा। आहुतिर्वह्निवासश्च विलोक्यौ शान्ति कर्मणि।

अस्यापवादः-

दुर्गाहोमविधौ विवाह समये सीमन्तपुत्रोत्सवे। गर्भाधानविधौ च वास्तु समये विष्णोः प्रतिष्ठादिषु। मौंजीबन्धनवैश्वदेवकरणे संस्कारनैमित्तिके। होमे नित्यभवे न दोषकथनं चक्रं चवन्हेरपि। संस्कारेषु विचारो अस्य न कार्यो नापि वैष्णवे। नित्ये नैमित्तिके कार्यो न चाब्दे मुनिभिः स्मृतः। अत्र संस्कारेषु गर्भाधानादि षोडशसंस्कारेषु, वैष्णवे विष्णुप्रतिष्ठादिषु, नित्ये नित्यहोमे, नैमित्तिके मूलशान्त्यादौ, आब्दिके युगादिनिमित्तहोमे। जपाद्यंगहोमेऽपि न दिनं शोध्यं तस्य स्वतंत्रकालत्वाभावात्।

काम्य होम में अग्नि वास एवं उसका फल- शुक्लपक्ष की प्रतिपदा तिथि में एक जोड़कर वर्तमान तिथि को भी जोड़ दें। उसमें चार का भाग देने पर तीन एवं शून्य के बचने पर भूमि पर, एक शेष में द्युलोक में एवं दो शेष में भूतल में अग्नि का वास माना गया है। भूतल पर अग्निवास का फल सुख, द्यु लोक में वास का फल प्राणनाश एवं भूतल में अग्नि वास का फल अर्थनाश बतलाया गया है। सूर्य के नक्षत्र से तीन- तीन नक्षत्रों को वर्तमान नक्षत्र तक गिनने पर क्रमश सूर्य, बुध, शुक्र, शनि, चन्द्र, मंगल, गुरु, राहु एवं केतु के मुख में आहुतियां जाती है ऐसा जानना चाहिये। दुष्टग्रहों के मुख में जाने वाली आहुतियों को नेष्ट माना गया है। अग्नि वास का विचार कब करना चाहिये इस प्रश्न के उत्तर में ग्रन्थान्तर में यह मिलता है कि अग्नि स्थापन के समय या पूर्णाहुति के समय अग्नि वास का विचार करना चाहिये। इसके अपवाद का वर्णन करते हुये कहा गया कि दुर्गा जी के होम में, विवाह में, सीमन्त संस्कार में, पुत्रोत्सव में, गर्भाधान में, वास्तु शान्ति में, विष्णु प्रतिष्ठा में, मौंजी बन्धन में, वैश्वदेव कर्म में, संस्कार में एवं नैमित्तिक कर्मो में अग्नि वास का विचार नही किया जाता है। शान्तिसार में लिखा गया है कि संस्कार में, विष्णु कार्य में, नित्य कर्म में, नैमित्तिक कर्म में एवं अब्द कर्म में अग्नि चक्र का विचार नही करना चाहिये। यहाँ संस्कारों का मतलब षोडश संस्कार, विष्णु कार्य का मतलब श्रीविष्णु जी की प्रतिष्ठा, नित्य यानी प्रतिदिन, नैमित्तिकादि यानी मूल शान्ति आदि

और अव्द कर्म यानी युगादि कर्म से है। जपादि अंग होम में भी दिन के शोधन की आवश्यकता नही है।

दैवाद्धोमकरणे शान्ति विचारः-

क्रूरग्रहमुखे चैव संजाते हवने शुभे। शान्तिं विधाय गां दद्यात् ब्राह्मणाय कुटुम्बिने।
आयसीं प्रतिमां कृत्वा निक्षिपेत्तामधोमुखीम्। गोमूत्रमधुगन्धाद्यैरर्चितां प्रतिमां ततः।
श्वभ्रे निधाय संपुज्य तत्र होमो विधीयते। होमारम्भे प्रथमतो गणपतये ह्याहुतिर्देया।
गणाधिपतये देया प्रथमा तु वराहुतिः। अन्यथा विफलं विप्र भवतीह न संशयः।
आघारवाज्यभागौ तु आज्येनैव यथाक्रमम्। एकैकस्याहुतिं हुत्वा अन्यहोमं ततः परम्।
केवलं ग्रहयज्ञं च सर्वशान्त्यादिकेषु च। प्रणवादिश्च तल्लिंगः स्वाहाकारान्त एव च।
जुहुयात्सर्वदेवानां वेद्यां ये चोपकल्पिताः।
अन्ते पूर्णाहुतिं हुत्वा समुद्रादूर्मिसूक्ततः। सन्ततमाज्यधारान्तां पूर्णाहुतिमथाचरेत्।
मूर्द्धानन्दिव मन्त्रेणावशेषघृत धारया। दद्यादुत्थाय पूर्णां वै नोपविश्य कदाचन।

होम करण में शान्ति विचार- क्रूर ग्रह के मुख में आहुति जाने पर शान्ति करके कुटुम्ब युक्त ब्राह्मण को गाय का दान करना चाहिये। जिस ग्रह के मुख में आहुति जा रही हो उस ग्रह की लोहे की प्रतिमा बनाकर अधोमुख रखकर गोमुत्र, मधु, गन्ध इत्यादि से उसकी अर्चना करना चाहिये। कुण्ड में मूर्ति को रखकर पूजित कर होम करना चाहिये। होम के आरम्भ में प्रथम आहुति गणेश जी को देना चाहिये। अन्यथा वह हवन कार्य विफल हो जाता है। आघार एवं आज्य भाग की आहुतियों को यथाक्रम से देना चाहिये। तदनन्तर अन्य हवन करने चाहिये। सभी प्रकार की शान्तियों में ग्रहों को आहुतियाँ देनी चाहिये। आदि में ¬ एवं अन्त में स्वाहा बीच में तल्लिंगक मन्त्रों से आहुतियाँ देनी चाहिये। वेदी पर आवाहित सभी देवताओं को आहुतियाँ देनी चाहिये। अन्त में समुद्रादुर्मिसूक्त से पूर्णाहुति देनी चाहिये। सन्तत आज्यधारान्त पूर्णाहुति देनी चाहिये। अवशेष घृत की धारा मूर्द्धानन्दिव मन्त्र से देना चाहिये। कभी भी पूर्णाहुति बैठकर नही देना चाहिये।

इस प्रकार हवन में कामना के अनुसार अग्निवास का तथा ग्रहों मुख में जाने वाली अहुतिओं के विधान के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- सैकातिथिर्वारयुताकृताप्ता शेषे गुणेभ्रे ....वन्हिवासः।

क- भुवि, ख- दिवि, ग- चान्द्रे, घ- विलोक्यौ।

प्रश्न 2- सौख्यायहोमे शशियुग्मशेषे प्राणार्थनाशौ ....भूतले च।

क- भुवि, ख- दिवि, ग- चान्द्रे, घ- विलोक्यौ।

प्रश्न 3- सूर्यभात्रित्रिभे .... सूर्य विच्छुक्रपंगवः। चन्द्रारेज्यागुशिखिनो नेष्टहोमाहुतिः खले।

क- भुवि, ख- दिवि, ग- चान्द्रे, घ- विलोक्यौ।

प्रश्न 4- अग्नेः स्थापनवेलायां पूर्णाहुत्यामथापि वा। आहुतिर्वह्निवासश्च .... शान्ति कर्मणि।

क- भुवि, ख- दिवि, ग- चान्द्रे, घ- विलोक्यौ।

प्रश्न 5- दुर्गाहोमविधौ विवाह समये सीमन्तपुत्रोत्सवे। गर्भाधानविधौ च .... समये विष्णोः प्रतिष्ठादिषु।

क- वास्तु, ख- दिवि, ग- चान्द्रे, घ- विलोक्यौ।

प्रश्न 6- मौंजीबन्धनवैश्वदेवकरणे संस्कारनैमित्तिके। .... नित्यभवे न दोषकथनं चक्रं चवन्हेरपि।

क- भुवि, ख- होमे, ग- चान्द्रे, घ- विलोक्यौ।

प्रश्न 7- संस्कारेषु विचारो अस्य न कार्यो नापि वैष्णवे। .... नैमित्तिके कार्यो न चाब्दे मुनिभिः स्मृतः।

क- भुवि, ख- दिवि, ग-नित्ये, घ- विलोक्यौ।

प्रश्न 8- क्रूरग्रहमुखे चैव संजाते हवने शुभे। शान्तिं विधाय गां दद्यात् ब्राह्मणाय कुटुम्बिने।

क- भुवि, ख- दिवि, ग-नित्ये, घ- विधाय।

प्रश्न 9- आयसीं प्रतिमां कृत्वा निक्षिपेत्तामधोमुखीम्। गोमूत्रमधुगन्धाद्यैरर्चितां प्रतिमां ततः।

क- आयसी, ख- दिवि, ग-नित्ये, घ- विलोक्यौ।

प्रश्न 10- श्वभ्रे निधाय संपुज्य तत्र होमो विधीयते। होमारम्भे प्रथमतो गणपतये ह्याहुतिर्देया।

क- भुवि, ख- संपूज्य, ग-नित्ये, घ- होमे।

4.4. हवन

इसमें हवन एवं हवन से संबंधित विषयों को आप जान सकेगें। इसके ज्ञान से अपको हवन से संबंधित सभी विषयों की जानारी हो जायेगी।

4.4.1 हवन में आहुति विचारः-

अधोमुख उर्ध्वपादः प्राङ्मुखो हव्यवाहनः। तिष्ठत्येव स्वभावेन आहुतिः कुत्र दीयते।

सपवित्राम्बुहस्तेन बह्नेः कुर्यात् प्रदक्षिणाम्। हव्यवाट् सलिलं दृष्ट्वा विभेति सम्मुखो भवेत्।

आघारौ नासिका ज्ञेया आज्यभागौ च चक्षुषी। वक्त्रश्चोदरकुक्षी च कटी व्याहतिभिः स्मृता।

शिरौ हस्तौ च पादौ च पंचवारुणकाः स्मृताः। प्रजापति स्विष्टकृतं श्रोत्रे द्वे परिकीर्तते।

सधूमो अग्निः शिरो ज्ञेयः निर्धूमश्चक्षुरेव च। ज्वलत्कृशो भवेत्कर्णः काष्ठमग्नेर्मनस्तथा।
अग्निर्ज्वालायते यत्र शुद्धस्फटिकसन्निभः। तन्मुखं तस्य विज्ञेयं चतुरंगुलमानतः।
प्रज्वलो अग्निस्तथा जिह्वा एतदेवाग्निलक्षणम्। आस्यान्तर्जुहुयादग्नेर्विपश्चित्सर्वकर्मसु।

आहुति का विचार- कारिका में अग्नि के स्वभाव का वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि अग्नि का मुख नीचे रहता है, पैर ऊपर की ओर रहता है एवं दिशा उसकी प्राङ् मुख होती है। ऐसे स्वभाव वाले अग्नि को आहुति कहाँ दिया जाय? उत्तर में आता है कि सपवित्रक जल से अग्नि की प्रदक्षिणा करने पर हव्यवाट् अग्नि जल को देखकर भयभीत होकर सम्मुख हो जाता है। आघार संज्ञक आहुतियों को नासिका , आज्य संज्ञक आहुतियों को आंख तथा व्याहृतियों को मुख, उदर, कुक्षि एवं कटि माना गया है। पांच वरुण संज्ञक मन्त्रों को शिर, हाथ एवं पादुका कहा गया है। प्रजापति एवं स्विष्टकृत् आहुतियों को दोनों कान माना गया है। सधूम अग्नि को शिर एवं निर्धूम अग्नि को चक्षु माना गया है। मन्दज्वाला को कर्ण एवं काष्ठ को अग्नि का मन माना गया है। जहाँ अग्नि की ज्वाला शुद्ध स्फटिक के समान हो उसके चार अंगुल के मान तक को अग्नि का मुख माना गया है। प्रज्वलित अग्नि एवं जिह्वा को अग्नि का लक्षण बतलाया गया है। विद्वान् व्यक्ति को सभी कर्मों में इसके अन्तर्गत हवन करना चाहिये।

कर्णहोमे भवेद्व्याधिः नेत्रे ऽन्धत्वमुदाहृतम्। नासिकायां मनः पीड़ा मस्तके च धनक्षयः।
अग्निकर्णे हुतं दद्यात् दुर्भिक्षं मरणं ध्रुवम्। नासिकायां मनो दुःखं नेत्रे ग्रामो विनश्यति।
अन्वारम्भे कृते होमे ब्रह्मणा दक्षिणे करे। बहुः काष्ठैसमिन्धीयादर्चिर्षम्न्तं क्रिया क्षमम्।
स्रुवेणाज्यं गृहीत्वाग्नेः प्रत्यगुत्तरदेशतः। आरभ्यदिशमाग्नेयीमाज्यधारां ऋजुं हरेत्।
मनसा संस्मरेत् स्वाहायुक्तं चैव प्रजापतिम्। नैर्ऋतिं दिशमाश्रित्यमैशानीं पूर्ववत्क्षिपेत्।
तदेन्द्रायपदं स्वाहायुक्तं चोपांशुकं भवेत्। स्वाहेत्याघारयेदेतावाघाराविति भाषितौ।
प्राच्यौ वा जुहुयादेतावृजूसंततमेव च। जुहुयादग्नये स्वाहा सोमायेति तथापराम्।
प्रथमेशानकोणाग्रे द्वितीयाग्नेयकोणगा। सुसमिद्धे ऽथवा वह्नौ होतव्या चोत्तराहुतिः।
भूरादिनवसु स्विष्टकृते चाद्यचतुष्टये। अन्वारम्भो भवेत्तेषु सो ऽन्वारम्भः कुशेन वै।

अग्नि के कान में हवन करने से व्याधि, नेत्र में करने से अन्धत्व, नाक में करने से मन में पीड़ा एवं मस्तक में करने से धन का क्षय होता है। अग्नि के कान में हवन करने से निश्चित रूप से दुर्भिक्ष एवं मरण की प्राप्ति होती है। नासिका में करने से मन में दुःख एवं नेत्र में करने से ग्राम का विनाश का फल बताया गया है। संस्कार भास्कर में वर्णन मिलता है कि अधिक काष्ठ को प्रज्वलित करके दाहिने हाथ से हवन करना चाहिये। स्रुव से आज्य ग्रहण कर अग्नि के प्रत्यग् उत्तर की ओर से हवन करना चाहिये। आग्नेय कोण से आरम्भ कर सीधी आज्य धारा देनी चाहिये। प्रजापति को आहुति देते समय मन से स्मरण कर स्वाहा करना चाहिये। नैर्ऋत्य दिशा से ईशान तक आज्य प्रक्षेपण करना चाहिये। इन्द्र के लिये उपांशु वाचन पूर्वक हवन होना चाहिये। स्वाहा कहते हुये आघार दिया जाता है इसलिये इस आहुति को आघार की उपमा दी गयी है। अथवा पूर्व दिशा में भी ये आहुतियाँ दी जा सकती है।

आघार संज्ञक आहुतियों के अनन्तर अग्नि एवं सोम के लिये आहुतियाँ देनी चाहिये। इसमें प्रथम आहुति ईशान कोण के अग्र भाग में तथा दूसरी आहुति अग्नि कोण में होगी। सुसमिद्ध अग्नि में स्विष्टकृत् नवाहुति एवं चारो आहुतियाँ देनी चाहिये।

इस प्रकार हवन में आहुति विचार के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1-........... उर्ध्वपादः प्राङ्मुखो हव्यवाहनः। तिष्ठत्येव स्वभावेन आहुतिः कुत्र दीयते।

क- अधोमुखः, ख- हव्यवाट्, ग- कटी, घ- श्रोत्रे।

प्रश्न 2- सपवित्राम्बुहस्तेन बह्नेः कुर्यात् प्रदक्षिणाम्। .... सलिलं दृष्ट्वा विभेति सम्मुखो भवेत्।

क- अधोमुखः, ख- हव्यवाट्, ग- कटी, घ- श्रोत्रे।

प्रश्न 3- आघारौ नासिका ज्ञेया आज्यभागौ च चक्षुषी। वक्त्रश्चोदरकुक्षी च .... व्याहृतिभिः स्मृता।

क- अधोमुखः, ख- हव्यवाट्, ग- कटी, घ- श्रोत्रे।

प्रश्न 4- शिरौ हस्तौ च पादौ च पंचवारुणकाः स्मृताः। प्रजापति स्विष्टकृतं .... द्वे परिकीर्तते।

क- अधोमुखः, ख- हव्यवाट्, ग- कटी, घ- श्रोत्रे।

प्रश्न 5- सधूमो .... शिरो ज्ञेयः निर्धूमश्चक्षुरेव च। ज्वलत्कृशो भवेत्कर्णः काष्ठमग्नेर्मनस्तथा।

क- अग्नि, ख- हव्यवाट्, ग- कटी, घ- श्रोत्रे।

प्रश्न 6- अग्निर्ज्वालायते यत्र शुद्धस्फटिकसन्निभः।............ तस्य विज्ञेयं चतुरंगुलमानतः।

क- अधोमुखः, ख- तन्मुखं, ग- कटी, घ- श्रोत्रे।

प्रश्न 7- प्रज्वलो अग्निस्तथा .... एतदेवाग्निलक्षणम्। आस्यान्तर्जुहुयादग्नेर्विपश्चित्सर्वकर्मसु।

क- अधोमुखः, ख- हव्यवाट्, ग- जिह्वा, घ- श्रोत्रे।

प्रश्न 8- कर्णहोमे भवेद्व्याधिः नेत्रे ऽन्धत्वमुदाहृतम्। नासिकायां ....पीड़ा मस्तके च धनक्षयः।

क- अधोमुखः, ख- हव्यवाट्, ग- जिह्वा, घ- मनः।

प्रश्न 9- अग्निकर्णे .... दद्यात् दुर्भिक्षं मरणं ध्रुवम्। नासिकायां मनो दुःखं नेत्रे ग्रामो विनश्यति।

क- अधोमुखः, ख- हुतं, ग- जिह्वा, घ- श्रोत्रे।

प्रश्न 10-अन्वारम्भे कृते .... ब्रह्मणा दक्षिणे करे। बहुः काष्ठैसमिन्धीयादर्च्चिष्मन्तं क्रिया क्षमम्।

क- अधोमुखः, ख- हव्यवाट्, ग- जिह्वा, घ- होमे।

4.4.2 हवन में विविध विचार-

इसमें हवन से संबंधित विविध विचारों का प्रतिपादन किया जायेगा। जिसके कारण आपको हवन करनें की सर्वांगीण विधि का ज्ञान हो सकेगा।

अग्नि पूजा विचारः- मध्येऽ पिगन्धपुष्पादीन् दद्यादग्नेर्नसंशयः। बहिर्नैवेद्यात्रं तु दातव्यमिति निश्चयः।

व्याहृति होमविचारः- आज्येन व्याहृतिर्हुत्वा भूर्भुवस्वरिति क्रमात्। पंचवारुणकं तद्वदन्ते चैव प्रजापतिः।

प्राङ्महाव्याहृतिभिः स्विष्टकृदन्यच्चेदाज्याद्धविः ।

अस्यार्थः हरिहर भाष्ये प्राप्यते यत्र होमे आज्यादन्यद्धविः स्यात्। अत्र हवि शब्देन चरुरेव हविः। यत्र चरुः स्यात् तत्र महाव्याहृतिभिः प्राक् स्विष्टकृद्भवति। अन्यत्रान्तेऽ पीति भाष्यकारः। स्विष्टकृद्धोमः सर्वहोमद्रव्यैः कार्यः।

अन्वाधानविचारः- यद्पि यजुषामन्वाधानं गोभिलहरिहरगदाधरादिभिर्नोक्तत्वात् स्मार्ते कर्मणि नान्वाधानं तथापि शिष्टचारप्राप्तत्वात् सर्वहोमे प्रत्याहुति त्यागस्य कर्तुमशक्यत्वादन्वाधानं कार्यम्।

अग्नि पूजा का विचार- अग्नि की पूजा हेतु अग्नि के बीच में गन्ध पुष्प दिया जा सकता है इसमें संशय नही है। नैवेद्य बाहर रखना चाहिये ऐसा निश्चय किया गया है।

व्याहृति होम विचार- भूर्भुवः स्वः के क्रम से आज्य से व्याहृतियों का हवन करना चाहिये। पाँच वारुण मन्त्रों से एवं अन्त में प्रजापति को आज्य से आहुतियाँ देनी चाहिये। महाव्याहृतियों से पहले स्विष्टकृद्धवि होनी चाहिये ऐसा पारस्कर जी ने लिखा है। इसका अर्थ करते हुये हरिहर जी भाष्य करते हैं जहाँ होम में आज्य से अन्य हवि हो वहाँ। यहाँ हवि शब्द का अर्थ चरु किया गया है। जहाँ चरु हो वहाँ महाव्याहृति से पहले स्विष्टकृद् हवन किया जाता है। स्विष्टकृद्धोम सभी प्रकार के द्रव्यों से किया जा सकता है।

अन्वाधान का विचार- अन्वाधान के बारे में गोभिल, हरिहर एवं गदाधर ने नही लिखा है फिर भी स्मार्त्त कर्म में अन्वाधान शिष्टाचार प्राप्त है। सम्पूर्ण होम में प्रत्येक आहुति में त्याग के विधान की असमर्थता के कारण ऐसा समझा जाना चाहिये।

शाकल्यविचारः- तिलास्तु द्विगुणाः प्रोक्ता यवेभ्यश्चैव सर्वदा। अन्ये सौगंधिकाः स्निग्धाः गुग्गुलादि यवैः समाः।आयुक्षयं यवाधिक्यं यवसाम्यं धनक्षयम्। सर्वकामसमृद्ध्यर्थं तिलाधिक्यं सदैव हि।

लक्षहोमविचारः-अददल्लोभतो मोहात् कुलक्षयमवाप्नुयात्। अन्नदानयथाशक्तिः कर्त्तव्यः भूतिमिच्छताः।

अन्नहीनः कृतो यस्माद्दुर्भिक्षफलदो भवेत्। लक्षहोमस्तु कर्त्तव्यं यथावित्तं भवेद्वहु।

यतः सर्वानवाप्नोति कुर्वन्कामान्विधानतः। इति लक्षहोमः।

सूक्तपाठविचारः- पूर्ववद्पूजयेद्भक्त्या वस्त्रावरणभूषणैः। रात्रिसूक्तं च रौद्रं च पवमानं सुमंगलम्।
पूर्वतो बह्वृचः शान्तिं पठन्नास्ते ह्युदंग्मुखः। शान्तं शाक्रं च सौम्यं च कौष्माण्डं शान्तिमेव च।
पावयेद्दक्षिणद्वारि यजुर्वेदिनमुत्तमम्। सुवर्णमथवैराजं आग्नेयं रुद्रसंहिताम्।
ज्येष्ठसाम तथा शान्तिं छन्दोगः पश्चिमे जपेत्। शान्तिसूक्तं च सौरं च तथा शाकुनकं शुभम्।
पौष्टिकं च महाराज्यमुत्तरेणाप्यथर्ववित्। पंचभिर्वापि होमः कार्योऽत्र पूर्ववत्।
स्नाने दाने च मन्त्राः स्युस्त एवऋषिसत्तम्। अनेन विधिना यस्तु कोटिहोमं समाचरेत्।
सर्वान्कामानवाप्नोति ततो विष्णु पदं व्रजेत्।

सूक्त पाठ का विचार- इस अवसर पर रात्रिसूक्त, रौद्र, पवमान सूक्तों को एवं शान्ति मन्त्रों को उत्तर की ओर मुख करके पाठ करना चाहिये। शान्त, शाक्र,सौम्य, कौष्माण्ड एवं शान्ति सूक्त दक्षिण द्वार वाले को पढ़ना चाहिये। सुवर्ण, वैराज, आग्नेय, रुद्रसंहिता, ज्येष्ठसाम एवं शान्ति मन्त्रों को पश्चिम द्वार पर पढ़ना चाहिये। शान्तिसूक्त, सौर, शाकुन, पौष्टिक आदि सूक्तों को उत्तर द्वार पर अथर्व वेदी को पढ़ना चाहिये। अथवा पॉचों सूक्तों से पूर्ववत् हवन, स्नान दानादि करना चाहिये। इस विधि से जो कोटि होम का आचरण करता है वह सभी कामनाओं को प्राप्त करके विष्णु पद को प्राप्त करता है।

विधिहीनाग्नौ हवनविचारः-

क्षुतृट्क्रोधसमायुक्तो हीनमन्त्रो जुहोति यः। अप्रवृद्धे सधूमे वा सो अन्धः स्याज्जन्मजन्मनि।
स्वल्प रुक्षे स्फुलिंगे वामावर्त्ते भयानक। आर्द्रकाष्ठैश्च सम्पूर्णे फूत्कारवति पावके।
कृष्णार्चिषि सुदुर्गन्धे तथा लिहति मेदिनीम्। आहुतिर्जहुयाद्यस्तु तस्य नाशा भवेद्ध्रुवम्।

विधिहीन अग्नि में हवन विचार-

जो पुरुष भूख, प्यास से व्याकुल तथा क्रोध युक्त होकर मन्त्र रहित, पूर्ण रूप से न सुलगी हुयी अथवा धूयें से व्याप्त अग्नि में हवन करता है वह प्रत्येक जन्म में अन्धा होता है। जो पुरुष स्वल्प रूखी चिनगारियों से भरी, जिसकी ज्वालायें बायीं ओर लपक रही हों, जो देखने में भयानक प्रतीत होती हो, जो गीली लकड़ियों से भरी हो, जिसमें फुफुकार का शब्द हो रहा हो, जिसकी ज्वालायें काली हो, जिसमें से दुर्गन्ध निकल रही हो, जो ज्वालायें भूमि का स्पर्श कर रही हों , ऐसी अग्नि में आहुतियां डालना नाश का कारण होता है।

इस प्रकार हवन में विविध विचार के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- .... पिगन्धपुष्पादीन् दद्यादग्नेर्नसंशयः। बहिर्नैवेद्यात्रं तु दातव्यमिति निश्चयः।

क- मध्ये, ख-आज्येन, ग- व्याहृतिभिः, घ- द्विगुणा।

प्रश्न 2- .... व्याहृतिर्हुत्वा भूर्भुवस्वरिति क्रमात्। पंचवारुणकं तद्वदन्ते चैव प्रजापतिः।

क- मध्ये, ख-आज्येन, ग- व्याहृतिभिः, घ- द्विगुणा।

प्रश्न 3- प्राङ्गहा...............ः स्विष्टकृदन्यच्चेदाज्याद्धविः ।

क- मध्ये, ख-आज्येन, ग- व्याहृतिभिः, घ- द्विगुणा।

प्रश्न 4- तिलास्तु ....ः प्रोक्ता यवेभ्यश्चैव सर्वदा। अन्ये सौगंधिकाः स्निग्धाः गुग्गुलादि यवैः समाः।

क- मध्ये, ख-आज्येन,ग- व्याहृतिभिः, घ- द्विगुणा।

प्रश्न 5-आयुक्षयं ....यवसाम्यं धनक्षयम्। सर्वकामसमृद्ध्यर्थं तिलाधिक्यं सदैव हि।

क- यवाधिक्यं, ख-आज्येन,ग- व्याहृतिभिः, घ- द्विगुणा।

प्रश्न 6-अददल्लोभतो .... कुलक्षयमवाप्नुयात्। अन्नदानयथाशक्तिः कर्त्तव्यः भूतिमिच्छताः।

क- मध्ये, ख- मोहात्,ग- व्याहृतिभिः, घ- द्विगुणा।

प्रश्न 7- अन्नहीनः कृतो यस्माद्दुर्भिक्षफलदो भवेत्। कर्त्तव्यं यथावित्तं भवेद्वहु।

क- मध्ये, ख-आज्येन,ग- लक्षहोमस्तु, घ- द्विगुणा।

प्रश्न 8- पूर्ववद्पूजयेद्भक्त्या वस्त्रावरणभूषणैः। .... च रौद्रं च पवमानं सुमंगलम्।

क- मध्ये, ख-आज्येन,ग- व्याहृतिभिः, घ- रात्रिसूक्तं।

प्रश्न 9- .... बह्वृचः शान्तिं पठन्नास्ते ह्युदंग्मुखः। शान्तं शाक्रं च सौम्यं च कौष्माण्डं शान्तिमेव च।

क- पूर्वतो, ख-आज्येन,ग- व्याहृतिभिः, घ- द्विगुणा।

प्रश्न 10- पावयेद्दक्षिणद्वारि यजुर्वेदिनमुत्तमम्। सुवर्णमथवैराजं .... रुद्रसंहिताम्।

क- मध्ये, ख-आग्नेयं,ग- व्याहृतिभिः, घ- द्विगुणा।

4.5 सारांश-

इस इकाई में हवन विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया। हवन विधि के ज्ञान के अभाव में पूर्णिमा आदि के अवसर पर हवन विधियों का आयोजन, विष्णु यज्ञादि अनुष्ठानों के अवसर पर हवनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसके बिना हवन प्रारम्भ ही नही होगा तो हवन कैसे किया जा सकता है।

हवन का मतलब है आहुति प्रदान करना। अब यहॉ प्रश्न उपस्थित होता है कि हवन कैसे करना चाहिये? उत्तर में आता है कि जिस तरह गृह्य सूत्रों में लिखा गया है उस प्रकार से किया गया हवन फलदायी माना गया है। पारस्कर गृह्य सूत्र में लिखा गया है कि एष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः अर्थात् जहां कही भी हवन होता है वहां इस विधि का प्रयोग करना चाहिये। वस्तुतः हवन ही एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत हवनीय पदार्थ को मन्त्र पाठ के द्वारा अग्नि में प्रदान किया जाता है

जिसके बाद अग्नि देवता उस हवि पदार्थ को जिस देवता के लिये प्रदान किया है वहां तक पहुचाते हैं। जिसका फल उस यजमान को प्राप्त होता है। यदि हवन शास्त्रोक्त विधि से नही होगा तो हवनीय पदार्थ अग्नि में ही जल कर राख हो जायेगा लेकिन उस देवता तक वह आहुति नही पहुच पायेगी। इसी प्रक्रिया को ठीक ठंग से जानने एवं करने की प्रक्रिया का नाम हवन है।

मात्स्य के अनुसार कोटि होम में, लक्ष होम से सौ गुना दक्षिणा एवं फल कहा गया है। देवताओं का आवाहन एवं विसर्जन पूर्ववत् होता है। स्नान , दान एवं होमादि में वे ही मन्त्र प्रयुक्त होते हैं। कुण्ड मण्डप वेदियों में कुछ विशेष होता है इसलिये उसका वर्णन किया जा रहा है। कोटि होम में चार हाथ का चतुरस्र होता है। उसी के अनुसार योनि एवं मेखला होती है। दो-दो अंगुलों का विस्तार किया जा सकता है। वितस्ति मात्र योनि होती है। छ सात अंगुल चौड़ी कूर्म पृष्ठ के समान उन्नत चारो ओर से एक अंगुल ऊँची हाथी के ओठ के समान आयताकार छिद्र से संयुक्त योनि का लक्षण बताया गया है। कोटि होम में उसी प्रकार का चतुरस्र तीनों वप्र एवं वेदियॉ बनानी चाहिये। चार मुख वाला एवं सोलह हाथ का मण्डप बनाना चाहिये। पूर्व द्वार में ऋग्वेद के विद्वान को, दक्षिण में यजुर्वेद के , पश्चिम में सामवेद के एवं उत्तर द्वार में अथर्व वेद के विद्वान को रखना चाहिये। आठ हवन करने वाले वेद वेदांग पारग व्यक्ति होने चाहिये।

भूर्भुवः स्वः के क्रम से आज्य से व्याहृतियों का हवन करना चाहिये। पाँच वारुण मन्त्रों से एवं अन्त में प्रजापति को आज्य से आहुतियाँ देनी चाहिये। महाव्याहृतियों से पहले स्विष्टकृद्धवि होनी चाहिये ऐसा पारस्कर जी ने लिखा है। इसका अर्थ करते हुये हरिहर जी भाष्य करते हैं जहाँ होम में आज्य से अन्य हवि हो वहाँ। यहाँ हवि शब्द का अर्थ चरु किया गया है। जहाँ चरु हो वहाँ महाव्याहृति से पहले स्विष्टकृद् हवन किया जाता है। स्विष्टकृद्धोम सभी प्रकार के द्रव्यों से किया जा सकता है।

4.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

सैका- एक सहित, तिथिर्वारयुता- तिथि और वार को जोड़कर, कृताप्ता- चार का भाग देने पर, शेषे- शेष गुणेभ्रे - तीन या शून्य, भुवि - भूमि पर, वन्हिवासः- अग्नि का वास जानना चाहिये, सौख्याय- सुख के लिये, होमे - हवन में, शशि- एक, युग्म- दो, प्राणार्थनाशौ- प्राण एवं अर्थ का नाश, दिवि- द्यु लोक, भूतले - पाताल लोक में, सूर्यभात्- सूर्य के नक्षत्र से, त्रित्रिभे- तीन तीन नक्षत्र, चान्द्रे- वर्तमान नक्षत्र, सूर्य - सूर्य,वित्- बुध, छुक्र- शुक्र, पंगवः- शनि, चन्द- चनद्रमा, आ़र- मंगल, इज्य- गुरू, गु- राहु, शिखिनो- केतु, नेष्ट- न इष्ट, होमाहुतिः- हवन की आहुति, खले- पापग्रहों क मुख में, अग्नेः- अग्नि के, स्थापनवेलायां- स्थापन वेला में, पूर्णाहुत्यामथापि वा- अथवा पूर्णाहुति में, आहुतिर्वह्निवासश्च- आहुति औ अग्नि वास, विलोक्यौ - देखना चाहिये, शान्ति कर्मणि- शान्ति कर्म में, अस्यापवादः- इसका अपवाद, दुर्गाहोमविधौ - दुर्गा होम विधि में, विवाह समये - विवाह समय में , सीमन्तपुत्रोत्सवे- सीमन्त संस्कार में, पुत्रोत्सव में, गर्भाधानविधौ - गर्भाधान विधि में वास्तु समये - वासतु शान्ति में विष्णोः प्रतिष्ठादिषु- विष्णु प्रतिष्ठा में, मौंजीबन्धनवैश्वदेवकरणे - मौंजी बन्धन में,

वैश्वदेव करण में,संस्कार- संस्कारों में, नैमित्तिके- नैमित्तिक कर्म में, होमेनित्यभवे- नित्य हवन में, न दोषकथनं - दोष कथन नही किया गया है, चक्रं चवन्हेरपि- अग्नि चक्र का विचार भी, संस्कारेषु - संस्कारों में, विचारो अस्य न - इसका विचार नही, कार्यो - करना चाहिये, नापि वैष्णवे- न ही विष्णु कार्य मेंया वैशणव के यहां, नित्ये - नित्य कार्य, नैमित्तिके कार्यो - नैमित्तिक कार्य में, न चाब्दे - न वार्षिक कार्य में, मुनिभिः स्मृतः- मुनियों के द्वारा स्मृत है, गर्भाधानादि षोडशसंस्कारेषु- गर्भाधानादि षोडशसंसकारों में, वैष्णवे -विष्णुप्रतिष्ठादि में, नित्ये -नित्यहोम में, नैमित्तिके -मूलशान्ति आदि में, आब्दिके - वार्षिक कृत्य में युगादिनिमित्तहोमे- युगादि निमित्तक वन में, जपाद्यंगहोमेऽपि- जपादि अंग होम में भी, न दिनं शोध्यं - दिन का शोधन नही करना चाहिये, तस्य स्वतंत्रकालत्वाभावात्- उसके स्वतंत्र काल के अभाव के कारण, क्रूरग्रहमुखे - क्रूर ग्रह के मुख में, शान्तिं विधाय- शान्ति करके, गां दद्यात्- गाय देना चाहिये, ब्राह्मणाय- ब्राह्मण के लिये, कुटुम्बिने- कुटुम्बियों के लिये, आयसीं - लोहे की, प्रतिमां कृत्वा- प्रतिमा करके, निक्षिपेत्तामधोमुखीम्- अधोमुख करके कुण्ड में डालें, गोमूत्र- गो मुत्र, मधु- मधु, गन्धाद्यैरर्चितां- गन्ध इत्यादि से अर्चित ,श्वभ्रे- गड्ढे में, निधाय- रखकर, संपुज्य- पूजित करके, होमो विधीयते- हवन का विधान करना चाहिये, होमारम्भे- हवन के आरम्भ में, प्रथमतो- पहले, गणपतये - गणपति के लिये, आहुतिर्देया- आहुति देना चाहिये, प्रथमा - पहली, वराहुतिः- श्रेष्ठ आहुति, अन्यथा- नही तो, विफलं - विफल, भवतीह - यह होता है, न संशयः- संशय नही है, आघारवाज्यभागौ - आघार भाग, आज्य भाग, तु- तो, आज्येनैव- घी से ही, यथाक्रमम्- क्रम के अनुसार, एकैकस्याहुतिं हुत्वा- एक एक आहुति का हवन करके, अन्यहोमं - अन्य होम, ततः परम्- उसके बाद, केवलं - केवल, ग्रहयज्ञं - ग्रह यज्ञा, च- और, सर्वशान्त्यादिकेषु - सभी प्रकार की शान्तियों में, जुहुयात्सर्वदेवानां - सभी देवताओं को हवन करे, वेद्यां- वेदी पर, ये - जो, चोपकल्पिताः- आवाहित स्थापित, अन्ते - अन्त में, पूर्णाहुतिं- पूर्णाहुति को, हुत्वा- हवन करके, समुद्राद्रूर्मिसूक्ततः- समुद्राद्रूर्मि सूक्त से, सन्ततमाज्यधारान्तां- लगातार घी की धारा, आचरेत्- आचरण करना चाहिये।

4.7अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

4.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-क।

4.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-घ।

4.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-घ।

4.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मनोभिलषितव्रतानुवर्णनम्।

2-पारस्कर गृह्य सूत्रम्।

3- अनुष्ठान निधानम्।

4-शब्दकल्पद्रुमः।

5-आह्निक सूत्रावलिः।

6-संस्कार भास्करः।

7-शान्ति- विधान।

8-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

4.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- यज्ञ मीमांसा।

2- प्रयोग पारिजात।

3- अनुष्ठान प्रकाश।

4- पूर्त्तकमलाकरः।

4.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- अग्नि का परिचय बतलाइये।

2- शाकल्य का स्वरूप बतलाइये।

3- विधि हीन अग्नि में हवन विचार को लिखिये।

4- कोटि होम का नियम लिखिये।

5- अग्निवास का विचार लिखिये।

6- ग्रह मुख आहुति विचार लिखिये।

7- पापग्रह मुख आहुति का परिहार लिखिये।

8- हवन में मुद्रा का विचार लिखिये।

9- हवन में आहुति विचार लिखिये।

10- कोटि होम विचार लिखिये।

इकाई - 5 बलि विधान एवं पूर्णाहुति

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

इस इकाई में बलि विधान एवं पूर्णाहुति की प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। कर्मकाण्ड में अनुष्ठानादि की सम्पन्नता हेतु बलि विधान एवं पूर्णाहुति का विधान सर्वविदित है। पूर्णाहुति के अभाव में किसी भी अनुष्ठान की पूर्णता नही हो पाती है। इस कार्य का प्रारभ अग्नि स्थापन से होता है । अग्नि स्थापन के बाद कुश कण्डिका किया जाता है। कुश कण्डिका के बाद हवन कार्य प्रारम्भ होता है। उसके समस्त हवन करके बलि विधान कर पूर्णाहुति प्रदान करने से अनुष्ठान पूर्ण होता है।

शास्त्र कहता है कि पूर्णाहुत्या सर्वान् कामानवाप्नोति अर्थात् पूर्णाहुति से सभी कामनाओं की प्राप्ति होती है। संसार के समस्त मानव अपने अपने मनोकामनाओं की प्रपूर्ति के लिये विविध यत्न करते रहते हैं जिनमें कर्मकाण्ड के सहारे भी लोग मनोकामनाओं की पूर्ति का प्रयास करते हैं। शास्त्रीय विधि को गीता में सर्वश्रेष्ठ विधि कहा गया है इसलिये भारतीय मनीषा पौरोहित्य के देव पूजनादि कर्मो का सम्पादन कर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति का प्रयत्न करती हैं। अनुष्ठानादि कार्यों को शास्त्रीय विधि के अन्तर्गत इसलिये रखा गया है क्योकि इनका एक क्रम और नियम होता है जो गृह्सूत्रादि ग्रन्थों से प्रमाणित होता है। किसी भी कर्मकाण्ड का आरम्भ जब हम करते है तो जब तक पूर्णाहुति नही हो जाती है तब तक वह अनुष्ठान पूर्ण नही माना जाता है। पूर्णाहुति के अनन्तर ही अनुष्ठान पूर्ण फल देना प्रारम्भ करता है। इसलिये यह परम आवश्यक है कि पूर्णाहुति की सम्यक् विधि का ज्ञान प्राप्त किया जाय तथा सम्यक् विधि से उसका सम्पादन किया जाय। इसके साथ साथ बलि भी देने की परम्परा है जो दश दिक्पालों, नवग्रहादि क्षेत्रपालां को प्रदान किया जाता है जो अनिवार्य है।

इस इकाई के अध्ययन से आप बलिदान एवं पूर्णाहुति करने की विधि का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें। इससे यज्ञादि कार्यो या अनुष्ठानादि के अवसर किये जाने वाले बलिदान एवं पूर्णाहुति विषय के अज्ञान संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगें। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं सवंर्धित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकेगें, जैसे - कल्पसूत्रीय विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

5.2 उद्देश्य-

अब बलिदान एवं पूर्णाहुति के विचार एवं सम्पादन की आवश्यकता को आप समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं।

-कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।

-बलिदान एवं पूर्णाहुति के सम्पादनार्थ शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।

- बलिदान एवं पूर्णाहुति के सम्पादन में व्याप्त अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।

-प्राच्य विद्या की रक्षा करना।

-लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।

-समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना।

5.3 बलिदान एवं पूर्णाहुति में विविध विचार -

बलिदान एवं पूर्णाहुति कैसे किया जाय, इसका उत्तर हमें पूर्णाहुति इत्यादि विचार में मिलेगा। क्योकि पूर्णाहुति का मतलब हम लोग समझते हैं कि किसी भी तरह पूर्णाहुति को अग्नि में डालना है। लेकिन ऐसा नही है। पूर्व के के प्रकरण में आप देख चुके है कि अग्नि के मुख का परिमाण क्या है और उसी में आहुति डालने से हवन की संज्ञा हो सकेगी, उसी में पूर्णाहुति भी डाली जाती है। अतः इसके के ज्ञान से पूर्णाहुति करने की विधि का ठीक ज्ञान हो जायेगा जो अधोलिखित है-

5.3.1 होमान्त कृत्य विचारः-

इसके अन्तर्गत आपको हवनान्त कौन से कृत्य है जिनमें बलिदान एवं पूर्णाहुति भी सम्मिलित है को बताने का प्रयास किया जायेगा।जिससे आप सम्यक् प्रकार से हवनान्त कृत्य कर सकेगें।

होमावसाने कृत् तूर्यनादौ गुरुर्गृहीत्वा बलिपुष्पधूपम्। आवाहयेल्लोकपतीन् क्रमेण मन्त्रैरमीभिर्यजमानयुक्तः।

पूर्णाहुतिमथो हुत्वा बर्हिहोमादिकं चरेत्।

बर्हिहुत्वा प्राश्नाति इति सूत्रमस्ति। सर्वहोमं हुत्वा शेषं प्राशनमिति कात्यायनेनोक्तम्। अस्य सूत्रस्य व्याख्यायां श्री हरिहरेनुक्तं सर्वेषामाहुतीनां होमद्रव्यं स्रुवेऽ वशेषितं संस्रवत्वेन प्रसिद्धं पात्रान्तरे प्रक्षिप्यते तत्प्राश्यम्।

ऐशान्यामाहरेद्भस्म स्रुचा वाथ स्रुवेण वा। अंकनं कारयेत्तेन शिरः कण्ठांसकेषु च।

नारदः- श्रेयः सम्पाद्य दानं च अभिषेको विसर्जनम्।। विप्रशिषः प्रगृह्णीयात्तान्मिष्टान्नेन भोजयेत्।

ब्राह्मणभोजनसंख्या-

शान्तौ वक्ष्ये भोजयेत् होमाद्विप्रान्दशांशतः। उत्तमं तद्भवेद् कर्म तत्वांशेन तु मध्यमम्।

होमाच्छतांशतो विप्रभोजनं त्वधममं तु तत्। शान्तेर्द्विगुणितं विप्रं भोजनं स्तम्भने मतम्।

त्रिगुणं द्वेषणोच्चाटे मारणे होम सम्मितम्।

एकं एकाहुतौ विप्रं होमं त्वन्नेन भोजयेत्। अत्यर्थो मध्यमश्चापि विप्रमेकं शताहुतौ।

सहस्रस्याहुतेर्वैकं जघन्योऽपि प्रभोजयेत्। अन्यथा दहति क्षिप्रं तद्राष्ट्रं नात्र संशयः।

अतो दातुं अशक्तो यो दक्षिणां चान्नमेव वा। जपै प्रणामैः स्तोत्रैश्च तोषयेत्तर्पयेद्गुरुन्।

दक्षिणाविचारः-

यज्ञो दक्षिणया सार्द्धं पुत्रेण च फलेन च। कर्मिणां फलदाता चेत्येवं वेदविदो विदुः।

कृत्वा कर्म च तस्यैव तूर्णं दद्याच्च दक्षिणाम्। तत्कर्मफलमाप्नोति वेदैरुक्तमिदं मुने।

मुहूर्त्ते समतीते च भवेच्छतगुणा च सा। त्रिरात्रे तद्दशगुणा सप्ताहे द्विगुणा ततः।

मासे लक्षगुणा प्रोक्ता ब्राह्मणानां च वर्द्धते। संवत्सरे व्यतीते तु सा त्रिकोटिगुणा भवेत्।

कर्म्म तद्यजमानानां सर्वं च निष्फलं भवेत्। स ब्रह्स्वापहारी च न कर्मार्हो अशुचिर्नरः।

होमान्त कृत्य विचार-

होमावसान में पुष्प धूपादि से बलि की पूजा करके लोकपतियों को आवाहित कर बलिदान देना चाहिये। तदनन्तर पूर्णाहुति देकर बर्हिहोम करना चाहिये। सूत्र में बर्हि हवन करने के बाद प्राशन करने का विधान दिया है। इसकी व्याख्या करते हुये हरिहर जी ने लिखा है सभी आहुतियों का होमावशेष संस्रव के रूप में जो पात्रान्तर में रखा गया है उसे प्राशन करना चाहिये। स्रुचि अथवा स्रुव से ईशान की ओर से भस्म धारण शिर, कण्ठ एवं कन्धे में करना चाहिये। नारद जी कहते हैं उसके बाद श्रेय का दान सम्पादित करके अभिषेक एवं विसर्जन करना चाहिये। तदनन्तर विप्र से आशीष ग्रहण करके उनको मिष्ठान्न का भोजन कराना चाहिये। ब्राह्मण भोजन संख्या पर विचार करते हुये कहा गया है कि हवन का दशांश ब्राह्मण भोजन कराना शान्ति के कार्यो में उत्तम माना गया है। चौबीसवाँ अंश मध्यम एवं शतांश अधम माना गया है। शान्ति कर्म का दुगूना स्तम्भन कर्म में ब्राह्मणभोजन का विधान है। द्वेषण, उच्चाटन एवं मारण में तिगूना की व्यवस्था बतलायी गयी है। एक आहुति करने पर एक ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिये। सौ आहुतियॉं देकर एक ब्राह्मण को भोजन कराना मध्यम पक्ष है। एक हजार आहुतियाँ देकर एक ब्राह्म को भोजन कराने का पक्ष जघन्य पक्ष कहलाता है। ऐसा नही करने पर वह राष्ट्र नष्ट हो जाता है। दक्षिणा अथवा अन्न का दान देने में जो असमर्थ होते हैं उन्हें चाहिये कि जप से, प्रणाम से, स्तोत्र से अपने आचार्य को तृप्त करें।

सदक्षिणा वाला यज्ञ पुत्र एवं फल को देने वाला होता है। मुनि लोग कहते है कि कर्म सम्पन्न कर तुरंत दक्षिणा देनी चाहिये। एक मुहूर्त्त बीत जाने पर सौ गूना बढ़ जाता है। तीन रात बीतने पर दश गुना, सात दिन बीतने पर उसका दोगुना, एक मास बीतने पर लाख गुना, एक वर्ष बीतने पर तीन करोड़ गुना दक्षिणा हो जाती है। यजमान का किया गया कर्म सब निष्फल हो जाता है। वह यजमान ब्रह्म धन का अपहर्ता और समस्त कर्मों के लिये अपवित्र माना जाता है।

इस प्रकार हवन में अन्तिम कृत्य यानी हवनान्त कृत्य विचार के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- होमावसाने कृत् तूर्यनादौ गुरुर्गृहीत्वा ....।

आवाहयेल्लोकपतीन् क्रमेण मन्त्रैरमीभिर्यजमानयुक्तः।

क- बलिपुष्पधूपम्, ख- हुत्वा, ग- स्रुवेण, घ- दानं।

प्रश्न 2- पूर्णाहुतिमथो .... बर्हिहोमादिकं चरेत्।

क- बलिपुष्पधूपम्, ख- हुत्वा, ग- स्रुवेण, घ- दानं।

प्रश्न 3- ऐशान्यामाहरेद्भस्म स्रुचा वाथ .... वा। अंकनं कारयेत्तेन शिरः कण्ठांसकेषु च।

क- बलिपुष्पधूपम्, ख- हुत्वा, ग- स्रुवेण, घ- दानं।

प्रश्न 4- श्रेयः सम्पाद्य .... च अभिषेको विसर्जनम्।। विप्रशिषः प्रगृह्णीयात्तान्मिष्टान्नेन भोजयेत्।

क- बलिपुष्पधूपम्, ख- हुत्वा, ग- स्रुवेण, घ- दानं।

प्रश्न 5- शान्तौ वक्ष्ये भोजयेत् होमाद्विप्रान्दशांशतः। .... तद्भवेद् कर्म तत्वांशेन तु मध्यमम्।

क- उत्तमं, ख- हुत्वा, ग- स्रुवेण, घ- दानं।

प्रश्न 6- होमाच्छतांशतो विप्रभोजनं त्वधममं तु तत्। शान्तेर्द्विगुणितं .... भोजनं स्तम्भने मतम्।

क- बलिपुष्पधूपम्, ख- विप्रं, ग- स्रुवेण, घ- दानं।

प्रश्न 7-त्रिगुणं द्वेषणोच्चाटे मारणे होम सम्मितम्।

क- बलिपुष्पधूपम्, ख- हुत्वा, ग- होम, घ- दानं।

प्रश्न 8-एकं एकाहुतौ विप्रं होमं त्वन्नेन भोजयेत्। अत्यर्थो मध्यमश्चापि .... शताहुतौ।

क- बलिपुष्पधूपम्, ख- हुत्वा, ग- स्रुवेण, घ- विप्रमेकं।

प्रश्न 9-सहस्रस्याहुतेर्वैकं जघन्योऽपि प्रभोजयेत्। अन्यथा .... क्षिप्रं तद्राष्ट्रं नात्र संशयः।

क- बलिपुष्पधूपम्, ख- हुत्वा, ग- स्रुवेण, घ- दहति।

प्रश्न 10-अतो दातुं अशक्तो यो दक्षिणां चान्नमेव वा। जपै प्रणामैः स्तोत्रैश्च तोषयेत्तर्पयेद्गुरुन्।

क- बलिपुष्पधूपम्, ख- हुत्वा, ग- स्रुवेण, घ- दातुं।

5.3.2 पुरश्चरणीयानुष्ठानस्य विचारः-

आदौ भूमेः परिग्रहणं कुर्यात्। ग्रामात्क्रोशमितं स्थानं नद्यादौ वा स्वेच्छया चयनं कृत्वा तस्य क्षेत्रस्य कीलनं कुर्यात्। तत्र विधिवतं क्षेत्रपालादिकं प्रपूज्य दिग्पतिभ्यो बलिं दद्यात्। पुरश्चरणकर्ता स्नानादिकं कृत्वा हरिस्मरणं कुर्यात्।

शयीत कुशशैयायां प्रार्थयेद्वृषभध्वजम्। भगवन्देवदेवेश शूलभृद्वृषवाहन।

इष्टानिष्टे समाचक्ष्व मम सुप्तस्य शाश्वतः। इत्यादिभिः शिवं प्राथ्र्य निद्रां कुर्यान्निराकुलः।

स्वप्नं दृष्टं निशि प्रातर्गुरवे विनिवेदयेत्। आदौ कुर्याद्व्रतं मन्त्री देहशोधनकारकम्। पुरश्चर्यां ततः कुर्यात् समस्तफलभाग्भवेत्। पुरश्चरणमादौ च कर्मणां सिद्धिकारकम्। स्वाध्यायाभ्यसनस्यादौ प्राजापत्यं चरेद्विजः। केशश्मश्रुलोमनखान् वापयित्वा अप्लुतः शुचिः।

तिष्ठेदहनि रात्रौ तु शुचिरासीत् वाग्यतः। यस्य कस्यापि मन्त्रस्य पुरश्चरणमारभेत्। व्याहृतित्रयसंयुक्ता गायत्रीं चायुतं जपेत्। नृसिंहार्कवराहाणां तान्त्रिकं वैदिकं तथा। बिना जप्त्वा तु गायत्री तत्सर्वं निष्फलं भवेत्।

पुरश्चरणीय अनुष्ठान का विचार- पुरश्चरण हेतु सर्वप्रथम भूमि का चयन करना चाहिये। गाँव से एक कोश दूर का स्थान या नदी का तट इत्यादि स्वेच्छा से चयनित करना चाहिये। चयनित क्षेत्र का कीलन करके विधिवत् क्षेत्रपालादि को बलिदान दे। पुरश्चरण कर्ता पूर्व दिन में स्नानादि करके हरि का स्मरण करे, कुश की शैया पर भगवान शिव की प्रार्थना करके सोवे। रात्रि में यदि कोई स्वप्न देखे तो उसको गुरू को निवेदित करे। मन्त्र सिद्धि करने वाले मन्त्री को पहले व्रत करके देह शुद्धि करना चाहिये। उसके बाद पुरश्चरण का फल मिलता है। पुरश्चरण के पूर्व किये जाने वाले कृत्य सिद्धिकारक होते हैं इसलिये उन कृत्यों का सम्पादन नियम पूर्वक करना चाहिये। स्वाध्याय का अभ्यास करते हुये प्राजापत्य व्रत का आचरण करे। बाल, दाढ़ी व नख इत्यादि कटवाकर पवित्र होकर वाणी पर संयम रखते हुये दिन एवं रात बितावें। किसी भी मन्त्र का पुरश्चरण करना हो महाव्याहृतियों से संयुक्त गायत्री मन्त्र का दश हजार जप करना चाहिये। नृसिंह, वराह, सूर्य आदि देवताओं का ध्यान एवं पूजन तथा भूमिगायत्री मन्त्र के जप के बिना सब कुछ किया हुआ निष्फल हो जाता है इसलिये गायत्री मन्त्र का जप भी करना चाहिये।

निष्कृतिर्नहि वेदानां मन्त्राणां कलिदोषतः। कलिदोषनिवृत्यर्थं गायत्रीमाश्रयेद्विजः।
गायत्री मन्त्र सिद्ध्यर्थं गायत्रीं त्र्ययुतं जपेत्। सर्वेषां वेद मन्त्राणां सिद्ध्यर्थं लक्षकं जपेत्।
प्रातरुत्थाय शिरसि ध्यात्वा गुरुपदाम्बुजम्। आवश्यकं विनिर्वर्त्य स्नातुं यायात्सरित् तटे।
देशिको विधिवत् स्नात्वा कृत्वापौर्वान्हिकी क्रियाः। यायादलंकृतो मौनी यागार्थं यागमण्डपम्।
गृहद्वारमथागत्य द्वारपूजां समाचरेत्। द्वारमस्त्राम्बुना प्रोक्ष्य गणेशं चोर्ध्वतो यजेत्।
महालक्ष्मी दक्षभागे वामभागे सरस्वतीम्। पुनर्दक्षे यजेद्विघ्नं गंगां च यमुनामपि।
पुनर्वामे क्षेत्रपालं स्वः सिन्धु यमुने अपि। पुनर्दक्षे तु धातारं विधातारं तु वामतः।
तद्वन्निधिशंखपद्मौ ततो अर्चेद्वारपालकान्। द्वारपूजानन्तरं मण्डपं प्रविशेत्।

अर्चनमन्दिरे प्राङ्मुखोदङ्मुखं वा पद्मासनासीनो भूत्वा सर्वान् सम्भारान् स्वदक्षिणे संस्थाप्य करयोः प्रक्षाल्य घृतदीपान् प्रज्वालयेत्। ततो कृतांजलिपुटो भूत्वा वामदक्षिणपार्श्वयोः गुरुं गणेशं च नत्वा भूतशुद्धिं समाचरेत्।

कलि के दोष के प्रभाव से वेद मन्त्र भी गायत्री मन्त्र का आश्रय करते है इसलिये कलि दोष की

निवृत्ति के लिये गायत्री का आश्रय करना चाहिये। गायत्री मन्त्र की सिद्धि के लिये तीन अयुत गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिये। सभी वेद मन्त्रों की सिद्धि के लिये एक लाख जप करना चहिये। प्रातः काल उठकर श्री गुरुचरणकमलों का ध्यान कर आवश्यक कार्य का सम्पादन कर किसी नदी के तट पर स्नान करके पौर्वान्हिकी क्रिया का सम्पादन करके अलंकृत होकर मौन पूर्वक यागमण्डप में आवे। याग मण्डप के गृहद्वार पर आकर द्वारपूजा का आचरण करे। द्वार पर श्री गणेश जी की वन्दना करके दाहिने भाग में महालक्ष्मी एवं बायें भाग में महासरस्वती की अर्चना करनी चाहिये। पुनः दाहिने गंगा, यमुना एवं बायें क्षेत्रपाल, सिन्धु एवं यमुना का ध्यान करे। दायें बायें क्रम से धाता एवं विधाता की भी वन्दना करें। उसी प्रकार निधि एवं शंख इत्यादि की पूजा करके द्वारपालों की पूजा करें। द्वारपूजा के अनन्तर पूजा मण्डप में प्राच्य या उदिच्य मुख होकर पद्मासन से बैठकर सभी सामग्रियों को अपने दक्षिण भाग में स्थापित करके हस्तप्रक्षालन पूर्वक घृतदीप का प्रज्वालन करें। तदनन्तर अंजलि बनाकर बायें एवं दायें भाग में गुरु एवं गणेश जी को नमस्कार करके भूतशुद्धि का आचरण करें।

देवं भूत्वा यजेद्देवं नादेवो देवमर्चयेत्। देवार्चायोग्यताप्राप्त्यै भूतशुद्धिं समाचरेत्।

भूतशुद्धिं विधायैवप्राणस्थापनमाचरेत्। भूतशुद्धिविहीनेन कृता पूजा अभिचारवत्।

विपरीतफलं दद्यादभक्त्यापूजनं यथा। भूतशुद्धिं कृत्वा कूर्मचक्रस्य स्थापन पूर्वकं दीपस्थापनं कृत्वा मन्त्राणां दशसंस्काराः कुर्यात्।

देवता बनकर देवता का यजन करें। अदेव बनकर देवता की अर्चना न करे। देवार्चा की योग्यता प्राप्ति के लिये भूतशुद्धि का आचरण करना चाहिये। भूतशुद्धि का विधान करके प्राणस्थापन करना चाहिये। भूतशुद्धि के बिना की गयी पूजा अभिचार के समान होती है। अभक्ति पूर्वक पूजन करने से विपरीत फल की प्राप्ति होती है। भूतशुद्धि करके कूर्मचक्र की स्थापना करके दीप स्थापन पूर्वक मन्त्र के दश संस्कार करने चाहिये।

इस प्रकार पुरश्चरणीय अनुष्ठानों के हवन में कृत्य विचार के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- .... कुशशैयायां प्रार्थयेद्वृषभध्वजम्। भगवन्देवदेवेश शूलभृद्वृषवाहन।

क- शयीत, ख- मम, ग- आदौ, घ- कर्मणाँ।

प्रश्न 2-इष्टानिष्टे समाचक्ष्व .... सुप्तस्य शाश्वतः। इत्यादिभिः शिवं प्रार्थ्य निद्रां कुर्यान्निराकुलः।

क- शयीत, ख- मम, ग- आदौ, घ- कर्मणीं।

प्रश्न 3- स्वप्नं दृष्टं निशि प्रातर्गुरवे विनिवेदयेत्। .... कुर्यादव्रतं मन्त्री देहशोधनकारकम्।

क- शयीत, ख- मम, ग- आदौ, घ- कर्मणीं।

प्रश्न 4-पुरश्चर्यां ततः कुर्यात् समस्तफलभाग्भवेत्। पुरश्चरणमादौ च .... सिद्धिकारकम्।

क- शयीत, ख- मम, ग- आदौ, घ- कर्मणीं।

प्रश्न 5-स्वाध्यायाभ्यसनस्यादौ प्राजापत्यं चरेद्विजः। केशश्मश्रुलोमनखान् वापयित्वा .... शुचिः।

क- अप्लुतः, ख- मम, ग- आदौ, घ- कर्मणीं।

प्रश्न 6-तिष्ठेदहनि .... तु शुचिरासीत् वाग्यतः। यस्य कस्यापि मन्त्रस्य पुरश्चरणमारभेत्।

क- शयीत, ख-रात्रौ , ग- आदौ, घ- कर्मणीं।

प्रश्न 7-व्याहतित्रयसंयुक्ता .... चायुतं जपेत्। नृसिंहार्कवराहाणां तान्त्रिकं वैदिकं तथा।

क- शयीत, ख- मम, ग- गायत्रीं, घ- कर्मणीं।

प्रश्न 8- बिना .... तु गायत्री तत्सर्वं निष्फलं भवेत्।

क- शयीत, ख- मम, ग- आदौ, घ- जप्त्वा।

प्रश्न 9- पुनर्वामे क्षेत्रपालं .... सिन्धु यमुने अपि। पुनर्दक्षे तु धातारं विधातारं तु वामतः।

क- शयीत, ख- स्वः, ग- आदौ, घ- कर्मणीं।

प्रश्न 10- तद्वन्निधिशंखपद्मौ ततो अर्चेद्वारपालकान्। द्वारपूजानन्तरं .... प्रविशेत्।

क- शयीत, ख- मम, ग- मण्डपं, घ- कर्मणीं।

5.4.1 पूर्णाहुति विचारः-

चतुर्गृहीतमाज्यं तद्गृहीत्वा स्रुचि मध्यतः।

वस्त्रतांबूलपूंगादिफलपुष्पसमन्विताम्।

अधोमुखस्रुवच्छन्नां गन्धाक्षतसमन्विताम्।

पूर्व दक्षिणहस्तेन पश्चाद्वामेन पाणिना।

अग्रमध्यममध्यस्तं मूलमध्यममध्यतः।

पाणिद्वयेन होतव्य पाणिरेको निरर्थकः।

गृहीत्वाथस्रुवं कर्ता शंखसन्निभमुद्रया।

वामस्तनान्तमानीय नाभिमूलात्स्रुचं ततः।

सप्तेत्यनुवाकान्ते मखे सूक्तान्विशेषतः।

श्रावयेत्सूक्तमाग्नेयं वैष्णवं रौद्रमैन्दवम्।

महावैश्वानरं चापि चमकानि ततः पठेत्।

विवाहादि क्रियायां च शालायां वास्तुपूजने।

नित्यहोमे वृषोत्सर्गे न पूर्णाहुतिमाचरेत्।

पूर्णाहुति विचार- स्रुचि के मध्य में आज्य रखकर उसमें वस्त्र, तांबूल, पूंगीफल, पुष्प समन्वित पूर्णाहुति रखे। उसको अधोमुख स्रुव से आच्छन्न करके गन्धाक्षत से समन्वित करके दाहिना हाथ पूर्व में एवं बाया हाथ उसके पश्चात् होना चाहिये। ये हाथ स्रुचि के आगे एवं मध्य के मध्य में तथा मूल एवं मध्य के मध्य में होना चाहिये। हमेशा पूर्णाहुति दोनों हाथों से दी जानी चाहिये। एक हाथ से दी गयी पूर्णाहुति निरर्थक मानी जाती है। शंख के समान मुद्रा बनाकर स्रुचि को वामस्तनान्त तक रखना चाहिये। सप्तते अनुवाक्, आग्नेय सूक्त, वैष्णव, रौद्र, एन्दव, महावैश्वानर एवं चमक मन्त्रों को पढ़ना चाहिये। विवाहादि क्रिया में, शालापूजन में, वास्तुपूजन में, नित्यहोम में एवं वृषोत्सर्ग में पूर्णाहुति नही दी जाती है।

इस प्रकार पुर्णाहुति के कृत्य विचार के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- चतुर्गृहीतमाज्यं तद्गृहीत्वा .... मध्यतः।

क- स्रुचि, ख- पुष्प, ग-गन्ध, घ- पाणिना।

प्रश्न 2-वस्त्रतांबूलपूंगादिफल.........समन्विताम्।

क- स्रुचि, ख- पुष्प, ग-गन्ध, घ- पाणिना।

प्रश्न 3-अधोमुखस्रुवच्छन्नां ....साक्षतसमन्विताम्।

क- स्रुचि, ख- पुष्प, ग-गन्ध, घ- पाणिना।

प्रश्न 4- पूर्व दक्षिणहस्तेन पश्चाद्वामेन ....।

क- स्रुचि, ख- पुष्प, ग-गन्ध, घ- पाणिना।

प्रश्न 5-अग्रमध्यममध्यस्तं ......मध्यममध्यतः।

क- मूल, ख- पुष्प, ग-गन्ध, घ- पाणिना।

प्रश्न 6- पाणिद्वयेन .... पाणिरेको निरर्थकः।

क- स्रुचि, ख- होतव्यो, ग-गन्ध, घ- पाणिना।

प्रश्न 7-गृहीत्वाथस्रुवं .... शंखसन्निभमुद्रया।

क- स्रुचि, ख- पुष्प, ग-कर्ता, घ- पाणिना।

प्रश्न 8-वामस्तनान्तमानीय नाभिमूलात्........ ततः।

क- स्रुचि, ख- पुष्प, ग-गन्ध, घ- स्रुचं।

प्रश्न 9-सप्तेत्यनुवाकान्ते .... सूक्तान्विशेषतः।

क- स्रुचि, ख- पुष्प, ग-मखे, घ- पाणिना।

प्रश्न 10-श्रावयेत्सूक्तमाग्नेयं .... रौद्रमैन्दवम्।

क- स्रुचि, ख- पुष्प, ग-गन्ध, घ- वैष्णवं।

5.4.2 पूर्णाहुति में मन्त्र संस्कार-

मन्त्राणां संस्काराः-

मन्त्राणां दश कथ्यन्ते संस्काराः सिद्धदायिनः। जननं जीवनं पश्चात् ताडनं बोधनं तथा।

अभिषेको विमलीकारणाप्यायने पुनः। तर्पणं दीपनं गुप्तिर्दशैता मन्त्रसंस्क्रियाः।

मन्त्राणां मातृकायन्त्रादुद्धारो जननं स्मृतम्। प्रणवान्तरितान्कृत्वा मन्त्रवर्णांजपेत्सुधीः।

एतज्जीवनमित्याहुर्मन्त्रतन्त्रविशारदाः।

मन्त्रवर्णान्समालिख्य ताडयेच्चन्दनाम्भसां प्रत्येकं वायुना मन्त्री ताडनं तदुदाहृतम्।

विलिख्यमन्त्रं तं मन्त्री प्रसूनैः करवीरजैः। तन्मन्त्राक्षरसंख्यातैर्हन्याद्वातेन बोधनम्।

स्वतन्त्रोक्तविधानेन मन्त्री मन्त्रार्णसंख्यया। अश्वत्थपल्लवैर्मन्त्रमभिषिंचेद्विशुद्धये।

संचिन्त्य मनसा मन्त्रं ज्योतिर्मंत्रेणनिर्दहेत्। मन्त्रेमलत्रयं मन्त्री विमलीकरणं त्विदम्।

तारं व्योमाग्निमनुयुग्दण्डो ज्येतिर्मनुर्मतः। कुशोदकेन जप्तेन प्रत्यर्णं प्रोक्षणं मनोः।

तेन मन्त्रेण विधिवदेतदाप्यायनं मतम्। मन्त्रेणवारिणा मन्त्रतर्पणं तर्पणं स्मृतम्।

तारमायारमायोगे मनोर्दीपनमुच्यते। जप्यमानस्य मन्त्रस्य गोपनं त्वप्रकाशनम्।

संस्कारा दश संप्रोक्ताः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः। यान्कृत्वा सम्प्रदायेनमन्त्री वांछितमश्नुते।

61- मन्त्रों के दश संस्कार- मन्त्रों को सिद्धि प्रदान करने वाले दश संस्कार बतलाये गये हैं जिन्हे जनन, जीवन, ताडन, बोधन, अभिषेक, विमलीकरण, आप्यायन, तर्पण, दीपन व गुप्ति के नाम से जाना जाता है।

जनन संस्कार- मातृकाओं के बीच से मन्त्रों का उद्धार जनन कहलाता है।

विशेष- भोजपत्र पर गोरोचन आदि से समत्रिभुज लिखना चाहिये। पश्चिम के कोण से प्रारम्भ कर उसे सात समान भागों में विभक्त करना चाहिये। इसी प्रकार ईशान एवं आग्नेय कोण से भी उसे सात- सात समान भागों में बाँटना चाहिये। ऐसा करने से इसमें 49 योनियाँ बन जायेगीं। इस चक्र में ईशान कोण से आरम्भ कर पश्चिम तक अकार से हकार पर्यन्त समस्त वर्णों को लिखना चाहिये। उसपर मातृका देवी का आवाहन कर चन्दन आदि से उसका पूजन करना चाहिये। फिर उससें मन्त्र के एक-एक वर्ण का उद्धार करना चाहिये। इस प्रक्रिया को जनन संस्कार के नाम से जाना जाता है।

जीवन संस्कार-

प्रणवान्तरित मन्त्रवर्णों का जप जीवन के नाम से जाना जाता है। मन्त्रवर्णों को लिखकर चन्दन एवं जल से ताडन किया जाता है। मन्त्र जप कर्ता उस मन्त्र को करवीर के पुष्पों से लिखकर

मन्त्राक्षरसंख्या के अनुसार बोधन करे। मन्त्र की ऋण संख्या के हिसाब से अश्वत्थ पल्लवों से विशुद्धि हेतु अभिषेक करें। ज्योतिर्मन्त्र से दोहन कर विमलीकरण करे। उसी तरह आप्यायन, तर्पण, दीपनादि करके मन्त्रों का किया गया

कलौ सिद्धिप्रदा मन्त्राः-

सिद्धिप्रदाः कलियुगे ये मन्त्रास्तान्वदाम्यतः। त्र्यर्णएकाक्षरो अनुष्टुप् त्रिविधो नरकेसरी।
एकाक्षरो अर्जुनोनुष्टुप् द्विविधस्तुरगाननः। चिन्तामणिः क्षेत्रपालो भैरवो यक्षनायकः।
गोपालो गजवक्त्रश्च चेटका यक्षिणी तथा। मातंगी सुन्दरी श्यामा तारा कर्णपिशाचिनी।
शबर्येकजटावामा काली नीलसरस्वती। त्रिपुरा कालरात्रिश्च कलाविष्टप्रदा इमे।
शापरहिता मन्त्राः- भीष्मपर्वणि या गीता सा प्रशस्ता कलौ युगे। विष्णोः सहस्रनामाख्यं स्तोत्रं पापप्रणाशनम्।
गजेन्द्रमोक्षणं चैव तथा कारुण्यकः स्तवः। नारसिंहं तथा स्तोत्रं स्तोत्रं श्रीरामसंज्ञकम्।
देव्याः सप्तशती स्तोत्रं तथानामसहस्रकम्। श्लोकाष्टकं नीलकण्ठं शैवं नामसहस्रकम्।
त्रिपुरायाः प्रसादाख्यं सूर्यस्य स्तवराजकम्। पैत्रोरुचिस्तवो यश्च इन्द्राक्षीस्तोत्रमेव च।
वैष्णवं च महालक्ष्म्याः स्तोत्रमिन्द्रेणभाषितम्।। भार्गवाख्येन रामेण शप्तान्यन्यानि कारणात्।

62- कलि में सिद्धिप्रद मन्त्र- मन्त्रमहोदधि में कहा गया है कि कलियुग में जो सिद्धिदायक मन्त्र है उन मन्त्रों का वर्णन इस प्रकार है। नृसिंह का त्र्यक्षर मन्त्र, एकाक्षर एवं अनुष्टुप् इस तरह के तीन प्रकार के नृसिंह मन्त्र, एकाक्षर एवं अनुष्टुप् दो प्रकार के अर्जुन मन्त्र, दो तरह के हयग्रीव मन्त्र, चिन्तामणि मन्त्र तथा क्षेत्रपाल मन्त्र, भैरव मन्त्र ,यक्षराज मन्त्र, गोपाल मन्त्र , गणपति मन्त्र, चेटका यक्षिणी मन्त्र, मातंगी मन्त्र, सुन्दरी मन्त्र, श्यामा मन्त्र, तारामन्त्र, कर्णपिशाचिनी मन्त्र, शबरी मन्त्र, एकजटामन्त्र, वामाकाली मन्त्र, नीलसरस्वती मन्त्र, त्रिपुरामन्त्र एवं कालरात्री मन्त्र, ये सभी कलियुग में इष्ट प्रदान करने वाले मन्त्र बतलाये गये है। शापरहित मन्त्रों का वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि भीष्म पर्व में जो गीता है वह कलियुग में प्रशस्त है। विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र पापनाशक है। गजेन्द्रमोक्ष, कारण्यकस्तव, नरसिंहस्तोत्र, श्रीरामस्तोत्र, दुर्गासप्तशती स्तोत्र, सहस्रनाम स्तोत्र, श्लोकाष्टकनीलकण्ठ, शिवसहस्रनामस्तोत्र, त्रिपुराप्रसादस्तोत्र, सूर्यस्तवराज, पैत्र्यरुचिस्तोत्र, इन्द्राक्षी स्तोत्र, विष्णुस्तोत्र, इन्द्रप्रोक्तमहालक्ष्मी स्तोत्र ये सभी शापरहित है। इनके अतिरिक्त अन्य परशुराम द्वारा अभिशप्त है।

पूर्णाहुत्यादौ मुद्रा विचारः-

आवाहनादिका मुद्राः प्रवक्ष्यामि यथाक्रमम्। याभिर्विरचिताभिस्तु मोदन्ते सर्वदेवताः।
सम्यक् संपूरितः पुष्पैः कराभ्यां कल्पितोंजलिः। आवाहनी समाख्याता मुद्रा देशिकसत्तमैः।
अधोमुखी कृता सैव प्रोक्ता स्थापनकर्मणि। आश्लिष्टयुगला प्रोन्नतांगुष्ठयुग्मका।
सन्निधाने समुद्ष्टिा मुद्रेयं तन्त्रवेदिभिः। अंगुष्ठगर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता।

उत्तानौ द्वौ कृतौ मुष्टी संमुखीकरणी स्मृता। देवतांगे षडंगानां न्यासः स्यात् संकलीकृतिः।
सव्यहस्तकृता मुष्टिर्दीर्घाधोमुखतर्जनी। अवगुंठनमुद्रेयमभितो भ्रामिता सती।
अन्योन्याभिमुखाश्लिष्ट कनिष्ठानामिका पुनः। तथा च तर्जनी मध्या धेनुमुद्रा समीरिता।
अमृतीकरणं कुर्यात्तया देशिकसत्तमः। अन्योन्यग्रथितांगुष्ठा प्रसारित करांगुलि।
महामुद्रेयमुदिता परमीकरणे बुधैः। योजनात्सर्वदेवानां द्रावणात्पापसंहतेः।
तस्मान्मुद्रेति सा ख्याता सर्वकामार्थसाधिनी। कुम्भमुद्रा- दक्षांगुष्ठे परांगुष्ठे खिप्त्वा हस्तद्वयेनच।
सावकाशामेकमुष्टिं कुर्यात्सा कुम्भमुद्रिका। कूर्ममुद्रा- वामहस्ते च तर्जन्यां दक्षिणस्य कनिष्ठिका।
तथा दक्षिणतर्जन्यां वामांगुष्ठं नियोजयेत्। उन्नतं दक्षिणांगुष्ठं वामस्य मध्यमादिकाः।
अंगुलीर्योजयेत्पृष्ठे दक्षिणस्य करस्य च। वामस्य पितृतीर्थेन मध्यमानामिके तथा।
अधोमुखे च ते कुर्याछदक्षिणस्य करस्य च। कूर्मपृष्ठसमं कुर्यात् दक्षपाणिं च सर्वतः।
कूर्ममुद्रेयमाख्याता देवताध्यानकर्मणि।

यथा क्रम से आवाहनादि मुद्रा का वर्णन कर रहा हूं जिसके निर्माण करने से सभी देवता मुदित हो जाते है। दोनों हाथों से अंजलि बांध कर दोनों अगूठों को अपनी -अपनी अनामिकाओं के मूलपर्वों पर लगाना चाहिये। इसे आवाहनी मुद्रा कहा जाता है। इसह आवाहनी मुद्रा को अधोमुखी बना देने से स्थापनी मुद्रा बन जाती है। दोनों हाथों से मुठ्ठी बांधकर दोनों के अंगूठों को खड़ा कर देने से सन्निधापनी मुद्रा बनती है। कहा जाता है। इस मुद्रा की मुड्ठियों को उपर घुमा दिया जाता है तो संमुखीकरणमुद्रा बन जाती है। देवताओं के षडंगन्यास में सकलीकृत् मुद्रा भी दिखानी चाहिये। बांये हाथ की मुड्ठी बांधकर तर्जनी को अधोमुखकरके उसे नियमित रूप से आगे पीछे करने से अवगुंठन मुद्रा बनती है। दाहिने हाथ की अंगुलियों को बायें हाथ की अंगुलियों पर रखकर दाहिने तर्जनी को मध्यमा के मध्य में लगावें। बायें हाथ की अनामिका को दाहिने हाथ की कनिष्ठिका से लगाये।इसी प्रकार सभी अंगुलियों को योजित करने के बाद हाथों को उलट देने से धेनु मुद्रा बनती है। इसी प्रकार अमृतीकरण भी किया जाता है। अमृतीकरण के समय अमृत बीज वं का उच्चारण भी करना चाहिये। दोनों अंगूठों को एक दूसरे के साथ ग्रथित करके दोनों हाथों की अंगुलियों को प्रसारित देने से महामुद्रा बन जाती है। जो साधक को साधक को सभी देवताओं से जोड़े तथा पापों के समूहों को विनष्ट कर दे ऐसे सर्वकार्य साधिनी प्रक्रिया को मुद्रा कहा गया है। दायें अंगूठे को बायें के उपर रखे। इसी अवसथा में दोनों हाथ की मुठ्ठियां बाधे। दोनों मुठ्ठियों के बीच में थोड़ी जगह होनी चाहिये। इसे कुम्भ मुद्रा कहते है। बाईं तर्जनी को दाहिनी कनिष्ठिका से मिलायें। पुनः दाहिनी तर्जनी को बायें अंगूठे से मिलायें और दाहिने अंगूठे को उपर उठा दे। अब बायें हाथ की मध्यमा और अनामिका को दाहिने हाथ की हथेली से लगायें। दाहिने हाथ को कछुए के पीठ की तरह बनायें। देवता के ध्यान कर्म में प्रयुक्त होने वाली इस मुद्रा का नाम कूर्म मुद्रा है।

दक्षस्य तर्जनी मध्ये सव्ये करतले क्षिपेत्। अभिघातेन शव्दःस्यादस्त्रमुद्रा समीरिता।
मत्स्यमुद्रा- दक्षपाणेः पृष्ठदेशे वामपाणितलं न्यसेत्। अंगुष्ठौ चालयेत्सम्यक् मुदेयं

मत्स्यरूपिणी।

शंखमुद्रा- वामांगुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना। कृत्वोत्तानं ततो मुष्टिमंगुष्ठं तु प्रसारयेत्। वामांगुल्यस्तथाश्लिष्टाः संयुताः सुप्रसारिताः। दक्षिणांगुष्ठ स्पृष्टा ज्ञेयैषा शंखमुद्रिका।

गरुड़मुद्रा- मिथस्तर्जनिके श्लिष्टे ष्लिष्टावंगुष्ठौ तथा। मध्यमानामिके तु द्वौ पक्षाविव विचालयेत्।

एषा गरुड़मुद्रा स्याद्विष्णोः संतोषवर्धिनी।

योनि मुद्रा- मध्ये कुटिले कृत्वा तर्जन्युपरिसंस्थिते। अनामिके मध्यगते तथैव हि कनिष्ठिके। सर्वा एकत्र संयोज्या अंगुष्ठपरिपीडिताः। एषा तु प्रथमामुद्रा योनि मुद्रेति संज्ञिता।

प्रार्थना मुद्रा- प्रसृतांगुलिकौ हस्तौ मिथः श्लिष्टौ च संमुखौ। कुर्यात्स्वे हृदये सेयं मुद्रा प्रार्थनसंज्ञिका।

पंकजमुद्रा- संमुखीकृत्य हसतौ द्वौ किंचित्संकुचितांगुली। मुकुली तु समाख्याता पंकजा प्रसृतैव सा।।

दोनों हाथों को बाण के समान फैलाकर तर्जनी और अंगूठे के घर्षण से चुटकी बजाने को अस्त्र मुद्रा कहते है। बाईं हथेली को दाहिने हाथ के पृष्ठ भाग पर रखे और फिर दोनों अगूंठों को हथेली को पार करते हुये मिलाये। यह मत्स्य मुद्रा है। बायें हाथ के अगूंठे को दाहिनी मुठ्ठी में रखे, दाहिनी मुठ्ठी को उर्ध्वमुख रखकर उसके अंगूठे को फैलायें। बायें हाथ की सभी अगुंलियों को एक दूसरे के साथ सटाकर फैला दें। अब बायें हाथ की फैली उंगलियों को दाहिनी ओर घुमाकर दाहिने हाथ के अगूठें का स्पर्श करें। यह शंख मुद्रा कहलाती है। दोनों हाथों के पृष्ठ भाग को एक दूसरे से मिलाइये। अब नीचे की ओर लटके हुये दोनों हाथों को तर्जनी और कनिष्ठा को एक दूसरे के साथ ग्रथित कीजिये। इसी स्थिति में दोनों हाथों की अनामा और मध्यमाओं को उल्टी दिशाओं में किसी पक्षी के पंखों की भाति उपर नीचे कीजिये। यह गरुड़ मुद्रा कहलाती है। दोनों कनिष्ठिकाओं को तथा तर्जनी एवं अनामिकाओं को बांधे। अनामिका को मध्यमा से पहले किंचित् मिलायें और फिर उन्हे सीधा कर दे। अब दोनों अगूठों को एक दूसरे पर रखे यह योनि मुद्रा कहलाती है। दोनों हाथों को फैलाये हुये हृदय पर रखे यह प्रार्थना मुद्रा है। दोनों हाथों को सम्मुख करके हथेलियां उपर करे, अंगुलियों को बन्द कर मुठ्ठी बाधे। अब दोनों अगूठों को उगलियों के उपर से परस्पर स्पर्श कराये।

इस प्रकार पुर्णाहुति में मन्त्र, उनके संस्कार तथा विभिन्न प्रकार क आवश्यक मुद्राआंे के कृत्य विचार के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- मन्त्राणां .... कथ्यन्ते संस्काराः सिद्धदायिनः। जननं जीवनं पश्चात् ताडनं बोधनं तथा।

क- दश, ख-दीपनं, ग- जननं, घ- बोधनम्।

प्रश्न 2- अभिषेको विमलीकारणाप्यायने पुनः। तर्पणं .... गुप्तिर्दशैता मन्त्रसंस्क्रियाः।

क- दश, ख-दीपनं, ग- जननं, घ- बोधनम्।

प्रश्न 3- मन्त्राणां मातृकायन्त्रादुद्धारो .... स्मृतम्। प्रणवान्तरितान्कृत्वा मन्त्रवर्णांजपेत्सुधीः।

क- दश, ख-दीपनं, ग- जननं, घ- बोधनम्।

प्रश्न 4- मन्त्रवर्णान्समालिख्य ताडयेच्चन्दनाम्भसां प्रत्येकं वायुना मन्त्री ...... तदुदाहृतम्।

क- दश, ख-दीपनं, ग- ताडनं, घ- बोधनम्।

प्रश्न 5- विलिख्यमन्त्रं तं मन्त्री प्रसूनैः करवीरजैः। तन्मन्त्राक्षरसंख्यातैर्हन्याद्वातेन ....।

क- दश, ख-दीपनं, ग- जननं, घ- बोधनम्।

प्रश्न 6- स्वतन्त्रोक्तविधानेन ....मन्त्रार्णसंख्यया। अश्वत्थपल्लवैर्मन्त्रमभिषिंचेद्विशुद्धये।

क- दश, ख-मन्त्री, ग- जननं, घ- बोधनम्।

प्रश्न 7- संचिन्त्य मनसा......... ज्योतिर्मंत्रेणनिर्द्दहेत्। मन्त्रेमलत्रयं मन्त्री विमलीकरणं त्विदम्।

क- दश, ख-दीपनं, ग-मन्त्रं, घ- बोधनम्।

प्रश्न 8- तारं व्योमाग्निमनुयुग्दण्डो ज्येतिर्मनुर्मतः। कुषोदकेन जप्तेन प्रत्यर्णं......... मनोः।

क- दश, ख-दीपनं, ग- जननं, घ- प्रोक्षणम्।

प्रश्न 9- तेन मन्त्रेण विधिवदेतदाप्यायनं मतम्। मन्त्रेणवारिणा मन्त्रतर्पणं तर्पणं स्मृतम्।

क- दश, ख-दीपनं, ग- जननं, घ- तर्पणम्।

प्रश्न 10- तारमायारमायोगे मनोर्दीपनमुच्यते। जप्यमानस्य मन्त्रस्य गोपनं त्वप्रकाशनम्।

क- दश, ख-दीपनं, ग- गोपनं, घ- बोधनम्।

5.5 सारांश-

इस इकाई में बलिदान एवं पूर्णाहुति विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया । इस विधि के ज्ञान के अभाव में पूर्णिमा आदि के अवसर पर हवन विधियों का आयोजन, विष्णु यज्ञादि अनुष्ठानों के अवसर पर हवनादि का सम्पादन किसी भी व्यक्ति द्वारा ठीक ढंग से नही हो सकता है। क्योकि इसके बिना हवन की पूर्णाहुति ही नही होगी तो अनुष्ठान का फल कैसे प्राप्त किया जा सकता है।

शास्त्र कहता है कि पूर्णाहुत्या सर्वान् कामानवाप्नोति अर्थात् पूर्णाहुति से सभी कामनाओं की प्राप्ति होती है। संसार के समस्त मानव अपने अपने मनोकामनाओं की प्रपूर्ति के लिये विविध यत्न करते रहते हैं जिनमें कर्मकाण्ड के सहारे भी लोग मनोकामनाओं की पूर्ति का प्रयास करते हैं। शास्त्रीय विधि को गीता में सर्वश्रेष्ठ विधि कहा गया है इसलिये भारतीय मनीषा पौरोहित्य के देव पूजनादि कर्मों का सम्पादन कर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति का प्रयत्न करती हैं। अनुष्ठानादि कार्यो

को शास्त्रीय विधि के अन्तर्गत इसलिये रखा गया है क्योकि इनका एक क्रम और नियम होता है जो गृह्सूत्रादि ग्रन्थों से प्रमाणित होता है। किसी भी कर्मकाण्ड का आरम्भ जब हम करते है तो जब तक पूर्णाहुति नही हो जाती है तब तक वह अनुष्ठान पूर्ण नही माना जाता है। पूर्णाहुति के अनन्तर ही अनुष्ठान पूर्ण फल देना प्रारम्भ करता है।

पूर्णाहुति में कहा गया है कि स्रुचि के मध्य में आज्य रखकर उसमें वस्त्र, तांबूल, पूंगीफल, पुष्प समन्वित पूर्णाहुति रखे। उसको अधोमुख स्रुव से आच्छन्न करके गन्धाक्षत से समन्वित करके दाहिना हाथ पूर्व में एवं बाया हाथ उसके पश्चात् होना चाहिये। ये हाथ स्रुचि के आगे एवं मध्य के मध्य में तथा मूल एवं मध्य के मध्य में होना चाहिये। हमेशा पूर्णाहुति दोनों हाथों से दी जानी चाहिये। एक हाथ से दी गयी पूर्णाहुति निरर्थक मानी जाती है। शंख के समान मुद्रा बनाकर स्रुचि को वामस्तनान्त तक रखना चाहिये। सप्तते अनुवाक्, आग्नेय सूक्त, वैष्णव, रौद्र, एन्दव, महावैश्वानर एवं चमक मन्त्रों को पढ़ना चाहिये। विवाहादि क्रिया में, शालापूजन में, वास्तुपूजन में, नित्यहोम में एवं वृषोत्सर्ग में पूर्णाहुति नही दी जाती है। स्विष्कृद्धवन के बाद बलि देनें का विधान आता है। उसमें दिक्पालों, नवग्रहों, क्षेत्रपालों को बनि प्रदान किया जाता है।

5.6 पारिभाषिक शब्दावलियां-

होमावसाने - हवन के समाप्त हाने पर, कृत् तूर्यनादौ- तुरही इत्यादि वाद्य यन्त्र की ध्वनि करत हुये, गुरुर्गृहीत्वा- आचार्य ग्रहण करके, बलिपुष्पधूपम्- बलि, पुष्प आर धूप, आवाहयेल्लोकपतीन् - लोकपतियों को आवाहित करे, क्रमेण- क्रम से, यजमानयुक्तः- यजमान से युक्त होकर, पूर्णाहुति- पूरण करने वरली आहुति, हुत्वा- हवन करके, बर्हिहोमादिकं - कुशा इत्यादि, चरेत्- आचरण करना चाहिये, प्राश्नाति - प्राशन करता है, इति - यह, सूत्रमस्ति- सूत्र है, सर्वहोमं हुत्वा- सभी होम करके, शेषं प्राशनमिति - शेष का प्राशन करें, कात्यायनेनोक्तम्- कात्यायन के द्वारा कहा गया है, अस्य- इस का, सूत्रस्य- सूत्र का, व्याख्यायां - व्याख्या में, श्री हरिहरेनुक्तं - श्री हरिहर जी के द्वारा कहा गया है, सर्वेषामाहुतीनां - सभी आहुतियों का,होमद्रव्यं - हवनीय द्रव्य, स्रुवेऽ वशेषितं - स्रुव में अवशिष्ट रह गया है, संस्रवत्वेन- संस्रव के रूप में, प्रसिद्धं पात्रान्तरे - प्रसिद्ध पात्रान्तर में , प्रक्षिप्यते - छोड़ा जाता है, तत्प्राश्यम्- उसका प्राशन करना चाहिये, ऐशान्यामाहरेद्भस्म- ईशान काण से भस्म लेना चाहिये, स्रुचा वाथ- स्रुचि से अथवा, स्रुवेण वा- स्रुव से, अंकनं कारयेत्तेन- उसस अंकन करना चाहिये, शिरः- शिर का, कण्ठांसकेषु - कंठ एवं कन्धा का, श्रेयः सम्पाद्य दानं - इसके बाद श्रेय सम्पाद्य का दान ब्राह्मणों के द्वारा यजमान को किया जाता है, अभिषेको- अभिषेक, विसर्जनम्- विसर्जन, विप्राशिषः- विप्र के आशीष से, प्रगृह्णीयात्तान्मिष्टान्नेन -उस मिष्ठान्न का ग्रहण करे, भोजयेत्- भोजन करावे, ब्राह्मणभोजनसंख्या-ब्राहमण भाजन की संख्या, शान्तौ - शान्ति कर्म में, वक्ष्ये - बोल रहा हूँ , होमाद्विप्रान्दशांशतः- हाम का दशांश, उत्तमं - उत्तम, तद्भवेद् - वह हाता है, तत्वांशेन- चौबीसवां अंश, मध्यमम्- मध्यम, होमाच्छतांशतो - होम का सौंवा अंश, विप्रभोजनं - विप्रभोजन, त्वधममं -

तो अधम, शान्तेर्द्विगुणितं - शान्ति से दुगूना, विप्रं भोजनं - ब्राह्मणों का भोजन, स्तम्भने - स्तम्भन में, मतम्- विचार, त्रिगुणं - तिगूना, द्वेषणोच्चाटे - द्वेषण कर्म एवं उच्चाटन कर्म में, मारणे- मारण में, होम सम्मितम्- होम के बराबर, एकं - एक, एकाहुतौ - एक आहुति में, त्वन्नेन- अन्न से, विप्रमेकं - एक विप्र, शताहुतौ- सौ आहुति, सहस्रस्याहुतेर्वैकं - एक हजार आहुति में भी एक, जघन्योऽपि- अधम, दहति- जल जाता है, क्षिप्रं-शीघ, तद्राष्ट्रं - वह राष्ट्र, नात्र संशयः- इसमं संशय नही है। अतो दातुं - देने में, अशक्तो - असमर्थ, यो- जो, दक्षिणां - दक्षिण, अन्नमेव वा- अथवा अन्न, जपै - जप से, प्रणामैः- प्रणाम से, स्तोत्रैश्च - स्तात्रों से, तोषयेत्- संतुष्ट करे, तर्पयेद्गुरुन्- आचार्य का तृप्त करे , दक्षिणाविचारः- दक्षिणा का विचार, दक्षिणया- दक्षिणा से, मुहूर्त्ते - दो घटी, समतीते - व्यतीत हो जाने पर, भवेच्छतगुणा - सौ गूना हो जाती है, सा- वह, त्रिरात्रे - तीन रात में, तद्दशगुणा- उसका दश गूना, सप्ताहे द्विगुणा ततः- सात दिन में उसका दुगूना, मासे - एक महीने में,लक्षगुणा- लाख गूना, प्रोक्ता- कहा गया है, ब्राह्मणानां- ब्राह्मणों की दक्षिणा, वर्द्धते- बढ़ती है, संवत्सरे व्यतीते - एक वर्ष व्यतीत हाने पर, त्रिकोटिगुणा- तीन करोण गूना , भवेत्- होती है, कर्म्म - कर्म, तद्यजमानानां - उस यजमान का, निष्फलं भवेत्- निष्फल हो जाता है, ब्रह्मस्वापहारी- ब्रह्म धन हरण कर्ता, न कर्मार्हो - कर्म के योग्य नही होता है, अशुचिर्नरः- अपवित्र मनुष्य।

5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगें। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगें।

4.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-घ, 10-घ।

4.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-ग।

4.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ग, 10-घ।

4.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-ग, 5-घ, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-घ, 10-ग।

5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मनोभिलषितव्रतानुवर्णनम्।

2-पारस्कर गृह्य सूत्रम्।

3- अनुष्ठान निधानम्।

4-शब्दकल्पद्रुमः।

5-संस्कार विधानम्।

6-संस्कार भास्करः।

7-शान्ति- विधान।

8-संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

5.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- यज्ञ मीमांसा।

2- प्रयोग पारिजात।

3- अनुष्ठान प्रकाश।

4- पूर्त्तकमलाकरः।

5.10 निबंधात्मक प्रश्न-

1- पूर्णाहुति का परिचय बतलाइये।

2- ब्राह्मण भोजन संख्या विधान बतलाइये।

3- दक्षिणा विचार को लिखिये।

4- पुरश्चरण का नियम लिखिये।

5- मन्त्र संस्कार का विचार लिखिये।

6- आवहनादि मुद्राओं का विचार लिखिये।

7- पूर्णाहुति विचार लिखिये।

8- बलिदान के बारे में विचार लिखिये।

9- होमान्त कृत्य प्रकाश डालिये।

10- पूर्णाहुति का महत्व लिखिये।